जैन पुराण-कोश

सम्पादक

प्रो० प्रवीणचन्द्र जैन डॉ० दरबारीलाल कोठिया

सह सम्पादक

डॉ० कस्तूरचन्द सुमन

हरिश चन्द्र कोलिया
15, नवजीवन उपवन,
मोती डूंगरी रोड़, जयपुर-4

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी (राजस्थान)

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
श्रीमहावीरजी (राज.) ३२२२२०

प्राप्ति स्थान

१. जैनविद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी
२ अपभ्रंश साहित्य अकादमी
दिगम्बर जैन नसिया भट्टारकजी
सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-३०२००४

प्रथम बार, १९९३

मूल्य : ५००.००

मुद्रक
वर्द्धमान मुद्रणालय,
१९, जवाहरनगर कालोनी, वाराणसी-१०

अनुक्रमणिका

संकेत सूची

म० पु० — महापुराण/आचार्य जिनसेन/भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन/ई० १९५१, १९६८

प० पु० — पद्मपुराण/आचार्य रविषेण/भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन/ई० १९८९

ह० पु० — हरिवंशपुराण/आचार्य जिनसेन/भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन/ई० १९६२

पा० पु० — पाण्डवपुराण/आचार्य शुभचन्द्र/जैन संस्कृति संरक्षक संघ, शोलापुर/ई० १९८०

वीवच० — वीरवर्द्धमान चरित/भट्टारक सकलकीर्ति/भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन/ई० १९७४

प्रास्ताविक

'जैन पुराण कोश' पाठको के कर-कमलो में अर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है। सास्कृतिक दृष्टि-कोण से महत्त्वपूर्ण होने के कारण १ पद्मपुराण २. महापुराण ३. हरिवंशपुराण ४. पाण्डवपुराण और ५. वीरवर्धमानचरित ये पाँच पुराणकोश के आधार बनाए गए हैं। प्राचीन सस्कृति को समझने मे ये पुराण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

जैन पुराणकोश की योजना दस वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो गई थी। इसमें १२६०९ नाम सकलित हैं। ५२७०५ श्लोको का अध्ययन करके सज्ञाओ तथा पारिभाषिक शब्दो का व्याख्यासहित सकलन इस कोश में प्रस्तुत किया गया है। इस तरह से यह कोश पुराणकालीन जैन सस्कृति का चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ है। इस कोश में मूलतः प्रथमानुयोग की विषय-सामग्री का समावेश करने के साथ-साथ अन्य अनुयोगो की विषय-वस्तु भी द्रष्टव्य है, इस प्रकार चारो अनुयोगो के विषय को जानने-समझने में यह कोश उपयोगी है।

इस कोश के सम्पादन में प्रो० प्रवीणचन्द्र जी जैन एव डॉ० दरबारीलाल जी कोठिया ने अथक परिश्रम किया है; उनके हम आभारी हैं। जैनविद्या सस्थान में कार्यरत विद्वान् डॉ० कस्तूरचन्द सुमन का सहयोग अत्यन्त प्रशसनीय रहा है। जैनविद्या सस्थान के पूर्व सयोजक डॉ० गोपीचन्दजी पाटनी एव श्री ज्ञानचन्द्रजी खिन्दूका तथा वर्तमान सयोजक डॉ० कमलचन्दजी सोगाणी ने इस योजना को साकार करने में सदैव उत्साह दिखाया है। अत. हम उनके आभारी हैं।

कपूरचन्द पाटनी
मंत्री
प्रबन्धकारिणी कमेटी,
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी

नरेशकुमार सेठी
अध्यक्ष
प्रबन्धकारिणी कमेटी,
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी

●

प्रकाशकीय

भारतीय साहित्य की विविध विधाओ में 'कोश-विधा' का महत्वपूर्ण योगदान है। कोश अर्थात् शब्द-सग्रह। यह सग्रह अनेक प्रकार से होता है—पर्यायवाची शब्दो का सग्रह, अनेकार्थवाची शब्दो का सग्रह, ऐसे सग्रह जिसमें एक ही भाषा में शब्द उसके अर्थ व विवेचन हो, ऐसे शब्द-सग्रह जिसमें शब्द एक भाषा मे हो तथा अर्थ अन्य भाषा में, कुछ शब्द संग्रह/कोश किसी विशिष्ट कवि, विशिष्ट बोली आदि पर आधारित होते हैं, कुछ कोश किसी विशिष्ट विषय के महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ/ग्रन्थों में आये मुख्य शब्दो/प्रतीको को स्पष्ट करने के लिए बनाये जाते हैं अर्थात् 'कोश' किसी विशेष उद्देश्य तथा किसी विशेष क्षेत्र की आवश्यकता की पूर्ति के लिए बनाये जाते है।

जैन साहित्यकारो ने इस विधा में सतत परिश्रम करके जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश और जैन लक्षणावली आदि शब्द-कोशो का सृजन कर जैन वाङ्मय को समृद्ध किया है। इसी शृखला में प्रस्तुत है यह 'जैन पुराणकोश'।

पुराण अर्थात् प्राचीनकाल में हुई घटनाओ व उनसे सम्बद्ध कथाओ-आख्यानो का संग्रह। पुराण प्रमुख ऐतिहासिक पुरुषो के जीवन पर आधारित होते हैं जिनमें उनके जीवनचरित के अतिरिक्त देश, नगर, राज्य, धर्म, नीति, सिद्धान्त, तीर्थ, सत्कर्मप्रवृत्तियाँ—सयम-तप-त्याग-वैराग्य-ध्यान-योग कर्मसिद्धान्त तथा विविध कलाओ व विज्ञान के विवरण भी मिलते हैं। इस प्रकार पुराणो में आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व ऐतिहासिक आदि पक्षो से सम्बन्धित पुष्कल सामग्री उपलब्ध होती है अत पुराण इतिहास के स्रोत हैं, संस्कृति के भण्डार हैं। यही कारण है कि समाज में पुराणो के अध्ययन-स्वाध्याय की परम्परा अक्षुण्ण है। पुराणो को समझने के लिए उनमें आये पारिभाषिक शब्दो, सज्ञा शब्दो के अर्थ, सन्दर्भ आदि की जानकारी आवश्यक है। पुराण-प्रसिद्ध व्यक्ति, स्थल, विषय, गुण आदि की स्पष्ट जानकारी शोधार्थियो/विद्वानो आदि के लिए तो आवश्यक होती ही है सामान्यजन के लिए भी वह उपयोगी व लाभकारी होती है, इस दृष्टि से जैनविद्या सस्थान समिति ने 'जैनपुराण कोश' की आवश्यकता का अनुभव किया और विशाल एव बहुविध जैनपुराण-साहित्य में से प्रमुख पाँच पुराणो यथा—१ महापुराण २ पद्मपुराण ३ हरिवंशपुराण ४ पाण्डवपुराण ५ वीरवर्द्धमान-चरित में प्रयुक्त सज्ञा शब्दो के अर्थ व सन्दर्भों की जानकारी के लिए कोश के निर्माण की योजना को क्रियान्वित किया। यह कार्य देश के यशस्वी विद्वानो प्रो० प्रवीणचन्द्र जैन, जयपुर तथा डॉ० दरबारीलाल कोठिया ने अपने दस वर्षों के परिश्रम के पश्चात् पूर्ण किया। इसके लिए हम इनके आभारी हैं तथा इनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। इस कार्य में सस्थान में कार्यरत विद्वान् डॉ० कस्तूरचन्द्र सुमन ने पूर्ण सहयोग किया एतदर्थ वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

डॉ० गोपीचन्द पाटनी	**ज्ञानचन्द्र खिन्दूका**	**डॉ० कमलचन्द सोगाणी**
पूर्व सयोजक	पूर्व सयोजक	सयोजक
जैनविद्या सस्थान समिति	जैनविद्या सस्थान समिति	जैनविद्या सस्थान समिति
श्रीमहावीरजी	श्रीमहावीरजी	श्रीमहावीरजी

सम्पादकीय

जैन पुराण जैन संस्कृति के दर्पण हैं। इनमें पुरातन सस्कृति प्रतिबिम्बित है। प्राचीन काल से प्रचलित कथाओं का उल्लेख होने से इन्हें पुराण कहा जाता है।[1] ऋषिप्रणीत होने से इन्हे 'आर्ष', सत्यार्थ निरूपक होने से इन्हें 'सूक्त' तथा धर्म के प्ररूपक होने से इन्हें 'धर्मशास्त्र' भी माना जाता है। 'इति-इह-आस' यहाँ ऐसा हुआ ऐसी कथाओ का वर्णन होने से इन्हें 'इतिहास', 'इतिवृत्त' और ऐतिह्य भी माना गया है।[2]

जैन पुराणो का मूल कथन गणघर देव ने किया है।[3] परम्परा से प्राप्त उसी कथन से जैन पुराण रचे गये हैं। इनकी शैली आलकारिक है। पुराण केवल सस्कृत भाषा में ही नही रचे गये हैं अपितु कन्नड, अपभ्रश और आधुनिक भारतीय भाषाओ में भी रचे गये हैं। अधिकतर प्राचीन पुराण सस्कृत भाषा में रचे ही प्राप्त होते हैं। इनमें पद्मपुराण सर्वाधिक प्राचीन है। महापुराण और हरिवश पुराण भी अन्य पुराणो की अपेक्षा प्राचीन हैं। ये तीनो ही पुराण बहुचर्चित हैं। सामान्यत इन्ही का स्वाध्याय किया जाता है। तीर्थंकर महावीर का शासन होने से उनका चरित्र और महाभारत का प्रभाव होने से 'पाण्डव पुराण' के स्वाध्याय में भी अभिरुचि देखी गई है। प्राचीनता और सामाजिक अभिरुचि ही केवल इन ही पाँच पुराणो के प्रस्तुत कोष हेतु चयन होने का कारण है।

वर्ण्य-विषय

जैन पुराणो का वर्ण्य-विषय तिरेसठ शलाका पुरुषो का जीवन-चरित उनके पूर्व भवो तथा उत्तर भवो के साथ वर्णित है। वे तिरेसठ शलाका पुरुष हैं—चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलभद्र, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण।[4] महापुराण में इन्ही तिरेसठ सत्पुरुषो का जीवनवृत्त है। पद्मपुराण में बलभद्र पद्म (राम) नारायण, लक्ष्मण और प्रति-नारायण रावण का। हरिवशपुराण में नारायण-कृष्ण, बलभद्र बलराम और प्रतिनारायण जरासध का, वीर वर्धमान चरित में तीर्थंकर महावीर का और पाण्डवपुराण में प्राचीन दो राजवशो कौरवो व पाण्डवो का वर्णन है। इससे स्पष्ट है कि एक शलाका पुरुष के जीवनवृत्त को भी पुराण का वर्ण्य-विषय बनाया जा सकता है।

वर्ण्य-विषय के सन्दर्भ मे आचार्य जिनसेन द्वारा प्रतिपादित पुराण की दो परिभाषाएँ उल्लेखनीय हैं—प्रथम परिभाषा के अनुसार क्षेत्र, काल, तीर्थ, सत्पुरुष तथा उनकी चेष्टायें पुराण का वर्ण्य-विषय होती हैं।[5] इसके अनुसार तीन लोक की रचना को क्षेत्र, भूत, भविष्यत् और वर्तमान इन तीन को काल, मोक्ष प्राप्ति के उपायभूत सम्यग्दर्शन, सम्यक्-ज्ञान और सम्यक्-चारित्र इन त्रिरत्नो को तीर्थ, इस तीर्थ के सेवी सत्पुरुषो को शलाका पुरुष और उनके न्यायोपात्त आचरण उनकी चेष्टायें कहलाती हैं।[6] द्वितीय परिभाषा में इन पाँच में से केवल तीर्थ को ही परिगणित किया गया है। इस परिभाषा के अनुसार पुराण के वर्ण्य-विषय ये आठ होते हैं—१. लोक, २ देश, ३ पुर, ४. राज्य, ५ तीर्थ, ६. दान व तप, ७. गति, ८ फल। इनमें लोक का नाम, उसकी व्युत्पत्ति, प्रत्येक दिशा तथा उनके अन्तरालो की लम्बाई-चौडाई का वर्णन-लोकाख्यान, लोक के किसी एक भाग के देश, पहाड, द्वीप, समुद्रादि के विस्तार का वर्णन-देशाख्यान; राजधानी का वर्णन-पुराख्यान; राजा के राज्य-विस्तार का वर्णन-राजाख्यान, अपार ससार से पार करनेवाला तीर्थ और ऐसे तीर्थंकर का वर्णन-तीर्थाख्यान, दान और तप का महत्त्व दर्शानेवाली कथाओ का वर्णन-दान-तपाख्यान, गतियो का वर्णन-गत्याख्यान और मोक्ष प्राप्तिपर्यन्त पुण्य-पाप-फल का वर्णन फलाख्यान बताया गया है।[7]

पुराण को सत्कथा सज्ञा भी दी गई है। ऐसी कथा के १. द्रव्य, २. क्षेत्र, ३. तीर्थ, ४ काल, ५ भाव, ६ महाफल, ७ प्रकृत ये सात अग होते हैं। द्रव्य छह हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। त्रिलोक क्षेत्र कहा जाता है। तीर्थंकर का चरित तीर्थ, भूत, भविष्यत् और वर्तमान ये तीनो समय काल, क्षायोपशमिक और क्षायिक ये दो भाव, तत्त्वज्ञान की प्राप्ति फल और कथावस्तु प्रकृत कहलाती है।[8]

इस प्रकार जैन पुराणो के वर्ण्य-विषयक अध्ययन से ज्ञात होता है कि इन पुराणों की विषय-वस्तु का केन्द्र-बिन्दु शलाका पुरुषो का जीवनचरित ही रहा और आत्मोत्कर्ष उनका लक्ष्य। इसी कारण वैदिक पुराणो की तरह इनका विभाजन नही हो सका।[9]

जैन पुराण-साहित्य अपने ढग का अनूठा साहित्य है। अन्य पुराणकार इतिवृत्त की यथार्थता सुरक्षित नही रख सके हैं जबकि जैन पुराणकारो के सम्बन्ध में ऐसा नही कहा जा सकता। उन्होंने इतिवृत्त की यथार्थता को सुरक्षित रखने का भरसक प्रयास किया है। विद्वानो की मान्यता है कि पुराकालीन भारतीय परिस्थितियो को जानने के लिए जैन पुराणो से प्रामाणित सहायता प्राप्त होती है।

जैन पुराणकोश की उपयोगिता

पूर्व विवेचित पुराण और वर्ण्य-विषय के परिपेक्ष्य में कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कोश प्राचीन सस्कृति को समझने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। यहाँ सस्कृति से तात्पर्य है—शारीरिक या मानसिक शक्तियो के प्रस्फुटीकरण, दृढ़ीकरण, विकास अथवा उससे उत्पन्न आध्यात्मिक अवस्था।[10] डॉ० रामजी उपाध्याय का अभिमत है कि सस्कृति वह प्रक्रिया है जिससे किसी देश के सर्वसाधारण का व्यक्तित्व निष्पन्न होता है। इस निष्पन्न व्यक्तित्व के द्वारा लोगो के जीवन और जगत के प्रति एक अभिनव दृष्टिकोण मिलता है। कवि इस अभिनव दृष्टिकोण के साथ अपनी नैसर्गिक प्रतिभा का सामजस्य करके सास्कृतिक मान्यताओ का मूल्याकन करते हुए उसे सर्वजन ग्राह्य बनाता है।[11]

जैन पुराण कोश में ऐसी ही सामग्री सकलित है। व्यक्ति-वाचक सज्ञाओ के साथ उल्लिखित उनकी जीवन-घटनाओ में उनके उत्थान-पतन की कथा समाहित है। इससे न केवल वैचारिक दृढता उत्पन्न हुई है अपितु, आध्यात्मिक विकास का मार्ग भी प्रशस्त हुआ है। तन और मन से निवृत्ति मार्ग की शोध-खोज के सदर्भ हेय और उपादेयता का प्रतिबोध लिये हैं। इससे जैन पुराण कोश का विशेष अवदान समक्ष में आता है। इसमें दी गई भौगोलिक सामग्री को शोध का विषय बनाया जा सकता है। देश, ग्राम, नगर, नदी, पर्वत, द्वीप, सागर आदि के नाम वर्तमान सदर्भ में शोधार्थियो के लिए बड़ी उपयोगी सामग्री है। इसी प्रकार इतिहास के विद्यार्थियों और विद्वानो के लिए भी प्रस्तुत कोश में शोधोपयोगी प्रचुर सामग्री है। विभिन्न वशो का जैन और जैनेतर पुराणो के सदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन शोध का विषय हो सकता है।

दर्शन के जिज्ञासुओ की पिपासा भी इससे शात होगी। इसमें दी गई पारिभाषिक पदावली प्राय. वही है जो जैन दार्शनिक ग्रथो में मिलती है। इस प्रकार परम्परा-प्राप्त सास्कृतिक मान्यताओं का दिग्दर्शन भी इनमें कराया गया है।

जैन पुराणकोश की आवश्यकता

श्रमण सस्कृति निवृत्तिप्रधान सस्कृति है। इसमें प्रतिपादित सिद्धान्त पतित से पावन बनने के स्रोत हैं। निर्ग्रंथ श्रमणो ने आत्मोत्कर्ष हेतु सिद्धान्त-ग्रथों का अध्ययन किया और उनका ही उपदेश दिया। फलतः सिद्धान्त ग्रथो का स्वाध्याय प्रारम्भ हुआ और यह तब तक अनवरत चलता रहा जब तक कि उनके समझने में कठिनाईयो का अनुभव नही हुआ।

कठिनाईयो के आने पर उन्हें दूर करने के प्रयत्न किये गये। सर्वप्रथम स्व० प० गोपालदास बरैया ने इस क्षेत्र में काम किया। उन्होंने ईस्वी सन् १९०९ में 'जैन सिद्धान्त प्रवेशिका' नामक पुस्तक की रचना की। यह कोश बहुत चर्चित रहा। इसके पश्चात् ईस्वी सन् १९१४ में रतलाम से सात भागों में 'अभिधान-राजेन्द्र-कोश' प्रकाशित हुआ। अजमेर-बम्बई से ईस्वी सन् १९२३–३२ में श्री रतनचदजी द्वारा 'एन इल्लस्ट्रेटेड अर्धमागधी डिक्सनेरी' के पाँच भाग तैयार किये गये। ईस्वी सन् १९२४–३४ में बाराबकी-सूरत से श्री बी० एल० जैन द्वारा आरम्भ किया गया 'वृहद्जैन-शब्दार्णव' ब्र० शीतलप्रसाद जी द्वारा सम्पादित होकर दो भागो में प्रकाशित हुआ।

समय ने करवट ली। पूज्य गणेशप्रसादजी वर्णी द्वारा सस्थापित दिगम्बर जैन विद्यालयो में जब तक सिद्धान्त ग्रन्थों का अध्यापन होता रहा उन ग्रन्थो को समझनेवाले भी तैयार होते रहे। वर्तमान में उन विद्यालयों में न वे मर्मज्ञ विद्वान् अध्यापक ही हैं और न ही जिज्ञासु छात्र! सिद्धात ग्रन्थो के अध्ययन में उत्पन्न कठिनाईयाँ बढ़ती गईं। परिणाम-स्वरूप सिद्धान्त ग्रन्थों का स्थान पुराणों ने लिया। वे कथाप्रधान होने से रुचिकर हुए। जानने-समझने में भी पाठको को सरलता का अनुभव हुआ। पुराणों के बढ़ते हुये महत्त्व को देखकर पुराणो के शब्दों को कोश-ग्रन्थों में सम्मिलित किया जाने लगा। भारतीय ज्ञानपीठ से ईस्वी सन् १९७० में प्रकाशित 'जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश' और श्री वीर सेवा मदिर, २१, दरियागज, नई दिल्ली–२ से सन् १९७२ में प्रकाशित 'जैन लक्षणावली' ऐसे ही कोश-ग्रन्थ हैं। इस प्रकार जहाँ

पुराणों में आये नामो के शब्द संकलित हुए हैं ऐसे चार कोश हैं—१ वृहज्जैनशब्दार्णव, २ जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, ३. जैन लक्षणावली, ४ डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य द्वारा सम्पादित/अनुदित पुराणों के अन्त में दी गई शब्दानुक्रमणिकाएँ। इनमें 'वृहज्जैनशब्दार्णव' के द्वितीय खण्ड को देखने से ज्ञात होता है कि 'पाण्डव पुराण' और 'वीर वर्धमान चरित' के शब्द इसमें नही हैं। महापुराण, पद्मपुराण और हरिवशपुराण के सम्मिलित शब्दों की भी सक्षिप्त जानकारी ही दी गई है। पुराणो से ज्ञात सम्पूर्ण वृत्त का इनमें अभाव है। 'लक्षणावली' के शब्द-सकलन में पद्मपुराण, महापुराण और हरिवशपुराण इन पुराणों का ही उपयोग हुआ है। जैसाकि विद्वान् सम्पादक ने अपनी विस्तृत प्रस्तावना के पृष्ठ ४८-४९ पर स्वय स्वीकार किया है कि इन पुराणो का भी केवल कुछ नामो के लिए ही जिनकी सूची भी सम्पादक ने दी है, उपयोग हुआ है।

डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य ने पद्मपुराण, महापुराण और हरिवशपुराण इन तीन प्राचीन पुराणो का सम्पादन तथा अनुवाद किया है। इन तीनो में से महापुराण के द्वितीय भाग 'उत्तरपुराण' और हरिवशपुराण की ही उन्होने अकारादि क्रम से शब्दानुक्रमणिका दी है, पद्मपुराण और आदिपुराण की नही दी। इन शब्दानुक्रमणिकाओ में दी गई जानकारी अति सक्षिप्त है।

स्पष्ट है कि उक्त कोशो की तैयारी में पद्मपुराण, महापुराण एव हरिवंशपुराण इन तीनो पुराणो का ही उपयोग हुआ है। मात्र जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश में पाण्डवपुराण को भी लिया गया है। वर्तमान में तीर्थंकर महावीर का शासन होने से 'वीरवर्धमान चरित' का उपयोग भी आवश्यक था जिसे छोड दिया गया। इन कोशो में दी गई नामो सबधी जानकारी इतनी सक्षिप्त है कि पुराण अध्येताओ की समस्याओ का उससे यथेष्ट निराकरण नही हो पाता। कही-कही सन्दर्भ भी गलत प्रकाशित हुए हैं जिससे उनकी कठिनाईयाँ और भी बढ जाती हैं।

पुराणो के अध्ययन में बढती हुई सामाजिक अभिरुचि को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि पुराणो के अध्ययन में आनेवाली कठिनाईयो के निवारणार्थ एक उपयोगी जैन पुराणकोश तैयार हो जिसमें सामाजिक अभिरुचि के जैन पुराणो को सम्मिलित किया गया हो। ऐसे कोश के अभाव में पाठको को आज विद्वानो की खोज करनी पडती है। इसके लिए उन्हें समय और अर्थ दोनो खर्च करने पडते हैं। प्रथम तो विद्वान् ही उपलब्ध नही होते। सौभाग्य से मिल जावें तो रोजी-रोटी के अर्जन की व्यस्तता के कारण विद्वान् उनका यथेष्ट सहयोग नही दे पाते। फलस्वरूप पाठको की समस्याएँ ज्यों की त्यो रहती हैं।

श्री राणा प्रसाद शर्मा द्वारा सम्पादित एक पौराणिक कोश बाराबकी ज्ञान मण्डल लि० से सम्वत् २०२८ में प्रकाशित हुआ है। वैदिक पुराण-अध्येताओ को उनके अध्ययन में उत्पन्न कठिनाईयो का समाधान इस कोश से प्राप्त हो जाता है, किन्तु जैन पुराण अध्येताओं की समस्याएँ आज तक यथावत् हैं।

अभिनव प्रयत्न

प्रसन्नता का विषय है कि दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी के तत्कालीन सभापति श्री ज्ञानचन्द्र खिन्दूका की प्रेरणा से सन् १९८२ में अतिशय क्षेत्र की प्रबंधकारिणी कमेटी का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। प्रबंधकारिणी कमेटी ने सर्वसम्मति से इस कार्य के निर्देशन का दायित्व मुझे अर्पित किया और इस सस्थान का नाम जैनविद्या सस्थान रखा। सस्थान की स्थापना श्रीमहावीरजी में की गई। इस कार्य की सफलता के लिए परामर्शदाता के रूप में मेरे साथ डॉ० कमलचन्द सोगानी को योजित किया। डॉ० सोगानी ने संस्थान की बहुमुखी योजना तैयार की और उसके समीक्षण के लिए ख्याति प्राप्त निम्न विद्वानो को आमत्रित किया—

१. डॉ० दरबारीलाल कोठिया, वाराणसी
२ डॉ० नेमीचद जैन, इन्दौर
३ डॉ० गोकुलचद जैन, वाराणसी

आदरणीय डॉ० कोठियाजी किसी कारणवश नही आ सके। प्रथम विचारविमर्श में मैं तथा निम्न महानुभाव सम्मिलित हुए:—

१ श्री ज्ञानचन्द्र खिन्दूका	तत्कालीन सभापति
२ श्री कपूरचद पाटनी	तत्कालीन मत्री
३ श्री मोहनलाल काला	सदस्य
४. डॉ० गोपीचद पाटनी	सदस्य
५ डॉ० नेमीचद जैन, इन्दौर	आमत्रित विद्वान्
६ डॉ० कमलचद सोगानी, उदयपुर	,,
७. डॉ० गोकुलचद जैन, वाराणसी	,,

इसी समय यह भी निर्णय लिया गया कि जब तक सभी कार्ययोजनाओ से सम्बन्धित विद्वानो की नियुक्तियाँ नही हो जाती हैं तब तक 'जैन पुराण कोश' का कार्य प्रारम्भ करा दिया जाय। इसके पश्चात् 'जैनविद्या संस्थान समिति' की रचना की गई और डॉ० गोपीचद पाटनी को इस समिति का सयोजक चुना गया।

डॉ० कमलचन्द सोगानी ने सस्थान समिति में आदिपुराण की सज्ञाओ का कोश तैयार कराये जाने का प्रस्ताव रखा जिसे सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। डॉ० गोपीचद पाटनी के सयोजकत्व में समिति ने सभी प्राचीन प्रमुख जैन पुराणो को इस योजना में सम्मिलित करने का निर्णय लिया। फलस्वरूप १ पद्मपुराण, २. महापुराण, ३ हरिवशपुराण, ४ पाण्डवपुराण, ५. वीर वर्धमान चरित इन पाँच पुराणो का एतदर्थ चयन किया गया।

इस योजना की क्रियान्विति के लिए दो विद्वानो को नियुक्त करने का निर्णय हुआ जिसके अनुसार सितम्बर १९८२ में सर्वप्रथम डॉ० कस्तूरचन्द 'सुमन' की और इसके पश्चात् अक्टूबर १९८२ में डॉ० वृद्धिचन्द जैन की नियुक्ति की गई। डॉ० वृद्धिचन्द जैन आरम्भिक कुछ ही कार्य कर पाये थे कि उन्हें पदमुक्त होना पडा। फलत इस योजना का समस्त कार्य डॉ० कस्तूरचन्द 'सुमन' को करना पडा। यह कार्य उनके आठ वर्ष के धैर्यपूर्ण कठोर परिश्रम का फल है।

कोश-रचना-पद्धति

इस विशालकाय जैन पुराण कोश के लिए सर्वप्रथम स्वीकृत पाँचों पुराणो के ५२७०५ श्लोकों का मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया गया। श्लोकों में प्राप्त सज्ञाओं तथा पारिभाषिक शब्दों के नाम पृथक्-पृथक कार्डों पर लिखे गये तथा उन नामो से सम्बन्धित प्रसग उनमें सकलित किये गये। इस प्रकार पाँचो पुराणो के कार्ड तैयार हुए। इसके पश्चात् इन पाँचो पुराणो के पृथक्-पृथक् कार्डों की सामग्री का सम्पादन किया गया तथा अपनी भाषा शैली में पाँचो पुराणों की सकलित सामग्री से एक नया कार्ड तैयार किया गया। इस प्रकार १२६०९ नाम सकलित हुए। ये समस्त कार्ड अकारादि क्रम से सजोये गये। इन्हें टकित कराया गया तथा टकन के पश्चात् मूल प्रति से टकित सामग्री का सशोधन किया गया।

कोश का इतना कार्य सम्पन्न हो जाने के पश्चात् डॉ० दरबारीलाल कोठिया से निवेदन किया गया कि वे कोश के पारिभाषिक शब्दों को देखकर उसमें यथास्थान सशोधन कर दें। उन्होने कोश की आवश्यकता व उपयोगिता समझ कर इस कार्य को श्रीमहावीरजी में रहकर सहर्ष सम्पन्न किया। तदनन्तर मैंने कोश के आरम्भ से अन्त तक के शब्दो की भाषा, विषय और एकरूपता की दृष्टि से सशोधन और समायोजन किया।

इस कोश में इस योजना के लिए स्वीकृत पुराणो के अन्त में दी गई शब्दानुक्रमणिका तथा 'आदिपुराण में प्रतिपादित भारत' पुस्तक में उपलब्ध सम्बन्धित सामग्री का भी यथोचितरूप में समावेश कर लिया गया है।

अध्येताओ तथा शोधार्थियो को पुराणकालीन जैन सस्कृति की जानकारी प्राप्त हो सके इस दृष्टि से कोश के अन्त में परिशिष्ट दिये गये हैं जिनमें दार्शनिक, धार्मिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक सामग्री आ गई है।

इस प्रकार प्रस्तुत कोश में मूलत प्रथमानुयोग की विषय सामग्री का समावेश तो किया गया है किन्तु अन्य अनुयोगो की विषय-वस्तु भी इसमें द्रष्टव्य है। इस प्रकार चारो अनुयोगों के विषयो को जानने-समझने में यह कोश उपयोगी है।

कोश का कार्य ही ऐसा है जिसमें पूरी सावधानी रखने के बाद भी कमियाँ रह जाती हैं। ये कमियाँ बाद के सस्करणों में दूर की जाती हैं। इस कोश में भी कमियो का होना सर्वथा स्वाभाविक है जो आगामी सस्करणो में दूर होती जायेंगी।

कृतज्ञता-ज्ञापन

इस विशाल कोश की योजना को समग्ररूप से साकार बनाने में विद्वत्समाज में लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् आदरणीय डॉ० दरबारीलाल कोठिया और उत्साही, कर्मठ, निष्ठावान विद्वान् डॉ० कस्तूरचंद 'सुमन' का तो रचनात्मक सहयोग मिला ही है, इनके अतिरिक्त जैनविद्या संस्थान के पूर्व संयोजक डॉ० गोपीचंद पाटनी एवं श्री ज्ञानचन्द्र खिन्दूका तथा वर्तमान संयोजक डॉ० कमलचंद सोगानी, डॉ० नवीनकुमार बज, संयोजक परीक्षा समिति, अपभ्रंश साहित्य अकादमी, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी के अध्यक्ष श्री नरेशकुमार सेठी तथा मानद मंत्री श्री कपूरचंद पाटनी से यथासमय यथोचित प्रोत्साहन और उदारतापूर्वक सहायता प्राप्त हुई है। मैं इन सबका विनम्रता-पूर्वक आभारी हूँ।

प्रो० प्रवीणचन्द्र जैन
सम्पादक

महावीर निर्वाणदिवस
वीर निर्वाण सं० २५१९
१३-११-९३

जैन पुराण-कोश

●●

जैन पुराणकोश

अ

अंक—(१) नौ अनुदिश विमानो मे आठवा विमान। हपु० ६ ६४ दे० अनुदिश-१

(२) रुचकवर द्वीप के रुचकवर पर्वत का उत्तरदिशावर्ती दूसरा कूट। यहाँ मिश्रकेशी देवी रहती है। हपु० ५.७१५ दे० रुचकवर-२

अंककूट—(१) मानुषोत्तर पर्वत का उत्तरदिशावर्ती एक कूट। यह मोघ-देव की निवास-स्थली है। हपु० ५ ५९९,६०६

(२) कुण्डलवर द्वीप के मध्य मे स्थित कुण्डलगिरि का पश्चिम दिशावर्ती प्रथम कूट। यह स्थिर हृदय देव की निवासभूमि है। हपु० ५ ६८६,६९३ दे० कुण्डलगिरि

अंकप्रभ—कुण्डलवर द्वीप के मध्य में स्थित कुण्डलगिरि के पश्चिम-दिशावर्ती चार कूटो में दूसरा कूट। यह महाहृदय देव की निवास-भूमि है। हपु० ५ ६८६,६९३

अंकवती—पूर्व विदेहक्षेत्र की नगरी। यह रम्या देश की राजधानी थी। इसे अकावती भी कहा जाता था। मपु० ६३ २०८, २१४ हपु० ५ २५९

अंकविद्या—वृषभदेव द्वारा अपनी पुत्री सुन्दरी को सिखायी गयी गणित विद्या। मपु० १६ १०८

अंकावती—अंकवती नगरी का अपर नाम। हपु० ५ २५९ दे० अंकवती

अंकुर—(१) रावण के राक्षसवशी राजाओ के साथ युद्ध करने के लिए तत्पर वानरवशी नृप। पपु० ६० ५-६

(२) जल-आर्द्रता, पृथिवी का आधार, आकाश का अवगाहन, वायु का अन्तर्नीहार और धूप की उष्णता पाकर हुई बीज की भूमि-गर्भ से बाहर निकलने की आरम्भिक स्थिति। मपु० ३ १८०-१८१, ५ १८

अंग—(१) श्रुत। मूलत· ये ग्यारह कहे गये हैं—१ आचाराग २ सूत्र-कृताग ३ स्थानाग ४. समवायाग ५ व्याख्याप्रज्ञप्तिअग ६ ज्ञातृधर्म-कथाग ७ उपासकाध्ययनाग ८ अन्तकृद्दशाग ९ अनुत्तरोपपादिक-दशाग १० प्रश्नव्याकरणाग और ११ विपाकसूत्राग। इनमें दृष्टि-वादाग को सम्मिलित करने से ये बारह अग हो जाते हैं। मपु० ६ १४८, ५१, १३, हपु० २ ९२-९५

(२) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। इसकी रचना स्वय इन्द्र ने की थी। वृषभदेव और महावीर ने विहार कर यहाँ धर्मोपदेश दिये थे। मपु० १६ १५२-१५६, २५ २८७-२८८, पापु० १ १३२-१३४

(३) रत्नप्रभा नरकभूमि के खरभाग का बारहवा पटल। हपु० ४ ५२-५४ दे० खरभाग

(४) तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १४९-१५२

(५) सुग्रीव का ज्येष्ठ पुत्र, अगद का अग्रज और राम के पुत्रो का सहायक योद्धा। राम-लक्ष्मण और राम के पुत्रो के बीच हुए युद्ध मे इसने लवणाकुश के सहायक सेनानायक वज्रजघ का साथ दिया था। पपु० १० १२, ६० ५७-५९, १०२ १५४-१५७

(६) प्राणियो के अगोपाग के स्पर्श अथवा दर्शन द्वारा उनके सुख-दु:ख के बोधक अष्टागनिमित्तज्ञान का एक भेद। मपु० ६२.१८१, १८५, हपु० १०.११७, दे० अष्टागनिमित्तज्ञान

अगज—(१) भविष्यकालीन ग्यारहवा रुद्र। हपु० ६० ५७१ दे० रुद्र

(२) कामदेव। हपु० १६.३९

अंगद—(१) स्त्री-पुरुष दोनो के द्वारा प्रयुक्त बाहुओ का आभूषण। मपु० ३ २७, ७.२३५, ११.४४

(२) इस नाम का एक राजा। इसने कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में कृष्ण का पक्ष लिया था। हपु० ७१. ७३-७७

(३) सुग्रीव और सुतारा का दूसरा पुत्र, अग का छोटा भाई। यह राम का पराक्रमी योद्धा था। पपु० १० ११-१२, ५८ १२-१७ रावण के योद्धा मय के साथ इसने युद्ध किया था। पपु० ६२ ३७ लका जाकर इसने साधना मे लीन रावण पर उपसर्ग किये थे और रावण की रानियो को सताया था। पपु० ७१.४५-९३ यह अनेक विद्याओ से युक्त था, विद्याधरो का स्वामी था, राम का मन्त्री था और मायामय युद्ध करने में प्रवीण था। रावण के पक्षधर इन्द्रकेतु के साथ इसने भयकर युद्ध किया था। मपु० ६८ ६२०-६२२, ६८३, पपु० ५४ ३४-३५।

अंगप्रविष्ट—श्रुत का प्रथम भेद—यह गणधरो द्वारा सर्वज्ञ की वाणी से रचा गया श्रुत है। यह ग्यारह अग और चौदह पूर्व रूप होता है। हपु० २ ९२-१०१ दे० अग और पूर्व

अंगबाह्य—श्रुत का दूसरा भेद—यह गणधरो के शिष्य-प्रशिष्यो द्वारा रचित श्रुत है। इसके चौदह भेद हैं—१ सामायिक २ जिनस्तव ३ वन्दना ४ प्रतिक्रमण ५ वैनयिक ६ कृतिकर्म ७ दशवैकालिक ८ उत्तराध्ययन ९. कल्पव्यवहार १०. कल्पाकल्प ११ महाकल्प १२. पुण्डरीक १३. महापुण्डरीक और १४. निषद्यका। हपु० २१.१०१-१०५ इसका अपरनाम प्रकीर्णक श्रुत है। इसमें आठ करोड एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर अक्षर, एक करोड तेरह हजार पाँच सौ इक्कीस पद तथा पच्चीस लाख तीन हजार तीन सौ अस्सी श्लोक हैं। हपु० १० १२५-१३६

अंगसौन्दर्य—पारिव्राज्य क्रिया के सत्ताईस सूत्र पदो में चौथा पद। इसका इच्छुक मुनि निज शरीर-सौन्दर्य को म्लान करता हुआ कठिन तप करता है। मपु० ३९.१६२–१६५, १७२

अंगहाराश्रय—नृत्य के अगहाराश्रय, अभिनयाश्रय और व्यायामिक इन तीन भेदो में प्रथम भेद। केकया इन तीनो को जानती थी। पपु० २४ ६

अगार—(१) चण्डवेग विद्याधर से पराजित एक विद्याधर। हपु० २५ ६३

(२) आहार-दाता के चार दोषो में दूसरा दोष। हपु० ९ १८८ दे० आहारदान

अगारक—(१) भरतक्षेत्र की पूर्व दिशा में स्थित एक देश। हपु० ११ ६८

(२) विजयार्द्ध पर्वत पर स्थित किन्नरोद्गीत नगर के निवासी ज्वलनवेग विद्याधर और उसकी रानी विमला का पुत्र, अशनिवेग का भतीजा। इसके पिता ने अपना राज्य इसे न देकर अपने छोटे

भाई अशनिवेग को दिया था किन्तु इसने अपने चाचा से राज्य छीन लिया था। चचेरी बहिन श्यामा और बहनोई वसुदेव का हरण करने में इसने संकोच नहीं किया था। इस घटना के फलस्वरूप वसुदेव ने इसे बहुत दण्डित किया था। हपु० १९ ८१-८५, ९७-१११, पापु० ११ २१-२२

(३) रामकालीन एक विद्याधर। इसने दधिमुख नगर के राजा गन्धर्व और उनकी रानी अमरा की चन्द्रलेखा आदि कन्याओं पर मनोनुगामिनी विद्या की सिद्धि के समय अनेक उपसर्ग किये थे किन्तु शान्तिपूर्वक उपसर्ग सहने से छ वर्ष में सिद्ध होनेवाली यह विद्या इन्हें अवधि से पूर्व ही सिद्ध हो गयी थी। पपु० ५१ २४-४१

अंगारवती—विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में स्थित स्वर्णाभपुर के राजा चित्तवेग विद्याधर की पत्नी। इसके पुत्र का नाम मानसवेग और पुत्री का नाम वेगवती था। हपु० २४ ६९-७०, ३० ८

अंगारवेग—किन्नरगीत नगर के राजा अशनिवेग विद्याधर का उत्तराधिकारी। मपु० ७० २५४-२५७

अंगारिणी—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याओं के सोलह निकायों की एक विद्या। हपु० २२ ६१-६२

अंगावर्त—विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी का उन्नीसवाँ नगर। अपरनाम बहुमुखी। मपु० १९ ४५, हपु० २२ ९५, १०१

अंगिरस्—एक ऋषि। यह शतमन्यु ऋषि का गुरु था। पपु० ८ ३००

अंगिरेयिक—भरत क्षेत्र का एक पर्वत। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरत की सेना असुरधूपन पर्वत से प्रयाण कर इस पर्वत पर आयी थी। मपु० २९ ७०

अंगिशिरा—वल्कलधारी एक तापस। यह वृषभदेव के मार्ग से च्युत होकर तापस हो गया था। पपु० ४.१२६-१२७

अंगुल—आठ जौ प्रमित एक माप। यह शारीरिक अंगों और छोटी वस्तुओं की माप लेने में प्रयुक्त होता है। अपने-अपने समय में मनुष्यों का अंगुल स्वांगुल माना गया है। छ. अंगुल का एक पाद और दो पादों की एक वितस्ति तथा दो वितस्तियों का एक हाथ होता है। मपु० १०.९४, हपु० ७ ४०-४१, ४४-४५

अंजन—(१) पूर्व विदेह क्षेत्र का एक वक्षार पर्वत। यह सीता नदी से निषध कुलाचल तक विस्तृत है। मपु० ६३ २०१-२०३, हपु० ५ २२८-२२९

(२) सानत्कुमार और माहेन्द्र कल्पों का प्रथम पटल और इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४८ दे० सानत्कुमार

(३) रुचकवर पर्वत का सातवाँ कूट। यहाँ आनन्दा देवी रहती है। हपु० ५ ७०३ दे० रुचकवर

(४) प्रथम नरकभूमि रत्नप्रभा के खरभाग का दसवाँ पटल। हपु० ४ ५२-५४ दे० खरभाग

(५) एक जनपद। तीर्थंकर नेमिनाथ विहार करते हुए यहाँ आये थे। हपु० ५९ १०९-१११

(६) सुमेरु पर्वत के पाण्डुक वन का एक भवन। इसकी चौड़ाई और परिधि पैंतालीस योजन है। हपु० ५ ३१६, ३१९-३२२

(७) मध्यलोक के सोलहवें द्वीप और सागर के आगे असंख्यात द्वीपों और सागरों में पाँचवाँ द्वीप एवं सागर। हपु० ५ ६२२-६२६

(८) आँखों का सौन्दर्य-प्रसाधन। मपु० १४ ९

अंजनक—रुचकवर द्वीप के रुचकवर पर्वत की उत्तरदिशा के आठ कूटों में तीसरा कूट। यहाँ पुण्डरीकिणी देवी रहती है। हपु० ५ ६९९, ७१५ दे० रुचकवर

अंजनकूट—मानुषोत्तर पर्वत का दक्षिण दिशावर्ती कूट। यहाँ अशनिघोष देव रहता है। हपु० ५ ५९०, ६०४ दे० मानुषोत्तर

अंजनगिरि—(१) मेरु पर्वत के दक्षिण की ओर सीतोदा नदी के पश्चिमी तट पर स्थित कूट। हपु० ५ २०६

(२) नन्दीश्वर द्वीप के मध्य चौरासी हजार योजन गहरे, ढोल के समान आकार तथा वज्रमय मूलवाले, चारों दिशाओं में स्थित काले चार शिखरों और चार जिनालयों से युक्त, चार पर्वत। मपु० ८ ३२४, हपु० ५ ५८६-५९१, ६४६-६५४, ६७६-६७८ दे० नन्दीश्वर

(३) रुचकवर द्वीप के रुचकवर पर्वत की उत्तरदिशा में स्थित वर्द्धमान कूट का निवासी, एक पल्य की आयु वाला दिग्गजेन्द्रदेव। हपु० ५ ६९९-७०२ दे० रुचकवर

अंजनपर्वत—(१) राम-रावण युद्ध में राम का एक हाथी। मपु० ६८. ५४२-५४५

(२) नन्दीश्वर द्वीप के चार पर्वतों का नाम। हपु० ५ ६५२-६५५ दे० अंजनगिरि

अंजनमूल—मानुषोत्तर पर्वत का पश्चिमदिशावर्ती एक कूट। यहाँ सिद्धदेव रहता है। हपु० ५ ५९०, ६०४ दे० मानुषोत्तर

अंजनमूलक—(१) रुचकवर द्वीप के रुचक पर्वत की दिशा में स्थित आठवाँ कूट। यहाँ नन्दीवर्द्धना देवी रहती है। हपु० ५६९ ९, ७०४-७०६ दे० रुचकवर

(२) रत्नप्रभा नरक के खरभाग का शिलामय ग्यारहवाँ पटल। हपु० ४ ५०-५४ दे० खरभाग

अंजना—(१) नरक की चौथी पृथिवी, अपरनाम पंकप्रभा। हपु० ४ ४३-४६ दे० पंकप्रभा

(२) विजयार्द्धपर्वत की दक्षिण श्रेणी में विद्युत्कान्त नगर के स्वामी प्रभंजन विद्याधर की भार्या, अमिततेज की जननी। मपु० ६८ २७५-२७६

(३) महेन्द्रनगर के राजा महेन्द्र और उनकी रानी हृदयवेगा की पुत्री। यह अरिंदम आदि सौ भाइयों की बहिन तथा पवनंजय की पत्नी थी। मपु० १५ १३-१६, २२० इसकी सहेली मिश्रकेशी को पवनंजय इष्ट नहीं था। उसने पवनंजय और विद्युत्प्रभ की तुलना करते हुए पवनंजय को गोष्पद और विद्युत्प्रभ को समुद्र बताया था। सहेली के इस कथन को पवनंजय ने भी सुन लिया था। पवनंजय ने यह समझकर कि मिश्रकेशी का यह मत अंजना को भी मान्य है वह कुपित हो गया और उसने इससे विवाह करके असमागम से इसे दुःखी करने का निश्चय किया। अपने इस निश्चय के अनुसार पवनंजय ने इससे विवाह करके इसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं

देखा। पति का स्नेह न मिलने से यह सदा अपनी ही निन्दा करती थी। पपु० १५.१५४-१६५, २१७, १६.१.९ इसी बीच रावण और वरुण का परस्पर विरोध हो गया। रावण ने अपनी सहायता के लिए प्रह्लाद को बुलाया। पवनजय ने पिता प्रह्लाद से स्वय जाने की अनुमति प्राप्त की और वह सामन्तो के साथ आगे बढ गया। प्रस्थान करते समय इसने पवनजय से अपनी मनोव्यथा व्यक्त की थी किन्तु पवनंजय ने इसे कोई सन्तोषप्रद उत्तर नही दिया था। पवनजय को पति से वियुक्त एक चकवी की व्यथा को देखकर इसकी याद आयी। बाईस वर्ष तक अनादर करते रहने के अपराध पर उसे पश्चात्ताप हुआ। गुप्त रूप से पवनंजय इससे मिलने आया। उसने ऋतुकाल के पश्चात् इससे सहवास भी किया। गर्भवती होने की आशका से इसके निवेदन करने पर पवनजय ने साक्षी रूप में इसे अपना कडा दे दिया। पपु० १६ ३४-२४० गर्भ के चिह्न देखकर इसकी सास केतुमती ने इसके अनेक प्रकार से विश्वास दिलाने पर भी इसे घर से निकाल दिया। उसने बसन्तमाला सखी के साथ इसे पिता के घर छोडने का आदेश दिया। सेवक इसे इसके पिता के घर ले गया किन्तु पिता ने भी इसे आश्रय नहीं दिया। पपु० १७.१-२१, ५९-६० यह निराश्रित होकर वन में प्रविष्ट हुई। इसे चारणऋद्धिधारी अमितगति मुनि के दर्शन हुए। इसने मुनिराज से अपना पूर्वभव तथा गर्भस्थ शिशु का माहात्म्य जाना। मुनिराज के पर्यंकासन से विराजमान होने के कारण जिसे "पर्यंकगुहा" नाम प्राप्त हुआ था, उसी गुहा में यह रही। यहाँ अनेक उपसर्ग हुए। सिंह की गर्जना से भयभीत होकर इसने इस गुहा में उपसर्ग पर्यन्त के लिए शरीर और आहार का त्याग कर दिया। इस समय मणिचूल गन्धर्व ने अष्टापद का रूप धारण करके इसकी रक्षा की। इसने इसी गुहा में चैत्र कृष्ण अष्टमी श्रवण नक्षत्र में एक पुत्र को जन्म दिया। अनुरुह द्वीप का निवासी प्रतिसूर्य इसका भाई था। कही जाते हुए उसने इसे पहचान लिया और इसे दु खी देखकर यह विमान में बैठाकर अपने घर ला रहा था कि मार्ग में एकाएक शिशु उछलकर विमान से नीचे एक शिला पर जा गिरा। शिला टुकडे-टुकडे हो गयी थी किन्तु शिशु का बाल भी बाँका नही हुआ था। बालक का शैल में जन्म होने तथा शैल को चूर्ण करने के कारण इसने और इसके भाई प्रतिसूर्य ने शिशु का नाम श्रीशैल रखा था। हनुरुह द्वीप में जन्म सस्कार किये जाने से शिशु को हनुमान् भी कहा गया। पपु० १७ १३९-४०३, प्रतिसूर्य ने पवनजय को ढूंढने के लिए अपने विद्याधरो को चारो ओर भेजा। वे उसे ढूंढकर अनुरुह द्वीप लाये। वही अजना को पाकर पवनजय बडा प्रसन्न हुआ। पपु० १८ १२६-१२८

अंजनात्म—सोल्ह वक्षार पर्वतो में एक पर्वत। पपु० ६३ २०३

अशुक—ग्रीष्म ऋतु मे अधिक प्रयुक्त होने वाले सूती और रेशमी वस्त्र। मपु० १० १८१, ११ १३३, १२ ३०, १५ २३

अंशुकध्वज—महीन और शुभ्र वस्त्रो से निर्मित समवसरण की ध्वजा। मपु० २२.२२३ दे० आस्थानमण्डल

अंशुमान्—(१) विद्याधर नमि का पुत्र। इसके रवि, सोम और पुरुहूत तीन छोटे भाई तथा हरि, जय, पुलस्त्य, विजय, मातग और वासव छ. बडे भाई थे। कनकपुजश्री और कनकमजरी इसकी दो बहिनें थी। हपु० २२ १०७-१०८ दे० नमि

(२) कपिल मुनि का पुत्र, कपिला का भाई और वसुदेव का साला। हपु० २४ २६-२७ यह अपने पिता के साथ रोहिणी के स्वयवर में सम्मिलित हुआ था। हपु० ३१ १०-१२, ३०

अंशुमाल—दिव्यतिलक नगर का वैभवशाली विद्याधर राजा। मपु० ५९. २८८-२९१

अंह्रिप—रावण और इन्द्र विद्याधर के बीच हुए युद्ध में प्रयुक्त एक शस्त्र। पपु० १२ २५७

अकपन—(१) तीर्थंकर महावीर के नवें गणधर। मपु० ७४ ३७४, वीवच० १९ २०६-२०७ इन्हें आठवा गणधर भी कहा गया है। हपु० ३ ४१-४३ दे० महावीर

(२) वैशाली नगरी का राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा के दस पुत्रो में सातवाँ पुत्र। मपु० ७५ ३-५ दे० चेटक

(३) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८.६९-७२ दे० कृष्ण

(४) यादव वश में हुए राजा विजय का पुत्र। हपु० ४८ ४८

(५) उत्पलखेटपुर नगर के राजा वज्रजघ का सेनापति। यह पूर्वभव में प्रभाकर नामक वैमानिक देव था। वहाँ से च्युत होकर अपराजित और आर्जवा का पुत्र हुआ। बडा होने पर यह वज्रजंघ का सेनापति हुआ। मपु० ८.२१४-२१६ राजा वज्रजघ और उनकी रानी श्रीमती के वियोगजनित शोक से सतप्त होकर इसने दृढधर्म मुनि से दीक्षा ली तथा उग्र तपश्चरण करते हुए देह त्यागकर अधोग्रैवेयक के सबसे नीचे के विमान में अहमिन्द्र पद पाया। मपु० ९ ९१-९३

(६) भरतक्षेत्र के काशी देश की वाराणसी नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम सुप्रभादेवी था। इन दोनो के हेमागद, केतुश्री, सुकान्त आदि सहस्र पुत्र और सुलोचना तथा लक्ष्मीमती दो पुत्रियाँ थी। मपु० ४३ १२१-१३६, हपु० १२ ९, यह नाथ वश का शिरोमणि था। स्वयवर विधि का इसी ने प्रवर्तन किया था। भरत चक्रवर्ती का यह गृहपति था। भरत के पुत्र अर्ककीर्ति तथा सेनापति जयकुमार में सघर्ष इसकी सुलोचना नामक कन्या के निमित्त हुआ था। इस सघर्ष को इसने अपनी दूसरी पुत्री अक्षमाला अर्ककीर्ति को देकर सहज में ही शान्त कर दिया था। मपु० ४४ ३४४-३४५, ४५ १०-५४ अन्त में यह अपने पुत्र हेमागद को राज्य देकर रानी सुप्रभादेवी के साथ वृषभदेव के पास दीक्षित हो गया तथा इसने अनुक्रम से कैवल्य प्राप्त कर लिया। मपु० ४५ २०४-२०६ पापु० ३ २१-२४, १४७

अकंपनाचार्य—मुनि-सघ के आचार्य। इनके सघ मे सात सौ मुनि थे। एक समय ये सघ सहित उज्जयिनी आये। उस समय उज्जयिनी मे श्रीधर्मा नाम का नृप था। इस राजा के वलि, बृहस्पति, नमुचि और प्रहलाद ये चार मत्री थे। सघ के दर्शनो की राजा की अभिलाषा जानकर मन्त्रियो ने राजा को दर्शन करने से बहुत रोका किन्तु वह रुका नही। राजा के जाने से मन्त्रियो को भी वहाँ जाना पडा। सम्पूर्ण सघ मौन था। मुनियो को मौन देखकर मत्री अनर्गल बातें

करते रहे। उनकी श्रुतसागर मुनि से भेंट हुई। राजा के समक्ष श्रुतसागर से विवाद हुआ जिसमें मन्त्री पराजित हुए। पराभव होने से कुपित होकर मन्त्रियो ने श्रुतसागर मुनि को मारना चाहा किन्तु सरक्षक देव ने उन्हें स्तम्भित कर दिया जिससे वे अपना मनोरथ पूर्ण न कर सके। राजा ने भी उन्हें अपने देश से निकाल दिया। ये मन्त्री घूमते हुए हस्तिनापुर आये थे। हस्तिनापुर में राजा पद्म का राज्य था। बलि आदि मन्त्री राजा के विरोधी सिंहबल को पकडकर राजा के पास लाने मे सफल हो गये इससे राजा प्रसन्न हुआ और उन्हें अपना मन्त्री बना लिया। इस कार्य के लिए उन्हें इच्छित वर माग लेने के लिए भी कहा जिसे मन्त्रियो ने धरोहर के रूप में राजा के पास ही रख छोडा। दैवयोग से ये आचार्य ससघ हस्तिनापुर आये। इन्हें देखकर बलि आदि ने भयभीत होकर धरोहर के रूप में रखे हुए वर के अन्तर्गत राजा से सात दिन का राज्य माँग लिया। राज्य पाकर उन्होने इन आचार्य और इनके सघ पर अनेक उपसर्ग किये जिनका निवारण विष्णु मुनि ने किया। मपु० ७० २८१-२९८, हपु० २० ३-६०, पापु० ७ ३९-७३

अकलक भट्ट—जैन न्याय के युग सस्थापक आचार्य। इन्होने शास्त्रार्थ करके बौद्धो द्वारा घट में स्थापित माया देवी को परास्त किया था। आचार्य जिनसेन ने इनका नामोल्लेख आचार्य देवनन्दी के पश्चात् तथा आचार्य शुभचन्द्र ने आचार्य पूज्यपाद के पश्चात् किया है। मपु० १ ५३, पापु० १ १७

अकम्पित—युद्धभूमि में कृष्ण के कुल की रक्षा करनेवाले राजाओ में एक राजा। हपु० ५० १३०-१३२

अकाम निर्जरा—निष्काम भाव से कष्ट सहते हुए कर्मों का क्षय करना। यह देवयोनि की प्राप्ति का एक कारण है। ऐसी निर्जरा करने वाले जीव चारो प्रकार के देवो में कोई भी देव होकर यथायोग्य ऋद्धियो के धारी होते हैं। पपु० १४ ४७-४८, ६४ १०३

अकाय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.९१

अकारु—शूद्र वर्ण के कारु और अकारु दो भेदो में दूसरा भेद। ये धोबी आदि से भिन्न होते हैं। मपु० १६ १८५

अकृत्य—निन्दा, दु.ख और पराभवकारी कर्म। वीवच० ५.१०

अकृष्ट पच्य—बिना बोये उत्पन्न होनेवाला धान्य। मपु० ३ १८२

अक्रियावाद—अन्योपदेशज मिथ्यादर्शन के चार भेदो में दूसरा भेद। इसका अपरनाम अक्रियादृष्टि है। यहाँ ८४ प्रकार की होती है। हपु० १० ४८, ५८ १९३-१९४

अक्रूर—(१) राजा श्रेणिक का पुत्र। इसने वारिषेण और अभयकुमार आदि अपने भाइयो और माताओ के साथ समवसरण में वीर जिनेन्द्र की वन्दना की थी। हपु० २ १३९

(२) यादववशी राजा वसुदेव और उनकी रानी विजयसेना का पुत्र। इसका पिता इसके उत्पन्न होते ही अज्ञात रूप से घर से निकल गया था किन्तु पुन वापिस आकर और इसे लेकर वह कुलपुर चला गया था। हपु० १९ ५३-५९, ३२ ३३-३४ क्रूर इसका छोटा भाई था। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में इसने कृष्ण का साथ दिया था। वसुदेव ने इसे बलराम और कृष्ण के रथ की रक्षा करने के लिए पृष्ठरक्षक बनाया था। हपु० ४८ ५३-५४, ५० ८३, ११५ ११७ दे० वसुदेव

अक्षत—पूजा के जल, गन्ध, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप और फल इन अष्ट द्रव्यो में एक द्रव्य। यह अक्षत चावल होता है। इसे चढाने समय 'अक्षताय नम' यह मन्त्र बोला जाता है। मपु० ११ १३५, १७ २५१-२५२, ४० ८

अक्षपुर—एक नगर, राजा अरिंदम की निवासभूमि। पपु० ७७ ५७

अक्षमाला—राजा अकपन की दूसरी पुत्री, अपरनाम लक्ष्मीवती। इसका विवाह अर्ककीर्ति के साथ हुआ था। मपु० ४५ २१, २९, पापु० ३ १३६ दे० अकपन-६

अक्षय—(१) समवसरण के उत्तरीय गोपुर के आठ नामो में सातवाँ नाम। हपु० ५७ ६० दे० आस्थानमण्डल

(२) कौरव वश का एक कुमार जिसने जरासन्ध-कृष्ण-युद्ध में अभिमन्यु को दस बाणो से विद्ध किया था। पापु० २० २०

(३) जिनेन्द्र का एक गुण। इसकी प्राप्ति के लिए 'अक्षयाय नम' यह पीठिका-मन्त्र बोला जाता है। मपु० ४० १३

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४

अक्षयत्व—मुक्त जीवो को कर्म-क्षय से प्राप्त होनेवाले गुणो में एक गुण-अतिशयो की प्राप्ति। मपु० ४२ ९६-९७, १०८

अक्षयवन—सुवेल नगर का एक वन। राम-लक्ष्मण के सहायक विद्याधर इसी वन में रात्रि-विश्राम करके लका जाने को उद्यत हुए थे। पपु० ५४.७२

अक्षय्य—भरत चक्रवर्ती और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५, २५ १७३

अक्षर—(१) श्रुतज्ञान के बीस भेदो में तीसरा भेद। यह पर्याय-समास-ज्ञान के पश्चात् आरम्भ होता है। हपु० १० १२-१३, २१ दे० श्रुतज्ञान

(२) यादव पक्ष का एक राजा। मपु० ७१ ७४

(३) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५, २५ १०१

अक्षरच्युतक—देवागनाओ द्वारा मरुदेवी के मनोरजन के लिए पूछी गयी प्रहेलिकाओ का एक भेद। मपु० १२.२२०-२४८

अक्षरत्व—मुक्त जीव का अविनाशी गुण। मपु० ४२ १०३

अक्षरम्लेच्छ—अधर्माक्षरो के पाठ से लोक के वचक पापसूत्रोपजीवी पुरुष। मपु० ४२ १८२-१८३

अक्षरविद्या—ऋषभदेव द्वारा अपनी पुत्री ब्राह्मी को सिखायी गयी विद्या-लिपिज्ञान। स्वर और व्यजन के भेद से इसके दो भेद होते हैं। मपु० १६ १०५-११६ हरिवशपुराण में इसे कला कहा है। हपु० ९ २४

अक्षर समास—श्रुतज्ञान का एक भेद-अक्षरज्ञान के पश्चात् पदज्ञान होने

तक एक-एक अक्षर की वृद्धि से प्राप्त ज्ञान। हपु० १० १२, २१ दे० श्रतज्ञान

अक्षरावलि—अक्षरमाला। स्वर और व्यंजन के भेद से इसके दो भेद होते हैं। संयुक्त अक्षर और बीजाक्षर इसी से निर्मित होते हैं। अकार से हकार पर्यन्त वर्ण, विसर्ग, अनुस्वार, जिह्वामूलीय और उपध्मानीय ये सभी इसमें होते हैं। मपु० १६ १०४-१०८ दे० अक्षरविद्या

अक्षीणर्द्धि—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से अन्न अक्षीण हो जाता है। मपु० ११ ८८

अक्षीण-पुष्पर्द्धि—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से पुष्प-सम्पदा में न्यूनता नहीं आती। मपु० ८ १४९

अक्षीण-महानस—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से रसोईघर में भोजन अक्षीण हो जाता है। मपु० ३६ १५५

अक्षीण सवास—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से निवास व्यवस्था अक्षीण रहती है। मपु० ३६ १५५

अक्षोभ्य—(१) विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अड़तालीसवाँ नगर। मपु० १९ ८५, ८७

(२) मथुरा के यादववंशी नृप अन्धकवृष्णि और उसकी रानी सुभद्रा का दूसरा पुत्र। समुद्रविजय इसका बड़ा भाई और स्तिमित-सागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, अभिचन्द्र और वसुदेव छोटे भाई थे। कुन्ती और माद्री इसकी दो बहिनें थी। हपु० १८ १२-१५ इसका अपरनाम अक्षुम्य था। हपु० ३१ १३० उद्धव, अम्भोधि, जलधि, वामदेव और दृढव्रत इसके पाँच पुत्र थे। हपु० ४८ ४५

(३) समवसरण-भूमि के पश्चिमी द्वार के आठ नामों में पाँचवाँ नाम। हपु० ५७ ५९ दे० आस्थानमण्डल

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४

अक्षौहिणी—सेना के ९ भेदों में एक भेद। यह सेना सर्वाधिक शक्ति सम्पन्न होती है। यह दस अनीकिनी सेनाओं के बराबर होती है। इसमें इक्कीस हजार आठ सौ सत्तर रथ और इतने ही हाथी, एक लाख नौ हजार तीन सौ पचास पदाति और पैंसठ हजार छः सौ दस अश्वारोही सैनिक होते हैं। पपु० ५६ ३-१३, पापु० १८ १७२-१७३ हरिवंशपुराण में अक्षौहिणी के नौ हजार हाथी, नौ लाख रथ, नौ करोड़ अश्वारोही और नौ सौ करोड़ पदाति सैनिक बताये गये हैं। हपु० ५० ७५-७६

अखिलज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०९

अगण्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३७

अगति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

अगन्धन—सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन के मंत्री श्रीभूति का जीव—इस नाम का एक सर्प। हपु० २७ २०-४२ श्रीभूति को योनि में यह सत्यघोष के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ था। धरोहर के रूप में अपने पास रखे हुए भद्रमित्र नामक वणिक् के रत्नों को लौटाने से यह लोभवश मुकर गया था। भद्रमित्र वृक्ष पर चढ़कर नित्य रोता और रत्न रख लिये जाने की बात करता था। इसका रुदन सुनकर रानी रामदत्ता ने सत्य जानना चाहा। इसके लिए उसने अपने पति सिंहसेन की आज्ञा से द्यूतक्रीडा की शरण ली। जुए में रानी ने सत्यघोष का यज्ञोपवीत और अंगूठी जीत ली। इसके पश्चात् एक कुशल सेविका को जुए में विजित दोनों वस्तुएँ देकर सत्यघोष की पत्नी से रत्नों का पिटारा मँगा लिया और भद्रमित्र को रत्न लौटा दिये। सत्यघोष को दण्डित किया गया जिससे वह आर्त्तध्यान से मरकर राजा के भाण्डागार में ही इस नाम का सर्प हुआ। मपु० ५९ १४६-१७७, हपु २७.२०-४२

अगण्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

अगति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४२

अगम्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

अगर्त—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का पश्चिम दिशावर्ती देश। हपु० ११ ७१-७३

अगर्भवास—गर्भवास से रहित होने के लिए "अगर्भवासाय नमः" इस पीठिकामन्त्र का जप किया जाता है। मपु० ४० १६

अगस्त्य—शरद् में उदित होनेवाला नक्षत्र। हपु० ३ २

अगाह्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का नाम। मपु० २५ १४९

अगुरुलघुत्व—सिद्ध के आठ गुणों में एक गुण। यह कर्म तथा नोकर्म के विनाश से उत्पन्न होता है। मपु० २०.२२२-२२३, ४२ १०४ दे० सिद्ध

अगृहीतेत्वरिकागमन—ब्रह्मचर्याणुव्रत के पाँच अतिचारों में चौथा अती-चार-स्वेच्छाचारिणी और अगृहीत कुलटा स्त्रियों के पास जाना। हपु० ५८ १७-४१७५

अगोचर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

अग्नि—(१) यह तीन प्रकार की होती है—गार्हपत्य, आह्वनीय और दक्षिण। ये तीनों अग्नियाँ अग्निकुमार देवों के मुकुट से उत्पन्न होती हैं। तीर्थंकर, गणधर और सामान्य केवली के अन्तिम महोत्सव में पूजा का अंग होकर पवित्र हो जाती है। इनकी पृथक्-पृथक् कुण्डों में स्थापना की जाती है। गार्हपत्याग्नि नैवेद्य के पकाने में, आह्वनीय धूप खेने में और दक्षिणाग्नि दीप जलाने में विनियोजित होती हैं। ये अग्नियाँ संस्कार विहीन पुरुषों को देय नहीं होती। मपु० ४० ८२-८८

(२) क्रोधाग्नि में क्षमा की, कामाग्नि में वैराग्य की और उदराग्नि में अनशन की आहुति दी जाती है। ऋषि, यति, मुनि, अनगार ऐसी आहुतियाँ देकर आत्मयज्ञ करते हुए मोक्ष प्राप्त करते हैं। मपु० ६७ २०२-२०३

(३) शरीर में भी तीन प्रकार की अग्नि होती है—ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि, और जठराग्नि। पपु० ११ २४८

अग्निकाय—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति इन पाँच प्रकार के स्थावर-एकेन्द्रिय जीवों में एक प्रकार के जीव। अपरनाम तेजस्काय। मपु० १७.२२-२३ हपु० ३ १२०-१२१

अग्निकुण्डा—नागनगर निवासी विश्वांग ब्राह्मण की भार्या, श्रुतिरत नामक विद्वान की जननी। पपु० ८५ ५०-५१

अग्निकुमार—दस प्रकार के भवनवासी देवो में नौवें प्रकार के देव। ये सदैव जाज्वल्यमान होकर पाताल में रहते हैं। ये देव समवसरण के सातवें कक्ष में बैठते हैं। मपु० ६२ ४५५, हपु० २ ८२, ४ ६४-६५

अग्निकेतु—गन्धवती नगरी के राजपुरोहित का पुत्र, सुकेतु का भाई। सुकेतु के विवाहित हो जाने पर दोनो भाइयो को पृथक-पृथक् की गयी शयन-व्यवस्था से दु खी होकर सुकेतु ने मुनि अनन्तवीर्य से दीक्षा धारण कर ली तथा भाई के वियोग से दु खी होकर यह तापस बन गया। अन्त में सुकेतु ने अपने गुरु से उपाय जानकर इसे भी दिगम्बर मुनि बना लिया। पपु० ४१ ११५-१३६

अग्निगति—समस्त विद्या-निकायो और नाना प्रकार की शक्तियो से युक्त पर्वत-वासिनी एक औषधि-विद्या। हपु० २२ ६८

अग्निज्वाल—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अडतालीसवाँ नगर। मपु० १९ ८३, ८७ हपु० २२ ९०

अग्निदेव—वृषभदेव के तेरहवें गणधर। हपु० १२ ५५-५७

अग्निभूति—(१) मगध देश में शालिग्राम के निवासी सोमदेव ब्राह्मण और उसकी पत्नी अग्निला का पुत्र, वायुभूति का सहोदर। नन्दिवर्द्धन मुनि-सघ के सत्यक मुनि से वाद-विवाद में पराजित होने तथा उनके द्वारा पूर्वभव में शृगाल होना बताये जाने के कारण लज्जा एव द्वेष से इसने सत्यक मुनि को मारने का उद्यम किया था जिसके फलस्वरूप यक्ष द्वारा इसे स्तम्भित कर दिये जाने पर इसके माता-पिता के विशेष निवेदन से इसे उत्कीलित किया गया था। इसके पश्चात् यह मुनि हो गया और आयु का अन्त होने पर सौधर्म स्वर्ग में पारिषद् जाति का देव हुआ। मपु० ७२ ३-२४, पपु० १०९ ३५-६१, ९२-१३०, हपु० ४३ १००, १३६-१४६

(२) वृषभदेव के चौदहवें गणधर। हपु० १२ ५५-५७

(३) तीर्थंकर महावीर के तीसरे गणधर। मपु० ७४ ३७३, वीवच० १९ २०६-२०७ दे० महावीर

(४) भरतक्षेत्र के श्वेतिका नगर का निवासी एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी का नाम गौतमी था। महावीर के पूर्वभव के जीव अग्निसह के ये दोनो माता-पिता थे। मपु० ७४ ७४ वीवच० २ ११७-११८

(५) वत्सापुरी का ब्राह्मण। इसका अपरनाम अग्निमित्र था। मपु० ७५ ७१-७४

(६) मगधदेश के अचलग्राम के निवासी धरणीजट ब्राह्मण और अग्निला ब्राह्मणी का पुत्र, इन्द्रभूति का सहोदर। मपु० ६२ ३२५-३२६

(७) चम्पापुर के सोमदेव ब्राह्मण का साला, सोमिला का भाई, अग्निला का पति और धनश्री, मित्रश्री तथा नागश्री का पिता। मपु० ७२ २२८-२८० सोमदत्त, सोमिल और सोमभूति इसके भानेज थे। इसने अपनी तीनो पुत्रियो का क्रमश इन्ही भानेजो के साथ विवाह कर दिया था। सोमदत्त आदि तीनो भाई मुनि हो गये और सन्यास पूर्वक मरकर आरणाच्युत स्वर्ग में देव हुए। धनश्री और मित्रश्री भी महाव्रतों को धारण कर इसी स्वर्ग में सामानिक देव हुई थी। नागश्री मुनि को विष मिश्रित आहार देने के फलस्वरूप धूमप्रभा नरक को प्राप्त हुई। हपु० ६४.४-११, ११३, पापु० २३ १११-११४

(८) इन्द्र की प्रेरणा से इन्द्रभूति और वायुभूति के साथ महावीर के समवसरण में आया एक पण्डित। इसने वस्त्र आदि त्याग कर समवसरण में सयम धारण किया था। हपु० २ ६८-६९

अग्निमित्र—(१) वृषभदेव के सोलहवें गणधर। हपु० १२ ५५-५८

(२) महावीर के निर्वाण के दो सौ पचासी वर्ष निकल जाने पर वसु और इसने साठ वर्ष तक राज्य किया था। हपु० ६० ४८७-४८९

(३) भगवान् महावीर के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६ ५३३-५३६

(४) भारतवर्ष के रमणीकमन्दिर नगर के ब्राह्मण गौतम और उसकी पत्नी कौशिकी का पुत्र, मरीचि का पूर्वभव का जीव। यह मिथ्यात्व पूर्वक मरकर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर पुरातनमन्दिर में भरद्वाज नामक ब्राह्मण हुआ। मपु० ७४ ७६-७९, वीवच० २ १२१-१२६

(५) मगध देश की वत्सा नगरी का एक ब्राह्मण। इसकी दो पत्नियाँ थी। उनमें एक ब्राह्मणी थी और दूसरी वैश्या। ब्राह्मणी से शिवभूति नामक पुत्र तथा वैश्या से चित्रसेना नाम की पुत्री हुई थी। मपु० ७५ ७१-७२

अग्निमुख—पोदनपुर नगर का एक ब्राह्मण। इसकी शकुना नाम की पत्नी और मृदुमति नाम का पुत्र था। पपु० ८५ ११८-११९

अग्निराज—मेघकूट नगर के राजा कालसंवर का शत्रु। इसे प्रद्युम्न ने पराजित किया था। मपु० ७५ ५४-५५, ७२-७३

अग्निल—पचम काल के अन्त में होनेवाला अन्तिम श्रावक। यह अयोध्या का निवासी होगा और इस काल के साढ़े आठ मास शेष रहने पर कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन प्रात वेला में स्वाति नक्षत्र के उदयकाल में शरीर त्याग कर स्वर्ग में देव होगा। मपु० ७६ ४३२-४३६

अग्निला—(१) मगध देश के शालिग्रामवासी सोमदेव ब्राह्मण की भार्या। इसके दो पुत्र थे—अग्निभूति और वायुभूति। शालिग्राम में आये मुनि नन्दिवर्धन पर उपसर्ग करने की चेष्टा के फलस्वरूप यक्ष द्वारा कीलित अपने पुत्रो को इसने मुक्त कराया था। मपु० ७२ ३-४, ३०-३२, पपु० १०९ ९८-१२६, हपु० ४३ १००

(२) मगध देश में स्थित अचल ग्राम के धरणीजट ब्राह्मण की गृहिणी। इन्द्रभूति और अग्निभूति इसके पुत्र थे। मपु० ६२ ३२५-३२६, पपु० ४ १९४

(३) चम्पापुर नगर के अग्निभूति की पत्नी। इसकी धनश्री, सोमश्री और नागश्री तीन पुत्रियाँ थी। मपु० ७२ २२८-२३०

अग्निबाण—विद्याधर सुनमि द्वारा प्रयुक्त एक विद्यामय बाण। मपु० ३७ १६२, ४४ २४२

अग्निवाहन—भवनवासी देवों का इन्द्र। वीवच० १४.५६ दे० भवनवासी

अग्निवेग—वसुदेव और उसकी रानी श्यामा का पुत्र। ज्वलनवेग इसका बड़ा भाई था। हपु० ४८.५४

अग्निशिख—(१) वाराणसी नगरी का इक्ष्वाकुवंशी राजा, तथा मल्लिनाथ तीर्थंकर के तीर्थ में हुए सातवें बलभद्र नन्दिमित्र और सातवें नारायण दत्त का पिता। इसकी दो रानियाँ थीं—अपराजिता और केशवती। इनमें अपराजिता नन्दिमित्र की और केशवती दत्त की जननी थी। मपु० ६६.१०२-१०७

(२) राम-लक्ष्मण की सेना का एक सामन्त। पपु० १०२.१४५

(३) कृष्ण का एक पुत्र। हपु० ४८.६९-७२ दे० कृष्ण

अग्निशिखी—भवनवासी देवों का तेरहवाँ इन्द्र। वीवच० १४.५५ दे० भवनवासी

अग्निसम—तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६.५३५

अग्निसह—भगवान महावीर के दूरवर्ती पूर्वभव का जीव-भरतक्षेत्र के सूतिक / श्वेतिक नगर के ब्राह्मण अग्निभूति और उसकी स्त्री गौतमी का पुत्र। यह परिव्राजक हो गया और मरकर सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से चयकर भरतक्षेत्र के रमणीकमन्दिर नगर में गौतम नामक ब्राह्मण और उसकी पत्नी कौशिकी का अग्निमित्र नामक पुत्र हुआ। मपु० ७४.७४-७७, वीवच० २.११७-१२२

अग्निस्तंभिनी—विद्याधरों को प्राप्त अग्नि का शमन करनेवाली एक विद्या। मपु० ६२.३९१

अग्र कुम्भ—रावण का सहयोगी एक विद्याधर। मपु० ६८.४३०

अग्रज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५०

अग्रणी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११५

अग्रनिर्वृति—गर्भ से लेकर निर्वाण पर्यन्त की तिरेपन गर्भान्वय क्रियाओं में अन्तिम क्रिया। यह योगों का निरोध और घाति कर्मों का विनाश करके स्वभाव से होनेवाली भगवान् की ऊर्ध्वगमन क्रिया है। मपु० ३८.६२, ३०८-३०९

अग्रहोऽन्यथा—अचौर्यव्रत की चौथी भावना-योग्यविधि के विरुद्ध आहार ग्रहण नहीं करना। मपु० २०.१६३ दे० अदत्तादान

अग्रायणीयपूर्व—चौदह पूर्वों में दूसरा पूर्व। इसमें छियानवें लाख पद हैं जिनमें सात तत्त्व तथा नौ पदार्थों का वर्णन है। इसमें चौदह वस्तुओं का वर्णन है। इन वस्तुओं के नाम हैं—पूर्वान्त, अपरान्त, ध्रुव, अध्रुव, अच्यवनलब्धि, अध्रुवसम्प्रणधि, कल्प, अर्थ, भौमावय, सर्वार्थकल्पक, निर्वाण, अतीतानागत, सिद्ध और उपाध्याय। इन वस्तुओं में पाँचवीं वस्तु के बीस प्राभृत हैं जिनमें कर्मप्रकृति नामक चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वार बताये हैं। उनके नाम हैं—कृति, वेदना, स्पर्श, कर्म, प्रकृति, बन्धन, निबन्धन, प्रक्रम, उपक्रम, उदय, मोक्ष, सक्रम, लेश्या, लेश्याकर्म, लेश्यापरिणाम, सातासात, दीर्घह्रस्व, भवधारण, पुद्गलात्मा, निधत्तानिधत्तक, सनिकाचित, अनिकाचित, कर्मस्थिति और स्कन्ध। हपु० २.९६-१००, १०.७६-७८ दे० पूर्व

अग्रावबोध—केवलज्ञान। मपु० ६१.५५

अग्राह्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७३

अग्रिम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५०

अग्रोद्यान—अयोध्या का निकटवर्ती एक उद्यान। तीर्थंकर अभिनन्दननाथ यहीं दीक्षित हुए थे। मपु० ५०.५१-५३

अग्र्य—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३७, २५.१५०

अघातिया—जीव के उपयोग गुण के अघातक कर्म। ये चार होते हैं—वेदनीय आयु नाम और गोत्र। मपु० ५४.२२७-२२८ हपु० ९.२०७-२१० दे० कर्म

अचर—स्थावर जीव। मपु० १९.२१८, हपु० ६६.४०

अचल—(१) वृषभदेव के चौरासी गणधरों में बाईसवें गणधर। हपु० १२.५५-७०

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित मगध देश का एक ग्राम। वसुदेव ने यहाँ वनमाला को प्राप्त किया था। मपु० ६२.३२५, हपु० २४.२५ पापु० ४.१९४

(३) अन्धकवृष्णि और सुभद्रा का छठा पुत्र। यह समुद्रविजय, अक्षोभ्य, स्तिमितसागर, हिमवान् और विजय का छोटा भाई तथा धारण, पूरण, अभिचन्द्र और वसुदेव का बड़ा भाई था। मपु० ७०.९४-९६, हपु० १८.१२-१४

(४) भगवान् महावीर के नवम गणधर। हपु० ३.४३

(५) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न दूसरा बलभद्र। हपु० ६०.२९०, वीवच० १८.१०१, १११ दे० अचलस्तोक

(६) वसुदेव के भाई अचल का पुत्र। हपु० ४८.४९

(७) वाराणसी नगरी का एक राजा, गिरिदेवी का पति। पपु० ४१.१०७

(८) राम की वानरसेना का एक योद्धा। पपु० ७४.६५-६६

(९) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक चक्रवर्ती। इसकी रानी का नाम रत्ना और पुत्र का नाम अभिराम था। पपु० ८५.१०२-१०३

(१०) अन्तिम सख्यावाची नाम। मपु० ३.२२२-२२७

(११) सिद्ध का एक गुण। इसकी प्राप्ति के लिए "अचलाय नमः" इस पीठिका-मन्त्र का जप किया जाता है। मपु० ४०.१३

(१२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१२८

(१३) मथुरा के राजा चन्द्रप्रभ और उसकी दूसरी रानी कनकप्रभा का पुत्र। इसने शस्त्रविद्या में विशिखाचार्य को पराजित कर कौशाम्बी के राजा कोशीवत्स की पुत्री इन्द्रदत्ता के साथ विवाह किया था। अन्त में इसे मथुरा का राज्य प्राप्त हो गया था। इसने कुछ समय राज्य करने के पश्चात् यश:समुद्र आचार्य से निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण कर ली थी तथा समाधिमरण करके स्वर्ग प्राप्त किया था। पपु० ९१.१९-४२

(१४) छठा रुद्र। यह वासुपूज्य तीर्थंकर के तीर्थ में हुआ था।

इसकी ऊँचाई सत्तर धनुष और आयु साठ लाख वर्ष थी। हपु० ६० ५३५-५३६, ५४०

अचलता—मुक्त जीव का गुण—परभाव का अभाव होने से उत्पन्न अचलता। मपु० ४० ९६, ४२ ९५-१०३

अचलस्तोक—तीर्थंकर वासुपूज्य के काल में उत्पन्न दूसरे बलभद्र। भरतक्षेत्र की द्वारावती नगरी के राजा ब्रह्मा और रानी सुभद्रा के ये पुत्र थे। प्रतिनारायण तारक के मरने के पश्चात् इन्हें चार रत्न प्राप्त हुए थे। इनके भाई का नाम द्विपृष्ठ था। तारक प्रतिनारायण को द्विपृष्ठ ने ही चक्र से मारा था। द्विपृष्ठ के मरने पर उसके वियोग से संतप्त होकर इन्होंने वासुपूज्य तीर्थंकर से संयम धारण कर लिया और तप करके मोक्ष पाया। मपु० ५८ ८३-११९ दूसरे पूर्वभव में ये महापुर नगर के वायुरथ नामक राजा थे। इसके पश्चात् प्राणत स्वर्ग के अनुत्तर विमान में ये देव हुए थे और वहाँ से च्युत होकर बलभद्र हुए थे। मपु० ५८ १२३

अचलस्थिति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४

अचलावती—मेरु पर्वत के गन्धमादन, माल्यवान्, सौमनस्य और विद्युत्प्रभ पर्वतों के आठ कूटों पर क्रीडा करनेवाली आठ दिक्कुमारी देवियों में आठवीं देवी। हपु० ५ २२६-२२७

अचित्त—वस्तु के सचित्त और अचित्त दो भेदों में दूसरा भेद-जीव रहित प्रासुक वस्तुएँ। मपु० २० १६५

अचिन्त्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६४

अचिन्त्यर्द्धि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

अचिन्त्यवैभव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४०

अचिन्त्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० १५ १४०

अचेलत्व—साधु का इस नाम का एक मूलगुण-(वस्त्ररहितता)। मपु० १८ ७१ दे० साधु

अचौर्याणुव्रत—पाँच अणुव्रतों में तीसरा अणुव्रत। ग्राम, नगर आदि में दूसरों की गिरी हुई गुमी हुई या भूलकर रखी हुई वस्तु को ग्रहण नहीं करना। इस अणुव्रत के पाँच अतीचार होते हैं—१ स्तेन-प्रयोग—कृत, कारित और अनुमोदना से चोर को चोरी में प्रवृत्त करना। २ तदाहृतादान-चोरी की वस्तुएँ खरीदना। ३ विरुद्ध-राज्यातिक्रम—राजकीय आज्ञा विरुद्ध क्रय-विक्रय करना। ४ हीनाधिक-मानोन्मान—कम और अधिक नापना, तौलना। ५ प्रतिरूपक-व्यवहार—कृत्रिम मिलावट कर दूसरों को ठगना। हपु० ५८ १७१-१७३, वीवच० १८ ४२

अच्छदन्त—हस्तवप्र नगर का राजा। यह धृतराष्ट्र का वंशज, प्रसिद्ध धनुर्धर और यादवों का छिद्रान्वेषी था। इसने नगर में बलदेव को आया हुआ जानकर उसे मारने के आदेश दिये थे। बलदेव ने अपने रोके जाने पर हाथी बाँधने के खम्भे से इस राजा की चतुरंगिणी सेना का विनाश किया था। हपु० ६२ ४-६, ९-१२

अच्छेद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

अच्छेद्यत्व—कर्मों के नाश से जीव के प्रदेशों का घनाकार परिणमन। इसकी प्राप्ति के लिए "अच्छेद्याय नमः" इस पीठिका-मन्त्र का जप किया जाता है। मपु० ४०.१५, ४२ १०२

अच्यवनलब्धि—अग्रायणीपूर्व की चौदह वस्तुओं में पाँचवीं वस्तु। हपु० १० ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

अच्युत—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० १४ ३४, २४ ३४, २५ १०९

(२) लक्ष्मण का पुत्र। पपु० ९४ २७-२८

(३) श्रीकृष्ण नारायण। हपु० ५० २

(४) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ २९-४०

(५) तीर्थंकर ऋषभदेव के पूर्वभव का जीव-अच्युतेन्द्र। हपु० ९ ५९

(६) इस नाम के स्वर्ग का तीसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५१

(७) अनन्तवीर्य का अनुज। मपु० १६ ३-४

(८) सोलहवाँ स्वर्ग। यह सभी स्वर्गों के ऊपर स्थित है। यहाँ सर्वदा रत्नमयी प्रकाश रहता है। यहाँ एक सौ उनसठ दिव्य विमान, एक सौ तेईस प्रकीर्णक और छः इन्द्रक विमान हैं। दस हजार सामानिक देव, तीस हजार त्रायस्त्रिंश देव, चालीस हजार आत्मरक्ष देव, एक सौ पच्चीस अन्तःपरिषद् के सदस्य देव, पाँच सौ बाह्य परिषद् के सदस्य देव और दो सौ पचास मध्यम परिषद् के सदस्य देव यहाँ के इन्द्र की आज्ञा मानते हैं। यहाँ सभी ऋद्धियाँ, मनोवाछित भोग और वचनातीत सुख प्राप्त होते हैं। सभी गायें कामधेनु, सभी वृक्ष कल्पवृक्ष और सभी रत्न चिन्तामणि रत्न होते हैं। दिन-रात का विभाग नहीं होता। जिनमन्दिरों में जिनेन्द्रदेव की सदैव पूजा होती रहती है। यहाँ का इन्द्र तीन हाथ ऊँचा, दिव्य देहधारी, सर्वमल रहित होता है। इसकी आयु बाईस सागर होती है। यह ग्यारह मास में एक बार उच्छ्वास लेता है। इसके मनःप्रवीचार होता है। यह स्वर्ग मध्यलोक से छः राजू ऊपर पुष्पक विमान से युक्त होकर स्थित है। इसे पाने के लिए रत्नावली तप किया जाता है। मपु० ७ ३२, १० १८५, ७३ ३०, पपु० १०५ १६६-१६९, हपु० ६ ३८, वीवच० ६ ११९-१३२, १६५-१७२

(९) तीर्थंकर वृषभदेव और उनकी रानी यशस्वती का पुत्र। यह चरमशरीरी था। इसका अपरनाम श्रीषेण था। मपु० १६ १-५, ४७ ३७२-३७३ सातवें पूर्वभव में यह विजयनगर में राजा महानन्द और उनकी रानी वसन्तसेना का हरिवाहन नामक पुत्र था। छठे पूर्वभव में यह अप्रत्याख्यान मान के कारण आर्त्तध्यान से मरकर सूकर हुआ। मपु० ८ २२७-२२९ पाँचवें पूर्वभव में पात्रदान की अनुमोदना के प्रभाव से उत्तर कुरुक्षेत्र में भद्र परिणामी आर्य हुआ। मपु० ९ ९० चौथे पूर्वभव में नन्द नामक विमान में मणिकुण्डली नामक देव हुआ। मपु० ९ १९० तीसरे पूर्वभव में नन्दिषेण राजा और अनन्तमती रानी का वरसेन नामक पुत्र हुआ। दूसरे पूर्वभव में

पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और उनकी श्रीकान्ता नामा रानी का पुत्र हुआ। मपु० १० १५०, ११ १० पहले पूर्वभव में यह अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ११ १६०-१६१ वर्तमान पर्याय में भरतेश द्वारा आधीनता स्वीकार करने के लिए कहे जाने पर विरक्त होकर इसने वृषभदेव से दीक्षा धारण कर ली थी। भरतेश के मोक्ष जाने के बाद इसने भी मोक्ष पाया। मपु० ३४ ९०-१२६, ४७ ३९८-३९९

अच्युता—सोलह निकायो की विद्याओ में से एक विद्या। हपु० २२ ६१-६५

अच्युतेश—अपराजित बलभद्र का जीव। मपु० ६३ ३१

अज—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०, २५ १०६

(२) राजा पृथु का पुत्र, पयोरथ का पिता। पपु० २२ १५४-१५९

(३) यज्ञकार्य में व्यवहृत इतना पुराना धान्य जो कारण मिलने पर भी अकुरित न हो सके। पपु० ११ ४१-४२, ४८, हपु० १७ ६९

(४) एक चतुष्पद प्राणी-बकरा। यज्ञ के प्रकरण में इस शब्द को लेकर बड़ा विवाद हुआ था। मपु० ४१ ६८, पपु० ११ ४३, हपु० १७.९९-१०५

अजन्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

अजमेध—महाकाल देव द्वारा चलाया गया एक हिंसामय यज्ञ। हपु० २३ १४१

अजर—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३४, २५ १०९

(२) जरा अवस्था से रहित देव और सिद्ध। अजरता की प्राप्ति के लिए 'अजराय नम' इस पीठिका मन्त्र का जप किया जाता है। मपु० ४० १५

अजरा—रावण को प्राप्त एक महाविद्या। पपु० ७ ३२८-३३२

अजय्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

अजाखुरी—सुराष्ट्र देश की राजधानी। इसी नगरी के राजा राष्ट्रवर्द्धन की पुत्री सुसीमा को कृष्ण हरकर द्वारिका लाये थे। हपु० ४४ २६-३२

अजात—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७१

अजातशत्रु—जरत्कुमार के वशज और कलिंग देश के हरिवशी राजा कपिष्ट का पुत्र। यह शत्रुसेन का पिता था। हपु० ६६ १-५

अजितंजय—(१) तीर्थंकर महावीर का प्रमुख प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६. ५३२-५३३

(२) महावीर-निर्वाण के सात सौ सत्ताईस वर्ष पश्चात् हुआ इन्द्रपुर नगर का एक राजा। हपु० ६०.४८७-४९२

(३) कस का एक धनुष। इस धनुष को चढानेवाले को कस के ज्योतिषी ने उसका वैरी बताया था। हपु० ३५ ७१-७७

(४) भरत चक्रवर्ती का दिव्यास्त्रो से युक्त, स्थल और जल पर समान रूप से गतिशील, दिव्याश्ववाही, चक्रचिह्नांकित ध्वजाधारी, दिव्य सारथी द्वारा चालित, हरितवर्ण का एक रथ। अपरनाम अजितजित। मपु० २८ ५६-५९, ३७ १६०, हपु० ११ ४

(५) अयोध्या नगरी के राजा जयवर्मा और इसकी रानी सुप्रभा का चक्रवर्ती पुत्र, अपरनाम पिहितास्रव। इसने बीस हजार राजाओ के साथ मन्दिरस्थविर नामक मुनिराज से दीक्षा ली थी तथा अवधिज्ञान और चारणऋद्धि प्राप्त की थी। मपु० ७ ४१-५२

(६) सुसीमा नगर का स्वामी। मपु० ७ ६१-६२

(७) पुष्करार्द्ध द्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित मगलावती देश के रत्नसंचयपुर नगर का राजा। वसुमती इसकी रानी और युगन्धर इसका पुत्र था। मपु० ७ ८९-९१

(८) भरत चक्रवर्ती का पुत्र। यह जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७ २८१-२८३

(९) धातकीखण्ड द्वीप के भरत क्षेत्र के अलका देश की अयोध्या नगरी का राजा। इसकी अजितसेना नाम की रानी और अजितसेन नाम का पुत्र था। विरक्त होकर इसने अपने पुत्र को राज्य दे दिया। फिर स्वयप्रभा तीर्थेश से अशोक वन मे दीक्षित होकर यह केवली हुआ। मपु० ५४ ८७, ९२-९५

(१०) गाधार देश के गाधार नगर का राजा। इसकी अजिता नाम की रानी और ऐरा नाम की पुत्री थी। मपु० ६३ ३८४-३८५

(११) सिंह पर्याय में महावीर के धर्मोपदेशी चारण-ऋद्धिधारी मुनि। ये अमितगुण नामक मुनि के सहगामी थे। महावीर के जीव ने सिंह पर्याय में इनके सदुपदेश से प्रभावित होकर श्रावक के व्रत धारण किये थे तथा अनशन पूर्वक व्रतो का निर्वाह करते हुए मरकर यह सौधर्म स्वर्ग में सिंहकेतु नामक देव हुआ था। मपु० ७४ १७१-१९३, वीवच० ४ २-५९

अजितंजित—चक्रवर्ती भरत का इस नाम का एक रथ। हपु० ११.४

अजितंधर—आठवाँ रुद्र। यह अनन्तनाथ तीर्थंकर के तीर्थ में हुआ था। हपु० ६० ५३६ दे० रुद्र

अजित—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५ दे० जरासन्ध

(३) वर्तमान चौबीस तीर्थंकरो में दूसरे तीर्थंकर। ये जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में साकेत नगरी के इक्ष्वाकुवशी काश्यपगोत्री राजा जितशत्रु और रानी विजयसेना के पुत्र थे। ये ज्येष्ठ मास की अमावस्या के दिन सोलह स्वप्नपूर्वक माता के गर्भ में आये और माघ मास के शुक्लपक्ष की दशमी (हरिवशपुराण के अनुसार नवमी) प्रजेशयोग में आदिनाथ के मोक्ष जाने के पश्चात् पचास लाख करोड़ सागर वर्ष व्यतीत हो जाने के बाद अवसर्पिणी काल के दुषमा-सुषमा नामक चौथे काल में जन्मे थे। मपु० २ १२८, ४८ १९-२६, हपु० १४, ६० १६९, वीवच० १८ १०१-१०५ जन्मते ही इनके पिता समस्त शत्रुओ के विजेता हुए थे अतः उन्होने इन्हें इस नाम से सम्बोधित किया था। सुनयना और नन्दा इनकी दो रानियाँ थी। दुर्वादियो से ये अजेय रहे। इनकी आयु बहत्तर लाख पूर्व थी। शारीरिक अवगाहना चार सौ पचास धनुष तथा वर्ण-तपाये हुए स्वर्ण के समान रक्त-पीत था। आयु का चतुर्थांश बीत जाने पर इन्हें राज्य मिला था। ये एक पूर्वांग तक राज्य करते रहे। इसके

पश्चात् एक कमलवन को विकसित और म्लान होते हुए देखकर सभी वस्तुओं को अनित्य जानकर ये वैराग्य को प्राप्त हुए थे। इन्होंने पुत्र अजितसेन को राज्य देकर माघ मास के शुक्लपक्ष की नवमी को अपराह्न में रोहिणी नक्षत्र में निष्क्रमण किया था। ये सुप्रभा नामक पालकी में मनुष्य, विद्याधर और देवों द्वारा सहेतुक वन ले जाये गये थे। वहाँ ये एक हज़ार (पद्मपुराण के अनुसार दस हज़ार) आज्ञाकारी क्षत्रिय राजाओं के साथ षष्ठोपवास सहित सप्तपर्ण वृक्ष के समीप दीक्षित हुए थे। दीक्षित होते ही इन्हें मनःपर्ययज्ञान हुआ था। दीक्षोपरान्त प्रथम पारणा में साकेत के राजा ब्रह्मदत्त ने इन्हें आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। बारह वर्ष (पद्मपुराण के अनुसार चौदह वर्ष) छद्मस्थ रहने के बाद पौष शुक्ल एकादशी के दिन सायं वेला तथा रोहिणी नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ था। ऋषभदेव के समान इनके भी चौंतीस अतिशय और आठ प्रातिहार्य प्रकट हुए थे, पादमूल में रहने वाले इनके सिंहसेन आदि नब्बे गणधर थे। समवसरण-सभा में एक लाख मुनि, प्रकुब्जा आदि तीन लाख बीस हज़ार आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक, पाँच लाख श्राविकाएँ और देव-देवियाँ थी। इन्होंने चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी के दिन रोहिणी नक्षत्र में प्रातःकाल प्रतिमायोग से सम्मेदाचल पर मुक्ति प्राप्त की थी। तीर्थंकरत्व की साधना इन्होंने दूसरे पूर्वभव में आरम्भ कर दी थी। इस समय ये पूर्व विदेह क्षेत्र की सुसीमा के विमलवाहन नामक नृप थे। इस पर्याय में इन्होंने तीर्थंकर नामकर्म का बन्ध किया था। पूर्वभव में ये विजय नामक अनुत्तर विमान में देव थे और वहाँ से च्युत होकर तीर्थंकर हुए थे। मपु० ४८ ३-५६, पपु० ५ ६०-७३, २१२, २४६, २० १८-३८, ६१, ६६-६८, ८३, ११३,११८, हपु० ६० १५६-१८३, ३४१, ३४९ वीवच० १८ १०१-१०५

अजितनाभि—नवम रुद्र। यह धर्मनाथ तीर्थंकर के तीर्थ में हुआ था। हपु० ६० ५३६ दे० रुद्र

अजितशत्रु—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५ दे० जरासन्ध

अजितसेन—(१) दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ का पुत्र। अजितनाथ इसे ही राज्य देकर दीक्षित हुए थे। मपु० ४८ ३६

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में स्थित कांचनतिलक नगर के राजा महेन्द्रविक्रम और उनकी रानी नीलवेगा का पुत्र। यह विद्या और पराक्रम से दुर्जेय था। तपस्या करके। अन्त में यह केवली हुआ। मपु० ६३ १०५-१०६, ११४

(३) काश्यपगोत्री एक राजा। प्रियदर्शना इसकी रानी और विश्वसेन इसका पुत्र था। मपु० ६३ ३८२-३८३

(४) पूर्व धातकीखण्ड में स्थित अयोध्या के राजा अजितंजय और उनकी रानी अजितसेना के पुत्र श्रीधर के जीव। ये चक्रवर्ती थे। इन्होंने अरिन्दम नाम के मुनि को आहार दिया था। अन्त में ये गुणप्रभ जिनेन्द्र से धर्मश्रवण कर विरक्त हो गये। इन्होंने जितशत्रु नाम के पुत्र को राज्य देकर तप धारण कर लिया था तथा निरति-चार तप करते हुए नभस्तिलक पर्वत पर शरीर त्याग कर सोलहवें स्वर्ग के शान्ताकार विमान में अच्युतेन्द्र का पद पाया था। ये स्वर्ग से चयकर पद्मनाभ हुए। इसके पश्चात् वैजयन्त स्वर्ग में अहमिन्द्र होकर ये तीर्थंकर चन्द्रप्रभ हुए। मपु० ५४.९२-१२६, २७६

अजितसेना—(१) अयोध्या के राजा अजितंजय की रानी, अजितसेन की जननी। मपु० ५४ ८७, ९२ दे० अजितंजय

(२) पुष्करार्ध के पश्चिम विदेह में स्थित गन्धिल देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में अरिन्दमपुर नगर के राजा अरिंजय की रानी, प्रीतिमती की जननी। मपु० ७० २६-२७, ३०-३१, हपु० ३४ १८

अजिता—गांधार देश में स्थित गान्धार नगर के राजा अजितंजय की रानी, ऐरा की जननी। मपु० ६३ ३८४-३८५

अजीव—सात तत्त्वों में दूसरा तत्त्व। वीवच० १६ ४-५ दे० तत्त्व। इसके पाँच भेद हैं—पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। इनमें धर्म, अधर्म, आकाश और काल अमूर्तिक तथा पुद्गल मूर्तिक है। यह तत्त्व निर्विकल्पियों के लिए हेय है किन्तु सरागी मनुष्यों को धर्म-ध्यान के लिए उपादेय है। मपु० २४ ८९, १३२, १४४-१४९, वीवच० ६ ११५, १७.४९

अजीवविचय—धर्म-ध्यान के दस भेदों में चौथा भेद-धर्म, अधर्म आदि अजीव द्रव्यों के स्वभाव का चिन्तन करना। हपु० ५६ ४४ दे० धर्मध्यान

अज्ञानपरीषह—बाईस परीषहों में एक परीषह—अज्ञान जनित वेदना सहना। मपु० ३६.१२७ दे० परीषह

अज्ञानमिथ्यात्व—मिथ्यात्व के पाँच भेदों में प्रथम भेद-पाप और धर्म के ज्ञान से दूरवर्ती जीवों के मिथ्यात्वकर्म के उदय से उत्पन्न मिथ्यात्व रूप परिणाम। मपु० ६२ २९७-२९८ दे० मिथ्यात्व

अटट—चौरासी लाख अटटांग प्रमाण काल। मपु० ३.२२४, हपु० ७ २८ दे० काल

अटटांग—चौरासी लाख तुटिक (तुट्यंग) प्रमाण काल। मपु० ३ २२४, हपु० ७ २८ दे० काल

अटवीश्री—शोभानगर के शक्ति नामक सामन्त की भार्या, सत्यदेव की जननी। इसने अमितगति मुनियों से शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा और कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन पाँच वर्ष तक निराहार रहने का नियम लिया था। पति-पत्नी दोनों ने मुनियों को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ४६ ९३-१०१, १२३-१२४

अणिमा—शरीर को सूक्ष्म रूप प्रदान करनेवाली एक विद्या। यह दशानन को भी प्राप्त थी। मपु० ५ २७९, ४९ १३, पपु० ७ ३२५-३३२

अणिष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

अणीयान्—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३

अणु—पुद्गल का अविभागी अत्यन्त सूक्ष्म अंश। अणुओं से स्कन्ध बनता है। इसमें आठ स्पर्शों में से कोई भी दो अविरुद्ध स्पर्श, एक वर्ण, एक गन्ध और एक रस रहता है। ये आकार में गोल, पर्यायों

की अपेक्षा अनित्य, अन्यथा नित्य होते हैं। मपु० २४ १४८, हपु० ५८ ५५ वीवच०, १६.११७

अणुमान्—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में विद्युत्कान्त नगर के स्वामी विद्याधर प्रभजन और उनकी रानी अजना का पुत्र। इसका मूल नाम अमिततेज था। शरीर को सूक्ष्मरूप देने में समर्थ होने से विद्याधरो ने इसे यह नाम दिया था। यह सुग्रीव का मित्र था। राम-नाम से अकित एक मुद्रिका राम से लेकर यह सीता की खोज करने लका गया था। वहाँ पहुँचकर इसने अपना रूप भ्रमर का बनाया था। शिंशिपा वृक्ष के नीचे सीता को देखकर इसने वानरविद्या से अपना रूप वानर का बनाया था और वृक्ष पर बैठकर वही वह अगूठी सीता के पास गिरायी थी। सीता की खोज करने के पश्चात् राम को सर्वप्रथम सीता की प्राप्ति का सन्देश इसी ने दिया था। इस कार्य के फलस्वरूप राम ने इसे अपना सेनापति बनाया था। सुग्रीव और इसने गरुडवाहिनी, सिंहवाहिनी, बन्धमोचिनी और हननावरणी विद्याएँ राम और लक्ष्मण को दी थी। अन्त मे इसने राम के साथ दीक्षा धारण की थी और श्रुतकेवली होकर मुक्ति प्राप्त की थी। मपु० ६८ २७५-२८०, २९३-२९८, ३११,३६३-३७०, ३७७, ५०८-५०९, ५२१-५२२, ७०९-७२०

अणुव्रत—गृहस्थ दशा मे पाँच महाव्रतो का एकदेश पालन करना। अणुव्रत पाँच है—अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत और इच्छापरमाणुव्रत। इन पाँचो की पाँच-पाँच भावनाएँ तथा अतिचार भी होते हैं। जो गृहस्थ भावनाओं के साथ इनका पालन निरतिचार करते हैं वे सम्यग्दर्शन की विशुद्धि पूर्वक परम्परा से मोक्ष पाते हैं। मपु० १० १६३-१६४, ३९ ४, पपु० ११ ३८-३९, ८५ १८, हपु० १८ ४६, ५८ ११६, १३८-१४२, १६३-१७६

अणुव्रती—स्थूल रूप से पाँच पापो से विरत, शील-सम्पन्न और जिन-शासन के प्रति श्रद्धा से युक्त मानव। ऐसा जीव मरकर देव होता है। हपु० १८ ४६, पपु० २६ ९९ दे० अणुव्रत

अणोरणीयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

अतन्द्रालु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०७

अतसी—एक प्रकार का अनाज-अल्सी। मपु० ३ १८७

अतिकन्यार्क—रावण के पक्ष का एक विद्याधर। मपु० ६८ ४३

अतिकाय—व्यन्तर देवो की एक जाति विशेष का पाँचवाँ इन्द्र। वीवच० १४ ६० दे० व्यन्तर

अतिगृद्ध—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी का राजा। यह मरकर विषयासक्ति और बहुत आरम्भ एव परिग्रह के कारण पकप्रभा नरकभूमि में उत्पन्न हुआ था। मपु० ८ १९१-१९३

अतिचार—व्रतो में शिथिलता लाकर विषयो में प्रवृत्ति करना। ये सम्यग्दर्शन के आठ, तथा अणुव्रतो और शीलव्रतो के पाँच-पाँच होते हैं। हपु० ५८ १६२-१६५, १७०

अतिथि—(१) भ्रमणशील, अपरिग्रही, सम्यग्दर्शन आदि गुणो से युक्त, निःस्पृही और अपने आगमन के विषय में किसी तिथि का सकेत किये बिना सयम की वृद्धि के लिए आहार हेतु गृहस्थ के घर आगत श्रमण-मुनि। हपु० ५८ १५८, १५ ६, पपु० १४ २००, ३५ ११३

(२) भरतक्षेत्र के चारणयुगल नगर के राजा सुयोधन की रानी, सुलसा की जननी। मपु० ६७ २१३-२१४

अतिथिसंविभागव्रत—चार शिक्षाव्रतों में चौथा शिक्षाव्रत, अपर नाम अतिथि-पूजन। पद्मपुराणकार ने इसे तीसरा शिक्षाव्रत कहा है। अपने आने की तिथि का सकेत किये बिना घर आये अतिथि को शक्ति के अनुसार आदरपूर्वक लोभरहित होकर विधिपूर्वक भिक्षा (आहार), औषधि, उपकरण तथा आवास देना। पपु० १४ १९९-२०१, हपु० १८ ४७, ५८ १५९, वीवच० १८ ५७ इसके पाँच अतिचार हैं—१ सचित्तनिक्षेप–हरे पत्तो पर रखकर आहार देना। २ सचित्तावरण–हरे पत्तो से ढका हुआ आहार देना ३ परव्यपदेश–अन्य दाता द्वारा देय वस्तु का दान करना ४ मात्सर्य–दूसरे दाताओं के गुणो को सहन नही करना ५ कालातिक्रम–समय पर आहार नही देना। यह गृहस्थो का व्रत है। पात्रो की अपेक्षा से यह अनेक प्रकार का होता है। पपु० ११ ३९-४०, हपु० ५८ १८३ दे० शिक्षाव्रत।

अतिदारुण—एक व्याध। यह छत्रपुर नगर के दारुण नामक व्याध और उसकी पत्नी मगी का पुत्र था। इसने प्रियगुखण्ड नाम के वन में प्रतिमायोग से तप करते हुए वज्रायुध मुनि को मार डाला था जिससे मरकर यह सातवें नरक मे उत्पन्न हुआ था। मपु० ५९ २७३-२७६, हपु० २७ १०७-१०९

अतिदुःषमा—अवसर्पिणीकाल का छठा और उत्सर्पिणीकाल का प्रथम भेद। अपर नाम दुःषमा-दुःषमा। मपु० ७६ ४५४, वीवच० १८ १२२ दे० दुःषमा-दुःषमा

अतिनिरुद्ध—पाँचवी धूमप्रभा नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार में स्थित तम नामक इन्द्रक बिल की पश्चिम दिशा में विद्यमान आर नामक इन्द्रक बिल की पश्चिम दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५५

अतिनिसृष्ट—चौथी पकप्रभा पृथिवी के प्रथम प्रस्तार आर इन्द्रक बिल की पश्चिम दिशा का महानरक। हपु० ४ १५५

अतिपिपास—रत्नप्रभा नामक नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार में विद्यमान सीमान्तक नामक इन्द्रक बिल की उत्तर दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५१

अतिबल—(१) वृषभदेव के पचहत्तरवें गणधर। हपु० १२ ५५-७०

(२) सूर्यवंशी राजा महाबल का पुत्र और अमृत का जनक। इसने निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० ५ ४-१०

(३) तीर्थंकर पद्मप्रभ के पूर्वभव का एक नाम। पपु० २० १४-२४

(४) भविष्यकालीन सातवाँ नारायण। हरिवंश-पुराणकार ने इसे

छठा नारायण कहा है। मपु० ७६ ४८७-४८८, हपु० ६० ५६६-५६७

(५) साकेत नगर का राजा। इसकी रानी श्रीमती और पुत्री हिरण्यवती थी। पूर्वभव मे यह मृगायण नाम का ब्राह्मण था। हपु० २७ ६१-६३

(६) विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में स्थित धरणीतिलक नगर का राजा। इसकी रानी सुलक्षणा और पुत्री श्रीधरा थी। हपु० २७ ७७-७८

(७) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा धनंजय और उसकी रानी यशस्वती का पुत्र। मपु० ७ ८१-८२

(८) हरिविक्रम नामक भीलराज का सेवक। मपु० ७५ ४७८-४८१

(९) इस नाम का एक असुर। मपु० ६३ १३५-१३६

(१०) विजयार्द्ध पर्वत स्थित अलकापुरी का खगेन्द्र। इसकी रानी मनोहरा और पुत्र महाबल था। जीवन, यौवन और लक्ष्मी को क्षणभंगुर जानकर इसने अभिषेक पूर्वक समस्त राज्य अपने पुत्र को सौंप दिया और दीक्षा ग्रहण कर ली थी। यह वृषभदेव के दसवें पूर्वभव का जीव था। मपु० ४ १०४, १२२, १३१-१३३, १४४-१५२, ५ २००

(११) अतिबल का नाती और महाबल का पुत्र। मपु० ५ २२६-२२८

अतिबेलम्ब—मानुषोत्तर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम कोण के वेलम्ब नामक कूट का निवासी वरुणकुमारो का अधिपति देव। हपु० ५ ६०९ दे० मानुषोत्तर

अतिभारारोपण—अहिंसाणुव्रत के पांच अतिचारो में चौथा अतिचार-अधिक भार लादना। हपु० ५८ १६४ दे० अहिंसाणुव्रत

अतिभूति—दारुग्राम के निवासी विमुचि ब्राह्मण तथा उसकी भार्या अनुकोशा का पुत्र। यह हिंसा का समर्थक तथा मुनिद्वेषी था। इसलिए दुर्ध्यान से मरकर दुर्गति को प्राप्त हुआ था। यही आगामी भव में सीता का भाई भामण्डल हुआ। पपु० ३० ११६-१३५

अतिमुक्त—इस नाम के एक मुनि। ये भिक्षा के लिए कंस के यहाँ आये थे। उसकी पत्नी जीवद्यशा ने इन्हें देवकी का ऋतुकाल सम्बन्धी वस्त्र दिखाया था जिससे कुपित होकर इन्होंने जीवद्यशा से कहा था कि देवकी का पुत्र तेरे पति और पुत्र दोनों को मारेगा। वसुदेव और देवकी से इन्होंने भविष्यवाणी की थी कि उनके सात पुत्र होगे जिनमें छ निर्वाण प्राप्त करेंगे और सातवा अर्ध चक्रवर्ती होकर पृथिवी का पालन करेगा। इनका अपरानाम अतिमुक्तक था। मपु० ७० ३७०-३८३, हपु० ३३ ३२-३६, ९३-९४

अतिमुक्तक—(१) उज्जयिनी नगरी एक श्मसान। तीर्थंकर वर्धमान के धैर्य की परीक्षा के लिए रुद्र ने उन पर यही अनेक उपसर्ग किये थे किन्तु वह उनको ध्यान से विचलित नही कर सका था। अन्त में रुद्र ने वर्धमान को महति और महावीर ये दो नाम दिये और उनकी अनेक प्रकार से स्तुति की। मपु० ७४ ३३१-३३७, वीवच० १३ ५९-७२

(२) एक मुनि। अपरनाम अतिमुक्त। हपु० १ ८९ दे० अतिमुक्त

अतिरथ—(१) धातकीखण्ड द्वीप मे पूर्व मेरु पर्वत से पूर्व की ओर स्थित विदेह क्षेत्र में पुष्पकलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा रतिषेण का पुत्र। रतिषेण ने इसे ही राज्यभार सौंपकर दीक्षा ग्रहण की थी। मपु० ५१ २-३, १२

(२) एक प्रकार के योद्धा। ये रथ में बैठे हुए युद्ध करते है। यादवो में नेमि, बलदेव और कृष्ण तीनो ऐसे ही योद्धा थे। हपु० ५० ७७

अतिरूपक—देवरमण वन का एक व्यन्तरदेव। सुरूप नामक देव और यह दोनो इसी वन में उत्पन्न हुए थे। पूर्व जन्म में दोनो गीध और कबूतर थे। दोनो ने मुनि मेघरथ से दान और उसके पात्र का स्वरूप भली प्रकार समझा था इसलिए अन्त में देह त्यागकर ये दोनो देव हुए थे। मपु० ६३ २७६-२७८

अतिरूपा—एक देवी। ईशानेन्द्र से मुनि मेघरथ के सम्यक्त्व की प्रशसा सुनकर सुरूपा नाम की एक अन्य देवी के साथ यह उनकी परीक्षा करने के भाव से उनके निकट आयी थी। इसने विलास, विभ्रम, हाव-भाव, गति, बातचीत तथा कामोन्मादक अन्य उपायो से मुनि मेघरथ को विचलित करने का प्रयत्न किया किन्तु यह उन्हें सम्यक्त्व से विचलित नही कर सकी। अन्त मे इन्द्र का कथन सत्य है—ऐसा कहती हुई यह स्वर्ग लौट गयी। मपु० ६३ २८५-२८७

अतिविजय—राम का एक योद्धा। पपु० ५८ १६-१७

अतिवीर्य—(१) भरत चक्रवर्ती का पुत्र। यह भरत के सेनापति जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७ २८१-२८३

(२) आदित्यवशी राजा प्रतापवान् का पुत्र और सुवीर्य का जनक। हपु० १३ ९-१०

(३) नन्द्यावर्तपुर का राजा। इसकी रानी का नाम अरविन्दा, पुत्र का नाम विजयरथ और पुत्री का नाम रतिमाला था। इसने विजय नगर के राजा पृथिवीधर को पत्र भेजकर राम और लक्ष्मण के वन जाने के पश्चात् अयोध्या के राजा भरत पर आक्रमण किया था। इस आक्रमण की सूचना पाकर राम और लक्ष्मण ने इसे अपनी सूक्ष्म-बूझ से जीवित पकड लिया। लक्ष्मण ने इसे मार डालना चाहा किन्तु सीता ने उन्हें इसका वध नही करने दिया। अन्त में राम ने भरत का आज्ञाकारी होकर नन्द्यावर्त नगर में इच्छानुसार राज्य करने की इसे अनुमति दे दी किन्तु "मुझे राज्य का फल मिल गया" ऐसा कहते हुए इसने श्रुतिधर मुनि से दीक्षा ग्रहण कर ली। पपु० ३७ ६-९, २६-२७, १२७-१६४, ३८ १-२

अतिवेग—धरणीतिलक नगर का राजा। इसकी रानी का नाम प्रियकारिणी और पुत्री का नाम रत्नमाला था। इसने पुत्री का विवाह जम्बूद्वीप के चक्रपुर नगर में वहाँ के राजा अपराजित और रानी चित्रमाला के पुत्र वज्रायुध से किया था। इस राजा की दूसरी रानी का नाम सुलक्षणा था। इन दोनो की एक श्रीधरा नाम की पुत्री थी जिसका

विवाह इन्होंने अलकानगरी के अधिपति दर्शक विद्याधर से किया था। मपु० ५९.२२८-२२९,२३९-२४२ राजा का अपर नाम प्रियकर और रानी का अपर नाम अतिवेगा था। हपु० २७ ९१-९२

अतिवेगा—विजयार्ध में दक्षिणश्रेणी के पृथिवीतिलकपुर अपर नाम धरणीतिलकनगर के राजा प्रियकर अपर नाम अतिवेग की रानी। इसका अपरनाम प्रियकारिणी था। मपु० ५९ २३९-२४२, हपु० २७ ९१-९२

अतिशय—अर्हन्त के विशेष वैभव की प्रतीक चौंतीस बातें। अपर नाम अतिशाय। मपु० ६ १४४, ५४ २३१ इनमें जो दस अतिशय जन्म के समय होते है वे हैं—शरीर की स्वेद रहितता, शारीरिक-निर्मलता, श्वेत-रुधिर, समचतुरस्रसस्थान, सुगन्धित शरीर, अनन्तशक्ति, शरीर का उत्तम लक्षणो से युक्त होना, अनुपम रूप, हितमित-प्रिय वचन और उत्तम सहनन। पपु० २ ८९-९०, हपु० ३.१०-११ केवलज्ञान के समय होने वाले दस अतिशय ये हैं—विहार के समय दो सौ योजन तक सुभिक्ष का होना, निर्निमेष दृष्टि, नख और केशो का वृद्धि रहित होना, कवलाहार का न रहना, वृद्धावस्था का न होना, शारीरिक-छाया का न होना, एक मुँह होने पर भी चार मुँह दिखायी देना, उपसर्ग का अभाव, प्राणिपीडा का अभाव और आकाश-गमन। पपु० २ ९१-९३, हपु० ३ १२-१५ चौदह अतिशय देवकृत होते हैं। वे ये हैं—जीवो में पारस्परिक मैत्रीभाव, मन्द सुगन्धित वायु का बहना, सभी ऋतुओ के फूल और फलो का एक साथ फूलना-फलना, दर्पण के समान पृथिवी का निर्मल होना, एक योजन पर्यन्त पवन द्वारा भूमि का निष्कटक किया जाना, स्तनितकुमार देवो द्वारा सुगधित मेघवृष्टि का होना, चलते समय चरणो के नीचे कमल-सृष्टि का होना, पृथिवी की धन-धान्य आदि से पूर्णता रहना, आकाश का निर्मल होना, दिशाओ का धूल और धुएँ आदि से निर्मल होना, धर्मचक्र का आगे-आगे चलना, अर्द्धमागधी भाषा, आकाश में द्रव्यो का होना और आठ मगल द्रव्यो का रहना। पपु० २ ९४-१०१, हपु० ३ १६-३०, वीवच० १९ ५६-७८

अतिशयमति—अयोध्या के राजा दशरथ का मत्री। मपु० ६७ १८५

अतीतानागत—अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ में बारहवी वस्तु। हपु० १० ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

अतीन्द्र—(१) मेघपुर नगर के विद्याधरो का स्वामी। इसकी स्त्री का नाम श्रीमती तथा पुत्र का नाम श्रीकण्ठ था। पपु० ६ २-५

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

अतीन्द्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

अतीन्द्रियार्थदृक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

अतुल—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४०

अतुलमालावर्त—इस नाम का एक शैल। जरासन्ध का पुत्र कालयवन यादवो के साथ सत्रह बार युद्ध करके इसी पर्वत पर मरा था। हपु० ३६ ७०-७१

अतुलार्थ—समवसरण भूमि मे तीसरे कोट के उत्तर दिशावर्ती द्वार के आठ नामो में तीसरा नाम। हपु० ५७ ५६, ६० दे० आस्थानमण्डल

अतोरण—भविष्यकाल में होनेवाले चौदहवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७३

अत्रि—इस नाम का एक वल्कलधारी तापस। पपु० ४ १२६

अदण्ड्यता—द्विज का आठवाँ अधिकार। मपु० ४० १९९-२०१

अदत्तादान—अहिंसा आदि पाँच महाव्रतो मे तीसरा महाव्रत—स्वामी के द्वारा अदत्त वस्तुओ को ग्रहण करने का न तो विचार करना और न ग्रहण करना। पपु० ६ २८७, हपु० २.११९, ५८ १४० इस व्रत की स्थिरता के लिए पाँच भावनाएँ होती हैं—१ शून्यागारावास २ विमोचितावास ३ परोपरोधाकरण ४ भैक्ष्यशुद्धि और ५. सधर्माविसवाद। हपु० ५८.१२० इस व्रत के अन्तर्गत ऐसी भी इतर पाँच भावनाएँ हैं जिनका सम्बन्ध मुनियो के आहार ग्रहण से है। वे ये हैं—१ मितग्रहण-परिमित आहार लेना २ उचितग्रहण-तपश्चरण के योग्य आहार लेना ३ अभ्यनुज्ञातग्रहण-श्रावक की प्रार्थना पर आहार लेना ४ अन्यग्रहोऽन्यथा-योग्यविधि से आहार लेना और ५ भक्तपान सन्तोष-प्राप्त आहार में सन्तोष रखना। ऐसा व्रती रत्नमयी निधि का धारक होता है। मपु० २० १६३, पपु० ३२ १५१

अदन्तधावन—साधु का एक मूलगुण। मपु० १८ ७१, ३६ १३४

अदर्शनी—दशासन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२८-३३२

अदिति—(१) विद्याधर मकरध्वज की भार्या, लोकपाल सोम की जननी। पपु० ७ १०८

(२) तप से भ्रष्ट हुए नमि और विनमि इन दोनो भाइयो ने ध्यानस्थ वृषभनाथ से राज्य की याचना की तब शासन की रक्षा करने में निपुण धरणेन्द्र के आदेश से उसके साथ आयी इस देवी ने उन दोनो को एक विद्याकोश तथा विद्याओ के ये आठ निकाय दिये थे—१ मनु २ मानव ३ कौशिक ४ गौरिक ५ गान्धार ६ भूमितुण्ड ७ मूलवीर्यक और ८ शकुक। हपु० २२.५१-५८

अदेवमातृक—भगवान् ऋषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित वह देश जो नदियो द्वारा सीचा जाता है। मपु० १६ १५७

अद्गु—तीर्थंकर अजितनाथ के काल मे हुए सगर चक्रवर्ती के साठ हजार पुत्रो में ज्येष्ठ पुत्र। किसी समय यह और इसके सभी भाई कैलाश पर्वत पर आठ पाद-स्थान बनाकर दण्डरत्न से भूमि खोद रहे थे। इससे कुपित होकर नागराज ने इन्हें भस्म कर दिया था। हपु० १३ २६-२९

अद्भुतवीर्य—सिद्ध के आठ गुणो मे एक गुण। इस गुण के कारण सिद्धो को ससार के समस्त पदार्थों के जानने में कोई परिश्रम या खेद नही होता, कोई पदार्थ प्रतिघातक भी नही होता। मपु० २० २२२-२२३, २४ ६२, ४२ ९९ दे० सिद्ध

अद्वैतवाद—केवल ब्रह्म को सत्य माननेवाला एकान्तवादी दर्शन। मपु० २१ २५३

अध प्रवृत्तिकरण—एक पारिणामिक प्रवृत्ति—अध-स्तन समयवर्ती परिणामो का उपरितन समयवर्ती परिणामो के साथ कदाचित् समानता रखना

अर्थात् प्रथम क्षण में हुए परिणामो का दूसरे क्षण में होना तथा दूसरे क्षण में पूर्व परिणामो से भिन्न और परिणामो का होना। यही क्रम आगे भी चलता रहता है। ऐसे परिणमन अप्रमत्तसयत नाम के सातवें गुणस्थान में होते हैं। मपु० २० २४३, २५०-२५२

अधरराग—अधर को रजित करनेवाला रस। मपु० ४३ २४९

अधर्म—(१) जीव तथा पुद्गल की स्थिति में सहायक एक द्रव्य, अपर-नाम अधर्मास्तिकाय। यह जीव और पुद्गल की स्थिति मे वैसे ही सहकारी होता है जैसे पथिक के ठहरने में वृक्ष की छाया। यह द्रव्य उदासीन भाव से जीव और पुद्गल की स्थिति में सहायक तो होता है किन्तु प्रेरक नही होता। मपु० २४ १३३,१३७, हपु० ४ ३,७२ वीवच० १६ १३०

(२) सुखोपलब्धि में बाधक और नरक का कारण—पाप। दया, सत्य, क्षमा, शौच, वितृष्णा, ज्ञान, और वैराग्य, ये तो धर्म हैं, इनसे विपरीत बातें अधर्म हैं। मपु० ५ १९,११४, १० १५, पपु० ६ ३०४

अधर्मधक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

अधर्मारि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९

अधर्मास्तिकाय—जीव और पुद्गल द्रव्य के ठहरने में सहायक एक द्रव्य। हपु० ४ ३ दे० अधर्म

अधिक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

अधिकार—ग्रन्थ के अनुभाग। महापुराण मे तिरसेठ महापुरुषो का वर्णन होने से तिरेसठ अधिकार है और पद्मपुराण में लोक-स्थिति, वंश, वन-गमन, युद्ध, लवणाकुश की उत्पत्ति, भवान्तर निरूपण और राम का निर्वाण ये सात अधिकार हैं। मपु० २ १२५-१२६, पपु० १ ४३-४४

अधिगमज सम्यक्त्व—सम्यक्त्व का दूसरा भेद। यह उपदेश से अथवा शास्त्राध्ययन से होता है। हपु० ५८ २० दे० सम्यक्त्व

अधिगुरु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७१

अधिज्योति—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ २४

अधित्यका—पर्वत का ऊपरी भाग। हपु० २ ३३

अधिदेव—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९२

अधिदेवता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु०२५ १९२

अधिप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५७

अधिराज—अनेक राजाओ का स्वामी। मपु० १६ २६२

अधिष्ठान—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु०२५ २०३

अधीती—कथा कहनेवाले का एक लक्षण-अनेक विद्याओ का अध्येता। मपु० १ १२९

अधोक्षज—कृष्ण का अपरनाम। मपु० ७१ ३५१-३५३, हपु० ३५ १९ दे० कृष्ण

अधोग्रैवेयक—नौ ग्रैवेयक विमानो में नीचे के तीन विमान। मपु० ९ ९३

अधोलोक—लोक के तीन भेदो में तीसरा भेद। यह वेत्रासन आकार मे सात रज्जु प्रमाण है। चित्रा पृथिवी के अधिभाग से दूसरी पृथिवी की समाप्ति पर्यन्त इस लोक का विस्तार एक रज्जु और दूसरी रज्जु के सात भागो में छ भाग है। तीसरी पृथिवी का विस्तार दो रज्जु और एक रज्जु के सात भागो में पाँच भाग प्रमाण, चौथी पृथिवी तीन रज्जु और एक रज्जु के सात भागो में चार भाग प्रमाण, पाँचवी पृथिवी चार रज्जु और एक रज्जु के सात भागो मे तीन भाग प्रमाण, छठी पृथिवी पाँच रज्जु और एक रज्जु के सात भागो में दो भाग प्रमाण तथा सातवी पृथिवी छ रज्जु और एक रज्जु के सात भागो में एक भाग प्रमाण है। इस प्रकार अधोलोक मात रज्जु प्रमाण है। मपु० ४ ४०-४१, हपु० ४ ७-२०, वीवच० १८ १२६ ये पृथिवियाँ क्रमश रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तम प्रभा और महातम प्रभा नाम से प्रसिद्ध हैं। घर्मा, वशा, मेघा, अजना, अरिष्टा, मघवी और माधवी ये इन पृथिवियो के क्रमश अपरनाम हैं। ये पृथिवियाँ क्रमश एक के नीचे एक स्थित हैं। प्रथम पृथिवी के तीन भाग हैं—खर, पक और अब्बहुल। इनमें खरभाग सोलह हजार, पकभाग चौरासी हजार और अब्बहुल भाग अस्सी हजार योजन मोटा है। दूसरी पृथिवी की मोटाई बत्तीस, तीसरी पृथिवी की अटठाईस, चौथी पृथिवी की चौबीस, पाँचवी पृथिवी की बीस, छठी पृथिवी की सोलह और सातवी पृथिवी की आठ हजार योजन है। हपु० ४ ४३-४९,५७-५८ इन भूमियों में उनचास पटल और उनमें चौरासी लाख बिल हैं। इन बिलो में वे जीव रहते हैं, जिन्होंने पूर्वभव मे महापाप किये होते हैं और जो सप्त व्यसन-सेवी, महामिथ्यात्वी, कुमतो में आसक्त रहे हैं। यहाँ जीवो को परस्पर लड़ाया जाता है, छेदा-भेदा जाता है, शूलो पर चढाया जाता है और भूख-प्यास तथा शीत और उष्णता जनित विविध दुःख दिये जाते हैं। वीवच० ११ ८८-९३ खण्ड-खण्ड किये जाने पर भी यहाँ के जीवो के शरीर पारे के समान पुन मिल जाते हैं, उनका मरण नही होता। वे सर्वदा शारीरिक एव मानसिक दुःख सहते हैं, खारा-गर्म-तीक्ष्ण वैतरणी का जल पीते हैं। दुर्गन्धित मिट्टी का आहार करते हैं। उन्हें निमिष मात्र भी सुख नही मिलता। यहाँ के जीव अशुभ परिणामी होते हैं। उनके नपुसक लिंग और हुण्डक-सस्थान होता है। हपु० ४ ३६३-३६८

अधोव्यतिक्रम—दिग्व्रत के पाँच अतिचारो में प्रथम अतिचार-लोभ के वशीभूत होकर नीचे जाने की ली हुई सीमा का उल्लघन करना। हपु० ५८ १७७

अध्यात्म—निर्द्वन्द्ववृत्ति-विकल्परहित शुद्धात्मपरक चितवृत्ति। मपु० ३६ १५६

अध्यात्मगम्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

अध्यात्मशास्त्र—आत्मा सम्बन्धी शास्त्र। मपु० ३८ ११८

अध्वर—(१) पूजनविधि का एक नाम। इसके याग, यज्ञ, क्रतु, पूजा, सपर्या, इज्या, मख और मह ये पर्यायवाची नाम हैं। मपु० ६७ १९३

(२) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४१

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

अध्वर्यु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

अध्वा—द्वीप-सागरो की एक दिशा का विस्तार, । इसे दुगुना करने पर रज्जु का प्रमाण निकलता है। हपु० ७ ५१-५२

अध्रुव—अग्रायणीय पूर्व की चौदह वस्तुओ मे चतुर्थ वस्तु। हपु० १० ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

अध्रुव सम्प्रणधि—अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ में छठी वस्तु। हपु० १०. ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

अनक्ष—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५

अनक्षर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५

अनगार—(१) तीर्थंकर शीतलनाथ के इक्यासी गणधरो मे इस नाम के मुख्य गणधर। मपु० ५६ ५०, हपु० ६० ३४७

(२) अपरिग्रही, नि स्पृही सामान्य मुनि। मपु० २१.२२०, ३८ ७, हपु० ३ ६२

अनगारधर्म—मुनियो के धर्म। ये धर्म हैं—पाँच महाव्रत, पाँच समितियाँ और तीन गुप्तियाँ। इन धर्मों के पालन से पूर्व सम्यग्दर्शन आवश्यक है। पपु० ४ ४८, ६ २९३। ऐसे मुनि मोह का नाश करते हैं और रत्नत्रय को प्राप्त करके स्वर्ग या मोक्ष पाते है, कुगतियो में नही जन्मते। पपु० ४ ४९-५१, २९२

अनघ—(१) वानरवशी एक नृप। पपु० ६ ० ५-६

(२) समवसरण के तीसरे कोट के दक्षिण दिशा सबधी द्वार के आठ नामो में एक नाम। हपु० ५७ ५८

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७२, १८६

अनङ्गक्रीडा—स्वदारसन्तोष व्रत का एक अतिचार। हपु० ५८.१७४-१७५ दे० ब्रह्मचर्य

अनङ्गकुसुम—रावण का एक योद्धा। पपु० ५७.५४-५६

अनङ्गपताका—राजा सत्यधर की छोटी रानी। यह बकुल की जननी थी। इसने धर्म का स्वरूप समझकर श्रावक के व्रत धारण किये थे। मपु० ७५ २५४-२५५ दे० सत्यधर

अनङ्गपुष्पा—चन्द्रनखा की पुत्री। रावण द्वारा यह हनुमान को प्रदान की गयी थी। पपु० १९ १०१-१०२

अनङ्गलवण—राम और सीता का पुत्र। यह पुण्डरीक नगर के राजा वज्रजघ के यहाँ श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन उत्पन्न हुआ था। मदनाकुश इसका भाई था। दोनो भाई युगल रूप में हुए थे। सिद्धार्थ ने इसे शस्त्र और शास्त्र विद्या सिखायी थी, इसका सक्षिप्त नाम लवण था। पपु० १०० १७-६९ दोनो भाइयो ने राजा पृथु से युद्ध किया था तथा उसे पराजित कर अन्यान्य देशों पर भी विजय प्राप्त की थी। पपु० १०१ २६-९०, नारद से राम द्वारा सीता के त्यागने का वृत्तान्त जानकर इसने राम से भी युद्ध किया था तथा युद्ध मे उन्हें रथ रहित किया था। पपु० १०२.२-१८२, सिद्धार्थ से इन दोनो भाइयो का परिचय प्राप्त करके विलाप करते हुए राम और लक्ष्मण इनसे मिले थे। पपु० १०३.४३-५८, काचनरथ की पुत्री मन्दाकिनी ने स्वयवर में अनङ्गलवण का वरण किया था। पपु० ११०.१, १८, लक्ष्मण के मरण के सन्देश से दुखी होकर ससार की स्थिति पर विचार करते हुए पुन गर्भवास न करना पडे इस ध्येय से यह अमृतस्वर नामक मुनिराज से दीक्षित हो गया था। पपु० ११५ ५४-५९ राम ने इसके पुत्र अनन्तलवण को ही राजपद सौंपा था। पपु० ११९ १-२

अनङ्गशरा—विदेहक्षेत्र स्थित पुण्डरीक देश के चक्रधर नगर के राजा चक्रवर्ती त्रिभुवनानन्द की पुत्री। इस राजा का सामन्त पुनर्वसु इसे हर ले गया था किन्तु राजा के सेवको द्वारा विरोध किये जाने पर सामन्त को इसे आकाश मे ही छोड देना पडा था। आकाश से यह पर्ण लघ्वी विद्या से श्वापद अटवी में नीचे आयी थी। इसने प्रासुक आहार की पारणा करते हुए तीन हजार वर्ष तक बाह्य तप किया था। पश्चात् चारो प्रकार के आहार का परित्याग कर सल्लेखना धारण की थी तथा सौ हाथ भूमि से बाहर न जाने का नियम लिया था। छ रात्रि बीत चुकने के बाद इसका पिता इसके पास आया था। उसने इसे अजगर द्वारा खाये जाते देखकर बचाना चाहा था किन्तु अजगर की पीडा का ध्यान रखते हुए इसने पिता को अजगर से अपने को मुक्त कराने की अनुमति नही दी थी और इस उपसर्ग को सहन करते हुए किये गये तप के प्रभाव से मरकर यह ईशान स्वर्ग में देव हुई तथा वहाँ से चयकर राजा द्रोणमेघ की विशल्या नाम की पुत्री हुई थी। पपु० ६४ ५०-५५, ८२-९२, ९६-९९

अनङ्गसुन्दरी—रावण की एक रानी। पपु० ७७ १४

अनण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

अनत्यय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७१

अनन्त—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३४, २५.६९

(२) एक मुनि का नाम। धातकी खण्ड के पूर्व भाग में स्थित तिलकनगर के राजा अभय घोष ने इनसे दीक्षा ली थी। मपु० ६३ १७३

(३) एक गणधर का नाम। धातकीखण्ड के सारसमुच्चय नामक देश में नागपुर नगर का नृप नरदेव इन्ही से सयमी हुआ था। मपु० ६८ ३-७

(४) गणना का एक भेद। मपु० ३ ३

(५) चौदहवें तीर्थंकर। अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चतुर्थ काल में उत्पन्न शलाका पुरुष। मपु० २ १३१, पपु० ५ २१५, हपु० १ १६, वीवच० १८ १०१-१०६ तीसरे पूर्वभव में ये धातकी-खण्ड द्वीप के पूर्वमेरु से उत्तर की ओर विद्यमान अरिष्टपुर नामक नगर के पद्मरथ नाम के नृप थे। पुत्र घनरथ को राज्य देकर इन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। सल्लेखना पूर्वक शरीर छोडकर दूसरे पूर्वभव में ये पुष्पोत्तर विमान में इन्द्र हुए थे। मपु० ६०.२-१२ इस स्वर्ग से च्युत हो ये जम्बूद्वीप के दक्षिण भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी में इक्ष्वाकु वश में काश्यप गोत्र के राजा सिंहसेन की रानी जयश्यामा के कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा की प्रभातवेला में सोलह स्वप्न

पूर्वक गर्भ में आये थे। ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशी के पूष योग में जन्म लेकर अभिषेकोपरान्त ये इन्द्र द्वारा 'अनन्तजिन' नाम से अभिहित किये गये थे। इनका जन्म तीर्थंकर विमलनाथ के बाद नौ सागर और पौन पल्य बीत जाने पर तथा धर्म की क्षीणता का आरम्भ होने पर हुआ था। इनकी आयु तीस लाख वर्ष और शारीरिक अवगाहना पचास धनुष थी। सर्व लक्षणों से युक्त इनका शरीर स्वर्ण-वर्ण के समान था। सात लाख पचास हजार वर्ष बीत जाने पर राज्याभिषेक प्राप्त किया था, और राज्य करते हुए पन्द्रह लाख वर्ष के पश्चात् उल्कापात देखकर ये बोधि प्राप्त होते ही अपने पुत्र अनन्तविजय को राज्य देकर तृतीय कल्याणक पूजा के उपरान्त सागरदत्त नामा पालकी में बैठे और सहेतुक वन गये। वहाँ ये ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशी की साय वेला में एक हजार राजाओ के साथ दीक्षित हुए। इन्होने प्रथम पारणा साकेत में की। विशाख नाम के राजा ने आहार दे पचाश्चर्य प्राप्त किये। सहेतुक वन में ही छद्मस्थ अवस्था में दो वर्ष की तपस्या के पश्चात् अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष के नीचे चैत्र कृष्ण अमावस्या की साय वेला में रेवती नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान हुआ। इनका चतुर्थ कल्याणक सोत्साह मनाया गया। इनके जय आदि पचास गणधर थे और सघ में छ्यासठ हजार मुनि एक लाख आठ हजार आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक, तथा चार लाख श्राविकाएँ थी। सम्मेदगिरि पर इन्होने एक मास का योग निरोध किया। छ हजार एक सौ मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण कर चैत्र मास की अमावस्या के दिन रात्रि के प्रथम प्रहर में ये परम पद को प्राप्त हुए। मपु० ६० १६-४५, पपु० २० १४, १२०, हपु० ६० १५३-१९५, ३४१-३४९

(६) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

अनन्तग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

अनन्त चक्षुष्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ८१

अनन्त चतुष्टय—घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य नाम के चार गुण। ये अर्हन्त और सिद्ध परमेष्ठियो को प्राप्त होते हैं। मपु० २१ ११४, १२१-१२३

अनन्तजित्—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ६९, १०४

(२) अनन्त ससार के जेता, मिथ्याधर्मरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्यस्वरूप चौदहवें तीर्थंकर। हपु० १ १६

अनन्तज्ञान—(१) सिद्ध जीव के आठ गुणो में एक गुण—ससार के समस्त पदार्थों को एक साथ जाननेवाला ज्ञान। इसके लिए मत्रो मे "अनन्तज्ञानाय नम" पीठिका मत्र व्यवहृत होता है। यह ज्ञानावरण कर्म के क्षय से उत्पन्न होता है। मपु० २० २२२-२२३, ४० १४, ४२ ९८ दे० सिद्ध

(२) नौ लब्धियो में इस नाम की एक लब्धि। मपु० २० २६५-२६६

अनन्तदर्शन—(१) सिद्ध (परमेष्ठी) के आठ गुणो में एक गुण। यह दर्शनावरण कर्म के क्षय से उत्पन्न होता है तथा इससे समस्त पदार्थों का एक साथ दर्शन होता है। इसके लिए मत्रो में 'अनन्तदर्शनाय नम' इस पीठिका मंत्र का व्यवहार होता है। मपु० २० २२२-२२३, ४० १४, ४२ ९९

(२) नौ लब्धियो में इस नाम की एक लब्धि। मपु० २० २६५-२६६

अनन्तदीप्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

अनन्तबल—सुवर्ण पर्वत पर विराजित एक केवलज्ञानी मुनि। मेरु-वन्दना से लौटते समय रावण ने इन्ही से परस्त्रीत्यागव्रत ग्रहण किया था। पपु० १४ १०, ३७०-३७१

अनन्तमति—एक मुनि का नाम। प्रथम नरक से निकलने के बाद विजयार्ध पर्वत पर राजा श्रीधर्म और उनकी रानी श्रीदत्ता से उत्पन्न श्रीदाम नाम का विभीषण का जीव मुनि इनका ही शिष्य बनकर ब्रह्म स्वर्ग में देव हुआ था। हपु० २७ ११३-११७

अनन्तमती—(१) राजा नन्दिषेण की रानी, मणिकुण्डल नामक देव के जीव वरसेन की जननी। मपु० १० १५०

(२) एक आर्यिका। राजा प्रजापाल की पुत्री यशस्वती ने मामा के द्वारा किये गये अपने अपमान से लज्जित होने से उत्पन्न वैराग्य के कारण इन ही से सयम धारण किया था। मपु० ४६ ४५-४७

(३) कौशाम्बी के राजा महाबल और उनकी रानी श्रीमती की पुत्री श्रीकान्ता की सहगामिनी। मपु० ६२ ३५१-३५४

(४) चक्रवर्ती भरत की रानी, पुरूरवा भील के जीव मरीचि की जननी। मपु० ७४,४९-५१

अनन्तमित्र—उग्रसेन के चाचा शान्तन का पाँचवाँ पुत्र, महासेन, शिवि, स्वस्थ और विषद इन चारो भाइयों का अनुज। हपु० ४८ ४०

अनन्तरथ—विनीता (अयोध्या) के राजा अनरण्य और उसकी महारानी पृथिवीमती का बड़ा पुत्र, राजा दशरथ का बड़ा भाई। यह पिता के साथ दीक्षित हुआ और अत्यन्त दु सह बाईस परीषहों से क्षुब्ध न होने से अनन्तवीर्य इस सज्ञा से अभिहित हुआ। पपु० २२ १६०-१६९

अनन्तधामर्षि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

अनन्तर्द्धि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

अनन्तलवण—अनङ्गलवण का पुत्र। राम ने अनगलवण को राजपद देना चाहा था किन्तु उसके दीक्षित होने के विचार को जानकर उन्होंने इसे ही राज्य प्रदान किया था। पपु० ११९ १-३

अनन्तविजय—ऋषभदेव का पुत्र, भरत चक्रवर्ती का छोटा भाई, चरमशरीरी। ऋषभदेव ने इसे चित्रकला का उपदेश दिया था। मपु० १६ २, ४, १२१, ३१० भरतेश के द्वारा अधीनता स्वीकार करने के लिए कहे जाने पर अपना स्वाभिमान सुरक्षित रखने की दृष्टि से यह दीक्षित हो गया था, तथा गणधर होने के पश्चात् इसने मुक्ति प्राप्त की थी। मपु० १६ २, ४, १२१, ३१०, ३४.१२६, ४७

३६७-३६९, ३९९ यह आठवें पूर्वभव में पूर्व विदेह क्षेत्र में वत्सकावती देश के राजा प्रीतिवर्धन का पुरोहित था। सातवें पूर्वभव में उत्तरकुरु भोगभूमि मे आर्य हुआ। छठे पूर्वभव में रुचित विमान में प्रभजन देव हुआ। पाँचवें पूर्वभव में धनदत्त और धनदत्ता का पुत्र धनमित्र सेठ हुआ। मपु० ८ २११-२१४, २१८ चतुर्थ पूर्वभव में यह अधोग्रैवेयक के सबसे नीचे के विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ९ ९२-९३ तीसरे पूर्वभव में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन का महापीठ नामक राजपुत्र हुआ। मपु० ११ ८-१३ इस भव के पूर्व यह सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र था। मपु० ९ १६०-१६१ युगपत सर्वभवो के लिए द्रष्टव्य है। मपु० ४७ ३६७-३६९

अनन्तवीर्य—(१) भविष्यत्कालीन चौबीसवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४८१, हपु० ६०.५६२

(२) तीर्थंकर ऋषभनाथ का पुत्र, भरतेश का ओजस्वी और चरम शरीरी अनुज। मपु० १६ ३-४ भरत की अधीनता स्वीकार करने के लिए कहे जाने पर इसने अधीनता स्वीकार न करके ऋषभदेव के समीप दीक्षा ग्रहण कर ली थी तथा मोक्ष प्राप्त किया था। मपु० २४ १८१ आठवें पूर्वभव में यह हस्तिनापुर नगर में सागरदत्त वैश्य के उग्रसेन नामक पुत्र, सातवें पूर्वभव में व्याघ्र, मपु० ८ २२२-२२३, २२६, छठे पूर्वभव में उत्तर कुरुक्षेत्र मे आर्य, पाँचवें पूर्वभव में ऐशान स्वर्ग मे चित्रागद देव, मपु० ९ ९०, १८७-१८९, चौथे पूर्वभव में राजा विभीषण और उनकी रानी प्रियदत्ता के वरदत्त नामक पुत्र, तीसरे पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में देव, मपु० १० १४९, १७२, दूसरे पूर्वभव में विजय नामक राजपुत्र और पहले पूर्वभव में स्वर्ग में अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ११ १०, १६०, इसका अपरनाम महासेन था। मपु० ४७ ३७०-३७१

(३) वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमितसागर तथा उसकी रानी अनुमति का पुत्र। पूर्वभव में यह स्वस्तिक विमान में मणिचूल नाम का देव था। राज्य पाकर नृत्य देखने में लीन होने से यह नारद की विनय करना भूल गया था जिसके फलस्वरूप नारद ने दमितारि को इससे युद्ध करने भेजा था। दमितारि के आने का समाचार पाकर यह नर्तकी के वेष में दमितारि के निकट गया था और उसकी पुत्री कनकश्री का हरण कर इसने दमितारि को उसके ही चक्र से मारा था। अर्धचक्री होकर यह मरा और रत्नप्रभा नरक में पैदा हुआ। वहाँ से निकलकर यह मेघवल्लभ नगर में मेघनाद नाम का राजपुत्र हुआ। मपु० ६२.४१२-४१४, ४३०, ३१.४४३, ४६१-४७३, ४८३-४८४, ५१२, ६३.२५, पापु० ४.२४८, ५.२-६

(४) जयकुमार तथा उसकी महादेवी शिवकरा का पुत्र। मपु० ४७.२७६-२७८, हपु० १२ ४८, पापु० ३ २७४-२७५

(५) विनीता नगरी का राजा। यह सूर्यवशशिखामणि, चक्रवर्ती सनत्कुमार का पिता था। मपु० ६१ १०४-१०५, ७०.१४७

(६) एक महामुनि। तीसरे पूर्वभव में तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के जीव चम्पापुर के राजा हरिवर्मा को इन्होने तत्त्वोपदेश दिया था। इसी प्रकार चक्रवर्ती हरिषेण ने भी इनसे मोक्ष का स्वरूप सुनकर संयम धारण किया था। मपु० ६७ ३-११, ६६-६८ विजयार्ध पर्वत की अलकापुरी नगरी के राजा पुरबल और उसकी रानी ज्योतिर्माला का पुत्र हरिवल इनसे द्रव्य-सयम धारण करके सौधर्म स्वर्ग मे देव हुआ था। मपु० ७१ ३११-३१२ श्रीधर्म इनके सहगामी चारण ऋद्धिधारी मुनि थे। शतबली अपने भाई हरिवाहन द्वारा निर्वासित किये जाने पर इनसे ही दीक्षित हुआ तथा मरकर ऐशान स्वर्ग मे देव हुआ था। हपु० ६० १८-२१, दशानन ने भी इन्ही से बलपूर्वक किसी भी स्त्री को ग्रहण न करने का नियम लिया था। पपु० ३९. २१७-२१८ जब ये छप्पन हजार आकाशगामी मुनियो के साथ लका के कुसुमायुध नाम के उद्यान में आये तब इनको केवलज्ञान इसी उद्यान में हुआ था। पपु० ७८ ५८-६१ इनका दूसरा नाम अनन्तबल था। पपु० १४ ३७०-३७१

(७) इस नाम का एक विद्वान्। यह जिनेन्द्र के अभिषेक से स्वर्ग में सम्मानित हुआ था। पपु० ३२ १६९

(८) मथुरा नगरी का राजा। इसकी रानी मेरुमालिनी से मेरु नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ था। मपु० ५९. ३०२

(९) सिद्ध(परमेष्ठी)के आठ गुणो में एक गुण—वीर्यान्तिराय कर्म के क्षय से उत्पन्न अप्रतिहत सामर्थ्य। इस गुण की प्राप्ति के लिए 'अनन्तवीर्याय नम' इस पीठिका-मत्र का जप किया जाता है। मपु० २० २२२-२२३, ४० १४, ४२ ४४, ९९ दे० सिद्ध

अनन्तशक्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

अनन्तश्री—पुष्कर द्वीप में भरतक्षेत्र के नन्दनपुर नगर के राजा अमितविक्रम और उसकी रानी आनन्दमती की पुत्री, धनश्री की बहिन। त्रिपुर नगर के स्वामी वज्रागद ने इन दोनो बहिनो का अपहरण किया था किन्तु अपनी पत्नी वज्रमालिनी से भयभीत होकर उसने इन्हें वश वन में छोड दिया था। वन में दोनो बहिनो ने सन्यासमरण किया और सौधर्म स्वर्ग में नवमिका और रति नाम की देवियाँ हुई। मपु० ६३.१२-१९

अनन्त सम्यक्त्व—सिद्ध के आठ गुणो में प्रथम गुण। मपु० २० २२२-२२३ दे० सिद्ध

अनन्तसुख—सिद्ध के आठ गुणो में एक गुण—मोहनीय कर्म के क्षय से भोग करने योग्य पदार्थो मे उत्कण्ठा का अभाव। मपु० २० २२२-२२३, ४२ ४४, १००

अनन्तसेन—(१) बलभद्र अपराजित का पुत्र। अपराजित इसे ही राज्य देकर सयमी हुआ था। मपु० ६३.२६, पापु० ५.३

(२) दमितारि की पुत्री कनकश्री के भाई सुघोष और विद्युद्दष्ट्र के साथ युद्ध मे तत्पर अपराजित और अनन्तवीर्य द्वारा भेजा हुआ एक योद्धा। मपु० ६२.५०३

(३) एक नृप। इसने अपने भाइयो सहित मेघस्वर (जयकुमार) के छोटे भाइयो पर आक्रमण किया था। जयकुमार से यह पराजित हुआ था। पापु० ३.११५

अनन्तसेना—भरत चक्रवर्ती की रानी। पुरूरवा भील का जीव मरीचि इसी रानी का पुत्र था। मपु० ६२ ८५-८९

अनन्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१०७

अनन्तौजा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०५

अनरण्य—विनीता (अयोध्या) नगरी का राजा, रघु का पुत्र। लोगों की निवासभूमि बनाकर देश को अरण्य रहित करने के कारण यह इस नाम से विख्यात हुआ। इसकी महादेवी पृथ्वीमती (अपरनाम सुमगला) थी। उससे अनन्तरथ और दशरथ नाम के इसके दो पुत्र हुए थे। माहिष्मती का राजा सहस्ररश्मि इसका मित्र था। पपु० २२. १६०-१६३, २८, १५८ यह और इसका मित्र वचनबद्ध थे कि जो पहले दीक्षित हो वह दूसरे को अवश्य सूचित करे। प्रतिज्ञानुसार सहस्ररश्मि से उसके दीक्षित होने की सूचना पाते ही इसने अपने एक मास के पुत्र दशरथ को राज्य सौंप दिया और बड़े पुत्र अनन्तरथ सहित दीक्षित होकर इसने मोक्ष पद प्राप्त किया। पपु० १० १६९-१७६, २२ १६६-१६८

अनर्थदण्डव्रत—गुणव्रत के तीन भेदों में तीसरा भेद–बिना किसी प्रयोजन के होने वाले विविध पापारम्भों का त्याग। इसके पाँच भेद हैं—पापोपदेश, अपध्यान, प्रमादाचरित, हिंसादान और अशुभश्रुति (दु श्रुति)। हपु० ५८ १४६, पापु० १४ १९८, वीवच० १८ ४९

अनल—(१) अग्नि। यह स्वय मे पवित्र एव देवरूप नही किन्तु अर्हन्त पूजा के सबध से पवित्र तथा निर्वाण क्षेत्र के समान पूज्य है। मपु० ४० ८८, ८९

(२) सिन्धु तट का एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के नृप पर विजय प्राप्त की थी। पपु० १०१ ७७-७८

अनलप्रभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९८

अनश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०१

अनलस्तम्भिनी—अग्नि के प्रभाव को रोकनेवाली एक विद्या। दशग्रीव (रावण) ने इसे प्राप्त किया था। पपु० ७.३२८-३३२

अनवद्यमति—सर्व उपधाओं से शुद्ध, मन्त्रियों के लक्षणों से सहित एक मन्त्री। इसने सुलोचना के कारण जयकुमार और अर्ककीर्ति के बीच उत्पन्न कलह के विनाशनार्थ विविध रूपों से अर्ककीर्ति को समझाया था। मपु० ४४ २२-५४, पापु० ३ ७१-७९ दे० उपधा

अनवेक्ष्यमलोत्सर्ग—प्रोषधोपवास व्रत के पाँच अतिचारों में प्रथम अतीचार–अनदेखी भूमि पर मलोत्सर्ग करना। हपु० ५८ १८१

अनवेक्ष्यसस्तरसंक्रम—प्रोषधोपवास व्रत का दूसरा अतिचार-अनदेखी भूमि पर बिस्तर आदि बिछाना। हपु० ५८ १८१

अनवेक्ष्यादान—प्रोषधोपवास व्रत का एक अतिचार–बिना देखे पदार्थ का ग्रहण करना या रखना। हपु० ५८ १८१

अनश्वर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का नाम। मपु० २४ ४४

अनशन—प्रथम बाह्य तप। मपु० १८ ६७-६८, सयम के पालन, ध्यान, की सिद्धि, रागनिवारण और कर्मविनाशन के लिए आहार का त्याग करना। मपु० ६ १४२, हपु० ६४.२१, वीवच० ६ ३२-४१ दे० तप

अन्तकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

अन्यकान्तक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७३

अनाकाङ्क्षा—साम्परायिक आस्रव की कारणभूत पच्चीस क्रियाओं में बीसवीं क्रिया। इस क्रिया से अज्ञान अथवा आलस्यवश शास्त्रोक्त रीति से विधियों के करने में अनादर होता है। हपु० ५८ ७८ दे० साम्परायिक आस्रव

अनाकार—दर्शनोपयोग। यह अनाकार होता है। मपु० २४ १०१-१०२

अनादर—(१) प्रोषधोपवास व्रत का एक अतिचार। व्रत के प्रति आदर नही रखना यह इसका अतिचार है। हपु० ५८.१८१

(२) जम्बूवृक्ष पर बने भवनों का निवासी एक देव। आदर नाम का देव भी इसी के साथ रहता है। हपु० ५ १८१

(३) सामायिक व्रत का अतिचार। सामायिक के प्रति आदर उत्साह न होने से सामायिक नही होता। हपु० ५८ १८०

अनाधृष्ट—धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी के सौ पुत्रों में चौरासीवा पुत्र। पापु० ८ १९३-२०५ दे० धृतराष्ट्र

अनादि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३४

अनादिनिधन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

अनाभोग—साम्परायिक आस्रव की कारणभूत पच्चीस क्रियाओं में पन्द्रहवीं क्रिया। बिना शोधी भूमि पर शरीरादि का रखना अनाभोग है। हपु० ५८ ७३ दे० साम्परायिक आस्रव

अनामय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४, २१७

अनायतन—मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र और इन तीनों के धारक मिथ्यादृष्टि, मिथ्याज्ञानी और मिथ्याचारित्री। वीवच० ६ ७५

अनावृत—जम्बूद्वीप का रक्षक एक यक्ष। इसने जम्बू स्वामी की कथा सुनकर आनन्द नामक नाटक किया था। पूर्वभव में यह जम्बूस्वामी के वश में हुए एक धर्मप्रिय सेठ और उसकी पत्नी गुणदेवी का अर्हद्दास नाम का पुत्र था, मपु० ७६ १२१-१२७, हपु० ५ ६३७ जम्बूवृक्ष पर निर्मित भवन का वासी यह देव किल्विषक जाति के सैकड़ों देवों से आवृत रहता है। इसने दशानन आदि तीनों भाइयों की विद्यासिद्धि में विभिन्न रूपों से उपद्रव किये थे तथा विद्या की सिद्धि होने पर उनको अर्चा भी की थी। पपु० ३ ४८, ७ २३७-३१२, ३३६

अनावृष्टि—वसुदेव तथा मदनवेगा का पुत्र, दृढमुष्टि का अनुज और हिममुष्टि का अग्रज। यह शस्त्र और शास्त्रार्थ में निपुण, दया से पराङ्मुख, महाशक्तिमान और महारथी था। हपु० ४८ ६१, ५० ७९ ८० कृष्ण और जरासन्ध युद्ध में कृष्ण ने इसे सेनापति बनाया था। जरासन्ध के वीर हिरण्याभ ने इसे सात सौ नब्बे बाणों द्वारा सत्ताईस बार युद्ध में आबद्ध किया था। बदला लेने में कुशल इसने उसे एक हजार बाणों द्वारा सौ बार नीचे गिराया था। अन्त में इसने हिरण्याभ को तलवार के घातक प्रहार से मार डाला था। कृष्ण द्वारा राजा

जाम्बव को पुत्री जाम्बवती का अपहरण करने पर विरोध स्वरूप आये राजा जाम्बव के साथ इसी ने युद्ध किया था तथा युद्ध मे राजा जाम्बव को बाँधकर श्रीकृष्ण को दिखाया था। नीतिज्ञ ऐसा था कि इसका पिता भी समय पर इसी से परामर्श किया करता था। हपु० ३६ १२, ४४ ८-१५, ५१ १२, ३४-४१

अनावृष्णि—वसुदेव का पुत्र। हपु० ३२ २२

अनाश्वान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

अनिकाचित—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के कम प्रकृति नाम के चतुर्थ प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में इस नाम का बाईसवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१-८६ दे० अग्रायणीयपूर्व

अनिच्छ—दूसरी शर्कराप्रभा पृथिवी (नरक) के प्रथम प्रस्तार सबधी तरक नामक इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५३ दे० शर्कराप्रभा

अनित्यानुप्रेक्षा—बारह अनुप्रेक्षाओ मे पहली अनुप्रेक्षा। सुख, आयु, बल, सम्पदा सभी अनित्य हैं, जीवन मेघ के समान, देह वृक्ष की छाया सदृश और यौवन जल के बुलबुलो के समान क्षणभगुर है। आत्मा के अतिरिक्त कोई वस्तु नित्य नही है। शरीर रोगो का घर है, इन्द्रिय सुख क्षणभगुर हैं, प्रत्येक वस्तु नाशवान् है, चक्रवर्तियो की राजलक्ष्मी भी अस्थिर है, इस प्रकार सासारिक पदार्थों की अनित्यता का चिन्तन करना अनित्यानुप्रेक्षा है। मपु० ११ १०५, पपु० १४ २३७-२३९, पापु० २५ ७५-८०, वीवच० ११ ५-१३, दे० अनुप्रेक्षा

अनित्वर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४

अनिद्रालु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०७

अनिन्दिता—(१) रत्नपुर नगर के राजा श्रीषेण की रानी और उपेन्द्रसेन की जननी। आदित्यगति और अरिंजय चारण मुनियो को राजा द्वारा दिये गये दान की अनुमोदना से इसने उत्तरकुरु की आयु का बन्ध किया था। अन्त मे विष-पुष्प को सूँघने से इसका मरण हुआ तथा यह मरकर आर्य हुई। मपु० ६२ ३४०-३५०, ३५७-३५८

(२) एक देवी। यह मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में नन्दन वन के बीच बलभद्रक कूट के आठवें चित्रक कूट मे निवास करती है। हपु० ५ ३२८-३३३

अनिन्द्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

अनिरुद्ध—प्रद्युम्न का पुत्र। यह जाम्बवती के पुत्र (शम्भव) के साथ सयमी हुआ था। दोनो प्रद्युम्न मुनि के साथ ऊर्जयन्त (गिरनार) पर्वत पर प्रतिमायोग से कर्म-विनाश कर मोक्षगामी हुए। मपु० ७२. १८९-१९१ यौवन काल में विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के श्रुत-शोणित नगर के राजा बाण की पुत्री उषा इसे अपना पति बनाना चाहती थी। उसकी कोई सखी इसके मनोगत भावो को जानकर इसे विद्याधर लोक मे ले गयी, वहाँ उसने इसका ककण बन्धन करा दिया। इधर इसके हरण किये जाने के समाचार जानकर श्रीकृष्ण, बलदेव, शम्ब और प्रद्युम्न आदि राजा बाण की नगरी पहुँचे और बाण को जीतकर उषा सहित इसे वापिस अपने नगर लाये थे। इसका अपर नाम अनंगशरीरज था। हपु० ५५ १६-२७

अनिल—एक राक्षसवशी नृप। राजा शतप्रभ के पश्चात् यह लका का स्वामी हुआ था। यह माया और पराक्रम से युक्त था, विद्या, बल और महाकान्ति का धारी था। ससार से भयभीत हो वश-परम्परा मे आगत राजलक्ष्मी अपने पुत्र को सौंपकर अन्त मे दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० ५ ३९७-४०१

अनिलवेग—(१) शिवकरपुर नगर का स्वामी, कान्तवती का पति और उससे उत्पन्न हरिकेतु और भोगवती का पिता। मपु० ४७ ४९-५०, ६०

(२) राजा वसुदेव और उसकी रानी श्यामा का द्वितीय पुत्र, ज्वलन का अनुज। हपु० ४८.५४

अनिलवेगा—विजयार्ध पर्वत पर स्थित अलका नगरी के राजा विद्याधर विद्युद्दंष्ट्र की रानी, सिंहरथ की जननी। मपु० ६३.२४१, पापु० ५ ६६

अनिवर्तक—आगामी बीसवे तीर्थंकर। महापुराण मे इसको अनिवर्ती नाम से अभिहित किया गया है। मपु० ७६ ४८०, हपु० ६०.५५८-५६२

अनिवृत्ति—एक मुनि। वीतभय बलभद्र इन ही से दीक्षा लेकर आदित्याभ नाम का लान्तवेन्द्र हुआ था। हपु० २७ ११-११४

अनिवृत्तिकरण—करणलब्धि। हपु० ३ १४२ इसमें जीवो की पारिणामिक विभिन्नता नही रहती। परिणामो की अपेक्षा से सभी जीव समान होते हैं। इस नवम गुणस्थान में आते ही जीव विशुद्ध परिणामी हो जाता है। उसके अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण सबधी आठ तथा हास्यादि छ॰ कषाएँ, त्रिवेद और सज्वलन, क्रोध, मान, माया और बादर लोभ नष्ट हो जाते हैं। मपु० २० २४३-२४६, २५३ स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, नरकगति, तिर्यंचगति, एकेन्द्रिय जाति, द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म और साधारण इन सोलह कर्म प्रकृतियो का भी नाश हो जाता है। वीवच० १३ ११४-१२० दे० गुणस्थान

अनिष्ट संयोगज—द्वितीय आर्त्तध्यान। इसमें अनिष्ट वस्तु के सयोग होने पर उत्पन्न भाव अथवा अनिष्ट वस्तु की अप्राप्ति के लिए चिन्तन होता है। मपु० २१ ३२, ३५ ३६ दे० आर्त्तध्यान

अनीक—देवो की एक जाति। पदाति, अश्व, वृषभ, रथ, गज, गन्धर्व और नर्तक के भेद से इनकी सात प्रकार की सेना होती है। मपु० २२ १९-२८ हपु० ३८ २२-२९,

अनीकदत्त—वसुदेव और देवकी का तृतीय पुत्र। नृपदत्त और देवपाल इसके अग्रज तथा अनीकपाल, शत्रुघ्न, जितशत्रु और कृष्ण अनुज थे। मपु० ७१ २९५-२९६, हपु० ३३ १७०-१७१ पाँचवें पूर्वभव मे यह मथुरा के करोड़पति भानु सेठ का पुत्र था, और चौथे पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग में देव था, वहाँ से च्युत होकर यह तीसरे पूर्वभव मे नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल और उनकी रानी मनोहारी का

पुत्र हुआ, दूसरे पूर्वभव में माहेन्द्र स्वर्ग में सामानिक जाति का देव और वहाँ से च्युत होकर प्रथम पूर्वभव में यह हस्तिनापुर में राजा गगदेव और उसकी रानी नन्दयशा का गगरक्षित नाम का पुत्र हुआ था। हपु० ३३ ९७-९८, १३०, १३३, १४०-१४३ सुदृष्टि सेठ के घर उसकी अलका सेठानी द्वारा इसका पालन किया गया था। इसकी बत्तीस स्त्रियाँ थी। अन्त में यह नेमिनाथ के समवसरण में उनसे धर्म श्रवण कर दीक्षित हो गया था। गिरिनार पर्वत से इसने मोक्ष प्राप्त किया था। हपु० ५९ ११४-१२४, ६५ १७

अनीकपालक—वसुदेव और देवकी का चौथा पुत्र। इसका पालन सुदृष्टि सेठ ने किया था। इसकी बत्तीस स्त्रियाँ थी। अरिष्टनेमि के समवसरण में जाकर और उनसे धर्मोपदेश सुनकर यह दीक्षित हो गया था। इसकी मुक्ति गिरिनार पर्वत पर हुई थी। मपु० ७१ २९३-२९६, हपु० ३३ १७०, ५९ ११५-१२०, ६५ १६-१९

अनीकिनी—सेना का एक भेद। इसमें २१८७ रथ २१८७ हाथी १०९३५ प्यादे और ६५६१ घोडे होते हैं। पपु० ५६ २-९

अनीदृक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

अनीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

अनुकम्पा—सम्यग्दर्शन का चतुर्थ गुण। मपु० ९ १२३ दे० सम्यक्त्व

अनुकूल—पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त चक्रवर्ती के पुत्र सागरदत्त का सेवक। सागरदत्त को मेघो का सौन्दर्य देखने के लिए इसी ने आग्रह किया था। मपु० ७६ १३९-१४६

अनुकोशा—दारुग्रामवासी विमुचि ब्राह्मण की भार्या, अतिभूति की जननी। इसने कमलकान्ता आर्यिका से दीक्षित होकर तप धारण कर लिया था। शुभ ध्यान पूर्वक महानिःस्पृह भाव से मरण कर यह ब्रह्मलोक में देवी हुई थी तथा यहाँ से च्युत हो चन्द्रगति विद्याधर की पुष्पवती नाम की भार्या हुई। पपु० ३० ११६, १२४-१२५, १३४

अनुत्तर—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३

(२) यह स्वर्ग से च्युत होकर लका में राक्षसवश में उत्पन्न हुआ। यह माया और पराक्रम से सहित, विद्याबल और महाकान्ति का धारी तथा विद्यानुयोग में कुशल था। अर्हद् भक्ति के पश्चात् यही लका का स्वामी हुआ। पपु० ५ ३९६-४००

(३) शतार स्वर्ग में उत्पन्न भावन वणिक् का पुत्र हरिदास का जीव। पपु० ५ ९६-११०

(४) नव ग्रैवेयकों के आगे स्थित नौ अनुदिशो के ऊपर अवस्थित पाँच विमान। इनके नाम विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि हैं। इनके निवासी देव कल्पातीत कहे जाते हैं। पपु० १०५ १७०-१७१, हपु० ३ १५०, ६ ४०

(५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

(६) भरतेश के सिंहासन का नाम। मपु० ३७ १५४

अनुत्तरोपपादिकदशांग—नवम अग। इसमें बानवें लाख चवालीस हजार पद हैं। इन पदो में स्त्री, पुरुष और नपुसक के भेद से तीन प्रकार के तिर्यंच और तीन प्रकार के मनुष्यकृत तथा स्त्री और पुरुष के भेद से दो प्रकार के देवकृत इस प्रकार कुल आठ चेतनकृत तथा दो अचेतनकृत-कुष्टादि शारीरिक तथा शिला आदि का पतन, इस प्रकार कुल दश प्रकार के उपसर्ग सहन कर अनुत्तर विमानो मे उत्पन्न होने वाले दस मुनियो का वर्णन किया गया है। मपु० ३४ १४३ हपु० १० ४०-४२, दे० अग

अनुदात्त—स्वर का दूसरा भेद। यह ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत होता है। हपु० १७ ८७

अनुदिश—(१) ग्रैवेयक और अनुत्तर विमानो के मध्य स्थित नौ विमान। इनके नाम हैं—१ आदित्य, २ अर्चि ३ अर्चिमालिनी ४ वज्र ५ वैरोचन ६ सौम्य ७ सौम्यरूपक ८ अक और ९ स्फुटिक। इन विमानो के निवासी देव कल्पातीत कहे जाते हैं। हपु० ३ १५०, ६ ३९-४०, ६३-६४

(२) समवसरण में स्थित नौ स्तूप। इन स्तूपों में सभी अनुदिश विमान प्रत्यक्ष दीखते हैं। हपु० ५७ १०१

(३) कठिन तप से प्राप्य अच्युत एव आनत स्वर्गों का इस नाम का एक विमान। रानी सुप्रभा इसी विमान में देव हुई थी। मपु० ७ ४४, ६३ २४

अनुद्धर—विद्याधरो का स्वामी। यह राम-रावण युद्ध के समय राम के पक्ष का व्याघ्ररथारोही योद्धा था। पपु० ५८ ३-७

अनुद्धरा—महातपस्वी श्रमण मतिवर्धन के सघ की धर्मध्यान परायणा श्रेष्ठ गणिनी। पपु० ३९ ९५-९६

अनुन्धरी—(१) रत्नसचय नगर के राजा विश्वदेव की भार्या। मपु० ७१ ३८७ दे० अनुन्धरी

(२) चन्द्रपुर के राजा महेन्द्र की भार्या। मपु० ७१ ४०५-४०६ दे० अनुन्धरी

अनुन्धर—भरतक्षेत्र में स्थित अरिष्टपुर नगर के राजा प्रियव्रत और उसकी प्रथम रानी काचनाभा का पुत्र। इसके रत्नरथ और विचित्ररथ नाम के दो भाई और थे जो राजा की दूसरी रानी पद्मावती के पुत्र थे। श्रीप्रभा नाम की कन्या के कारण रत्नरथ और इसके बीच युद्ध हुआ। पराजित हो जाने से इसे रत्नरथ द्वारा देश से निकाल दिया गया था। इसके बाद यह जटाजूटधारी तापस बन गया। चिरकाल तक राज्य भोगकर रत्नरथ और विचित्ररथ दोनो तो मरे और सिद्धार्थ नगर के राजा क्षेमकर के पुत्र देशभूषण और कुलभूषण हुए। इधर यह तापस विलासिनी मदना की पुत्री नागदत्ता द्वारा प्रेमपाश में फँसाया गया और राजा द्वारा अपमानित हुआ। अन्त में मरकर यह वह्निप्रभ नामक देव हुआ। अवधिज्ञान से क्षेमकर के पुत्र देशभूषण और कुलभूषण को अपना पूर्वभव का वैरी जान कर यह उनके समीप उपसर्ग करने गया था किन्तु उनके चरमशरीरी होने के कारण तथा राम और लक्ष्मण द्वारा उपसर्ग दूर किये जाने से देशभूषण और कुलभूषण तो केवली हुए और यह इन्द्र के भय से शीघ्र ही तिरोहित हो गया था। पपु० ३९ १४८-२२५

अनुन्धरी—(१) धातकीखण्ड द्वीप के विदेह क्षेत्र में स्थित मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर के राजा विश्वसेन की रानी । महापुराण में राजा का नाम विश्वदेव और रानी का नाम अनुन्दरी कहा गया है । अयोध्या के राजा पद्मसेन द्वारा अपने पति के युद्ध में मारे जाने पर यह अति व्याकुलित हुई । सुमति मंत्री द्वारा सम्बोधे जाने पर भी मोह के कारण यह सम्यग्दर्शन को प्राप्त न कर सकी । अन्त में यह अग्नि में प्रवेश कर मरी और मरकर विजयार्ध पर्वत पर विजय नामक व्यन्तर देव की ज्वलनवेगा नाम की व्यन्तरी हुई । मपु० ७१. ३८७-३८९, हपु० ६० ५७-६१

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में चन्द्रपुर नगर के राजा महेन्द्र की रानी, कनकमाला की जननी । इसका अपरनाम अनुन्दरी था । मपु० ७१ ४०५-४०६, हपु० ६० ८०-८२

(३) वज्रजंघ की छोटी बहिन, वज्रबाहु की पुत्री तथा अमिततेज की पत्नी । मपु० ८ ३३

(४) हस्तिनापुर के निवासी द्विज कपिष्ठल की पत्नी, गौतम की जननी । मपु० ७०.१६०-१६१

(५) पोदनपुर नगर निवासी, वेदशास्त्रज्ञ विश्वभूति ब्राह्मण की भार्या, कमठ और मरुभूति नामक पुत्रों की जननी । मपु० ७३ ८-९

(६) सुग्रीव की पुत्री । राम के गुणों को सुनकर स्वयंवरण की इच्छा से अपनी अन्य बारह बहिनों के साथ यह राम के निकट आयी थी । पपु० ४७ १३६-१४४

अनुनाग—दश पूर्वों के धारक एक मुनि । मपु० ७६ ५२२

अनुपम—(१) वृषभदेव के चौरासीवें गणधर । हपु० १२ ७०

(२) प्राणत स्वर्ग का विमान । द्वितीय अर्धचक्री द्विपृष्ठ के पूर्वभव का जीव इसी विमान में था । मपु० ५८ ५९, ७९, ८४

अनुपमा—(१) राजा सत्यधर के मंत्री की पत्नी, मधुमुख की जननी । मपु० ७५ २५६-२५९

(२) हेमांगद देश में राजपुर नगर के रत्नतेज नामक वैश्य की पुत्री । इसकी माता का नाम रत्नमाला था । इसका गुणमित्र नामक वैश्यपुत्र से विवाह हुआ था । पति के जल में डूब जाने से यह भी उसके साथ उसी जलाशय में डूब मरी थी । मपु० ७५ ४५०-४५१, ४५४-४५६

अनुपमान—विजयार्ध पर्वत के अधिष्ठाता देव विजयार्द्धकुमार ने इस नाम के चमर चक्रवर्ती भरत को भेंट किये थे । मपु० ३७ १५५

अनुप्रवृद्धकल्याण—एक उपवास । इसमें शुक्लपक्ष के प्रथम दिन तथा कृष्णपक्ष की अष्टमी के दिन आहार का परित्याग किया जाता है । मपु० ४६ ९९-१००

अनुप्रेक्षा—(१) वैराग्य वृद्धि में सहायक बारह भावनाएँ । वे ये हैं—अनित्य,अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्व, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्म । मपु० ३६ १५९-१६०, पपु० १४ २३७-२३९, हपु० २ १३०, पापु० २५ ५८-१२३, वीवच० ११ ३-४

(२) स्वाध्याय तप का तीसरा भेद—ज्ञात का मन से अभ्यास अथवा चिन्तन करना । दे० स्वाध्याय

अनुभव—कर्म—बन्ध के चार भेदों में तीसरा भेद । पुद्‌गल की फलदान शक्ति में उसकी समर्थता के अनुसार हीनाधिकता का होना । महापुराण में इसे अनुभागबन्ध कहा है । मपु० २० २५४, हपु० ५८ २०२-२०३, २१२ दे० बन्ध

अनुभाग—अनुभव का अपरनाम । मपु० २० २५४-२५५ दे० अनुभव

अनुमति—(१) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमितसागर की दूसरी रानी, अनन्तवीर्य की जननी । मपु० ६२ ४१२-४१३, पापु० ४ २४५-२४८

(२) गजपुर (हस्तिनापुर) नगर निवासी कापिष्ठलायन ब्राह्मण की भार्या, गौतम की जननी । पुत्र होते ही इसका मरण हो गया था । हपु० १८ १०३-१०४

(३) किन्नरगीत नगर के राजा रतिमयूख की रानी सुप्रभा की जननी । पपु० ५ १७९

(४) राजा चक्राङ्क की रानी, साहसगति की जननी । पपु० १० ४

(५) सीता की सहवर्तिनी एक देवी । यह नेत्र-स्पन्दन के फल जानने में निपुण थी । पपु० ९६ ७-८

अनुमतिका—सुकुमारिका का जीव । इसने सुव्रत मुनि को विष मिश्रित आहार देकर मार डाला था । बहुत काल तक नरक-दुःख भोगने के बाद अन्त में निदानपूर्वक किये गये तप से यह द्रौपदी हुई थी । हपु० ४६ ५०-५७

अनुमतित्यागप्रतिमा—श्रावकधर्म की ग्यारह प्रतिमाओं में दसवीं प्रतिमा । इस प्रतिमा का धारी घर के आरम्भ विवाह आदि में निज आहार-पान आदि में और धनोपार्जन में अनुमति देने का त्यागी होता है । वीवच० १८ ६८ दे० श्रावक

अनुयोग—(१) समस्त श्रुतस्कंध । (अर्हद्‌भाषित सूक्त) । इसके चार अधिकार हैं—प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग । मपु० २ ९८-१०१, ५४ ६, ६.१४६, १४८, हपु० २ १४७

(२) श्रुतज्ञान के २० भेदों में ग्यारहवां भेद । हपु० १० १२ दे० श्रुतज्ञान

अनुयोगद्वार—जीवतत्त्व के अन्वेषण के द्वार । ये आठ होते हैं—सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, भाव, अन्तर और अल्पबहुत्व । मपु० २४ ९६-९८, हपु० २.१०८

अनुयोग-समास—श्रुतज्ञान के बीस भेदों में बारहवां भेद । हपु० १० १३ दे० श्रुतज्ञान

अनुराधा—(१) विद्याधर चन्द्रोदर की पत्नी । पति के युद्ध में मारे जाने से बहुत दुःखी हो गर्भावस्था में इसे विद्याधरों से शून्य होकर वन में भटकना पड़ा था । मणिमान् पर्वत पर एक दिन में तथा इसने एक पुत्र को जन्म दिया था । शत्रुओं ने पुत्र को गर्भ में ही विराधित किया था, अतः इसने उसे "विराधित" नाम दिया था । पपु० १.६६, ९.४०-४४

(२) नक्षत्र । चन्द्रप्रभ तीर्थंकर का इसी नक्षत्र में जन्म हुआ था । पपु० २० ४४

अनुवादी—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद इन सात प्रकार के स्वरों के प्रयोग करने के चार प्रकारों में चौथा प्रकार । हपु० १९ १५३, १५४

अनुविन्द—राजा धृतराष्ट्र और उनकी रानी गान्धारी के सौ पुत्रों में नवम पुत्र । पापु० ८ १९२-२०५ दे० धृतराष्ट्र ।

अनुवीर्य—कृष्ण—जरासन्ध युद्ध में जरासन्ध द्वारा चक्रव्यूह की रचना किये जाने पर उसको भेदने के लिए वसुदेव ने जिन वीरों को नियुक्त किया था उनमें एक वीर । हपु० ५० ११२, १२३-१२७

अनृत—पाँच पापों में दूसरा पाप—प्राणियों का अहितकर वचन । मपु० २ २३, हपु० ५८ १३० दे० पाप

अनेकप—द्विप (हाथी) । तीर्थंकरों के गर्भ में आते ही उनकी जननी सोलह स्वप्न देखती है । उन सोलह स्वप्नों में ऐरावत हाथी प्रथम स्वप्न में ही दिखायी देता है । इस स्वप्न का फल गर्भस्थ शिशु का अनेक जीवों का रक्षक, अपनी चाल से हाथी की चाल को तिरस्कृत करने-वाला और तीनों लोकों का एकाधिपति होना बताया गया है । हपु० २७ ५-६, २७

अनेकाग्रय—प्रोषधोपवास व्रत का एक अतिचार-व्रत में चित्त की एका-ग्रता नहीं रखना । हपु० ५८ १८१

अन्तकृत्—(१) कर्मों का क्षय करके मोक्ष के प्राप्तकर्ता केवली-मुनि । मुनियों का "अन्तकृत्सिद्धेभ्यो नमो नमः" इस पीठिका मन्त्र से नमन किया जाता है । मपु० ४० २०, हपु० ६१ ७

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६८

अन्तकृद्दशांग—द्वादशाङ्ग श्रुत का आठवाँ भेद । हपु० २.९२-९५ इसमें तेईस लाख अट्ठाईस हजार पदों में प्रत्येक तीर्थंकर के समय में दस प्रकार के असह्य उपसर्गों को जीतकर मुक्ति को प्राप्त करने वाले दस अन्तकृत् केवलियों का वर्णन किया गया है । मपु० ३४ १४२, हपु० १० ३८-३९ दे० अंग

अन्तप—विन्ध्याचल के ऊपर स्थित एक जनपद । हपु० ११ ७३-७४

अन्तर—एक पर्याय से छूटने और दूसरी पर्याय को प्राप्त करने के अन्तराल का समय । मपु० ३ १३८-१३९, हपु० ४ ३७०-३७१

अन्तरङ्गशत्रु—क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषायें, पचेन्द्रियों के विषय, आहार, भय, मैथुन और परिग्रह संज्ञाएँ । मपु० ३६ १२९-१३२

अन्तरद्वीप—कुमनुष्यों (कुभोगभूमि के मनुष्यों) की निवासभूमि । चक्रवर्ती भरत का ऐसे छप्पन द्वीपों पर आधिपत्य था । मपु० ३७ ६५ । विन्ध्याचल के बीच भी सन्ध्याकार में एक ऐसा ही द्वीप था जिसमें सन्ध्याकार नाम का नगर था । यहाँ हिडम्ब वंश में उत्पन्न राजा सिंहघोष रहता था । इसकी पुत्री हृदय सुन्दरी के साथ भीम का विवाह हुआ था । हपु० ४५ ११४-११८

अन्तरपाण्ड्य—दक्षिण दिशा में स्थित देश । चक्रवर्ती भरत ने इस देश के राजा को दण्डरत्न द्वारा अपने आधीन किया था । मपु० २९ ८०

अन्तरात्मा—आत्मा का दूसरा भेद । विवेकी, जिनसूत्र का वेत्ता, तत्त्व-अतत्त्व, शुभ-अशुभ, देव-अदेव, सत्य-असत्य, दुष्पथ-मुक्तिपथ का ज्ञाता तथा इन्द्रिय-विषय-जनित सुख का निरभिलाषी और मुमुक्षु, कर्म और कर्मों के कार्यों से उत्पन्न मोह, इन्द्रिय और राग-द्वेष आदि से आत्मा को पृथक्, निष्फल और योगिगम्य, जानने वाला जीव । ऐसा जीव सर्वार्थसिद्धि तक के सुखों को और जिनेन्द्र के वैभव को भोगता है । इसके उत्तम मध्यम और जघन्य के भेद से तीन प्रकार हैं । चौथे गुणस्थानवर्ती जीव को जघन्य, पाँचवें से ग्यारह तक सात गुणस्थानवर्ती जीव को मध्यम तथा बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव को उत्तम अन्तरात्मा कहा गया है । वीवच० १६ ७५-८२, ९५-९६, ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों के अन्तर्वर्ती होने से यह जीव कहलाता है । मपु० २४ १०७ दे० जीव ।

अन्तराय—ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों में आठवाँ कर्म । यह इष्ट पदार्थों की प्राप्ति में विघ्नकारी होता है । इसके पाँच भेद होते हैं—दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय और वीर्यान्त-राय । इसकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोडाकोडी सागर, जघन्य स्थिति अन्तमुहूर्त और मध्यमस्थिति विविध रूपा होती है । हपु० ३ ९५-९८, ५८ २१८, २८०-२८७, वीवच० १६ १५६-१६० दे० कर्म ।

अन्तरिक्ष—(१) अष्टांग निमित्त का एक भेद । अन्तरिक्ष में चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक ज्योतियाँ रहती हैं । इन ज्योतियों के उदय और अस्त से जय, पराजय, हानि, वृद्धि, शोक, जीवन, लाभ, अलाभ आदि का ज्ञान किया जाता है । मपु० ६२ १८२-१८३, हपु० १० ११७

(२) कृष्ण द्वारा जरासन्ध पर छोड़ा गया एक अस्त्र । हपु० ५२ ५१

अन्तर्नीहार—अंकुरण में सहायक सामग्री का अंश । मपु० ३ १८०-१८१

अन्तर्भूमिचर—भूमि मण्डल स्तम्भ के पास बैठने वाले सब ऋतुओं के फूलों की सुगन्धि से युक्त मालाओं तथा स्वर्णमय आभरणों से युक्त विद्याधर । हपु० २६ ११

अन्तर्वत्नी—गर्भवती स्त्री । मपु० १२ २१२,१५ १३१

अन्तर्विचारिणी—विद्याधरों को प्राप्त एक विद्या । अनेक शक्तियों से युक्त यह विद्या विशेषतः औषधिज्ञान में सहायक होती है । हपु० २२ ६७-६९

अन्त्यकल्याणक—तीर्थंकरों का पाँचवाँ निर्वाण कल्याणक । इसमें चारों निकायों के देव परिवार सहित आकर तीर्थंकर की पूजा करते हैं । तत्पश्चात् प्रभु का शरीर पवित्र और निर्वाण का साधक है ऐसा जानकर वे तीर्थंकर की देह को वहीं विभूति के साथ पालकी में विराजमान करते हैं तथा सुगन्धित द्रव्यसमूह से पूजकर अपने रत्न-मुकुटधारी मस्तक से नमन करते हैं । इसके पश्चात् अग्नीन्द्रकुमार देव के मुकुट से उत्पन्न अग्नि से तीर्थंकर का शरीर दग्ध हो जाता है । इन्द्र आदि देव उस भस्म को अपने निर्वाण का साधक मानकर सर्वाङ्ग में लगाते हैं । वीवच० १९ २३०-२४५

अन्द्रकपुर—एक नगर। साधुओं के आहारदान का प्रेमी धारण इसी नगर का निवासी था। पपु० ३१ २६-२७

अन्धकवृष्टि—हरिवंश में उत्पन्न, शौर्यपुर नगर के राजा सूरसेन का पौत्र और राजा शूरवीर तथा उसकी रानी धारिणी का पुत्र, नरवृष्टि का अग्रज। हरिवंशपुराण मे अन्धकवृष्टि को अन्धकवृष्णि कहा है। रानी सुप्रभा से उसके दस पुत्र और दो पुत्रियाँ हुई थी। उसके पुत्रो के नाम थे—समुद्रविजय, अक्षोभ्य, स्तिमितसागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, अभिचन्द्र और वसुदेव तथा पुत्रियाँ थी कुन्ती और मद्री। महापुराण में अक्षोभ्य का नाम नही आया है। वहाँ पूरितार्थीच्छ नाम मिलता ह जो हरिवंश पुराण में अप्राप्त है। हरिवंशपुराण मे जिसे अभिचन्द्र कहा गया है महापुराण में उसे अभिनन्दन नाम दिया गया है। इसी प्रकार मद्री को माद्री कहा गया है। इसके छोटे भाई के दो नाम थे—नरवृष्टि और भोजकवृष्णि। उग्रसेन, देवसेन और महासेन इसके पुत्र तथा गान्धारी इसकी पुत्री थी। मपु० ७० ९३-१०१ हपु० १८.९-१६ अन्त में सुप्रतिष्ठ केवली से अपने पूर्वभव सुनकर इसने समुद्रविजय को राज्य दे दिया और अन्य अनेक राजाओ के साथ दीक्षा धारण कर ली। उग्र तपस्या करके इसने मोक्ष प्राप्त कर लिया। मपु० ७० २१२-२१४, हपु० १८ १७६, १७८, पापु० ११ ४ चौथे पूर्वभव मे यह अयोध्या निवासी रुद्रदत्त नाम का ब्राह्मण था, तीसरे पूर्वभव मे रौरव नरक मे जन्मा, नरक से निकलकर दूसरे पूर्वभव में हस्तिनापुर में ब्राह्मण कापिष्ठलायन का गौतम नामक पुत्र हुआ और पचास हजार वर्ष के कठोर तप के प्रभाव से मरण कर पहले पूर्वभव में यह देव हुआ। हपु० १८ ७८-१०९, महापुराण में इसके अनेक बार तिर्यंच योनि मे जन्म लेने और मरकर अनेक बार नरक में जाने के उल्लेख हैं। मपु० ७० १४५-१८१

अन्धकान्तक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७३

अन्धवेल—तीर्थंकर महावीर के दसवें गणधर। मपु० ७४ ३७४, वीवच० १९ २०६-२०७

अन्ध्र—(१) धूमप्रभा पृथिवी के चतुर्थ प्रस्तारक का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में चौबीस, विदिशाओ में बीस कुल चवालीस श्रेणिबद्ध बिल है। हपु० ४ १४१, दे० धूमप्रभा

(२) दक्षिण का एक देश। लवणांकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८४-८६

अन्ध्रकरूढि—वानरवंशी राजा प्रतिचन्द्र का कनिष्ठ पुत्र, किष्किन्ध का अनुज। इसके पिता ने किष्किन्ध को राज्यलक्ष्मी और इसे युवराज पद देकर निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण की थी। आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दर की पुत्री श्रीमाला ने अपने स्वयंवर में रथनूपुर के राजपुत्र विजयसिंह को वरमाला न पहिना कर किष्किन्ध के गले में माला डाली थी। श्रीमाला के लिए विजयसिंह ने युद्ध किया था किन्तु इसने उसे युद्ध मे मार डाला था, तथा विजयसिंह के पिता अशनिवेग द्वारा यह भी मार डाला गया था। इसका संक्षिप्त नाम अन्ध्रक था। पपु० ६.५६-५७, ६.३५२-३५९, ४२५-४६५

अन्नदान—अभयदान आदि चार दानो में वर्णित एक दान। इसी को आहारदान भी कहते हैं। पपु० १४ ७६

अन्नपान-निरोध—अहिंसाणुव्रत का पाँचवा अतिचार-प्राणियो को भूखा-प्यासा रखना। हपु० ५८ १६५ दे० अहिंसाणुव्रत

अन्नप्राशन—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ मे दसवी क्रिया। इससे जन्म से सात आठ मास बाद गर्भाधान आदि के समान पूजा-आदि कर शिशु को विधिपूर्वक अन्नाहार कराया जाता है। मपु० ३८ ५५-६३, ७०-७६, ९५, इस क्रिया के लिए "दिव्यामृतभागी भव" "विजयामृतभागी भव" और "अक्षीणामृतभागी भव" ये मंत्र व्यवहृत होते हैं। मपु० ४० १४१-१४२, वृषभदेव ने अपने पुत्र भरत को इसी विधि से प्रथम अन्नाहार कराया था। मपु० १५ १६४ दे० गर्भान्वय क्रिया

अन्यत्वानुप्रेक्षा—बारह अनुप्रेक्षाओ (भावनाओ) मे एक भावना। इसमे यह भावना की जाती है—न मैं देह हूँ, न मन हूँ और न इन तीनो का कारण हो। मैं शरीर से पृथक् हूँ, बाह्य वस्तुओ मे परे हूँ, निश्चय से मैं अपने शरीर, कर्म ओर कर्मजनित सुख-दु ख आदि से भिन्न हूँ। कर्म विपाक से ही माता, पिता, बन्धु आदि से मेरे संबध है। मैं पौद्गलिक कर्मजनित संकल्प-विकल्पो से मुक्त तथा द्रव्य और भाव, मन और वचन से सर्वथा भिन्न हूँ। राग, द्वेष आदि भाव मेरे विभाव है। मपु० ३८ १८३, पपु० १४ २३७-२३९, पापु० २५ ९३-९५, वीवच० ११ २-३, ४४-५३ दे० अनुप्रेक्षा

अन्यरामारति—परस्त्री सेवन। यह हिंसा आदि पाँच पापो में चौथा पाप है। मपु० २ २३ दे० पाप

अन्वयदत्ति—चार दत्तियो में चौथी दत्ति। इसमें अन्वय (वंश) की प्रतिष्ठा के लिए पुत्र को समस्त कुल परम्परा तथा धन के साथ अपना कुटुम्ब समर्पित किया जाता है। इसे सकलदत्ति भी कहते है। मपु० ३८ ४० दे० दत्ति

अन्वयिनिक—विवाह में जमाता को दिया जानेवाला दहेज। मपु० ८ ३६

अप—श्रावस्ती नगरी में उत्पन्न, कम्प और उसकी भार्या अङ्गिका का पुत्र। धर्म की अनुमोदना करने से इसे यह पर्याय प्राप्त हुई थी। अविनयी होने से पिता ने इसे घर से निकाल दिया था। वन में इसने अचल नामक पुरुष के पैर मे लगे काँटे को निकाल दिया था इसलिए उसने इसे अपने हाथ का कड़ा दिया था। अचल ने ही इसे 'अप' यह नाम दिया था। अचल की सहायता से ही राज्य प्राप्त करने के बाद अन्त में यह निर्ग्रन्थ-दीक्षा लेकर संयमपूर्वक मरा और देवेन्द्र हुआ। स्वर्ग से चयकर यह कृतान्तवक्त्र नाम का शत्रुघ्न का बलवान् सेनापति हुआ। पपु० ९१ २३-२८, ३९-४२, ४७

अपदर्शन—वैडूर्यमणिमय नील-पर्वत का नवम कूट। हपु० ५ ९९, १०१ दे० नील-४

अपध्यान—(१) ध्यान का विपरीत रूप-बुद्धि का अपने आधीन न होना। यह विषयों में तृष्णा बढ़ानेवाली मन की दुष्प्रणिधान नाम की प्रवृत्ति से होता है। इसमें अशुभ भाव होते है। मपु० २१. ११, २५

(२) अनर्थदण्ड का दूसरा भेद-अपनी जय और पर की पराजय तथा अहित का चिन्तन। अनर्थदण्डव्रती इस प्रकार का चिन्तन नहीं करता। हपु० ५८ १४६, १४९ दे० अनर्थदण्डव्रत

अपरविदेह—नील कुलाचल के नौ कूटों में सातवाँ कूट। इसकी ऊँचाई और मूल की चौड़ाई सौ योजन, मध्य की चौड़ाई पचहत्तर योजन और ऊर्ध्व भाग की चौड़ाई पचास योजन है। हपु० ५ ९०, ९९-१०० दे० नील

अपराजित—(१) अन्तिम केवली जम्बूस्वामी के पश्चात् होनेवाले ग्यारह अग और चौदह पूर्व रूप महाविद्याओं के पारगामी पाँच श्रुतकेवलियों में तृतीय श्रुतकेवली। मपु० २ १३०-१४२ ये अनेक नयों से अति विशुद्ध विचित्र अर्थों के कर्त्ता, पूर्ण श्रुतज्ञानी और महातपस्वी थे। इनके पूर्व नन्दी, नन्दिमित्र और गोवर्द्धन तथा बाद में भद्रबाहु हुए थे। मपु० ७६ ५१८-५२१, हपु० १ ६१, वीवच० १ ४१-४४

(२) बहुत ऊँचे गोपुर, कोट और तीन परिखाओं से युक्त विजयार्घ की दक्षिण और उत्तर श्रेणी का एक नगर। यह महावत्स देश की राजधानी था। मपु० १९ ४८, ५३, ६३ २०९-२१४, हपु० २२ ८७

(३) वृषभदेव के पैंतीसवें गणधर। हपु० १२ ६१

(४) सातवें तीर्थंकर, सुपार्श्व के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० १४-२४

(५) तीर्थंकर मुनिसुव्रत की दीक्षा-शिविका। मपु० ६७ ४०

(६) नवग्रैवेयक के ऊपर स्थित पाँच अनुत्तर विमानों में एक विमान। यहाँ देव तेतीस सागर प्रमाण आयु पाते हैं। शरीर एक हाथ ऊँचा होता है। साढे सोलह मास बीत जाने पर यहाँ वे एक बार श्वास लेते है, तेतीस हजार वर्ष बाद मानसिक आहार करते हैं और प्रवीचार रहित होते हैं। तीर्थंकर सुविधिनाथ (पुष्पदन्त) पूर्वभव में इसी विमान में थे। मपु० ६६ १६-१९ पपु० २० ३१-३५, १०५ १७०-१७१, हपु० ६ ६५, ३३ १५५

(७) चक्रपुर नगर का राजा। इसने तीर्थंकर अरनाथ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। चक्रायुध इसका पुत्र था। मपु० ५९ २३९, ६५ ३५-३६, हपु० २७ ८९-९०, पापु० ७,२८

(८) उज्जयिनी नगरी का राजा। इसकी विजया नाम की रानी और उससे उत्पन्न विजयश्री नाम की पुत्री थी। हपु० ६० १०५

(९) जरासन्ध का पुत्र। इसने तीन सौ छियालीस बार यादवों से युद्ध किया था फिर भी असफल रहा। अन्त में यह कृष्ण के बाणों से मारा गया था। इसे जरासन्ध का भाई भी कहा है। मपु० ७१.७-७०, हपु० ३६ ७१-७३, ५० १४, १८ २५

(१०) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में स्थित वत्सकावती देश की सुसीमा नगरी में उत्पन्न केवली। मपु० ६९ ३८-३९

(११) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और उसकी रानी श्रीकान्ता का पुत्र, वज्रनाभि का सहोदर। यह स्वर्ग से च्युत प्रशान्त मदन का जीव था। मपु० ११ ९-१०

(१२) वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमितसागर और उनकी रानी वसुन्धरा का पुत्र। इसी राजा की दूसरी रानी से उत्पन्न अनन्तवीर्य इसका भाई था। राज्य प्राप्त कर नृत्याङ्गनाओं के नृत्य में आसक्त होने से यह अपने यहाँ आये नारद का स्वागत नहीं कर सका जिससे कुपित हुए नारद ने दमितारि को युद्ध करने को प्रेरित किया था। इन दोनों भाइयों ने नर्तकी का वेष बनाकर और दमितारि के यहाँ जाकर अपने कलापूर्ण नृत्य से उसे प्रसन्न किया था। दमितारि ने नृत्यकला सीखने के लिए अपनी कन्या कनकश्री इन्हें सौंप दी थी। नर्तकी वेषी इसने अनन्तवीर्य के सौन्दर्य और शौर्य की प्रशसा की जिससे प्रभावित होकर कनकश्री ने अनन्तवीर्य से मिलना चाहा। अनन्तवीर्य अपने रूप में प्रकट हुआ और इसे अपने साथ ले गया। इस कारण हुए युद्ध में दमितारि अनन्तवीर्य द्वारा अपने ही चक्र से मारा गया। इसके बाद अनन्तवीर्य तीन खण्डों का राज्य करके मर गया। उसके वियोग से पीडित इसने उसके पुत्र अनन्तसेन को राज्य दे दिया और स्वय यशोधर मुनि से सयमी हुआ। सन्यास मरण करके यह अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुआ। इसने बलभद्र का पद पाया था। मपु० ६२.४१२-४८९, ५१०, ६३. २-४, २६-२७, पापु० ४ २४८, २८०, ५ ३-४

(१३) इस नाम का हलायुध। यह राम को प्राप्त रत्नों में एक रत्न था। मपु० ६८ ६७३

(१४) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी के उत्तरी तट पर स्थित सुगन्धिल देश के सिंहपुर नगर के निवासी राजा अर्हद्दास और उसकी रानी जिनदत्ता का पुत्र। इसके जन्म से इसका पिता अजेय हो गया इससे इसे यह नाम प्राप्त हुआ था। मुनि विमलवाहन से इसने सम्यग्दर्शन धारण कर अणुव्रत आदि श्रावक के व्रत धारण किये थे। विमलवाहन तीर्थ के दर्शन कर भोजन व ग्रहण करने की प्रतिज्ञा भी आठ दिन के उपवास के बाद इन्द्र के आदेश से यक्षपति ने पूर्ण की थी। चारणऋद्धिधारी अमितमति और अमिततेज नामक मुनियों से निज पूर्वभव सुनकर तथा एक मास की आयु शेष ज्ञातकर इसने अपने पुत्र प्रीतिंकर को राज्य दे दिया। प्रायोपगमन नामक सन्यास धार कर यह सोलहवें स्वर्ग के सातकर नाम के विमान में बाईस सागर प्रमाण आयु का धारी अच्युतेन्द्र हुआ और वहाँ से च्युत होकर कुरजागल देश के हस्तिनापुर नगर के राजा श्रीचन्द्र की रानी श्रीमती का सुप्रतिष्ठ नाम का पुत्र हुआ। मपु० ७० ४-५२, हपु० ३४ ३-४३

(१५) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के दक्षिणी तट पर स्थित वत्सदेश के सुसीमा नगर का स्वामी। यह अपने पुत्र सुमित्र को राज्य देकर पिहितास्रव मुनि से दीक्षित हुआ तथा समाधिमरण द्वारा शरीर त्याग कर अहमिन्द्र हुआ। वहाँ से चयकर कौशाम्बी नगरी में तीर्थंकर पद्मप्रभ का पिता, धरण नाम का नृप हुआ। मपु० ५२ २-३, १२-१८, २६

(१६) जम्बूद्वीप को घेरे हुए जगती के चारों दिशाओं के चार द्वारों में एक द्वार। हपु० ५ ३७७, ३९०

(१७) समवसरण के तीसरे कोट की उत्तर दिशा में निर्मित द्वार के आठ नामो मे एक नाम। हपु० ५७ ३, ५६ १६

अपराजिता—(१) बलभद्र पद्म की जननी। पपु० २० २३८-२३९

(२) तीर्थंकर मुनिसुव्रत का दीक्षा-शिविका। मपु० ६७ ४०, पपु० २१ ३६

(३) दर्भस्थल नगर के राजा सुकोशल और उसकी रानी अमृतप्रभावा की पुत्री, दशरथ की पत्नी, राम की जननी। अन्त मे यह मरकर आनत स्वर्ग मे देव हुई थी। पपु० २२ १७०-१७२, २५ १९-२२, १२३ ८०-८१

(४) उज्जयिनी के राजा विजय की भार्या। मपु० ७१ ४४३

(५) महावत्सा देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २४७, २६३

(६) वाराणसी के राजा अग्निशिख की रानी, बलभद्र नन्दिमित्र की जननी। मपु० ६६ १०२-१०७

(७) रुचकवर द्वीप मे स्थित इसी नाम के पर्वत पर पूर्व दिशा मे वर्तमान अरिष्टकूटवासिनी देवी। हपु० ५ ६९९, ७०४-७०५

(८) रुचकवर पर्वत की वायव्य दिशा मे स्थित रत्नोच्चयकूटवासिनी देवी। हपु० ५ ६९९, ७२६

(९) समवसरण के सप्तपर्ण वन की वापिका। हपु० ५७ ३३

(१०) नन्दीश्वर द्वीप के दक्षिण मे स्थित अजनगिरि की एक वापी। हपु० ५ ६६०

अपरान्त—अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ में द्वितीय वस्तु। हपु० १० ७७, ७८ दे० अग्रायणीयपूर्व

अपरान्तक—भगवान् वृषभदेव के काल में इन्द्र द्वारा निर्मित पश्चिमी समुद्र तट पर स्थित देश। मपु० १६ १४१-१४८, १५५

अपरिग्रह महाव्रत—पाँचवाँ महाव्रत। दस प्रकार के बाह्य तथा चौदह प्रकार के अन्तरग परिग्रह से विरक्त होना। हपु० २ १२१, पापु० ९ ८७

अपर्याप्तक—घटीयत्र के समान निरन्तर भ्रमणशील ऐसा जीव जो अपनी पर्याप्तियो को पूरा नही कर पाता। मपु० १७ २४, पपु० १०५. १४५-१४६

अपवर्ग—मोक्ष। हपु० १० ९-१०

अपवर्तिका—कठ का आभूषण। निश्चित प्रमाण से युक्त स्वर्ण, मणि, माणिक्य, और मोतियो द्वारा बीच में अन्तर देते हुए गूँथी गयी माला। मपु० १६ ४९, ५१

अपात्र—व्रत शील आदि से रहित, कुदृष्टिवान्, दाता एव दत्त वस्तु को दूषित करने वाला व्यक्ति। ऐसे कुपात्र को दान देकर दाता कुमानुष योनि मे जन्मता है। मपु० २० १४१-१४३, हपु० ७ ११४

अपाप—भविष्यत् काल के ग्यारहवे तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७८-४८१

अपायविचय—धर्म-ध्यान के दस भेदो में प्रथम भेद। अपाय का अर्थ त्याग है, और विचय का अर्थ मीमासा है। मन, वचन और काय इन तीन योगो की प्रवृत्ति ही ससार का कारण है, अत इन प्रवृत्तियो का किस प्रकार त्याग हो और जीव ससार से कैसे मुक्त हो ऐसा शुभ लेश्या से अनुरजित चिन्तन अपाय-विचय है। मपु० २१ १४१, हपु० ५६ ३७-४० दे० धर्मध्यान

अपार—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

अपारधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

अपारि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

अपुनर्भव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १००

अपूप— एक भोज्य पदार्थ पूआ। मपु० ८ २३६

अपूर्वकरण—चौदह गुणस्थानो में आठवाँ गुणस्थान। इस गुणस्थान में जीव के प्रतिक्षण अपूर्व-अपूर्व (नये-नये) परिणाम होते हैं। इस करण मे अघ करण के समान जीव स्थिति और अनुभाग बन्ध तो कम करता ही रहता है साथ ही वह स्थिति और अनुभाग बन्ध का सक्रमण और निर्जरा करता हुआ उन दोनो के अग्रभाग को भी नष्ट कर देता है। ऐसे जीव उपशमक और क्षपक दोनो प्रकारो के होते हैं। मपु० २० २५२-२५५, हपु० ३ ८०, ८३, १४२ दे० गुणस्थान

अपृथग्विक्रिया—अशुभ कर्म के उदय से नारकियो को प्राप्त अत्यन्त विकृत, घृणित तथा कुरूप विक्रिया। मपु० १० १०२

अपोह—श्रोता के आठ गुणो मे एक गुण—हेय वस्तुओ को छोडना। मपु० १ १४६

अप्काय—एकेन्द्रिय जलकायिक जीव। ये तृण के अग्रभाग पर रखी जल की बूँद के समान होते हैं। हपु० १८ ५४, ७०

अप्रणतिवाक्—सत्यप्रवाद नाम के अग में कथित बारह प्रकार की भाषाओ मे एक भाषा। यह अपने से अधिक गुणवालो को नमस्कार नही करती। हपु० १० ९१-९५

अप्रतर्क्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

अप्रतिघ—(१) समवसरण की सभागृह के आगे विद्यमान तृतीय कोट सबधी दक्षिण द्वार के आठ नामो में आठवाँ नाम। हपु० ५७ ५६-५८ दे० आस्थानमण्डल

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

अप्रतिघात—राम का सिंहरथवाही सामन्त। पपु० ५८ १०-११

अप्रतिघातकामिनी—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त एक विद्या। मपु० ६२ ३९१-४००

अप्रतिष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

अप्रतिष्ठान—सातवी महातम प्रभा नरक-भूमि का इन्द्रक बिल। हपु० ४ ८४,१५० दे० महातम प्रभा

अप्रत्याख्यानक्रिया—आस्रवकारी पाँच क्रियाओ में एक क्रिया—कर्मोदय के वशीभूत होकर पापो से निवृत्त नही होना। क्रोध, मान, माया, और लोभ के भेद से इसके चार भेद होते हैं। मपु० ८ २२४-२४१, हपु० ५८ ८२ दे० साम्परायिकआस्रव

अप्रमत्तसंयत—सातवाँ गुणस्थान। इस गुणस्थान के जीव हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँच पापो से विरत होते हैं और उनकी भावनाएँ विशुद्ध होती है। मपु० २० २४२, हपु० ३ ८१-८९ दे० गुणस्थान

अप्रमेयत्व—मुक्त जीव का एक गुण। इस गुण की प्राप्ति के लिए 'अप्रमेयाय नमः' यह पीठिका-मन्त्र है। मपु० ४० १६, ४२-१०३

अप्रमेयात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

अप्रशस्तध्यान—अशुभ भावो से युक्त दुर्ध्यान। यह आर्त और रौद्र ध्यान के भेद से दो प्रकार का होता है। यह ससारवर्धक है, इसीलिए हेय है। मपु० २१ २७-२९

अप्सरा—देव-सभा की नर्तकी देवी। मपु० १७ २-५, २२ २१

अबन्धन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०४

अब्द—दो अयन प्रमाण काल। यह वर्ष का सूचक शब्द है। मपु० ३ १२०, १२९, हपु० ७ २२, दे० काल

अब्रह्म—ब्रह्म की विपरीत स्वभाववाली क्रिया, स्त्री-पुरुषो की मैथुनिक चेष्टा। हपु० ५८ १३२

अभयकर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

अभय—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का इक्यासीवा पुत्र। पापु० ८ १९१-२०५

अभयकुमार—राजा श्रेणिक का पुत्र, अक्रूर और वारिषेण का छोटा भाई। इसने अपने पिता एव भाई वारिषेण तथा विमाता चेलना के साथ वीर जिन की वन्दना की थी। चेटक की पुत्री चेलिनी और ज्येष्ठा में अपने पिता का प्रेम ज्ञातकर तथा वृद्धावस्था के कारण चेटक द्वारा उक्त कन्याएँ अपने पिता को न दिये जाने पर इसने पिता का चित्र बनाया और उसे इन कन्याओ को दिखाकर इन्हें पिता श्रेणिक में आकृष्ट किया तथा यह उन्हें सुरगमार्ग से श्रेणिक के पास ले आया। चेलिनी नही चाहती थी कि उसकी बहिन ज्येष्ठा भी राजा श्रेणिक को प्राप्त हो अत उसने ज्येष्ठा को आभूषण लाने का बहाना कर घर लौटा दिया और स्वय उसके साथ आ गयी। उधर आभूषण लेकर जैसे ही ज्येष्ठा लौटकर आयी, उसने वहाँ चेलिनी बहिन को न देखकर सोचा कि वह उसके द्वारा ठगी गयी है। ऐसा विचारकर तथा उदास होकर ज्येष्ठा आर्यिका यशस्वती के पास दीक्षित हो गयी। उधर श्रेणिक चेलिनी को पाकर अभयकुमार की बुद्धिमत्ता पर अति प्रसन्न हुआ। इसके सम्बन्ध में निमित्तज्ञानियों ने कहा था कि यह तपश्चरण कर मोक्ष जायगा। मपु० २५ २०-३४, ७४ ५२६-५२७, पपु० २ १४४-१४६, हपु० २ १३९, पापु० २ ११-१२ दूसरे पूर्वभव में यह एक मिथ्यात्वी ब्राह्मण था। अर्हद्दास ने विभिन्न युक्तियो द्वारा इससे देवमूढ़ता, तीर्थमूढता, जातिमूढता और लोकमूढता आदि का त्याग कराया था। किसी अटवी में मार्ग भूल जाने से सन्यास पूर्वक मरण कर यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर इस पर्याय मे उत्पन्न हुआ, मपु० ७४ ४६४-५२६, वीवच० १९ १७०-२०३ इसका पिता इसकी जन्मभूमि नन्दिग्राम के निवासियो से असन्तुष्ट हो गया था किन्तु इसने पिता का क्रोध शान्त कर दिया था और पण्डितों ने इसके बुद्धि कौशल को देखकर इसे 'पण्डित' कहा था। मपु० ७४ ४२९-४३१।

अभयघोष—(१) मनोरमा का पिता, सुविधि का मामा-ससुर। यह चक्रवर्ती राजा था। मपु० १० १४३

(२) एक केवली—तृतीय चक्रवर्ती मघवा का दीक्षागुरु। मपु० ६१ ८८, ९७

(३) धातकीखण्ड द्वीप के तिलकनगर का नृप। इसकी रानी सुवर्णतिलका से उत्पन्न विजय तथा जयन्त नाम के दो पुत्र थे। विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में स्थित मन्दारनगर के राजा शख की पुत्री पृथिवीतिलका इसकी दूसरी रानी थी। इस रानी से अपमानिता सुवर्णतिलका अपने दोनो पुत्रो के साथ अनन्तग्राम के मुनि के पास दीक्षित हो गयी थी। तीनो महाव्रत धारण कर आयु के अन्त में समाधिमरण पूर्वक अच्युत स्वर्ग में देव हुए। मपु० ६३ १६८-१७८

अभयदान—कर्म बन्ध के कारणो को त्याग करने की इच्छा से प्राणियो को पीडा पहुँचाने का त्याग करना। ऐसा करने से जीव निर्भय होते हैं। मपु० ५६ ७०-७२, पपु० १४.७३-७६, ३२ १५५ दे० दान

अभयनन्दी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित मथुरा नगरी के निवासी शौर्य देश के राजा शूरसेन और इसी नगरी के निवासी भानुदत्त सेठ के दीक्षागुरु। मपु० ७१ २०१-२०६, हपु० ३३ १००

अभयनिनाद—सकलभूषण केवली का प्रधान शिष्य। पपु० १०५ १०४-१०५

अभययान—एक शिविका। तीर्थंकर सुमतिनाथ इसी में बैठकर दीक्षार्थ सहेतुक वन में गये थे। मपु० ५१.६९

अभयसेन—(१) महावीर की आचार्य परम्परा में होनेवाले एक आचार्य। हपु० ६६ २८-२९

(२) राजा अनरण्य और उसके ज्येष्ठ पुत्र अनन्तरथ के दीक्षा-गुरु। पपु० २२ १६७-१६८

अभयानन्द—तीर्थंकर श्रेयान् (श्रेयास) के पूर्वभव का पिता। पपु० २० २५-३०

अभव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८

अभव्य—मोक्ष प्राप्त करने के लिए अयोग्य जीव। ऐसे प्राणी जिनेन्द्र प्रतिपादित बोधि प्राप्त नही कर पाते, रत्नत्रय मार्ग भी इन्हें नही मिल पाता और ये मिथ्यात्व के उदय से दूषित रहते हैं। ऐसे जीवो का ससार सागर अनादि और अनन्त होता है। ये उचित समय पर सुपात्रों को दान नही दे पाते और कुक्षेत्र में इनकी मृत्यु होती है। इन्द्रियो के भेद से ये पाँच प्रकार के होते हैं—एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय। ये पाँचो भव्य और अभव्य दोनो प्रकार के होते हैं। मपु० २४ १२९, ७१ १९८, पपु० १०५ १४६, २०३, २६०-२६१, २ १५८, ७ ३१७, हपु० ३ १०१, १०६, वीवच० १६ ६३,

अभिचन्द्र—(१) नवें मनु यशस्वान् के करोडो वर्ष के पश्चात् हुए दसवें मनु (कुलकर)। इनकी आयु कुमुदाग काल प्रमाण थी और मुख चन्द्र के समान सौम्य था। ये छ सौ पच्चीस धनुष ऊँचे तथा दैदीप्यमान शरीर के धारी थे। इन्ही के समय में प्रजा ने रात्रि में अपनी सन्तान

को चन्द्रमा दिखा-दिखा कर क्रीडा की थी, इसीलिए इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ था। ये चन्द्राभ नाम के पुत्र (ग्यारहवें मनु) को जन्म देकर स्वर्ग गये। मपु० ३ १२९-१३३, हपु० ७ १६१-१६३

(२) अन्धकवृष्णि और उसकी रानी सुभद्रा के दस पुत्रों में नवा पुत्र। इसके चन्द्र, शशाक, चन्द्राभ, शशी, सोम और अमृतप्रभ ये छः पुत्र थे। हपु० १८ १२-१४, ४८ ५२

(३) भद्र का पुत्र। इसने विन्ध्याचल पर चेदिराष्ट्र की स्थापना की थी और शुक्तिमती नदी के तट पर शुक्तीमती नगरी बसायी थी। इसका उग्रवश में उत्पन्न वसुमति से विवाह हुआ था तथा उससे वसु नाम का पुत्र हुआ था जिसने क्षीरकदम्ब गुरु से दीक्षा प्राप्त की थी। हपु० १७ ३५-३९

अभिजया—समवसरण के सप्तपर्ण वन मे स्थित छ वापियों में एक वापी। हपु० ५७ ३३ दे० आस्थानमण्डल

अभिनन्दन—(१) अवसर्पिणी काल के चौथे दु:षमा-सुषमा काल मे उत्पन्न हुए चौथे तीर्थंकर एव शलाका पुरुष। मपु० २ १२८, १३४, हपु० १ ६, वीवच० १८ १०१-१०५ तीसरे पूर्वभव में ये जम्बूद्वीप के पूव विदेह क्षेत्र मे स्थित मगलावती देश में रत्नसचय नगर के नृप थे, महाबल इनका नाम था। विमलवाहन गुरु से सयमी होकर इन्होंने सोलह भावनाओ का चिन्तन किया जिससे इन्हें तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध हुआ। अन्त मे ये समाधिमरण कर विजय नाम के प्रथम अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुए। मपु० ५० २-३, १०-१३ पद्मपुराण मे इनके पूर्वभव का नाम विपुलवाहन, नगरी सुसीमा तथा प्राप्त स्वर्ग का नाम वैजयन्त बताया गया है। पपु० २० ११, ३५ विजय स्वर्ग मे च्युत होकर ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित अयोध्या नगरी में वैशाख मास के शुक्लपक्ष की षष्ठी तिथि तथा सातवें शुभ पुनर्वसु नक्षत्र मे सोलह स्वप्न पूर्वक इक्ष्वाकुवशी, काश्यपगोत्री राजा स्वयवर की रानी सिद्धार्थ के गर्भ मे आये और तीर्थङ्कर सभवनाथ के दस लाख करोड सागर वर्ष का अन्तराल बीत जाने पर माघ मास के शुक्लपक्ष की द्वादशी के दिन अदिति योग में जन्मे। जन्म से ही ये तीन ज्ञान के धारी थे, पचास लाख पूर्व प्रमाण उनकी आयु थी। शरीर तीन सौ पचास धनुष ऊँचा तथा बाल चन्द्रमा के समान कान्तियुक्त था। साढे बारह लाख पूर्व कुमारावस्था का समय निकल जाने पर इन्हें राज्य मिला, तथा राज्य के साढे छत्तीस लाख पूर्व काल बीत जाने पर और आयु के आठ पूर्वाङ्ग शेष रहने पर मेघो की विनश्वरता देख ये विरक्त हुए। इन्होंने हस्तचित्रा यान से अग्रोद्यान जाकर माघ शुक्ला द्वादशी के दिन अपराह्न वेला मे एक हजार प्रसिद्ध राजाओ के साथ जिनदीक्षा धारण की। उसी समय इन्हें मन:-पर्ययज्ञान हुआ। इनकी प्रथम पारणा साकेत में इन्द्रदत्त राजा के यहाँ हुई। छद्मस्थ अवस्था में अठारह वर्ष मौन रहने के पश्चात् पौष शुक्ल-चतुर्दशी के दिन साय वेला में असन वृक्ष के नीचे सातवें (पुनर्वसु) नक्षत्र में ये केवली हुए। तीन लाख मुनि, तीन लाख तीस हजार छ सौ आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक और पाँच लाख श्राविकाएँ इनके सघ मे थी। वज्रनाभि आदि एक सौ तीन गणधर थे। ये बारह सभाओ के नायक थे। विहार करते हुए ये सम्मेदगिरि आये और वहाँ प्रतिमायोग पूर्वक इन्होंने वैशाख शुक्ल षष्ठी के दिन प्रात वेला मे पुनर्वसु नक्षत्र में अनेक मुनियो के साथ परमपद (मोक्ष) प्राप्त किया। मपु० ५० २-६९, पपु० २० ११-११९, हपु० ३० १५१-१८५, ३४१-३४९

(२) धातकीखण्ड द्वीप की पूर्व दिशा में स्थित पश्चिम विदेह क्षेत्र मे गधित देश के अयोध्या नगर के राजा जयवर्मा के दीक्षागुरु। मपु० ७ ४०-४२

(३) चारणऋद्धिधारी योगी (मुनि) इनके साथ जगन्नन्दन नाम के योगी थे। ये दोनो मनोहर वन मे आये थे जहाँ ज्वलनजटी ने इनसे सम्यग्दर्शन ग्रहण किया था। पापु० ४ १२-१५

(४) अन्धकवृष्णि और सुभद्रा का नवम पुत्र। मपु० ७० ९५-९६

(५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

अभिनन्दित—इस नाम के एक मुनि। श्रुतिरत राजा कुलकर ने इनसे दीक्षा ली थी। पपु० ८५ ५२-५३, ५६

अभिनन्दिनी—समवसरण के अशोक वन की एक वापी। हपु० ५७ ३२ दे० आस्थानमण्डल

अभिनयाश्रय—नृत्य के तीन भेदो में दूसरा भेद। पपु० २४ ६ दे० अगहाराश्रय

अभिमन्यु—अर्जुन की दो रानियाँ थी द्रौपदी और सुभद्रा। यह सुभद्रा का पुत्र था। इनके पाँच भाई और थे वे द्रौपदी से उत्पन्न हुए थे तथा पाचाल कहलाते थे। इसने कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में गागेय (भीष्म) का महाध्वज तोड डाला था और उनके सारथी और दो अश्वो को मार गिराया था। मपु० ७२, २१४, पापु० १६ १०१, १७९-१८० इसने कलिंग के तथा राजा के हाथी को मार दिया था, कर्ण का गर्व नष्ट किया था, द्रोण को जर्जरित किया था और जिन जिन ने इससे युद्ध किया उन सबको इसने पराजित किया। अश्वत्थामा को भी इसने युद्ध में विमुख किया था। अन्त में जयार्द्रकुमार द्वारा गिरा दिये जाने पर शरीर से मोह तोडकर इसने सल्लेखना पूर्वक देह त्यागा और स्वर्ग मे देव हुआ। पापु० २० १६-३६

अभिमाना—अतिवश नामक वश में उत्पन्न अग्नि और उसकी स्त्री मानिनी की पुत्री। धान्य ग्राम के नोदन नामक ब्राह्मण से विवाहित। शील रहित होने से इसके पति ने इसे त्याग दिया था। पश्चात् इसने करग्रह नामक नृप को अपना पति बनाया था। पपु० ८० १५५-१६७

अभिराम—जम्बूद्वीप मे पश्चिम विदेह क्षेत्र के चक्रवर्ती राजा अचल तथा उसकी रानी रत्ना का पुत्र। दीक्षा धारण करने को उद्यत देखकर इसके पिता ने इसका विवाह कर दिया और इसे ऐश्वर्य में योजित कर दिया। तीन हजार स्त्रियो के होते हुए भी यह मुनिव्रत के लिए उत्कण्ठित रहता था। यह असिधारा व्रत पालता और स्त्रियो को

जैनधर्म का उपदेश देता था। अन्त में शरीर से निर्मोही होकर इसने चौंसठ हजार वर्ष तक कठोर तप किया और मरण कर ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर यह अयोध्या में भरत हुआ। पपु० ८५ १०२-११७, १६६

अभिरुद्गता—षड्ज स्वर की सात मूर्च्छनाओं में सातवीं मूर्च्छना। हपु० १९ १६१-१६२

अभिषवाहार—उपभोग-परिभोग-परिमाणव्रत के पाँच अतिचारों में चौथा अतिचार। (गरिष्ठ पदार्थों का सेवन करना)। हपु० ५८ १८२

अभिषेक—तीर्थंकरों का स्नपन। जो सुगन्धित जल से जिनेन्द्रों का अभिषेक करता है वह जहाँ जन्मता है वहाँ अभिषेक को प्राप्त होता है। दूध से अभिषेक करनेवाला क्षीरधवल विमान में कान्तिधारी होता है, दधि से अभिषेक कर्ता दधि के समान वर्णवाले स्वर्ग में उत्पन्न होता है और घी से अभिषेक करनेवाला कान्ति से युक्त विमान का स्वामी होता है। अपरनाम अभिषव पपु० ३२ १६५-१६८ हपु०, २ ५०

अभिसार—तीर्थंकर आदिनाथ के काल में इन्द्र द्वारा निर्मित भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। मपु० १६ १५२-१५५

अभीक्ष्णज्ञानोपयोग—तीर्थंकर नाम कर्म में कारणभूत सोलह भावनाओं में चौथी भावना—निरन्तर श्रुत (शास्त्र) की भावना रखना। इस भावना से अज्ञान की निवृत्ति के लिए ज्ञान की प्रवृत्ति में निरन्तर उपयोग रहता है। मपु० ६३ ३११, ३२३, हपु० ३४ १३५

अभीष्टव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

अभेद्य—(१) महायुद्ध में शत्रुओं के तीक्ष्ण बाणों से न भेदा जानेवाला तनुत्राण (कवच)। अभेद्यत्व की प्राप्ति के लिए "अभेद्याय नम" यह पीठिका-मंत्र है। मपु० ३७ १५१, ४० १५

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

अभेद्यत्व—मुक्त जीव का गुण। यह कर्ममल के नष्ट होने से जीव के प्रदेशों का घनाकार परिणमन होने पर प्रकट होता है। मपु० ४२ १०२ दे० मुक्त

अभोगिनी—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त एक विद्या। मपु० ६२ ४००

अभ्यस्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

अभ्यर्च्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९०

अभ्यनुज्ञातग्रहण—अस्तेय महाव्रत की पाँच भावनाओं में तीसरी भावना-श्रावक के प्रार्थना करने पर आहार ग्रहण करना। मपु० २० १६३ दे० अस्तेय

अभ्याख्यान—सत्यप्रवाद नाम के पूर्व में कथित बारह प्रकार की भाषाओं में प्रथम भाषा। हिंसा आदि पापों के करनेवालों को "नहीं करना चाहिए" इस प्रकार का वचन। हपु० १० ९१-९२

अभ्युदय—पुण्योदय से प्राप्त सुन्दर शरीर, नीरोगता, ऐश्वर्य, धन-सम्पत्ति, सौन्दर्य, बल, आयु, यश, बुद्धि, सर्वप्रियवचन और चातुर्य आदि लौकिक सुखों का कारणभूत पुरुषार्थ। मपु० १५ २१९-२२१

अमध्योऽपिमध्यम—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ५२

अमम—चौरासी लाख अममांग प्रमाण काल। मपु० ३ २२५, हपु० ७ २८

अममाङ्ग—चौरासी लाख अटट प्रमाण काल। मपु० ३ २२५, हपु० ७ २८

अमर—(१) राजा सूर्य का पुत्र। इसने वज्रनाम के नगर की स्थापना की थी। देवदत्त इसका पुत्र था। हपु० १७ ३३

(२) मरण रहित अवस्था को प्राप्त जीव। इस अवस्था की प्राप्ति के लिए 'अमराय नमः' इस पीठिका-मन्त्र का जप किया जाता है। मपु० ४० १६

अमरकङ्का—धातकीखण्ड द्वीप की दक्षिण दिशा में स्थित भरतक्षेत्र के अंग देश की नगरी। पद्मनाभ यहाँ का राजा था। हपु० ५४ ८, पापु० २१ २४-२९

अमरगुरु—विजयार्द्ध के एक मुनि। इनके साथ देवगुरु नामक मुनि विहार करते थे। विद्याधर अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे तथा उनसे धर्म-श्रवण किया था। मपु० ६२ ३८७, ४०२-४०४

अमरप्रभ—राजा रविप्रभ का पुत्र, किष्कुपुर का राजा। इसने त्रिकूटेन्द्र की पुत्री गुणवती को विवाहा था। विवाह-मण्डप में चित्रित वानराकृतियों को देख गुणवती के भयभीत होने से उन आकृतियों पर प्रथम तो इसने क्रोध किया पश्चात् मन्त्री द्वारा समझाये जाने पर उन आकृतियों को आदर देने की दृष्टि से मुकुट के अग्रभाग में, ध्वजाओं में, महलों और तोरणों के अग्रभाग में अंकित कराया था। इसने विजयार्ध की दोनों श्रेणियों पर विजय प्राप्त की थी। अन्त में इसने अपने पुत्र कपितकेतु को राज्य सौंपकर वैराग्य धारण कर लिया था। पपु० २ १६०-२००

अमररक्ष—लंकाधिपति महारक्ष और उसकी रानी विमलाभा का ज्येष्ठ पुत्र, उदधिरक्ष और भानुरक्ष का बड़ा भाई। देवरक्ष इसका अपरनाम था। इसने किन्नरगीत नगर निवासी राजा श्रीधर और उसकी रानी विद्या की पुत्री रति को विवाहा था। रति से इसके दस पुत्र और छः पुत्रियाँ हुई थी। अपने पिता महारक्ष से लंका का राज्य प्राप्त करने के पश्चात् इसने और इसके भाई भानुरक्ष दोनों ने अपने पुत्रों को राज्य दे दिया और ये दीक्षा लेकर महातप करने लगे। अन्त में देह त्याग कर दोनों सिद्ध हुए। पपु० ५ २४१-२४४, ३६१-३७६

अमरविक्रम—विद्याधरों का राजा। पपु० ५ ३५४

अमरसागर—महेन्द्र नगर के राजा विद्याधर महेन्द्र का मन्त्री। पपु० १५ १२-१४, ३१

अमरा—दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२८-३३२

अमरावती—इन्द्र की नगरी। मपु० ६-२०५

अमरावर्त—मार्गवाचार्य की शिष्य-परम्परा में यह कौथुमि-पुत्र का शिष्य था और इसका शिष्य सित था। हपु० ४५ ४४-४५

अमरगुरु—अमिततेज के समय के मुनि देवगुरु के सहगामी मुनि। मपु० ६२ ४०३

अमल—(१) राजा समुद्रविजय का मन्त्री । हपु० ५० ४९
(२) शोभपुर नगर का राजा । अन्त में यह पुत्र को राज्य सौंपकर आठ गाँवों का प्रमाण करके श्रावक हो गया तथा मरकर स्वर्ग में देव हुआ । पपु० ८० १८९-१९५
(३) लंका का एक देश । पपु० ६ ६६-६८
(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ ११२

अमलकण्ठ—एक नगर कनकरथ (हेमरथ) यहाँ का राजा था । वह हस्तिनापुर के राजा मधु की सेवा के लिए उसके पास गया था । मपु० ७२ ४०-४१

अमात्य—राजा का मन्त्री स्तर का एक अधिकारी मपु० ५ ७

अमित—(१) सिंहरथ विद्याधर का विमान । मपु० ६३ २४१-२४२
(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६९

अमितगति—(१) राजा वसुदेव और उसकी रानी गन्धर्वसेना का पुत्र, वायुवेग का अनुज तथा महेन्द्रगिरि का अग्रज । हपु० ४८ ५५
(२) अरिंजय के साथी एक चारणमुनि । पापु० ४ २०५
(३) भवनवासी देवों का पन्द्रहवाँ इन्द्र । वीवच० १४ ५४-५८
(४) मति, श्रुत और अवधि इन तीन ज्ञानों के धारक एक मुनि । गर्भिणी अंजना को उसका पूर्वभव आदि इन्हीं ने बताया था । ये आकाशगामी थे । पपु० १७ १३९-१४०
(५) विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के शिव मन्दिर नगर के राजा महेन्द्रविक्रम का पुत्र । इस विद्याधर के धूमसिंह और गौरमुण्ड नाम के दो विद्याधर मित्र थे । हिरण्यरोम तापस की पुत्री सुकुमारिका से इसने विवाह किया था । हपु० २१ २२-२८ इसकी विजयसेना और मनोरमा नाम की दो स्त्रियाँ और थी । विजयसेना की पुत्री सिंहसेना तथा मनोरमा के पुत्र सिंहयश और वराहग्रीव थे । बड़े पुत्र को राज्य देकर और छोटे पुत्र को युवराज बनाकर यह अपने पिता मुनि महेन्द्रविक्रम के पास दीक्षित हो गया । हपु० २१ ११८-१२२

अमितगुण—चारण ऋद्धिधारी मुनि अजितजय मुनि के साथी । मपु० ७४ १७३, वीवच० ४ ६-७ दे० अजितजय

अमितज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०५

अमिततेज—(१) राजा अर्ककीर्ति और उसकी रानी ज्योतिर्माला का पुत्र, सुतारा का भाई । त्रिपृष्ठ नारायण की पुत्री ज्योति प्रभा ने इसे तथा इसकी बहिन सुतारा ने त्रिपृष्ठ के पुत्र श्री विजय को स्वयंवर में वरण किया था । पिता के दीक्षित होने पर इसने राज्य प्राप्त किया, फिर अपने बड़े पुत्र सहस्ररश्मि के साथ हीमन्त पर्वत पर संजयत मुनि के पादमूल में विद्याच्छेदन करने में समर्थ महाज्वाला आदि विद्याएँ सिद्ध की । रथनूपुर नगर से आकर अशनिघोष को पराजित किया और अपनी बहिन सुतारा को छुड़ाया । पापु० ४ ८५-९५, १७४-१९१ यह पिता के समान प्रजा-पालक था और इस लोक और परलोक के हित कार्यों में उद्यत रहता था । प्रज्ञप्ति आदि अनेक विद्याएँ इसे सिद्ध थी । दोनों श्रेणियों के विद्याधर राजाओं का यह स्वामी था । दमवर मुनि को आहार देकर इसने पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे । मुनि विपुलमति और विमलमति से अपनी आयु मास मात्र की अवशिष्ट जानकर इसने अपने पुत्र अर्कतेज को राज्य दे दिया, आष्टाह्निक पूजा की और प्रायोपगमन में उद्यत हुआ तथा देह त्याग कर तेरहवें स्वर्ग के नन्द्यावर्त नाम के विमान में रविचूल नाम का देव हुआ । यहाँ से च्युत होकर वत्सकावती देश की प्रभावती नगरी में स्तिमितसागर और उनकी रानी वसुन्धरा का अपराजित नाम का पुत्र हुआ । मपु० ६२ १५१, ४११, पापु० ४ २२८-२४८
(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित गगनवल्लभ नगर के राजा गगनचन्द्र और उसकी रानी गगनसुन्दरी का छोटा पुत्र । अमितवेग, अपरनाम अमितमति, इसका भाई था । मपु० ७० ३८-४१, हपु० ३४ ३४-३५
(३) वज्रजंघ की अनुजा अनुन्धरी का पति, चक्रवर्ती वज्रदन्त का पुत्र और नारायण त्रिपृष्ठ का जामाता । यह पिता के साथ यशोधर योगीन्द्र के शिष्य गुणधर से दीक्षित हो गया था । मपु० ८ ३३-३४, ७९, ८५, ६२ १६२
(४) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के विद्युत्कान्त नगर के स्वामी प्रभंजन विद्याधर और उसकी रानी अंजना देवी का पुत्र यह अखण्ड पराक्रमी, विजयार्ध के शिखर पर दायाँ पैर रखकर बायें पैर से सूर्य-विमान का स्पर्श करने में समर्थ, शरीर को सूक्ष्म रूप देने में चतुर होने से विद्याधरों द्वारा अणुमान् नाम से अभिहित और सुग्रीव का प्राणप्रिय मित्र था । राम नामाङ्कित मुद्रिका लेकर यह सीता को खोजने लंका गया था । राम ने इसे अपना सेनापति बनाया था । मपु० ६८ २७५-४७२, ७१४-७२० दे० अणुमान्

अमितप्रभ—(१) राजा वसुदेव और उसकी रानी बालचन्द्रा का छोटा पुत्र, वज्रदंष्ट्र का अनुज । हपु० ४८ ६५
(२) एक मुनि । ये पुण्डरीकिणी नगरी में आये थे । वहाँ मणिकुण्डल विद्याधर को इन्होंने सनातन धर्म का स्वरूप बताया था । मपु० ६२ ३६२-३६३

अमितप्रभा—यह मथुरा के राजा रत्नवीर्य की दूसरी रानी थी । मन्दर इसका पुत्र था । महापुराण में इसका नाम अनन्तवीर्य और इसकी रानी का नाम अमितवती बताया गया है । मपु० ५९ ३०२-३०३, हपु० २७ १३५-१३६

अमितमति—(१) गुणवती की दीक्षागुरु आर्यिका । मपु० ४६ ४५-४७
(२) अमिततेज का भाई । मपु० ७० ३९-४१ दे० अमिततेज
(३) पद्मिनीखेट नगर निवासी सागरसेन की पत्नी, धनमित्र, और नन्दिषेण की जननी । मपु० ६३ २६३

अमितवती—मथुरा नगरी के राजा अनन्तवीर्य की दूसरी रानी, राजकुमार मन्दर की जननी । मपु० ५९ ३०२-३०३

अमितवाहन—(१) भवनवासी देवों का इन्द्र । वीवच० १४ ५४-५८
(२) इस नाम के एक मुनि । अलका के राजा विद्युद्दंष्ट्र के पुत्र सिंहरथ ने इनकी वन्दना की थी । पापु० ५ ६६

अमितविक्रम—पुष्करार्ध सबधी पूर्वार्ध भरतक्षेत्र के नन्दनपुर नगर का राजा। इसकी रानी आनन्दमति थी। इन दोनों की धनश्री और अनन्तश्री नाम की दो पुत्रियाँ थी। मपु० ६३ १२-१३

अमितवेग—(१) अमिततेज का बडा भाई। हपु० ३४ ३५-३५ दे० अमिततेज

(२) विजयार्ध के स्यालक नगर का राजा, मणिमति का पिता। विद्या-साधना में रत मणिमति को देखकर एक समय रावण इस पर आसक्त हो गया था। मणिमति को अपने अधीन करने के लिए रावण ने उसकी विद्या छीन ली थी। बारह वर्ष से साधना में रत इस कन्या ने विद्या की सिद्धि में विघ्न होता देखकर निदान किया था कि वह इसी की पुत्री होकर इसके वध का कारण बने। निदान वश आयु के अन्त में मरकर वह मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न हुई जिसे सीता नाम से सम्बोधित किया गया। मपु० ६८ १३-२७

अमितशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

अमितसागर—एक मुनि। इन्होंने विदेह क्षेत्र के अशोकपुर नगर निवासी आनन्द वैश्य के घर आनन्दयशा से आहार प्राप्त किया था। इन्हें आहार देने से आनन्दयशा को पचाश्चर्य प्राप्त हुए थे। मपु० ७१ ४३२-४३४

अमितसार—समवसरणभूमि के तीसरे कोट के पश्चिम द्वार के आठ नामों मे दूसरा नाम। हपु० ५७ ५६, ५९

अतिसेन—पुन्नाटगण के अग्रणी एक मुनि। ये षट्खण्डागम के ज्ञाता और कर्म-प्रकृति श्रुत के धारक थे। जयसेन इनके गुरु थे। ये प्रसिद्ध वैयाकरण और सिद्धान्त के मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनकी आयु सौ वर्ष से अधिक थी। ये शास्त्रदानी थे। कीर्तिषेण मुनि इनके अग्रज थे। हपु० ६६ २९-३३

अमितसेना—एक गणिनी। इसने पुष्करवरद्वीप में स्थित वीतशोक नगर के राजा चक्रध्वज की रानी कनकमालिका और उसकी दोनो पुत्रियो कनकलता और पद्मलता को उपदेश दिया था जिसके प्रभाव से वे तीनो मरकर प्रथम स्वर्ग में देव हुई थी। मपु० ६२ ३६४-३६७

अमिताङ्क—राजपुर नगर का राजा, सुधर्ममित्र का शिष्य, ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन के पूर्वभव का जीव। पपु० २० १८८-१८९

अमूढदृष्टि—सम्यग्दर्शन के आठ अगो में एक अग-तत्त्व के समान प्रतिभासित मिथ्यानय के मार्गो में "यह ठीक है" इस प्रकार का मोह न होना। इसका धारक तीनो प्रकार की मूढताओं का त्यागी होता है। मपु० ६३ ३१७, वीवच० ६ ६६

अमूर्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

अमूर्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२८

अमृत—(१) शरीर का पोषक दिव्यपान। मपु० ९ १२

(२) आदित्यवशी नृप अतिबल का पुत्र। सुभद्र इसका पुत्र था। शरीर से नि स्पृह होकर यह निर्ग्रन्थ हो गया था। पपु० ५ ४-१०

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

अमृतगर्भ—रुचिकर, स्वादिष्ट और सुगन्धित किन्तु गरिष्ठ मोदक। मपु० ३७ १८८

अमृतदीधिति—चम्पापुर नगर का राजा। हपु० १५ ४८-५३

अमृतधार—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो मे सैंतालीसवा नगर। हपु० २२ १००

अमृतपानक—भरत का प्रिय रासायनिक पेय पदार्थ। मपु० ३७ १८९

अमृतपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर-विद्याधरो की निवासभूमि। यहाँ का राजा रावण का सहायक था। पपु० ५५ ८४-८८

अमृतप्रभ—अन्धकवृष्णि का पौत्र तथा अभिचन्द्र का पुत्र। यह चन्द्र, शशाक, चन्द्राभ, शशी और सोम का अनुज था। हपु० ४८ ५२

अमृतप्रभावा—दर्भस्थल के राजा सुकोशल की रानी, अपराजिता की जननी। पपु० २२ १७१-१७२

अमृतबल—सूर्यवश में उत्पन्न अतिबल का पुत्र। हपु० १३ ८, १२

अमृतमेघ—उत्सर्पिणी काल के अतिदुषमा काल में निरन्तर सात दिन तक अमृत की वर्षा करनेवाले मेघ। मपु० ७६ ४५४-४५७

अमृतरसायन—(१) सुराष्ट्र देश में गिरिनगर के राजा चित्ररथ का एक रसोइया। इसकी मास पकाने की चतुराई से प्रसन्न होकर राजा ने इसे बारह गाँव दिये थे, किन्तु राजा चित्ररथ के दीक्षित होते ही राजा के पुत्र मेघरथ ने इसके पास एक ही गाँव रहने दिया था, शेष उससे छीन लिये थे। राजा के दीक्षित होने तथा अपने ग्राम छीने जाने में सुधर्म नामक मुनि को कारण समझकर यह मुनि वेष से द्वेष करने लगा था। द्वेष वश इसने मुनि को आहार में कडवी तूमडी दी थी। कडवा फल खाने से मुनि का गिरनार पर्वत पर समाधिपूर्वक मरण हुआ। मुनि मरकर अहमिन्द्र हुए और यह मरकर तीसरे नरक में उत्पन्न हुआ। मपु० ७१ २६५-२७७

(२) सुभौम चक्रवर्ती का रसोइया। अविवेक पूर्वक सुभौम द्वारा दण्डित किये जाने से मरते समय इसने सुभौम को मारने का निदान किया था। मरकर यह विभगावधिज्ञानधारी ज्योतिष देव हुआ तथा पूर्व वैर वश सुभौम को अपनी ओर आकृष्ट करके छलपूर्वक समुद्र के बीच ले गया। वहाँ इसने उसे मार डाला। मपु० ६५ १५२-१६८

अमृतवती—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का देश। मेघकूट इसी देश का एक नगर था। कालसवर यहाँ का राजा था। मपु० ७२ ५४

(२) पृथिवीनगर के राजा पृथु की रानी, कनकमाला की जननी। पपु० १०१ ५-८

अमृतवेग—राक्षसवशी, मुख्यवत का पुत्र। यह अपने पुत्र भानुमति को पिता से प्राप्त राज्य सौंपकर दीक्षित हो गया था। पपु० ५ ३९३-४००

अमृतसागर—श्रुतकेवली तथा अनेक ऋद्धियो के धारक सागरदत्त के सयमदाता मुनि। मपु० ७६ १३४, १४७-१४८

अमृतस्राविणी—एक ऋद्धि। इससे भोजन में मिला विष भी अमृतरूप हो जाता है। मपु० २ ७२

अमृतात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३०

अमृतार—प्रथम बलभद्र अचल के पूर्वजन्म के दीक्षागुरु। पपु० २० २३४

अमृतोद्भव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १३०

अमृत्यु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३०

अमृष्ट—राम का सहायक, शार्दूलरथवाही, विद्याधरो का स्वामी एक योद्धा। पपु० ५८ ५-७

अमृतस्वर—(१) पद्मिनी नगरी के राजा विजयपर्वत का शास्त्रज्ञान में निपुण और राजकर्त्तव्य मे कुशल दूत। इसकी भार्या उपयोगा से उदित और मुदित नाम के दो पुत्र हुए थे। पपु० ३९ ८४-८६

(२) लवणाकुश के दीक्षागुरु। पपु० ११९ ५८-५९

अमेयर्द्धि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

अमेयात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०१

अमोघ—(१) कभी व्यर्थ नही होनेवाला भरतेश का शीघ्रगामी दिव्य शर। मपु० २८ ११९-१२०, ३७ १६२, पपु० १२ ८४, हपु० ११ ६

(२) बलभद्र राम को प्राप्त चार महारत्नो में एक रत्न। मपु० ६८ ६७३-६७४

(३) रुचकवर नाम के तेरहवें द्वीप में स्थित रुचकवर पर्वत की दक्षिण दिशा के आठ कूटो में प्रथम कूट। यह स्वास्थिता देवी की निवासभूमि है। हपु० ५ ६९९, ७०८

(४) अधोग्रैवेयक के तीन इन्द्रक-विमानो में दूसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५२-५३

(५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

अमोघक—समसमरणभूमि के तीसरे कोट के उत्तर दिशावर्ती द्वार के आठ नामो में एक नाम। हपु० ५७ ५६, ६० दे० आस्थानमडल

अमोघजिह्व—एक निमित्तज्ञानी मुनि। इन्होंने पोदनपुर के राजा के मस्तक पर सातवें दिन वज्रपात होने की भविष्यवाणी की थी। मपु० ६२ १७३, १९६, २५३

अमोघदर्शन—चन्दनवन नगर का राजा। इसकी रानी चारुमति और चारुचन्द्र पुत्र था। कौशिक ऋषि के आक्रोश से भयभीत होकर यह सपत्नीक तापस हो गया था। तापस वेष में ही ऋषभदत्ता नाम की इसे एक पुत्री हुई थी। यह पुत्री प्रसूति के बाद मरकर ज्वलनप्रभ-वल्लभा नाम की नागकुमारी हुई। हपु० २९ २४-५०

अमोघमुखी—शक्ति। लक्ष्मण को प्राप्त सात रत्नो में एक रत्न। मपु० ६८ ६७५-६७७

अमोघमूला—श्रीकृष्ण को प्राप्त सात रत्नो में इस नाम की शक्ति। हपु० ५३ ४९-५०

अमोघवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

अमोघविजया—मनोनुकूल रूप बदलने में सहायक, देवो को भी भयोत्पादिनी एक विद्या। यह विद्या नागराज ने रावण को दी थी, जिससे रावण ने लक्ष्मण को आहत किया था। पपु० ९ २०९-२१४

अमोघशर—एक ब्राह्मण। इसकी मित्रयशा नाम की पतिव्रता-सती स्त्री थी। वह विधवा तथा दुखिनी होकर हेमाग ब्राह्मण के घर में रहती थी और वहाँ अपने पति के गुणो का स्मरण करती रहती थी। पपु० ८० १६८-१६९

अमोघशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

अमोघाज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

अमोमुह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

अम्बरचारण—आकाश में निराबाध गमन कराने मे समर्थ एक ऋद्धि। मपु० २ ७३

अम्बरतिलक—(१) विदेह सेना के चारणचरित वन का एक पर्वत। मपु० ६ १३१

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ८२, ८७

अम्बविद्युत्—दशानन का सहयोगी एक विद्याधर। पपु० ८ २६९-२७०

अम्बष्ठ—राजा ओष्ठिल की शासनभूमि। पपु० ३७ २३

अम्बा—कुरुवशी राजा धृतराज की तीन पत्नियो में तीसरी पत्नी। विदुर इसी रानी के पुत्र थे। हपु० ४५ ३३-३४

अम्बालिका—कुरुवशी राजा धृतराज की तीन रानियो में दूसरी रानी। पाण्डु इसी रानी का पुत्र था। हपु० ४५ ३३-३४

अम्बिका—(१) कुरुवशी राजा धृतराज की तीन रानियो में प्रथम रानी, धृतराष्ट्र की जननी। हपु० ४५ ३३-३४

(२) एक शासन देवी। हपु० ३७ ७

(३) चक्रपुर के राजा प्रख्यात की रानी, पाँचवें नारायण पुरुषसिंह की जननी। पपु० २० २२१-२२६

(४) विद्याधर सिंहसेन की पत्नी, सुमित्र केशव नारायण की जननी। मपु० ६१ ७०-७१

अम्बुज—कृष्ण का शख। यह प्रचण्ड आवाज करता है। कृष्ण ने इसे महानागशय्या पर आरूढ़ होकर बजाया था। हपु० ५५ ६०-६१

अम्बुदावर्त—भगली देश का पर्वत। यहाँ चारण ऋद्धिधारी श्रीधर्म और अनन्तवीर्य मुनियो का समागम हुआ था। अपने भाई शतबली द्वारा निर्वासित हरिवाहन इसी पर्वत पर इन मुनियो से दीक्षा लेकर सल्लेखना द्वारा ऐशान स्वर्ग में देव हुआ था। हपु० ६० १९-२१

अम्बुवाहरथ—राम के भाई भरत के साथ दीक्षा लेनेवाला एक नृप। पपु० ८८ १-३

अम्बेणा—भरत चक्रवर्ती की विजय यात्रा में पडनेवाली दक्षिण दिशा की एक नदी। मपु० २९ ८७

अम्भोजकाण्ड—राम का शय्या गृह। पपु० ८३ १०

अम्भोजमाला—पोदनपुर के राजा व्यानन्द की भार्या, विजया की जननी। पपु० ५ ६१

अम्भोद—भानुरक्ष के पुत्रो द्वारा बसाया गया नगर, राक्षसों की निवास-भूमि। पपु० ५ ३७३-३७४

अम्भोधि—समुद्रविजय के अनुज अक्षोभ्य के पाँच पुत्रों में दूसरा पुत्र। उद्धव इसका अग्रज तथा जलधि, वामदेव और दृढव्रत अनुज थे। हपु० ४८ ४३-४५

अम्ल—छ रसो में एक रस—खट्टा रस। मपु० ९ ४६

अम्लातक—लका प्रस्थान काल में बजाया गया राम का एक वाद्य। पपु० ५८ २७-२८

अयन—तीन ऋतुओं से युक्त काल। एक वर्ष में दो अयन होते हैं। ऋतु का समय दो मास का होता है। हपु० ७ २१-२२ दे० काल

अयस्कान्तपुत्रिका—लौह निर्मित पुत्तलिका। मपु० १० १९३

अयुत—दस हजार वर्ष का काल। हपु० २४ ८१ दे० काल

अयोगकेवली—चौदहवा गुणस्थान। यहाँ जीव घातियाकर्म का नाश करके योग रहित हो जाता है। हपु० ३ ८३

अयोघन—(१) हस्तिनापुर के राजा मत्स्य के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र। हपु० १७ ३१

(२) वारणयुग्म नगर का सूर्यवशी राजा। इस नृप को दिति नामा महारानी थी। सुलसा इसी की पुत्री थी। हपु० २३ ४६-४८

अयोध्य—भरत चक्रवर्ती का सेनापति। उनके सात सजीव रत्नो में एक रत्न। मपु० ३७ ८३-८४, १७४, हपु० ११ २३, ३१

अयोध्या—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र में स्थित गधिल देश का नगर। जयवर्मा इस नगर का नृप था। मपु० ७ ४०-४१, ५९ २७७

(२) जम्बूद्वीप में आर्यखण्ड के कोशल देश की नगरी। यह नगरी सरयू नदी के किनारे इन्द्र द्वारा नाभिराय और मरुदेवी के लिए रची गयी थी। सुकोशल देश में स्थित होने से इसे सुकोशल और विनीत लोगो की आवासभूमि होने से विनीता भी कहा गया है। यह अयोध्या इसलिए थी कि इसके सुयोजित निर्माण कौशल के कारण इसे शत्रु नही जीत सकते थे। सुन्दर भवनो के निर्माण के कारण इसे साकेत भी कहा जाता था। यह नौ योजन चौडी, बारह योजन लम्बी और अडतीस योजन परिधि की थी। बलभद्र राम यही जन्मे थे। मपु० १२ ६९-८२, १४ ६७-७०, ७१, १६ १५२, २९ ४७, ७१ २५५-२५६, पपु० ८१ ११६-१२४, हपु० ९ ४२, १० १६३, पापु० २ १०८, वीवच० ४ १२१

(३) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र की नगरी, राजा श्रीवर्मा की आवासभूमि। मपु० ५९ २८२

(४) धातकीखण्ड द्वीप के दक्षिण की ओर और इष्वाकार पर्वत से पूर्व की ओर स्थित अल्का नामक देश का नगर। इस द्वीप मे इस नाम के दो भिन्न-भिन्न नगर थे जिनमें गधिल देश से सबधित नगर में जयवर्मा तथा अल्का देश से सबधित नगर में जयवर्मा का पुत्र अतितजय रहता था। मपु० ७ ४०-४१, १२ ७६, ५४ ८६-८७

(५) विदेहक्षेत्र के गन्धावत्सुगन्धा देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१७, हपु० ५ २६३

अयोनिज—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३४

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

अयोबाहु—राजा धृतराष्ट्र और उनकी रानी गान्धारी के सौ पुत्रों में सैंतीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

अर—(१) अवसर्पिणी काल के दु:षमा-सुषमा नामक चतुर्थ काल में उत्पन्न शलाकापुरुष, अठारहवें तीर्थंकर तथा सातवें चक्रवर्ती। ये सोलह स्वप्नपूर्वक फाल्गुन शुक्ला तृतीया के दिन रेवती नक्षत्र में रात्रि के पिछले प्रहर में भरतक्षेत्र में स्थित कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर में सोमवशी, काश्यपगोत्री राजा सुदर्शन की रानी मित्रसेना के गर्भ में आये तथा मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी के दिन पुष्य नक्षत्र में मति, श्रुत और अवधिज्ञान सहित जन्मे थे। इनकी आयु चौरासी हजार वर्ष थी, शरीर तीस धनुष ऊँचा था और कान्ति स्वर्ण के समान थी। कुमारावस्था के इक्कीस हजार वर्ष बीत जाने पर इन्हें मण्डलेश्वर के योग्य राजपद प्राप्त हुआ था और जब इतना ही काल और बीत गया तब ये चक्रवर्ती हुए। इनकी छियानवें हजार रानियाँ थी। अठारह कोटि घोडे, चौरासी लाख हाथी और रथ, निन्यानवें हजार द्रोण, अडतालीस हजार पत्तन, सोलह हजार खेट, छियानवें कोटि ग्राम आदि इनका अपार वैभव था। शरद्-ऋतु के मेघो का अकस्मात् विलय देखकर इन्हें आत्मबोध हुआ। इन्होने अपने पुत्र अरविन्द को राज्य दे दिया और वैजयन्ती नाम की शिविका में बैठकर ये सहेतुक वन में गये। वहाँ षष्ठोपवास पूर्वक मगसिर शुक्ला दशमी के दिन रेवती नक्षत्र में सध्या के समय एक हजार राजाओ के साथ ये दीक्षित हुए। दीक्षित होते ही इन्हें मन:पर्ययज्ञान प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् चक्रपुर नगर में आयोजित नृप के यहाँ इन्होने आहार लिया। सोलह वर्ष छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद दीक्षावन में कार्तिक शुक्ल द्वादशी के दिन रेवती नक्षत्र में सायकाल के समय आम्र वृक्ष के नीचे ये केवली हुए। इनके सघ में कुम्भार्य आदि तीस गणधर, पचास हजार मुनि, साठ हजार आर्यिकाएँ, एक लाख साठ हजार श्रावक और तीन लाख श्राविकाएँ थी। एक मास की आयु शेष रहने पर ये सम्मेदाचल आये। यहाँ प्रतिमायोग धारण कर एक हजार मुनियो के साथ चैत्र कृष्णा अमावस्या के दिन रेवती नक्षत्र में रात्रि के पूर्वभाग में इन्होने मोक्ष प्राप्त किया। इन्होने क्षेमपुर नगर के राजा धनपति की पर्याय मे तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया था। इसके बाद ये अहमिन्द्र हुए और वहाँ से चयकर राजा सुदर्शन के पुत्र हुए। मपु० २ १३२-१३४, ६५ १४-५०, पपु० ५ २१५, २२३, २० १४-१२१, हपु० १ २०, ४५ २२, ६० १५४-१९०, ३४१-३४९, ५०७, पापु० ७ २-३५, वीवच० १८ १०१-१०९

(२) भविष्यत् काल के बारहवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७९, हपु० ६० ५६०

अरज—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०

(२) धृतराष्ट्र और गान्धारी के सौ पुत्रों में सौवाँ पुत्र। पापु० ८ २०५

अरजस्का—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की बीसवीं नगरी। मपु० १९ ४५, ५३

अरजा—(१) विदेह क्षेत्र मे स्थित शङ्खा देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २६२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

अरति—(१) इस नाम का एक परीषह—रागद्वेष के कारणों के उपस्थित होने पर भी किसी से राग-द्वेष नही करना। मपु० ३६ ११८

(२) सत्यप्रवाद नामक छठे पूर्व में वर्णित बारह प्रकार की भाषाओ मे द्वेष उत्पन्न करनेवाली एक भाषा। हपु० १० ९१-९४

अरत्नि—कनिष्ठा से कोहनी तक की लम्बाई-हाथ। मपु० १० ९४, हपु० ५७ ५

अरविन्द—(१) महाबल विद्याधर के वश मे उत्पन्न एक विद्याधर। इसने अपने पिता से राज्य प्राप्त किया था। यह अलका नगरी का शासक था। हरिचन्द्र और कुरुविन्द इसके पुत्र थे। इसे दाहज्वर हो गया था। दैवयोग से लडती हुई दो छिपकलियो में एक की पूँछ कट जाने से निकला रुधिर इसके शरीर पर जा गिरा और इसका दाहज्वर शान्त हो गया। फलस्वरूप आर्त्तध्यानवश इसने अपने पुत्र से रुधिर से भरी हुई एक वापी बनाने की इच्छा प्रकट की। मुनि से पिता का मरण अत्यन्त निकट जानकर पुत्र ने पाप-भय से वापी को रुधिर से न भरवाकर लाख के घोल से भरवा दिया। इसने वापी रुधिर भरी जानकर हर्ष मनाया किन्तु पुत्र का कपट ज्ञात होने पर वह पुत्र को मारने दौडा तथा गिरकर अपनी ही तलवार से मरण को प्राप्त हुआ, और नरक मे उत्पन्न हुआ। मपु० ५.८९-११४

(२) जम्बूद्वीप के दक्षिण भरतक्षेत्र मे स्थित सुरम्य देश के पोदनपुर नगर का राजा। इसी नगर के निवासी विश्वभूति ब्राह्मण के पुत्र कमठ और मरुभूति इसके मंत्री थे। मरुभूति को कमठ ने मार डाला था जो मरकर वज्रघोष नाम का हाथी हुआ। इसके सयम धारण करने पर किसी समय इस हाथी ने इसे वन में देखा और जैसे ही वह इसे मारने को उद्यत हुआ उसने इसके शरीर पर श्रीवत्स का चिन्ह देखा। उसे पूर्वभव का अपना सम्बन्धी जान लिया और मारने के अपने उद्यम से विरत हो गया। शान्त होकर इसने इसी से श्रावक के व्रत ग्रहण कर लिये तथा अन्त मे मरकर सहस्रार स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७३ ६-२४

अरविंदा—अतिवीर्य राजा की रानी। इसके विजयस्यन्दन पुत्र और रतिमाला तथा विजयसुन्दरी पुत्रियाँ थी। इसकी दोनो पुत्रियाँ क्रमश. लक्ष्मण तथा भरत से विवाही गयी थी। पपु० ३८ १-२, ९

अरिंजय—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित साठ नगरो में एक नगर। हपु० २२ ८६

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में चौथा नगर। लक्ष्मण ने यहाँ के राजा को अपने आधीन किया था। मपु० १९ ४१, ५३, पपु० ९४ १-७, हपु० २२ ९३

(३) श्वेत अश्वो द्वारा चालित जयकुमार का इस नाम का एक रथ। मपु० ४४ ३२०, पापु० ३ १०९

(४) विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०३-१०४

(५) धातकीखण्ड के पश्चिम विदेह क्षेत्र का निवासी, जयवती का पति, क्रूरामर और धनश्रुति का पिता। पपु० ५ १२८-१२९

(६) चित्रपुर का राजा। मपु० ६२ ६६-६७, पापु० ४ २६

(७) जयकुमार के साथ दीक्षित उनका पुत्र। मपु० ४७ २८१-२८३

(८) अरिंजयपुर का राजा। इसकी रानी अजितसेना और प्रीतीमती पुत्री थी। हपु० ३४ १८

(९) जम्बूद्वीप के कोशल देश सम्बन्धी साकेत (अयोध्या) का राजा। इसने सिद्धार्थ वन मे माहेन्द्र गुरु से धर्मोपदेश सुना और अपने पुत्र अरिंदम को राज्य सौंपकर माहेन्द्र गुरु से ही सयम ग्रहण कर लिया था। मपु० ७२ २५-२९

(१०) भीलराज हरिविक्रम का सेवक। मपु० ७५ ४७८-४८१

(११) चारण ऋद्धिधारा आदित्यगति मुनि के साथ आये अवधिज्ञानी मुनि। ये दोनो मुनि युगन्धर स्वामी के समवसरण के प्रधान मुनि थे। मपु० ५ १९३-१९६

(१२) मुनि, रेणुकी के बडे भाई। इन्होंने रेणुकी को शील और सम्यक्त्व का उपदेश दिया था और कामधेनु विद्या तथा मन्त्र सहित परशु भी दिये थे। मपु० ६५ ९३-९८

(१३) अरिंदमपुर का नृप। मपु० ७० ३०

(१४) एक चारणमुनि। इनके साथ आदित्यगति मुनि थे। राजा श्रीषेण ने इन मुनियो की वन्दना की थी तथा इन्हें आहार दिया था। मपु० ६२ ३४८

(१५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १६७

अरिंजयपुर—विद्याधरो का नगर। मेघनाद और वह्निवेग इस नगर के नृप थे। पपु० १३ ७३, हपु० २५ २, ३४ १८

अरिंदम—(१) मासोपवासी एक मुनि। अयोध्या के राजा अजितजय के पुत्र अजितसेन ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५४ १२०-१२१, हपु० १९ ८२

(२) जयकुमार के साथ दीक्षित उनका एक पुत्र। मपु० ४७. २८१-२८३

(३) कोशल देश मे स्थित साकेत नगरी के राजा अरिंजय का पुत्र। इसकी रानी श्रीमती तथा सुप्रबुद्धा पुत्री थी। मपु० ७२.२५-२८, ३४

(४) महेन्द्रनगर के राजा महेन्द्र विद्याधर और उसकी रानी हृदयवेगा के सौ पुत्रो मे ज्येष्ठ पुत्र, अजनसुन्दरी का भाई। पपु० १५ १३-१६

(५) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के पूर्वभव का पिता। पपु० २० २५-३०

(६) अक्षपुर नगर के राजा हरिध्वज और उसकी रानी लक्ष्मी का पुत्र। इसे किसी मुनि से सातवें दिन मरने और मरकर मल का कीट होने की बात ज्ञात हो गई थी, अत. इसने अपने पुत्र प्रीतिकर को यह सब बताकर मल में उत्पन्न कीट को मारने के लिए कह रखा था

प्रीतिकर प्रयत्न करने पर भी उसे मार न सका था क्योंकि वह दिखायी देकर भी मल में ही शीघ्र प्रवेश कर जाता था। पपु० ७७. ५७-७०

(७) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित किन्नरोद्गीत नगर के स्वामी अर्चिमाली विद्याधर के दीक्षागुरु। हपु० १९ ८०-८२

(८) राजा विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०५

अरिध्वंसी—इस नाम की एक विद्या। यह विद्या रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२९-३३२

अरिमर्दन—द्विपवाह के बाद हुआ लका का राक्षसवशी राजा। यह माया और पराक्रम से सहित, विद्या, बल और महाकान्ति का धारी और विद्यानुयोग में कुशल था। पपु० ५ ३९६-४००

अरिषड्वर्ग—अन्तरग के छ शत्रु—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य। हपु० १७ १

अरिष्ट—(१) ब्रह्मलोक के निवासी, शुभलेश्या एव महाऋद्धिधारी लौकान्तिक देव। ये अभिनिष्क्रमण कल्याणक में तीर्थंकरो को सम्बोधने के लिए भूतल पर आते हैं। मपु० १७ ४७-५०, वीवच० १२ २-८

(२) कृष्ण की शक्ति का परीक्षक एक असुर। मपु० ७० ४२७

(३) दक्षिण दिशा के स्वामी यम का विमान। हपु० ५ ३२५

(४) रुचकवर नामक तेरहवें द्वीप के रुचकवर नाम के गिरि की पूर्व दिशा में स्थित आठ कूटो में इस नाम का एक कूट। इस कूट पर अपराजिता देवी निवास करती है। हपु० ५ ७०५

(५) ब्रह्म युगल का प्रथम इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४९ दे० ब्रह्म

(६) मद्याग जाति के वृक्षो से प्राप्त होनेवाला रस। मपु० ९ ३७

अरिष्टनगर—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश का एक नगर, तीर्थंकर शीतलनाथ की प्रथम आहारस्थली। मपु० ५६ ४६, ७१ ४००

अरिष्टनेमि—(१) हरिवश में उत्पन्न बाइसवें तीर्थंकर नेमिनाथ। इन्हें यह नाम इन्द्र द्वारा दिया गया था। राजा समुद्रविजय इनके पिता थे। पपु० १ १३, हपु० १ २४, ३४ ३८, ३८ ५५, ४८ ४३ दे० नेमिनाथ

(२) हरिवशी नृप महीदत्त का ज्येष्ठ पुत्र, कुमार मत्स्य का अग्रज। मत्स्य ने अपना राज्य भी अन्त में इसे सौंप दिया था। हपु० १७.२९-३१

अरिष्टपुर—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक नगर। रोहिणी का जन्म यही हुआ था। यह तीर्थंकर अनन्तनाथ के पूर्वभव की राजधानी थी। इसी नगर में रोहिणी ने स्वयवर में वसुदेव का वरण किया था। राजा हिरण्याभ इसी नगर का नृप था। इसकी पुत्री पद्मावती को कृष्ण ने विवाहा था। मपु० ७० ३०७, पपु० २० १४-१७, ३९ १४८, हपु० ३१ ८, ४१-४३, ४४.३७-४३, पापु० ११.३१-३५

(२) जम्बूद्वीप की सीता नदी के उत्तरी तट पर स्थित कच्छकावती देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१३, हपु० ६० ७५

(३) पूर्व विदेह क्षेत्र के महाकच्छ देश का एक नगर। मपु० ५ १९३

अरिष्टसेन—(१) भविष्यकालीन बारहवाँ चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८४, हपु० ६० ५६५

(२) तीर्थंकर धर्मनाथ के मुख्य गणधर। मपु० ६१ ४४, हपु० ६० ३४८

अरिष्टा—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु से उत्तर की ओर स्थित एक नगरी। यह महाकच्छ देश की राजधानी थी। अपर नाम अरिष्टपुर। मपु० ६० २, ६३ २०८-२१३

(२) धूमप्रभा पृथिवी का अपर नाम। हपु० ४ ४४-४६

अरिसंज्वर—एक देव। इसने रावण और सहस्रार के पुत्र इन्द्र विद्याधर के बीच हुए युद्ध में इन्द्र का साथ दिया था। पपु० १२ २००

अरिसंत्रास—राक्षसवशी नृप। बृहत्कान्त के पश्चात् लका का राज्य इसे ही प्राप्त हुआ था। यह विद्या, बल, और महाकान्ति का धारी था। पपु० ५ ३९८-४००

अरिसूदन—भरतक्षेत्र की गान्धारी नगरी के राजा भूति का पौत्र, योजनगन्धा का पुत्र। कमलगर्भ मुनिराज के दर्शन करने से उत्पन्न पूर्व-जन्म-स्मरण के कारण यह विरक्त हो गया था। यह जिनदीक्षा पूर्वक मरणकर शतार स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ३१ ४६-४७

अरिहा—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४०

अरुण—(१) मध्य लोक का नवम द्वीप। इसे अरुणसागर घेरे हुए है। अरुण और अरुणप्रभ देव इसके स्वामी हैं। हपु० ५ ६१७, ६४५

(२) मध्य लोक का नवम सागर। यह अरुण द्वीप को सब ओर से घेरे हुए है। सुगन्ध और सर्वगन्ध नाम के देव इसके स्वामी हैं। हपु० ५ ६१७, ६४६

(३) विजयावान् पर्वत का निवासी व्यन्तर देव। हपु० ५ १६१-१६४

(४) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों के इकतीस पटलो में छठा पटल। हपु० ६ ४४-४७

(५) पचम स्वर्ग के लौकान्तिक देवो का एक भेद। मपु० १७. ४७-५०, हपु० ५५ १०१, वीवच० १२ २-८

(६) एक ग्राम। यहाँ कपिल का आश्रम था। राम वनवास के समय यहाँ आये थे। पपु० १ ८३, ३५.५-७

(७) विजयार्ध पर्वत पर स्थित नगर। पपु० १७ १५४

अरुणप्रभ—नवम द्वीप अरुण का स्वामी एक देव। हपु० ५ ६१७, ६४५

अरुणा—भरतक्षेत्र के पूर्व खण्ड की एक नदी। मपु० २९ ५०

अरुणोद्भास—मध्यलोक का दसवाँ द्वीप। इसे अरुणोद्भाससागर घेरे हुए है। हपु० ५ ६१७

अर्क—(१) राजा वसु का चौथा पुत्र। बृहद्वसु, चित्रवसु और वासव इसके बड़े भाई तथा महावसु, विश्वावसु, रवि, सूर्य, सुवसु और बृहद्ध्वज छोटे भाई थे। हपु० १७ ३६-३७, ५७-५९

(२) ब्रह्म स्वर्ग का देव। हपु० ५५ १०१

(३) सौधर्म और ईशान स्वर्गों के ३१ पटलों में १७वाँ पटल। हपु० ६ ४६ दे० सौधर्म

(४) रावण का एक योद्धा। पपु० ६० २-४

अर्ककीर्ति—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित रथनूपुर नगर के विद्याधर राजा ज्वलनजटी तथा उनकी रानी वायुवेगा का पुत्र, स्वयप्रभा का सहोदर। इसका विवाह प्रजापति की पुत्री ज्योतिर्माला से हुआ था। इन दोनो के अमिततेज नामक पुत्र और सुतारा पुत्री थी। इसने पिता से राज्य प्राप्त किया था। इसकी पुत्री का विवाह इसके फूफा त्रिपृष्ठ के पुत्र विजय से हुआ था। अन्त में इसने पुत्र अमिततेज को राज्य देकर विपुलमति चारण मुनि से दीक्षा धारण कर ली थी तथा कर्मों का नाश कर मुक्ति प्राप्त की थी। मपु० ६२ ३०-४४, पापु० ४ ४-१३, ८५-९६, वीवच० ३ ७१-७५

(२) भरत के चरमशरीरी पाँच सौ पुत्रो मे प्रथम पुत्र। भरत के सेनापति जयकुमार के साथ सुलोचना नामक कन्या के निमित्त इसका सघर्ष हुआ था। काशी देश के राजा अकम्पन ने अपनी पुत्री अक्षमाला इसे देकर इस सघर्ष को समाप्त किया था। सूर्यवंश का उद्भव इसी से हुआ था। सितयश इसका पुत्र था। मपु० ४३ १२७, ४४ ३४४-३४५, ४५ १०-३०, पपु० ५ ४, २६०-२६१, हपु० ३ १-७, ११. १३०, १२ ७-९, पापु० ३ १२९-१३७

(३) राजा चन्द्राभ और रानी सुभद्रा का पुत्र। मपु० ७४ १३५

अर्कचूड—भूरिचूड का पुत्र, वह्निजटी विद्याधर का पिता और दृढरथ का वशज। पपु० ५ ४७-५६

अर्कजटी—विद्याधर रत्नजटी का पिता। इसने रावण से सीता को मुक्त कराने का यत्न किया था। पपु० ४५ ५८-६१ दे० रत्नजटी

अर्कतेज—विद्याधर अमिततेज का पुत्र। मपु० ६२ ४०८, पापु० ४ २३७-२४३

अर्कप्रभ—(१) कापिष्ठ स्वर्ग में उत्पन्न इस नाम का देव। यह मुनि रश्मिवेग का जीव था। हपु० २७ ८७

(२) कापिष्ठ स्वर्ग का इस नाम का एक विमान। मपु० ५७ २३७-२३८

अर्कमाली—सिद्धशिला के दर्शनार्थ राम लक्ष्मण के साथ गया एक विद्याधर। पपु० ४८ १९१

अर्कमूल—विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का नगर। हपु० २२ ९९

अर्कोपसेवन—सूर्योपासना। अयोध्या नगरी में काश्यप गोत्र के इक्ष्वाकुवंशी राजा वज्रबाहु और रानी प्रभकरी का आनन्द नामक पुत्र था। इसने विपुलमति मुनि से धर्मश्रवण किया था। मुनि ने इसे चैत्य और चैत्यालयो को अचेतन होते हुए पुण्यबध के कारण बताया था और सूर्य विमान तथा उनमें जिनमदिर भी बनवाया था। इस प्रकार इस राजा की सूर्योपासना को देखकर दूसरे लोग भी सूर्य-स्तुति करने लगे, और लोक में सूर्योपासना आरम्भ हो गयी। मपु० ७३ ४२-६०

अर्चा—नवधा भक्ति में चतुर्थ भक्ति। मपु० २० ८६-८७

अर्चाख्य—समवसरण की उत्तर दिशा मे स्थित द्वार के आठ नामो में एक नाम। हपु० ५७ ६०

अर्चि—इस नाम का प्रथम अनुदिश विमान। हपु० ६ ६३ दे० अनुदिश

अर्चिमालिनी—द्वितीय अनुदिश विमान। हपु० ६ ६३ दे० अनुदिश

अर्चिमाली—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित किन्नरोद्‌गीत नगर का राजा। इसकी रानी प्रभावती से ज्वलनवेग और अशनिवेग नाम के दो पुत्र थे। इसने बड़े पुत्र को राज्य तथा प्रज्ञप्ति विद्या और छोटे पुत्र को युवराज पद देकर अरिन्दम गुरु से दीक्षा धारण कर ली थी। हपु० १९ ८०-८२

(२) अशनिवेग विद्याधर का आज्ञाकारी देव। इसने अशनिवेग की आज्ञा से राजा वसुदेव को हरकर विजयार्ध पर्वत पर कुजरावर्त नगर के सर्वकामिक उपवन मे छोडा था। वायुवेग विद्याधर इसका साथी था। हपु० १९ ६७-७१

अर्चिष्मान्—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ २९-४० दे० जरासन्ध

अर्जुन—कुरुवशी राजा पाण्डु की प्रथम रानी कुन्ती का तृतीय पुत्र। इसके दो बडे भाई थे, युधिष्ठिर और भीम। पाण्डु की दूसरी रानी माद्री से उत्पन्न नकुल और सहदेव इसके छोटे भाई थे। ये पाँचो भाई पच पाण्डव नाम से प्रसिद्ध हुए। युद्ध मे धन और जय की प्राप्ति तथा शत्रुओ के लिए अग्नि स्वरूप होने से इसे धनजय, चाँदी के समान शुभ्रवर्ण का होने से अर्जुन और गर्भावस्था में कुन्ती ने स्वप्न मे इन्द्र को देखा था इसलिए शक्रसूनु कहा गया है। धनुष और शब्द-भेदी विद्याएँ इसने द्रोणाचार्य से सीखी थी। इसने गुरु की आज्ञा से द्रोण जाति के काक पक्षी की दाहिनी आँख को वेधा था। बाण से भरे मुखवाले कुत्ते को देखकर ऐसा कार्य करनेवाले शब्दवेध बाण विद्या में निपुण भील का इसने परिचय प्राप्त किया था तथा उससे यह ज्ञात किया था यह विद्या उसने द्रोणाचार्य को गुरु बनाकर उनके परोक्ष में सीखी है। इस प्रकार यह समाचार तथा भील द्वारा निरपराधी प्राणी मारे जाने की सूचना गुरु द्रोणाचार्य को देकर उनसे जीववध रोकने हेतु इसी ने निवेदन किया था। गुरु ने उस भील से भेंट कर उससे गुरु-दक्षिणा में उसका दायें हाथ का अगूठा माँगा था तथा अगुष्ठ लेकर जीववध रोका था। पाण्डु और माद्री की मृत्यु के पश्चात् राज्य प्राप्ति के विषय को लेकर कौरवो के साथ इसका और इसके भाइयो का विरोध हो गया था। विरोध स्वरूप कौरवो ने पाण्डवो के निवास मे आग लगवा दी थी किन्तु अपने भाइयो और माँ सहित यह सुरग से निकल आया था। इसने माकन्दी नगरी के राजा द्रुपद और उनकी रानी भोगवती की पुत्री द्रौपदी के स्वयवर मे गाण्डीव धनुष से चन्द्रक यन्त्र का वेधन किया था। द्रौपदी ने इसके गले में माला डाली थी किन्तु वायुवेग से माला टूटकर बिखर गयी और उसके फूल अन्य पाण्डवो पर भी गिर गये थे इससे द्रौपदी को पाँचो पाण्डवो की पत्नी कहा गया। पाण्डव पुराण में घूमती हुई किसी राधा नामक जीव की नासिका के मोती को बेधने की चर्चा की गयी है। इसकी पत्नी द्रौपदी में युधिष्ठिर और भीम की बहू जैसी और नकुल तथा सहदेव की माता

जैसी दृष्टि थी। युधिष्ठिर के दुर्योधन से जुआ में पराजित होने पर युधिष्ठिर के साथ सपत्नीक इसे भी भाइयों के साथ बारह वर्ष तक का अज्ञातवास करना पड़ा था। द्वारका में सुभद्रा के साथ कृष्ण के परामर्श से इसका दूसरा विवाह हुआ था। दावानल नामक ब्राह्मण वेषी देव से इसे अग्नि, जल, सर्प, गरुण, मेघ, वायु नाम के बाण तथा मर्कट चिह्न से युक्त रथ प्राप्त हुए थे। अभिमन्यु सुभद्रा का पुत्र था। अज्ञातवास की अवधि पूर्ण होते ही कौरवों के साथ युद्ध हुआ था। युद्ध में कर्ण और दुःशासन इससे पराजित हुए थे। भीष्म पितामह का धनुष भी इसी ने छेदा था। अश्वत्थामा को इसने ही मारा था। इसका पुत्र अभिमन्यु जयार्द्रकुमार द्वारा मारा गया था। पुत्र-मरण से दुखी सुभद्रा के आगे इसने जयार्द्रकुमार का सिर न काट सकने पर अग्नि में प्रवेश करने की प्रतिज्ञा की थी। प्रतिज्ञानुसार इसने शासनदेव से प्राप्त बाण से जयार्द्रकुमार का मस्तक काटकर तप करते हुए उसके पिता की अंजलि में फेंका जिससे वह भी तत्काल ही भूमि पर गिर गया। युद्ध के अठारहवें दिन इसने कर्ण से युद्ध किया और दिव्यास्त्र से उसका मस्तक काट दिया। दूसरे पूर्वभव में यह सोमभूति नामक ब्राह्मण और पहले पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में देव हुआ था। वहाँ से च्युत होकर युधिष्ठिर का अनुज हुआ। पूर्वभव में इसने विधिपूर्वक चरित्र का पालन किया था। इससे वह प्रसिद्ध धनुर्वेदज्ञ हुआ। पूर्वभव में इसका नागश्री से स्नेह था। वही इस भव में द्रौपदी हुई और उसकी पत्नी बनी। अन्त में इसने मुनि होकर आराधनाओं की आराधना की थी। दुर्योधन के भानजे कुर्यधर ने वैरवश शत्रुंजय गिरि पर ध्यानस्थ पाँचों पाण्डवों को तप्त लौह के आभूषण पहनाये थे। युधिष्ठिर भीम और यह तीनों अनुप्रेक्षाओं का चिन्तन करते रहे, ध्यान से किंचित् भी विचलित न हुए। फलस्वरूप समस्त कर्मों का विनाश कर तीनों ने मोक्ष प्राप्त किया। मपु० ७० ११९-२६९, हपु० ४५ १-५७, १२०-१५०, ४६ १-६, ४७ २-३ पापु० ८ १७०-१७२, २१३-२१५, १० १६३-१८०, १९९-२६९, १५ १०९-११४, १६ ३०-७०, १०१, १८ ८४-१४२, २६१-२६३, २० ३०-३६, ६२-६३, ८१-९३, १७४-१७६, २४ ७४-७६, ८७-८८, २५ १०, ५२-१३७

अर्जुनवृक्ष—लक्ष्मण और उनकी रानी वनमाला का पुत्र। पपु० ९४ ३३

अर्जुनी—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ७८, ८७ दे० विजयार्ध

अर्णव—(१) आठवें बलभद्र पद्म (राम) के पूर्वजन्म सम्बन्धी दीक्षा-गुरु। पपु० २० २३५

(२) विद्याधरों का स्वामी, महारथी, विद्या-वैभव से सम्पन्न राम का सहायक। पपु० ५४ ३५-३६

अर्त—पाँचवीं धूमप्रभा पृथिवी का नगराकार चतुर्थ इन्द्रक बिल। हपु० ४ ८३

अर्थ—(१) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चार पुरुषार्थों में दूसरा पुरुषार्थ। यह धर्म का फल है। यह चंचल है, कष्ट से प्राप्य और मनोवाछित सासारिक सुख का दाता है। इसके त्याग से मुक्ति प्राप्त होती है। मपु० २ ३१-३३, हपु० ९ १३७, पापु० ८३ ७७, वीवच० ५ ६२, १४३

२ अग्रायणीपूर्व की चौदह वस्तुओं में आठवीं वस्तु। हपु० १० ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

अर्थज सम्यक्त्व—सम्यक्त्व का आठवाँ भेद, अपरनाम अर्थोत्पन्न सम्यक्त्व-द्वादशांग श्रुत रूप समुद्र का अवगाहन करके और वचन-विस्तार को छोड़कर अर्थ मात्र का अवधारण करने से उत्पन्न श्रद्धा। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४७, वीवच० १९ १५८ दे० सम्यक्त्व

अर्थपद—पद तीन प्रकार के होते हैं—अर्थपद, प्रमाणपद और मध्यमपद। इनमें अर्थपद एक से सात अक्षर का होता है। हपु० १० २२-२३

अर्थशास्त्र—विद्वत्ता, आर्थिक समृद्धि और उत्तम संस्कारों के लिए पठनीय शास्त्र। वृषभदेव ने भरत को अर्थशास्त्र पढ़ाया था। मपु० १६ ११९, ३८ ११९

अर्थसिद्धा—तीर्थंकर अभिनन्दननाथ द्वारा व्यवहृत पालकी। हपु० ६० २२१

अर्थस्वामिनी—धनमित्रा की पुत्री। यह नागदत्त की छोटी बहिन और उज्जयिनी नगर-निवासी सेठ धनदेव की भार्या थी। मपु० ७५ ९५-९७

अर्धगुच्छ—एक हार। इसमें मोतियों की चौबीस लड़ियाँ होती हैं। मपु० १६ ६१

अर्धचक्रवर्ती—१६ चक्रवर्ती की अर्ध सम्पदा का स्वामी। मपु० १६ ५७, २३ ६०

अर्द्धचन्द्र—एक बाण। अनन्तसेन द्वारा जयकुमार पर आक्रमण होने के समय देवयोनि को प्राप्त उसके मित्र के द्वारा यह उसे दिया गया था। मपु० ४४ ३३४-३३५

(२) राम का योद्धा। पपु० ५८ २१-२३

अर्धनारीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७३

अर्धमण्डलेश्वर—चार चँवर का स्वामी राजा। मपु० २३ ६०

अर्धमाणव—हार। इसमें दस लड़ियाँ होती हैं। मपु० १६ ६१

अर्धमागधी—सब भाषाओं में परिणमनशील भाषा। यह भाषा सर्व अक्षर-रूप, दिव्य अंगवाली, समस्त अक्षरों की निरूपक, सभी को आनन्द देनेवाली और सन्देह नाश करनेवाली है। इस भाषा में तीर्थंकरों ने धर्म और तत्त्वार्थ को प्रकट किया है। हपु० ३ १६, वीवच० १९ ६२-६३

अर्धबर्बर—विजयार्ध पर्वत के दक्षिण और कैलाश पर्वत के उत्तर की ओर मध्य में स्थित असंयमी और म्लेच्छों द्वारा सेवित देश। पपु० २७ ५-६

अर्धरथ—किसी दूसरे के साथ रथ पर बैठकर युद्ध करनेवाला योद्धा। हपु० ५० ८४-८५

अर्धस्वर्गोत्कृष्ट—महाबुद्धि और पराक्रमधारी अमररक्ष के पुत्रों द्वारा बसाये गये दस नगरों में एक नगर। पपु० ५ ३७१-३७२, ६ ६६-६८

अर्धस्वर्गोदय—ऋद्धि और भोगों का प्रदाता और वन-उपवनों से विभूषित लंका का एक द्वीप। पपु० ४८ ११५-११६

अर्धहार—चौसठ लड़ियों का हार। मपु० १६ ५९

अर्यमा—सूर्य। चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन अर्यमा के शुभ योग में तीर्थंकर वर्द्धमान का जन्म हुआ था। मपु० ७४ २६२

अर्वदेवी—मेघपुर के राजा विद्याधर अतीन्द्र और उसकी भार्या श्रीमती की पुत्री, श्रीकण्ठ की छोटी बहन। यह लंका के राजा कीर्तिधवल से विवाही गयी थी। पपु० ६ २-६

अर्हं—बीज मंत्र। यह आदि में अकार, अन्त में हकार तथा मध्य में बिन्दु सहित रेफ युक्त होता है। इसका ध्यान करने से मुमुक्षु दुःखी नहीं होते। यह बीजमंत्र "अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः" इस रूप में सोलह अक्षरोंवाला और "अर्हद्भ्यो नमः" के रूप में छः अक्षरोंवाला होता है। मपु० २१ २३१-२३५

अर्हच्छ्री—पोदनपुर के राजा उदयाचल की रानी, हेमरथ की जननी। पपु० ५ ३४५-३४६

अर्हत्—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४०, २५ ११२

(२) शरीर सहित जीवन्मुक्त प्रथम परमेष्ठी। ये दो प्रकार के होते हैं—सामान्य अर्हत् और तीर्थंकर अर्हत्। इनमें सामान्य अर्हत् पंचकल्याणक विभूति से रहित होते हैं। वृषभदेव से महावीर पर्यन्त धर्म-चक्र-प्रवर्तक चौबीस ऐसे ही तीर्थंकर हैं। विशेष पूजा के योग्य होने से ये अर्हत् कहलाते हैं। ये ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्मों का नाश कर लेते हैं। इन कर्मों का क्षय हो जाने से इनके अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य प्रकट हो जाते हैं। इन्हें अष्ट प्रातिहार्य और समवसरण रूप वैभव प्राप्त हो जाता है। राग-द्वेष आदि दोषों से रहित हो जाने से ये आप्त कहलाते हैं। इनके जन्म लेने पर और केवलज्ञान होने पर दस-दस अतिशय होते हैं। देव भी आकर चौदह अतिशय प्रकट करते हैं। अष्ट मंगल द्रव्य इनके साथ रहते हैं। ये सभी जीवों का हित करते हैं। मपु० २ १२७-१३४, पपु० १७ १८०-१८३, हपु० १ २८, ३ १०-३० इसी नाम को आदि में रखकर निम्न मंत्र प्रचलित हैं—पीठिका मन्त्र—"अर्हज्जाताय नमः" तथा "अर्हत्सिद्धेभ्यो नमो नमः", जाति मंत्र—"अर्हन्मातुः शरणं प्रपद्यामि", 'अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्यामि" तथा "अर्हज्जन्मनः शरणं प्रपद्यामि" और निस्तारक मंत्र—"अर्हज्जाताय स्वाहा"। मपु० ४० ११, १९ २७-२८, ३२

अर्हत्-पूजा—अभ्युदयकारी धार्मिक कृत्य। अभिषेक पूर्वक गन्ध आदि से जिनेन्द्र की अर्चा करना। मपु० ६ १०७, ७ २७६-२७८

अर्हद्दत्त—(१) महावीर की मूल परम्परा में लोहाचार्य के पश्चात् होने वाले चार आचार्यों में अन्तिम आचार्य। वीवच० १ ४१-४२

(२) धनदत्त और नन्दयशा का पुत्र। मपु० ७० १८५, हपु० १८ ११३-११५

(३) एक सेठ। इसने वर्षायोग में आहार के लिए आये गगन-विहारी मुनियों को निराचार जानकर उन्हें आहार नहीं दिया। पीछे आचार्य द्युति भट्टारक के द्वारा भूल बतायी जाने पर इसने बहुत पश्चात्ताप किया और अन्त में इन मुनियों को मथुरा में आहार देकर संतुष्ट हुआ। पपु० ९२ १४-३१, ४२

अर्हद्दास—(१) सद्भद्रिलपुर के निवासी सेठ धनदत्त और उसकी भार्या नन्दयशा का चौथा पुत्र। मपु० ७० १८२-१८६, हपु० १८ ११३-११५

(२) धातकीखण्ड द्वीप में पूर्व मेरु के पश्चिम विदेह में गन्धिला नामक देश की अयोध्या नगरी का राजा। इसकी दो रानियाँ थीं—सुव्रता और जिनदत्ता। इन दोनों रानियों के क्रमशः वीतभय बलभद्र और विभीषण नारायण ये दो पुत्र हुए थे। मपु० ५९ २७७-२७८, हपु० २७ १११-११२

(३) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी के उत्तर तट पर स्थित सुगन्धिला देश के सिंहपुर नगर का राजा। जिनदत्ता इसकी रानी थी। इस रानी से अपराजित नाम का एक पुत्र हुआ था। इसने इसी पुत्र को राज्य देकर विमलवाहन जिनेन्द्र से दीक्षा धारण कर ली थी तथा अन्त में इन्हीं गुरु के साथ मोक्ष पद पाया था। मपु० ७० ४, १५, हपु० ३४ ३-१०

(४) जम्बूद्वीप के कोशल देश में स्थित अयोध्या नगरी का निवासी सेठ। वप्रश्री इसकी भार्या थी तथा उससे पूर्णभद्र और मणिभद्र ये दो पुत्र हुए थे। अन्त में इसने इसी नगरी के राजा अरिंजय के साथ संयम धारण किया था। मपु० ७२ २५-२९

(५) जम्बूद्वीप के कुरुजांगल देश में स्थित हस्तिनापुर का राजा। काश्यपा इसकी रानी थी। पूर्णभद्र और मणिभद्र के जीव स्वर्ग से च्युत होकर मधु और क्रीडव नाम से इसके दो पुत्र हुए थे। मपु० ७२ २५-३९

(६) राजगृही का एक सेठ। इसकी जिनदासी नाम की भार्या थी। अन्तिम केवली जम्बूस्वामी इसी के पुत्र थे। मपु० ७६ ३५-३७

(७) जम्बूकुमार के वंश में उत्पन्न सेठ धर्मप्रिय और उसकी भार्या गुणदेवी का पुत्र। यह महाव्यसनी था फिर भी कुछ पुण्य के प्रभाव से अनावृत नामक देव हुआ। मपु० ७६ १२४-१२७

(८) इस नाम का एक जैन। इसने सुन्दर नाम के मिथ्यात्वी विप्र को उसका मिथ्यात्व छुड़ाकर सुमार्ग पर लगाया था। मपु० १९ १७०-१९६

(९) एक श्रेष्ठी। राम को इसी ने बताया था कि उनके कष्ट से मुनिसंघ भी व्यथित है। तभी सुव्रत मुनि के आगमन की सूचना उन्हें मिली थी। पपु० ११९ १०-१२

(१०) मेरु पर्वत के पूर्व में स्थित विजयावती नगरी के गृहस्थ सुनन्द और उसकी स्त्री रोहिणी का पुत्र और ऋषिदास का बड़ा भाई। यह तो रावण का जीव था और ऋषिदास लक्ष्मण का। पपु० १२३ ११२-११६, १२७

अर्हद्दासी—तीर्थंकर शान्तिनाथ के संघ की चार लाख श्राविकाओं में मुख्य श्राविका। मपु० ६३ ४९४ दे० शान्तिनाथ

अर्हद्धर्म—मुनिधर्म। मुमुक्षु इस धर्म का आश्रय लेकर परिग्रह को त्यागते हैं और मुनि बनकर तप करते हैं। पपु० ३५ १०१-१०३

अर्हद्भक्ति—(१) सोलह कारण भावनाओं में दसवीं भावना—जिनेन्द्र के प्रति मन, वचन और काय से भावशुद्धिपूर्वक श्रद्धा रखना। मपु० ६३ ३२७, हपु० ३४ १४१

(२) राक्षसवंशी राजा। उग्रश्री के पश्चात् लंका का स्वामित्व इसे ही प्राप्त हुआ था। यह माया, पराक्रम, विद्या, बल और कान्ति का धारी था। पपु० ५ ३९६-४००

अर्हन्नन्दन—एक मुनि धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उत्तर तट पर सुकच्छ नाम के देश में स्थित क्षेमपुर नगर का राजा नन्दिषेण और उसका पुत्र धनपति दोनों इन्हीं से दीक्षित होकर आयु के अन्त में सन्यासमरण द्वारा अहमिन्द्र हुए थे। पूर्व पुण्डरीकिणी नगरी का राजा रतिषेण भी इन्हीं से दीक्षित हुआ था। मपु० ५१ २-३, १२-१३, ५३ २-१५, ६५ २-९

अर्हन्मुनि—पद्मपुराण के कर्ता रविषेण के दादा-गुरु। पपु० १२३ १६८

अलंकार—स्वर के श्रुति, वृत्ति, स्वर, ग्राम, वर्ण, अलंकार, मूर्च्छना, धातु और साधारण आदि भेदों में एक भेद। हपु० १९ १४६-१४७

अलंकारविधि—शारीर-स्वर के जाति, वर्ण, स्वर, ग्राम, स्थान, साधारण क्रिया और अलंकारविधि इन भेदों में अन्तिम भेद। हपु० १९ १४८

अलंकार शास्त्र—व्याकरण, छन्द, और अलंकार वाङ्मय के इन तीन अंगों में तीसरा अंग। मपु० १६ १११

अलंकार संग्रह—अनुप्रास, यमक, उपमा और रूपक आदि शब्दालंकारों और अर्थालंकारों का दस प्राणों (गुणों) आदि का निरूपक शास्त्र। मपु० १६ ११५

अलंकारोदय—पृथिवी के भीतर अत्यन्त गुप्त इस नाम का एक नगर। यह छ योजन गहरा, एक सौ साढ़े इकतीस योजन और डेढ़ कला प्रमाण चौड़ा था। इसमें बड़े-बड़े महल थे, यहाँ पहुँचने के लिए दण्डक पर्वत के गुहाद्वार से नीचे जाने पर तोरणों से युक्त महाद्वार से प्रवेश करना पड़ता था। सीता-हरण के बाद यहाँ के राजा विराधित के निवेदन पर राम-लक्ष्मण ने कुछ समय यहाँ निवास किया था। पपु० ५ १६३-१६६, ४३ २४-२५, ४५ ९२-९९

अलंघन—लंका द्वीप का एक देश। पपु० ६ ६८

अलंबुष—विजय का अन्तिम पुत्र, निष्कम्प, अकम्पन, बलि, युगन्त, और केशरिन् का अनुज। हपु० ४८ ४८

अलक—(१) राम के भाई भरत के साथ दीक्षित एक राजा। इसने परमात्मपद को प्राप्त किया था। पपु० ८८ १-५

(२) स्त्री-मुख का सौन्दर्य बढ़ानेवाले चूर्ण कुन्तल। मपु० १२ २२१

अलकपुर—प्रथम प्रतिनारायण अश्वग्रीव का नगर। पपु० २० २४२-२४४

अलकसुन्दरी—मुजन देश में नगरशोभ नगर के राजा दृढमित्र के भाई सुमित्र की पुत्री और श्रीचन्द्रा की प्रियसखी। मपु० ७५ ४३८-४४४

अलका—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का नगर। अपरनाम अलकापुर एवं अलकापुरी। मपु० ४ १०४-१२१, १९ ८२, ८७, ६२, ५८, पापु० ५ ६५, वीवच० ३ ६८

(२) धातकीखण्ड द्वीप के दक्षिण की ओर विद्यमान इष्वाकार पर्वत से पूर्व की ओर भरतक्षेत्र में स्थित एक देश। मपु० ५४ ८६

(३) भद्रिल नगर की एक वणिक्-पुत्री। इसी के मृत युगल पुत्रों को नैगमर्ष देव देवकी के पास ले जाता और देवकी के पुत्रों को इसके पास लाता था। मपु० ७० ३८४-३८६

(४) मलय देश के भद्रिलपुर नगर के सुदृष्टि सेठ की भार्या। मपु० ७१ २९३, हपु० ३३ १६७

(५) मेघदल नगर के निवासी मेघ सेठ की सेठानी। इसकी चारुलक्ष्मी नाम की एक कन्या थी। हपु० ४६ १४-१५

अलक्तक—पैरों के सौन्दर्य को बढ़ानेवाला महावर। मपु० ७ १३३

अलातचक्र—शीघ्रता से फिरकी लेते हुए अंगावयवों के संचार से युक्त नृत्य। मपु० १४ १२८

अलाबु—एक सुषिर वाद्य-तुम्बी। मपु० १२ २०३

अलाभ—इस नाम का एक परीषह-सदा सतुष्ट रहना। मपु० ३६ १२७

अलुब्धता—आहारदाता के सात गुणों में एक गुण—निर्लोभिता। मपु० २० ८२-८४ दे० दान

अलेप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

अलोकाकाश—आकाश के लोकाकाश और अलोकाकाश इन दो भेदों में दूसरा भेद—चौदह राजु प्रमाण लोक के बाहर का अनन्तआकाश। यह अनन्त विस्तारयुक्त तथा अनन्त प्रदेशों से युक्त और अन्य द्रव्यों से रहित है। यहाँ धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का अभाव होने से जीव और पुद्गल की न गति है और न स्थिति। इसके मध्य में असंख्यात प्रदेशी तथा लोकाकाश से मिश्रित अनादि और अनन्त लोक स्थित है। पपु० ३१ १५, हपु० ४ १-४, २ ११०, वीवच० १६ १३३

अलोलुप—धृतराष्ट्र और गान्धारी का अस्सीवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

अवकीर्ण—धृतराष्ट्र और गान्धारी का अठारहवाँ पुत्र। पापु० ८ १९५

अवक्रान्त—प्रथम पृथिवी धर्मा के बारहवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४ ७६-७७ दे० रत्नप्रभा

अवगाढ़ सम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेदों में नवाँ भेद। यह अंगप्रविष्ट और अंग बाह्य श्रुत के रहस्य-चिन्तन से क्षीणमोह योगी के मन में उत्पन्न होता है। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४८, ५४ २२६, वीवच० १९ १५१ दे० सम्यक्त्व

अवगाहनत्व—सिद्ध जीव के आठ गुणों में एक गुण। गहन वन में तप करने वाले मुनि को प्राप्य यह गुण तीनों लोकों के जीवों को स्थान देने में समर्थ होता है। मपु० २० २२२-२२३, ३९ १८७ दे० सिद्ध

अवग्रह—मतिज्ञान के चार भेदों में पहला भेद—पाँच इन्द्रियों और मन इन छ से होनेवाला वस्तु का प्रथम दर्शन और उस दर्शन से होनेवाला वस्तु का सामान्य बोध। हपु० १० १४६-१४७ दे० मतिज्ञान

अवघाटक—यष्टि विशेष (माला)। इसके बीच में एक बडा मणि तथा उसके दोनो ओर क्रमश घटते हुए मोती होते हैं। मपु० १६.५२-५३

अवतंस—कान का एक आभूषण। हपु० ४३ २४

अवतंसिका—भरतेश की इस नाम की एक रत्नमाला। मपु० ३७ १५३

अवतारक्रिया—दीक्षान्वय क्रियाओ में प्रथम क्रिया और गर्भान्वय की क्रियाओ में ३८वी क्रिया। मिथ्यात्वी पुरुष के समीचीन मार्ग की ओर सम्मुख होने पर उसका किसी धर्मोपदेशक से धर्म श्रवण कर तत्त्वज्ञान में अवतरित होना। मपु० ३८ ६०, ३९ ७-३५

अवद्वार—क्षुल्लक—ऐसा व्यक्ति जो न गृहस्थ होता है और न साधु। पपु० ११ १५५

अवद्वारगति—एक नारद। यह साधु वेषधारी गृहस्थ था। लवणाकुश इसी से राम और लक्ष्मण का वृत्तान्त सुनकर उनसे युद्ध करने को तैयार हुआ था। पपु० ८१ ६३, १०२ २-५२

अवधिज्ञान—ज्ञान के पाँच भेदो मे तीसरा भेद। इसके तीन भेद होते हैं—देशावधि, सर्वावधि और परमावधि। ये तीनो अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होते हैं। मपु० २ ६६, हपु० ८ १९७, १० १५२ अनुगामी, अननुगामी, वर्द्धमान, हीयमान, अवस्थित और अनवस्थित ये छ भेद भी इसके होते हैं। इस ज्ञान से दूसरो की अन्त प्रवृत्तियो का सहज ही बोध हो जाता है। इन्द्र इसी ज्ञान से तीर्थंकरो के गर्भ, जन्म आदि को जानते हैं। मपु० ६ १४७-१४९, १७ ४६, हपु० २ २६, ८ १२७ दे० ज्ञान

अवधिलोचन—अवधिज्ञानी। वृषभदेव के सघ में नौ हजार ऐसे मुनि थे। मपु० ३ २१०, हपु० १२ ७४

अवध्यत्व—द्विज के दस अधिकारो में इस नाम का एक अधिकार। गुणो की अधिकता के कारण अवध्यता का यह अधिकार ब्राह्मणो को प्राप्त था क्योंकि उनका अन्त करण स्थिर होता था। मपु० ४० १७६, १९४, दे० द्विज

अवध्या—(१) विदेह के गन्धमालिनी देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१७, हपु० ५ २६३

(२) रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२९-३३२

अवनद्ध—तत, अवनद्ध, घन और सुषिर इन चार प्रकार के वाद्यो में चमडे से मढे मृदग आदि वाद्य। पपु० २४ २०-२१, १९ १४२-१४३

अवन्ति—एक विषय (देश)। इस देश को रचना इन्द्र ने की थी। विहार करते हुए वृषभदेव यहाँ आये थे। भरतेश के सेनापति ने इस देश को अपने अधीन किया था। इसका दूसरा नाम उज्जयिनी था। मपु० १६ १४३-१५२, २५ २८७, २९ ४०, ७१ २०६, पपु० ३३ १३८, १४५

अवन्तिकामा—इस नाम की एक नदी। भरत चक्रवर्ती की सेना ने इस नदी पर विश्राम किया था। मपु० २९ ६४

अवन्तिसुन्दरी—वसुदेव की रानी। इससे वसुदेव के तीन पुत्र हुए थे—सुमुख, दुर्मुख और महारथ। हपु० ३१ ७, ३२ ३५, ४८ ६४

अवमौदर्य—छ बाह्य तपो मे दूसरा बाह्य तप—दोषशमन, स्वाध्याय और ध्यान की सिद्धि के लिए भूख से न्यून आहार करना, अथवा नाम मात्र का आहार लेना। मपु० १८ ६७-६८, २० १७५, पपु० १४ ११४-११५, हपु० ६४ २२, वीवच० ६ ३२-४१

अवयव—ताल्गत गान्धर्व के बाईस भेदो में एक भेद। हपु० १९ १४९-१५२

अवरोही—सगीत के स्थायी, सचारी, आरोही और अवरोही इन चार वर्णो मे चौथा वर्ण। पपु० २४ १०

अवर्णवाद—दर्शनमोहनीय कर्म के आस्रव का हेतु—केवली, श्रुति, सघ, धर्म तथा देव में झूठे दोष लगाना। हपु० ५८ ९६

अवलोकिनी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२९-३३२

अवशिष्ट—भवनवासी देवो का इन्द्र। वीवच १४ ५५-५८

अवष्ट—एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२-८६

अवसञ्ज्ञ—अनन्तानन्त परमाणुओ का समूह। हपु० ७ ३७

अवसन्न—ज्ञान, चारित्र आदि से भ्रष्ट मुनि। मपु० ७६ १९४

अवसर्पिणी—व्यवहार काल का एक भेद। प्राणियो के रूप, बल, आयु, देह और सुख मे अवसर्पण (क्रमश ह्रास) होने से इस नाम से अभिहित। यह छ. विभागो मे विभाजित है। विभागो के नाम हैं—सुषमा-सुषमा, सुषमा, सुषमा-दु षमा, दु षमा-सुषमा, दु षमा और दु षमा-दु षमा। इसका प्रमाण दस कोडा-कोडी सागर होता है। इसके छहो भेदो में आदि के तीन भेदो का प्रमाण क्रमश चार, तीन और दो कोडाकोडि सागर है। चौथे काल का प्रमाण ४२ हजार कम एक कोडाकोडि सागर और पाँचवें तथा छठे काल का प्रमाण इक्कीस-इक्कीस हजार वर्ष होता है। यह उत्सर्पिणी काल के बाद आता है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी दोनो शुक्ल और कृष्णपक्ष की भाँति बढते घटते हैं। मपु० ३ १४-२१, पपु० २० ७८-८२, हपु० १ २६, ७ ५६-६२, वीवच० १८ ८५-१२५

अवाय—(१) मतिज्ञान के अवग्रह आदि चार भेदो मे तीसरा भेद—इन्द्रियो और मन से उत्पन्न निर्णयात्मक यथार्थ ज्ञान। हपु० १० १४६-१४७

(२) राजा एक कार्य—परराष्ट्रो से अपने सम्बन्ध का विचार करना। मपु० ४६ ७२

अविज्ञेय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

अविद्या—मिथ्याज्ञान-अतत्त्वो मे तत्त्व-बुद्धि। मपु० ४२ ३२

अविदार्य—ताल्गत गान्धर्व के बाईस भेदो में एक भेद। हपु० १९ १५१

अविध्वंस—सूर्यवंशी एक नृप। इस वश में वीतभी के बाद यह नृप हुआ था। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ ११

अविपाकजा—सविपाक और अविपाक के भेद से निर्जरा के दो भेदो में दूसरा भेद। उदय मे अप्राप्त कर्मो की तपश्चरण आदि उपायो मे समय से पूर्व उदीरणा द्वारा की गयी कर्मो की निर्जरा। हपु० ५८ २९३, २९५, वीवच० ११ ८१

अविरति—कर्मास्रव के पाँच भेदों में दूसरा भेद। इसके बारह भेद हैं। (छः इन्द्रिय अविरतियाँ और छः प्राणी अविरतियाँ)। इसके एक सौ आठ भेद भी होते हैं। मपु० ४७ ३१०, वीवच० ११ ६६

अव्यय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

अव्याबाध—ब्रह्मलोक के निवासी, पूर्वभव के श्रुतज्ञानाभ्यासी, महाऋद्धिधारी और ब्रह्मचारी लौकान्तिक देवों का सातवाँ भेद। मपु० १७ ४७-५०, वीवच० १२ २-८

अव्याबाधत्व—सिद्ध जीव के आठ गुणों में एक गुण—अन्य जीवों से अथवा अजीवों से अबाधित रहना। मपु० २० २२२-२२३, ४२ ९८ इसके लिए "अव्याबाधाय नमः" यह पीठिका—मन्त्र है। मपु० २ २२२-२२३, ४० १४, ४२ ९८

अशन—आहार के चार भेदों में एक भेद। ये भेद हैं—अशन, पानक, खाद्य और स्वाद्य। मपु० ९ ४६

अशनविशुद्धि—आहार सम्बन्धी विशुद्धि रखना—नौ प्रकार के पुण्यों में (नवधाभक्ति) में एक पुण्य (भक्ति)। मपु० २० ८६-८७

अशनि—राम का सहायक, चन्द्रमरीचि विद्याधर का आज्ञाकारी विद्याधर राजा। पपु० ५४ ३६

अशनिघोष—(१) सल्लकी वन का हाथी। मुनि द्वारा सम्बोधे जाने पर इसने अणुव्रत धारण किये थे। पूर्व वैरी सर्प के डसने से यह मरकर देव हुआ था। मपु० ५९ १९७, २१२-२१८

(२) जीवन्धर द्वारा वश किया गया काष्ठांगार का हाथी। मपु० ७५ ३६६-३६९

(३) चमरचंचपुर नगर में उत्पन्न, राजा इन्द्राशनि और उसकी रानी आसुरी का पुत्र। भ्रामरी विद्या सिद्ध करके इसने सुतारा का अपहरण किया था। इसके तीन पुत्र थे—सुघोष, शतघोष और सहस्रघोष। यह युद्ध में अपना रूप द्विगुण कर लेता था। मपु० ६२ २२९-२३४, २७६, पपु० ७३ ६३, पापु० ४ १३, ८-१५०, १८२-१९१

(४) मानुषोत्तर के अंजनकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०४

अशनिघोषक—इस नाम के हाथी के रूप में राजा सिंहसेन का जीव। मपु० ५९ २१२

अशनिवेग—(१) विजयार्ध पर्वत के किन्नरगीत नगर का राजा, अर्चिमाली और प्रभावती का पुत्र और ज्वलनवेग का अनुज। इसकी पवनवेगा नाम की रानी थी। शाल्मलिदत्ता इसी रानी की पुत्री थी जो वसुदेव से विवाही गयी थी। मपु० ७० २५४-२५५, हपु० ५१ २, १९ ८१, पापु० ११ २१

(२) मधु पर्वत पर किष्किंधपुर नगर का निर्माता, रथनूपुर नगर का निवासी, विजयार्ध पर्वत की दोनों श्रेणियों का स्वामी और विजयसिंह का पिता। अपने पुत्र विजय के मारे जाने पर इसने युद्ध में अन्ध्रक को मारा था। अन्त में यह शरद् ऋतु के मेघ को क्षणभर में विलीन होता देखकर राज्य सम्पदा से विरक्त हो गया और अपने पुत्र सहस्रार को राज्य देकर विद्युत्कुमार के साथ श्रमण हो गया। पपु० १ ५८, ६ ३५५-३५७, ४६१-४६४, ५०२-५०४

(३) जीवन्धरकुमार के शत्रु काष्ठांगारिक का हाथी। मपु० ७५ ६६४-६६७

(४) राजपुर नगर के राजा स्तनितवेग और उसकी रानी ज्योतिर्वेगा का पुत्र तथा विद्युद्वेगा विद्याधरी का अग्रज। श्रीपाल को इसने पर्णलघु विद्या से रत्नावर्त पर्वत के शिखर पर छोड़ा था। मपु० ४७, २१-३०

अशय्याराधिनी—परमकल्याण रूप और अनेक मन्त्रों से परिष्कृत एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ७०-७३

अशरणानुप्रेक्षा—मुक्तिमार्ग के पथिक की दूसरी अनुप्रेक्षा। आयु-कर्म के समाप्त होने पर मृत्यु के मुख में जानेवाले प्राणी की रक्षा करने में देव, इन्द्र, चक्रवर्ती और विद्याधर आदि समर्थ नहीं हैं और मणि, मंत्र, तंत्र तथा औषधियाँ आदि भी व्यर्थ हैं। यथार्थ में अर्हन्त, सिद्ध, साधु, केवली भाषित धर्म, तप, दान, जिनपूजा, जप, रत्नत्रय आदि ही शरण हैं। ऐसा चिन्तन करना अशरणानुप्रेक्षा है। मपु० ११ १०५, पपु० १४ २३७-२३९, पापु० २५ ८१-८६, वीवच० ११ १४-२२

अशुच्यनुप्रेक्षा—शरीर में अशुचिता की भावना। शरीर मलस्रावी नव द्वारों से युक्त अशुचि है। रज वीर्य से उत्पन्न मल-मूत्र, रक्त-मांस का घर है। राग-द्वेष, काम, कषाय आदि से प्रभावित है। चन्दन आदि भी इसके संसर्ग से अपवित्र हो जाते हैं। शरीर की ऐसी अशुचिता का चिन्तन करना तीसरी अशुच्यनुप्रेक्षा है। मपु० ११ १०७, पपु० १४ २३७, पापु० २४ ९६-९८, वीवच० ११ ५४-६३

अशुभकर्म—दुःखोत्पादक कर्म। दान-पूजा, अभिषेक और तप आदि शुभ कार्य ऐसे कर्मों के नाशक होते हैं। पपु० ९६ १६

अशुभश्रुति—दुःश्रुति—अनर्थदण्डव्रत नामक तीसरे गुणव्रत के पाँच भेदों में इस नाम का एक भेद। यह हिंसा तथा राग आदि को बढ़ानेवाली दुष्ट कथाओं के सुनने तथा दूसरों को सुनाने से पापबन्ध का कारण होती है। हपु० ५८ १४६, १५२

अशोक—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ८९

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की वीतशोका नगरी का राजा। इसकी रानी श्रीमती से श्रीकान्ता नामा पुत्री हुई थी। हपु० ६० ६८-६९ महापुराण के अनुसार विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा और रानी सोमश्री से उत्पन्न श्रीकान्ता का पिता। मपु० ७१ ३९३-३९४

(३) एक वन—जीवन्धरकुमार की दीक्षास्थली। मपु० ७५, ६७६-६७७

(४) अयोध्या नगरी के सेठ वज्राङ्क और उसकी प्रिया मकरी का ज्येष्ठ पुत्र, तिलक का सहोदर। ये दोनों भाई द्युति नामक मुनि के पास दीक्षित हो गये थे। इन मुनियों को गन्तव्य स्थान तक पहुँचने में असमर्थ देख भामण्डल ने इनके आहार की व्यवस्था की थी। पपु० १२३ ८६-१०२

(५) तीर्थंकरो के केवलज्ञान होते ही रत्नमयी पुष्पो से अलकृत रक्ताभ पल्लवो से युक्त विपुल स्कन्धवाला इस नाम का एक वृक्ष। तीर्थंकर मल्लिनाथ ने इसी वृक्ष के नीचे दीक्षा ली थी। पपु० ४ २४, २० ५५

(६) समवसरण भूमि का शोकनाशक वृक्ष। यह वृक्ष जिन प्रतिमाओ से युक्त, ध्वजा घटा आदि से अलकृत और वज्रमय मूलभागवाला होता है। इसे चैत्य पादप कहा गया है। मपु० २२ १८४-१९९, २३ ३६-४१

(७) एक शोभा-वृक्ष जो स्त्रियों के चरण से ताडित होकर विकसित होता है। मपु० ९.९, ६ ६२, पापु० ९ १२

(८) अष्टप्रातिहार्यों में प्रथम प्रातिहार्य। मपु० ७ २९३, २४ ४६-४७

(९) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

अशोकदेव—जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह क्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की मृणालवती नामा नगरी का निवासी एक वणिक्। इसकी भार्या जिनदत्ता का सुकान्त नाम का पुत्र था। इसी नगर का निवासी श्रीदत्त अपनी पुत्री रतिवेगा को इसी नगर के रतिकर्मा श्रेष्ठी के पुत्र भवदेव को देना चाहता था किन्तु भवदेव के धन कमाने के लिए बारह वर्ष तक बाहर रहने से रतिवेगा अशोकदेव के पुत्र सुकान्त को दे दी गई थी। मपु० ४६ १०१-१०६, पापु० ३ १८७-१९५

अशोकपुर—(१) धातकीखण्ड द्वीप के मेरु पर्वत के पश्चिम की ओर स्थित विदेह क्षेत्र का एक नगर। मपु० ७१ ४३२

(२) अशोकवन की उत्तरपूर्व दिशा में स्थित एक नगर। यह अशोक नामक देव की निवासभूमि था। हपु० ५ ४२६

अशोकमालिनी—प्रमदवन की इस नाम की एक वापी। पपु० ४६ १६०

अशोकलता—बुध और उसकी भार्या मनोवेगा की पुत्री। दशानन ने गान्धर्वविधि से इसके साथ विवाह किया था। पपु० ८ १०४, १०८

अशोकवन—(१) सख्यात द्वीपो के अनन्तर जम्बूद्वीप के समान दूसरे जम्बूद्वीप की पूर्व दिशा में स्थित विजयदेव के नगर से बाहर पच्चीस योजन आगे के चार वनो मे एक वन। यह बारह योजन लम्बा और पाँच सौ योजन चौडा है। हपु० ५ ३९७, ४२१-४२६

(२) समवसरण के चार वनो में प्रथम वन। यह लालरग के फूल और पत्तो से युक्त अशोक के वृक्षो से विभूषित होता है। यहाँ प्राणियो का शोक नष्ट हो जाता है। मपु० २२ १८०

(३) अयोध्या के राजा अजितजय की कैवल्यभूमि। मपु० ५४ ९४-९५

(४) चन्दना की क्रीडा-स्थली। मपु० ७५ ३७

अशोका—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी की एक नगरी। यह कुमुदा देश की राजधानी थी। मपु० १९ ८१, ८७, ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २६२

(२) नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशा के अजनगिरि की पूर्व दिशा मे स्थित वापी। हपु० ५ ६६२

(३) ईहापुर नगर के राजा प्रचण्डवाहन और उसकी रानी विमलप्रभा की दस पुत्रियो में सबसे छोटी पुत्री। अन्य बहिनो के साथ अणुव्रत धारण करके यह श्राविका बन गयी थी। हपु० ४५ ९६-९९

अश्मक—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा रचित दक्षिण का एक देश। मपु० १६ १४३-१५२, हपु० ११ ६९-७०

अश्मगर्भ—(१) नीलमणि। जम्बूवृक्ष का महास्कन्ध इसी वर्ण का है। हपु० ५ १७७-१७८

(२) मानुषोत्तर पर्वत की पूर्व दिशा के तीन कूटो मे एक कूट। यह यशस्कान्त देव की निवासभूमि है। हपु० ५ ६०२-६०३

अश्व—(१) भरतेश के चौदह रत्नो में एक चेतन रत्न। मपु० ३७ ८३-८६

(२) पुत्री को दिये जानेवाले दहेज का अग। मपु० ८ ३६

अश्वकण्ठ—भविष्यत्कालीन चतुर्थ प्रतिनारायण। हपु० ६०.५७०

अश्वकर्णक्रिया—चारित्र मोह की क्षपणा विधि। इसमें चारो कषायो की क्षीणता होती जाती है। इस क्रिया की विधि को वृषभदेव ने अनिवृत्तिकरण नाम के नवें गुणस्थान में ही पूर्ण किया। मपु० २० २५९

अश्वक्रान्ता—षड्ज और मध्यम ग्रामो की चौदह मूर्च्छनाओ मे छठी मूर्च्छना। हपु० १९ १६०-१६२

अश्वग्रीव—(१) प्रथम प्रतिनारायण। यह विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित अलका नगरी के राजा मयूरग्रीव और उसकी रानी नीलाजना का प्रथम पुत्र था। इसकी स्त्री का नाम कनकचित्रा था। इन दोनों के रत्नग्रीव, रत्नागद, रत्नचूड, रत्नरथ आदि पाँच सौ पुत्र थे। हरिश्मश्रु तथा शतबिन्दु इसके क्रमशः शास्त्र और निमित्तज्ञानी मत्री थे। रथनूपुर के राजा ज्वलनजटी की पुत्री के प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ को प्राप्त होने से रुष्ट होकर इसने त्रिपृष्ठ से सग्राम किया, उस पर चक्र चलाया किन्तु चक्र त्रिपृष्ठ की दाहिनी भुजा पर जा पहुँचा। बाद में इसी चक्र से यह त्रिपृष्ठ द्वारा मारा गया। बहु आरम्भ (परिग्रह) के द्वारा नरकायु के बन्ध से रौद्रपरिणामी होकर यह मरा और सातवें नरक गया। मपु० ६२ ५८-६१, १४१-१४४, पपु० ४६.२१३, हपु० ६० २८८-२९२, पापु० ४ १९-२१, वीवच० ३.१०४-१०५

(२) भविष्यत्कालीन सातवाँ प्रतिनारायण। हपु० ६० ५६८-५७०

(३) एक अस्त्र। जरासन्ध द्वारा श्रीकृष्ण पर छोडे गये इस अस्त्र को कृष्ण ने ब्रह्मशिरस् अस्त्र से रोका था। हपु० ५२.५५

अश्वतंत्र—अश्वशास्त्र। इसमें अश्वों की जातियाँ और उनके लक्षण बताये गये हैं। मपु० ४१ १४४, १६ १२३

अश्वतरी—सवारी के लिए प्रयुक्त एक पालतू पशु—खच्चर। अपरनाम-वेगसरी। मपु० ८.१२०, २९ १६०

अश्वत्थ—तीर्थंकर अनन्तनाथ का दीक्षावृक्ष (पीपल)। पपु० २०.५०

अश्वत्थामा—कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में जरासन्ध के पक्ष का योद्धा। द्रोणाचार्य एव अश्विनी का पुत्र। यह धनुर्विद्या मे इतना निपुण था कि अर्जुन ही इसका एक प्रतिस्पर्धी था। पाण्डवपुराण में इसकी जननी

गोतम की पुत्री गौतमी बताई गयी है। इसने अर्जुन के साथ युद्ध किया था जिसमें अर्जुन ने इसे भूमि पर गिरा दिया था। युद्ध में भीम ने मालव नरेश का इस नाम का एक हाथी मार गिराया था। अश्वत्थामा मारा गया यह सुनकर द्रोणाचार्य ने बहुत रुदन किया था और वह युद्ध से विरत हो गया था। तभी धृष्टार्जुन ने द्रोणाचार्य को मार डाला था। इसने युद्ध में माहेश्वरी विद्या को सहायतार्थ बुलाकर पाण्डवो की सेना को घेर लिया था तथा गज और रथ सेनाओ के नायको को नष्ट कर दिया था। अन्त मे यह भी अर्जुन द्वारा युद्ध में गिराया जाकर मूर्छित हुआ और मरण को प्राप्त हुआ। मपु० ७१ ७६-७७, हपु० ४५ ४८-४९, पापु० १०.१४८-१५१, १८ १४०-१४२, २० १८१-१८४, २२२-२२३, ३०७-३१०

अश्वपुर—जम्बूद्वीप के पश्चिमी विदेह क्षेत्रस्थ पद्मदेश की राजधानी। विद्याधरों के इस नगर का राजा रावण की सहायतार्थ मन्त्रियो सहित युद्ध मे गया था। मपु० ६२ ६७, ६३ २०८-२१५, ७३ ३१-३२, पपु० ५५ ८७-८८, हपु० ५ २६१

अश्वध्वज—विद्याधर अश्वायु का पुत्र, पद्मनिभ का पिता। पपु० ५ ४७-५६

अश्वमेध—एक यज्ञ। इस यज्ञ में अश्व का हवन किया जाता है। हपु० २३ १४१

अश्ववन—तीर्थंकर पार्श्वनाथ का दीक्षावन। मपु० ७३ १२८-१३०

अश्वसेन—(१) तीर्थंकर पार्श्वनाथ का पिता। पपु० २० ५९

(२) राजा वसुदेव और उसकी रानी अश्वसेना का पुत्र। हपु० ४८ ५९

अश्वसेना—सेना के सात भेदो में दूसरा भेद। मपु० १० १९९, ३० १०७

अश्वायु—विद्याधर अश्वधर्मा का पुत्र, अश्वध्वज का पिता, विद्याधर दृढरथ का वशज। पपु० ५ ४७-५६

अश्विनी—(१) द्रोणाचार्य की पत्नी, अश्वत्थामा की जननी। हपु० ४५ ४८-४९

(२) तीर्थंकर मल्लि और नमि का जन्म नक्षत्र। पपु० २० ५५-५७

अश्विनीकुमार—इन्द्र का वैद्य। पपु० ७ ३०

अश्विमा—शिविका से भिन्न प्रकार की एक पालकी। इसमें गद्दे और तकिये लगे रहते थे। मपु० ८ १२१

अष्टगुण—सिद्ध के आठ गुण—अनन्त सम्यक्त्व, अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्त और अद्भुत वीर्य, अवगाहनत्व, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाधत्व। मपु० २० २२३, ४८ ५२, हपु० ३.१०९

अष्टचन्द्र—चन्द्र नाम के आठ विद्याधर। ये अष्ट सख्यक होने से इस नाम से विख्यात थे। ये अर्ककीर्ति के शरीर रक्षक थे। ये युद्ध में जयकुमार के बाण से मारे गये थे। मपु० ४४.११३, पपु० ९ ७५, पापु० ३ ११४

अष्टमंगल—अष्ट सख्यक मांगलिक द्रव्य। ये हैं—

१ छत्र २ चमर ३ ध्वजा ४ भृंगार [झारी] ५ कलश ६ सुप्रतिष्ठक [ठौना] ७ दर्पण ८ व्यजन [पखा]। इन आठ मागलिक द्रव्यो से पाण्डुकशिला विभूषित रहती है। समवसरण के गोपुर द्वार भी इनसे अलकृत रहते हैं। मपु० १३.९१, १५ ३७-४३, २२ १८५, २१०, पपु० ३ १३७

अष्टांगनिमित्तज्ञान—१ अन्तरिक्ष २ भौम ३ अग ४ स्वर ५ व्यजन ६ लक्षण ७ छिन्न और ८ स्वप्न इन आठ निमित्तो द्वारा शुभाशुभ का ज्ञान करना। इन आठ अगो का कल्याणवाद नामक पूर्व में विस्तृत वर्णन किया गया है। मपु० ६२ १८०-१९०, हपु० १० ११५-११७, पापु० ४ १०५-१०६

अष्टापद—(१) कैलास पर्वत। ऋषभदेव की निर्वाणभूमि। इस पर्वत पर सगर चक्रवर्ती के साठ हजार पुत्रो ने दण्डरत्न से आठ पादस्थान बनाकर इसकी भूमि खोदना आरम्भ किया था। इस कारण इसका यह नाम प्रसिद्ध हुआ। पपु० १५ ७६, हपु० १३ २७-२९, ११ ८७

(२) शरभ नाम का एक पशु। इसकी पीठ पर भी चार पैर होते हैं जिससे आकाश में उछलकर पीठ के बल गिरने पर भी पृष्ठवर्ती पैरो के कारण यह दुख का अनुभव नही करता। मपु० २७.७०

अष्टाष्टम—सप्त सप्तम के समान एक व्रत। इसमें प्रथम दिन उपवास करके उसके बाद अनुक्रम से एक-एक ग्रास बढ़ाते हुए और नवें दिन से आठ ग्रास घटाते हुए अन्तिम दिन उपवास किया जाता है। इस व्रत में यह क्रिया आठ बार की जाती है। हपु० ३४ ९३-९४

अष्टाह्निकपूजा—अष्टाह्निका में नन्दीश्वर द्वीप के ५२ जिनालयो में स्थित जिन बिम्बो की यथाविधि भक्तिपूर्वक पूजा करना। यह पूजा ऐहलौकिक और पारलौकिक अभ्युदयो की दात्री होती है। इसे उपवास-पूर्वक किया जाता है। मपु० ४३ १७६-१७७, ५४ ५०, ७० ७-८, पापु० ३ २९

अष्टोत्तरसहस्रलक्षण—तीर्थंकर के शारीरिक १००८ लक्षण। हपु० ८ २०४

अष्टोपवास—पारणापूर्वक तीन उपवास करना। हपु० ३४ १२४-१२५, ४१ १५ अपरनाम अष्टभक्त

असंख्य—इस नाम की चर्चिका के आगे की सख्या। इसके पल्य, सागर और अनन्त ये भेद हैं। मपु० ३ ३, हपु० ७ ३०-३१

असंख्येय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

असंग—(१) सत्यक का पौत्र और वज्रधर्म का पुत्र। हपु० ४८ ४२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१२४

असगात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

असज्ञी—प्रथम नरकभूमि धर्मा तक गमनशील असैनी पचेन्द्रिय जीव। मपु० १० २९

असंभूष्णु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११०

असंयत—असयमी ससारी जीव। आरम्भ के चार गुणस्थानो के जीव असयत ही होते हैं। हपु० ३ ७८

असंयतसम्यग्दृष्टि—चौथा गुणस्थान। हपु० ३.८०

असंयम—प्रमाद, कषाय और योग पूर्ण अविरत अवस्था। ऐसे पुरुष की मन, वचन और काय की क्रिया प्राणी-असयम और इन्द्रिय-असयम

के भेद से दो प्रकार की होती है। असयम अप्रत्याख्यानावरण चारित्र-मोह का उदय रहने तक (चतुर्थ गुणस्थान) रहता है। यह बन्ध का कारण है। मपु० ५४ १५२, ६२ ३०३-३०४

असंस्कृत-सुसंस्कार—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

असंहतव्यूह—सैन्य रचना का एक प्रकार। इसमें सेना को फैलाकर खडा किया जाता है। मपु० ३१ ७६

असद्ध्यान—इष्ट और अनिष्ट वस्तुओ का ध्यान। ऐसा ध्यान सक्लेश से युक्त होता है इसीलिए वह असद्ध्यान है। मपु० २१ २२-२३

असद्वेद्य—दु ख और दु ख की सामग्री का उत्पादक असातावेदनीय कर्म। घातिया कर्मों के नष्ट हो जाने से इस कर्म की शक्ति अकिंचित्कर हो जाती है। मपु० २५ ४०-४२

असद्वेद्यास्रव—असाताकारी आस्रव। निज और पर दोनो के विषय में होने वाले दु ख, शोक, वध, आक्रन्दन, ताप और परिवेदन ये इस आस्रव के द्वार है। हपु० ५८.९३

असन—(१) विजयार्ध पर्वत का तटवर्ती वृक्ष। मपु० १९ १५२

(२) तीर्थंकर अभिनन्दननाथ का चैत्यवृक्ष। मपु० ५० ५५

असना—एक अटवी। इसमें विमलकान्तार नामक पर्वत है। मपु० ५९ १८८

असमीक्ष्याधिकरण—अनर्थदण्डव्रत के पाँच अतिचारो में एक अतिचार—प्रयोजन का विचार न करके आवश्यकता से अधिक किसी कार्य में प्रवृत्ति करना-कराना। हपु० ५८ १७९

असम्भ्रान्त—प्रथम नरकभूमि घर्मा के तेरह प्रस्तारो में सातवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४.७६-७७ दे० रत्नप्रभा

असि—चक्रवर्ती भरतेश को प्राप्त चौदह रत्नो में एक अजीव रत्न। इस रत्न का रावण और इन्द्र विद्याधर ने भी प्रयोग किया था। इसका प्रयोग मध्ययुग में बहुत होता था। मपु० ५ २५०, ३८ ८३-८५, ४४ १८० पपु० १२ २५७

असिकर्म—वृषभदेव द्वारा उपदिष्ट आजीविका के छ कर्मों में एक कर्म-शस्त्र-प्रयोग करके आजीविका प्राप्त करना। मपु० १६ १७९-१८१, हपु० ९ ३५

असिकोष—तलवार रखने का स्थान। मपु० ५ २५०

असित पर्वत—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ९६

(२) इक्कीसवें तीर्थंकर के तीर्थ में उत्पन्न मातग-वशीय प्रहसित नाम के राजा का जन्म स्थान। हपु० २२ १११

असिद्ध—सिद्धेतर जीव (ससारी जीव)। ये जीव तीन प्रकार के होते हैं—असयत, सयतासयत और सयत। इनमें असयत जीव आरभ के चार गुणस्थानो मे होते हैं, सयतासयत पचम गुणस्थान में और सयत छठे से चौदहवें गुणस्थान तक रहते है। हपु० ३ ७२-७८

असिधेनुका—छुरी। मपु० ५ ११३

असिपत्र—खड्ग की धार के समान पैने पत्तोवाले नारकीय वन। नारकीय जीव गर्मी के दु'ख से पीडित होकर छाया प्राप्ति के इच्छा से जैसे ही इन वनो में पहुँचते है, यहाँ के वृक्षो से गिरते हुए पत्र उनके शरीर को छिन्न-भिन्न कर देते है। मपु० १० ५६-५७, ६९, पपु० २६ ८०, ८६, १०५ १२२-१२३, १२३ १४, वीवच० ३ १३६-१३७

असुर—(१) देव। ये प्रथम तीन नरक-पृथिवियो तक जाकर नारकियो को उनके पूर्वभव सम्बन्धी वैर का स्मरण कराकर परस्पर लडाते हैं। ये न केवल स्वय नारकियो को मारते हैं अपितु सेवको से भी उन्हे दण्डित कराते हैं। मपु० १० ४१, ३३ ७३, पपु० १२३ ४-५

(२) विद्याधरो का एक नगर। पपु० ७ ११७

(३) असुर नगर के निवासी होने से इस नाम से अभिहित विद्याधर। पपु० ७ ११७

असुरकुमार—पाताल लोकवासी दस प्रकार के भवनवासी देव। ये पाताल लोक में रहते है। इनकी उत्कृष्ट आयु एक सागर से कुछ अधिक होती है तथा ऊँचाई पच्चीस धनुष। ये क्रोधी तथा भवनवासी नागकुमार देवो के विरोधी होते है। मपु० ६७ १७३, हपु० ४ ६३-६८

असुरधूपन—एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश यहाँ ठहरे थे। मपु० २९ ७०

असुरविजय—लोभ-विजय, धर्म-विजय और असुर-विजय इन तीन प्रकार के राजाओ मे तीसरे प्रकार के राजा। असुर विजय राजा को भेद तथा दण्ड के प्रयोग से वश में किया जाता है। रावण इसी प्रकार का राजा था। मपु० ६८ ३८३-३८५

असुरसंगीत—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का नगर—मय विद्याधर की निवासभूमि। पपु० ८ १

असुरोद्गीत—एक नगर। सुतार असुर यहाँ का राजा था। हपु० ४६ ८

अस्तिकाय—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश ये पाँच द्रव्य बहु-प्रदेशी होने से अस्तिकाय कहलाते हैं। काल द्रव्य को इस नाम से सम्बोधित नही किया गया है, क्योकि यह एक प्रदेशी होता है। मपु० ३ ८-९, २४ ९०, हपु० ४ ५

अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व—चौदह पूर्वों मे चतुर्थ पूर्व। इसमें साठ लाख पदो में जीव आदि द्रव्यो के अस्तित्व का कथन किया गया है। हपु० २.२८, १०.८९ दे० पूर्व

अस्तेय—पाँच व्रतो में तीसरा व्रत। यह साधु के अट्ठाईस मूलगुणो में एक मूलगुण है। इस व्रत की साधना इन पाँच भावनाओ से होती है—मितग्रहण, उचित ग्रहण, अभ्यनुज्ञान ग्रहण, सविधिग्रहण और भोजन तथा पान में सन्तोष। इसके पाँच अतिचार हैं—स्तेनप्रयोग, तदाहृतादान, विरुद्धराज्यातिक्रम, हीनाधिकमानोन्मान और प्रतिरूपक-व्यवहार। मपु० १८ ७१, २०.९४-९५, १५९, १६३, हपु० २ १२८, ५८ १७१-१७३

अस्पृश्य—शूद्र दो प्रकार के होने है—कारु और अकारु। इनमे कारु शूद्र स्पृश्य और अस्पृश्य के भेद से दो प्रकार के होते हैं। अस्पृश्य कारु बस्ती के बाहर रहते हैं। मपु० १६.१८६

अस—संगीत से सम्बद्ध ताल की दो योनियो में एक योनि । पपु० २४ ९

अस्वष्ट—भरतक्षेत्र के मध्य में स्थित एक देश । महावीर की विहारभूमि । हपु० ३ ३

अहमिन्द्र—कल्पातीत देव । ये देव नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर विमानो में रहते हैं । ये देव "मैं ही इन्द्र हूँ" ऐसा मानने-वाले और असूया, परनिन्दा, आत्मश्लाघा तथा मत्सर से दूर रहते हुए केवल सुखमय जीवन बिताते हैं । इनकी आयु बाईस से लेकर तेतीस सागर प्रमाण तक की होती है । ये महाद्युतिमान्, समचतुरस्र-सस्थान, विक्रियाऋद्धिधारी अवधिज्ञानी, निष्प्रविचारी । (मैथुन रहित) और शुभ लेश्याओवाले होते हैं । मपु० ११ १४१-१४६, १५३-१५५, १६१, २१८, पपु० १०५.१७०, हपु० ३ १५०-१५१

अमिन्द्राचार्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १४८

अहिंसाणुव्रत—पाँच अणुव्रतो में इस नाम का प्रथम अणुव्रत । इसमें मन, वचन और काय तथा कृत-कारित और अनुमोदना से त्रस जीवो की यत्न पूर्वक रक्षा की जाती है । इसके वध, बध, छेदन, अतिभारारोण और अन्नपाननिरोध ये पाँच अतिचार होते हैं । हपु० ५८ १३८, १६३-१६५, वीवच० १८ ३८

अहिंसा महाव्रत—प्रथम महाव्रत । काय, इन्द्रियाँ, गुणस्थान, जीवस्थान, कुल और आयु के भेद तथा योनियो के नाना विकल्पो का आगम-रूपी चक्षु के द्वारा अच्छी तरह अवलोकन करके बैठने-उठने आदि क्रियाओ में छ- काय के जीवो के वध-बन्धन आदि का त्याग करना । इस महाव्रत की स्थिरता के लिए पाँच भावनाएं होती हैं । वे हैं—सम्यक्‌वचनगुप्ति, सम्यग्मनोगुप्ति, आलोकित-पान-भोजन, ईर्या-समिति और आदान-निक्षेपण समिति । मपु० २० १६१, ३४ १६८-१६९, हपु० २ ११६-११७, ५८ ११७-११८, पापु० ९ ८४

अहिंसा शुद्धि—निष्परिग्रहता एव दयालुता से युक्त होना । मपु० ३९ ३०

अहिदेव—कौशाम्बी नगरी के निवासी वणिक् बृहद्धन और कुरुविन्दा का ज्येष्ठ पुत्र, महादेव का सहोदर । इन दोनों भाइयो ने पिता के मरने पर अपनी सम्पत्ति बेचकर एक रत्न खरीद लिया था । यह रत्न जिस भाई के पास रहता वह दूसरे भाई को मारने की इच्छा करने लगता था, अत परस्पर उत्पन्न खोटे विचार एक दूसरे को बताकर और रत्न माँ को देकर दोनों विरक्त हो गये थे । रत्न पाकर माँ के मन में भी उन पुत्रों को विष देकर मारने के भाव उत्पन्न हुए थे इसलिए वह भी इस रत्न को यमुना में फेंककर विरक्त हो गयी थी । पपु० ५५.६०-६४

अहोरात्र—दिन-रात, तीस मुहूर्त का काल । हपु० ७.२०-२१

आ

आकर—पाषाण, रजत, स्वर्ण, मणि, माणिक्य आदि की खान । ऐसी खान के साहचर्य से निकटवर्ती ग्राम या नगर भी आकर कहलाता है । मपु० १६ १७६, हपु० २ ३

आकार—ज्ञानोपयोग से वस्तुओ का भेद ग्रहण । मपु० २४.१०१-१०२

आकाश—जीव, अजीव, धर्म, अधर्म और काल का अवगाहक द्रव्य । यह स्पर्श रहित, क्रिया रहित और अमूर्त तथा सर्वत्र व्याप्त है । मपु० २४.१३८, हपु० ७ २, ५८ ५४

आकाशगता—दृष्टिवाद अग के पाँच भेदो में चूलिका एक भेद है और चूलिका के पाँच भेदो में एक इस नाम का भेद है । हपु० १० १२३-१२४

आकाशगामिनी—विद्याधरो को प्राप्त एक विद्या । मपु० ६२ ३९२, ४००, पपु० ११ १५३

आकाशध्वज—मृदुकान्ता का पति, राजकुमारी उपरम्भा का पिता और नलकूबर का ससुर । पपु० १२ १४६-१५१

आकाशवल्लभ—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित एक नगर । पपु० ३ ३१४

आकाशस्फटिकस्तम्भ—आकाश के समान स्वच्छ इस नाम का एक स्फटिक-स्तम्भ । सर्वप्रथम राजा वसु ने इसे जाना था । मपु० ६७ २७६-२७९

आकिंचन्य—धर्मध्यान सबधी उत्तम क्षमा आदि दस भावनाओ के अन्तर्गत एक भावना । कायोत्सर्ग पूर्वक शरीर से ममता त्याग कर त्रियोग द्वारा इसका अनुष्ठान किया जाता है । मपु० ३६.१५७-१५८, पापु० २३ ६६, वीवच० ६ १३

आक्रंदन—असातावेदनीय कर्म का एक आस्रव-कारण—निज और पर के विषय मे सन्ताप आदि के कारण अश्रुपात सहित रुदन करना । हपु० ५८ ९३

आक्रोश—(१) एक परीषह—दूसरो के द्वारा उत्तेजित किये जाने पर भी शरीर के प्रति नि स्पृह रहते हुए कषायो को हृदय में स्थान नही देना, उन पर विजय प्राप्त करना । मपु० ३६ १२१

(२) इस नाम का एक वानरवशी नृप । पपु० ६० ५-६

आक्षेपिणी—कथा का एक भेद । वक्ता अपने मत की स्थापना के लिए दूसरो पर आक्षेप करनेवाली या मत-मतान्तरो की आलोचना करने वाली कथा कहता है । मपु० १ १३५, ४७ २७५, पपु० १०६ ९२

आख्यान—(१) प्राचीन कालिक किसी राजा आदि की कथा । मपु० ५ ८९, ४६ ११२-१४२

(२) पदगत गान्धर्व की एक विधि । हपु० १९ १४९

आगति—तालगत गान्धर्व का एक प्रकार । हपु० १९ १५१

आगम—सर्वज्ञ द्वारा प्रतिपादित, समस्त प्राणियो का हितैषी, सर्व दोष रहित शास्त्र । इसमें नय तथा प्रमाणों द्वारा पदार्थ के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव और चारो पुरुषार्थो का वर्णन किया गया है । यह प्रमाणपुरुषोदित रचना है । इसके मूलकर्ता तीर्थंकर महावीर और उत्तरकर्त्ता गौतम गणधर थे । उनके पश्चात् अनेक आचार्य हुए जो प्रमाणभूत हैं । ऐसे आचार्यों में तीन केवली, पाँच चौदह पूर्वों के ज्ञाता (श्रुतकेवली) पाँच ग्यारह अगो के धारक, ग्यारह दसपूर्वों के जानकार और चार आचाराग के ज्ञाता इस प्रकार पाँच प्रकार के मुनि हुए हैं । मुनियो के नाम हैं—तीन केवली, इन्द्रभूति (गौतम) सुधर्माचार्य

और जम्बूस्वामी, पाँच श्रुतकेवली—विष्णु, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु, ग्यारह दसपूर्वधारी आचार्य-विशाख, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, जय, नाग, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिमान् (बुद्धिल), गंगदेव और धर्मसेन, पाँच ग्यारह अंगधारी आचार्य नक्षत्र, जयमाल (यशपाल), पाण्डु ध्रुवसेन और कंसाचार्य। चार आचारांग के ज्ञाता मुनि—सुभद्र, (यशोभद्र) भद्रबाहु, यशोबाहु और लोहाचार्य। मपु० २ १३७-१४९, ९ १२१, २४ १२६, ६७ १९१-१९२, हपु० १ ५५-६५

आगमभक्ति—सोलहकारण भावनाओं में एक भावना—मन, वचन, काय से भाव-शुद्धिपूर्वं आगम में अनुराग रखना। मपु० ६३ ३२७, ३३१

आगमसार—अयोध्यापति राजा दशरथ का मन्त्री। मपु० ६७ १८२-१८३

आगमाभास—अनाप्त पुरुषों के वचन। मपु० २४ १२६

आगार—घर या मन्दिर का एक प्रकार। इसमें आगन और छोटे से उपवन का होना आवश्यक होता था। मपु० ४७ ८१

आग्नेयास्त्र—कराल अग्नि-ज्वालाओं से युक्त एक विद्यास्त्र (बाण)। इसे वारुणास्त्र से नष्ट किया जाता था। देवोपनीत एवं दैदीप्यमान इस अस्त्र को चिन्तावेग नामक देव ने राम और लक्ष्मण को दिया था। यह अस्त्र जरासन्ध के पास भी था। पपु० १२ ३२२-३२४, ६० १३१-१३८, ७४ १०२-१०३। हपु० २५ ४७, ५२ ५२

आचाम्ल—काजी सहित भात—एक रसाहार। यह मित और हल्का आहार दो या अधिक उपवासों के पश्चात् लिया जाता है। मपु० ७६ २०६

आचाम्लवर्धन—एक उपवास। इसे कर्मबन्धन-विनाशक, स्वर्ग एवं परम-पद प्रदायी, परम तप कहा है। मपु० ७ ४२, ७७, ७१ ४५६ इसमें प्रथम दिन उपवास तथा दूसरे दिन एक बेर बराबर, तीसरे दिन दो बेर बराबर इस प्रकार बढाते हुए ग्यारहवें दिन दस बेर बराबर भोजन बढाया जाता है। पश्चात् एक-एक बेर बराबर भोजन घटाकर अन्त में उपवास किया जाता है। पूर्वार्ध के दस दिनों में नीरस भोजन करना होता है तथा उत्तरार्ध के दस दिनों में पहली बार जो भोजन परोसा जाये वही ग्रहण किया जाता है। हपु० ३४ ९५-९६

आचार-सम्पदा—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप सम्पत्ति। मपु० ९ ९२

आचारांग—द्वादशांगरूप श्रुतस्कन्ध का प्रथम अंग। इसमें अठारह हजार पद हैं जिनमें मुनियों के आचार का वर्णन किया गया है। मपु० ३४ १३३-१३५, हपु० २ ९२, १० २७

आचार्य—मुनियों के दीक्षागुरु और उपदेश दाता, स्वयं आचरणशील होते हुए अन्य मुनियों को आचार पालन करानेवाले मुनि। ये कमल के समान निर्लिप्त, तेजस्वी, शान्तिप्रदाता, निश्चल, गम्भीर और निःसंग होते हैं। पपु० ६ २६४-२६५, ८९ २८, १०९ ८९

आचार्यभक्ति—सोलहकारण भावनाओं में एक भावना—आचार्यों में मन, वचन और काय से भावों की शुद्धि के साथ श्रद्धा रखना। मपु० ६३.३२७, ३३१, हपु० ३४ १४१

आजानेय—उच्च जाति के कुलीन घोड़े। मपु० ३० १०८

आजीविका हेतु—असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प। ये छ आजीविका-साधन वृषभदेव ने बताये थे। मपु० १६ १७९

आज्य—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

आज्ञा—पारिव्राज्य क्रिया के सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। इससे पारिव्राज्य का साक्षात् लक्षण प्रकट होता है। इसे परमेष्ठी का गुण कहा गया है। आज्ञा देने का अभिमान छोड़कर मौन धारण करनेवाले मुनि इस परमाज्ञा को प्राप्त करते हैं। इसे सुर और असुर भी शिरो-धार्य करते हैं। मपु० ३९ १६२-१६५, १८९ दे० पारिव्राज्यक्रिया

आज्ञानिक—अन्योपदेशज मिथ्यादर्शन के चार भेदों में चौथा भेद—(हिताहित की परीक्षारहित, अज्ञान-मूलक और रूढिवश होनेवाला श्रद्धान)। हपु० ५८ १९४-१९५

आज्ञाविचय—धर्मध्यान के दस भेदों में नवम भेद—बन्ध, मोक्ष आदि अतीन्द्रिय पदार्थों का आगमानुसार ध्यान करना। मपु० ३६.१६१, हपु० ५६ ४९

आज्ञाव्यापादिकीक्रिया—साम्परायिक आस्रव की उन्नीसवीं क्रिया-आगम की आज्ञा के अनुसार आवश्यक आदि क्रियाओं के करने में असमर्थ मनुष्य के द्वारा मोह के उदय से उनका अन्यथा निरूपण। हपु० ५८ ७७ दे० साम्परायिक आस्रव

आज्ञासम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेदों में प्रथम भेद—सर्वज्ञ देव की आज्ञा से छ द्रव्यों में रुचि (श्रद्धा) होना। मपु० ७४.४३९-४४१, वीवच० १९ १४३ दे० सम्यक्त्व

आढकी—अरहर। यह उन धान्यों में से एक है जो कल्पवृक्षों के अभाव होने पर नाभिराज के समय में उत्पन्न हुए। नाभिराज ने प्रजा को उनका उपयोग सिखाया था। मपु० ३ १८७

आतकी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सदृतु नगर के निवासी भावन नाम के वणिक की भार्या, हरिदास की जननी। पपु० ५ ९६-९७

आतपत्र—चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक रत्न-छत्र। मपु० ३७ ८४, ६३ ४५८

आतपयोग/आतापनयोग—ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की ताप से उत्पन्न असह्य दु खों को सहना, पर्वत के अग्रभाग की तप्त शिलाओं पर दोनों पैर रखकर तथा दोनों भुजाएँ लटका कर खड़े होना, उग्रतर तीव्र ग्रीष्म का ताप सहन करना। तीर्थंकर महावीर इस योग में स्थिर हुए थे तथा इसी योग में उन्हें केवलज्ञान हुआ था। मपु० ३४ १५१-१५४, पपु० ९ १२८, हपु० २ ५८-५९, ३३ ७६

आतोद्य—वाद्ययन्त्र। ये तत, अवनद्ध घन और सुषिर के भेद से चार प्रकार के होते हैं। मपु० १९.१४२

आत्मघात—ऐसे मरण से जीव चिरकाल तक कच्चे गर्भ में दुख प्राप्त करते है और वे गर्भ पूर्ण हुए बिना ही मर जाते हैं। पपु० १२.४७-४८

आत्मज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६२

आत्मध्यान—आत्मा का ध्यान। इसमें केवलज्ञान उपलब्ध होता है। वीवच० १८८

आत्मप्रवादपूर्व—चौदह पूर्वों में सातवाँ पूर्व। इसमें छब्बीस करोड पद हैं जिनमें अनेक युक्तियो का सग्रह है तथा कर्तृत्व, भोक्तृत्व, नित्यत्व, अनित्यत्व आदि जीव के धर्मों और उनके भेदो का सयुक्तिक निरूपण है। हपु० २ ९८, १० १०८-१०९

आत्मभू—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३, २५ १००

आत्मरक्ष—इन्द्र के चालीस हजार अग-रक्षक देव। ये देव तलवार ऊँची उठाये हुए इन्द्र का वैभव प्रदर्शन करने के लिए इन्द्र के चारो ओर घूमते रहते है। मपु० १० १९०, २२ २७, वीवच० ६ १३०

आत्मरक्षा—आत्मा को कर्म बन्धन से मुक्त करानेवाले सयम का आचरण। 'राजा को स्वरूप के विषय में भी चिन्तन, मनन और आचरण करना चाहिये' इस प्रसग को लेकर हुई एक परिचर्या। मपु० ४२ ४९, १३६

आत्मस्वास्थ्य—स्वरूप में स्थिरता। यथेष्ट वैराग्य और सम्यग्ज्ञान इस स्थिरता के कारण हैं। मपु० ५१ ६७

आत्मांजन—पूर्व विदेह के चार वक्षारगिरियो में (त्रिकूट, वैश्रवण, अजन और आत्माजन) एक वक्षारगिरि। हपु० ५ २२९

आत्मा—(१) अतति इति आत्मा—इस व्युत्पत्ति से नर, नारक आदि अनेक पर्यायों मे गमनशील तथा उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य इन तीन लक्षणो युक्त जीव द्रव्य। यह शरीर सबध से रूपी और मुक्त दशा में रूप रहित या अमूर्त होता है। आत्मा अनादिकालीन मिथ्यात्व के उदय से स्वय ही स्वय को दु ख देता है। इसके दो भेद हैं—ससारी और मुक्त। ससारी और मुक्त दशाओ के कारण ही इसके तीन भेद भी हैं—बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। आत्मा के अस्तित्व और अनस्तित्व को लेकर राजा महाबल के जन्मोत्सव के समय स्वयं बुद्ध, महामति, सम्भिन्नमति और शतमति नाम के दार्शनिक मन्त्रियो ने अपने विचार प्रकट किये थे। मपु० ५ १३-८७, २४ १०७, ११०, ४६ १९३-१९५, ५५ १५, ६७ ५, वीवच० १६ ६६

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६५

आत्मानुपालन—इस लोक तथा परलोक सबधी अपायो से आत्मा की रक्षा करना। मपु० ४२ ११३

आत्मयज्ञ—क्रोधाग्नि, कामाग्नि और उदराग्नि का, वैराग्य और अनशन की आहुतियो से शमन करना। वनवासी ऋषि, यति, मुनि और द्विज इस यज्ञ से मुक्ति को प्राप्त होते हैं। मपु० ६७ २०२-२०३

आत्रेय—(१) भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक देश—तीर्थंकर महावीर की विहारस्थली। हपु० ३ ५, ११ ६६-६७

(२) भार्गवाचार्य का प्रथम शिष्य। हपु० ४५ ४५

आत्रेयी—कौशाम्बी नगरी के राजा सुमुख की दूती। राजा सुमुख ने इसी दूती को वनमाला के पास भेजा था। हपु० १४ ७७

आदाननिक्षेपण—पाँच समितियों में एक समिति। पिच्छी-कमण्डलु आदि उपकरणो को देखभाल कर रखना, उठाना। पपु० १४ १०८, हपु० २ १२५, पापु० ९ ९४

आदिकल्पेश—प्रथम स्वर्ग का इन्द्र-सौधर्मेन्द्र। मपु० ४९ २५

आदिकल्याणक—गर्भ कल्याणक। मपु० ६१ १७

आदित्य—(१) लौकान्तिक देवों का एक भेद। ये ब्रह्मलोक के निवासी, पूर्वभवो के ज्ञाता, शुभ लेश्या एव शुभ भावनावाले सौम्य, महाऋद्धिधारी, लोक के अन्त में निवास करने के कारण 'लौकान्तिक' इस नाम मे विख्यात, तीर्थंकरो के प्रबोधनार्थ स्वर्ग से भूमि पर आनेवाले देव हैं। मपु० १७ ४७-५०, हपु० २ ४९, ९ ६३-६४, वीवच० १२ २-८

(२) नौ अनुदिश विमानो में एक इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५४, ६४

(३) चम्पापुर का राजा। कालिन्दी में प्रवाहित पाण्डु के पुत्र कर्ण को इसी ने प्राप्त किया था। मपु० ७० १०९-११४

(४) इस नाम के एक मुनि। इन्होने चन्द्राभनगर के राजा धनपति को भविष्यवाणी की थी कि इसकी पुत्री पद्मोत्तमा को एक सर्प काटेगा और जीवन्धरकुमार उसका विष उतारेगा। मपु० ७५ ३९०-३९८

आदित्यकेतु—धृतराष्ट्र और गान्धारी का उनहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०१

आदित्यगति—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित गाधार देश की उशीरवती नगरी का विद्याधर राजा। इसकी शशिप्रभा नामा पटरानी थी। इन दोनो के हिरण्यवर्मा नाम का पुत्र हुआ था। किसी समय नष्ट होते हुए मेघ को देख यह विरक्त हो गया। इसने पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ग्रहण कर ली थी। मपु० ४६ १४५-१४६, पापु० ३ २२४

(२) चारणऋद्धिधारी युगल मुनियो में अरिंजय मुनि के साथी एक मुनि। मुनि युगन्धर के सघ के ये श्रेष्ठ मुनि थे। मपु० ५ १९३-१९४, ६२.३४८

(३) राक्षसवश के प्रवर्तक रक्षस् और उसकी भार्या सुप्रभा का पुत्र। यह बृहत्कीर्ति का भाई, सदनपद्मा का पति तथा भीमप्रभ का पिता था। पपु० ५ ३७८-३८२

आदित्यधर्मा—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३९

आदित्यनगर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के साठ नगरों में प्रथम नगर। हपु० २२ ८५, पपु० १५ ६-७

आदित्यनाग—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३२

आदित्य पराक्रम—आदित्य वशी राजा सुवीर्य का पुत्र, महेन्द्रविक्रम का जनक। शरीर से नि स्पृह होकर इसने निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली थी। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ १०

आदित्यपाद—एक शैल-रावण की विद्या-सिद्धि की स्थली। मपु० ६८ ५१६-५१९

आदित्यमुख—इस नाम के बाण। सागरावर्त्त धनुष और ये बाण लक्ष्मण को प्राप्त थे। पपु० ५५ २७

आदित्ययशा—चक्रवर्ती भरत का पुत्र, अपरनाम अर्ककीर्ति। इसने अपने पुत्र स्मितयश को राज्य देकर तप के द्वारा मोक्ष प्राप्त किया था। हपु० १३ १, ७

आदित्यवंश—सूर्यवंश। इस वंश मे भरत के पुत्र आदित्ययशा (अर्ककीर्ति) के बाद में राजा हुए हैं—स्मितयशा, बलाक, सुबल, महाबल, अतिबल, अमृतबल, सुभद्र, सागर, भद्र, रवितेज, शशी, प्रभूततेज, तेजस्वी, तपन, प्रतापवान्, अतिवीर्य, सुवीर्य, उदितपराक्रम, महेन्द्रविक्रम, सूर्य, इन्द्रद्युम्न, महेन्द्रजित्, प्रभु, विभु, अविध्वस, वीतभी, वृषभध्वज, गरुडाक और मृगाक आदि। ये सभी एक दूसरे को राज्य सौंप कर निर्ग्रन्थ हुए थे। इनमें सितयशा को स्मितयशा कहा गया है। इस वंश के कुछ राजा तो स्वर्ग गये और कुछ मोक्ष को प्राप्त हुए। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ ७-१५

आदित्यवर्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९७

आदित्याभ—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वभाग में मेरु पर्वत से पूर्व की ओर स्थित पुष्कलावती देश मे विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का नगर। मपु० ६२ ३६१

(२) लान्तव स्वर्ग का एक देव। पूर्वभव में यह वीतभय नाम का बलभद्र था। अपने भाई मुनि सजयन्त पर उपसर्ग करने वाले विद्युद्दष्ट को धरणेन्द्र ने समुद्र मे गिराना चाहा था किन्तु यह देव उसे समझाकर विद्युद्दंष्ट्र को धरणेन्द्र से छुड़ा लाया था। मपु० ५९ १२८-१४१, २८०-२८१, २९६-३००, हपु० २७ १११-११४ अन्त में यह देव स्वर्ग से च्युत होकर उत्तरमथुरा नगरी के राजा अनन्तवीर्य और उनकी मेरुमालिनी रानी के मेरु नाम का पुत्र हुआ। इस भव में इसने विमलवाहन तीर्थंकर के पास जाकर पूर्वभव के सम्बन्ध सुने और उन्ही से दीक्षित होकर उनका गणधर हुआ। हपु० ५९ ३०२-३०४

आदिदेव—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० १७ २२१, २४ ३०, २५ १९२

आदिनाथ—नाभिराज के पुत्र, वृषभ चिह्न से युक्त तीर्थंकर वृषभदेव। मपु० १.१५ दे० ऋषभदेव

आदिपुरुष—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० १५.६१, २४ ३१

आदिमद्वीप—जम्बूद्वीप। मपु० ४९.२

आदिमसस्थान—समचतुरस्रसस्थान। मपु० ६७ १५३

आदिमेन्द्र—सौधर्मेन्द्र। मपु० ७१ ४८

आदिसहनन—वज्रवृषभनाराच सहनन। मपु० ६७ १५३

आद्यकवि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३७

आद्यजिन—प्रथम तीर्थंकर वृषभदेव। मपु० ४८ २६

आद्यशुक्लध्यान—पृथक्त्ववीचार शुक्लध्यान। मपु० २० २४४

आद्यश्रेणी—क्षपकश्रेणी। मपु० ६३ ३३४

आद्यानुयोग—श्रुतस्कन्ध के चार महाधिकारो में इस नाम का प्रथम अनुयोग। यह सत्पुरुषो के चरित्र वर्णन से युक्त है तथा चारो अनुयोगो में प्रथम होने से सार्थक नामवाला प्रथमानुयोग नाम से प्रसिद्ध है। मपु० २ ९८, १०६

आद्यसस्थान—प्रथम समचतुरस्रसस्थान। मपु० ४८ १४

आधानक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ में प्रथम क्रिया। ऋतुस्नाता पत्नी को आगे करके गर्भाधान के पहले अर्हन्तदेव की पूजा के द्वारा मत्रपूर्वक किया गया सस्कार। इस पूजा में त्रिचक्र, त्रिछत्र, त्रिपुण्याग्नियाँ स्थापित हो जाती हैं और अर्हत्-पूजा के बचे द्रव्य के द्वारा पुत्रोत्पत्ति की कामना से मत्रपूर्वक उन त्रिविध अग्नियो में आहुतियाँ देकर सन्तानार्थ ही बिना किसी विषयानुराग के पति-पत्नी सहवास करते हैं। मपु० ३८ ५५-६३, ७०-७६

आधि—मानसिक व्यथा। हपु० ८ २८

आधिकारिणी—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओ में हिंसा के उपकरण शस्त्र आदि के ग्रहण से उत्पन्न एक क्रिया। हपु० ५८ ६७

आध्यान—अनित्य आदि बारह भावनाओ का बार-बार चिन्तन करना। मपु० २१ २२८

आनग—एक पर्वत। इस पर्वत पर भरत की सेना ने पडाव किया था। मपु० २९ ७०

आनक—(१) मधुर और गम्भीर ध्वनिकारी एक मागलिक वाद्य। इसे डडो से बजाया जाता है। मपु० ७ २४२, १३ ७

(२) वसुदेव का नाम। हपु० १ ९०

आनकदुन्दुभि—वसुदेव के लिए व्यवहृत नाम। हपु० ५१ ७, ५३ ३-४

आनत—(१) ऊर्ध्वलोक में स्थित तेरहवाँ कल्प (स्वर्ग)। पपु० १०५ १६६-१६९, हपु० ६ ३८

(२) इस स्वर्ग का इस नाम का प्रथम इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५१

आनतेन्द्र—आनत स्वर्ग का इन्द्र। यह महावीर को केवलज्ञान होने पर पुष्पक विमान से सपरिवार उनकी पूजा के लिए गया था। वीवच० १४ ४७

आनन्द—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ८९

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ९३

(३) पाण्डव पक्ष का एक नृप। हपु० ५० १२५

(४) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु की पश्चिम दिशा में विद्यमान विदेह क्षेत्र के अन्तर्गत नन्दशोक नगर का निवासी एक सेठ। इसकी पत्नी का नाम यशस्विनी था। हपु० ६० ९६-९७

(५) भरतेश को वृषभदेव का समाचार देनेवाला एक चर। मपु० ४७ ३३४

(६) वृषभदेव के गणधर वृषभसेन के पूर्वभव का जीव। मपु० ४७ ३६७

(७) तीर्थंकरो के जन्म और मोक्षकल्याण के समय इन्द्र के द्वारा किया जानेवाला अनेक रसमय एक नृत्य। मपु० ४७ ३५१, ४९ २५ इसके आरम्भ में गन्धर्व गीत गाते हैं फिर इन्द्र उल्लासपूर्वक नृत्य करता है। मपु० १४ १५८, ४७ ३५१, ४९ २५, वीवच० ९ १११-११४

(८) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु से पश्चिम की ओर स्थित विदेह क्षेत्र के अशोकपुर नगर का एक वैश्य। आनन्दयशा इसी की पुत्री थी। मपु० ७१ ४३२-४३३

(९) लंकाधिपति कीर्तिधवल का मन्त्री। यह तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्वभव का जीव था। पपु० ६ ५८, २० २३-२४

(१०) रावण का धनुर्धारी योद्धा। इसने भरतेश के साथ दीक्षा धारण कर परम पद पाया था। पपु० ७३ १७१, ८८ १-४

(११) उत्पलखेटपुर के राजा वज्रजंघ का पुरोहित। वज्रजंघ के वियोग से शोक-संतप्त होकर इसने मुनि दृढधर्म से दीक्षा धारण की और तप करते हुए मरकर यह अधोग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ८ ११६, ९ ९१-९३

(१२) अयोध्या के राजा वज्रबाहु और उसकी रानी प्रभकरी का पुत्र। बड़ा होने पर वह महावैभव का धारक मण्डलेश्वर राजा हुआ। मुनिराज विपुलमति से उसने धर्मश्रवण किया। जिन भक्ति में लीन उसने एक दिन अपने सिर पर सफेद बाल देखे। वह संसार से विरक्त हो गया और उसने मुनि समुद्रदत्त से दीक्षा ली। तपस्या करते हुए उसको पूर्व जन्म के वैरी कमठ ने अपनी सिंह पर्याय में मार डाला। वह मरकर अच्युत स्वर्ग के प्राणत विमान में इन्द्र हुआ। वहाँ उसकी बीस सागर की आयु थी, साढ़े तीन हाथ ऊँचा शरीर था और शुक्ल लेश्या थी। वह दस मास में एक बार श्वास लेता था और बीस हजार वर्ष बाद मानसिक अमृताहार करता था। इसके मानसिक प्रवीचार था। पाँचवी पृथिवी तक उसके अवधिज्ञान का विषय था और सामानिक देव उसकी पूजा करते थे। मपु० ७३ ४३-७२

(१३) पुष्करवर द्वीप के पूर्वार्ध भाग में मेरु पर्वत की पूर्व दिशा के विदेह क्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर स्थित वत्स देश के सुसीमा नगर के राजा पद्मगुल्म के दीक्षागुरु मुनि। चिरकाल तक तपश्चरण के बाद आयु के अन्त में समाधिमरण से ये आरण स्वर्ग में इन्द्र हुए। मपु० ५६ २-३, १५-१८

(१४) गन्धमादन पर्वत का एक कूट। हपु० ५.२१८

(१५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

आनन्दपुर—जैन मन्दिरों से व्याप्त एक नगर। इसका यह नाम जरासन्ध के मारे जाने पर यादवों द्वारा आनन्द नामक नृत्य किये जाने से पड़ा था। हपु० ५३ ३०

आनन्दपुरी—तीसरे बलभद्र भद्र के पूर्वजन्म की नगरी। पपु० २० २३०

आनन्दभेरी—मांगलिक अवसरों पर बजाया जानेवाला एक वाद्य। मपु० १६ १९७

आनन्दमाल—चन्द्रावर्तपुर नगर का राजा। अरिंजयपुर के राजा वह्निवेग की पुत्री आहिल्या का प्राप्तकर्ता। इसे प्रतिमायोग में विराजमान देखकर इन्द्र विद्याधर ने पूर्व वैरवश क्रोधित होकर रस्सी से कसकर बाँध दिया था। किन्तु इतना होने पर भी यह निर्विकार रहा। इसके समीप ही इसका छोटा भाई भी तप कर रहा था। भाई के ऊपर किये गये उपसर्ग को देखकर वह इस इन्द्र विद्याधर को भस्म ही कर देना चाहता था किन्तु इन्द्र की भार्या सर्वश्री ने उसका क्रोध शान्त करके उसे बचा लिया था। पपु० १३ ७३-८९

आनन्दपटह—एक वाद्य (नगाड़ा)। यह आनन्द के समय बजाया जाता है। मपु० २४ १२

आनन्दमती—नन्दपुर नगर के राजा अमितविक्रम की रानी। मपु० ६३ १३ दे० अमितविक्रम

आनन्दयशा—विदेहक्षेत्र में स्थित अशोकपुर नगर निवासी आनन्द नामक वैश्य की पुत्री। मुनि को आहार देने के प्रभाव से मरकर यह उत्तरकुरु में उत्पन्न हुई थी। इसके बाद वह भवनवासियों के इन्द्र की इन्द्राणी हुई और वहाँ से चयकर यशस्वती हुई। मपु० ७१ ४३२-४३५

आनन्दवती—(१) सातवें नारायणदत्त की पटरानी। पपु० २० २२८

(२) समवसरण के अशोक वन की एक वापी। हपु० ५७ ३२

आनन्दा—(१) समवसरण के अशोक वन में स्थित छः वापियों में एक वापी। हपु० ५७ ३२

(२) रूचकगिरि के अंजनकूट की निवासिनी दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०६

(३) नन्दीश्वर द्वीप में अंजनगिरि की चारों दिशाओं में वर्तमान चार वापियों में एक वापी। हपु० ५ ६६४

(४) रावण की एक रानी। पपु० ७७ ९-१४

आनन्दिनी—एक महाभेरी। भरतेश की इस नाम की बारह भेरियाँ थीं। इनकी ध्वनि बारह योजन दूर तक फैलती थी। मपु० ३७ १८२ इसी नाम की इतनी ही भेरियाँ अरनाथ तीर्थंकर के यहाँ भी थीं। पापु० ७ २३ नगर वासियों को युद्ध की सूचना देने के लिए इनका प्रयोग होता था। हपु० ४० १९

आनयन—देवव्रत के पाँच अतिचारों में एक अतिचार—मर्यादा के बाहर से वस्तु को मँगवाना। हपु० ५८ १७८

आनर्त—एक देश। इसकी रचना इन्द्र ने की थी। मपु० १६ १४१-१५३

आनुपूर्वी—उपक्रम के पाँच भेदों में एक भेद। इसके तीन भेद हैं—पूर्वानुपूर्वी, अनन्तानुपूर्वी और यथातथानुपूर्वी। मपु० २ १०४

आन्तरगतम—अर्धबर्बर देश के मयूरमाल नगर का राजा। इसके द्वारा युद्ध में लक्ष्मण को रथरहित कर दिये जाने पर राम ने इसकी सेना को छिन्न-भिन्न करके इसे परास्त कर दिया था। अन्त में इसने राम से सन्धि की और कंदमूल फल आदि खाकर सह्य और विंध्य पर्वतों में जीवन-यापन किया था। पपु० २७ ५-११, ७८-८८

आन्ध्र—इन्द्र द्वारा निर्मित दक्षिण का एक देश। मपु० १६ १५४ वृषभदेव की विहारभूमि। मपु० २५ २८७-२८८ भरतेश की दिग्विजय के समय उसके सेनापति ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। मपु० १६ १५४, २५ २८७-२८८, २९ ९२

आन्ध्री—छः स्वरवाली संगीत की एक जाति। पपु० २४ १४-१५, हपु० १९ १७७

आपाण्डर—भरतक्षेत्र का एक पर्वत। भरतेश यहीं से वैभार पर्वत की ओर गया था। मपु० २९ ४६

आप्त—(१) राग, द्वेष आदि दोषों से रहित अर्हन्त। ये अनन्त ज्ञान-

दर्शन-वीर्य और सुख रूप अन्तरंग लक्ष्मी एव प्रातिहार्य-विभूति तथा समवसरण रूप बाह्य लक्ष्मी से युक्त होते हैं। ये वीतरागी, सर्वज्ञ, सर्वहितैषी, मोक्षमार्गोपदेशी तथा परमात्मा होते हैं। मपु० ९.१२१, २४ १२५, ३९ १४-१५, १३, ४२ ४१-४७, हपु० १० ११ दे० अर्हन्त

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०९

आप्तता—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्म के विनाश से उत्पन्न अर्हन्त-अवस्था। मपु० ४८ ४२

आप्ताभास—आप्त से इतर मिथ्या देव। ऐसे देव आप्तमन्य (अपने को आप्त मानने के अभिमान में चूर) होते हैं। मपु० २४ १२५, ३९, १३, ४२ ४१

आप्य—जलकायिक जीव। ये तृण के अग्रभाग पर रखी जल की बूंद के समान होते है। हपु० १८ ७०

आभियोग्य—सामानिक आदि दसों प्रकार के देवो में एक प्रकार के देव। ये दासो के समान शेष नौ प्रकार के देवो का सेवाकर्म करते हैं। ये देव-सभा में बैठने योग्य नही होते। मपु० २२ २९, हपु० ३.१३६, वीवच० १४ ४०

आभार—इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। मपु० १६ १४१-१४८, १५४, हपु० ११ ६६, ५० ७३

आभ्यन्तर तप—तप के दो भेदो में प्रथम भेद। इसके छ भेद हैं—प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान। इनके द्वारा मन का नियामन किया जाता है। मपु० २० १८९-२०३, हपु० ६४ २०,२८

आभ्यन्तर परिग्रह—मिथ्यात्व, चार कषाय और नौ नोकषाय इस तरह चौदह प्रकार का परिग्रह। हपु० २ २१

आम्नाय—स्वाध्याय तप का चौथा भेद—पाठ का बार-बार अभ्यास करना। दे० स्वाध्याय

आम्र—(१) भरतखण्ड का एक लोकप्रिय फल। यह भरतेश द्वारा ऋषभदेव की पूजा में चढाया जानेवाला एक फल है। मपु० १७ २५२

(२) समवसरण का एक चैत्यवृक्ष। मपु० २२ १९९-२०४

आम्रमंजरी—(१) विजयार्घ पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गगनवल्लभ नगर के निवासी वैश्रवण सेठ की भार्या। मपु० ७५ ३४८

(२) भ्रमर को प्रिय आम्र की बौर। मपु० ५.२८८

आम्रवन—(१) समवसरण-भूमि का चतुर्थ वन। मपु० २२ १६३,१८३

(२) पुण्डरीकिणी नगरी का एक उपवन। एक हजार राजाओ सहित वज्रसेन इसी उपवन में दीक्षित हुए थे। मपु० ११ ४८

आमर्ष—इस नाम की एक ऋद्धि। इससे रोग नष्ट होते हैं। मपु० २ ७१

आयुकर्म—(१) आठ प्रकार के कर्मों में पाचवें प्रकार का कर्म। यह सुदृढ बेडी के समान जीव को किसी एक पर्याय मे रोके रहता है। यह जीवो को मन चाहे स्थान पर नही जाने देता। यह दु:ख, शोक आदि अशुभ वदनाओ की खान है। इसकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागर प्रमाण तथा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त प्रमाण और मध्यम स्थिति विविध रूप की होती है। हपु० ३.९७, ५८ २१५-२१८, वीवच० १६ १५१, १५८, १६० उत्कृष्ट रूप से पृथिवीकायिक जीवो की आयु बाईस हजार वर्ष, जलकायिक की उत्कृष्ट आयु सात हजार वर्ष, वायुकायिक की तीन हजार वर्ष, तेजस्कायिक की तीन दिन रात, वनस्पतिकायिक की दस हजार वर्ष, दो इन्द्रिय की बारह वर्ष, तीन इन्द्रिय की उनचास दिन, चार इन्द्रिय की छ मास, पक्षी की बहत्तर हजार वर्ष, सांप की बयालीस हजार वर्ष, छाती से सरकने वाले जीवो की नौ पूर्वांग, मनुष्य तथा मत्स्य जीवो की एक करोड वर्ष की होती है। हपु० १८ ६४-६९

आयुध—सैन्य सबधी शास्त्रस्त्र। मपु० ४५.३

आयुधपाल—आयुधशाला का अधिकारी। मपु० २४.३

आयुधालय—सैन्य शस्त्रास्त्रो के रखने का स्थान। राजा वज्रदन्त का चक्र और भरत चक्रवर्ती के चार रत्न—चक्र, दण्ड, असि और छत्र आयुधालय मे ही प्रकट हुए थे। मपु० ६ १०३, ३७ ८५

आयुर्वेद—चिकित्सा-विज्ञान। वृषभदेव ने बाहुबली को आयुर्वेद विज्ञान की शिक्षा दी थी। भस्म, आसव, और अरिष्ट की विधियाँ भी इन्हें बतायी थी। मपु० ९ ३७, १६.१२३

आर—चौथी पृथिवी पकप्रभा के सात प्रस्तारो के सात इन्द्रक बिलो में प्रथम इन्द्रक बिल। इस बिल की चारों दिशाओ में चौसठ और विदिशाओं में साठ श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८२, १२९

आरक्षी—रक्षा करनेवाला राजकीय अधिकारी-कोतवाल। मपु० ४६. २९१

आरट्ट—भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ के घोडे प्रसिद्ध थे। मपु० १६. १४१-१४८, १५६, ३० १०७

आरण—(१) अच्युत स्वर्ग के तीन इन्द्रक विमानो मे दूसरा विमान। हपु० ६ ५१

(२) ऊर्ध्वलोक मे स्थित १६ स्वर्गों में पन्द्रहवा स्वर्ग (कल्प)। राजा पद्मगुल्म को इस स्वर्ग में बाईस सागर की आयु मिली थी, शरीर तीन हाथ ऊँचा था, शुक्ल लेश्या थी, ग्यारह मास में वह श्वास लेता था, बाईस हजार वर्ष में मानसिक आहार लेता था, मानसिक प्रवी-चार से युक्त प्राकाम्य आदि आठ गुणो का धारक था, अवधिज्ञानी था, छठे नरक तक की बात अवधिज्ञान से जानता था और उसको कोई विकार नही था। मपु० ५६ २०-२२, पपु० १०५ १६६-१६९, हपु० ४ १६, ६ ३८

आरण्य—वनो के ऐसे देश जिनमें अरण्य जाति के लोग रहते थे। वे लोग धनुर्धर होते थे। मपु० १६ १६१

आरण्यक—वैदिक साहित्य का उपनिषदो से पूर्व का एक अग। क्षीर-कदम्बक ने इसी वन में नारद आदि अपने शिष्यो को पढाया था। पपु० ११.१५, हपु० १७ ४०

आरम्भ—(१) आस्रव के तीन भेदो में तीसरा भेद। अपने या दूसरो के कार्यों में रुचि रख कर करना। इसके छत्तीस भेद होते हैं। हपु० ५८ ७९, ८५

(२) परिग्रह-इसकी बहुलता नरक का कारण होती है। मपु० १० २१-२३

आरम्भत्याग—ग्यारह प्रतिमाओं में आठवी प्रतिमा। इसमें सभी निन्द्य और अशुभ कर्मों का त्याग किया जाता है। ऐसा त्यागी समताभाव से मरकर उत्तम गति को प्राप्त होता है। पपु० ४४७, वीवच० १८ ६५

आराधना—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र तथा सम्यक्तप इन चारों को यथायोग्य रीति से धारण करना। यह चार प्रकार की होती है-दर्शनाराधना, ज्ञानाराधना, चारित्राराधना और तप आराधना। भव सागर से पार होने के लिए ये नौका स्वरूप हैं। अनेक महाविद्याएँ भी आराधना से प्राप्त होती हैं। मपु० ५ २३१, १९ १४-१६, पापु० १९ २६३, २६७

आरुल—एक देश। लवणांकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ७९-८६

आरोही—स्थायी, सचारी, आरोही, और अवरोही इन चार प्रकार के स्वरों में एक प्रकार का स्वर। पपु० २४ १०

आर्जव—धर्मध्यान की दस भावनाओं में तीसरी भावना। इसमें मायाचार को जीता जाता है। मपु० ३६ १५७-१५८, पपु० १४ ३९, पापु० २३ ६५, वीवच० ६ ७

आर्जवा—अकम्पन सेनापति की माता। मपु० ८ २१

आर्त्तध्यान—तीव्र सक्लेश भावों का उत्पादक, तिर्यंच आयु का बन्धक, एक दुर्ध्यान। इष्टवियोगज, अनिष्टयोगज, वेदना जनित और निदानरूप भेद से यह चार प्रकार का होता है। मपु० ५ १२०-१२१, २१ ३१, हपु० ५६ ४, वीवच ६ ४७-४८ यह ध्यान पहले से छठे गुणस्थान तक होता है। इसमें कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएँ होती हैं। परिग्रह में आसक्ति, कुशीलता, कृपणता, ब्याज लेकर आजीविका करना, अतिलोभ, भय, उद्वेग, शोक, शारीरिक क्षीणता, कान्तिहीनता, पश्चात्ताप, आँसू बहाना आदि इसके बाह्य चिह्न हैं। मपु० २१ ३७-४१, हपु० ५६ ४-१८

आर्द्रतण्डुलारोपण—एक वैवाहिक क्रिया-वर और कन्या का चौकी पर रखे हुए गीले चावलों पर बैठना। मपु० ७१ १५१

आर्य—(१) मनुष्यों की द्विविध (आर्य और म्लेच्छ) जातियों में एक जाति। पपु० १४ ४१, हपु० ३ १२८

(२) भोगभूमिज पुरुष का सामान्य नाम (पुरुष के लिए व्यवहृत शब्द)। हपु० ७ १०२

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के हरिपुर नगर के निवासी पवनगिरि विद्याधर तथा उसकी भार्या मृगावती का पुत्र, सुमुख का जीव। हपु० १५ २०-२४

(४) विद्याओं के सोलह निकायों में एक निकाय। हपु० २२ ५७-५८

(५) दूसरे मनु सन्मति तथा आठवें मनु चक्षुष्मान् ने अपनी प्रजा को इसी नाम से सम्बोधित किया था। मपु० ३ ८३,१२२

आर्यकूष्माण्डदेवी—विद्याधरों की सोलह निकाय की विद्याओं में एक विद्या। हपु० २२.६४

आर्यक्षेत्र—तीर्थंकरों की विहारभूमि, भरतक्षेत्र का मध्यखण्ड। मपु० ४८ ५१

आर्यखण्ड—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में जीवों के अभयदाता, धैर्ययुक्त, धनिक आर्यों की निवासभूमि। इसी में विदेह देश है। यहाँ अनेक मुनियों ने तपस्या करके विदेह अवस्था (मुक्तावस्था) प्राप्त की है। इसे 'आर्यक्षेत्र' भी कहते हैं। यह तीर्थंकरों की जन्म और विहार की स्थली है। मपु० ४८ ५१, पापु० १ ७३-७५

आर्यगुप्त—इस नाम के एक दिगम्बर आचार्य। पपु० २६ ३३-३४

आर्यदेश—आर्यों की निवासभूमि। पपु० २ १६९

आर्यवर्मा—सिंहपुर नगर का नृप। इसने वीरनन्दी मुनि से धर्म श्रवण कर निर्मल सम्यग्दर्शन धारण किया और अपने पुत्र धृतिषेण को राज्य सौंपने के पश्चात् जठराग्नि की तीव्रदाह सहने में असमर्थ होने से इसे तापस-वेष भी धारण करना पड़ा था। जीवन्धरकुमार को इसी ने शिक्षा दी थी। अन्त में यह संयमी हो गया और देह त्याग के पश्चात् मुक्त हो गया। मपु० ७५ २७७-२८७

आर्यषट्कर्म—इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, संयम और तप। मपु० ३९ २४

आर्यसूनु—सुभद्रा (अर्जुन की पत्नी) का पुत्र। हपु० ५४ ७१

आर्या—(१) भोगभूमिज स्त्रियों के लिए प्रयुक्त एक विशेषण। हपु० ७ १०२

(२) साध्वी। अपरनाम आर्यिका। हपु० २ ७०, १२ ७८

आर्यिका—चतुर्विध संघ-मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका में इस नाम से प्रसिद्ध, कर्म-शत्रु का विनाश करने में तत्पर साध्वी। अपरनाम आर्या। मपु० ५६ ५४, हपु० २ ७०

आर्षभी—संगीत में षड्ज स्वर की एक जाति। पपु० २४ १२-१५, हपु० ११ १७४

आर्ष्टि—एक शस्त्र। राम-रावण युद्ध में इसका प्रयोग हुआ था। पपु० ६२.४५

आर्षयज्ञ—तीर्थंकर, गणधर तथा अन्य केवलियों के शारीरिक दाह-संस्कार के लिए अग्निकुमार इन्द्र के मुकुट से उत्पन्न त्रिविध अग्नियों में मंत्रों के उच्चारण पूर्वक भक्तिसहित पुष्प, गन्ध, अक्षत तथा फल आदि से आहुति देना आर्षयज्ञ है। मपु० ६७ २०४-२०६

आर्हन्त्यक्रिया—गर्भान्वय, दीक्षान्वय और कर्त्रन्वय इन तीनों प्रकार की क्रियाओं में अन्तर्निहित क्रिया। गर्भान्वय की तिरेपन क्रियाओं में यह पचासवी क्रिया है। यह केवलज्ञान की प्राप्ति पर देवों द्वारा की जानेवाली अर्हन्तों की पूजा के रूप में निष्पन्न होती है। मपु० ३८ ५५-६३, ३०१-३०३। दीक्षान्वय की अड़तालीस क्रियाओं में यह पैंतालीसवी क्रिया है। इसका स्वरूप गर्भान्वय की अर्हन्त्य क्रिया जैसा ही है। कर्त्रन्वय की सात क्रियाओं में यह छठी क्रिया है। इसमें अर्हन्त के गर्भावतार से लेकर पंचकल्याणकों तक की समस्त क्रियाएँ आ जाती हैं। मपु० ३९ २५, २०३-२०४ दे० गर्भान्वय

आलोकनगर—दुर्गागिरि का निकटवर्ती एक नगर। मुनि मृदुमति की पारणा-स्थली। पपु० ८५ १४१-१४३

आलोकिनी—दूसरो के मनोगतभावो को जानने में सहायक विद्या। यह विद्या मनोयोग विद्याधर की रानी मनोवेगा को सिद्ध थी। मपु० ७५ ४२-४३

आलोचना—प्रायश्चित्त के नौ भेदो में प्रथम भेद। इसमें दस प्रकार के दोषो को छोड़कर प्रमाद मे किये हुए दोषो का सम्पूर्ण रूप से गुरु के समक्ष निवेदन किया जाता है। मपु० २० १८९-२०३ हपु० ६४ २८, ३२

आवर्त—(१) लका में स्थित राक्षसो की निवासभूमि—भानुरथ के पुत्रो द्वारा बसाया गया नगर। पपु० ५ ३७३-३७४, ६ ६६-६८

(२) भरतक्षेत्र में विन्ध्याचल पर स्थित भरतेश के भाई द्वारा छोडा गया एक देश। हपु० ११ ७३-७४

(३) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का विद्याधर के अधीन एक नगर। हपु० २२ ९५

(४) चक्रवर्ती भरत के समय का एक जनपद। यहाँ के म्लेच्छ राजा ने भरत चक्री के आक्रमण करने पर चिलात के म्लेच्छ राजा से सन्धि कर ली थी। मपु० ३२ ४६-४८, ७६

(५) पश्चिम विदेह क्षेत्र मे प्रवाहित सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य प्रदक्षिणा रूप से स्थित आठ देशो में इस नाम का एक देश। यह छ' खण्डो में विभाजित है। मपु० ६३ २०८, हपु० ५ २४५-२४६

आवर्तनी—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९४

आवलि—(१) व्यवहार काल का एक भेद। इसमें असख्यात समय होते हैं। मपु० ३ १२, हपु० ७ १९

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी पद्मक नगर के निवासी गणितज्ञ राम का एक धनी शिष्य। चन्द्र इसका सहपाठी था। गुरु ने दोनो मे फूट डाल दी। इसका परिणाम यह हुआ कि चन्द्र ने इसे मार दिया। पपु० ५ ११४-११५

आवली—(१) भानुरक्ष के पुत्रो द्वारा बसाये गये दस नगरो में एक नगर—राक्षसो की निवासभूमि। पपु० ५ ३७३-३७४

(२) प्रवर नामक राजा की रानी, तनूदरी की जननी। पपु० ९ २४

आवश्यक—साधु के षडावश्यक नाम से प्रसिद्ध छ मूलगुण-सामायिक, स्तुति, त्रिकाल-वन्दन, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और व्युत्सर्ग। मपु० १८ ७०-७२, ३६ १३३-१३५, वीवच० ६ ९३

आवश्यकापरिहाणि—सोलहकारण-भावनाओ में एक भावना। इससे सामायिक आदि छ आवश्यक क्रियाओ मे नियम से प्रवृत्ति होती है। मपु० ६३ ३२८, हपु० ३४.१४२

आवाप—गान्धर्व के तालगत बाईस भेदो मे एक भेद। हपु० १९ १५०

आवृष्ट—भरतक्षेत्र के मध्य में स्थित भरतेश के भाइयों द्वारा छोडे गये देशो मे एक देश। हपु० ११ ६४-६५

आवेशिनी—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को सिद्ध एक विद्या। मपु० ६२ ३९३

आशा—(१) रुचकगिरि के उत्तरदिशावर्ती आठ कूटो में पाँचवें रजतकूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७१६

(२) दिशा का पर्यायवाची शब्द। हपु० ३ २७

आशालिका—मायामय प्राकार की निर्मात्री एक विद्या। रावण ने उपरम्भा से यह विद्या प्राप्त करके नलकूबर को जीता था। इसी विद्या के द्वारा रावण ने लका के चारो ओर मायामयी कोट का निर्माण कराया था जिसका हनुमान् ने भंग किया था। पपु० १२ १३७-१४५, ५२ १५-२२

आशीविष—पश्चिम विदेह क्षेत्र में स्थित चार वक्षारगिरियो में एक वक्षारगिरि। यह सीतोदा नदी और निषध पर्वत का स्पर्श करता है। मपु० ६३ २०३, हपु० ५ २३०-२३१

आश्चर्यपंचक—तीर्थंकर आदि महान् पुण्याधिकारी मुनियो को आहार देने के समय होनेवाले पाँच आश्चर्य—रत्नवृष्टि, देव-दुन्दुभि, पुष्पवृष्टि, मन्द-सुगन्धित वायु-प्रवाह और अहोदान की ध्वनि। मपु० ४८ ४१

आश्रम—सागार और अनगार के भेद से द्विविध तथा ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और भिक्षुक के भेद से चतुर्विध। ये चारो उत्तरोत्तर विशुद्धि को प्राप्त होते हैं। मपु० ३९.१५२, पपु० ५ १९६

आषाढ़—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में चौदहवाँ नगर। हपु० २२ ९५

आष्टाह्निक—इस लोक और परलोक के अभ्युदय को देनेवाली अर्हत् पूजा के चार भेदो में एक भेद। ये चार भेद हैं—सदार्चन, चतुर्मुख, कल्पद्रुम और आष्टाह्निक। इसमें नन्दीश्वर द्वीप सम्बन्धी बावन जिनालयो की पूजा की जाती है तथा यह पूजा फाल्गुन, कार्तिक और आषाढ के अन्तिम आठ दिनो में होती है। मपु० ३८ २६, ५४.५०, ७० ७-८, २२

आसन—(१) राजा के छ गुणो में तीसरा गुण—मुझे कोई 'दूसरा और मैं किसी दूसरे को नष्ट करने में समर्थ नही हूँ' ऐसी स्थिति में शान्तभाव से चुप बैठ जाना। मपु० ६८ ६६-६९

(२) भोग के दस साधनो में एक साधन।। मपु० ३७ १४३

आसन्नभव्य—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का धारक, चौदहवें गुणस्थान का मोक्षगामी निकटभव्य जीव। मपु० ७४ ४५२-४५३, हपु० ३ १०२, वीवच० १६ ६४

आसव—मादक रस। मद्याग जाति के कल्पवृक्षो द्वारा भी यह रस दिया जाता था। मपु० ९ ३७

आसादन—ज्ञानावरण और दर्शनावरण-आस्रव का हेतु (दूसरे के द्वारा प्रकाश में आने योग्य ज्ञान को काय और वचन से रोक देना)। हपु० ५८ ९२

आसिक—भरतेश के भाइयो द्वारा छोडे गये देशो में दक्षिण का एक देश। हपु० ११ ७०

आसुरी—चमरचचपुर नगर के विद्याधर इन्द्राशनि की रानी और अशनिघोष की जननी। मपु० ६२.२२९, २८४

आस्कन्दित—घोड़ों की एक गति—उछल-उछल कर चलना। मपु० ३१.४-५

आस्थानांगण—समवसरण की एक भूमि। यहाँ पर बैठकर मनुष्य और देव मानस्तम्भों की पूजा करते हैं। हपु० ५७.१२

आस्तिक्य—सम्यग्दर्शन की अभिव्यक्ति करनेवाला एक गुण (वीतराग देव द्वारा प्रतिपादित जीव आदि तत्त्वों में रुचि होना)। मपु० ९ १२३

आस्थानमण्डल—महाशिल्पी कुबेर द्वारा निर्मित समवसरण की रचना। इसे वर्तुलाकार बनाया जाता है। इसकी रचना तीर्थंकरों को केवलज्ञान होने पर की जाती है। बारह योजन विस्तृत यह रचना धूलिसाल वलय से आवृत होती है। धूलिसाल के बाहर चारों दिशाओं में स्वर्णमय खम्भों के अग्रभाग पर अवलम्बित चार तोरणद्वार होते हैं। भीतर प्रत्येक दिशा में मानस्तम्भ होता है। इनके पास प्रत्येक दिशा में चार-चार वापियाँ बनायी जाती हैं। वापियों के आगे जल से भरी परिखा समवसरण भूमि को घेरे रहती है। इसके भीतरी भू-भाग में लतावन रहता है। इन वन के भीतर की ओर निषध पर्वत के आकार का प्रथम कोट होता है। इस कोट की चार दिशाओं में चार गोपुर-द्वार मंगलद्रव्यों से सुशोभित रहते हैं। प्रत्येक द्वार पर तीन तीन खण्डों की दो-दो नाट्य-शालाएँ होती हैं। आगे धूपघट रखे जाते हैं। घटों के आगे अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र की वन-वीथियाँ होती हैं। अशोक वनवीथी के मध्य अशोक नाम का चैत्यवृक्ष होता है, जिसके मूल में जिन-प्रतिमाएँ चतुर्दिक् विराजती हैं। ऐसे ही प्रत्येक वन-वीथी के मध्य उस नाम के चैत्यवृक्ष होते हैं। वनों के अन्त में चारों ओर गोपुर-द्वारों से युक्त एक-एक वनवेदी होती है। हर दिशा में दस प्रकार की एक-एक सौ आठ ध्वजाएँ फहरायी जाती हैं। इस प्रकार चारों दिशाओं में कुल चार हजार तीन सौ बीस ध्वजाएँ होती हैं। प्रथम कोट के समान द्वितीय कोट होता है। इस कोट में कल्पवृक्षों के वन होते हैं। तृतीय कोट की रचना भी ऐसी ही होती है। प्रथम कोट पर व्यन्तर, दूसरे पर भवनवासी और तीसरे पर कल्पवासी पहरा देते हैं। इनके आगे सोलह दीवारों पर श्रीमण्डप बनाया जाता है। एक योजन लम्बे चौड़े इसी मण्डप में सुर, असुर, मनुष्य सभी निराबाध बैठते हैं। इसी में सिंहासन और गंधकुटी का निर्माण किया जाता है। मपु० २२.७७-३१२, हपु० ५७.३२-३६, ५६-६०, ७२-७३ वीवच० १४.६५-१८४, त्रिकटनी से युक्त पीठ पर गंधकुटी का निर्माण होता है। यह छः सौ धनुष चौड़ी, उतनी ही लम्बी और चौड़ाई से कुछ अधिक ऊँची बनायी जाती है। गंधकुटी में सिंहासन होता है जिस पर जिनेन्द्र तल से चार अंगुल ऊँचे विराजते हैं। यहाँ अष्ट प्रातिहार्यों की रचना की जाती है। मपु० २३.१-७५ सभामण्डप बाहर कक्षों में विभाजित होता है। पूर्व दिशा से प्रथम प्रकोष्ठ में अतिशय ज्ञान के धारक गणधर आदि मुनीश्वर, दूसरे में इन्द्राणी आदि कल्पवासिनी देवियाँ, तीसरे में आर्यिकाएँ, राजाओं की स्त्रियाँ तथा श्राविकाएँ, चौथे में ज्योतिषी देवों की देवियाँ, पाँचवें में व्यन्तर देवों की देवियाँ, छठे में भवनवासी देवों की देवियाँ, सातवें में धरणेन्द्र आदि भवनवासीदेव, आठवें में व्यन्तरदेव, नवें में चन्द्र सूर्य आदि ज्योतिषी देव, दसवें में कल्पवासी देव, ग्यारहवें में चक्रवर्ती आदि श्रेष्ठ मनुष्य और बारहवें में सिंह, मृग आदि तिर्यंच बैठते हैं। इस रचना के चारों ओर सौ-सौ योजन तक अन्न-पान सुलभ रहता है। क्रूर जीव क्रूरता छोड़ देते हैं। इसका अपरनाम समवसृतमही है। यह दिव्यभूमि स्वाभाविक भूमि से एक हाथ ऊँची रहती है और उससे एक हाथ ऊपर कल्पभूमि होती है, इसका उत्कृष्ट विस्तार बारह योजन और कम से कम विस्तार एक योजन प्रमाण होता है। मानस्तम्भ इतने ऊँचे निर्मित होते हैं कि बारह योजन दूरी से दिखायी देते हैं। मपु० २३.१९३-१९६, २५.३६-३८, हपु० ५७.५-१६१, वीवच० १५.२०-२५

आस्रव—मन, वचन और काय की क्रिया। इसे योग कहते हैं। इसके दो भेद हैं—शुभास्रव (पुण्यास्रव) और अशुभास्रव (पापास्रव)। साम्परायिक और ईर्यापथ। इन दोनों में सकषाय जीवों के साम्परायिक और कषाय रहित के ईर्यापथ आस्रव होता है। पाँच इन्द्रियाँ, चार कषाय हिंसा आदि पाँच अव्रत और पच्चीस क्रियाएँ साम्परायिक आस्रव के द्वार हैं। जीव एक सौ आठ क्रियाओं से आस्रव करता है। वे क्रियाएँ हैं—संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ। ये तीनों कृत, कारित और अनुमोदन, मन, वचन, काय तथा क्रोध, मान, माया, लोभ कषायों से होती हैं। परस्पर गुणा करने से इनके एक सौ आठ भेद हो जाते हैं। ऐसे परिणाम जीवकृत होने से जीवाधिकरण आस्रव नाम से जाने जाते हैं। दो प्रकार की निर्वर्तना, चार प्रकार का निक्षेप, दो प्रकार का संयोग और तीन प्रकार का निसर्ग ये अजीवाधिकरण आस्रव के भेद हैं। सरागियों को दुष्कर्मों की अपेक्षा पुण्यास्रव उपादेय होता है और मुमुक्षु को वह हेय है। अयत्न जनित पापास्रव समस्त दुःखों के कारण हैं, निंद्य और सर्वथा हेय हैं। हपु० ५८.५७-९० वीवच० १७.५०-५१

आस्रवानुप्रेक्षा—बारह अनुप्रेक्षाओं में सातवीं अनुप्रेक्षा। राग आदि भावों के द्वारा पुद्गल पिण्ड कर्मरूप होकर आते और दुःख देते हैं। इसी से जीव अनन्त संसार-सागर में डूबता है। पाँच प्रकार का मिथ्यात्व, बारह अविरति, पन्द्रह प्रमाद और पच्चीस कषाय इस प्रकार कुल सत्तावन कर्मास्रव के कारण होते हैं। दर्शन, ज्ञान, चारित्र से इस आस्रव को रोका जा सकता है। पपु० १४.२३८-२३९, पापु० २५.९९-१०१ वीवच० ११.६४-७३ दे० अनुप्रेक्षा।

आहवनीय—वह अग्नि जिसमें गणधरों का अन्तिम संस्कार होता है। मपु० ४०.८४

आहार—काय की स्थिति के लिए साधुओं द्वारा गृहीत निर्दोष और मित आहार। यह साधुओं को गोचरी से प्राप्त होता है। इसमें साधु आसक्तिरहित रहते हैं। यह साधुओं की प्राण-रक्षा का साधन मात्र होता है। इसके सोलह उद्गमज, सोलह उत्पादक, दस एषणा संबंधी और धूम, अंगार, प्रमाण और संयोजना ये चार दाता संबंधी इस

तरह छियालीस दोष रहते हैं। मपु० २० २-४, ९, ३४ २०५-२०७, पपु० ४ ९७, हपु० ९ १८७-१८८

आहारक—आहारक ऋद्धि से उत्पन्न तेजस्वी शरीर। मपु० ११ १५८, पपु० १०५ १५३

आहारदान—हिंसा आदि दोषों तथा आरम्भो से दूर रहनेवाले मुनियो आदि पात्रो को उनकी शरीर की स्थिति के लिए विधिपूर्वक आहार देना। इसका शुभारम्भ राजा श्रेयास ने किया था। यह दान देने और लेनेवाले दोनो को ही परम्परया कर्म-निर्जरा एव साक्षात् पुण्यास्रव का कारण है। मपु० २० ९९, १२३, ५६ ७१-७३, ४३३, पपु० ३२ १५४

आहारविधि—आहार देने की विधि। इस विधि में आहार के लिए आये साधु को हाथ जोडकर पडगाहना, आने पर पूजा कर उन्हें अर्घ चढाना, नमोऽस्तु कहकर घर के भीतर ले जाना और उच्चासन पर बिठाकर पादप्रक्षालन करना, पूजा करना, यह सब करने के पश्चात् पुन नमस्कार कर मन, वचन, काय से शुद्धि बोलकर श्रद्धा आदि गुण सम्पत्ति के साथ आहार दिया जाता है। जो भिक्षा मुनियो के उद्देश्य से तैयार की जाती है वह उनके योग्य नही होती। अनेक उपवास हो जाने पर भी साधु श्रावक के घर ही आहार के लिए जाते हैं और वहाँ प्राप्त हुई निर्दोष भिक्षा को मौन से खडे रहकर ग्रहण करते हैं। दान-दाता मे श्रद्धा, भक्ति, विज्ञान, अलुब्धता, क्षमा और त्याग ये सात गुण आवश्यक होते हैं। मपु० ८ १७०-१७३, २० ८२, पपु० ४ ९५-९७

आहारशुद्धि—निरामिष भोजन। मपु० ३९ २९

आहल्या—अरिंजयपुर नगर के राजा वह्निवेग विद्याधर और उसकी रानी वेगवती की पुत्री। स्वयवर में चन्द्रावर्तपुर के स्वामी आनन्दमाल से इसका विवाह हुआ था। पपु० १३ ७३-७७

आहिताग्नि—गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि इन तीन अग्नियो में मत्रो के साथ नित्य पूजा करनेवाले अग्निहोत्री। मपु० ४० ८५

आहुतिमंत्र—सध्याओ के समय तीनो अग्नियो में देवपूजन रूप नित्य कर्म करते समय विधिपूर्वक सिद्ध किये हुए पीठिका मत्र। मपु० ४० ७९ दे० आहिताग्नि

इ

इक्षुमती—इस नाम की एक नदी। भरतेश दिग्विजय के समय यहाँ ससैन्य आये थे। मपु० २९ ८३

इक्षुयत्र—गन्ने का रस निकालने का यत्र। मपु० १० ४४

इक्षुरस—ईख का रस। तीर्थंकर वृषभदेव के समय में यह रस छहो रसो के स्वाद से युक्त होकर स्वय स्रवित होता था। यह बल, वीर्य का वर्द्धक था। उस समय की प्रजा का मुख्य आहार था। कालान्तर में काल के प्रभाव से यह रस निकाला जाने लगा। वृषभदेव ने तपश्चर्या में जब रस-परित्याग किया तो उसमे इक्षुरस का त्याग भी सम्मिलित था। मपु० २० १७७, ६३ ३५४, पपु० ३ २३३-२३४

इक्षुवर—(१) मध्यलोक का सातवाँ द्वीप। हपु० ५ ६१५

(२) मध्यलोक के सातवें द्वीप को घेरे हुए सागर। हपु० ५ ६१५

इक्ष्वाकु—(१) वृषभदेव द्वारा राज्यो की स्थिति के लिए स्थापित चार प्रमुख वशो मे प्रथम वश। वृषभ इस वश के महापुरुष थे। स्वर्ग से च्युत देव इसी वश में उत्पन्न होते थे। आगे चलकर आदित्यवश और सोमवश इसी की दो शाखाएँ हुई। मपु० १ ६, १२ ५, पपु० ५ १-२, हपु० २ ४, १३, ३३, पापु० २ १६३-१६४

(२) इक्षुरस—पान का उपदेश करने से वृषभदेव इस नाम से सबोधित किये गये थे। मपु० १६ २६४ हपु० ८ २१०,

(३) इक्ष्वाकु वश में उत्पन्न पुरुष। पपु० ६ २१०, हपु० २ ४

इक्ष्वाकुकुलनन्दन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७५

इच्छापरिमाण—पाँचवा अणुव्रत। इसमें स्वर्ण, दास, गृह, खेत आदि का सकल्पपूर्वक परिमाण कर लिया जाता है। हपु० ५८ १४२

इज्य—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

इज्या—(१) अर्हत्-पूजा। यह पूजा नित्य पूजा, कल्पद्रुम पूजा, चतुर्मुख पूजा और आष्टाह्निक पूजा के भेद से चार प्रकार की होती है। याग, यज्ञ, क्रतु, पूजा, सपर्या, अध्वर, मख और मह इसके पर्यायवाची शब्द हैं। मपु० ३८ २६, ६७ १९३

(२) भरतेश ने उपासकाध्ययनाग से जिन छ वृत्तियो (इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, सयम और तप) का उपदेश दिया था उनमे यह प्रथम वृत्ति है। मपु० ३८ २४-३४

इज्यार्ह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

इतरनिगोद—साधारण वनस्पति जीवो का एक भेद। इसमें जीव की सात लाख कुयोनियाँ होती हैं। हपु० १८.५६,५७

इतिसंवृद्धि—विद्याधर भानुकर्ण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३३

इतिहास—(१) महापुराण का अपरनाम। इतिहास का अर्थ है—"इति इह आसीत्" (यहाँ ऐसा हुआ) इसके दूसरे नाम हैं—इतिवृत्ति और ऐतिह्य। यह ऋषियो द्वारा कथित होता है। इसमें पूर्व घटनाओ का उल्लेख किया जाता है। मपु० १ २५, हपु० ९ १२८

(२) पूर्व घटनाओ की स्मृति। हपु० ९ १९८

इत्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३४

इन—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३४, २५ १८२

(२) सूर्य। मपु० ६२ ३८९, हपु० २ ९

(३) स्वामी। हपु० ३५ १५

इन्दीवरा—त्रिशृग नगर के राजा प्रचण्डवाहन और रानी विमलप्रभा की दस पुत्रियो में सातवी पुत्री। हपु० ४५ ९५-९८

इन्दु—(१) इस नाम का एक विद्याधर, ज्वलनजटी का दूत। इसे त्रिपिष्ट के पिता प्रजापति के पास भेजा गया था। मपु० ६२.९७

(२) चन्द्रमा। हपु० २ २५

इन्दुगति—एक विद्याधर राजा। आकाश से गिरते हुए एक शिशु को प्राप्त करके रत्नमयी कुण्डलो से विभूषित होने के कारण इसने उसका नाम भामण्डल रखा था। उसकी रानी पुष्पवती ने पुत्र रूप में उसका पालन किया। पपु० २६ १३०, १४९

इन्दुमालिनी—(१) आलोकनगर की एक आर्यिका। पपु० ११ १५०
(२)—सूर्यरज की भार्या, बाली, सुग्रीव और श्रीप्रभा इन तीनों की जननी। पपु० ९ १, १०-१२

इन्दुरेखा—अयोध्या के राजा त्रिदशजय की रानी, जितशत्रु की जननी। पपु० ५ ६०

इन्दुवर—जम्बूद्वीप के बाद स्थित अन्तिम सोलह द्वीप-सागरों में पन्द्रहवाँ द्वीपसागर। हपु० ५ ६२५

इन्द्र—(१) भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के रथनूपुर नगर के राजा विद्युत्प्रभ का बड़ा पुत्र। यह विद्युन्माली का अग्रज था। राजा होने के पश्चात् इसके शत्रुओं का दमन अर्जुन ने किया था। पपु० १ ५९-६०, पापु० १७ ४१-४५, ६०-६२
(२) चन्द्रशेखर का पुत्र, चन्द्ररथ का पिता। पपु० ५ ४७-५६
(३) देवों के स्वामी। ये महायुध वज्र के धारक होते हैं। पपु० २ २४३-२४४, हपु० ३ १५१, कल्पवासी, भवनवासी और व्यन्तर देवों के जितने इन्द्र होते हैं उतने ही प्रतीन्द्र भी होते हैं। कल्पवासी देवों के बारह इन्द्रों के नाम हैं—१ सौधर्मेन्द्र २. ऐशानेन्द्र ३ सनत्कुमारेन्द्र ४ माहेन्द्र ५ ब्रह्मेन्द्र ६ लान्तवेन्द्र ७ शुक्रेन्द्र ८ शतारेन्द्र ९ आनतेन्द्र १० प्राणतेन्द्र ११. अरणेन्द्र १२ अच्युतेन्द्र। भवनवासी देवों के बीस इन्द्रों के नाम हैं—१ चमर २ वैरोचन ३ भूतेश ४ धरणानन्द ५ वेणुदेव ६ वेणुधरा ७ पूर्ण ८ अवशिष्ट ९ जलप्रभ १० जलकान्ति ११ हरिषेण १२ हरिकान्त १३ अग्निशिखी १४ अग्निवाहन १५ अमितगति १६ अमितवाहन १७ घोष १८. महाघोष १९ वेलजन और २० प्रभजन। व्यन्तर देवों के सोलह इन्द्र हैं—१ अतिकाय २ काल ३ किन्नर ४ किम्पुरुष ५ गीतरति ६ पूर्णभद्र ७. प्रतिरूपक ८ भीम ९ मणिभद्र १० महाकाय ११ महाकाल १२ महाभीम १३ महापुरुष १४ रतिकीर्ति १५. सत्पुरुष १६ सुरूप। ज्योतिष देवों के पाँच इन्द्र हैं—चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारक। वीवच० १४४१-४३
(४) जमदग्नि का पुत्र। मपु० ६५ ९२
(५) द्युतिलकपुर के राजा चन्द्राभ का मन्त्री। मपु० ७४ १४१
(६) रथनूपुर के राजा सहस्रार और उसकी रानी मानसुन्दरी का पुत्र। गर्भावस्था में माता को इन्द्र के भोग भोगने की इच्छा होने के कारण पिता ने पुत्र का यह नाम रखा था। इसने इन्द्र के समान सुन्दर महल बनवाया था, अड़तालीस हजार इसकी रानियाँ थी, ऐरावत हाथी था, चारों दिशाओं में इसने लोकपाल नियुक्त किये थे, इसकी पटरानी का नाम शची था और सभा का नाम सुधर्मा था। इसके पास वज्र नाम का शस्त्र, तीन सभाएँ, हरिणकेशी सेनापति, अश्विनीकुमार वैद्य, आठ वसु, चार प्रकार के देव, नारद, तुम्बरु, विश्वबासु आदि गायक, उर्वशी, मेनका, मजुस्वनी अप्सराएँ और बृहस्पति मन्त्री थे। इसने अपने वैभव को इन्द्र के समान ही नाम दिये थे। रावण के दादा माली को मारकर इसने इन्द्र के सदृश राज्य किया था। पपु० ७ १-३१, ८५-८८ अन्त में दशानन ने इसे युद्ध में हराया था। रावण के द्वारा बद्ध इसे पिता सहस्रार ने बधनों से मुक्त कराया था। असार सुख के स्वाद में मचेत करने के कारण इसने रावण को अपना महाबन्धु माना था। अन्त में निर्वाणसगम मुनि से धर्मोपदेश सुन कर यह विरक्त हुआ और पुत्र को राज्य देकर अन्य पुत्रों और लोकपालों सहित इसने दीक्षा धारण कर ली तथा तपपूर्वक शुक्लध्यान से कर्मक्षय करके निर्वाण प्राप्त किया। पपु० १२ ३४६-३४७, १३ ३२-१०९

इन्द्रक—(१) रत्नप्रभा आदि पृथिवियों के पटलों के मध्य में स्थित बिल। इन बिलों की चारों दिशाओं और विदिशाओं में श्रेणीबद्ध बिल होते हैं। आगे ये बिल त्रिकोण तथा तीन द्वारों से युक्त होते हैं। इन्हें इन्द्रक निगोद भी कहा गया है। हपु० ४ ८६, १०३, ३५२
(२) अच्युतेन्द्र के १५९ विमानों में एक विमान। मपु० १० १८६-१८७

इन्द्रक निगोद—नरकों के इन्द्रक बिल। ये सभी तिकोने तथा तीन द्वारों से युक्त होते हैं। इनके सिवाय श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक निगोदों में कितने ही बिल दो द्वारों से युक्त और दुकोने, कितने ही तीन द्वारों से युक्त और तिकोने, कितने ही पाँच द्वारों से युक्त और पचकोने और कितने ही सात द्वारों से युक्त तथा सतकोने होते हैं। हपु० ४ ३५२

इन्द्रकेतु—रावण का योद्धा। इसने अगद के विरुद्ध माया से युद्ध किया था। मपु० ६८ ६२० ६२१

इन्द्रगिरि—(१) गान्धार देश की पुष्पकलावती नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम मेरुमती, अपरनाम मेरुसती था। इन दोनों के हिमगिरि नाम का पुत्र और गान्धारी नाम की पुत्री थी। कृष्ण ने हिमगिरि अपनी बहन हयपुरी के राजा सुमुख को दे रहा है ऐसा नारद से जानकर युद्ध में हिमगिरि को मार डाला था और वे गान्धारी को हर लाये थे जिसे बाद में उन्होंने पटरानी बनाया था। मपु० ७१ ४२४-४२८, हपु० ४४ ४५-५१, ६० ९३
(२) हरिवंशी राजा वसुगिरि का पुत्र और रत्नमाला का पिता। पपु० २१ ७-९

इन्द्रगुरु—रविषेणाचार्य के परदादागुरु। पपु० १२३ १६८

इन्द्रचर्म—रावण के पक्ष का एक विद्याधर। मपु० ६८ ४३१

इन्द्रच्छन्द—एक दैदीप्यमान हार। इसमें एक हजार आठ लड़ियाँ होती हैं। इन्द्र, चक्रवर्ती और जिनेन्द्र इसे धारण करते हैं। मपु० १५ १६, १६ ५६

इन्द्रच्छन्दमाल—इन्द्रच्छन्द के मध्य में मणि और लगा देने से यह हार बन जाता है। मपु० १६ ६२

इन्द्रजाल—क्षण में एक, क्षण में अनेक, क्षण में पास, क्षण में दूर, ऐसी विलक्षण क्रियाओं से युक्त इन्द्र का नृत्य। मपु० १४ १३१

इन्द्रजित्—दशानन और मन्दोदरी का पुत्र। इसका जन्म नाना के घर हुआ था। सुग्रीव के साथ युद्ध करके इसने उसे नागपाश से बाँध लिया था। इसके पश्चात् लक्ष्मण द्वारा यह भी बाँध लिया गया था। रावण का दाह-सस्कार करने के पद्म पश्चात् सरोवर पर राम

ने इसे बन्धनमुक्त किया था। वज्रमाली इसी का पुत्र था। अनन्तवीर्य मुनि से अपना पूर्वभव ज्ञात करके इसने उनसे दीक्षा ले ली थी। इसने अनेक ऋद्धियाँ प्राप्त की और अन्त में ध्यान लीन होकर मुक्ति प्राप्त की। मपु० ६८ ५१८-६२४, पपु० ८ १५३-१५४, ६० १०९, ७०.२६, ७८ ८-३१, ६३-८२, ८० १२७-१२८, ११८.२३

इन्द्रत्याग—स्वर्ग के राज्य को छोड़ने की इन्द्र की क्रिया। स्वर्ग में अपनी आयु की स्थिति थोड़ी रह जाने पर पृथ्वी पर अपनी च्युति का समय निकट जानकर स्वर्ग-भोगो के प्रति अपनी उदासीनता दिखाते हुए इन्द्र देवो से कहता है कि वह भावी इन्द्र के लिए अपना स्वर्ग साम्राज्य अर्पित करता है। मपु० ३८ २०३-२१३

इन्द्रदत्त—(१) साकेत का राजा। दीक्षा के पश्चात् तीर्थंकर अभिनन्दननाथ को इसने ही पहली बार आहार दिया था। मपु० ५० ५४

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी मे स्थित शुक्रप्रभनगर का राजा, यशोधरा का पति और वायुवेग का पिता। मपु० ६३ ९१-९२

(३) कौशाम्बी के राजा कोशावत्स का पुत्र। यह विशिखाचार्य का शिष्य था। इसकी बहन का नाम इन्द्रदत्ता था। पपु० ९१ ३०-३२

इन्द्रदत्ता—कौशाम्बी के राजा कोशावत्स की पुत्री। इसका विवाह अचल के साथ हुआ था। पपु० ९१ ३०-३२ दे० अचल-१४

इन्द्रद्युम्न—आदित्यवशी राजा सूर्य का पुत्र और महेन्द्रजित् का जनक। ससार से विरक्त होकर यह निर्ग्रन्थ हुआ और इसने मोक्ष प्राप्त किया। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ १०-१२

इन्द्रध्वज—(१) समवसरण की एक ध्वजा। समवसरण की भूमि के जयागण के मध्य में सुवर्णमय पीठ पर इसी ध्वजा को फहराया जाता है। हपु० ५७ ८३-८५

(२) इन्द्र द्वारा की जानेवाली जितेन्द्र की एक पूजा। मपु० ३८ ३२

(३) भरत के साथ दीक्षित एक राजा। इसने भी भरत के साथ मुक्ति प्राप्त की थी। पपु० ३८ १-५

इन्द्रनगर—एक नगर। बालमित्र इसी नगर का राजकुमार था। मपु० ३६ १५-१७

इन्द्रनीलमणि—नीला रत्न। समवसरण के धूलिसाल कोट की रचना पद्मराग और इन्द्रनील मणि से की जाती है। मपु० २२.८८

इन्द्रपथ—युधिष्ठिर द्वारा बसाया गया नगर। कौरव और पाँण्डवो का राज्य-विभाजन होने के पश्चात् युधिष्ठिर ने इसे ही अपनी राजधानी बनाया था। पापु० १६ २-४

इन्द्रपुर—राजा पौलोम और चरम दोनो के द्वारा रेवा नदी के तट पर बसाया गया नगर। इसी नगर के राजा उपेन्द्रसेन ने अपनी पुत्री पद्मावती चक्रपुर नगर के राजा पुण्डरीक को प्रदान की थी। मपु० ६५ १७७-१७९, हपु० १७ २७

इन्द्रप्रचण्ड—विभीषण का सामन्त। यह विभीषण के साथ लका से बहुमूल्य धन तथा शस्त्र आदि लेकर राम के पास गया था। पपु० ५५ ४०-४१

इन्द्रप्रभ—माया और पराक्रम से युक्त राक्षसवशी लंका का राजा। पपु० ५.३८७-४००

इन्द्रभूति—(१) मगधदेश के अचलग्रामवासी धरणीजट ब्राह्मण और उसकी पत्नी अग्निला का पुत्र, अग्निभूति का सहोदर। मपु० ६२. ३२५-३२६

(२) गौतम गोत्रीय महाभिमानी वेदपाठी-ब्राह्मण। भगवान् महावीर के समवसरण में मानस्तम्भ देखकर इनका मानभग हो गया था। इन्होंने अपने पाँच सौ शिष्यो के साथ दीक्षा धारण की थी। तप करके इन्होंने सात ऋद्धियाँ प्राप्त की थी। महावीर के ये प्रथम गणधर हुए। श्रावण कृष्णा एकम के पूर्वाह्न मे ये श्रुतज्ञानी हुए और उसी तिथि को पूर्व रात्रि में इन्होंने सम्पूर्ण श्रुत को आगम के रूप में निबद्ध कर दिया था। इनका दूसरा नाम गौतम है। सुधर्माचार्य ने इनसे ही श्रुत प्राप्त किया था। इन्द्र द्वारा पूजित होने से इनको यह नाम मिला था। अन्त में विपुलाचल पर्वत पर इन्होंने मोक्ष पाया था। मपु० २ ५३, ७४ ३५५-३७२, ७६ ५०७-५१७, पपु० १ ४१, हपु० १ ६०, ३ ४१, वीवच० १८ १५९-१६०

इन्द्रमत—किष्कपुर का राजा, इन्द्रायुधप्रभ का पुत्र और मेरु का जनक। पपु० ६ १६१

इन्द्ररथ—(१) इक्ष्वाकुवशी पयोरथ का पुत्र, दिननाथरथ (सूर्यरथ) का पिता। पपु० २२ १५४-१५९

(२) रावण का जीव। सीता के जीव भरतक्षेत्र के रत्नस्थलपुर नगर के चक्ररथ नामक चक्रवर्ती का पुत्र। पपु० १२३ १२१-१२२

इन्द्रराम—जमदग्नि और रेणुकी का पुत्र, श्वेतराम का सहोदर। अपरनाम परशुराम। मपु० ६५ ९०-९२, १३१-१३२

इन्द्रवश—एक राजवश। राजा वज्रजघ इसी वश का था। पपु० ९८ ९६-९७

इन्द्रवर्मा—(१) रावण का योद्धा। इसने राम के योद्धा कुमुद के साथ मायामय युद्ध किया था। मपु० ६८ ६२१-६२२

(२) पोदनपुर के राजा चन्द्रदत्त और उसकी रानी देविला का पुत्र। पाण्डवो ने इसे कलाओ में निपुण किया था। अपने प्रतिद्वन्द्वी स्थूणगन्ध का पाण्डवो द्वारा विनाश करवाकर इसने पुन. राज्य प्राप्त किया था। मपु० ७२ २०३-२०५

इन्द्रविधिदानक्रिया—पैंतीसवी गर्भान्वय क्रिया। इस क्रिया मे इन्द्र पद को प्राप्त जीव नम्रीभूत देवो को अपने-अपने पदो पर नियुक्त करता है। मपु० ३८ १९९

इन्द्रवीर्य—कुरुवशी एक राजा। इसके पूर्ववर्ती राजा वसुरथ और परवर्ती राजा चित्रवीर्य, विचित्रवीर्य आदि हुए हैं। हपु० ४५ २७

इन्द्रशर्मा—गिरितट नगर निवासी एक ब्राह्मण। इसके उपदेश से कुमार वसुदेव ने गिरितट नगर के उद्यान में विद्या-सिद्धि का आरम्भ किया था। हपु० २४ १

इन्द्रसुखोदयक्रिया—छत्तीसवी गर्भान्वय क्रिया। इस क्रिया में इन्द्रपद को प्राप्त जीव देवो को अपने-अपने विमानो की ऋद्धि प्रदान करता है। मपु० ३८ २००

इन्द्रसेन—(१) रत्नपुर के राजा श्रीषेण का पुत्र और उपेन्द्रसेन का भाई। यह कौशाम्बी के राजा महाबल की पुत्री श्रीकान्ता से विवाहित हुआ था। मपु० ६२.३४०-३५२, पापु० ४.२०३

(२) जरासन्ध का एक योद्धा नृप। मपु० ७१.७६-७८

इन्द्राणी—(१) वैजयन्तपुर के राजा पृथिवीधर की रानी, वनमाला की जननी। पपु० ३४.११-१५

(२) अलकारपुर के राजा सुकेश की रानी, माली, सुमाली और माल्यवान् की जननी। पपु० ६.५३०-५३१

(३) इन्द्र की शची। गर्भगृह में जाकर तीर्थंकरो की माता के पास मायामयी शिशु सुलाकर तीर्थंकरो को अभिषेक के लिए यही इन्द्र को देती है। अभिषेक के पश्चात् तीर्थंकरो का प्रसाधन, विलेपन, अजन सस्कार आदि करके यही जिनमाता के पास उन्हें सुलाती है। मपु० १३.१७-३९, १४४-९, पपु० ३.१७१-२१४

इन्द्राभिषेक—गृहस्थ की चौतीसवी गर्भान्वय क्रिया। मपु० ३८.५५-६३, इस क्रिया में पर्याप्तिक होते ही नृत्य, गीत, वाद्यपूर्वक देवो द्वारा इन्द्र का अभिषेक किया जाता है। मपु० ३८.१९५-१९८

इन्द्रायुध—(१) राम का सिंहरथवाही सामन्त। पपु० ५८.११

(२) शक सवत् सात सौ पाँच में उत्तर दिशा का राजा। इसी के समय में हरिवंशपुराण की रचना श्रीवर्धमानपुर के नन्दराज द्वारा निर्मापित श्री पार्श्वनाथ मन्दिर में आरम्भ की गयी थी। हपु० ६६.५२-५३

इन्द्रायुधप्रभ—वज्रकण्ठ का पुत्र, और इन्द्रमत का पिता। पुत्र को राज्य देकर यह दीक्षित हो गया था। पपु० ६.१६०-१६१

इन्द्रावतार—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ मे अड़तालीसवी क्रिया। इस क्रिया में आयु के अन्त में अर्हन्तदेव का पूजन कर, मोक्षप्राप्ति की कामना के साथ इन्द्र स्वर्ग से अवतरित होता है। मपु० ३८.५५-६३, २१४-२१६ दे० गर्भान्वय

इन्द्रासनि—चमरचचपुर का राजा। यह विद्याधर अशनिघोष का जनक था। इसकी पत्नी का नाम आसुरी था। मपु० ६२.२२९, पापु० ४.१३८-१३९

इन्द्रिय—(१) जीव को जानने के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्र ये पाँच साधन। इनमे स्थावर जीवो के केवल स्पर्शन इन्द्रिय तथा त्रस जीवो के यथाक्रम सभी इन्द्रियाँ पायी जाती है। भावेन्द्रिय और द्रव्येन्द्रिय के भेद से ये दो प्रकार की भी हैं। इनमें भावेन्द्रियाँ लब्धि और उपयोग रूप हैं तथा द्रव्येन्द्रियाँ निवृत्ति और उपकरण रूप। स्पर्शन, अनेक आकारोवाली है, रसना खुरपी के समान, घ्राण तिल-पुष्प के समान, चक्षु मसूर के और घ्राण यव की नली के आकार की होती है। एकेन्द्रिय जीव की स्पर्शन इन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय चार सौ धनुष है, इसी प्रकार द्वीन्द्रिय के आठ सौ धनुष और त्रीन्द्रिय के सोलह सौ धनुष, चतुरिन्द्रिय के बत्तीस सौ धनुष और असैनी पचेन्द्रिय के चौसठ सौ धनुप है। रसना इन्द्रिय के विषय द्वीन्द्रिय के चौसठ धनुप, त्रीन्द्रिय के एक सौ अट्ठाईस धनुप, चतुरिन्द्रिय के दो सौ छप्पन और असैनी पचेन्द्रिय के पाँच सौ धनुष हैं। घ्राणेन्द्रिय का विषय त्रीन्द्रिय जीव के सौ धनुष, चतुरिन्द्रिय के दो सौ धनुष और असैनी पचेन्द्रिय के चार सौ धनुप प्रमाण है। चतुरिन्द्रिय अपनी चक्षुरिन्द्रिय के द्वारा उनतीस सौ चौवन योजन तक देखता है, और असैनी पचेन्द्रिय के चक्षु का विषय उनसठ सौ आठ योजन है। असैनी पचेन्द्रिय के श्रोत का विषय एक योजन है, सैनी पचेन्द्रिय जीव नौ योजन दूर स्थित स्पर्श, रस, और गन्ध को यथायोग्य ग्रहण कर सकता है और बारह योजन दूर तक के शब्द को सुन सकता है। सैनी पचेन्द्रिय जीव अपने चक्षु के द्वारा सैंतालीस हजार दो सौ त्रेसठ योजन की दूरी पर स्थित पदार्थ को देख सकता है। हपु० १८.८४-९३

(२) छ पर्याप्तियो में इस नाम की एक पर्याप्ति। हपु० १८.८३

इन्द्रियसंरोध—मुनियों के अट्ठाईस मूलगुणो में पाँच मूलगुण। मपु० १८.७०

इन्द्रोपपादक्रिया—गर्भान्वय की तिरेपन क्रियाओ में तेतीसवी क्रिया। इस क्रिया को प्राप्त जीव देवगति में उपपाद दिव्य शय्या पर क्षणभर में पूर्ण यौवन को प्राप्त हो जाता है और दिव्यतेज से युक्त होते हुए वह परमानन्द मे निमग्न हो जाता है। तभी अवधिज्ञान से उसे अपने इन्द्र रूप में उत्पन्न होने का बोध हो जाता है। मपु० ३८.५५-६३, १९०-१९४

इन्धक—कुशस्थल नगर का निवासी ब्राह्मण, पल्लवक का भाई। मुनियो को आहार देने के प्रभाव से यह मरकर हरिक्षेत्र में आर्य हुआ था। इसके पश्चात् उसने देवगति प्राप्त की। पपु० ५९.६-११

इन्धन—एक अस्त्र। लक्ष्मण और रावण ने इसका प्रयोग एक दूसरे पर किया था। मपु० ७४.१०५

इभ—हाथी। विजयार्ध पर्वत पर उत्पन्न चक्री के चौदह रत्नो में एक सजीव रत्न। मपु० ३७.८३-८६

इभकर्ण—एक वटवृक्षवासी यक्ष। इसने अपने स्वामी यक्षराज को राम, सीता और लक्ष्मण के वन में आने की सूचना दी थी। पपु० ३५.४०-४१

इभपुर—हस्तिनापुर। विहार करते हुए तीर्थंकर आदिनाथ यहाँ आये थे। हपु० ९.१५७

इभवज्र—विभीषण का सामन्त। लंका से राम के पास जाते समय शस्त्र और श्रेष्ठ सामग्री लेकर यह भी विभीषण के साथ गया था। पपु० ५५.४०-४१

इभवाहन—कुरुवश का एक राजा। यह हस्तिनापुर में राज्य करता था। चूडामणि इसकी रानी थी और इन दोनो के मनोदयानाम की पुत्री हुई थी। पपु० २१.७८-७९, हपु० ४५.१५

इभ्य—(१) श्रेष्ठी-सामाजिक सम्मान का एक पद। मपु० ७२.२४३, हपु० ४५.१००

(२) वैश्य। मपु० ७६.३७

इभ्यपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। हपु० ६०.९५

इला—(१) भरतक्षेत्र के हिमवान् पर्वत पर स्थित ग्यारह कूटो में चौथा

कूट। इसकी ऊँचाई पच्चीस योजन है। यह मूल में पच्चीस योजन, मध्य में पौने उन्नीस योजन और ऊपर साढ़े बारह योजन विस्तृत है। मपु० ५९ ११८, हपु० ५ ५२-५६

(२) रुचकवर गिरि के लोहिताक्ष कूट की देवी। हपु० ५ ७१२

(३) हरिवंशी राजा दक्ष की रानी। इसके ऐलेय नामक पुत्र और मनोहरी नाम की पुत्री हुई थी। राजा दक्ष अपनी इस पुत्री में आकृष्ट हुआ और उसने इसे स्वयं ग्रहण कर किया था। इस कृत्य से रुष्ट हो यह पुत्र को लेकर एक दुर्गम स्थान मे चली गयी थी। वहाँ इसने इलावर्द्धन नाम से प्रसिद्ध नगर बसाया था तथा पुत्र ऐलेय को उसका राजा बनाया था। हपु० १७ १-१९

इलाकूट—हिमवत् कुलाचल का चौथा कूट। हपु० ५ ५३

इलावर्द्धन—(१) राजा दक्ष की भार्या इला द्वारा बसाया गया नगर। ऐलेय यहाँ का राजा था। यहाँ वसुदेव भी आया था। हपु० ११, १८-१९, २४ ३४ दे० इला-३

(२) राजा दक्ष का पुत्र, श्रीवर्द्धन का पिता। पपु० २१ ४९

इषु—काम्पिल्य नगर के निवासी शिखी ब्राह्मण की भार्या। राम, लक्ष्मण आदि का गुरु ऐर इसका पुत्र था। पपु० २५ ४२, ५८

इष्टवियोगज—आर्त्तध्यान का प्रथम भेद। आर्त्तध्यानी इष्ट वस्तु का वियोग होने पर उसके सयोग के लिए बार-बार चिन्तन करता है। ०पु० २१ ३१-३६

इष्वाकार—घातकीखण्ड और पुष्करार्ध द्वीप की उत्तर दक्षिण दिशा मे स्थित चार पर्वत। ये पर्वत इन दोनो द्वीपो को आधे-आधे भागो में विभाजित करते हैं। मपु० ५४ ८६, हपु० ५ ४९४, ५७७-५७९

ई

ईति—देश या राष्ट्र को कष्ट पहुँचाने वाली छ बातें—अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, शलभ, शुक और बाह्य आक्रमण। मपु० ४ ८०, १९ ८, हपु० १ १८

ईर्यादि पंचक—ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और प्रतिष्ठापन ये पाँच समितियाँ हैं। हपु० ६१ ११९

ईर्यापथ—आस्रव का एक भेद। यह अकषाय जीवो के होता है। उपशान्तकषाय से सयोग-केवली तक के जीव अकषाय होते हैं। हपु० ५८ ५८-५९

ईर्यापथक्रिया—ईर्यापथ में निमित्त भूत क्रिया। यह क्रिया साम्परायिक आस्रव की निमित्त भूत पाँच क्रियाओ में एक है। हपु० ५८ ६५

ईर्यापथदण्डक—दोनो पैर बराबर करके जिन प्रतिमा के सामने खडे होना और हाथ जोडकर ईर्यासमिति से सबधित पाठ का मन्द स्वर मे उच्चारण करना। हपु० २२ २४

ईर्याशुद्धि—मार्ग मे चलते समय होने वाली शारीरिक अशुद्धता को दूर करना। मपु० ७ २७५

ईर्यासमिति—समितियो में प्रथम समिति। इसमें नेत्र-गोचर जीवो के समूह को बचाकर गमन किया जाता है। यह मुनियो का धर्म है। सूर्योदय होने पर जन्तुओ द्वारा मर्दित मार्ग में चार हाथ आगे भूमि देखकर गमन करते हुए वे इसका पालन करते है। पपु० १४.१०८, हपु० २.१२२, पापु० ९ ९१

ईश—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, ३४

ईशत्व—भरतेश को प्राप्त अष्ट सिद्धियो में एक सिद्धि। मपु० ३८ १९३ दे० अणिमा

ईशान—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०, २५ ११२

ईशानेन्द्र—ईशान स्वर्ग का इन्द्र। यह जिनेन्द्र पर छत्र लगाये रहता है। यह कल्पोद्धार मत्र का ज्ञाता तथा सौधर्मेन्द्र के साथ जिनाभिषेक का कर्ता होता है। वीवच० ८.१०३, ९ ८-९

ईशावती—आठवें चक्रवर्ती सुभूम की जन्मभूमि। पपु० २० १७१

ईशित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८२

ईश्वरसेन—सुनन्दिषेण आचार्य के पश्चात् हुआ आचार्य। हपु० ६६ २८

ईषत्प्राग्भार—ऊर्ध्वलोक की अन्तिम भूमि। यह पृथिवी ऊपर की ओर किये हुए धवल छत्र के आकार में है। पुनर्भव से रहित महासुख सम्पन्न, तथा स्वात्मशक्ति से युक्त सिद्ध परमेष्ठी यहाँ स्थित हैं। पपु० १०५, १७३-१७४, हपु० ६ ४०

ईहा—पाँचो इन्द्रियो और मन की सहायता से होनेवाले मतिज्ञान मे सहायक ज्ञान। हपु० १० १४६

ईहापुर—एक नगर। यहाँ के नरभोजी भयकर भृङ्ग राक्षस का भीमसेन ने वध किया था। हपु० ४५ ९३-९४

उ

उंड्र—गौड के पास का ऋषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा रचित एक देश। मपु० १६ १५२, २९.४१

उक्ता—छन्दो की एक जाति। मपु० १६.११३

उक्तिकौशल—भाषण कला। यह स्थान, स्वर, सस्कार, विन्यास, काकु, समुदाय, विराम, सामान्याभिहित (पर्यायवाची शब्दो का प्रयोग), समानार्थत्व (एक शब्द के द्वारा अनेक अर्थों का प्रतिपादन) और भाषा इन सबसे युक्त होती है। पपु० २४ २७-३५

उक्षध्वज—वृषभाकृतियो से चिह्नित समवसरण की ध्वजाएँ। मपु० २२ २३३

उग्र—(१) उग्र तपश्चरण में सहायक ऋद्धि विशेष। मपु० ११.८२

(२) इन्द्र विद्याधर का एक योद्धा। पपु० १२.२१७

(३) रावण का एक योद्धा। पपु० ६०.२-४

(४) उग्र शासन करनेवाला राजा। हपु० ९ ४४

(५) वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा रचित एक देश। मपु० १६ १५२

उग्रनक्र—दैत्यराज मय का मन्त्री। पपु० ८ ४३-४४

उग्रनाद—रावण का सामन्त। सिंहरथ पर आरूढ होकर यह राम की सेना से युद्ध करने के लिए लका से निकला था। पपु० ५७ ४७-४८

उग्ररथ—धृतराष्ट्र तथा गान्धारी के सौ पुत्रो मे सतत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

उग्रवंश—सूर्यवंश और चन्द्रवंश के साथ उद्भूत वंश। इस वंश के अनेक नृप वृषभदेव के साथ तपस्या में लगे किन्तु वे तप से भ्रष्ट हो गये थे। हपु० १३ ३३, २२ ५१-५३ तीर्थंकर वृषभदेव ने हरि, अकम्पन, काश्यप और सोमप्रभ नामक क्षत्रियों को बुलाकर उन्हें चार-चार हजार राजाओं का स्वामी बनाया था। इनमें काश्यप भगवान् से मघवा नाम प्राप्त करके इस वंश का मुख्य राजा हुआ। मपु० १६ २५५-२५७, २६१ राजा उग्रसेन न केवल इस वंश का था अपितु वह इसका संवर्द्धक भी था। तीर्थंकर पार्श्वनाथ ने इसी वंश में जन्म लिया था। मपु० ७१ १४५, ७३ ९५

उग्रश्री—निर्वाणभक्ति नामक राजा के पश्चात् लंका के स्वामित्व को प्राप्त एक राक्षसवंशी राजा। यह माया और पराक्रम से सहित, विद्याबल और महाकान्ति का धारी और विद्यानुयोग में कुशल था। पपु० ५ ३९६-४००

उग्रसेन—(१) हस्तिनापुर नगर के निवासी वैश्य सागरदत्त और उसकी पत्नी धनवती का पुत्र। यह स्वभाव से क्रोधी था। अप्रत्याख्यानावरण क्रोध के कारण इसने तिर्यंच आयु का बन्ध किया। राजाज्ञा के बिना राजकीय वस्तुएँ दूसरों को देने के कारण यह राजा द्वारा मारा गया और मरकर व्याघ्र हुआ। मपु० ८.२२४-२२६

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरदिशावर्ती अलका नगरी के नृप महासेन और उसकी रानी सुन्दरी का ज्येष्ठ पुत्र, वरसेन का अग्रज और वसुन्धरा का सहोदर। मपु० ७६ २६२-२६३, २६५

(३) भगवान् नेमिनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३२

(४) हरिवंशी राजा नरवृष्टि और उसकी रानी पद्मावती का ज्येष्ठ पुत्र, देवसेन और महासेन का अग्रज तथा गांधारी का सहोदर। मपु० ७० १००-१०१ हरिवंश पुराण में नरवृष्टि को भोजकवृष्णि कहा गया है। हपु० १८ १६ इसके धर, गुणधर, युक्तिक, दुर्धर, सागर, कंस और चन्द्र आदि अनेक पुत्र थे। हपु० ४८ ३९ यह मथुरा नगरी का राजा था। पूर्वभव के वैर से इसी के पुत्र कंस ने इसे जेल में डाल दिया था। कृष्ण ने इसे जेल से मुक्त कराया था। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में इसने कृष्ण का साथ दिया था। नेमिकुमार के लिए कृष्ण ने स्वयं जाकर इनकी ही पुत्री राजीमति की याचना की थी। यह एक अक्षौहिणी सेना का स्वामी था। मपु० ७० ३३१-३६८, ७१ ४-५, ७३-७६, १४५-१४६, हपु० १ ९३, ५० ६७

उच्चस्थान—नवधा भक्ति के अन्तर्गत दूसरी भक्ति। इसमें पात्र को आहार के लिए पड़गाहने के पश्चात् उच्चस्थान पर बैठने के लिए उससे निवेदन किया जाता है। मपु० २० ८६-८७

उच्छ्वास—व्यवहार काल का एक भेद। मपु० ३ १२

उच्छ्वास-नि:श्वास—संख्यात आवलियों का समूह। हपु० ७ १९

उञ्छवृत्ति—खेत की भूमि पर बिखरे धान्य की बालियों को एकत्र करके उनसे अपनी जीविकायापन करना। हपु० ४२ १४-१७ दे० सुमित्र–२

उज्जयिनी—शिप्रा के तट पर स्थित मालव जनपद के अन्तर्गत एक नगरी। मपु० १६ १५३, २९ ४७, ६३ राजा श्रीधर्मा के बलि, बृहस्पति आदि मन्त्रियों का श्रुतसागर मुनि से यहीं विवाद हुआ था और वे देवों द्वारा यहीं कीले गये थे तथा इस नगर से उन्हें निकाल भी दिया गया था। हपु० २० ३-११ भोगों और शरीर से उदासीन लोगों का यहाँ निवास था। अपरनाम अवन्ति। लक्ष्मण को पति रूप में पाने का जिन कन्याओं को सौभाग्य प्राप्त हुआ था उनमें इस नगर की भी एक कन्या थी। पपु० ३३.१३८, १४५, ८० ११३, हपु० ६० १०५

उज्ज्वलांशुक—श्वेत वन का रेशमी वस्त्र। इसे स्त्री और पुरुष ग्रीष्म ऋतु में धारण करते थे। मपु० ७ १४२

उज्ज्वलित—तीसरे नरक के सातवें प्रस्तार में सातवाँ इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में छिहत्तर, विदिशाओं में बहत्तर और दोनों के मिलकर एक सौ अड़तालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८१, १२४

उटज—वन-स्थित पर्णशाला। साधु वेषधारी तापस ऐसी पर्णशालाओं में निवास करते हैं। मपु० १८ ५८

उड्डिण्डिकारी—सुकान्त और रतिवेगा का वैरी। कबूतर-कबूतरी की पर्याय में उत्पन्न हुए सुकान्त और रतिवेगा को इसने मार्जार होकर खाया भी था तथा सुकान्त और रतिवेगा के हिरण्यवर्मा और प्रभावती नाम से विद्याधर पर्याय में जन्मने पर इसने विद्युद्वेग नामक चोर के रूप में जन्म लेकर उन्हें अग्नि में जलाया था। हपु० १२ १८-२१

उडुपालन—वृषभदेव युगीन विद्याधर राज दृढ़रथ का वंशज, व्योमेन्दु का पुत्र और एकचूड का पिता। यह भी अपने पिता की तरह अपने पुत्र को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गया था। पपु० ५ ४७-५६

उत्कट—भानुरक्ष के पुत्रों द्वारा बसाया गया नगर, राक्षसों की निवास-भूमि। पपु० ५ ३७३-३७४

उत्कीलन—एक दिव्य औषधि। इससे कीलित व्यक्ति को उत्कीलित किया जाता था। हपु० २१ १८

उत्कोच—घूस। आरक्षक कर्मचारी अपराधी को घूस लेकर छोड़ देते थे। यदि राजा को यह विदित हो जाता था तो आरक्षक को बड़ा कठोर दण्ड दिया जाता था। मपु० ४६ २९६

उत्कृष्ट शातकुम्भ—एक व्रत। इसमें एक से लेकर सोलह तक के अंकों को सोलह, पन्द्रह आदि के क्रम से एक तक लिखकर प्रथम अंक को छोड़ अवशिष्ट अंकों का जितना जोड़ हो उतने उपवास और जितने स्थान हों उतनी पारणाएँ की जाती हैं। यह पाँच सौ सत्तावन दिनों में पूर्ण होता है। हपु० ३४ ८७-८९

उत्कृष्ट सिंहनिष्क्रीडित—एक व्रत। इसमें एक से लेकर पन्द्रह तक के अंकों का प्रस्तार बनाकर उसके शिखर में सोलह का अंक लिख दिया जाता है। उसके बाद उल्टे क्रम से एक तक अंक लिखे जाते हैं। जितना जोड़ हो उतने उपवास और जितने स्थान हों उतनी पारणाएँ की जाती हैं। इस तरह इस व्रत में चार सौ छियानवें उपवास और इकसठ पारणाएँ की जाती हैं। यह व्रत भी पाँच सौ सत्तावन दिनों में पूर्ण होता है। हपु० ३४ ७८-८०

उत्कृष्टोपासकस्थान—ग्यारहवी उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा का धारक क्षुल्लक । मपु० १० १५८

उत्तंस—किरीट से भी उत्तम कोटि का रत्नजटित मुकुट। मपु० १४ ७

उत्तम—(१) रावण का सामन्त। यह राम-रावण युद्ध में राम के विरुद्ध लड़ा था। पपु० ५७ ४५ ४८

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४३, २५ १७१

उत्तम क्षमा—क्रोध पर विजय प्राप्त करना। धर्म के दस लक्षणो में यह प्रथम लक्षण है। मपु० ३६ १५७

उत्तमक्षेत्र—तीनो लोको के ऊपर स्थित कर्मबन्धन-मुक्त जीवो की निवासभूमि—सिद्धक्षेत्र। पपु० १०५ १७२

उत्तमजन—आत्महित का लक्ष्य कर शुभकार्य में प्रवृत्त लोग। पपु० १७ १७९

उत्तमपात्र—श्रमण। ये हिंसा से विरत, परिग्रह-रहित, राग-द्वेष से हीन, तपश्चरण मे लीन, सम्यग्दर्शन-ज्ञान और चारित्र से युक्त, तत्त्वो के चिन्तन मे तत्पर और सुख-दुख मे निर्विकारी होते हैं। पपु० १४ ५३-५८, हपु० ७ १०८

उत्तमवर्ण—भरतक्षेत्र में विन्ध्याचल पर स्थित एक देश। हपु० ११ ७४

उत्तर—शतार स्वर्ग का एक देव। पपु० ५.११०

उत्तरकुमार—राजा विराट् का पुत्र। अर्जुन ने इसे सारथी बनाकर कौरवो से युद्ध किया था। इसका दूसरा नाम बृहन्नट था। हपु० १८ ४२-६१ अन्त में यह कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में राजा शल्य द्वारा मारा गया था। पापु० १९ १८३-१८४

उत्तरकुरु—(१) भगवान् नेमिनाथ के निष्क्रमण महोत्सव के लिए कुबेर के द्वारा निर्मित शिविका। मपु० ६९ ५३-५४, हपु० ५५.१०८

(२) नील कुल पर्वत से साढे पाँच सौ योजन दूरी पर नदी के मध्य में स्थित एक ह्रद। यहाँ नागकुमार देव रहते हैं। मपु० ६३ १९९, हपु० ५ १९४

(३) नील कुलाचल और सुमेरु पर्वत के मध्य में स्थित प्रदेश। यहाँ भोगभूमि की रचना है। यह जम्बूद्वीप सम्बन्धी महामेरु पर्वत से उत्तर की ओर स्थित है। यहाँ मद्यांग आदि दशो प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं। पृथिवी चार अगुल प्रमाण घास से युक्त होती है। पशु इस कोमल तृण-सम्पदा को रसायन समझकर चरते हैं। यहाँ सुन्दर वापिकाएँ, तालाब और क्रीडा-पर्वत हैं। मन्द-सुगन्धित वायु बहती है। कोई ईतियाँ नहीं है। रात-दिन का विभाग नहीं है। आर्य युगल प्रथम सात दिन केवल अगुष्ठ चूसते है, द्वितीय सप्ताह में दम्पत्ति घुटने के बल चलता है, तीसरे सप्ताह मीठी बातें करते हैं, पाँचवें सप्ताह में गुणो से सम्पन्न होते हैं, छठे सप्ताह में युवक होते हैं और सातवें सप्ताह में भोगी हो जाते हैं। यहाँ पूर्वभव के दानी ही उत्पन्न होते हैं। गर्भवासी यहाँ गर्भ में रत्नमहल के समान रहता है। स्त्री-पुरुष दोनो साथ-साथ जन्मते, पति-पत्नी बनते और एक युगल को जन्म देकर मरण को प्राप्त होते हैं। माता छींककर और पिता जभाई लेकर मरते हैं। यहाँ आयु तीन पल्य की होती है। ये लोग बदरीफल के बराबर तीन दिन बाद आहार करते हैं। यहाँ जरा, रोग, शोक, चिंता, दीनता, नींद, आलस्य, मल, लार, पसीना, उन्माद, कामज्वर, भोग, विच्छेद, विषाद, भय, ग्लानि, अरुचि, क्रोध, कृपणता और अनाचार नहीं होता। मृत्यु असमय मे नही होती। सभी समान भोगोपभोगी होते हैं। सभी दीर्घायु, वज्रवृषभ-नाराच-सहनन युक्त, कान्तिधारक और स्वभाव से मृदुभाषी होते हैं। यहाँ मनुष्य बालसूर्य के समान देदीप्यमान, पसीना रहित और स्वच्छ वस्त्रधारी होते हैं। अपात्रो को दान देने वाले मिथ्यादृष्टि, भोगाभिलाषी जीव हरिण आदि पशु होते हैं। इनमें परस्पर वैर नही होता, ये भी सानन्द रहते हैं। मपु० ३ २४-४०, ९ ३५-३६, ५२-८९, हपु० ५ १६७

उत्तरकुरु कूट—(१) गन्धमादन पर्वत पर स्थित सात कूटो में एक कूट। हपु० ५ २१७

(२) माल्यवान् पर्वत पर स्थित नौ कूटो में एक कूट। हपु० ५. २१९

उत्तरकोशल—कोशल जनपद का एक भाग। मपु० १६ १५४, २९ ४७

उत्तरगुण—मुनियो के चौरासी लाख गुण। मपु० ३६ १३५

उत्तरमन्द्रा—षड्ज ग्राम की एक मूर्च्छना। हपु० १९ १६१

उत्तरश्रेणी—विजयार्ध पर्वत का एक भू-भाग। इस पर विद्याधरो की साठ नगरियाँ है। हपु० ५ २३, २२.८५-९२

उत्तराध्ययन—अग बाह्यश्रुत के चौदह भेदो में आठवाँ अगबाह्य श्रुत। इसमें भगवान् महावीर के निर्वाण का वर्णन है। हपु० २ १०३, १०. १३४

उत्तरापथ—भरतखण्ड का उत्तरदिशावर्ती भू-भाग। तीर्थंकर नेमिनाथ विहार करते हुए यहाँ से सुराष्ट्र की ओर गये थे। हपु० ६१.४३, ६५.१

उत्तराफाल्गुनी—एक नक्षत्र। भगवान् महावीर इसी नक्षत्र मे गर्भ में आये, जन्मे, वैरागी और केवली हुए थे। अपर नाम उत्तराफाल्गुन। पपु० २० ३६-६०, हपु० २ २३, २५, ५०, ५९

उत्तराभाद्रपद—एक नक्षत्र। तीर्थंकर विमलनाथ ने इसी नक्षत्र में जन्म लिया था। पपु० २० ४९

उत्तरायता—षड्ज स्वर की एक मूर्च्छना। हपु० १९ १६१

उत्तरार्ध—विजयार्ध पर्वत के नौ कूटो में आठवाँ कूट। हपु० ५.२७

उत्तरार्धकूट—ऐरावत क्षेत्र के मध्य स्थित विजयार्ध पर्वत का द्वितीय कूट। हपु० ५ ११०

उत्तराषाढ़—एक नक्षत्र। वृषभदेव का जन्म और उनकी दीक्षा इसी नक्षत्र में हुई थी। मपु० १७.२०३, पपु० २० ३६-३७

उत्तरीय—पुरुष द्वारा व्यवहृत ओढने का परिधान। पपु० ३ १९८

उत्पलखेटक—पुष्कलावती जनपद का नगर। वज्रबाहु यहाँ का राजा था। मपु० ६ २६-२७

उत्पलगुल्मा—मेरु पर्वत की पूर्व-दक्षिण (आग्नेय) दिशा में स्थित वापी। यह लम्बाई में पचास योजन, गहराई मे दस योजन और चौडाई मे पच्चीस योजन है। हपु० ५ ३३४-३३५

उत्पलमती—विहायस्तिलक नगर के राजा सुलोचन की पुत्री। यह सहस्रनयन की बहिन और सगर चक्रवर्ती की रानी थी। पपु० ५ ७६-८३

उत्पलमाला—पुण्डरीकिणी नगरी की एक गणिका। इसने राजा वसुपाल से शील रक्षा का वर मागा था। हपु० ४६ ३००-३०३

उत्पला—मेरु पर्वत की पूर्व-दक्षिण (आग्नेय) दिशा में स्थित पचास योजन लम्बी, दस योजन गहरी और पच्चीस योजन चौडी वापी। हपु० ५ ३३४-३३५

उत्पलिका—बन्धुदत्त की पत्नी मित्रवती की दासी। इसका मरण सर्पदश से हुआ था। पपु० ४८ ४५-४६

उत्पलोज्ज्वला—मेरु पर्वत की पूर्व-दक्षिण दिशा में स्थित पचास योजन लम्बी, दस योजन गहरी और पच्चीस योजन चौडी वापी। हपु० ५ ३३४-३३५

उत्पातिनी—सोलह निकायो में स्थित और अनेक प्रकार की शक्तियो से युक्त विद्याधरो की एक औपधि—विद्या। हपु० २२ ६९

उत्पाद—(१) द्रव्य के लक्षण का एक अश—नवीन पर्याय की उपलब्धि। मपु० २४ ११०, हपु० १ १

(२) मुनि को दिया जानेवाला दाता के सोलह उत्पाद दोषो से रहित आहार। हपु० ९ १८७

उत्पादपूर्व—श्रुतज्ञान का प्रथम पूर्व। हपु० २ ९७ इसमें एक करोड पद हैं। इन पदों में द्रव्यो के उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य गुणो का वर्णन है। हपु० १०.७५

उत्पादिनी—एक विद्या। यह विद्या अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने सिद्ध की थी। मपु० ६२.३९२

उत्सन्नदोष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव एक नाम। मपु० २५ २११

उत्सर्ग—पांच समितियो में एक समिति। अपर नाम प्रतिष्ठापन समिति। इसमें प्रासुक भूमि पर मल-मूत्र आदि का त्याग किया जाता है। इसका पालन साधु करते हैं। पपु० १४ १०८ हपु० २ १२६, पापु० ९ ९५

उत्सर्पिणी—काल का एक भेद। यह दस कोडा-कोडी समय प्रमाण होता है। इसमें रूप, बल, आयु, शरीर और सुख का उत्कर्षण होता है। इसके छ भेद होते हैं–दु षमा-दु षमा, दु षमा, सुषमा-दु षमा, दु षमा-सुषमा, सुषमा और सुषमा सुषमा। मपु० ३ १४-२१ पपु० २० ७७-७८, हपु० ७ ५६-५९, वीवच० १८ ६५-८६

उत्साह—आत्मा के दस सात्विक गुणो में एक गुण। मपु० १५ २१४

उत्साहशक्ति—मन्त्र, प्रभु और उत्साह इन तीन शक्तियों में एक शक्ति। यह शौर्य से ऊर्जित होती है। मपु० ६८.६१, हपु० ८ २०१

उत्सेधांगुल—आठ जौ प्रमाण माप। इससे जीवो के शरीर की ऊँचाई और छोटी वस्तुओ का प्रमाण ग्रहण किया जाता है। हपु० ७ ३९-४१

उदंक—(१) भरत क्षेत्र के भावी चौबीस तीर्थंकरो में आठवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७८, हपु० ६० ५५९

(२) भविष्यत् कालीन तीसरे तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७१

उदंग—लवणसमुद्र के कौस्तुभ पर्वत का देव। हपु० ५ ४६०

उदंच—ध्रौव्य का शिष्य और शाडिल्य, क्षीरकदम्बक आदि का गुरु भाई। हपु० २३.१३४-१३५

उदक—लवणसमुद्र की दक्षिण दिशा के कदम्बुक पातालविवर के समीप का एक पर्वत। शिव नामक देव इस पर्वत का अधिष्ठाता है। हपु० ५ ४६१

उदकस्तम्भिनी—जल को स्तभित करनेवाली एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९१-४००

उदक्कुरु—मेरु पर्वत की उत्तरदिशा मे वर्तमान विदेह क्षेत्र का एक भाग। यहाँ उत्तम भोगभूमि की रचना है। मपु० ५ ९८

उदधि—(१) हस्तिनापुर के राजा दुर्योधन और उनकी रानी जलधि की कन्या। दुर्योधन ने अपनी इस कन्या के सबध में निश्चय किया था कि वह यह कन्या कृष्ण के उस पुत्र को देगा जो कृष्ण की रुक्मिणी और सत्यभामा दोनो रानियो के पुत्रो में पहले होगा। प्रद्युम्न पहले हुआ था और सत्यभामा का पुत्र भानु बाद में। पूर्व निश्चयानुसार दुर्योधन अपनी कन्या प्रद्युम्न को देना चाहता था किन्तु धूमकेतु असुर प्रद्युम्न को हर ले गया था अत' दुर्योधन ने परिस्थितिवश अपनी कन्या प्रद्युम्न के छोटे भाई भानु को दे दी थी। धूमकेतु असुर से मुक्त होने पर प्रद्युम्न ने भानु को हराकर इसे अपनी पत्नी बना लिया था। हपु० ४७ ८७-९८

(२) कृष्ण का शस्त्र और शास्त्र में निपुण पुत्र। हपु० ४८ ७०

उदधिकुमार—पाताल-लोक के निवासी भवनवासी देवो का एक भेद। हपु० ४ ६३

उदधिरक्ष—लकाधिपति महारक्ष और उनकी रानी विमलाभा का द्वितीय पुत्र। यह अमररक्ष का अनुज और भानुरक्ष का अग्रज था। पपु० ५ २४१-२४४

उदय—(१) अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के २० प्राभृतो में कर्म प्रकृति नामक चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में दसवां योगद्वार। हपु० १० ८१-८३ दे० अग्रायणीयपूर्व

(२) समवसरण के तीसरे कोट के पूर्व द्वार के आठ नामो में एक नाम। हपु० ५७ ५६-५७

(३) समवसरण के तीसरे कोट के उत्तर द्वार के आठ नामो में एक नाम। हपु० ५७ ६०

उदयन—(१) वैशाली के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा की पुत्री प्रभावती का पति। यह कच्छ देश के रोरुक नगर का राजा था। मपु० ७५ ३-६, ११-१२

(२) मृगावती का पुत्र। मपु० ७५ ६४

उदयपर्वत—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे स्थित पचास नगरो में एक नगर। हपु० २२ ९३-१०१

उदयसुन्दर—नागपुर (हस्तिनापुर) के राजा इभवाहन और उसकी पत्नी चूडामणि का पुत्र और मनोदया का भाई। यह हँसी में कहे गये वचनो के निर्वाह हेतु दीक्षित हो गया था। पपु० २१ ७८-८०, १२३

उदयाचल—पोदनपुर का राजा, अर्हच्छ्री का पति और हेमरथ का पिता। पपु० ५ ३४६

उदराग्नि—क्रोध, काम और उदर इन तीन अग्नियो में तीसरी अग्नि।

इसमें मुनिजन अनशन की आहुति देकर आत्मयज्ञ करते हैं। मपु० ६७ २०२

उद्वास—लवणसमुद्र की दक्षिणदिशा के पाताल-विवर के समीप स्थित पर्वत। यह शिवदेव नामक देव की निवासभूमि है। हपु० ५ ४६१

उदात्त—उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इन तीनो स्वरो में प्रथम स्वर। यह स्वर ऊँचे से उच्चरित होता है। हपु० १७ ८७

उदारधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

उदित—(१) विजयार्ध पर्वत के तडिदगद विद्याधर और उसकी भार्या श्रीप्रभा का पुत्र। इसने पूर्वजन्म में मुनियो पर आये उपसर्ग से उनकी रक्षा की थी। पपु० ५ ३५२-३५३

(२) पद्मिनी नगरी के राजा विजयपर्वत के दूत अमृतस्वर का प्रथम पुत्र, मुदित का सहोदर। पपु० ३९ ८४-८६ दीक्षित अवस्था में वसुभूति के जीव द्वारा किये गये उपसर्ग को इसने सहन किया था। भील ने उपसर्ग काल में इसकी रक्षा की थी। इसने भी पक्षी की पर्याय में भील के प्राण बचाये थे। पपु० ३९ ८४-८६, १२८-१४०

उदीच्या—सगीत की आठ जातियो में एक जाति। पपु० २४ १२-१५

उदुम्बर—(१) इस नाम का एक रोग (कुष्ट)। मपु० ७१.३२०

(२) ये पाँच फल होते हैं। इनका गर्भान्वय को व्रतावरण क्रिया में त्याग होता है। मपु० ३८ १२२

उदुम्बरी—भरतक्षेत्र की एक नदी। भरतेश की सेना इस नदी के तट पर भी ठहरी थी। मपु० २९ ५४

उद्गमदोष—आहारदान सम्बन्धी सोलह दोष। हपु० ९ १८७ दे० आहारदान

उद्भाषण—सत्यव्रत की पाँच भावनाओ में एक भावना-प्रशस्तवचन बोलना—आगमानुकूल वचन बोलना। इसे अनुवीचिभाषण भी कहते हैं। हपु० ५८ ११९

उद्धव—कुरुक्षेत्र में हुए कृष्ण—जरासन्ध युद्ध में कृष्ण के पक्ष का राजा। यह अक्षोभ्य का पुत्र था। मपु० ७१.७७, हपु० ४८ ४५

उद्धामा—रावण का व्याघ्ररथासीन योद्धा। पपु० ५७ ५१-५२

उद्धारक—लका का स्वामी राक्षस वशी राजा। यह माया और पराक्रम से सहित और विद्या, बल तथा महाकान्ति का धारक था। पपु० ५. ३९५-४००

उद्धारपल्य—व्यवहार पल्य के रोमखण्डो से प्रत्येक का असख्यात करोड वर्षो का समय। सख्या से खण्डित करके उनसे गर्त भरने में लगनेवाला समय उद्धारपल्य तथा एक प्रमाण योजन लम्बे-चौड़े और गहरे गर्त (गड्ढे) से एक समय में एक रोमखण्ड निकालने पर गर्त के खाली होने में लगनेवाले समय को उद्धारपल्योपम काल कहा गया है। हपु० ७ ५० दे० व्यवहारपल्य

उद्धारसागर—दस कोडाकोडी उद्धारपल्यो का समय। हपु० ७ ५१

उद्भव—(१) रावण के पक्ष का एक राक्षस। पपु० १२ १९६

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

उद्भ्रान्त—धर्मा (रत्नप्रभा) पृथिवी के पंचम प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४.७६-७७

उद्दिष्टत्याग—ग्यारहवी प्रतिमा। इस प्रतिमा के धारक मुनि अपने निमित्त से बनाये गये आहार को ग्रहण नही करते। मपु० १० १५८-१६१, पपु० ४ ९५, वीवच० १८.६९

उन्मत्तजला—(१) मानुषोत्तर पर्वत की ह्रदा आदि बारह नदियो में एक नदी। ये नदियाँ ताम्रचूल और कनकचूल देवो ने मेघरथ को दिखायी थी। मपु० ६३ २०६

(२) निषध पर्वत से निकलकर सीतोदा नदी की ओर जानेवाली एक नदी। हपु० ५ २४०

उन्मग्नजला—विजयार्ध पर्वत की तमिस्रा गुहा में बहनेवाली नदी। यह नदी गुहा के एक कुण्ड से निकलकर सिन्धु नदी में प्रविष्ट होती है। इसके तट पर भरतेश की सेना ने विश्राम किया था। मपु० ३२. २१, हपु० ११ २६

उन्मुख—नवम नारद। इसकी आयु नारायण कृष्ण के बराबर एक हजार वर्ष की थी। हपु० ६० ५४८-५५० दे० नारद

उन्मुण्ड—कृष्ण के भाई बलदेव का ज्येष्ठ पुत्र। हपु० ४८ ६६-६८

उन्मूलनव्रणरोह—एक दिव्य-औषधि। इससे घाव शीघ्र भरा जा सकता है। यह औषधि चारुदत्त को एक विद्याधर के सकेत से प्राप्त हुई थी। हपु० २१ १८

उपकरणक्रीडा—चतुर्विध क्रीडा में दूसरा भेद—कन्दुक आदि का खेल। पपु० २४ ६७-६८ दे० क्रीडा

उपक्रम—(१) तत्त्व के प्रकृत अर्थ को श्रोताओ की बुद्धि में बैठा देना, अपरनाम उपोद्घात। इसके पाँच भेद हैं—आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, अभिधेय और अर्थाधिकार। मपु० २ १०२-१२४

(२) अग्रायणीयपूर्व के चतुर्थ प्राभृत का एक योगद्वार। हपु० १० ८३

उपगूहन—सम्यग्दर्शन के आठ अगो में पाँचवाँ अग। इससे अज्ञानी और असमर्थ साधर्मी जनो के द्वारा की गयी जैनशासन की निन्दा का आच्छादन होता है। वीवच० ६ ६७

उपघात—असमय मे मरण। तीर्थंकरो के उपघात नही होता। मपु० १५ ३१

उपचय—पुस्तकर्म (शिल्पकार्य) का एक भेद। मिट्टी के खिलौने आदि बनाना उपचय पुस्तकर्म है। पपु० २४ ३८-३९

उपचित्र—राजा धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का पुत्र। पापु० ८ १९५

उपदेश—स्वाध्याय तप का एक भेद। दे० स्वाध्याय

उपदेशविधि—शिक्षा की एक विधि। तीर्थंकरो की दिव्यध्वनि और तत्त्वोपदेश तथा आचार्यों की देशना इसी विधि में आती है। सद्धर्म-देशन ज्ञान की पाँच भावनाओ में एक है। मपु० २१ ९६, २३ ६९-७२, २४ ८५-१८०

उपदेश-सम्यक्त्व—त्रेसठ शलाका पुरुषो का चरित्र सुनने से उत्पन्न श्रद्धा। यह सम्यग्दर्शन के दस भेदो में तीसरा भेद है। मपु० ७४ ४३९-४४३, वीवच० १९ १४५ दे० सम्यग्दर्शन

उपधा—धर्म, अर्थ, काम और भय के समय किसी प्रकार से दूसरे के चित्त की परीक्षा करना। मपु० ४४ २२

उपधान—पारिव्राज्य के सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। इस सूत्रपद में बताया गया है कि मुनि का उपधान उसकी भुजाएँ होती हैं। मपु० ३९ १६२-१६६, १७९-१८०

उपधि—बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह। मपु० ३४ १८९

उपनन्दक—राजा धृतराष्ट्र तथा उसकी रानी गान्धारी का पुत्र। पापु० ८ १९६

उपनयन—यज्ञोपवीत संस्कार। मपु० १५ १६४

उपनीतिक्रिया—(१) गृहस्थ की तिरेपन गर्भान्वय क्रियाओं में चौदहवीं क्रिया। शिशु की यह क्रिया गर्भ से आठवें वर्ष में की जाती है। इसके अन्तर्गत शिशु के केशों का मुण्डन, व्रतबन्धन, तथा मौंजीबन्धन किया जाता है। ये क्रियाएँ अर्हंत्-पूजा के पश्चात् जिनालय में बालक को व्रत देकर गुरु की साक्षी में की जाती है। भिक्षा में प्राप्त अन्न का अग्रभाग देव को समर्पित कर बालक शेष अन्न को भोजन में ग्रहण करता है। इसके क्रियान्वयन में मन्त्र पढ़े जाते हैं—परमनिस्तारकलिंग-भागी भव, परमर्षिलिंगभागी भव, परमेन्द्रलिंगभागी भव, परमराज्य-लिंगभागी भव। मपु० ३८.५५-६३, १०४-१०८, ४० १५३-१५५

(२) दीक्षान्वय से संबंधित नौवीं क्रिया। इसमें देवता और गुरु की साक्षी में विधि के अनुसार अपने वेष, सदाचार और समय की रक्षा की जाती है। मपु० ३९ ५४

उपपाण्डुक—सुमेरु पर्वत का एक वन। हपु० ५ ३०९

उपपाद—देव और नारकियों का जन्म। पपु० १०५ १५०

उपपादशय्या—देवों की उत्पादशय्या। देव इस पर जन्म लेकर अन्तर्मुहूर्त में नवयौवन से पूर्ण तथा अपने सम्पूर्ण लक्षणों से सम्पन्न हो जाते है। उपपाद शिला भी यही है। मपु० ५.२५४-२५६, पपु० ६४ ७०, वीवच० ४ ६०

उपपादशिला—दे० उपपादशय्या।

उपबृंहण—सम्यग्दर्शन का एक अंग। इसके द्वारा क्षमा आदि भावनाओं से आत्मधर्म की वृद्धि की जाती है। मपु० ६३ ३१८

उपभोग—गन्ध, माला, अन्न-पान आदि बार-बार भोगी जाने वाली वस्तुएँ। हपु० ५८ १५५

उपभोगादिनिरर्थन—अनर्थदण्डव्रत का एक अतिचार (उपभोग-परिभोग की वस्तुओं का निरर्थक संग्रह करना)। हपु० ५८ १७९

उपभोगपरिभोग-परिमाणव्रत—उपभोग (बार-बार भोगने में आने-वाली) तथा परिभोग (एक बार भोगी जानेवाली) वस्तुओं का परि-माण करना। सचित्ताहार, सचित्त सबंधाहार, सचित्त सन्मिश्राहार, अभिषवाहार और दुष्पक्वाहार ये इसके पाँच अतिचार हैं। हपु० ५८ १५५-१५६, १८२

उपमन्यु—भरतक्षेत्र की गान्धारी नगरी के राजा भूति का मांसभोजी अधर्मकर्मी पुरोहित। अन्त में सदुपदेश से यह पंच नमस्कार मन्त्र का ध्यान करते हुए मरण कर भूति का अरिसूदन नाम का पौत्र हुआ। पपु० ३१ ४१, ४५-४६

उपमाभूत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

उपयोग—जीव का स्वरूप। ज्ञान और दर्शन के भेद से यह दो प्रकार का है। जीव के सिवाय अन्य द्रव्यों में अनुपलब्ध जीव के इस गुण का घातियाकर्म घात करते हैं। इसकी विशुद्धि के लिए आत्म तत्त्व का चिन्तन किया जाता है, जिससे बन्ध के कारण नष्ट हो जाते हैं। मपु० २१ १८ १९, २४ १००, ५४ २२७-२२८, पपु० १०५, १४७

उपयोगा—पद्मिनी नगरी के राजा विजयपर्वत के दूत अमृतस्वर की भार्या। यह उदित और मुदित की जननी थी। पपु० ३९ ८४-८६

उपयोगिता—दीक्षान्वय की आठवीं क्रिया। इसमें पर्व के दिन उपवास के अन्त में प्रतिमायोग धारण किया जाता है। मपु० ३८ ६४, ३९ ५२

उपरम्भा—आकाशध्वज और मृदुकान्ता की पुत्री तथा नलकूबर की भार्या। यह गुण और आकार में रम्भा अप्सरा के समान थी। यह दशानन में आसक्त थी। दशानन के द्वारा समझाये जाने पर यह नलकूबर को पूर्ववत् चाहने लगी। पपु० १२ ९७ ९८, १०७-१०८, १४६-१५३

उपवना—तापस वंश में उत्पन्न एक दु खी कन्या। मुहूर्तमात्र के आहार-त्याग से इसने उत्कृष्ट धन सम्पदा प्राप्त की थी। पपु० १४ २४८-२५०

उपवास—एक बाह्य तप-अनशन। विधियुक्त उपवास कर्मनाशक होता है। इससे सिद्धत्व प्राप्त होता है। वृषभदेव ने एक वर्ष पर्यन्त यह तप किया था। मपु० ६ १४२, १४५, ७ १६, २० २८-२९, पपु० १४ ११४-११५

उपशमक—चारित्रमोहनीय कर्म का उपशमन कर्ता जीव। ऐसे जीव अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसांपराय और उपशान्त मोह इन चार गुणस्थानों में होते हैं। हपु० ३ ८२

उपशम भाव—अपनी भूल स्वीकार करके क्षमा माँग लेने पर उत्पन्न होनेवाला भाव। मपु० ६ १४०

उपशम श्रेणी—विशुद्ध परिणामों से सम्यक् विशुद्धि की ओर बढ़ना। चारित्र मोहनीय कर्म का उपशम करनेवाले आठवें से ग्यारहवें गुण-स्थानवर्ती जीवों के परिणाम। मपु० ११ ८९

उपशान्तकषाय—ग्यारहवाँ गुणस्थान। यहाँ मोहनीय कर्म सम्पूर्णत उपशान्त हो जाता है। मोहनीय कर्म का उपशम हो जाने से अतिशय विशुद्ध औपशमिक चारित्र प्राप्त होना है किन्तु जीव यहाँ अन्तर्मुहूर्त मात्र ही ठहर कर च्युत हो जाता है और पुन क्रमश उसी स्वस्थान अप्रमत्त गुणस्थान में आ पहुँचता है जहाँ से वह इस गुण-स्थान में आता है। मपु० ११ ९०-९२, हपु० ३ ८२

उपशीर्षक—एक हार। इसमें बीच में क्रम-क्रम से बढ़ते हुए तीन स्थूल मोती होते हैं। मपु० १६ ४७, ५२

उपसंव्यान—उत्तरीय वस्त्र—ओढ़ने का दुपट्टा। मपु० १३ ७०

उपसमुद्र—समुद्र से उछलकर द्वीप में आया अलघनीय एवं गहरा जल। इससे द्वीप के चारों ओर का समीपवर्ती भाग आवृत हो जाता है। मपु० २८ ४८

उपसर्ग—(१) मुनियो की तप-साधना और ध्यान में देव, मनुष्य, पशु और अचेतन पदार्थों द्वारा अप्रत्याशित रूप से विभिन्न प्रकार के कष्ट और बाधाएँ प्राप्त होना। मपु० ७० २८०-२८२, हपु० १ २३, २० २७, वीवच० १३ ५९-८२

(२) गान्धर्व की तीन विधियो मे पदगत एक विधि है। इसमें जाति तद्धित, छन्द, सन्धि, स्वर, तिङन्त, उपसर्ग तथा वर्ण आदि आते हैं। हपु० १९ १४९

उपसौमनस—मेरु के सौमनस वन का अन्तर्वर्ती एक वन। हपु० ५ ३०८

उपस्थापना—प्रायश्चित्त का एक भेद। इसमें सघ से निष्कासित मुनि को पुन दीक्षा दी जाती है। हपु० ६४ ३७

उपाधिवाक्—सत्यप्रवाद पूर्व की बारह भाषाओ मे एक भाषा। श्रोता इसके द्वारा अर्थोपार्जन आदि कार्यों में लग जाता है। हपु० १० ९४

उपाध्याय—(१) पाँच परमेष्ठियो मे चौथे परमेष्ठी। हपु० १ २८ ये निज और पर के ज्ञाता तथा अनुगामी जनो के उपदेशक होते हैं। पपु० ८९ २९

(२) अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ मे चौदहवी वस्तु। हपु० १० ७७-८० दे० अग्रायणीयपूर्व

उपानह्—जूता। आदिपुराण काल मे की जानेवाली मनोज्ञ वेष-भूषा का अग। तपस्वी इसका परित्याग करते हैं। मपु० ३९ १९३

उपाय—राज्य विस्तार और प्रजा शासन के प्रयोजनो की सिद्धि का साधन। यह चार प्रकार का होता है—साम, दान, दण्ड और भेद। मपु० ८ २५३, ६८ ६२

उपायविचय—धर्मध्यान का दूसरा भेद। योग की पुण्यरूप प्रवृत्तियो को अपने आधीन करना उपाय है। इस उपाय का सकल्पन और चिन्तन उपाय-विचय है। हपु० ५६ ४१

उपासक—श्रावक। मपु० ८ २०६ प्रतिमाओ के भेद से इसके ग्यारह भेद होते हैं। श्रुत के सातवें अग उपासकाध्ययन में इसकी पूर्ण विवेचना की गयी है। मपु० १० १५८-१६१, ३४ १३३, १४१ दे० अग

उपासक क्रिया—गृहस्थो से सबधित क्रिया। यह तीन प्रकार की होती है—गर्भान्वय, दीक्षान्वय और कर्त्रन्वय। इनमे गर्भान्वय में गर्भाधान से लेकर निर्वाण तक की त्रेपन क्रियाएँ होती हैं। ये क्रियाएँ शुद्ध सम्यग्दृष्टि के ही होती हैं। दीक्षान्वय क्रियाएँ अडतालीस हैं, ये अवतार से लेकर निर्वाण पर्यन्त होनेवाली क्रियाएँ मोक्ष-साधक हैं। सद्गृहित्वसे कर्त्रन्वय क्रियाएँ होती हैं। मपु० ६३ ३००-३०५

उपासकाध्ययन—निखिल श्रावकाचार के विवेचक द्वादशाग श्रुत का सातवाँ अग। इसमे ग्यारह स्थानो (प्रतिमाओ) के उपासको की क्रियाओ का निरूपण किया गया है। इसमे ग्यारह लाख छप्पन हजार पद हैं। मपु० ३४ १३३, १४१, ६३ ३००-३०१, हपु० १०.३७ दे० अग

उपास्ति—सेनापुर नगर का एक गृहस्थ। यह बडा दानी था। दान के प्रभाव से मरकर यह अन्द्रकपुर में भद्रनामक गृहस्थ और उसकी पत्नी धारिणी का पुत्र हुआ था। अपने सुसस्कारो के कारण उसका प्रबोध होता गया और सुगतियाँ मिलती गयी। पपु० ३१ २२-३२

उपेन्द्र—(१) कृष्ण। हपु० ५९ १२६

(२) वैशाली नगरी के राजा चेटक तथा उसकी रानी सुभद्रा के दस पुत्रो मे तीसरा पुत्र। मपु० ७५ ३-५

उपेन्द्रसेन—(१) इन्द्रपुर नगर का स्वामी। इसने अपनी पुत्री पद्मावती पुण्डरीक को विवाही थी। मपु० ७५.१७९

(२) रत्नपुर के राजा श्रीषेण का पुत्र। मपु० ६२ ३४१

(३) रत्नपुर नगर के राजा श्रीषेण का पुत्र। यह इन्द्रसेन का भाई था। मपु० ६२.३४०, ३५३

उपोद्घातविधि—उपक्रम का दूसरा नाम। मपु० २ १०३ दे० उपक्रम

उभयश्रेणि—विजयार्ध की उत्तर और दक्षिण श्रेणि। मपु० ३५ ७३

उमा—उज्जयिनी के अतिमुक्तक नामक श्मशान में प्रतिमायोगधारी वर्धमान के धैर्य-परीक्षक महादेव की सहधर्मिणी। मपु० ७४ ३३१-३३७

उरगास्त्र—प्रलयकालीन मेघ के समान शब्दकारी और विषमय अग्नि-कणो से दु सह अस्त्र। इस अस्त्र का प्रयोग लक्ष्मण ने रावण पर किया था। वर्हणास्त्र इसका निवारक अस्त्र होता हैं। पपु० ७४. ११०-१११

उरश्छद—कवच। वैजयन्त द्वार के स्वामी वरतनु देव ने एक कवच भरत को भेंट मे दिया था। पपु० ११ १२-१३

उर्वशी—(१) इन्द्र की अप्सरा। पपु० ७ ३१

(२) रावण की भार्या। पपु० ७७ ९-१२

उर्वी—भरत की भाभी। इसने तथा अन्य भाभियो ने भरत के साथ जलक्रीडा की थी। पपु० ८३ ९३-१००

उलूक—(१) एक देश। यहाँ के राजा को लवणाकुश ने पराजित किया था। पपु० १०१ ८३-८६

(२) कृष्ण तथा जरासन्ध के बीच हुए युद्ध का एक योद्धा। इसने नकुल के साथ युद्ध किया। हपु० ५१ ३०

उल्का—(१) दिव्यास्त्र। यह अस्त्र हनुमान् के पास था। पपु० ५४ ३७

(२) राजगृह नगर निवासी बह्वाश की भार्या, विनोद की जननी। पपु० ८५ ६९

उल्कामुख—एक वन। यह भीलो की निवासभूमि था। अपरनाम उल्कामुखी। वृषभदेव के तीर्थ मे अयोध्यावासी रुद्रदत्त यहाँ के स्वामी कीलक के पास आकर रहा था। मपु० ७० १५६, हपु० १८, १००-१०१

उल्मुक—इस नाम का एक अर्धरथी राजा। यह कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में कृष्ण का सहयोगी था। हपु० ५० ८३

उशीनर—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित इस नाम का एक देश। मपु० १६ १४१-१५३, २९ ४२ लवणाकुश ने इस देश के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२-८६

उशीरवती—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित गान्धार देश की एक नदी। मपु० ४६ १४५-१४६

उशीरावर्त—एक देश। यहाँ चारुदत्त व्यापार के लिए गया था। हपु० २१.७५

उषा—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित श्रुतशोणित नगर के निवासी बाण विद्याधर की कन्या। इसकी सखी चित्रलेखा ने

अनिरुद्ध के साथ इसका विवाह कराया था। हपु० ५५ १६-१७,२४

(२) द्वारावती नगरी के राजा ब्रह्म की दूसरी रानी। मपु० ५८.८४

उष्ट्र—सैनिकों का सामान ढोनेवाला पालतू पशु। मपु० २९ १५३, १६१

उष्ण—(१) मेघ। अवसर्पिणी काल के अन्त में सरस, विरस, तीक्ष्ण और रूक्ष नामक मेघों के क्रमशः सात-सात दिन बरसने के उपरान्त सात दिन तक उष्ण नाम के मेघ वर्षा करते हैं। मपु० ७६ ४५२-४५३

(२) इस नाम का एक परीषह। इसमें मार्ग से च्युत न होने के लिए उष्णता जनित कष्ट को सहन किया जाता है। मपु० ३६ ११६

उष्णवा—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त एक विद्या। मपु० ६२ ३९८

उष्णीष्—श्वेतवर्ण की सिर पर धारण की जानेवाली पगड़ी या साफा। मपु० १० १७८

ऊ

ऊर्जयन्त—सौराष्ट्र देश का एक पर्वत (गिरनार)। यहाँ तीर्थंकर नेमिनाथ के लिए समवसरण की रचना की गयी थी। यहीं उनका निर्वाण हुआ था। इसी पर्वत पर इन्द्र ने लोक में पवित्र सिद्ध-शिला का निर्माण करके उस पर जिनेन्द्र भगवान् के लक्षण वज्र से उत्कीर्ण किये थे। मपु० ३० १०२, ७१ २७५, ७२ २७२-२७४, पपु० २० ३६, ५८, हपु० १ ११५, ३३ १५५, ५९ १२५, ६५ १४ पापु० २२ ७८

ऊर्णनाभ—राजा धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का उन्तीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९६

ऊर्ध्वलोक—लोक के तीन भेदों में एक भेद। यह मृदंग के आकार का है। वैमानिक देव यहीं रहते हैं। यह मध्य लोक के ऊपर स्थित है। यहाँ कल्प तथा कल्पातीत विमानों के त्रेसठ पटल हैं और चौरासी लाख सत्तान्नवें हज़ार तेईस विमान हैं। यहाँ वे जीव जन्मते हैं जो रत्नत्रय धर्म के धारक अर्हन्त और निर्ग्रन्थ गुरुओं के भक्त और जितेन्द्रिय तथा सदाचारी होते हैं। पपु० १०५ १६६, हपु० ४ ६, वीवच० ११ १०४-१०८ चित्रा पृथिवी से डेढ़ रज्जु की ऊँचाई पर जहाँ दूसरा ऐशान स्वर्ग समाप्त होता है वहाँ इस लोक का विस्तार दो रज्जु पूर्ण और एक रज्जु के सात भागों में से पाँच भाग प्रमाण है। उसके ऊपर डेढ़ रज्जु और आगे जहाँ माहेन्द्र स्वर्ग समाप्त होता है वहाँ इस लोक का विस्तार चार रज्जु और एक रज्जु के सात भागों में से तीन भाग प्रमाण है। इसके आगे आधी रज्जु और चलने पर ब्रह्मोत्तर स्वर्ग समाप्त होता है। वहाँ इस लोक का विस्तार पाँच रज्जु है। उसके ऊपर आधी रज्जु और चलने पर कापिष्ठ स्वर्ग समाप्त होता है। वहाँ इस लोक का विस्तार चार रज्जु और एक रज्जु के सात भागों में से तीन भाग प्रमाण है। उसके आगे आधी रज्जु और चलने पर महाशुक्र स्वर्ग समाप्त होता है। वहाँ इस लोक का विस्तार तीन रज्जु और एक रज्जु के सात भागों में से छः भाग प्रमाण है। इसके ऊपर आधी रज्जु और चलने पर सहस्रार स्वर्ग का अन्त आता है। वहाँ इस लोक का विस्तार तीन रज्जु और एक रज्जु के सात भागों में से पाँच भाग प्रमाण है। इसके ऊपर आधी रज्जु और आगे अच्युत स्वर्ग समाप्त होता है। वहाँ इस लोक का विस्तार दो रज्जु और एक रज्जु के सात भागों में से एक भाग प्रमाण है। इसके आगे जहाँ इस लोक का अन्त होता है वहाँ इसका विस्तार एक रज्जु प्रमाण है। हपु० ४ २१-२८

ऊर्ध्वव्यतिक्रम—दिग्व्रत का तीसरा अतिचार-लोभवश ऊपर की सीमा का उल्लंघन करना। हपु० ५८ १७७

ऊर्मिमान्—अन्धकवृष्णि के पुत्र स्तिमितसागर का ज्येष्ठ पुत्र। यह वसुमान्, वीर और पातालस्थिर का अग्रज था। हपु० ४८ ४६

ऊर्मिमालिनी—विदेह क्षेत्र में स्थित गन्धिल देश की पश्चिम दिशा में प्रवाहित विभंगा नदी। यह नीलाचल पर्वत से निकलकर सीतोदा नदी में मिली है। हपु० ४ ५२, ६३ २०७, ५ २४१-२४२

ऊह—(१) चौरासी लाख ऊहांग प्रमाण काल। हपु० ७ २९

(२) तर्क के द्वारा पदार्थ के स्वरूप को जानना। यह श्रोता के आठ गुणों में एक गुण है। मपु० १ १४६

ऊहा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरत की सेना ने इस नदी को पार किया था। मपु० २९.६२

ऊहांग—चौरासी लाख अमम प्रमाण काल। हपु ७ २९

ऋ

ऋक्षरज—वानरवंशी राजा। अपने नगर अलकारपुर से निकलकर इसने अपनी वंश-परम्परा से चले आये किष्कुनगर को लेने के लिए यम दिक्पाल से युद्ध किया था, जिसमें यह पकड़ा गया था। अन्त में दशानन की सहायता से यम के बन्धन से मुक्त होकर तथा यम को जीतकर इसने किष्कुपुर का वंश क्रमागत शासन प्राप्त किया था। इसकी रानी हरिकान्ता से इसके नल और नील दो पुत्र हुए थे। पपु० ७ ७७, १८ ४४०-४५१, ४९८, ९ १३,

ऋक्षवत्—एक पर्वत। भरत की सेना ने इसे पार किया था। मपु० २९ ६९

ऋजुकूला—जृम्भिक ग्राम के बाहर मनोहर वन के मध्य में बहती हुई नदी। इसके तट पर शालवृक्ष के नीचे तीर्थंकर महावीर ने प्रतिमायोग धारण किया था। केवलज्ञान भी उन्हें यहीं हुआ था। मपु० ७४ ३४८-३५४, हपु० २ ५७, १३ १००-१०१, ६० २५५, पापु० १ ९४-९७

ऋजुमति—(१) चारण ऋद्धिधारी एक मुनि। इन्होंने प्रीतिंकर सेठ को गृहस्थ और मुनिधर्म का स्वरूप समझाया था। मपु० ७६ ३५०-३५४

(२) मनःपर्ययज्ञान का पहला भेद। यह अवधिज्ञान की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म पदार्थ को जानता है। अवधिज्ञान यदि परमाणु को जानता है तो यह उसके अनन्तवें भाग को जान लेता है। गौतम

गणधर ऋजुमति और विपुलमति दोनों प्रकार के मन:पर्ययज्ञान के धारक थे। मपु० २ ६८, हपु० १० १५३

(३) सात नयों में चौथा पर्यायार्थिक नय। यह पदार्थ के विशिष्ट स्वरूप को बताता है। यह नय पदार्थ की भूत-भविष्यत् रूप वक्रपर्याय को छोड़कर वर्तमान रूप सरल पर्याय को ही ग्रहण करता है। हपु० ५८ ४१-४२, ४६

ऋत्विज्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

ऋतु—(१) सौधर्म और ऐशान नामक आरम्भ के दो स्वर्गों का इन्द्रक विमान। इसकी चारो दिशाओं में तिरेसठ विमान हैं। आगे प्रत्येक इन्द्रक में एक-एक विमान कम होता जाता है। मपु० १३ ६७, हपु० ६ ४२-४४

(२) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का एक पटल। हपु० ६ ४२-४४

(३) दो मास का समय। हपु० ७.२१

(४) स्त्री की रज शुद्धि से लेकर पन्द्रह दिन का काल—ऋतुकाल। मपु० ३८ १३४

ऋतुविमान—सौधर्म स्वर्ग का विमान। यही सौधर्मेन्द्र का निवास स्थान है। मपु० १३.६७, ७९

ऋद्धि—योगियों आदि को तपश्चर्या से प्राप्त सात चामत्कारिक विशिष्ट शक्तियाँ। मपु० २ ९, ३६ १४४

ऋद्धीश—सौधर्म और ऐशान स्वर्ग का तेरहवाँ पटल। हपु० ६.४५

ऋषभ—(१) युग के आदि में हुए प्रथम तीर्थंकर। वृषभदेव को इन्द्र द्वारा प्राप्त यह नाम। मपु० ३ १, हपु० ८.१९६, ९ ७३, ये कुलकर नाभिराय और उनकी रानी मरुदेवी के पुत्र थे। अयोध्या इनकी जन्मभूमि तथा राजधानी थी। पपु० ३ ८९-९१, १५९, १६९, १७४, २१९ ये सोलह स्वप्नपूर्वक आषाढ कृष्ण द्वितीया के दिन माँ मरुदेवी के गर्भ में आये थे। पापु २ ११० इनका जन्म चैत्र मास के कृष्ण पक्ष में नवमी के दिन सूर्योदय के समय उत्तराषाढ नक्षत्र में और ब्रह्म नामक महायोग में हुआ था। मपु० १३.२-३ इन्द्र ने सुमेरु पर्वत ले जाकर क्षीरसागर के जल से इनका अभिषेक किया था। मपु० १३ २१३-२१५ इनके जन्म से ही कर्ण सछिद्र थे। मपु० १४ १० ये जन्म से ही मति-श्रुत तथा अवधि इन तीन ज्ञानों से युक्त थे। मपु० १४ १७८ बाल्यावस्था में देव-बालकों के साथ इन्होंने दण्ड क्रीडा एवं वन क्रीडाएँ की थी। मपु० १४ २००, २०७-२०८ ये तप्त स्वर्ण के समान कान्तिधारी स्वेद और मल से तथा त्रिदोष जनित रोगों से रहित, एक हज़ार आठ लक्षणों से सहित, परमौदारिकशरीरी और समचतुरस्रसंस्थान धारी थे। मपु० १५ २-३, ३० ३३ इनके समय में कल्पवृक्ष नष्ट हो गये थे। विशेषता यह थी कि पृथिवी बिना जोते बोये अपने आप उत्पन्न धान्य से युक्त रहती थी। इक्षु ही उस समय का मुख्य भोजन था। पपु० ३ २३१-२३३ यशस्वती और सुनन्दा इनकी दो रानियाँ थीं। इनमें यशस्वती से चरमशरीरी प्रतापी भरत आदि सौ पुत्र तथा ब्राह्मीनामा पुत्री हुई थी। सुनन्दा के बाहुबली और सुन्दरी उत्पन्न हुए थे। मपु० १६ १-७ पुत्रियों में ब्राह्मी को लिपिज्ञान तथा सुन्दरी को इन्होंने अंक ज्ञान में निपुण बनाया था। मपु० १६ १०८ प्रजा के निवेदन पर प्रजा को सर्वप्रथम इन्होंने ही असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन छ आजीविका के उपायों का उपदेश दिया था। मपु० १६ १७९ सर्वप्रथम इन्होंने समझाया था कि वृक्षों से भोज्य सामग्री प्राप्त की जा सकती है। भोज्य और अभोज्य पदार्थों का भेद करते हुए इन्होंने कहा था कि आम, नारियल, नीबू, जामुन, राजादन (चिरौंजी), खजूर, पनस, केला, बिजौरा, महुआ, नारंग, सुपारी, तिन्दुक, कैथ, बेर, चिचणी (इमली), भिलमा, चारोली, तथा बेलों में द्राक्षा, कुष्माण्डी, ककड़ी आदि भोज्य हैं। अन्य वल्लियाँ (बेलें) अभोज्य हैं। व्रीहि, शालि, मूँग, चौलाई, उड़द, गेहूँ, सरसों, इलायची, तिल, श्यामक, कोद्रव, मसूर, चना, जौ, धान, त्रिपुटक, तुअर, वनमूँग, नीवार आदि इन्होंने खाने योग्य बताये थे। बर्तन बनाने और भोजन पकाने की विधि भी इन्होंने बतायी थी। मपु० १६ १७९, पापु० २ १४३-१५४, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन तीन वर्णों की स्थापना भी इन्हीं ने ही की थी। आषाढ मास के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन इन्होंने कृतयुग का आरम्भ किया था इसीलिए ये प्रजापति कहलाये। मपु० १६ १९० इनकी शारीरिक ऊँचाई पाँच सौ धनुष तथा आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व थी। पपु० २० ११२, ११८ बीस लाख वर्ष पूर्व का समय इन्होंने कुमारावस्था में व्यतीत किया था। मपु० १६ १२९ तिरेसठ लाख पूर्व काल तक राज्य करने के उपरान्त नृत्य करते-करते नीलांजना नाम की अप्सरा के विलीन हो जाने पर इनको संसार से वैराग्य उत्पन्न हुआ था। मपु० १६ २६८, १७ ६-११ भरत का राज्याभिषेक कर तथा बाहुबलि को युवराज पद देकर ये सिद्धार्थक वन गये थे। मपु० १७ ७२-७७, १८१ वहाँ इन्होंने पूर्वाभिमुख होकर पद्मासन मुद्रा में पंचमुष्टि केशलोंच किया और चैत्र मास के कृष्ण पक्ष की नवमी के दिन अपराह्ण काल में उत्तराषाढ नक्षत्र में दीक्षा धारण की थी। स्वामि-भक्ति से प्रेरित होकर चार हज़ार अन्य राजा भी इनके साथ दीक्षित हुए थे। मपु० १७ २००-२०३, २१२-२१४ ये छ मास तक निश्चल कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यानस्थ रहे। पपु० ३ २८६-२९२ आहार-विधि जाननेवालों के अभाव में एक वर्ष तक इन्हें आहार का अन्तराय रहा। एक वर्ष पश्चात् राजा श्रेयांस के यहाँ इक्षुरस द्वारा इनकी प्रथम पारणा हुई थी। मपु० २० २८, १००, पपु० ४ ६-१६ ये मेरु के समान अचल प्रतिमायोग में एक हज़ार वर्ष तक खड़े रहे। इनकी भुजाएँ नीचे की ओर लटकती रहीं, केश बढ़कर जटाएँ हो गयी थीं। पपु० ११ २८९ पुरिमताल नगर के समीप शकट नामक उद्यान में वटवृक्ष के नीचे एक शिला पर इन्होंने चित्त की एकाग्रता धारण की थी। मपु० २० २१८-२२० इन्हें फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी के दिन उत्तराषाढ नक्षत्र में केवलज्ञान और समवसरण की विभूति प्राप्त हुई थी। मपु० २० २६७-२६८ वटवृक्ष के नीचे इन्हें केवलज्ञान हुआ था अत आज भी लोग वटवृक्ष को पूजते हैं। पपु० ११ २९२-२९३ इन्द्र ने एक हज़ार आठ नामों से इनका गुणगान किया था। मपु० २५ ९-२१७ भरत की आधीनता स्वीकार करने के लिए कहे जाने पर बाहुबलि को छोड़कर

शेष सभी भाई इनके पास आये और इनसे दीक्षित हो गये थे। मपु० ३४ ९७,११४-१२५ मरीचि को छोडकर शेष नृप जो इनके साथ दीक्षित हो गये थे सम्यक्चारित्र का पालन नहीं कर सके। उन्होंने दिगम्बरी साधना का मार्ग छोड़ दिया। उनमें से भी बहुत से साधु इनसे बन्ध और मोक्ष का स्वरूप सुनकर पुनः निर्ग्रन्थ हो गये थे। वीवच० २ ९६-९७ सघस्थ मुनियों में चार हजार सात सौ पचास तो पूर्वधर थे, इतने ही श्रुत के शिक्षक थे। नौ हजार अवधिज्ञानी, बीस हजार केवलज्ञानी, बीस हजार छ सौ विक्रिया-ऋद्धि के धारी, बीस हजार सात सौ विपुलमति-मन पर्ययज्ञानी और इतने ही असख्यात गुणों के धारक मुनि थे। हपु० १२ ७१-७७ इनके सघ में चौरासी गणधर थे—१ वृषभसेन २ कुम्भ ३. दृढरथ ४ शत्रुदमन ५ देवशर्मा ६ धनदेव ७ नन्दन ८ सोमदत्त ९. सुरदत्त १० वायुशर्मा ११. सुबाहु १२ देवाग्नि १३ अग्निदेव १४ अग्निभूति १५ तेजस्वी १६ अग्निमित्र १७ हलधर १८ महीधर १९ माहेन्द्र २० वसुदेव २१ वसुन्धरा २२ अचल २३ मेरु २४ भूति २५ सर्वसह २६ यज्ञ २७ सर्वगुप्त २८ सर्वदेव २९ सर्वप्रिय ३० विजय ३१ विजयगुप्त ३२. विजयमित्र ३३ विजयश्री ३४ पराख्य ३५ अपराजित ३६ वसुमित्र ३७ वसुसेन ३८ साधुसेन ३९ सत्यदेव ४० सत्यवेद ४१ सर्वगुप्त ४२ मित्र ४३ सत्यवान् ४४ विनीत ४५ सवर ४६. ऋषिगुप्त ४७ ऋषिदत्त ४८. यज्ञदेव ४९ यज्ञगुप्त ५० यज्ञमित्र ५१ यज्ञदत्त ५२ स्वायभुव ५३ भागदत्त ५४ भागफल्गु ५५ गुप्त ५६ गुप्तफल्गु ५७ मित्रफल्गु ५८ प्रजापति ५९ सत्यवश ६० वरुण ६१ धनवाहित ६२ महेन्द्रदत्त ६३ तेजोराशि ६४ महारथ ६५ विजयश्रुति ६६ महाबल ६७ सुविशाल ६८ वज्र ६९ वैर ७० चन्द्रचूड ७१ मेघेश्वर ७२ कच्छ ७३ महाकच्छ ७४ सुकच्छ ७५ अतिबल ७६ भद्राबलि ७७ नमि ७८ विनमि ७९ भद्रबल ८० नन्दि ८१ महानुभाव ८२ नन्दिमित्र ८३ कामदेव और ८४ अनुपम। पपु० ४ ५७ हपु० १२ ५३-७० सघ में शुद्धात्मतत्त्व को जाननेवाली पचास हजार आर्यिकाएँ, पाँच लाख श्राविकाएँ और तीन लाख श्रावक थे। एक लाख पूर्व वर्ष तक इन्होंने अनेक भव्य जीवों को ससार-सागर से पार होने का उपदेश करते हुए पृथिवी पर विहार किया था। इसके पश्चात् ये कैलाश पर्वत पर ध्यानारूढ़ हुए और एक हजार राजाओं के साथ योग-निरोध कर, देवों से पूजित होकर इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया था। हपु० १२ ७८-८१, पपु० ४ १३० पूर्वभवों में नौवें पूर्वभव में ये अलका नगरी के राजा अतिबल के महाबल नाम के पुत्र थे। मपु० ४ १३३ आठवें पूर्वभव में ये ऐशान स्वर्ग में ललिताग नामक देव हुए। मपु० ५ २५३ सातवें पूर्वभव में ये राजा वज्रबाहु और उनकी रानी वसुन्धरा के वज्रजघ नामक पुत्र हुए। मपु० ६ २६-२९ छठे पूर्वभव में ये उत्तरकुरु भोगभूमि में उत्पन्न हुए थे। मपु० ९ ३३ पाँचवें पूर्वभव में ये ऐशान स्वर्ग में श्रीधर नाम के ऋद्धिधारी देव हुए थे। मपु० ९ १८५ चौथे पूर्वभव में सुसीम नगर में सुदृष्टि और उनकी रानी सुन्दरनन्दा के सुविधि नामक पुत्र हुए। मपु० १० १२१-१२२ तीसरे पूर्वभव में ये अच्युतेन्द्र हुए। मपु० १० १७० दूसरे पूर्वभव में ये राजा वज्रसेन और उनकी रानी श्रीकान्ता के वज्रनाभि नामक पुत्र हुए। मपु० ११. ९ प्रथम पूर्वभव में ये सर्वार्थसिद्धि स्वर्ग में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ११.१११

ऋषि—ऋद्धिधारी मुनि। ये परिग्रह रहित होकर तप करते हुए जीव रक्षा में रत रहते हैं। मपु० २.२७-२८, २१ २२०, पपु० ११ ५८, ११९ ६१, हपु० ३ ६१

ऋषिगिरि—राजगृह नगर के पाँच पर्वतों में एक पर्वत। यह पूर्व दिशा में स्थित है और आकार में चौकोर है। हपु० ३ ५१-५३

ऋषिगुप्त—वृषभदेव का छियालीसवा गणधर। हपु० १२ ६३

ऋषिदत्त—वृषभदेव का सैंतालीसवा गणधर। हपु० १२ ६३

ऋषिदत्ता—चन्दनवन नगर के राजा अमोघदर्शन तथा रानी चारुमति की कन्या, चारुचन्द्र की बहिन। इसने एक चारणऋद्धिधारी मुनि से अणुव्रत धारण किये थे। श्रावस्ती के राजा शान्तायुत्र के पुत्र से इसका विवाह हुआ। इसके एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था किन्तु प्रसूति के बाद ही इसका मरण हो गया। सम्यग्दर्शन के प्रभाव से यह ज्वलनप्रभवल्लभा नाम की नागकुमारी हुई। हपु० २९ २४-४७

ऋषिदास—लक्ष्मण का जीव। यह विजयावती नगरी के निवासी गृहस्थ सुनन्द और उनकी भार्या रोहिणी का पुत्र था तथा अर्हद्दास का अनुज था। पपु० १२३ ११२-११५

ऋषिमन्त्र—तत्त्वज्ञ मुनियों द्वारा मान्य इस नाम से अभिहित मत्र—अर्हज्जाताय नम, निर्ग्रन्थाय नम, वीतरागाय नम, महाव्रताय नम, त्रिगुप्ताय नम., महायोगाय नम, विविधयोगाय नम, विविधर्द्धये नम, अगधराय नम', पूर्वधराय नम, गणधराय नम, परमर्षिभ्यो नमो नम, अनुपमजाताय नमो नम, सम्यग्दृटे सम्यग्दृष्टे भूपते भूपते नगरपते नगरपते, कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा, सेवाफल पट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु। मपु० ४०. ३८-४७

ऋषिवश—वृषभदेव के समय के चार महावशो (इक्ष्वाकु, ऋषि, विद्याधर और हरिवश) में एक वश। इसी वश को सोमवश अपरनाम चन्द्रवश कहा है। इसकी उत्पत्ति इक्ष्वाकु वशी राजा बाहुबलि के पुत्र सोमयश से हुई थी। पपु० ५ १-२, ११-१३, हपु० १३ १६ दे० सोमवश

ऋष्यमूक—एक पर्वत। चेदिराष्ट्र को जीतने के बाद पपा सरोवर को पार करके भरतेश की सेना इस पर्वत पर पहुँची थी। मपु० २९ ५६

ए

एक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

एककर्ण—लम्पाक देश का राजा। लवणाकुश ने इसे पराजित किया था। पपु० १०१ ७३-७४

एककल्याण—एक व्रत। इसकी साधना के लिए पहले दिन नीरस आहार लिया जाता है। दूसरे दिन के पिछले भाग में आधा आहार लिया

जाता है। तीसरे दिन एकासन किया जाता है—इसमे भोजन मे प्रथम बार जो भोजन सामने आवे उसे ही ग्रहण किया जाता है। चौथे दिन उपवास और पाँचवें दिन आचाम्ल भोजन (इमली के साथ भात आहार में लेना) किया जाता है। हपु० ३४ ११०

एकचर्या—मुनियो का एक व्रत—एकाकी विहार करना। मपु० ११ ६६

एकचूड—विद्याधर दृढरथ का वशज, उडुपालन विद्याधर का पुत्र और द्विचूड का पिता। मपु० ५ ४७-५६

एकत्वभावना—बारह भावनाओ मे एक भावना। इस भावना मे ज्ञान, दर्शन स्वरूपी आत्मा अकेला है, वह अकेला ही सुख-दु ख का भोक्ता है, तपश्चरण और रत्नत्रय आदि से वह मोक्ष प्राप्त कर सकता है, ऐसा अदीन मन से चिन्तन किया जाता है। मपु० ११ १०६, ३८. १८४, पपु० १४ २३७-२३९, पापु० २५ ९०-९२, वीवच० ११ ३५-४३

एकत्ववितर्कवीचार—शुक्लध्यान के दो भेदो मे दूसरा भेद। जिस ध्यान मे अर्थ, व्यजन और योगो का सक्रमण (परिवर्तन) नही होता वह एकत्ववितर्कविचार नाम का शुक्लध्यान होता है। हपु० ५६ ५४, ५८, ६४, ६५ यह ध्यान मोहनीय कर्म के नष्ट होने पर, तीन योगो में से किसी एक योग मे स्थिर रहनेवाले और पूर्वों के ज्ञाता मुनियो के उनकी उपशम या क्षपक श्रेणियो मे यथायोग्य रूप से होता है। इससे ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मों का विनाश होता है। फलत कैवल्य की प्राप्ति होती है। मपु० २१.८७, १८४-१८६

एकदण्डधर—तीर्थंकर वृषभदेव के साथ दीक्षित हुए किन्तु परीषह सहने में असमर्थ, वनदेवता के भय से भयभीत, पथभ्रष्ट, कन्दमूल-फल भोजी और वन-उटज निवासी एकदण्डधारी परिव्राजक। मपु० १८ ५१-६०

एकद्वित्रिलघुक्रिया—छन्द शास्त्र के छ प्रत्ययो मे एक प्रत्यय (प्रकरण)। मपु० १६ ११४

एकदशाङ्गधारी—ग्यारह अगधारी पाँच आचार्य—नक्षत्र, यश-पाल, पाण्डु, ध्रुवसेन और कस। हपु० १ ६४

एकपति—स्त्रियो का एक व्रत। इससे वे अपने पति में ही अनुरागी रहती है। कुलीन और सुसस्कृत नारियाँ सहज भाव से इस व्रत का पालन करती है। मपु० ६२ ४१

एकपर्वा—अनेक प्रकार की शक्तियो से युक्त एक औषधि-विद्या। यह विद्या धरणेन्द्र ने नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ६७-६९

एकभक्त—मुनियो का एक मूल गुण—दिन में एक ही वार आहार ग्रहण करना। मपु० १८ ७२, हपु० २ १२८

एकभार्यत्व—एक पत्नीव्रत। एक ही पत्नी रखने का व्रती पुरुष। मपु० ६२ ४१

एकलव्य—वनवासी भील, गुरु द्रोणाचार्य का परोक्ष शिष्य। इसने अपने परोक्ष गुरु से शब्द वेधि-विद्या में निपुणता प्राप्त की थी। इसने गुरु के साक्षात् दर्शन नही किये थे, एक लौहस्तूप में ही उसने गुरु द्रोणाचार्य की प्रतिमा अकित कर ली थी। वह इसी स्तूप की वन्दना करके शब्दवेधिनी धनुर्विद्या प्राप्त कर सका था। इसने अर्जुन के साथ आये हुए गुरु के दर्शन कर गुरु की आज्ञानुसार अपने दाएँ हाथ का अगूठा अर्पण करते हुए अपनी गुरुभक्ति का परिचय भी दिया था। पापु० १० २०५, २१६, २२३, २२४, २६२-२६७

एकविद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

एकशैल—पूर्व विदेह का वक्षारगिरि। यह नील पर्वत और सीता नदी के मध्य में स्थित है। नदी के तट पर इसकी ऊँचाई पाँच सौ योजन है इसके शिखर पर चार कूट हैं। उनमे कुलाचलो के समीपवर्ती कूटों पर जिनेन्द्र भगवान् के चैत्यालय हैं और बीच के कूटो पर व्यन्तर देवो के क्रीडागृह बने हुए हैं। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२८, २३३-२३५

एकान्तमिथ्यात्व—मिथ्यात्व के पाँच भेदो में एक भेद। द्रव्य और पर्याय रूप पदार्थ में या मोक्ष के साधनभूत अगो में किसी एक या दो अगो को जानकर यह समझ लेना कि 'इतना मात्र ही उसका स्वरूप है, इससे अधिक कुछ नही' यही एकान्त मिथ्यात्व है। मपु० ६२ २९६-३००

एकालापक—मनोरजन का एक प्रकार। दो प्रश्नो का एक ही उत्तर माँगना। देवियाँ मरुदेवी का मनोरजन इसी प्रकार से करती रहती थी। मपु० १९ २२०-२२१

एकावली—(१) निर्मल चिकने मोतियो से गुम्फित हार। इस हार में एक ही लड होती है। बीच मे एक बडा मणि लगाता है। इसे मणि-मध्यमा यष्टि भी कहा है। मपु० १५ ८२, १६ ५०

(२) एक व्रत। इसमें एक उपवास और एक पारणा के क्रम से चौबीस उपवास और चौबीस ही पारणाएँ की जाती हैं। इस प्रकार यह व्रत अडतालीस दिन में समाप्त होता है। अखण्डसुख की प्राप्ति इसका फल है। हपु० ३४ ६७

एणाजिन—मृग-चर्म। मपु० ३९ २८

एणीपुत्र—श्रावस्ती के राजा शीलायुध और उनकी रानी ऋषिदत्ता का पुत्र। इसकी माँ इसे जन्म देकर ही मर गयी थी। प्रियगुसुन्दरी इसी की पुत्री थी। हपु० २८ ५-६, २९ ३४-५८

एर—काम्पिल्य नगर के निवासी ब्राह्मण शिखी और उसकी भार्या इषु का पुत्र। राजगृही के राजा की पुत्री से इसका विवाह हुआ था और यह राजा दशरथ के पुत्रो का गुरु था। पपु० २५ ४१-५८

एरा—हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की रानी पचम चक्री और सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ की जननी। हपु० ४५ ६, १८

एला—इलायची का वृक्ष। मपु० २९ १००

एवम्भूतनय—एक नय। जो पदार्थ जिस क्षण में जैसी क्रिया करता है, उस क्षण में उसको उसी रूप मे कहना, जैसे जिस समय इन्द्र ऐश्वर्य का अनुभव करता है उसी समय उसे इन्द्र कहना अन्य समय में नही। हपु० ५८ ४१-४९

एषणा—एक समिति। शरीर की स्थिरता के लिए पिण्डशुद्धिपूर्वक मुनि का छियालीस दोषो से रहित आहार ग्रहण करना। छियालीस दोषो में सोलह उद्गम दोष, सोलह उत्पादन दोष, दस एषणा दोष और चार दानी दोष होते हैं। पपु० १४ १०८, हपु० २ १२४, ९ १८७-१८८, पापु० ९ ९३

एषणासमितिव्रत—एक व्रत। यह नौ कोटियो से लगनेवाले छियालीस दोषो को नष्ट करने के लिए किया जाता है। इसमें चार सौ चौदह उपवास तथा उतनी ही पारणाएँ की जाती है। हपु० ३४ १०८

ऐ

ऐतिह्य—इतिहास। मपु० १ २५

ऐन्द्र—इस नाम का एक रथ। राम से युद्ध करने के लिए रावण बहुरूपिणी विद्या से निर्मित और ऐरावत हाथी के समान मन्दोन्मत्त हाथियो से जुते हुए इस रथ पर आरूढ़ हुआ था। पपु० ७४ ५-१०

ऐन्द्री—भरत की पच्चीस से अधिक भाभियो मे एक। पपु० ८३ ९४

ऐरा—(१) गान्धार देश में गान्धार नगर के राजा अजितजय और उसकी रानी अजिता से उत्पन्न राज-पुत्री। इसका विवाह हस्तिनापुर के राजकुमार विश्वसेन से हुआ था। अपरनाम ऐरावती। मपु० ६३ ३८२-४०६, पपु० ५ १०३, २०, ५२

(२) भोगपुर के राजा पद्मनाथ की रानी, चक्रवर्ती हरिषेण की जननी। मपु० ६७ ६३-६४

ऐरावण—(१) नील पर्वत से साढे पाँच सौ योजन दूरी की नदी के मध्य स्थित एक ह्रद। इसकी दक्षिणोत्तर लम्बाई पद्मह्रद के समान है। हपु० ५ १९४

(२) ऐरावत हाथी का दूसरा नाम। पापु० २ ११५

ऐरावत—(१) जम्बूद्वीप के विदेह आदि क्षेत्रों में सातवाँ क्षेत्र। यह कर्मभूमि जम्बूद्वीप की उत्तरदिशा में शिखरी कुलाचल और लवणसमुद्र के बीच मे स्थित है। मपु० ४ ४९, ६९ ७४, पपु० ३ ४५-४७, १०५ १५९-१६०, हपु० ५ १४

(२) सौधर्मेन्द्र का हाथी। यह श्वेत, अष्टदन्तधारी, आकाशगामी और महाशक्तिशाली है। इसके बत्तीस मुँह हैं, प्रत्येक मुंह में आठदाँत' प्रत्येक दाँत पर एक सरोवर, प्रत्येक सरोवर मे एक कमलिनी, प्रत्येक कमलिनी में बत्तीस कमल, प्रत्येक कमल में बत्तीस दल और प्रत्येक दल पर अप्सरा नृत्य करती है। सौधर्मेन्द्र इसी हाथी पर जिन शिशु को बिठाकर अभिषेकार्थ मेरु पर ले जाता है। मपु० २२ ३२-५६, पपु० ७ २६-२७, हपु० २ ३२-४०, ३८ २१, ४३, वीवच० ९ ९०-९१, १४ २१-२४

ऐरावतकूट—शिखरी कुलाचल का दसवाँ कूट। हपु० ५ १०७

ऐरावती—(१) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के कुरुजागल देश में हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की रानी। इसका दूसरा नाम ऐरा था। पापु० ५ १०३

(२) सम्भूतरमण वन में बहनेवाली नदी। इसी नदी के किनारे मनोवेग विद्याधर हरी हुई चन्दना को छोड गया था। मपु० ६२ ३७९-३८०, ७५ ४३-४४, हपु० २१ १०२, २७ ११९

(३) इन्द्र की अप्सराओ द्वारा किये गये नृत्य में ऐरावत के विद्युन्मय रूप का प्रदर्शन। मपु० १४ १३४

ऐलविल—कुबेर। मपु० ४८ २०

ऐलेय—राजा दक्ष और उसकी रानी इला का पुत्र, मनोहरी का भाई। दक्ष ने इसकी बहिन मनोहरी को अपनी पत्नी बना लिया था। इससे असतुष्ट इसकी माता इसे लेकर दुर्गम स्थान में चली गयी थी। वहाँ उसने इलावर्द्धन नगर बसाकर इसे वहाँ का राजा बनाया था। राजा बनने पर इसने अग देश में ताम्रलिप्ति नगरी तथा नर्मदा नदी के तट पर माहिष्मती नगरी बसायी थी। अन्त में यह अपने पुत्र कुणिम को राज्य सौपकर साधु हो गया था। हपु० १७ २-२२

ऐशान—(१) ऊर्ध्वलोक में स्थित सुख सामग्री सम्पन्न द्वितीय कल्प (स्वर्ग)। यहाँ जीव उपपाद शय्या पर जन्मते है, और वैक्रियिक शरीरी होते हैं। सौधर्म और इस स्वर्ग के इकतीस पटल होते हैं। पटलों के नामो के लिए देखो सौधर्म मपु० ५ २५३-२५४, पपु० १०५ १६६-१६७, हपु० ४ १४, ६ ३६

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित साठ नगरो में एक नगर। हपु० २२ ८८

(३) चण्डवेग द्वारा वसुदेव को प्रदत्त एक विद्यास्त्र। हपु० २५ ४८

ऐशानी—एक महाविद्या। यह विद्या रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३३०-३३२

ऐशानेन्द्र—शुभ्र छत्रधारी ईशान स्वर्ग का इन्द्र। मपु० २२ १८, १३ ३१, हपु० २ ३८

ओ

ओज—काव्य के माधुर्य, ओज और प्रसाद इन तीन गुणो में एक गुण। यह सहृदयो के मन में उत्साह बढ़ाता है। मपु० ३४ ३२

ओलिक—मध्य आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश ने इस देश के राजा को पराजित किया था। मपु० २९ ८०

ओष्ठिल—अम्बष्ठ देश का स्वामी। यह भरत के विरुद्ध अतिवीर्य की सहायता के लिए ससैन्य आया था। पपु० ३७ २३

औ

औडव—सगीत की चौदह मूर्च्छनाओ के छप्पन स्वरो में पाँच स्वरो से उत्पन्न एक विशिष्ट स्वर। हपु० १९ १६९

औण्ड्र—इस नाम का एक देश। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने यहाँ के शासको को परास्त किया था। मपु० २९ ४१, ९३

औदयिक—जीव के पाँच भावो मे कर्मोदय से उत्पन्न एक भाव। इसका जब तक उदय रहता है तब तक कर्म रहते हैं और कर्मों के कारण आत्मा को ससार में भ्रमण करना पडता है। मपु० ५४ १५०

औदारिक—शरीर के पाँच भेदो में प्रथम भेद असख्यात प्रदेशी स्थूल शरीर। पपु० १०५ १५३

औदासीन्य—मोह के अभाव (उपशम या क्षय) से उत्पन्न सुख। मपु० ५६ ४२

औदुम्बरी—भरतेश की सेना ने इस नदी के तट पर विश्राम किया था। मपु० २९ ५४

औंद्र—दक्षिण भारत का एक देश। दिग्विजय के समय भरतेश ने इस देश के राजा को पराजित किया था। मपु० २८ ७९

औपशमिक चारित्र—मोहनीय कर्म के पूर्णत उपशमन से प्राप्त चारित्र। इसकी उपलब्धि से मोक्ष मिलता है। मपु० ११ ९१, हपु० ३ १४५

औपशमिक सम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन का एक भेद। यह दर्शनमोहनीय कर्म के उपशमन से उत्पन्न होता है। इससे जीव आदि पदार्थों का यथार्थ स्वरूप विदित होता है। मपु० ९ ११७, हपु० ३ १४३-१४४

औषधि ऋद्धि—तप से प्राप्त एक ऋद्धि। यह अनेक प्रकार की होती है। बाहुबली को उनके घोर तप से यह ऋद्धि प्राप्त हुई थी। मपु० ३६ १५३

औषधी—विदेहस्थ पुष्कला देश की राजधानी। मपु० ६३.२१२, हपु० ५ २५७

क

कंचुकी—वे वृद्ध जो अन्त पुर की स्त्रियों के मध्य रहकर आदर से उनकी अग-रक्षा करते हैं। मपु० ८ १२८

कजसंजात—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८

कंजा—एक नदी। भरतेश की सेना ने अपनी विजय-यात्रा में इस नदी पर पडाव डाला था। मपु० २९ ६२

कंदुकक्रीडा—प्राचीन भारत की प्रमुख क्रीडा। जयकुमार ने अपने अतिथियो के सम्मान में इस क्रीडा का आयोजन किया था। मपु० ४५ १८७

कंपनपुर—विद्याधरो की निवासभूमि। यहाँ का राजा रावण का हितैषी था। पपु० ५५ ८४-८८

कंस—मथुरा नगरी के राजा उग्रसेन और उसकी रानी पद्मावती का पुत्र। उत्पन्न होने पर इसकी क्रूरता के कारण कास्य से निर्मित पेटी मे इसे रखकर यमुना में बहा दिया था। कौशाम्बी में किसी कलालिन को यह प्राप्त हुआ। उसने इसका पालन किया किन्तु दुराचारी होने से यह उसके द्वारा भी निष्कासित कर दिया गया। इसके पश्चात् यह शौर्यपुर नरेश वसुदेव से धनुर्विद्या सीखकर उनका सेवक हो गया था। यह जरासन्ध के शत्रु को बाँधकर ले आया था इसलिए जरासन्ध ने अपनी पुत्री जीवद्यशा का इससे विवाह कर दिया था और इसे मथुरा का राजा भी बना दिया था। पूर्व वैरवश इसने अपने पिता उग्रसेन को कैद कर लिया तथा अपनी बहन देवकी का विवाह वसुदेव के साथ कर दिया। देवकी के पुत्र को अपना हन्ता जानकर इसने अपने महल में ही उसकी प्रसूति की व्यवस्था करायी थी। इसे देवकी के सभी पुत्र मृत हुए बताये गये थे। अन्त में देवकी के ही पुत्र कृष्ण द्वारा यह मारा गया था। मपु० ७० ३४१-३८७, ४९४, हपु० १ ८७, ३३ २-३६, ३५ ७, ३६ ४५, ५० १४, पापु० ११ ४२-५९

कंसाचार्य—धर्मप्रवर्तक ग्यारह अग धारियो मे पाँचवें आचार्य। इनको कसार्य नाम से भी अभिहित किया गया है। मपु० २ १४१-१४६, ७६ ५२५, हपु० १ ६४, वीवच० १ ४१-४९

कंसारि—कृष्ण। मपु० ७१ ४१३

क—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

ककुत्थ—इक्ष्वाकुवशी पुजस्थल का पुत्र। यह राजा रघु का पिता था। पपु० २२ १५८-१५९

ककूश—नागप्रिय पर्वत के आगे का देश (रेवा प्रदेश का मध्य भाग)। यह देश हाथियो के लिए प्रसिद्ध था। मपु० २९ ५७

कर्कोटक—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३६

(२) राजा वरण का तृतीय पुत्र। वासुकि और धनजय इसके अग्रज तथा शतमुख और विश्वरूप अनुज थे। हपु० ४८ ५०

(३) कुम्भ कण्टक द्वीप का पर्वत। यहाँ चारुदत्त आया था। हपु० २१ १२३

कक्ष—एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ७९-८६

कच्छ—(१) वृषभदेव की महारानी यशस्वती का भाई। मपु० १५ ७०

(२) आर्यखण्ड का एक देश (काठियावाड)। मपु० १६ १४१-१४३, २९ ४१, १५३

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र का एक देश। मपु० ४९ २, ६३ २०८

(४) वृषभदेव का बहत्तरवें गणधर। मपु० १२ ६८, ४३ ६५

(५) तीर्थंकर वृषभदेव के साथ दीक्षित एक मुनि। यह क्षुधा आदि परीषहो से त्रस्त होकर छ मास में ही भ्रष्ट हो गया था। हपु० ९ १०४

कच्छकावती—पश्चिम विदेह क्षेत्र में सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य प्रदक्षिणा रूप से स्थित देश। यह छ भागो मे विभाजित था और अरिष्टपुरी इस देश की राजधानी थी। अपरनाम कच्छ। मपु० ६३ २०८-२१३, हपु० ५ २४५, ६० ७०

कच्छा—दे० कच्छकावती

कच्छाकूट—माल्यवान् पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २१९

कज्जलप्रभा—सुमेरु पर्वत की पश्चिम-दक्षिण (नैऋत्य) दिशा में स्थित वापी। अपरनाम कज्जला। हपु० ५ ३४३

कज्जला—दे० कज्जलप्रभा

कटक—कर का आभूषण (कडा)। नर और नारियाँ दोनो इसे पहिनते थे। मपु० ३ २७, ७ २३५, १४ १२, १५.१९९, १६ २३६, पपु० ३ १९३

कटप्रू—भविष्यत् कालीन पाँचवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७२

कटाक्षनृत्य—नृत्य करते समय कटाक्षो के द्वारा हाव और भाव का प्रदर्शन। तीर्थंकर के जन्मोत्सव पर इन्द्र द्वारा किये जानेवाले आनन्द नाटक के अवसर पर देवियाँ यह नृत्य करती हैं। मपु० १४ १४५

कटिसूत्र—कटि प्रदेश का एक आभूषण। मपु० ३ १५९, ११ ४४, १६ १९, पपु० ३ १९४

कटुकर्मप्रकृति—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय ये चार घातिकर्म। ममु० २० २६१-२६४

कणशीकर—अस्सी दिन तक की मेघवृष्टि। मपु० ५८ २७

कण्ठक-कण्ठक—गले का आभूषण। हपु० ६२.८

कण्ठमालिका—गले का आभूषण। यह स्वर्ण और रत्नों से बनती थी। इसे स्त्री और पुरुष दोनों पहनते थे। मपु० ६ ८

कण्ठाभरण—गले का आभूषण। इसे पुरुष ही पहनते थे। भरतेश के आभूषणों में इसको बताया गया है। मपु० १५ १९३

कथक—कथावाचक। यह राग आदि दोषों से रहित होकर अपने दिव्य वचनों के द्वारा हेय और उपादेय की निर्णायिक त्रेसठ शलाका पुरुषों की कथाएँ कहकर निरपेक्ष भाव से भव्य जीवों का उपकार करता है। यह सदाचारी, प्रतिभासम्पन्न, विषयज्ञ, अध्ययनशील, सहिष्णु और अभिप्राय विज्ञ होता है। मपु० १ १२६-१३४, ७४ ११-१२

कथा—मोक्ष पुरुषार्थ में उपयोगी होने से त्रिवर्ग—धर्म, अर्थ, और काम का कथन करनेवाली साहित्यिक विधा। इसके दो भेद होते हैं—सत्कथा और विकथा। कथा चार प्रकार की होती है—आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, संवेदिनी और निर्वेदिनी। इनमें स्वमत की स्थापना करते समय आक्षेपिणी, मिथ्यामत का खण्डन करते समय विक्षेपिणी, पुण्य-फल, विभूति आदि का वर्णन करते समय संवेदिनी और वैराग्य उत्पादन के समय निर्वेदिनी कथा कथनीय होती है। मपु० १ ११८-१२१, १३५-१३६, पापु० १ ६२-७०

कथागोष्ठी—कथा का आयोजन। इसके द्वारा श्रोताओं को मनोरंजन के साथ सम्यक्चारित्र की ओर आकृष्ट किया जाता था। मपु० १२ १८७

कथापुरुष—त्रेसठ शलाका पुरुष—चौबीस तीर्थंकर, नौ बलभद्र, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण और बारह चक्रवर्ती। मपु० २ १२५

कथाश्रोता—कथा सुनने वाला। कथा श्रोता के गुण—ग्रहण, धारणा, स्मृति, ऊह, अपोह, निर्णीति और शुश्रूषा। श्रोता चौदह प्रकार के होते हैं। मपु० १ १३८-१४८

कदम्ब—(१) रावण का गजरथी योद्धा। पपु० ५७ ५७-५८

(२) तीर्थंकर वासुपूज्य का चैत्यवृक्ष (कैवल्यधाम)। मपु० ५८ ४२

कदम्बमुखी—एक वापी। प्रद्युम्न को इसी वापी से नागपाश की प्राप्ति हुई थी। मपु० ७२ १२१

कदम्बुक—लवणसमुद्र की पश्चिम दिशा में स्थित पाताल-विवर। हपु० ५ ४४२-४४३

कदलीघात—प्राय युद्ध में होनेवाला मनुष्यों का अकाल मरण। मपु० ७१ १०९

कनक—(१) स्वर्ण अर्थ में व्यवहृत शब्द। मपु० ३ ३६

(२) भविष्यत् कालीन प्रथम कुलकर। मपु० ७६ ४६३, हपु० ६० ५५५

(३) धृतराष्ट्र तथा उसकी रानी गान्धारी का पुत्र। पापु० ८ २०५

(४) घृतवर समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५ ६४२

(५) कुण्डलगिरि की पूर्व दिशा का एक कूट। यह महाशिरस् नामक देव की निवासभूमि था। हपु० ५ ६९०

(६) कनकाभ नगर का राजा। कनकश्री इसकी रानी तथा कनकावली इसकी पुत्री थी। पपु० ६ ५६७

(७) एक राजा। इसकी रानी का नाम सन्ध्या, तथा पुत्री का नाम विद्युत्प्रभा था। दशानन इसका जामाता था। पपु० ८ १०५

(८) एक शस्त्र। इससे रथ तोड़े जा सकते थे। पपु० १२ २११, २३४

(९) मृत्तिकावती नगरी का निवासी वणिक्। यह बन्धुदत्त का पिता था। पपु० ४८ ४३

(१०) रावण का व्याघ्ररथी योद्धा। पपु० ५७ ४९-५२

(११) राजा जनक का अनुज। म्लेच्छराज के साथ हुए युद्ध में यह लड़ा था। यह सम्यग्दृष्टि था। मरकर यह आनत स्वर्ग में देव हुआ था। पपु० २७ ५०-५१, १२३ ८०-८१

कनककूट—(१) मानुषोत्तर पर्वत की पश्चिम दिशा का एक कूट। हपु० ५ ६०४

(२) रुचकगिरि का एक कूट। हपु० ५ ७०५

कनककेशी—भूतरमण अटवी में ऐरावती नदी के तट पर रहनेवाले खमाली तापस की स्त्री। यह विभीषण के जीव मृगशृंग की माता थी। हपु० २७ ११९

कनकचित्रा—(१) रुचकगिरि के नित्यालोक कूट में रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७१९

(२) पूर्व विदेहक्षेत्र के रत्नसंचय नगर के राजा क्षेमंकर की रानी और वज्रायुध की जननी। मपु० ६३ ३७-३९

(३) अश्वग्रीव की भार्या। मपु० ६२ ६०

कनकचूल—देवमरण वन का निवासी एक व्यन्तर। मपु० ६३ १८६

कनकतेजस—हेमांगद देश से स्थित राजपुर नगर का निवासी वैश्य। मपु० ७५ ४५०-४५३

कनकद्युति—हेमपुर नगर का राजा, विद्युत्प्रभ का पिता। पपु० १५ ८५

कनकध्वज—(१) भविष्यत् कालीन चतुर्थ कुलकर। मपु० ७६ ४६४, हपु० ६० ५५५

(२) एक विद्वान् परलोभी नृप। दुर्योधन द्वारा घोषित आधे राज्य के लोभ से इसने पाण्डवों को सात दिन में मारने का निश्चय किया था तथा कृत्या नामक विद्या सिद्ध करके इसने उन्हें मारने का प्रयत्न भी किया किन्तु उसी विद्या से यह स्वयं मारा गया। पापु० १७ १५०-१५२, २०९-२१९

कनकपाद—भविष्यत् कालीन इक्कीसवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७४

कनकपुंख—(१) शिवमन्दिर नगर का राजा। इसकी रानी का नाम जयदेवी और उससे उत्पन्न पुत्र का नाम कीर्तिधर था। मपु० ६२. ४८८-४९०

(२) मंगलावती देश में स्थित रत्नकप्रभ नगर का विद्याधर राजा। कनकमाला इसकी पत्नी और कनकोज्ज्वल इसका पुत्र था। मपु० ७४ २२२, वीवच० ४ ७२-७६

कनकपुंगव—भविष्यत् कालीन पाँचवाँ कुलकर । मपु० ७६.४६४, हपु० ६०.५५५

कनकपुंजश्री—विद्याधर नमि की पुत्री, कनकमंजरी की बहिन । हपु० २२.१०८

कनकपुर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी एवं दक्षिणश्रेणी में स्थित इसी नाम के दो नगर । मपु०६३.१६४-१६५, पपु० १५.३७

कनकप्रभ—(१) कुण्डलगिरि पर्वत की पूर्व दिशा में स्थित कूट । यह महाभुज देव की निवासभूमि था । हपु० ५.६९१

(२) भविष्यत् कालीन दूसरा कुलकर । मपु० ७६.४६३, हपु० ६०.५५५

(३) विदेह के मंगलावती देश संबंधी विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित नगर । मपु० ७४.२२०-२२१, वीवच० ४.७३-७५

(४) सनत्कुमार स्वर्ग का विमान । मपु० ६७.१४६

(५) मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर का राजा । कनकमाला इसकी रानी और पद्मनाभ इसका पुत्र था । इसने मनोहर वन में श्रीधर मुनि से धर्म का स्वरूप सुनकर पुत्र को राज्य दे दिया था और संयम धारण कर लिया था । मपु० ५४.१३०-१३१, १४३

(६) पद्म देश के कान्तपुर नगर के स्वामी कनकरथ और उसकी रानी कनकप्रभा का पुत्र । मपु० ४७.१८०-१८१

(७) एक विद्याधर । इसी विद्याधर की विभूति देखकर मुनि प्रभासनन्द ने देव होने का निदान किया था । पपु० १०६.१६५-१६६

(८) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५.१९७

कनकप्रभा—(१) राजा मरुत्वान् की पुत्री, रावण से विवाहिता । विवाह के एक वर्ष बाद इसके कृतचित्रा नाम की पुत्री हुई थी । पपु० ११.३०४-३१०

(२) पद्म देश के कान्तपुर नगर के स्वामी कनकरथ की रानी, कनकप्रभ की जननी । मपु० ४७.१८१

(३) मथुरा के राजा चन्द्रप्रभ की द्वितीय रानी, अचल की जननी । पपु० ९१.१९-२१

(४) ललितांगदेव की चार महादेवियों में दूसरी महादेवी । मपु० ५.२८३

कनकप्राकार—समवसरण का चाँदी के चार गोपुरों से समन्वित स्वर्णाभा से युक्त कोट । हपु० ५७.२४

कनकमंजरी—नमि की पुत्री, कनकपुंजश्री की बहिन । हपु० २२.१०८

कनकमाला—(१) मंगलावती देश के स्थित रत्नसंचय नगर के राजा कनकप्रभ की प्रिया, पद्मनाभ की जननी । मपु० ५४.१३०-१३१

(२) मंगलावती देश के रत्नसंचयपुर नगर के राजा क्षेमंकर की रानी । पापु० ५.११-१२

(३) मंगलावती देश के ही कनकप्रभ नगर के राजा कनकपुंख की प्रिया, कनकोज्ज्वल की जननी । मपु० ७४.२२२, वीवच० ४.७२-७६

(४) शिवमन्दिर नगर के राजा मेघवाहन की पुत्री, कनकशान्ति की भार्या । मपु० ६३.११६-११७

(५) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित चन्द्रपुर नगर के राजा महेन्द्र और उसकी भार्या अनुन्दरी/अनुन्धरी की पुत्री । मपु० ७१.४०५-४०६, हपु० ६०.८१

(६) चम्पा नगरी के निवासी कुबेरदत्त की पत्नी, कनकश्री की जननी । मपु० ७६.४६-५०

(७) अमलकण्ठ नगर के राजा कनकरथ की पत्नी । मपु० ७२.४१

(८) राजा कालसंवर की रानी । हपु० ४३.४९

(९) पृथिवीनगर के राजा पृथु और उसकी रानी अमृतवती की पुत्री । राजा वज्रजंघ ने सीता के पुत्र मदनांकुश के लिए इसको राजा पृथु से चाहा था । निषेध करने पर वज्रजंघ ने पृथु को युद्ध में पराजित किया और इसका विवाह मदनांकुश के साथ हुआ । पपु० १०१.१-६७

(१०) राजा प्रजापाल की रानी । इसने अपने पति के साथ शीलगुप्त मुनि से संयम धारण किया था । मपु० ४६.४९

कनकमालिका—वीतशोक नगर के राजा चक्रध्वज की रानी, कनकलता और पद्मलता की जननी । मपु० ६२.३६५

कनकमालिनी—गिरिनगर के राजा चित्ररथ की रानी । हपु० ३३.१५०

कनकमेखला—मेघदल नगर के राजा सिंह की रानी, कनकावती की जननी । हपु० ४६.१४, १५

कनकरथ—(१) पद्म देश के कान्तपुर नगर का स्वामी, कनकप्रभा का पति तथा कनकप्रभ का पिता । मपु० ४७.१८१

(२) अश्वपुर नगर का स्वामी । मपु० ६२.६७

(३) अमलकण्ठ नगर का राजा । मपु० ७२.४०-४१

कनकराज—भविष्यत् कालीन तीसरा कुलकर । मपु० ७६.४६४, हपु० ६०.५५५

कनकलता—(१) चक्रध्वज और कनकमालिनी की पुत्री । मपु० ६२.३६५

(२) चम्पा नगरी के राजा श्रीषेण और उसकी रानी धनश्री की पुत्री । यह अपने फूफा के पुत्र महाबल के साथ सम्बद्ध हो गयी थी । महाबल के पिता ने इन दोनों को घर से निकाल दिया था । अंत में सर्प-दंश से इसके पति महाबल का प्राणान्त हो जाने पर इसने भी असि-प्रहार से आत्मघात कर लिया था । मपु० ७५.८१-९३

(३) ललितांग देव की चार महादेवियों में तीसरी महादेवी । मपु० ५.२८३

कनकवती—कनकोज्ज्वल की पत्नी । मपु० ७४.२२२, वीवच० १.७२-७६ दे० कनकोज्ज्वल

कनकशान्ति—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर के राजा सहस्रायुध और रानी श्रीषेणा का पुत्र । इसकी दो रानियाँ थीं जिनमें विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में शिवमन्दिर नगर के राजा मेघवाहन और रानी विमला की पुत्री कनकमाला इसकी बड़ी रानी थी और वस्तोकसार नगर के राजा समुद्रसेन विद्याधर की पुत्री वसन्तसेना छोटी रानी । एक समय यह अपनी दोनों रानियों के साथ वन-विहार के लिए गया था । वहाँ मुनि विमलप्रभ से तत्त्वज्ञान प्राप्त कर इसने दीक्षा धारण कर ली थी और इसके दीक्षित होने पर इसकी

दोनों रानियाँ भी विमलमती गणिनी से दीक्षित हो गयी थीं। रत्नपुर के राजा रत्नसेन ने इसे आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। चित्रचूल द्वारा किये गये उपसर्गों को जीतकर इसने घातियाकर्मों को नष्ट किया और यह केवली हुआ। इसका अपरनाम कनकशान्त था। मपु० ६३ ४५-५६, ११६-१३०, पापु० ५ ११, १४-१५, ३७-४४

कनकश्री—(१) मृणालवती नगरी के सुकेतु सेठ की पत्नी, भवदेव की जननी। मपु० ४६ १०४

(२) शिवमन्दिर नगर के नृप दमितारि की पुत्री, अनन्तवीर्य की भार्या। मपु० ६२ ४३३-४३४, ४६५, ४७२-४७३

(३) चम्पा नगरी के निवासी कुबेरदत्त और उसकी भार्या कनकमाला की पुत्री। इसका विाह जम्बूस्वामी से हुआ था। मपु० ७६ ४६-५०

(४) कनकाभ नगर के राजा कनक की रानी। माल्यवान् की पत्नी, कनकावली की यह जननी थी। पपु० ६ ५६७

कनकाद्रि—सुमेरु पर्वत। मपु० ३ ६५

कनकाभ—(१) काचन विमान का निवासी देव। यह वज्रजंघ के महामन्त्री का जीव था। मपु० ८ २१३

(२) एक नगर। यहाँ का राजा कनक था। पपु० ६ ५६७

(३) सुभूम चक्रवर्ती के पूर्वभव का जीव। यह धान्यपुर नगर का राजा और विचित्रगुप्त का शिष्य था। मरकर यह जयन्त विमान में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर यह चक्रवर्ती सुभूम हुआ था। पपु० २० १७०

(४) द्वारावती नगरी का राजा। इसने विधिपूर्वक मुनिराज नेमि को पडगाहकर आहार दिया था तथा पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। देवों ने इसके प्रांगण में साढे बारह कोटि रत्न बरसाये थे। पापु० २२. ४६-५०

(५) घृतवर समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५ ६४२

कनकाभा—(१) राजा सौदास की भार्या, सिंहरथ की जननी। पपु० २२ १४५

(२) क्षेमाजलि नगर के राजा शत्रुदमन की रानी, जितपद्मा की जननी। पपु० ३८ ७२-७३

(३) रावण की रानी। पपु० ७७ ९-१३

(४) विजयार्ध पर्वत पर स्थित नन्द्यावर्त नगर के राजा नन्दीश्वर की रानी, नयनानन्द की जननी। पपु० १०६ ७१-७२

कनकावर्ता—मेघदल के राजा सिंह और उसकी रानी कनकमेखला की पुत्री। हपु० ४६ १५

कनकावली—(१) कनकाभ नगर के राजा कनक और उसकी रानी कनकश्री की पुत्री। इसका विवाह माल्यवान् से हुआ था। पपु० ६ ५६७

(२) किंसूर्य नामक विद्याधर की भार्या। यह काचनपुर नगर की उत्तरदिशा में इन्द्र द्वारा नियुक्त लोकपाल कुबेर की जननी थी। पपु० ७ ११२-११३

(३) एक व्रत। इसमें चार सौ चौतीस उपवास और अठासी पारिणाए की जाती हैं। कुल समय एक वर्ष पाँच माम और बारह दिन लगता है। इसमें क्रमश: एक उपवास, एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, पश्चात् तीन-तीन उपवासो के बाद एक पारणा ऐसा नौ बार करने के पश्चात् एक से सोलह सख्या तक के उपवास और पारणाए, इसके बाद चौतीस बार तीन-तीन उपवासो के बाद पारणा, पश्चात् सोलह से लेकर एक तक जितनी सख्या हो उतने उपवास और उनके बाद पारणाए, तदुपरान्त नौ बार तीन-तीन लगातार उपवास और हर तीन उपवास के बाद एक पारणा, इसके बाद दो उपवास एक पारणा और एक उपवास इस प्रकार चार सौ चौंतीस उपवास किये जाते हैं। लौकान्तिक देवपद, प्राणत आदि स्वर्ग की प्राप्ति इस व्रत का फल है। मपु० ७ ३९, ७१ ३९५, हपु० ३४ ७४-७७

कनकोज्ज्वल—(१) विदेहक्षेत्र के मगलावती देश में स्थित कनकप्रभ नगर का विद्याधर राजा कनकपुख और उसकी रानी कनकमाला का का पुत्र। यह एक समय अपनी भार्या कनकवती के साथ वन्दनार्थ मेरु पर गया था। वहाँ प्रियमित्र नामक अवधि-ज्ञानी मुनि से धर्म का स्वरूप सुनकर और भोगो से विरक्त होकर इसने जिन-दीक्षा धारण कर ली थी तथा समयपूर्वक मरण कर सातवें स्वर्ग में देव तथा वहाँ से च्युत होकर साकेत नगरी में वज्रसेन का हरिषेण नामक पुत्र हुआ। मपु० ७४ २२१-२३२, वीवच० ४ ७२-१२३

(२) भगवान् महावीर के नौवें पूर्वभव का जीव। मपु० ७४ २२०-२२९, ७६ ५४१

कनकोदरी—विजयार्ध पर्वत पर स्थित नगर के राजा सुकण्ठ की रानी और सिंहवाहन की जननी। इसकी सौत ने इसकी आराध्यदेवी का तिरस्कार किया जिससे दुखी होकर इसने सयमश्री आर्यिका से उपदेश सुना तथा जिन प्रतिमा की पूर्ववत् पुन प्रतिष्ठा कराकर आराधना करती हुई यह मरकर स्वर्ग गयी और वहाँ से च्युत होकर महेन्द्र नगर के राजा महेन्द्र और रानी मनोवेगा की अजना नाम की पुत्री हुई। पपु० १७ १५४-१९६

कनत्कांचनसन्निभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९९

कन्तोयस्—आर्यखण्ड के मध्य में स्थित देश। तीर्थंकर महावीर ने विहार कर यहाँ के लोगो को धर्मोपदेश दिया था। हपु० ३ ४

कन्दर्प—(१) निरन्तर काम से आकुलित इस नाम के देव। हपु० ३ १३६

(२) अनर्थदण्डव्रत का एक अतिचार, (राग की उत्कृष्टता से हास्यमिश्रित भण्ड वचन बोलना)। हपु० ५८ १७९

कपाट—केवलि-समुद्घात का द्वितीय चरण। हपु० ५६ ७४

कपिकेतु—वानर द्वीप में स्थित किष्किन्धपुर नगर के राजा अमरप्रभ का पुत्र और श्रीप्रभा का पति। पिता से राज्य प्राप्त करने के पश्चात् अपने पुत्र प्रतिबल को राज्य देकर यह दीक्षित हो गया था। पपु० ६ १९८-२००

कपित्थ—(१) एक वन। यहाँ के दिशागिरि पर्वत पर किराताधीश हरिविक्रम ने वनगिरि नगर बसाया था। मपु० ७५ ४७९

युगल को देखकर पार्श्वनाथ ने इससे कहा कि इस लकड़ी में जीव है इसे मत काटो। महीपाल ने इसे अपना अपमान समझा और लकड़ी को काट डाला जिससे नागयुगल भी कट गया। पार्श्वनाथ से वैरभाव रखकर वह मर गया और तपश्चरण के प्रभाव से शम्बर नामक ज्योतिर्देव हुआ। नागयुगल भी पार्श्वनाथ द्वारा सुनाये गये णमोकार मन्त्र के प्रभाव से धरणेन्द्र और पद्मावती की पर्याय में आया। एक दिन आकाशमार्ग से जाते हुए शम्बर देव का विमान रुक गया तब उसने विभंगावधिज्ञान से ध्यानस्थ पार्श्वनाथ को अपना पूर्वभव का वैरी जान लिया और उन पर सात दिन तक अनवरत उपसर्ग किये। धरणेन्द्र और पद्मावती ने इन उपसर्गों से पार्श्वनाथ की रक्षा की। अन्त में कमठ का जीव शम्बर देव भी काललब्धि पाकर शान्त हो गया। उसने सम्यग्दर्शन की विशुद्धता प्राप्त की और मरुभूति का जीव तीर्थंकर पार्श्वनाथ होकर मोक्ष गया। मपु० ७३ ६-१४८

कमल—चौरासी लाख कमलांग प्रमाण काल। हपु० ७ २७, मपु० ३ १०९, २२४

कमलकेतु—राम का योद्धा। इसने रावण के सेनानी खर के साथ माया-युद्ध किया था। मपु० ६० ६२०-६२२

कमलगर्भ—एक निर्ग्रन्थ मुनि। इनके व्याख्यान को सुनकर गान्धारी नगरी के राजा भूति और उसके पुरोहित उपमन्यु ने पापकार्य का त्याग कर दिया था। पपु० ३१ ४२

कमलगुल्म—स्वर्ग में इस नाम का एक विमान। ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती का जीव पूर्वभव मे इसी विमान में देव था। पपु० २० १९१-१९२

कमलध्वज—समवसरण की सहस्रदलकमल के चिह्न से अंकित ध्वजा। मपु० २२ २२५-२२७

कमलबन्धु—इक्ष्वाकुवंशी राजा प्रतिमन्यु का पुत्र, रविमन्यु का पिता। पपु० २२ १५५-१५९

कमलसंकुल—एक नगर। राजा सुबन्धुतिलक इसी नगर का राजा था। पपु० २२ १७३

कमलांग—चौरासी लाख नलिन प्रमाण काल। मपु० ३ २२४, हपु० ७ २७

कमला—(१) राजा विमलसेन की पुत्री। मपु० ४७ ११४

(२) भरतक्षेत्र में स्थित छत्रपुर नगर के राजा प्रीतिभद्र के मन्त्री चित्रमति की भार्या, विचित्रमति की जननी। मपु० ५९ २५५-२५६, हपु० २७ ९८

(३) भद्रिलपुर के भूतिवर्मा ब्राह्मण की भार्या। मपु० ७१ ३०४

(४) राजपुर के सागरदत्त सेठ की भार्या। मपु० ७५ ५८७

(५) वेलन्धर नगर के स्वामी समुद्र की द्वितीय पुत्री। यह सत्यश्री की छोटी तथा गुणमाला और रत्नचूला की बड़ी बहिन और लक्ष्मण की भार्या थी। पपु० ५४ ६५-६९

(६) उज्जयिनी के राजा वृषभध्वज की रानी। हपु० ३३ १०३

(७) समवसरण के चम्पक वन की वापी। हपु० ५७ ३४

(८) कौशिकपुरी के राजा वर्ण तथा उसकी रानी प्रभाकरी की पुत्री। यह युधिष्ठिर से विवाही गयी थी। पापु० १३.३-७, २८-३४

कमलानना—रावण की रानी। पपु० ७७ ९-१२

कमलावती—राजा विमलसेन की पुत्री। श्रीपाल ने उसके काम रूप पिशाच को दूर किया था। मपु० ४७ ११४-११५

कमलोत्सवा—सिद्धार्थ नगर के राजा क्षेमकर और उसकी रानी विमला की पुत्री और देशभूषण तथा कुलभूषण की बहिन। परिचय के अभाव में इसके दोनो भाई इस पर कामासक्त हो गये थे, किन्तु बाद में बन्दी से यह ज्ञातकर कि यह उनकी बहिन है वे दोनो परम वैराग्य को प्राप्त होकर दीक्षित हो गये थे। तपस्या से उन्होंने आकाशगामिनी ऋद्धि प्राप्त की और अनेक क्षेत्रों में उन्होने विहार किया। पपु० ३९ १५८-१७५

कमेकुर—चोल प्रदेश का निकटवर्ती एक देश। भरतेश ने दिग्विजय के समय इस देश के राजा को वश में किया था। मपु० २९ ८०

कम्बर—एक ग्राम। यहाँ प्रवर वैश्य की पुत्री रुचिरा मरकर विलास नामक वैश्य के घर पर बकरी को पर्याय में आयी थी। पपु० ४१. १२८

कम्बल—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३७

(२) ऋक्षवान् और वातपृष्ठ पर्वतो से आगे का एक पर्वत। यहाँ भरतेश ने अपने सैनिक प्रयाण में विश्राम किया था। मपु० २९ ६९

कम्बुक—एक बड़ा सरोवर। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ५१

कम्ला—भरतेश की सेना का एक महावादित्र। पपु० ८४ १२

कयान—दारुग्राम की ऊरी नामा ब्राह्मणी का पुत्र। इसने अतिभूति की स्त्री सरसा तथा उसके धन का अपहरण किया था। यह हिंसा को धर्म माननेवाला और मुनिद्वेषी था। खोटे ध्यान से मरकर यह क्रम से अश्व तथा ऊँट होने के पश्चात् धूम्रकेश का पिंगल नामक पुत्र हुआ था। पपु० ३० ११६-१२९

करग्रह—पाणिग्रहण। विवाह में होनेवाला संस्कार। मपु० ४ ११९

करण—(१) जीव के शुभाशुभ परिणाम। ये तीन प्रकार के होते हैं—अध करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। आसन्न भव्यात्मा इनसे मिथ्यात्व प्रकृति को नष्ट करके सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है। मपु० ९ १२०

(२) इन्द्रियाँ। मपु० २ ९१

करणानुयोग—श्रुतस्कन्ध के चार महाधिकारो में द्वितीय महाधिकार। इसमें तीनों लोको का वर्णन रहता है। मपु० २ ९९

करभवेगिनी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना ने विश्राम किया था। मपु० २९ ६५

कररुह—पुष्पप्रकीर्णनगर का स्वामी। धान्यग्राम के ब्राह्मण नोदन द्वारा परित्यक्त अभिमाना नामा स्त्री ने इसे अपने पति के रूप में स्वीकार किया था। पपु० ८० १५९-१६७

करवाली—रावण कालीन एक अस्त्र (छुरी)। पपु० १२ २५७

करसंबाधा—करजन्यकष्ट। मपु० २ १६

करहाट—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। मपु० १६ १४१-१४८, १५४

करालब्रह्मदत्त—एक अवधिज्ञानी मुनि। हपु० ३३ १५०

करिध्वजा—समवसरण की एक ध्वजा। इसमें ध्वजा धारण कर सूँड ऊपर उठाये हुए हाथियो की आकृतियाँ अंकित की जाती हैं। मपु० २२ २३४

करी—उत्तम श्रेणी का हाथी। समाज के उच्चतम वर्ग इस पर सवारी करते हैं। मपु० २९ १४४, १५३

करीरी—आर्यखण्ड के सह्य पर्वत के पास की एक नदी। इसके तट पर करीर की झाड़ियाँ थीं। मपु० ३० ५७

करुणादान—दीन तथा अन्धे, लूले-लगडे मनुष्यो के लिए करुणाबुद्धि से दिया गया दान। पपु० १४ ६६

करेणु—हस्तिनो का दूसरा नाम। इसका उपयोग उच्चवर्ग की स्त्रियो की सवारी के लिए होता था। मपु० ८ ११९

करेणुका—हाथ की एक उत्तम रेखा। मपु० १२ २२०

कर्कोटक—(१) धरण का पुत्र। हपु० ४८ ५०

(२) कुम्भकण्टक द्वीप का एक पर्वत। हपु० २१ १२३

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३६

कर्ण—(१) इस नाम का एक पर्वत, मृगारिदमन ने इसी पर्वत पर कर्ण-कुण्डल नाम का नगर बसाया था। पपु० ६ ५२९

(२) कान। मपु० १२ ४९

(३) राजा पाण्डु और कुन्ती का अविवाहित अवस्था मे उत्पन्न पुत्र। कुन्ती के कुटुम्बियो ने परिचय-पत्र, कुण्डल और रत्न-कवच सहित इसे कालिन्दी में बहा दिया था। चम्पापुर के राजा आदित्य ने इसे प्राप्त कर पालनार्थ अपनी प्रिया राधा को सौंपा था। राधा ने इसे कर्ण-स्पर्श करते हुए देख 'कर्ण' नाम दिया था। मपु० ७० १०९-११४, हपु० ४५ ३७ कुन्ती के पिता अन्धकवृष्णि ने इसकी जन्मवार्ता कान-कान तक पहुँची हुई जान इसे कर्ण कहा था। कुरुक्षेत्र में इसने जरासन्ध का साथ दिया था। इसकी मृत्यु कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में अर्जुन द्वारा हुई थी। मपु० ७१ ७६-७७, पापु० ७ २६१-२९६, २० २६३

कर्णकुण्डल—(१) एक नगर। रावण ने यहाँ हनुमान् का राज्याभिषेक किया था। उस समय यह नगर स्वर्गोपम समृद्धि से युक्त था। पपु० १९ १०१-१०३

(२) वह नदी जहाँ राम और सीता ने आकाशगामी दो मुनियो को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। राम को अपना परिचय देने के लिए हनुमान् द्वारा सीता ने लका से यह ससमरण कहलाया था। पपु० ५३ १६१-१६३

(३) राजा मृगारिदमन द्वारा बसाया गया नगर। इसकी स्थापना कर्ण पर्वत के पास की गयी थी। पपु० ६ ५२५-५२९

कर्णकोशल—एक देश। यहाँ तीर्थंकर महावीर ने विहार किया था। पापु० १ १३३

कर्णरवा—दण्डकारण्य की एक नदी। पपु० ४० ४०

कर्ण सुवर्ण—कर्ण का दीक्षा स्थान। कर्ण ने कर्णकुण्डल उतार कर दमवर मुनि से यही दीक्षा ली थी। हपु० ५२.८९-९०

कर्णाट—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित दक्षिण का एक देश। यहाँ के राजा हल्दी, ताम्बूल और अजन के प्रेमी हुए हैं। भरतेश के सेनापति ने यहाँ के तत्कालीन राजा को हराकर अपनी आधीनता स्वीकार करायी थी। मपु० १६ १४१-१४८, १५४, २९ ९१ पापु० १ १३२-१३४, अपरनाम कर्णाटक

कर्णेजपत्व—चुगली करना। मपु० १२ ४८

कर्त्तक—नाई। शूद्र वर्ण के कारू और अकारू भेदो में कारू शूद्रो के दो भेद किये गये हैं—स्पृश्य और अस्पृश्य। इनमें इनकी गणना स्पृश्य कारू-जनो मे की गयी है। मपु० १६ १८६

कर्त्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

कर्त्रन्वयक्रिया—सम्यग्दृष्टियो द्वारा अनुष्ठेय गर्भान्वय, दीक्षान्वय और कर्त्रन्वय क्रियाओ में तीसरी क्रिया। यह क्रिया सात प्रकार की है—१ सज्जाति २ सद्गृहित्व ३ पारिव्राज्य ४ सुरेन्द्रता ५ साम्राज्य ६ परमार्हन्त्य ७ परमनिर्वाण। पुण्यात्मा ही इन क्रियाओ को प्राप्त करते हैं। मपु० ३८ ५०-५३, ६६-६८

कर्वुक—भरतक्षेत्र के पश्चिम का एक देश। भरतेश के भाई ने इसे छोड़-कर दीक्षा ली थी। हपु० ११ ७१

कर्म—(१) स्वतन्त्रता के बाधक और परतन्त्रता के जनक पुद्गलस्कन्ध। ये आठ प्रकार के होते हैं—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु नाम, गोत्र और अन्तराय। इनमें ज्ञानावरण जीवो के ज्ञान गुण का आच्छादन करता है, दर्शनावरण दर्शन नही होने देता, वेदनीय सुख-दुःख देता है, मोहनीय सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र और धार्मिक कार्यों में विकल करता है, आयुकर्म अभीष्ट स्थान पर नही जाने देता, नामकर्म अनेक योनियों में जन्म देता है, गोत्रकर्म उच्च-नीच कुलो में उत्पन्न करता है और अन्तराय दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य की उपलब्धि में विघ्न करता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय घातिकर्म और शेष अघातिकर्म कहलाते हैं। वीवच० १६ १४७-१५५ लोक की अनेक रूपता मे मूलरूप से ये ही हेतु हैं। विधि, स्रष्टा, विधाता, दैव, पुराकृत कर्म और ईश्वर ये इन्ही के पर्यायवाचक नाम हैं। मधुर एव कटुफल प्रदाता होने से इन्हें द्विविध (पाप-पुण्य) रूप भी कहा गया है तथा यह भी बताया गया है कि अपने कर्मों के अनुसार जीव को उसके शुभाशुभ फल भोगने पड़ते हैं। ये तब तक जीव के साथ रहते है जब तक उसके मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग का सद्भाव रहता है। इन कर्मो की निर्जरा का साधन तप है। ध्यानाग्नि से इनके भस्मीभूत होने पर परमपद की प्राप्ति होती है। मपु० १ ८९, ४ ३६-३७, ९ १४७, ११ २१९, ५४ १५१-१५२, पपु० ६ १४७, १२३ ४१

(२) अग्रायणीय पूर्व के चतुर्थ प्राभृत का योगद्वार। हपु० १० ८२

कर्मकाष्ठाग्रशुक्षणि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२१४

कर्मकुर—दक्षिण का एक देश। इसे भरतेश ने अपने दण्डरत्न से जीता था। मपु० २९ ८०

कर्मक्षपण (कर्मक्षयविधि)—एक व्रत। इसकी साधना के लिए नामकर्म की (तेरानवें प्रकृतियो के साथ समस्त कर्मों की एक सौ अडतालीस उत्तरप्रकृतियो को लक्ष्य करके एक सौ अडतालीस उपवास किये जाते हैं)। एक उपवास और एक पारणा के क्रम से यह व्रत दो सौ छियानवें दिनो में पूर्ण होता है। मपु० ७ १८, हपु० ३४.१२१

कर्मचक्र—ज्ञानावरण आदि कर्मों का समूह। मपु० ४३ २

कर्मठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१४

कर्मण्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१४

कर्मप्रकृति—कर्मों की प्रकृतियाँ। ये एक सौ अडतालीस हैं। इन्ही के वशीभूत जीव जन्म, जरा, मरण, रोग, दु.ख और सुख ससार में प्राप्त कर रहे हैं। मपु० ६२ ३१२-३१४, ६७.६

कर्मप्रवाद—चौदह पूर्वों में आठवाँ पूर्व। इसमें एक करोड अस्सी लाख पद हैं। मपु० २ ९७-१००, हपु० २.९८, १० ११०

कर्मबन्ध—सुकृत (पुण्य) और विकृत (पाप) के भेद से द्विविध। इनमें सुकृत मधुर तथा विकृत कटु फलदायी होते हैं। सुकृतबन्ध का उत्कृष्टतम फल सर्वार्थसिद्धि में उत्पन्न होना और विकृतबन्ध का निकृष्टतम फल सातवें नरक में उत्पन्न होना है। इनमें सुकृतबन्ध का फल शम, दम, यम और योग से प्राप्त होता है तथा विकृतबन्ध का फल शम, दम, यम और योग के अभाव से मिलता है। ये दोनो जीव के अपने कर्मबन्ध के अनुसार होते हैं। इससे जीव दु खी होता है। यह बन्ध राग और द्वेष से आत्मा के दूषित होने पर होता है और बडी कठिनाई से छूटता है। इसके कारण ही यह जीव दुर्गतियो में अतिशय निन्दनीय दु ख पाता है। मपु० ११ २०७-२०८, २१९-२२०

कर्मभूमि—वृषभदेव ने कृषि आदि छ कर्मों की व्यवस्था इस भरतक्षेत्र की भूमि में की थी। यह भूमि इसी नाम से विख्यात है। मपु० १६.२४९, हपु० ३ ११२ यहाँ उत्पन्न मनुष्य अपनी-अपनी वृत्ति की विशेषता से तीन प्रकार के होते हैं—उत्तम, मध्यम और जघन्य। इनमें शलाकापुरुष, कामदेव, विद्याधर और देवार्चित सन्त ये उत्तम मनुष्य तथा छठे काल के मनुष्य जघन्य और इन दोनो के बीच के मनुष्य मध्यम हैं। मपु० ७६ ५००-५०२ अढाई द्वीप सबधी कर्मभूमियाँ पन्द्रह होती हैं। देवकुरु और उत्तरकुरु सहित विदेह, भरत तथा ऐरावत क्षेत्रो में इन कर्मभूमियो की सख्या १५ हैं—५ विदेह क्षेत्र में, ५ भरत क्षेत्र में और ५ ऐरावत क्षेत्र में। पपु० ८९ १०६, १०५ १६२

कर्ममल—कर्मरूपी मल। यह निर्वाण की प्राप्ति में बाधक होता है। मपु० ४.५३

कर्मशत्रुघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०६

कर्मस्थिति—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के बीस प्राभृतो में कर्मप्रकृति नाम के चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में तेईसवाँ योगद्वार। हपु० १०.७७-८६

कर्महा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८३

कर्मान्वयक्रिया—श्रावको की त्रिविध क्रियाओ में तीसरे प्रकार की क्रिया-अपरनाम कर्त्रन्वयक्रिया। ये सद्गृहित्व को आदि लेकर सिद्धि पर्यन्त सात होती हैं। मपु० ६३ ३०२, ३०५ दे० कर्त्रन्वयक्रिया

कर्मारवी—सगीत सबधी मध्यमग्राम के आश्रित ग्यारह जातियो में नवी जाति। इसके सात स्वर होते हैं। पपु० २४ १४-२५, हपु० १९ १७७-१८८

कर्मारातिनिशुम्भन—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४०

कर्वट—पर्वतो से घिरा हुआ ग्राम। ऐसे ग्रामो की रचना तीर्थंकर आदिनाथ के समय में शिल्पियो द्वारा की गयी थी। हपु० ९ ३८, पापु० २ १५९

कर्षप—यक्षस्थान नगर का निवासी और सुरप का सहोदर। इन दोनो भाइयों ने मूल्य देकर किसी शिकारी द्वारा पकडे गये पक्षी को मुक्त कराया था। परिणाम स्वरूप पक्षी ने अपनी सेनापति की पर्याय में, जब ये दोनों मुनि अवस्था में थे, इन दोनो की रक्षा की थी। पपु० ३९ १३७-१४०

कलभ—अग देश का एक राजा। यह अतिवीर्य का सहायक था। पपु० ३७ १४

कलम—एक धान्य। मपु० ३ १८६

कलश—जिनाभिषेक हेतु क्षीरसागर से जल लाने के लिए देवो द्वारा व्यहृत जलपात्र। ये स्वर्णमय जल-पात्र आठ योजन गहरे और मुख पर एक योजन चौडे होते हैं। मपु० १३ १०६-११६

कलशोद्धार मत्र—जिनाभिषेक के लिए कलश उठाते-हाथ में लेते समय व्यवहृत मत्र। ऐशानेन्द्र ऐसे मत्रो का ज्ञाता होता है। मपु० १३ १०७

कलह-भाषा—सत्यप्रवादपूर्व में कथित बारह प्रकार की भाषाओ में एक भाषा—कलहकारी वचन बोलना। हपु० १० ९१-९२

कलागोष्ठी—कलाओं द्वारा मनोरजन का आयोजन। इन गोष्ठियो में सगीत, नृत्य और चित्रकलाओ समेत चौसठ प्रकार की कलाओ का प्रदर्शन किया जाता था। मपु० २९ ९४

कलातीत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

कलाधर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

कलावती—भरत की भाभी। पपु० ८३ ९५

कलाव्यवसनक्रीडा—चतुर्विध क्रीडाओ में चतुर्थ क्रीडा-जुआ आदि खेलना। केकया इस क्रीडा में भी अत्यन्त निपुण थी। पपु० २४ ६७-६९

कलिंग—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित दक्षिण का एक देश। (उडीसा-भुवनेश्वर का समीपवर्ती प्रदेश)। मपु० १६ १४१-१५६, २९. ३८, हपु० ११ ७०-७१ तीर्थंकर वृषभदेव, नेमिनाथ तथा महावीर की विहारभूमि। मपु० २५ २८७-२८८, हपु० ३ ४, ५९ १११, पापु० १ १३२ दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने यहाँ के शासको को परास्त किया था। मपु० २९ ९३ लवणाकुश ने भी यहाँ के राजा को परास्त किया था। पपु० १०१ ८४-८६

कलिंगसेना—चम्पापुरी की एक प्रसिद्ध गणिका। यह वसन्तसेना गणिका की जननी थी। हपु० २१ ४१

कलिंदकन्या—यमुना नदी। मपु० ७० ३४६

कलिंदसेना—राजा जरासन्ध की रानी, जीवद्यशा की जननी। इसका अपरनाम कालिन्दसेना था। मपु० ७० ३५२-३५४, हपु० १८ २४

कलिघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०६

कलियुग—वर्द्धमान के निर्वाण के बाद तीन वर्ष, आठ मास, पन्द्रह दिन बीत जाने पर आनेवाला काल। वृषभदेव के समवसरण की दिव्य ध्वनि के अनुसार इसमें जनसमूह प्रायः हिंसोपदेशी, महारम्भों में लीन, जिनशासन का निन्दक, निर्ग्रन्थ मुनि को देख क्रोध करनेवाला, जातिमद से युक्त, भ्रष्ट और समीचीन मार्ग का विरोधी होगा। मपु० ८१ ४७, पपु० ४ ११६-१२०

कलिलघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

कलोपनता—संगीत के मध्यम ग्राम की मूर्च्छना। हपु० १९, १६३

कल्किराज—पाटलिपुत्र नगर में राजा शिशुपाल और उसकी रानी पृथिवीसुन्दरी का चतुर्मुख नामक पुत्र। दु षमा काल के एक हजार वर्ष बीत जाने पर मघा (माघ) संवत्सर में यह उत्पन्न होगा तथा इस नाम से प्रसिद्ध होगा। इसकी उत्कृष्ट आयु सत्तर वर्ष तथा राज्यकाल चालीस वर्ष होगा। यह पाखण्डी साधुओं के ९६ वर्गों को अपने अधीन करनेवाला होगा। यह निर्ग्रन्थ साधुओं के आहार का प्रथम ग्रास कर के रूप में लेना चाहेगा। इसकी इस प्रवृत्ति से असंतुष्ट होकर कोई सम्यग्दृष्टि असुर इसे मार डालेगा और यह मरकर रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथिवी में जायेगा, वहाँ एक सागर प्रमाण इसकी आयु होगी। इसका पुत्र अजितंजय अपनी पत्नी वालना के साथ इसी असुर की शरण में पहुँचेगा और सम्यग्दर्शन स्वीकार करेगा। इस कल्की के बाद प्रति एक-एक हजार वर्ष के पश्चात् बीस कल्की राजा और होंगे। अन्तिम (इक्कीसवाँ) कल्की जलमन्थन होगा। मपु० ७६ ३९७-४३१, हपु० ६० ४९२-४९४

कल्प—(१) उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी दोनों कालों का बीस कोड़ा-कोड़ी सागर प्रमाण काल। मपु० ३ १४-१५, ७६ ४९३-४९४ हपु० ७ ६३

(२) स्वर्ग। सराग संयमी और सम्यग्दर्शन से विभूषित मुनि तथा श्रावक मरकर स्वर्ग में जाते हैं। ये सोलह होते हैं। हपु० ३ १४९, वीवच० १७ ८९-९० दे० स्वर्ग

(३) कल्याणवादपूर्व की चौदह वस्तुओं में बारहवीं वस्तु। हपु० १० ८७-९९

कल्पतरु—इच्छानुसार फल देनेवाले भोगभूमि के वृक्ष। ये दस प्रकार के होते हैं—१ मद्यांग २ तूर्यांग ३ विभूषांग ४ स्रगंग ५ ज्योतिरंग ६ दीपांग ७ गृहांग ८ भोजनांग ९ पात्रांग १० वस्त्रांग। [illegible]

भोग का उपकार करते हैं। इन वृक्षों को कल्पपादप और कल्पद्रुम भी कहते हैं। मपु० ३ ३५-४०, ९ ४९-५१

कल्पद्रुम—(१) दे० कल्पतरु। मपु० ३ ३७

(२) अर्हन्त-पूजा का एक भेद। यह "दान" का भी बोधक है। मपु० ३८ २६, ३१

कल्पनिवासिनी—स्वर्ग की देवांगना। हपु० २ ७७

कल्पपादप—कल्पवृक्ष। अपरनाम कल्पतरु, कल्पद्रुम। मपु० ३ ३८ दे० कल्पतरु

कल्पपुर—एक नगर। इसे राजा पौलोम के पुत्र महीदत्त ने बनाया था। हपु० १७ २८-२९

कल्पभूमि—समवसरण-भूमि से एक हाथ ऊँची भूमि। समवसरण-भूमि साधारण भूमि से एक हाथ ऊँची होती है। हपु० ५७.५

कल्पवन—समवसरण-भूमि में दूसरे कोट के भीतर धूपघटों के बाद की वीथियों में स्थित देदीप्यमान वन। इसमें कल्पवृक्ष होते हैं। मपु० २२ २४३-२४७

कल्पवास-स्तूप—कल्पवासियों द्वारा रचित समवसरण का एक स्तूप। हपु० ५७ ९९

कल्पवासी—सौधर्म से अच्युत स्वर्ग पर्यन्त स्वर्गों में रहनेवाले वैमानिक देव। मिथ्यात्व से मलिन बाल-तप करनेवाले तापसियों के अतिरिक्त अकामनिर्जरा से युक्त बन्धनबद्ध तिर्यंच भी ऐसे देव होते हैं। हपु० ३ १३३-१३५, १४८

कल्प-व्यवहार—अंगबाह्यश्रुत के चौदह प्रकीर्णकों में नवम प्रकीर्णक। इसमें तपस्वियों के करणीय कार्यों की विधि का तथा अकरणीय कार्यों के हो जाने पर उनकी प्रायश्चित्त-विधि का वर्णन किया गया है। हपु० १० १२५, १३५

कल्पवृक्ष—(१) चक्रवर्ती द्वारा सम्पन्न की जानेवाली एक पूजा। इसमें याचकों को मन चाहा दान दिया जाता है। यह पूजा आठ दिन तक की जाती है। मपु० ७३ २२०, ७३ ५९ दे० कल्पद्रुम

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५, २१३

(३) एक विशिष्ट जाति के वृक्ष। पपु० ३ ६३ दे० कल्पतरु

कल्पाकल्प—अंगबाह्यश्रुत के चौदह प्रकीर्णकों में दसवाँ प्रकीर्णक। इसमें करणीय और अकरणीय दोनों प्रकार के कार्यों का निरूपण है। हपु० २ १०३-१०४, १० १३६

कल्पांग—[illegible] कल्पवृक्ष। मपु० ५९ ३

कल्पातीत—नव ग्रैवेयक, नव अनुदिश तथा पाँच अनुत्तर विमानवासी देव। ये अहमिन्द्र होते हैं। [illegible] मपु० ५३ १६, हपु० ३ १५०-१५१

कल्प्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९२

कल्याण—(१) [illegible]

किन्तु विद्याधर की पत्नी सर्वश्री ने इसे शान्त कर दिया था। पपु० १३ ८६-८९

(२) तीर्थंकरो के पचकल्याणक। मपु० ६ १४३

(३) विवाह। मपु० ७१ १४४, ६३ ११७

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

कल्याणजय—समवसरण की वेदिकाओ से बद्ध वीथियों के बीच का स्थान। यह प्रकाशमय कदलीवृक्षो से सुशोभित रहता है। हपु० ५७ ६७

कल्याणपूर्व—चौदह पूर्वों में ग्यारहवाँ पूर्व। इसमें छब्बीस करोड पद है। इन पदो में सूर्य, चन्द्रमा आदि ज्योतिषी देवो के सचार का, सुरेन्द्र और असुरेन्द्रकृत श्रेसठ शलाकापुरुषो के कल्याण का तथा स्वप्न, अन्तरिक्ष, भौम, अग, स्वर, व्यजन, लक्षण और छिन्न इन अष्टाग निमित्तों और अनेक शकुनो का वर्णन है। हपु० २ ९९, १० ११५-११७

कल्याणप्रकृति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

कल्याणमाला—राजा वालिखिल्य की पुत्री। अपने पिता की अनुपस्थिति में यह पुरुष के वेश में राज्य का सचालन करती थी। राम, लक्ष्मण और सीता से इसकी भेंट होने पर इसने अपना यह गुप्त रहस्य प्रकट कर दिया था कि जब वह गर्भ में थी उस समय उसके पिता का म्लेच्छ राजा के साथ युद्ध हुआ था और पराजित होने पर सिंहोदर ने बालिखिल्य से कहा था कि यदि उसकी रानी के गर्भ से पुत्र हो तो वह राज्य करे। दुर्भाग्य से यह पुत्री हुई किन्तु मन्त्री ने सिंहोदर को पुत्र हुआ बताकर उसे राज्य दिला दिया। उसके पिता बन्दी थे। यह रहस्य जानकर राम ने उसके पिता को मुक्त कराया था। इसने लक्ष्मण को अपने पति के रूप में स्वीकार किया था। यह लक्ष्मण की आठ महादेवियो में चौथी महादेवी थी। इसके मगल नाम का पुत्र हुआ था। पपु० ३४ १-९१, ८० ११०-११३, ९४ २०-२३, ३२

कल्याणलक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

कल्याणवर्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

कल्याणागण—समवसरण की भूमि। हपु० ५७ ६७

कल्याणाभिषव—विवाहाभिषेक। मपु० ७ २२६

कल्लीवनोपान्त—भरतक्षेत्र की पश्चिम दिशा में स्थित एक देश। हपु० ११ ७१

कवची—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी के सौ पुत्रो में तिहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

कवल—एक हजार चावलों के प्रमाण का एक ग्रास। हपु० ११ १२५

कवलचान्द्रायणव्रत—कवल प्रमाण भोजन का एक व्रत। अमावस्या के दिन उपवास पश्चात् प्रतिपदा के दिन एक कवल, आगे प्रतिदिन एक-एक ग्रास की वृद्धि से चतुर्दशी के दिन चौदह ग्रास, पूर्णिमा के दिन उपवास और फिर एक-एक ग्रास प्रतिदिन कम करते हुए चतुर्दशी के दिन एक ग्रास और अमावस्या के दिन उपवास इस प्रकार यह व्रत इकतीस दिनो में पूर्ण होता है। हपु० ३४ ९०-९१

कवलाहार—क्षुधा को शान्त करने के लिए कवल प्रमाण ग्रासो के द्वारा किया जानेवाला आहार। मोहनीय कर्म का क्षय हो जाने पर कवलाहार की आवश्यकता नही पडती। मपु० २५ ३९

कवाटक—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में स्थित मलय पर्वत के आगे का एक पर्वत। इसके निकटवर्ती राज्य को भरतेश के सेनापति ने जीता था। मपु० २९ ८९

कवि—(१) धर्मकथा से युक्त काव्य के रचयिता। जो कवि मनोहर रीतियो से सम्पन्न सुश्लिष्ट पद—रचनावाले और धर्म-कथा से युक्त प्रबन्ध काव्यो की रचना करते हैं वे महाकवि होते हैं। मपु० १ ६२,९८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४३

कवि परमेश्वर—वागर्थ सग्रह नामक पुराण का रचयिता कवि। मपु० १ ६०

कशिपु—काशी नगरी का उग्रवशी राजा। यह काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्द्धन का न्यायशील सामन्त था। इसने रतिवर्द्धन का राज्य हडपनेवाले उसके मन्त्री सर्वगुप्त को पराजित कर रतिवर्द्धन को उसका राज्य पुन प्राप्त कराया था। पपु० १०८ ७-३०

कषाय—जीवों के सद्गुणो को क्षीण करनेवाले दुर्भाव। ये मोक्षसुख की प्राप्ति में बाधक होने से त्याज्य हैं। ये मूल रूप से चार हैं—क्रोध, मान, माया, और लोभ। इन्ही के कारण जीव ससार में भटक रहा है। क्रोध को क्षमा से, मान को मार्दव से, माया को सरलता से और लोभ को सतोषवृत्ति से जीता जाता है। अनन्तानुबन्धी,अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन इन चारों के साथ क्रोध, मान, माया और लोभ को योजित करने से इसके सोलह भेद होते हैं। इन भेदो के साथ तथा नौ नौ कषायो के मिश्रण से पच्चीस भेद भी किये गये हैं। मपु० ३६ १२९, १३९, ६२ ३०६-३०८, ३१६-३१७, पपु० १४ ११०, पापु० २२ ७१, २३ ३० वीवच० ११ ६७

कांक्ष—प्रथम पृथिवी के प्रथम प्रस्तार में स्थित सीमन्तक नामक इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा में स्थित महानरक। यह दुर्वर्ण नारकियो से व्याप्त रहता है। हपु० ४ १५१-१५२

कांचन—(१) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का नवम विमान। मपु० ८ २१३, हपु० ६ ४४-४७

(२) एक गुहा। यह रश्मिवेग मुनि की तपोभूमि है। यही श्रीधरा और यशोधरा आर्यिकाएं उनके दर्शनार्थ आयी थी। मपु० ५९ २३३-२३५, हपु० २७ ८३-८४

(३) अमररक्ष के महाबुद्धि और पराक्रमधारी पुत्रो द्वारा बसाये गये दस नगरो में नवा नगर। लक्ष्मण ने इस नगर को अपने आधीन किया था। पपु० ५ ३७१-३७२, ९४ ३-९

(४) समस्त ऋद्धियो और भोगो का दाता, वन-उपवन,से विभूषित, लका का एक द्वीप। पपु० ४८ ११५-११६

(५) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित साठ नगरियो में उन्तीसवी नगरी। मपु० ६३, १०५, हपु० २२ ८८

(६) रुचकवर द्वीप के रुचकवर पर्वत के पूर्वदिशावर्ती आठ कूटो मे दूसरा कूट। यहाँ वैजयन्ती देवी निवास करती है। हपु० ५ ६९९-७०५

(७) मेरु पर्वत के सौमनस पर्वत पर स्थित सात कूटो में छठा कूट। हपु० ५ २२१

(८) धृतराष्ट्र और उसकी रानी गाधारी के सौ पुत्रो में सत्तानवेंवा पुत्र। हपु० ८ २०५

(९) रुचकगिरि की उत्तर दिशा का एक कूट। यह वारुणी देवी की निवासभूमि है। हपु० ५ ७१६

कांचनक—मेरु पर्वत के कूटो पर निवास करनेवाले देव। ये पर्वतो पर निर्मित क्रीडागृहो में क्रीडा करते रहते हैं। हपु० ५ २०३-२०४

कांचनकूट—(१) सीता-सीतोदा नदियो के तटो पर स्थित इस नाम के दस पर्वत। इन पर्वतो की ऊँचाई सौ योजन, विस्तार मूल में सौ योजन, मध्य में पचहत्तर योजन और अग्रभाग में पचास योजन है। हपु० ५ २००-२०१

(२) रुचकगिरि की पूर्व दिशा में स्थित आठ कूटो में दूसरा कूट। यह वैजयन्ती देवी की निवासभूमि है। हपु० ५ ७०४-७०५

(३) सौमनस पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २२१

कांचनतिलक—जम्बूद्वीप सम्बन्धी विदेहक्षेत्र के कच्छ देश में स्थित विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० ६३ १०५

कांचनदंष्ट्र—वसुदेव की पत्नी बालचन्द्रा का पिता। हपु० ३२ १७-२०

कांचनपुर—(१) कलिंग देश का एक नगर। हपु० २४ ११

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। उत्तरदिशा का लोकपाल कुबेर इसका रक्षक था। राम-रावण युद्ध के समय यहाँ का स्वामी रावण की सहायता के लिए आया था। मपु० ४७ ७८, पपु० ७ २१२-२१३, ५५ ८४-८८, हपु० २२ ८८

(३) विदेह का एक नगर। मपु० ४७ ७८

कांचनभद्र—अयोध्या-निवासी समुद्र (सेठ) तथा उसकी भार्या धारिणी का पुत्र तथा पूर्णभद्र का अनुज। श्रावकधर्म धारण करने के प्रभाव से ये दोनो भाई सौधर्म स्वर्ग में देव हुए। वहाँ से च्युत होकर ये पुन. अयोध्या मे ही राजा हेमनाभ और उसकी रानी अमरावती के मधु और कैटभ नाम से प्रसिद्ध पुत्र हुए। पपु० १०९ १२९-१३२

कांचनमाला—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के मेघकूट नगर के विद्याधरो के राजा कालसवर की रानी। इसने शिला के नीचे दबे हुए शिशु प्रद्युम्न को नगर मे लाकर उसका देवदत्त नाम रखा था। बडा होने पर एक समय यह प्रद्युम्न को देखकर कामासक्त भी हो गयी थी। इसने प्रद्युम्न से सहवास हेतु प्रार्थना भी की थी किन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि यह व्रती है और उसके सहवास के योग्य नही है तब उसने उसे लाछन लगाकर पति से कहा कि यह कुचेष्टा-युक्त है। कालसवर ने उसकी बात का विश्वास करके प्रद्युम्न को मारने की योजना बनायी पर वह सफल नही हो सका। मपु० ७२ ५४-६०, ७२-८८

कांचनरथ—(१) जरासन्ध का एक पुत्र। इसके अनेक भाई थे। हपु० ५२ २९-४०

(२) कांचनस्थान नगर का राजा। शतह्रदा रानी से उत्पन्न इसकी मन्दाकिनी और चन्द्रभाग्या नाम की दो कन्याए थी। ज्येष्ठा मन्दाकिनी ने अनगलवण को और कनिष्ठा चन्द्रभाग्या ने मदनाकुश को वरा था। पपु० ११० १, १८-१९

कांचनलता—पलाश-द्वीप में स्थित पलाशनगर के राजा महाबल की रानी, पद्मलता की जननी। मपु० ७५ १०८-११८

कांचनस्थान—एक नगर। यह लवणाकुश की रानी मन्दाकिनी और मदनाकुश की रानी चन्द्रभाग्या की जन्मभूमि था। पपु० ११० १, १८-१९

कांचना—(१) जयकुमार और सुलोचना के शील की परीक्षा के लिए रविप्रभ नामक देव के द्वारा प्रेषित एक देवी। यह उनके शील को डिगा नही सकी। मपु० ४७ २५९-२६१ पापु० ३.२६३

(२) एक नदी। मपु० ६३.१५८

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा धनरथ की दूसरी रानी मनोरमा की दासी। मपु० ६३ १४२-१४४, १५०-१५२

(४) रुचकगिरि की पश्चिम दिशा में स्थित आठ कूटो में पाँचवें कुमुद नामक कूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७१३

कांचनाभा—अरिष्टपुर नगर के राजा प्रियव्रत की प्रथम रानी, अनुन्धर की जननी। पपु० ३९ १४८-१४९, १५१

कांची—कटि का आभूषण। इसकी कई लडियाँ होती है। शब्दमयी बनाने के लिए इसमें घुघरू भी जोड दिये जाते हैं। मपु० ७ १२९, १२ २९-३०, १४ २१३

कांचीदाम—पट्टेदार करधनी। मपु० ८ १३

कांचीपुर—जम्बूद्वीप में स्थित भरतक्षेत्र के कलिंग देश का एक नगर। मपु० ७० १२७

कांडकप्रपात—गगा नदी के पास की एक गुहा। भरतेश की सेना ने इस गुहा में प्रवेश करके गगा को पार किया था। मपु० ६२ १८८

काकजंघ—कौशल देश सम्बन्धी साकेत नगर का निवासी मातग। पूर्वभव के अपने पुत्र पूर्णभद्र द्वारा समझाये जाने पर इसने विधिपूर्वक सन्यास धारण कर लिया था, जिसके फलस्वरूप मरकर यह नन्दीश्वर द्वीप मे कुबेर हुआ। मपु० ७२ २५-३३

काकन्दी—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की नगरी, तीर्थंकर पुष्पदन्त की जन्मभूमि। मपु० ५५ २३-२८, पपु० २० ४५

(२) लवण और अकुश के पूर्वभव के जाव प्रियकर और हितकर की निवासभूमि। पपु० १०८ ७-४६

(३) रतिवर्धन भी यहाँ का राजा था। उसने काशी नरेश कशिपु की सहायता से अपना खोया राज्य प्राप्त किया था। पपु० १०८ ७-३०

काकली—संगीत की चौदह मूर्च्छनाओं का एक स्वर । हपु० १९ १६९

काकिणी—चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक रत्न । यह सूर्य के समान प्रकाश एवं ताप से युक्त होता है । शिलापट्ट आदि पर लेख आदि अंकित करने के लिए प्राचीन काल में इसका व्यवहार किया जाता था । मपु० ३२ १५, १४१, ३७ ८५-८५ हपु० ११ २७

काकोदर—जयकुमार की कथा में उल्लिखित एक सर्प । यह मरकर गंगा नदी में काली नाम का जलदेवता हुआ था । मपु० ४३ ९२-९५

काकोनद—इस नाम से प्रसिद्ध म्लेच्छ । ये अत्यन्त भयंकर, मांसभोजी और दुर्जेय थे । पपु० ३४ ७२

काक्षि—भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का एक देश । हपु० ११ ७२-७३

कागन्धु—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी । भरतेश की सेना ने इस नदी को पार किया था । मपु० २९ ६४

काचवाह—पालकीवाहक-कहार आदि । मपु० ८ १२१

काणभिक्षु—कथाग्रन्थ-निर्माता जिनसेन का पूर्ववर्ती आचार्य । मपु० १ ५१

कात्यायनी—तीर्थंकर नेमिनाथ के संघ की प्रमुख आर्यिका । मपु० ७१. १८६

कादम्बिक—हलवाई । मपु० ८ २३४

कानीन—कन्या-अवस्था में उत्पन्न कुन्ती का पुत्र कर्ण । हपु० ५० ८७-८८

कान्त—(१) लंका-द्वीप का उपद्रव आदि से रहित स्थान । पपु० ६ ६७-६८

(२) राम का एक योद्धा । पपु० ५८ २१

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६८

कान्तगु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६८

कान्तपुर—(१) पुष्करार्ध द्वीप में पश्चिम विदेहक्षेत्र के पद्मक देश का एक नगर । मपु० ४७ १८०

(२) वंग देश का एक नगर । मपु० ७५ ८१

कान्तवती—मनोरम नामक राष्ट्र में शिवंकरपुर नगर के राजा अनिलवेग की रानी भोगवती की जननी । मपु० ४७ ४९-५०

कान्तशोक—पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित विजयावती नगरी के समीपवर्ती मत्तकोकिल नामक ग्राम का स्वामी । यह बाली के पूर्वभव के जीव सुप्रभ का पिता था । पपु० १०६ १९०-१९७

कान्ता—(१) मथुरा नगरी के निवासी भानु और उसकी स्त्री के तीसरे पुत्र भानुषेण की स्त्री । हपु० ३३ ९६-९९

(२) भरत की भाभी । पपु० ८३ ९४

कान्तारचर्या—वन में ही आहार करने की प्रतिज्ञा । दमधर और सागरसेन मुनियों ने यह प्रतिज्ञा की थी । मपु० ८ १६८

कान्ति—(१) रावण की एक रानी । पपु० ७७ १५

(२) शरीर-सौन्दर्य । मपु० १५ २१५

कान्तिमान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०२

कापिष्ठ—ऊर्ध्वलोक में स्थित आठवाँ स्वर्ग । माहेन्द्र स्वर्ग के अन्त से इस स्वर्ग तक की लम्बाई एक रज्जु प्रमाण है । मपु० ५९ २३७, पपु० १०५ १६६-१६८, हपु० ४ १४-१५

कापिष्ठलायन—गजपुर (हस्तिनापुर) नगर का निवासी द्विज, गौतम का पिता । हपु० १८ १०३-१०४

कापोतलेश्या—एक अशुभ लेश्या । पहली, दूसरी और तीसरी पृथिवी के ऊर्ध्वभाग के निवासी नारकी इस लेश्या से युक्त होते हैं । हपु० ४ ३४३

काम—(१) प्रद्युम्न । हपु० ४८ १३, मपु० ७२ ११२

(२) ग्यारह रुद्रों में दसवाँ रुद्र । हपु० ६० ५७१-५७२

(३) चार पुरुषार्थों में तीसरा पुरुषार्थ । इन्द्रियविषयानुरागियों की मानसिक स्थिति । कामासक्त मानव चंचल होते हैं और मूर्ख ही इनके अधीन होते हैं, विद्वान् नहीं । मपु० ५१ ६, पपु० ८३ ७७, हपु० ३ १९३, ९ १३७

(४) रावण का योद्धा । इसने राम के योद्धा दृढ़रथ के साथ युद्ध किया था । पपु० ५७ ५४-५६, ६२ ३८

कामग—बलाहक देव द्वारा निर्मित एक विमान । यह मेघाकार मोतियों की लटकती हुई मालाओं से शोभित, क्षुद्र-घण्टियों से ध्वनित, और रत्नजटित था । मपु० २२ १५-१६, पपु० ५ १६७

कामगामिनी—एक विद्या । रावण ने उसे प्राप्त किया था । पपु० ७ ३२५-३३२

कामजित्—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ४०

कामजेता—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ४०

कामतीव्राभिनिवेश—स्वदारसन्तोषव्रत के पाँच अतिचारों में पाँचवाँ अतिचार । हपु० ५८ १७४-१७५

कामद—(१) ग्यारह रुद्रों में पाँचवाँ रुद्र । हपु० ६० ५७१

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६७

कामदत्त—श्रावस्ती नगरी का एक श्रेष्ठी । इसने जिनमन्दिर के आगे मृगध्वजी केवली तथा महिष की और जिनमन्दिर में कामदेव तथा रति की मूर्तियाँ स्थापित करायी थीं । इस स्थापना का उद्देश्य यह था कि कामदेव और रति की मूर्तियाँ देखने के लिए अधिक संख्या में आने वाले लोग जिन मूर्तियों एवं मृगध्वज केवली के भी दर्शन करें जिससे उन्हें पुण्य लाभ हो । हपु० २८ १८, २९ १-६

कामदायिनी—रावण को प्राप्त एक विद्या । पपु० ७ ३२५

कामदृष्टि—भरतेश चक्रवर्ती का गृहपति-रत्न । यह उनके चौदह रत्नों में एक था । इसने और स्थपति रत्न रत्नभद्र ने उन्मग्नजला और निमग्नजला दोनों नदियों पर पुल बनाया था जिस पर होकर भरतेश की सेना उत्तर भारत में पहुँची थी । हपु० ११ २६-२९ महापुराण में कामदृष्टि को कामवृष्टि कहा है । मपु० ३७ १७६

कामदेव—(१) श्रावस्ती नगरी के श्रेष्ठी कामदत्त के वंश में उत्पन्न एक श्रेष्ठी । निमित्तज्ञानियों के निर्देशानुसार इसने अपनी पुत्री बन्धुमती का विवाह वसुदेव के साथ किया था । हपु० २९ ६-१२

(२) वृषभदेव का एक पुत्र । मपु० ४३ ६६

(३) वृषभदेव के चौरासी गणधरो मे तेरासीवाँ गणधर । मपु० ४३ ६६, हपु० १२.७०

(४) एक पद । चौबीस व्यक्ति इस पद के धारक थे । उनमें सर्वप्रथम बाहुबलि हैं । वे अनुपम सौन्दर्य के धारक थे । मपु० १६ ९

कामधेनु—(१) इच्छानुकूल सुख-साधनों की पूरक गाय । मपु० ४६ ३३-३६

(२) अभीसिप्त अर्थ प्रदायिनी एक विद्या । जमदग्नि की पत्नी रेणुका को यह विद्या एक मुनि से प्राप्त हुई थी । मपु० ६५ ९८

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६७

कामन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७२

कामपताका—रगसेना गणिका की पुत्री । हपु० २९ २६-२७

कामपुष्प—ऊँचे कोट और गोपुर से युक्त और तीन-तीन परिखाओ से आवृत, विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर । मपु० १९ ४८, ५३

कामबाण—काम के पांच बाण—तपन, तापन, मोदन, विलापन और मरण । मपु० ७२ ११९

कामराशि—रावण का एक योद्धा । पपु० ५७ ५४-५६

कामरूप—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश (असम) । मपु० २९ ४२

कामरूपिणी—(१) इस नाम की एक मुद्रिका । इसे प्रद्युम्न ने राजकुमार सहस्रवक्त्र से प्राप्त का थी । मपु० ७२ ११५-११७

(२) विद्याधरो की एक विद्या । मपु० ६२ ३९१

कामलता—अवन्ती नगरी की एक वेश्या । पपु० ३३ १४६

कामवृष्टि—भरतेश का इस नाम का एक गृहपति-रत्न । मपु० ३७ ८३-८४, १७६ हरिवश पुराण में इसे कामदृष्टि नाम दिया गया है । हपु० ११ २८

कामशास्त्र—काम पुरुषार्थ का विवेचक शास्त्र । मपु० ४१.१४३

कामशुद्धि—काम-रहित वृत्ति, जितेन्द्रियता, स्वदार-सन्तोष । मपु० ३९ ३१

कामहा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६७

कामाग्नि—(१) आत्मयज्ञ सम्पन्न करने के लिए जिन तीन अग्नियो का शमन किया जाता है वे हैं—क्रोधाग्नि कामाग्नि, और उदराग्नि । इनमें कामाग्नि का शमन वैराग्य की आहुति से होता है । मपु० ६७ २०२

(२) रावण का एक योद्धा । पपु० ५७ ५४-५६

कामारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६५

कामावर्त—रावण का एक योद्धा । पपु० ५७ ५४-५६

कामितप्रद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. २०२

काम्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६७

काम्पिल्य—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर, तीर्थंकर विमलनाथ की जन्मभूमि । मपु० ५९ १४, २१, पपु० २० ४९, ८५ ८५ दसवें, ग्यारहवें और बारहवें चक्रवर्ती यहीं जन्मे थे । राम आदि के गुरु एर भी इसी नगर के निवासी थे । पपु० २० १८५-१९२, २५ ४१-५९

काम्पिल्या—राजा द्रुपद की नगरी, द्रौपदी की जन्मभूमि । मपु० ७२ १९८

काम्भोज—भरतेश के भाई द्वारा छोड़ा गया भरतक्षेत्र के उत्तर आर्य-खण्ड में स्थित (काबुल का पार्श्ववर्ती) एक देश । यहाँ के अश्व प्रसिद्ध थे । मपु० १६ १४१-१४८, १५६, ३० १०७, हपु० ११ ६६-६७ कृष्ण के समय में लोग इसे इसी नाम से जानते थे । हपु० ५० ७२-७३ महावीर की विहारभूमि । हपु० ३ ३-७

काय—पचभूतात्मक प्रतिक्षण परिवर्तनशील शरीर । मपु० ६६ ८६

कायक्लेश—छ बाह्य तपो में एक प्रधान एव कठोर तप । इसमें शारीरिक दु'ख के सहन, सुख के प्रति अनासक्ति और धर्म की प्रभावना के लिए शरीर का निग्रह किया जाता है । योगी इसीलिए वर्षा, शीत और ग्रीष्म तीनो कालो में शरीर को क्लेश देते हैं । ऐसा करने से सभी इन्द्रियो का निग्रह हो जाता है और इन्द्रिय-निग्रह से मन का भी निरोध हो जाता है । मन के निरोध से ध्यान, ध्यान से कर्मक्षय और कर्मों के क्षय से अनन्त सुख की प्राप्ति होती है । मपु० २० ९१, १७८-१८०, १८३ यह भी कहा गया है कि शारीरिक कष्ट उतना ही सहना चाहिए जिससे सक्लेश न हो, क्योकि सक्लेश हो जाने पर चित्त चचल हो जाता है और मार्ग से भी च्युत होना पड़ता है अतः जिस प्रकार ये इन्द्रियाँ अपने वश में रहें, कुमार्ग की ओर न दौड़ें उस प्रकार मध्यमवृत्ति का आश्रय लेना चाहिए । मपु० २० ६, ८, पपु० १४ ११४-११५, वीवच० ६ ३२-४१

कायगुप्ति—किसी के चित्र को देखकर मन में विकार का उत्पन्न न होना, शरीर की प्रवृत्ति को नियमित रखना । मपु० २० १६१, पापु० ९ ९०

कायनियन्त्रण—अहिंसाव्रत की पाँच भावनाओ में एक भावना । इसे कायगुप्ति भी कहते हैं । मपु० २ ७७, २० १६१

कायबल—मनोबल, वचनबल और कायबल इन तीन ऋद्धियो में एक ऋद्धि । वृषभदेव इन तीनों ऋद्धियो के धारक थे । मपु० २ ७२

कायमान—तम्बू । मपु० २७ १३२

काययोग—काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों का सचार । यह सात प्रकार का होता है—औदारिककाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिक-काययोग, वैक्रियिक मिश्रकाययोग, आहारककाययोग, आहारक-मिश्रकाययोग और कार्मणकाययोग । मपु० ६२ ३०९-३१०

कायिकी क्रिया—दुर्भाव से युक्त होकर उद्यम करना । हपु० ५८ ६६

कायोत्सर्ग—ध्यान का एक आसन । इसमें शरीर के समस्त अग सम रखे जाते हैं और आचारशास्त्र में कहे गये बत्तीस दोषो का बचाव किया जाता है । पर्यंकासन के समान ध्यान के लिए यह भी एक सुखासन है । इसमें दोनो पैर बराबर रखे जाते है तथा निश्चल खड़े रहकर एक निश्चित समय तक शरीर के प्रति ममता का त्याग किया जाता है । मपु० २१ ६९-७१, हपु० ९.१०१-१०२, १११, २२ २४, ३४ १४६

कारकट—एक नगर। मांसभोजी राजा कुम्भ के अपने नगर से इस नगर में आ जाने से यह कुम्भकारकटपुर नाम से भी विख्यात हुआ। मपु० ६२.२०२-२१२

कारण—(१) कार्य का नियामक हेतु। इसके बिना कार्योत्पत्ति सम्भव नही होती। इसके दो भेद हैं—उपादान और सहकारी (निमित्त)। कार्य की उत्पत्ति में मुख्य कारण उपादान और सहायक कारण सहकारी होता है। हपु० ७ ११, १४

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

कारु—शूद्रवर्ण का एक भेद। ये स्पृश्य और अस्पृश्य दोनो होते हैं। इनमें नाई, धोबी आदि स्पृश्य हैं। वे समाज के साथ रहते हैं। अस्पृश्य बाह्य समाज से दूर रहते हैं और समाज से दूर रहते हुए ही अपना निर्दिष्ट कार्य करते हैं। मपु० १६ १८५-१८६

कारुण्य—सवेग और वैराग्य के लिए साधनभूत तथा अहिंसा के लिए आवश्यक मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ इन चार भावनाओ में तृतीय भावना। इसमें दीन दुखी जीवो पर दया के भाव होते हैं। मपु० २०.६५

कार्ण—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित आर्यखण्ड की उत्तरदिशा का एक देश। महावीर ने विहार कर इस देश में धर्म का उपदेश दिया था। हपु० ३.६-७

कार्तवीर्य—ईशावती नगरी का राजा और आठवें चक्रवर्ती सुभूम का पिता। इसकी रानी और सुभूम की जननी का नाम तारा था। गजपुर (हस्तिनापुर) नगर में कौरववश में उत्पन्न हुए इसने कामधेनु के लोभ से जमदग्नि तपस्वी को मार डाला तथा यह भी जमदग्नि के पुत्र परशुराम द्वारा मारा गया था। गर्भवती इसकी रानी तारा भयभीत होकर गुप्त रूप से कौशिक ऋषि के आश्रम में जा पहुँची। वही उसके पुत्र हुआ तथा भूमिगृह में उत्पन्न होने से उसका नाम सुभौम रखा गया था। पपु० २० १७१-१७२, हपु० २५ ८-१३

कार्पटिक—काशी के सभ्रमदेव की दासी का द्वितीय पुत्र, कूट का अनुज। पिता ने इन दोनो भाइयो को जिन मन्दिर में सेवार्थ नियुक्त कर दिया था, अत मरकर पुण्य के प्रभाव से दोनो व्यन्तर देव हुए। इसका नाम सुरुप और इसके भाई का नाम रूपानन्द था। पपु० ५ १२२-१२३

कार्मण—पाँच प्रकार के शरीरो में पाँचवें प्रकार का शरीर। यह शरीर सर्वाधिक सूक्ष्म होता है। प्रदेशो की अपेक्षा तैजस और कार्मण दोनो शरीर उत्तरोत्तर अनन्तगुणित प्रदेशो वाले होते है। ये दोनो जीव के साथ अनादि काल से लगे हुए हैं। पपु० १०५ १५२-१५३

काल—(१) भरत चक्रवर्ती की निधिपाल देवों द्वारा सुरक्षित और अविनाशी नौ निधियो में प्रथम निधि। इससे लौकिक शब्द-व्याकरण आदि शास्त्रो की तथा इन्द्रियो के मनोज्ञ विषयो वीणा, बासुरी आदि सगीत की यथासमय उपलब्धि होती रहती थी। मपु० ३७ ७३-७६, हपु० ११ ११०-११४

(२) गन्धमादन पर्वत से उद्भूत महागन्धवती नदी के समीप भल्लकी नाम की पल्ली का एक भील। इसने वरधर्म मुनिराज के पास मद्य, मास और मधु का त्याग किया था। इसके फलस्वरूप यह मरकर विजयार्ध पर्वत पर अलका नगरी के राजा पुरबल और उनकी रानी ज्योतिर्माला का हरिबल नाम का पुत्र हुआ था। मपु० ७१ ३०९-३११

(३) भरत खण्ड के दक्षिण का एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८४-८६

(४) विभीषण के साथ राम के आश्रय में आगत विभीषण का शूर सामन्त। यह राम का योद्धा हुआ और इसने रावण के योद्धा चन्द्रनख के साथ युद्ध किया था। पपु० ५५ ४०-४१, ५८ १२-१७, ६२ ३६

(५) व्यन्तर देवो के सोलह इन्द्रो मे पन्द्रहवाँ इन्द्र। वीवच० १४ ५९-६१

(६) पचम नारद। यह पुरुष सिंह नारायण के समय में हुआ था। इसकी आयु दस लाख वर्ष की थी। अन्य नारदो के समान यह भी कलह का प्रेमी, धर्म-स्नेही, महाभव्य और जिनेन्द्र का भक्त था। हपु० ६० ५४८-५५०

(७) सातवी पृथिवी के अप्रतिष्ठान नामक इन्द्रक की पूर्व दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५८

(८) कालोदधि के दक्षिण भाग का रक्षक देव। हपु० ५ ६३८

(९) दिति देवी द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याओ का एक निकाय। हपु० २२ ५९-६०

(१०) छ द्रव्यो में एक द्रव्य। यह रूप, रस, गन्ध और स्पर्श तथा गुरुत्व और लघुत्व से रहित होता है। वर्तना इसका लक्षण है। अनादिनिधन, अत्यन्त सूक्ष्म और असख्येय यह काल सभी द्रव्यो के परिणमन में कुम्हार के चक्र के घूमने में सहायक कील के समान सहकारी कारण होता है। मपु० ३ २-४, २४ १३९-१४०, हपु० ७ १, ५८ ५६ इसके अणु परस्पर एक दूसरे से नही मिलते इसलिए यह अकाय है तथा शेष पाँचो द्रव्य–जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश के प्रदेश एक दूसरे से मिले हुए रहते हैं इसलिए वे अस्तिकाय हैं। यह धर्म, अधर्म और आकाश की भाँति अमूर्तिक है। इसके दो भेद हैं—मुख्य (निश्चय) और व्यवहार। इनमें व्यवहारकाल-मुख्यकाल के आश्रय से उत्पन्न उसी की पर्याय है। यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान रूप होकर यह ससार का व्यवहार चलाता है। समय, आवलि, उच्छ्वास, नाडी आदि इसके अनेक भेद हैं। मपु० ३ ७-१२, २४ १३९-१४४ परमाणु जितने समय में अपने प्रदेश का उल्लघन करता है, उतने समय का एक समय होता है। यह अविभागी होता है। इसके आधार से होनेवाला व्यवहार निम्न प्रकार है—

असख्यात समय = एक आवलि
सख्यात आवलि = एक उच्छ्वास-नि श्वास
दो उच्छ्वास-नि श्वास = एक प्राण
सात प्राण = एक स्तोक
सात स्तोक=एक लव

सतहत्तर लव = एक मुहूर्त
तीस मुहूर्त=एक अहोरात्र
पन्द्रह अहोरात्र = एक पक्ष
दो पक्ष = एक मास
दो मास = एक ऋतु
तीन ऋतु = एक अयन
दो अयन = एक वर्ष
पाँच वर्ष=एक युग
दो युग = दस वर्ष
दस वर्ष × १० = सौ वर्ष
१०० वर्ष × १० = हजार वर्ष
१००० वर्ष × १० = दस हजार वर्ष
दस हजार वर्ष × १० = एक लाख वर्ष
एक लाख वर्ष × ८४ = एक पूर्वांग
८४ लाख पूर्वांग=एक पूर्व
८४ लाख पूर्व=एक नियुतांग
८४ लाख नियुतांग=एक नियुत
८४ लाख नियुत = एक कुमुदांग
८४ लाख कुमुदांग=एक कुमुद
८४ लाख कुमुद=एक पद्मांग
८४ लाख पद्मांग=एक पद्म
८४ लाख पद्म = एक नलिनांग
८४ नलिनांग=एक नलिन
८४ लाख नलिन=एक कमलांग
८४ लाख कमलांग=एक कमल
८४ लाख कमल=एक तुट्यांग
८४ लाख तुट्यांग=एक तुट्य
८४ लाख तुट्य=एक अटटांग
८४ लाख अटटांग=एक अटट
८४ लाख अटट=एक अममांग
८४ लाख अममांग=एक अमम
८४ लाख अमम=एक ऊहांग
८४ लाख ऊहांग=एक ऊह
८४ लाख ऊह=एक लतांग
८४ लाख लतांग=एक लता
८४ लाख लता=एक महालतांग
८४ लाख महालतांग=एक महालता
८४ लाख महालता = एक शिर प्रकम्पित
८४ लाख शिर प्रकम्पित=एक हस्त प्रहेलिका
८४ लाख हस्त प्रहेलिका=चर्चिका

यह चर्चिका आदि रूप में परिभाषित काल संख्यात है तथा संख्यात वर्ष से अतिक्रान्त काल असंख्येय काल होता है। इससे पल्य, सागर, कल्प तथा अनन्त आदि अनेक काल-परिमाण बनते हैं। हपु० ७.१७-३१ इस व्यवहार काल के उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी दो भेद भी हैं। दोनो में प्रत्येक का काल-प्रमाण दस कोडाकोडी सागर होता है। दोनो का काल बीस कोडाकोडी होता है जिसे एक कल्प कहते हैं। मपु० ३ १४-१५

[का]लक—(१) एक वन। मपु० ५९ १९६

(२) एक भील। इसने चन्दना को भीलराज सिंह के पास पहुँचाया था। इसके उपलक्ष्य में चन्दना ने उसे अपने बहुमूल्य आभूषण तथा धर्मोपदेश दिये थे। मपु० ७५ ४६-४७

(३) उल्कामुखी नगरी का निवासी पापी भीलराज। मपु० ७० १५६

कालकल्प—एक महाभयकर और महाप्रतापी राजा। इसने चम्पा नगरी के राजा जनमेजय के साथ युद्ध किया था। मपु० ८ ३०१-३०२

कालकूट—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश ने इस देश को जीता था। मपु० २९ ४८

(२) निर्दयी, भयकर और काला वनवासियो का एक धनुर्धारी मुखिया। मपु० ७५ २८७-२९०

(३) तीक्ष्ण विष, इसे सूँघकर आशीविष सर्प भी तत्काल भस्म हो जाता है। पपु० १०४ ७२-७५

कालकेशपुर—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास विद्याधर नगरो में से एक नगर। हपु० २२ ९८

कालगुहा—एक गुफा। यहाँ के रक्षक महाकाल राक्षस को प्रद्युम्न ने जीतकर उससे वृषभ नाम का रथ और रत्नमय कवच प्राप्त किये थे। मपु० ७२.१११

कालचक्र—राम की वानरसेना का एक योद्धा। पपु० ७४ ६५-६६

कालतोया—आर्यखण्ड की एक गम्भीर नदी। भरतेश की सेना ने इस नदी को पार किया था। मपु० २९ ५०

कालपरिवर्तन—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव इन पाँच परिवर्तनों में एक परिवर्तन। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के विभिन्न कालांशो में सासारिक जीवो का निरन्तर जन्म-मरण होता रहता है। यही काल-परिवर्तन है। वीवच० ११ ३०

कालमही—पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी, भरतेश की सेना का पडाव-स्थल। मपु० २९ ५०

कालमान—घडी, घण्टा आदि समय का व्यावहारिक प्रमाण। पपु० २४ ६१

कालमुख—रोहिणी के स्वयवर में सम्मिलित एक नृप। रोहिणी के वसुदेव का वरण करने से क्रुद्ध हुए इसने वसुदेव से युद्ध किया। युद्ध में वसुदेव ने इसे प्राण-शेष (अधमरा) कर छोड दिया था। हपु० ३१ २८, ९७

कालमुखी—विद्याधरो की एक विद्या। धरणेन्द्र के निर्देशानुसार दिति देवी ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ६६

कालमेघ—रावण का मदोन्मत्त हाथी। मपु० ६८ ५४०

कालयवन—जरासन्ध का पुत्र। मपु० ७१ ११, हपु० १८ २४, ५२. २९, ३६.७०

काललब्धि—काल आदि पाँच लब्धियो में एक लब्धि-कार्य सम्पन्न होने का समय। विशुद्ध सम्यग्दर्शन की उपलब्धि का बहिरग कारण। इसके बिना जीवों को सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नही होती। भव्य जीव को भी इसके बिना ससार में भ्रमण करना पडता है। इसका निमित्त पाकर जीव अध करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप तीन परिणामों से मिथ्यात्व आदि सात प्रकृतियो का उपशम करता है तथा ससार की परिपाटी का विच्छेद कर उपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है। मपु० ९ ११५-११६, १५ ५३, १७ ४३, ४७ ३८६, ४८ ८४, ६३ ३१४-३१५

काल्ली—सगीत की चौदह मूर्च्छनाओ के चार भेदो में चौथा भेद। इसमें चार स्वर होते है। हपु० १९ १६९

कालश्वपाकी—मातग विद्याधरो का एक निकाय। ये काले मृगचर्म को और काले चर्म के वस्त्रों को धारण करते हैं। हपु० २६ १८

कालसवर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के मेघकूट नगर का एक विद्याधर राजा। अपनी रानी काचनमाला के साथ जिनेन्द्र की पूजा के लिए आकाश मार्ग से विमान में जाते हुए इसने एक शिला को हिल्ती हुई देखा। इसका कारण खोजते हुए नीचे उतरने पर इसे शिला के नीचे एक शिशु प्राप्त हुआ था। प्रिया के अनुरोध पर इस शिशु को इसने युवराज पद दिया तथा काचनमाला ने शिशु का "देवदत्त" नाम रखा था। शिशु के युवा होने पर काचनमाला उसे देखकर कामासक्त हुई किन्तु जब देवदत्त को सहवास के योग्य नही पाया तब उसने छल से कुचेष्टा की। यह भी उसके विश्वास में आ गया। फलस्वरूप इसने अपने पाँच सौ पुत्रो को देवदत्त को मारने के लिए आज्ञा दी थी। युद्ध में इन्हें देवदत्त से पराजित होना पडा था। मपु० ७२ ५४-६०, ७६-८७, १३०, हपु० ४३ ४९-६१ इस शिशु का मूलनाम प्रद्युम्न था। मपु० ७२ ४८

कालसन्धि—भोगभूमि का अन्तिम और कर्मभूमि का आरम्भिक समय। मपु० १२ ८

कालसौकरिक—यह पूर्वभव में मनुष्य आयु को बाँधकर नीच गोत्र के उदय से राजगृह नगर में नीचकुल में उत्पन्न हुआ था। इसके सम्बन्ध में गौतम गणधर ने श्रेणिक से कहा था कि इसे जातिस्मरण हुआ है, अत यह विचारने लगा है कि यदि पुण्य-पाप के फल से जीवो का सम्बन्ध होता है तो पुण्य के बिना इसने मनुष्य-जन्म कैसे प्राप्त कर लिया! इसलिए न पुण्य है, न पाप। इन्द्रियों के विषय से उत्पन्न हुआ वैषयिक सुख ही कल्याण कारक है ऐसा मानकर यह पापात्मा नि शक होकर हिंसा आदि पाँचो पापो को करने से नरकायु का बन्ध हो जाने के कारण जीवन के अन्त में सातवें नरक में जायगा। मपु० ७४ ४५४-४६०, वीवच० १९ १५९-१६६

कालस्तम्भ—विद्याधरो का एक स्तम्भ। कालाश्वपाकी विद्याधर इसी के पास बैठते हैं। हपु० २६,१८

कालांगारिक—राजपुर नगर के राजा सत्यधर के मत्री काष्ठागारिक का पुत्र। राजा को मारने में इसने अपने पिता का सहयोग किया था। मपु० ७५ २२१-२२२ दे० काष्ठागारिक

कालोजला—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित एक अटवी। पाण्डव वनवास के समय यहाँ आये थे। हपु० ४६ ७

कालाग्नि—व्योम-विहारी विद्याधर, श्रीप्रभा का पति और दक्षिणसागरवर्ती द्वीप में विद्यमान किष्कुनगर की दक्षिण दिशा मे इन्द्र द्वारा नियुक्त लोकपाल यम का पिता। पपु० ७ ११४-११५

कालातिक्रम—अतिथिसविभाग व्रत के पाँच अतिचारो में पाँचवाँ अतिचार (समय का उल्लघन कर दान देना)। हपु० ५८ १८३

कालाम्बु—(१) एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ७७-७८

(२) एक वापी। प्रद्युम्न ने कालसवर के ४४९ पुत्रो को इसी वापी में औंधे मुँह बन्द किया था। हपु० ४७ ७०-७४

कालाष्टमी—आषाढ कृष्ण अष्टमी। यह तीर्थंकर विमलनाथ की निर्वाणतिथि है। मपु० ५९ ५५-५७

कालिंगक—(१) कलिंग देश के राजा। राम और लक्ष्मण के साथ वज्रजघ के हुए युद्ध में इन्होने वज्रजघ का साथ दिया था। पपु० १०२ १५४, १५७

(२) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक वन। मपु० २९ ८२

कालिंगी—अन्धकवृष्टि और सुभद्रा के आठवें पुत्र पूरितार्थीच्छ की भार्या। मपु० ७० ९५-९९, हपु० १९ ५

कालिंजर—एक वन। वनवास के समय पाण्डव यहाँ आये थे। पापु० १६ १४५

कालि—राम का एक योद्धा। पपु० ५८ १३-५७

कालिका—पुरूरवा भील की स्त्री। मुनिराज सागरसेन को मृग समझ कर मारने में उद्यत अपने पति को रोकते हुए इसने कहा था कि ये मृग नही वन-देवता घूम रहे हैं। इन्हें मत मारो। यह सुनकर पुरूरवा ने मुनि को नमन किया था और मधु, मास तथा मद्य के त्याग का व्रत ग्रहण किया था। मपु० ७४ १४-२२, वीवच० २ १८-२५

कालिन्द—एक देश। भरतेश के सेनापति ने इसे जीता था। मपु० २९ ४८

कालिन्दसेना—राजा जरासन्ध की पटरानी। हपु० १८ २४ दे० कलिन्दसेना

कालिन्दी—(१) स्निग्ध एव नीले जल से युक्त यमुना नदी। वत्स देश की कौशाम्बी नगरी इसी नदी के तट पर स्थित थी। कर्ण को इसी नदी में बहाया गया था। मपु० ७० ११०-१११, हपु० १४ २

(२) मथुरा के सेठ भानु के पुत्र सुभानु की स्त्री। हपु० ३३ ९६-९९

कालियाहि—यमुना का एक सर्प। कृष्ण ने इसको मारा था। हपु० ३६ ७-८

काली—(१) साकेत नगर के निवासी ब्राह्मण कपिल की पत्नी और जटिल की जननी। मपु० ७४ ६८, वीवच० २ १०५-१०८

(२) एक देवी। पूर्वजन्म में यह सर्पिणी थी। किसी विजातीय सर्प के साथ रमण करते हुए देखकर जयकुमार के सेवको ने सर्प और सर्पिणी दोनो को बहुत दण्ड दिया था जिससे मरकर नाग तो गगा

नदी में इस नाम का जल-देवता हुआ और नागी काली देवी हुई। काली देवी ने मगर का रूप धरकर जहाँ सरयू नदी गंगा में मिलती है वहाँ जयकुमार के तैरते हुए हाथी को पूर्व वैरवश पकड़ा था जिसे सुलोचना के त्याग से प्रसन्न हुई गंगादेवी ने इससे मुक्त कराया था। मपु० ४३ ९२-९५, ४५ १४४-१४९, पापु० ३.५-१३, १६०-१६८

(३) विद्याधरों की एक विद्या। हपु० २२ ६६

कालोदसागर—मध्यलोक का द्वितीय सागर। यह कृष्ण वर्ण का है और धातकीखण्ड द्वीप को सब ओर से घेरे हुए है। इसकी परिधि इकानवे लाख सत्तर हज़ार छ सौ पाँच योजन से कुछ अधिक है तथा समस्त क्षेत्रफल पाँच लाख उनहत्तर हज़ार अस्सी योजन है। यहाँ के निवासी उदक, अश्व, पक्षी, शूकर, ऊँट, गौ, मार्जार और गज की मुखाकृतियों को लिये हुए होते हैं। इसमें चौबीस द्वीप आभ्यन्तर सीमा में और चौबीस बाह्य सीमा में इस तरह कुल अड़तालीस द्वीप हैं। हपु० ५ ५६२-५७५, ६२८-६२९

काव्य—कवि का भाव अथवा कर्म काव्य कहलाता है। धर्म-तत्त्व का प्रतिपादन ही काव्य का प्रयोजन है। काव्य में अनुकरण और मौलिकता का सुन्दर समन्वय होता है। विशाल शब्दराशि, स्वाधीन अर्थ, सवेद्य रस, उत्तमोत्तम छन्द और सहज प्रतिभा तथा उदारता काव्य-रचना के सहायक तत्त्व हैं। प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास काव्य-सृजन के हेतु हैं। काव्यगत सौन्दर्य शैली पर निर्भर करता है। मपु० १ ६२-१११

काव्यगोष्ठी—कवि-सभा। कविता-पाठ के द्वारा सहृदय समाज को काव्य के रसों का आस्वादन कराना ऐसी गोष्ठियों का लक्ष्य होता है। काव्य-गोष्ठियों का आयोजन प्राचीन काल से होता आ रहा है। मपु० १४ १९१

काशी—तीर्थंकर वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित वाराणसी का पार्श्ववर्ती एक देश। यह वृषभदेव एवं महावीर की विहारभूमि था। मपु० १६.१५१-१५२, २५ २८७, २९ ४०, ४७, हपु० ३ ३, ११ ६४, यह तीर्थंकर सुपार्श्व की भी जन्मभूमि थी। वाराणसी नगरी इसी देश की राजधानी थी। अकम्पन भी यहाँ का राजा था। मपु० ४३ १२१, १२४, ४४ ९०, पपु० २० ४३, पापु० ३ १९-२०

काश्मीर—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित उत्तर दिशावर्ती एक प्रसिद्ध देश। लवणांकुश ने यहाँ के शासक को पराजित किया था। महावीर भी विहार करते हुए यहाँ आये थे। मपु० १६ १५३, २९. ४२, पपु० १०१ ८१-८६, पापु० १ १३२

काश्य—तेज। इसके पालक होने से वृषभदेव काश्यप कहलाये। मपु० १६ २६६

काश्यप—(१) वृषभदेव का एक नाम। मपु० १६ २६६ दे० काश्य

(२) वृषभदेव द्वारा राज्याभिषेक पूर्वक बनाया गया महामाण्डलिक राजा। यह चार हज़ार अन्य छोटे-छोटे राजाओं का अधिपति तथा उग्रवंश का प्रमुख राजा था। वृषभदेव ने ही इसे मघवा की उपाधि दी थी। मपु० १६ २५५-२५७, २६१

(३) राम के समय का एक नृप। पपु० ९६ ३०

काश्यपा—जम्बूद्वीप के कुरुजांगल देश में स्थित हस्तिनापुर नगर के राजा अर्हद्दास की रानी मधु और क्रीडव की जननी। मपु० ७२ ३८-४०

काष्ठांगारिक—हेमांगद देश में राजपुर नगर के राजा सत्यधर का मन्त्री। इसने राजा सत्यधर के पुत्र को अपना हन्ता जानकर तथा पुरोहित पर विश्वास कर अनेक नृपों के साथ सत्यधर पर आक्रमण किया था किन्तु पराजित हो गया था। इसने अपने पुत्र कालांगारिक के सहयोग से पुन' आक्रमण किया। इस बार वह विजयी हुआ और सत्यधर को मारकर स्वयं राजा बन गया। अन्त में जीवन्धरकुमार द्वारा चलाये गये चक्र से यह भी मरण को प्राप्त हुआ। मपु० ७५ १८८-२२२, ६५९-६६७

काहल—महानादकारी एक वाद्य-तुरही। मपु० १७ ११३, पपु० ५८. २७-२८

किंपुरुष—इस जाति के व्यन्तर देव। पपु० ५ १५३, १३ ५९, वीवच० १४.५९

किंसूर्य—लोकपाल विद्याधर कुबेर का पिता। इसकी रानी का नाम कनकावली था। पपु० ७ ११२-११३

किन्नर—इस जाति के व्यन्तर देव। ये समतल भूमि से बीस योजन ऊपर विजयार्ध पर्वत के इसी नाम के नगर में रहते हैं। तीर्थंकरों के कल्याणोत्सवों में मांगलिक गीत गाते हुए ये देवसेना के आगे-आगे चलते हैं। मपु० १७ ७९-८८, २२ २१, पपु० ३ ३०९-३१०, ७ ११८, हपु० ८ १५८, वीवच० १४ ५९-६३

(२) एक नगर। किन्नर जाति के व्यन्तर देवों की निवास भूमि। नमिकुमार का मामा यक्षमाली इसी नगर का राजा था। मपु० ७१ ३७२, पपु० ७ ११८

किन्नरगीत—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। अपरनाम किन्नरोद्गीत। मपु० १९ ३३, ५३, पपु० ५ १७९, पापु० ११ २१, ६३ ९३। हपु० २२ ९८

किन्नरद्वीप—महाविदेहक्षेत्र की पश्चिम दिशा में जिनबिम्बों से देदीप्यमान एक विशाल द्वीप। पपु० ३.४४

किन्नरमित्र—सुजन देश के नगरशोभ नगर के राजा के भाई सुमित्र का पुत्र और यक्षमित्र का सहोदर। इसकी श्रीचन्द्रा नाम की एक बहिन थी जो श्रीषेण और लोहजंघ के द्वारा एक वनराज के लिए हरी गई थी। इसने और इसके भाई दोनों ने श्रीषेण और लोहजंघ से युद्ध किया था किन्तु ये दोनों पराजित हो गये थे। मपु० ७५, ४३८-४३९, ४७८-४९३

किन्नरी—किन्नर जाति के देवों की देवियों का सामान्य नाम। मपु० १७ ११०

किन्नरोद्गीत—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० १९ ८०, २२ ९८, पपु० ९४ ५ अपरनाम किन्नरगीत।

किन्नामित—गगनचुम्बी राजमहलों से शोभित और विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का विद्याधरों का नगर। मपु० १९ ३१-३३

किमिच्छकदान—इच्छानुसार (मुँह माँगा) दान। यह दान कल्पद्रुम नामक यज्ञ में चक्रवर्तियों द्वारा दिया जाता है। मपु० ३८ ३१, पपु० ९६ १८-२३ हपु० २१ १७७

किरणमण्डला—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित गुजा नगर के राजा सिंहविक्रम के पुत्र सकलभूषण की आठ सौ पत्नियो में प्रधान पत्नी। मरकर यह तो विद्युद्वक्त्रा नाम की राक्षसी हुई और इसका पति सकलभूषण मुनि हुआ था। मुनि अवस्था में सकलभूषण पर इसने अनेक उपसर्ग किये थे। पपु० १०४ १०३-११७

किरात—म्लेच्छो का एक देश। इसे भरतेश की सेना ने जीता था। मपु० २९ ४८

किरीट—सम्राटो के शिर का आभूषण। यह स्वर्ण निर्मित होता था। मपु० ११ १३३

किरीटी—(१) छोटा किरीट। इसे स्त्री और पुरुष दोनो धारण करते थे। मपु० ३.७८

(२) अर्जुन। हपु० ५५.५

किलकिल—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ७८, ८७, ६८ २७१-२७२

किल्विषिक—वाद्य वादक देव। ये अन्य जातियो के देवो के आगे-आगे नगाड़े बजाते हुए चलते है। इनके पापकर्म का उदय रहता है। स्वल्प पुण्य के अनुसार स्वल्प ऋद्धियाँ ही इन्हें प्राप्त रहती हैं। ये अन्त्यजो की भाँति अन्य देवो से बाहर रहते हैं। मपु० २२ २०, ३०, हपु० ३ १३६, वीवच० १४ ४१

किष्किन्ध—(१) दक्षिण भारत का एक पर्वत। भरतेश के सेनापति ने यहाँ के राजा को अपने आधीन किया था। मपु० २९ ९०

(२) एक नगर, सुग्रीव की निवासभूमि। यह विन्ध्याचल पर्वत के ऊपर स्थित है। मपु० ६८ ४६६-४६७, हपु० ११ ७३-७४

(३) प्रतिचन्द्र विद्याधर का ज्येष्ठ पुत्र और अन्ध्रकरूढि का अग्रज। आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दर की पुत्री श्रीमाला ने स्वयंवर में इसे ही वरा था। पृथ्वीकर्णतटा अटवी के मध्य में स्थित धरणीमौलि पर्वत पर इसने अपने नाम पर एक किष्किन्धपुरी की रचना की। इसके दो पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्रो के नाम थे—सूर्यरज और यक्षरज तथा पुत्री का नाम था सूर्यकमला। अन्त में यह निर्ग्रन्थ हो गया था। पपु० ६ ३५२-३५८, ४२५-४२६, ५०८-५२४, ५७०

किष्किन्धकाण्ड—अगद द्वारा अपहृत लका का एक प्रसिद्ध हाथी। पपु० ७१ ३

किष्कन्धपुर—दक्षिण समुद्रतटवर्ती देवकुरु के समान सुन्दर पृथ्वीकर्णतटा अटवी के मध्य स्थित धरणीमौलि पर्वत पर राजा किष्किन्ध द्वारा बसाया गया नगर। रावण-विजय के पश्चात् अयोध्या आने पर राम ने नल और नील को यहाँ का शासक नियुक्त किया था। पपु० ६ ५०८-५२०, ८८ ४०

किष्कु—(१) शाखामृग-द्वीप के मध्य में स्थित एक पर्वत। पपु० ६ ८२

(२) क्षेत्र का एक प्रमाण-विशेष। यह दो हाथ प्रमाण का होता है। दो किष्कुओ का एक दण्ड और आठ हजार दण्डो का एक योजन होता है। हपु० ७ ४५-४६

किष्कुपुर—वानरवशी राजा श्रीकण्ठ द्वारा वानरद्वीप के किष्कु पर्वत की समतल भूमि पर बसाया गया नगर। यह चौदह योजन लम्बा था और इसकी परिधि बियालीस योजन से कुछ अधिक थी। इसकी दक्षिण दिशा में इन्द्र विद्याधर द्वारा कलाग्नि विद्याधर के पुत्र यम की लोकपाल के रूप में नियुक्ति की गयी थी। किष्कुप्रमोद इसका अपरनाम था। पपु० ६ १-५, ८५ १२०-१२३, ७ ११४-११५, ९ १३

किष्कुप्रमोद—एक नगर। किष्कुपुर का अपरनाम। पपु० ९ १३ दे० किष्कुपुर

कीचक—(१) चूलिका नगरी के राजा चूलिक और उसकी पत्नी विकच के सौ पुत्रो में ज्येष्ठ पुत्र। यह विराट् नगर में द्रौपदी पर मोहित हो गया था। द्रौपदी ने इसकी यह धृष्टता भीम को बतलायी जिससे कुपित होकर द्रौपदी का रूप धरकर भीम ने इसे मुक्को के प्रहार से खूब पीटा। इस घटना से विरक्त होकर इसने रतिवर्धन मुनि के पास दीक्षा धारण कर ली। एक यक्ष ने इसके चित्त की विशुद्धि की परीक्षा ली। इस परीक्षा में यह सफल हुआ। मन की शुद्धि के फलस्वरूप इसे अवधिज्ञान उत्पन्न हो गया। इसके पूर्व पाँचवे भव में यह क्षुद्र नामक म्लेच्छ था, चौथे पूर्वभव में यह धनदेव वैश्य का कुमारदेव नाम का पुत्र हुआ, तीसरे पूर्वभव में यह अपनी माता के जीव का कुत्ता हुआ और दूसरे पूर्वभव में यह सित नामक तापस का मधु नाम का पुत्र हुआ। इसने एक मुनि से दीक्षा ली जिसके फलस्वरूप इसे पहले पूर्वभव में स्वर्ग मिला। वहाँ से च्युत होकर यह इस पर्याय को प्राप्त हुआ। हपु० ४६ २३-२५ पाण्डव पुराण में इसका वध भीम के द्वारा हुआ बताया गया है। पापु० १७ २८९-२९५

(२) एक वश। भुजगेश नगरी के कीचक मारे गये थे। मपु० ७२ २१५

कीर्ति—(१) एक आचार्य। इन्होने वर्द्धमान जिनेन्द्र द्वारा कथित रामकथारूप अर्थ आचार्य प्रभव से प्राप्त किया था। पपु० १ ४१-४२

(२) एक दिक्कुमारी व्यन्तर देवी। यह गर्भावस्था में तीर्थंकर की माता की स्तुति करती है। इसकी आयु एक पल्य होती है। यह केसरी नाम के विशाल सरोवर के कमलो पर निर्मित भवन में रहती है। छ मातृकाओ में यह इन्द्र की एक वल्लभा है। मपु० १२ १६३-१६४, ३८ २२६, ६३ २००, पपु० ३ ११२-११३, हपु० ५ १२१, १३०-१३१, वीवच० ७ १०५-१०८

(३) परमेष्ठियो के गुणरूप सत्ताईस सूत्रपदो में एक सूत्रपद। इसके प्राप्त होने पर पारिव्राज्य का लक्षण प्रकट होता है। जो कीर्ति की इच्छा का परित्याग करके अपने गुणो की प्रशसा करना छोड देता है और महातपश्चरण करता हुआ स्तुति तथा निन्दा में समानभाव रखता है वह तीनो लोको के इन्द्रो के द्वारा स्वत प्रशसित होता है। मपु० ३९ १६२-१६५, १९१

(४) कुरुवश में उत्पन्न हुए चक्रवर्ती महापद्म की वंशपरम्परा में राजा कुलकीर्ति के पश्चात् हुआ एक नृप। सुकीर्ति इन्ही के बाद इस

वंश का शासक हुआ था। सुकीर्ति के बाद भी इसी वंश में कीर्ति नामक एक राजा और हुआ था। हपु० ४५ २४-२५

(५) समवसरण में सभागृहों के आगे के तीसरे कोट के पूर्वी द्वार के आठ नामों में एक नाम। हपु० ५७.५६-५७

कीर्तिकूट—पूर्व विदेहक्षेत्र के आगे स्थित नीलपर्वत के नौ कूटों में पाँचवाँ कूट। हपु० ५.९९-१०१

कीर्तिधर—(१) एक महामुनि। ये शिवमन्दिरनगर के राजा कनकपुख और रानी जयदेवी के पुत्र तथा दमितारि के पिता थे। प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमितसागर के पुत्र अपराजित और अनन्तवीर्य जिन्होंने दमितारि को मारा था, इन्हीं से दीक्षित हुए थे। मपु० ६२ ४१२-४१४, ४८३-४८४, ४८७-४८९, पापु० ४.२७७

(२) राजा पुरन्दर और उसकी रानी पृथिवीमति के पुत्र। इनका विवाह कौशल देश के राजा की पुत्री सहदेवी से हुआ था। सूर्यग्रहण को देखकर ये संसार से विरक्त हो गये थे। पुत्र के उत्पन्न होते ही ये दीक्षित हो गये। पपु० २१ १४०-१६५ एक समय गृहपंक्ति के क्रम से प्राप्त अपने पूर्व घर में भिक्षा के लिए प्रवेश करते देख इनकी गृहस्थावस्था की पत्नी सहदेवी ने इन्हें घर से बाहर निकलवा दिया था। पपु० २२ १-१३ धाय वसन्तलता से माँ के कृत्य को सुनकर सुकोशल अपनी पत्नी विचित्रमाला के गर्भ में स्थित पुत्र को राज्य देकर (यदि गर्भ में पुत्र है तो) इनसे ही दीक्षित हो गया। सहदेवी आर्त्तध्यान से मरकर तिर्यंच योनि में उत्पन्न हुई। चातुर्मासोपवास का नियम पूर्ण कर पारणा के निमित्त पिता-पुत्र दोनों नगर जाने के लिए उद्यत हुए ही थे कि सहदेवी के जीव व्याघ्री ने सुकोशल के शरीर को चीर डाला, पैर की ओर से उन्हें खाती रही और दोनों—"यदि इस उपसर्ग से बचे तो आहार-जल ग्रहण करेंगे अन्यथा नहीं" इस प्रतिज्ञा का निर्वाह करते हुए कायोत्सर्ग से खड़े रहे, इन्होंने इस व्याघ्री को सम्बोधा था जिसके फलस्वरूप सन्यास ग्रहण कर व्याघ्री स्वर्ग गयी और इन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था। पपु० २२ ३१-४९, ८४-९८

कीर्तिधवल—राक्षसवंशी राजा घनप्रभ और उसकी रानी पद्मा का पुत्र और लंका का राजा। इसने विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के मेघपुर नगर के विद्याधरों के राजा अतीन्द्र की पुत्री महामनोहरदेवी से विवाह किया था। श्रीकण्ठ इसका साला था। सुरक्षा की दृष्टि से इसने श्रीकण्ठ को वानरद्वीप दिया था। पपु० ५ ४०३-४०४, ६ २-१०, ७०-७१, ८४

कीर्तिमती—(१) रुचक पर्वत के दक्षिण दिशावर्ती आठ कूटों में छठे रुचकोत्तर कूट की निवासिनी दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०९-७१०

(२) विजयपुर के राजा वरकीर्ति की रानी। मपु० ४७.१४१

कीर्तिषेण—हरिवंशपुराणकार आचार्य जिनसेन के गुरु। ये आचार्य अमितसेन के शान्त स्वभावी अग्रज थे। हपु० ६६ ३१-३३

कीर्तिसमा—विनीता नगरी के राजा सुरेन्द्रमन्यु की रानी। यह वज्रबाहु और पुरन्दर की जननी थी। पपु० २१ ७३-७७

कुंजर—मदोन्मत्त गज। गज-सेना में इसका अधिक उपयोग होता था। मपु० २९ १३२

कुंजरावर्त—(१) हस्तिनापुर का अपरनाम। यह राजा वसु के पुत्र सुवसु की निवासभूमि था। हपु० १८ १७

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० १९ ६८, २२ ९६

कुकृत—पाप। अत्यधिक क्रोध करना, पर पीड़ा में प्रीति रखना, रूक्ष वचन बोलना ये कुकृत हैं। पपु० १२३ १७६-१७७

कुटज—जम्बूद्वीप के विंध्याचल पर्वत का एक वन। अपरनाम कुटव। यह खदिरसार नामक भील की निवासभूमि था। मपु० ७४ ३८९-३९०, वीवच० १९ ९८

कुटिलचेष्टा—मायाचारिता। यह तिर्यंच आयु के बन्ध का कारण होती है। मपु० ५ १२०

कुटिलाकृति—एक महाविद्या। यह दशानन ने प्राप्त की थी। पपु० ७ ३३०, ३३२

कुट्टिम भूतल—जटित प्रागण। प्रागण रत्न-जटित भी होते थे। मपु० २६ ९

कुडुम्ब—भरत द्वारा जीता गया दक्षिण का एक देश। मपु० २९ ८०

कुण्ड—(१) विद्याधरों का स्वामी, राम का एक महारथी योद्धा। पपु० ५४ ३४-३५

(२) रावण का व्याघ्ररथासीन योद्धा। पपु० ५७ ५१-५२

(३) विदेह देश का एक नगर, वर्द्धमान की जन्मभूमि। मपु० ७५ ७, पापु० १ ७२-८६, दे० कुण्डपुर

कुण्डधारी—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गाधारी का एक पुत्र। पापु० ८ २०२

कुण्डपुर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विदेह देश के अन्तर्गत गोदावरी के निकट विद्यमान एक नगर। राजा सिद्धार्थ के पुत्र वीर-वर्द्धमान की जन्मस्थली। अपरनाम कुण्ड। वसुदेव ने यहाँ के राजा पद्मरथ की पुत्री को माला गूँथने का कौशल दिखाकर प्राप्त किया था। मपु० ७४ २५२, ७६ २५१-२७६, पपु० २० ३६, ६०, ३३.२-३, हपु० २ १-४४, ३१ ३, ६६ ७, पापु० १ ७२-८६, वीवच० ७ २-१३, २२, ८ ५९-६०

कुण्डभेदी—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का पुत्र। पापु० ८ २०३

कुण्डल—कर्णाभूषण। छोटे आकार के कुण्डल को कुण्डली कहते थे। मपु० ३ २७, ७८, ४ १७७, ५ २५७

कुण्डलकूट—रुचकवर पर्वत के उत्तरदिशावर्ती आठ कूटों में छठा कूट। ह्री देवी की निवासभूमि। हपु० ५ ७१६

कुण्डलगिरि—कुण्डलवर द्वीप के मध्य में चूड़ी के आकार का यवों की राशि के समान सुशोभित एक पर्वत। इसकी गहराई एक हज़ार और ऊँचाई बयालीस हज़ार योजन है। चौड़ाई मूल में दस हज़ार दो सौ बीस योजन, मध्य में सात हज़ार एक सौ इकसठ योजन और अन्त में

चार हजार छियानवें योजन है। शिरोमार्ग पर पूर्व आदि दिशाओं में चार चार कट हैं। मपु० ५ २९१, हपु० ५ ६८६-६९४

कुण्डलपुर—विदर्भ देश का एक नगर, रुक्मिणी की जन्मभूमि। यहाँ सिंहरथ राज्य करता था। मपु० ६२ १७८, ७१ ३४१, पापु० ४ १०३ अपरनाम कुण्डिनपुर।

कुण्डलमण्डित—विदग्धनगर के राजा प्रकाशसिंह और उसकी रानी प्रवरावली का पुत्र। इसने राजा अनरण्य के राज्य पर कई बार आक्रमण किया। इससे खिन्न होकर अनरण्य ने अपने सेनापति बालचन्द्र के द्वारा इसे अपने राज्य से बाहर निकलवा दिया। एक मुनि से इसने धर्मोपदेश सुना। सम्यक्त्वी होकर यह मरा और जनक की रानी विदेहा के गर्भ में आया। यही जनक का पुत्र भामण्डल हुआ। पपु० २६ १३-१५, ४६-११२, १४८

कुण्डलवर—मध्यलोक का ग्यारहवाँ द्वीप एव सागर। यह सागर इस द्वीप को घेरे हुए है। इस द्वीप के मध्य में कुण्डलगिरि पर्वत है। हपु० ५ ६१८, ६८६ दे० कुण्डलगिरि

कुण्डला—पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित सुवत्सा देश की राजधानी। मपु० ६३ २०९, २१४, हपु० ५ २४७-२४८, २५९-२६०,

कुण्डलाद्रि—एक पर्वत। यहाँ ललिताग देव स्वयप्रभा के साथ क्रीडार्थ आया करता था। मपु० ५ २९१

कुण्डली—छोटे आकार का कुण्डल। इसे बच्चे पहनते थे। मपु० ३ ७८

कुण्डशायी—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का बासठवाँ पुत्र। पापु० ८ २००

कुण्डिनपुर—विदर्भ देश में वरदा नदी के किनारे राजा ऐलेय के पुत्र कुणिम द्वारा बसाया गया नगर। यह रुक्मिणी की जन्मभूमि था। हपु० १७ २१-२३, ४२ ३३-३४, ६० ३९, पापु० १२ ३-४ अपरनाम कुण्डलपुर। दे० कुण्डलपुर

कुणाल—भारतवर्ष का एक देश। श्रावस्ती नगरी इसी देश में रही है। यहाँ सुकेतु राजा का राज्य था। मपु० ५९ ७२

कुणिक—(१) मगध का राजा। खदिरसार भील का जीव दो सागर तक स्वर्गसुख भोगकर इसी राजा की रानी श्रीमती का श्रेणिक नाम का पुत्र हुआ था। मपु० ७४ ४१७-४१८, वीवच० १९ १३४-१३५

(२) राजा श्रेणिक और उसकी रानी चेलिनी का पुत्र। मपु० ७६ ४१

कुणिम—(१) माहिष्मती नगरी के राजा ऐलेय का पुत्र। इसने विदर्भ देश में वरदा नदी के तट पर कुण्डिनपुर नगर बसाया था। हपु० १७ २१-२३

(२) दक्ष की वश परम्परा में उत्पन्न राजा सजयन्त का उत्तराधिकारी पुत्र, महारथ का जनक। पपु० २१ ४८-५१

कुणीयान्—भरतक्षेत्र के मध्य का एक देश। हपु० ११.६५

कुतप—(१) गायन, वादन और नृत्य आदि के प्रयोग दिखानेवाले नट। हपु० २२ १३-१४

(२) भवन की देहली। मपु० २९ ५७

कुतपन्यास—वाद्यो का समुचित प्रयोग। इन्द्र ने अपने नृत्य में यह प्रयाग किया था। मपु० १४ १००

कुदृष्टि—मिथ्यादृष्ट जीव। ये मिथ्यादर्शन से युक्त होने के कारण सद् धर्म का स्वरूप नही समझ पाते। फलत इन्हें कुयोनियाँ मिलती हैं। पपु० ५ २०२-२०३

कुधर्म—मिथ्यादृष्टियो द्वारा सेव्य धर्म। इससे जीवो को नीची योनियो में जन्म लेना पडता है। पपु० ५ २०२-२०३

कुनाल—एक राजा। यह तीर्थंकर शान्तिनाथ का प्रमुख प्रश्नकर्ता था। मपु० ७६,५३१, ५३३

कुन्त—भाला-सैन्य शस्त्र। मपु० ३७ १६४, ४४ १८०

कुन्तल—भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश के छोटे भाई ने अपने अधीन इस देश को छोड कर दीक्षा ले ली थी। हपु० ११ ७०-७१

कुन्तली—कलगी। इसे किरीट पर लगाया जाता था। इसे स्त्री और पुरुष दोनो अपने व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिए लगाते थे। मपु० ३ ७८

कुन्ती—शौर्यपुर नगर के राजा अन्धकवृष्टि/अन्धकवृष्णि और उसकी रानी सुभद्रा की पुत्री। वसुदेव आदि इसके दस भाई तथा माद्री इसकी बहिन थी। राजा पाण्डु ने अदृश्य रूप से कन्या अवस्था में इसके साथ सहवास किया था। कन्या अवस्था में इसके कर्ण तथा विवाहित होने पर युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन पुत्र हुए थे। मपु० ७० ९५-९७, १०९-११०, ११५-११६, हपु० १८ १५, ४५ ३७, पापु० ७ १३१-१३६, २५७-२५९, २६५, ८ १४१, १४२, १६७, १७० कौरवो ने इसे लाक्षागृह मे जला देना चाहा था किन्तु यह पुत्रों सहित सुरग से लाक्षागृह के बाहर निकल गयी थी। वनवास के समय इसके पुत्रो ने इसे विदुर के यहाँ छोड दिया था। अन्त में दीक्षा धारण कर और सन्यासपूर्वक प्राण त्यागकर यह सोलहवें स्वर्ग में सामानिक देव हुई। यहाँ से च्युत होकर यह मोक्ष प्राप्त करेगी। मपु० ७२ २६४-२६६, पापु० १२ १६५-१६६, १६ १४०, २५ १४१-१४४ पूर्वभव में यह भद्रिलपुर नगर के धनदत्त सेठ की स्त्री नन्दयशा की प्रियदर्शना नाम की पुत्री थी। इसके नौ भाई थे और एक बहिन थी। माता-पिता तथा भाई-बहिन के साथ इसने विधिपूर्वक सन्यास धारण किया। मरकर आनत स्वर्ग में उत्पन्न हुई और वहाँ से च्युत होकर इस पर्याय को प्राप्त हुई। मपु० ७० १८२-१९८, हपु० १८ ११२-१२४

कुन्थु—(१) अवसर्पिणी काल के दु षमा सुषमा नामक चतुर्थ काल में उत्पन्न शलाकापुरुष, छठे चक्रवर्ती एव सत्रहवें तीर्थंकर। ये सोलह स्वप्नपूर्वक कृत्तिका नक्षत्र में श्रावणकृष्णा दशमी की रात्रि के पिछले प्रहर में हस्तिनापुर के कौरववशी एव काश्यपगोत्री महाराज शूरसेन की रानी श्रीकान्ता के गर्भ में आये। वैशाख शुक्ल प्रतिपदा के दिन आग्नेय योग में इनका जन्म हुआ। क्षीरसागर के जल से अभिषेक करने के पश्चात् इन्द्र ने इनका नाम कुन्थु रखा। इनका जन्म तीर्थंकर

शान्तिनाथ के बाद आधा पल्य समय बीत जाने पर हुआ था। इनकी आयु पचानवें हजार वर्ष, शरीर की अवगाहना पैंतीस धनुष और कान्ति तप्त स्वर्ण के समान थी। कुमारकाल के तेईस हजार सात सौ पचास वर्ष बीत जाने पर इनका राज्याभिषेक हुआ और इतना ही समय और निकल जाने पर इन्हें चक्रवर्तित्व मिला। राज्य-भोगो से विरक्त होकर इन्होने पुत्र को राज्य दे दिया। ये विजया नामक पालकी में बैठकर सहेतुक वन मे पहुँचे। वहाँ इन्होने वेला (दो दिन का उपवास) किया। वैशाख शुक्ल प्रतिपदा के दिन सायकाल के समय एक हजार राजाओ के साथ ये दीक्षित हुए। दीक्षित होते ही ये मन पर्ययज्ञानी हो गये। इस समय कृत्तिका नक्षत्र था। इसी नक्षत्र मे १६ वर्ष तप करने के बाद तिलक वृक्ष के नीचे चैत्र शुक्ल तृतीया की साय वेला में ये केवली हुए। इनके सघ में स्वयभू आदि पैंतीस गणधर, साठ हजार मुनि, साठ हजार तीन सौ पचास आर्यिकाएँ, तीन लाख श्राविकाएँ और दो लाख श्रावक थे। एक मास की आयु शेष रहने पर ये सम्मेदगिरि आये। इन्होने प्रतिमायोग धारण किया और वैशाख शुक्ल प्रतिपदा के दिन रात्रि के पूर्व भाग में कृत्तिका नक्षत्र में निर्वाण प्राप्त किया। दूसरे पूर्वभव में ये वत्स देश की सुसीमा नगरी के राजा सिंहरथ थे। तपश्चर्या पूर्वक मरण होने से ये पहले पूर्वभव मे सर्वार्थसिद्धि के अनुत्तर विमान मे अहमिन्द्र हुए। वहाँ से च्युत होकर इस पर्याय में आये और तीर्थंकर हुए। मपु० २. १३२, ६४ २-५, १०-१५, २२-२८, ३६-५४, पपु० ५.२१५, २२३, २० १५-३५, ५३, ६१-६८, ८७, ११५, १२१, हपु० १ १९, ४५. २०, ६० १५४-१९८, ३४१-३४९, पापु० ६ २७, ५१ वीवच० १८ १०१-१०९

(२) एक प्रकार के जीव। मपु० ६४.१

(३) तीर्थंकर श्रेयास के प्रथम गणधर। मपु० ५७ ४४, हपु० ६० ३४७

(४) तीर्थंकर अरनाथ के प्रथम गणधर। हपु० ६०.३४८

कुन्थुभक्ति—इक्ष्वाकुवशी कुबेरदत्त का पुत्र, शरभरथ का पिता। पपु० २२ १५६-१५९

कुन्द—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का इकतीसवाँ नगर। मपु० १९ ८२, ८७

(२) रावण का सहायक महायोद्धा नृप। पपु० ७४ ६३-६४

कुन्दकुन्द—सम्पूर्ण श्रुत के विनाश के भय से अवशिष्ट श्रुत को ग्रन्थ रूप में सरक्षित करनेवाले आचार्य भूतवली और पुष्पदन्त के बाद हुए पचाचार से विभूषित निर्ग्रन्थ आचार्य। इन्होने पचम काल में गिरिनार पर्वत केशिखर पर स्थित पाषाण निर्मित सरस्वती देवी को बोलने के लिए बाध्य कर दिया था। पापु० १ १४, वीवच० १ ५३-५७

कुन्दनगर—एक नगर। पपु० ३३ १४३

कुन्दर—भरत के साथ दीक्षित एक राजा। तपस्या करके इन्होने उत्तम गति प्राप्त की थी। पपु० ८८ १-५

कुपात्र—मिथ्यादर्शन, मिथ्या ज्ञान और मिथ्या चारित्र के धारक। हपु० ७ ११४

कुपूतना—कस के पूर्वभव से सम्बन्धित देवी। कस ने गुप्त रूप से वृद्धि को प्राप्त हो रहे अपने शत्रु कृष्ण को मारने के लिए इसे गोकुल भेजा था। वहाँ कृष्ण को मारने के लिए इसने विष युक्त स्तनपान कराना आरम्भ किया ही था कि कृष्ण ने स्तन का अग्रभाग इतने जोर से चूसा कि यह चिल्लाती हुई भाग गयी। हपु० ३५ ३७-४०, ४२

कुप्य—बर्तन तथा वस्त्र आदि। हपु० ५८.१७६

कुप्यप्रमाणातिक्रम—परिग्रह परिमाण व्रत का एक अतिचार। हपु० ५८ १७६

कुबेर—(१) धान्यपुर का वणिक्। इसकी सुदत्ता नाम की पत्नी और उससे उत्पन्न नागदत्त नाम का पुत्र था। मपु० ८ २३०-२३१

(२) रत्नपुर नामक नगर का निवासी वैश्य और कुबेरदत्ता का पिता। मपु० ६७ ९०-९४

(३) नन्दीश्वर-द्वीप का निवासी एक निधीश्वर। मपु० ७२ ३३

(४) धन-सम्पदा का स्वामी देव। तीर्थंकरो के गर्भ मे आते ही यह उनके जन्म के पूर्व और बाद में भी रत्नवृष्टि करता है। पपु० २ ५२, ७४, हपु० १ ९९

(५) राजा किसूर्य और उनकी भार्या कनकावली का पुत्र। यह काचनपुर नगर की उत्तरदिशा में इन्द्र विद्याधर द्वारा नियुक्त लोकपाल होता है। पपु० ७ ११२-११३

कुबेरकान्त—(१) पुष्कलावती देश के मध्य में स्थित पुण्डरीकिणी नगरी के राजश्रेष्ठी कुबेरमित्र की रानी धनवती का पुत्र। मपु० ४६ १९-२१, ३१

(२) भरतेश के भाण्डागार का एक नाम। मपु० ३७.१५१

(३) लोकाक्षनगर का राजा। पपु० १०१ ६९-७१

कुबेरच्छन्द—देवकुरु क्षेत्र के मध्य में स्थित एक विशाल उपवन। पपु० ८९ ५०

कुबेरदत्त—(१) चम्पा नगरी का निवासी एक सेठ और कनकमाला का पति। इन दोनो की पुत्री कनकश्री अन्तिम केवली जम्बूस्वामी को दी गयी थी। मपु० ७६ ४६-५०

(२) मगध देश के सुप्रतिष्ठ नगर के निवासी श्रेष्ठी सागरदत्त और उसकी भार्या प्रभाकरी का छोटा पुत्र और नागसेन का अनुज। पिता की मृत्यु के पश्चात् भाई को सम्पत्ति का उचित भाग देकर इसने अपनी सम्पत्ति से अनेक चैत्य-चैत्यालय बनवाये और चतुर्विध दान दिया था। यह मुनिराज सागरसेन का भक्त था। मपु० ७६. २१६-२९३

(३) इक्ष्वाकुवश में हुए शासको में वसन्ततिलक का पुत्र और कीर्तिमान् का पिता। पपु० २२ १५६-१५९

(४) कुमार वसुदेव का मित्र। यह महापुर का सेठ था। हपु० २४ ५०

(५) जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी का एक वणिक्। उसकी स्त्री अनन्तमति से श्रीमती का जीव केशव धनदेव नाम का पुत्र हुआ। मपु० ११ १४

कुबेरदत्ता—भरतक्षेत्र के मलय नामक राष्ट्र में रत्नपुर नगर के निवासी

कुबेर श्रेष्ठी की पुत्री। इसके पिता ने इसी नगर के निवासी वैश्रवण सेठ के पुत्र श्रीदत्त को इसे दे दिया। राजकुमार चन्द्रचूल ने बाधा उपस्थित की थी किन्तु वह सफल नहीं हो सका। मपु० ६७ ९०-९६

कुबेरप्रिय—पुण्डरीकिणी नगरी के शासक गुणपाल का निकटवर्ती एक धर्मात्मा सेठ। इसे नगर प्रसिद्ध उत्पलमाला वेश्या भी ध्यान से विचलित न कर सकी थी। मपु० ४६.२८९-३०२

कुबेरमित्र—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रजापाल का राजश्रेष्ठी। इसकी धनवती आदि बत्तीस स्त्रियाँ थी। धनवती का पुत्र कुबेरकान्त था। इसका समुद्रदत्त नाम का एक साला भी इसके नगर मे रहता था। मपु० १९ ५६, पापु० ३ २०१-२०३ राजा के मन्त्री फल्गुमति ने इसे अपना विरोधी जानकर राजा के द्वारा हटा दिया था। बाद में इसकी सच्चाई और विवेक के कारण राजा ने इसे अपने पास पूर्ववत् बुला लिया था। मपु० ४६ ५२-७२

कुबेरमित्रा—सेठ कुबेरमित्र की बहिन तथा सेठ समुद्रदत्त की पत्नी। मपु० ४६ ४१

कुबेरश्री—पुण्डरीकिणी नगरी के राजा गुणपाल की रानी और श्रीपाल और वसुपाल की जननी। मपु० ४७ ३-८

कुब्जक—मलय देश का एक वन। मरुभूति मरकर इसी वन में वज्रघोष नाम का हाथी हुआ था। मपु० ७३ १२

कुब्जा—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना ठहरी थी। मपु० २९ ६०

(२) राजा समुद्रविजय की रानी शिवादेवी की दासी। वसुदेव को राजमहल से बाहर न जाने का रहस्य इसी से ज्ञात हुआ था। हपु० १९ ३३-४२

कुभाण्डी—इस नाम की एक विद्या। यह अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त थी। मपु० ६२ ३९६

कुमार—(१) राजा श्रेणिक का पुत्र अभयकुमार। मपु० ७५ २४, ३०

(२) भरतेश का पुत्र अर्ककीर्ति। मपु० ४५ ४२

कुमारकीर्ति—रावण और लक्ष्मण के आगामी छठे भव के जीव जयकान्त और जयप्रभ नामधारी कुमारो का पिता। पपु० १२३ ११३-११९

कुमारदत्त—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित हेमांगद देश के राजपुर नगर का निवासी एक वैश्य। इसकी भार्या विमला से गुणमाला नाम की पुत्री हुई थी। मपु० ७५ ३१०-३११, ३५१-३५३

कुमारदेव—वैश्य धनदेव और उसकी भार्या सुकुमारिका का पुत्र। यह मुनिराज कीचक के दूसरे पूर्वभव का जीव था। हपु० ४६ ५०-५१

कुमारसेन—हरिवंशपुराण के रचयिता जिनसेन के परम्परा गुरु। आचार्य प्रभाचन्द्र इनके शिष्य थे। हपु० १ ३८

कुमुद—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ८२, ८७

(२) राम का सहायक एक विद्याधर। इसने रावण के योद्धा इन्द्रवर्मा के साथ युद्ध किया था। मपु० ६८ ३९०-३९१, ६२१-६२२, पपु० ५४ ५६, ६० ५७-५९, ७४.६१-६२

(३) चौरासी लाख कुमुदांग प्रमाण काल। नवें मनु यशस्वान् की आयु कुमुद वर्ष प्रमाण थी। मपु० ३ १२६, २२० हपु० ७ २६,

(४) रुचकगिरि के पश्चिमदिशावर्ती आठ कूटो में पाँचवाँ कूट। यह कांचना देवी की निवासभूमि था। हपु० ५ ७१३

(५) बलदेव और कृष्ण के रथ की रक्षा करने के लिए पृष्ठरक्षक के रूप में नियुक्त वसुदेव का पुत्र। हपु० ५० ११५-११७

कुमुदकूट—मेरु से पश्चिम की ओर सीतोदा नदी के दक्षिणी तट पर स्थित एक कूट। हपु० ५ २०७

कुमुदप्रभा—सुमेरु पर्वत की उत्तर-पूर्व (ऐशान) दिशा में स्थित चार वापियो में चौथी वापी। हपु० ५ ३४५

कुमुद्वती—(१) इस नाम की एक गदा। कुबेर ने इसे श्रीकृष्ण को प्रदान किया था। हपु० ४१ ३४-३५

(२) राजा देवक की पुत्री। इसका विदुर राजा से प्रेम-विवाह हुआ था। पापु० ८ १११

कुमुदांग—चौरासी लाख नियुत प्रमाण काल। महापुराण मे नियुत को नयुत कहा गया है। दसवें मनु अभिचन्द्र की आयु कुमुदांग प्रमाण थी। मपु० ३ १३०, २२२, हपु० ७, २६

कुमुदा—पूर्व विदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित दक्षिणोत्तर लम्बे आठ देशो में सातवाँ देश। अशोका नगरी इसकी राजधानी थी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २४९-२५०, २६१-२६२

(२) सुमेरु पर्वत की उत्तर-पूर्व (ऐशान) दिशावर्ती चार वापियो में एक वापी। हपु० ५ ३४५-३४६

(३) नन्दीश्वर द्वीप के पश्चिम दिशा में स्थित अंजनगिरि की चारों दिशाओ में स्थित चार वापियो में तीसरी वापी, धरण देव की क्रीडाभूमि। हपु० ५ ६६२-६६३

(४) समवसरण के चम्पकवन की छः वापियो में प्रथम वापी। हपु० ५७ ३४

कुमुदामेलक—चक्रवर्ती भरत के सेनापति अयोध्या का अश्वरत्न। हपु० ११ २३

कुमुदावती—मर्यादा पालक श्रीवर्धन राजा की नगरी। पपु० ५ ३७

कुमुदावर्त—विद्याधरो का स्वामी, राम का व्याघ्ररथी योद्धा। पपु० ५८ ३-७

कुम्भ—(१) भगवान् वृषभदेव के द्वितीय गणधर। मपु० ४३ ५४, हपु० १२ ५५, ७०

(२) तीर्थंकर के गर्भ मे आने पर गर्भावस्था के समय तीर्थंकर की माता के द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नो में नौवें स्वप्न मे देखी गयी वस्तु-कलश। पपु० २१ १२-१४

(३) मिथिला नगरी का राजा, रानी रक्षिता का पति और तीर्थंकर मल्लिनाथ का जनक। मपु० ६६ ३२-३४, पपु० २० ५५

(४) कुम्भकर्ण का पुत्र और रावण का सामन्त। हनुमान् ने इसका युद्ध में सामना किया था। रथनूपुर नगर के राजा इन्द्र विद्याधर को

जीतने के लिए यह रावण के पीछे-पीछे गया था। मपु० ६८ ४३०, पपु० १० २८, ४९-५०, पपु० ५७ ४७-४८, ६२ ३७

(५) सिंहपुर नगर का एक राजा। इसे नरमास अधिक प्रिय था। नगर के बच्चे इसके भोजन हेतु मारे जाते थे। दुखी प्रजा के कारकट नगर भाग आने पर यहाँ भी आकर यह प्रजा को सताने लगा था, अत डरकर नगर के लोगो ने इसके पास एक गाडी भात और एक मनुष्य प्रतिदिन भेजने की व्यवस्था कर दी थी। लोग उस नगर को कुम्भकारकटपुर कहने लगे थे। मपु० ६२ २०२-२१३, पापु० ४ ११९-१२८

कुम्भकण्टक—सागरवेष्टित एक द्वीप। यहाँ करकोटक पर्वत है। चारुदत्त यहाँ आया था। हपु० २१ १२३

कुम्भकर्ण—अलकारपुर नगर के राजा रत्नप्रभा और उसकी रानी केकसी का पुत्र। यह दशानन का अनुज और विभीषण का अग्रज था। चन्द्रनखा इसकी छोटी बहिन थी। मूलत इसका नाम भानुकर्ण था। पपु० ७ ३३, १६५, २२२-२२५ कुम्भपुर नगर के राजा महोदर की पुत्री तडिन्माला के साथ इसका विवाह हुआ था अत उसे इस नगर के प्रति विशेष स्नेह हो गया था। कुम्भपुर नगर पर महोदर के किसी प्रबल शत्रु के आक्रमण से उत्पन्न प्रजा के दु.ख भरे शब्द सुनने पडे थे। अत इसका नाम ही कुम्भकर्ण हो गया था। यह न मास-भोजी था और न छ मास की निद्रा लेता था। यह तो परम पवित्र आहार करता और सन्ध्या काल में सोता तथा प्रात सोकर उठ जाता था। बाल्यावस्था में इसने वैश्रवण के नगरो को कई बार क्षति पहुँचायी और वहाँ से यह अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ स्वयप्रभनगर लाया था। इसके पुत्र कुम्भ और इसने विद्याधर इन्द्र को पराजित करने में प्रवृत्त रावण का सहयोग किया था। पपु० ८ १४१-१४८, १६१-१६२, १० २८, ४९-५० रावण को इसने समझाते हुए कहा था कि सीता उच्छिष्ट है, सेव्य नही त्याज्य है। मपु० ६८ ४७३-४७५ राम के योद्धाओ ने इसे बाँध लिया था। बन्धन में पड़ने के बाद उसने निश्चय किया था कि मुक्त होते ही वह निर्ग्रन्थ साधु हो जायगा और पाणिपात्र से आहार ग्रहण करेगा। इसी से रावण के दाह-सस्कार के समय पद्मसरोवर पर राम के आदेश से बन्धन मुक्त किये जाने पर इसने लक्ष्मण से कहा था कि दारुण, दु खदायी, भयकर भोगो की उसे आवश्यकता नही है। अन्त में उसने सवेग भाव से युक्त होकर तथा कषाय और राग-भाव छोडकर मुनिपद धारण कर लिया था। कठोर तपश्चर्या से वह केवली हुआ और नर्मदा के तीर पर उसने मोक्ष प्राप्त किया। तब से यह निर्वाण-स्थली पिठरक्षत तीर्थ के रूप मे प्रसिद्ध हुई। पपु० ६६ ५, ७८ ८-१४, २४-२६, ३०-३१, ८०, ८२, १२९-१३०, १४०

कुम्भकारकट—एक नगर। इस नगर का मूल नाम "कारकट" था। सिंहपुर नगर के राजा के मासभोजी होने से उसके कष्ट से दु खी प्रजा कारकट नगर भाग आयी थी। राजा के भी सिंहपुर से कारकट आ जाने के कारण लोग कारकट को ही इस नाम से सम्बोधित करने लगे थे। मपु० ६२ २०७-२१२, पापु० ४ १२४

कुम्भपुर—एक नगर। यहाँ के राजा महोदर और उनकी रानी सुरूपाक्षी की पुत्री तडिन्मकला को भानुकर्ण ने प्राप्त किया था। महोदर के किसी प्रबल शत्रु के आक्रमण से दु खी लोगो के दु ख भरे शब्दो को सुनने से भानुकर्ण कुम्भकर्ण के नाम से सम्बोधित किया गया था। पपु० ८.१४२-१४५

कुम्भार्य—तीर्थंकर अरनाथ के तीस गणधरो में मुख्य गणधर। मपु० ६५ ३९

कुम्भीपाक—एक नरक। इस नरक में नाक, कान, स्कन्ध तथा जघा आदि अगो को काटकर नारकियो को कुम्भ में पकाया जाता है। पपु० २६ ७९-८७

कुयोनि—प्राणियो की सासारिक वैकारिक पर्याये। इनकी सख्या चौरासी लाख इस प्रकार है—नित्यनिगोद, इतरनिगोद, पृथिवीकायिक, जल-कायिक, अग्निकायिक और वायुकायिक जीवो की सात-सात लाख, वनस्पतिकायिक को दस लाख, विकलेन्द्रिय जीवो की छ लाख, मनुष्यो की चौदह लाख तथा पचेन्द्रिय तिर्यंच, नारकी और देवो की क्रमश. चार-चार लाख। हपु० १८ ५६-५८

कुरंग—एक भील। यह कमठ के पूर्वभव का जीव था। इसने आतापन योग मे स्थित चक्रवर्ती वज्रनाभि पर भयकर उपसर्ग किया था। मपु० ७३ ३६-३९

कुरु—(१) एक देश। वृषभदेव की विहारभूमि (मेरठ का पार्श्ववर्ती प्रदेश) मपु० १६ १५२, २५ २८७, २९ ४०, हपु० ९ ४४

(२) वृषभदेव द्वारा स्थापित एक वश। सोमप्रभ इसका प्रमुख राजा था। कौरव इसी वश मे हुए थे। मपु० १६ २५८, हपु० १३ १९, ३३, पापु० २ १६४-१६५, ७ ७४-७५

(३) कुरु देश के स्वामी राजा। ये कठोर शासन तथा न्याय-पालक थे। हपु० ९ ४४

(४) कुरुवशी राजा सोमप्रभ का पौत्र और जयकुमार का पुत्र। इसका नाम भी कुरु ही था। हपु० ४५ ९

(५) एक दानी नृप। इसके वश में चन्द्रचिह्न (शशाकाक) और शूरसेन आदि अनेक राजा हुए। हपु० ४५ १९, पापु० ६ ३

(५) विदेह क्षेत्र की उत्तर तथा दक्षिण दिशा में स्थित उत्तरकुरु एव देवकुरु प्रदेश। पपु० ३ ३७

कुरुक्षेत्र—कृष्ण और जरासन्ध की युद्धभूमि। इसी युद्ध में पाण्डव कौरवो से लडे थे। मपु० ७१ ७६-७७

कुरुचन्द्र—मेघेश्वर जयकुमार का पौत्र और राजा कुरु का पुत्र। हपु० ४५ ९

कुरुजागल—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के दक्षिण भाग में स्थित और धन-सम्पदा से परिपूर्ण एक देश। यहाँ महावीर ने विहार किया था। हस्तिनापुर इस देश का प्रधान नगर था। मपु० २० २९-३०, ४३ ७४, ४५.१६९, ६१ ७४, ६३ ३४२-३८१, हपु० ३ ४, ४५ ६

कुरुद्वय—देवकुरु और उत्तरकुरु। हपु० ५.८

कुरुध्वज—कुरुवश में श्रेष्ठ राजा सोमप्रभ और उसका छोटा भाई श्रेयास। मपु० २० १२०

कुरुमती—राजा श्लक्ष्णरोम की रानी तथा लक्ष्मणा की जननी। हपु० ६०.८५

कुरुराज—हस्तिनापुर के राजा सोमप्रभ का पुत्र मेघस्वर जयकुमार। मपु० ३२.६८

कुरुवंश—वृषभदेव ने क्षत्रिय सोमप्रभ को बुलाकर उसे महामाण्डलिक राजा बनाया था। यही सोमप्रभ वृषभदेव से कुरुराज नाम पाकर कुरु देश का प्रथम राजा हुआ। इसकी वंश-परम्परा में ही शान्ति कुन्थु और अर ये तीन तीर्थंकर हुए। इसी वंश में अनेक राजाओ के शासन के पश्चात् राजा धृत का पुत्र धृतराज हुआ। इसकी तीन रानियाँ थी। अम्बिका, अम्बालिका और अम्बा। इनमें अम्बिका से धृतराष्ट्र, अम्बालिका से पाण्डु और अम्बा से विदुर उत्पन्न हुए। राजा धृतराष्ट्र के दुर्योधन आदि सौ पुत्र थे। ये कौरव कहलाये और राजा पाण्डु के युधिष्ठिर आदि पाँच पुत्र थे। कौरव होते हुए भी ये पाण्डव कहलाये। राज्य को लेकर पाण्डव और कौरवो में परस्पर विरोध हो गया। फलत यह राज्य दो भागो में विभाजित हो गया। हपु० ४५ १-७, ३२-४०, पापु० ४ २-१०

कुरुविन्द—अलका नगरी के राजा विद्याधर अरविन्द का द्वितीय पुत्र और हरिश्चन्द्र का भाई। इसका पिता अरविन्द दाह-ज्वर से पीडित था। अचानक एक छिपकली के रुधिर से पीडा कम हो जाने से उसने कुरुविन्द से एक बावडी बनवाकर उसे रुधिर से भरवाने के लिए कहा। वह पाप से डरता था अत उसने पिता के लिए एक बावडी बनवा कर उसे लाक्षारस से भरवा दिया। जब उसे इस वापी के रुधिर की कृत्रिमता का बोध हुआ तो वह उसे मारने दौडा और गिर जाने से अपनी ही छुरी से मरण को प्राप्त हुआ। इस प्रकार हुई पिता की मृत्यु से उसको दु:ख हुआ। मपु० ५ ८९-९५, १०२-११६

कुरुविन्दा—कौशाम्बी नगरी के वणिक् बृहद्धन की भार्या और अहिदेव तथा महीदेव की जननी। इसके दोनो पुत्रो ने अपनी सम्पदा बेचकर एक रत्न खरीद लिया था। यह रत्न दोनो भाइयो में जिसके पास रहता वह दूसरे को मारने की इच्छा करने लगता था, अत दोनों भाई उस रत्न को अपनी माता कुरुविन्दा को दे आये। इसके भी भाव विष देकर दोनो पुत्रो को मारने के हुए परन्तु ज्ञान को प्राप्त हो जाने से इसने वह रत्न यमुना में फेंक दिया। एक मच्छ यह रत्न खा गया। धीवर उस मच्छ को पकडकर इसके ही घर बेच गया। इसकी पुत्री ने मच्छ काटते समय वह रत्न देखा। पुत्री के भाव भी अपने दोनो भाइयो तथा माँ को मारने के हुए। इसके पश्चात् परस्पर एक दूसरे का अभिप्राय जानकर उन्होंने उस रत्न को चूर-चूर कर फेंक दिया। वे चारों विरक्त होकर दीक्षित हो गये। पपु० ५५ ६०-६७

कुर्यधर—दुर्योधन का भानजा। पाण्डवो को ध्यान-मुद्रा में देखकर इसे अपने मामा के वध का स्मरण हो आया। उस वध का बदला लेने के ध्येय से इसने पाण्डवो को अग्नि में तप्त लोहे के आभूषण पहिनाए थे। पापु० ५२ ५७-६५ महापुराण में इसे कुर्यवर कहा गया है। मपु० ७२ २६८-२७०

कुर्यवर—दे० कुर्यधर।

कुलंकर—नाग नगर के राजा हरिपति और उसकी रानी मनोलूता का पुत्र। पूर्वभव में यह विनीता नगरी के राजा सुप्रभ और रानी प्रह्लादना का पुत्र था और उसी भव में इसने भगवान् आदिनाथ के साथ ही दीक्षा ली थी। पर यह दीक्षा की चर्या का पालन नहीं कर सका और संसार में भ्रमण करता रहा। इस भव में राजा बनने के पश्चात् कुलकर ने अभिनन्दित मुनि के दर्शन किये। उनसे प्रबोध प्राप्त किया और उसने मुनि बनने की इच्छा प्रकट की, पर उसके मन्त्रियो और पुरोहित के प्रभाव से वह अपनी इच्छा पूर्ण नहीं कर सका। घटनाचक्र के प्रवाह में फँसकर उसने अपने प्राण गँवाये। पपु० ८५ ४५-६२

कुल—(१) पिता का वंश। मपु० ३९ ८५, ५९ २६१

(२) जीवों का कुल। अहिंसा महाव्रत के पालन में मुनि को आगमो में बताये हुए जीवो के कुलो का भी ध्यान रखना पडता है। दे० कुलकोटि

कुलकर—आर्य पुरुषो को कुल की भाँति इकट्ठे रहने का उपदेश देने से इस नाम से सम्बोधित। अवसर्पिणी काल के सुषमा-दु:षमा नामक तीसरे काल की समाप्ति में पल्य का आठवाँ भाग काल शेष रह जाने पर चौदह युगादपुरुष उत्पन्न हुए। उनके नाम हैं—

१ प्रतिश्रुति २ सन्मति ३ क्षेमकर ४ क्षेमधर ५ सीमकर ६ सीमधर ७ विमलवाहन ८ चक्षुष्मान् ९ यशस्वान् १० अभिचन्द्र ११ चन्द्राभ १२ मरुदेव १३. प्रसेनजित् और नाभिराज। इनमें प्रथम पाँच के समय मे अपराधी को "हा" कहना ही पर्याप्त दण्ड था। अग्रिम पाँच के समय में "हा" और "मा" ये दोनो और अन्तिम चार के समय में "हा" "मा" और "धिक्" इन तीनों शब्दो का कथन दण्ड हो गया। आदि के सात कुलकरो के समय में माता-पिता सन्तान का मुख नहीं देखते थे। उनका पालन पोषण स्वत होता था। मपु० ३ ५५-५६, १२४-१२८, २११-२१५, २२९-२३७, पपु० ३ ७५-८८, हपु० ७ १२३-१७६ भविष्य में उत्सर्पिणी के दु:षमा नामक दूसरे काल में भी इसी प्रकार सोलह युगादिपुरुष होंगे, उनका क्रम यह होगा—१ कनक २ कनकप्रभ ३ कनकराज ४ कनकध्वज ५ कनकपुंगव ६ नलिन ७ नलिनप्रभ ८ नलिनराज ९ नलिनध्वज १० नलिनपुंगव ११ पद्म १२ पद्मप्रभ १३ पद्मराज १४ पद्मध्वज १५ पद्मपुंगव १६ महापद्म। मपु० ७६ ४६०-४६६

कुलकीर्ति—कुरुवंश का एक राजा। हपु० ४५ २५

कुलकोटि—जीवो के कुल। ये पृथिवीकायिक जीवो के बाईस लाख, जलकायिक और वायुकायिक के अट्ठाईस लाख, दो इन्द्रिय जीवो के सात लाख, तीन इन्द्रिय जीवों के आठ लाख, चार इन्द्रिय जीवो के नौ लाख, जलचर जीवो के साढे बारह लाख, पक्षियो के बारह लाख, चौपायो के दस लाख, छाती से सरकने वालों के नौ लाख, मनुष्यो के चौदह लाख, नारकियो के पचीस लाख और देवो के छब्बीस लाख होते हैं। हपु० १८ ५६, ५९-६२

कुलचर्या—त्रेपन क्रियाओ में उन्नीसवी क्रिया। वर्ण संस्कार हो जाने के

पश्चात् पूजा करने, दान आदि देने तथा अपने कुल के अनुसार असि, मसि आदि छः कर्मों में से किसी एक के द्वारा आजीविका करने को कुलचर्या कहते हैं। इसे कुल भी कहा गया है। मपु० ३८ ५५-६३, १४२-१४३, ३९ ७२

कुलंधर—(१) रत्नावली नगरी का निवासी एक कुलपुत्रक। इसी नगरी का निवासी पुष्पभूति इसका मित्र था। कारणवशात् इनमें शत्रुता उत्पन्न हो गयी, फलतः यह पुष्पभूति को मारना चाहता था, किन्तु मुनि से धर्मोपदेश सुनकर शान्त हो गया था। राजा ने परीक्षा लेकर इसे मण्डलेश्वर बना दिया था। पुष्पभूति भी इसके वैभव को देखकर श्रावक हो गया और मरकर तीसरे स्वर्ग में देव हुआ। यह भी मरकर इसी स्वर्ग में गया। पपु० ५ १२४-१२८

(२) मथुरा नगरी का निवासी एक ब्राह्मण। यह रूपवान् तो था किन्तु शीलवान् न था। एक बार राजा के न रहने पर इसे देखकर कामासक्त हुई उसकी रानी ने सखी के द्वारा इसे अपने निकट बुलाया। यह रानी के पास आसन पर बैठा ही था कि राजा वहाँ आ गया और उसकी कुचेष्टा को देखकर रानी के बहुत कहने पर भी उसने इसे नहीं छोड़ा। राज-सेवक इसे निग्रहार्थ नगर के बाहर ले जा रहे थे कि इसने किसी साधु को देखकर नमन किया और निर्ग्रन्थ साधु बनने की स्वीकृति भी साधु को दी। साधु की प्रेरणा से इसे छोड़ दिया गया और यह भी बन्धनों से मुक्त होते ही श्रमण हो गया। इसने कठिन तपश्चर्या की और मरने पर यह सौधर्म स्वर्ग के ऋतु विमान का स्वामी हुआ। पपु० ९१ १०-१८

कुलधर—(१) तृतीय काल के अन्त में और कर्मभूमि के प्रारम्भ में हुए युगादिपुरुष अनेक वंशों के संस्थापक होने से ये इस नाम से प्रसिद्ध हुए। मपु० ३ २१२, १२४ दे० कुलकर

(२) वृषभदेव का एक नाम। मपु० १६ २६६

कुलपत्र—वंश-परम्परा आदि के उत्कीर्णित उल्लेखों से युक्त ताम्रपत्र तथा अन्य अभिलेख। मपु० २ ९९

कुलपर्वत—जम्बूद्वीप में स्थित सात क्षेत्रों के विभाजक कुलाचल। ये कुलाचल पूर्व से पश्चिम तक फैले हुए हैं और संख्या में छः हैं। इनके नाम हैं—हिमवन्, महाहिमवन् निषध, नील, रुक्मिन् और शिखरिन्। महापुराण में महामेरु (मन्दिर) को जोड़कर सात कुलाचल बताये हैं। मपु० ६३ १९३, पपु० ३ ३२-३७, १०५ १५७-१५८

कुलपुत्र—भावी चौबीस तीर्थंकरों में सातवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७८

कुलभूषण—तीर्थंकर मुनिसुव्रत के शासनकाल में उत्पन्न सिद्धार्थनगर के राजा क्षेमंकर और उसकी महादेवी विमला का द्वितीय पुत्र तथा देशभूषण का अनुज। ये दोनों भाई विद्या प्राप्त करने में इतने दत्त-चित्त रहते थे कि परिवार के लोगों का भी इनको पता नहीं था। एक दिन इन्होंने एक झरोखे से देखती एक कन्या देखी। कामासक्त होकर दोनों उसकी प्राप्ति के लिए एक-दूसरे को मारने को तैयार हुए ही थे कि वन्दीजनों से उन्हें ज्ञात हुआ कि जिसके लिए वे दोनों लड़ रहे हैं वह उनकी ही बहिन है। यह जानकर अपने भाई सहित यह विरक्त हो गया। दोनों भाइयों ने दिगम्बरी दीक्षा धारण कर ली तथा आकाश-गामिनी ऋद्धि प्राप्त कर अनेक तीर्थ क्षेत्रों में इन्होंने विहार किया। पपु० ३९.१५८-१७५ तप करते हुए इन्हें सर्प और बिच्छुओं ने घेर लिया था। राम और लक्ष्मण ने सर्प आदि को हटाकर इनकी पूजा की थी। अग्निप्रभ देव के द्वारा उपसर्ग किये जाने पर राम और लक्ष्मण ने ही इनके इस उपसर्ग का निवारण किया था। दोनों को केवलज्ञान की उपलब्धि हुई। पपु० ३९ ३९-४५, ७३-७५, ६१ १६-१७

कुलवर्धन—मथुरा के राजा मधु का पुत्र। यह पुरुषार्थी और पराक्रमी था। इसने अनेक स्थानों पर विजय प्राप्त की थी। हपु० ४३ २००-२०४

कुलवाणिज—नन्दिग्राम का निवासी। उज्जयिनी नगरी के सेठ धनदेव और सेठानी धनमित्रा से उत्पन्न नागदत्त ने अपनी बहिन अर्थस्वामिनी का विवाह इससे किया था। यह नागदत्त के मामा का पुत्र था। मपु० ७५ ९५-९७, १०५

कुलवान्ता—शिखापद नगर की एक स्त्री। यह अत्यन्त कुरूप और दरिद्र थी। समाज में उसका बड़ा तिरस्कार होता। मरने से एक मुहूर्त पूर्व उसके शुभमति का उदय हुआ। उसने अनशन व्रत लिया। मरकर वह स्वर्ग में क्षीरधारा नाम की एक किन्नर देवी हुई। वहाँ से च्युत होकर यह पुरुष पर्याय में आयी और इसका नाम सहस्रभाग हुआ। पपु० १३.५५-६०

कुलविद्या—पितृ-पक्ष और मातृ पक्ष से प्राप्त होनेवाली विद्या। विद्याधरों की विद्याएँ दो प्रकार की होती हैं—पितृपक्ष और मातृपक्ष से प्राप्त होनेवाली विद्याएँ तथा तपस्या से प्राप्त विद्याएँ। मपु० १९ १३

कुलानुपालन—क्षत्रियों के कुलानुपालन, बुद्धिपालन, निजरक्षा, प्रजारक्षा, और समंजसपना इन पाँच धर्मों में प्रथम धर्म। इसमें कुल के आम्नाय और कुलोचित आचरण की रक्षा की जाती है। मपु० ४२ ४-५

कुलाल—कुम्भकार। प्राचीन भारत में इसे समाज का अत्यन्त उपयोगी अंग माना जाता था। मपु० ३ ४

कुलावधिक्रिया—उपासकाध्ययन सूत्र में कहे गये द्विजों के दस अधिकारों में दूसरा अधिकार-अपने कुल के आचार की रक्षा करना। इस क्रिया के न होने से द्विज का कुल बदल जाता है। मपु० ४० १७४-१७५, १८१

कुलिंगी—कुशास्त्रों से प्रभावित व्यक्ति। यह कलुषित क्रियावान्, दम्भी, अनेक मिथ्या क्रियाओं में विश्वास करनेवाला और मृगचर्म आदि का सेवन करनेवाला होता है। मपु० ३९ २८, पपु० ११९ ५८-६०

कुलित्थ—इस नाम का एक धान्य। मपु० ३ १८८

कुलिश—वज्रायुध। यह सैन्य शस्त्र है। हपु० ३८.२२

कुवली—बदरी फल (बेर)। मपु० ३.३०

कुविन्द—जुलाहा। प्राचीन भारत में इसका बड़ा महत्त्व था। मपु० ४ २६

कुश—(१) आर्यखण्ड के मध्य भाग का एक देश। हपु० ११ ७५

(२) राम के पुत्र मदनांकुश का संक्षिप्त और प्रचलित नाम। पपु० १००.२१

कुशद्य—यदुवंशी नरपति के पुत्र शूर का देश । शूर ने इस देश में शौर्यपुर नगर बसाया था । हपु० १८ ९

कुशध्वज—एक ब्राह्मण । इसकी भार्या सावित्री से उत्पन्न प्रभासकुन्द नाम का एक पुत्र हुआ जो पूर्वभव में राजा शम्भु था । पपु० १०६ १५७-१५९

कुशलमति—मिथिलेश जनक का कुशल एवं हितैषी सेनापति । मपु० ६७ १६६-१७०

कुशवर—(१) सोलह द्वीपो में पन्द्रहवाँ द्वीप । हपु० ५ ६२०

(२) सोलह सागरो में पन्द्रहवाँ सागर । यह कुशवर द्वीप को घेरे हुए है । हपु० ५ ६२०

कुशसेन—चक्रवर्ती भरत के पूर्वभव के जीव राजकुमार पीठ के गुरु । पीठ मरकर सर्वार्थसिद्धि स्वर्ग मे देव हुआ और वहाँ से चयकर भरत हुआ । पपु० २०.१२४-१२६

कुशस्थलक—एक नगर । पपु० ५९ ६

कुशाग्र—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश, भगवान् नेमिनाथ की विहारभूमि । हपु० ११ ६५, ५९ ११०

कुशाग्रगिरि—महावीर की समवसरण-स्थली-विपुलाचल पर्वत का दूसरा नाम । पपु० १ ४६

कुशाग्रनगर—राजा श्रेणिक का शासनाधीन नगर-राजगृह, तीर्थंकर मुनिसुव्रत और छठे नारायण पुण्डरीक की जन्मभूमि । अपरनाम कुशाग्रपुर । यहाँ का स्वामी हरिवंशी सुमित्र भी था । पपु० २ २२४, २० ५६, २१८-२२२, ३५ ५३-५४, हपु० १५ ६१

कुशार्य—एक देश । शौर्यपुर इसी देश का नगर था । मपु० ७० ९२-९३

कुशील—कषाय, विषय, आरम्भ, और जिह्वा । इन्द्रिय सबंधी छ रसो मे आसक्त साधु । महामोह का त्याग नही होने से ऐसे साधु ससार में भ्रमण करते रहते हैं । मपु० ७६ १९३, १९६, हपु० ६० ५८

कुसन्ध्य—भरतक्षेत्र का एक देश, महावीर की विहारभूमि । हपु० ३ ३

कुसुमकोमला—कौशिक नगरी के राजा वर्ण और उसकी रानी प्रभावती की पुत्री । हपु० ४५ ६१-६२

कुसुमचित्रा—द्वारिका [द्वारावती] सभाभूमि । कृष्ण और नेमि इसमे बैठते थे । मपु० ७१ १४१, हपु० ५५ २

कुसुमपुर—एक नगर । लक्ष्मण ने जाम्बूनद को यहाँ के निवासी प्रभव के परिवार का परिचय दिया था । पपु० ४८ १५८

कुसुमवती—भरतक्षेत्र की वरुण-पर्वतस्थ पाँच नदियो में एक नदी । मपु० ५९ ११७-११९, हपु० २७ १२-१३

कुसुमश्री—राजपुर नगर के धनी पुष्पदन्त मालाकार की स्त्री, जातिभट नामक पुत्र की जननी । मपु० ७५ ५२७-५२८

कुसुमामोद—अयोध्या का समीपवर्ती एक उद्यान । पपु० ८४ १३

कुसुमायुध—लंका का एक उद्यान । यहाँ अनन्तवीर्य मुनि को केवलज्ञान उपलब्ध हुआ था । पपु० ७८ ५३-६१

कुसुमावली—विद्याधर सुतार की भार्या । किरातवेष में सुतार का अर्जुन के साथ भयकर युद्ध हुआ था जिसमें इसने अर्जुन से पति-भिक्षा मागकर अपने पति को बचाया था । हपु० ४६.७-१३

कुसुम्भ—लाल रग का सूती और रेशमी वस्त्र । साधारण लोग सूती कुसुम्भ धारण करते थे और धनिक लोग रेशमी । मपु० ३ १८८

कुहर—सगीत के अवरोही पद का एक अलकार । पपु० २४ १८

कुहा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी । मपु० २९ ६२

कूट—(१) भरत चक्रवर्ती के सेनापति द्वारा विजित मध्य आर्यखण्ड का एक देश । मपु० २९.८०

(२) काशी निवासी सम्भ्रमदेव की दासी का ज्येष्ठ पुत्र, कर्पटिक का सहोदर । ये दोनो भाई मरकर जिन-मन्दिर में कार्य करने से उत्पन्न पुण्य के प्रभाव से व्यन्तर देव हुए थे । पपु० ५ १२२-१२३

कूटदोष—मिथ्यादोष । हपु० ४५ १५५

कूटनाटक—कपटपूर्ण नाटक । इन्द्र ने वृषभदेव को राज्य और भोगो से विरक्त करने के लिए ही अल्पायु नीलाजना नर्तकी के नृत्य का आयोजन किया था । मपु० १७ ६-१०, ३८

कूटलेखक्रिया—सत्याणुव्रत का एक अतिचार-जो बात दूसरे ने नही लिखायी उसे उसके नाम पर स्वय लिख देना । हपु० ५८ १६७

कूटस्थ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ ११४

कूटागार—समवसरण में दूसरे कोट के भीतर गोपुर द्वारो के आगे विद्यमान बहुशिखरी भवन । देव, गन्धर्व, विद्याधर, नागकुमार और किन्नर जाति के देवो का क्रीडाभूमि । सामन्तो और राजाओ के निवास भवन । मपु० २२ २३९, २६०-२६१

कूटाद्रि—एक पर्वत । भरतेश की सेना इसे पार करके पारियात्र की ओर बढी थी । इसे कूटाचल भी कहते है । मपु० २९ ६७

कूर्मी—राजपुर नगर के ब्राह्मण ब्रह्मरुचि की गर्भवती भार्या । मुनि का उपदेश सुनकर इसके पति ने दीक्षा धारण कर ली थी और यह भी दसवें मास मे पुत्र को जन्म देने के पश्चात् उसे वन में छोडकर आलोक नगर में इन्दुमालिनी आर्यिका के पास आर्यिका हो गयी थी । पपु० ११ ११७-१५०

कूल—कूलग्राम नगर का राजा । तीर्थंकर वर्द्धमान को आहार देकर इसने पचाश्चर्य प्राप्त किये थे । मपु० ७४ ३१८-३२२, वीवच० १३ २-२३

कूवर—एक सुन्दर नगर । वनवास के समय राम, लक्ष्मण और सीता यहाँ आये थे । ये यहाँ वालखिल्य राजा की पुत्री कल्याणमाला से मिले । इसने जब सिंहोदर द्वारा अपने पिता के बन्धन की बात कही तो राम ने उसे आश्वासन दिया और वालखिल्य को बन्धन मुक्त कराया । पपु० ३३ ३३०, ३४ १-५७, ९१

कूष्माण्डगणमाता—नमि और विनमि को दिति और अदिति द्वारा प्रदत्त एक विद्या । हपु० २२ ६४

कृतकादित्रिक—कृत, कारित और अनुमोदना । मपु० ७३ १११

कृतकृत्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १३०

कृतक्रतु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १३०

कृतप्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १३०

कृतचित्रा—रावण और उसकी रानी कनकप्रभा की पुत्री । दर्शकों को अपने रूप से आश्चर्यान्वित करने से इसका यह नाम था । मथुरा

नगरी के राजकुमार मधु से इसका विवाह हुआ था। पपु० ११ ३०९-३१०, १२ १७-१८

कृतज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

कृतपूर्वागविस्तर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९२

कृतमाल—विजयार्ध पर्वत का निवासी एक व्यन्तर। इसने भरत चक्रवर्ती को चौदह आभूषण भेट मे दिये थे तथा विजयार्ध पर्वत की गुफा के द्वार से प्रवेश करने का उपाय बताया था। मपु० ३१ ९४, १०९-११६, ३५ २३, हपु० ११ २१-२२

कृतमाला—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ ठहरी थी। मपु० २९ ६३

कृतयुग—युग के आदि ब्रह्मा वृषभदेव द्वारा प्रारम्भ किया गया कर्मयुग। तृतीय काल के अन्त में आषाढ मास के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन इसका शुभारम्भ हुआ था। इस काल मे असि-मसि आदि छ कर्मो द्वारा प्रजा के अत्यन्त सतुष्ट एव सुखी होने के कारण यह युग कृतयुग कहलाया। मपु० ३ २०४, १६ १८९-१९० ४१ ५, ४६, पपु० ३ २५९, हपु० ९.४०

कृतलक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

कृतवर्मा—(१) वृषभदेव का वशज, काम्पिल्यपुर का नृप, जयश्यामा का पति और तीर्थंकर विमलनाथ का जनक। मपु० ५९ १४-१५, २१ पदमपुराण में इसकी रानी का नाम शर्मा कहा गया है। पपु० २० ४९

(२) यादव पक्ष का एक अर्धरथ नृप। हपु० ५० ८३

(३) दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। इसे अर्जुन ने परास्त किया था। पापु० २० १५१

कृतवीर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित कौशल देश की अयोध्या नगरी के इक्ष्वाकुवशी सहस्रबाहु तथा रानी चित्रमती का पुत्र। इसने अपने मौसेरे भाई जमदग्नि को मारा था। मपु० ६५ ५६-५८, १०५-१०६

कृतान्त—रावण के पक्ष का व्याघ्ररथासीन एक योद्धा। पपु० ५७ ४९

कृतान्तकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

कृतान्तवक्त्र—मथुरा के राजा मधु को जीतने को तत्पर शत्रुघ्न की सेना का पद्म (राम) द्वारा नियुक्त सेनापति और राजा मधु के पुत्र लवणार्णव का हन्ता। पपु० ८९ ३६, ८० इसने अवर्णवाद के कारण गर्भवती होते हुए भी सीता को सिहनाद नाम की निर्जन अटवी मे पद्म की आज्ञा से रोते हुए छोडा था। पपु० ९७ ६१-६३, १५० अयोध्या में आये सकलभूषण मुनि से भवभ्रमण के दु खो को सुनकर इसे वैराग्य हो गया और इसने पद्म के समक्ष उनसे दीक्षा लेने का प्रस्ताव रखा। पद्म ने इसे रोकना चाहा, पर वह अपने निश्चय पर दृढ रहा। इसकी दृढता देखकर पद्म ने इससे प्रतिज्ञा करायी कि यदि निर्वाण न हो और देव योनि ही मिले तो सकट के समय वह उनको सम्बोधने अवश्य आये। इसे इसने स्वीकार किया और सकलभूषण मुनि से निर्ग्रन्थ-दीक्षा धारण की। पपु० १०७ १-१८ मरकर यह देव हुआ। स्वर्ग से आकर इसने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार लक्ष्मण की मृत्यु होने पर पद्म को सम्बोधित कर उनका मोह दूर किया। पपु० ११८ ४०-६३, ७३-१०५ इसका अपरनाम कृतान्तवक्र था। पपु० १ ९८

कृतान्तान्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

कृतार्थ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३०

कृति—अग्रायणीय पूर्व की पचम वस्तु के चौथे कर्म प्रकृति नामक प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में प्रथम योगद्वार। हपु० १० ८१-८२

कृतिकर्म—अगबाह्य श्रुत के चौदह प्रकीर्णको मे छठा प्रकीर्णक-सामायिक के समय चार शिरोनति, मन-वचन-काय से दो दण्डवत् नमस्कार और बारह आवर्त करना। हपु० २ १०३, १०.१३३

कृतिधर्म—राजा उग्रसेन के चाचा शान्तन के पौत्र हृदिक का ज्येष्ट पुत्र, दृढधर्मा का बडा भाई। हपु० ४८ ४०-४२

कृत्तिका—एक नक्षत्र। तीर्थंकर कुन्थुनाथ इसी नक्षत्र मे जन्मे थे। पपु० २० ५३

कृती—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३०

कृप—जरासन्ध के पक्ष का एक नृप। मपु० ७१ ७८

कृपवर्मा—जरासन्ध के पक्ष का एक नृप। मपु० ७१ ७८

कृपाण—खड्ग। सैन्य शस्त्र। मपु० १० ७३

कृपालु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

कृषिकर्म—प्रजा की आजीविका के लिए वृषभदेव द्वारा बताये गये षट्कर्मों मे तृतीय कर्म-भूमि को जोतना-बोना। मपु० १६ १७९-१८१, हपु० ९ ३५

कृष्टिकरण—सज्वलन-चतुष्क की कषायो का उपसहार कर उनके सूक्ष्म सूक्ष्म खण्ड करना। यह अनिवृत्तिकरण नामक गुणस्थान में पूर्ण किया जाता है। मपु० २० २५९

कृष्ण—अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल मे उत्पन्न शलाका पुरुष और तीन खण्ड के स्वामी नवें नारायण तथा भावी तीर्थंकर। हपु० ६० २८९, वीवच० १८ १०१, ११३ इनके जन्म से पूर्व कस की पत्नी जीवद्यशा ने भिक्षा के लिए आये कस के बडे भाई अतिमुक्तक मुनि का उपहास किया। मुनि वचनगुप्ति का पालन नही कर सके और उसे बताया कि देवकी का पुत्र ही कस का वध करेगा। जीवद्यशा से कस ने यह बात सुनकर अपने बचाव के लिए वसुदेव और देवकी से यह वचन ले लिया कि प्रसूति काल मे देवकी उसके पास ही रहेगी। देवकी के युगलो के रूप मे तीन बार मे छ पुत्र हुए। इन युगलो को नैगमर्ष देव इन्द्र की प्रेरणा मे भद्रिलपुर की अलका वैश्या के आगे उसकी प्रसूति के समय डालता रहा और उसके मृत युगलो को देवकी को देता रहा। सातवें पुत्र के रूप मे ये पैदा हुए तो इनकी रक्षार्थ वसुदेव और बलभद्र इन्हें नन्दगोप का देने के लिए यमुना पार करके आगे बढे। सयोग मे नन्दगोप भी उसी समय उत्पन्न एक कन्या को लेकर इधर ही आ रहा था। वसुदेव और नन्द ने अपनी-अपनी बात कही। दोनो का काम बन गया। वसुदेव ने लडकी ले ली और इन्हे नन्दगोप को दे दिया। कस ने लडकी देखकर समझ लिया कि मुनि का कथन असत्य ही था। उसकी चिन्ता

मिटी। कुछ दिनों बाद मथुरा में उत्पात होने लगे। निमित्तज्ञानी वरुण ने कंस को बताया कि उसका महाशत्रु उत्पन्न हो गया है। कंस ने अपने पूर्वभव में सिद्ध की हुई देवियों को इनका पता लगाने और हो सके तो इन्हें मारने के लिए भेजा। देवियों ने पूतना, शकटासुर और अरिष्ट आदि अनेक रूप धारण किये। इन्हें पाकर भी वे इनका कोई बिगाड नही कर सकी। नन्द और यशोदा ने बड़े लाड-प्यार से इनका पालन-पोषण किया। इनकी बाल लीलाओ से नन्द ग्राम में आनन्द छा गया। बड़े होने पर ये मथुरा गये। इन्होने नागशय्या को वश में किया। वहाँ अनेक उत्पात किये। भयकर हाथियो को मार भगाया। मल्ल युद्ध में चाणूर को मारा और कंस का वध किया। ये अपने माता-पिता देवकी और वसुदेव से मिले और उनके पास रहने लगे। इन्होने कंस के पिता उग्रसेन को बन्धन मुक्त किया। कंस के वध से जीवद्यशा बहुत दुखी हुई थी। वह अपने पिता जरासन्ध के पास गयी। अपना दुख कहा। जरासन्ध ने कृष्ण का वध करने के लिए अपने पुत्र कालयवन को विशाल सेना के साथ भेजा। कालयवन ने सत्रह बार आक्रमण किये पर वह जीत नही सका। अन्त में माला पर्वत पर वह मारा गया। अब की बार जरासन्ध ने अपने भाई अपराजित को बडी सेना लेकर भेजा। उसने तीन सौ छियालीस आक्रमण किये। वे सब विफल गये और वह स्वय युद्ध में मारा गया। बार-बार युद्धो से बचने के लिए कृष्ण के परामर्श से यादवो ने शौर्यपुर, हस्तिनापुर और मथुरा तीनो स्थान छोड दिये। वे समुद्र को हटाकर इन्द्र के द्वारा रची गयी द्वारावती नगरी में आकर रहने लगे। इसी समय समुद्रविजय के पुत्र नेमिनाथ का जन्म हुआ। द्वारावती में सर्वत्र आनन्द छा गया। द्वारावती की समृद्धि बढ़ रही थी। जरासन्ध यादवों की समृद्धि को सहन नही कर सका। वह यादवो पर आक्रमण करने को तैयार हो गया। उसकी सहायता के लिए दुर्योधन और दु शासन आदि उसके भाई, कर्ण, भीष्म और द्रोणाचार्य आदि महारथो तथा उनके सहायक अन्य कई राजा अपनी सेनाओ के साथ आ गये। जब कृष्ण ने यह समाचार सुना तो उन्होने द्वारावती का शासन तो नेमिनाथ को सौंपा तथा वे और बलभद्र जरासन्ध से लडने के लिए पाण्डवो तथा द्रुपद आदि अन्य कई राजाओ के साथ युद्धस्थल पर आये। कुरुक्षेत्र में युद्ध हुआ। पाण्डव धृतराष्ट्र के पुत्रो के साथ और श्रीकृष्ण जरासन्ध के साथ लडे। जरासन्ध किसी भी तरह जब कृष्ण को नही जीत सका तो उसने अपने चक्र का प्रहार किया। चक्र कृष्ण के पास आकर रुक गया। उसी चक्र से उन्होने जरासन्ध का वध किया और कृष्ण चक्रवर्ती हो गये। इस युद्ध में ही धृष्टार्जुन के द्वारा द्रोणाचार्य का, अर्जुन के द्वारा कर्ण का शिखण्डी के द्वारा भीष्म का, अश्वत्थामा के द्वारा द्रुपद का और भीम के द्वारा दुर्योधन तथा उसके भाइयों का वध हुआ। पाण्डवो को अपना सम्पूर्ण राज्य मिला। इसके पश्चात् कृष्ण ने दिग्विजय की और वे तीन खण्ड के स्वामी हुए। उनका राज्याभिषेक हुआ। वे द्वारावती में नेमिनाथ आदि अपने समस्त परिवारवालो के साथ आनन्दपूर्वक रहने लगे। इन्होने नेमिनाथ को विवाह के योग्य समझकर उनका सम्बन्ध राजा उग्रसेन की पुत्री राजीमती के साथ स्थिर किया। बरात का प्रस्थान हुआ। मार्ग में विवाह मे आये हुए मासाहारी राजाओ के भोजन के लिए इकट्ठे किये गये पशुओ को नेमिनाथ ने देखा। हिंसा के इस घोर आरम्भ को देखकर करुणार्द्र हो गये और संसार से विरक्त हो गये। उन्होने राज्य और राजीमती को छोड़ा और दीक्षित हो गये। कुछ ही समय बाद इन्हें केवलज्ञान हो गया। समवसरण की रचना हुई। उसमें कृष्ण और उनकी रानियाँ भी यथास्थान बैठी। देशना के पश्चात् कृष्ण की आठो पटरानियो ने भगवान् के गणधर से अपने अपने पूर्वभवो की कथाएँ सुनी। कृष्ण की आयु एक हजार वर्ष की थी। इनकी ऊँचाई दस धनुष की थी। नीला वर्ण था और सुन्दर शरीर था। इनके पास सात रत्न थे—चक्र, शक्ति, गदा, शख, धनुष, दण्ड और नन्दक खड्ग। इनकी आठ पटरानियाँ और सोलह हजार रानियाँ थी। इन पटरानियो में एक रुक्मिणी का कृष्ण ने हरण किया था। उस समय इनसे लडने को आये हुए शिशुपाल का इन्होने वध किया था। भगवान् नेमिनाथ के केवलज्ञान के बारह वर्ष पश्चात् द्वैपायन के द्वारा द्वारावती नष्ट हुई। अपने भाई वसुदेव के पुत्र जरत्कुमार के मृग के भ्रम से फेंके गये बाण से कौशाम्बी वन में इनकी मृत्यु हुई। मृत्यु से पूर्व इन्होंने सोलह कारण भावनाओ का चिन्तन किया और तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण तथा पाण्डवपुराण की कृष्ण-कथाओ में भेद होते हुए भी सामान्यत एकता है। मपु० ७० ३६९-४९७, ७१ १-४६२, ७२ १-२६८, हपु० ३३ ३२-३९, ३५ २-७, १५-८०, ३६ ४२-७५, ३८ ९-५५, पापु० ११ ५७-८४, १७५-२०२, २० ३१६-३५६ २२ ८६-९२

कृष्णगिरि—भरत क्षेत्र के आर्य खण्ड का एक पर्वत। भरतेश की सेना ने तुङ्गवरक पर्वत को लाँघकर इसे लाँघा था। मपु० ३० ५०

कृष्णराज—दक्षिण का एक नृप। इसके पुत्र का नाम श्रीवल्लभ था। हपु० ६६ ५२

कृष्णलेश्या—षड् लेश्याओ में प्रथम लेश्या। हपु० ४ ३४४-३४५

कृष्णवेणा—आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरत ने इसे ससैन्य पार किया था। मपु० २९ ८६

कृष्णा—द्रौपदी। हपु० ५४ ३३

कृष्णाचार्य—बलभद्र सुदर्शन के पूर्वभव का जीव। यह राजगृह नगर के राजा सुमित्र का धर्मोपदेशक एव दीक्षागुरु था। मपु० ६१ ५६-७०

केकय—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश (व्यास और सतलज का मध्य भाग)। मपु० १६ १५६ अपरनाम कैकय। हपु० ११ ६६

केकया—कौतुकमगल नगर के राजा शुभमति और उसकी रानी पृथ्वी की पुत्री, द्रोणमेघ की बहिन, राजा दशरथ की रानी और भरत की जननी। इसे अनेक लिपियो और कलाओ का ज्ञान था। स्वयवर में जैसे ही इसने दशरथ का वरण किया वहाँ आये नृप कुपित होकर दशरथ के विरोधी हो गये। दशरथ ने सभी से युद्ध किया और विजयी हुआ। इस युद्ध में इसने रथ की रास स्वय सम्हाली थी। इससे दशरथ ने प्रसन्न हो इसे वर माँगने को कहा। इसने कहा था कि वह समय आने पर इच्छित वस्तु माँग लेगी। पपु० २४ १-

३५, ९० १०२-१०९, १२५-१२६, १३०, २५ ३५ जब दशरथ को सर्वभूतहित मुनि से अपने पूर्वभवों के वृत्तान्त सुनने से वैराग्य हो गया तो उसके वैराग्य की बात सुनकर भरत को भी वैराग्य हो गया था। दशरथ ने अपने प्रथम पुत्र पद्म को राज्य देने की घोषणा की तब भरत के वैरागी होने से दुखी हुई कैकया ने दशरथ से यह वर माँग लिया कि राज्य भरत को मिले। परिस्थितिवश दशरथ ने यह वर दे दिया। पपु० ३१.५५-६१, ९५, ११२-११४ जब राम ने यह निर्णय सुना तो पिता के वचन का पालन करने के लिए उन्होंने वन जाने का निर्णय कर लिया और भरत को समझाया कि वह पिता की आज्ञा का पालन करें। जब सीता और लक्ष्मण के साथ राम वन को जाने लगे तो राम को वन से लौटाने के लिए इसने क्षमायाचना करते हुए कहा कि स्त्रीपने के कारण उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी थी। पपु० ३२ १२७-१२९ जब राम वन से लौटे तो भरत दीक्षित हो गये। उनके दीक्षित होने पर पुत्र-वियोग से दुखित होकर इसने करुण रुदन किया था। राम, लक्ष्मण और सपत्नी जनों के वचनों से आश्वस्त होकर आत्म-निन्दा करते हुए इसने कहा कि 'स्त्री के इस शरीर को धिक्कार हो जो अनेक दोषों से आच्छादित है। अन्त में निर्मल सम्यक्त्व को धारण कर यह तीन सौ स्त्रियों के साथ पृथिवीमती आर्यिका के पास दीक्षित हुई और तप कर इसने आनत स्वर्ग में देव-पद पाया। पपु० ८६ ११-२४, ९८ ३९ १२३ ८०

केकसी—कौतुकमगल नगर के निवासी विद्याधर व्योम-बिन्दु और उसकी भार्या नन्दवती की छोटी पुत्री और कौशिकी की अनुजा। इन्द्र से पराजित होने के पश्चात् अपनी विभूति को पुन पाने के लिए सुमाली के पुत्र रत्नश्रवा ने पुष्पवन में मानस्तम्भिनी विद्या की सिद्धि की। साधनाकाल में रत्नश्रवा की परिचर्या के लिए व्योमबिन्दु ने इसे नियुक्त किया। विद्या के सिद्ध होते ही व्योमबिन्दु ने इसका विवाह रत्नश्रवा के साथ कर दिया। इसके तीन पुत्र हुए और एक पुत्री। पुत्रों के नाम थे—दशानन, भानुकर्ण, और विभीषण और पुत्री का नाम था चन्द्रनखा। पपु० ७ १२६-१४७, १६५, २२२-२२५, १०६ १७१

केतक—नरक का कठोर करोत जैसे पत्तोवाला वन। पूर्वभव में जिन्होंने पर-स्त्रियों के साथ रतिक्रीडा की थी उसके नारकी जीव होने पर उनसे अन्य नारकी आकर कहते हैं कि उसकी प्रिया उन्हें अभिसार करने की इच्छा से केतकी के एकान्त वन में बुला रही है। वे उन्हें वहाँ ले आकर तपायी हुई लोहे की गर्म पुतलियों के साथ आलिंगन कराते है। पपु० १० ४८-४९

केतम्बा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी (केतवा)। भरतेश के सेनापति ने इस नदी को पार किया था। मपु० ३० ५७

केतु—रावण-पक्ष का एक योद्धा। इसने राम-रावण युद्ध में भामण्डल के साथ युद्ध किया था। पपु० ६२ ३८

केतुमती—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित आदित्यनगर के राजा प्रह्लाद की प्रिया और वायुगति (पवनजय) की जननी। इसने अपनी वधू अजना को गर्भवती देखकर कुवचन कहते हुए उसे उसके पिता के नगर के समीप छुडवा दिया था। इस पर पुत्र पवनजय ने निश्चय किया कि यदि वह प्रिया को नहीं देखेगा तो मर जायगा। इस निश्चय को जानकर इसने अपने कृत्य पर बहुत पश्चात्ताप भी किया था। पपु० १५.६-८, १७ ७-२१, १८ ५८-६६

(२) विद्युद्दंष्ट्र के वंश में उत्पन्न गगनवल्लभ नगर की राज-पुत्री बालचन्द्रा के वंश में हुई एक कन्या और अर्धचक्री पुण्डरीक की भार्या। पुण्डरीक ने इसे बन्धनमुक्त किया था। हपु० २६ ५०-५३

(३) राजा जरासन्ध की पुत्री और राजा जितशत्रु की रानी। वसुदेव ने महामन्त्री से इसके पिशाच का निग्रह किया था। हपु० ३० ४५-४७

केतुमाल—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ८०, हपु० २२ ८६

केतुमाली—जरासन्ध का पुत्र। इसने यादवों के साथ युद्ध किया था। हपु० ५२ ३५, ४०

केयूर—पुरुष तथा नारियों द्वारा समान रूप से पहना जानेवाला भुजाओं के मूलभाग का आभूषण। मपु० ३ २७, १५४, ४.१८१, ५ २५७, ७ २३५, पपु० ३ १९०, ७ ४९, ११४ १२

केरल—मध्य आर्यखण्ड (दक्षिण भारत) का एक देश। यहाँ के निवासी मधुर, सरल और कलागोष्ठी मे प्रवीण होते हैं। स्त्रियाँ सुन्दर होती हैं। लवणांकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। मपु० १६. १५४, २९ ७९, ९४, ३० ३०-३४, पपु० १०१ ८१-८६

केलीकिल—(१) राम का सहायक एक विद्याधर। पपु० ५४.३५

(२) इस नाम का एक नगर। यहाँ का राजा राम के पक्ष में था। पपु० ५५ ५९

केवलज्ञान—पृथक्त्व वितर्क और एकत्व वितर्क शुक्ल ध्यानों द्वारा मोह-नीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय के भेद से चतुर्विध घातियाकर्मों के क्षय के पश्चात् उत्पन्न समस्त द्रव्य, उनके पर्याय तथा लोक-अलोक का ज्ञान। यह अन्तर और बाह्य मल के नष्ट हो जाने पर उत्पन्न लोकालोक की प्रकाशिनी परम ज्योति है। मपु० २१. १८६, ३३ १३२, ३८ २९८, ३६ १८५, पपु० ४ २२, ८७ १५, हपु० ९ २१०, वीवच० १८ यह पाँचों ज्ञानों में अन्तिम ज्ञान है और साक्षात् मोक्ष का कारण है। यह तीर्थंकरों का चतुर्थ कल्याणक है। मपु० ५७ ५२-५३, हपु० ३ २६, १० १५४-१५६

केवलज्ञानलोचन—केवली मुनि—भगवान् वृषभदेव की सभा के सप्तविध मुनिसघ का एक भेद। ये प्रश्न के विना ही प्रश्नकर्ता के अभिप्राय को जानते हुए भी श्रोताओं के अनुरोध से प्रश्न के पूर्ण होने की प्रतीक्षा करते हैं। मपु० १ १८२ हपु० १२.७४, ये पृथक्त्ववितर्क नामक शुक्लध्यान से ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन तीन घातियाकर्मों का क्षय कर ज्योति स्वरूप केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं। योगों का निरोध करने के लिए समुद्घात दशा में इनके आत्मा के प्रदेश पहले समय में चौदह राजु ऊँचे दण्डाकार, दूसरे समय में कपाटा-कार, तीसरे समय में प्रतर रूप और चौथे समय में लोकपूरण रूप हो जाते हैं। इसके पश्चात् ये आत्मप्रदेश इसी क्रम से चार समयों में

लोकपूरण, प्रतर, कपाट तथा दण्ड अवस्था को प्राप्त स्वशरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं। हपु० २१ १७५, १८४-१९२

केवलज्ञानवीक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

केवलावरण—केवलज्ञान का आवरक कर्म। इसी के क्षय से केवलज्ञान उत्पन्न होता है। हपु० १० १५४

केवली—(१) केवलज्ञान धारी मुनि-अर्हन्तदेव। पचमकाल में भगवान् महावीर के बाद ऐसे तीन केवली मुनि हुए हैं—इन्द्रभूति (गौतम), सुधर्माचार्य और जम्बू। ये त्रिकाल सबधी समस्त पदार्थों के ज्ञाता और द्रष्टा होते हैं। सिद्धो के दर्शन ज्ञान और सुख को सम्पूर्ण रूप से ये ही जानते हैं। मपु० २ ६१, पपु० १०५ १९७-१९९, हपु० १ ५८-६०

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

केशरी—(१) विजय के छ पुत्रो में पाँचवा पुत्र, निष्कम्प, अकम्पन, बलि और युगन्त का अनुज तथा अलम्बुष का अग्रज। हपु० ४८ ४८

(२) इन्द्र विद्याधर का एक योद्धा। पपु० १२ २१७

केशलोंच—साधु के अट्ठाईस मूलगुणो में एक मूलगुण–अपने हाथ से सिर के बालो का लोच करना। यह सर्वदा आवश्यक नही रहा है—वृषभदेव छ मास कायोत्सर्ग से निश्चल खडे रहे थे, केश राशि इतनी बढ़ गई थी कि वह हवा में उडने लगी थी। बाहुबलि की भी केशराशि कन्धो पर लटकने लगी थी। मपु० १.९, १८ ७१-७६, ३६ १०९, १३३, पपु० ३ २८७-२८८, ४५ इसकी अनुपालना छुरा आदि साधनो से की जा सकती थी किन्तु उनके अर्जन, सग्रह और रक्षण तथा उनकी अप्राप्ति पर उत्पन्न चिन्ता से मुक्त रहना सभव नही है ऐसा विचार कर यह क्रिया ही श्रेयस्कर मानी गयी है। पहले यह क्रिया केवल पचमुष्टि से सम्पन्न होती थी। मपु० १७ २००-२०१, २० ९६

केशव—(१) कृष्ण का एक नाम। मपु० ७१ ७६, हपु० १ ११, ४७ ९४

(२) जम्बूद्वीप सबधी पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित महावत्स देश की सुसीमा नगरी के राजा सुविधि और उसकी रानी मनोरमा का पुत्र। जीवन के अन्त मे इसने बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह को त्याग दिया और निर्ग्रन्थ-दीक्षा धारण कर ली। मरकर यह अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ। मपु० १० १२१-१२२, १४५, १७१

(३) केशव नारायण नौ हैं। इनके नाम हैं—त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयभू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिह, पुण्डरीक, दत्त, लक्ष्मण और कृष्ण। ये भरत देश के तीन खण्डो के स्वामी होते हैं और अजेय होते हैं। मपु० २ ११७, हपु० ६६ २८८-२८९

केशवती—वाराणसी नगरी के इक्ष्वाकुवशी राजा अग्निशिख की दूसरी रानी। यह तीर्थंकर मल्लिनाथ के तीर्थ में हुए सातवें नारायण दत्त की जननी थी। मपु० ६६ १०२-१०७ अपरनाम केशिनी। पपु० २० २२१-२२८

केशवाप—गृहस्थ की त्रेपन गर्भान्वय क्रियाओ में बारहवी क्रिया-किसी शुभ दिन देव और गुरु की पूजा करके शिशु का क्षौरकर्म कराना। इसमें पूजन के पश्चात् शिशु के बाल गधोदक से गीले करके उन पर पूजा के शेष अक्षत रखे जाते हैं। इसके बाद चोटी सहित (अपने कुल की पद्धति के अनुसार) मुण्डन कराया जाता है। मुण्डन के बाद शिशु का स्नपन होता है। फिर उसका अलकरण किया जाता है। शिशु द्वारा मुनियो अथवा साधुओं को नमन कराया जाता है। इसके पश्चात् बन्धु जन शिशु को आशीर्वाद देते है। इस मागलिक कार्य में सम्बन्धीजन हर्ष पूर्वक भाग लेते हैं। मपु० ३८ ५६, ९८-१०१

केशसंस्कारीधूप—कालागुरु से निर्मित धूप। इससे स्त्रियाँ अपने बालो को स्निग्ध और सुगन्धित करती थी। मपु० ९ २१

केशाकेशि—परस्पर बाल पकडकर लडना। छठे मनु सीमन्धर के समय में कल्पवृक्षो तथा खाद्य-वस्तुओ की कमी के कारण ऐसे कलह होने लगे थे। मपु० ३ ११४

केशिनी—सातवें नारायण दत्त की जननी। पपु० २० २२१-२२६

केशोत्पाटन—मुनियो के अट्ठाईस मूलगुणो में एक मूलगुण-केशलोंच। मपु० २० ९६

केसरिविक्रम—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित सुरकान्तार नगर का स्वामी एक विद्याधर। यह सातवें नारायण दत्त की जननी केशिका का बडा भाई था। इसने दत्त को सिहवाहिनी तथा गरुडवाहिनी महाविद्याएँ दी थी। मपु० ६६ ११४-११६

केसरी—(१) नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य के अधीन अग देश का एक नृप। पपु० ३७ १४

(२) हिमवान् आदि सात कुलाचलो में स्थित सोहल ह्रदो में चतुर्थ ह्रद। यह कीर्ति देवी की निवासभूमि है। इस ह्रद से सीता और नरकान्ता नदियाँ निकलती है। मपु ६३ १९७, २००, हपु० ५ १२०-१२१, १३४

कैकय—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक उत्तरीय देश। इसे भरतेश के एक भाई ने उनकी अधीनता स्वीकार न करके छोड दिया था। हपु० ११ ६६

कैकयी—कमलसकुल नगर के राजा सुबन्धुतिलक और उसकी रानी मित्रा की गुणवती पुत्री। रूपवती होने तथा मित्रा नाम की माता से उत्पन्न होने के कारण यह सुमित्रा कहलाती थी। यह राजा दशरथ की दूसरी रानी थी। यह लक्ष्मण की जननी थी। आयु के अन्त में मरकर यह आनत स्वर्ग में देव हुई। पपु० २२ १७३-१७५, २५ २३-२६, १२३ ८०-८१ महापुराण में इसे कैकेयी कहा गया है। मपु० ६७ १४८-१५२

कैकेय—इस नाम का समुद्रतटवर्ती एक देश, महावीर की विहारभूमि। हपु० ३ ५

कैकेयी—वाराणसी नगरी के राजा दशरथ की दूसरी रानी, नारायण लक्ष्मण की जननी। इसके दूसरे नाम कैकयी और सुमित्रा थे। मपु० ६७ १५०-१५२ दे० कैकयी

कैटभ—अयोध्या नगरी के राजा हेमनाभ और उसकी रानी अमरावती का द्वितीय पुत्र और मधु का अनुज। ऐश्वर्य को चचल जानकर यह मुनि हो गया था। आयु के अन्त में मरकर अच्युत स्वर्ग में उत्पन्न हुआ और वहाँ से च्युत होकर द्वारिका में कृष्ण की रानी धरावती से

शाम्ब नाम का पुत्र हुआ। पपु० १०९ १३०-१३२, १६८, हपु० ४३ १५९

कैटभारि—अवसर्पिणी काल के नौ प्रतिनारायणो मे पाँचवाँ प्रतिनारायण। अपर नाम मधु कैटनभ। हपु० ६० २९१, वीवच० १८ ११४-११५

कैलरगीत—पवनजय का साथी एक नृप। पपु० १६ २२४

कैलास—(१) अष्टापद नाम से विख्यात-वर्तमान हिमालय से आगे का एक पर्वत। यह तीर्थंकर वृषभदेव की निर्वाणभूमि है। चक्रवर्ती भरत ने यहाँ महारत्नो से जटित चौबीस अर्हत् मन्दिर बनवाये थे। पाँच सौ धनुष ऊँची वृषभ जिनेश की प्रतिमा भी उन्होने यही स्थापित करायी थी। मपु० १ १४९, ४ ११०, ३३.११, ५६, ४८ १०७, पपु० ४ १३० ९८ ६३-६५, हपु० १३ ६

(२) एक वन। हिमालय प्रदेश के वन इसी वन के अन्तर्गत है। मपु० ४७ २५८

कैलासवारुणी—विजयार्घ पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित साठ नगरो में एक नगर। मपु० १९ ७८

कैवल्य—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय रूप चतुर्विध घातिया कर्मों के विनाश से उत्पन्न, समस्त पदार्थों को एक साथ जाननेवाला, अविनाशी ज्योति स्वरूप ज्ञान—केवलज्ञान। मपु० ५. १४९, २० २६४, २१.१७५, १८६

कैवल्यनवक—नौ केवल-लब्धियाँ। ये नौ लब्धियाँ हैं—दान, लाभ, भोग, परिभोग, वीर्य, सम्यक्त्व, दर्शन, ज्ञान और चारित्र। मपु० ७२. १९१

कैवल्यपूजा—केवलज्ञान की पूजा। तीर्थंकरो को केवलज्ञान होने पर इन्द्र का आसन कम्पित होता है। वह अवधिज्ञान से तीर्थंकरो के कैवल्य को जानकर उनके पास सपरिवार आता है और उनकी पूजा करता है। इसी समय कुबेर समवसरण (प्रवचन-सभा) की रचना करता है। मपु० ७ ९९, २२ १३-१४, ३१५, ५७ ५२-५३

कैशिकी—सगीत की दस जातियो में मध्यम ग्राम के आश्रित अन्तिम जाति। पपु० २४ १४-१५, हपु० १९ १७७

कोंकण—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। (पुणे का पार्श्ववर्ती प्रदेश)। मपु० १६ १४१-१५६, पापु० १ १३२

कोटिकशिला—निर्वाणशिला। अनेक कोटि मुनियो के इस शिला पर ध्यान करते हुए सिद्ध अवस्था को प्राप्त होने से यह इस नाम से विख्यात हो गयी। एक योजन ऊँची इतनी ही लम्बी और चौडी देवो द्वारा सुरक्षित इस शिला को नौ नारायणो ने अपनी शक्ति के अनुसार ऊँचा उठाया था। प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ ने जहाँ तक भुजाएँ ऊपर पहुँचती हैं वहाँ तक दूसरे नारायण द्विपृष्ट ने मस्तक तक, तीसरे स्वयभू ने कण्ठ तक, चौथे पुरुषोत्तम ने वक्ष स्थल तक, पांचवें नृसिह ने हृदय तक, छठें पुण्डरीक ने कमर तक, सातवें दत्तक ने जाँघो तक, आठवें लक्ष्मण ने घुटनो तक और नवें श्रीकृष्ण ने इसे चार अगुल ऊपर उठाया था। हपु० ५३ ३२-३८ इसी शिला के सम्बन्ध में योगीन्द्र अनन्तवीर्य ने भविष्यवाणी की थी कि जो इसे उठावेगा वही रावण की मृत्यु का निमित्त होगा। लक्ष्मण ने इसे उठाया और वही रावण का हन्ता हुआ। मपु० ६८ ६४३-६४५, पपु० ४८.१८५-१८६, २१३-२१४

कोदण्ड—ऊँचाई मापने का एक प्रमाण-धनुष, अपरनाम दण्ड। यह चार हाथ प्रमाण होता है। हपु० ४ ३२४-३२५, ३३३-३३६, ७.४५-४६

कोद्रव—कोदो। यह धान वृषभदेव के समय से होता आया है। चन्दना ने इसी का आहार महावीर को दिया था। मपु० ३ १८६

कोल—दशानन (रावण) का अनुयायी एक नृप। इसने इन्द्र को जीतने के लिए जाते हुए रावण का साथ दिया था। पपु० १० २८, ३७

कोलाहल—(१) एक पर्वत। भरतेश की सेना ऋष्यमूक पर्वत से चलकर इस पर्वत पर आयी थी। इस पर्वत को पार करके वह माल्य पर्वत की ओर बढी थी। मपु० २९ ५६

(२) राम का एक योद्धा। पपु० ५८ २१

कोशल/कोसल—कर्मभूमि के आरम्भ मे इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। यह भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में विन्ध्याचल के उत्तर मे मध्यप्रदेश में स्थित है। वृषभदेव और महावीर की विहारभूमि। इस देश के राजा को पहले भरतेश ने बाद में राम के पुत्र लवणाकुश ने पराजित किया था। अयोध्या इसी देश की नगरी थी। मपु० १० १५४, १६ १४१-१५४, २५-२८७, २९ ४०, ४८ ७१, पपु० १०१.८३-८६, ११७ १, हपु० ३ ३, ११-६५, ७४, ४६ १७, ६० ८६, पापु० २ १५७-१५८, वीवच० २ ५०, ४ १२१

कोशातकी—एक फल—कडवी तूँबी। अमृतरसायन नामक रसोइया ने द्वेष वश इसी फल को खिलाकर सुधर्म मुनिराज को मार डाला था। मपु० ७१ २७०-२७५

कोशावत्स—कौशाम्बी का राजा। इसके पुत्र का नाम इन्द्रदत्त था और पुत्री का नाम इन्द्रदत्ता। मथुरा के राजा चन्द्रभद्र के पुत्र अचल ने इन्द्रदत्त के गुरु विशिखाचार्य को शस्त्रविद्या मे पराजित कर दिया था। उसकी बाण-विद्या से प्रभावित होकर कोशावत्स ने अपनी कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया था। पपु० ९१ ३०-३२

कोष्ठबुद्धि—(१) एक ऋद्धि। गौतम इस ऋद्धि के धारक थे। इस ऋद्धि से इनको अनेक पदार्थों का ज्ञान था। मपु० २ ६७, ११.८०-८१, ३६ १६

(२) एक बोध-विद्या। यह मतिज्ञान की वृद्धि होने से उत्पन्न होती है। मपु० १४ १८२, ३६.१४६

कोष्ठागार—भण्डार-वस्तु-सग्रह का स्थान-कक्ष। यह कोषाध्यक्ष के अधीन होता है। मपु० ८ २२५

कोहर—पद्म (राम) के समय का एक देश। पुण्डरीकपुर के राजा वज्रजघ ने इस देश के राजा को हराया था। पपु० १०१ ८४-८६

कौंडिन्य—इन्द्र की प्रेरणा से महावीर के समवसरण में आगत एक विद्वान्। इसके पाँच सौ शिष्य थे। समवसरण में आकर वस्त्र आदि त्याग कर अपने शिष्यो के साथ यह संयमी हो गया था। हपु० २. ६८-६९

कौक्षेयक—खड्ग। एक सैन्य शस्त्र। मपु० ३६ ११

कौण—एक सैन्य शस्त्र। पपु० १२ २५८

कौतुकमगल—एक नगर। विद्याधर व्योमविन्दु की पुत्री और राजा रत्नश्रवा की रानी केकसी का जन्म इसी नगर में हुआ था। राजा दशरथ भी केकया के साथ यही विवाहे गये थे। पपु० ७.१२६-१२७, २४.२-४, १२१

कौत्कुच्य—अनर्थदण्डव्रत के पाँच अतिचारो में दूसरा अतिचार-शारीरिक कुचेष्टाएँ करना। हपु० ५८ १७९

कौथुमि—भार्गवाचार्य की शिष्य परम्परा में भार्गव के प्रथम शिष्य आत्रेय का शिष्य। हपु० ४५ ४४-४५

कौन्तेय—कुन्ती के पुत्र-युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन। मपु० ७२ २७०-२७१, हपु० ४५ ४३

कौबेर—इस नाम का एक देश, लवणांकुश ने यहाँ के शासक को पराजित किया था। पपु० १०१ ८४-८७

कौबेरी—कुबेर से सम्बन्धित उत्तर दिशा। हपु० ५७ ६०

कौमारी—एक विद्या, यह दशानन को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२६

कौमुदी—(१) एक नगरी। यहाँ का राजा सुग्रीव था। यही तापस अनुधर आया था। पपु० ३९ १८०-१८१

(२) एक हज़ार देवो से रक्षित एक गदा। यह रामचन्द्र को प्राप्त चार महारत्नो में एक महारत्न और लक्ष्मण को प्राप्त सप्त रत्नो में दूसरा रत्न था। श्रीकृष्ण को भी यह रत्न प्राप्त था। मपु० ६८ ६७३-६७७, हपु० ५३ ४९-५०

कौरव—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी के दुर्योधन और दु शासन आदि सौ पुत्र। पाण्डु और उनके पुत्र भी कुरुवंशी होने के कारण-कौरव ही थे पर राज्य विभाजन के प्रसग को लेकर पाण्डु पुत्र तो पाडव कहलाये और धृतराष्ट्र के पुत्र कौरव। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य ने इन्हें पाण्डवो के साथ शिक्षित और शस्त्र-विद्या में निष्णात किया था। ये आरम्भ से ही पाण्डवो से उनकी वीरता, बुद्धिमत्ता और सौजन्य आदि गुणो के कारण ईर्षा करने लगे थे। खेलो मे ये उनसे पराजित होते थे। राज्य-विभाजन के समय ये चाहते थे कि राज्य एक सौ पाँच भागो मे विभाजित हो जिसमें सौ भाग इन्हें मिले और केवल पाँच भाग पाण्डवो को मिलें। पाण्डवो को मारने के लिए इन्होने अनेक प्रयत्न किये। लाक्षागृह भी बनवाया पर ये उनको मारने में सफल नही हो सके। हरिवश पुराण में कौरवो द्वारा लाक्षागृह के स्थान पर पाण्डवो के घर में आग लगाने की बात कही गयी है। द्रौपदी-स्वयंवर के पश्चात् राज्य-विभाजन हुआ जिसमें आधा राज्य पाण्डवो को और आधा राज्य इनको मिला। ये इसे सहन नही कर सके। दुर्योधन ने जुए में युधिष्ठिर को पराजित करके पाण्डवो को बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष का अज्ञातवास दिया। वनवास के समय भी कौरवो ने पाण्डवों को मारने के अनेक प्रयास किये पर वे सफल नही हो सके। अन्त में कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में ये सब भीम के द्वारा मारे गये। हरिवश पुराण में कुछ कौरवो को ही युद्ध में मारा गया बताया है। दुर्योधन और दु शासन आदि को ससार से विरक्त होकर मुनिराज विदुर के पास दीक्षित हुए बताया गया है। मपु० ४५ ४, ५६-५८, ७१ ७३-८०, पपु० १० १७, ३४, ४४, १२ २६-३०, हपु० ४५ ३६, ४९-५०, ४६ ३-६, ५१ ३२, ५२, ८८, पापु० ६ २०८-२१२, ८ १७८-२०५, १२ १४४, १६७-१६९, १६ २, १७ २०९-२१९, १८ १५३-१५५, २० २६६, २९४-२९६, ३४८

कौरवनाथ—दुर्योधन। मपु० ७२ २६८

कौवेरी—(१) रावण को प्राप्त एक विद्या। मपु० ७ ३३१-३३२

(२) भरत की भाभी। पपु० ८२ २५-२६, ८३ ९४

कौशल—विन्ध्याचल के उत्तर में स्थित देश। साकेत इसी देश में अयोध्या के निकट था। मपु० ४८ ७१ दे० कोशल/कोसल

कौशल्य—आर्यखण्ड के मध्य का एक देश। महावीर का विहारभूमि। हपु० ३ ३, ११ ८४

कौशाम्ब—एक भयकर वन। द्वारावती नगरी के विनाश की तथा जरत्कुमार के निमित्त से कृष्ण की मृत्यु होने की नेमिनाथ द्वारा भविष्यवाणी सुनकर जरत्कुमार ने इसी वन का आश्रय लिया था। यही अपने अन्त समय में बलराम और कृष्ण आये थे। कृष्ण यहाँ लेट गये थे। जरत्कुमार ने उन्हें एक मृग समझकर उन पर बाण छोड दिया। उसी से उनकी मृत्यु हुई। हपु० ६२ १५-६१, पापु० २२ ८१-८४

कौशाम्बी—(१) जम्बूद्वीप में स्थित वत्सदेश की यमुनातटवर्ती राजधानी। यह तीर्थंकर पद्मप्रभ और ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन की जन्मभूमि थी। इसी नगर में चन्दना महावीर को आहार देकर बन्धनो से मुक्त हुई थी। मपु० ५२ १८-२१, ७९-८०, पपु० ९८ ४८, हपु० १४ १-२, वीवच० १३ ९१-९६

(२) एक नगरी। कस का पालन करनेवाली मजोदरी कलालिन यही रहती थी। हपु० ३३ १३

कौशिक (१)—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित साठ नगरो में तेईसवाँ नगर। राजा वर्ण इसी नगर के नृप थे। पाण्डव प्रवास काल में यहाँ आये थे। हपु० २२ ८८, ४५ ६१, पापु० १३ २-३

(२) अदिति देवी द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त आठ विद्या-निकायो में एक विद्या-निकाय। हपु० २२ ५७

(३) सिद्धकूट जिनालय में कौशिक स्तम्भ का आश्रय लेकर बैठनेवाले विद्याधरो की एक जाति। हपु० २६ १३

(४) एक ऋषि। परशुराम के भय से कार्यवीर्य की गर्भवती पत्नी तारा भयभीत होकर गुप्त रूप से इसी के आश्रय में गयी थी। चन्दन वन की प्रसिद्ध वेश्या रगसेना की पुत्री कामपताका के नृत्य को देखकर यह क्षुब्ध हो गया था। कामपताका की प्राप्ति में बाधक होने से राजा को अपना द्वेषी जानकर इसने सर्प बनकर राजा को मारने का शाप दिया। निदान वश मरकर यह सर्प हुआ। हपु० २५ ८-११, २९ २८-३२, ४९-५० इसकी चपलवेगा नाम की भार्या तथा उससे उत्पन्न मृगशृग नामक पुत्र था। मपु० ६२ ३८०

कौशिकी—(१) भरतक्षेत्र के रमणीक मन्दिर नगर के एक विप्र गौतम की प्रिया, अग्निमित्र की जननी। मपु० ७४ ७६-७७, वीवच० २ १२१-१२२

(२) पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना ने विश्राम किया था। मपु० २९ ५०, ६५

(३) कौतुकमगल नगर के निवासी व्योमबिन्दु और उसकी भार्या नन्दवती की ज्येष्ठ पुत्री, केकसी की बडी बहिन। यह यक्षपुर के निवासी विश्रवा को दी गयी थी। वैश्रवण इसी का पुत्र था। पपु० ७ १२६-१२८

कौसला—एक नगरी। यहाँ का राजा भेषज था। शिशुपाल इसका ही पुत्र था। मपु० ७१ ३४२

कौस्तुभ—(१) लक्ष्मण के सात रत्नो में एक रत्न। चक्रवर्ती भरत तथा कृष्ण के पास भी यह रत्न था। मपु० २६ ६५, ६८ ६७६-६७७, हपु० ४१ ३३

(२) लवणसमुद्र में पूर्व दिशा के पाताल-विवर के एक ओर स्थित अर्धकुम्भाकार रजत-पर्वत। हपु० ५ ४६०

कौस्तुभाभास—लवणसमुद्र में पूर्व दिशा के पाताल-विवर के एक ओर स्थित अर्धकुम्भाकार रजत-पर्वत। उदवास यहाँ का अधिष्ठाता देव है। हपु० ५ ४६०-४६१

क्रकच—मर्मस्थल और अस्थिसन्धियो का विदारक एक शस्त्र। मपु० १० ५९, पपु० ५८ ३४

क्रतु—यज्ञ। यह देवपूजा-विधि का पर्यायवाची शब्द है। मपु० ६७ १९३

क्रमण—मानुषोत्तर पर्वत के कनककूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०४-६०५

क्रमुक—सुपारी, पूजा-सामग्री में व्यवहृत एक फल। मपु० १७ २५२, ६३ ३४३

क्रव्याद—मासाहारी। मपु० ३९ १३७

क्रिया—श्रावको का सस्कार। इसके तीन भेद हैं—गर्भान्वय, दीक्षान्वय और कर्त्रन्वय। गर्भान्वय की गर्भ से लेकर निर्वाण-पर्यन्त त्रेपन, दीक्षान्वय की अडतालीस और कर्त्रन्वय की सात, इस तरह कुल एक सौ आठ क्रियाएँ होती हैं। साम्परायिक आस्रव की भी पच्चीस क्रियाएँ होती हैं। मपु० ३८ ४७-६९, हपु० ५८ ६०-८२, पापु० ५ ८७-९०

क्रियादृष्टि—दृष्टिप्रवाद नामक बारहवें अग मे निर्दिष्ट तीन सौ त्रेसठ दृष्टियो के चार विभागो मे एक विभाग। इसके एक सौ अस्सी भेद इस प्रकार होते हैं—नियति, स्वभाव, काल, दैव और पौरुष इन पाँच को स्वत परत. तथा नित्य और अनित्य से गुणित करने से बीस भेद तथा जीव आदि नौ पदार्थों को उक्त बीस भेदो से गुणित करने पर एक सौ अस्सी भेद। हपु० १० ४६-५१

क्रियाधिकारिणी—आस्रवकारी पच्चीस-क्रियाओ में एक क्रिया। यह हिंसा के शस्त्र आदि उपकरणो के ग्रहण करने से होती है। हपु० ५८ ६०, ६७

क्रियामन्त्र—गर्भाधान आदि क्रियाओ में सिद्धपूजन के लिए व्यवहृत सात पीठिकामन्त्र। मपु० ४० ११-२३, ७७-७८

क्रियावादी—अन्योपदेशज मिथ्यादर्शन के चार भेदो में प्रथम भेद। हपु० ५८ १९३-१९४

क्रियाविशाल—चौदह पूर्वों में तेरहवाँ पूर्व। इसके नौ करोड पदो में छन्द शास्त्र, व्याकरणशास्त्र तथा शिल्पकला आदि के अनेक गुणो का वर्णन है। हपु० २ ९७-१००, १० १२०

क्रीडव—जम्बूद्वीप के कुरुजागल देश में स्थित हस्तिनापुर नगर के राजा अर्हद्दास और उनकी पत्नी काश्यपा का द्वितीय पुत्र। यह मधु का अनुज था। पिता ने इसे युवराज बनाया था। इसने विमलवाहन मुनिराज से सयम ग्रहण किया। मरकर यह महाशुक्र स्वर्ग मे इन्द्र हुआ। मपु० ७२ ३८-३९, ४३-४५

क्रीडा—शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के वर्धक खेल। इसके चेष्टा, उपकरण, वाणी और कलाव्यासग ये चार भेद हैं। इनमें शरीर से की जानेवाली क्रीडा को चेष्टा, गेंद आदि के द्वारा की जानेवाली क्रीडा उपकरण, सुभाषित आदि से की जानेवाली क्रीडा वाणी और जुआ आदि से की जानेवाली क्रीडा कलाव्यासग होती है। पपु० २४ ६७-६९

क्रुष्ट—राम-रावण युद्ध में आया हुआ राम का एक सिंहरथासीन सामन्त। पपु० ५८ १०

क्रूर—(१) सीग एव दष्ट्रावाले दुष्ट स्वभावी जीव। मपु० ३.१०१

(२) वसुदेव और उनकी रानी विजयसेना का द्वितीय पुत्र, अक्रूर का अनुज। हपु० ४८ ५४

(३) अजना की सास केतुमती का सेवक। यही गर्भावस्था में अजना को उसके पिता के नगर के पास छोडने गया था। पपु० १७ १२-२०

(४) रावण का सिंहरथासीन एक योद्धा। पपु० १२ १९७, ५७ ४७

(५) विद्याधरो का स्वामी। यह राम का सहायक था। पपु० ५४ ३५

क्रूरकर्मा—खरदूषण का मित्र एक विद्याधर। पपु० ४५ ८६-८७

क्रूरनक्र—दशानन का अनुयायी एक विद्याधर। पपु० ८ २६९

क्रूरामर—धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र के निवासी अरिंजय और उसकी पत्नी जयावती का पुत्र। यह धनश्रुति का अग्रज था और सहस्रशीर्ष राजा का सेवक। इसने महामुनि केवली से दीक्षा धारण कर ली तथा अन्त मे शतार स्वर्ग में देव और वहाँ से चयकर मेघवाहन हुआ। पपु० ५ १२८-१३३

क्रोध—(१) चार कषायो में प्रथम कषाय। यह ससार का कारण है और क्षमा से यह शान्त होता है। मपु० ३६ १२९, पपु० १४ ११०-१११

(२) रत्नत्रय रूपी धन का तस्कर। सत्य व्रत की पाँच भावनाओ में प्रथम भावना-क्रोध का त्याग। मपु० २० १६२, ३६.१३९

(३) भरत के साथ दीक्षित एक नृप। पपु० ८८.१-५

क्रोधध्वनि—रावण का व्याघ्ररथासीन एक सामन्त। पपु० ५७.५०

क्रौंचपुर—इस नाम का एक नगर। यहाँ का राजा यक्ष था। पपु० ४८ ३६

क्रौंचरवा—दण्डकारण्य वन की एक नदी । पपु० ४२ ६१

क्रौंचवर—इस नाम का सोलहवाँ सागर तथा द्वीप । हपु० ५ ६२०

क्वाथतोय—(१) भरतखण्ड के उत्तर की ओर स्थित एक देश । यहाँ के राजा भरतेश के भाई ने उनकी अधीनता स्वीकार न करके इसे छोड़ दिया था । हपु० ११ ६६

(२) भरतखण्ड के मध्यदेशका एक प्रदेश । यहाँ महावीर ने विहार किया था । हपु० ३ ६

क्षत्रिय—(१) महावीर के पश्चात् हुए ग्यारह श्रुतधर मुनियों में तीसरे श्रुतधर मुनि । ये ग्यारह अग और दस पूर्व के धारी थे । मपु० २ १४३, ७६ ५२१-५२४, हपु० १ ६२, वीवच० १ ४५-४७

(२) आगामी छठे तीर्थंकर का जीव । मपु० ७६ ४७२

(३) वृषभदेव द्वारा सृजित तीन वर्णों में प्रथम वर्ण । भगवान् वृषभदेव ने क्षत्रियों को विद्या सिखायी और निर्बलों की रक्षा के लिए नियुक्त किया । दुष्टों का निग्रह और शिष्टो का परिपालन इनका धर्म था । सोते हुए, बन्धन में बँधे हुए, नम्रीभूत और भयभीत जीवों का वध करना इनका धर्म नहीं है । राज्य की स्थिति के लिए वृषभदेव ने इस वर्ण के चार वश स्थापित किये थे—इक्ष्वाकु, कुरु, हरि और नाथ । मपु० १६ १८३-१८४, २४३, ३८ ४६, २५९, ४४ ३०, पपु० ३ २५६, ११ २०२, ७८ ११-१२, हपु० ९ ३९, पापु० २ १६१-१६४

क्षत्रिय-न्याय—क्षत्रियों का न्याय यह है कि वे धर्म का उल्लघन न करें, धन का अर्जन करें, उसकी रक्षा और वृद्धि करें तथा पात्र में उसका विनियोजन करें । मपु० ४२ १३-१४

क्षत्रियान्तक—दशपूर्व और ग्यारह अंगधारी एक श्रुतधर मुनि । मपु० ७६ ५२१

क्षपक—चारित्रमोह का क्षय करने में प्रयत्नशील मुनि । ये अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म सापराय और क्षीणमोह इन चार गुणस्थानों में रहते हैं । इनकी कषायें क्षीण हो जाती हैं और इन्हें शाश्वत सुख प्राप्त होता है । हपु० ३ ८२, ८७

क्षपकश्रेणी—मुक्ति सोपान । इस पर आरूढ वे जीव होते हैं जो उत्कृष्ट विशुद्धि को प्राप्त होकर अप्रमत्त रहते हैं तथा कर्म प्रकृतियों में क्षोभ उत्पन्न करके उन्हें योगबल से मूलोच्छिन्न कर देते हैं । ऐसा जीव अप्रवृत्तकरण (अध प्रवृत्तकरण) को करके अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण गुणस्थानो में पहुँचता है । फिर पृथक्त्व वितर्क शुक्लध्यानाग्नि से अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया और लोभ, इन आठ कषायों, स्त्रीवेद, नपुसकवेद, छ नौ कषाय, पुरुषवेद, सज्वलन क्रोध, मान, माया को दग्ध कर और लोभ को सूक्ष्म कर सूक्ष्मसाम्पराय नाम के दसवें गुणस्थान को प्राप्त करता है । इसके पश्चात् सज्वलन लोभ का अन्त करके वह मोहनीय कर्म का सर्वथा अभाव करता है । फिर वह बारहवें क्षीणकषाय नामक गुणस्थान को प्राप्त कर एकत्व वितर्क शुक्लध्यान से ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायकर्मों का भी नाश कर देता है । मपु० २० २४१-२४२, ४७ २४६, हपु० ५६ ८८-९८

क्षपण—(१) क्षीणराग तथा क्षमावान् तप से कृश और क्षीणपाप साधु । पपु० १०९ ८७

(२) एक मास का उपवास । मपु० ८ २०२

क्षपणक—कर्मक्षय में उद्यत दिगम्बर नग्न साधु । मपु० ६७ ३७०

क्षपितारि—रावण का सामन्त, सक्रोध नामक योद्धा का हन्ता । पपु० ६० १३-१४, १८

क्षम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०१

क्षमा—(१) आहारदाता के सात गुणों में एक गुण । मपु० २० ८२-८४

(२) धर्म-ध्यान की दस भावनाओं में प्रथम भावना । मपु० ३६. १५७-१५८

(३) उत्तम क्षमा आदि दस धर्मों में पहला धर्म-उपद्रव करने पर भी दुष्टजनों पर क्रोध नहीं करना । वीवच० ६ ५

क्षमाधर—एक मुनि । इन्हें विन्ध्याचल पर्वत पर केवलज्ञान हुआ था । पापु० १५ १३

क्षमी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७३

क्षय—(१) कषायों और कर्मों का नाश । हपु० ३.८७, ५८ ८३

(२) पुस्तकर्म के तीन भेदों में प्रथम भेद—लकड़ी को छीलकर खिलौने आदि बनाना । पपु० २४ ३८

क्षयोपशम—कर्म की चार (उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम) अवस्थाओं में एक अवस्था । वर्तमान काल में उदय में आनेवाले सर्वघाती स्पर्द्धकों का उदयाभावी क्षय और उन्हीं के आगामी काल में उदय में आनेवाले निषेकों का सदवस्था रूप उपशम तथा देशघाती प्रकृति का उदय रहना । मपु० ३६ १४५, हपु० ३ ७९

क्षान्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६१

क्षान्ता—इस नाम की एक आर्यिका । सुबन्धु वैश्य की पुत्री सुकुमारिका ने इन्हीं के पास दीक्षा ली थी । हपु० ४ १२२ पाण्डवपुराण में यह क्षान्तिका तथा महापुराण में क्षान्ति नाम से उल्लिखित है । मपु० ७२ २४९ पापु०१३ ६१,

क्षान्ति—(१) इस नाम की एक आर्यिका । मपु० ७२ २४९ दे० क्षान्ता

(२) क्षलाभाव-क्रोध के कारण उपस्थित होने पर भी क्रोध का न आना । पापु० २३ ६४

(३) सातावेदनीय का एक आस्रव । हपु० ५८ ९५

क्षान्तिका—पाण्डव काल की एक आर्यिका । कुन्ती और पाँचों पाण्डवों ने इनसे धर्म लाभ किया था । पापु० १३ ६१ दे० क्षान्ता

क्षान्ति परायण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८९

क्षान्तिभाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १२६

क्षायिक-उपभोग—नौ क्षायिक-शुद्धियों (लब्धियों) में आठवीं क्षायिक-शुद्धि (उपभोगान्तरायकर्म के क्षय से उत्पन्न अनन्त क्षायिक उपभोग) मपु० २४.५६

क्षायिक चारित्र—नौ क्षायिक शुद्धियों में चतुर्थ क्षायिक-शुद्धि । यह

चारित्रमोहनीय कर्म के पूर्ण क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४. ५६, ६२, ३१७

क्षायिकज्ञान—नौ क्षायिक-शुद्धियो में प्रथम क्षायिक-शुद्धि। यह ज्ञानावरण कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४.५६-५८

क्षायिकदर्शन—नौ क्षायिक-शुद्धियो मे दूसरी क्षायिक-शुद्धि। यह दर्शनावरण कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४.५६,६० ६५

क्षायिकदान—नौ क्षायिक-शुद्धियों में पाँचवी क्षायिकशुद्धि, यह दानान्तराय कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४ ५६

क्षायिकभाव—कर्मों के नष्ट हो जाने पर जीव के उत्पन्न भाव। इनके सद्भाव में आत्मा इन्ही में शाश्वत तन्मय रहता है। मपु० ५४ १५५

क्षायिकभोग—नौ क्षायिक-शुद्धियो में सातवी क्षायिक-शुद्धि। यह भोगान्तराय कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४.५६

क्षायिकलब्धि—सहयोग और अयोग केवलियो को प्राप्त अनन्त सुख, हपु० ३ ८६

क्षायिक लाभ—नौ क्षायिक-शुद्धियो में इस नाम की शुद्धि। यह लाभान्तराय कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४ ५६

क्षायिक वीर्य—नौ क्षायिक-शुद्धियो में अन्तिम शुद्धि। यह वीर्यान्तरायकर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। मपु० २४ ५६

क्षायिक शुद्धि—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्मों के क्षय से उत्पन्न शुद्धियाँ। ये नौ होती हैं—१. क्षायिकज्ञान २. क्षायिकदर्शन ३ क्षायिक सम्यक्त्व ४ क्षायिक-चारित्र ५. क्षायिकदान ६ क्षायिकलाभ ७ क्षायिकभोग ८ क्षायिक उपभोग ९ क्षायिक वीर्य। मपु० २४ ५६-६६ दे० क्षायिक लब्धि

क्षायिक सम्यक्त्व—नौ क्षायिक-शुद्धियो में तीसरी क्षायिक-शुद्धि। यह दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय से उत्पन्न होती है। हपु० ३ १४४

क्षायोपशमिक—सम्यग्दर्शन का एक भेद। यह दर्शनमोहनीय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होता है। हपु० ३ १४४

क्षार—अवसर्पिणी काल के अन्त मे सरस, विरस, तीक्ष्ण, रूक्ष, उष्ण और विष नाम के मेघो के क्रमश बरसने के पश्चात् सात दिन तक खारे पानी की वर्षा करनेवाले मेघ। मपु० ७६ ४५२-४५३

क्षितिवर—राम का अश्वरथासीन योद्धा। पपु० ५८ १२

क्षितिसार—भरत चक्रवर्ती के महल का कोट। मपु० ३७ १४६

क्षीणकषाय—बारहवाँ गुणस्थान। इसमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्म का क्षय हो जाता है। मपु० २० २६२, हपु० ३ ८३

क्षीरकदम्ब—जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के धवल देश में स्थित स्वस्तिकावती नगरी का निवासी एक विद्वान् ब्राह्मण। यह इसी नगर के राजा विश्वावसु के पुत्र वसु, अपने पुत्र पर्वत और दूसरे देश से आये हुए नारद का गुरु था। आयु के अन्त मे इसने सयम धारण किया और सन्यासमरण के द्वारा वह स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६७ २५६-२५९, ३२६

क्षीरधारा—किंपुरुष देव की देवी। यह पूर्वभव मे कुलवान्ता नाम की अत्यन्त दरिद्र स्त्री थी। पपु० १३ ५९

क्षीरपयोधर—उत्सर्पिणीकाल सम्बन्धी अतिदु षमा काल के आरम्भ में सात दिन तक जल और दूध की निरन्तर वर्षा करनेवाले मेघ। मपु० ७६ ४५४-४५५

क्षीरवन—एक वन। इसी वन में मर्कट देव ने प्रद्युम्न को मुकुट, औषधि माला, छत्र और दो चमर प्रदान किये थे। मपु० ७२ १२०

क्षीरवर—मध्यलोक का पाँचवाँ द्वीप। हपु० ५ ६१४

क्षीरसागर—क्षीर-समुद्र। इसके जल से इन्द्र तीर्थंकरो का जन्माभिषेक करता है और दीक्षा के समय केशलोच करने पर उनके केशो का इसी समुद्र मे क्षेपण करता है। मपु० १३.११०-११२, १६ २१५, ७३ १३१, हपु० २ ४२, ५४, ९ ९८, वीवच० ९.१२

क्षीरस्राविणी—एक रस-ऋद्धि। इससे भोजन में दूध का स्वाद आने लगता है। मपु० २ ७२, ५९ २५७

क्षीरोदसागर—क्षीरवर द्वीप को घेरे हुए पाँचवाँ समुद्र। हपु० ५ ६१४

क्षीरोदा—विदेह को एक विभग नदी। यह निषध पर्वत से निकलकर महानदी सीतोदा में प्रवेश करती है। मपु० ६३ २०७, हपु० ५ २४१

क्षुधा—इस नाम का एक परीषह-मार्ग से च्युत न होने के लिए भूख-जनित वेदना को सहना। मपु० ३६ ११६

क्षुयवरोधन—दुर्योधन का वशज, पाण्डवो पर उपसर्ग कर्ता। इसने प्रतिमायोग में ध्यानस्थ पाण्डवो को अग्नि मे तपे हुए लोहे के मुकुट, कड़े तथा कटिसूत्र आदि पहनाये थे। हपु० ६५ १८-२० अपरनाम कुर्यधर। पापु० २५ ५७, ६२-६५

क्षुब्ध—राम का एक योद्धा। इसने रावण के योद्धा क्षोभण के साथ युद्ध किया था। पपु० ६२ ३८

क्षुल्लक—दसवी प्रतिमा का धारक साधु। यह पाँच समितियो और तीन गुप्तियो के साथ पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और शिक्षाव्रतो का पालन करता है। ऐसा व्रती घर पर भी रह सकता है। राजा सुविधि ऐसा ही व्रती था। मपु० १०.१५८-१७०

क्षेत्र—(१) जीव आदि पदार्थो का निवास स्थान-लोक। मपु० ४.१४

(२) छ कुलाचलो से विभाजित सात क्षेत्र, भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत। मपु० ४ ४९, ६३ १९१-१९२, पपु० ३ ३७

क्षेत्रज्ञ—(१) जीव के स्वरूप का ज्ञाता। मपु० २४ १०५

(२) सत्ताईस सूत्रपदो मे एक सूत्रपद—इसमें शुद्धात्मा के स्वरूप का वर्णन है। मपु० ३९ १६५, १८८

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२१

क्षेत्रपरिवर्तन—असख्य प्रदेशी लोकाकाश के एक-एक प्रदेश मे उत्पन्न होकर समस्त प्रदेशो में जीव का जन्म-मरण होना। वीवच० ११,२९

क्षेत्रवृद्धि—दिग्व्रत के पाँच अतिचारो में पाँचवाँ अतिचार-मर्यादित क्षेत्र की सीमा बढा लेना। हपु० ५८ १७७

क्षेमंकर—(१) तीसरे मनु/कुलकर। इनकी आयु अटट वर्ष प्रमाण थी। शरीर आठ सौ धनुष की अवगाहना से युक्त था। ये सन्मति कुलकर के पुत्र थे। इन्होने सिंह व्याघ्र आदि से भयभीत प्रजा के भय को दूर किया। इसीलिए इनको यह नाम मिला। ये क्षेमन्धर के पिता थे।

मपु० ३ ९०-१००, पपु० ३ ७८, हपु० ७ १५०-१५२, पापु० २ १०४-१०५

(२) देशभूषण और कुलभूषण का पिता। यह सिद्धार्थ नगर का राजा था। कमलोत्सवा इसी की पुत्री थी। जब इसके दोनो पुत्र विरक्त होकर दीक्षित हो गये तो इसने शोकाकुल होकर अनशन व्रत ले लिया और मरकर भवनवासी देवो में सुवर्ण कुमार जाति के देवो का अधिपति महालोचन नाम का देव हुआ। पपु० ३९ १५८-१७८

(३) विजयार्ध की दक्षिण श्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ५०, ५३

(४) जम्बूद्वीपस्थ पूर्वविदेह क्षेत्र के रत्नसचय नगर के राजा और वज्रायुध के पिता। जब इन्हें वैराग्य हुआ तो लौकान्तिक देव इनकी स्तुति के लिए आये। वज्रायुध को राज्य देकर ये दीक्षित हुए और इन्होंने तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया। इन्हें भट्टारक भी कहा गया है। ये पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रियमित्र चक्रवर्ती के धर्मोपदेशक और दीक्षागुरु थे। मपु० ६३ ३७-३९, ११२, ७३ ३४-३५, ७४ २३६-२४०, पापु० ५ १२-१६, ३०-३१, वीवच० ५ ७४-१०७

(५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७३

क्षेम—(१) एक देश और इसी नाम का एक नगर। यहाँ जीवन्धर ने हजार शिखरो के जैन मन्दिर को देखा था। मपु० ७५ ४०२-४०३, पपु० ६.६८

(२) प्राप्त वस्तु की रक्षा। मपु० ६२ ३५

क्षेमकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६५

क्षेमधर्मपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६५

क्षेमधूर्त—कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में यादवो का पक्षधर एक समरथ राजा। हपु० ५० ८२

क्षेमन्धर—चौथे मनु। इनकी आयु तुटिकाब्द प्रमाण थी। शारीरिक अवगाहना सात सौ पचहत्तर धनुष थी। दुष्ट जीवो से रक्षा करने के उपायो का उपदेश देकर प्रजा का कल्याण करने से ये इस नाम से प्रसिद्ध हुए। मपु० ३ १०३-१०७, पपु० ३ ७८, हपु० ७ १५२-१५३, पापु० २ १०३-१०६

क्षेमपुर—(१) धातकीखण्ड के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उत्तर-तटवर्ती सुकच्छ देश का नगर। मपु० ५३ २

(२) जम्बूद्वीप में स्थित विदेह क्षेत्र के कच्छ देश का नगर। मपु० ४९.२, ५७ २

क्षेमपुरी—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित चौबीसवी नगरी मपु० १९ ४८, ५३

(२) विदेह क्षेत्र के बत्तीस देशो में सुकच्छ देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१८, हपु० ५ २४५, २५७-२५८

क्षेमशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

क्षेमसुन्दरी—क्षेमपुर नगर के निवासी सुभद्र श्रेष्ठी और उसकी पत्नी निर्वृति की पुत्री। यह पिता द्वारा जीवन्धर-कुमार को दी गयी थी। मपु० ७५ ४१०-४१५

क्षेमाजलि—एक नगर। यहाँ वनवास के समय राम, सीता और लक्ष्मण ने विश्राम किया था। पपु० ३८ ५६-५९, ८० १०१-११२

क्षेमा—पूर्व विदेहस्थ कच्छ देश की राजधानी। तीर्थंकर सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ और अरनाथ के पूर्वभव में यहाँ शासन किया था। बलभद्र राम भी पूर्वभव में यही जन्मे थे। मपु० ६३ २०८, २१३, पपु० २० ११-१३, २३१, १०६ ७५, हपु० ५ २५७-२५८

क्षेमी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७३

क्षोभण—रावण का व्याघ्ररथासीन एक योद्धा। इसने राम के क्षुब्ध नामक योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ५७ ५१, ६२ ३८

क्षोभ्या—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२६

क्षौम—सुन्दर और महीन रेशमी दुकूल। मपु० १२ १७३

क्ष्वेल—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से वायु समस्त रोगो को हरनेवाली हो जाती है। मपु० २ ७१

ख

खंगपुर—एक नगर। यहाँ राजा सोमप्रभ राज्य करता था। मपु० ६७ १४१-१४२

खग—(१) विद्याधर। हपु० १ १०४, ४४.४

(२) बाण। मपु० ४४ १२१

(३) पक्षी। मपु० ४४ १२१

खग-खग—विद्याधरो का पर्वत-विजयार्ध। मपु० ७१ ३७६

खगपुर—एक नगर। सुदर्शन बलभद्र की जन्मभूमि। मपु० ६१ ७०

खगामिनी—एक विद्या। इससे आकाश में गमन किया जाता है। पपु० ७ ३३४

खचर—तिर्यंच जीवो के तीन भेदो में एक भेद-आकाशगामी जीव। मपु० ९८ ८१

खचराचल—विजयार्ध पर्वत। मपु० ५ २९१, ६२ २४१

खड—चौथे नरक पकप्रभा के छठे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओं में चवालीस और विदिशाओ में चालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८२, १३४

खडखड—चौथे नरक पकप्रभा के सातवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो महादिशाओ में चालीस और विदिशाओ में छत्तीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८२, १३५

खड्ग—(१) एक देश। यह भरत चक्रवर्ती के समय में उनके राज्य की पूर्व दिशा में स्थित था। मपु० ६३ २१३, हपु० ११ ६८-६९

(२) सैन्य शस्त्र। पपु० ९ ३०

खड्गपुरी—पश्चिम विदेहस्थ सुगन्धा देश की राजधानी। मपु० ६३ २१२, २१७

खड्गा—(१) पश्चिम विदेहस्थ आवर्त्ता देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८, २१३, हपु० ५ २४५, २५७, २६३

(२) पश्चिम-विदेहस्थ सुगन्ध देश की राजधानी। हपु० ५ २५१-२५२, २६३

खण्डकप्रपात—(१) भरतक्षेत्रस्थ विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में तीसरा कूट। इसका विस्तार मूल में सवा छ योजन, मध्य में कुछ कम पाँच योजन और ऊपर कुछ अधिक तीन योजन है। हपु० ५ २६, २९

(२) ऐरावत क्षेत्रस्थ विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में सातवाँ कूट। हपु० ५ १११

खण्डकापात—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की एक गुहा। हपु० ११ ५३

खण्डवन—एक वन। महावीर की दीक्षा भूमि। अपरनाम षण्डवन। अर्जुन ने एक ब्राह्मण से अग्नि, जल, सर्प, गरुड, मेघ आदि बाण प्राप्त किये थे। उनमें से दावानल नामक बाण से उसने इसे जलाया था। मपु० ७४ ३०२-३०४, पापु० १६ ६५-७६, वीवच० १२ ८६-८७

खण्डिका—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी की नगरी। हपु० २२ ८९

खतिलक—एक देश। यहाँ के निवासी भी खतिलक ही कहलाते थे। पपु० ५५ २९

खदिर—एक वन। प्रद्युम्न अपने वैरी के द्वारा इसी अटवी मे तक्षक शिला के नीचे दबाया गया था। मपु० ७२ ५१-५३, हपु० ४३ ४७-४८

खदिरसार—जम्बूद्वीपस्थ विंध्याचल पर्वत के कुटज या कुटव वन का निवासी भील। यह राजा श्रेणिक के तीसरे पूर्वभव का जीव था। इसने समाधिगुप्त योगी से काकमास न खाने का नियम लिया था। असाध्यरोग होने तथा उसके उपचार हेतु काक-मास बताये जाने पर भी इसने उस मास को नही खाया। अपने व्रत का निर्वाह करते हुए इसने समाधिमरण किया और यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर श्रेणिक हुआ। मपु० ७४ ३८६-४१८, वीवच० १९ ९६-११२, १२०-१२६, १३४-१३५

खनि—खान-आजीविका का एक साधन। मपु० २८ २२

खमाली—एक तापस। कनकेशी इसकी स्त्री और मृगश्रृंग इसका पुत्र था। चन्द्राभ विद्याधर को देखकर इसने विद्याधर होने का निदान किया। इसके फलस्वरूप यह मरकर राजा वज्रदंष्ट्र का विद्युद्दंष्ट्र नामक पुत्र हुआ। हपु० २७ ११९-१२१

खर—रावण का सहयोगी एक विद्याधर। इसने कमलकेतु के साथ माया-मय युद्ध किया था। मपु० ६८ ६२०-६२२

खरदूषण—मेघप्रभ का पुत्र। इसने रावण की बहिन चन्द्रनखा का अप-हरण करके उसके साथ विवाह किया था। यह चौदह हजार विद्या-धरों का स्वामी, रावण का सेनापति और शम्बूक तथा सुन्द का पिता था। लक्ष्मण ने इसे सूर्यहास खड्ग से मारा था। पपु० ९ २२-३८, १० २८, ३४, ४९, ४३ ४०-४४, ४५ २२-२७

खरनाद—रावण का सिंहरथासीन एक सामन्त। पपु० ५७ ४७-४८

खरभाग—प्रथम पृथ्वी रत्नप्रभा के खर, पक और अब्बहुल इन तीन भागों मे प्रथम भाग। यह सोलह हजार योजन मोटा, नौ भवन-वासियों का आवास स्थान और स्वय जगमगाते हुए नाना प्रकार के भवनों से अलकृत है। इसके सोलह पटल है—चित्रा, वज्रा, वैडूर्य, लोहिताक्ष, मसारगल्व, गोमेद, प्रवाल, ज्योति, रस, अजन, अजनमूल, अग, स्फटिक, चन्द्राभ, वर्चस्क और बहुशिलामय। ये पटल एक-एक हजार योजन मोटे हैं। हपु० ४ ४७-५५

खर्वट—पर्वत से संरुद्ध नगर। इसके अधीन दो सौ गाँव होते हैं। मपु० १६ १७१, १७५, हपु० २ ३ अपरनाम कर्वट। पापु० २ १५९

खलूरिका—आयुधशाला-धनुर्विद्या सीखने का स्थान। मपु० ७५ ४२२

खस—एक जनपद। यहाँ के निवासी भी खस ही कहलाते हैं। पपु० १०१ ८३

खादिर—एक वन। यहाँ राम ने रावण के विरुद्ध लक्ष्मण के नायकत्व मे सुग्रीव आदि की सेना भेजी थी। मपु० ६८ ४६०-४६२

खेचरनाथ—विद्याधरो का स्वामी नमि। हपु० १३ २०

खेचरभानु—राजा वज्रायुध और उसकी रानी वज्रशीला का पुत्र। यह वज्रपजर नगर में रहता था। आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दिर की पुत्री श्रीमाला के स्वयवर में यह आया था। पपु० ६ ३५७-३६३, ३९६

खेचराद्रि—विजयार्ध पर्वत। मपु० ४ १९८

खेचरानन्द—वानरवशी एक नृप। यह गगनानन्द का पुत्र और गिरि-नन्दन का पिता था। पपु० ६ २०५-२०६

खेट—नदी और पर्वत से घिरा हुआ ग्राम, नगर। मपु० १६ १७१, हपु० २ ३

ग

गग—(१) भरतक्षेत्रस्थ कुरुजागल देश मे हस्तिनापुर नगर के राजा गगदेव और रानी नन्दयशा का गगदेव के साथ युगल रूप में उत्पन्न पुत्र। इसके चार भाई और थे। इनके नाम है—नन्द, सुनन्द, नन्दि-षेण और निर्नामक। मपु० ७१,२६१-२६५ हरिवश पुराण में गगदेव को गगदत्त बताया है। हपु० ३३ १४२-१४३

(२) महावीर के निर्वाण के पश्चात् एक सौ बासठ वर्ष का समय निकल जाने पर एक सौ तेरासी वर्ष के काल में हुए दस पूर्व और ग्यारह अग के धारी ग्यारह मुनियो में दसवें मुनि। वीवच० १ ४६ अपरनाम गगदेव। मपु० २ १४४

गंगदत्त—(१) गग का भाई। हपु० ३३ १४२-१४३ दे० गग

(२) राजा जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३३

गंगदेव—(१) हस्तिनापुर का राजा और नन्दयशा का पति। इसके सात पुत्र हुए थे। यह देवनन्द पुत्र को राज्य देकर द्रुमषेण मुनि से दो सौ राजाओ के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ७१ २६१-२६५, हपु० ३३ १६३ दे० गग

(२) हस्तिनापुर के राजा गगदेव का पुत्र, गग के साथ युगल रूप में उत्पन्न। मपु० ७१ २६१-२६५ दे० गग

(३) दस पूर्व और ग्यारह अगधारी ग्यारह मुनियो में दसवें मुनि। दे० गग। मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२१-५२४, हपु० १ ६३

(४) कुरुवशी राजा धृतिकर का उत्तराधिकारी। हपु० ४५ ११

(५) कृष्ण के पूर्वभव का जाव। पपु० २० २११

गंगमित्र—हस्तिनापुर के राजा गगदेव और रानी नन्दयशा का पुत्र। मपु० ७१ २६१-२६५ दे० गग

गंगरक्षित—हस्तिनापुर के राजा गगदेव और उनकी नन्दयशा रानी का नन्द के साथ युगल रूप में उत्पन्न एक पुत्र। हपु० ३३.१४५-१४३ दे० गग

गंगा—(१) रत्नपुर के राजा जह्नु की पुत्री। इसका विवाह राजा पाराशर से हुआ था। भीष्म इसका पुत्र था। हपु० ४५ ३५, पापु० ७ ७७-८०

(२) चौदह महानदियों में प्रथम नदी। यह पद्म सरोवर के पूर्व द्वार से निकली है। इसके उद्गम-स्थान का विस्तार छ योजन और एक कोस तथा गहराई आधी कोस है। यह अपने निर्गम स्थान से पाँच सौ योजन पूर्व दिशा की ओर बहकर गगाकूट से लौटती हुई दक्षिण की ओर भरतक्षेत्र में आयी है। वज्रमुखकुण्ड से दक्षिण की ओर कुण्डलाकार होकर यह विजयार्ध पर्वत की गुफा में आठ योजन चौड़ी हो गई है। अन्त में यह चौदह हजार सहायक नदियों के साथ पूर्व लवण समुद्र में प्रवेश करती है। यहाँ इसकी चौड़ाई साढे बासठ योजन है। यह जिस तोरणद्वार से लवणसमुद्र में प्रवेश करती है वह तेरानवें योजन तीन कोस ऊँचा तथा आधा योजन गहरा है। मपु० १९ १०५, २७ ९, ३२.१३२, ६३ १९५, हपु० ५ १३२-१५०, २६७ नील पर्वत से निकलकर यह विदेहक्षेत्र के कच्छा आदि देशों में भी बहती है। गन्धावती नदी इसका सगम है। इसी नदी के किनारे-किनारे चलकर भरत की सेना गगाद्वार तक पहुँची थी। मपु० २९ ४९, ७० ३२२, हपु० ५ २६७ अपरनाम जाह्नवी, व्योमापगा, आकाश-गगा, त्रिमार्गगा, मन्दाकिनी। मपु० २६ १४६-१४७, २७ १०, २८ १७, १९, पपु० १२ ७३

गंगाकुण्ड—हिमालय पर्वत के शिखर से पतित नीर द्वारा निर्मित, गगा का उद्गमस्थान। प्राचीन काल में राज्याभिषेक के लिए इस कुण्ड का जल लाया जाता था। मपु० १६ २०८-२११

गंगाकूट—(१) हिमवान् पर्वतस्थ ग्यारह कूटों में पाँचवाँ कूट। इसकी ऊँचाई पच्चीस योजन है। यह मूल में पच्चीस, मध्य में पौने उन्नीस और ऊपर साढे बारह योजन विस्तृत है। गगा इसी कूट से दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है। हपु० ५ ५४-५६, १३८

(२) गगादेवी की निवासभूमि। मपु० ४५ १४८

गंगाद्वार—पूर्व-सागर के तट पर स्थित गगासागर का द्वार। भरत चक्रवर्ती ने समुद्र तक पहुँचकर यहाँ तीन दिन का उपवास किया था और चतुरग सेना सहित पड़ाव डाला था। इससे विदित होता है कि गगाद्वार पूर्वी समुद्र के तट पर था। मपु० २८ १३, हपु० ११ २-३

गंगादेवी—गगाकूटवासिनी गगा नदी की अधिष्ठात्री देवी। इसने भरतेश के यहाँ आने पर एक हजार स्वर्ण कलशों से उनका अभिषेक किया था तथा उन्हें पादपीठ से युक्त दो रत्न-सिंहासन भेंट किये थे। सुलोचना ने भी पंच नमस्कार के प्रभाव से इस देवी को प्रसन्न करके जयकुमार आदि को नदी के प्रवाह में डूबने से बचाया था। मपु० ३२ १६५-१६८, ३७ १० ४५ १४४-१५१, हपु० ११ ५०-५२

गंगाधर—सूर्योदय नगर के राजा शक्रधनु के साले का पुत्र। यह महीधर का भाई था। अपने फूफा शक्रधनु की पुत्री जयचन्द्रा के हरिषेण के साथ विवाहे जाने पर ये दोनों भाई बहुत कुपित हुए। इन्होंने हरिषेण से युद्ध भी किया था किन्तु इसमें भयभीत होकर दोनों भाई युद्ध से भाग गये थे। पपु० ८.३५३-३८७

गंगापात—गगा का उद्गमस्थान। यहाँ गगादेवी ने भरत का अभिषेक किया था। मपु० ३२ १६३

गंगासागर—वह स्थान जहाँ गगा ने सागर का रूप धारण कर लिया है। गगाद्वार यही है। हपु० ११ ३

गगनचन्द्र—(१) गगनवल्लभ नगर का राजा। यह नगर जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्रस्थ पुष्कलावती देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित है। गगनचन्द्र गगनसुन्दरी का पति और अमिततेज तथा अमितमति का पिता था। मपु० ७० ३८, ४०, हपु० ३४ ३४-३५

(२) बाली के दीक्षागुरु। पपु० ९ ९०

गगनचर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल और उसकी रानी मनोहारी का सातवाँ पुत्र। मपु० ७१ २४९-२५२

गगनचरी—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की ५० नगरियों में एक नगरी। मपु० १९ ४९, ५३

गगननन्दन—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के ६० नगरों में एक नगर। मपु० १९ ८१,८७

(२) नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल का पुत्र और गगनचर का सहोदर। मपु० ७१ २४९-२५२

गगनमण्डल—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ८५

गगनवल्लभ—जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र सम्बन्धी पुष्कलावती देश में स्थित विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के साठ नगरों में एक नगर। मपु० १९ ८२, ५९ २९०, ६३ २९, ७० ३९, पपु० ५५ ८४-८८, हपु० २२ ८५, ३४ ३४

गगनवल्लभा—सोलहवें स्वर्ग के अच्युतेन्द्र की महादेवी। हपु० ६० ३८

गगनसुन्दरी—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित गगनवल्लभ नगर के राजा गगनचन्द्र की रानी तथा अमितमति और अमिततेज की जननी। मपु० ७० ३८-४०, हपु० ३४ ३५

गगनानन्द—वानरवंशी राजा प्रतिबल का पुत्र, खेचरानन्द का पिता। पपु० ६ २०५

गज—(१) एक सिंहरथासीन सामन्त। यह रावण की सहायता के लिए विशाल सेना लेकर सग्राम में भाग लेने आया था। पपु० ५७ ४६

(२) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में विजयार्ध शैल पर उत्पन्न एक सजीव रत्न। मपु० ३७ ८४-८६

(३) वस्तु का प्रमाण-विशेष। इसे किष्कु भी कहते हैं। हपु० ७ ४५

(४) सौधर्म और ऐशान स्वर्ग के इकतीस पटलों में उनतीसवाँ पटल। हपु० ६.४७

(५) हाथी। इसका उपभोग राजा के वाहन और उसकी सेना में होता था। मपु० ३ ११९, ४ ६८, ३०.४८, हपु० १.११६

गजकुमार—वसुदेव तथा देवकी से उत्पन्न, कृष्ण का अनुज। कृष्ण ने अनेक राजकुमारियों के अतिरिक्त सोमशर्मा ब्राह्मण की क्षत्रिय स्त्री से उत्पन्न सोमा नामक कन्या के साथ इसका विवाह कराया। हपु० ६० १२६-१२८ यह तीर्थंकरों का चरित्र सुनकर संसार से विरक्त हो गया। अपनी पुत्री के त्याग से उत्पन्न क्रोधाग्निवश सोमशर्मा ने इसके सिर पर तीव्र अग्नि प्रज्वलित की थी, किन्तु इस उपसर्ग को सहकर इसने शुक्लध्यान के द्वारा कर्मों का क्षय किया। यह अन्तकृत्-केवली होकर संसार से मुक्त हो गया। हपु० ६१.२-१०

गजदन्त—गजदन्ताकार चार पर्वत। सौमनस, विद्युत्प्रभ गन्धमादन और माल्यवान् ये चार पर्वत गजदन्ताकार हैं इसलिए गजदन्त कहलाते हैं। मपु० ५ १८०

गजपुर—(१) विजयार्ध पर्वत के दक्षिण भाग में स्थित एक नगर। यहाँ श्रीपाल आया था। मपु० ४७.१२८, हपु० ३४ ४३, ४६ १ पापु० २.२४७

(२) हस्तिनापुर। शान्ति, कुन्थु और अर इन तीन तीर्थंकरों की जन्मभूमि। यहीं पर अन्धकवृष्णि का पूर्वजन्म का जीव गौतम उत्पन्न हुआ था। पपु० २० ५२-५४, हपु० १८.१०३

गजबाण—विद्यामय बाण। इसे सिंहबाण से रोका जाता था। मपु० ४४ २४२

गजवती—भरतक्षेत्र के वरुण पर्वत से बहने वाली एक नदी। यह हरिद्वती, चण्डवेगा, कुसुमवती और सुवर्णवती नदियों के संगम में जाकर मिली है। हपु० २७ १२-१४

गजस्वन—राम का सहायक एक विद्याधर। यह विद्याधरों का महारथी राजा था। पपु० ५४.३४-३५

गजांकित ध्वजा—समवसरण की दस प्रकार की ध्वजाओं में एक ध्वजा। इस ध्वजा पर गज की आकृति चित्रित होती थी। मपु० २२ २३४, ३३.९४

गजारात्याराव—सिंहनाद। जिन-जन्म सूचक चतुर्विध ध्वनियों में एक ध्वनि। मपु० ६३ ३९९

गण—बारह गणों की बारह सभाएँ। ये समवसरण में होती हैं। मपु० ३३ १५७

गणग्रह—दीक्षान्वय क्रियाओं में चौथी क्रिया। इसमें देवों का विसर्जन और देवों की अर्चना की जाती है। मपु० ३८.६४, ३९ ४५-४८

गणज्येष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३५

गणधर—सर्वज्ञ देव के प्रमुख शिष्य। ये समस्त श्रुत के पारगामी, सातों ऋद्धियों के धारक, गणों के ईश और संघ के अधिप होते हैं। इन्द्रभूति आदि ऐसे ही गणधर थे। मपु० २ ५१, ४३ ६७, ५९ १०८, ७४.३७०-३७२, पपु० ३ २४, हपु० ३ ४०-४१

गणनाथ भक्ति—आचार्य-भक्ति। यह सोलह कारण भावनाओं में एक भावना है। इसमें मन, वचन और काय से भावों की शुद्धतापूर्वक आचार्यों की भक्ति की जाती है। मपु० ६३ ३२७

गणबद्ध—चक्रवर्ती की आज्ञा का पालन करनेवाले सोलह हजार देव। ये चक्रवर्ती की निधियों और रत्नों की रक्षा करते हैं। मपु० ३७ १४५,६७ ७६, हपु० ११ ३७

गणाग्रणी—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३५

गणाधिप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३५

गणित—अंक-विद्या। यह एक विज्ञान है। वृषभदेव ने ब्राह्मी और सुन्दरी दोनों पुत्रियों को अक्षर, संगीत, चित्र आदि विद्याओं के साथ इसका अभ्यास कराया था। हपु० ८ ४३, ९ २४

गणिनी—मुख्य आर्यिका। मपु० २४ १७५

गणेश—देवों से सेव्य गणधर। मपु० ५९ १०८, पपु० ३ २४ दे० गणधर

गणोपग्रहण—गृहस्थ की त्रेपन गर्भान्वय क्रियाओं में अट्ठाईसवीं क्रिया। इसमें आचार्य श्रुतार्थियों को श्रुताभ्यास कराता है, दीक्षार्थियों को दीक्षित करता है और धर्मार्थियों को धर्म का ज्ञान देता है। इससे असत् वृत्तियों का निवारण और सत्‌वृत्तियों का प्रचार-प्रसार होता है। मपु० ३८ ५५-६३, १६८-१७१

गण्य—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४२१, २५ १३५

गण्यपुर—पश्चिम पुष्करार्ध के पश्चिम विदेह क्षेत्र में स्थित रूप्याचल की उत्तरश्रेणी का एक नगर। हपु० ३४ १५

गतत्रास—राम का एक सिंहरथी सामन्त। पपु० ५८ ११

गतश्रम—राक्षसवंशी एक राजा। स्वर्ग से च्युत होकर यह अनुत्तर नामक राजा के पश्चात् लंका का स्वामी हुआ था। पपु० ५ ३९७-४००

गतस्पृह—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

गति—(१) यह चार प्रकार की होती है—नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, और देवगति। ये कर्मानुसार प्राप्त होती हैं। मपु० ४ १०,५३,८१, पपु० २ १६१-१६८, ५.३२६

(२) तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४२

गदागिरि—एक पर्वत। यहाँ भरतेश की सेना ने विश्राम किया था। मपु० २९ ६८,

गदाविद्या—एक विद्या। इससे युद्ध में जय और कीर्ति मिलती है। पापु० १५ १०, १७-१९

गन्ध—(१) पूजा के अष्ट द्रव्यों में एक द्रव्य। मपु० १७ २५१

(२) सुगन्ध और दुर्गन्ध रूप घ्राणेन्द्रिय का विषय। यह चेतन-अचेतन वस्तुओं से प्राप्त होता है तथा कृत्रिम और प्राकृतिक के भेद से द्विविध होता है। मपु० ७५ ६२०-६२२

(३) इक्षुवर समुद्र के दो रक्षक व्यन्तरों में एक व्यन्तर। हपु० ५.६४४

गन्धकुटी—समवसरण में तीर्थंकर के बैठने का स्थान। यह छः सौ धनुष प्रमाण चौड़ी होती है। इसकी तृतीय कटनी पर कुबेर द्वारा निर्मित रत्नजटित सिंहासन होता है। यह अनेक शिखरों से युक्त होती है। इसमें तीन पीठ होते हैं। इसे पुष्पमालाओं, रत्नों की झालरों तथा

अनेक ध्वजाओ से सुसज्जित किया जाता है। मपु० २३.१०-२६, ३३ ११२, १५० हपु० ५७ ७, वीवच० १४.१७७-१८३

गन्धदेवी—शिखरी कुलाचल के ग्यारह कूटो में नवाँ कूट । हपु० ५ १०७

गन्धमादन—(१) विजयार्ध-पर्वत की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो में पचासवाँ नगर । हपु० २२ ९०

(२) राजा जरासन्ध का एक पुत्र । हपु० ५२.३१

(३) राजा हिमवान् का सबसे छोटा पुत्र । हपु० ४८ ४७

(४) मेरु पर्वत की पश्चिमोत्तर दिशा में स्थित एक स्वर्णमय गजदन्त पर्वत । यह नील और निषध पर्वत के समीप चार सौ तथा मेरु पर्वत के समीप पाँच सौ योजन ऊँचा है, गहराई ऊँचाई से चौथाई है, देवकुरु और उत्तरकुरु के समीप इसकी चौड़ाई पाँच सौ योजन है । इस पर्वत से गन्धवती नदी निकली है । मपु० ६३ २०४ ७१ ३०९, हपु० ५ २१०-२१८ मुनि विमलवाहन और विदेहक्षेत्रस्थ सुपद्मा देश के सिंहपुर नगर के राजा अर्हद्दास यहीं से मोक्ष गये थे । यह सुप्रतिष्ठ मुनिराज की कैवल्यभूमि थी । मपु० ७० १८-१९, १२४, हपु० १८ २९-३१, ३४ १०

(५) शौर्यपुर के उद्यान मे स्थित पर्वत । हपु० १८ २९

(६) जरासन्ध का पुत्र । हपु० ५२ ३१

गन्धमादनकूट—गन्धमादन पर्वत का एक कूट । हपु० ५ २१७

गन्धमादिनी—उत्तर विदेह क्षेत्र की एक विभगा-नदी । यह नीलाचल से निकलकर सीतोदा नदी में मिली है । हपु० ५ २४२-२४३

गन्धमालिनी—(१) पश्चिम विदेह क्षेत्र के बत्तीस देशो मे अन्तिम देश । यह नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित है । वीतशोका नगरी, विजयार्ध पर्वत तथा इस देश को राजधानी अवध्या की स्थिति इसी देश में है । मपु० ५९ १०९, ६३ २१२, २१७, हपु० ५ २५१-२५२, २७ ५

(२) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र का एक नगर । हपु० २७ ११५

(३) विदेहक्षेत्र की बारह विभगा नदियो में दसवी नदी । मपु० ६३ २०७

गन्धमालिनिक—गन्धमादन पर्वत के सात कूटो में चौथा कूट । हपु० ५ २१७

गन्धमित्र—साकेत का मासाहारी राजा । मपु० ५९ २६६, हपु० २७ १००-१०२

गन्धर्व—(१) गन्धर्वनगर के निवासी इन्द्र के गायक देव । ये देवसेना के आगे वाद्य बजाते हुए चलते हैं । मपु० १३ ५०, १४ ९६, पपु० ३ ३०९-३१०, ७ ११८, वीवच० ८ ९९

(२) संगीत-विद्या । हपु० ८ ४३

(३) रात्रि का तीसरा प्रहर । मपु० ७४ २५५

(४) सुमेरु पर्वत के नन्दन वन की पश्चिम दिशा में स्थित एक भवन । इसकी चौड़ाई तीस योजन, ऊँचाई पचास योजन और परिधि नब्बे योजन है । यहाँ लोकपाल वरुण अपने परिवार की साढे तीन करोड स्त्रियों के साथ मनोरंजन करता है । हपु० ५ ३१५-३१८

(५) विद्याओ के आठ निकायों मे पाँचवाँ निकाय । यह अदिति देवी ने नमि और विनमि को दिया था । हपु० २२ ५७-५८

(६) एक विवाह । इसमे पुरुष और स्त्री स्वय एक दूसरे को वर लेते हैं । कोई वैवाहिक विधि नहीं होती । पपु० ८ १०८

(७) दधिमुख नगर का राजा । इसकी रानी अमरा से उत्पन्न तीन पुत्रियाँ थी—चन्द्रलेखा, विद्युत्प्रभा और तरंगमाला । इसने राम के साथ इनका विवाह कर दिया था । पपु० ५१ २५-२६, ४७-४८

(८) अर्जुन का एक मित्र । इसने वनवास के समय वन मे दुर्योधन को युद्ध मे बाँधा था । पापु० १७ ६५-६७, १०१-१०४

गन्धर्वगीत—एक नगर । यहाँ का राजा सुरसन्निभ था । पपु० ५ ३६७

गन्धर्वदत्ता—(१) वसुदेव की रानी । वसुदेव की वीणा बजाने में कुशलता से प्रसन्न होकर इसने उसका वरण किया था । मपु० ७० ३०२-३०४

(२) जीवन्धर कुमार की पत्नी । यह रमणीय नगर के निवासी विद्याधर गरुडवेग और उसकी रानी धारिणी की पुत्री थी । मपु० ७५ ३०२-३०४, ३२४-३३६, पापु० ११ २५-२९

गन्धर्वद्वीप—ऐरावत क्षेत्र की उत्तरदिशा में स्थित उत्तमोत्तम चैत्यालयों से विभूषित एक द्वीप । पपु० ३ ४५

गन्धर्वनगर—मेघो से निर्मित काल्पनिक नगर । यह देखते ही देखते नष्ट हो जाता है । सम्पत्ति की स्थिति इसी प्रकार की होती है । मपु० ५० ५०

गन्धर्वपुर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो में पैंतीसवाँ नगर । ललितागदेव स्वर्ग से च्युत होकर इसी नगर के राजा वासव और उसकी महादेवी प्रभावती का महीधर नाम का पुत्र हुआ । मपु० ७ २८-२९, १९.८३

गन्धर्वशास्त्र—सौ से अधिक अध्यायों से युक्त गीत-वाद्य सम्बन्धी तथ्यों का प्रतिपादक शास्त्र । वृषभदेव ने अपने पुत्र वृषभसेन को इसका उपदेश किया था । मपु० १६ १२०

गन्धर्वसेना—(१) अमितगति विद्याधर की विजयसेना से उत्पन्न पुत्री । इसका विवाह वसुदेव के साथ हुआ था । हपु० १.८१, २१ ११८-१२२

(२) चारुदत्त की गान्धर्वशास्त्र में निपुण सुन्दरी पुत्री । हपु० १९ १२३

(३) सेना की सात कक्षाओं मे एक कक्षा । मपु० १०.१९८-१९९

गन्धर्वा—गन्धर्वगीत नगर के राजा सुरसन्निभ और उसकी रानी गान्धारी की पुत्री । यह भानुरक्ष से विवाहित थी । यह दस पुत्र और छ पुत्रियो की जननी थी । पपु० ५.३६७-३६९

गन्धवती—एक नगरी । सुकेतु और अग्निकेतु यहीं के निवासी थे । पपु० ४१ ११५

गन्धवान्—हैमवत क्षेत्र के मध्य में स्थित चार गोलाकार विजयार्ध पर्वतो में एक पर्वत । रोहा और रोहितास्या नदियाँ इसके पास बहती है । प्रभात यहाँ का व्यन्तर देव है । हपु० ५ १६१-१६४

गन्धसमृद्ध—विजयार्ध की दक्षिण श्रेणी के गान्धार देश में स्थित एक नगर। हपु० २२ ९४, ३० ६, ५४

गन्धा—विदेह क्षेत्र का एक देश। चक्रपुरी इस देश की राजधानी थी। यह पश्चिम विदेह में नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य मे स्थित है। चक्री यहाँ निवास करते हैं। मपु० ६३ २०८-२१७, हपु० ५ २५१-२५२

गन्धार—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित गान्धार देश के गन्धसमृद्ध-नगर का राजा। यह पृथ्वी का पति और प्रभावती का पिता था। इसने प्रभावती का विवाह वसुदेव से किया था। हपु० ३ ६-७ ३७, ५५

(२) वसुदेव तथा प्रभावती का ज्येष्ठ पुत्र। यह पिंगल का अग्रज था। हपु० ४८ ६३

गन्धारपन्नग—नागकुमार देवो की एक जाति। मपु० ६७ ४४७

गन्धावती—गगा नदी मे मिली गन्धमादन पर्वत के पास की एक नदी। इन्ही नदियो की सगमस्थली मे जठरकौशिक तापसो के आश्रम थे। मपु० ७० ३२२, हपु० ६० १६

गन्धावत्सुगन्धा—विदेह क्षेत्र का इस नाम का एक देश। मपु० ६३ २१२

गन्धिल—(१) जम्बूद्वीप मे मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर विदेहक्षेत्र-स्थित एक देश। इसकी पूर्व दिशा में मेरु पर्वत, पश्चिम में उर्मिमालिनी विभगा नदी, दक्षिण में सीतोदा नदी और उत्तर में नीलगिरि है। रजतमय विजयार्ध पर्वत इसी के मध्य मे है तथा इसी पर्वत पर दस-दस योजन चौडी उत्तर और दक्षिण नाम की दो श्रेणियाँ हैं। सिंहपुर तथा अयोध्या इसी देश में हैं। मपु० ४ ५१-५२, ८१, ८५, ५ २३०, ५९ २७६-२७७

(२) पुष्करार्ध द्वीप के पश्चिम सुमेरु की पश्चिम दिशा में प्रवाहित महानदी के उत्तरी तट पर स्थित एक देश। मपु० ७० २६-२७

गन्धिला—धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र मे नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित आठ देशो में सातवाँ देश। इसकी प्रमुख नगरी अयोध्या है। मपु० ५९ २७६-२७७, हपु० ५ २५१-२५२, २६३, २७ १११, अपरनाम गन्धिल

गन्धोत्कट—हेमागद देश में राजपुर नगर का निवासी एक राजमान्य सेठ। अपने मृत पुत्र को श्मसान ले जाने पर वहाँ इसे एक जीवित बालक पडा हुआ मिला। वह उसे अपने घर ले आया। इसकी पत्नी नन्दा ने इसे प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण कर इसका नाम जीवन्धर रखा। राजा सत्यन्धर की भामारति और अनगपताका नाम की दो छोटी रानियो के दीक्षित होने पर उनके पुत्रो का भी इसीने पालन किया था। जीवन्धर के आने के पश्चात् इसके एक पुत्र और हुआ। उसका नाम नन्दाढ्य था। मपु० ७५ १९८, २४२-२७९

गम्भीर—कृष्ण का पुत्र। यह युद्धवीर था। हपु० ४८ ७०, ५० १३१

गम्भीरनिनद—रावण का पक्षधर एक सामन्त। पपु० ५७ ४५

गम्भीरशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १८२

गम्भीरा—पूर्व आर्यखण्डस्थ एक नदी। मपु० २९ ५०

गम्भीरावर्त—भरत चक्रवर्ती के गम्भीर-ध्वनिकारी चौबीस शख। मपु० ३७ १८४

गम्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

गरिमा—अष्ट सिद्धियो मे एक सिद्धि। मपु० ३८ १९३

गरिमास्पद—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३

गरिष्ठ—सौधर्मेन्द्र और भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३, २५ १२२

गरिष्ठगी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

गरीयसामाद्यगुरु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

गरुड—सानत्कुमार और माहेन्द्रकल्प का चौथा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४८

गरुडकान्त—धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल और उनकी रानी मनोहरा का एक पुत्र। यह सेनकान्त के साथ युगलरूप में उत्पन्न हुआ था। हपु० ३३ १३१-१३३

गरुडकेतन—श्री कृष्ण। हपु० ५१ १०

गरुडदण्ड—सिंहपुर का गारुडिक। यह महागारुडिक विद्या (सर्प विष दूर करनेवाली विद्या) का जानकार था। मपु० ५९ १९३-१९६, हपु० २७ ४९-५२

गरुडध्वज—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो मे एक नगर। मपु० १९ ३९, ५३

(२) चन्द्रचूल/चित्रचूल और मनोहरी का पुत्र। यह गरुडवाहन के साथ युगलरूप में उत्पन्न हुआ था। मपु० ७१ २५१, हपु० ३३ १३१-१३३

गरुडयन्त्र—आकाशगामी एक वाहन। मपु० ७५ ३२४

गरुडवाहन—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल चित्रचूल और मनोहरी रानी का पुत्र। यह गरुडध्वज के साथ युगल रूप में उत्पन्न हुआ था। मपु० ७१ २४९-२५१, हपु० ३३ १३१-१३३

गरुडवाहिनी—एक विद्या। इससे आकाश में गमन होता है। मपु० ६२ १११-११२, ७१.३८१, पपु० ६० १३०-१३५, पापु० ४ ५४, वीवच० ३, ९५-९६

गरुडवेग—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के कनकपुर नगर का राजा। धृतिषेणा इसकी रानी थी। मपु० ६३ १६४-१६५

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गगनवल्लभ नगर का राजा। धारिणी इसकी रानी और गन्धर्वदत्ता पुत्री थी। मपु० ७५ ३०१-३०४

गरुडव्यूह—एक विशिष्ट सैन्य-व्यूह। मपु० ४४ ११२ सेना की ऐसी रचना चक्रव्यूह को भग करने के लिए की जाती थी। इसमे वसुदेव निष्णात थे। हपु० ५० ११२-१२९

गरुडांक—आदित्यवंशी नृप वृषभध्वज का पुत्र। यह मृगांक का जनक था। संसार से ममत्व छोड़कर इसने निर्ग्रन्थ व्रत धारण कर लिया लिया था। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ ११

गरुडांकितध्वजा—ध्वजाओं के दस भेदों में एक भेद। इस ध्वजा पर गरुड़ की आकृति चित्रित की जाती थी। मपु० २२ २२९

गरुडास्त्र—नागास्त्र का विध्वंसक अस्त्र। पपु० १२ ३३२-३३६

गरुत्मान्—जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३९

गर्दतोय—आठ प्रकार के लौकान्तिक देवों में पाँचवें प्रकार के लौकान्तिक देव। ये ब्रह्मलोक निवासी, पूर्वभव में सम्पूर्ण श्रुतज्ञान के अभ्यासी और महाऋद्धिधारी होते हैं। मपु० १७ ४७-५०, वीवच० १२ २-८

गर्भकल्याणक—तीर्थंकरों के माता के गर्भ में आने पर इन्द्र द्वारा मनाया जानेवाला एक उत्सव। इसमें इन्द्र आकर तीर्थंकर के माता-पिता को भक्तिपूर्वक सिंहासन पर बैठाकर सोत्साह उनका अभिषेक करते हैं, पूजते हैं और तीर्थंकरों का स्मरण कर तीन प्रदक्षिणा देते हैं। वीवच० ७ १२०-१२२

गर्भवास—शिशु का जननी के उदर में वास करना। यहाँ अनेक कष्ट होने पर भी यह मोहावृत जीव इस वास से भयभीत नहीं होता। मपु० ४२ ९०-९१, पपु० ३९ ११५-११६

गर्भाधान मन्त्र—गर्भाधान क्रिया में सप्तविध पीठिका मन्त्रों की आहुतियों के पश्चात् बोले जानेवाले मन्त्र। वे ये हैं—सज्जातिभागी भव, सद्गृहिभागी भव, मुनीन्द्रभागी भव, सुरेन्द्रभागी भव, परमराज्यभागी भव, आर्हन्त्यभागी भव, परमनिर्वाणभागी भव। मपु० ४० ९२-९५

गर्भाधानोत्सव—गर्भावतरण-उत्सव। तीर्थंकरों के गर्भावतार के समय आयोजित इस उत्सव में देव हर्षित हो जाते हैं। जन्म के छः माह पूर्व से तीर्थंकरों के पितृगेह में कुबेर रत्नवृष्टि करता है। जल से पृथिवी का सिंचन किया जाता है। मपु० १२ ८४, ९८-१००

गर्भान्वयक्रिया—उपासक की त्रिविध क्रियाओं में प्रथम क्रिया। इसके अन्तर्गत परमागम में गर्भ से लेकर निर्वाण पर्यन्त ये त्रेपन क्रियाएँ बतायी गयी हैं—आधान, प्रीति, सुप्रीति, धृति, मोद, प्रियोद्भव, नामकर्म, बहिर्यान, निषद्या, प्राशन, व्युष्टि, केशवाप, लिपिसंख्यान-संग्रह, उपनीति, व्रतचर्या, व्रतावतरण, विवाह, वर्णलाभ, कुलचर्या, गृहीशिता, प्रशान्ति, गृहत्याग, दीक्षाद्य, जिनरूपता, मौनाध्ययनवृत्तत्व, तीर्थंकृत्भावना, गुरुस्थानाभ्युपगम, गणोपग्रहण, स्वगुरुस्थानसंक्रान्ति, निःसंगत्वात्मभावना, योगनिर्वाणसंप्राप्ति, योगनिर्वाणसाधन, इन्द्रोपपाद, अभिषेक, विधिदान, सुखोदय, इन्द्रत्याग, अवतार, हिरण्योत्कृष्टजन्मता, मन्दरेन्द्राभिषेक, गुरुपूजोपलम्भन, यौवनराज्य, स्वराज्य, चक्रलाभ, दिग्विजय, चक्राभिषेक, साम्राज्य, निष्क्रान्ति, योगसन्मह, आर्हन्त्य, तद्विहार, योगत्याग और अग्रनिर्वृति। मपु० ३८ ५१-६३

गवीधुमत्—एक देश। यहाँ का राजा सीता के स्वयंवर में आया था। पपु० २८ २१९

गहन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

गांगेय—यह कुरुवंशी राजा शान्तनु के पुत्र पाराशर तथा रत्नपुर नगर के राजा जह्नु की पुत्री गंगा का पुत्र था। इसने आजीवन ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा लेकर पिता के लिए इष्ट धीवर कन्या गुणवती प्राप्त की थी। पापु० ७ ७६-११४, १६ १४-१९ कौरव-पाण्डव युद्ध में अभिमन्यु ने इसका महाध्वज तोड़ डाला था। इसने भी अभिमन्यु का ध्वज छिन्न किया था। युद्ध में शिखण्डी द्वारा हृदय विद्ध किये जाने पर पृथिवी पर पड़े हुए इन्होंने अपना जीवन गया हुआ समझकर सन्यास धारण कर लिया था। इसी समय इसने कौरव और पाण्डवों से मैत्रीभाव धारण करने तथा उत्तम क्षमा आदि दस धर्मों के पालन करने का उपदेश दिया था। धर्मध्यान में रत होकर अनुप्रेक्षाओं का चिन्तन करते हुए इसने चतुर्विध आहार और देह के ममत्व का त्याग किया था। सल्लेखनापूर्वक शरीर छोड़कर यह पाँचवें ब्रह्म स्वर्ग में देव हुआ। पापु० १९ १७८-१८०, २४८-२७१

गांडीव—एक धनुष। इसे राजा द्रुपद ने अपनी पुत्री द्रौपदी के वर की परीक्षा का साधन निश्चित किया था। यह घोषणा की थी कि जो भी इससे चन्द्रकवेध कर देगा वही द्रौपदी का पति होगा। अर्जुन ने इससे चन्द्रकवेध करके द्रौपदी को वरा था। हपु० ४५ १२६-१३५

गान्धार—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक देश। पपु० ९४ ७ हपु० ३० ६

(२) ऋषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक का एक देश। महावीर की विहारभूमि। मपु० १६ १५५, हपु० ३ ५, ११.१७

(३) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र का एक देश। मपु० ६३ ९९, हपु० ३ ५

(४) गान्धार देश का एक नगर। मपु० ६३ ३८४

(५) सात स्वरों में एक स्वर। पपु० १७ २७७, हपु० १९ १५३

(६) अदिति देवी के द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याओं के आठ निकायों में पाँचवा निकाय। हपु० २२ ५७

(७) गान्धार देश के घोड़े। मपु० ३० १०७

गान्धार-विद्याधर—एक विद्याधर निकाय। ये विद्याधर लाल मालाएँ और लाल वस्त्र धारण करते हैं। ये गान्धार-विद्या-स्तम्भ का सहारा लेकर बैठते हैं। हपु० २६ ७

गान्धारी—(१) स्वर सम्बन्धी मध्यम ग्रामाश्रित ग्यारह जातियों में प्रथम जाति। हपु० १९ १७६

(२) दिति द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याधरों की एक विद्या। हपु० २२ ६५

(३) गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी के राजा इन्द्रगिरि और उसकी पत्नी मेरुमती की गन्धर्व आदि कलाओं में निपुण पुत्री। यह हिमगिरि की बहिन थी। कृष्ण ने हिमगिरि को मारकर इसका हरण किया था तथा बाद में उसके साथ विवाह कर उन्होंने इसे अपनी आठ पटरानियों में एक पटरानी बनाया। हपु० ४४ ४५-४९ पूर्वभवों में यह कौशल देश की अयोध्या नगरी के राजा रुद्रदत्त की विनयश्री नाम की रानी थी। आहारदान के प्रभाव से यह उत्तरकुरु में आर्या

हुई। इसके पश्चात् क्रमश चन्द्रमा की प्रिया, गगनवल्लभ नगर के राजा विद्युद्वेगी की विजयश्री नाम की पुत्री और सर्वभद्र नामक उपवास करने के प्रभाव से मरकर सौधर्मेन्द्र की देवी हुई। यहाँ से चयकर यह कृष्ण की छठी पटरानी हुई। मपु० ७१ ११६-१२७, ४१५-४२८, हपु० ६० ८६-९४

(४) भोजकवृष्णि की पुत्री, धृतराष्ट्र के साथ विवाहित और दुर्योधन, दु:शासन आदि सौ पुत्रो की जननी। इसकी माँ का नाम सुमति था। उग्रसेन, महासेन और देवसेन इसके भाई थे। पापु० ७.१४२-१४५, ८ १०८-११०, १९१-२०५ महापुराण मे भोजकवृष्णि को नरवृष्णि तथा उसकी पत्नी को पद्मावती कहा है। मपु० ७० ९४, १००-१०१, ११७-११८

(५) विजयार्ध पर्वतस्थ गान्धार-नगर-निवासी विद्याधर रतिषेण की भार्या। वह कुल्टा थी। बाद में कुबेरकान्त सेठ की युक्ति से वह आर्यिका हो गयी। मपु० ४६ २२८-२४२

(६) गन्धर्वगीत नगर के राजा सुरसन्निभ की भार्या गन्धर्वा की जननी और भानुरक्ष की सास। पपु० ५ ३६७

(७) सगीत की आठ जातियो में छठी जाति। यह मध्यम ग्राम के आश्रित होती है। पपु० २४ १२, हपु० १९ १७६

(८) भरत क्षेत्र में स्थित एक नगरी। पपु० ३१ ४१

गान्धारपचमी—सगीत की दस जातियो में तीसरी जाति। पपु० २४ १३

गान्धारपदा—एक विद्या। धरणेन्द्र ने नमि और विनमि को पन्नगपदा विद्या के साथ यह विद्या भी दी थी। मपु० १९ १८५

गान्धारीय—गान्धारी से उत्पन्न दुर्योधन आदि सौ पुत्र। हपु० ४७ ५

गान्धारोदीच्या—सगीत की दस जातियो में प्रथम जाति। पपु० २४ १३

गान्धाररोदीच्यका—मध्यम ग्रामाश्रित सगीत सम्बन्धी एक जाति। हपु० १९ १७६

गान्धर्व विज्ञान—गन्धर्व (सगीत) विद्या। हपु० १९ ९६, १२३

गान्धर्वसेना—राजा अमितगति की पुत्री। अमितगति के दीक्षित हो जाने से चारुदत्त को इसका सरक्षक बना दिया गया। चारुदत्त ने एक चारण ऋद्धिधारी मुनिराज की भविष्यवाणी के अनुसार यदुवशी राजा वसुदेव के साथ इसका विवाह कर दिया था। हपु० २१ १६६-१७०, १७९-१८०, २२ १

गान्धर्व सेनक—एक विद्या-कोश। इसे धरणेन्द्र ने अपनी पत्नी अदिति द्वारा नमि-विनमि को दिलाया था। हपु० २२ ५३-५६

गरुडास्त्र—नागास्त्र-नाशक अस्त्र। कृष्ण ने जरासन्ध के साथ हुए युद्ध में इसका प्रयोग किया था। हपु० ५२ ४९

गार्हपत्याग्नि—अग्निकुमार देवो के इन्द्र के मुकुट से उत्पन्न त्रिविध अग्नियो में प्रथम अग्नि। इसकी स्थापना पृथक् कुण्ड मे की जाती है। इसी से नैवेद्य बनाया जाता है। यह स्वय पवित्र नही है न देवता रूप ही है, अर्हन्तो की पूजा के सम्बन्ध से यह पवित्र मानी गयी है। निर्वाण क्षेत्र के समान इसकी भी पूजा की जाती है। मपु० ४० ८२-८९

गिरांपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

गिरि—(१) लोभी बटुक। इसे और नैषिक ग्रामवासी इसके साथी गोभूति को राजा सूर्यदेव की रानी मतिप्रिया ने भात से ढककर स्वर्ण का दान किया था। यह जान लेने पर इसने लोभाक्रष्ट होकर अपने साथी गोभूति को मार दिया और सारे स्वर्ण को स्वय ले लिया था। पपु० ५५ ५७-५९

(२) हरिवंशी राजा वसुगिरि का पुत्र। हपु० १५ ५९

(३) अचल के सात पुत्रो मे चौथा पुत्र। हपु० ४८ ४९

गिरिकूट—ऐरावती नदी के पास स्थित भरतक्षेत्र का एक पर्वत। हपु० २१ १०२

गिरिकूटक—भरतेश का एक बहुत ऊँचा राजमहल। मपु० ३७.१४९

गिरितट—धूलिकुट्टिम और प्राकार से वेष्टित एक नगर। यहाँ वेदो का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वसुदेव आया था। हपु० २३ २६-४५

गिरिदारिणी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२८

गिरिदेवी—वाराणसी नगरी के राजा अचल की भार्या। इसने मुनि चित्रगुप्त को आहार दिया था और उनसे यह जाना था कि उसके दो पुत्र होगे। उसके दो ही पुत्र हुए। उसने उनके नाम सुगप्ति और गुप्त रखे थे। पपु० ४१ १०७-११३

गिरिनगर—सौराष्ट्र देश का एक नगर। मपु० ७१ २७०, यहाँ का राजा चित्ररथ था। वह मासाहारी था। सुधर्म मुनिराज के उपदेश से उसने मासाहार छोड दिया था और उनसे दीक्षा ग्रहण कर ली थी। हपु० ३३ १५०-१५२ यहाँ पर राजा राष्ट्रवर्धन ने राज्य किया। उसकी पुत्री सुसीमा ने सयम धारण करके उत्तर जन्म में मोक्ष प्राप्त किया। हपु० ६० ७०-७२

गिरिनन्दन—वानरवशी राजा खेचरानन्द का पुत्र। पपु० ६ २०५-२०६

गिरिशिखर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के पाँच सुन्दर नगरो में एक नगर। मपु० १९ ८५, ८७

गीतगोष्ठी—गीतो के द्वारा श्रोताओ के मनोरजन का आयोजन। इससे सगीतकला को प्रोत्साहन मिलता था। मपु० १२ १८८, १४ १९२

गीतरति—गन्धर्व जाति के व्यन्तर देवो का इन्द्र। वीवच १४ ६०

गीति—तालगत गन्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

गुंज—एक पर्वत। यहाँ वैश्रवण और दशानन का युद्ध हुआ था। पपु० ८ २०१

गुंजा—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। पपु० १०४ १०३

गुच्छ—बत्तीस लडियो का हार। मपु० १६ ५९

गुण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३६

गुणकान्ता—भरतक्षेत्र-स्थित मलय राष्ट्र में रत्नपुर नगर के राजा प्रजापति की रानी और चन्द्रचूल की जननी। मपु० ६७ ९०-९१

गुणग्राम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

गुणज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३५

गुणदेवी—जम्बूकुमार के वशज धर्मप्रिय सेठ की भार्या, अर्हद्दास की जननी। मपु० ७६ १२४

गुणधर—(१) योगीन्द्र यशोधर का शिष्य। राजर्षि चक्रवर्ती वज्रदन्त ने

अपने पुत्रों के राज्य न लेने पर ज्येष्ठ पुत्र अमिततेज के पुत्र पुण्डरीक को राज्य दे दिया और वह साठ हजार रानियो, बीस हजार राजाओ और एक हजार पुत्रो के साथ इन्ही से दीक्षित हो गया। मपु० ८ ७९ ८५

(२) राजा उग्रसेन का द्वितीय पुत्र। ये छ भाई थे। हपु० ४८ ३९

गुणनायक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३५

गुणनिधि—एक चारण ऋद्धिधारी मुनि। इन्होंने दुर्गागिरि के शिखर पर आहार परित्याग कर चार मास का वर्षायोग धारण किया था। वर्षायोग के पश्चात् ये आकाश मार्ग से अन्यत्र विहार कर गये थे। पपु० ८५ १३९-१४०

गुणपाल—(१) पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का नृप। यह वसुपाल का पिता था। अपने प्रिय सेठ कुबेरप्रिय की पुत्री वारिषेणा के साथ इसने अपने पुत्र वसुपाल का विवाह किया था। ससार से विरक्त होकर इसने वसुपाल को राज्य दे दिया और श्रीपाल को युवराज बनाया। इसके पश्चात् यह सेठ कुबेरप्रिय तथा अन्य अनेक राजाओ के साथ दीक्षित हो गया। कठोर तपस्या करके यह सुरगिरि पर्वत पर केवली हुआ। मपु० ४६ २८९, २९८, ३३२-३४१, ४७ ३ ६

(२) पुण्डरीकिणी नगरी के चक्रवर्ती श्रीपाल और उसकी रानी जयावती का पुत्र। इस पुत्र के उत्पन्न होते ही श्रीपाल की आयुधशाला में चक्ररत्न भी प्रकट हुआ था। मपु० ४७ १७०-१७२

(३) राजपुर नगर के सेठ वृषभदत्त का दीक्षागुरु। मपु० ७५.३१४

(४) विदेहक्षेत्र के एक तीर्थंकर। श्रीपाल उनके समवसरण में गया था। मपु० ४७ १६० १६३

(५) राजा लोकपाल का पुत्र और प्रियदत्ता की पुत्री कुबेरश्री का पति। मपु० ४६ २४३-२४६

गुणप्रभ—एक मुनि। भरतक्षेत्र-स्थित अल्का देश में अयोध्या नगर के राजा अजितजय का पुत्र। अजितसेन इन्ही मुनि से दीक्षित हुआ था। मपु० ५४ ८६-८७, ९२ १२२-१२६

गुणप्रभा—त्रिश्रृग महानगर के राजा प्रचण्डवाहन की ज्येष्ठा पुत्री। नौ बहिनो के साथ इसका विवाह युधिष्ठिर के साथ करना निश्चित हुआ था किन्तु युधिष्ठिर के अन्यथा समाचार मिलने से यह विवाह नही हो सका और ये दसो लडकियाँ अणुव्रत धारण करके श्राविकाएँ बन गयी। हपु० ४५ ९५-९९

गुणभद्र—(१) वीरभद्र मुनि के सहगामी चारण ऋद्धिधारी एक मुनि। इन्होंने तापस वशिष्ठ का अज्ञान दूर किया था जिससे वह जिन-दीक्षा लेकर आतापन योग में स्थिर हो गया था। मपु० ७० ३२२-३२८

(२) महापुराण के कर्त्ता आचार्य जिनसेन के शिष्य। इन्होंने उत्तरपुराण की रचना की थी। लोकसेन इनके शिष्य थे। इनके उत्तरपुराण से प्रेरित होकर आचार्य शुभचन्द्र ने पाण्डवपुराण की रचना की थी। मपु० ५७-६७, पापु० १ १८-२०

गुणमजरी—कनकपुर नगर के नरेश सुषेण की लोकप्रिय नर्तकी। यह नृत्य, गीत और वाद्य में निपुण थी। मपु० ५८ ६१ ६२

गुणमाला—(१) राजपुर नगर के कुमारदत्त वैश्य और विमला की पुत्री। इसका विवाह जीवन्धर से हुआ था। मपु० ७५ ३५१-३५२, ५८८, ६०१-६२८, ६३४-६३५

(२) लक्ष्मण की रानी। यह वेलन्धर नगर के स्वामी समुद्र की तीसरी पुत्री थी। सत्यश्री और कमला की यह अनुजा थी और रत्न-चूला इसकी बडी बहिन थी। पपु० ५४ ६५-६९

गुणमित्र—(१) सुजन देश के हेमाभ नगर के राजा दृढमित्र का पुत्र। यह हेमाभा का भाई और जीवन्धरकुमार का साला था। मपु० ७५. ४२०-४३०

(२) राजपुर नगर के एक जौहरी का पुत्र। इसी नगर के रत्नतेज सेठ की पुत्री अनुपमा से इसका विवाह हुआ था। जलयात्रा करते समय यह भँवर में फँसकर मर गया। पति-वियोग में अनुपमा भी उसी जल में डूब कर मर गयी। मपु० ७५ ४५०-४५७

गुणवती—(१) प्रभावती आर्यिका की सहवर्तिनी एक गणिनी। यह राजा प्रजापाल की पुत्री थी और इसने अमितमति आर्यिका के सान्निध्य में सयम धारण कर लिया था। मपु० ४६ २२३, पपु० ३ २२७ इसने श्रीधरा और यशोधरा को तथा धनश्री को दीक्षा दी थी। मपु० ५९ २३२, ७२ २३५, हपु० २७ ८२, ६४ १२-१३

(२) वानरवशी राजा अमरप्रभ की भार्या। पपु० ६ १६२

(३) सुग्रीव की ग्यारही पुत्री। पपु० ४७ १४१

(४) भरतक्षेत्र के एकक्षेत्र नगर के निवासी सागरदत्त वणिक् तथा उसकी स्त्री रत्नप्रभा की पुत्री। इसके भाई का नाम गुणवान् था। उसी नगर के सेठ नयदत्त के पुत्र धनदत्त को यह अपना पति बनाना चाहती थी। जब वह नही मिला तो यह आर्त्तध्यान से दुखी होकर मर गयी और मृगी की पर्याय में इसने जन्म लिया। इसके बाद हथिनी की पर्याय में होती हुई यह श्रीभूति पुरोहित की पुत्री वेदवती हुई। आगे चलकर यही राजा जनक की पुत्री सीता हुई। पपु० १०६ १०-२६, १३६-१४१, १७८

(५) रत्नपुर नगर के राजा रत्नागद तथा उसकी रानी रत्नवती की पुत्री। इसे रत्नागद के किसी शत्रु ने हरण करके यमुना के तट पर छोड दिया था। एक धीवर को यह प्राप्त हुई। उसके पुत्र-पुत्री न होने से वह उसी धीवर के द्वारा पाली गयी तथा धीवर द्वारा ही इसका यह नाम रखा गया। यह योजनगन्धा थी। इसके शरीर की सुगन्ध एक योजन तक फैल जाती थी। राजा पाराशर इसे देख कर इस पर मुग्ध हो गया। इसको पाने की कामना से धीवर के पास जाकर उसने अपनी इच्छा प्रकट की। धीवर को पता था कि पाराशर का पुत्र गागेय बडा पराक्रमी है और राज्याधिकारी है। उसने पाराशर की बात नही मानी। जब गागेय को यह पता चला कि उसका पिता धीवर-कन्या को चाहता है तो उसने धीवर को विश्वास दिलाया कि राज्य का अधिकारी गुणवती का पुत्र ही होगा। वह

आजीवन ब्रह्मचारी रहेगा। धीवर ने प्रसन्न होकर अपनी पुत्री का विवाह पाराशर के साथ कर दिया। गुणवती व्यास की जननी हुई। यही पाराशर के पश्चात् राजा हुआ। पापु० ७ ८३-११५

(५) भरत की भाभी। पपु० ८३ ९४

गुणव्रत—गृहस्थ के तीन व्रत-दिग्व्रत, देशव्रत और अनर्थदण्डव्रत। मपु० १० १६५, हपु० २.१३४, १८ ४५-४६ पद्मपुराण के अनुसार दिग्व्रत, अनर्थदण्डव्रत तथा भोगोपभोग परिमाणव्रत ये तीन गुणव्रत है। पपु० १४ १९८

गुणवान्—गुणवती का अनुज। पपु० १०६ १०-१४ दे० गुणवती

गुणसागर—अयोध्यानगरी के राजा सुरेन्द्रमन्यु के पुत्र वज्रबाहु के दीक्षा-गुरु। पपु० २१ ७५-७७, ११९-१२३

गुणसागरा—भरत की भाभी। पपु० ८३ ९६

गुणसेन—वृषभदेव के एक गणधर। ये आठवें पूर्वभव में नागदत्त, सातवें में वानर, छठे में भोगभूमि मे आर्य, पाँचवें में मनोहर देव, चौथे में चित्रागद नाम के राजा, तीसरे मे सामानिक देव, दूसरे में जयन्त और पहले मे अहमिन्द्र थे। मपु० ४७.३७४-३७५

गुणस्थान—मोहनीय कर्मो के उदय, क्षय, उपशम और क्षयोपशम के निमित्त हुई जीव की विभिन्न स्थितियाँ। वे चौदह हैं—१ मिथ्यादृष्टि २ सासादन ३ सम्यग्मिथ्यात्व ४ असयतसम्यग्दृष्टि ५ सयतासयत ६ प्रमत्तसयत ७ अप्रमत्तसयत ८ अपूर्वकरण ९ अनिवृत्तिकरण १० सूक्ष्मसापराय ११ उपशान्तकषाय १२ क्षीण कषाय १३ सयोगकेवली और १४ अयोग केवली। मपु० २४ ९४, हपु० ३ ७९-८३ वीवच० १६ ५८-६१ जीव आरम्भिक चार गुणस्थानो में असयत पाँचवें में सयतासयत और शेष नौ गुणस्थानो में सयत होते हैं। इनमे बाह्य रूप से कोई भेद नही होता। सभी निर्ग्रन्थ होते हैं। आत्मविशुद्धता की अपेक्षा भेद अवश्य होता है। ये जैसे जैसे ऊपर बढते जाते है, इनमें विशुद्धता बढती जाती है। इनमें सर्वाधिक सुख क्षायिक-लब्धियो के धारक सयोग और अयोग केवलियो को प्राप्त होता है। इनका सुख इन्द्रियविषयज नही होता आत्मोत्थ एव शाश्वत होता है। अपूर्वकरण से लेकर क्षीणकषाय तक के जीवो के कषायो के उपशमन अथवा क्षय से उत्पन्न होनेवाला सुख परम सुख होता है। इसके बाद इनके क्रमश· एक निद्रा, पाँच इन्द्रियाँ, चार कषाय, चार विकथा और एक स्नेह इन पन्द्रह प्रमादो से रहित अप्रमत्त सयत जीवो के प्रशम रस रूप सुख होता है। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँच पापो से विरत प्रमत्त-सयत जीवो के शान्ति रूप सुख होता है। हिंसा आदि पाँच पापो से यथाशक्ति एक देश निवृत्त सयतासयत जीवो के महातृष्णा-विजय से उत्पन्न सुख होता है। अविरत सम्यग्दृष्टि के तत्त्व-श्रद्धान से उत्पन्न सुख होता है। इसके पश्चात् परस्पर विरुद्ध सम्यक्त्व और मिथ्यात्व रूप परिणामो के धारी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सुख और दु ख दोनो से मिश्रित रहते हैं। सासादन, सम्यग्दृष्टि जीवो को सम्यक्त्व के छूट जाने से सुख तो नही सुख का कुछ आभास होता है। मोह की सात प्रकृतियो से मोहित मूढ मिथ्यादृष्टि जीव को सुख की प्राप्ति नही होती। हपु० ३ ७८-७९

गुणाकर—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२, २५ १३५

गुणादरी—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १३६

गुणाम्भोधि—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३५

गुणोच्छेदी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३६

गुण्य—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

गुप्त—(१) वाराणसी नगरी के राजा अचल और उसकी रानी गिरिदेवी का कनिष्ठ-पुत्र। सुगुप्ति इसका बडा भाई था। त्रिगुप्त मुनि की भविष्यवाणी के अनुसार इनका जन्म होने के कारण माता-पिता ने इन दोनो भाइयो के ऐसे नाम रखे थे। पपु० ४१ १०७-११३

(२) वृषभदेव के चौरासी गणधरो में पचपनवें गणधर। हपु० १२ ६४

(१) चारण ऋद्धिधारी एक मुनि। सुगुप्ति मुनि के साथ इनको आहार देने से राम और सीता को पचाश्चर्य प्राप्त हुए थे। पपु० ४१ १३-३१

गुप्त ऋषि—लोहाचार्य के बाद हुए एक आचार्य। ये गुप्तश्रुति के शिष्य तथा शिवगुप्त मुनीश्वर के गुरु थे। हपु० ६६ २४-२५

गुप्तफल्गु—वृषभदेव के चौरासी गणधरो में छप्पनवें गणधर। मपु० ४३ ६२, हपु० १२ ६४

गुप्तयज्ञ—वृषभदेव के एक गणधर। मपु० ४३ ६१

गुप्तश्रुति—लोहाचार्य के बाद हुए एक आचार्य। ये विनयधर के शिष्य और गुप्तऋद्धि के गुरु थे। हपु० ६६ २४-२५

गुप्ति—वचन,मन और कायिक प्रवृत्ति का निग्रह। यह मुनि का एक धर्म है। इसके तीन भेद हैं—वचनगुप्ति, मनोगुप्ति और कायगुप्ति। इनमें वचन न बोलना वचनगुप्ति है, चिन्तन-स्मरण आदि न करना मनोगुप्ति और कायिक प्रवृत्ति का न करना कायगुप्ति है। मपु० २. ७७, ११ ६५, ३६ ३८, पपु० ४ ४८, १४ १०९, हपु० २ १२७ पाँच समितियाँ और तीन गुप्तियाँ ये आठ प्रवचन मातृकाएं कहलाती हैं। मुनि इनका पालन करते हैं। मपु० ११.६५

गुप्तिभृत—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७८

गुप्तिमान्—तीर्थंकर धर्मनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० १० २८

गुप्त्यादिषट्क—गुप्ति, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषह-जय और चारित्र ये छ सवर के हेतु हैं। मपु० ५२ ५५

गुरु—निर्ग्रन्थ साधु-पचपरमेष्ठी। ये अन्तरग और बहिरग परिग्रह से रहित होते हैं और आत्म-कल्याण में लीन रहते हैं। इनके उपदेश से सम्यक्त्व की उपलब्धि होती है—जीवन सन्मार्ग में प्रवृत्त होता है जिससे इहलौकिक और पारलौकिक कल्याण होता है। मपु० ५ २३०, ७ ५३-५४, ९ १७२-१७७, हपु० १ २८, वीवच० ८ ५२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १६०, ३६ २०३

गुरुदक्षिणा—शिक्षा-समाप्ति के पश्चात् शिष्य के द्वारा गुरु की आज्ञानुसार दी जानेवाली दक्षिणा। यह दक्षिणा शिष्य के पास धरोहर के रूप में भी रहती थी और आवश्यकता होने पर शिष्य से ले ली जाती थी। हपु० १७ ७९-८१

गुरुपूजोपलम्भन—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में इकतालीसवीं क्रिया। इस क्रिया में तीर्थंकर शिष्यभाव के बिना ही अनौपचारिक रूप से शिक्षा ग्रहण करते हैं। मपु० ३८ ६१, २२९-२३०

गुरुभर—विद्याधर जाति का एक वानर कुमार। बहुरूपिणी विद्या की साधना करते हुए रावण को कुपित करने की भावना से यह अनेक वानरकुमारों के साथ लंका गया था। पपु० ७० ३, १४-१६

गुरुस्थानाभ्युपगमक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में सत्ताईसवीं क्रिया-सर्वविद्यावान् और जितेन्द्रिय साधु का गुरु के अनुग्रह से गुरु का स्थान ग्रहण करना। ऐसा वही साधु कर सकता है, जो ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न हो, गुरु को इष्ट हो और विनयवान् तथा धर्मात्मा हो। मपु० ३८ ५८, १६३-१६७

गुल्म—सेना का एक भेद। यह तीन सेनामुखों से बनता है। इसमें २७ रथ, २७ हाथी, १२५ पयादे और १३५ अश्व होते हैं। पपु० ५६ २-७

गुल्मखेट—एक नगर। यह तीर्थंकर पार्श्वनाथ की प्रथम पारणास्थली था। मपु० ७३.१३२-१३३

गुहा—वास्तुकला का एक महत्त्वपूर्ण अंग। मपु० ४७ १०३, १६१

गुह्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

गुह्यक—देवों की एक जाति। ये देव तीर्थंकरों के कल्याणकों तथा विहार के समय रत्नवृष्टि और पुष्पवृष्टि करते हैं। मपु० ५६ २५, ३८, २२१, १७ १०१, हपु० ५९ ४३

गूढगोचर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९६

गूढदत्त/गूढदन्त—आगामी बारह चक्रवर्तियों में चौथा चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८२, हपु० ६० ५६४

गूढात्मा—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९६

गृह—समाज के विभिन्न वर्गों के आवास। आदिपुराण में अनेक प्रकार के आवासों का वर्णन आया है। मपु० ४६ २४५, ३९७

गृहकूटक—भरतेश का अति उच्च वर्षाकालीन महल। मपु० ३७ १५०

गृहक्षोभ—एक राक्षसवंशी राजा। यह मेघध्वान के पश्चात् लंका का राजा हुआ। पपु० ५ ३९८-४००

गृहत्यागक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में बाईसवीं तथा दीक्षान्वय की अड़तालीस क्रियाओं में सत्रहवीं क्रिया। इस क्रिया में सिद्ध भगवान् का पूजा के पश्चात् इष्ट जनों के समक्ष पुत्र को सब कुछ समर्पित करके गृहत्याग किया जाता है। मपु० ३८ ५७, १५०-१५६, ३९ ७६

गृहपति—भरत चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में सजीव रत्न। मपु० ३७ ८३-८६

गृहशोभा—कर्त्रन्वय-क्रियाओं में पारिव्राज्य-क्रिया के लक्षणरूप सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। गृह-शोभा का परित्याग करने से तपस्वी के सामने श्रीमण्डप की शोभा स्वयमेव आती है। मपु० ३९ १८६

गृहस्थ—ब्रह्मचर्य के बाद का आश्रम। इस आश्रम में विवाह के पश्चात् गृहस्थ समाज सेवा के कार्यों में प्रवृत्त होता है। मपु० १५ ६१-७६, ३८ १२४-१२७

गृहस्थधर्म—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों का पालन करना। यह धर्म, शील तप, दान, और शुभ भावना के भेद से चार प्रकार का होता है। पपु० ४ ४६, पापु० १ १२३-१५७

गृहाङ्ग—एक प्रकार के कल्पवृक्ष। ये भोगभूमि में आवश्यकतानुसार राजमहल, मण्डप, सभागृह, चित्रमाला, नृत्यशाला आदि अनेक प्रकार के भवनों का निर्माण करते हैं। मपु० ३ ३९-४०, ९ ३५-३६, ४४, हपु० ७ ८०, वीवच० १८, ९१-९२

गृहिमूलगुणाष्टक—गृहस्थ के आठ मूलगुण-मद्य, मांस और मधु का त्याग तथा पाँच अणुव्रतों का पालन। मपु० ४६ २६९

गृहीतागृहीतेत्वरिकागमन—स्वदारसन्तोषव्रत के पाँच अतिचारों में एक अतिचार। हपु० ५८ १७४-१७५

गृहीशिता—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में बीसवीं तथा दीक्षान्वय की अड़तालीस क्रियाओं में पन्द्रहवीं क्रिया। इस क्रिया में शास्त्रज्ञान और चारित्र से सम्पन्न व्यक्ति गृहस्थाचार्य बनता है और स्वकल्याण करते हुए सामाजिक कर्तव्यों का निर्वाह करता है। मपु० ३८ ५७, १४४-१४७, ३९ ७३-७४

गोकुल—मथुरा के पास का एक ग्राम। कृष्ण का लालन-पालन इसी स्थान पर हुआ था। हपु० १ ९१, पापु० ११.५८

गोक्षीर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के स्वर्ग के समान साठ नगरों में एक नगर। मपु० १९ ८५, ८७

गोचरी—निर्ग्रन्थ मुनियों की आहार-चर्या। इसके लिए मुनि भिक्षा के लिए नियत समय में निकलते हैं, वे गृहपंक्ति का उल्लंघन नहीं करते, निःस्पृह भाव से शरीर की स्थिति के लिए ठण्डा, गर्म, अलोना, सरस, नीरस जैसा प्राप्त होता है, खड़े होकर पाणि-पात्र से ग्रहण करते हैं। मपु० ३४ १९९-२०१, २०५

गोतम—(१) सिन्धु-तट निवासी तपस्वी मृगायण और उसकी पत्नी विशाला का पुत्र। इसने पचाग्नि तप किया था और तप के प्रभाव से मरकर सुदर्शन नाम का ज्योतिषी देव हुआ। मपु० ७० १४२-१४३

(२) अन्धकवृष्टि के तीसरे पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्रस्थ कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर नगर के राजा धनंजय के समकालीन कपिष्ठल ब्राह्मण और अनुन्धरी नाम की ब्राह्मणी का दरिद्र पुत्र था। इसने समुद्रसेन मुनिराज के पीछे-पीछे जाकर वैश्रवण सेठ के यहाँ भोजन किया था तथा इसे विशेष सन्तोष प्राप्त हुआ था। मुनिचर्या से प्रभावित होकर यह संयमी हुआ और एक वर्ष के बाद इसने ऋद्धियाँ प्राप्त कर ली थी। आयु के अन्त में समाधिमरण

कर मध्यम ग्रैवेयक के सुविशाल विमान में अहमिन्द्र हुआ तथा वहाँ से च्युत होकर अन्धकवृष्टि/अन्धकवृष्णि नाम का राजा हुआ। मपु० ७० १६०-१६२, १७३-१८१ अपरनाम गौतम। हपु० १८ १०३-११०

(३) लवणसमुद्र की पश्चिमोत्तर दिशा में बारह योजन दूर स्थित बारह योजन विस्तृत और चारों ओर से सम एक द्वीप। हपु० ५. ४६९-४७०

(४) लवणसमुद्र के पश्चिमोत्तर दिशावर्ती इस नाम के द्वीप का अधिष्ठाता देव। यह परिवार आदि की दृष्टि से कौस्तुभ देव के समान था। हपु० ५ ४६९-४७०

(५) सौधर्मेन्द्र का आज्ञाकारी एक देव। हपु० ४१ १७

गोत्रकर्म—उच्च और नीच कुल में पैदा करनेवाला और उच्च और नीच व्यवहार का कारण कर्म। इसकी उत्कृष्ट स्थिति बीस सागर और जघन्य स्थिति आठ मुहूर्त होती है। हपु० ३ ९८, ५८ २१८, वीवच० १६ १५७-१५९

गोदावरी—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यह निरन्तर प्रवाहित रहनेवाली और अनेक धाराओं से युक्त नदी है। मपु० २९ ६०, ८५, ३० ६०-६१

(२) गोपेन्द्र और गोपश्री की पुत्री। कालकूट भीलराज द्वारा गोपेन्द्र की गायें हरण किये जाने पर राजा काष्ठागार ने घोषणा की थी कि जो गोपेन्द्र की गायों को छुड़ाकर लायेगा उसके साथ इस कन्या का विवाह करा दिया जायगा। जीवन्धर कुमार ने गन्धाढ्य के पुत्र नन्दाढ्य को साथ लेकर कालकूट को पराजित किया और गायों का विमोचन करा दिया। यह सूचना राजा को दे दी गयी कि नन्दाढ्य ने गायों का विमोचन कराया है। घोषणा के अनुसार राजा ने नन्दाढ्य के साथ इसका विवाह करा दिया। मपु० ७५ २८७-३००

गोधा—ब्रज का एक वन। मपु० ७० ४३१

गोधूम—गेहूँ। वृषभदेव के समय का एक धान्य। मपु० ३ १८६

गोपालक—गो-पालन के द्वारा आजीविका चलानेवाले लोग। मपु० ४२ १३८-१५०, १७५

गोपेन्द्र—(१) विदेह देश के विदेह नगर का राजा। इसकी रानी का नाम पृथिवीसुन्दरी और पुत्री का नाम रत्नवती था। मपु० ७५ ६४३-६४४

(२) राजपुर के गोपों का एक राजा। मपु० ७५ २९१

(३) राजा काष्ठागारिक के राज्य का एक गोपालक। मपु० ७५.२९१

गोप्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

गोप्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१९६

गोभूति—एक बटुक। पपु० ५५ ५७-५९ दे० गिरि।

गोमती—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९.४९

गोमुख—(१) राजा इन्द्र के पूर्वभव का जीव। यह रत्नपुर नगर का निवासी था। इसकी स्त्री का नाम धरणी तथा पुत्र का नाम सहस्रभाग था। पपु० १३ ६०

(२) चारुदत्त का मित्र। २१ १३ दे० चारुदत्त

गोमुखमणि—गोमुख के आकार का नूपुर विशेष। इसमें मणियों की जड़ाई भी होती थी। मपु० १४ १४

गोमेद—रत्नप्रभा नरक के खरभाग के सोलह पटलों में छठा पटल। हपु० ४ ५३ दे० खरभाग

गोरति—एक महारथी विद्याधर। यह विद्याधरों का स्वामी और राम का सहायक था। पपु० ५४.३४-३५

गोरथ—इस नाम का एक पर्वत। पूर्वी अभियान में यहाँ भरत की सेना आयी थी। मपु० २९-४६

गोवर्धन—(१) एक श्रुतकेवली। ये महावीर निर्वाण के बासठ वर्ष के बाद सौ वर्ष की अवधि में हुए पाँच आचार्यों में चौथे आचार्य थे। इन्हें ग्यारह अंगों और चौदह पूर्वों का ज्ञान था। मपु० २ १४१-१४२, ७६.५१८-५२१, हपु० १ ६१, वीवच० १ ४१-४४

(२) मथुरा के निकट का एक ग्राम। पपु० २० १३७

(३) मथुरा के निकट का एक पर्वत। एक बार बहुत वर्षा होने पर कृष्ण ने गोकुल की रक्षार्थ इस पर्वत को उठाया था। मपु० ७० ४३८, हपु० ३५.४८

गोशीर्ष—(१) एक पर्वत। भरत की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ८९

(२) गोशीर्ष पर्वत से उत्पन्न चन्दन। मपु० ३२ ९८, पपु० ७५ २

गोष्ठ—गोशाला। वास्तुविद्या का एक महत्त्वपूर्ण अंग। मपु० २८ ३६

गौड—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का पूर्व में स्थित एक देश। मपु० २९ ४१

गौतम—(१) दे० गोतम

(२) कृष्ण का एक पुत्र। यह शस्त्र और शास्त्र में निपुण था। हपु० ४८ ७०, ७२

(३) वृषभदेव का एक नाम। मपु० १६.२६५

(४) रमणीकमन्दिर नगर निवासी एक विप्र। इसकी भार्या कौशिकी के गर्भ से ही मरीचि का जीव अग्निमित्र नाम से उत्पन्न हुआ था। मपु ७४ ७७, वीवच० २ १२१-१२२

(५) ब्राह्मणों का एक गोत्र। गणधर इन्द्रभूति (गौतम) इसी गोत्र के थे। मपु० ७४ ३५७

(६) तीर्थंकर महावीर के प्रथम गणधर। इन्द्रभूति इनका नाम था। ये वेद और वेदांगों के ज्ञाता थे। इन्द्र ने अवधिज्ञान से यह जान लिया था कि गौतम के आने पर ही भगवान् महावीर की दिव्य-ध्वनि हो सकती है। इसलिए यह इनके पास गया और इन्हें किसी प्रकार तीर्थंकर महावीर के निकट ले आया। महावीर के सान्निध्य में आते ही इनको तत्त्वबोध हो गया और ये अपने ५०० शिष्यों सहित महावीर के शिष्य हो गये। शिष्य होने पर सौधर्मेन्द्र ने इनकी पूजा की। संयम धारण करते ही परिणामिक विशुद्धि के फलस्वरूप इन्हें

सात ऋद्धियाँ प्राप्त हो गयी। श्रावण के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन पूर्वाह्न वेला में अगो के तथा अपराह्न वेला में पूर्वों के अर्थ और पदो का इन्हें बोध हो गया। ये चार ज्ञानो के धारक हो गये। इन्होने अगो और पूर्वों की रचना की श्रेणिक के अनेक प्रश्नो के उत्तर भी दिये। महावीर के निर्वाण-काल में ही इन्हें केवलज्ञान हो गया। केवलज्ञान होने के बारह वर्ष बाद ये भी निर्वाण को प्राप्त हुए। मपु० १ १९८-२०२, २ ४५-९५, १४०, १२ २, ४३-४८, ७४ ३४७-३७२, ७६ ३८-३९, ११९, पपु० २.२४९, ३ ११-१३, हपु० १ ५६, २ ८९, पापु० १ ७, २ १४, १०१, वीवच० १ ४१-४२, १५ ७८-१२६, १८ पूर्ण, १९ २४८-२४९

(७) एक देव। द्वारिका की रचना के लिए इसने इन्द्र की आज्ञा से समुद्र का अपहरण किया था। हपु० १ ९९

(८) राजा समुद्रविजय का पुत्र। हपु० ४८ ४४

(९) कृष्ण के कुल का रक्षक एक नृप। हपु० ५० १३१

(१०) वसुदेव का कृत्रिम गोत्र। इस गोत्र को बताकर ही वह गन्धर्वाचार्य सुग्रीव का शिष्य बना था। हपु० १९ १३०-१३१

गौभृंग—पचाग्नि तपकर्ता एक तापस। यह भूतरमण वन के मध्य में ऐरावती नदी के किनारे रहता था। इसकी स्त्री का नाम शखिका और पुत्र का नाम मृगशृग था। मपु० ५९ २८७-२८९

गौतमी—भरतक्षेत्र-स्थित सूतिका/श्वेतिका नगर के अग्निभूति ब्राह्मण की भार्या। यह पुरुरवा के जीव अग्निसह की जननी थी। मपु० ७४ ७४, वीवच० २ ११७-११८

गौरमुण्ड—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित एक नगर। हपु० २२ ८८

(२) अदिति देवी के द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याओं का एक निकाय। हपु० २२ ५७

गौरिकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ९७

गौरिक—विद्याधरो की एक जाति। हपु० २६ ६

गौरी—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक देश। मपु० ४६ १४५

(२) एक विद्या। कनकमाला ने यह विद्या प्रद्युम्न को दी थी। दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त विद्याओ में सोलह निकायो की एक विद्या। मपु० ६२ ३९६, हपु० २२ ६२, २७ १३१, ४७ ६३-६४

(३) कृष्ण की सातवी पट्टरानी। यह वीतशोकपुर/सिन्धु देश के वीतभय नगर के राजा मेरुचन्द्र/मेरु और उसकी रानी चन्द्रवती की पुत्री थी। इसके पूर्व यह पुन्नागपुर नगर के राजा हेमाभ की यशस्वती नामा रानी थी। मरकर यह स्वर्ग गयी और वहाँ से च्युत हो कौशाम्बी नगरी के सुमति श्रेष्ठी की धार्मिकी नाम की पुत्री हुई। मरकर यह महाशुक्र स्वर्ग मे जन्मी और वहाँ से च्युत हो इस पर्याय को प्राप्त हुई। मपु० ७१ १२६-१२७, ४२९-४४१, हपु० ४४ ३३-३६

गौशील—एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२-८६

ग्रन्थ—परिग्रह। यह दो प्रकार का होता है—अन्तरग और बहिरग। मपु० ६७ १३, पपु० ८९ १११

ग्रह—ज्योतिष्क देव। मपु० ३ ८४

ग्रहविक्षेप—ग्रहो का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। मपु० ३ ३७

ग्राम—(१) बाड आवृत, उद्यान और जलाशयों से युक्त अधिकतर शूद्र और कृषकों की निवासभूमि। इसके दो भेद होते हैं—छोटे ग्राम और बड़े ग्राम। छोटे ग्राम की सीमा एक कोस और बड़े ग्राम की दो कोस होती है। छोटे ग्राम में सौ घर और बड़े ग्राम मे पाँच सौ घर होते हैं। मपु० १६ १६४-१६७, हपु० २ ३, पापु० २ १५८, २० १७७, २६ १०९, १२७, २९ १२९

(२) वर्ण और शारीर स्वर। हपु० १९ १४७-१४८

ग्रामणी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

ग्रास—कवल। यह एक हजार चावल प्रमाण होता है। हपु० ११ १२५

ग्राहवती—पूर्व विदेह के वक्षार पर्वतो के मध्य बहती हुई एक विभगा नदी। यह नील पर्वत से निकलकर सीता नदी की ओर बहती है। हपु० ५ २३९

ग्रैवेयक—(१) अहमिन्द्र देवो की आवासभूमि। सोलह स्वर्गों के ऊपर स्थित इस नाम के नौ पटल हैं। मपु० ४९ ९, पपु० १०५ १६७-१७०, हपु० ३ १५०

(२) स्वर्ण-रत्नजटित कण्ठहार। मपु० २९ १६७, हपु० ११ १३

ग्रैवेयक स्तूप—ग्रैवेयक विमान के आकार का समवसरण का स्तूप। हपु० ५७ १००

घ

घंटा—ऊँची और गम्भीर ध्वनिवाला एक वाद्य। कल्पवासी और ज्योतिष्क, व्यन्तर और भवनवासी देव भी इसे मागलिक अवसरो पर बजाते है। मपु० १३ १३

घटास्त्र—रावण का पक्षधर एक सामन्त। इसने अपनी सेना के साथ राम-रावण में युद्ध में भाग लिया था। पपु० ५७ ५४

घटीयन्त्र—कृषि की सिंचाई का एक यन्त्र। (गुह)। मपु० १७ २४

घटोदर—रावण का पक्षधर एक सामन्त। इसने राम-रावण युद्ध में राम के पक्षधर दुर्मर्षण योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ६२ ३५

घण्टाराव—घटानाद। जिन-जन्मोत्सव सूचक चतुर्विध ध्वनियो में एक ध्वनि। मपु० ६३ ३९९

घन—(१) इस नाम का एक शस्त्र। पपु० १२ २५८, १९ ४३, ६२ ४५

(२) कासे के झाझ, मजीरा आदि वाद्य। हपु० १९.१४२

घनकाल—वर्षाकाल, मुनियो के चातुर्मास का समय। पपु० १२३ ९४

घनगति—राम का सहायक एक विद्याधर नृप। पपु० ५४ ३४-३५

घनप्रभ—लका का एक राजा। इसकी रानी का नाम पद्मा तथा पुत्र का नाम कीर्तिधवल था। पपु० ५ ४०३-४०४

घनरथ—(१) भरतक्षेत्र में महापुर नगर के राजा वायुरथ का पुत्र। इसके पिता इसे राज्य सौंपकर तपस्वी हो गये थे। मपु० ५८.८०-८१

(२) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु से उत्तर की ओर विद्यमान अरिष्ट नगर के राजा पद्मरथ का पुत्र। राजा पद्मरथ ने इसे राज्य देकर संयम धारण कर लिया था। मपु० ६० २-११

(३) राजा हेमागद और रानी मेघमालिनी का पुत्र। मपु० ६३ १८१

(४) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र मे पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—मनोहरा और मनोरमा। मनोहरा के मेघरथ नामक पुत्र हुआ था। सासारिक क्षणभगुरता का विचार कर इसने राज्य मेघरथ को सौप दिया और सयमी हो गया। तपश्चर्या से घातिया कर्मों को नाश कर यह केवली हो गया। मपु० ६३.१४२-१४४, २३१-२३५, पपु० २० १६४-१६५, पापु० ५ ५३-६०

घनरव—अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ के पूर्वभव का पिता। पपु० २० ९, २९-३०

घनवात—लोक को वेष्टित करनेवाले तीन वातवलयो में द्वितीय वातवलय। यह मूंग के वर्ण का, दण्डाकार, घनीभूत, उपर-नीचे चारो ओर स्थित, चचलाकृति और लोक के अन्त तक वेष्टित है। अधोलोक के नीचे इसका विस्तार बीस हज़ार योजन और लोक के ऊपर कुछ कम एक योजन है। अधोलोक के नीचे यह दण्डाकार है किन्तु ऊपर पाँच योजन विस्तृत है। मध्यलोक में इसका विस्तार चार योजन रह जाता है। पाँचवें स्वर्ग के अन्त में यह पाँच योजन विस्तृत हो जाता है और मोक्ष-स्थान के समीप यह चार योजन विस्तृत रह जाता है। लोक के ऊपर इसका विस्तार एक कोस है। हपु० ४.३३-४१

घनवाहन—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित अरुण नगर के राजा सिंहवाहन का पुत्र। इसका पिता इसे ही राज्य देकर विरक्त हुआ था। पपु० १७ १५४-१५८

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित रथनूपुर नगर के राजा मेघवाहन और रानी प्रीतिमती का पुत्र। इसने अपने शत्रुओ को हराया और अपनी शक्ति बढाने के लिए विन्ध्याचल पर साधना की जिससे उसे एक गदा प्राप्त हुई थी। पापु० १५ ६-१०

घनोदधि—सब ओर से लोक को घेर कर स्थित प्रथम वलय। यह गोमूत्रवर्णधारी, दण्डाकार, लम्बा, घनीभूत, ऊपर नीचे चारो ओर स्थित और लोक के अन्त तक वेष्टित है। अधोलोक के नीचे बीस हज़ार योजन और लोक के ऊपर कुछ कम एक योजन विस्तृत है। अधोलोक के नीचे यह दण्डाकार है। मध्यलोक में यह पाँच योजन विस्तृत है। यह ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर नामक पाँचवें स्वर्ग के अन्त में सात योजन और मोक्षस्थान के समीप पाँच योजन विस्तृत है। लोक के ऊपर इसका विस्तार अर्ध योजन है। हपु० ४ ३३-४१

घर्मा—नरक की प्रथम रत्नप्रभा भूमि। इस पृथिवी में तेरह प्रस्तार हैं और उनमें क्रमश निम्नलिखित तेरह ही इन्द्रक बिल हैं—सीमन्तक, नरक, रौरुक, भ्रान्त, उद्भ्रान्त, सभ्रान्त, असभ्रान्त, विभ्रान्त, त्रस्त, त्रसित, वक्रान्त, अवक्रान्त और विक्रान्त। इन इन्द्रक बिलो की चारो दिशाओ और विदिशाओ में विद्यमान श्रेणिबद्ध बिल चार हज़ार चार सौ बीस तथा प्रकीर्णक बिल उन्तीस लाख पचानवें हज़ार पाँच सौ सडसठ हैं। इस प्रकार कुल (इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक) बिल तीस लाख हैं। हपु० ४४६, ७१-७७, ८६-१०४ इनमें छ लाख बिल सख्यात योजन और चौबीस लाख बिल असख्यात योजन विस्तार से युक्त हैं। इन्द्रक बिलो की मोटाई एक कोस श्रेणिबद्ध बिलो की १$\frac{1}{3}$ कोस तथा प्रकीर्णक बिलो की २$\frac{1}{3}$ कोस है। हपु० ४ १६१, २१८ इस पृथिवी के उत्पत्ति स्थानो में उत्पन्न नारकी जन्मकाल में सात योजन सवा तीन कोस ऊपर आकाश में उछलकर पुन नीचे गिरते हैं। इस पृथिवी से निकला सम्यक्त्वी जीव तीर्थंकर पद पा सकता है। असैनी पंचेन्द्रिय जीव इसी पृथ्वी तक जाते हैं। मपु० १०. २९, हपु० ४ ३५५, ३८१

घाट—वशा नामक दूसरी पृथिवी के ग्यारह इन्द्रक बिलो में एक इन्द्रक बिल। इस बिल की चारो दिशाओ में एक सौ अट्ठाईस और विदिशाओ में एक सौ चौबीस कुल दो सौ बावन श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७८-७९, १०९

घातिकर्म—जीव के उपयोग गुण के घातक ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्म। इन कर्मों के विनास से केवलज्ञान की उपलब्धि होती है। मपु० १ १२, ३३ १३०, ५४ २२६-२२८

घातिसंघात—घाति कर्मों का समूह। हपु० २ ५९ दे० घातिकर्म

घुटुक—पाण्डव भीम और हिडिम्बा का पुत्र। युद्ध में यह अश्वत्थामा के द्वारा मारा गया था। पापु० १४ ६३-६६, २० २१८-२१९

घृतवर—(१) मध्यलोक का छठा द्वीप। हपु० ५ ६१५

(२) इस द्वीप को घेरे हुए इसी नाम का एक सागर। इसका जल घृततुल्य है। हपु० ५.६१५, ६२८

घृतस्रावी—एक रस ऋद्धि। इससे भोजन में घी की कमी नही रहती। मपु० २.७२

घोर—इन्द्र-रावण युद्ध में रावण के पक्ष का एक पराक्रमी राक्षस। पपु० १२ १९६

घोरर्द्धि—घोर तपश्चरण में सहायक ऋद्धि। वज्रनाभि को यह ऋद्धि प्राप्त थी। इसी की सहायता से वह घोर तप करता था। मपु० ११ ८२

घोरा—इस नाम की एक महाविद्या। यह रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२९

घोष—(१) अहीरो की बस्ती। मपु० १६ १७६, हपु० २ ३

(२) असुरकुमार आदि दस जाति के भवनवासी देवो के बीस इन्द्रो में सत्रहवाँ इन्द्र। वीवच० १४ ५४-५७

घोषणा—पारिव्राज्यक्रिया के सत्ताईस सूत्रपदो मे एक सूत्रपद। जो मुनि नगाडे तथा सगीत आदि की घोषणा का त्याग करके तपस्या करता है उसकी तपस्या सफल होने पर दुन्दुभिघोष होता है। मपु० ३९ १६४, १८३

घोषसेन—दत्त नारायण के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २० २१६

घोषा—देवो के द्वारा विद्याधरो को दी गयी एक वीणा। मपु० ७० २९५-२९६, हपु० २० ६१

घोषार्या—तीर्थंकर पुष्पदन्त के संघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ५५.५६

घोषावती—चार दिव्य वीणाओं में एक वीणा। विष्णुकुमार मुनि द्वारा उपसर्ग हटाये जाने पर देवों ने यह वीणा पृथिवी पर रहनेवालों को दी थी। मपु० ७० २९६

घ्राण—नासिका। पाँच इन्द्रियों में तीसरी इन्द्रिय। इन्द्रिय जय के प्रसंग में इस इन्द्रिय के विषय गन्ध पर भी विजय प्राप्त की जाती है। पपु० १४ ११३

च

चंचल—(१) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों के इकतीस पटलों में ग्यारहवाँ पटल। हपु० ६ ४५ दे० सौधर्म

(२) रावण का गजरथारोही योद्धा। पपु० ५७ ५८

चकार—राजा रवि के पश्चात् हुआ लंका का स्वामी। यह माया, पराक्रम और शौर्य से सम्पन्न राक्षसवंशी विद्याधर था। पपु० ५. ३९५-४००

चक्र—(१) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। यह सेना में दण्डरत्न के पीछे चलता है। इसकी एक हजार देव रक्षा करते हैं। इसके स्वामी के कुटुम्बी इससे अप्रभावित रहते हैं। यह नारायण और प्रतिनारायण का आयुध है। इससे नारायण का वध नहीं होता, प्रतिनारायण का होता है। इसमें एक हजार आरे रहते हैं। राम-रावण युद्ध में तथा कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में इसका व्यवहार हुआ था। मपु० ६.१०३, १५ २०८, २८ ३, २९४, ३४ २६, ३६ ६६, ३७ ८३-८५, ४४ १८०, पपु० ५८ ३४, ७५ ४४-६०, हपु० ५२ ८३-८४

(२) सानत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग के सात इन्द्रक विमानों में सातवाँ इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४८

चक्रक—माहेन्द्र स्वर्ग का एक विमान। मपु० ६२ ७८

चक्रधर—(१) विदेह क्षेत्र के पुण्डरीक देश में स्थित एक नगर। यह त्रिभुवनानन्द चक्रवर्ती की निवासभूमि था। पपु० ६४ ५०

(२) कृष्ण। मपु० ७२ १६८

(३) भविष्यत्कालीन तीसरा बलभद्र। मपु० ७६ ४८५

चक्रधर्मा—विद्याधरों के वंश में उत्पन्न एक राजा। यह चन्द्ररथ का पुत्र और चक्रायुध का पिता था। पपु० ५ ५०

चक्रध्वज—(१) विद्याधरों के वंश में उत्पन्न एक राजा। यह चक्रायुध का पुत्र और मणिग्रीव का पिता था। पपु० ५ ५०-५१

(२) चक्रपुर नगर का राजा। इसकी स्त्री का नाम मनस्विनी था। चित्तोत्सवा इन दोनों की पुत्री थी। पपु० २६ ४-५

(३) वीतशोक नगर का राजा। यह नगर पुष्करवर द्वीप के पश्चिम मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर स्थित सरित् देश में था। मपु० ६२ ३६४-३६८

(४) चक्र-चिह्नांकित समवसरण की ध्वजा। मपु० २२.२३५

चक्रनाथ—कृष्ण। मपु० ७१ १४२

चक्रनृत्य—फिरकी लगाकर नृत्य करना। भगवान् के जन्माभिषेक के समय इन्द्र ने देवियों के साथ यह नृत्य किया था। मपु० १४ १३६

चक्रपाणि—कृष्ण। हपु० ३५ ३९

चक्रपुर—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा अपराजित था। यह तीर्थंकर अरनाथ की प्रथम पारणास्थली थी। मपु० ५९ २३९, ६५ ३५, हपु० २७ ८९, पापु० ७ २८

(२) विद्याधरों की निवासभूमि। पपु० ५५ ८६

चक्रपुरी—विदेह क्षेत्र के गन्धा नामक देश की राजधानी। मपु० ६३. २०८-२१७

चक्रपूजा—चक्रवर्तियों द्वारा दिग्विजय के शुभारम्भ में कृत चक्र की पूजा। मपु० ६ ११३

चक्ररथ—सीता का जीव। यह रत्नस्थलपुर का चक्रवर्ती राजा होगा। रावण और लक्ष्मण के जीव इसके पुत्र होंगे। पपु० १२३ ११२-१२८

चक्रलाभ—गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओं में चवालीसवीं क्रिया। इस क्रिया में निधियों और रत्नों की प्राप्ति के साथ चक्र की प्राप्ति होती है तथा जिसे यह रत्न मिलता है उसे राजाधिराज मानकर प्रजा उसका अभिषेक करती है। मपु० ३८ ६१, २३३

चक्रवर्ती—चक्ररत्न का स्वामी। यह षट्खण्डाधिपति, दिग्विजयी, बत्तीस हजार राजाओं का अधिराज, शंख, अंकुश आदि चक्री के लक्षणों से चिह्नित, चौदह महारत्नों का स्वामी, नवनिधिधारी, सुकृती और दस प्रकार के भोगों से सम्पन्न होता है। यह भरत, ऐरावत और विदेह इन तीन क्षेत्रों में होता है। मपु० २ ११७, ६ १९४-२०४, २३ ६०, हपु० १ १९ वर्तमान काल के बारह चक्रवर्ती ये हैं—भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरनाथ, सुभूम, महापद्म, हरिषेण, जय और ब्रह्मदत्त। पपु० ५ २२३-२२४, हपु० ६० २८६-२८७, २९८ भविष्य में जो बारह चक्रवर्ती होंगे उनके नाम इस प्रकार हैं—भरत, दीर्घदन्त, जन्मदन्त (मुक्तदन्त) गूढ़दत्त, (गूढ़दन्त) श्रीषेण, श्रीभूति, श्रीकान्त, पद्म, महापद्म, चित्रवाहन (विचित्रवाहन) विमल-वाहन और अरिष्टसेन। मपु० ७६ ४८२-४८४, हपु० ६० ५६३-५६५ एक समय में यह एक ही होता है। एक चक्रवर्ती दूसरे चक्रवर्ती को, एक नारायण दूसरे नारायण को, एक बलभद्र दूसरे बलभद्र को और एक तीर्थंकर दूसरे तीर्थंकर को देख नहीं पाते। पापु० २२ १०-११

चक्रवाल—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का तीसरा नगर। पपु० ५ ७६, हपु० २२.९३

चक्रव्यूह—एक विशिष्ट सैन्य-रचना। इसमें राजा मध्य में रहता है और उसके चारों ओर अंग-रक्षक होते हैं। यह रचना चक्राकार की जाती है। इसमें चक्र के एक हजार आरे होते हैं। प्रत्येक आरे में एक राजा रहता है। प्रत्येक राजा के साथ-साथ सौ हाथी, दो हजार रथ, पाँच हजार घोड़े और सोलह हजार पैदल सैनिक रहते हैं। चक्र की नेमि के पास हजारों नृप रहते हैं। ऐसे ही एक व्यूह की रचना जरासन्ध ने की थी। गरुडव्यूह की रचना से इस व्यूह को भग्न किया जाता है। मपु० ४४ १११-११३, हपु० ५० १०२-११२, पापु० १९ १०४ राजा अर्ककीर्ति ने भी चक्रव्यूह की रचना से शत्रु पर विजय पायी थी। पापु० ३ ९७

चक्रांक—एक राजा। इसकी रानी का नाम अनुमति और उससे उत्पन्न पुत्र का नाम साहसगति था। पपु० १०४

चक्रा—पश्चिम विदेह क्षेत्र के गन्धा देश की राजधानी। हपु० ५ २५१, २६२-२६३

चक्राभिषेक—गृहस्थ की श्रेपन क्रियाओं में छियालीसवीं क्रिया। यह दिग्विजय के पश्चात् सम्पन्न होती है। इसमें चक्ररत्न को आगे करके चक्रवर्ती नगर में प्रवेश करता है और आनन्दमण्डप में बैठकर किमिच्छक दान देता है। इस समय मांगलिक वाद्य बजते रहते हैं। और श्रेष्ठ कुलों के राजा चक्री का अभिषेक करते हैं। इसके पश्चात् प्रसिद्ध चार नृप उसे मांगलिक वेष धारण कराते हैं और मुकुट पहनाते हैं। हार, कुण्डल आदि से विभूषित होकर वह यज्ञोपवीत धारण करता है। नगर-निवासी तथा मंत्री आदि उसका चरणाभिषेक कर चरणोदक मस्तक पर लगाते हैं। श्री, ह्री आदि देवियाँ अपने-अपने नियोगों के अनुसार उसकी उपासना करती हैं। मपु० ३८ ६२, २३५-२५२

चक्रायुध—(१) जम्बूद्वीप के चक्रपुर नगर के राजा अपराजित और उसकी रानी सुन्दरी का पुत्र। इसका पिता इसे राज्य देकर दीक्षित हो गया था। कुछ समय बाद इसने भी अपने भाई वज्रायुध को राज्य देकर पिता से दीक्षा ली थी और मोक्ष पद पाया था। तीसरे पूर्वभव में यह भद्रमित्र नामक सेठ, दूसरे पूर्वभव में सिंहचन्द्र और पहले पूर्वभव में प्रीतिंकर देव था। मपु० ५९ २३९-२४५, ३१६, हपु० २७.८९-९३

(२) राजा विश्वसेन और रानी यशस्वती का पुत्र। ये तीर्थंकर शान्तिनाथ के साथ ही दीक्षित होकर उनके प्रथम गणधर हुए। ये पूर्वांग के पारदर्शी विद्वान् थे। आयु के अन्त में इन्होंने निर्वाण-पद पाया था। मपु० ६३ ४१४, ४७६, ४८९, ५०१, हपु० ६० ३४८, पापु० ५ ११५, १२७-१२९ तेरहवें पूर्वभव में ये मगधदेश के राजा श्रीषेण की आनन्दिता नामक रानी थे। बारहवें पूर्वभव में उत्तरकुरु में आर्य, ग्यारहवें पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग में विमलप्रभ नामक देव, दसवें पूर्वभव में त्रिपृष्ठ नारायण के श्रीविजय नामक पुत्र, नवें पूर्वभव में तेरहवें स्वर्ग में मणिचूल नामक देव, आठवें पूर्वभव में वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा स्तिमितसागर के अनन्तवीर्य नामक पुत्र, सातवें पूर्वभव में रत्नप्रभा नरक में नारकी, छठें पूर्वभव में विजयार्ध के गगनवल्लभ नगर के राजा मेघवाहन के मेघनाद नामक पुत्र, पाँचवें पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र, चौथे पूर्वभव में वज्रायुध के पुत्र सहस्रायुध, तीसरे पूर्वभव में अधोग्रैवेयक में अहमिन्द्र, दूसरे पूर्वभव में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा घनरथ के दृढरथ नाम के पुत्र, और पहले पूर्वभव में ये अहमिन्द्र थे। मपु० ६२ १५३, ३४०, ३५८, ३७६, ४११-४१४, ६३ २५, २८-२९, ३६, ४५, १३८-१४४, ३३६-३३७

(३) विद्याधरवंशी राजा चक्रवर्मा का पुत्र। यह चक्रध्वज का पिता था। पपु० ५ ५०-५१

चक्री—कृष्ण। हपु० ५४ ३०

चक्रेश—चक्ररत्न के स्वामी। हपु० ११८ दे० चक्रवर्ती

चक्षुःश्रवा—सर्प। यह आँख के मार्ग से ही सुनता है। मपु० २६ १७६

चक्षुष्मान्—(१) आठवें मनु/कुलकर। ये सातवें कुलकर विपुलवाहन के पुत्र थे तथा नौवें कुलकर यशस्वी के पिता। इनके पूर्व माता-पिता पुत्र का मुख तथा चक्षु देखे बिना ही मर जाते थे। इनके समय से वे पुत्र का मुख और चक्षु देखकर मरने लगे थे। इससे उत्पन्न प्रजा-भय को दूर करने से प्रजा ने इन्हें इस नाम से सम्बोधित किया था। ये बहुत काल तक भोग भोगकर स्वर्ग गये। मपु० ३ १२०-१२५, हपु० ७ १५७-१६०, पापु० २ १०६ पद्मपुराण में इन्हें सीमन्धर के बाद हुए बताया है। इन्होंने सूर्य और चन्द्र देखकर भयभीत प्रजा के भय का निवारण किया था। पपु० ३ ७९-८५

(२) मानुषोत्तर पर्वत का रक्षक देव। हपु० ५ ६३९

चण्ड—(१) राजा अनिल के पश्चात् हुआ लंका का राक्षसवंशी विद्याधर राजा। यह विद्या, बल और महाकान्ति का धारक था। पपु० ५ ३९७-४००

(२) रावण का व्याघ्ररथारोही सामन्त। मपु० ५७ ५१-५२

चण्डकौशिक—कुम्भकारकट नगर का एक ब्राह्मण। यह सोमश्री का पति और उससे उत्पन्न मौण्डकौशिक का पिता था। मपु० ६२.२१२-२१४, पापु० ४ १२४-१२६

चण्डतरंग—राम के पक्ष का एक योद्धा। इसने भानुकर्ण (कुम्भकर्ण) से युद्ध किया था। पपु० ६० ५८

चण्डदण्ड—राजा काष्ठागार के नगर का मुख्य रक्षक। राजा की आज्ञा से यह जीवन्धरकुमार को मारने के लिए सेना समेत गया था पर यह सफल नहीं हो सका। मपु० ७५ ३७४-३७९

चण्डबाण—एक व्याध राजा। इसने आक्रमण करके शाल्मलिखण्ड नामक ग्राम की प्रजा का अपहरण किया था। अपहृत लोगों में देविला और जयदेव की पुत्री पद्मदेवी भी थी। राजगृह के राजा सिंहरथ ने इसे मारकर अपहृत जन समूह को मुक्त कराया था। हपु० ६०.१११-११३

चण्डरवा—इस नाम का एक शक्ति-शस्त्र। इस शस्त्र का प्रयोग करके सहस्रविजय ने विद्याधर चन्द्रप्रतिम को आकाश से अयोध्या के महेन्द्रोदय वन में गिराया था। पपु० ६४ २७

चण्डवाहन—त्रिशृंग नगर का राजा। इसकी पत्नी का नाम विमलप्रभा था। इस दम्पति की निम्न दस विदुषी कन्याएँ थीं—गुणप्रभा, सुप्रभा, ह्री, श्री, रति, पद्मा, इन्दीवरा, विश्वा, आश्चर्या और अशोका। इसने इन कन्याओं को युधिष्ठिर के साथ विवाहा था। पापु० १३ १०१-१०६, १५९-१६४

चण्डवेग—(१) भरत का दण्डरत्न। मपु० ३७.१७०, पापु० ७ २२

(२) राजा विद्युद्वेग का पुत्र। इसकी मदनवेगा नाम की बहिन थी। मदनवेगा के पति के बारे में एक अवधिज्ञानी मुनि ने कहा था कि गंगा में विद्या सिद्ध करते हुए इसके कंधे पर जो गिरेगा वही इसका पति होगा। इसके पिता ने इसे गंगा में विद्या-सिद्धि के लिए नियोजित किया था। वसुदेव गंगास्नान के लिए आया था। वहाँ

संयोग से वह इसके कंधे पर गिरा। इसने उसे अनेक विद्याशस्त्र दिये थे। वसुदेव ने त्रिशिखर विद्याधर के साथ जिसने इसके पिता को बाँधकर कारागृह में डाल दिया था, युद्ध करके माहेन्द्रास्त्र के द्वारा उसका सिर काट डाला था और इसके पिता को बन्धन मुक्त कराया था तथा मदनवेगा प्राप्त की थी। हपु० २५ ३८-७१

चण्डवेगा—(१) वरुण पर्वत के समीप पाँच नदियों के संगम की एक नदी। मपु० ५९ ११८-११९, हपु० २७ १३-१४

(२) इस नाम की एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९७

चण्डशासन—मलय देश का राजा। यह पोदनपुर-नरेश वसुषेण का मित्र था। एक बार यह वसुषेण के पास आया और इसने उसकी पत्नी नन्दा का अपहरण किया था। यह मरकर अनेक भवों में भ्रमण करने के बाद काशी देश की वाराणसी नगरी में मधुसूदन नाम का राजा हुआ था। मपु० ६० ५०-५३, ७०.७१

चतुरंग—सेना के चार अंग—अश्व, गज, रथ और पैदल सैनिक। मपु० ३० २-३, हपु० २ ७१

चतुरस्र—ताल की द्विविध योनियों में एक योनि। पपु० २४ ९

चतुरस्रानुयोग—श्रुत के चार अनुयोग—(१) प्रथमानुयोग (२) करणानुयोग (३) चरणानुयोग और (४) द्रव्यानुयोग। हपु० ५८.४

चतुरानन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

चतुरास्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

चतुर्गति—चार गतियाँ। नरक, तिर्यंच, मनुष्य औ देव। ये चार गतियाँ होती हैं। मपु० ४२ ९३

चतुर्णिकाय—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक इन चार निकायों के देव। हपु० २ २८

चतुर्थक—एक व्रत। इस व्रत में एक दिन का उपवास किया जाता है। हपु० ३४ १२५

चतुर्थकाल—अवसर्पिणी काल के छः भेदों में दुःषमा-सुषमा नामक चौथा भेद। मपु० ३ १७ १८, हपु० १ २६

चतुर्थज्ञान—सम्यग्ज्ञान के पाँच भेदों में चौथा ज्ञान-मनःपर्ययज्ञान। मपु० ४८ ४०

चतुर्थव्रतभावना—ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाएँ—स्त्री-कथा, स्त्र्या-लोक, स्त्री-संसर्ग, प्राग्रतस्मरण और गरिष्ठ तथा उत्तेजक आहार का त्याग। मपु० २० १६४

चतुर्थ शुक्लध्यान—शुक्लध्यान के चार भेदों में चौथा भेद—व्युपरत-क्रिया-निवर्ति। योग केवली गुणस्थान में योगों का पूर्ण निरोध हो जाना-मुक्त अवस्था को पा लेना। मपु० ६३ ४९८

चतुर्थीविद्या—आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति इन चार विद्याओं में चौथी विद्या-दण्डनीति। मपु० ५१ ५

चतुर्दशपूर्वी—महावीर के निर्वाण के पश्चात् हुए उत्पादपूर्व आदि चौदह पूर्वों के ज्ञाता पाँच मुनि। इनके नाम हैं—विष्णु, नन्दिमित्र, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु। हपु० १.५८

चतुर्दश महारत्न—चक्रवर्ती के चौदह महारत्न—सुदर्शन चक्र, छत्र, खड्ग, दण्ड, काकिणी, चर्म, मणि, पुरोहित, सेनापति, स्थपति, गृहपति, स्त्री, गज और अश्व। मपु० ६१ ९५, ३७ ८४, हपु० ११ १०८-१०९

चतुर्दश महाविद्या—उत्पादपूर्व आदि चौदह पूर्व। मपु० २ ४८, ३४ १४७

चतुर्भेदज्ञान—चार ज्ञान। मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय ये चार ज्ञान हैं। मपु० ३६ १४५

चतुर्मासा—चार मास परिमित काल, वर्षाकाल। हपु० १८ ९९

चतुर्मुख—(१) नौ नारदों में सातवाँ नारद। इनकी आयु नारायणों के बराबर होती है तथा नारायणों के समय में ही ये होते हैं। महाभव्य और जिनेन्द्र के अनुगामी होते हुए भी ये कलहप्रेमी, कदाचित् धर्म-स्नेही और हिंसा-प्रेमी होते हैं। हपु० ६० ५४८-५५०

(२) एक मुनिराज, जिन्हें सिद्धिवन में केवलज्ञान हुआ था। मपु० ४८ ७९

(३) राजा शिशुपाल और रानी पृथिवीसुन्दरी का पुत्र। दुःषमा काल के एक हजार वर्ष बाद पाटलिपुत्र नामक नगर में इसका जन्म हुआ था। यह महादुर्जन था। कल्किराज नाम से विख्यात था। इसकी आयु सत्तर वर्ष और शासनकाल चालीस वर्ष रहा। निर्ग्रन्थ मुनियों से कर वसूली के प्रसंग में किसी सम्यग्दृष्टि असुर द्वारा यह मारा गया और मरकर प्रथम नरक में उत्पन्न हुआ। मपु० ७६ ३९७-४१५

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

चतुर्मुखमह—अर्हन्त की चतुर्विध पूजा का एक भेद। यह एक महायज्ञ है और महामुकुटबद्ध राजाओं के द्वारा सम्पन्न होता है। अपरनाम सर्वतोभद्र। मपु० ३७ २९-३०, ७३ ५८

चतुर्मुखी—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी की पचास नगरियों में एक नगरी। इसके ऊँचे-ऊँचे चार गोपुर हैं। मपु० १९ ४४, ५३

चतुर्वक्त्र—(१) इक्ष्वाकुवंशी राजा ब्रह्मरथ का पुत्र। यह हेमरथ का पिता था। पपु० २२ १५३-१५९

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

चतुर्विध बन्ध—चार प्रकार का कर्मबन्ध—प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश। मपु० ५८ ३१

चतुर्विधामर—चार प्रकार के देव—(भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक)। मपु० ५५ ५१

चतुर्विंशतिस्तव—अंगबाह्य श्रुत के चौदह प्रकीर्णकों में एक प्रकीर्णक। हपु० २ १०२ दे० अंगबाह्यश्रुत

चतुःशाल—राम-लक्ष्मण के भवन नन्द्यावर्त का एक कोट। मपु० ८३ ४-५

चतुष्टयी वृत्ति—अर्थ की चार वृत्तियाँ—अर्जन, रक्षण, वर्धन और व्यय। मपु० ५१ ७

चतुस्त्रिंशत् महाद्भुत—अर्हन्त के चौंतीस अतिशय—जन्म सम्बन्धी दस, केवलज्ञान सम्बन्धी दस और देवकृत चौदह। हपु० २ ६७

चन्दन—(१) एक वन, एक वृक्ष। मपु० ६२ ४०९

(२) सुसीमा नगर के राजा पद्मगुल्म का पुत्र। यह नगर के तीसरे पुष्करपुर द्वीप के पूर्वार्ध भाग में स्थित मेरु पर्वत के पूर्व विदेह क्षेत्र में

सीता नदी के दक्षिणी तट पर बसे वत्स नामक देश में है। जीवन के के अन्त में इसे ही राज्य सौंपकर पद्मगुल्म विरक्त हो गया था। मपु० ५६ २-३, १५-१६

चन्दनपादप—राम का एक सिंहरथारोही सामन्त। यह रावण के विरुद्ध लड़ा था। पपु० ५८ ९-११

चन्दनपुर—भरतक्षेत्र के दक्षिणी तट पर स्थित एक नगर। विद्याधर महेन्द्र यहाँ का राजा था। हपु० ६० ८१

चन्दनवन—एक नगर। अमोघदर्शन यहाँ का राजा था। हपु० २९ २४

चन्दना—वैशाली के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा की सातवी पुत्री। इसे वनक्रीडा में आसक्त देखकर सुवर्णाभनगर का राजा मनोवेग विद्याधर हरकर ले गया था किन्तु अपनी स्त्री के भय से इसे महा अटवी में छोड गया। कालक नामक भील ने इसे भीलराज सिंह को दिया। कामासक्त सिंह ने अपनी माँ के समझाने पर इसे अपने मित्र मित्रवीर को दे दिया। मित्रवीर से कौशाम्बी के सेठ वृषभदत्त ने इसे ले लिया। सेठानी भद्रा ने सशंकित होकर इसे बहुत ताडना दी। मिट्टी के पात्र में कांजी मिश्रित कोदो का भात इसे भोजन में में दिया। केशराशि कटवाकर और बेडियाँ डालकर इसे एक कमरे में कैद भी कर दिया था। यह सब कुछ होने पर भी यह धर्म पर अडिग रही। दैव योग से महावीर आहार के लिए आये। इसने पडगाह कर आहार में वही नीरस भोजन दिया किन्तु शील के प्रभाव से वह नीरस भोजन सरस हो गया। इसके बन्धन खुल गये। शरीर सर्वांग सुन्दर हो गया। पंचाश्चर्य होने पर सभी ने इसकी सराहना की। अन्त में महावीर से दीक्षा लेकर इसने तप किया। तप के प्रभाव से यह महावीर के संघ में गणिनी बनी। आयु के अन्त में यह स्त्रीलिंग छेदकर अच्युत स्वर्ग मे देव हुई। मपु० ७४ ३३८-३४७, ७५ ३-७, ३५-७०, १७०, १७७, हपु० २ ७०, वीवच० १ १-६, १३ ८४-९८, तीसरे पूर्वभव में यह सोमिला नाम की एक ब्राह्मणी थी, दूसरे पूर्वभव में कनकलता नाम की राजपुत्री और पहले पूर्वभव में पद्मलता नाम की राजपुत्री हुई थी। मपु० ७५ ७३, ८३, ९८

चन्द्र—(१) महाकान्तिधारी, आकाशचारी, दिन-रात का विभाजक एक ग्रह-चन्द्रमा। यह एक शीतलकिरणधारी ज्योतिष्क देव है। मपु० ३ ७०-७१, ८६, १२९, १३२, १५४, पपु० ३ ८१-८४

(२) एक ह्रद-सरोवर। यह नील पर्वत से साढे पाँच सौ योजन दूर नदी के मध्य मे स्थित है। मपु० ६३ १९९, हपु० ५ १९४

(३) कुशास्त्रज्ञ, पंचाग्नि-तप कर्ता एक तापस। यह सोम तापस और उसकी पत्नी श्रीदत्ता का पुत्र था। इसने पंचाग्नि तप किया था। इसके फलस्वरूप यह मरकर ज्योतिर्लोक में देव हुआ। मपु० ६३ २६६-२६७

(४) आगामी तीसरे काल का प्रथम बलभद्र। मपु० ७६ ४८५, हपु० ६० ५६८

(५) रुचकगिरि का दक्षिण दिशावर्ती एक कूट। हपु० ५ ७१०

(६) एक देव। हपु० ६० १०८

(७) अभिचन्द्र का कीर्तिमान् ज्येष्ठ पुत्र। हपु० ४८ ५२

(८) राजा उग्रसेन का कनिष्ठ पुत्र। हपु० ४८.३९

(९) सौधर्म युगल का तृतीय इन्द्रक पटल। हपु० ६ ४४ दे० सौधर्म

(१०) विद्याधर शशांकमुख का पुत्र और चन्द्रशेखर का पिता। पपु० ५ ५०

(११) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के पद्मक नगर का एक वणिक। यह गणितज्ञ रम्भ का शिष्य था। इसने अपने मित्र आवलि को मारा था। मरकर यह बैल हुआ। पपु० ५ ११४-११९

(१२) रावण का सिंहरथारोही एक सामन्त। पपु० ५७ ४५-४८

(१३) लक्ष्मण के अढाई सौ पुत्रों में एक विख्यात पुत्र। पपु० ९४. २७-२८

(१४) दुर्योधन का एक सुशिक्षित सन्देशवाहक। यह द्रुपद को यह सन्देश देने के लिए गया था कि वह द्रौपदी का विवाह किसी क्षत्रिय राजा से ही करे। पापु० १५ ११८-१२०

चन्द्रकवेध—चन्द्रक यन्त्र। राजा द्रुपद ने अपनी कन्या द्रौपदी के इच्छुक राजकुमारों को इसी यन्त्र के वेधनार्थ आमन्त्रित किया था। अपरनाम राधावेध। हपु० ४५ १२४-१२७

चन्द्रकान्त—अन्धकवृष्णि के दसवें पुत्र तथा कृष्ण के पिता वसुदेव का पुत्र। यह सोमदत्त की पुत्री से उत्पन्न हुआ था। हपु० ४८ ६०

चन्द्रकान्तशिला—चन्द्रकान्त मणि से निर्मित एक शिला। समवसरण मे लतावन के मध्य इन्द्रो के विश्राम के लिए ऐसी शिलाओ की रचना की जाती है। मपु० ६ ११५, २२ १२७, ६३.२३६ तीर्थंकर वर्द्धमान निष्क्रमण काल में शिविका से उतरकर इसी शिला पर बैठे थे और और वही उन्होंने जिनदीक्षा ली थी। ये शिलाएँ रात्रि में चन्द्रमा की किरणो का सस्पर्श पाकर द्रवीभूत होने लगती है। हपु० २ ७, ७ ७५, वीवच० १२ ८६-१००

चन्द्रकान्ता—(१) शूरसेन की भार्या। यह मथुरा निवासी सेठ भानु की पुत्र-वधू थी। हपु० ३३ ९६-९९

(२) लक्ष्मण की भार्या। पपु० ८३ ९२-१००

चन्द्रकीर्ति—(१) वज्रदन्त चक्रवर्ती के पाँचवें पूर्वभव का जीव। यह अर्धचक्री का पुत्र और जयकीर्ति का मित्र था। मपु० ७.७-८

(२) चम्पापुर का राजा। यह नि:सतान मरा था। मपु० ७०. ८४

चन्द्रकुण्डल—नभस्तिलक नगर का राजा। इसकी पत्नी विमला से मार्तण्डकुण्डल उत्पन्न हुआ था। पपु० ६.३८४-३८५

चन्द्रगति—सीता के भाई भामण्डल का पुत्रवत् पालनकर्ता एक विद्याधर। यह चाहता था कि जनक की पुत्री सीता के साथ भामण्डल का विवाह हो जाय। पर ऐसा नही हो सका। जब इसे पता लगा कि सीता तो भामण्डल की बहिन है इसे वैराग्य उत्पन्न हो गया और भामण्डल को अपना राज्य सौंपकर यह सर्वहित आचार्य के पास दीक्षित हो गया। पपु० २६ १२०-१२९, ३० ७-६३

चन्द्रचिह्न—कुरुवंशी राजा शान्तिचन्द्र का उत्तरवर्ती एक नृप। पापु० ६ ३

चन्द्रचूड—एक विद्याधर नृप। यह राजा वालेन्दु का पुत्र और व्योमेन्द्र का पिता था। पपु० ५ ५२

चन्द्रचूल—(१) भरतक्षेत्र के मलय राष्ट्र में रत्नपुर नगर के राजा प्रजापति और उसकी रानी गुणकान्ता का पुत्र। कुबेर सेठ की पुत्री कुबेरदत्ता को बल पूर्वक अपने आधीन करते हुए देख वैश्य समूह द्वारा शिकायत किये जाने पर राजा ने इसे मारने का आदेश दे दिया था किन्तु मंत्री के परामर्श से यह संयमी हो गया। अन्त में यह चतुर्विध आहार का त्याग करके आराधना पूर्वक मर गया और इसने देव पद पाया। मपु० ६७ ९०-१४६

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर का राजा। यह चित्रांगद का पिता था। इसकी रानी मनोहरी से इसके छ युगल पुत्र हुए थे। मपु० ७१ २४९-२५२

(३) वृषभदेव के सत्तरवें गणधर। मपु० ४३ ६४, हपु० १२ ६७

चन्द्रज्योति—राम का सहायक एक विद्याधर राजा। पपु० ५४ ३४-३६

चन्द्रतिलक—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में कनकपुर नगर के राजा गरुडवेग और उसकी रानी धृतिषेणा का छोटा पुत्र। दिवितिलक इसका बड़ा भाई था। मपु० ६३ १६४-१६६

चन्द्रदत्त—पोदनपुर-नरेश, रानी देविला का पति, इन्द्रवर्मा का पिता। मपु० ७२ २०४-२०५

चन्द्रदेव—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ४०

चन्द्रधर—आगामी तीसरा बलभद्र। हपु० ६० ५६८

चन्द्रनख—रावण का एक योद्धा। इसने राम के काल नामक योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ५७ ४९-५२, ६२ ३६

चन्द्रनखा—रत्नश्रवा और केकसी की पुत्री। यह दशानन की बहिन, खरदूषण की पत्नी, शम्बूक और सुन्द नामक पुत्रों तथा अनंगपुष्पा कन्या की जननी थी। इसने राम को अपना पति बनाना चाहा था, किन्तु राम के द्वारा उसका निवेदन स्वीकार न किये जाने पर यह लक्ष्मण के पास गयी। लक्ष्मण से भी हताश होकर इसने अपना रूप क्षत-विक्षत कर लिया और अपने पति खरदूषण से लक्ष्मण के आरोपित दुर्व्यवहार की शिकायत की। इसने अपने पति को लक्ष्मण से युद्ध करने के लिए विवश कर दिया। युद्ध में खरदूषण मारा गया। पपु० ७ २२२-२२५, १९ १०१-१०२, ४३ ४०-४४, १०९-११२, ४४ १-२० राम-रावण युद्ध में रावण का वध होते ही मन्दोदरी के साथ इसने भी शशिकान्ता आर्यिका से दीक्षा ले ली। पपु० ७८ ९४-९५

चन्द्रनिकर—रावण का एक योद्धा। मारीच आदि के साथ इसने शत्रु-सेना को पीछे हटाया था। पपु० ७४ ६१

चन्द्रपर्वत—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक सुन्दर और सुरक्षित नगर। हपु० २२ ९७

चन्द्रपुर—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक सुन्दर और सुरक्षित नगर। मपु० १९ ५२-५३, ७१ ४०५

(२) भरतक्षेत्र का एक सुन्दर नगर। यहाँ काश्यपगोत्री महासेन राजा राज्य करता था। उसकी रानी लक्ष्मणा ने तीर्थंकर चन्द्रप्रभ को जन्म दिया था। मपु० ५४ १६३-१७०, पपु० २०.४४

(३) इसी नगर में राजा हरि और उसकी रानी श्रीधरा के व्रतकीर्तन नाम का पुत्र हुआ था। पपु० ५ १३५

चन्द्रप्रज्ञप्ति—दृष्टिवाद अंग के पांच भेदों में से परिकर्म श्रुत का प्रथम भेद। इसमें छत्तीस लाख पांच हजार पदों के द्वारा चन्द्रमा की भोग-सम्पदा का वर्णन है। हपु० १० ६१-६३

चन्द्रप्रतिम—देवगीतपुर नगर निवासी चन्द्रमण्डल और उसकी भार्या सुप्रभा का पुत्र। विद्याधर सहस्रविजय के साथ इसका युद्ध हुआ। इसे शक्ति लगी। भरत ने शक्ति हटाकर उसे जीवन दिया। पपु० ६४ २४-३९

चन्द्रप्रभ—अष्टम तीर्थंकर। भरतक्षेत्र स्थित चन्द्रपुर नगर के इक्ष्वाकुवंशी, काश्यपगोत्री राजा महासेन और रानी लक्ष्मणा के पुत्र। इनका गर्भावतरण-चैत्र कृष्णा पंचमी और जन्म शक्र योग में पौष कृष्णा एकादशी को हुआ था। इनका वर्ण श्वेत था। जन्म से ही ये तीन ज्ञान के धारी हो गये थे। मपु० २ १२९, ५४ १६३, १७०-१७३, पपु० १ ७, २० ६३, हपु० १ १०, पापु० १ ३ ये तीर्थंकर सुपार्श्व के नौ सौ करोड़ सागर का समय बीत जाने पर जन्मे थे। इनकी आयु दस लाख पूर्व और शारीरिक ऊँचाई एक सौ पचास धनुष थी। मपु० ५४ १७८-१७९, पपु० २० ८४, ११९ दो लाख पचास हजार पूर्व समय बीतने पर इनका राज्याभिषेक हुआ था। एक दिन शरीर की नश्वरता पर उनके चिन्तन से वे विरक्त हो गये उन्होंने अपने पुत्र वरचन्द्र को राज्य में अभिषिक्त किया। पौष कृष्णा एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र में एक हजार राजाओं के साथ ये दीक्षित हुए और इन्हें मन पर्ययज्ञान प्राप्त हो गया। दूसरे दिन नलिन नगर में सोमदत्त नृप के यहाँ पारणा की थी। घातियाकर्मों को नाश कर फाल्गुन कृष्णा सप्तमी के दिन ये केवली हुए। ये चौंतीस अतिशयों से युक्त अष्ट-प्रातिहार्यों से विभूषित थे। इनकी सभा में दत्त आदि तेरानवें गणधर, दो हजार पूर्वधारी, आठ हजार अवधिज्ञानी, दो लाख चार सौ उपाध्याय, दस हजार केवलज्ञानी, चौदह हजार विक्रिया ऋद्धिधारी, आठ हजार मन-पर्ययज्ञानी, सात हजार छः सौ वादी मुनि तथा वरुणा आदि तीन लाख अस्सी हजार आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक और पांच लाख श्राविकाएँ थीं। अनेक देशों में विहार कर इन्होंने अन्त में सम्मेदगिरि पर एक हजार मुनियों के साथ प्रतिमायोग धारण किया। एक मास तक सिद्धशिला पर स्थिर रहने के बाद फाल्गुन कृष्णा सप्तमी के दिन ज्येष्ठा नक्षत्र और अपराह्न वेला में सिद्ध हुए थे। मपु० ५४ १९५, २१४-२७८, पपु० १ ७, २० ४४, ६१, ६३, हपु० ६० १८९, ३८५-३८७ सातवें पूर्वभव में ये पुष्करद्वीप सम्बन्धी पूर्वमेरु के पश्चिम में स्थित सुगन्ध देश के श्रीवर्मा नामक राजा थे। पांचवें पूर्वभव में श्रीप्रभ विमान में श्रीधर नामक देव, चौथे में अलका देशस्थ-अयोध्या के अजितसेन नामक नृप, तीसरे में अच्युतेन्द्र, दूसरे में पूर्वधातकीखण्ड में मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर के पद्मनाभ नामक नृप, पहले में वैजयन्त विमान में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ५४ ७३, १६२

चन्द्रप्रभा—(१) दीक्षाभूमि खण्डवन पहुँचने के लिए तीर्थंकर महावीर की इस नाम की पालकी। इसे सर्वप्रथम भूमिपालों ने उठाया था। वे इसे लेकर सप्त पद चले थे। इसके बाद विद्याधर इसे लेकर सप्त पद चले और अन्त में सभी देवगण इसे आगे ले गये थे। मपु० ७४ २९९-३०२, पापु० १ ९, वीवच० १२ ४३-४७

(२) चन्द्रदेव की देवी। हपु० ६० १०८

चन्द्रभद्र—मथुरा नगरी का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—धरा और कनकप्रभा। धरा से इसके आठ पुत्र हुए थे—श्रीमुख, सन्मुख, सुमुख, इन्द्रमुख, प्रभामुख, उग्रमुख, अर्कमुख और अपरमुख। दूसरी रानी कनकप्रभा से अचल नाम का एक पुत्र हुआ था। पपु० ९१ १९-२१

चन्द्रभाग्या—काचनस्थान के राजा काचनरथ और उसकी रानी शतह्रदा की द्वितीय पुत्री। यह मन्दाकिनी की अनुजा और मदनाकुश की भार्या थी। पपु० ११० १, १९

चन्द्रमण्डल—देवगीतपुर नगर का निवासी। इसकी पत्नी का नाम सुप्रभा और उससे उत्पन्न पुत्र का नाम चन्द्रप्रतिम था। इसी चन्द्रप्रतिम ने लक्ष्मण के शक्ति लग जाने पर राम को उसके निवारण का उपाय बताता था। पपु० ६४ ७, २१-३१

चन्द्रमण्डला—रावण की अठारह हजार रानियों में एक रानी। पपु० ७७ १२

चन्द्रमति—वीतशोका नगरी के राजा मेरुचन्द्र की रानी। यह कृष्ण की पटरानी और गौरी की जननी थी। हपु० ६० १०३, १०४

चन्द्रमती—राजा रतिषेण की रानी। यह चित्रागद की जननी थी। मपु० १० १५१

चन्द्रमरीचि—राम का सहायक एक विद्याधर राजा। यह बडा उत्साही वीर था। अनेक विद्याधर राजा इसके साथ थे। पपु० ५४ ३२

चन्द्रमाल—पुष्करार्घ के पश्चिम विदेह का एक वक्षारगिरि। मपु० ६३ २०४, हपु० ५ २३२

चन्द्रमाला—राजपुर नगर-निवासी कनकतेज वैश्य की पत्नी, सुवर्णतेज की जननी। मपु० ७५ ४५०-४५३

चन्द्रयश—जरासन्ध के चक्रव्यूह को भग करने के लिए वसुदेव द्वारा निर्मित गरुड व्यूह में सम्मिलित एक नृप। इसकी सेना में साठ हजार रथ थे। हपु० ५०.१२८-१२९

चन्द्ररथ—(१) विद्याधर नमि की वश परम्परा से सम्बद्ध एक नृप। यह रत्नचिह्न का पुत्र और वज्रजघ का पिता था। पपु० ५ १७, हपु० १३ २१

(२) राजा इन्द्र का पुत्र, चक्रधर्मा का पिता। पपु० ५ ५०

चन्द्ररश्मि—राम के पक्ष का एक योद्धा-विद्याधर। यह बहुरूपिणी विद्या की साधना में रत रावण को कुपित करने के लिए उसके निकट गया था। पपु० ७० १२-१६

चन्द्रलेखा—दधिमुख नगर के राजा गन्धर्व और उसकी रानी अमरा की ज्येष्ठ पुत्री। यह अपनी दोनो छोटी बहिनो विद्युत्प्रभा और तरगमाला के साथ विद्यासिद्धि में सलग्न थी। पूर्व वैर वश अगारकेतु विद्याधर ने इनके ऊपर घोर उपसर्ग किये थे। इन्होंने उपसर्गों को सहन किया जिससे छ वर्ष से भी अधिक समय में सिद्ध होनेवाली वह विद्या बारह दिन मे ही सिद्ध हो गयी। पपु० ५१.२५-२६, ३७-४०, ४७-४८

चन्द्रवती—सिन्धु देश के वीतभय/वीतशोकपुर-नगर के राजा मेरुचन्द्र की रानी। यह कृष्ण की पटरानी गौरी की जननी थी। मपु० ७१. ४३९-४४१, हपु० ४४.३३-३६

(२) चन्द्र देव की देवी। मपु० ७१ ४१८

(३) हेमपुर के राजा हेम विद्याधर और उसकी रानी भोगवती की पुत्री। यह माली विद्याधर से विवाहित थी। पपु० ६ ५६४-५६५

चन्द्रवर्द्धन—एक विद्याधर। इसने सागरावर्त धनुष चढाने के कारण लक्ष्मण को अपनी अठारह कन्याएँ दी थी। पपु० २८ २४७-२५०

चन्द्रवर्मा—कृष्ण का एक पुत्र। इसने जरासन्ध युद्ध में अपने कुल की रक्षा की थी। हपु० ४८ ७१, ५० १३२

चन्द्रशेखर—(१) विद्याधर वशज एक नृप। यह चन्द्र का पुत्र और इन्द्र का पिता था। पपु० ५.५०

(२) राजा के सेवक विशालाक्ष विद्याधर का पुत्र। अर्जुन ने वनवास के समय इसे पराजित कर अपना सारथी बनाया था। इसके कहने से अर्जुन विजयार्घ पर गया और इन्द्र के शत्रुओ का विनाश करके उसे शत्रु रहित किया। पापु० १७ ५०, ३३-३८, ५५-५६, ६०-६१

चन्द्रसेन—इस नाम के एक गुरु (मुनि)। इनसे चन्द्रकीर्ति ने दीक्षा ली थी। चन्द्रकीर्ति का जीव ही सम्राट् वज्रदन्त हुआ। मपु० ७ १०

चन्द्रहास—एक खड्ग। रावण ने इसे साधनापूर्वक सिद्ध किया था। वालि मुनि के समझाने पर रावण ने इसे विरक्त भाव से त्याग भी दिया था पर युद्ध के कारण पुन प्राप्त किया था। लक्ष्मण द्वारा चलाये गये सुदर्शन-चक्र पर रावण ने इसी खड्ग से प्रहार किया था। पपु० ८ ३६-३७, ९.१४५, १७५, ७६ ३२

चन्द्राशु—राम का एक सिंहरथारोही सामन्त। पपु० ५८ १०-११

चन्द्राचार्य—पचमकाल के अन्तिम आचार्य। ये इसी काल के अन्तिम मुनि वीरागज के गुरु थे। मपु० ७६ ४३१-४३३

चन्द्रादित्य—पुष्करद्वीप का एक नगर। प्रकाशयश का पुत्र जगद्द्युति यहाँ का राजा था। पपु० ८५.९६

चन्द्रानन—चन्द्रपुर के राजा चित्राम्बर और उसकी रानी पद्मश्री का पुत्र। यह आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दर की पुत्री श्रीमाला के स्वयवर में गया था। पपु० ६ ४०२-४०६

चन्द्रानन्द—कृष्ण के पक्ष का एक राजकुमार। इसने कौरव-पाण्डव युद्ध मे कौरवो का वध किया था। हपु० ५०.१२५

चन्द्रानना—(१) पद्मिनीखेट-नगर-निवासी सोमशर्मा और उसकी भार्या हिरण्यलोमा की कन्या। इसका विवाह एक निमित्तज्ञानी से हुआ था। जो पहले मुनि था। मपु० ६२ १९२, पापु० ४.१०७-१०८

(२) रावण की अठारह हज़ार रानियों में एक रानी। पपु० ७७ १२

(३) विजयार्ध स्थित रत्नपुर नगर के विद्याधर राजा रत्नरथ की रानी, मनोरमा की जननी। पपु० ९३ १-२

चन्द्राभ—(१) ग्यारहवें कुलकर। ये अभिचन्द्र कुलकर के पुत्र थे। इन्होंने पल्य के दस हज़ार करोडवें भाग तक जीवित रहकर मरुदेव नामक पुत्र को जन्म दिया था तथा एक मास तक उसका लालन-पालन कर स्वर्ग प्राप्त किया था। पपु० ३ ८७, हपु० ७ १६२-१६४, पापु० २ १०६ ये नयुतप्रमितायु छः सौ धनुष अवगाहना-प्राप्त और उदयकालीन सूर्य के समान देदीप्यमान थे। चन्द्रमा के समान जीवों के आह्लादिक होने से ये सार्थक नामधारी थे। इनके समय में पुत्र के साथ रहने का भी समय मिलने लगा था। मपु० ३ १३४-१३८

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ५०, ५३, ७५ ३९०

(३) रत्नप्रभा नगर के खरभाग का चौदहवाँ पटल। हपु० ४ ५४ दे० खरभाग

(४) विजयार्ध पर्वत के द्युतिलक नगर का राजा। यह विद्याधरों का स्वामी, सुभद्रा का पति और वायुवेगा का पिता था। मपु० ६२ ३६-३७, ७४, १३४, वीवच० ३ ७३-७४

(५) राम के पक्ष का एक विद्याधर योद्धा। बहुरूपिणी विद्या की साधना में रत रावण को विचलित करने के उद्देश्य से यह लंका गया था। पपु० ५८ ३-७, ७०, १२-१६

(६) वसुदेव के भाई अभिचन्द्र का तीसरा पुत्र। हपु० ४८ ५२

(७) ब्रह्म स्वर्ग का एक विमान। हपु० २७ ११७

(८) एक विद्याधर। तापस मृगशृंग ने इसे देखकर ही विद्याधर होने का निदान किया था। हपु० २७ १२०-१२१

(९) रोहिणी के स्वयंवर में आया हुआ एक नृप। हपु० ३१ २८

(१०) राजपुर नगर-निवासी धनदत्त और नन्दिनी का पुत्र। मपु० ७५ ५२७ ५२९

चन्द्राभा—(१) वटपुर नगर के राजा वीरसेन की भार्या। राजा मधु ने वीरसेन को धोखा देकर इसे अपनी स्त्री बनाया तथा उसे पटरानी का पद देकर मनचाहे भोग-भोगने लगा था। अपने पूर्व पति को अपने वियोग में दुखी देखकर वह द्रवित हो गयी। इसने मधु को भी उसकी दीन-दशा दिखाई। इधर राज-पुरुषों ने मधु से पूछा कि परस्त्री सेवी पुरुष को कौन-सा दण्ड दिया जावे। इसने उत्तर दिया कि उसके हाथ-पैर सिर काट दिये जाँय। राजपुरुषों ने मधु से कहा कि परस्त्री हरण का अपराध तो उन्होंने भी किया है। इससे मधु बहुत लज्जित हुआ तथा विरक्त होकर विमलवाहन मुनिराज से उसने दीक्षा ले ली। इसने भी आर्यिका के व्रत स्वीकार कर लिये। पपु० १०९ १३६-१६२, हपु० ४३ १६३-२०३

(२) सुग्रीव की तेरह पुत्रियों में प्रथम पुत्री। यह राम के गुण-श्रवण कर स्वयंवरण की इच्छा से हर्षपूर्वक उनके पास आयी थी। पपु० ४७ १३६-१३७

चन्द्रावर्त—राजसवंशी एक राजा, इसने लंका में राज्य किया था। पपु० ५ ३९८

चन्द्रावर्तपुर—एक नगर। यहाँ का राजा आनन्दमाल था। यह भी विद्याधर राजा वह्निवेग और उसकी रानी वेगवती से उत्पन्न आहल्या के स्वयंवर में आया था। पपु० १३ ७५-७८

चन्द्रिणी—(१) पश्चिम विदेह क्षेत्रस्थ रत्नसंचयनगर के राजा महाघोष की भार्या। यह पयोबल की जननी थी। पपु० ५ १३६-१३७

(२) भरत की भाभी। पपु० ८३ ९४

चन्द्रोदय—(१) एक चूर्ण। इसे वैश्रवणदत्त की पुत्री सुरमंजरी ने बनाया था। यह चूर्ण वातावरण को तत्काल सुगन्धि से व्याप्त कर देता था। मपु० ७५ ३५०-३५७

(२) एक पर्वत। इसी पर्वत पर कुमार जीवन्धर ने वनक्रीडा की थी। यहीं एक मरणासन्न कुत्ते को नमस्कार मंत्र सुनाकर जीवन्धर ने उसे यक्ष-गति प्राप्त करायी थी। मपु० ७५ ३५९-३६५

(३) विनीता नगरी के राजा सुप्रभ और प्रह्लादना का पुत्र। यह सूर्योदय का सहोदर था। यह वृषभदेव के साथ दीक्षित हुआ था किन्तु मुनिपद से भ्रष्ट होकर यह मरीचि का शिष्य हो गया। मरकर यह नाग नगर में राजा हरिपति की रानी मनोलूता से कुलंकर नामक पुत्र हुआ। पपु० ८५ ४५-५१

चन्द्रोदर—सूर्यरज का उत्तराधिकारी अलंकारोदय का एक विद्याधर राजा। खरदूषण ने इसे निकालकर वहाँ का राज्य प्राप्त किया था। इसके मर जाने से इसकी गर्भवती पत्नी अनुराधा ने मणिकान्त नामक पर्वत की एक शिला पर एक शिशु को जन्म दिया और उसका नाम विराधित रखा। पपु० १ ६७, ९ ३७-४४

चपल—(१) विभीषण का एक शूर सामन्त। यह विभीषण के साथ हंसद्वीप में राम के पास गया था। पपु० ५५ ४०-४१

(२) रावण का एक योद्धा। यह राम की सेना से लडने के लिए रावण के साथ गया था। पपु० ५७ ५८

चपलगति—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गगनपुर नगर के राजा सूर्यप्रभ (अपरनाम सूर्याभि) और उसकी रानी धारिणी का तीसरा पुत्र। चिन्तागति और मनोगति इसके बडे भाई थे। इन तीनों ने अरिंजयपुर के राजा अरिंजय और उसकी रानी अजितसेना की पुत्री प्रीतिमती के साथ गतियुद्ध में भाग लिया था। मनोगति और चपल-गति तो हार गये और चिन्तागति जीत गया। चिन्तागति ने चाहा कि प्रीतिमती उसके छोटे भाई का वरण कर ले। प्रीतिमती ने यह बात नहीं मानी और उसने विवृता नाम की आर्यिका से आर्यिका की दीक्षा ले ली। उधर यह और इसके दोनों बडे भाई भी दमवर मुनि के निकट दीक्षित हो गये तथा आयु के अन्त में तीनों भाई माहेन्द्र स्वर्ग के अन्तिम पटल में सात सागर की आयु प्राप्त कर सामानिक जाति के देव हुए। मपु० ७० २७-३७, हपु० ३४ १७

चपलवेग—(१) चन्द्रगति विद्याधर का एक विद्याधर भृत्य। चन्द्रगति भामण्डल के लिए सीता को प्राप्त करना चाहता था। इसलिए उसने इसे जनक को हरकर लाने के लिए भेजा। इसने सुन्दर घोडे का रूप

धारण किया। राजा जनक इसकी ओर आकृष्ट हो गया। जैसे ही जनक इस पर सवार हुआ यह उसे लेकर आकाश मार्ग से चपलवेग के पास पहुँच गया। पपु० २८.६०-१००

(२) एक विद्याधर। धातकीखण्ड द्वीपस्थ भरतक्षेत्र के सारसमुच्चय देश में स्थित नागपुर नगर के राजा नरदेव ने उत्कृष्ट तपश्चरण करते समय इस विद्याधर को देखकर यह निदान किया था कि वह भी विद्याधर बने। मपु० ६८.३-६

चपलवेगा—(१) कौशिक तापसी की पत्नी। यह मृगशृंग की जननी थी। मपु० ६२.३८०

(२) एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२.३९७

चमर—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का चौदहवाँ नगर। मपु० १९.७९, ८७ अपरनाम चमरचम्पा। हपु० २२.८५

(२) तीर्थंकर सुमतिनाथ का मुख्य गणधर। हपु० ६०.३४७

(३) कृष्ण के पक्ष का एक नृप। मपु० ७१.७५-७६

(४) श्रीभूति (सत्यघोष) मंत्री का जीव। मपु० ५९.१९६

(५) इस नाम का इन्द्र। यह भगवान् के जन्मोत्सव में उन पर चमर ढोरता है। मपु० ७१.४२

(६) पारिव्राज्य क्रिया के सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। ऐसे तपस्वियों पर जिनेन्द्र पर्याय में चौसठ चमर ढुराये जाते हैं। मपु० ३९.१६४, १८२

(७) अष्ट प्रातिहार्यों में एक प्रातिहार्य। चन्द्रमा के समान जिनेन्द्र पर चौसठ, चक्रवर्ती पर बत्तीस, अर्धचक्री पर सोल्ह, मण्डलेश्वर पर आठ, अर्ध मण्डलेश्वर पर चार, महाराज पर दो और राजा पर एक इस प्रकार चमर ढोरे जाते हैं। मपु० २४.४६, ४८, २३.५०-६०, पपु० ४.२७, वीवच० १५.८-९

चमरचम्पा—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरों में एक नगर। अपरनाम चमर। मपु० १९.७९, ८७, हपु० २२.८५

चमरी—एक विशिष्ट गाय। यह वन में ही पायी जाती है। इसकी पूँछ के बाल सुन्दर और कोमल होते हैं। मपु० १८.८३, २८.४२

चमरेन्द्र—मथुरा नगरी के राजा मधु को शूलरत्न देनेवाला एक असुरेन्द्र। शत्रुघ्न द्वारा राजा मधु के मारे जाने पर अपने शूलरत्न को विफल हुआ देखकर इसने क्रोधवश मथुरा में महामारी रोग फैलाया था। इस उपसर्ग की शान्ति मर्प्तर्षियों के आगमन के प्रभाव से हुई थी। पपु० ९.१२, ९०.१-४, १६-२४, ९२.९

चमू—सेना के आठ भेदों में सातवाँ भेद। तीन पृतनाओं की एक चमू होती है। इसमें सात सौ उनतीस रथ, इतने ही हाथी, तीन हजार छः सौ पैंतालीस पयादे और इतने ही घुड़सवार सैनिक होते थे। पपु० ५६.२-५, ८

चमूपति—सेनापति। यह चक्रवर्ती का एक सजीव रत्न होता है। मपु० ३७.८४

चम्पक—(१) एक वृक्ष। तीर्थंकर मुनिसुव्रत को इसी वृक्ष के नीचे कैवल्य हुआ था। मपु० २०.५६, ६७.४६-४७

(२) कंस का एक हाथी। हपु० ३६.३३

(३) समवसरण में चम्पक वन की दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्थित चम्पकपुर का निवासी एक देव। हपु० ५.४२८

(४) विजयदेव के नगर से पच्चीस योजन दूर स्थित समवसरण के चार वनों में एक वन। मपु० २२.१६३, १८२, १९९-२०४, हपु० ५.४२२

चम्पकपुर—चम्पक वन की दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्थित एक नगर। यह चम्पक देव की निवासभूमि है। हपु० ५.४२८

चम्पा—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी की साठ नगरियों में एक नगरी। यह महावीर की विहारभूमि थी। तीर्थंकर वासुपूज्य यहीं जन्मे थे। यहाँ राजा कर्ण ने शासन किया था। मपु० ५८.१७-२०, ७५, ८२, पपु० २०.४८, हपु० १.८१, ५४-५६, २२.३, ४५.१०५, पापु० ७.२६८-२७७, ११.२५, वीवच० १९.२१८-२३४

चरक—म्लेच्छ जाति का उप भेद। ये वन में रहते थे। मपु० १६.१६१

चरणानुयोग—श्रुत का अनुयोग। इसमें मुनि और श्रावकों की चर्याविधि एवं चारित्रिक शुद्धि का वर्णन रहता है। मपु० २.१००

चरम—हरिवंशी राजा पुलोम का कनिष्ठ पुत्र। यह पौलोम का अनुज था। राजा पुलोम इन्हीं दोनों भाइयों को राज्यलक्ष्मी सौंपकर तप के लिए चला गया था। दोनों भाइयों ने रेवा नदी के तट पर इन्द्रपुर बसाया था। इसने जयन्ती और वनवास्य नगर बसाये थे। इसका पुत्र संजय था जो नीतिवेत्ता था अन्त में इसने मुनि-दीक्षा लेकर कठोर तप किया था। हपु० १७.२५-२८

चरमांग—चरमशरीरी और तद्भव मोक्षगामी जीव। ये जहाँ तप में लीन रहते हैं वहाँ इनके ऊपर से जाते हुए देवों के विमान रुक जाते हैं। मपु० १५.१२६, ७२.४८-४९

चरमोत्तमदेह—चरमशरीरी। इनकी अपमृत्यु नहीं होती। हपु० ३३.९४

चराचरगुरू—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११६

चर्चिका—(१) चौरासी लाख हस्त प्रहेलिका प्रमाण काल। यह संख्यात काल का एक भेद है। हपु० ७.३० दे० काल

(२) ललाट पर चन्दन की खौर। हपु० ८.१७९

चर्मण्वती—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी (चम्बल)। मपु० २९.६४

चर्मरत्न—चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। इस रत्न की सहायता से भरतेश की सेना जल-विप्लव से पार हुई थी। मपु० ३७.८३-८४, १७१

चर्या—(१) गृहस्थों के षट्कर्म जनित हिंसा आदि दोषों की शुद्धि के लिए कथित तीन अंगों—पक्ष, चर्या और साधन में दूसरा अंग। किसी देवता या मंत्र की सिद्धि के लिए तथा औषधि या भोजन बनवाने के लिए किसी जीव की हिंसा न करने की प्रतिज्ञा करना चर्या होती है। इस प्रतिज्ञा में प्रमादवश दोष लग जाने पर प्रायश्चित्त आदि से शुद्धि की जाती है तथा अन्त में अपना सब कौटुम्बिक भार पुत्र को सौंपकर घर का परित्याग किया जाता है। मपु० ३९.१४३-१४८

(२) त्रिशृंग नगर के राजा प्रचण्डवाहन और उसकी रानी विमलप्रभा की नवी पुत्री। इसने और इसकी सभी बहिनो ने युधिष्ठिर को ही अपना पति माना था। बाद में इसके बनवास आदि का समाचार मिलने पर ये सब अणुव्रत धारण करके श्राविका बन गयी थी। हपु० ४५ ९५-९९

चर्या-परीषह—पाद-त्राण की मन, वचन और काय से भी इच्छा न रखते हुए चलने में होनेवाले कष्ट को सहन करना। मपु० ३६ १२०

चल—रावण का एक पराक्रमी नृप। पपु० ५७ ५८

चलद्योति—राम की सेना का एक प्रधान। इसने तथा इसके साथी अन्य प्रधानो ने राक्षस सेना को क्षत-विक्षत कर दिया था। पपु० ७ ७५-७६

चलाग—रावण का एक पराक्रमी योद्धा। पपु० ५७ ५७-५८

चषक—प्याला (कटोरा)। ये भाजनाग जाति के कल्पवृक्षो से प्राप्त होते थे। मपु० ९ ४७

चाणूर—कृष्ण द्वारा हत कस का एक मल्ल। मपु० ७० ४९३, हपु० ३६ ४०, ४३, पापु० ११ ५९

चाण्डाली—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को यह विद्या सिद्ध थी। मपु० ६२ ३९५

चान्द्रायण—एक व्रत। मपु० ६३ १०९ इसमें चन्द्र गति की वृद्धि तथा हानि के क्रम में बढते और घटते ग्रास लिये जाते हैं। अमावस्या के दिन उपवास, अनन्तर प्रतिपदा को एक कवल, द्वितीया के दिन दो कवल, इस प्रकार एक-एक ग्रास बढाते हुए चतुर्दशी के दिन चौदह कवल का आहार पूर्णिमा के दिन उपवास, फिर चन्द्रमा की कलाओ के अनुसार प्रतिदिन एक-एक ग्रास कम करते हुए अन्त में अमावस्या के दिन पुन उपवास किया जाता है। इस प्रकार इकतीस दिन में यह व्रत पूर्ण होता है। हपु० ३४ ९०

चान्द्रीचर्या—मुनि की आहारचर्या जैसे चन्द्रमा धनी और निर्धन सबके यहाँ चाँदनी फैलाता है वैसे ही मुनि भी आहार के लिए निर्धन-धनिक सभी के घर जाता है। वृषभदेव इसी चर्या से आहार लेते थे। मपु० २० ६७-६८, हपु० ९ १४४, १७३

चापरत्न—सीता के स्वयवर में प्रकट हुआ धनुष। पपु० १ ७९

चामर—दे० चमर। मपु० ५ २, १७ १०७

चामीकर यत्र—जलक्रीडा में काम में आनेवाला स्वर्णमय यन्त्र (पिचकारी) मपु० ८ २३

चामुण्ड—सिंहविक्रम के पश्चात् हुआ लका का एक राक्षसवशी नृप। पपु० ५ ३९६

चार—गुप्तचर। ये राजा की आँख होते हैं। मपु० ४ १७०, हपु० ५० ११

चारण—(१) चारण ऋद्धिधारी मुनि। मपु० ९.९६

(२) मेरु के नन्दन वन की दक्षिण दिशा में स्थित एक भवन। हपु० ५ ३१५

चारणचरित—धातकीखण्ड के विदेह क्षेत्र में स्थित गन्धिला देश का एक मनोहर वन। यहाँ पिहितास्रव मुनि का विहार हुआ था। मपु० ६ १२६-१३१

चारणप्रिय—प्रमद वन के सात वनो में पाँचवाँ वन। यह वन पापापहारी है। इसमें चारणऋद्धिधारी मुनिराज स्वाध्याय-रत रहते हैं। पपु० ४६ १४१-१४३, १५०

चारणयुगल—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ सुयोधन नाम का राजा राज्य करता था। मपु० ६७ २१३

चारणोत्तु गकूट—सम्मेदगिरि का उत्तु ग शिखर। मपु० ६९ ९०

चारित्र—आत्मा के हित के लिए किया हुआ आचरण। यह दो प्रकार का होता है—सागार और अनागार। इसमें सागार चारित्र गेहियो के लिए होता है और अनागार चारित्र मुनियों के लिए। पपु० ३३ १२१, ९७ ३८ अनागार चारित्र मोक्ष का साधन है। इसमें समताभाव आवश्यक है। यह जब सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान पूर्वक होता है तभी कार्यकारी है। इनके बिना यह कार्यकारी नही होता। इसके सामायिक छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसापराय और यथाख्यात ये पाँच भेद होते हैं। ईर्यादि पाँच समितियो मन-वचन-काय निरोध कृत त्रिगुप्तियो और क्षुधा आदि परीषहों को सहन करना इसकी भावनाएँ हैं। मपु० २१ ९८, २४ ११९-१२२, हपु० २ १२९, ६४ १५-१९

चारित्रमोह—मोहनीय कर्म का एक भेद। जीव इसके उपशम, क्षय और क्षयोपशम से चारित्र प्राप्त करता है। जो चारित्र धारण नही कर पाते वे सम्यक्त्व के प्रभाव से देवायु का बन्ध करते हैं। जो जीव संयतासयत अर्थात् देश चारित्र को धारण करते हैं वे सौधर्म से लेकर अच्युत स्वर्ग तक के कल्पो में देव होते हैं। हपु० ३ १४५-१४८

चारित्रभावना—पाँच समितियो और तीन गुप्तियो का पालन करना तथा बाईस परीषहो को सहना। मपु० २१ ९८

चारित्र शुद्धि—एक व्रत। इसमें तेरह प्रकार के चारित्र की शुद्धि के लिए निम्न प्रकार से उपवास करने की व्यवस्था है—अहिंसा महाव्रत १२६ उपवास, सत्य महाव्रत ७२ उपवास, अचौर्य महाव्रत ७२ उपवास, ब्रह्मचर्य महाव्रत १८० उपवास, अपरिग्रह महाव्रत २१६ उपवास, रात्रिभोजन त्याग १० उपवास, गुप्ति महाव्रत २७ उपवास, समिति महाव्रत ५३१ उपवास, इस प्रकार इस व्रत में १२३४ उपवास और उतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ १००-१०९

चारित्राचार—तेरह प्रकार के चारित्र का पालन। यह ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन पाँच आचारो में तीसरा आचार है। चारित्राचार में पाँच समितियो, पाँच महाव्रतो और तीन गुप्तियों का पालन आवश्यक होता है। मपु० २० १७३, पापु० २३ ५७

चारित्राराधना—दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप—इन चतुर्विध आराधनाओ में तीसरी आराधना। इसमें पाप कर्मों से निवृत्ति और आत्मा के चैतन्य रूप मे प्रवृत्ति होती है। पापु० १९ २६३-२६६

चारु—(१) एक देश। यहाँ के राजा को अनगलवण और लवणाकुश ने पराजित किया था। पपु० १०१ ८१

(२) कुरुवंशी एक राजा। चारुरूप इसका पुत्र था। हपु० ४५ २३

चारुकृष्ण—(१) कृष्ण का एक पुत्र। हपु० ४८ ७१

(२) अर्धरथ राजाओं में यादवों के पक्ष का एक राजा। हपु० ५० ८३-८५

चारुचन्द्र—चन्दनवन नगर के राजा अमोघदर्शन और उसकी स्त्री चारुमति का पुत्र। इसने एक वेश्या की पुत्री कामपताका के साथ विवाह किया था। हपु० २९ २५, ३०

चारुमित्र—राजा धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का तेईसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९५

चारुणी—(१) विद्याधर श्रीकण्ठ के पुत्र वज्रकण्ठ की भार्या। पपु० ६ १५२

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी की एक नगरी। मपु० १९ ७८

चारुदत्त—(१) शम्भवनाथ का प्रथम गणधर। हपु० ६० ३४६

(२) बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८ ६६

(३) शकुनि का वीर-पराक्रमी भाई। यह कृष्ण का पक्षधर था। इसके पास एक चौथाई अक्षौहिणी सेना थी। हपु० ५० ७२

(४) चम्पा नगरी के एक धनिक वैश्य भानुदत्त और उसकी स्त्री सुभद्रा का पुत्र। यह अपने मामा सर्वार्थ की स्त्री सुमित्रा से उत्पन्न पुत्री मित्रवती से विवाहित हुआ था। चाचा रुद्रदत्त की युक्ति से यह वेश्या कलिंगसेना की पुत्री वसन्तसेना से मिला। दोनों परस्पर आसक्त होकर एक साथ रहने लगे। इसने अपनी सारी सम्पत्ति वसन्तसेना की माँ कलिंगसेना को दे दी। निर्धन होने पर कलिंगसेना ने इसे घर से निकाल दिया। यह व्यापार के लिए रत्नद्वीप गया और वहाँ से बहुत-सा धन लेकर लौटा। हपु० २१ ६-१२७ इसकी गन्धर्व-सेना नामक एक पुत्री थी। वह गन्धर्वशास्त्र में निपुण थी। गन्धर्वसेना का निश्चय था कि जो गन्धर्वशास्त्र में जीतेगा वही उसका पति होगा। वसुदेव ने उसे जीत लिया और इसने अपनी पुत्री का विवाह वसुदेव के साथ कर दिया। मपु० ७० २६७-३०४, हपु० १९ १२२-१२३, २६८

चारुपद्म—कुरुवंशी एक राजा। हपु० ४५ २२

चारुपाद—आगामी उत्सर्पिणी के तीसरे काल में होनेवाले तेईसवें तीर्थंकर देवपाल का जीव। मपु० ७६ ४७४

चारुमति—चन्दनवन नगर के राजा अमोघदर्शन की स्त्री, चारुचन्द्र की जननी। हपु० २९ २४-२५

चारुयान—देव-राक्षस युद्ध में देवसेना का एक प्रधान विद्याधर। इस युद्ध में राक्षस-सेना क्षत-विक्षत हो गयी थी। पपु० ७ ७५-७६

चारुरत्न—कुन्द का पुत्र। इसने इन्द्रजित् के पुत्र वज्रमाली को साथ लेकर लक्ष्मण के मरण से शोकाकुल राम की नगरी अयोध्या पर आक्रमण किया था। इसके कृतान्तवक्त्र और जटायु के जीवों ने जो देव हो गये थे राम की सहायता की जिससे इसे भागना पड़ा। इसे अपने ऐश्वर्य से विरक्ति हो गयी और अन्त में वज्रमाली के साथ रतिवेग नामक मुनि से इसने दीक्षा ले ली। पपु० ११८ २३, २८-३४, ५० ६३, ६६-६७

चारुरूप—कुरुवंशी एक राजा। यह राजा चारु का पुत्र था। हपु० ४५ २३

चारुलक्ष्मी—भीमसेन की पत्नी। यह मेघदल नगर के निवासी मेघ नामक सेठ और उसकी पत्नी अलका की पुत्री थी। हपु० ४६ १५-१६

चारुश्री—सुग्रीव की नवी पुत्री। पपु० ४७ १३६-१४४

चारुषेण—तीर्थंकर शम्भवनाथ के गणधर। मपु० ४९ ४३

चारुहासिनी—वसुदेव की पत्नी। यह भद्रिलपुर नगर के राजा पौण्ड्र की पुत्री थी। इसके पुत्र का नाम भी पौण्ड्र ही था। हपु० १ ८४, २४ ३१-३३

चालन—एक दिव्य औषधि। इससे बँधे हुए व्यक्ति को चलाया जा सकता है। हपु० २१ १८

चित्तवेग—विजयार्ध-दक्षिणश्रेणी के स्वर्णाभनगर का राजा—एक विद्याधर। इसकी अंगारवती नाम की रानी थी। इन दोनों के मानसवेग नाम का पुत्र और वेगवती नाम की एक पुत्री थी। पुत्र को राज्य देकर इसने मुनि-दीक्षा ले ली थी। हपु० २४ ६९-७१

चित्तसुन्दरी—राम के गुणों में अनुरक्त सुग्रीव की छठी पुत्री। यह स्वयंवरण की इच्छा से राम के पास गयी थी पर राम ने उसकी उपेक्षा कर दी थी। पपु० ४७ १३६-१४४

चित्तेन्द्रिय निरोध—मुनियों का एक मूलगुण-पाँच इन्द्रियों तथा मन को वश में करना। हपु० २.१२८

चित्तोत्सवा—चक्रपुर नगर के राजा चक्रध्वज और उसकी रानी मनस्विनी की पुत्री। पुरोहित-पुत्र पिंगल इसे हरकर विदग्धनगर ले गया और वहाँ रहने लगा था। वहाँ इसे नगर का राजा कुण्डलमण्डित भी इसे हर ले गया था। इन अपहरणों से दुःखी यह संसार से विरक्त हो गयी और अन्त में यह तप करके मरी। यह स्वर्ग में देवी हुई। वहाँ से च्युत होकर सीता के रूप में जन्मी। कुण्डलमण्डित भी इसी के साथ गर्भ में आया था और भामण्डल के रूप में जन्मा था। पपु० २६ ४-१८, १११-११२

चित्तोद्भवकरी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३१-३३२

चित्र—(१) नील कुलाचल की दक्षिण दिशा में सीता नदी के पूर्वी तट पर स्थित एक हजार योजन विस्तार से युक्त एक कूट। हपु० ५ १९२

(२) कुरुवंशी एक राजा। हपु० ४५.२७

(३) राजा शान्तनु और योजनगन्धा का पुत्र। विचित्र इसका भाई था। पापु० ७.४६

चित्रक—(१) नन्दन वन की उत्तर दिशा में स्थित एक भवन। यह तीन योजन लम्बा, पचास योजन ऊँचा और ... की परिधि से युक्त था। हपु० ५.३१७-३१९

(२) राजा धृतराष्ट्र का एक पुत्र। हपु० ४८ [illegible]

चित्रकर्म—चित्रकला। इसके दो प्रकार थे। रेखाचित्र और वर्णचित्र। इसमें तीनों आयाम-लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई दिखाये जाते थे। श्रीमती का चित्र इसी प्रकार का था। इसमें हाव, भाव का प्रदर्शन भी बड़ा हृदयहारी था। मपु० ७ १०८-१२०

चित्रकारपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा प्रीतिभद्र था। हपु० २७ ९७

चित्रकूट—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरों में एक नगर। मपु० १९ ५१, ५३, ६३ २०२

(२) पूर्व विदेह का एक वक्षारगिरि। यह नील पर्वत और सीता नदी के मध्य में स्थित है। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२८

(३) वाराणसी का एक सुन्दर उद्यान-पर्वत। राम-लक्ष्मण और सीता यहाँ चार मास पन्द्रह दिन रहे थे। मपु० ६८.१२६, पपु० ३३ ४०

चित्रकेतु—जरासन्ध का पुत्र। इसने यादवों के साथ युद्ध किया था। हपु० ५२ ३०

चित्रगुप्त—आगामी तीसरे काल के सत्रहवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७९, हपु० ६० ५६०

चित्रचूल—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र में स्थित विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर का राजा। इसकी मनोहारी नाम की रानी थी। इन दोनों के सात पुत्र थे और युगल रूप से उत्पन्न गरुडकान्त-सेनकान्त, गरुडध्वज-गरुडवाहन, मणिचूल और हिमचूल। ये छह पुत्र थे। हपु० ३३ १३१-१३३

२. जम्बूद्वीप के सुकच्छ देश में स्थित विजयार्ध पर्वत की उत्तर-श्रेणी के किन्नरगीत नगर का राजा। इसकी पुत्री सुकान्ता इसी श्रेणी के शुक्रप्रभ नगर के राजा इन्द्रदत्त के पुत्र वायुवेग विद्याधर को दी गयी थी। मपु० ६३ ९१-९३

(३) एक विद्याधर। यह अपनी बहिन वसन्तसेना के पास पहुँच-कर बहनोई कनकशान्ति मुनिराज पर पूर्व जन्म के बचे वैर के कारण उपसर्ग करने के लिए तत्पर हो गया था। वह उपसर्ग नहीं कर सका और मुनि को केवलज्ञान हो गया। मुनि से इसने क्षमा मागी। मपु० ६३ १२५-१२८

चित्रपट—चित्र अंकित करने का फलक अथवा वस्त्र। मपु० ८ ११८-१२०

चित्रपाणि—राजा धृतराष्ट्र और रानी गाधारी का तैतीसवा पुत्र। पापु० ४ १९७

चित्रपुर—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। यहाँ का राजा अरिंजय था। मपु० ६२ ६६

चित्रबुद्धि—भरतक्षेत्र के चित्रकारपुर के राजा प्रीतिभद्र का मन्त्री। इसकी कमला नाम की स्त्री और उससे उत्पन्न विचित्रमति नाम का पुत्र था। महापुराण में नगर का नाम चित्रपुर और मन्त्री का नाम चित्रमति दिया है। मपु० ५९ २५५-२५६, हपु० २७ ९७-९८

चित्रमती—साकेत के राजा सहस्रबाहु की रानी। यह कान्यकुब्ज देश के राजा पारत की पुत्री और कृतवीरराधिप की जननी थी। शाण्डिल्य तापस इसका बड़ा भाई था। उसने इसे सर्वनाश होने के भय से अज्ञात रूप से सुबन्धु मुनि के पास स्थानान्तरित कर दिया। उस समय यह गर्भवती थी। इसका पति जमदग्नि के पुत्रों द्वारा मार डाला गया था। इसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। शाण्डिल्य ने इस पुत्र का नाम सुभौम रखा था। मपु० ६५ ५७-५८, ११२-१२५

चित्रमाला—चक्रायुध की स्त्री। चक्रायुध चक्रपुर नगर के राजा अप-राजित और रानी सुन्दरी का पुत्र था। वज्रायुध इसका पुत्र था। मपु० ५९ २४०, हपु० २७ ८९-९०

चित्रमालिनी—राजा प्रभजन की रानी, प्रशान्तमदन की जननी। मपु० १० १५२

चित्रमाली—जरासन्ध का एक पुत्र। इसने यादवों के साथ युद्ध किया था। हपु० ५२ ३१

चित्ररथ—(१) कुरु वंश का एक राजा। यह विचित्रवीर्य का पुत्र और महारथ का पिता था। हपु० ४५ २८

(२) सुराष्ट्र देश के गिरिनगर का राजा। इसकी रानी कनक-मालिनी थी। यह मास-प्रेमी था। इसने सुधर्म नामक मुनिराज से मास खाने के दोष सुने और विरक्त होकर अपने पुत्र मेघरथ को राज्य दे दिया। स्वयं ने तीन सौ राजाओं के साथ दीक्षा ले ली। मपु० ७१ २७०-२७३, हपु० ३३ १५०-१५२

(३) विद्याधर मनोरथ का पुत्र। इसके बन्धुओं ने इसके विवाह के लिए राजा आदित्यगति से प्रभावती की पुत्री रतिप्रभा को माँगा था। मपु० ४६ १८१

(४) सीता के स्वयंवर में सम्मिलित एक राजा। पपु० २८ २१४

चित्रलेखिका—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित श्रुतशोणित नगर के राजा विद्याधर बाण की पुत्री। यह उषा की सखी थी। अनिरुद्ध-कुमार से उषा का सम्बन्ध इसी ने कराया था। हपु० ५५ १६-२४

चित्रवती—पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी। भरत की सेना ने वृत्रवती नदी को पार करके इस नदी को पार किया था। मपु० २९ ५८

चित्रवर्ण—एक धनुष। इसे सहस्रवक्त्र नामक नागकुमार से प्रद्युम्न ने प्राप्त किया था। मपु० ७२ ११५-११६

चित्रवर्मा—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौतीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

चित्रवसु—राजा वसु के दस पुत्रों में दूसरा विजिगीषु पुत्र। हपु० १७ ५८

चित्रवाहन—भविष्यत्कालीन बारह चक्रवर्तियों में दसवा चक्रवर्ती। महापुराण में इसे विचित्रवाहन कहा है। मपु० ७६ ४८३, हपु० ६० ५६३-५६५

चित्रवेगा—एक व्यन्तर देवी। यह पूर्वभव में राजा पुरुदेव की रानी वसुन्धरा की वीतशोका नाम की दासी थी। मपु० ४६ ३५१-३५५

चित्रषेणा—एक व्यन्तर देवी। पूर्वभव में यह चित्रवेगा के साथ की श्रीमती नाम की दासी थी। मपु० ४६ ३५०-३५५

चित्रसेन—(१) कपित्थ वन में दिशागिरि पर्वत पर स्थित वनगिरि नगर के किरातराज हरिविक्रम का एक सेवक। मपु० ७५ ४७८-४८०

(२) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का अट्ठावनवा पुत्र। पापु० ८ २००

चित्रसेना—(१) मगध देश की वत्सा नगरी के निवासी अग्निमित्र ब्राह्मण और उसकी वैश्य जातीय पत्नी की पुत्री। यह अग्निमित्र की ब्राह्मण पत्नी से उत्पन्न शिवभूति की बहिन थी। इसका विवाह इसी नगर के निवासी देवशर्मा ब्राह्मण से हुआ था। विधवा हो जाने से यह अपने पुत्रो के साथ अपने भाई शिवभूति के पास रहने लगी थी। शिवभूति की पत्नी सोमिला को इसका उसके पास रहना रुचिकर न था। सोमिला ने शिवभूति के साथ इसके अनुचित सम्बन्ध होने का दोषारोपण किया जिसमे दुखी हो इसने बदला लेने का निश्चय किया था। सोमिला से द्वेष करने के कारण यह चिरकाल तक ससार में भ्रमण करती रही। अनन्तर मृत्यु होने पर यह कौशाम्बी नगरी में एक वैश्य की पुत्री भद्रा नाम से प्रसिद्ध होकर वृषभसेन की पत्नी हुई। निदान के समय किये गये वैर के फलस्वरूप ही इसे चन्दना की पर्याय में कष्ट भोगने पड़े थे। मपु० ७५.७०-८०, १७५-१७६

(२) अतिबल विद्याधर की रानी। मपु० ४७ १०८-१०९

चित्राग—अर्जुन एक प्रमुख शिष्य। यह रथनूपुर नगर का रहनेवाला था। पापु० १७ ६७

चित्रागद—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३३

(२) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र मे स्थित विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के नृप विद्याधर चित्रचूल और उसकी स्त्री मनोहरी का पुत्र। यह सुभानु का जीव था। युगल रूप से उत्पन्न गरुडकान्त-सेनकान्त, गरुडध्वज-गरुडवाहन, मणिचूल-हिमचूल इसके अनुज थे। ये सातो भाई अति सुन्दर और विद्यावान थे। हपु० ३३ १३१-१३३ महापुराण मे राजा का नाम चन्द्रचूल मिलता है। इसके छोटे भाइयों के नाम भी बदले हुए है। मपु० ७१ २४९-२५२

(३) ऐशान स्वर्ग का एक मनोहर विमान। मपु० ९ १८९

(४) चित्रागद विमान का निवासी एक देव। यहाँ से च्युत होकर यह राजा विभीषण और उसकी रानी प्रियदत्ता का वरदत्त नाम का पुत्र हुआ। मपु० ९ १८९, १० १४९

(५) वानर का जीव। पूर्वभव में यह मनोहर नामक देव था। स्वर्ग से च्युत होकर यह राजा रतिषेण और रानी चन्द्रमती का पुत्र हुआ। मपु० १०.१५१

(६) वाराणसी का राजा। मपु० ४७ ३३१

(७) सौधर्म स्वर्ग का देव, वीरदत्त का जीव। मपु० ७०.६५-७२, १३८

चित्रा—(१) रुचकगिरि के पूर्वदिशावर्ती विमलकूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७१९

(२) रुचकगिरि के दक्षिणदिशावर्ती सुप्रतिष्ठकूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७१०

(३) रत्नप्रभा पृथिवी के खरभाग का प्रथम पटल। यह एक हजार योजन मोटा है। हपु० ४ ५२-५५ दे० खरभाग

(४) एक नक्षत्र, तीर्थंकर पद्मप्रभ तथा अरिष्टनेमि इसी नक्षत्र में जन्मे थे। पपु० २०,४२, ५८, हपु० ३८ ९

(५) तीर्थंकर नेमि की इस नाम की शिविका। मपु० ७१ १६०

(६) मध्यलोक की एक पृथ्वी। यह एक हजार योजन मोटी है। हपु० ४ १२

चित्रादेवी—रुचकवर पर्वत के दक्षिणदिशावर्ती आठ कूटो में आठवें कूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७१०

चित्राम्बर—चन्द्रपुर नगर का राजा, रानी पद्मश्री का पति तथा चन्द्रानन का पिता। पपु० ६ ४०२

चित्रायुध—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का उनचासवाँ पुत्र। पापु० ८.१९९

चित्रोपकरण—तूलिका, पट्ट और रग। चित्रकर्म इन्ही की सहायता से होता था। मपु० ७ १५५ दे० चित्रकर्म

चिन्त—चक्रवर्ती अरनाथ और मल्लिनाथ के बीच हुए नवें चक्रवर्ती महापद्म के पूर्वभव का जीव। सुप्रभ मुनि का शिष्य होकर यह ब्रह्म स्वर्ग में उत्पन्न हुआ। वहाँ से च्युत होकर यह हस्तिनापुर नगर में राजा पद्मरथ और रानी मयूरी का महापद्म नामक पुत्र हुआ। यह नवाँ चक्रवर्ती था। इस पर्याय में इसको आठ पुत्रियाँ हुई थी जिन्हें आठ विद्याधर हरकर ले गये थे। यह उन्हें यद्यपि वापिस ले आया था परन्तु विरक्त होकर इन आठो ने दीक्षा धारण कर ली। वे विद्याधर भी दीक्षित हो गये थे। इस घटना से प्रतिबोध पाकर इसने अपने पुत्र पद्म को राज्य सौंप दिया और विष्णु नामक इसके पुत्र के साथ दीक्षा धारण कर ली। अन्त में केवलज्ञान प्राप्त करके यह ससार से मुक्त हो गया। पपु० २० १७८-१८४

चिन्तागति—(१) पुष्करार्ध द्वीप में गन्धिल देश की विजयार्ध उत्तरश्रेणी में स्थित सूर्यप्रभनगर के राजा सूर्यप्रभ और उनकी रानी धारिणी का ज्येष्ठ पुत्र। यह मनोगति और चपलगति का भाई था। यह नेमिनाथ के सातवें पूर्वभव का जीव था। विजयार्ध उत्तरश्रेणी-स्थित अरिन्दमपुर नगर के राजा अरिंजय और उसकी रानी अजितसेन की पुत्री प्रीतिमती द्वारा गतियुद्ध में अपने दोनो छोटे भाइयो के हराये जाने पर इसने उसे पराजित किया था। प्रीतिमती ने पहले इसके छोटे भाइयो को प्राप्त करने की इच्छा से उनके साथ गतियुद्ध किया था अत. प्रीतिमती को इसने स्वय स्वीकार नही किया। अपने छोटे भाई को माला पहनाने के लिए कहा। प्रीतिमती ने इसके इस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया। प्रीतिमती ने इसे ही माला पहिनाना चाही। जब इसने प्रीतिमती को स्वीकार नही किया तो वह विवृता नामक आर्यिका के पास दीक्षित हो गयी। प्रीतिमती के सयम धारण कर लेने से विरक्त होकर इसने भी अपने भाइयो के साथ दमवर नामक गुरु के पास सयम धारण कर लिया। आठो शुद्धियो को प्राप्त कर अपने दोनो भाइयो सहित यह सामानिक जाति का देव हुआ। मपु० ७० २६-३७, हपु० ३४ १५-३३

(२) प्रतिनारायण अश्वग्रीव का दूत। मपु० ६२ १२४

(३) राक्षसवंश का एक विद्यानुयोग में कुशल राजा। इसने भानुगति से राज्य प्राप्त किया था। पपु० ५ ३९३, ४००-४०१

(५) महालोचन नामक गरुडेन्द्र द्वारा प्रेषित लपा का एक देव। जब रावण के पुत्रों ने सुग्रीव और भामण्डल को नागपाश से बाँध कर निश्चेष्ट कर दिया था तब राम और लक्ष्मण ने गरुडेन्द्र का स्मरण किया। गरुडेन्द्र ने इस देव को भेजा और इसके द्वारा राम को सिंहवाहिनी विद्या तथा लक्ष्मण को गरुडवाहिनी विद्या दी गयी। सुग्रीव और भामण्डल पाश से मुक्त हुए। पपु० ६० १३१-१३५

(५) गन्धर्वपुर के राजा मन्दरमाली और रानी सुन्दरी का विद्याधर पुत्र। यह मनोगति का सहोदर तथा चक्रवर्ती वज्रदन्त का प्रियमित्र था। वज्रदन्त की भार्या लक्ष्मीमती ने सन्देश-पत्र देकर अपने जमाता और पुत्री को बुलाने लिए इसे उनके पास भेजा था। मपु० ८ ८९-९१

चिन्ताजननी—चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में काकिणी रत्न का नाम। यह अजीव रत्न भरतेश के श्रीगृह में प्रकट हुआ। इससे अन्धकार दूर किया जा सकता था। मपु० ३७ ८३-८५, १७३

चिन्तामणि—(१) इष्ट वस्तुओं का पूरक एक एक रत्न। यह चक्रवर्ती की विभूति को सूचित करता है। मपु० २ ३४

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

चिन्तारक्ष—सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २८

चिलात—उत्तर भरतक्षेत्र के मध्य म्लेच्छ खण्ड का एक देश एवं वहाँ का इसी नाम का एक म्लेच्छ राजा। इसने आवर्त नामक म्लेच्छ राजा से मिलकर संयुक्त रूप से भरत चक्रवर्ती का विरोध करने का निश्चय किया था। मन्त्रियों द्वारा रोके जाने पर भी इन दोनों ने नागमुख और मेघमुख देवों का स्मरण किया। ये देव भरतेश की सेना से पराजित हो गये। तब इसने भरतेश की अधीनता स्वीकार कर ली। मपु० ३२ ४६-७७

चिलातिका—वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा अपराजित और युवराज अनन्तवीर्य की नर्तकी। इसी नर्तकी को पाने के लिए शिवमन्दिर नगर के राजा दमितारि ने इन दोनों भाइयों के पास दूत भेजा था। मपु० ६२ ४१२-४१४, ४२९-४४७ पापु० ४ २५२-२७१

चीवर—कमर में लपेटने का परिधान। मपु० ३ १४

चुल्लितापी—भरतक्षेत्र की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना ने विश्राम किया था। मपु० २९ ६५

चूडादेवी—तीर्थंकर नेमिनाथ के तीर्थ में हुए बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त की जननी और ब्रह्मा नामक राजा की रानी। मपु० ७२ २८७-२८८ अपरनाम चूला। पपु० २० १९१-१९२

चूडामणि—(१) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०५

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का छठा नगर। मपु० १९.७८, ८७, हपु० २२ ९१

(३) शिर का आभूषण। मपु० ४.९४, १४८, हपु० ११ १३

(४) नागपुर [हस्तिनापुर] नगर के राजा इभवाहन की स्त्री। पपु० २१ ७८

(५) भरत चक्रवर्ती का चिन्तामणि रत्न। मपु० ३२ ४६, ३७ १७२

चूडारत्न—शिर का आभूषण। मपु० ११ ११३, २९ १६७

चूतपुर—आम्रपुर। यह आम्रवन की पश्चिमोत्तर दिशा में स्थित आम्रदेव का निवास स्थान था। हपु० ५ ४२८

चूतवन—जम्बूद्वीप का आम्रवन। यह विजयदेव नगर से पच्चीस योजन दूर उत्तर में स्थित था। इसके मध्य में आम्र वृक्ष थे, इनका विस्तार जम्बू वृक्ष से आधा था। मपु० ७ १६१, हपु० ५ ४२१-४२४

चूर्णी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ८७

चूला—बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त की जननी। पपु० २० १९१-१९२ दे० चूडादेवी

चूलिक—चूलिका नगरी का राजा। यह विकचा रानी से उत्पन्न कीचक आदि सौ पुत्रों का पिता था। हपु० ४६ २६, पापु० १७ २४५-२४६

चूलिका—(१) एक नगरी। यह कीचक आदि सौ पुत्रों के पिता राजा चूलिक की राजधानी थी। हपु० ४६ २६-२७, पापु० १७ २४५-२४६

(२) अगप्रविष्ट श्रुत के भेदों में दृष्टिवाद अग के परिकर्म आदि पाँच भेदों में पाँचवाँ भेद। यह जलगता, स्थलगता, आकाशगता, रूपगता तथा मायागता के भेद से पाँच प्रकार की होती है। इनमें प्रत्येक भेद के दो करोड़ नौ लाख नवासी हजार दो सौ पाँच पद होते हैं। मपु० ६ १४८, हपु० २ १००, १० ६१, १२३-१२४

चेटक—वैशाली नगरी का राजा। इसकी रानी सुभद्रा थी। इसके दस पुत्र और सात पुत्रियाँ थी। पुत्रों के नाम धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहभद्र, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास थे। पुत्रियों के नाम प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चन्दना थे। इसने पुत्रियों के सम्बन्ध उस समय के प्रसिद्ध राजाओं से किये। मपु० ७५ ३-६९ दूसरे पूर्वभव में यह पलाशनगर में एक विद्याधर था। नागदत्त द्वारा मारे जाने पर पंच नमस्कार मन्त्र की भावना भाता हुआ यह स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर राजा चेटक हुआ। मपु० ७५ १०८-१३२, हपु० २ १७

चेदि—(१) कर्मभूमि के आरम्भिक काल का अभिचन्द्र के द्वारा विन्ध्याचल के पास बसाया गया एक देश। यहाँ वृषभदेव ने विहार किया था। भरत चक्रवर्ती ने इस देश को जीता था। मपु० १६ १४१-१४८, १५५, २५ २८७-२८८, २९ ४१, ५५, ५७, हपु० १७ ३६

(२) चेदि देश के पास का एक पर्वत। भरतेश ने इसे लाँघकर ही चेदि देश को जीता था। मपु० २९ ५५

चेदी—मालव देश का एक भाग। मपु० २९ ४१

चेर—केरल का प्राचीन नाम। मपु० २९ ७९

चेलिनी—वैशाली के राजा चेटक और उसकी भार्या सुभद्रा की पाँचवी पुत्री। चेटक राजा द्वारा बनवाये गये पुत्रियों के चित्रपट को देखकर राजा श्रेणिक इसमें तथा इसकी बहिन ज्येष्ठा में अनुरक्त हो गये थे। राजा श्रेणिक ने उनके लिए राजा चेटक से याचना भी की किन्तु अधिक उम्र देखकर राजा चेटक ने श्रेणिक का यह प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया। यह समाचार मन्त्रियों द्वारा श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार से कहे जाने पर अभयकुमार ने राजा श्रेणिक का एक विलासपूर्ण चित्र बनाया। वह वोद्रक व्यापारी के रूप में इन दोनों कन्याओं के निकट पहुँचा। उसने राजा श्रेणिक का स्वनिर्मित चित्र दिखाकर उन्हें श्रेणिक में आकृष्ट कर लिया और सुरंग मार्ग से उन्हें श्रेणिक के पास लाने में सफल हुआ। चेलिनी नहीं चाहती थी कि ज्येष्ठा श्रेणिक की रानी बने। इसलिए उसने ज्येष्ठा को एक छोड़ा हुआ आभूषण लाने के बहाने लौटा दिया और स्वयं अभयकुमार के साथ श्रेणिक के पास आ गयी थी। राजा श्रेणिक भी इसे पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने इसे विवाह कर अपनी पटरानी बनाया। ठगी गयी ज्येष्ठा ने विरक्त होकर दीक्षा ले ली। मपु० ७५ ३-३४, ७६ ४१, पपु० २ ७१, पापु० १ १३० दे० चेटक

चेल्लकेतन—बकापुर नगर के राजा लोकादित्य का पिता। मपु० प्रशस्ति ३३

चेल्लध्वज—बकापुर नगर के राजा लोकादित्य का अग्रज। मपु० प्रशस्ति ३३

चैतन्य—पञ्चभूतों से भिन्न, ज्ञान-दर्शन स्वरूप-चेतना। मपु० ५ ५०

चैत्य—अकृत्रिम जिन-प्रतिमा। इन प्रतिमाओं के दर्शन का चिन्तन करने से बेला के उपवास का, दर्शन का प्रयत्न की अभिलाषा करने से तेला उपवास का, जाने का आरम्भ करने से चौला उपवास का, जो जाने लगता है वह पाँच उपवास का, जो कुछ दूर पहुँच जाता है वह बारह उपवास का, जो बीच में पहुँच जाता है वह पन्द्रह उपवास का, जो मन्दिर के दर्शन करता है वह मासोपवास का, जो मन्दिर के प्रांगण में प्रवेश करता है वह छः मास के उपवास का, जो द्वार में प्रवेश करता है वह एक वर्ष के उपवास का, जो प्रदक्षिणा देता है वह सौ वर्ष के उपवास का, जो जिनेन्द्र का दर्शन करता है वह हजार वर्ष के उपवास का फल प्राप्त करता है। इन प्रतिमाओं के समीप झारी, कलश, दर्पण, पात्री, शंख, सुप्रतिष्ठक, ध्वजा, धूपनी, दीप, कूर्च, पाटलिका, झाझ, मजीरे आदि अष्ट मंगलद्रव्य और एक सौ आठ अन्य उपकरण रहते हैं। मपु० ५ १९१, पपु० ६ १३, ३२ १७८-१८२, हपु० ५ ३६३-३६५

चैत्यगृह—जिनालय। मपु० ५ १८५

चैत्यपादप—चैत्यवृक्ष। ये समवसरण के चारों वनों में [अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र) होते हैं। ये बहुत ऊँचे, तीन छत्रों सहित, घंटा, अष्ट मंगल-द्रव्य और चारों दिशाओं में जिन-प्रतिमाओं से युक्त होते हैं। प्रकाशवान् इन वृक्षों में सुगन्धित पुष्प होते हैं। इन्द्र इनकी पूजा करता है। मपु० ६ २४, २२ १८८-२०३, वीवच० १४ ११२-११४

चैत्यालय—जिन-मन्दिर। इनके ऊपर आवागमन रूप अविनय करने से विद्याधरों के विमान रुक जाते हैं। पाण्डुक वन के जिनालयों की चारों दिशाओं में चार द्वार होते हैं। दशों दिशाओं में एक सहस्र अस्सी ध्वजाएँ लहराती हैं। इसके आगे एक विशाल सभा मण्डप, उसके आगे प्रेक्षागृह, स्तूप, चैत्यवृक्ष और पर्यंकासन प्रतिमा होती है। इसकी पूर्व दिशा में जलचर जीवों से रहित एक सरोवर रहता है। ये धार्मिक और सामाजिक संस्कृति के केन्द्र रहे हैं। पपु० ५ ३३, हपु० ४ ६१, ५ ३६६-३७२ महापुराण में इसे जिनालय कहा है। मपु० ६ १७९-१९३, ७ २७२-२९०

चैत्रवन—मिथिला के पास का एक उद्यान। यहाँ तीर्थंकर नेमिनाथ दीक्षित हुए थे। मपु० ६९ ५४

चोच—कुरुजांगल देश का एक प्रसिद्ध वृक्ष। इस वृक्ष की जड़ बहुत गहरी होती है। यह बड़े-बड़े फल देता है। इसके पत्ते बहुत सुन्दर होते हैं। मपु० ६३ ३४४

चोरशास्त्र—चौरकर्म का ग्रन्थ। इसमें ऐसे तन्त्रों और मन्त्रों का उल्लेख है जिनको सिद्ध करने से चोरों को अपने चौरकार्य में सफलता मिलती है। प्रसिद्ध विद्युच्चोर ने इसका अध्ययन किया था। मपु० ७६. ५५-५६

चोरी—बिना दिये दूसरे का धन लेना। इसके दो भेद हैं नैसर्गिक और निमित्त। नैसर्गिक चोरी करोड़ों की सम्पदा होने पर भी लोभ कषाय के कारण की जाती है। स्वाभाविक चोर चोरी किये बिना नहीं रह सकता। धन के अभाव के कारण स्त्री-पुत्र आदि के लिए की गयी चोरी निमित्तज होती है। दोनों ही प्रकार की चोरी बन्ध का कारण है। मपु० ५९ १७८-१८६

चोल—(१) मध्य आर्यखण्ड का एक देश। मपु० १६ १५४, २९ ७९, ९४

(२) रावण का एक योद्धा। पपु० ५७ ५८, १०१ ७७

चोलिक—चोल देशवासी। मपु० २९ ९४

चौल—एक संस्कार-मुण्डन कर्म। यह अन्नप्राशन संस्कार के पश्चात् सम्पन्न होता है। मपु० १५ १६४ इस समय निम्न मंत्र बोले जाते हैं—उपनयनमुण्डभागीभव, निर्ग्रन्थमुण्डभागी भव, निष्क्रान्तिमुण्ड-भागी भव, परमनिस्तारककेशभागी भव, परमेन्द्रकेशभागी भव, परम-राज्यकेशभागी भव, आर्हन्त्यकेशभागी भव, । मपु० ४०.१४७-१५१

छ

छत्र—(१) अर्हन्त के अष्ट प्रातिहार्यों में एक प्रातिहार्य। भगवान् की मूर्ति पर तीन छत्र लगाये जाते हैं। वे उनके तीनों लोकों के स्वामित्व को सूचित करते हैं। ये उनकी रत्नत्रय की प्राप्ति के भी सूचक हैं। मपु० २३ ४२-४७, २४ ४६, ५०, पपु० ४ २९, वीवच० १५ ६-७

(२) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। यह वर्षा आदि बाधाओं का निवारक होता है। मपु० ३२ ३१, ३७ ८३-८५, हपु० ११ ३५

(३) पारिव्राज्य सम्बन्धी एक सूत्रपद। ऐसे उपकरणों का त्यागी

मुनि अगले भव में रत्नों से देदीप्यमान तीन छत्रों से शोभित होता है। मपु० ३९.१८१

छत्रच्छाय—महापुर नगर का राजा। इसकी रानी श्रीदत्ता थी। इसी नगर के सेठ मेरु और सेठानी धारिणी के पुत्र पद्मरुचि [धनदत्त का जीव] द्वारा मरणकाल में पंचनमस्कार—मंत्र सुनकर एक बैल अगले जन्म में राजा का पुत्र हुआ। वृषभध्वज उसका नाम था। पपु० १०६ ३८-४८

छत्रपुर—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र का रमणीक नगर। इस नगर का राजा प्रीतिभद्र था। मपु० ५९ २५४

छत्राकारपुर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। यह तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव की राजधानी था। मपु० ७४ २४२, पपु० २०. १६, वीवच० ५ १३४

छद्मस्थ—अल्पज्ञ जीव। ये मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनों प्रकार के होते हैं। सम्यग्दृष्टि सरागी भी होता है और वीतरागी भी। चौथे से दसवें गुणस्थान के जीव सरागी छद्मस्थ और ग्यारह तथा बारहवें गुणस्थान वाले वीतरागी छद्मस्थ होते हैं। मपु० २१ १०, हपु० १०. १०६, ६० ३३६

छद्मस्थकाल—सयम धारण करने के समय से केवलज्ञान उत्पन्न होने तक का काल। वर्तमान तीर्थंकरों का छद्मस्थ काल निम्न प्रकार है-

वृषभनाथ	—	एक हजार वर्ष
अजितनाथ	—	बारह वर्ष
शम्भवनाथ	—	चौदह वर्ष
अभिनन्दन	—	अठारह वर्ष
सुमतिनाथ	—	बीस वर्ष
पद्मप्रभ	—	छ मास
सुपार्श्वनाथ	—	नौ वर्ष
चन्द्रप्रभ	—	तीन मास
पुष्पदन्त	—	चार मास
शीतलनाथ	—	तीन मास
श्रेयासनाथ	—	दो मास
वासुपूज्य	—	एक मास
विमलनाथ	—	तीन मास
अनन्तनाथ	—	दो मास
धर्मनाथ	—	एक मास
शान्तिनाथ	—	सोलह वर्ष
कुन्थुनाथ	—	सोलह वर्ष
अरनाथ	—	सोलह वर्ष
मल्लिनाथ	—	छः दिन
मुनिसुव्रत	—	ग्यारह मास
नमिनाथ	—	नौ वर्ष
नेमिनाथ	—	छप्पन दिन
पार्श्वनाथ	—	चार मास
महावीर	—	बारह वर्ष। हपु० १२ ७९, १६ ६४, ६० ३३६-३४०

छन्दकर्ता—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९

छन्दोविचिति—छन्दशास्त्र। यह अनेक अध्यायों का ग्रन्थ है। इन अध्यायों में प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, लघु, गुरु, यति और अध्वयोग का वर्णन है। वृषभदेव ने अपने पुत्रों को इसकी शिक्षा दी थी। मपु० १६ ११३-११४

छन्दोविद्—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९

छिन्न—अष्टाग निमित्तों में सातवा निमित्त। वस्त्र तथा शस्त्र आदि में किये गये छिद्रों को देखकर निमित्त ज्ञानी फल आदि बताते हैं। यह छिन्न निमित्तज्ञान कहलाता है। मपु० ६२ १८१, १८९, हपु० १० ११७

छेद—(१) अहिंसाणुव्रत का एक अतिचार-कान आदि अवयवों का छेदना। हपु० ५८ १६४

(२) प्रायश्चित का एक भेद—दिन, मास आदि से मुनि की दीक्षा कम कर देना। इसका मुनियों की वरीयता पर प्रभाव पड़ता है। हपु० ६४ ३६

छेदोपस्थापना—चारित्र का एक भेद—अपने प्रमाद द्वारा हुए अनर्थ को दूर करने के लिए की हुई समीचीन प्रतिक्रिया। इसके पाँच भेद होते हैं-ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार। तीर्थंकरों को छेदोपस्थापना की आवश्यकता नहीं होती। मपु० २० १७२-१७३, हपु० ६४ १६

ज

जंघाचारण—एक चारणऋद्धि। इस ऋद्धि से चरण उठाये बिना आकाश में चलना सभव हो जाता है। मपु० २ ७२, पपु० १० १३९

जगच्चूडामणि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०६

जगज्ज्येष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१०३

जगज्ज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४, २०७

जगती—जम्बूद्वीप को चारों ओर से घिरे हुए वज्रमय भित्ति। यह इस द्वीप का अन्तिम अवयव है। यह मूल में बारह योजन, मध्य में आठ योजन, और अग्र भाग में चार योजन चौड़ी है। इसकी ऊँचाई आठ योजन तथा आधा योजन गहरी है। इसका मूलभाग वज्रमय, मध्यभाग विविध रत्नमय और अग्रभाग वैडूर्य मणिमय है। हपु० ५ ३७७-३७९

जगत्—(१) लोक। इसके तीन भेद होते हैं—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। यह परिणमनशील और नित्यानित्यात्मक है। मपु० १ २, २ २०, ११९, ६ १७६, १७ १२, ६३ २९६

(२) सौधर्म युगल का उनतीसवाँ इन्द्रक-पटल। हपु० ६ ४७

जगत्कुसुम—रुचकवर पर्वत का पश्चिम दिशा सम्बन्धी एक कूट। हपु० ५ ७१२

जगत्-त्रय—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। मपु० २.११९

जगत्पति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०४, ११८

जगत्पादगिरि—किष्किन्धा के पास एक पर्वत। यह शिवघोष मुनि की निर्वाण भूमि है। लक्ष्मण ने सात दिन तक निराहार रहकर इसी पर्वत पर प्रज्ञप्ति नाम की विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६८ ४६८-४६९

जगत्पाल—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१७

(२) एक चक्रवर्ती। यह श्रीपाल का पूर्ववर्ती था। मपु० ४७ ९

जगत्स्थामा—भार्गवाचार्य की वंश परम्परा में हुए कपिष्ठल का शिष्य तथा सरवर का गुरू। हपु० ४५ ४६

जगदग्रज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

जगदाविज—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

जगदगर्भ—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १८१

जगद्धित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०८

जगद्धितैषिन्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

जगद्बन्धु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१९५

जगद्बीभत्स—रावण का एक योद्धा। हस्त और प्रहस्त के मारे जाने के बाद यह अनेक योद्धाओं के साथ राम की सेना से लडा था। पपु० ६० २

जगद्भर्तृ—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२

जगद्द्युति—पुष्कर द्वीप में चन्द्रादित्य नगर के राजा प्रकाशयश और उसकी रानी माधवी का पुत्र। यह ससार से भयभीत रहता था। वृद्ध मन्त्री उपदेश देकर बडी कठिनाई से इससे राज्य का सचालन कराते थे। राज्य कार्य में स्थिर रहता हुआ यह सदा मुनियो को आहार देता था। अन्त में यह मरकर देवकुरू भोगभूमि गया और वहाँ से मरकर ऐशान स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ८५.९६-१००

जगज्ज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३४

जगद्विभु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

जगन्नन्दन—(१) राजा महीधर के दीक्षागुरू-एक मुनि। मपु० ७ ३९

(२) एक चारण ऋद्धिधारी मुनि, नाभिनन्दन मुनि के साथी और ज्वलनजटी विद्याधर के दीक्षागुरु। मपु० ६२ ५०, १५८ पापु० ४ १४-१५

जगन्नाडी—लोकनाडी। अपरनाम भरुनाडी। यह एक राजु चौडी, एक राजु मोटी और चौदह राजु ऊँची नाडी है। मपु० २ ५०

जगन्नाथ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

जघन्यपात्र—अविरत सम्यग्दृष्टि। हपु० ७.१०९

जघन्यशातकुम्भ—एक व्रत। इसमें उपवास और पारणाओ का क्रम निम्न प्रकार रहता है—

उपवास	पारणा
५	१
४	१
३	१
२	१
१	१
४	१
३	१
२	१
१	१
४	१
३	१
२	१
१	१
४	१
३	१
२	१
१	१
कुल ४५	१७

हपु० ३४ ७७

जघन्य सिंहनिष्क्रीडित—एक व्रत। इसमें उपवास और पारणाओ का क्रम निम्न प्रकार रहता है—

उपवास	पारणा
१	१
२	१
१	१
२	१
१	१
३	१
२	१
४	१
३	१
५	१
४	१
५	१
५	१
४	१
५	१
३	१
४	१

२	१
३	१
१	१
२	१
१	१
कुल ६०	२० हपु० ३४ ७८

जटाचार्य—आदिपुराण के रचयिता जिनसेन के पूर्ववर्ती आचार्य। इन्होंने वरांगचरित की रचना की थी। इस काव्य में कवि की उक्तियाँ जटिल होने पर भी वे काव्यार्थ को समझने मे बाधक नही है। इनका पूरा नाम जटासिंहनन्दी है। मपु० १ ५०

जटायु—एक गृद्ध पक्षी। गुप्ति और सुगुप्ति चारण मुनियो को देखकर इसे अपने पूर्वभवो का स्मरण हो आया था। यह सम्यग्दृष्टि और विनीत श्रावक था। राम और सीता ने इसका पालन किया था। इसे एक देश रत्नत्रय की प्राप्ति हुई थी। मुनि के वचनो के अनुसार इसने अणुव्रत धारण किये थे। इसकी सुशोभित जटाएँ देखकर राम ने इसे यह नाम दिया था। यह विनीत भाव से जिनेन्द्र की त्रिकाल वन्दना करता था। रावण द्वारा सीता-हरण किये जाने पर इसने डटकर विरोध किया था जिसके फलस्वरूप इसे रावण ने ताडित कर नीचे गिरा दिया था। मरणोन्मुख देखकर राम ने इसके कान में नमस्कार मत्र दिया था जिसके प्रभाव से यह मरकर देव हुआ। इसी देव ने लक्ष्मण के मरने पर राम की विह्वल अवस्था में अयोध्या पर आक्रमणकारियो की सेना को माया से भ्रमित कर सकट का निवारण किया था, तथा इसी ने मृतक बैलो के शरीर पर हल रखकर शिला तल पर बीज बोने और और घानी में बालू पेलने का उद्यम दिखाकर राम से लक्ष्मण का दाह-सस्कार कराया था। इसके पूर्व यह दण्डक देश में कर्णकुण्डल नगर का दण्डक नामक राजा था। इसकी प्रिया परिव्राजको के स्वामी की भक्त थी। राजा ने एक निर्ग्रन्थ मुनि के गले में मरा साँप डाला था तथा मुनि को बहुत समय बाद भी उसी प्रकार ध्यानारूढ देखकर इसने उनसे क्षमा-याचना की थी और उनके सब कष्ट दूर कर दिये थे। परिव्राजको के स्वामी को यह रुचिकर न हुआ अत उसने कृत्रिम निर्ग्रन्थ का रूप धारण कर रानी के साथ सम्पर्क किया। राजा ने कृत्रिम निर्ग्रन्थ मुनि को वास्तविक मुनि जानकर तथा उसकी इस प्रवृत्ति को ज्ञात कर समस्त मुनियो को घानी में पेर डाला था। दैवयोग से बाहर से आ रहे किसी निर्ग्रन्थ मुनि को यह सब विदित होने पर उनकी तत्काल उत्पन्न क्रोधाग्नि के द्वारा समस्त दण्डक देश भस्म हो गया था। यही दण्डक नृप बहुत समय तक ससार भ्रमण करने के पश्चात् गृद्ध-पक्षी की पर्याय को प्राप्त हुआ था। मपु० ४१ १३२-१६६, ४४ ८५-१११, ११८ ५०-१२३

जटिल—भगवान् महावीर के पूर्वभव का मरीचि का जीव। ब्रह्म स्वर्ग से च्युत होकर यह भरतक्षेत्र स्थित साकेत नगरी के निवासी कपिल नामक ब्राह्मण तथा काली नामा ब्राह्मणी का पुत्र हुआ। पूर्व सस्कार के योग से परिव्राजक के मत में स्थिर होकर इसने पहले की भाँति चिरकाल तक उसी मार्ग का उपदेश दिया और मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। दो सागर पर्यन्त यह वहाँ रहा तथा आयु के अन्त में वहाँ से च्युत होकर इसी भरतक्षेत्र के स्थूणागार नामक नगर में भरद्वाज नामक ब्राह्मण और उसकी पुष्पदत्ता स्त्री का पुष्पमित्र नामक पुत्र हुआ। मपु० ७४ ६६-७१, ७६ ५-३४, वीवच० २ १०५-११३

जटी—परिव्राजक। भगवान् वृषभदेव के साथ दीक्षित हुए वे साधु जो उनके मार्ग से च्युत हो गये थे, जिन्होंने शरीर को भस्मावृत कर अपनी जटाएँ बढा ली थी, प्राणो की रक्षा के लिए शीत से पीडित होकर वस्त्ररूप मे वृक्षो की छाल पहिनने लगे थे, स्वच्छ जल और कन्दमूल भक्षण करने लगे थे, वनो में रहने के लिए जिन्होंने कुटियो का निर्माण कर लिया था और फूलो के उपहार से ये भगवान् के चरणो को पूजते थे। वृषभदेव इनके आराध्यदेव थे। मपु० १८ ४९-६०

जठरकौशिक—गगा और गधावती नदियो के सगम-स्थलवाले वृक्षो के मध्य में स्थित तापस-वसति। तापस वसिष्ठ यहाँ पचाग्नि-तप तपा करते थे। मपु० ७० ३२२-३२३

जठराग्नि—शरीर में विद्यमान त्रिविध अग्नि-ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि और जठराग्नि में तीसरी अग्नि। पपु० ११ २४८

जनक—हरिवश में अनेक राजाओ के पश्चात् हुए मिथिला के राजा वासकेतु और उसकी पटरानी विपुला का प्रजा-हितैषी पुत्र। विदेहा इसकी रानी थी। भामण्डल और जानकी युगल रूप में इसी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। इनकी रानी का अपरनाम वसुधा तथा जानकी का अपरनाम सीता था। मपु० ६७ १६६-१६७, पपु० २१ ५२-५५, २६ २, १२१, १६४ सागरबुद्धि निमित्तज्ञानी द्वारा यह बताये जाने पर कि "दशरथ का पुत्र तथा जनक की पुत्री रावण-वध के हेतु हैं" विभीषण ने दशरथ और जनक वध का निश्चय किया था। नारद से यह समाचार ज्ञात कर राजा दशरथ ने समुद्र हृदय मत्री को राज्य सौंप दिया और वह गुप्त वेष में नगर से बाहर निकल गया। दशरथ की कृत्रिम प्रतिमा सिंहासन पर मत्री ने स्थापित कर रखी थी। ऐसा ही जनक के बचाव के लिए भी किया गया। विभीषण ने अपने वधकों से कृत्रिम पुतलो के शिर कटवाकर निज को धन्य माना था। पपु० २३ २५-२६, ३९-४१, ४५, ५४-५६ विद्याधर चन्द्रगति अपने पालित पुत्र भामण्डल के लिए इसकी पुत्री चाहता था। इसी निमित्त से चपलवेग विद्याधर द्वारा छद्म वेष पूर्वक यह हरा जाकर चन्द्रगति विद्याधर के पास ले जाया गया था। जानकी को विषय बनाकर बहुत वाद-विवाद के बाद विद्याधर चन्द्रगति और इसके बीच यह निश्चय किया गया था कि वज्रावर्त धनुष चढाकर ही राम जानकी प्राप्त कर सकेंगे अन्यथा जानकी चन्द्रगति की होगी। ऐसा निश्चय किये जाने पर ही इसे वहाँ से मुक्त किया जा सका था। इस कार्य की अवधि बीस दिन की थी। अवधि के भीतर ही इसने स्वयवर आयोजित किया था। सभी आगत विद्याधरो और पृथिवी के शासको के समक्ष राम ने उक्त धनुष चढ़ाकर इसकी पुत्री जानकी को प्राप्त किया था। पपु० २८ ६१-१७४, १९४, २३४-२३६, २४३ जानकी के साथ युगल

रूप में उत्पन्न इनका पुत्र भामण्डल पूर्व वैर वश एक यक्ष द्वारा हरा जाकर निर्जन वन में छोड़ा गया था। चन्द्रगति ने उसका लालन-पालन किया तथा भामण्डल नाम रखा था। जानकी-परिणय के पश्चात् भामण्डल और जानकी एक दूसरे से परिचित होकर हर्षित हुए। इसे भी असीम हर्ष हुआ था। पपु० २६ १११-१४९, ३० १५५-१५८ आयु के अन्त में मरकर यह आनत स्वर्ग में जहाँ राजा दशरथ, उनकी रानियाँ और भाई कनक सभी मरकर देव हुए थे, यह भी देव हुआ था। पपु० १२३ ८०-८१

जननाभिषव—तीर्थंकरों का जन्माभिषेक। इसे देव सम्पन्न करते हैं। मपु० १३ ३६-१६०, पपु० ८१ २२-२३

जनपद सत्य—दस प्रकार के सत्यों में एक सत्य। आर्य-अनार्य सभी देशों में धर्म, अर्थ काम और मोक्ष का साधक कथन जनपद सत्य होता है। हपु० १० १०४

जनमेजय—चम्पा नगरी का राजा। इसे यहाँ भयकर काल-कल्प राजा से युद्ध करना पड़ा था। पपु० ८ ३०१-३०२

जनवल्लभ—उच्चकुलीन और सदाचारी राजा। इसने भरतेश के साथ दीक्षित होकर मोक्ष प्राप्त किया था। पापु० ८८ १-२,४

जनानन्द—प्रमदवन के चारों और स्थित सात उद्यानों में द्वितीय उद्यान। पपु० ४६ १४३-१४५

जनार्दन—श्रीकृष्ण। हपु० ४३ ७६

जन्मकल्याण—तीर्थंकरों के जन्म का उत्सव। पापु० २ १२६ दे० जन्माभिषेक

जन्मवन्त—आगामी बारह चक्रवर्तियों में तीसरा चक्रवर्ती। हपु० ६०. ५६४

जन्माभिषेक—सौधर्म और ऐशान स्वर्ग के इन्द्रों द्वारा पाण्डुकशिला पर निर्मित सिंहासन पर जिनेन्द्र को विराजमान कर की गयी उनकी अभिषेक क्रिया। असख्य देव क्षीरसागर से जल कलश भरकर सुमेरु पर्वत तक हाथों हाथ लाते हैं। इस समय सौधर्मेन्द्र तीर्थंकर को पूर्वाभिमुख विराजमान करके सोत्साह जलधारा छोड़ता है। अन्य सभी स्वर्गों के इन्द्र स्वर्ण कलशों से अभिषेक करते हैं शेष देव जयध्वनि करते हैं। मपु० १३ ८२-१२१, वीवच० ९ ८-४०

जन्मोत्सव—पुत्र-जन्म के समय आयोजित उत्सव। इस अवसर पर नृत्य-गीत वाद्य आदि के अनेक मनोरजक आयोजन किये जाते हैं। हपु० ४३ ६०

जन्हु—चक्रवर्ती सगर का पुत्र, भागीरथ का पिता। यह रत्नपुर नगर का एक विद्याधर नृप था। इसकी एक पुत्री गगा थी, जिसे इसने पराशर राजा से विवाहा था। पपु० ५ २८४, पापु० ७ ७७-७८

जमदग्नि—राजा सहस्रबाहु के काका शतबिन्दु और उसकी रानी श्रीमती का पुत्र। यह कान्यकुब्ज के राजा पारत का भानजा था। कुमारावस्था में इसकी मा मर गयी थी अत. विरक्त होकर यह तापस हो हो गया था तथा पचाग्नि तप करने लगा था। इसने राजा पारत के पास जाकर उनसे एक कन्या की याचना की थी। राजा पारत भी इसे कन्या देने के लिए सहमत हो गया था किन्तु पारत की सौ पुत्रियों में से किसी एक ने भी तप से दग्ध इसे अर्धदग्ध शव मानकर नहीं चाहा। अन्त मे एक धूलि मे खेलती हुई छोटी सी लड़की के पास गया और उसे केला दिखाकर पूछा कि क्या वह उसे चाहती है। इस प्रश्न के उत्तर में हाँ कहलवाकर इसने राजा से वह लड़की प्राप्त कर ली थी। यह वन की ओर चला गया था। इसने उस लड़की का नाम रेणुकी रखकर उससे विवाह कर लिया था। रेणुकी से इसके इन्द्र और श्वेतराम नामक दो पुत्र हुए। रेणुकी के भाई अरिंजय मुनि ने रेणुकी को सम्यग्दर्शन रूपी धन देते हुए कामधेनु नाम की विद्या और मन्त्र सहित एक फरसा दिया था। जमदग्नि के भाई सहस्रबाहु का पुत्र कृतवीर रेणुकी से कामधेनु विद्या लेना चाहता था जिसे रेणुकी नहीं देना चाहती थी। कृतवीर को बलपूर्वक कामधेनु ले जाते देखकर इसने उसका विरोध किया और विरोध के फलस्वरूप यह कृतवीर के द्वारा मारा गया। मपु० ६५ ५८-६१, ८१-१०६ हपु० २५ ९

जम्बु—जम्बूद्वीप-स्थित विजयार्ध-उत्तरश्रेणी के जाम्बव नगर के राजा विद्याधर जाम्बव और उसकी रानी जम्बुषेणा का पुत्र। यह जाम्बवती का सहोदर था। इसकी बहिन को कृष्ण ने अपनी पटरानी बनाया था। मपु० ७१ ३६८-३६९, ३७३-३८२

जम्बुषेणा—जाम्बव विद्याधर की रानी। मपु० ७१ ३६८-३६९ दे० जम्बु

जम्बू—(१) एक चैत्यवृक्ष। यह तीर्थंकर विमलनाथ का दीक्षावृक्ष था। इसी वृक्ष के कारण इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप हुआ। मपु० ५ १८४, पपु० २० ४९

(२) रत्नपुर नगर निवासी सत्यक ब्राह्मण की स्त्री। इसने अपनी पुत्री सत्यभामा का विवाह कपिल के साथ किया था। मपु० ६२ ३२८-३२९

(३) एक फल (जामुन)। भरत चक्रवर्ती ने इस फल से तथा कपित्थ आदि अन्य फलों से वृषभदेव की पूजा की थी। मपु० १७. २५२

(४) तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के पश्चात् बासठ वर्ष में हुए गौतम आदि तीन श्रुतकेवलियों में अन्तिम श्रुतकेवली। इन तीनों में में सर्वप्रथम इन्द्रभूति (गौतम) गणधर ने वर्धमान जिनेन्द्र के मुख से सुनकर श्रुत को धारण किया। इस श्रुत को गौतम से सुधर्माचार्य ने और फिर उनसे इन्होंने धारण किया। मपु० १ १९९, २ १३८-१४० हपु० १ ६०, वीवच० १ ४१-४२ चम्पा नगरी के सेठ अर्हद्दास की पत्नी जिनदासी के गर्भ में आने पर जिनदासी ने पाँच स्वप्न देखे थे। वे हैं—१ हाथी २ सरोवर ३ चावलों का खेत ४ निर्धूम अग्नि-ज्वाला और ५ देवकुमारों के द्वारा लाये गये जामुन-फल। विपुलाचल पर्वत पर गणधर गौतम के आने का समाचार सुनकर चेलिनी के पुत्र कुणिक के परिवार के साथ ये भी विरक्त हो दीक्षा के लिए उत्सुक हुए, किन्तु भाइयों के साथ दीक्षित होने का आश्वासन पाकर ये घर लौट आये तथा इन्होंने पद्मश्री, कनकश्री,

विनयश्री और रुपश्री कन्याओ के साथ विवाह किया था। विवाह करके भी ये अपनी पत्नियों से आकृष्ट नही हुए। विद्युच्चोर की इनकी माँ से भेंट हुई। इन्हें विरक्ति से राग में लाने हेतु इनकी माँ ने मनचाहा धन देने का आश्वासन दिया। चोर ने इन्हें राग में फँसाना चाहा किन्तु ये उसे ही अपनी ओर आकृष्ट करते रहे स्वय रागी नही बने। माता, पत्नियाँ और विद्युच्चोर सभी शरीर और सासारिक भोगो से विरक्त हो गये और विपुलाचल पर पहुँच कर सुधर्माचार्य गणधर से सयमी हुए। महावीर का निर्वाण होने के बाद ये श्रुतकेवली तथा सुधर्माचार्य के मोक्ष चले जाने पर केवली हुए। इनका भव नाम का एक शिष्य था। वह इनके साथ रहा। ये भिन्न-भिन्न स्थानो में विहार करते हुए चालीस वर्ष तक धर्मोपदेश देते रहे। मपु० ७६ ३१-१२१, ५१८-५१९, हपु० १ ६०

जम्बूद्वीप—(१) दो सूर्यो से विभूषित आद्य द्वीप। हपु० २ १, यह मध्य-लोक के मध्यभाग में स्थित चक्राकार, लवणसमुद्र से आवृत, एक लाख योजन विस्तृत, मेरु पर्वत और चौंतीस क्षेत्रो (विदेह के बत्तीस एक भरत, एक ऐरावत) से युक्त है। मपु० ४ ४८-४९, ५ १८७, पपु० ३ ३२-३३, ३७-३९, हपु० २ १, ५ ४-७, १० १७७ इसमें छः भोगभूमियाँ, आठ जिनालय, अडसठ भवन (चौंतीसो क्षेत्रो में दो-दो (और चौंतीस सिंहासन हैं। भरत और ऐरावत क्षेत्र मे रजतमय दो विजयार्ध पर्वत हैं। इन भोगभूमियों में ही देवकुरु और उत्तरकुरु हैं। इस द्वीप में स्थित भरतक्षेत्र की दक्षिणदिशा में जिनालयो से युक्त राक्षसद्वीप, महाविदेहक्षेत्र की पश्चिम दिशा में किन्नरद्वीप ऐरावत क्षेत्र की उत्तर दिशा में गन्धर्व द्वीप स्थित है। पपु० ३ ४०-४५ इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन तीन कोस एक सौ अट्ठाईस धनुष और साढे तेरह अगुल प्रमाण तथा घनाकार क्षेत्र सात सौ नब्बे करोड छप्पन लाख चौरानवे हजार एक सौ पचास योजन माना गया है। इसमें कुल सात क्षेत्र, एक मेरु, दो कुरु, जम्बू और शाल्मलि नामक दो वृक्ष, छ कुलाचल, कुलाचलो पर स्थित छ महासरोवर, चौदह महानदियाँ, बारह विभगा नदियाँ, बीस वक्षारगिरि, चौंतीस राजधानी, चौंतीस रूप्याचल, चौंतीस वृषभाचल, अडसठ गुहाएँ, चार गोलाकार नाभिगिरि और तीन हजार सात सौ चालीस विद्याधर राजाओ के नगर विद्यमान हैं। भरतक्षेत्र इसके दक्षिण में और ऐरावत क्षेत्र उत्तर में है। हपु० ५ २-१३

(२) सख्यात द्वीप समुद्रो के आगे एक दूसरा जम्बूद्वीप। यहाँ भी देवो के नगर हैं। हपु० ५ १६६

जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति—परिकर्म-दृष्टिवाद श्रुत का एक भेद। इसमें तीन लाख पच्चीस हजार पदो के द्वारा जम्बूद्वीप का सम्पूर्ण वर्णन है। हपु० १० ६२, ६५

जम्बूद्रुम—जम्बूद्वीप के मध्य स्थित (अनादि निधन) वृक्ष (यह पृथिवी-कायिक है वनस्पतिकायिक नही)। मपु० ५ १८४, २२ १८६

जम्बूपुर—विजयार्ध-दक्षिण का एक नगर। यह जाम्बव विद्याधर की निवासभूमि था। हपु० ४४ ४ अपरनाम जाम्बव। मपु० ७१ ३ हपु० ६० ५२

जम्बूमती—(१) दे० जम्बूद्वीप। मपु० ७० ६३, पपु० २.१

(२) भरतक्षेत्र-आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की आयी थी। मपु० २९ ६२

जम्बूमाली—रावण का सामन्त एव पुत्र। यह ससार से विरक्त ह मुनि हो गया। तृणीगति नामक महाशैल (पर्वत) पर इसने त की। मरकर यह अहमिन्द्र हुआ। पपु० ५७ ४७-४८, ६० ३२-८० १३७-१३८

जम्बूवृक्ष—जम्बूद्वीप का एक जिनालयो से युक्त महावृक्ष। इसके निर्मित भवनो में किल्विषक जाति के देवो से आवृत अनावृत नाम देव रहता है। पपु० ३ ३८-३९, ४८ दे० जम्बूद्रुम

जम्बूशकपुर—विजयार्ध-दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में पचासवा नग हपु० २२ १००

जम्बूस्थल—मेरु पर्वत की ऐशान दिशा में सीता नदी के पूर्वी तट पर कुलाचल का निकटवर्ती प्रदेश। हपु० ५ १७२

जय—(१) भगवान् वृषभदेव के एक गणधर। मपु० ४३ ६५

(२) ग्यारह अग और दश पूर्व के ज्ञाता ग्यारह मुनियो में च मुनि। ये महावीर के मोक्ष जाने के एक सौ बासठ वर्ष पश्चात् सौ तेरासी वर्ष के मध्य में हुए थे। मपु० २ १४३, ७६ ५२२, ह १ ६२, वीवच० १ ४५-४७

(३) शलाका-पुरुष एव ग्यारहवा चक्रवर्ती। हपु० ६० २८ वीवच० १८ १०१, ११०

(४) एक नृप। यह राम के पक्ष का अत्यन्त बलवान् योद्धा था पपु० ६० ५८-५९

(५) राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का चौसठवाँ पुत्र। मपु ८ २००

(६) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का इकतालीसवाँ नगर। मपु १९ ८४

(७) नन्दनपुर का राजा। इसने विमलवाहन तीर्थंकर को आहा देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५९.४२-४३

(८) कृष्ण का एक योद्धा एव भाई। मपु० ७१ ७३, हपु ५० ११५

(९) सोमप्रभ राजा का पुत्र जयकुमार। अकम्पन की पुत्री सुलो चना ने इसे पति के रूप में वरण किया था। पापु० ३ ५५-६७

(१०) विद्याधर नमि का कान्तिमान् पुत्र। इसका सक्षिप्त नाम जय था। इसके दस से अधिक भाई थे और दो बहिनें थी। मपु ४३ ५०, हपु० २२ १०८

(११) आगामी इक्कीसवें तीर्थंकर। हपु० ६० ५६१

(१२) तीर्थंकर अनन्तनाथ के प्रथम गणधर। ये सात ऋद्धियो से युक्त तथा शास्त्रो के पारगामी थे। हपु० ६० ३४८

जयकान्त—रावण के आगामी भव का नाम। तब यह कुमारकीर्ति और लक्ष्मी का पुत्र होगा। पपु० १२३, ११२-११९

जयकीर्तन—भरतक्षेत्र में पृथिवीपुर नगर के राजा यशोधर और रानी जया का पुत्र। आगामी दूसरे भव में यही सगर चक्रवर्ती हुआ। पपु० ५ १३८-१३९

जयकीर्ति—आगामी दसवें तीर्थंकर। मपु० ७६,४७८, हपु० ६०.५५९

जयकुमार—कुरुजागल देश में हस्तिनापुर नगर के राजा सोमप्रभ और उसकी रानी लक्ष्मीवती का पुत्र। इसके तेरह भाई थे। कुरु इसका पुत्र था। मपु० ४३ ७४-८०, हपु० ४५ ६-८, ९ २१६, पापु० २ २०७-२०८, २१४ यह चक्री भरत का सेनापति था। भरतेश की दिग्विजय के समय इसने मेघेश्वर नाम के देवो को पराजित करके भरतेश से वीर तथा मेघेश्वर ये दो उपाधियाँ प्राप्त की थी। मपु० ४३ ५१,३१२-३१३, ४४ ३४३, हपु० ११ ३३, पापु० २ २४७ राज्य पाने के बाद इसने एक दिन वन में शीलगुप्त मुनि से धर्म का उपदेश सुना। उस समय एक नाग-युगल ने भी मुनि से धर्म श्रवण किया था। नाग-नागिन में नाग मरकर नागकुमार जाति का देव हुआ। पति-विहीना सर्पिणी को काकोदर नामक विजातीय सर्प के साथ देखकर इसने उसे धिक्कारा और नील कमल से ताडित किया। वे दोनो भागे किन्तु सैनिको ने उन्हें मिट्टी के ढेलो से मारा जिससे काकोदर मरकर गगा नदी में काली नामक जल-देवता हुआ। पश्चाताप से युक्त सर्पिणी मरकर अपने पूर्व पति नागकुमार देव की देवी हुई। इसके कहने से नागदेव इसे काटना चाहता था किन्तु जयकुमार द्वारा अपनी स्त्री से कहे गये सर्पिणी के दुराचार को सुनकर नाग का मन बदल गया। उसने इसकी (जयकुमार की) पूजा की तथा आवश्यकता पडने पर स्मरण करने के लिए कहकर वह अपने स्थान पर चला गया। मपु० ४३ ८७, ११८ राजा अकम्पन की पुत्री सुलोचना ने स्वयवर में इसी का वरण किया था। सुलोचना के वरमाला के प्रसग को लेकर भरत के पुत्र अर्ककीर्ति ने इससे युद्ध किया। इसने उसे नाग-पाश से बाँध लिया। इसकी इस विजय पर स्वर्ग से पुष्पवृष्टि हुई। मपु० ४३ ३२६-३२९, ४४ ७१-७२, ३४४-३४६ अकम्पन ने अपनी दूसरी पुत्री लक्ष्मीमती अर्ककीर्ति को देकर इसकी उससे सन्धि करा दी। म्लेच्छ राजाओ को जीतकर नाभि पर्वत पर भरतेश का कीर्तिमय नाम इसी ने स्थापित किया था। अपशकुन होने पर भी सुलोचना सहित यह अपना हाथी गगा मे ले गया। पूर्व वैर वश काली देवी ने इसके हाथी को मगर का रूप धरकर पकड लिया। सुलोचना ने इस उपसर्ग के निवारण होने तक आहार और शरीर-मोह का त्याग कर पच नमस्कार का स्मरण किया था। फलस्वरूप गगा देवी ने आकर इसकी रक्षा की। मपु० ४५ ११-३०, ५८, १३९-१५२ जयकुमार और सुलोचना दोनो साम्राज्य सुख का उपभोग करते हुए जीवन व्यतीत करने लगे। तभी उन्हें प्रज्ञप्ति आदि विद्याएँ भी प्राप्त हो गयी। उन विद्याओ के प्राप्त होते ही उनके मन में देवो के योग्य देशो में विहार करने की इच्छा उत्पन्न हुई। जयकुमार ने अपने छोटे भाई विजय को राज्य-कार्य में नियुक्त कर दिया। वे दोनों कुलाचलो के मनोहर वनो में विहार करते हुए कैलाश पर्वत के वन में पहुँचे। वहाँ जब किसी कारणवश यह सुलोचना से दूर हो गया तब उसके शील की परीक्षा लेने के लिए रविप्रभ देव के द्वारा भेजी गयी काचना देवी ने उसे शील से डिगाने के अनेक प्रयत्न किये। पर वह सफल नहीं हो सकी। अपनी असफलता से क्रोध दिखाते हुए उसने राक्षसी का रूप धारण किया और उसे उठा ले जाना चाहा। उसी समय सुलोचना वहाँ आ गयी और उसके ललकारने से देवी तुरन्त अदृश्य हो गयी। रविप्रभ देव वहाँ आ गया और उसने सारा वृत्तान्त कहकर जयकुमार से क्षमा माँगी। जयकुमार सुलोचना के साथ वन विहार करते हुए अपने नगर में आ गया। मपु० ४७ २५६-२७३, पापु० ३ २६१-२७१ सासारिक भोग भोगते हुए जयकुमार के मन मे वैराग्य भावना का उदय हुआ। अन्त में परमपद प्राप्त करने की कामना से इसने विजय, जयन्त और सजयन्त नामक अनुजो तथा रविकीर्ति, रिपुजय, अरिन्दम, अरिंजय, सुजय, सुकान्त, अजितजय, महाजय, अतिवीर्य, वीरजय, रविवीर्य आदि पुत्रो के साथ वृषभदेव से दीक्षा ले ली। यह वृषभदेव का इकहत्तरवाँ गणधर हुआ। मपु० ४७ २७९-२८६, हपु० १२ ४७, ४९, पापु० ३ २७३-२७६ इनके साथ एक सौ आठ राजाओ ने दीक्षा धारण की थी। हपु० १२ ५० इसकी पत्नी सुलोचना ने भी चक्रवर्ती भरत की पत्नी सुभद्रा के साथ ब्राह्मी आर्यिका के समीप दीक्षा ले ली तथा तपश्चरण कर अच्युत स्वर्ग के अनुत्तर विमान में देव हुई। पापु० ३ १७७-२७८ जयकुमार घाति कर्मों का विनाश कर केवली हुआ और अघाति कर्म नष्ट करके मोक्ष को प्राप्त हुआ। पापु० ३.२८३ चौथे पूर्वभव में यह अशोक का पुत्र सुकान्त था और सुलोचना उसकी पत्नी रतिवेगा थी। तीसरे पूर्वभव में ये दोनो रतिवर और रतिषेणा नामक कबूतर और कबूतरी हुए। दूसरे पूर्वभव में यह हिरण्यवर्मा नामक विद्याधर और सुलोचना प्रभावती विद्याधरी हुई। पहले पूर्वभव में ये दोनो देव और देवी हुए। मपु० ४६ ८८, १०६, १४५-१४६, २५०-२५२, ३६८

जयगिरि—जीवन्धरकुमार का गन्धगज। इस गज पर बैठकर जीवन्धर कुमार काष्ठागारिक के पुत्र कालागारिक से लडने गया था। मपु० ७५ ३४०-३४१

जयगुप्त—एक निमित्तज्ञानी। इसी से महाराज प्रजापति ने जान लिया था कि त्रिपृष्ठ ही स्वयप्रभा का पति होगा। मपु० ६२.९८, २५३

जयचन्द्रा—सूर्योदय नगर के राजा शक्रधनु और उसकी रानी धी की पुत्री। यह हरिषेण से विवाहित हुई थी। पपु० ८ ३६२-३६३,३७१

जयतुरग—जयकुमार का अश्व। इसी अश्व पर चढकर जयकुमार ने अर्ककीर्ति से युद्ध किया था और विजय प्राप्त की थी। मपु० ४४. १६४

जयदत्ता—धनजय वणिक् की पुत्री। यह श्रेष्ठी सर्वदयित की दूसरी पत्नी थी। मपु० ४७ १९३-१९४

जयदेव—मगध देश के शाल्मलीखण्ड ग्राम का एक सेठ। इसकी पत्नी देविला और उससे उत्पन्न पुत्री पद्मदेवी थी। हपु० ६०.१०८-१०९

जयदेवी—(१) शिवमन्दिर नगर के स्वामी कनकपुख की रानी, दमितारि की जननी। मपु० ६२ ४८८-४८९

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित मन्दारनगर के राजा शख की रानी, पृथिवीतिलका की जननी। मपु० ६३ १७०

जयद्रथ—(१) घातकीखण्ड द्वीप में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा जयन्धर और उसकी रानी जयवती का पुत्र। यह जीवन्धर के तीसरे पूर्वभव का जीव था। इसने कौतुकवश एक हस के बच्चे को पकड लिया था किन्तु अपनी माता के कुपित होने पर सोलहवें दिन इसने उसे छोड भी दिया था। जीवन्धर की पर्याय में इसी कारण सोलह वर्ष तक भाई-बन्धुओ से इसका वियोग हुआ था। मपु० ७५ ५३३-५४८

(२) जरासन्ध का एक योद्धा। जयार्द्रकुमार इसका दूसरा नाम था। इसने कौरवो की ओर से पाण्डवो के साथ युद्ध किया था। इसके रथ के घोडे लाल रग के थे। ध्वजाएँ शूकरो से अकित थी। द्रोणाचार्य के यह कहने पर कि अभिमन्यु को सब वीर मिलकर मारें इसने न्याय क्रम का उल्लघन कर अभिमन्यु का वध किया था। पुत्रवध से दु खी होकर अर्जुन ने शासन देवी से धनुष बाण प्राप्त किये तथा युद्ध में उनसे इसका मस्तक काट कर वन में तप कर रहे इसके पिता के हाथ की अजलि में फेंक दिया था। मपु० ७१ ७८, पापु० १९ ५३, १७६, २० ३०-३१, १७३-१७५

जयधाम—भोगपुर नगर का निवासी एक विद्याधर। यह सेठ सर्वदयित का मित्र था। इसने समुद्रदत्त के पुत्र का लालन-पालन किया था तथा उसका नाम जितशत्रु रखा। मपु० ४७ २०३-२११

जयन्त—(१) जम्बूद्वीप में पश्चिम विदेहक्षेत्र के गन्धमालिनी देश की वीतशोका नगरी के राजा वैजयन्त और उसकी रानी सर्वश्री का पुत्र। यह सजयन्त का अनुज था। इसने पिता और भाई के साथ स्वयम्भू तीर्थंकर से दीक्षा ले ली थी। पिता को केवलज्ञान होने पर उसकी वन्दना के लिए आये धरणेन्द्र को देखकर मुनि अवस्था में ही इसने धरणेन्द्र होने का निदान किया जिससे मरकर यह धरणेन्द्र हुआ। यह अपने भाई सजयन्त के उपसर्गकारी विद्युद्दष्ट्र को समुद्र में गिराना चाहता था किन्तु आदित्याभ देव के समझाने से यह ऐसा नही कर सका था। मपु० ५९ १०९-११५, १३१-१४३, हपु० २७ ५-९

(२) दुर्जय नामक वन से युक्त एक गिरि। प्रद्युम्न को यहाँ ही विद्याधर वायु की पुत्री रति प्राप्त हुई थी। हपु० ४७ ४३

(३) एक अनुत्तर विमान। यह नव ग्रैवेयको के ऊपर वर्तमान है। मपु० ७० ५९, पपु० १०५ १७०-१७१, हपु० ६ ६५, ३४ १५०

(४) तीर्थंकर मल्लिनाथ द्वारा दीक्षा के समय व्यवहृत यान। मपु० ६६ ४६-४७

(५) आकाशस्फटिक मणि से बने समवसरण भूमि के तीसरे कोट में पश्चिमी द्वार के आठ नामो में प्रथम नाम। हपु० ५७ ५९

(६) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का पन्द्रहवाँ नगर। हपु० २२ ८७

(७) जम्बूद्वीप की जगती के चार द्वारो में एक द्वार। हपु० ५ ३९०

(८) इन्द्र विद्याधर का पुत्र। इसने भयकर युद्ध में श्रीमाली का वध किया था। पपु० १२ २२४-२४२

(९) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और उसकी रानी श्रीकान्ता का पुत्र, वज्रनाभि का सहोदर। मपु० १० ९-१०

(१०) जयकुमार का अनुज। इसने जयकुमार के साथ ही दीक्षा ली थी। मपु० ४७ २८०-२८३

(११) घातकीखण्ड के ऐरावत क्षेत्र में तिलकनगर के राजा अभयघोष और रानी स्वर्णतिलका का पुत्र। यह विजय का अनुज था। मपु० ६३ १६८-१६९

जयन्तपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। मपु० ७१ ४५२, हपु० ८० ११७

जयन्ती—(१) एक मन्त्र परिष्कृत विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२.७०-७३

(२) राजा चरम द्वारा रेवा नदी के तट पर बसायी गयी एक नगरी। हपु० १७ २७

(३) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी की इकतीसवी नगरी। मपु० १९ ५०, ५३

(४) मथुरा नगरी के राजा मधु की महादेवी। पपु० ८९ ५०-५१

(५) नन्दीश्वर द्वीप के दक्षिण दिशा सम्बन्धी अजनगिरि की पश्चिम दिशा में स्थित वापी। हपु० ५ ६६०

(६) रुचकवरगिरि के सर्वरत्न कूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७२६

(७) रुचकवरगिरि के कनककूट की निवासिनी एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०५

(८) विदेहक्षेत्र के महावप्र देश की मुख्य नगरी। मपु० ६३ २११, २१६, हपु० ५ २५१, २६३

जयन्धर—घातकीखण्ड द्वीप के पूर्वमेरु सम्बन्धी पूर्व विदेह क्षेत्रस्थ पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम जयवती और पुत्र का नाक जयद्रथ था। मपु० ७५ ५३३-५३४

जयपाल—महावीर के निर्वाण के तीन सौ पैंतालीस वर्ष पश्चात् दो सौ बीस वर्ष के अन्तराल में हुए ग्यारह अगधारी पाँच मुनीश्वरों में दूसरे मुनि। मपु० २ १४६, ७६ ५२०-५२५, वीवच० १ ४१-४९

जयपुर—शालगुहा और भद्रिलपुर के मध्य में स्थित एक नगर। वसुदेव ने यहाँ के राजा की पुत्री को विवाहा था। हपु० २४ ३०

जयप्रभ—लक्ष्मण का जीव। यह स्वर्ग से चयकर विजयावती के राजा कुमारकीर्ति और उसकी रानी लक्ष्मी का पुत्र होगा। पपु० १२३. ११२, ११९

जयबाहु—भगवान् महावीर के निर्वाण के पाँच सौ पैंसठ वर्ष बाद एक सौ अठारह वर्ष के काल में हुए आचाराग के धारी प्रसिद्ध चार मुनियो में दूसरे मुनि। हपु० ६६ २४

जयभामा—भोगपुर निवासी विद्याधर जयधाम की स्त्री। इस दम्पति ने समुद्रदत्त के पुत्र और सर्वदयित के भानजे का पालन किया था तथा उसका जितशत्रु नाम रखा था। मपु० ४७ २१०-२११

जयमित्र—(१) विद्याधरो का एक राजा। यह सिंहरथारोही होकर राम की ओर से रावण से लडा था। पपु० ५८ ३-७

(२) प्रभापुर नगर के राजा श्रीनन्दन और उसकी रानी धरणी का

पुत्र। यह सप्तर्षियों में सातवाँ ऋषि था। मथुरा में चमरेन्द्र द्वारा फैलायी गयी महामारी इसी के प्रभाव से शान्त हुई थी। पपु० ९२ १-१४

जयराज—कुरुजांगल देश के हस्तिनापुर नगर का एक कुरुवंशी राजा। यह महाराज के पश्चात् राजा हुआ था। हपु० ४५ १५

जयरामा—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित काकन्दी नगरी के राजा सुग्रीव की भार्या। यह तीर्थंकर पुष्पदन्त की जननी थी। मपु० ५५ २३-२८

जयवती—(१) सुरम्य देश में श्रीपुर नगर के राजा श्रीधर और उसकी रानी श्रीमती की पुत्री। इसका विवाह श्रीपाल से हुआ था। इसका पुत्र गुणपाल था जिसका विवाह जयवर्मा नामक इसी के भाई की पुत्री जयसेना के साथ हुआ था। मपु० ४७ १७०-१७६

(२) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा जयन्धर की रानी। यह जयद्रथ की जननी थी। मपु० ७५ ५३३-५३४ दे० जयद्रथ

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी द्वारवती नगरी के राजा सोमप्रभ की रानी, बलभद्र सुप्रभ की जननी। मपु० ६० ४९,६३

जयवराह—पश्चिम के सौराष्ट्र देश का राजा। इसी के राज्यकाल में संवत् सात सौ पाँच में श्री जिनसेनाचार्य ने हरिवंशपुराण लिखना आरम्भ किया था। हपु० ६६ ५२-५३

जयवर्मा—(१) विदेहस्थ गन्धिल देश के सिंहपुर नगर के राजा श्रीषेण का ज्येष्ठ पुत्र। पिता के द्वारा छोटे भाई को राज्य दिये जाने के कारण विरक्त होकर इसने स्वयंप्रभ गुरु से दीक्षा ले ली थी। आकाश से महीधर नामक विद्याधर को जाते देखकर इसने विद्याधरों के भोगों की प्राप्ति का निदान किया था और उसी समय सर्पदंश के निमित्त से मरकर पूर्वकृत निदानवश महाबल नाम का विद्याधर हुआ था। मपु० ५ २०४-२११

(२) अयोध्या नगर का राजा। यह रानी सुप्रभा का पति और अजितंजय का पिता था। इसने अभिनन्दन नामक मुनि से दीक्षा ली थी तथा आचाम्लवर्धन नामक तप से कर्मबन्धन से मुक्त होकर अविनाशी परमपद प्राप्त किया था। मपु० ४४ १०६-१०७

(३) राजा जयकुमार के पक्ष का एक मुकुटबद्ध भूपाल। यह श्रीपाल की पत्नी जयावती का भाई और जयसेना का पिता था। इसने जयकुमार की ससैन्य सहायता की थी। मपु० ४७ १७४, ४४ १०६-१०७, पापु० ३ ९४-९५

जयवान्—सप्तर्षियों में पाँचवें ऋषि। पपु० ९२ १-१४ दे० जयमित्र

जयबाहु—भगवान् महावीर के निर्वाण के पाँच सौ पैंसठ वर्ष बाद एक सौ अठारह वर्ष के काल में हुए आचारांग धारी चार मुनियों में तीसरे मुनि, अपरनाम यशोबाहु। हपु० ६६ २४, वीवच० १ ४१-५०

जयश्यामा—(१) काम्पिल्यपुरी के राजा कृतवर्मा की महादेवी। यह तीर्थंकर विमलनाथ की जननी थी। मपु० ५९.१४-१५, २१

(२) अयोध्या नगरी के इक्ष्वाकुवंशी-काश्यपगोत्री राजा सिंहसेन की रानी। यह तीर्थंकर अनन्तनाथ की जननी थी। मपु० ६०. २१-२२

जयसेन—(१) वीरसेन भट्टारक के बाद महापुराण के कर्त्ता जिनसेनाचार्य के पूर्व हुए एक आचार्य। ये तपस्वी और शास्त्रज्ञ थे। इन्होंने समस्त पुराण का संग्रह किया था। मपु० १ ५७-५९

(२) हरिवंशपुराण के कर्त्ता जिनसेन के पूर्व तथा शान्तिसेन आचार्य के पश्चात् हुए एक आचार्य। ये अखण्ड मर्यादा के धारक, षट्खण्डागम के ज्ञाता, इन्द्रियजयी तथा कर्मप्रकृति और श्रुत के धारक थे। हपु० ६६ २९-३०

(३) राजा समुद्रविजय का पुत्र। हपु० ४८ ४३

(४) साकेत का स्वामी। भगवान् पार्श्वनाथ के कुमारकाल के तीस वर्ष बीत जाने पर इसने भगली देश में उत्पन्न घोड़े भेंट में देने के लिए एक दूत पार्श्वनाथ के पास भेजा था। साकेत से आये दूत से पार्श्वनाथ ने वृषभदेव का वर्णन सुनकर अपने पूर्वभव जान लिये थे। हपु० ७३ ११९-१२४

(५) मगधदेश के सुप्रतिष्ठनगर का राजा। मपु० ७६ २१७

(६) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश में पृथिवीनगर का राजा। यह जयसेना का पति तथा रतिषेण और धृतिषेण का पिता था। अपने प्रिय पुत्र रतिषेण की मृत्यु से दुःखी होते हुए संसार से विरक्त होकर इसने धृतिषेण को राज्य दे दिया और अनेक राजाओं तथा महारुत नामक साले के साथ यशोधर गुरु से यह दीक्षित हो गया। आयु के अन्त में संन्यासमरण कर अच्युत स्वर्ग में महाबल नामक देव हुआ। मपु० ४८ ५८-६८

(७) मध्यलोक के धातकीखण्ड महाद्वीप के पूर्व मेरु से पश्चिम दिशा की ओर स्थित विदेहक्षेत्र के गन्धिल देश में पाटलि ग्राम के निवासी नागदत्त वैश्य और उसकी स्त्री सुमति का कनिष्ठ पुत्र। नन्द, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, वरसेन इसके बड़े भाई और मदनकान्ता तथा श्रीकान्ता बहिनें थीं। विदेहक्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त की पुत्री श्रीमती पूर्वभव में इसी की निर्नामा नाम की छोटी पुत्री हुई थी। मपु० ६ ५८-६०, १२६-१३०

(८) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा महासेन और रानी वसुन्धरा का पुत्र। अनुक्रम से यह चक्रवर्ती हुआ तथा चिरकाल तक प्रजानन्दक शासन करने के बाद भोगों से विरक्त होकर इसने जिनदीक्षा धारण कर ली। निर्दोष तपश्चरण करते हुए आयु के अन्त में मरकर यह आठवें ग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ७ ४८-८९

(९) पूर्व विदेहक्षेत्र के मंगलावती देश में रत्नसंचयपुर के राजा महीधर तथा उसकी रानी सुन्दरी का पुत्र। जिस समय इसका विवाह हो रहा था उसी समय श्रीधर देव ने आकर इसे विषयासक्ति के दोष बताये जिससे विरक्त होकर इसने मुनि से दीक्षा ले ली। श्रीधर देव ने फिर एक बार नरक वेदनाओं का स्मरण कराया जिससे यह कठिन तपश्चरण करने लगा। आयु के अन्त में समाधिपूर्वक प्राण छोड़कर यह ब्रह्म स्वर्ग में इन्द्र हुआ। इस जन्म से पूर्व यह नरक में था जहाँ श्रीधर देव के द्वारा समझाये जाने पर इसने सम्यग्दर्शन धारण कर लिया था। मपु० १० ११३-११८

(१०) नमिनाथ तीर्थंकर के तीर्थ में वत्स देश की कौशाम्बी नगरी के राजा विजय और उसकी रानी प्रभाकरी का पुत्र। इसकी आयु तीन हजार वर्ष, ऊँचाई साठ हाथ और शारीरिक कान्ति तप्त स्वर्ण के समान थी। चौदह रत्न और नव निधियों सहित इसे अनेक प्रकार के भोगोपभोग उपलब्ध थे। यह ग्यारहवाँ चक्रवर्ती था। उल्कापात देखकर इसने राज्य त्यागने का निश्चय किया, तथा क्रमश- बड़े पुत्रों को राज्य देने की इच्छा प्रकट की। उनके राज्य न लेने पर तप धारण करने की उदात्त इच्छा से छोटे पुत्र को राज्य सौंपकर अनेक राजाओं के साथ वरदत्त केवली से इसने संयम धारण कर लिया था। इसे कुछ ही काल में श्रुतबुद्धि, तपविक्रिया, औषध और चारण ऋद्धियाँ प्राप्त हो गयी। अन्त में सम्मेदशिखर के चारण नामक ऊँचे शिखर पर प्रायोपगमन संन्यास धारण कर यह मरा और जयन्त नामक अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ६९ ७८-९१ इसने तीन सौ वर्ष कुमार अवस्था में और इतने ही वर्ष मण्डलीक अवस्था में तथा सौ वर्ष दिग्विजय में एक हजार नौ सौ वर्ष चक्रवर्ती होकर राज्य अवस्था में और चार सौ वर्ष संयम अवस्था में व्यतीत किये थे। हपु० ६० ५१४

(११) वृषभदेव के गणधर वृषभसेन का यह छोटा भाई था। यह अत्यन्त बलवान् राजा था। पूर्वभवों में पहले यह लोलुप नाम का हलवाई था। फिर क्रमश नेवला, भोगभूमि का आर्य, मनोरथ नामक देव, राजा शान्तमदन, सामानिक देव, राजा अपराजित और अहमिन्द्र हुआ। मपु० ४७.३७६-३७७

जयसेना—(१) धातकीखण्ड में विदेह क्षेत्रस्थ पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा धनंजय की रानी। यह बलभद्र महाबल की जननी थी। मपु० ७ ८०-८२

(२) सागरसेन की पुत्री। यह विदेहक्षेत्रस्थ पुण्डरीकिणी नगरी के वैश्य सर्वदयित की पहली भार्या थी। मपु० ४७ १९३-१९४

(३) जयावती के भाई जयवर्मा की पुत्री। श्रीपाल और जयावती के पुत्र गुणपाल से इसका विवाह हुआ था। मपु० ४७ १७२, १७४-१७६

(४) जम्बूद्वीप पूर्व विदेह के वत्सकावती देश में पृथिवी नगर के राजा जयसेन की रानी। यह रतिषेण की जननी थी। मपु० ४८ ५८-५९

(५) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा नन्दन की रानी। यह विजयभद्र की जननी थी। मपु० ६२ ७५-७६

(६) गन्धोत्कार नगर के स्वामी विद्याधर मरुद्वेग की रानी। यह वसन्तसेना की माता थी। मपु० ६३ ११८-११९

जयांगण—समवसरण की वापिकाओं के आगे का मनोरम स्थान। यह एक कोस लम्बा और एक योजन चौड़ा है। इसकी भूमि रत्नचूर्ण से निर्मित है। यहाँ अनेक भवन और मण्डप हैं। मण्डपों में अनेक कथाओं के चित्र हैं। इसके मध्य में सुवर्णमय पीठ पर इन्द्रध्वज लगाया है। हपु० ५७ ७५-८५

जया—(१) मन्त्र-परिष्कृत एक विद्या। यह धरणेन्द्र से नमि और विनमि को मिली थी। इस विद्या को रावण ने भी सिद्ध किया था। पपु० ७ ३३०-३३२, हपु० २२ ७०

(२) समवसरण की चार वापियों में तीसरी वापी। इसमें स्नान करनेवाले जीव अपना पूर्वभव जान जाते है। ये वापियाँ सदैव जल से भरी रहती हैं। हपु० ५७ ७३-७४

(३) भरतक्षेत्र में पृथिवीपुर नगर के राजा यशोधर की रानी। यह जयकीर्तन की जननी थी। पपु० ५ १३८

(४) चम्पापुरी के राजा वसुपूज्य की रानी। यह तीर्थंकर वासुपूज्य की जननी थी। पपु० २० ४८ इसका दूसरा नाम जयावती था। मपु० ५८ १७-२०

जयाचार्य—अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु के पश्चात् एक सौ तेरासी वर्ष की अवधि में हुए दशपूर्वधारी, द्वादशांग का अर्थ कहने में कुशल, भव्यजनों के लिए कल्पवृक्ष, जैनधर्म के प्रकाशक ग्यारह आचार्यों में चतुर्थ आचार्य। मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२१-५२४

जयाजिर—समवसरण की वापिकाओं के आगे का सुशोभित जयांगण। हपु० ५० ७५-७९, ८३-८५ दे० जयांगण

जयावती—(१) श्रीपाल की पत्नी। इससे गुणपाल नाम का पुत्र हुआ। मपु० ४७ ७०

(२) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र में सुरम्य देश के पोदनपुर नगर के राजा प्रजापति की रानी, प्रथम बलभद्र विजय की जननी। मपु० ५७ ८४-८९, ७४ १२०-१२१, वीवच० ३.६१-६२

(३) तीर्थंकर वासुपूज्य की जननी। मपु० ५८ १७-२० दे० जया

(४) राजा उग्रसेन की रानी, राजीमति (राजुल) की जननी। मपु० ७१ १४५

(५) राजा सत्यधर के सेनापति विजयमति की भार्या, देवसेन की जननी। मपु० ७५ २५६-२५९

(६) धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में हुए राजा अजितंजय की रानी, क्रूरामर और धनश्रुति की जननी। पपु० ५ १२८-१२९

जयावह—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरों में बत्तीसवाँ नगर। हपु० २२ ८८

जयोत्तरा—समवसरण के सप्तपर्ण वन की छः वापियों में छठी वापी। हपु० ५७ ३३

जरत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२८

जरत्कुमार—राजा वसुदेव और उसकी रानी जरा का ज्येष्ठ पुत्र, वासुदेव का सहोदर और कृष्ण का भाई। इसकी रुचि थी धनुर्वेद- हरिवंशशिरोमणि थी। हपु० ४८.६३, ३१.६-७ तीर्थंकर नेमिनाथ से अपने को कृष्ण की मृत्यु का कारण जानकर यह वन में चला गया था। हपु० ३१.१८६ हपु० ६१.३० कृष्ण का मेरे द्वारा मरण न हो इसलिए इसने बारह वर्ष जंगल में बिताये थे। द्वारिका के जलने पर कृष्ण और बलभद्र द्वारिका छोड़कर दक्षिण दिशा की ओर चले गये थे। हपु० ६१.९० घूमते हुए वे उस वन में जा पहुँचे जहाँ यह विद्यमान

था। कृष्ण को प्यास से व्याकुलित देखकर बलदेव पानी लेने के लिए गया हुआ था। इधर कृष्ण बायें घुटने पर दाया पैर रखकर वृक्ष की छाया में सोये थे। कृष्ण के हिलते हुए वस्त्र को मृग का कान समझकर इसने तीक्ष्ण बाण से कृष्ण का पैर बेध दिया। निकट आने पर जब इसे पता चला कि वे तो कृष्ण है वह उनके चरणो में आ गिरा और बहुत विलाप किया। कृष्ण ने बडे भाई बलराम के क्रोध का सकेत देकर कौस्तुभमणि देते हुए इसे शीघ्र वहाँ से पाण्डवो के पास जाने के लिए कह दिया। यह भी उनके पैर से बाण निकालकर चला आया था। कृष्ण का मरण उसी बाण के घाव से हुआ। हपु० ६२.१४-६१ इसके पश्चात् कृष्ण की आज्ञानुसार इसने भील के वेष में कृष्ण के दूत के रूप में पाण्डवो से भेंट की तथा कृष्ण-मरण का समाचार सुनाते हुए प्रतीति के लिए कौस्तुभमणि दिखाया। पाण्डवो ने द्वारिका को पुन बसाया और इसे वहाँ का राजा बनाया तथा अनेक राजकन्याओ के साथ इसका विवाह किया। कृष्ण के दाह-सस्कार के बाद बलदेव तथा पाण्डव दीक्षित हुए। हपु० ६३ ४५-७६ कलिंग राजा की पुत्री इसकी पटरानी थी। इससे उत्पन्न वसुध्वज नामक पुत्र को राज्य सौप कर यह दीक्षित हो गया। हपु० ६६.२-३ इस प्रकार द्वारावती नगरी में तीर्थंकर नेमिनाथ ने जैसा कहा था कि—"द्वारावती जलेगी, कौशाम्बी वन में इसके द्वारा श्रीकृष्ण की मृत्यु होगी, बलदेव सयम धारण करेगे" सब वैसा ही हुआ। सयोग की बात है कि भाई ही अपने स्नेही भाई का हन्ता हुआ। हपु० १.१२०, ५२ १६ इसका अपरनाम जारसेय-जरा का पुत्र था। पापु० २३ २-३

जरा—म्लेच्छराज की कन्या। यह वसुदेव की रानी और जरात्कुमार की जननी थी। हपु० ३१ ६-७, ४८, ६३

जरासन्ध—राजगृह नगर के राजा बृहद्रथ और श्रीमती का पुत्र, नवाँ प्रतिनारायण। इसकी एक पुत्री को नाम केतुमती था जो जितशत्रु को विवाही गयी थी। केतुमती को किसी मन्त्रवादी परिव्राजक ने अपने वश में कर लिया था किन्तु वसुदेव ने महामन्त्रो के प्रभाव से उसके पिशाच का निग्रह किया था। इसके घातक के सम्बन्ध में भविष्यवाणी थी कि जो इस राजपुत्री के पिशाच को दूर करेगा उसका पुत्र इसका घातक होगा। इस भविष्यवाणी से इसके सैनिको ने वसुदेव को पकड लिया था किन्तु उसी समय कोई विद्याधर उसे वहाँ से उठाकर ले गया था। पपु० २० २४२-२४४, वीवच० १८ ११४-११५ समुद्रविजय आदि राजाओ के साथ रोहिणी-स्वयवर मे न केवल यह आया था अपितु इसके पुत्र भी आये थे। समुद्रविजय को वसुदेव से युद्ध करने के लिए इसी ने कहा था और युद्ध के परिणाम स्वरूप सौ वर्ष से बिछुडे हुए भाई वसुदेव से समुद्रविजय की भेंट हुई थी। हपु० ३१ १८, २१-२३, ५० ४५-५१, ९९-१२८ सुरम्य देश के मध्य मे स्थित पोदनपुर का राजा सिंहरथ इसका शत्रु था। इसने इस शत्रु को बाँधकर लानेवाले को आधा देश तथा अपनी रानी कलिन्दसेना से उत्पन्न जीवद्यशा पुत्री देने की घोषणा की थी। वसुदेव ने सिंहरथ को जीतकर तथा कस से बँधवाकर इसे सौप दिया था। घोषणा के अनुसार इसने जीवद्यशा को वसुदेव को देना चाहा किन्तु उसे सुलक्षणा न जानकर वसुदेव ने यह कहकर टाल दिया था कि "सिंहरथ को उसने नही बाँधा। कस ने बाँधा है। इसने कस को राजा उग्रसेन और पद्मावती का पुत्र जानकर उसे पुत्री और आधा राज्य दे दिया। कस को अपना भानजा जानकर यह प्रसन्न हुआ था। हपु० ३३ २४ यही कस कृष्ण के द्वारा मारा गया। कस के मरने से व्याकुलित पुत्री जीवद्यशा ने इसे क्षुभित किया। परिणामस्वरूप इसके कालयवन नामक पुत्र ने यादवो के साथ सत्रह बार भयकर युद्ध किया और अन्त में युद्ध में मारे जाने पर इसके भाई अपराजित ने युद्ध किया। तीन सौ छियालीस बार युद्ध करने पर भी अन्त में यह भी कृष्ण के बाणो से निष्प्राण हुआ। हपु० ३६ ४५, ६५-७३ इसने यादवो से सन्धि कर ली थी। किन्तु कृष्ण का नाम सुनकर यह सन्धि से विमुख हो गया था। समुद्रविजय ने इसे समझाने और सन्धि न तोडने के लिए अपने दूत लोहजघ को भेजा। लोहजघ ने कुशलता से इसे समझा दिया। इसने छ: मास तक सन्धि को बनाये रखा। पर एक वर्ष पूर्ण होते ही यह कुरुक्षेत्र के मैदान मे ससैन्य आ पहुँचा। हपु० ५० ९, ७१-६५ कालयवन आदि सन्यासी पुत्र भी युद्ध में सम्मिलित हुए। कृष्ण के अर्धचन्द्र बाणो से ये सब मारे गये थे। कालयवन को सारन नामक योद्धा ने मार गिराया था। इसने कृष्ण को मारने के लिए चक्र चलाया था। यही चक्र कृष्ण ने फेंककर इसे प्राण रहित कर दिया था। इसी युद्ध में कौरव पाण्डवो से मारे गये थे। मपु० ७० ३५२-३६६, ७१ ७६-७७, ११५, ७२ २१८-२२२, हपु० ५२ ३०-८३, पापु० ७ १४७-१४९, १९ वाँ पर्व, २० २६६, २९६, ३४८-३५०

जरासन्धारि—कृष्ण। मपु० ७१ ३४६

जलकान्ति—भवनवासी देवो के बीस इन्द्रो में दसवा इन्द्र। वीवच० १४ ५४-५८

जलकेतु—जरासन्ध का पुत्र। यह जरासन्ध-कृष्ण युद्ध मे कृष्ण द्वारा मारा गया था। हपु० ५२ ३० दे० जरासन्ध

जलगता—दृष्टिवाद अग के पाँच भेदो में आगत चूलिका का प्रथम भेद। हपु० १० ६१, १२३

जलगति—एक विद्या। यह विद्या धरणेन्द्र ने नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ६८

जलचारण—एक ऋद्धि। (इसके प्रभाव मे जल में स्थल तुल्य गमनागमन शक्य होता है तथा जलकायिक एव जलचर जीव बाधा उत्पन्न नही करते)। मपु० २ ७३

जलदकुमार—मेघकुमार जाति के देव। ये तीर्थंकरो के जन्माभिषेक के समय अमृत से मिले हुए जल-कणो की अखण्ड धारा छोडते है—मन्द-मन्द, जलवृष्टि करते हैं। मपु० १३ २०९

जलधि—(१) हस्तिनापुर के राजा दुर्योधन की रानी, उदधिकुमारी की जननी। मपु० ७२ १३४

(२) समुद्रविजय के भाई राजा अक्षोभ्य के प्रसिद्ध पाँच पुत्रो में तीसरा पुत्र। हपु० ४८.४५

जलधिध्वान—वानरवंशी नरेशों का अनेक प्रासादो से मण्डित तथा रत्नो से परिपूर्ण एक प्रशान्त नगर । पपु० ६ ६६

जलधिसुता—राजा दुर्योधन की पुत्री । यह दुर्योधन की रानी जयधि के गर्भ से प्रसूत होने से इस नाम से विश्रुत हुई थी । मपु० ७२ १३४

जलपथ—एक नगर । पाण्डव और कौरवो में राज्य विभाजन होने के बाद नकुल यहाँ रहने लगा था । पापु० १६ ७

जलप्रभ—लोकपाल वरुण का विमान । हपु० ५ ३३६

जलमन्थन—दु षमा काल में एक-एक हजार वर्षों के पश्चात् होनेवाले कल्कियो में इक्कीसवाँ कल्कि राजा । मपु० ७६ ४३१-४३२

जलयुद्ध—चक्रवर्ती भरत और बाहुबली के बीच हुए तीन युद्धो में दूसरा युद्ध । इस युद्ध में दो योद्धा जलाशय में रहकर परस्पर में जल को नेत्र और मुख पर उछालते हैं और एक-दूसरे को पराजित करने का प्रयत्न करते हैं । इन युद्ध में बाहुबली विजयी हुए थे । मपु० ३६ ४५, ५३-५६

जलाभ—भवनवासी देवो के बीस इन्द्रो में नवाँ इन्द्र । वीवच० १४ ५५

जलावर्त—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक नगर । हपु० २२ ९५

(२) एक महासरोवर । वसुदेव ने यहाँ जल-पान एव स्नान किया था । हपु० १९ ६१

जल्ल—एक रोगहर ऋद्धि । इसके प्रभाव से जीवो के रोग नष्ट हो जाते हैं । मपु० २ ७१

जागरूक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १४६

जातकर्म—जन्म सस्कार । मपु० २६ ४ दे० जात सस्कार

जातरूप—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १४६

(२) स्वर्ण । हपु० ६० २

जातरूपाभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २००

जातसंस्कार—(१) पुत्र की जन्मकालीन क्रिया । तीर्थंकरो में सभी का यह सस्कार किया गया है । दिक्कुमारियो में प्रमुख रुचका, रुचकोज्ज्वला, रुचकाभा और रुचकप्रभा तथा विद्युत्कुमारियों में प्रमुख विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और अपराजिता ये आठ देवियाँ इस कर्म में निपुण होती हैं तथा जिनेन्द्र का यह सस्कार ये ही किया करती हैं । देव कन्याओ द्वारा यह क्रिया सम्पन्न होने के बाद ही देव जिनेन्द्र भगवान् को ऐरावत हाथी पर बैठाकर बड़े वैभव के साथ सुमेरु पर्वत पर ले जाते है । हपु० ८ १०५-११७, १६ १६, ३८ ३०-३७

(२) शिशु-जन्म-महोत्सव । इसका अपरनाम प्रियोद्भव क्रिया है । इसमें विभूति के साथ जिनेन्द्र की महापूजा आयोजित की जाती है, दान दिये जाते हैं, नगर-भवन सजाये जाते हैं और गीत नृत्य वादित्र आदि से मनोरजन किया जाता है । मपु० १४ ८५-९४, ३८ ८५-८६, वीवच० ९ १०५-१०८ इस सस्कार के समय जन्मकालीन ग्रहो की स्थिति तथा फल ज्ञात किये जाते हैं । मपु० १७ ३५९-३६२

जाति—(१) शारीर स्वर का एक भेद । हपु० १९ १४८

(२) गान्धर्व के तीन भेद हैं–स्वर, ताल और पद (बोल) । इनमें पदगत गान्धर्व को जाति कहते हैं । हपु० १९ १४९

(३) माता के वश की शुद्धि । मपु० ३९ ८५

(४) पारिव्राज्य क्रिया के परमेष्ठियो के गुणरूप सत्ताईस सूत्रपदो में प्रथम सूत्रपद । उत्तम जाति को प्राप्त अर्हन्त के चरण सेवक दूसरे जन्म में दिव्या, विजयाश्रिता, परमा और स्वा इन चार जातियों को प्राप्त होता है । इन जातियो में दिव्या इन्द्र के, विजयाश्रिता चक्रवर्तियो के, परमा अर्हन्तों के और स्वा मोक्ष प्राप्त जीवों के होती है । मपु० ३९ १६२-१६८

(५) जीवो का वर्ण-भेद । जीव अनेक प्रकार के होते हैं । शारीरिक विशेषताओ के कारण जाति भेद होता है । पपु० ११ १९४-१९५

(६) मूलत मनुष्य जाति एक ही थी । आजीविका के कारण इसके चार भेद किये गये । मपु० ३८ ४५-४६ सामान्य रूप से जन्म के कारण व्यक्ति को किसी वर्ण विशेष से सम्बन्धित माना जाता है किन्तु यथार्थ मे वर्ण व्यवस्था गुणो के आधीन मानी गयी है, जाति के अधीन नही । कोई भी जाति निन्दनीय नही है क्योकि गुणो से ही कल्याण होता है जाति से नही । व्रतो को पालनेवाले चाण्डाल को भी ब्राह्मण कहा गया है । पपु० ११ १९८-२०३

जाति ब्राह्मण—तप और श्रुत से रहित ब्राह्मण । मपु० ३८ ४३

जाति भट—राजपुर-नगर-निवासी धनी मालाकार पुष्पदन्त और कुसुमश्री का पुत्र । यह धनदत्त के पुत्र चन्द्राभ का मित्र था । मद्य-मास की निवृत्ति मे मरकर यह विद्याधर हुआ था । इसने जीवन्धर कुमार के साथ अपने पूर्वभव का सम्बन्ध बताया था । मपु० ७५ ५२९-५३०

जातिमद—उत्तम जाति में उत्पन्न होने का अभिमान । भरतेश के प्रश्न करने पर वृषभदेव ने ब्राह्मण वर्ण के बारे में कहा था कि चतुर्थकाल तक तो ये उचित आचार का पालन करते रहेंगे पर पचम काल में ये जातिवाद के अभिमान वश सदाचार से भ्रष्ट होकर समीचीन मार्ग के विरोधी हो जायेंगे । मपु० ४१ ४५-४८

जातिमन्त्र—जाति सस्कार का कारण होने से इस नाम से सम्बोधित मन्त्र । ये मन्त्र हैं—सत्यजन्मन शरण प्रपद्यामि, अर्हज्जन्मन शरणं प्रपद्यामि, अर्हन्मातु शरण प्रपद्यामि, अर्हत्सुतस्य शरण प्रपद्यामि, अनादिगमनस्य शरण प्रपद्यामि, अनुपमजन्मन शरण प्रपद्यामि, रत्नत्रयस्य शरण प्रपद्यामि, सम्यग्दृष्टे-सम्यग्दृष्टे ! ज्ञानमूर्ते-ज्ञानमूर्ते ! सरस्वति ! सरस्वति ! स्वाहा, सेवाफल षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु । मपु० ४० २६-३१

जातिमूढ़ता—मनुष्यो में गाय-घोडो के समान जातिगत भेद करना, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र में जाति की कल्पना करना । जिनागम के अनुसार मनुष्यो में जातिगत कोई भेद नही है । जातकर्म से होनेवाली मनुष्य जाति तो एक ही है । मपु० ३८ ४५, ७४ ४९०-४९६

जातिसंस्कार—तपश्चरण और शास्त्राभ्यास से सम्पन्न सस्कार । इन सस्कारो से विहीन द्विज केवल जातिमात्र से द्विज हैं । मपु० ३८ ४७

जानकी—राजा जनक और उसकी रानी विदेहा की पुत्री । यह भामण्डल

के साथ युगलरूप में उत्पन्न हुई थी। मपु० ६८, ४४३, पपु० २६, १२१, १६६ महापुराण में इसे रावण की रानी मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न बताया गया है। इसके सम्बन्ध में कथा है कि विद्याधर अमितवेग की पुत्री मणिमती को देखकर रावण काम के वशीभूत हो गया। इस कन्या को अपने अधीन करने के लिए रावण ने इसकी विद्या हर ली थी। बारह वर्ष की कठिन साधना से सिद्ध हुई विद्या के हरे जाने से कुपित होकर मणिमती ने निदान किया था कि वह इस राजा की पुत्री होकर इसी का वध करेगी। निदानवश वह मन्दोदरी की पुत्री हुई। निमित्त ज्ञानियो से इस पुत्री को रावण ने अपने विनाश का कारण जानकर इसे मारने के लिए मारीच को आदेश दिया। मारीच ने मन्दोदरी से इसे माँगा। मन्दोदरी ने इसे बहुत द्रव्य के साथ एक मजूषा में रखकर मारीच से ऐसी जगह मे छोडने के लिए कहा जहाँ उसे कोई कष्ट न हो। मन्दोदरी के आदेशानुसार मारीच ने यह मजूषा मिथिला नगरी के उद्यान के पास की भूमि में गाडकर रख दी। यह मजूषा एक किसान के हल मे फँसकर उसे प्राप्त हुई। किसान ने मजूषा महाराज जनक को दे दी। जनक ने मजूषा में एक कन्या देखकर उसे अपनी रानी वसुधा को दे दिया। वसुधा ने उसका लालन-पोषण एक राजकुमारी की तरह किया। जनक ने उसका नाम सीता रखा। रावण इस तथ्य से अनभिज्ञ रहा। यही सीता राजा जनक द्वारा राम को दी गयी थी। मपु० ६८ १२-२४ दे० सीता

जामदग्नि—जमदग्नि का पुत्र परशुराम। इसने पृथ्वी को सात बार नि क्षत्रिय कर दिया था। इसी क्रम में इसने आठवें चक्रवर्ती सुभूम के पिता कार्तवीर्य को मारा था। ब्राह्मण और क्षत्रिय उसके भय से भीत थे। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए सुभूम ने अपने चक्र से इसे मारा था। पपु० २० १७१-१७६

जाम्बव—(१) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। इस नगर की स्थिति विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में है। अपरनाम जम्बूपुर। मपु० ७१ ३६८, हपु० ४४ ४, ६० ५२

(२) एक विद्याधर। यह शिवचन्द्रा का पति तथा उससे उत्पन्न राजकुमार विश्वसेन और राजकुमारी जाम्बवती का पिता था। इसने अपनी सुन्दर पुत्री जाम्बवती का हरण करनेवाले कृष्ण के सेनापति अनावृष्टि के साथ युद्ध किया था। अनावृष्टि ने उसे बाँधकर कृष्ण को दिखाया था। इस दुर्घटना से इसे वैराग्य हो गया। इसने अपने पुत्र विश्वसेन को कृष्ण के अधीन करके तपस्या के लिए वन का आश्रय लिया। हपु० ४४ ४-१७, ६० ५३

(३) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक पर्वत। हपु० ४४ ७

(४) वानरवशी एक विद्याधर। इसकी ध्वजा मे महावृक्ष का चिह्न था। पपु० ५४ ५८

जाम्बवती—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के जाम्बव नगर के राजा विद्याधर जाम्बव की रानी शिवचन्द्रा की पुत्री, विश्वसेन की बहिन तथा कृष्ण की पटरानी। मधु के भाई कैटभ का जीव शम्ब नाम से इसी का पुत्र हुआ था। हपु० ४३ २१८, ४४ ७-१७, ४८ ४, ८, ६० ५३ पूर्व जन्म में यह वीतशोक नगर में दमक वैश्य की देविला नामक पुत्री थी। पति-वियोग से व्रत ग्रहण कर नन्दनवन में यह व्यन्तरी हुई। इसके पश्चात् यह विजयपुर नगर में मधुषेण वैश्य की बन्धुयशा नाम की पुत्री हुई। मरकर यह प्रथम स्वर्ग मे देवागना हुई। इसके बाद पुण्डरीकिणी नगरी में वज्र नामक वैश्य की सुमति नाम की पुत्री हुई। फिर ब्रह्म स्वर्ग में अप्सरा हुई। इस पर्याय में जाम्बव राजा की पुत्री हुई। मपु० ७१ ३५९-३८२

जाम्बूनद—राम का मुख्य मन्त्री। लक्ष्मण को मायामय सुग्रीव और वास्तविक सुग्रीव का भेद इसी ने बताया था। अपरनाम जाम्बव। बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण को कुपित करने के लिए यह लका गया था। अन्त में यह शरीर से नि स्पृह होकर भरत के साथ दीक्षित हो गया था। पपु० ४७ ३९-४०, ५४ ५८, ७० १२-१६, ८८ १-९

जाया—जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र के मन्दर नगर के गृहस्थ प्रियनन्दी की स्त्री। यह महापुण्यवान् भद्र परिणामी तथा मुनि भक्त दमयन्त की जननी थी। पपु० १७ १४१-१४२

जारसेय—दे० जरत्कुमार। हपु० ६३ ५३

जालन्धर—(१) इस नाम का एक देश। इस देश का राजा द्रौपदी के स्वयवर में आया था। पापु० १५ ६३

(२) एक राजा। इसने विराट् राजा की गायो का हरण किया था। इस कारण विराट् राजा के साथ हुए युद्ध में इसने विराट् राजा को बाँध लिया था। इसके पश्चात् हुए युद्ध में पाण्डव भीम ने इसके सारथी को मारकर इसे पकड लिया था और राजा विराट् को बन्धनो से मुक्त कराया था। पापु० १८ ४, १२, २७-२९, ४०-४१

जाह्नवी—गगा नदी। यह हिमवत् पर्वत से निकली है। मपु० २६ १४७

जितकामारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

जितक्रोध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

जितक्लेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

जितजेय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३४

जितदण्ड—लोहाचार्य के बाद हुए अनेक आचार्यो मे एक आचार्य। ये नागहस्ती के शिष्य और नन्दिषेण के गुरु थे। हपु० ६६ २४-२७

जितपद्मा—क्षेमाजलि नगर के राजा शत्रुदमन और उसकी रानी कनकाभा की पुत्री। यह लक्ष्मण की आठ महादेवियो मे छठी महादेवी थी। विमलप्रभ इसका पुत्र था। पपु० ३८ ७२-७३, ९४ १८-२३, ३३

जितभास्कर—राक्षसवशी एक राजा। यह पूजार्ह का पुत्र था। इसने अपने पुत्र सपरिकीर्ति को राज्य देकर दीक्षा ले ली थी। पापु० ५. ३८७-३८९

जितमन्मथ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २० २०८

जितशत्रु—(१) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३४

(२) राजा वसुदेव तथा देवकी का छठा पुत्र। यह और इसके अन्य भाइयो का लालन-पालन सेठ सुदृष्टि की स्त्री अलका के द्वारा

किया गया था, तथा अलका के मृत पुत्र इसकी माता के पास लाये गये थे। यह कार्य नैगमेष देव ने सम्पन्न किया था। मपु० ७१ २९६ हपु० ३३ १७०, ३५ ४-९ इसकी तथा इसके समस्त भाईयों की बत्तीस-बत्तीस रूपवती स्त्रियाँ थी। तीर्थंकर नेमिनाथ के समवसरण में पहुँचकर उनसे छहों भाइयों ने धर्म श्रवण किया और संसार से विरक्त होकर ये सभी दीक्षित हो गये। इन्होंने घोर तप किया और गिरनार पर्वत से मुक्ति को प्राप्त हुए। हपु० ५९ ११५-१२४, ६५ १६-१७ पाँचवें पूर्वभव में यह मथुरा के सेठ भानु और उसकी स्त्री यमुना का शूरसेन नामक सातवाँ पुत्र था। समाधिमरण पूर्वक मरण होने से यह त्रायस्त्रिंश जाति का उत्तम देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर विजय पर्वत के नित्यालोक नगर में राजा चित्रचूल और उनकी रानी मनोहरी का हिमचूल नामक पुत्र हुआ। इस पर्याय में भी समाधिपूर्वक मरण कर यह माहेन्द्र स्वर्ग में सामानिक जाति का देव हुआ और वहाँ से चयकर हस्तिनापुर नगर मे राजा गंगदेव और रानी नन्दियशा का नन्दिषेण नामक पुत्र हुआ। जीवन के अन्त में मुनि दीक्षा लेकर इसने तप किया तथा मरकर जितशत्रु की पर्याय में आया। हपु० ३३ ९७-९८, १३०-१४३, १७०-१७१

(३) हरिवंशी राजा जितारि का पुत्र। महावीर के पिता राजा सिद्धार्थ की छोटी बहिन इसे ही विवाही गयी थी। यह अपनी रानी यशोदया से उत्पन्न यशोदा नाम की पुत्री का मंगल विवाह महावीर के साथ देखने का उत्कट अभिलाषी था किन्तु महावीर के दीक्षित हो जाने से इसकी यह इच्छा पूर्ण न हो सकी। तब यह भी दीक्षित हो गया तथा केवलज्ञान प्राप्त कर मुक्त हो गया। हपु० १ १२४, ३ १८७-१८८, ६६ ५-१४

(४) श्रावस्ती नगरी का इक्ष्वाकुवंशी एक नृप। यह मृगध्वज का पिता था। इसने भद्रक नामक भैंसे का पैर काटने के अपराध में अपने पुत्र को मार डालने का आदेश दिया था। मन्त्री ने इसे मारा तो नहीं किन्तु वन में ले जाकर इसे मुनि-दीक्षा दिला दी। आयु के अन्त में यह भी दीक्षित हो गया था। हपु० २८ १४-२७, ४९

(५) कलिंग देश के कंचनपुर नगर का राजा। यह जीव-हिंसा का विरोधी था। राज्य में इसने अभयदान की घोषणा करायी थी। हपु० २४ ११-२३

(६) विदेह क्षेत्रस्थ पुण्डरीकिणी नगरी के सेठ समुद्रदत्त तथा उसकी स्त्री सर्वदयिता का पुत्र। इसके माता-पिता के मिलन से अपरिचित रहने के कारण जब यह गर्भ में था, इसकी माँ को इसके मामा सर्वदयित ने भी शरण नहीं दी थी। फलस्वरूप इसकी माँ अपने भाई के पड़ोस में रहने लगी थी। वहीं इसे उसने जन्म दिया था। इसके मामा ने इसे कुल का कलंक जानकर अपने सेवक से दूसरी जगह रख आने के लिए कहा था किन्तु सेवक ने इसे ले जाकर इसके मामा के मित्र सेठ जयधाम को दे दिया। सेठ अपनी पत्नी को बालक देते हुए बहुत प्रसन्न हुआ था। भोगपुर नगर में इसका लालन-पालन किया गया और वहीं इसे यह नाम मिला था। कुछ समय बाद मामा ने इसके हाथ की अंगूठी देखकर इसे पहचान लिया और इसे अपनी सर्वश्री नाम की पुत्री, धन तथा सेठ का पद दे दिया तथा तथा स्वयं विरक्त हो गया। मपु० ४७ १९८-२११, २१९-२२०

(७) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की साकेत नगरी के स्वामी त्रिदशजय का पुत्र। इसका विवाह पोदनपुर की राजकुमारी विजया के साथ हुआ। तीर्थंकर अजितनाथ इन दोनों के पुत्र थे। सगर नामक चक्रवर्ती के पिता विजयसागर के ये अग्रज थे। मपु० ४८ १९, २२, २७, पपु० ५ ६१-७५

(८) क्षेमांजलिपुर नगर का राजा। यह जितपद्मा का पिता था। जितपद्मा लक्ष्मण की पटरानी हुई थी। पपु० ८० ११२, ९४ १८-२३

(९) धातकीखण्ड में अलका देश की अयोध्या नगरी के राजा चक्रवर्ती अजितसेन का पुत्र। इसके पिता इसे राज्य देकर दीक्षित हो गये थे और आयु के अन्त में शरीर छोड़कर अच्युतेन्द्र हुए थे। मपु० ५४ ८६-८७, ९४-९५, १२२-१२५

(१०) तीर्थंकर अजितनाथ के तीर्थ में हुआ दूसरा रुद्र। हपु० ६० ५३४

जिताक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०८

जितानंग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

जितान्तक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

जितामित्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६९

जितारि—(१) हरिवंश का एक नृप। यह राजा शत्रुसेन का पुत्र और जितशत्रु का पिता था। इसी जितशत्रु का विवाह तीर्थंकर महावीर के पिता सिद्धार्थ की छोटी बहिन के साथ किया गया था। हपु० ६६ ५-६

(२) तीर्थंकर सम्भवनाथ का पिता। यह श्रावस्ती का राजा और रानी सेना का पति था। पपु० २० २९

जितेन्द्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

जित्वर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४४४

जिन—(१) भरतेशद्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४४०

(२) जिनेन्द्र। ये तीनों लोकों में मंगलस्वरूप, सुरासुरों से वन्दित और राग-द्वेषजयी होते हैं। ये घातियाकर्मों के नष्ट होने से अर्हन्त, आत्मस्वरूप को प्राप्त होने से सिद्ध, त्रैलोक्य के समस्त पदार्थों के ज्ञाता होने से बुद्ध, तीनों कालों में होनेवाली अनन्त पर्यायों से युक्त समस्त पदार्थों के दर्शी होने से विश्वदर्शी और सब पदार्थों के ज्ञाता होने से विश्वज्ञ हैं। इनके अनन्त चतुष्टय प्रकट होते हैं। इनके वक्षःस्थल पर श्रीवृक्ष का चिह्न रहता है। इन पर चौसठ चँवर ढोरे जाते हैं। मपु० २१ १२१-१२३, २३ ५९, पपु० ८९ २३, हपु० १ १६

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०४

जिनकल्प—(१) आत्म-चिन्तन के लिए एकाकी विहार करनेवाले मुनि। मपु० २० १७०

(२) इस नाम का एक सामायिक चारित्र। मपु० ३४.१३०

जिनकुंजर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३८

जिनगुणर्द्धि—एक व्रत। इसका दूसरा नाम है जिनगुणसम्पत्ति। मपु० ७.५३

जिनगुणसम्पत्ति—एक व्रत। इसमें कल्याणकों के पाँच, अतिशयों के चौंतीस, प्रातिहार्यों के आठ और सोलह कारण भावनाओं के सोलह, कुल त्रेसठ उपवास किये जाते हैं तथा एक-एक उपवास के बाद एक-एक पारणा की जाती है। इनमें सोलह कारण भावनाओं के निमित्त सोलह प्रतिपदा, पंच कल्याणकों के निमित्त पाँच पंचमी, अष्ट प्रातिहार्यों के निमित्त आठ अष्टमी और चौंतीस अतिशयों के लिए बीस दशमी तथा चौदह चतुर्दशी तिथियों में उपवास किये जाते हैं। यह तीर्थंकर-प्रकृति के बन्ध में सहायक होता है। मपु० ६ १४१-१४५, हपु० ३४.१२२ अपरनाम जिनगुणख्याति। मपु० ६३ २४७

जिनजननसपर्या—जिनेन्द्र की जन्मकालीन पूजा। मपु० १२.२१२

जिनदत्त—(१) जम्बूद्वीप के मगधदेश में भद्रिलपुर नगर के धनदत्त सेठ और नन्दयशा सेठानी का सातवाँ पुत्र। धनपाल, देवपाल, जिनदेव, जिनपाल, अर्हद्दत्त, अर्हद्दास प्रियमित्र और धर्मरुचि इसके भाई थे। प्रियदर्शना और ज्येष्ठा इसकी बहिनें थी। इसने अपने पिता और भाइयों के साथ दीक्षा ले ली थी। इसकी माँ और बहिनें भी सुदर्शना आर्यिका के पास दीक्षित हो गयी थी। सन्यास-मरणकरके ये सब आनत-स्वर्ग के शातंकर-विमान में देव हुए। मपु० ७० १८२-१९६, हपु० १८ ११२-१२४

(२) गोवर्द्धन ग्राम का एक गृहस्थ। श्रावकाचार का पालन करते हुए सन्यास-मरण करके इसने देवगति प्राप्त की थी। मपु० २० १३७, १४१-१४३

(३) अंग देश की चम्पा नगरी के निवासी धनदत्त सेठ और सेठानी अशोकदत्ता का छोटा पुत्र। जिनदेव इसका बड़ा भाई था। बन्धुजनों की प्रेरणा से इसे दुर्गन्धा सुकुमारी के साथ विवाह करना पड़ा। विवाह हो जाने पर भी यह उसके पास कभी नहीं गया। मपु० ७२. २२७, २४१-२४८

(४) राजपुर नगर के सेठ वृषभदत्त और सेठानी पद्मावती का पुत्र। मित्र गरुडवेग के निवेदन पर इसने अपने मित्र की पुत्री गन्धर्वदत्ता का अपने नगर में स्वयंवर कराया था। इसमें जीवन्धर कुमार ने वीणा बजाकर गन्धर्वदत्ता को पराजित किया था। हारने पर गन्धर्वदत्ता ने जीवन्धर कुमार के साथ विवाह किया था। मपु० ७५. ३१४-३३६

जिनदत्ता—(१) एक आर्यिका। मथुरा के सेठ भानुदत्त की स्त्री यमुनादत्ता को इसी ने दीक्षा दी थी। मपु० ७१ २०१-२०६, हपु० ३३ ९९-१००

(२) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र में गन्धिल देश के सिंहपुर नगर के राजा अर्हद्दास की पत्नी, अपराजित की जननी। मपु० ७० ५-१०, हपु० ३४ ३-५

(३) मृणालवती नगरी के सेठ अशोकदेव की स्त्री। यह सुकान्त की जननी थी। मपु० ४६ १०३, १०६

(४) जिनदेव की पुत्री। पुष्कलावती देश में विजयपुर नगर के सेठ मधुषेण की पुत्री बन्धुयशा की यह सखी थी। मपु० ७१.३६३-३६५

(५) पुष्कलावती देश में वीतशोका नगरी के राजा अशोक और उसकी रानी श्रीमती की पुत्री श्रीकान्ता ने इसी के पास दीक्षा ली थी। हपु० ६०.६९-७०

(६) वाराणसी नगरी के धनदेव वैश्य की स्त्री। यह चोरी के लिए कुख्यात शान्तव और रमण की जननी थी। मपु० ७६ ३१९

(७) विदेह क्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास की दूसरी रानी, विभीषण की जननी। मपु० ५९ २७६-२७९, हपु० २७ १११-११२

जिनदास—(१) भद्रिलपुर नगर का निवासी एक सेठ। यह धनदत्त और उसकी पत्नी नन्दयशा का पाँचवाँ पुत्र था। यह अपने सभी भाई तथा पिता के साथ गुरु सुमन्दर के पास दीक्षित हो गया था। ये सभी मरकर अच्युत स्वर्ग गये और आगे वसुदेव के भाई हुए। हपु० १८ १११-१२४

(२) मथुरा का निवासी एक सेठ। हपु० ३३ ४९

(३) एक विद्वान्। इसने सिंहपुरवासी सोम नामक दुष्ट परिव्राजक को वाद-विवाद में पराजित किया था। पोदनपुर के राजा श्रीविजय के सातवें दिन मरने की भविष्यवाणी के प्रसंग में इस विद्वान् का नाम आया है। पापु० ४ ११७

जिनदासी—सेठ अर्हद्दास की पत्नी। यह अन्तिम केवली जम्बूस्वामी की जननी थी। मपु० ७६ ३४-३७

जिनदेव—(१) जिनधर्मोपदेशक एक जैन। इसने कृष्ण की तीसरी पट-रानी जाम्बवती को उसकी पूर्व पर्याय में जब वह एक गृहपत्यान्वय के श्रावक की पुत्री थी, सम्यक्त्व का उपदेश दिया था परन्तु मोह के उदय से वह सम्यग्दर्शन प्राप्त न कर सकी थी। हपु० ६० ४३-४५

(२) चम्पापुर के निवासी वैश्य धनदेव और उसकी पत्नी अशोक-दत्ता का ज्येष्ठ पुत्र। यह जिनदत्त का अग्रज था। इसके कुटुम्बी इसका विवाह सुबन्धु सेठ की दुर्गन्धित शरीरवाली सुकुमारी नाम की पुत्री से करना चाहते थे किन्तु सुकुमारी की दुर्गन्ध का बोध होने से इसने सुव्रत नामक मुनिराज से दीक्षा धारण कर ली। छोटे भाई जिनदत्त को कुटुम्बियों की प्रेरणावश सुकुमारी से विवाह करना पड़ा था। मपु० ७२ २४१-२४८ दे० जिनदत्त

(३) भद्रिलपुर नगर के निवासी सेठ धनदत्त तथा उसकी स्त्री नन्दयशा का तीसरा पुत्र। मपु० ७० १८२-१८६, ७१.२६२ दे० जिनदत्त

(४) पुष्कलावती देश में विजयपुर नगर के मधुषेण वैश्य का पुत्र, बन्धुयशा की सखी जिनदत्ता का पिता। मपु० ७१.३६३-३६५

(५) एक सेठ। [illegible]

धरोहर को न लौटाने के अपराध में धनदेव की जीभ निकाली गयी थी। मपु० ४६ २७४-२७५

जिनपाल—धनदत्त और नन्दयशा का चतुर्थ पुत्र। मपु० ७० १८२-१८६ दे० जिनदत्त

जिनप्रेमा—राम का एक योद्धा। इसने रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ २२

जिनमत—राम का एक योद्धा। इसने भी रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ २२

जिनमति—एक आर्यिका। इससे कौशाम्बी के सेठ सुभद्र की पुत्री धर्मवती ने जिनगुण तप लेकर उपवास किये थे। हपु० ६० १०१-१०२ अपर-नाम जिनमतिक्षान्ति। मपु० ७१ ४३७-४३८

जिनमतिक्षान्ति—दे० जिनमति।

जिनमती—सुग्रीव की तेरहवी पुत्री। यह राम के गुणो पर मुग्ध होकर स्वयवरण की इच्छा से राम के निकट गयी थी किन्तु राम ने उसे स्वीकार नही किया था। पपु० ४७ १३६-१४४

जिनमातृका—कुलाचलो की निवासिनी छ दिक्कुमारी देवियाँ। इनके नाम हैं—श्री, ह्री, धी, धृति, कीर्ति और लक्ष्मी। ये जिनमाता की सेवा करती हैं। मपु० ३८ २२६

जिनरूपता—गर्भान्वय क्रिया के अन्तर्गत गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओ में चौवीसवी क्रिया और दीक्षान्वय से सम्बन्धित उन्नीसवीं क्रिया। इसमें वस्त्र आदि सम्पूर्ण परिग्रह से रहित होकर किसी मुनि से दिगम्बर दीक्षा ली जाती है। मपु० ३८ ५५-६३, १५९, ३९ ७८

जिनशासन—जिनागम द्वारा निरूपित शासन। यह सम्यक्त्व का प्रतिपादक है। नय और प्रमाण से सिद्ध होने से अजेय है और कर्मनाश के द्वारा मोक्ष का साधक है। मपु० १ ३, हपु० ६५ ५१

जिनसंज्ञ—राम का एक योद्धा। पपु० ५८ २२

जिनसेन—(१) महावीर निर्वाण के एक सौ बासठ वर्ष पश्चात् एक सौ तेरासी वर्ष के काल में हुए दश पूर्व और ग्यारह अग के धारी मुनि पुगवो में सातवें मुनि। मपु० ७६ ५२८, वीवच० १ ४५-४७

(२) भीमसेन के बाद और शान्तिसेन के पूर्व हुए एक आचार्य। हपु० ६६ २९

(३) आचार्य गुणभद्र के गुरु। ये वीरसेन के शिष्य थे। मपु० प्रशस्ति ८-९, ४३ ४० इन्होने महापुराण की रचना की थी पर वे उसे पूरा नही कर पाये। आचार्य गुणभद्र ने उसे पूरा किया था। इन्होने पार्श्वाभ्युदय तथा कसायपाहुड की जय धवला टीका की भी रचना की थी। ये हरिवश पुराणकार जिनसेन के पूर्ववर्ती आचार्य थे। मपु० २ १५३, ५७ ६७, ७४ ७, हपु० १.४०, पापु० १ १८

(४) आचार्य कीर्तिषेण के शिष्य, हरिवशपुराण के कर्त्ता। इन्होने अपनी यह रचना शक सवत् सात सौ पाँच में वर्द्धमानपुर में नन्न राजा द्वारा निर्मापित पार्श्वनाथ मन्दिर मे आरम्भ कर दोस्तटिका नगरी के शान्तिनाथ जिनालय मे पूर्ण की थी। ये पुन्नाट सघ के आचार्य थे। हपु० ६६ ३३, ५२-५४

जिनस्तव—अगबाह्य श्रुत के चौदह प्रकीर्णको में दूसरा प्रकीर्णक। इसमें चौबीस तीर्थंकरो का स्तवन किया गया है। हपु० १० १२५, १३० दे० अगबाह्यश्रुत

जिनालय—जिन-मन्दिर। ये दो प्रकार के होते हैं—कृत्रिम और अकृत्रिम। मनुष्यो द्वारा निर्मित मन्दिर कृत्रिम होते हैं। अकृत्रिम चैत्यालय अनादि निधन और सदैव प्रकाशित होते हैं। ये देवो से पूजित होते हैं। इनमें मानस्तम्भो की रचना भी होती है। अपरनाम जिनायतन। मपु० ५ १९०, हपु० १९ ११५

जिनेन्द्र—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

(२) अर्हंत। ये स्वय केवलज्ञान के धारक होते हैं और समाज को रत्नत्रय का उपदेश देते हैं। जहाँ केवलज्ञान प्राप्त करते है वह स्थान तीर्थ हो जाता है। मपु० १, २, ४, हपु० १ ६

जिनेन्द्रपूजा—जैनेश्वरी अर्चा। इसमें जिनेन्द्र का अभिषेक किया जाता है। अष्टद्रव्यों से उनकी पूजा की जाती है। इससे मानसिक शान्ति मिलती है और पुण्य का बन्ध होता है। मपु० ५ २७३, ७ २५६, ८ १३२, ११ १३५

जिनेन्द्रगुणसम्पत्ति—दे० जिनगुणसम्पत्ति।

जिनेश्वर—(१) तीर्थंकर, ये धर्मचक्र के प्रवर्तक होते हैं। इनकी सख्या चौबीस रहती है। अवसर्पिणी काल में हुए चौबीस जिन ये हैं—ऋषभ, अजित, शभव, अभिनन्दन, सुमति, पद्म, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयान्, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और महावीर। पपु० ५ १८६, १९०, २०६, २१२-२१६ आगामी दु.षमा काल मे होनेवाले चौबीस तीर्थंकर ये हैं—महापद्म, सुरदेव, सुपार्श्व, स्वयप्रभ, सर्वात्मभूत, देवदेव, प्रभादेय, उदक, प्रश्नकीर्ति, जयकीर्ति, सुव्रत, अर, पुण्यमूर्ति, निष्कषाय, विपुल, निर्मल, चित्रगुप्त, समाधिगुप्त, स्वयभू, अनिवर्तक, जय, विमल, दिव्यपाद और अनन्तवीर्य। हपु० ६० ५६०

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

जिष्णु—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०४

(२) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५

जिह्व—शर्कराप्रभा पृथिवी के सप्तम प्रस्तार का सातवाँ इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओ में एक सौ बीस और विदिशाओ में एक सौ सोलह श्रेणिबद्ध बिल होते हैं। हपु० ४ ७८,१११

जिह्वक—वशा नामक दूसरी पृथिवी के आठवें प्रस्तार से सम्बन्धित आठवा इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में एक सौ सोलह और विदिशाओ में एक सौ बारह श्रेणिबद्ध बिल होते हैं। अपरनाम जिह्विक। हपु० ४ ७८, ११२

जिह्विका—हिमवत् पर्वत के दक्षिणी तट पर स्थित एक प्रणाली। यह छ योजन एक कोश चौडी, दो कोस लम्बी और वृषभाकार (गोमुखा) है। इसी प्रणाली द्वारा गगा गोश्रृग का आकार धारण करती हुई श्रीदेवी के भवन के आगे गिरी है। हपु० ५.१४०-१४१

जीमूत—भरतेश का इस नाम का मज्जनागार (स्नानगृह)। मपु० ३७ १५२

जीमूतशिखर—विद्याधरों का एक नगर। लक्ष्मण ने यहाँ के विद्याधरों को युद्ध में परास्त करके राम का सेवक बनाया था। पपु० ९४.१-५

जीवंधर—हेमांगद देश में राजपुर नगर के राजा सत्यंधर और रानी विजया का पुत्र। इसकी गर्भावस्था में ही मंत्री काष्ठांगारिक ने अपने पुत्र कालांगारिक के सहयोग से राजा सत्यंधर को मारकर राज्य प्राप्त कर लिया था। गर्भिणी अवस्था में ही सत्यंधर ने अपनी रानी विजया को उसके स्वप्न का फल बताते हुए कहा था कि उसके मरने के बाद उसका पुत्र महान् राजा होगा और उसे आठ लाभ होंगे। सत्यंधर का नगर सेठ गन्धोत्कट था। उसके पुत्र होते ही मर जाते थे। इससे वह दुखी था। एक दिन वहाँ आये हुए मुनि शील-गुप्त से धर्म का श्रवण करने के पश्चात् गन्धोत्कट ने अपने दीर्घायु पुत्र होने के विषय में प्रश्न किया। मुनि ने बताया कि अबकी बार जब वह उसके मृत पुत्र को श्मशान में ले जायगा तो उसे वहाँ एक शिशु की प्राप्ति होगी। वह शिशु बड़ा होकर महान् राजा होगा और वैराग्य से मुनि बनकर संसार से मुक्त होगा। वहाँ एक यक्षी इस बात को सुन रही थी। उसे विजया का उपकार करने का निदान हुआ। उसने गरुडयन्त्र का रूप बनाया और वह राजा सत्यंधर के पास पहुँची। सत्यंधर को काष्ठांगारिक के षड्यन्त्र का पता चल गया था इसलिए उसने विजया को गरुडयन्त्र पर बैठाकर वहाँ से अन्यत्र भेज दिया। गरुडयन्त्र रूपिणी यक्षी उसे श्मसान में ले गयी। वहीं विजया के पुत्र हुआ। उसी समय गन्धोत्कट अपने मृत पुत्र को लेकर श्मसान में वहीं आ गया। यक्षी के कहने से विजया ने गन्धोत्कट को अपना पुत्र यह कहते हुए दे दिया कि वह उसका पालन गुप्तरूप से करे। मुनि की भविष्यवाणी को फलवती हुई समझकर उसने वह पुत्र ले लिया और उसे अपने घर ले गया। अपनी पत्नी सुनन्दा को उसे देते हुए सेठ ने कहा कि उसका पुत्र मृत नहीं, जीवित था। यह सुनकर सुनन्दा बहुत प्रसन्न हुई और अपने इस पुत्र का लालन-पोषण बड़े स्नेह से करने लगी। सेठ ने इस पुत्र का नाम जीवन्धर रखा। जीवन्धर की प्राप्ति के पश्चात् गन्धोत्कट के एक पुत्र का जन्म हुआ। उसका नाम नन्दाढ्य रखा गया।

सत्यंधर की विजया रानी से छोटी दो रानियाँ थीं—भामारति और अनंगपताका। इनमें भामारति के पुत्र का नाम मधुर और अनंगपताका के पुत्र का नाम बकुल था। इन रानियों के व्रत धारण कर लेने से इसके दोनों भाइयों का लालन-पालन भी गन्धोत्कट सेठ को ही करना पड़ा। देवसेन, बुद्धिषेण, वरदत्त और मधुमुख क्रमश. सेनापति, पुरोहित श्रेष्ठी और मंत्री के पुत्र थे। इसका बाल्यकाल इन्हीं सातों के साथ बीता। सिंहपुर के राजा आर्यवर्मा संयमी हो गया था पर जठराग्नि के कारण वह संयम से च्युत होकर तापस के वेष में भ्रमण करते हुए गन्धोत्कट के यहाँ आया। वहाँ क्रीडा करते हुए जीवन्धर के चातुर्य से प्रभावित हुआ। उसने गन्धोत्कट से इसे शिक्षित करने के लिए माँगा। गन्धोत्कट भी सिंहवर्मा से प्रभावित था। उसने जीवन्धर को उसे दे दिया। अपने चातुर्य से इसने गोपेन्द्र की कन्या गोदावरी का विवाह नन्दाढ्य से कराया था। इसके भी आठ विवाह हुए। विवाही गयी कन्याओं में एक विद्याधर कन्या और शेष भूमिगोचरियों की कन्याएँ थीं। विद्याधर कन्या का नाम गन्धर्वदत्ता था। इसकी अन्य पत्नियाँ थीं—सुरमंजरी, पद्मोत्तमा, क्षेमसुन्दरी, हेमाभा, विमला, गुणमाला और रत्नवती। गन्धर्वदत्ता से विवाह करने के पश्चात् जीवन्धर राजपुर से बाहर चुपचाप चला गया था। उसके इस तरह नगर से चले जाने के कारण उसके मित्र उसे ढूँढते हुए दण्डकवन पहुँचे। वहाँ एक तपस्वियों के आश्रम में इनकी विजया माता से भेंट हुई। इन्होंने विजया को बताया कि जीवन्धर कहीं चला गया है। ये वहाँ से हेमाभनगर आये। यहाँ इनकी जीवन्धर से भेंट हुई। ये सब जीवन्धर के साथ दण्डकवन में जीवन्धर की माता विजया से मिले। विजया ने इसे इसके पिता राजा सत्यंधर के मारे जाने की कथा बतायी और उससे कहा कि वह अपने खोये हुए राज्य को काष्ठांगारिक से पुन प्राप्त करे। माता को आश्वस्त कर जीवन्धर राजपुर आ गया। अपना परिचय देकर इसने मामतों को अपने पक्ष में कर लिया। सेना तैयार की और काष्ठांगारिक को चक्र से मार डाला। हर्षित होकर उपस्थित राजाओं ने इसका राज्याभिषेक किया। इसी समय इसने गन्धर्वदत्ता को महारानी बनाया। इसके भाई नन्दाढ्य के साथ इसकी माता विजयादेवी और हेमाभा आदि रानियाँ भी आ गयीं। परिवार के सभी जन सुख से रहने लगे। मपु० ७५ १८८-६७३ एक दिन यह दो बन्दरों को परस्पर लड़ते हुए देखकर संसार से विरक्त हो गया और गन्धर्वदत्ता के पुत्र वसुन्धरा को राज्य सौंप कर नन्दाढ्य मधुर आदि भाइयों के साथ संयमी हो गया। इसकी आठों रानियों तथा उनकी माताओं ने रानी विजया के साथ चन्दना आर्यिका के समीप उत्कृष्ट संयम धारण कर लिया। घातिया कर्म नष्ट कर वह केवली हुआ तथा महावीर के निर्वाण के पश्चात् यह भी विपुलाचल से ही मोक्ष को प्राप्त हुआ। मपु० ७५. ६७६-६८७ दूसरे पूर्वभव में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा जयन्धर का जयद्रथ नामक पुत्र था। इसने एक हंस के बच्चे को पकड़ लिया था तथा इसके किसी साथी ने हंस-शिशु को मार डाला था। उसी के फलस्वरूप सहस्रार स्वर्ग में देव की पर्याय से इस भव में जन्मते ही इसके पिता का मरण हुआ और १६ वर्ष तक इसे माता से पृथक् रहना पड़ा। मपु० ७५ ५३४-५४४

जीव—सात तत्त्वों में प्रथम तत्त्व। जो प्राणों से जीता था, जीता है और जियेगा वह जीव है। सिद्ध पूर्व पर्यायों में प्राणों से युक्त थे अतः उन्हें भी जीव कहा गया है। जीव का पाँच इन्द्रिय, तीन, बल, आयु और श्वासोच्छ्वास इन दस प्राणोंवाला होने से प्राणी, जन्म धारण करने से जन्तु, निज स्वरूप का ज्ञाता होने से क्षेत्रज्ञ, अच्छे अच्छे भोगों में प्रवृत्ति होने से पुरुष, स्वयं को पवित्र करने से पुमान्, नरक नारकादि पर्यायों में निरन्तर गमन करने से आत्मा, ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों के अन्तर्वर्ती होने से अन्तरात्मा, ज्ञान गुण से सहित होने से यह ज्ञ कहा गया है। यह अनादि निधन, ज्ञाता-द्रष्टा, कर्ता-भोक्ता, शरीर के प्रमाण रूप, कर्मों का नाशक, ऊर्ध्वगमन स्वभावी, संकोच-विस्तार गुण से युक्त, सामान्य रूप से नित्य और पर्यायों की अपेक्षा

अनित्य, दोनो अपेक्षाओ से उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य रूप, असख्यात प्रदेशी और वर्ण आदि बीस गुणों से युक्त है। मपु० २४ ९२-११०, हपु० ५८ ३०-३१, पापु० २२ ६७, वीवच० १६ ११३ यह दर्शन और ज्ञान उपयोग मय है। वह अनादिकाल से कर्म बद्ध और चारो गतियो में भ्रमणशील है। इसे सुख-दुःख आदि का सवेदन होता है। मपु० ७१ १९४-१९७, हपु० ५८ २३, २७ निश्चय नय से यह चेतना लक्षण, कर्म, नोकर्म बन्ध आदि का अकर्त्ता, अमूर्त और सिद्ध है। व्यवहार नय से राग आदि भाव का कर्ता, भोक्ता, अपने आत्मज्ञान से बहिर्भूत, ज्ञानावरण आदि कर्म और नोकर्मों का कर्त्ता है। वीवच० १६ १०३-१०८ इसे गति, इन्द्रिय, छ काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, सयम, सम्यकक्त्व, लेश्या, दर्शन, सज्ञित्व, भव्यत्व और आहार इन चौदह मार्गणाओ से तथा मिथ्यादृष्टि आदि चौदह गुणस्थानो से, सत, सख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, भाव, अन्तर और अल्पबहुत्व, इन आठ अनुयोगो से और प्रमाण नय तथा निक्षेपो से खोजा या जाना जाता है। इसकी दो अवस्थाएँ होती हैं—ससारी और मुक्त। इसके भव्य अभव्य और मुक्त ये तीन भेद भी होते हैं। यह अपनी स्थिति के अनुसार बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा भी होता है। इसके औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारणामिक ये पाँच भाव होते हैं। मपु० २ ११८, २४ ८८-१३० पपु० २ १५५-१५७, हपु० ५८ ३६-३८, वीवच० १६ ३३, ६६

जीवद्यशा—राजगृह नगर के राजा जरासन्ध और उसकी रानी कलिन्दसेना की पुत्री। इसके पिता ने घोषणा की थी कि जो पोदनपुर के राजा सिंहरथ को बाँधकर लायेगा उसके साथ इसका विवाह होगा। इसका विवाह कस के साथ हुआ था। इसने उपहास में अपनी ननद देवकी का रजोवस्त्र अतिमुक्तक मुनि को दिखाया था। इस पर मुनि ने उसे बताया था कि देवकी का पुत्र ही उसके पति और पुत्र दोनो को मारेगा। यह भविष्यवाणी सत्य हुई। कृष्ण के द्वारा कस का वध होने पर यह पिता जरासन्ध के पास कृष्ण से उसका बदला लेने को कहने गयी थी। जरासन्ध क्षुभित हुआ और कृष्ण के साथ घोर सग्राम हुआ जिसमें वह मारा गया। मपु० ७० ३५२-३७३, ४९४, हपु० ३३ ७-७३ पापु० ११ ४४-४५

जीवविचय—धर्मध्यान के दस भेदो में तीसरा भेद। इस ध्यान में द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयो से जीव के स्वरूप का चिन्तन किया जाता है। हपु० ५६ ४२-४३

जीवभाव—जीव के निज तत्त्व। औपशमिक, औपशमिक,क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक ये पाँच भेद जीव के हैं। मपु० २४ ९९

जीव-समास—स्थावर और त्रस जीवो के भेद-प्रभेद। हपु० २ १०७, पापु० २२ ७३

जीवसिद्धि—समन्तभद्राचार्य द्वारा रचित एक ग्रन्थ। इसमें जीव की स्वतन्त्र स्थिति की सिद्धि की गयी है। हपु० १ २९

जीव-स्थान—जीवों के रहने के स्थान। इन्हें जीव-समास भी कहा जाता है। हपु० २ १०७

जीवहिंसा—जीवो के प्राणो का उच्छेद करना। जीव-हिंसक को अनेक नारकीय दुःख भोगने पडते हैं। वीवच० ४ १६-१७

जीवाधिकरण—आस्रव का प्रथम भेद। यह सरम्भ, समारम्भ और आरम्भ से होता है। इन तीनो में प्रत्येक कृत, कारित, अनुमोदना के भेद से तीन-तीन तथा क्रोध, मान, माया, लोभ के भेद से चार-चार, इस प्रकार छत्तीस भेद होते हैं। मनोयोग, वचनयोग, काययोग के भेद से इनके तीन-तीन भेद और करने से इसके कुल एक सौ आठ भेद होते हैं। हपु० ५८ ८४-८५

जीवाधिगमोपाय—सत्, सख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, भाव, अन्तर और अल्पबहुत्व इन आठ अनुयोगो से जीव तत्त्व का ज्ञान होता है। मपु० २४ ९७-९८

जीविताशसा—सल्लेखना के पाँच अतिचारो में प्रथम अतिचार। यह सल्लेखना ले लेने के बाद अधिक समय तक जीवित रहने की आकाक्षा से होती है। हपु० ५८ १८४

जृम्भक—(१) इस जाति का एक देव। पूर्वभव के स्नेहवश इसने नारद का वैताढ्य पर्वत की मणिकाचन गुहा में दिव्य आहार से पालन किया था। पपु० ११ १५१-१५८, हपु० ४२ १६-१८

(२) देवों की एक जाति। इस जाति के देव बलदेव के पुत्रो तथा अन्य चरमशरीरियो को जिनेन्द्र के पास ले गये थे। हपु० ६१ १२

जृम्भण—एक भयकर विद्यास्त्र। वसुदेव ने शल्य को इसी अस्त्र से बाँधा था। हपु० २५ ४८, ३१ ९८

जृम्भा—ऐरावत क्षेत्रवासिनी जिनशासन की सेविका एक देवी। पपु० ३० १६४

जृम्भिक—अजुकूला नदी के तट पर स्थित एक ग्राम। यहाँ महावीर को केवलज्ञान हुआ था। मपु० ७४ ३४८-३४९, हपु० २ ५७-५९, पापु० १ ९४-९५, वीवच० १३ १००-१०१

जृम्भिणी—एक विद्या। यह भानुकर्ण को प्राप्त हुई थी। पपु० ७ ३३३

जेता—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

(२) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४०

जैत्री—समवसरण के सप्तपर्ण वन की छ वापियो में एक वापी। हपु० ५७ ३३

जैनदीक्षा—निर्ग्रन्थदीक्षा। यह किसी मुनि से ली जाती है। इसे लेने के पूर्व केशलुचन किया जाता है। मपु० ५ १४७, ७ २२, १७. २००-२०१

जैनधर्म—आत्म धर्म। यह कुमतिभेदी, पुण्य का साधक, दुःख मोचक सुखविस्तारक और स्वर्ग तथा मोक्ष सुख का प्रदाता जिनेन्द्र प्रणीत धर्म है। मपु० ५ १४५, २९६, ६ २२, १० १०६-१०९, पपु० ८८ १३-१४, हपु० १ १

जैनश्रुति—जिनवाणी। यह निर्दोष है और इसका प्रसार आचार्य परम्परा से हुआ है। मपु० २६ १३७

जैनी—राजगृह नगर के राजा विश्वभूति की रानी। यह विश्वनन्दी की जननी थी। मपु० ५७ ७२, वीवच० ३ १-७

ज्ञातृधर्मकथांग—द्वादशांगश्रुत का छठा अंग। इसमें पाँच लाख छप्पन हजार पद हैं। मपु० ३४ १४०, हपु० २.९३, १० २६

ज्ञान—जीव का अबाधित गुण। इससे स्व और पर का बोध होता है। यह धर्म-अधर्म, हित-अहित, बन्ध-मोक्ष का बोधक तथा देव, गुरु और धर्म की परीक्षा का साधन है। यह मतिज्ञान आदि के भेद से पाँच प्रकार का होता है। प्रत्यक्ष और परोक्ष के भेद से इसके दो भेद हैं। इनमें मतिज्ञान और श्रुतज्ञान-परोक्ष तथा अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान प्रत्यक्ष हैं। मपु० २४ ९२, ६२ ७, पपु० ९७ ३८, हपु० २ १०६, पापु० २२ ७१, वीवच० १८ १५

ज्ञानकल्याणक—तीर्थंकरों के पाँच कल्याणकों मे चौथा कल्याणक। यह तीर्थंकरों को केवलज्ञान प्राप्त होने पर देवों द्वारा सम्पादित उत्सव विशेष होता है। हपु० २ ६०

ज्ञानगर्भ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८१

ज्ञानचक्षु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

ज्ञानदान—चतुर्विध दान में एक दान—ज्ञान के साधनों का दान करना। इससे जीव प्रतिष्ठा आदि प्राप्त करता है तथा नाना कलाओं का पारगत होता है। पपु० १४ ७६, ३२ १५६

ज्ञानधर्मदमप्रभु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३२

ज्ञाननिग्राह्य—सौधर्मेन्द्र द्वार स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७३

ज्ञानप्रवाद—पूर्व श्रुत का पाँचवाँ भेद। हपु० २ ९८

ज्ञानभावना—मुनि के ध्यान मे सहायक पाँच भावनाएँ। वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षण, परिवर्तन (आवृत्ति) और धर्मदेशन पाँच भावनाएँ हैं। मपु० २१ ९५-९६

ज्ञानसर्वग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१६४

ज्ञानाग्नि—शरीर में ही सदा विद्यमान ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि, तथा जठराग्नि इन तीन अग्नियों मे प्रथम अग्नि। पपु० ११ २४८

ज्ञानाचार—पचविध चारित्र का एक भेद। इसमें आठ दोषों (शब्द, अर्थ आदि की भूलों) से रहित सम्यक्ज्ञान प्राप्त किया जाता है। मपु० २० १७३, पापु० २३ ५५-५६

ज्ञानात्मन्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

ज्ञानाब्धि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। २५ २०५

ज्ञानाराधना—चतुर्विध आराधनाओं में दूसरी आराधना। इसमें जिनागम में प्रतिपादित जीव आदि तत्त्वों को निश्चय नय से जाना जाता है। पापु० १९ २६५

ज्ञानावरणकर्म—आत्मा के ज्ञानगुण का आवरक एक कर्म। यह सम्यग्ज्ञान को ढक लेता है और आत्महितकारक ज्ञान में बाधाएँ उपस्थित करता है। इसकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोडाकोडी सागर, जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त और मध्यम स्थिति विविध प्रकार की होती है। पपु० १४ २१, हपु० ३ ९५, ५८ २१५, १६ १५६-१६०

ज्ञानोद्योत—दीपदान के समय व्यवहृत मन्त्र का एक पद-ज्ञानोद्योताय नमः। मपु० ४० ९

ज्ञानोपयोग—जीव के स्वरूप का एक अंग। यह वस्तु को भेदपूर्वक ग्रहण करता है। इसके मतिज्ञान आदि आठ भेद होते हैं। मपु० २४ १०१, पपु० १०५ १४७-१४८

ज्येष्ठ—(१) सौधर्मेन्द्र एवं भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२, २४ ४३

(२) समवसरण के तीसरे दक्षिणी गोपुर के आठ नामों में तीसरा नाम। हपु० ५७ ५८

ज्येष्ठा—(१) भद्रिलपुर नगर निवासी सेठ धनदत्त और सेठानी नन्दयशा की पुत्री। यह प्रियदर्शना की बहिन थी। मपु० ७० १८६

(२) सिन्धु देश की वैशाली नगरी के राजा चेटक की छठी पुत्री। चन्दना इसकी छोटी बहिन तथा प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलिनी बडी बहिनें थी। श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार ने इसे और चेलिनी को श्रेणिक का पट्ट पर अंकित चित्र दिखाकर उसके प्रति आकृष्ट कर लिया था। चेलिनी के साथ यह भी अभयकुमार का अनुगमन कर रही थी किन्तु चेलिनी द्वारा छले जाने से इसने ससार से विरक्त होकर दीक्षा ले ली थी। मपु० ७५ ३, ६-७, २०-३३

ज्योतिःप्रभ—(१) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। मपु० ६२ २४१, पपु० ८ १५०, पापु० ४ १५२

(२) एक विमान। कुम्भकर्ण इसी विमान पर आरूढ होकर राम से युद्ध के लिए लंका से निकला था। पपु० ५७ ६३

ज्योतिःपुर—ज्योतिषी देव। पपु० ६ ३२५

ज्योति—प्रथम नरक के खरभाग का आठवाँ पटल। हपु० ४ ५३ दे० खरभाग

ज्योतिप्रभा—त्रिपृष्ठ नारायण की पुत्री। इसका विवाह स्वयंवर विधि से अमिततेज के साथ हुआ था। मपु० ६२ १५३, १६२, पापु० ४ ८७

ज्योतिरंग—भोगभूमि में विद्यमान दस प्रकार के कल्पवृक्षों में प्रकाश देनेवाले रत्न-निर्मित कल्पवृक्ष। ये प्रकाशमान कान्ति के धारक होते हैं तथा सदैव प्रकाश फैलाते रहते हैं। मपु० ३ ३९, ५६, ८०, ९ ३५-३६, ४३, हपु० ७ ८०-८१, वीवच० १८ ९१-९२

ज्योतिर्दण्डपुर—विद्याधरों का एक बडा नगर। यहाँ के राजा ने राम के विरुद्ध रावण की सहायता की थी। पपु० ५५.८७-८८

ज्योतिर्माला—(१) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के विद्याधर महाबल की पत्नी। हपु० ६० १७-१८

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के सुरेन्द्रकान्तार नगर के मेघवाहन और उसकी रानी मेघमालिनी की पुत्री। यह विद्याधर विद्युत्प्रभ की बहिन थी। इसका विवाह ज्वलनजटी के पुत्र अर्ककीर्ति से हुआ था। यह अमिततेज और उसकी बहिन सुतारा की जननी थी। मपु० ६२ ७१-७२, ८०, १५१-१५२, पापु० ४ ८५-८६

(३) अलका नगरी के राजा पुरुबल की रानी। यह हरिबल की जननी थी। मपु० ७१ ३११

ज्योतिर्मूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०५

ज्योतिर्वन—विजयार्ध पर्वत का एक वन । यहाँ पोदनपुर का राजा सुतारा के साथ विहार करने आया था । मपु० ६२ २२८, ७१ ३७०

ज्योतिर्वेगा—अशनिवेग विद्याधर की माता । अशनिवेग राजपुर के स्वामी स्तमितवेग का पुत्र था । मपु० ४७ २९, हपु० ३ १३५

ज्योतिश्चक्र—नक्षत्रों का समूह । ये प्रकाश से युक्त हैं और सदा आकाश में रहते हैं । मपु० ३ ८५, १३ १६६

ज्योतिष्क—चतुर्विध देवों में एक प्रकार के देव । ये उज्ज्वल किरणों से युक्त हैं और पाँच प्रकार के हैं—ग्रह, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य और तारे । तीर्थंकरों का जन्म होते ही इन देवों के भवनों में अकस्मात् सिंहगर्जना होने लगती है । इनका निवास मध्यलोक के ऊपर होता है । ये मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा देते हुए निरन्तर गतिशील रहते हैं । इनके विमानों में जिनालय और जिनालयों में हेम-रत्नमयी जिन प्रतिमाएँ रहती हैं । इन देवों की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक एक पल्य तथा जघन्य स्थिति पल्य के आठवें भाग प्रमाण होती है । मपु० ७० १४३, ७२ ४७, पपु० ३ ८१-८२, १५९-१६३, १०५ १६५, हपु० ३ १४०, ३८ १९, वीवच० ११ १०१-१०२

ज्योतिष्पटल—यह पृथिवी तल से सात सौ नब्बे योजन की ऊँचाई से नौ सौ योजन की ऊँचाई तक एक सौ दस योजन में स्थित है । यह घनोदधिवातवलय पर्यन्त सब ओर फैला है । सबसे नीचे तारा-पटल है । उससे दस योजन ऊपर सूर्य पटल, उससे अस्सी योजन ऊपर चन्द्र पटल, उससे चार योजन ऊपर नक्षत्र-पटल, उससे चार योजन ऊपर बुध पटल और उससे तीन-तीन योजन ऊपर चलकर क्रम से शुक, गुरु, मगल और शनि ग्रहों के पटल हैं । हपु० ६ २-६

ज्योतिष्प्रभ—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के कालकूट नगर के राजा कालसवर के विद्युद्दंष्ट्र आदि पाँच सौ पुत्रों में सबसे छोटा पुत्र । प्रद्युम्न ने इसे कालसवर को यह समाचार देने को भेजा था कि उसके सभी पुत्रों को पाताल-मुखी वापी में औंधे मुह लटका दिया गया है । मपु० ७२ ५४-५५, १२४-१२६

ज्योतिष्मती—विश्वावसु की रानी, शिखी की जननी । पपु० १२ ५५

ज्वर—रावण का एक योद्धा । इसने राम की सेना के विरुद्ध युद्ध किया था । पपु० ६२ २-४

ज्वलज्ज्वलनसप्रभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १९६

ज्वलन—वसुदेव की रानी श्यामा का ज्येष्ठ पुत्र । यह अग्निवेग का अग्रज था । हपु० ४८ ५४

ज्वलनजटी—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के रथनूपुर नगर का विद्याधर राजा । इसने विजयार्ध पर्वत के ही द्युतिलक नामक नगर के राजा विद्याधर चन्द्राभ की पुत्री वायुवेगा के साथ विवाह किया था । यह एक भार्या व्रतधारी था । इन दोनों के अर्ककीर्ति नाम का पुत्र और स्वयप्रभा नाम की पुत्री हुई थी । पुत्री का विवाह इसने प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ से किया था । अमिततेज इसका पौत्र और सुतारा पौत्री थी । मपु० ६२ २५, ३०, ४१, १५१-१५२, पापु० ४ १२, वीवच० ३ ७१-९५

ज्वलनप्रभा—एक नागकन्या । यह वसुदेव के पास राजा एणीपुत्र की पुत्री प्रियगुसुन्दरी के विवाह का प्रस्ताव लेकर आयी थी । हपु० २९ २०-२१, ५९-६०

ज्वलनवेग—विजयार्ध पवत की दक्षिणश्रेणी के किन्नरोद्गीत नगर का राजा अर्चिमाली और उसकी रानी प्रभावती का पुत्र । पिता ने इसे राज्य देकर दीक्षा ले ली थी । इसकी रानी का नाम विमला और पुत्र का नाम अगारक था । इसने भी अपने भाई अशनिवेग को राज्य देकर दीक्षा ले ली थी । हपु० १९.८०-८४

ज्वलितवेगा—विजय नामक व्यन्तर देव की व्यन्तरी । हपु० ६० ६०

ज्वलिताक्ष—इन्द्र विद्याधर का एक पक्षधर देव । इसने देवासुर संग्राम में भाग लिया था । पपु० १२ २००

झ

झमला—राम के समय का ताडना से बजनेवाला एक वाद्य । पपु० ५८ २७

झर्झर—राम के समय का ताडना से बजनेवाला एक वाद्य । पपु० ५८ २८

झष—(१) गर्भावस्था में तीर्थंकर की माता द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नों में एक स्वप्न-मीन-युगल । पपु० २१ १२-१४

(२) पाँचवी पृथिवी (धूमप्रभा) के तृतीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल । इसकी चारों महादिशाओ में अट्ठाईस और विदिशाओं में चौबीस कुल बावन श्रेणिबद्ध बिल हैं । इसका विस्तार छ लाख पचास हजार योजन है । इसकी जघन्य स्थिति भ्रम इन्द्रक की उत्कृष्ट स्थिति के समान तथा उत्कृष्ट स्थिति चौदह सागर और एक सागर के पाँच भागो में एक भाग प्रमाण होती है । यहाँ के नारकी सौ धनुष ऊँचे होते हैं । हपु० ४ ८३ १४०, २११, २८७-२८८,३३४

ट

टंक—दशानन का पक्षधर एक नृप । पपु० १० ३६-३७

टंकण—एक देश । यहाँ रुद्रदत्त और चारुदत्त अपने भ्रमणकाल में आये थे । हपु० २१ १०३

ड

डमर—रावण का पक्षधर एक योद्धा । पपु० ५७.५१

डम्बर—रावण का एक सामन्त । पपु० ५७ ५१

डिण्डि—रावण का एक सामन्त । पपु० ५७ ५१

डिण्डिम—रावण का एक योद्धा । पपु० ५७ ५१

डिम्ब—रापण का पक्षधर एक नृप । पपु० १० ३६

त

तक्ष—शिलापट । चक्रवर्ती का एक सजीव रत्न । मपु० ३७ ८४

तक्षक—(१) खदिर अटवी की एक शिला । ज्योतिर्देव धूमकेतु ने प्रद्युम्न को इसी के नीचे दबाया था । मपु० ७२.४७-५३

(२) एक नागदेव । खण्डकवन में अर्जुन द्वारा छोड़े गये अग्नि-

बाण से लगी हुई आग को देखकर यह क्षुब्ध हुआ। अर्जुन से इसने युद्ध किया। इस युद्ध में यह परास्त हुआ। पापु० १६ ७७-९०

(३) बढ़ई। आदिपुराण कालीन शिल्पी। यह लकडी का काम करता है। आ० पु० प्रशस्ति

तट—गन्धर्वगीत नगर के राजा भानुरक्ष के पुत्रो द्वारा विजयार्ध पर्वत पर बसाये गये दस नगरो मे सातवाँ नगर। पपु० ५ ३६७, ३७२

तडित्केश—लका का एक राजा। श्रीचन्द्रा इसकी रानी थी। यह किष्कु-नगर के राजा महोदधि विद्याधर का अनन्य मित्र था। महोदधि के दीक्षित हो जाने के समाचार पाने से यह सुकेश नामक पुत्र को अपना राज्य सौंपकर दीक्षित हो गया और इसने रत्नत्रय की आराधना की। समाधिपूर्वक देह त्याग कर यह देव हुआ। इसका अपरनाम विद्युत्केश था। पपु० ६ २१८ २४२, ३३२-३३४

तडित्पिंग—इस नाम का एक देव। इसने युद्ध मे रावण के शत्रु इन्द्र विद्याधर की सहायता की थी। पपु० १२ २००

तडित्प्रभ—निषध पर्वत से उत्तर की ओर नदी के मध्य मे स्थित पाँच महाह्रदो में एक महाह्रद। इसका मूलभाग वज्रमय है। यहाँ कमलो पर बने भवनो मे नागकुमार देव रहते हैं। हपु० ५ १९६-१९७

तडिदगद—विजयार्ध पर्वत का निवासी एक विद्याधर। श्रीप्रभा इसकी स्त्री और उदित इसका पुत्र था। पपु० ५ ३५३

तडिद्वक्त्र—विद्याधरो का राजा। यह राम का महावेगशाली पक्षधर था। पपु० ५४ ३४-३६

तडिन्माला—(१) कुम्भपुर नगर के राजा महोदर और रानी सुरूपाक्षी की पुत्री। यह भास्करश्रवण (भानुकर्ण) से विवाहित हुई थी। पपु० ८ १४२-१४३

(२) रावण की पत्नी। पपु० ७७ १४

तत—तार के बजाये जानेवाले वीणा आदि वाद्य। पपु० १७ २७४, २४ २०-२१, हपु० ८ १५९, १९ १४२-१४३

तत्त्व—जीव आदि सात तत्त्व। तत्त्व सात हैं—जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, सवर, निर्जरा और मोक्ष। मपु० २१ १०८, २४ ८५-८७, हपु० ५८ २१, पापु० २२ ६७, वीवच० १६ ३२

तत्त्वकथा—मोक्षमार्ग में प्रेरित करनेवाली कथा। यह कथा जीव-अजीव आदि पदार्थों का विवेचन करनेवाली, वैराग्य उत्पादिनी, दान, पूजा, तप और शील का महात्म्य बतानेवाली तथा बन्ध-मोक्ष और उनके कारणो तथा फलो का प्ररूपण करनेवाली होती है। इसका अपरनाम धर्मकथा है। मपु० ६२ ११-१४

तत्त्वार्थ-भावना—ध्यानशुद्धि की हेतु भूत ज्ञानशुद्धि में सहायक चिन्तन। यह चित्त की शुद्धि के लिए उपादेय है। मपु० २१ २६

तद्धित—पदगत गन्धर्व की एक विधि। हपु० १९ १४९

तद्विहार—गर्भान्वय क्रिया का इक्यावनवाँ भेद। इसमें धर्मचक्र को आगे करके भगवान् का विहार होता है। मपु० ३८ ६२, ३०४

तदुभयप्रायश्चित्त—प्रायश्चित्त के नौ भेदो में तीसरा भेद। इसमें आलोचना तथा प्रतिक्रमण दोनो से चित्त की शुद्धि होती है। हपु० ६४ ३२-३४

तनयसोम—नमि का पुत्र। हपु० २२ १०७

तनुत्रक—शरीर की रक्षा करनेवाले लोहे के टोप और कवच आदि। मपु० ३१ ७२, ३६.१४

तनुनिर्मुक्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

तनुवात—(१) लोक का चारो ओर से आवर्तक तीसरा वायुमण्डल (वातवलय)। हपु० ४.३३-३५, ५ १

(२) ऊर्ध्वलोक के अन्त में तनुवातवलय का अन्तिम ५२५ धनुष प्रमाण सिद्धो का निवास क्षेत्र। मपु० ६६ ६२

तनुसंवरण—जरायुपटल। यह गर्भावस्था मे शिशु के शरीर मे लिपटी हुई मास की एक झिल्ली होती है। मपु० ३ १५०

तनुसन्ताप—बाह्य तप का पाँचवा भेद। इसे कायक्लेश भी कहते है। मपु० १८ ६७-६८

तनूदरी—राजा प्रवर और रानी आवली की पुत्री। रावण ने इसका अपहरण करके अपनी रानी बनाया था। पपु० ९ २४, ७७ ९-१३

तन्तुचारण—एक चारण ऋद्धि। इससे सूत अथवा मकडी के जाल के तन्तुओ पर भी गमन किया जा सकता है। मपु० २ ७३

तन्त्र—स्व-राष्ट्र की व्यवस्था। यह मन्त्रि-परिषद् के परामर्श के अनुसार की जाती थी। मपु० ४१ १३७

तन्त्रकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

तप—(१) श्रावक के छ कर्मों में छठा कर्म। इसमें शक्ति के अनुसार उपवास आदि से मन, इन्द्रियसमूह और शरीर का निग्रह किया जाता है। निर्जरा के लिए यह आवश्यक होता है। मपु० २० २०४, ३८. २४, ४१, ४७.३०७, ६३ ३२४, पापु० २३ ६६ इसके दो भेद होते है—बाह्य और आभ्यन्तर। इनमें अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसख्यान, रस परित्याग, विविक्त-शय्यासन और कायक्लेश ये छ बाह्य तप हैं तथा प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान ये छ अन्तरग तप हैं। नियम भी तप है। पपु० १४ २४२-२४३, हपु० २ १२९, ६४ २०, वीवच० ६ ३१-५४

(२) एक ऋद्धि। इसके उग्र, महोग्र, तप्त आदि अनेक भेद हैं। मपु० ३६.१४९-१५१

तपन—(१) मेघा नामक तीसरी नरकभूमि के नौ इन्द्रक बिलो में तीसरा इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में बानवें और विदिशाओ में अठासी श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८०-८१, १२०

(२) आदित्यवशी राजा तेजस्वी का पुत्र। यह अतिवीर्य का पिता था। ससार से विरक्त होकर इसने निर्ग्रन्थ-दीक्षा ले ली थी। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ ९

तपनकूट—विद्युत्प्रभ पर्वत का पाँचवाँ कूट। हपु० ५ २२२-२२३

तपनीयक—(१) मानुषोत्तर पर्वत की आग्नेय विदिशा का एक कूट। यह स्वातिदेव की निवासभूमि है। हपु० ५ ६०१, ६०६

(२) सौधर्म और ऐशान स्वर्ग का उन्नीसवाँ पटल। हपु० ४ ४४-४७

तपनीयनिभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९८

तप-भावना—शक्ति को न छिपाते हुए शरीर द्वारा किया गया मोक्ष मार्ग के अनुरूप उद्यम। मपु० ६३ ३२४, हपु० ३४ १३८

तप-शुद्धि—एक व्रत। इसमें अनशन आदि बाह्य तपो के क्रमश दो, एक, एक, पाँच, एक और एक इस प्रकार ग्यारह तथा प्रायश्चित्त आदि अन्तरग तपो के क्रमश उन्नीस, तीस, दस, पाँच, दो और एक इस प्रकार सडसठ-कुल अठहत्तर उपवास किये जाते हैं। इनमें एक उपवास के बाद एक पारणा की जाती है। इसमें कुल एक सौ छप्पन दिन लगते हैं। हपु० ३४ ९९

तपाचार—पचाचार में चतुर्थ आचार। इसमें बाह्य और आभ्यन्तर दोनो प्रकार के तप किये जाते हैं। इससे सयम की रक्षा होती है। मपु० २० १७३, पापु० २३ ५८

तपाराधना—चतुर्विध आराधनाओं में चौथी आराधना। इसमें दोनो प्रकार के तप और सयम का पालन किया जाता है। पापु० १९ २६३, २६७

तपित—मेघा नामक तीसरी नरकभूमि के द्वितीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में छियानवें एव विदिशाओ में बानवें श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८०-८१, ११९

तपोरूपा—एक विद्या। यह रावण को सिद्ध थी। पपु० ७.३२७

तप्त—(१) तीसरी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में सौ और विदिशाओ में छियानवें श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८०, ११८

(२) एक ऋद्धि। इससे तपस्वी उत्कृष्ट तप करता है। मपु० ११ ८२

तप्तचामीकरच्छवि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९८

तप्तजला—पूर्व विदेह की एक विभगा नदी। यह नदी निषध पर्वत से निकलकर सीता नदी की ओर जाती है। मपु० ६३ २०६ हपु० ५ २४०

तप्तजम्बूनदद्युति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २००

तप्ततप्त—तप सम्बन्धी एक ऋद्धि। यह अत्युग्र तप करने से प्राप्त होती है। मपु० ३६ १५०

तम प्रभा—छठी नरकभूमि। अपरनाम मघवी। यह सोलह हजार योजन मोटी है। इसमें पाँच कम एक लाख बिल हैं जिसमें बाईस सागर उत्कृष्ट आयु के धारी तथा दो सौ पचास धनुष शरीर की ऊँचाई वाले नारकी रहते हैं। यहाँ अति तीव्र शीत वेदना होती है। मपु० १० ३१-३२, ९०-९४, हपु० ४.४३-४६, ५७-५८

तम—पाँचवी धूमप्रभा नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओं में छत्तीस और विदिशाओं में बत्तीस श्रेणीबद्ध बिल हैं। इसकी पूर्व दिशा मे निरुद्ध, पश्चिम में अतिनिरुद्ध, दक्षिण में विमर्दन और उत्तर में महाविमर्दन नाम के चार महानरक हैं। इसका विस्तार आठ लाख तैंतीस हजार तीन सौ तैंतीस योजन और एक योजन के तीन भागो में एक भाग प्रमाण है। इसकी जघन्य स्थिति दस सागर तथा उत्कृष्ट स्थिति ग्यारह सागर और एक सागर के पाँच भागो में दो भाग प्रमाण है। यहाँ नारकियो की अवगाहना पचहत्तर धनुष होती है। मपु० १० ३१, हपु० ४ ८३, १३८, १५६ २०९, २६५-२८६, ३३३

तमक—चौथी नरकभूमि के पचम प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में अडतालीस और विदिशाओ में चवालीस श्रेणीबद्ध बिल होते हैं। हपु० ४ ८२, १३३

तमसा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ५४

तमस्तम प्रभा—नरक की सातवी पृथिवी। अपरनाम महातम प्रभा। मपु० १० ३१, पपु० ११ ७२ हपु० २ १३६, ४४५

तमिस्र—विजयार्ध की एक गुहा। यह पर्वत की चौडाई के समान लम्बी, आठ योजन ऊँची, बारह योजन चौडी है। उसके कपाट वज्र-निर्मित हैं। इसके तल प्रदेश में सिन्धु नदी बहती है। मपु० ३२ ६-९, हपु० ११ २१

तमोन्तक—चारुदत्त का मित्र। हपु० २१ १३

तमोपह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०५

तमोबाण—अन्धकार का प्रसार करनेवाला बाण। इसे भास्कर-बाण से प्रभावहीन किया जाता है। मपु० ४४ २४२

तमोरि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६

तरंगमाला—दधिमुख नगर के राजा गन्धर्व और रानी अमरा की छोटी पुत्री। यह चन्द्रलेखा और विद्युत्प्रभा की छोटी बहिन थी। तीनो बहिनो का विवाह राम से किया गया था। पपु० ५१ २५-२६, ४८

तरगवेग—एक विद्याधर। इसने श्रीभूति पुरोहित की पुत्री वेदवती को उसके पूर्वभव में (हथिनी की पर्याय में) मरणासन्न अवस्था में णमोकार मन्त्र सुनाया था, जिसके प्रभाव से वह श्रीभूति पुरोहित की वेदवती नाम की पुत्री हुई। पपु० १०६ १३८-१४१

तरगिणी—एक नदी। इसके साथ वेगवती नदी मिलती है। हपु० ४६. ४९

तरलप्रतिबन्ध—मोती की एक लडी-हार। मपु० १६ ५४

तरलप्रबन्ध—हार यष्टि। मपु० १६ ४७

तर्पण—पाँच फणोवाले नागराज द्वारा स्वर्णार्जुन वृक्ष के नीचे प्रद्युम्न को दिये गये पाँच बाणो में एक बाण। मपु० ७२ ११८-११९

तलवर—आरक्षण (पुलिस) का वरिष्ठ अधिकारी। मपु० ४६ २९१, ३०४

ताडवी—विकृत शरीरधारिणी एक पिशाची। कस ने कृष्ण को मारने के लिए इसे भेजा था। कृष्ण ने इसे देखते ही मार डाला था। हपु० ३५ ६९

ताण्डव—उद्धत नृत्य। तीर्थंकरो के कल्याणकों के समय इन्द्र स्वय यह नृत्य करता है। इसके कई भेद हैं उनमें पुष्पाजलि प्रकीर्णक भी एक

है। इसमें पुष्प-क्षेपण करके नृत्य किया जाता है। मपु० १४ १०६, ११४, २१.१३९

ताप—असातावेदनीय का आस्रव। हपु० ५८.९३

तापन—(१) नागराज द्वारा प्रद्युम्न को प्रदत्त पाँच बाणो में एक बाण। मपु० ७२ ११८-११९

(२) तीसरी बालुकाप्रभा नरकभूमि के चतुर्थ प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में अठासी और विदिशाओ में चौरासी श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८०-८१, १२१

तापस—भरतक्षेत्र के पश्चिम में स्थित आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ भरतेश का एक भाई राज्य करता था। जब भरतेश ने उसे अपने अधीन करना चाहा तो वह इसे छोडकर दीक्षित हो गया था। हपु० ११ ७१-७३

तापी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरत की सेना इस नदी को पार करके आगे बढी थी। मपु० ३० ६१, पपु० ३५ २

तामसास्त्र—अन्धकारोत्पादक एक बाण। इसे भास्करबाण से प्रभावहीन किया जाता है। मपु० ४४ २४२, पपु० १२ ३२८, हपु० ५२ ५५

तामिस्र—पाँचवी नरकभूमि के पचम प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में बीस और विदिशाओ में सोलह श्रेणिबद्ध बिल हैं। इसका विस्तार चार लाख छियासठ हजार छ सौ छियासठ योजन और एक योजन के तीन भागो मे दो भाग प्रमाण होता है। इसकी जघन्य स्थिति एक सागर और एक सागर के पाँच भागो में तीन भाग प्रमाण तथा उत्कृष्ट स्थिति सत्रह सागर प्रमाण है। यहाँ नारकी एक सौ पच्चीस धनुष ऊँचे होते हैं। हपु० ४.८३, १४२, २१३, २८९-२९०, ३३५

तामिस्रगुहक—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत के नौ कूटो में सातवाँ कूट। यह मूल में छ योजन, मध्य मे कुछ कम पाँच योजन और ऊपर कुछ अधिक तीन योजन है। हपु० ५ २७, २९

तामिस्रगुहकूट—ऐरावत क्षेत्र के मध्य में स्थित विजयार्ध के नौ कूटो में तीसरा कूट। हपु० ५ ११०

ताम्रचूल—भूतरमण नामक वन का भूत जाति का एक व्यन्तर। मपु० ६३ १८६

ताम्रलिप्त—एक नगर। यहाँ अमितगति व्यापार के लिए आया था। हपु० २१ ७६

ताम्रलिप्ति—ऐलेय के द्वारा अग देश में बसाया गया एक नगर। हपु० १७ २०

ताम्रा—भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ५०

तार—चौथी पकप्रभा नरकभूमि के द्वितीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में साठ और विदिशाओ में छप्पन श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८२, १३०

तारक—(१) दूसरा प्रतिनारायण। यह अवसर्पिणी के चौथे काल मे भरतक्षेत्र स्थित गोवर्द्धन नगर के राजा श्रीधर का पुत्र हुआ था। द्विपृष्ठ के गन्धगज के लोभ में पडकर यह अपने ही चक्र से मारा गया और नरक में जा गिरा था। पूर्वभवो में यह विन्ध्यशक्ति नाम का राजा था। चिरकाल तक अनेक योनियो मे भ्रमण कर वर्तमान भव में द्वितीय प्रतिनारायण हुआ। मपु० ५८ ९१, १०२-१०४, ११५-१२४, पपु० २० २४२-२४४, हपु० ६० २९१, वीवच० १८. १०१, ११४-११५

(२) नक्षत्र-समूह। यह ज्योतिरग जाति के वृक्षो की प्रभा के क्षय से सन्मति नामक दूसरे कुलकर के समय में दिखायी देने लगा था। इससे दिन-रात का विभाजन होने लगा था। मपु० ३ ८४-८६

(३) अर्जुन का एक शिष्य एव मित्र। वनवास के समय सहायवन में स्थित पाण्डवो पर दुर्योधन द्वारा आक्रमण किया गया था। उस समय इसने दुर्योधन को नागपाश से बाँध लिया था। पापु० १७ ६६, १००-१०७

तारा—(१) ईशावती नगरी के राजा कार्तवीर्य की रानी। यह चक्रवर्ती सुभौम की जननी थी। पपु० २० १७१-१७२, हपु० २५ ११

(२) किष्किन्धपुर के राजा सुग्रीव की रानी। पद्मरागा इसकी पुत्री थी। पपु० १९ २, १०७-१०८

तारावरायण—महेन्द्रनगर के राजा विद्याधर महेन्द्र का मन्त्री। पपु० १५ ३६

तार्क्ष्यकेतु—कृष्ण। हपु० ५१ १९

तार्क्ष्यव्यूह—गरुड व्यूह। पापु० ३ ९७, १९ १०४

तार्ण—उत्तरदिशा का एक देश। यहाँ भगवान् महावीर का विहार हुआ था। हपु० ३ ६

ताल—एक घनवाद्य (मजीरा)। मपु० १२ २०९

तालीवन—ताड के वृक्षो का वन। यह दक्षिण भारत मे था। मपु० २९ ११८, ३० १५

तिगंछ—जम्बूद्वीप के कुलाचलो के मध्य मे स्थित कमल-विभूषित सोलह ह्रदो में तीसरा ह्रद। अपरनाम तिगिंछ। मपु० ६३ १९७, हपु० ५ १२०-१२१

तिन्दुक—तेंदूवृक्ष। तीर्थंकर श्रेयान् (श्रेयास) ने इसी वृक्ष के नीचे निर्ग्रन्थ दीक्षा ग्रहण की थी। पपु० २० ४७

तिरस्करिणी—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि को दी हुई सोलह विद्या निकायो की विद्याओ में एक विद्या। हपु० २२ ६३

तिर्यक्लोक—लोक का मध्यभाग। इसका विस्तार एक राजु है। यह असख्यात वलयाकार द्वीपो और समुद्रो मे शोभायमान है। ये द्वीप और समुद्र क्रम से दुगुने-दुगुने विस्तार से युक्त हैं। हिमवत् आदि छ कुलाचलो, भरत आदि सात क्षेत्रो और गगा-सिन्धु आदि चौदह नदियो मे युक्त एक लाख योजन चौडा जम्बूद्वीप इसके मध्य में स्थित है। यह तनुवातवलय के अन्त भाग पर्यन्त पृथिवीतल के एक हजार योजन नीचे से लेकर निन्यानवें हजार योजन ऊँचाई तक फैला हुआ है। मपु० ४.४०-४१, ४५-४९, पपु० ३.३०-३१, हपु० ५ १

तिर्यग्गति—तिर्यंचगति। इस गति को मायाचारी, पर-स्त्रियों के अपहरण में आसक्त, आठो प्रहर भक्षक, महामूर्ख, कुशास्त्रज्ञ, व्रत-शील आदि

से दूर, कापोत लेश्याधारी, आर्तध्यानी और मिथ्यादृष्टि मानव पाते हैं। इस गति में जीव आजीवन पराधीन होकर विविध दुःख भोगते हैं। इस गति मे एकेन्द्रिय से लेकर पचेन्द्रिय तक के जीव उत्पन्न होते हैं। वे यहाँ चिरकाल तक दुःख भोगते हैं। मपु० १७ २८, पपु० २ १६३-१६६, ५ ३३१-३३२, ६ ३०५, हपु० ३ १२०-१२१, वीवच० १७ ७३-७७ इनकी जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट स्थिति एक करोड वर्ष पूर्व की होती है। भोगभूमिज तिर्यचों की उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य और जघन्य स्थिति एक पल्य है। इस योनि में जन्म लेकर भी सज्ञी पचेन्द्रिय जीव यथाशक्ति नियम आदि धारण करते हैं जिससे उन्हें अगले जन्म में मानवगति मिलती है। हपु० २ १३५, ३ १२१-१२४

तिर्यग्व्यतिक्रम—दिग्व्रत का एक अतिचार। समान धरातल की सीमा का उल्लघन करना। हपु० ५८ १७७

तिलक—(१) दोनो भौंहो के मध्य ललाट का सुगन्धाकन। मपु० १४ ६, पपु० ३ २००

(२) वृषभदेव की दीक्षाभूमि। यह स्थान वृषभदेव के प्रजा से दूर हो जाने से "प्रजाग" अथवा उनके द्वारा प्रकृष्ट त्याग किये जाने से "प्रयाग" नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ३ २८१

(३) तीर्थंकर कुन्थुनाथ का चैत्यवृक्ष। मपु० ६४ ४२-४३, पपु० २० ५३

(४) राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १३

(५) अयोध्या नगरी के निवासी वज्राक और उसकी भार्या मकरी का पुत्र। इसके भाई का नाम अशोक था। अन्त में यह दीक्षित हो गया था। पपु० १२३ ८६-१००

(६) धातकीखण्ड के ऐरावत क्षेत्र का एक नगर। मपु० ६३ १६८

तिलकसुन्दरी—महापुरी नगरी के राजा सुप्रभ की रानी और धर्मरुचि की जननी। धर्मरुचि पूर्वभव में सनत्कुमार चक्रवर्ती था। पपु० २० १४७-१४८

तिलका—(१) मथुरा के सेठ भानु के पुत्र भानुकीर्ति की स्त्री। हपु० ३३ ९६-९९

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी की सत्ताईसवी नगरी। मपु० १९ ८२, ८७

तिलकानन्द—एक मासोपवासी मुनि। कुमार लोहजंघ ने इनको वन में आहार दिया था और पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। हपु० ५० ५९-६०

तिलपथ—कुरुजागल देश का एक समृद्ध नगर। पापु० १६ ५

तिलवस्तुक—एक नगर। यहाँ वसुदेव आया था। हपु० २४ २

तिलोत्तमा—(१) मुनि भक्त एक देवी। मपु० ६३ १३६-१३७

(२) चन्द्राभ नगर के राजा धनपति की रानी, पद्मोत्तमा की जननी। मपु० ७५ ३९१

तीक्ष्ण—अवसर्पिणी काल के अन्त में सरस और विरस मेघों के क्रमशः सात-सात दिन बरसने के पश्चात् सात दिन पर्यन्त वर्षाकारी मेघ। मपु० ७६ ४५२-४५३

तीर्णकर्ण—भरतक्षेत्र के उत्तरवर्ती आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ भरतेश का भाई राज्य करता था। इसने भरतेश की अधीनता स्वीकार नहीं की और दीक्षित हो गया। हपु० ११ ६७

तीर्थ—(१) मोक्ष प्राप्ति का उपाय। ससार के आदि धर्म तीर्थ के प्रवर्तक वृषभदेव थे। मपु० २ ३९, ४८, हपु० १ ४, १० २

(२) नदी या सरोवर का घाट। मपु० ४५ १४२

(३) तीर्थंकर की प्रथम देशना के आरम्भ से आगामी तीर्थंकर की प्रथम देशना तक का समय। मपु० ५४ १४२, ६१ ५६

तीर्थंकर—धर्म के प्रवर्तक। भरत और ऐरावत क्षेत्र में इनकी सख्या चौबीस-चौबीस होती है और विदेह क्षेत्र में बीस। मपु० २ ११७ अवसर्पिणी काल में हुए चौबीस तीर्थंकर ये हैं—वृषभ, अजित, शभव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त शीतल, श्रेयास, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म शान्ति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और महावीर (सन्मति और वर्धमान)। मपु० २ १२७-१३३ हपु० २ १८, वीवच० १८ १०१-१०८ इनके गर्भावतरण, जन्म, दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण ये पाँच कल्याणक होते हैं। इन कल्याणकों को देव और मानव अत्यन्त श्रद्धा के साथ मनाते हैं। गर्भावतरण से पूर्व के छ मासो से ही इनके माता-पिता के भवनों पर रत्नों और स्वर्ण की वर्षा होने लगती है। ये जन्म से ही मति, श्रुत और अवधिज्ञान के धारक होते हैं तथा आठ वर्ष की अवस्था में देशव्रती हो जाते हैं। मपु० १२ ९६-९७, १६३, १४ १६५, ५३ ३५, हपु० ४३ ७८ उत्सर्पिणी के दुषमा-सुषमा काल में भी जो चौबीस तीर्थंकर होंगे वे हैं—महापद्म, सुरदेव, सुपार्श्व, स्वयप्रभ, सर्वात्मभूत, देवपुत्र, कुलपुत्र, उदक, प्रोष्ठिल, जयकीर्ति, मुनिसुव्रत, अरनाथ, अपाप, निष्कषाय, विपुल, निर्मल, चित्रगुप्त, समाधिगुप्त, स्वयभू, अनिवर्ती, विजय, विमल, देवपाल और अनन्तवीर्य। इनमें प्रथम तीर्थंकर सोलहवें कुलकर होंगे। सौ वर्ष उनकी आयु होगी और सात हाथ ऊँचा शरीर होगा। अन्तिम तीर्थंकर की आयु एक करोड वर्ष पूर्व होगी और शारीरिक अवगाहना पाँच सौ धनुष ऊँची होगी। मपु० ७६ ४७७-४८१, हपु० ६६ ५५८-५६२

तीर्थंकर प्रकृति—नाम कर्म की एक पुण्य प्रकृति। इसी का बन्ध कर मानव तीर्थंकर होता है। इस प्रकृति के बन्ध में सोलहकारण भावनाएँ हेतु होती हैं। हपु० ३९ १

तीर्थकृत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

तीर्थकृद् भावना—गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओं में छब्बीसवी क्रिया। इसमें सम्पूर्ण आचारशास्त्रो का अभ्यास और श्रुतज्ञान का विस्तार किया जाता है। मपु० ३८ ५५-६३, १६४-१६५

तीव्र—राम का पक्षधर एक विद्याधर नृप। पपु० ५४ ३४-३५

तुग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९८

तुंगवरक—पश्चिम सागर तक फैला हुआ पर्वत। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० ३० ४९

तुंगीगिरि—एक पर्वत। यहाँ जरत्कुमार तथा पाण्डवों के साथ बलदेव ने कृष्ण का दाह-सस्कार किया था। जरत्कुमार ने राज्य और परिग्रह

के त्याग का निश्चय इसी पर्वत पर किया था तथा यही मुनिदीक्षा ली थी। हपु० ६३ ७२-७४, पापु० २२ ९९

तुटिक—तुट्यग प्रमितायु में चौरासी लाख का गुणा करने से प्राप्त वर्ष नख्या। मपु० ३.१०४, २२४ अपरनाम तुट्य और तुटिकाब्द। हपु० ७ २८

तुट्य—चौरासी लाख तुट्यगो का एक तुट्य होता है। हपु० ७ २८

तुट्यंग—चौरासी लाख कमल प्रमाण काल। मपु० ३ २२४

तुम्बुरु—गान विद्या के ज्ञाता देव। पपु० ३ १७९, १८०, हपु० ७ १५८, १० १४०

तुरीयचारित्र—सूक्ष्मसाम्पराय चारित्र। यह सज्वलन लोभ का अत्यन्त मन्द उदय होने पर दशम गुणस्थान में होता है। मपु० ५४ २२५

तुरुष्क—वृषभदेव के समय का भरतक्षेत्र के पश्चिम का एक देश। इसकी रचना इन्द्र ने की थी। यहाँ के घोड़े प्रसिद्ध थे। मपु० १६ १५६, ३० १०६

तुर्यकल्याण—ज्ञानकल्याणक। मपु० ६१ ४३

तुर्यगुणस्थान—चतुर्थ गुणस्थान-अविरत सम्यग्दृष्टि। मपु० ५४ ७७

तुर्यध्यान—शुक्लध्यान-व्युपरतक्रियानिवर्ति। मपु० ४८ ५२

तुलाकोटि—नूपुर। इसमें घुँघरू लगे होते हैं। मपु० ९ ४१

तुलामान—पल, छटाक, सेर आदि का तौल प्रमाण। पपु० २४ ६१

तुलिग—भरतखण्ड के मध्य का एक देश। हपु० ११ ६४

तुषित—ब्रह्मलोक में निवास करनेवाले श्रुतज्ञान के धारक और महा-ऋद्धिधारी लौकान्तिक देव। मपु० १७ ४७-५०, हपु० ५५ १०१, वीवच० १२ २-८

तुणोगति—एक महाशैल। जम्बूमाली मुनि यहीं साधना करके अहमिन्द्र हुए थे। पपु० ८० १३७-१३८

तूर्य—एक सुषिर वाद्य। यह मगल-वाद्य है। मरुदेवी को जगाने के लिए इसका उपयोग किया गया था। मपु० १२ २०९

तूर्याग—भोगभूमि के वाद्य प्रदाता कल्पवृक्ष। मपु० ३ ३९, हपु० ७ ८०-८१, ८४, वीवच० १८ ९१-९२

तृणपिंगल—भरतक्षेत्र मे चारणयुगल नगर के राजा सुयोधन की पटरानी अतिथि का बडा भाई। यह पोदनपुर के राजा बाहुबली का वशज, सर्वयशा रानी का पति और मधुपिंगल का जनक था। मपु० ६७. २१३-२१४, २२३-२२४

तृणविन्दु—अयोध्या के राजा अयोधन की रानी दिति का भाई। यह चन्द्रवशी राजा था। हपु० २३ ४७, ५२

तृतीय काल—सुषमा-दुःषमा काल। हपु० १ २६

तृणस्पर्श—मुनि-चर्या के बाईस परीषहो में एक परीषह। इसमें मुनि सूखे कठोर तृण आदि से उत्पन्न वेदना को सहन करते हैं। मपु० ३६ १२३

तृषा-परीषह—तृषा जनित वेदना को सहना। मपु० ३६ ११६ इसमें पानी पाने की तीव्र अभिलाषा होने पर तथा जलाशय आदि साधनो की उपलब्धि होने पर भी नियम आदि के निर्वाह हेतु जल का ग्रहण नही किया जाता, तृषा से उत्पन्न वेदना को विशुद्ध परिणामो से आमरण सहन किया जाता है। मपु० ७६ ३६६-३६९

तेज सेन—राजा समुद्रविजय का पुत्र। यह अरिष्टनेमि का छोटा भाई था। हपु० ४८ ४४

तेजस्कायिक—अग्निकायिक एकेन्द्रिय जीव। इनकी कुयोनियाँ सात लाख, कुलकोटियाँ तीन लाख तथा आयु प्राय तीन दिन की होती है। हपु० १८ ५७, ५९, ६५

तेजस्वी—(१) वृषभदेव का गणधर। हपु० १२.५८

(२) आदित्यवशी राजा प्रभूततेज का पुत्र। यह तपन का जनक था। इसने निर्ग्रन्थव्रत धारण कर लिया था। पपु० ५ ४-१०

तेजोमय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०५

तेजोराशि—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०५

(२) वृषभदेव का त्रेसठवाँ गणधर। मपु० ४३ ६३, हपु० १२ ६६

तैजस—जीव के पाँच प्रकार के शरीरो में तीसरे प्रकार का शरीर। यह अनादिकाल से जीव के साथ जुडा हुआ है। यह औदारिक वैक्रियिक और आहारक शरीरो से सूक्ष्म होता है। पपु० १०५ १५३

तैतिल—अश्वोत्पादन मे प्रसिद्ध एक देश। इसकी स्थिति भरतखण्ड के सिध्य देश के पास थी। मपु० ३० १०७

तैरश्चिक—वैडूर्य पर्वत के पास का पर्वत। भरत की सेना इस पर्वत को पार करके वैडूर्य पर्वत पर पहुँची थी। मपु० २९ ६७

तैला—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में दक्षिण की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ८३

तोयदवाहन—चन्द्रवाल नगर के राजा पूर्णधन का पुत्र। इसका विवाह किन्नरगीतपुर के राजा रतिमयूख की कन्या सुप्रभा से हुआ था। यह महारक्ष का पिता था। अन्त में यह पुत्र को राज्य-भार सौंपकर अजित तीर्थंकर के निकट दीक्षित हो गया था। पपु० ५ ७६-७७, ८७-८८, १७९-१८३, २३९-२४०

तोमर—यादवो का पक्षधर एक नृप। हपु० ५० १३०

तोयधारा—नन्दनवन की निवासिनी दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ३३३

तोयस्तम्भिनी—जल का स्तम्भन करनेवाली एक विद्या। रावण ने यह विद्या सिद्ध की थी। पपु० ७ ३२८

तोयावली—(१) लका द्वीप में स्थित एक देश। पपु० ६ ६६-६८

(२) भानुरक्ष के पुत्रों द्वारा बसाया गया एक नगर। पपु० ५. ३७३-३७४

त्याग—(१) तीर्थंकर प्रकृति की सोलह कारण-भावनाओ में एक भावना। इसमें औषधि, आहार, अभय और शास्त्र का दान किया जाता है। मपु० ६३ ३२४, हपु० ३४ १३७

(२) धर्मध्यान सम्बन्धी उत्तम क्षमा आदि दस भावनाओ में एक भावना। इसमें विकार-भावो का त्याग किया जाता है। मपु० ३६ १५७-१५८

(३) दाता का एक गुण—पत्रो को दान देना। यह आहार,

औषध, शास्त्र और अभय (वसतिका) के भेद से चार प्रकार का होता है। मपु० ४.१३४, १५ २१४, २० ८२, ८४

त्यागी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

त्रस—स्थावर जीवो को छोडकर दो इन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीव। ये वध, बन्धन, अवरोध तथा जन्म, जरा और मरण आदि के दु ख भोगते है। मपु० १७ २५-२६, ३४ १९४, ७४ ८१, पपु० १०५ १४९

त्रसरेणु—आठ त्रुटि-रेणुओ का एक त्रसरेणु। हपु० ७ ३८

त्रसित—रत्नप्रभा पृथिवी के दसवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। यहाँ नारकियो के शरीर की ऊँचाई छ धनुष और साढे चार अगुल प्रमाण होती है। हपु० ४ ७७, ३०२

त्रस्त—घर्मा नामक प्रथम नरकभूमि के नवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। यहाँ के निवासियो की पाँच धनुष एक हाथ बीस अगुल प्रमाण ऊँचाई होती है। हपु० ४ ४४, ३०१

त्राता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

त्रायस्त्रिंश—इन्द्र के प्रिय तैतीस देव। मपु० १० १८८, २२ २५, वीवच० ६ १२९, १४ २९

त्रिकलिंग—आर्यखण्ड के दक्षिण का एक देश। यह कलिंग का एक भाग था। मपु० २९ ७९

त्रिकालदर्शी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९१

त्रिकालविषयार्थदृक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

त्रिकूट—(१) पूर्व विदेहक्षेत्र का वक्षारगिरि। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२९

(२) लवणसमुद्र के राक्षस द्वीप का मध्यवर्ती, चूडाकार शिखर से युक्त, नौ योजन उत्तुग और पचास योजन विस्तृत लका का आधारभूत एक पर्वत। मपु० ४ १२७, ३० २६, पपु० ५ १५२-१५८

त्रिगर्त—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ३ ३, ११ ६५

त्रिगुप्ति—मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति से सम्बन्धित एक व्रत। इसमें नौ-नौ उपवासो का विधान होने से तीनो के सत्ताईस उपवास और इतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४.१००, १०६

त्रिचूड—द्विचूड का पुत्र। यह वज्रचूड का पिता और विद्याधर दृढरथ का वशज था। पपु० ५ ४७-५६

त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९०

त्रिजगत्परमेश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११०

त्रिजगद्वल्लभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९०

त्रिजगन्मगलोदय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९०

त्रिजट—(१) रावण का पक्षधर एक विद्याधर। यह रावण के साथ पाताल लका गया था। पपु० ५ ३९५, १० ३६-३७

(२) लवणाकुश और मदनाकुश द्वारा विजित एक देश। पपु० १०१.८१

त्रिज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७६

त्रिदण्डी—त्रिदण्डधारी परिव्राजक। ये भगवान् वृषभदेव के साथ दीक्षित हुए थे पर परीषह सहने में असमर्थ तथा वनदेवता के वचन से भयाक्रान्त होकर पथभ्रष्ट हो गये थे। ये वृक्षो की छाल पहिनने लगे थे और स्वच्छ जल पीकर तथा कन्दमूल खाकर वन में निर्मित कुटियो में रहते थे। मपु० १८ ५१-६०

त्रिदशंजय—अयोध्या के राजा धरणीधर और उसकी रानी श्रीदेवी का पुत्र। यह इन्द्ररेखा का पति और जितशत्रु का पिता था। इसने पोदनपुर नगर के राजा व्यानन्द और उसकी रानी अम्भोजमाला की पुत्री विजया के साथ अपने पुत्र का विवाह किया। अन्त में अपने पुत्र को राज्य सौंप कर यह दीक्षित हो गया। इसने कैलास पवत पर मोक्ष प्राप्त किया था। पपु० ५ ५९-६२

त्रिदशाध्यक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८२

त्रिनेत्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२१५

त्रिपद—मण्डूक ग्राम का निवासी एक धीवर। हपु० ६० ३३

त्रिपर्वा—सोलह विद्या-निकायों की एक विद्या। हपु० २२ ६७

त्रिपातिनी—सोलह विद्या-निकायो की एक विद्या। हपु० २२ ६८

त्रिपुट—एक अन्न (तेवरा)। मपु० ३ १८८

त्रिपुर—(१) विन्ध्याचल के ऊपर स्थित एक पहाडी देश। यहाँ भरतेश का एक भाई राज्य करता था। यह उनकी अधीनता स्वीकार न करके दीक्षित हो गया था। हपु० ११ ७३

(२) विजयार्ध का एक नगर। यहाँ विद्याधर ललिताग का राज्य था। मपु० ६२ ६७, ६३ १४, पपु० २ ३६, ५५ २९

(३) दशानन का पक्षधर एक विद्याधर। यह रावण के साथ पाताल लका गया था। पपु० १० २८, ३७

त्रिपुरारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

त्रिपृष्ठ—(१) पोदनपुर के महाराजा प्रजापति तथा महारानी मृगावती का पुत्र—प्रथम नारायण। यह राजा की प्रथम रानी जयावती के पुत्र विजय बलभद्र का भाई था और तीर्थंकर श्रेयासनाथ के तीर्थ में हुआ था। मपु० ५७ ८४-८५, ६२ ९०, पपु० २० २१८-२८८, हपु० ५३ ३६, ६० २८८, पापु० ४ ४१-४४, वीवच० ३ ६१-६७ इसका रथनूपुर नगर के राजा विद्याधर ज्वलनजटी की पुत्री स्वयप्रभा से विवाह हुआ था। इसने ज्वलनजटी से सिंह एव गरुडवाहिनी विद्याएँ प्राप्त की थी। इसकी शारीरिक अवगाहना अस्सी धनुष और आयु चौरासी लाख वर्ष थी। ये दोनो भाई अलका नगरी के राजा विद्याधर मयूरग्रीव के पुत्र प्रतिनारायण अश्वग्रीव को मारकर तीन खण्ड पृथ्वी के स्वामी हुए थे। सब मिलाकर सोलह हजार मुकुटबद्ध राजा, विद्याधर और व्यन्तर देव इसके अधीन थे। धनुष, शख, चक्र, दण्ड, असि, शक्ति और गदा ये इसके सात रत्न थे। इसकी सोलह हजार रानियाँ थी। स्वयप्रभा इनकी पटरानी थी। इससे दो पुत्र-विजय और विजय-

भद्र और एक पुत्री ज्योतिप्रभा हुई। आरम्भ की अधिकता के कारण रौद्रध्यान से मरकर यह सातवें नरक गया था। मपु० ५७ ८९-९५, ६२ २५-३०, ४३-४४, १११-११२, पपु० ४६ २१३, हपु० ६० ५१७-५१८, पापु० ४ ८५, वीवच० ३ ७१, १०६-१३१ यह अपने पूर्वभव में पुरूरवा भील था। मुनिराज से अणुव्रत ग्रहण कर मरण करने से सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुआ। वहाँ से चयकर यह भरत चक्रवर्ती का मरीचि नामक पुत्र हुआ। इसने मिथ्यामार्ग चलाया था। इसके बाद यह चिरकाल तक अनेक गतियों में भ्रमण करता रहा। पश्चात् राजगृह नगर के राजा विश्वभूति का पुत्र विश्वनन्दी हुआ। इसके पश्चात् महाशुक्र स्वर्ग में देव और तत्पश्चात् त्रिपृष्ठ की पर्याय में नारायण हुआ। आगामी दसवें भव में यही तीर्थंकर महावीर हुआ। मपु० ५७ ७२, ८२, ६२ ८५-९०, ७४ २०३-२०४, २४१-२६०, ७६ ५३४-५४३

(२) आगामी उत्सर्पिणी काल का आठवाँ नारायण। मपु० ७६ ४८९, हपु० ६० ५६७

(३) तीर्थंकर श्रेयांसनाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६ ५३०

त्रिभुवनानन्द—विदेह क्षेत्र के पुण्डरीक नगर का चक्रवर्ती सम्राट्। इसके बाईस हज़ार पुत्र थे और एक पुत्री अनंगशरा थी। अनंगशरा ने अपने ऊपर आयी हुई विपत्ति के कारण सल्लेखना धारण कर ली थी। उस अवस्था में वन में एक अजगर उसे खा रहा था। यह समाचार सुनकर जब यह वन में उसके पास पहुँचा तो उसे वैराग्य हो गया और अपने पुत्रों के साथ यह दीक्षित हो गया। पपु० ६४ ५०-५१, ८५-९० दे० अनंगशरा

त्रिमूर्धन्—राम का पक्षधर एक नृप। पपु० १०२ १४५

त्रिलक्षण—द्रव्य। इसके तीन लक्षण होते हैं—उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य। हपु० २ १०८

त्रिलोक कण्टक—एक हाथी। रावण ने इसे वश में कर इसका यह नाम रखा था। इसके तीनों लोक मण्डित हुए थे अतः दशानन ने बड़े हर्ष से इसका त्रिलोकमण्डन नाम रखा था। पपु० ८ ४३२, ८५ १६३ पूर्वभव में यह पोदनपुर के निवासी अग्निमुख ब्राह्मण का मृदुमति नामक पुत्र था। इसने शशांकमुख गुरु से जिनदीक्षा धारण कर ली थी। एक दिन यह आलोक नगर आया यहाँ लोगों ने इसे मासोपवासी चारण ऋद्धिधारी मुनि समझकर इसकी बहुत पूजा की। यह अपनी झूठी प्रशंसा को चुपचाप सुनता रहा। इस माया के फलस्वरूप इसे अगले जन्म में हाथी होना पड़ा था। मुनि देशभूषण से इसी हाथी ने अणुव्रत धारण किये थे। इसने एक मास का उपवास किया था। अपने आप गिरे हुए सूखे पत्तों से दिन में एक बार पारणा की थी। चार वर्ष तक उग्र तप करने के पश्चात् सल्लेखना पूर्वक मरण करने से यह ब्रह्मोत्तर स्वर्ग में देव हुआ था। पपु० ८५ ११८-१५२, ८७ १-७

त्रिलोकमण्डन—इस नाम का एक हाथी। पपु० ८ ४३२ दे० त्रिलोक-कण्टक

त्रिलोकसारव्रत—एक व्रत। इसमें क्रमशः ५, ४, ३, २, १, २, ३, ४, ३, २, १। इस प्रकार कुल ३० उपवास तथा ११ पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ ५९-६१

त्रिलोकाग्रशिखामणि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९०

त्रिलोकीय—इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २९-३०

त्रिलोकोत्तम—जम्बूद्वीप में पूर्व विदेह क्षेत्र के पुष्कलावती देश में स्थित विजयार्ध पर्वत का एक नगर। मपु० ७३ २५-२६

त्रिलोचन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

त्रिवर्ग—धर्म, अर्थ और काम। मपु० १ ९९, २ ३१-३२, ४ १५५, ११ ३३, हपु० २१ १८५

त्रिवर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य। मपु० ७४ ४९३

त्रिशिखर—नभस्तिलक नगर का राजा एक दुष्ट विद्याधर। यह वसुदेव द्वारा मारा गया था। हपु० २५ ४१, ६९-७०

त्रिशिरस्—(१) खरदूषण का पक्षधर एक विद्याधर। पपु० ४५ ८६-८७

(२) एक देश। लवणांकुश और मदनांकुश ने इस देश को जीता था। पपु० १०१ ८२, ८६

(३) कुण्डलगिरि के वज्रकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६९०

(४) रूचक पर्वत के स्वयंप्रभकूट की एक देवी। हपु० ५ ७२०

(५) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३७

त्रिशृंग—एक महानगर। यहाँ पाण्डव अपने वनवास के समय में आये थे। हपु० ४५ ९५, पापु० १३ १०१

त्रिषष्टिपुरुष—त्रेसठ शलाका-पुरुष। ये हैं चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण और नौ बलभद्र। मपु० १ १९-२०, हपु० १ ११७

त्रीन्द्रिय जीव—स्पर्शन, रसना और घ्राण इन तीन इन्द्रियों से युक्त जीव। इनकी आठ लाख कुल कोटियाँ तथा उत्कृष्ट आयु उनचास दिन की होती है। हपु० १८ ६०, ६७

त्रुटिरेणु—आठ संज्ञा-संज्ञाओं का एक त्रुटिरेणु। हपु० ७.३८

त्र्यक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

त्र्यम्बक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१५

त्वष्ट्योग—ब्रह्मयोग। मपु० ७१ ३८

थ

थलचर—जलचर, थलचर और नभचर के भेद से तीन प्रकार के जीवों में पृथिवी पर विचरनेवाले जीव। मपु० १० २८

द

दक्ष—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

(२) तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का पौत्र। यह सुव्रत का पुत्र और इलावर्धन का पिता था। इसने इला नाम की रानी से उत्पन्न मनो-

हरी नाम की अपनी पुत्री पर मोहित होकर व्यभिचार किया था। इस कुकृत्य से असतुष्ट होकर अपने पुत्र इलावर्धन को लेकर इसकी रानी इला दुर्गम स्थान में चली गयी थी। वहाँ उसने इलावर्धन नामक नगर बसाया था। पपु० २१ ४६-४९ हपु० १७.१-१८

दक्षिण—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १६६

(२) कौरवपक्षीय एक राजा। इसे कृष्ण तथा अर्जुन ने युद्ध में मारा था। पापु० २० १५२

दक्षिणश्रेणी—विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी। इसमें पचास नगर हैं। हपु० ५ २३ दे० विजयार्द्ध

दक्षिणाग्नि—एक प्रकार की अग्नि। इससे केवली का दाह-संस्कार किया जाता है। जिनेन्द्र पूजा में भी इसी अग्नि से दीपक जलाया जाता है। मपु० ४० ८४, ८६

दक्षिणार्ध—ऐरावत क्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का आठवाँ कूट। हपु० ५ १११

दक्षिणार्धक—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का दूसरा कूट। हपु० ५ २०

दण्ड—(१) केवली के समुद्‌घात करने का प्रथम चरण। जब केवली के आयुकर्म की अन्तर्मुहूर्त तथा अघातिया कर्मों की स्थिति अधिक होती है तब वह दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण के द्वारा सब कर्मों की स्थिति बराबर कर लेता है। मपु० ३८ ३०७, ४८ ५२, हपु० ५६ ७२-७४

(२) क्षेत्र का प्रमाण। यह दो किष्कु प्रमाण (चार हाथ) होता है। इसके अपर नाम धनुष और नाडी हैं। मपु० १९ ५४, हपु० ७ ४६

(३) प्रयोजन सिद्धि के साम, दान, दण्ड, भेद इन चार राजनीतिक उपायों में तीसरा उपाय। शत्रु की घास आदि आवश्यक सामग्री की चोरी करा देना, उसका वध करा देना, आग लगा देना, किसी वस्तु को छिपा देना या नष्ट करा देना इत्यादि अनेक बातें इस उपाय के अन्तर्गत आती हैं। अपराधियों के लिए यही प्रयुज्य होता है। मपु० ६८ ६२-६५, हपु० ५० १८

(४) कर्मभूमि से आरम्भ में योग और क्षेम व्यवस्था के लिए हा, मा, और धिक् इस त्रिविध दण्ड की व्यवस्था की गयी थी। मपु० १६ २५०

(५) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। यह सैन्य-पुरोगामी और एक हजार देवों द्वारा रक्षित होता है। भरतेश के पास यह रत्न था। मपु० २८ २-३, ३७ ८३-८५

(६) इन्द्र विद्याधर का पक्षधर एक योद्धा। पपु० १२ २१७

(७) महाबल का पूर्व वंशज एक विद्याधर। यह मरकर अपने ही भण्डार में अजगर सर्प हुआ था। मपु० ५ ११७-१२१

दण्डक—(१) कर्णकुण्डल नगर का राजा। इसकी रानी परिव्राजकों की भक्त थी। एक समय इस राजा ने ध्यानस्थ एक दिगम्बर मुनि के गले में मृत सर्प डलवा दिया था, जिसे बहुत समय तक मुनि के गले में ज्यों का त्यों डला देख कर यह बहुत प्रभावित हुआ था। राजा की मुनि भक्ति से रानी का गुप्त प्रेमी परिव्राजक असतुष्ट हुआ। उसने निर्ग्रन्थ होकर रानी के साथ व्यभिचार किया। कृत्रिम मुनि के इस कुकृत्य से कुपित होकर इस नृप ने समस्त मुनियों को घानी में पिलवा दिया था। एक मुनि अन्यत्र चले जाने से मरण से बच गये थे। राजा के इस घृणित कृत्य को देखकर मुनिवर को क्रोध आ गया और उनके मुख से हा निकला कि अग्नि प्रकट हो गयी और उससे सब कुछ भस्म हो गया। पपु० ४१ ५८

(२) दक्षिण का एक पर्वत। पपु० ४२ ८७-८८

(३) दण्डक देश का एक राजा। पपु० ४१ ९२ दे० दण्डकारण्य

दण्डकारणिक—दण्ड देनेवाला अधिकारी। मपु० ४६ २९२

दण्डकारण्य—कर्णरवा नदी का तटवर्ती एक वन। इसके पूर्व यहाँ दण्डक नाम का देश तथा दण्डक नाम का ही राजा था। इसी राजा के कृत्य से देश वन में परिवर्तित हुआ तथा राजा के नाम के कारण वह इस नाम से सम्बोधित किया गया। मपु० ७५ ५५४, पपु० ४० ४०-४१, ४४-४५ ९२-९७, दे दण्डक

दण्डक्रीडा—दण्ड से खेला जानेवाला खेल। मपु० १४ २००

दण्डगर्भ—भरतक्षेत्र के कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर नगर के राजा मधुक्रीड का प्रधानमन्त्री। मपु० ६१ ७४-७६

दण्डधार—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पैंतालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ ११८

दण्डनीति—प्रशासन विद्या। यह प्रशासन की चार विद्याओं में एक विद्या है। मपु० ४१ १३९

दण्डभूतसहस्रक—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि विद्याधरों को प्रदत्त सोलह निकायों की विद्याओं में एक विद्या। हपु० २२ ६५

दण्डरत्न—चक्रवर्ती का एक निर्जीव रत्न। यह सेना के आगे चलता है। सगर के पुत्रों ने इसी से कैलास के चारों ओर खाई खोदी थी। मपु० २९,७, पपु० ५ २४७-२५०

दण्डाध्यक्षगण—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि विद्याधरों को प्रदत्त सोलह निकायों की विद्याओं में एक विद्या। हपु० २२ ६५

दत्त—(१) सातवें नारायण। अपरनाम दत्तक। यह वाराणसी नगरी के राजा अग्निशिख और उसकी दूसरी रानी केशवती का पुत्र तथा सातवें बलभद्र नन्दिमित्र का छोटा भाई था। यह तीर्थंकर मल्लिनाथ के तीर्थ में उत्पन्न हुआ था। इसकी आयु बत्तीस हजार वर्ष, शारीरिक अवगाहना बाईस धनुष और वर्ण इन्द्रनील मणि के समान था। विद्याधर-नृप बलीन्द्र इसके भद्रक्षीर नामक हाथी को लेना चाहता था। उसे न देने पर इसके साथ उसका युद्ध हुआ। युद्ध में बलीन्द्र ने इसे मारने के लिए चक्र चलाया था किन्तु चक्र प्रदक्षिणा देकर इसकी दाहिनी भुजा पर पर आ गया। इसने इसी चक्र से बलीन्द्र का सिर काटा था। अन्त में यह मरकर सातवें नरक गया। आयु में इसने दो सौ वर्ष कुमारकाल में, पचास वर्ष मण्डलीक-अवस्था में, पचास वर्ष दिग्विजय में व्यतीत कर इकतीस हजार सात सौ वर्ष तक राज्य किया था। ये दोनों भाई इससे पूर्व तीसरे भव में अयोध्या नगर के राजपुत्र

थे। पिता के प्रिय न होने से ये युवराज पद प्राप्त नहीं कर सके। इस पद की प्राप्ति में मन्त्री को बाधक जानकर उस पर वैर बाँध संयमी हुए और आयु के अन्त में मरकर सौधर्म स्वर्ग में सुविशाल नामक विमान में देव और वहाँ से च्युत होकर बलभद्र हुए। मपु० ६६ १०२-१२२, पपु० २० २०७, २१२-२२८, हपु० ५३ ३८, ६० २८९, ५३०, वीवच० १८ १०१, ११२

(२) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के प्रथम गणधर। मपु० ५४.२४४ अपर-नाम दत्तक। हपु० ५३ ३८

(३) तीर्थंकर नमिनाथ को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्तकर्त्ता। मपु० ६९ ३१, ५२-५६

दत्तक—(१) सातवाँ नारायण, अपरनाम दत्त। हपु० ५३ ३८ दे० दत्त-१

(२) समस्त शास्त्रों के पारगामी, सप्त ऋद्धिधारी, तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के प्रथम गणधर। हपु० ६० ३४७-३४९ अपरनाम दत्त। मपु० ५४ २४४

दत्तवक्त्र—एक राजा। वसुदेव ने इसे युद्ध में पराजित किया था। हपु० ३१ ९६

दत्तवती—एक आर्यिका। पोदनपुर के राजा पूर्णचन्द्र की रानी हिरण्यवती ने इससे दीक्षा ली थी। हपु० २७ ५६

दत्ति—द्विज की छः वृत्तियों में एक वृत्ति-दान। इसके चार भेद किये गये हैं—दयादत्ति, पात्रदत्ति, समदत्ति और अन्वयदत्ति। हपु० ३८. ३५-३६

दधिपर्ण—तीर्थंकर धर्मनाथ का दीक्षावृक्ष। पपु० २० ५१

दधिमुख—(१) एक विद्याधर। इसने मदनवेगा का विवाह वसुदेव के साथ कराया था। हपु० २४ ८४

(२) वसुदेव का सारथी। इसने रोहिणी स्वयंवर के समय हुए युद्ध में वसुदेव का रथ-संचालन किया था। हपु० ३१ ६७, १०३

(३) नन्दीश्वर द्वीप की वापियों के मध्य में स्थित चार पर्वत। ये प्रत्येक दिशा की चारों वापियों के मध्य सफेद शिखरों से युक्त, स्वर्णमय एक-एक हजार योजन गहरे, दस-दस हजार योजन चौड़े, लम्बे तथा ऊँचे ढोल जैसे आकार के सोलह होते हैं। हपु० ५ ६६९-६७० इन पर्वतों के शिखरों पर जिन-मन्दिर हैं। ये मन्दिर पूर्वाभि-मुख, सौ योजन लम्बे, पचास योजन चौड़े और पचहत्तर योजन ऊँचे हैं। हपु० ५ ६७६-६७७

(४) एक द्वीप। पपु० ५१ १

(५) दधिमुख द्वीप का एक नगर। पपु० ५१.२

दन्तपुर—कलिंग देश का नगर। मपु० ७० ६५

दन्ती—(१) भरतक्षेत्र के अन्त में महासागर का निकटवर्ती, पूर्व-दक्षिण (आग्नेय) दिग्भाग में स्थित एक पर्वत। महेन्द्र विद्याधर की आवास-भूमि हो जाने पर इसका नाम महेन्द्रगिरि भी था। हपु० १५.११-१४

(२) आखेट के समय प्रयुक्त होनेवाला हाथी। मपु० २९ १२७

दन्दशूक—फणयुक्त एक शस्त्र। इसका गरुडास्त्र से निवारण किया जाता है। पपु० ७४.१०८-१०९

दम—जितेन्द्रियता। मपु० ६० २२

दमक—पूर्व विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश में वीतशोक नगर का निवासी एक वैश्य, देविला का पिता। मपु० ७१ ३६०-३६१

दमना—सह्य पर्वत के पास की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० ३०.५९

दमघोषज—शिशुपाल। हपु० ४२ ९३-९४

दमतीर्थेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६४

दमधर—सागरसेन मुनि के साथी एक गगनविहारी मुनि। राजा वज्रजंघ और रानी श्रीमती ने इन्हें आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। अपरनाम दमवर। मपु० ८.१६७-१७९

दमयन्त—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के मन्दर नगर का निवासी प्रियनन्दी और उसकी जाया नाम की प्रिया का पुत्र। यह मुनि से धर्मोपदेश सुनकर सम्यग्दर्शन पूर्वक मरा था और स्वर्ग में देव हुआ था। पपु० १७ १४१-१४२, १४७-१४८

दमरक—राजगृह नगर-निवासी एक पुरुष। यह वसुदेव का पूर्वभव का मामा था। हपु० १८.१२७-१३१

दमवर—चारण ऋद्धिधारी एक मुनि। ये राजा कर्ण और बलभद्र नन्दि-मित्र के दीक्षागुरू थे। चिन्तागति, मनोगति और चपलगति तीनों विद्याधर भाई भी दौड़ प्रतियोगिता में प्रीतिमती से पराजित होकर इन्हीं से दीक्षित हुए थे। विद्याधरों के अधिपति अमिततेज ने इन्हें आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६२.४०१-४०२, ६३ ६, २८०, ७० ३६, पपु० २० २३४, हपु० ३४ ३२, ५२ ८९, पापु० ४ २३८, ५ ६९

दमितारि—एक प्रतिनारायण। यह पूर्व विदेह क्षेत्र में शिवमन्दिर नगर का राजा था। नारद के कहने पर प्रभाकरी नगरी के राजा बलभद्र अपराजित तथा नारायण अनन्तवीर्य की सुन्दर दो नर्तकियों के लिए इसने नारायण अनन्तवीर्य से युद्ध किया तथा अपने ही चक्र के द्वारा उस युद्ध में मारा गया। यह राजा कीर्तिधर केवली का पुत्र था। मन्दरमालिनी इसकी रानी थी। इसी रानी से इसके कनश्री नाम की एक कन्या तथा सुघोष और विद्युद्दंष्ट्र नाम के दो पुत्र हुए थे। मपु० ६२ ४३३-४८९, ५००, ५०३, पापु० ४ २५२-२७५

दमी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८९

दमीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११, १७८

दयागर्भ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

दयादत्ति—दयापूर्वक मन, वचन और काय की शुद्धि के साथ अनुग्रह करने योग्य प्राणियों के भय दूर करना। मपु० ३८ ३६

दयाध्वज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

दयानिधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

दयायाग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

दर्दुराद्रि—भरतखण्ड के दक्षिण का एक पर्वत। भरतेश के सेनापति ने यहाँ के राजा को जीता था। मपु० २९ ८९

दर्प—अहंकार। विघ्नों की शान्ति के लिए इसका विनाश आवश्यक है।

इसके शमन के लिए "दर्पमथनाय नम" इस मन्त्र का जप किया जाता है। मपु ४० ६

दर्भस्थल—राजा सुकोशल का नगर। पपु० २२ १७१-१७२

दर्शक—अलका नगरी का विद्याधर राजा और श्रीधरा का पति। मपु० ५९ २२९

दर्शन—(१) पदार्थों का निर्विकल्प ज्ञान। मपु० २४ १०१

(२) सम्यग्दर्शन। सर्वज्ञदेव द्वारा कथित जीव आदि पदार्थों का तीन मूढ़ताओ से रहित एव अष्ट अगो सहित निष्ठा से श्रद्धान करना। यह सम्यग्ज्ञान और सम्यकचारित्र का मूल कारण है। प्रशम, सवेग, आस्तिक्य और अनुकम्पा इसके गुण हैं। नि शका, नि काक्षा, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपगूहन, वात्सल्य, स्थितिकरण और प्रभावना ये इसके आठ अंग हैं। मपु० ९ १२१-१२४, १२८ इससे युक्त जीव उत्तम देव और उत्तम पुरुष पर्याय में उत्पन्न होता है, उसे स्त्री पर्याय नही मिलती। वह रत्नप्रभा पृथिवी को छोड शेष छ पृथिवियो मे, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवो में तथा अन्य पर्यायो में नही जन्मता। मपु० ९ १३६, १४४

दर्शनक्रिया—कर्मबन्ध में करणभूत एक क्रिया। इसमें जीव राग वश सुन्दर रूप देखना चाहता है। हपु० ५८ ६९

दर्शन-गुण—प्रशम, सवेग, आस्तिक्य और अनुकम्पा ये चार सम्यक्त्वी के गुण हैं। मपु० ९ १२३

दर्शन प्रतिमा—श्रावक की ग्यारह भूमिकाओ में प्रथम भूमिका। इसमें श्रावक सम्यग्दर्शन में अत्यन्त दृढ हो जाता है और वह सात व्यसनो का त्याग कर आठ मूलगुणो को निरतिचार पालता हैं। वीवच० १८ ३६

दर्शनमोह—मोहनीय कर्म का आद्य भेद। केवली, श्रुत, सघ, धर्म तथा देव का अवर्णवाद करने से इस कर्म का आस्रव होता है। इससे सम्यग्दर्शन का घात होता है। मपु० ९ ११७, हपु० ५८ ९६

दर्शनविशुद्धि—तीर्थंकर प्रकृति की कारणभूत षोडश भावनाओ में प्रथम भावना। इससे जिनेन्द्र द्वारा कथित मोक्ष-मार्ग मे समीचीन श्रद्धा होती है। इस श्रद्धा के अभाव में शेष भावनाएँ फलीभूत नही होती। मपु० ६३ ३१२, हपु० ३४ १३२

दर्शशुद्धि—एक व्रत। इसमें औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक इन त्रिविध सम्यग्दर्शनो के नि शकित आदि आठ अगों की अपेक्षा चौबीस उपवास किये जाते हैं। एक उपवास और एक पारणा करने से यह व्रत अडतालीस दिन में पूर्ण होता है। हपु० ३४ ९८

दर्शनाचार—पंचविध चारित्र का एक भेद-अतिचार रहित सम्यग्दर्शन का पालन करना। मपु० २० १७३, पापु० २३ ५६

दर्शनाराधना—निश्चय से निर्दोष सम्यग्दर्शन की आराधना। इस आराधना से जीव आदि तत्त्वो पर और उनके प्रतिपादक जिनेश्वर, निर्ग्रन्थ गुरू और जिनशास्त्रो पर श्रद्धान होता हैं। पापु० १९ २६३-२६४

दर्शनावरण—श्रेष्ठ दर्शन का अवरोधक कर्म। चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण ये चार आवरण तथा निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला और स्त्यानगृद्धि ये पाँच निद्राएँ इस कर्म की नौ उत्तर प्रकृतियाँ हैं। हपु० ३ ९५, ५८ २१५, २२१, २२६-२२९ इसकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोडाकोडी सागर तथा जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त होती है। वीवच० १६ १५६-१६०

दर्शनोपयोग—उपयोग का एक भेद-अनाकार-अविकल्प उपयोग। यह वस्तु को सामान्य रूप से ग्रहण करता है। इसके चार भेद हैं—चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन। मपु० २४ १००-१०२, पपु० १०५ १४७-१४८ पापु० २२ ७१

दव—कृष्ण का पक्षधर एक नृप। मपु० ७१ ७३-७७

दवीयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

दशग्रीव—रावण। पपु० ७ २४६-२४७ दे० दशानन

दशधर्म—मुनिचर्या से सम्बद्ध धर्म। ये दस हैं—उत्तम, क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य। मपु० ६१ १

दशपविका—दिति और अदिति के द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को दी गयी सोलह निकायो की विद्याओ में से एक विद्या। हपु० २२ ६७

दशपूर्वी—दस पूर्वों के ज्ञाता मुनि। महावीर के निर्वाणोपरान्त एक सौ बासठ वर्ष बाद एक सौ तेरासी वर्ष के समय मे दस पूर्वों के ज्ञाता ग्यारह आचार्य हुए हैं—विशाखाचार्य, प्रोष्ठिलाचार्य, क्षत्रियाचार्य, जयाचार्य, नागसेनाचार्य, सिद्धार्थाचार्य, धृतिषेणाचार्य, विजयाचार्य, बुद्धिमदाचार्य, गगदेवाचार्य और, धर्मसेनाचार्य। मपु० २ १४०-१४५ हपु० १ ५८, ६० ४७९-४८१

दशम—चार दिन के उपवास के लिए पारिभाषिक शब्द। हपु० ३४.१२५

दशरथ—(१) बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६७

(२) यादवो का पक्षधर एक नृप। हपु० ५० १२५

(३) पूर्व धातकीखण्ड के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित वत्स देश में सुसीमा नगर का राजा। यह धर्मनाथ तीर्थंकर के दूसरे पूर्वभव का जीव था। चन्द्रग्रहण देखने से उत्पन्न उदासीनता के कारण महारथ नामक पुत्र को राज्य देकर यह सयमी हो गया तथा ग्यारह अगों का अध्ययन और सोलह कारण भावनाओ का चिन्तन कर इसने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। अन्त मे यह समाधिमरण पूर्वक सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ६१ २-१२

(४) दशार्ण देश में हेमकच्छ नगर का राजा। यह सूर्यवशी था और वैशाली के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा की तीसरी पुत्री सुप्रभा से विवाहित हुआ था। मपु० ७५ ३-११

(५) विनीता नगरी के राजा अनरण्य और उसकी रानी पृथिवीमती का कनिष्ठ पुत्र, अनन्तरथ का अनुज। पिता और भाई दोनों के अभयसेन निर्ग्रन्थ मुनि के पास दीक्षित हो जाने से इसे एक मास की अवस्था में ही राज्यलक्ष्मी प्राप्त हो गयी थी। दर्भस्थल नगर के राजा सुकोशल और उसकी रानी अमृतप्रभावा की पुत्री अपराजिता, कमलसकुल नगर के राजा सुबन्धुतिलक और रानी मित्रा की पुत्री कैकया अपरनाम सुमित्रा, कौतुकमगल नगर के राजा शुभमति और

उसकी रानी पृथुश्री की पुत्री केकया और सुप्रभा अपरनाम सुप्रजा ये चार इसकी रानियाँ थीं। पपु० २२.१७०-१७६, नारद से यह जानकर कि रावण ने उसका वध कराने का निर्णय ले लिया है यह समुद्रहृदय मंत्री को कोष, देश, नगर तथा प्रजा को सौंपकर नगर के बाहर निकल गया था। इधर मंत्री ने इसकी मूर्ति बनवाकर सिंहासन पर विराजमान की थी। विद्युद्विलसित विद्याधर ने इसकी कृत्रिम प्रतिमा का सिर काटकर विभीषण को दिया था। सिर प्राप्त कर विभीषण अत्यन्त हर्षित हुआ। इसने सिर को समुद्र में फिकवा दिया और स्वयं लंका चला गया था। पपु० २३.२६-५७ केकया के स्वयंवर में दशरथ का वरण करने से वहाँ आये हुए दूसरे राजा क्रुद्ध हुए और संग्राम छिड़ गया। उस समय केकया ने सारथि का कार्य अत्यन्त कुशलतापूर्वक किया जिससे प्रसन्न होकर उसने उसे अपनी मनोषित वस्तु माँगने के लिए कहा। उसने इसे धरोहर के रूप में दशरथ के पास ही छोड़ दिया। पपु० २४.९४-१३० रानी अपराजिता (कौशल्या) से पद्म (राम) कैकयी (सुमित्रा) से लक्ष्मण, केकया से भरत तथा सुप्रभा से शत्रुघ्न ये इसके चार पुत्र हुए। पपु० २५.२२-२३, ३५-३६ आचार्य जिनसेन के अनुसार यह मूलतः वाराणसी का निवासी था। पद्म अपरनाम राम (बलभद्र) और लक्ष्मण (नारायण) यहीं हुए थे। राजा सगर को अयोध्या में समूल नष्ट हुआ जानकर ये राम और लक्ष्मण को लेकर साकेत (अयोध्या) आ गये थे। भरत और शत्रुघ्न साकेत में ही जन्मे थे। मपु० ६७.१४८-१५२, १५७-१६५ मुनिराज सर्वभूतहित से अपने पूर्व जन्म के वृत्तान्त सुनकर दशरथ को संसार से विरक्ति हो गयी थी। वह राम को राज्य देकर दीक्षित होना चाहता था। पिता की विरक्ति से भरत भी विरक्त हो गया था। भरत को रोकने के लिए केकया ने दशरथ से धरोहर में रखे हुए वर के द्वारा भरत के लिए राज्य माँगा था जिसे देना उसने सहर्ष स्वीकार किया था। पपु० ३१.९५, १०१-१०२, ११२-११४ भरत यह नहीं चाहता था पर दशरथ, राम और केकया के आदेश और अनुरोध से उसे मौन हो जाना पड़ा। भरत का राज्याभिषेक कर राम के वन में जाने पर उनके वियोग से सन्तप्त दशरथ नगर से निकलकर सर्वभूतहित नामक गुरु के निकट बहत्तर राजाओं के साथ दीक्षित हो गया। दीक्षा के पश्चात् उसने विजित देशों में विहार किया। अन्त में यह आनत स्वर्ग में देव हुआ। इसी स्वर्ग में इसकी चारों रानियाँ तथा जनक और कनक भी देव हुए थे। पपु० ३२.७८-१०१, १२३.८०-८१

दशलक्षण—उत्तम क्षमा आदि दस चिह्नों से युक्त धर्म। मपु० ६१.१, हपु० २.१३०

दशवैकालिक—अंगबाह्य श्रुत का सातवाँ प्रकीर्णक। इसमें मुनियों की गोचरी आदि वृत्तियों का वर्णन किया गया है। हपु० २.१०३, १०.१३४

दशांगभोग—दश प्रकार के भोग-भाजन, भोजन, शय्या, सेना, यान, आसन, निधि, रत्न, नगर और नाट्य। मपु० ६६.७९

दशांगभोग नगर—एक नगर। यहाँ राजा वज्रकर्ण राज्य करता था। पपु० ८०.१०९, ८२.१५

दशानन—लंका का स्वामी, आठवाँ प्रतिनारायण। यह अलंकारपुर नगर के निवासी सुमाली का पौत्र तथा रत्नश्रवा और रानी केकसी का पुत्र था। पपु० ७.१३३, १६४-१६५, २०९, ८.३७-४०, २०.२४२-२४४ आचार्य जिनसेन के अनुसार विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में मेघकूट नगर के राजा पुलस्त्य और रानी मेघश्री इसके पिता-माता थे। मपु० ६८.११-१२ इसके गर्भ में आते ही इसकी माता की चेष्टाएँ क्रूर हो गयी थीं। वह खून की कीचड़ से लिप्त तथा छटपटाते हुए शत्रुओं के मस्तकों पर पैर रखने की इच्छा करने लगी थी। इन्द्र को भी आधीन करने का दोहद होने लगा था, वाणी कर्कश तथा घर्घर स्वर से युक्त हो गयी थी और दर्पण में मुख न देखकर कृपाण में मुख देखती थी। वह गुरुजनों की बड़ी ही कठिनाई से वन्दना करती थी। हजार नागकुमारों से रक्षित राक्षसेन्द्र भीम से प्राप्त मेघवाहन के हार को इसने बाल्यावस्था में सहज में ही हाथ से खींच लिया था। हार पहिनाये जाने पर उसमें गुंथे रत्नों में मुख्य मुख के सिवाय नौ मुख और भी प्रतिबिम्बित होने लगे थे। इस प्रकार दश मुख दिखाई देने से इस नाम से सम्बोधित किया गया। भानुकर्ण और विभीषण इसके दो भाई तथा चन्द्रनखा एक बहिन थी। इसने चोटी धारण कर रखी थी। इसके बाबा के भाई माली को मारकर तथा बाबा को लंका से हटाकर इन्द्र विद्याधर ने लंका इसके मौसेरे भाई वैश्रवण को दे दी थी। वैश्रवण को जीतने के लिए इन तीनों भाइयों ने कामानन्दा-आठ अक्षरों वाली विद्या की एक लाख जप करके सिद्धि की थी। इसे अन्य जो विद्याएँ प्राप्त हुई थी वे हैं—नभःसंचारिणी, कामदायिनी कामगामिनी, दुर्निवारा, जगत्कम्पा, प्रज्ञप्ति भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मनःस्तम्भनकारिणी, संवाहिनी, सुरध्वंसी, कौमारी, वधकारिणी, सुविधाना, तपोरूपा, दहनी, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रविधायिनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शनी, अजरा, अमरा, अनलस्तम्भिनी, तोयस्तम्भिनी, गिरिदारणी, अवलोकिनी, अरिध्वंसी, घोरा, धीरा, भुजंगिनी, वारुणी, भुवना, अवध्या, दारुणा, मदनाशिनी, भास्करी, भयसंभूति, ऐशानी, विजया, जया, बन्धनी, मोचनी, वाराही, कुटिलाकृति, चित्तोद्भवकारी, शान्ति, कौबेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोत्सादी, चण्डा, भीति और प्रहर्षिणी। इन विद्याओं के प्रभाव से इसने स्वयंप्रभ नामक एक नगर बसाया था। जम्बूद्वीप के अधिपति अनावृत यक्ष ने जम्बूद्वीप में इच्छानुसार रहने का इसे वर दिया था। पपु० ७.२०४-३४२ इसे चन्द्रहास खड्ग की सिद्धि थी। विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में असुरसंगीत नगर के राजा मय (दैत्य) विद्याधर की पुत्री मन्दोदरी से इसने विवाह किया था। इसके अतिरिक्त इसने राजा बुध की पुत्री अशोकलता, राजा सुरसुन्दर की कन्या पद्मवती, राजा कनक की पुत्री विद्युत्प्रभा तथा अन्य अनेक कन्याओं को गन्धर्व विधि से विवाहा था। पपु० ८.१-२, १०३-१०८ वैश्रवण को जीतकर इसने उसका पुष्पक विमान प्राप्त किया। सम्मेदाचल के पास सम्मति नामक पर्वत पर इसने त्रिलोक-

मण्डन हाथी पर विजय प्राप्त कर अपना अभूतपूर्व पौरुष प्रदर्शित किया था। पपु० ८ २३७-२३९, २५३, ४२६-४३२ खरदूषण के द्वारा अपनी बहिन चन्द्रनखा का अपहरण होने पर भी बहिन के भविष्य का विचार कर यह शान्त रहा और इसने खरदूषण से युद्ध नही किया। इसने बाली को अपने आधीन करना चाहा था किन्तु बाली ने जिनेन्द्र के सिवाय किसी अन्य को नमन न करने की प्रतिज्ञा कर ली थी। प्रतिज्ञा-भग न हो और हिंसा भी न हो एतदर्थ वह मुनि जगचन्द्र के पास दीक्षित हो गया था। बाली के भाई सुग्रीव ने अपनी श्रीप्रभा बहिन देकर इससे सन्धि कर ली थी। इसने नित्यालोक नगर के राजा की पुत्री रत्नावली से भी विवाह किया था। अपने पुष्पक विमान की गति रुकने का कारण बाली को जानकर यह क्रोधाग्नि से जल उठा था। इसने बाली सहित कैलास पर्वत को उठाकर समुद्र मे फेंकना चाहा था, कैलास इसके बल से चलायमान भी हो गया था। जिन-मन्दिरो की सुरक्षा हेतु कैलास को सुस्थिर रखने के लिए बाली ने अँगूठे से पर्वत को दबाया था। इससे उत्पन्न कष्ट से इसने इतना चीत्कार किया था कि समस्त नगर चीत्कार के उस महाशब्द से रोने लगा। कालान्तर में जगत् को रुला देनेवाले इसी चीत्कार के कारण उसे रावण इस नाम से अभिहित किया जाने लगा। यह शत्रुओ को रुलाता था इसलिए भी रावण कहलाया। मन्दोदरी द्वारा पति भिक्षा की याचना करने पर मुनि ने दयावश पैर का अगूठा ढीला किया था। तब इसने मुनि बाली से क्षमा-याचना की थी। इसने भक्ति विभोर होकर सैकडो स्तुतियो से जिनेन्द्र का गुणगान किया था। इससे प्रसन्न होकर नागराज ने इससे वर माँगने के लिए कहा किन्तु जिन-वन्दना से अन्य कोई उत्कृष्ट वस्तु माँगने के लिए इसे इष्ट न हुई। अत इसने पहले तो मना किया किन्तु बाद में विशेष आग्रह पर नागराज द्वारा दी अमोघ विजया शक्ति ग्रहण की थी। मपु० ६८ ८५, पपु० ९ २५-२१५ सहस्ररश्मि को पकडकर उसके पिता शतबाहु के निवेदन पर उसे इसने छोड दिया था। पपु० १० १३०-१३१, १३९-१५७ राजा मरुत् की कन्या कनकप्रभा इसी ने विवाही थी। पपु० ११ ३०७, मथुरा के राजा मधु के साथ अपनी पुत्री कृतचित्रा का विवाह कर इसने नलकूबर की पत्नी उपरम्भा से आशालिका नामक विद्या प्राप्त की थी। नलकूबर को जीत कर इसने उससे सुदर्शन नामक चक्ररत्न प्राप्त किया था। पपु० १२ १६-१८, १३६-१३७, १४५ इसने अनन्तबल केवली से "जो पर स्त्री मुझे नही चाहेगी मैं उसे ग्रहण नही करूँगा" यह नियम लिया था। पपु० १४ ३७१ सागरबुद्धि निमित्तज्ञानी से दशरथ के पुत्र और जनक की पुत्री को अपने मरण का हेतु ज्ञातकर रावण ने दशरथ और जनक को मारने के लिए विभीषण को आज्ञा दी थी। नारद से यह समाचार जानकर दशरथ और जनक नगर से बाहर चले गये थे। इधर समुद्रहृदय मत्री ने दशरथ की मूर्ति बनवाकर सिंहासन पर रख दी थी। विभीषण के भेजे वीरो ने इस मूर्ति को दशरथ समझकर उसका शिरच्छेद कर दिया था। विभीषण ने शिर को पाकर सन्तोष कर लिया था। पपु० २३ २५-२७, ४०-४३, ५४-५६ एक समय यह अमितवेग की पुत्री मणिमती को देखकर कामासक्त हो गया था। मणिमती विद्या सिद्ध कर रही थी। इसके विघ्न उत्पन्न करने पर उसने निदान किया था कि इसी की पुत्री होकर वह इसके वध का कारण बनेगी। फलस्वरूप वह मन्दोदरी के गर्भ में आयी। जन्मते ही एक मञ्जूषा मे बन्द कर मिथिला के निकट किसी प्रकट स्थान में जमीन के भीतर छोडी गयी जो राजा जनक को प्राप्त हुई। इसके पालन पोषण के समाचार इसे प्राप्त नही हो सके थे। इसका नाम सीता रखा गया था। मपु० ६८ १३-२८ स्वयवर में सीता ने राम का वरण किया था। पपु० २८ २३६, २४३-२४४ नारद से इसने सीता की प्रशसा सुनकर उसे अपने पास लाने का निश्चय किया था। पहले तो सीता को लाने के लिए इसने शूर्पनखा को उसके पास भेजा था किन्तु उसके विफल होने पर यह स्वय गया। इसने मारीच को हरिण-शिशु के रूप में सीता के पास भेजा, सीता के कहने पर राम हरिण को पकडने चले गये। इधर राम का रूप धरकर यह सीता के पास आया और उसके मन में व्यामोह उत्पन्न करके उसे हर ले गया। मपु० ६८ ८९-१०४, १७८, १९३, १९७-१९९, २०४-२०९ जटायु ने शक्तिभर विरोध किया था किन्तु उसे मारकर यह सीता को हरने में सफल रहा। साधु से लिए नियम का इसने पालन किया था। सीता के न चाहने पर बलपूर्वक इसने उसे ग्रहण नही किया। पपु० ४४ ७८-१०० अर्कजटी के पुत्र रत्नजटी के विरोध करने पर इसने उसकी आकाशगामिनी विद्या छीन ली थी। पपु० ४५ ५८-६७ मन्दोदरी ने इसे समझाया था किन्तु इसने नियम का ध्यान दिलाकर सीता को समझाने के लिए उसे ही प्रेरित किया था। पपु० ४६ ५०-६९ विभीषण ने इससे सीता लौटाने के लिए निवेदन किया जिससे वह विभीषण को भी मारने के लिए तलवार निकाल खडा हो गया था। अन्त में विभीषण राम से जा मिला। पपु० ५५ १०-११, ३१, ७१-७२ युद्ध में इसने शक्ति के द्वारा लक्ष्मण का वक्ष स्थल खण्डित किया था। इससे दु खी होकर राम ने इसे छ बार रथ रहित तो किया किन्तु इसे वे जीत नही सके थे। पपु० ६२ ८१-८२, ९० द्रुपद की पुत्री विशल्या को बुलवाया गया। विशल्या के समीप पहुँचते ही लक्ष्मण से शक्ति हट गयी थी। पपु० ६५ ३८-३९ अजेय होने के लिए चौबीस दिन में सिद्ध होनेवाली बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करने हेतु इसे ध्यानस्थ देखकर राम के सैनिक इसे क्रोधित करना चाहते थे। राम के निषेध पर नृप-कुमारो ने लका के निवासियो को भयभीत कर दिया। पपु० ७० १०५, ११ ३६-४३ अगद के विविध उपसर्ग करने पर भी यह ध्यानस्थ रहा, विद्या सिद्ध हुई। पपु० ७१ ५२-८६ मन्दोदरी के समझाने पर इसने अपनी निन्दा तो अवश्य की किन्तु वह सीता को वापिस नही करना चाहता था। पपु० ७३ ८२-८४, ९३-९५ अन्त में इसका लक्ष्मण के साथ दस दिन तक युद्ध होने के बाद इसे बहुरूपिणी विद्या का प्रयोग करना पड़ा। इसमें भी जब वह सफल नही हुआ तब इसने चक्ररत्न लक्ष्मण पर चलाया, लक्ष्मण अबाधित रहा। पपु० ७५ ५, २२, ५२-५३, ६० चक्ररत्न प्राप्त कर लक्ष्मण ने मधुर शब्दो में इससे कहा था कि वह सीता को वापिस कर दे और अपने पद पर

आरूढ होकर लक्ष्मी का उपभोग करें, पर यह मान वश ऐंठता रहा। अन्त में लक्ष्मण ने इसे चक्र चलाकर मार डाला था। पपु० ७६.१७-१९, २८-३४ मरकर यह नरक गया। सोतेन्द्र ने इसे नरक में जाकर समझाया था। मपु० ६८ ६३०, पपु० १२३ १६,तीसरे पूर्वभव में यह सारसमुच्चय देश में नरदेव नाम का नृप था। दूसरे पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर राजा विनमि विद्याधर के वश में रावण नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ६८ ७२८ दशास्य और दशकन्धर नामो से भी इसे सम्बोधित किया गया है। मपु० ६८ ९३, ४२५

दशार्ण—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में ऋक्ष पर्वत का एक देश, वृषभदेव की विहारभूमि। इसे भरतेश ने जीता था। मपु० १६ १५३, २५ २८७-२८८, २९ ४२, ७५ १०

(२) मृगावती देश का एक नगर। मपु० ७१ २९१, पापु० ११ ५५

दशार्णक—(१) भरतक्षेत्र में विन्ध्याचल का एक प्रदेश। हपु० ११ ७३

(२) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक वन। यह हाथियो के लिए प्रसिद्ध है। मपु० २९ ४४

दशार्णा—भरतक्षेत्र की एक नदी। इसे भरतेश की सेना ने पार किया था। मपु० २९ ६०

दशार्ह—(१) यादव। हपु० ४१ ४९

(२) श्रीकृष्ण का पक्षधर एक नृप। हपु० ५० ६८

दशावतार—भगवान् वृषभदेव के महाबल आदि दस पूर्वभव। मपु० २५ २२३

दशावतारचरम—महाबल आदि पूर्व के दस भवो में अन्तिम शरीरी नाभिराज के पुत्र वृषभदेव। मपु० १४ ५१

दशोरुक—भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ भी महावीर का विहार हुआ था। हपु० ११ ६७, ३ ५

दाण्डीक—भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का भरतेश के भाई के अधीन एक देश। हपु० ११ ७०

दान—(१) चतुर्विध राजनीति का एक अग। हपु० ५० १८

(२) सातावेदनीय का आस्रव। यह गृहस्थ के चतुर्विध धर्म मे प्रथम धर्म है। इसमें स्व और पर के उपकार हेतु अपने स्व अर्थात् धन या अपनी वस्तु का त्याग किया जाता है। मपु० ८ १७७-१७८, ४१ १०४, ५६ ८८-८९, ६३ २७०, हपु० ५८ ९४, पापु० १ १२३, वीवच० ६ १२ महापुराण में इसके तीन भेद बताये है—शास्त्रदान (ज्ञानदान), अभयदान और आहारदान। सत्पुरुषो का उपकार करने की इच्छा से सर्वज्ञ भाषित शास्त्र का दान शास्त्रदान, कर्मबन्ध के कारणो को छोडने के हेतु प्राणिपीडा का त्याग करना अभयदान और निर्ग्रन्थ साधुओ को उनके शरीर आदि की रक्षार्थ शुद्ध आहार देना आहार-दान कहा है। ज्ञानदान सबमे श्रेष्ठ है क्योकि वह पाप कार्यों से रहित तथा देने और लेनेवाले दोनो के लिए निजानन्द रूप मोक्षप्राप्ति का कारण है। आरम्भ जन्य पाप का कारण होने से आहारदान की अपेक्षा अभयदान श्रेष्ठ है। मपु० ५६ ६७-७७ औषधिदान को मिलाकर इसके चार भेद भी किये गये है। ये त्रिविध पात्रो को नवधा भक्तिपूर्वक दिये जाते जाते हैं। पपु० १४ ५६-५९, ७६, पापु० १ १२६ पात्र के लिए दान देने अथवा अनुमोदना करने से जीव भोगभूमि में उत्पन्न होकर जीवन पर्यन्त निरोग एव सुखी रहते है। मपु० ९ ८५-८६, हपु० ७ १०७-११८ दाता की विशुद्धता-देय वस्तु और लेनेवाले पात्र को, देय वस्तु की पवित्रता-देने और लेनेवाले दोनो को एव पात्र की विशुद्धि-दाता और देय वस्तु इन दोनो को पवित्र करती है। मपु० २० १३६-१३७ यह भोग सम्पदा का प्रदाता तथा स्वर्ग और मोक्ष का हेतु है। पपु० १२३ १०७-१०८ आहारदान नवधा भक्तिपूर्वक दिया जाता है। दाता के लिए सर्वप्रथम पात्र को पडगाहकर उसे उच्च स्थान देना, उसके पाद-प्रक्षालन करना, पूजा करना, नमस्कार करना, मन शुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि और आहारशुद्धि प्रकट करनी पडती है। हपु० ९ १९९-२०० श्रावक की एक क्रिया दत्ति है। इसके चार भेद कहे हैं—दयादत्ति, पात्रदत्ति, समदत्ति और अन्वयदत्ति। मपु० ३८ ३५-४०

दानधर्म—वृषभदेव द्वारा प्रवृत्त आहारदान की प्रवृत्ति। पपु० ४ १, २१

दानवीर्य—तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६ ५३०

दान्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८९

दान्तमति—एक आर्यिका। यह रानी रामदत्ता को सम्बोधने के लिए सिंहपुर आयी थी। मपु० ५९ १९९, २१०

दान्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६४

दामदेव—शामली नगर का एक ब्राह्मण। पपु० १०८ ४०

दारु—(१) वसुदेव तथा रानी पद्मावती का पुत्र, वृद्धार्थ और दारुक का सहोदर। हपु० ४८ ५६

(२) भरतखण्ड के पश्चिम का एक देश। इसे वृषभदेव की आज्ञा से इन्द्र ने रचा था। मपु० १६ १५५

दारुक—(१) राजा वसुदेव तथा रानी पद्मावती का पुत्र। हपु० ४८ ५६ दे० दारु

(२) सर्वसमृद्ध नामक वैश्य की दासी का पुत्र। मपु० ७६ १६८

दारुण—छत्रपुर नगर का एक भील। मपु० ५९ २७३ हपु० २७ १०७

दारुवेणा—भरतक्षेत्रस्थित आर्यखण्ड की एक महानदी। भरतेश की सेना ने इस नदी को पार किया था। मपु० ३० ५५

दासीदासप्रमाणातिक्रम—परिग्रहपरिमाणाणुव्रत का एक अतिचार—किये हुए दास-दासियो के प्रमाण का उल्लघन करना। हपु० ५८ १७६

दिक्कुमार—भवनवासी देवो की एक जाति। यह पाताल लोक में रहती है। इसकी उत्कृष्ट आयु डेढ पल्य और शारीरिक अवगाहना दस धनुष प्रमाण होती है हपु० ४ ६४, ६७-६८

दिक्कुमार—दिक्कुमारी देवो की देवियाँ। ये छप्पन हैं और मेरु तथा रुचकार पर्वत के कूटो पर निवास करती है। पूर्व दिशा के आठ कूटो पर विजया, वैजयन्ती, जयन्ती, अपराजिता, नन्दा, नन्दोत्तरा, आनन्दा और नन्दीवर्धना देवियाँ रहती है। ये तीर्थंकरो के जन्मकाल में पूजा के निमित्त हाथ में दैदीप्यमान झारियाँ लिये हुए तीर्थंकर की माता के समीप रहती हैं। दक्षिण दिशा के आठ कूटो पर स्वस्थिता,

सुप्रणिधि, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीमती, कीर्तिमती, वसुन्धरा और चित्रादेवी रहती हैं। ये तीर्थंकरो के जन्म के समय सतुष्ट होकर आती हैं और मणिमय दर्पण धारणकर तीर्थंकरो की माता की सेवा करती है। पश्चिम दिशा की आठ देवियाँ हैं—इला, सुरा, पृथिवी, पद्मावती, काचना, नवमिका, सीता और भद्रिका। ये देवियाँ तीर्थंकरो के जन्मकाल मे शुक्ल छत्र धारण करती है। इसी प्रकार उत्तर के आठ कूटो पर भी आठ देवियाँ निवास करती हैं। वे हैं—लम्वुसा, मिश्रकेशी, पुण्डरीकिणी, वारुणी, आशा, ह्री, श्री और धृति। ये हाथ में चमर लेकर जिनमाता की सेवा करती हैं। इनके अतिरिक्त गन्धमादन, माल्यवान्, सौमनस्य और विद्युत्प्रभ पर्वतो के मध्यवर्ती आठ कूटो पर रहनेवाली आठ दिक्कुमारियाँ ये हैं—भोगकरा, भोगवती, सुभोगा, भोगमालिनी, वत्समित्रा, सुमित्रा, वारिषेणा और अचलवती। हपु० २ २४, ५ २२६-२२७, ७०४-७१७ रुचकवर पर्वत की विदिशाओ के चारकूटो में रहनेवाली आठ देवियाँ हैं—रुचका, विजयादेवी, रुचकोज्ज्वला, वैजयन्ती, रुचकाभा, जयन्ती, रुचकप्रभा और अपराजिता। हपु० ५ ७२२-७२७ चित्रा, कनकचित्रा, सूत्रामणि और त्रिशिरा ये चार विद्युत्कुमारियाँ तथा विजया, वैजयन्ती जयन्ती और अपराजिता से चार दिक्कुमारियाँ मिलकर तीर्थंकरो का जातकर्म करती हैं। हपु० ८ १०६-११७ मेघकरा, मेघवती, सुमेघा, मेघमालिनी, तोयधारा, विचित्रा, पुष्पमाला और अनिन्दिता ये आठ नदनवन की दिक्कुमारियाँ है। हपु० ५ ३३२-३३३

दिक्नन्दन—रुचकवर पर्वत की पूर्व दिशा का पाँचवाँ कूट। यह दिक्कुमारी नन्दा देवी की निवासभूमि है। हपु० ५ ७०५-७०६

दिक्पाल—दिक्कुमार जाति के देव। लोकपाल इन्ही देवो में से होते हैं। मपु० ४ ७०, ३३ ९६

दिक्स्वस्तिका—चक्रवर्ती भरत की सभाभूमि। मपु० ३७ १४८

दिगम्बर—निर्ग्रन्थ मुनि। ये उद्दिष्ट आहार के त्यागी, तृष्णारहित, जितेन्द्रिय, शरीर की स्थिति मात्र के लिए मौन पूर्वक आहारग्राही, धर्माचरणी, देह से निस्पृही और प्राणियो पर दया करनेवाले होते हैं। पपु० ४ ९१-१००

दिग्गजेन्द्र—देव विशेष। ये विदेहक्षेत्र में भद्रशाल वन के कूटो पर निवास करते हैं। रुचकवरगिरि की चारों दिशाओं में चार देव—पद्मोत्तर, स्वहस्ती, नीलक और अजनगिरि रहते हैं। ये चारो देव भी दिग्गजेन्द्र कहलाते हैं। इनकी आयु एक पल्य प्रमाण होती है। हपु० ५ २०५-२०९, ६९९-७०२

दिग्नन्दन—रुचकवर द्वीप में स्थित रुचक पर्वत की पूर्व दिशा का पाँचवाँ कूट। यहाँ नन्दा दिक्कुमारी रहती हैं। हपु० ५ ७०६

दिग्नाग—ऐरावत हाथी। मपु० ४ ७०

दिग्वासा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

दिग्व्रत—प्रथम गुणव्रत-दिशाओ और विदिशाओ में प्रसिद्ध ग्राम, नगर आदि नामो द्वारा की हुई मर्यादा का पालन। इसके पाँच अतिचार है—अधोव्यतिक्रम—लोभवश नीचे की सीमा का उल्लघन करना, तिर्यग्व्यतिक्रम-समान धरातल की सीमा का उल्लघन करना, ऊर्ध्व व्यतिक्रम-ऊपर की सीमा का उल्लघन करना, स्मृत्यन्तराधान-ली हुई सीमा को भूलकर अन्य सीमा का स्मरण रखना और क्षेत्रवृद्धि-मर्यादित क्षेत्र की सीमा बढ़ा लेना। पपु० १४ १९८, हपु० ५८ १४४, १७७, वीवच० १८ ४८

दिति—(१) ऐरावत क्षेत्र का एक नगर। पपु० १०६ १८७

(२) धरणेन्द्र की देवी। इसने नमि-विनमि को मातग, पाण्डुक, काल, स्वपाक, पर्वत, वशालय, पाशुमूल और वृक्षमूल ये आठ विद्या-निकाय दिये थे। हपु० २२ ५४५९-६०

(३) धारणयुग्म नगर के सूर्यवशी राजा अयोधन की महारानी। यह चन्द्रवशी राजा तृणविन्दु की छोटी वहिन थी। सुलसा इसी की पुत्री थी। हपु० २३ ४७-४८ दे० सुलसा

दिननाथरथ—इक्ष्वाकुवशी इन्द्ररथ का पुत्र, मान्धाता का पिता। पपु० २२ १५४-१५९

दिवाकर—विद्याधरो का स्वामी विद्या-वैभव से सम्पन्न एक विद्याधर। पपु० ५४ ३६

दिवकारप्रभ—(१) ईशान का एक विमान। मपु० ८ २१०

(२) एक देव। मपु० ८ २१०

दिवाकरयति—इन्द्रगुरु के शिष्य और अर्हद्यति के गुरु। इस गुरु-परम्परा मे आये हुए आचार्य लक्ष्मणसेन आचार्य रविषेण के गुरु थे। पपु० १२३ १६८

दिवितिलक—(१) कनकपुर के राजा गरुडवेग और रानी धृतिषेणा का पुत्र, चन्द्रतिलक का भाई। मपु० ६३ १६६

(२) विजयार्ध का एक नगर। मपु० ६२ ३६

दिव्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११

दिव्यकटक—एक कराभूषण। ये रत्नजटित होते थे। ये वरतनु देव से भरतेश को प्राप्त हुए थे। मपु० २९ १९४

दिव्यज्ञान—अवधिज्ञान। मपु०५ १०७

दिव्यध्वनि—तीर्थंकर के आठ प्रातिहार्यों में एक प्रातिहार्य—धर्मोपदेश देने के लिए एक योजन पर्यन्त व्याप्त केवली जिनेन्द्र की दिव्य वाणी। यह तालु, ओठ तथा कण्ठ की चचलता से रहित और अक्षर-विहीना होती है। मपु० १ १८४, २४ ८२, हपु० २ ११३, ३ ३८-३९, पापु० १ ११९ यह विवक्षा रहित होती हैं और विश्व का हित करती है। यह नाना भाषामयी और व्यक्त अक्षरा होकर अनेक देशों में उत्पन्न मनुष्यो, देवो और पशुओ के सन्देह का नाश कर धर्म के स्वरूप का कथन करती है। सर्व भाषाओ में परिणमन होने का स्वभाव होने से सभी इसे अपनी भाषा में समझ लेते हैं। यह गणधर की अनुपस्थिति में नही खिरती। मपु० १ १८६-१८७, २४ ८४, हपु० २ ११३, ५८ १५, वीवच० १५ १४-१७, ७८-८२

दिव्य-निनाद—दिव्यध्वनि जिसमें तीर्थंकर का दिव्य उपदेश होता हैं। मपु० ४८ ५१ दे० दिव्यध्वनि

दिव्यपाद—आगामी उत्सर्पिणी काल के तेईसवें तीर्थंकर। अपरनाम देवपाल। मपु० ७६ ४८०, हपु० ६०.५६१

दिव्यपुर—समवसरण का एक भाग। इसके त्रिलोकसार आदि पचासी नाम हैं। गणधर की इच्छा होते ही कुबेर इसका निर्माण करता है। हपु० ५७ १११-१२४

दिव्यभूमि—स्वाभाविक भूमि से एक हाथ ऊँची समवसरण की भूमि। इसके एक हाथ ऊपर कल्पभूमि होती है। हपु० ५७ ५

दिव्यबल—साकेत नगर का राजा, रानी सुमति का पति और हिरण्यवती का पिता। मपु० ५९ २०८-२०९

दिव्यभाषा—नाना भाषाओं मे परिणत होने के अतिशय से सम्पन्न अर्हद्-वाणी। मपु० ४ १०६ दे० दिव्यध्वनि

दिव्यभाषापति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११

दिव्यमनुष्य—देवपूजित शलाका पुरुष,कामदेव और विद्याधर। मपु० ७६ ५०१-५०२

दिव्यरत्न—चक्रवर्ती की विभूति का एक रत्न। इसकी रक्षा देव करते थे। मपु० ३७ १८१

दिव्यलक्षणपंक्ति—बत्तीस व्यंजन, चौसठ कला और एक सौ आठ लक्षण इन दो सौ चार लक्षणो की अपेक्षा से दो सौ चार उपवासो से युक्त एक व्रत। इसमे एक उपवास के बाद एक पारणा की जाने से यह चार सौ आठ दिन में पूर्ण होता है। हपु० ३४ १२३

दिव्यवाद—आगामी उत्सर्पिणी काल के तेईसवें तीर्थंकर। हपु० ६०.५६२

दिव्या-जाति—भव्यजनो को अर्हत्सेवा से प्राप्त होनेवाली चार जातियो में पहली जाति। इन्द्र इसी जाति का होता है। मपु० ३९ १६८

दिव्याष्टगुण—सिद्ध परमेष्ठी के आठ गुण। ये हैं—अनन्तज्ञान, अनन्त-दर्शन, अव्याबाधत्व, सम्यक्त्व, अवगाहनत्व, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघुत्व और और अनन्तवीर्य। मपु० २५ २२३

दिव्यौषध—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। हपु० २२ ९९

दिशागिरि—कपित्थ वन का एक पर्वत। मपु० ७५ ४७९

दिशाजय—गर्भान्वयक्रिया के अन्तर्गत गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओं में पैंतालीसवी क्रिया-दिग्विजय। इसमें चक्ररत्न को आगे करके चक्री दिशाओं को जीतने का उद्योग करता है। मपु० ३८.५५-६३, २३४

दिशानन्दा—वैदिशपुर के राजा वृषभध्वज तथा रानी दिशावली की पुत्री। पाण्डव भीम को भिक्षा हेतु राजमहल में आया देखकर वृषभध्वज ने भिक्षा में इससे ही पाणिग्रहण करने के लिए निवेदन किया था। हपु० ४५ १०८-१११

दिशावली—वैदिशपुर के राजा वृषभध्वज की रानी, दिशानन्दा की जननी। हपु० ४५ १०७-१०८

दिष्टि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

दीक्षा—ससार से विरक्त होकर मुक्ति प्रदायक व्रतो को जिनेन्द्र अथवा आचार्य के चरणो में पहुँचकर ग्रहण करना। उत्तम कुलोत्पन्न, विशुद्ध गोत्र, सच्चरित्र, प्रतिभावान् और सौम्य पुरुष ही दीक्षा के पात्र होते हैं। यह सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, दुष्टग्रहोदय तथा ग्रह सयुक्ति के समय नही दी जाती तथा अधिक मास, क्षीणमास, अधिक तिथि और क्षीणतिथि में भी नही दी जाती। मपु० ३९ ३-५, १५८-१६०, हपु० ५९ ११९-१२०

दीक्षाकल्याणक—तीर्थंकरो के पाँच कल्याणको मे तीसरा कल्याणक—इसमे तीर्थंकरो को वैराग्य उत्पन्न होते ही सारस्वत आदि लौका-न्तिक देव आकर उनकी स्तुति करते हैं और अभिषेक करके विविध रूप से उत्सव मनाते हैं। इसके पश्चात् उन्हें पालकी मे बैठाकर दीक्षावन ले जाते हैं। मपु० ५९.३९-४०

दीक्षाद्यक्रिया—गृहस्थ की गर्भ से निर्वाण पर्यन्त गर्भान्वियी त्रेपन क्रियाओं में तेईसवी क्रिया। इसमें प्रशान्त और एक वस्त्रधारी सम्यग्दृष्टि दीक्षाग्रहण करने के लिए घर छोडकर वन में जाता है। मपु० ३८ ५७, १५७-१५८, ३९.७७

दीक्षान्वयक्रिया—गर्भावतार से लेकर निर्वाण पर्यन्त मोक्ष प्राप्ति मे सहायक क्रियाएँ। ये अडतालीस होती हैं—अवतार, वृत्त, लाभ, स्थानलाभ, गणग्रह, पूजाराध्य, पुण्य-यज्ञ, दृढचर्या और उपयोगिता इन आठ क्रियाओ के अतिरिक्त गर्भान्वयी उपनीति नाम की चौदहवी क्रिया से अग्रनिर्वृति क्रिया पर्यन्त क्रियाएँ। जो भव्य इन क्रियाओ का ज्ञान करके उनका पालन करता है वह निर्वाण पाता है। मपु० २९ ५, ३८ ५१-५२, ६४-६५, ३९ ८०, ६३ ३००, ३०४ दे० गर्भान्वय

दीप—पूजा-सामग्री का एक द्रव्य। मपु० १७ २५१

दीपन—राजा अन्धवृष्णि और रानी सुभद्रा के पुत्र वसुदेव की वंश परम्परा में हुए राजा सुखरथ का पुत्र और सागरसेन का पिता। हपु० १८ १७-१९

दीपशिख—भरतक्षेत्र के विजयार्ध की दक्षिण श्रेणी मे स्थित ज्योतिप्रभ नगर के स्वामी सम्भिन्न का पुत्र। मपु० ६२ २४१-२४२

दीपसेन—आचार्य नन्दिषेण के शिष्य तथा श्रीधरसेन के गुरु-एक आचार्य। हपु० ६६ २७-२८

दीपांग—कल्पवृक्षो की एक जाति। ये कल्पवृक्ष सुषमा-सुषमा काल में विद्यमान लोगो को दीप प्रदान करते थे। मपु० ३ ३९-४०, वीवच० १८ ८८, ९१

दीपालिका—दीपावली-एक महान पर्व। चौथे काल के तीन वर्ष साढे आठ मास शेष रहने पर स्वाति नक्षत्र में कार्तिक अमावस्या के दिन प्रात तीर्थंकर महावीर का निर्वाण होने से चारो निकायो के देवो द्वारा पावा नगरी में दीप जलाये गये थे। तभी से महावीर के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में कार्तिक अमावस्या की रात में भारत में दीप जलाये जाने लगे और दीपावली के नाम से एक उत्सव मनाया जाने लगा। हपु० ६६ १६-२१

दीपिता—सेनापुर नगर के निवासी उपास्ति गृहस्थ की भार्या। पपु० ३१ २२-२५

दीपोद्बोधन सविधि—पूजा के समय दीपक जलाना। दक्षिणाग्नि से यह दीपक जलाया जाता है। मपु० ४० ८५

दीप्त—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०६

(२) एक तप। श्रुतकेवली मुनि सागरदत्त ने यह तप किया था इसलिए वे इसी नाम से प्रसिद्ध हो गये। मपु० ७६.१३४

दीप्त ऋद्धि—उत्कृष्ट दीप्ति-प्रदायक एक ऋद्धि। मपु० ११.८२

दीप्त तप ऋद्धि—उत्कृष्ट तप तपने में सहायक ऋद्धि। मपु० ११.८२

दीप्तकल्याणात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१९४

दीर्घदन्त—आगामी उत्सर्पिणी काल का द्वितीय चक्रवर्ती। मपु० ७६.४८२, हपु० ६०.५६३

दीर्घदर्शी—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का उन्नीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९५

दीर्घबाहु—(१) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बानवेवाँ पुत्र। पापु० ८.२०४

(२) राम का पक्षधर एक नृप। राजा सुबाहु का पुत्र, वज्रबाहु का पिता। पपु० १०२.१४५, हपु० १८.२

दीर्घह्रस्व—अग्रायणीय पूर्व की पंचमवस्तु के कर्म प्रकृति नामक चौथे प्राभृत (पाहुड) का सत्रहवाँ योगद्वार। हपु० १०.८४ दे० अग्रायणीयपूर्व

दीर्घालाप—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का नब्वेवाँ पुत्र। पापु० ८.२०४

दीर्घलोचन—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का सतासीवाँ पुत्र। पापु० ८.२०३

दीर्घिका—प्रासाद के सौन्दर्य की वर्धक एक लम्बी नहर। इसका तल और भित्ति मणिनिर्मित होते थे। जलक्रीडा के लिए भी इसका उपयोग होता था। मपु० ८.२२

दु-कर्ण—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पन्द्रहवा पुत्र। पापु० ८.१९४

दु:ख—(१) असत् पदार्थों के ग्रहण और सत् पदार्थों के वियोग से उत्पन्न आत्मा का पीड़ा रूप परिणाम। यह असातावेदनीय कर्म का कारण होता है। पपु० ४३.३०, हपु० ५८.९३

(२) तीसरी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार मे तप्त नामक इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा का महानरक। हपु० ४.१५४

दु:खहरण—एक व्रत। इसमें सात भूमियों की जघन्य और उत्कृष्ट आयु की अपेक्षा से चौदह, तिर्यंचगति और मानवगति के पर्याप्तक-अपर्याप्तक जीवो की द्विविध आयु की अपेक्षा से चार-चार, सौधर्म से अच्युत स्वर्ग तक चौबीस-चौबीस, नौ ग्रैवेयकों के अठारह, नौ अनुदिशों के दो और पाँच अनुत्तर विमानो के दो इस प्रकार कुल अड़सठ उपवास किये जाते हैं। दो उपवासो के बाद एक पारणा करने से यह व्रत एक सौ दो दिन में पूर्ण होता है। हपु० ३४.११७-१२०

दु:पराजय—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का साठवाँ पुत्र। पापु० ८.२००

दु:प्रगाह—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का छब्बीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९६

दु:शल—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का तेरहवाँ पुत्र। पापु० ८.१९४

दु:शासन—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी के सौ पुत्रों में द्वितीय पुत्र, दुर्योधन का अनुज तथा दुर्धर्षण आदि अन्य भाइयों का अग्रज। इसने भीष्म तथा द्रोणाचार्य से क्रमश शिक्षा तथा धनुर्विद्या प्राप्त की थी। यह अर्धरथ राजा था। पापु० ८.२०८-२११। विरोधवश द्रौपदी के निवास में प्रवेश कर उसकी केश राशि पकड़ कर उसे द्यूत-सभा में लाने का इसने उद्यम किया था। कृष्ण जरासन्ध महायुद्ध के अठारहवें दिन पाण्डव भीम के द्वारा इसके जीवन का अन्त हो गया। मपु० ७०.११७-११८, हपु० ५०.८४, पापु० ८.१९१-२११, १५.८४, १६.१२७-१२८, २०.२६५-२६५

दु:श्रव—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का सोलहवाँ पुत्र। पापु० ८.१९४

दु:श्रुति—अनर्थदण्डव्रत का एक भेद। इसके पालन में हिंसा तथा राग आदि की वर्धक कथाओ तथा पापबन्ध की कारणभूत शिक्षाओं का श्रवण निषिद्ध है। हपु० ५८.१४६, १५२

दु:षमा—व्यवहार काल के दो भेदो में अवसर्पिणी काल का पाँचवाँ और उत्सर्पिणी काल का दूसरा भेद। अवसर्पिणी में इस काल के प्रभाव से मनुष्यों की वुद्धि, बल उत्तरोत्तर कम होता जाता है। यह इक्कीस हजार वर्ष का होता है। आरम्भ मे मनुष्यों की आयु एक सौ बीस वर्ष, शारीरिक अवगाहना सात हाथ, बुद्धि मन्द, देह रुक्ष, रूप अभद्र होगा। वे कुटिल कामासक्त और अनेक बार के आहारी होंगे, ह्रास होते-होते अन्त में आयु बीस वर्ष तथा शारीरिक अवगाहना दो हाथ प्रमाण रह जायगी। इस काल में देवागमन नहीं होगा, केवलज्ञानी बलभद्र नारायण और चक्रवर्ती नही होंगे। प्रजा दुष्ट होगी, व्रतविहीना और नि:शील होगी। मपु० २.१३६, ३.१७-१८, ७६.३९४-३९६, पपु० २०.९१-१०३, हपु० ७.९५, वीवच० १८.११९-१२१। इस काल के एक हजार वर्ष बीतने पर कल्किराज का शासन होगा। प्रति एक हजार वर्ष में एक-एक कल्कि होने से बीस कल्कि होंगे। जलमन्थन अन्तिम कल्कि राजा होगा, अन्तिम मुनि-वीरांगज, आर्यिका-सर्वश्री, श्रावक-अग्निल और श्राविका—फल्गुसेना होंगी। ये सब अयोध्या के वासी होंगे। इस काल के साढे आठ माह शेष रहने पर ये सभी मुनि-आर्यिका श्रावक-श्राविका शरीर त्याग कर कार्तिक मास की अमावस्या के दिन प्रात वेला में स्वाति नक्षत्र के समय प्रथम स्वर्ग जायेंगे। मध्याह्न में राजा का नाश होगा और सायं वेला में अग्नि, षट्कर्म, कुल, देश धर्म सभी अपने-अपने विनाश के हेतु प्राप्त कर नष्ट हो जावेंगे। मपु० ७६.३९७-४१५, ४२८-४३८, उत्सर्पिणी के इस दूसरे काल में मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु बीस वर्ष और ऊँचाई साढे तीन हाथ होगी, मनुष्य अनाचार का त्याग कर परिमित समय पर आहार लेंगे, भोजन अग्नि पर बनाया जावेगा, भूमि, जल और धान्य की वृद्धि होगी, मैत्री, लज्जा, सत्य, दया, दमन, सन्तोष, विनय, क्षमा, रागद्वेष की मन्दता आदि चारित्र प्रकट होंगे। इसी काल में अनुक्रम से निर्मल बुद्धि के धारक सोलह

कुलकर उत्पन्न होंगे, उनमें प्रथम कुलकर का शरीर चार हाथ प्रमाण होगा। कुलकर क्रमश ये होंगे—कनक, कनकप्रभ, कनकराज, कनकध्वज, कनकपुंगव, नलिन, नलिनप्रभ, नलिनराज, नलिनध्वज, नलिनपुंगव, पद्म, पद्मप्रभ, पद्मराज, पद्मध्वज, पद्मपुंगव और महापद्म। ये सभी वृद्धि और बल से सम्पन्न होंगे। इस काल का समय इक्कीस हज़ार वर्ष का होता है। मपु० ७६ ४६०-४६६

दुःषमा-दुःषमा—अवसर्पिणी काल का छठा भेद। इसका काल इक्कीस हज़ार वर्ष का होता है। इस काल के आरम्भ मे मनुष्यों की आयु बीस वर्ष तथा शरीर की अवगाहना दो हाथ होगी। काल के अन्त में आयु घटकर सोलह वर्ष तथा शरीर की ऊँचाई एक हाथ रह जावेगी। इस समय लोग स्वेच्छाचारी, स्वच्छन्द विहारी और एक दूसरे को मारकर जीवनयापी होंगे। सर्वत्र दुःख ही दुःख होगा। पपु० २० ८२, १०३-१०६, वीवच० १८ १२२-१२४ इस समय पानी सूख जायगा, पृथिवी अत्यन्त रूखी-सूखी होकर जगह-जगह फट जावेगी, वृक्ष सूख जावेंगे, प्रलय होगा, गंगा-सिन्धु और विजयार्ध की वेदिका पर कुछ थोडे से मनुष्य विश्राम लेंगे, वे मछली, मेंढक, कछुए और केकडे खाकर जीवित रहेंगे और बहत्तर कुलों में उत्पन्न दुराचारी दीन-हीन जीव छोटे-छोटे बिलों में घुसकर जीवनयापन करेंगे। मपु० ७६.४४७-४५० उत्सर्पिणी का प्रथम काल भी इसी नाम का है। इसकी स्थिति भी इक्कीस हजार वर्ष की होती है, इसमे प्रजा की वृद्धि होती है, पृथिवी रूक्षता छोड देती है। क्षीर जाति के मेघों के बाद अमृत जाति के मेघ इस काल में बरसते हैं जिससे औषधियाँ वृक्ष, पौधे और घास पूर्ववत् होने लगते हैं। इसके पश्चात् रसाधिक-जाति के मेघ बरसने से छहो रसो की उत्पत्ति होती है। बिलो में प्रविष्ट मनुष्य बाहर आ जाते हैं। वे उत्पन्न रसो का उपयोग कर हर्षपूर्वक जाते हैं। इस प्रकार काल-क्रम का ह्रास वृद्धि में परिणत होने लगता है। मपु० ३ १७-१८, ७६ ४५४-४५९

दुःषमा-सुषमा—अवसर्पिणी काल का चतुर्थ और उत्सर्पिणी काल का तीसरा भेद। कर्मभूमि अवसर्पिणी के इसी काल से आरम्भ होती है। त्रेसठ शलाकापुरुषों का जन्म इसी काल में होता है। काल की स्थिति बियालीस हज़ार वर्ष कम एक कोडाकोडी सागर होती है। इसके आदि में मनुष्यो की आयु एक पूर्व कोटि, शरीर पाँच सौ धनुष उन्नत तथा पचवर्णों की प्रभा से युक्त होगा। वे प्रतिदिन एक बार आहार करेंगे। मपु० ३ १७-१८, पपु० २० ८१ हपु० २ २२ वीवच० १८ १०१-१०४ उत्सर्पिणी के इस तीसरे काल में मनुष्यो का शरीर सात हाथ ऊँचा होगा और आयु एक सौ बीस वर्ष होगी। इनमें प्रथम तीर्थंकर सोलहवें कुलकर होंगे। सौ वर्ष उनकी आयु होगी और शरीर सात हाथ ऊँचा होगा। अन्तिम तीर्थंकर की आयु एक करोड वर्ष पूर्व तथा शरीर की अवगाहना पाँच सौ धनुष होगी। चौबीस तीर्थंकर होंगे उनके नाम ये हैं—महापद्म, सुरदेव, सुपार्श्व, स्वयप्रभ, सर्वात्मभूत, देवपुत्र, कुलपुत्र, उदक, प्रोष्ठिल, जयकीर्ति, मुनिसुव्रत, अरनाथ, अपाय, निष्कषाय, विपुल, निर्मल, चित्रगुप्त, समाधिगुप्त, स्वयभू, अनिवर्ती, विजय, विमल, देवपाल और अनन्तवीर्य। इसी काल में उत्कृष्ट लक्ष्मी के धारक बारह चक्रवर्ती होंगे—भरत, दीर्घदन्त, मुक्तदन्त, गूढदन्त, श्रीषेण, श्रीभूति, श्रीकान्त, पद्म, महापद्म, विचित्रवाहन, विमलवाहन और अरिष्टसेन। नौ बलभद्र होंगे—चन्द्र, महाचन्द्र, चक्रधर, हरिचन्द्र, सिंहचन्द, वरचन्द्र, पूर्णचन्द्र, सुचन्द्र और श्रीचन्द्र। इनके अर्चक नौ नारायण होंगे—नन्दी, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, नन्दिभूति, सुप्रसिद्ध-बल, महाबल, अतिबल, त्रिपृष्ठ और द्विपृष्ठ। इनके नौ प्रतिनारायण होंगे। मपु० ७६ ४७०-४८९

दुःसह—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बारहवाँ पुत्र। पापु० ८ १९४

दुकूल—मृदु, स्निग्ध और बहुमूल्य ओढने का वस्त्र। मपु० ६ ६६, ९ २४, ४२, ११.२७

दुग्धवारिधि—क्षीरसागर। इन्द्र इसी समुद्र में तीर्थंकरो द्वारा लुंचित केशराशि का क्षेपण करते हैं। हपु० २ ५३

दुन्दुभि—(१) एक सवत्सर। इसमे प्रजा सब प्रकार से आनन्दित रहती है। हपु० १९ २२

(२) आहार-दान से उत्पन्न पचाश्चर्यों में एक आश्चर्य। मपु० ८ १७३-१७५

(३) युद्ध और मागलिक अवसरों पर बजाया जानेवाला वाद्य। इसे देववाद्य भी कहते हैं। इनकी ध्वनि मेघगर्जना के समान होती है। केवलज्ञान की उत्पत्ति होने पर ये वाद्य बजाये जाते हैं। महावीर तीर्थंकर को केवलज्ञान होने के समय देवो ने साढे बारह करोड दुन्दुभि वाद्य बजाये थे। मपु० ६ ८५-८६, ८९, १३, १७७, १७. १०६, २३ ६१, पपु० २ १५३, ४ २६, १३ ७, वीवच० १५ १०-११

(४) एक नगर। पपु० ११ २

दुन्दुभिस्वन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

दुराधर्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७२

दुर्ग—(१) भरतक्षेत्र मे पश्चिम का एक देश। हपु० ११.७१

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो में एक नगर। मपु० १९ ८५, ८७

(३) राजा का पर्वत आदि पर बना सुरक्षित स्थान। यह शत्रु के लिए दुर्गम्य होता था। मपु० ३२ ५४

दुर्गगिरि—भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में पोदनपुर नामक नगर का निकटवर्ती एक पर्वत। गुणनिधि नामक मुनि ने इसी पर्वत के शिखर पर वर्षायोग किया था। पपु० ८५ १३९

दुर्गन्धा—चम्पा नगरी के धनिक वैश्य सुबन्धु और उसकी पत्नी धनदेवी की कन्या। इसका शरीर दुर्गन्धित था इसलिए यह इस नाम से प्रसिद्ध हुई। इसी नगर के निर्धन धनदेव के पुत्र जिनदेव के साथ इसका विवाह करना निश्चित हुआ। इधर जिनदेव इसके साथ अपने विवाह की चर्चा सुनकर घर से निकल गया तथा उसने समाधिगुप्त मुनि से धर्मोपदेश सुनकर मुनि-व्रत धारण कर लिया। इसके पिता सुबन्धु ने

जिनदेव के व्रती होने पर जिनदेव के भाई जिनदत्त से इसका विवाह किया किन्तु इसकी देह से उत्पन्न दुर्गन्ध को न सह सका और वह भी कहीं अन्यत्र चला गया। इसके पश्चात् माँ की शिक्षा के अनुसार इसने संयम धारण कर लिया। तीव्र तप तपती और परीषह सहती हुई यह विहार करने लगी। एक दिन इसने वसन्तसेना नामक वेश्या को जार पुरुषों के साथ वन में देखकर प्रथम तो इसने वेश्या होने का निदान किया किन्तु बाद में इसने स्वयं को धिक्कारा और अपने संचित दुष्कर्मों के नाश की प्रार्थना की। आयु की समाप्ति पर प्राण त्याग कर यह अच्युत स्वर्ग में देवी हुई। पापु० २४.२४-४६, ६४-७१

दुर्ग्रह—भानुरक्ष के पुत्रों द्वारा बसाया गया एक नगर। यहाँ राक्षस रहते थे। पपु० ५.३७३-३७४

दुर्जय—(१) जयन्तगिरि पर वर्तमान एक वन। यहाँ प्रद्युम्न ने विद्याधर वायु की पुत्री रति को प्राप्त किया था। हपु० ४७.४३

(२) जरासन्ध का पुत्र। मपु० ७१.७६-८० हपु० ५२.३७

दुर्दर—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में मलयगिरि के निकट स्थित एक पर्वत। मपु० २९.८८-८९

दुर्दर्श—राजा पूरण का तीसरा पुत्र। यह दुष्पूर और दुर्मुख का अनुज तथा दुर्धर का अग्रज था। हपु० ४८.५१

दुर्धर—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरों में वैभव सम्पन्न एक सुन्दर नगर। मपु० १९.८५, ८७

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३१

(३) राजा उग्रसेन का पुत्र। हपु० ४८.३९

(४) राजा पूरण का पुत्र। हपु० ४८.५१ दे० दुर्दर्श

दुर्धर्षण—राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गान्धारी का तीसरा पुत्र। यह भी जरासन्ध का एक पक्षधर नृप था। मपु० ७०.११७-११८, ७१.७६-७९ पापु० ८.१९३

दुर्ध्यान—आर्त्त और रौद्र। ये दोनों ध्यान अप्रशस्त और हेय होते हैं। मपु० २१.२७-२९

दुर्नखा—खरदूषण की पत्नी। यह विद्याधर रावण की बहिन और शम्बूक तथा सुन्द की जननी थी। इसके पुत्र शम्बूक ने जिस सूर्यहास–खड्ग की प्राप्ति के लिए उद्यम किया था, वह शम्बूक को प्राप्त न होकर लक्ष्मण को प्राप्त हुआ था। इसी खड्ग के परीक्षण में इसका पुत्र शम्बूक द्वारा मारा गया था। पुत्र-मरण के कारण विलाप करते हुए एकाएक इसे राम-लक्ष्मण दिखायी दिये जिन्हें देख कामासक्त होकर इसने अपना रूप कन्या का बना लिया। राम को ठगने के लिए अपने माता-पिता को बताकर लज्जा रहित वचन कहे किन्तु इसका मनोरथ पूर्ण न हो सका। मनोकामना सिद्ध न होने के कारण इसने अपने पति खरदूषण को युद्ध के लिए प्रेरित किया। खरदूषण ने लक्ष्मण के साथ घनघोर युद्ध किया भी किन्तु लक्ष्मण द्वारा चलाये गये सूर्यहास—खड्ग के द्वारा वह मारा गया। पपु० ४३.३८-४६, ४५.२६-२८, ६१, ८८-१११, अन्त में यह शशिकान्ता आर्यिका के पास साध्वी हो गयी। इसने घोर तपस्या करके रत्नत्रय की प्राप्ति की। इसी का दूसरा नाम चन्द्रनखा था। पपु० ४३.११३, ७८.९५

दुर्बुद्धि—राम का पक्षधर एक विद्याधर। इसने रावण के पक्षधर स्वयम्भू से युद्ध किया था। पपु० ५८.५, ६२.३५

दुर्भग—नाम कर्म का एक भेद। इस कर्म के उदय से मनुष्य दुर्भागी और लोकनिन्दित होते हैं। हपु० १८.१२८, वीवच० १७.१२७-१२८

दुर्मद—राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गान्धारी का पच्चीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९६

दुर्मर्षण—(१) अर्ककीर्ति का एक किंकर। यह एक पुष्ट पुरुष था। इसी ने जयकुमार के विरोध में राजाओं को उत्तेजित किया था। मपु० ४४.१-४, पापु० ३.६४

(२) मगध देश के वृद्ध नगर का निवासी एक गृहस्थ। यह नागश्री का पिता था। मपु० ७६.१५२-१५७

(३) राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गान्धारी का चतुर्थ पुत्र। यह जरासन्ध का पक्षधर नृप था तथा द्रौपदी के स्वयंवर में भी सम्मिलित हुआ था। मपु० ७०.११७-११८, ७१.७६-७९ पापु० ८.१९३, १५.८४

(४) राम का पक्षधर एक नृप। इसने रावण के योद्धा घटोदर के साथ युद्ध किया था। पपु० ५४.५६, ६२.३५

दुर्मुख—(१) रावण का पक्षधर एक विद्याधर। यह सीता के स्वयंवर में भी सम्मिलित हुआ था। मपु० ६८.४३१, पपु० २८.२१४

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३७

(३) पूरण का पुत्र। हपु० ४८.५१ दे० दुर्दर्श

(४) वसुदेव और अवन्ती का पुत्र, सुमुख का अनुज और महारथ का अग्रज। हपु० ४८.६४, यह अर्धरथ राजा था। इसे वसुदेव ने कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में कृष्ण का पृष्ठरक्षक बनाया था। हपु० ४८.६४, ५०.८३, ११५

दुर्योधन—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का ज्येष्ठ और दुःशासन आदि सौ भाइयों का अग्रज। इसके साथ युद्ध करना कठिन होने के कारण यह नाम इसे स्वजनों से प्राप्त हुआ था। हस्तिनापुर का यह राजा था। इसने कृष्ण के पास यह कहकर दूत भेजा था कि रुक्मिणी और सत्यभामा रानियों में जिसके पहले पुत्र होगा वह यदि मेरी पुत्री हुई तो उसका पति होगा। मपु० ७०.११७-११८, हपु० ४३.२०-२१, पापु० ८.१८७ भीष्म पितामह तथा द्रोणाचार्य इसके शिक्षा और धनुर्विद्या प्रदातागुरु थे। पाण्डवों का यह महावैरी था। इसने भीम को मारने हेतु सर्प के द्वारा दंश कराया था। तीव्र विष भी भीम के लिए अमृत हो गया था। यह अपने उद्देश्य में असफल रहा। पाण्डवों को मारने के लिए इसने लाक्षागृह बनवाया था। इसे जलाने से चाण्डालों ने निषेध किया तो इसने ब्राह्मणों से उसे जलवाया। पाण्डव सुरंग से निकलकर बाहर चले गये थे। इसमें भी यह असफल रहा और इसे बड़ी अपकीर्ति मिली। मपु० ७२.२०१-२०३, पापु० ८.२०८-२०९, १०.११५-११७, १२.१२२-१६८ युद्ध में इसे चित्रांग गन्धर्व ने नागपाश में बाँध लिया था। युधिष्ठिर के कहने

पर इसे अर्जुन ने छुड़ाया था। एक बार कपटपूर्वक इसने जुएँ में युधिष्ठिर का सब कुछ जीत लिया। इससे उन्हें बारह वर्ष तक वन में रहना पड़ा। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में इसका अर्जुन के साथ युद्ध हुआ जिसमें इसे भाग जाना पड़ा था। इससे उसका वैर बढ़ा और पुन युद्ध में आकर उसने युधिष्ठिर पर ही असि प्रहार किया। भीम बीच में आ गया और उसने इसका वध कर दिया। मरते समय भी इसके परिणाम शान्त नहीं हुए थे। अश्वत्थामा को युद्ध के लिए प्रेरित करके ही वह मरा था। मपु० ७२ २१५, पापु० १६ १०८-१२५, १७ १०२-१०४, १४३, १९ १८८-१९०, २० १६३-१६४, २८७-२९६

दुर्लंघ्यपुर—इन्द्र का एक नगर। इन्द्र ने नलकूबर को इसी नगर का लोकपाल बनाया था। पपु० १२ ७९

दुर्विमोचन—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का छत्तीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

दुष्टनिग्रह—राजा का एक कर्तव्य। दुष्टो को दण्ड देना राजा का कर्तव्य है। मपु० ४२ २०२

दुष्पक्वाहार—भोगोपभोग-परिमाणव्रत का एक अतिचार—अधपके और अधिक पके आहार का ग्रहण करना। हपु० ५८ १८२

दुष्पूर—राजा पूरण का पुत्र। हपु० ४८ ५१, दे० दुर्दर्श

दुष्प्रणिधान—सामायिक-शिक्षाव्रत का एक अतिचार—सामायिक करते समय मन, वचन और काय की विषयो की ओर प्रवृत्ति। मपु० २१ २५, हपु० ५८ १८०

दूत—सन्देशवाहक। राज्य सचालन में इनका बड़ा महत्त्व है। ये तीन प्रकार के होते है—नि सृष्टार्थ, मितार्थ और पत्रवाहक। मपु० ४३ २०२

दूरदर्शन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुय वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

दूर-भव्य—मिथ्यात्वी जीव। वीवच० १६ ६४

दूषण—(१) खरदूषण का सेनापति। यह युद्ध में लक्ष्मण द्वारा मारा गया था। पपु० ४५ २९

(२) राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १५

(३) ज्ञानावरण और दर्शनावरण का आस्रव। यह प्रशस्त ज्ञानवाले को भी दोषी बतानेवाले के होता है। हपु० ५८ ९२

दूष्यकुटी—कपड़े का तम्बू। भरतेश सैनिक प्रयाण में इसका उपयोग करते थे। मपु० ३७ १५३

दृढग्राही—एक राजा। इसने दीक्षित होकर तपस्या की और मरकर यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६५.६१-६३

दृढचर्या—दीक्षान्वय की सातवी क्रिया—स्वमत के समस्त शास्त्रो के अध्ययन के पश्चात् अन्य मतो के ग्रन्थो अथवा अन्य विषयो का श्रवण करना। मपु० ३९ ५१

दृढधर्म—एक आचार्य। ये सगर चक्रवर्ती के दीक्षागुरु थे। मपु० ९ ९१, ४८ १२८

दृढधर्मा—शान्तनु के पौत्र और राजा हृदिक का द्वितीय पुत्र, कृतिधर्मा का अनुज। हपु० ४८.४२

दृढनेमि—वसुदेव के बड़े भाई राजा समुद्रविजय का पुत्र। हपु० ४८ ४३

दृढप्रहार्य—उज्जयिनी के राजा वृषभध्वज का चतुर योद्धा। उसकी स्त्री का नाम वप्रश्री और पुत्र का नाम वज्रमुष्टि था। मपु० ७१. २०९-२१०

दृढबन्ध—पाण्डवों का पक्षधर एक राजा। हपु० ५० १२६

दृढमित्र—(१) सुजन देश में हेमाभ नगर का एक राजा। इसकी रानी नलिना से हेमाभा नाम की पुत्री हुई थी। मपु० ७५ ४२१

(२) सुजन देश में नगरशोभ नगर का राजा। मपु० ७५ ४३८

दृढमुष्टि—(१) उज्जयिनी के राजा वृषभध्वज का एक योद्धा। हपु० ३३ १०३

(२) वसुदेव और मदनवेगा का पुत्र, विदूरथ और अनावृष्टि का अग्रज। हपु० ५० ११६

दृढरक्ष—उज्जयिनी के राजा प्रजापति के लोकपाल का पुत्र। मपु० ७५ १०३

दृढरथ—(१) विद्याधरो का स्वामी। यह राम का पक्षधर योद्धा था। पपु० ५८ ४

(२) विद्याधर-वंश में उत्पन्न एक नृप। यह विद्याधर विद्युद्दृढ का पुत्र था। पपु० ५ ४७, ५६

(३) तीर्थंकर शान्तिनाथ के पूर्वभव का जीव। पपु० २० २१-२४

(४) भरतक्षेत्र के मलय देश में भद्रपुर नगर का स्वामी। इसके पुत्र तीर्थंकर शीतलनाथ थे। मपु० ५६ २४, २८ २९, पपु० २० ४६

(५) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश मे पुण्डरीकिणी नगरी के राजा घनरथ और रानी मनोरमा का पुत्र। पिता ने इसका विवाह सुमति नाम की कन्या से किया था, जिससे इनके वरसेन नाम का पुत्र हुआ था। राज्य से विमुख होकर अपने पिता के साथ इसने दीक्षा धारण कर ली। आयु के अन्त में नभस्तिलक नामक पर्वत पर श्रेष्ठ सयम धारण करके एक महीने के प्रायोपगमन सन्यासपूर्वक शान्त परिणामो से शरीर छोड़कर यह अहमिन्द्र हुआ। मपु० ६३ १४२-१४८, ३०७-३११, ३३६-३३७, पापु० ५ ५३-५७,९१-९८

(६) जम्बूद्वीप के मंगला देश में स्थित भद्रिलपुर नगर के राजा मेघरथ और रानी सुभद्रा का पुत्र। मपु० ७० १८२-१८३, हपु० १८ ११२

(७) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का तेरासीवाँ पुत्र। पापु० ८ २०३

(८) तीर्थंकर वृषभदेव के तीसरे गणधर। मपु० ४३ ५४, हपु० १२ ५५

(९) राजा बृहद्रथ का पुत्र और नरवर का पिता। हपु० १८ १७-१८

(१०) राजा नरवर का पुत्र और सुखरथ का पिता। हपु० १८. १८-१९

दृढरथा—कम्पिला नगरी के राजा द्रुपद की रानी, द्रौपदी की जननी। मपु० ७२ १९८

दृढराज—भरतक्षेत्र में श्रावस्ती नगरी का राजा। यह तीर्थंकर सभवनाथ का पिता था। मपु० ४९ १४, १९

दृढवक्षा—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौरानवेवां पुत्र। पापु० ८ २०४

दृढवर्मा—(१) कृष्ण के कुल का रक्षक एक नृप। हपु० ५० १३२

(२) धर्मक्षेत्र का एक श्रावक। मपु ७६ २०३-२०४

(३) ललिताग देव की स्वयप्रभा देवी की अन्त परिषद् का सभासद् एक देव। मपु० ६ ५३

दृढव्रत—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९१

(२) वृषभदेव के समवसरण का मुख्य श्रावक। मपु० ४७ २९६

(३) समुद्रविजय के भाई अक्षोभ्य का पुत्र। हपु० ४८ ४५

दृढहस्त—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पैंसठवां पुत्र। पापु० ८ २०१

दृढायुध—वैदिशपुर के राजा वृषभध्वज का युवराज। हपु० ४५ १०७

दृष्टि—यह चार प्रकार की होती है—क्रियादृष्टि, अक्रियादृष्टि, अज्ञानदृष्टि और विनयदृष्टि। इनमें क्रियादृष्टि (क्रियावादी) के एक सौ अस्सी, अक्रियादृष्टि (अक्रियावादी) के चौरासी, अज्ञानदृष्टि (अज्ञानवादी) के अडसठ और विनयदृष्टि (विनयवादी) के बत्तीस प्रभेद होते हैं। हपु० १० ४७-४८

दृष्टिमुष्टि—वसुदेव और मदनवेगा का प्रथम पुत्र, अनावृष्टि और हिममुष्टि का अग्रज। हपु० ४८ ६१

दृष्टिमोह—सम्यग्दर्शन के घातक मोहनीय कर्म का एक भेद (दर्शनमोहनीय)। हपु० २ ११३

दृष्टियुद्ध—पलकों के टिमकार रहित शान्त दृष्टियों का युद्ध। भरतेश और बाहुबलि के मध्य ऐसा युद्ध हुआ था, जिसमें बाहुबलि विजयी हुए थे। मपु० ३६ ४५, ५१

दृष्टिवाद—बारहवाँ अंग। इसमें एक सौ आठ करोड अडसठ लाख छप्पन हजार पाँच पदो द्वारा तीन सौ त्रेसठ दृष्टियो का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। मपु० ३४ १४६, हपु० १० ४६

इसके पाँच भेद होते हैं—परिकर्म, सूत्र, अनुयोग, पूर्वगत और चूलिका। मपु० ३४ १४६, हपु० १० ४६, ६१ दे० अग

देयवस्तु—आहार, औषधि, शास्त्र तथा अभय देनेवाली वस्तुएँ। इनसे दाता और गृहीता दोनों के गुणो में वृद्धि होती है। मपु० २० १३८, २७१-२७४

देव—(१) जैनेन्द्र व्याकरण के रचयिता आचार्य देवनन्दी। अपरनाम पूज्यपाद। मपु० १ ५२, हपु० १ ३१

(२) देवगति के जीव। ये सुन्दर पवित्र शरीर के धारक, गर्भवास-मास-हड्डी तथा स्वेद आदि से रहित, टिमकार विहीन नेत्रधारी, इच्छानुसार रूप धारण करने में समर्थ, वृद्धावस्था से रहित, रोग विहीन, यौवन से सम्पन्न, तेज-युक्त, सुख और सौभाग्य के सागर, स्वाभाविक विद्याओ से सम्पन्न, अवधिज्ञानी, धीर, वीर और स्वच्छन्द-विहारी होते हैं। मपु० २८ १३२, पपु० ४३ ३५-३७ ये ज्योतिषी, भवनवासी, व्यन्तर और कल्पवासी भेद से चार प्रकार के होते हैं। महत्त्वाकाक्षी होने के कारण भोग तथा महागुणो को प्राप्त करने की इच्छा की पूर्ति न होने और वहाँ से च्युत होने के कारण दु खी होते हैं। पपु० २ १६६, ३ ८२ ९८ ८३, वीवच० ७ ११३-११४

(३) सम्यक्त्वी के लिए श्रद्धेय देव, शास्त्र और गुरु में प्रथम आराध्य। ये गुणो के सागर और धर्मतीर्थ के प्रवर्तक होते हैं। वीवच० ८ ५१

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

देवक—एक तेजस्वी नृप। यह रोहिणी के स्वयवर में सम्मिलित हुआ था। हपु० ३१ ३१

देवकी—मृगावती देश में दशार्णपुर नगर के राजा देवसेन (उग्रसेन के भाई) और उसकी रानी धनदेवी की पुत्री। यह कस की चचेरी बहिन थी। वसुदेव से उपकृत होकर कस ने इसका विवाह वसुदेव के साथ करा दिया था। वसुदेव से इसके युगलरूप में मोक्षगामी चरमशरीरी-देवदत्त, देवपाल, अनीकदत्त, अनीकपाल, शत्रुघ्न और जितशत्रु ये छ पुत्र हुए थे। कस के भय के कारण इन्द्र की आज्ञा से ये छहो पुत्र नैगमर्ष देव द्वारा भद्रिलपुर नगर के सुदृष्टि सेठ की अलका सेठानी के पास स्थानान्तरित किये गये थे तथा अलका सेठानी के मृत शिशु इसके पास डाल दिये गये थे। सातवें पुत्र नारायण कृष्ण हुए थे। जीवद्यशा के पति कस तथा पिता जरासन्ध इसी के अन्तिम पुत्र कृष्ण के द्वारा मारे गये थे। मपु० ७० ३६९, ३८४-३८८, ७१ २९१-२९६, पपु० २० २२४-२२६, हपु० ३३ २९, ३६ ४५, ५२ ८३, पापु० ११.३५-५७

देवकीर्ति—जयकुमार का पक्षधर एक राजा। मपु० ४४ १०६

देवकुमार—चक्रवर्ती सनत्कुमार का पुत्र। मपु० ६१ १०५, ११८

देवकुरु—(१) तीर्थंकर नेमि द्वारा दीक्षा लेने के समय व्यवहृत एक शिविका (पालकी)। मपु० ७१ १६९, पापु० २२ ४४

(२) सुमेरु तथा निषध कुलाचल के बीच का भोगभूमि का अर्ध-चक्राकार एक प्रदेश। मपु० ३ २४, ५ १८४, हपु० ५.१६७

(३) निषध पर्वत से उत्तर की ओर नदी के बीच निर्मित एक महाह्रद। मपु० ६३ १९८, हपु० ५ १९६

(४) सौमनस पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २२१

(५) विद्युत्प्रभ पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २२२

देवगर्भ—राजा बिन्दुसार का पुत्र, शतधनु नृप का पिता। हपु० १८ २०

देवगुरु—एक चारण ऋद्धिधारी मुनि। इनसे अमिततेज और श्रीविजय ने धर्मोपदेश सुना था। इन्होने ही एक वानर को अन्तिम समय मे पच नमस्कार मत्र सुनाया था जिसे सुनकर वानर मरकर सौधर्म स्वर्ग में चित्रागद नाम का देव हुआ था। मपु० ६२ ४०३, ७० १३५-१३८

देवच्छन्द—(१) लवणाकुश का पक्षधर एक नृप। पपु० १०२ १६८

(२) इक्यासी लड़ियो से निर्मित हार। मपु० १६ ५८

(३) अकृत्रिम चैत्यालयों का गर्भगृह। यह आठ योजन लम्बा दो योजन चौड़ा, चार योजन ऊँचा और एक कोस गहरा है। इसमें स्वर्ण और रत्नों से निर्मित पाँच सौ धनुष ऊँची एक सौ आठ जिन प्रतिमाएँ विद्यमान हैं। हपु० ५ ३५४, ३६०-३६५

देवदत्त—(१) हरिवंश में हुए राजा अमर का पुत्र। हपु० १७ ३३

(२) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८ ७१

(३) अर्जुन का शंख। हपु० ५१ २०, पापु० २१ १२७

(४) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३६

(५) वसुदेव और देवकी का पुत्र। यह युगल रूप में उत्पन्न हुआ था। इसने अन्त में मुनि-दीक्षा ग्रहण कर ली थी। मपु० ७१ २९५ दे० देवकी

(६) विद्याधर कालसंवर को शिला के नीचे अंगों को हिलाता हुआ प्राप्त एक शिशु (प्रद्युम्न)। विद्याधरी कांचनमाला के कहने पर विद्याधर ने इसे युवराज पद देकर उत्सव पूर्वक इस नाम से सम्बोधित किया था। मपु० ७२ ५४-६०

देवदत्ता—इस नाम की एक शिविका (पालकी)। तीर्थंकर विमलनाथ इसी पर आरूढ होकर सहेतुक वन गये थे। मपु० ५९ ४०-४१

देवदेव—(१) आगामी उत्सर्पिणी काल के छठे तीर्थंकर। हपु० ६० ५५९ अपरनाम देवपुत्र। मपु० ७६ ४७८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

देवनन्द—(१) राजा गंगदेव का पुत्र। हपु० ३३ १६३

(२) बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६७

देवपाल—(१) आगामी उत्सर्पिणी काल के तेईसवें तीर्थंकर। अपरनाम दिव्यपाद। मपु० ७६ ४८०, हपु० ६० ५६१

(२) वसुदेव और देवकी का द्वितीय पुत्र। मपु० ७१ २९५, हपु० ३३ १७०

(३) जम्बूद्वीप के मंगलादेश में भद्रिलपुर नगर के सेठ धनदत्त और सेठानी नन्दयशा का पुत्र। इसके आठ भाई थे। मपु० ७० १८५ हपु० १८ ११४ तीसरे पूर्वभव में यह मथुरा नगरी के निवासी भानु सेठ का भानुकीर्ति नामक पुत्र था। दूसरे पूर्वभव में विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल विद्याधर का सेनकान्त नाम का पुत्र हुआ। प्रथम पूर्वभव में हस्तिनापुर नगर के राजा गंगदेव का गंगदत्त नाम का पुत्र हुआ। हपु० ३३ ९६-९७, १३१-१३२, १४२-१४३, अपने पिता और आठों भाइयों के साथ इसने तीर्थंकर नेमिनाथ के समवसरण में दीक्षा ली और गिरिनार पर्वत से मोक्ष प्राप्त किया। हपु० ५९ ११५, १२६, ६५ १६

देवपुत्र—आगामी छठे तीर्थंकर, अपरनाम देवदेव। मपु० ७६ ४७८, हपु० ६० ५५९

देवभाव—वृषभदेव का गणधर। मपु० ४३ ५४

देवमति—कृष्ण की पटरानी जाम्बवती के पूर्वभव की जननी। यह जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के वीतशोक नगर के निवासी वैश्य दमक की भार्या और देविला की जननी थी। मपु० ७१ ३५९-३६१ हपु० ६० ४३

देवमातृक—वर्षा के जल से सींचे जानेवाले देश। मपु० १६ १५७

देवमाल—विदेहस्थ सोलहवाँ वक्षार पर्वत। मपु० ६३ २०१, २०४

देवरमण—सुमेरु पर्वत का एक वन। हपु० ५ ३६०

देवरम्या—चक्रवर्ती की एक विभूति। भरत की चाँदनी का नाम देवरम्या था। मपु० ३७ १५३

देवर्षि—एक नारद। यह ब्रह्मरुचि ब्राह्मण और ब्राह्मणी कूर्मी का पुत्र था। यह माता-पिता की तापस-अवस्था में गर्भ में आया था। निर्ग्रन्थ-मुनि द्वारा सम्बोधे जाने पर इसके पिता ने तो दिगम्बर—दीक्षा ले ली थी किन्तु इसके गर्भ में होने से माता दीक्षित न हो सकी थी। उसने दसवें मास में इसे वन में जन्मा था। अन्त में इसे वन में छोड़कर वह आर्यिका हुई। जृम्भक देव ने इसे पाला और पढ़ाया था। विद्वान् होने पर इसने आकाशगामिनी-विद्या प्राप्त की थी। इसने अणुव्रत धारण किये। क्षुल्लक का चारित्र प्राप्त करके जटाओं को धारण करता हुआ यह न गृहस्थ रहा न मुनि किन्तु देवों द्वारा पालन-पोषण किये जाने से यह देवों के समान चेष्टावान् विद्याओं से प्रकाशमान और इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। पपु० ११ ११७-१५८

देववर—मनः शिल आदि अन्तिम सोलह द्वीपों में चौदहवां द्वीप। यह देववर-सागर से घिरा हुआ है। हपु० ५ ६२५-६२६

देवशर्मा—(१) भगवान् वृषभदेव के पाँचवें गणधर। मपु० ४३ ५४, हपु० १२ ५५

(२) यादवों का पक्षधर एक नृप। हपु० ५० ८४

(३) कुरुदेश में स्थित पलाशकूट ग्राम के सोमशर्मा का साला। मपु० ७० २००-२०१

(४) मगध देश में वत्सा-नगरी का एक ब्राह्मण। इसे इसी नगर के निवासी अग्निमित्र की वैश्या रानी से उत्पन्न चित्रसेना की पुत्री विवाही गयी थी। मपु० ७५.७०-७३

देवश्री—(१) पुष्कलावती देश में धान्यकमाल-वन के निकट स्थित शोभानगर के राजा प्रजापाल की रानी। मपु० ४६ ९४, ९५

(२) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी-नगरी के निवासी सेठ सर्वदयित की बुआ। इसका विवाह सागरसेन से हुआ था। इसके दो पुत्र थे—सागरदत्त और समुद्रदत्त तथा एक पुत्री थी—सागरदत्ता। मपु० ४७. १९१-१९६

देवसंगीत—ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर स्वर्गों का दूसरा इन्द्रक-विमान। हपु० ६.४९

देवसत्य—वृषभदेव के गणधर। मपु० ४३.६०

देवसेन—(१) राजा भोजकवृष्णि और पद्मावती रानी का कनिष्ठ पुत्र, उग्रसेन और महासेन का अनुज। हपु० १८.१६

(२) राजा सत्यधर के सेनापति विजयमति और उसकी रानी जयावती का पुत्र। मपु० ७५ २५६-२५९

(३) मृगावती देश में दशार्ण-नगर का नृप, देवकी का पिता। मपु० ७१ २९२ पापु० ११ ५५

देवसेना—भरतक्षेत्र में शालिग्राम-नगर के गृहपति यक्षिल की भार्या, यक्षदेवी की जननी। मपु० ७१ ३९०, हपु० ६०.६२-६३

देवस्व—देव-द्रव्य। इसका विनाश करने से नरक-वेदना प्राप्त होती है। हपु० १८ १०२

देवाग्नि—तीर्थंकर ऋषभदेव के बारहवें गणधर। मपु० ४३ ५५, हपु० १२ ५७

देवाधिदेव—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०

देवानन्द—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५

(२) कृष्ण का पक्षधर एक नृप। हपु० ५० १२५

देवारण्य—सीता और सीतोदा नदियों के तट पर पूर्व-पश्चिम विदेह पर्यन्त लम्बे तथा समुद्र तट से मिले हुए चार वन-प्रदेश। हपु० ५ २८१

देवावतार—पूर्व मालव देश का एक तीर्थ। जरासन्ध से सन्धि करने के लिए समुद्रविजय द्वारा ससैन्य प्रेषित कुमारलोहजंघ ने तिलकानन्द और नन्दन मुनियों को यहीं आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। तभी से यह स्थान इस नाम से प्रख्यात हो गया। हपु० ५० ५६-६०

देविल—(१) जम्बूद्वीप के पुष्कलावती देश की वीतशोका-नगरी का एक गृहस्थ। हपु० ६० ४३

(२) भरतक्षेत्र के वत्स-नगर का एक वैश्य। यह बन्धुश्री का पति और श्रीदत्ता का पिता था। मपु० ६२ ४९४-४९५

देविलग्राम—पलालपर्वत-ग्राम का निवासी एक प्रधान पुरुष। मपु० ६.१३५

देविला—(१) भरतक्षेत्र के मगध देश में शाल्मलिखण्ड ग्राम के निवासी जयदेव की पत्नी और पद्मदेवी की जननी। मपु० ७१ ४४६-४४७, हपु० ६० १०८-१०९

(२) कृष्ण की पटरानी जाम्बवती के छठे पूर्वभव का नाम। उस भव में यह जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती देश के वीतशोक-नगर के वैश्य दमक और उसकी स्त्री देवमति की पुत्री थी। यह वसुमित्र से विवाहित हुई थी। कुछ ही समय मे यह विधवा हो जाने से विरक्त होकर व्रती हुई तथा आयु के अन्त में मरकर मेरु-पर्वत के नन्दन-वन में व्यन्तरी हुई। मपु० ७१ ३६०-३६२

(३) पोदनपुर के राजा चन्द्रदत्त की रानी, इन्द्रवर्मा की जननी। मपु० ७२ २०४-२०५

देशना—तीर्थंकर द्वारा कृत और गणधर द्वारा निबद्ध धर्मोपदेश। मपु० २ १४

देशनालब्धि—धर्मोपदेश की प्राप्ति। यह सम्यग्दर्शन की लब्धि है। मपु० ९ ११६

देशमान—वितस्ति (बालिश्त) नामक मान। यह मेय, देश, तुला और काल इन चार प्रकार के मानों में दूसरे प्रकार का मान है। पपु० २४ ६०-६१

देशव्रत—दूसरा गुणव्रत। इस व्रत में जीवनपर्यन्त के लिए किये हुए परिमाण में ग्राम-नगर आदि प्रदेश की अवधि निश्चित कर उससे बाहर जाने का निषेध होता है। इसके पाँच अतिचार हैं—प्रेष्य-प्रयोग-मर्यादा के बाहर सेवक को भेजना, आनयन—मर्यादा का अतिक्रमण कर बाहर से वस्तु मंगवाना, पुद्गल-क्षेप-मर्यादा के बाहर कंकड़ पत्थर फेंककर संकेत करना, शब्दानुपात-मर्यादा के बाहर अपना शब्द भेजना और रूपानुपात—खाँसी आदि के द्वारा अपना रूप दिखाकर मर्यादा के बाहर काम करनेवालों को अपनी ओर आकृष्ट करना। ये पाँच इसके अतिचार हैं। हपु० ५८.१४५, १७८

देशभूषण—सिद्धार्थ नगर के राजा क्षेमंकर और उसकी रानी विमला का पुत्र, कुलभूषण का अग्रज। इन दोनों भाइयों ने सागरसेन विद्वान् से शिक्षा प्राप्त की थी। इन्होंने झरोखे में बैठी एक कन्या देखकर उसका समागम प्राप्त करने के लिए परस्पर में एक दूसरे का वध करने का निश्चय कर लिया था किन्तु बन्दी के मुख से उस कन्या को अपनी बहिन जानकर पश्चात्ताप पूर्वक ये दोनों भाई दीक्षित हो गये थे। इनके वियोग से राजा क्षेमंकर शोकाग्नि से दग्ध हो गया और समस्त आहार छोड़कर मृत्यु को प्राप्त हुआ। इधर इन्होंने आकाशगामिनी ऋद्धि प्राप्त करके नाना तीर्थक्षेत्रों में विहार किया। तप में लीन होने पर सर्प और बिच्छुओं को राम ने इनके शरीर से हटाया था तथा निर्झर-जल से पैर धोकर सीता ने फूलों से इनकी पाद-अर्चा की थी। राम ने ही अग्निप्रभ द्वारा किये गये उपद्रवों को शान्त किया था। उपसर्ग के दूर होते ही इन्हें केवलज्ञान हुआ और देवों ने इनकी पूजा की। भरत इन्हीं से अपने भवान्तर जानकर दीक्षित हुए थे। पपु० ३९ ३९-४५, ७३-७९, १५८-१७५, ६१ १६-१८, ८६ १-९

देशसत्य—दस प्रकार के सत्यों में एक सत्य। इस सत्य में गाँव और नगर की रीति, राजा की नीति तथा गण और आश्रमों का उपदेश करनेवाला वचन समाहित होता है। हपु० १० १०५

देशसन्धि—दो देशों की सीमाभूमि। मपु० ३५ २७

देशाख्यान—लोक के किसी एक भाग के देश, पर्वत, द्वीप तथा समुद्र आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन करना। मपु० ४ ५

देशावकाशिक—प्रथम शिक्षाव्रत दिग्व्रत की सीमा के अन्तर्गत दैनिक गमनागमन में घर, बाजार, गली, मोहल्ला आदि की सीमा निश्चित करके उसका अतिक्रमण नही करना देशावकाशिक शिक्षाव्रत है। वीवच० १८ ५४

देशावधिज्ञान—अवधिज्ञान का प्रथम भेद। इसका विषय पुद्गल द्रव्य है। यह अवधिज्ञानावरण-कर्म के क्षयोपशम से होता है। मपु० ४८ २३, हपु० १० १५२

देहत्रय—औदारिक, तैजस और कार्माण ये तीन शरीर। मपु० ४८ ५२

देहमान—जीवों की शारीरिक अवगाहना का प्रमाण। सूक्ष्म निगोदिया लब्धपर्याप्तक जीव का शरीर अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है। एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय जीव इससे छोटे नहीं होते। एकेन्द्रिय-जीव कमल के देह का उत्कृष्ट प्रमाण एक हजार योजन तथा एक कोस होता है। द्वीन्द्रिय जीवों में सबसे बड़ी अवगाहना शंख की बारह

योजन प्रमाण, त्रीन्द्रिय जीवो में कानखजूरा की तीन कोस प्रमाण, चतुरिन्द्रिय जीवो में भ्रमर की एक योजन (चार कोस) प्रमाण तथा पचेन्द्रिय जीवो में सबसे बडी स्वयभू-रमण-समुद्रके राघव-मच्छ की एक हजार योजन प्रमाण होती है। पचेन्द्रियो मे सूक्ष्म अवगाहना सिवर्थक मच्छ की है। सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न अपर्याप्तक जलचर, थलचर और नभचर तिर्यंचो की जघन्य अवगाहना एक वितस्ति प्रमाण होती है। मनुष्य और तिर्यंच की अवगाहना तीन कोस प्रमाण, नारकी की उत्कृष्ट अवगाहना पाँच सौ धनुष और देवो की पच्चीस धनुष होती है। हपु० १८.७२-८२

देव—(१) पूर्व पर्याय में कृत शुभाशुभ कर्म। पपु० ९६ ९

(२) सौधर्मेन्द्रा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

दोलागृह—झूलने का स्थान। इसमें वास्तुकला का महत्त्वपूर्ण प्रदर्शन होता था। मपु० ७ १२५

दोस्तटिका—दक्षिण का एक नगर। यह नगर सौराष्ट्र के वर्द्धमानपुर से गिरिनार को जानेवाले मार्ग पर स्थित है। हरिवशपुराण की रचना इसी नगरी के शान्तिनाथ जिनालय में पूर्ण हुई थी। हपु० ६६ ५३

द्युति—(१) मथुरा नगरी के सेठ भानु और उनकी स्त्री यमुना के छठे पुत्र शूरदत्त की भार्या। हपु० ३३ ९६-९९

(२) अनेक शास्त्रो के पारगामी एक आचार्य। ये राम के वनवास के समय अयोध्या में ही ससघ स्थित थे। इनके सम्मुख भरत ने प्रतिज्ञा की थी कि राम के वन से लौटते ही वह दीक्षित हो जायगा। इन्होने उसे सम्बोधित किया और धर्माचरण के अभ्यास का परामर्श दिया। सीता के बनवास से दुखी अयोध्या का नगर-सेठ वज्राक भी इन्ही के पास दीक्षित हुआ था। वे स्वय परम तपस्वी थे। आयु के अन्त में ये ऊर्ध्व ग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुए। पपु० ३२ १३९-१४०, १२३ ८६-९२

(३) व्याघ्रनगर के राजा सुकान्त का पुत्र। पपु० ८० १७७

(४) साकेत के मुनिसुव्रत-जिनालय में विद्यमान सप्तर्षियो का अर्चक एक भट्टारक। इसके शिष्य इसे सप्तर्षियो को नमन करते देखकर असतुष्ट हो गये थे। बाद में उसकी निर्मलता ज्ञात कर वे अपने अज्ञान की निन्दा करते हुए पुन उसके भक्त हो गये थे। पपु० ९२. २२-२७

द्युतिलक—(१) विजयार्ध-पर्वत पर स्थित ६० सौन्दर्य और वैभव से सम्पन्न नगरो मे एक नगर। मपु० १९ ८३, वीवच० ३ ७३

(२) अम्बरतिलक-पर्वत का दूसरा नाम। मपु० ७ ९९

द्युम्नाभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २००

द्यूत—सात व्यसनो मे पहला व्यसन-जुआ। यह यश और धन की हानि करनेवाला, सब अनर्थों का कारण तथा इहलोक और परलोक दोनो में अनेक दु खो का दाता है। युधिष्ठिर इसी से दु.ख मे पडा था। वह न केवल धन दौलत अपितु सम्पूर्ण स्त्रियो और भाइयो को भी हार गया था। इस कारण उसे अपने भाइयो और द्रौपदी के साथ बारह वर्ष तक वनवास तथा एक वर्ष का गुप्तवास भी करना पडा था। पापु० १६ १०९-११८, १२३-१२५

द्योति—रत्नप्रभा के खरभाग का आठवाँ पटल। हपु० ४ ५३ दे० खरभाग

द्रढीयान्—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८२

द्रव्य—यह सत्, सख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व इन आठ अनुयोग द्वारों तथा नाम स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपो से ज्ञेय होता है। हपु० ११, २१०८, १७ १३५ जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश ये पाँचो बहुप्रदेशी होने से अस्तिकाय है, काल एक प्रदेशी होने से अस्तिकाय नही है परन्तु द्रव्य है। वे छहो गुण और पर्याय से युक्त होते हैं। इनमें जीव को छोड कर शेष द्रव्य अजीव हैं। इनका परिणमन अपने-अपने गुण और पर्याय के अनुरूप होता है। ये सब स्वतन्त्र हैं। मपु० ३ ५-९ वीवच० १६ १३७-१३८

द्रव्यपरिवर्तन—जीव के पाँच प्रकार के परावर्तनो में प्रथम परावर्तन। इसमें जीव परमाणुओ का अनन्त बार शरीर और कर्म रूप से ग्रहण तथा विसर्जन करता है। वीवच० ११.२८

द्रव्य-पल्य—एक योजन लम्बे चौडे तथा गहरे गर्त को तत्काल उत्पन्न भेड के बालो के अविभाज्य अग्रभाग से ठोक-ठोक कर भरे हुए गड्ढे में से प्रति सौवें वर्ष एक-एक बाल निकाला जाय और जब यह गर्त बालहीन हो जाय तो इसमें जितना समय लगता है वह समय पल्य कहलाता है। पपु० २० ७४-७६

द्रव्यप्राण—पाँच इन्द्रियाँ, मन, वचन और काय (तीन बल) आयु तथा श्वासोच्छ्वास ये दस प्राण। सज्ञी-पचेन्द्रिय के ये सभी होते हैं। असज्ञी-पचेन्द्रिय के मन न होने से नौ, चतुरिन्द्रिय के कर्णेन्द्रिय और मन न होने से आठ, त्रीन्द्रिय के मन, कर्ण और नेत्र न होने से सात, द्वीन्द्रिय के मन, कर्ण, चक्षु और नासिका का अभाव होने से छ और एकेन्द्रिय के रसना, नासिका, चक्षु, श्रोत्र, मन और वचन का अभाव होने से चार प्राण होते है। वीवच० १६.९९-१०२

द्रव्यबन्ध—भावबन्ध के निमित्त से जीव और कर्म का परस्पर सश्लिष्ट होना। यह बन्ध चार प्रकार का होता है—प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश। वीवच० १६ १४४-१४५

द्रव्यमोक्ष—शुक्लध्यान द्वारा सब कर्मों का आत्मा से सम्बन्ध-विच्छेद होना। वीवच० १६ १७३

द्रव्यलिंगी—निर्ग्रन्थ भावो के बिना ही निर्ग्रन्थ मुद्रा के धारक मुनि। मपु० ७ २१३-२१४

द्रव्यलेश्या—शारीरिक वर्ण। यह छ प्रकार की होती है—कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल। मपु० १० ९६

द्रव्यसंवर—महाव्रत आदि के पालन और उत्तम ध्यान द्वारा कर्मास्रव का निरोध करना। वीवच० १६.१६८

द्रव्यसूत्र—तीन धागो से निर्मित (तीन लडो का) यज्ञोपवीत। यह सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र इन तीन भावो का प्रतीक होता है। मपु० ३९.९५

द्रव्यानुयोग—श्रुतस्कन्ध का चतुर्थ अनुयोग। इसमें प्रमाण, नय, निक्षेप तथा सत् संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व, निर्देश स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति और विधान के द्वारा द्रव्यों के गुण, पर्याय और भेदों का तात्त्विक वर्णन रहता है। मपु० २ १०१

द्रव्यार्थिक-नय—वस्तु के किसी एक निश्चित स्वरूप का बोध करानेवाले नय के दो भेदों में प्रथम भेद। नैगम, संग्रह और व्यवहार ये तीन इसके प्रभेद हैं। हपु० ५८ ३९-४२

द्रव्यास्रव—जीव में मिथ्यात्व आदि कारणों से पुद्‌गलों का कर्म रूप से आगमन। वीवच० १६ १४१

द्रुत—गायन-सम्बन्धी त्रिविध वृत्तियों में प्रथम वृत्ति। लय भी तीन प्रकार की होती है। इसमें द्रुतलय एक लय है। पपु० १७ २७८, २४९

द्रुपद—(१) कम्पिला नगरी का राजा। यह दृढरथा का पति और द्रौपदी का पिता था। यह कृष्ण का पक्षधर था। मपु० ७१ ७३-७७, ७२ १९८ हरिवंश और पाण्डव-पुराणकारों ने इसे माकन्दी-नगरी का राजा बताकर इसकी रानी का नाम भोगवती कहा है। हपु० ४५ १२०-१२२, ५० ८१, पापु० १५ ३७, ४१-४४

(२) जरासन्ध-कृष्ण युद्ध में कृष्ण का पक्षधर एक समरथ राजा। हपु० ५० ८१

द्रुम—राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३०

द्रुमषेण—एक अवधिज्ञानी मुनि। इन्होंने शंख को निर्नामिक के पूर्वभव बताये थे। मपु० ७० २०६-२०७ हपु० ३३ १४९

द्रुमसेन—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३०

(२) सिंहलद्वीप के राजा श्लक्ष्णरोम का सेनापति। कृष्ण ने इसे युद्ध में मारा और राजा की कन्या लक्ष्मणा को द्वारिका लाकर विधिपूर्वक विवाहा। हपु० ४४ २०-२४

(३) महावीर के निर्वाण के तीन सौ पैंतालीस वर्ष बाद दो सौ बीस वर्ष के अन्तराल में हुए ग्यारह अगधारी पाँच मुनीश्वरों में एक मुनि। मपु० ७६ ५२५ वीवच० १ ४१-४९

(४) नवें नारायण कृष्ण के पूर्वभव के गुरु। पपु० २० २१६

(५) लक्ष्मण के पूर्वभव के जीव पुनर्वसु के दीक्षागुरु। पपु० ६४ ९३-९५

द्रोण—(१) द्रोणाचार्य। यह ऋषि भार्गव की वंश-परम्परा में हुए विद्रावण का पुत्र था। अश्विनी इसकी स्त्री और इससे उत्पन्न अश्वत्थामा इसका पुत्र था। इसने पाण्डवों और कौरवों को धनुर्विद्या सिखायी थी। कौरवों द्वारा पाण्डवों का लाक्षागृह में जलाया जाना सुनकर यह बहुत दुःखी हुआ था। इसने कौरवों से कहा था कि इस प्रकार कुल-परम्परा का विनाश करना उचित नहीं है। एक भील ने इसे गुरु बनाकर शब्दवेधिनी विद्या प्राप्त की थी। अर्जुन के कहने पर प्राणियों के वध से रोकने के लिए इसने भील से उसके दाहिने हाथ का अगूठा माँगा था। भील ने अपना अगूठा तत्काल ही सहर्ष दे दिया था। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में अर्जुन को इससे युद्ध करना पड़ा था। अर्जुन इसे ब्राह्मण और गुरु समझकर छोड़ता रहा। एक बार अर्जुन ने इसे ब्रह्मास्त्र से बाँध लिया और गुरु समझकर मुक्त भी कर दिया। इसी समय मालवदेश के राजा का अश्वत्थामा नामक हाथी युद्ध में मारा गया। युधिष्ठिर के यह कहते ही कि "अश्वत्थामा रण में मारा गया" इसने हथियार डाल दिये थे। यह रुदन करने लगा तो युधिष्ठिर ने कहा कि हाथी मरा है उसका पुत्र नहीं। इससे यह शान्त हुआ ही था कि धृष्टार्जुन ने असि-प्रहार से इसका मस्तक काट डाला। हपु० ४५ ४१-४८, पापु० ८.२१०-२१४, १० २१५-२१६, २६२-२६७, १२ १९७-१९९, २० १८७, २०१-२०२, २२२-२३३

(२) नदी और समुद्र की मर्यादाओं से युक्त ग्राम। पापु० २ १६०

द्रोणमुख—नदी के तटवर्ती चार सौ ग्रामों का समूह। यह व्यवसायों का केन्द्र होता है। यहाँ सभी जातियाँ रहती हैं।। मपु० १६ १७३, १७५, हपु० २ ३

द्रोणमेघ—एक राजा, विशल्या का पिता। लक्ष्मण को लगी शक्ति इसी राजा की पुत्री विशल्या के प्रभाव से दूर हुई थी। पपु० ६४ ३७, ४३, ६५ ३७-३८

द्रोणामुख—जलयानों का ठहरने का स्थान (बन्दरगाह)। मपु० ३७ ६२

द्रौपदी—भरतक्षेत्र की माकन्दी-नगरी (महापुराण के अनुसार कम्पिला-नगरी) के राजा द्रुपद और रानी भोगवती (महापुराण के अनुसार दृढरथा) की पुत्री। इसने स्वयंवर में गाण्डीव-धनुष से घूमती हुई राधा की नासिका के नथ के मोती बाण से वेध कर नीचे गिरानेवाले अर्जुन का वरण किया था। अर्जुन के इस कार्य से दुर्योधन आदि कुपित हुए और वे राजा द्रुपद से युद्ध करने निकले। अपनी रक्षा के लिए यह अर्जुन के पास आयी। भय से काँपती हुई उसे देखकर भीमसेन ने इसे धैर्य बधाया। भीम ने कौरव-दल से युद्ध किया और अर्जुन ने कर्ण को हराया। इस युद्ध के पश्चात् द्रुपद ने विजयी अर्जुन के साथ द्रौपदी का विवाह किया। द्रौपदी को लेकर पाण्डव हस्तिनापुर आये। दुर्योधन ने युधिष्ठिर के साथ कपटपूर्वक द्यूत खेलकर उसकी समस्त सम्पत्ति और राज्य-भाग जीत लिया। जब युधिष्ठिर ने अपनी पत्नियों तथा सपत्नीक भाइयों को दाँव पर लगाया तो भीम ने विरोध किया। उसने द्यूत-क्रीडा के दोष बताये तब धर्मराज ने बारह वर्ष के लिए राज्य को हारकर द्यूत-क्रीडा को समाप्त किया। इसी बीच दुर्योधन की आज्ञा से दुःशासन द्रौपदी को चोटी पकड़कर घसीटता हुआ द्यूत-सभा में लाने लगा। भीष्म ने यह देखकर दुःशासन को डाँटा और द्रौपदी को उसके कर-पाश से मुक्त कराया। पापु० १८ १०९-१२९ द्यूत की समाप्ति पर दुर्योधन ने दूत के द्वारा युधिष्ठिर से द्यूत के हारे हुए दाव के अनुसार बारह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास के लिए कहलाया। युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ वनवास तथा अज्ञातवास के लिए हस्तिनापुर से निकल आया। वह द्रौपदी और माता कुन्ती को इस काल में अपने चाचा विदुर के घर छोड़ देना चाहता था पर द्रौपदी ने पाण्डवों के साथ ही प्रवास करना उचित समझा। पाण्डव सहायवन में थे। दुर्योधन यह सूचना पाकर उन्हें मारने को सेना सहित वहाँ के लिए रवाना हुआ। नारद

के संकेत पर अर्जुन के शिष्य चित्रांग ने मार्ग में ही दुर्योधन की सेना को रोक लिया। युद्ध हुआ। चित्रांग ने दुर्योधन को नागपाश में बाँध लिया और उसे अपने साथ ले जाने लगा। दुर्योधन की पत्नी भानुमती को जब यह पता चला तो वह भीष्म के पास गयी। भीष्म ने उसे युधिष्ठिर के पास भेज दिया। उसने युधिष्ठिर से अपने पति को मुक्त करने की विनती की। युधिष्ठिर ने अर्जुन को भेजकर चित्रांग के नागपाश से दुर्योधन को मुक्त कराया। वह हस्तिनापुर तो लौट गया पर अर्जुन द्वारा किये गये उपकार से अत्यन्त खिन्न हुआ। उसने घोषणा की कि जो पाण्डवो को मारेगा उसे वह अपना आधा राज्य देगा। राजा कनकध्वज ने उसे आश्वस्त किया कि वह सात दिन की अवधि मे उन्हें मार देगा। उसने कृत्या-विद्या सिद्ध की। युधिष्ठिर को भी यह समाचार मिल गया। उसने धर्मध्यान किया। धर्मदेव का आसन कम्पित हुआ। वह पाण्डवो की सहायता के लिए एक भील के वेष में आया। पहले तो उसने द्रौपदी का हरण किया और उसे अपने विद्याबल से अदृश्य कर दिया। फिर उसे छुडाने के लिए पीछा करते हुए पाण्डवो को एक-एक करके माया-निर्मित एक विषमय-सरोवर का जल पीने के लिए विवश किया। इससे वे पाँचो भाई मूर्च्छित हो गये। सातवें दिन कृत्या आयी। मूर्च्छित पाण्डवो को मृत समझकर वह भील के कहने से वापस लौटी और उसने कनकध्वज को ही मार दिया। धर्मदेव ने पाण्डवो की मूर्च्छा दूर की, युधिष्ठिर के उत्तम चरित्र की प्रशसा की, सारी कथा सुनायी और अदृश्य द्रौपदी को दृश्य करके अर्जुन को सादर सौंप दी। धर्मदेव अपने स्थान को चला गया। द्रौपदी समेत पाण्डव आगे बढे। मपु० ७२ १९८-२११, हपु० ४५ १२०-१३५, ४६.५-७, पापु० १५ ३७-४२, १०५-१६२, २१७-२२५, १६.१४०-१४१, १७ १०२-१६३, १८.१०९-१२९ पाण्डव रामगिरि होते हुए विराट नगर में आये। अज्ञातवास का वर्ष था। उन्होंने अपना वेष बदला। द्रौपदी ने मालिन का वेष धारण किया। वे विराट् के राजा के यहाँ रहने लगे। उसी समय चूलिकापुरी के राजा चूलिक का पुत्र कीचक वहाँ आया। वह राजा विराट् का साला था। द्रौपदी को देखकर वह उस पर आसक्त हुआ और उससे छेडछाड करने लगा। भीम को द्रौपदी ने यह बताया तब उसने द्रौपदी का वेष बनाकर अपने पास आते ही उसे पाद-प्रहार से मार डाला। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध हुआ। इसमें पाण्डवो ने कौरव-पक्ष का सहार किया। युद्ध की समाप्ति होने पर पाण्डव हस्तिनापुर रहने लगे। एक दिन नारद आया। पाण्डवो के साथ वह द्रौपदी के भवन में भी आया। शृगार में निरत द्रौपदी उसे देख नही पायी। वह उसका आदर-सत्कार नही कर सकी। नारद क्रुद्ध हो गया। उसने उसका सुन्दर चित्रपट तैयार करके उसे धातकीखण्ड द्वीप मे स्थित दक्षिण-भरतक्षेत्र की अमरककापुरी के राजा पद्मनाभ को दिया और चित्र का परिचय देकर वह वहाँ से चला आया। चित्र को देखकर पद्मनाभ उस पर आसक्त हुआ। उसने सगमदेव को सिद्ध किया। वह सोती हुई द्रौपदी को वहाँ ले आया। जब वह जागी तो उसने अपने आपको पद्मनाभ के यहाँ पाया। वह बडी दु खी हुई। पद्मनाभ ने उसे शील से विचलित करने के अनेक प्रयत्न किये। वह सफल नही हो सका। द्रौपदी ने उससे एक मास की अवधि चाही। उसने इसे स्वीकार किया। प्रात काल होने पर पाण्डव द्रौपदी को वहाँ न देखकर दु खी हुए। बहुत ढूँढा उसे न पा सके। नारद अपने कार्य से बहुत दुखी हुआ। उसने कृष्ण को द्रौपदी के अमरककापुरी में होने का समाचार दे दिया। कृष्ण ने स्वस्तिक-देव को सिद्ध किया। उसने जल मे चलनेवाले छ रथ दिये। उनमे बैठकर कृष्ण और पाण्डवो ने लवणसमुद्र को पार किया और धातकीखण्ड मे अमरककापुरी पहुँचे। युद्ध मे उन्होने पद्मनाभ को जीता। वह बडा लज्जित हुआ। उसने उन सबसे क्षमा माँगी और द्रौपदी के शील की प्रशसा करते हुए उसे लौटा दिया। वे द्रौपदी को वापस ले आये। इस समस्त घटना-चक्र मे फँसी हुई द्रौपदी को ससार से विरक्ति हुई। उसने कुन्ती और सुभद्रा के साथ राजीमती आर्यिका के पास दीक्षा ली। उन्होने सम्यक्त्व के साथ चारित्र का पालन किया। आयु के अन्त में राजीमती, कुन्ती, द्रौपदी और सुभद्रा ने स्त्री-पर्याय को छोडा और वे अच्युत स्वर्ग में सामानिक देव हुईं। दूरवर्ती पूर्वभवो में द्रौपदी अग्नि-भूति की नागश्री नामक पुत्री थी। इसने इस पर्याय में धर्मरुचि मुनि को विषमिश्रित आहार दिया था जिससे यह नगर से निकाली गयी। इसे कुष्ट रोग हुआ और मरकर यह पाँचवें धूमप्रभा नगर में नारकी हुई। नरक से निकलकर यह दृष्टिविष जाति का सर्प हुई। इस नरक से निकलकर अनेक त्रस और स्थावर योनियो मे दो सागर काल तक यह भ्रमण करती रही। इसके पश्चात् यह चम्पापुरी मे मातगी नाम की स्त्री हुई। इस पर्याय में इसने अणुव्रत धारण किये और मद्य, मास तथा मधु का त्याग किया। अगले जन्म में यह दुर्गन्धा हुई। माता-पिता ने इसका नाम सुकुमारी रखा। इसने उग्र तप किया और देह त्यागने के पश्चात् यह अच्युत स्वर्ग में देवी हुई। वहाँ से चयकर राजा द्रुपद की पुत्री हुई। मपु० ७२ २४३-२६४, हपु० ४६ २६-३६, ५४ ४-७, पापु० १७ २३०-२९५, २१ ८-१०, ३२-३४, ५१-५९, ९४-१०२, ११४-१४३, २४ २-११, ७२-७८, २५ १४१-१४४

द्वादश-गण—द्वादश सभा-तीर्थंकर के समवसरण में उनकी गन्धकुटी को चारो ओर से घेरे हुए बारह सभा-कोष्ठ। इनमें क्रमश गणधर आदि मुनि, कल्पवासिनी-देवियाँ, आर्यिकाएँ और स्त्रियाँ, भवनवासिनी-देवियाँ, व्यन्तरिणी-देवियाँ, ज्योतिष्क देवियाँ, भवनवासी-देव, व्यन्तरदेव, ज्योतिष्क-देव, कल्पवासी-देव, मनुष्य और तिर्यंच बैठते हैं। मपु० २३ १९३-१९४, ४८ ४९, हपु० २ ६६, ४२ ४३

द्वादशांग—श्रुत के बारह अग-आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति अग, ज्ञातृधर्मकथांग, उपासकाध्ययनांग, अन्तकृद्दशांग, अनुत्तरोपपादिकदशांग, प्रश्नव्याकरणांग, विपाकसूत्रांग और दृष्टिप्रवादांग। मपु० ३४ १३३, हपु० १० २६-४५

द्वापर—अवसर्पिणी का चतुर्थ काल। पापु० २ २३

द्वापुरी—द्वितीय नारायण द्विपृष्ठ की जन्मभूमि। पपु० २० २२१

द्वारवती—यादवो की महानगरी। नेमि की कुबेर द्वारा निर्मित यह नगरी बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौडी, वज्रमयी कोट से आवृत तथा समुद्रमयी परिखा से युक्त थी। इसमें कृष्ण का अठारह खण्डो से युक्त सर्वतोभद्र नामक महल था। मपु० ७१ २४-२७, ६३, हपु० १ ७२, ४१ १८-१९, २७ पाण्डव यहाँ आये थे। हपु० ४५ १, ५० २ अपरनाम द्वारिका। पापु० ११ ७६-८१ इसका एक नाम द्वारावती भी था। बलभद्र-अचलस्तोक और नारायण-द्विपृष्ठ, बलभद्र-धर्म और नारायण-स्वयभू, बलभद्र-सुप्रभ और नारायण-पुरुषोत्तम की यह जन्मभूमि थी। मपु० ५८ ८३-८४, ५९ ७१, ८६, ६० ६३, ६६

द्वारिका—दे० द्वारवती। हपु० ४७ १२, ९२, १००-१०१, ६१ १८, पापु० ११ ७६-८१

द्विकावलि—एक व्रत। यह अडतालीस दिन में सम्पन्न होता है। इसमें अडतालीस षष्ठोपवास (बेला) और इतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ ६८

द्विचूड—विद्याधर-दृढरथ के वशधर एकचूड-विद्याधर का पुत्र। यह त्रिचूड का पिता था। पपु० ५ ५३

द्विज—इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, सयम और तप–इन छ विशुद्ध वृत्तियो का धारक व्यक्ति। एक बार गर्भ से और दूसरी बार सस्कारो से जन्म होने के कारण ऐसे व्यक्ति द्विज कहलाते हैं। मपु० ३८ २४, ४२, ४७-४८, ४० १४९ द्विजत्व के ज्ञान और विकास के लिए इनके दस कर्त्तव्य होते हैं—अतिबाल-विद्या, कुलावधि, वर्णोत्तमत्व, पात्रत्व, सृष्ट्यधिकारिता, व्यवहारेशिता, अवध्यता, अदण्ड्यता, मानर्हिता और प्रजासम्बन्धान्तर। उपासकाध्ययन में इन्ही दस कर्तव्यों को दस अधिकारो के रूप में वर्णित किया गया है। मपु० ४० १७४-१७७

द्विजोत्तम—गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि इन तीनो अग्नियो में मत्रों के द्वारा भगवान् की पूजा करनेवाला द्विज। मपु० ४० ८५

द्वितीय-व्रत-भावना—सत्यव्रत की पाँच भावनाएँ। ये क्रोध, लोभ, भय और हास्य का त्याग तथा शास्त्रानुकूल उपदेश रूप हैं। मपु० २० १६२

द्वितीय-शुक्लध्यान—एकत्ववितर्क-शुक्लध्यान। यह बारहवें गुणस्थान में होता है। मपु० ४७ २४७, ६१ १००

द्विपर्वा—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को दी हुई सोलह निकायो की विद्याओ में एक विद्या। हपु० २२ ६७

द्विपृष्ठ—(१) अवसर्पिणी के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न एक शलाका पुरुष-द्वितीय नारायण। यह द्वारवती-नगरी के राजा ब्रह्म और उसकी दूसरी रानी उषा का पुत्र था। इसकी कुल आयु बहत्तर लाख वर्ष थी। उसमें इसके कुमारकाल में पच्चीस हजार वर्ष, मण्डलीक अवस्था में भी इतने ही वर्ष, सौ वर्ष दिग्विजय में, और राज्य में इकहत्तर लाख उनचास हजार नौ सौ वर्ष व्यतीत हुए थे। मपु० ५८ ८४-८५, हपु० ६० ५१९-५२०, वीवच० १८ १०१, ११२ यह भरतक्षेत्र के तीन खण्डो का स्वामी था। इसने कोटिशिला को अपने मस्तक तक ऊपर उठा लिया था। बलभद्र-अचलस्तोक इसका भाई था। भोगवर्धन-नगर के राजा श्रीधर का पुत्र तारक-प्रतिनारायण था। इसने द्विपृष्ठ से उसका गन्धहस्ती माँगा था। द्विपृष्ठ ने उसे नही दिया। इस पर दोनों में युद्ध हुआ। तारक ने द्विपृष्ठ पर अपना चक्र चलाया। चक्र द्विपृष्ठ के हाथ में आ गया। उसी चक्र से तारक मारा गया। सात रत्नो और तीन खण्ड पृथिवी का स्वामित्व प्राप्त कर चिरकाल तक भोग भोगते हुए द्विपृष्ठ मरकर सातवें नरक गया। मपु० ५८ ९०-९१, १०२-१०४, ११४-११८, हपु० ५३ ३६, ६० २८८-२८९ तीसरे पूर्वभव में यह भरतक्षेत्र के कनकपुर-नगर में सुषेण नामक नृप था। दूसरे पूर्वभव में चौदहवें स्वर्ग में देव हुआ पश्चात् इस नाम का अर्धचक्री हुआ। मपु० ५८ १२२

(२) आगामी उत्सर्पिणी काल का नौवाँ नारायण। मपु० ७६ ४८९ हरिवशपुराणकार ने इसे आगामी आठवाँ नारायण बताया है। हपु० ६० ५६७

द्विरद—तीर्थंकर की माता द्वारा गर्भावस्था में देखे गये सोलह स्वप्नो में प्रथम स्वप्न-हाथी। मपु० २९ १३६, पपु० २१ १४

द्विरदवंष्ट्र—म्लेच्छो का एक राजा। यह वनमाला का पिता था। इसने अपनी पुत्री का विवाह धातकीखण्ड के एक राजा सुमित्र के साथ किया था। पपु० १२ २२-२८

द्विरदरथ—इक्ष्वाकुवशी एक राजा। यह शरभरथ का पुत्र और सिंहदमन का पिता था। पपु० २२ १५७-१५९

द्विशतग्रीव—प्रतिनारायण बलि के वश में उत्पन्न एक विद्याधर-राजा। यह पचशतग्रीव का उत्तराधिकारी था। हपु० २५ ३४, ३६

द्वीन्द्रिय—स्पर्शन और रसनेन्द्रिय से युक्त जीव। इनकी सात लाख कुल कोटियाँ, उत्कृष्ट आयु बारह वर्ष तथा सबसे बडी अवगाहना बारह योजन शख की होती है। हपु० १८ ६०, ६६, ७६

द्वीप—(१) कुरुवशी एक राजा। हपु० ४५ ३०

(२) जल का मध्यमवर्ती भूखण्ड। मध्यलोक में अनन्त द्वीप हैं। इनमें आरम्भिक द्वीप सोलह हैं। इनके नाम हैं—जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड, पुष्करवर, वारुणीवर, क्षीरवर, घृतवर, इक्षुवर, नन्दीश्वर, अरुणीवर, अरुणाभास, कुण्डलवर, शखवर, रुचकवर, भुजगवर, कुशवर और क्रौंचवर। इनमें जम्बूद्वीप तो लवणसमुद्र से घिरा हुआ है और शेष द्वीप उन द्वीपो के नाम के सागरो से घिरे हुए हैं। इन द्वीप सागरो के आगे असख्य द्वीप हैं। पश्चात् ये सोलह द्वीप हैं—मन-शिल, हरिताल, सिन्दूर, श्यामक, अजन, हिंगुलक, रूपवर, सुवर्णवर, वज्रवर, वैडूर्यवर, नागवर, भूतवर, यक्षवर, देववर, इन्दुवर और स्वयभूरमण। ये द्वीप भी अपने-अपने नाम के सागरों से वेष्टित हैं। हपु० ५ ६१३-६२६

द्वीपकुमार—पाताल लोक के भवनवासी देव। हपु० ४ ६३

द्वीपसागरप्रज्ञप्ति—दृष्टिवाद अग के परिकर्म नामक भेद में कथित पाँच प्रज्ञप्तियो में चतुर्थ प्रज्ञप्ति। इसमें द्वीप और सागरो का वावन लाख छत्तीस हजार पदो में वर्णन है। हपु० १०.६१-६२, ६६

द्वीपार्धचक्रवाल—मानुषोत्तर पर्वत। मपु० ५४ ३५

द्वैतवाद—आत्मा और परमात्मा को तथा पुरुष और प्रकृति को पृथक् मानना। मपु० २१.२५३

द्वैपायन—रोहिणी का भाई एक मुनि। बारहवें वर्ष में मदिरा के निमित्त से निजोत्पन्न क्रोध से द्वारिका-दहन की बात तीर्थंकर नेमि से जानकर यह ससार से विरक्त हो गया और तप करने लगा था। भ्रान्तिवश बारहवें वर्ष को पूर्ण हुआ जान द्वारिका आया। कृष्ण ने मदिरा फिकवा दी थी परन्तु प्रक्षिप्त मदिरा कदम्ब-वन के कुण्डो में अश्मपाक विशेष के कारण भरी रही जिसे शम्ब आदि कुमारो ने तृषाकुलित होकर पी ली। उनके भाव विकृत हो गये। इसे द्वारिका-दहन का कारण जानकर उन्होने तब तक मारा जब तक यह पृथिवी पर गिर नही पडा। इस अपमान से इसे क्रोध उत्पन्न हुआ। बडी अनुनय-विनय करने से कृष्ण और बलभद्र ही बच सकेंगे ऐसा कहकर अन्त मे यह मरकर अग्निकुमार नामक मिथ्यादृष्टि भवनवासी देव हुआ। इसने विभगावधिज्ञान से द्वारिकावासियो को अपना हन्ता जानकर द्वारिका को जलाना आरम्भ किया और छ मास में उसे भस्म करके नष्ट कर दिया। इस दहन में कृष्ण और बलराम दोनो ही बच पाये। अन्य कोई भी नगर से बाहर नही निकल पाया। अपरनाम द्वीपायन। यह आगामी अठारहवाँ तीर्थंकर होगा। मपु० ७२ १७८-१८५, ७६ ४७४, हपु० १ ११८, ६१ २८-७४, ९०, पापु० २२ ७८-८५

द्वैधीभाव—राजा का एक गुण-शत्रुओ में यथावश्यक सन्धि और विग्रह करा देना। मपु० ६८ ६६-६७, ७१

ध

धनंजय—(१) अर्जुन। हपु० ५० ९४ दे० अर्जुन

(२) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०४

(३) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के मेघपुर-नगर का नृप। इसकी पुत्री का नाम धनश्री था। मपु० ७१.२५२-२५३, हपु० ३३ १३५

(४) राजा धरण का दूसरा पुत्र। हपु० ४८.५०

(५) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३६

(६) विजयार्ध-पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। मपु० १९ ६४, हपु० २२ ८६

(७) महारत्नपुर-नगर का एक विद्याधर-राजा। मपु० ६२ ६८, पापु० ४ २७

(८) धातकीखण्ड के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती-देश की पुण्डरीकिणी-नगरी का राजा। यह बलभद्र-महाबल और नारायण-अतिबल का पिता था। मपु० ७ ८०-८२

(९) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी-नगरी का निवासी एक सेठ। यह जयदत्ता का पिता था। धनश्री इसकी छोटी बहिन थी। जयदत्ता का विवाह वही के एक सेठ सर्वदयित से हुआ था। धनश्री का विवाह भी वही के दूसरे सेठ सर्वसमुद्र के साथ हुआ था। इसने पुण्डरीकिणी नगरी के राजा यशपाल को रत्नो का उपहार दिया था। मपु० ४७ १९१-२००

(१०) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर का राजा। मपु० ७० १६०

धनद—(१) कुबेर। हपु० ५५ १

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काम्पिल्यनगर का निवासी बाईस करोड दीनार का धनी एक वैश्य। इसकी वारुणी नाम की स्त्री और उससे उत्पन्न भूषण नाम का पुत्र था। पूर्वभव में यह अपने पुत्र का भाई था। अनेक योनियो में भ्रमण करने के बाद यह भरतक्षेत्र के पोदनपुर-नगर में अग्निमुख ब्राह्मण का मृदुमति नामक पुत्र हुआ। पपु० ८५ ८५-११९

(३) पुण्डरीकिणी-नगरी के राजा महीपद्म का पुत्र। मपु० ५५ १८

धनदत्त—(१) जम्बूद्वीप में मगला देश के भद्रिलपुर-नगर का निवासी एक वैश्य। नन्दयशा इसकी पत्नी थी। इससे इसके धनपाल, देवपाल, जिनदेव, जिनपाल, अर्हद्दत्त, अर्हद्दास, जिनदत्त, प्रियमित्र और धर्मरुचि ये नौ पुत्र तथा प्रियदर्शना और ज्येष्ठा दो पुत्रियाँ हुई थी। इस नगर के राजा मेघरथ के साथ यह अपने सभी पुत्रो सहित सन्दिरस्थविर मुनि से दीक्षित हो गया था। इसकी पत्नी और दोनो पुत्रियाँ भी सुदर्शना आर्यिका के पास दीक्षित हो गयी थी। दीक्षा के पश्चात् राजा सहित ये सभी बनारस आये। यहाँ इसे केवलज्ञान हुआ। सात वर्ष तक विहार करने के बाद आयु के अन्त में राजगृह नगर के पास इसने सिद्ध-अवस्था प्राप्त की। इसके पुत्र-पुत्रियाँ और पत्नी ने भी विधिपूर्वक सन्यास धारण किया था। इसकी पत्नी ने निदान किया था कि ये सभी पुत्र-पुत्रियाँ पर जन्म मे भी उसकी सन्तान हो। बहिनो ने निदान किया था कि अग्रिम भव में भी ये उनके भाई हो। इस प्रकार निदान-पूर्वक मरकर इसकी पत्नी पुत्र-पुत्रियाँ महापुराणकार के अनुसार आनत स्वर्ग के शातकर विमान मे और हरिवशपुराणकार के अनुसार अच्युत स्वर्ग में उत्पन्न हुए। निदान के फलस्वरूप इसकी पत्नी अन्धकवृष्णि की रानी सुभद्रा हुई, दोनो बहिनें कुन्ती तथा माद्री और धनपाल आदि समुद्रविजय आदि नौ पुत्र हुए। मपु० ७० १८२-१९८, हपु० १८ १११-१२४

(२) राजा वज्रजघ के राजसेठ धनमित्र का पिता। इसकी पत्नी का नाम धनदत्ता था। मपु० ८ २१८

(३) सिन्धु देश की वैशाली-नगरी के राजा चेटक और उसकी रानी-सुभद्रा का ज्येष्ठ पुत्र। यह धनभद्र, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहभद्र, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतगक, प्रभजन और प्रभास का अग्रज तथा प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चन्दना का सहोदर था। मपु० ७५ ३-७

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एकक्षेत्र नामक नगर के निवासी वणिक् नयदत्त तथा उसकी स्त्री सुनन्दा का पुत्र, यह राम का जीव था और लक्ष्मण के जीव वसुदत्त का भाई था। गुणवती नामा कन्या की प्राप्ति में इसका भाई मारा गया था फिर भी गुणवती इसे प्राप्त न हो सकी थी। अत भाई के कुमरण और गुणवती की प्राप्ति नही होने से बहु दुखी होकर अनेक देशो में भ्रमण करता रहा, अन्त में

एक मुनि के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर इसने अणुव्रत धारण किये और आयु के अन्त मे मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। पपु० १०६. १०-२२, ३०-३६

धनदत्ता—राजा वज्रजध के राजसेठ धनदत्त की पत्नी। यह धनमित्र की माता थी। मपु० ८.२१८

धनदेव—(१) भरतक्षेत्र के अग देश में चम्पा-नगरी का एक वैश्य। इसकी अशोकदत्ता नाम की स्त्री थी तथा इससे इसके जिनदेव और जिनदत्त नामक दो पुत्र हुए थे। मपु० ७२ २२७, २४४-२४५, पापु० २४ २६

(२) वृषभदेव के छठे गणधर। हपु० १२ ५६

(३) एक वैश्य, कुमारदेव का पिता। हपु० ४६ ५०-५१

(४) भरतक्षेत्र के इभ्यपुर का सेठ। हपु० ६० ९५

(५) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र मे पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी-नगरी के निवासी कुबेरदत्त-वणिक् तथा उसकी स्त्री अनन्तमती का पुत्र। यह राजा वज्रनाभि का गृहपति रत्न था। इसने वज्रसेन मुनि के पास जिनदीक्षा ली थी। मपु० ११ ८-९, १४, ५७ ६२

(६) अवन्ति-देश की उज्जयिनी-नगरी का निवासी एक सेठ, नागदत्त का पिता। मपु० ७५ ९५-९६

(७) वाराणसी नगरी का एक वैश्य। परधन-हरने मे सलग्न अपने शान्तव और रमण नामक पुत्रो को रोकने में समर्थ न हो सकने से इसने मुनिदीक्षा ले ली थी। मपु० ७६ ३१९-३२१

धनदेवी—(१) मृगावती देश में दशार्णनगर के राजा देवसेन की रानी, कृष्ण की माता देवकी की जननी। मपु० ७१ २९१-२९२, पापु० ११ ५५

(२) चम्पापुर के निवासी सुबन्धु की पत्नी, सुकुमारी की जननी। मपु० ७२ २४१-२४४

धनधान्यप्रमाणातिक्रम—परिग्रह-परिमाणव्रत का एक अतीचार-धन गाय, भैस आदि के सग्रह के लिए ली हुई सीमा का उल्लघन करना। हपु० ५८ १७६

धनपति—(१) धातकीखण्ड के पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता-नदी के उत्तर तट पर स्थित सुकच्छ देश के क्षेमपुर-नगर के राजा नन्दिषेण के पुत्र। पिता इन्हें ही राज्य सौंपकर दीक्षित हुए थे। मपु० ५३ २, १२-१३ इन्होने भी मुनि अर्हन्नन्दन से धर्मोपदेश सुनकर अपने पुत्र को राज्य दे दिया था और दीक्षा धारण कर ली थी। इन्होने ग्यारह अगो का ज्ञान प्राप्त किया, सोलहकारण-भावनाओ का चिन्तन किया और तीर्थंकर-प्रकृति का बन्ध किया। अन्त में प्रायोपगमन-सन्यास के द्वारा मरण कर ये जयन्त-विमान में अहमिन्द्र हुए और वहाँ से च्युत होकर ये अठारहवें तीर्थकर अरनाथ हुए। मपु० ६५ २-३, ६-९, १६-२५

(२) चन्द्राभनगर का स्वामी और तिलोत्तमा का पति। इसके लोकपाल आदि बत्तीस पुत्र थे और पद्मोत्तमा पुत्री थी। पद्मोत्तमा को सर्प ने डस लिया था। इसने घोषणा की थी जो उसे सर्पदंश से मुक्त करेगा उसे यह आधा राज्य और इस पुत्री को दे देगा। जीवन्धर ने यह कार्य किया और उसे इसने आधा राज्य दे दिया तथा इस पुत्री के साथ उसका विवाह भी कर दिया। मपु० ७५ ३९०-४००

धनपाल—(१) जगानन्द का पुत्र। हपु० ५२ ३२

(२) भद्रिलपुर-नगर के वैश्य धनदत्त और उसकी पत्नी नन्दयशा का प्रथम पुत्र। ये नौ भाई थे। इसकी दो बहिनें थी। यह अपने पिता और भाइयों के साथ मन्दिरस्थविर नामक मुनिराज से दीक्षित हो गया था। इसकी माता नन्दयशा और बहिनो ने भी सुदर्शना आर्यिका के पास सयम धारण कर लिया था। अपने पिता के केवलज्ञानी होने के पश्चात् इन सभी भाई-बहिनो और इनकी माता ने राजगृह-स्थित सिद्धशिला पर सन्यास-धारण किया। उस समय इनकी माता ने निदान किया कि उसके वे सभी पुत्र-पुत्रियाँ अगले भव में भी उसकी पुत्र और पुत्रियाँ बनें। अन्त में अपनी माता तथा भाई-बहिनो के साथ यह आनत स्वर्ग के शातकर-विमान में देव हुआ। यहाँ से च्युत होकर यह राजा अन्धकवृष्णि और रानी सुभद्रा का समुद्रविजय नामक पुत्र हुआ। इसके आठो भाई भी वसुदेव आदि आठ भाई हुए और दोनो बहिनें कुन्ती और माद्री हुई। मपु० ७० १८२-१९६, हपु० १८ ११२-१२१

(३) राजा सत्यधर के नगर का एक श्रावक, वरदत्त का पिता। मपु० ७५ २५६-२५९

(४) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित मगलावती देश के रत्नसचयनगर के राजा महाबल का पुत्र। मपु० ५० २-३, १० दे० महाबल।

धनपालक—वृषभदेव के साठवें गणधर। मपु० ४३ ६३

धनभद्र—वैशाली नगरी के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा का दूसरा पुत्र। मपु० ७५ ३-५

धनमित्र—(१) सेठ धनदत्त तथा सेठानी नन्दयशा का पुत्र। हपु० १८ ११४, १२० दे० धनपाल।

(२) उत्पलखेटपुर के राजा वज्रजध का राजसेठ। इसने दृढवर्म आचार्य के पास जिनदीक्षा ले ली थी। रत्नत्रय की आराधना करते हुए मरकर यह अहमिन्द्र हुआ। मपु० ८ ११६, ९ ९१-९३

(३) गान्धार-देश के विन्ध्यपुर नगर का एक वणिक्। मपु० ६३ १००

(४) सुजन-देश में हेमाभनगर के राजा दृढमित्र का चतुर्थ पुत्र, जीवधर का साला। मपु० ७५ ४२०-४३०

(५) पुष्करार्ध द्वीप के वत्सकावती देश मे रत्नपुरनगर के राजा पद्मोत्तर का पुत्र। इसका पिता इसे राज्य-भार सौंपकर दीक्षित हो गया था। मपु० ५८ २, ११

(६) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र मे पद्मिनीखेटनगर के सागरसेन वैश्य और उसकी स्त्री अमितमति का पुत्र। नन्दिषेण इसका भाई था। धन के लोभ से दोनो भाई एक-दूसरे को मारकर कबूतर तथा

गीध हुए। मपु० ६३ २६१-२६४

(७) तीसरे नारायण स्वयभू के पूर्वभव का जीव। पपु० २० २०९

धनमित्रा—(१) उज्जयिनीनगर के सेठ धनदेव की स्त्री। महाबल का जीव इसका नागदत्त नामक पुत्र हुआ। इसकी बहिन अर्थस्वामिनी थी। पति द्वारा त्याग दिये जाने से देशान्तर मे इसने शीलदत्त गुरु के पास श्रावक के व्रत ग्रहण किये और शास्त्राभ्यास के लिए अपना पुत्र उन्हें ही सौंप दिया। नागदत्त ने अपनी बहिन का विवाह मामा के पुत्र कुलवाणिज के साथ कर दिया। मपु० ७५ ९५-१०५

(२) मगध देश मे सुप्रष्ठिनगर के निवासी सेठ सागरदत्त के पुत्र कुबेरदत्त की स्त्री, प्रीतिंकर की जननी। मपु० ७६ २१६-२१८, २४०-२४१

धनवती—(१) हस्तिनापुर के निवासी वैश्य सागरदत्त की पत्नी तथा उग्रसेन की जननी। मपु० ८ २२३

(२) पुण्डरीकिणी-नगरी के राजश्रेष्ठी कुबेरमित्र की पत्नी, कुबेरकान्त की जननी और समुद्रदत्त की बहिन। मपु० ४६ १९, २१, ३१, ४१

(३) एक व्यन्तरी। यह पूर्व जन्म में पुण्डरीकिणी-नगरी के राजा सुरदेव की रानी धारिणी का विमला नाम को दासी थी। मपु० ४६. ३५१-३५५

धनवाहिक—वृषभदेव के गणधर। हपु० १२ ६५

धनश्री—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में मेघपुर नगर के राजा धनजय और रानी सर्वश्री की पुत्री। स्वयवर में इसने अपने पिता के भानजे हरिवाहन को वरा था। मपु० ७१ २५२-२५६, हपु० ३३ १३५-१३६

(२) भरतक्षेत्र में चम्पानगरी के अग्निभूति ब्राह्मण और अग्निला ब्राह्मणी की पुत्री। यह सोमश्री और नागश्री की बडी बहिन थी। सोमदेव ब्राह्मण के पुत्र सोमदत्त से विवाहित इसके पति ने वरुण गुरु के पास और इसने अपनी बहिन मित्रश्री के साथ गुणवती आर्यिका के समीप दीक्षा धारण कर ली थी। हपु० ६४४-६, १२-१३ मर-कर यह अच्युत स्वर्ग में सामानिक देव हुई। वहाँ से च्युत होकर यह पाण्डु पुत्र नकुल हुई। मपु० ७२ २२८-२३७, २६२, हपु० ६४ १११-११२, पापु० २३ ७८-८२, १०८-११२, २४ ७७

(३) विदेहक्षेत्र के गन्धिल देश मे पलालपर्वत-ग्राम के निवासी देवलिग्राम की पुत्री। यह राजा वज्रजघ की रानी श्रीमती के पूर्वभव का जीव थी। मपु० ६ १२१-१३५

(४) अग देश में चम्पानगरी के राजा श्रीषेण की रानी और कान्तपुरनगर के राजा सुवर्णवर्मा की बहिन। मपु० ७५ ८१-८२

(५) धनदत्त की पत्नी। यह रूपश्री की जननी थी। इसने रूपश्री का विवाह जम्बूकुमार के साथ किया था। मपु० ७६ ४८,५०

(६) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणीनगरी के निवासी सर्वसमृद्ध नामक वैश्य की स्त्री, धनजय की अनुजा। मपु० ४७ १९१-१९२

(७) पुष्करद्वीप सबधी भरतक्षेत्र के नन्दनपुर-नगर के राजा अमित-विक्रम और उसकी रानी आनन्दमती की पुत्री। इसने सन्यासमरण कर सौधर्म स्वर्ग पाया था। मपु० ६३ १२-१९

(८) एक व्यन्तरी। यह पूर्व जन्म में पुण्डरीकिणी-नगरी के राजा सुरदेव की रानी पृथ्वी की वसन्तिका नाम की दासी थी। मपु० ४६ ३५१-३५६

धनश्रुति—अरिजय और जयावती का दूसरा पुत्र। यह क्रूरामर का अनुज तथा राजा सहस्रशीर्ष का विश्वासपात्र सेवक था। इसने अपने भाई और स्वामी के साथ केवली से दीक्षा धारण कर ली थी। इसके फलस्वरूप ये दोनो भाई मरकर शतार स्वर्ग में देव हुए। पपु० ५ १२८-१३२

धनाधीश—कुबेर। इन्द्र की आज्ञा से यह तीर्थंकरो के गर्भस्थ होने के छ मास पूर्व से जन्म के समय तक तीर्थंकर के माता-पिता के घर रत्नवृष्टि करता है। मपु० १२ ८५, ९५, पपु० ३ १५५

धनुर्धर—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३०

(२) धृतराष्ट्र और गान्धारी का छिहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

धनुष—दो किष्कु-(चार हाथ) प्रमाण माप। अपरनाम दण्ड, नाडी। मपु० १० ९४, ४८ २८, हपु० ७ ४६

धन्य—(१) गुल्मखेटपुर का राजा। इसने तीर्थंकर पार्श्वनाथ को आहार दिया था। मपु० ७३ १३२-१३३

(२) रत्नपुर नगर का एक गाडीवान। मपु० ६३ १५७

धन्यषेण—पाटलिपुत्रनगर राजा। इसने तीर्थंकर धर्मनाथ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६१ ४०-४१

धन्वन्तरि—मेरुदत्त सेठ का आयुर्वेदिक परामर्शदाता। मपु० ४६ ११३

धम्मिलल्ल—(१) स्त्रियो की केश-रचना। मपु० ६ ८०

(२) एक ब्राह्मण। यह सिंहपुरनगर के राजा सिंहसेन का पुरोहित था। हपु० २७ २०-२३, ४३

धर—(१) राजा उग्रसेन का ज्येष्ठ पुत्र, गुणधर, युक्तिक, दुर्धर, सागर और चन्द्र का अग्रज। हपु० ४८ ३९, ५० ८३

(२) एक राजा। राम को सीता के अवर्णवाद की सूचना देनेवाले विजय नृप का सहगामी नृप। पपु० ९६ २९-३०

धरण—(१) जम्बूद्वीप की कौशाम्बी नगरी का राजा, तीर्थंकर पद्मप्रभ का जनक। मपु० ५२ १८-२१, पपु० २० ४२

(२) लक्ष्मण का पुत्र। पपु० ९४ २७-२८

(३) विदेहक्षेत्र की पूर्वदिशा में स्थित एक द्वीप। पपु० ३ ४६

(४) विदेहक्षेत्र में गन्धमालिनी देश की वीतशोका नगरी के राजा वैजयन्त के पुत्र जयन्त मुनि का जीव। अपने पिता के केवलज्ञान-महोत्सव में आये धरणेन्द्र को देखकर इसने धरणेन्द्र होने का निदान किया था और उसके फलस्वरूप मरकर यह धरणेन्द्र हुआ था। हपु० २७ ५-९ इसके भाई सजयन्त मुनि को पूर्व वैर के कारण विद्युद्दष्ट्र विद्याधर उठा ले गया और उन्हें विद्याधरो को भडका-

कर मरवा डाला। संजयन्त मुनि तो केवलज्ञानी होकर निर्वाण को प्राप्त हुए किन्तु विद्युद्दंष्ट्र के इस व्यवहार से रुष्ट होकर इसने उसकी समस्त विद्याएँ हर ली। इसने उसे मारना चाहा किन्तु लान्तवेन्द्र आदित्याभ ने आकर उसे रोक लिया था। हपु० २७ १०-१८

(५) एक यदुवंशी राजा। यह वासुकि, धनंजय, कर्कोटक, शतमुख और विश्वरूप का जनक था। अपरनाम धारण। हपु० १८ १२-१३, ४८ ५०

(६) भवनवासी देवो का इन्द्र। हपु० ९ १२९

धरणा—तीर्थंकर शीतलनाथ के समवसरण की मुख्य आर्यिका। मपु० ५६ ५४

धरणिकम्प—विजयार्ध पर्वत के राजपुर नगर का राजा। इसकी रानी सुप्रभा और पुत्री सुखावती थी। मपु० ४७ ७३-७४

धरणानन्द—भवनवासी नागकुमार देवो का एक इन्द्र। वीवच० १४ ५४

धरणी—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी की पचासवी नगरी। मपु० १९ ८५, ८७

(२) रत्नपुर नगर के निवासी गोमुख की भार्या, सहस्रभाग की जननी। पपु० १३ ६०

(३) प्रभापुर नगर के राजा श्रीनन्दन की रानी, सप्तर्षियो की जननी। पपु० ९२ १-४

धरणीजट—मगधदेश के अचलग्राम का निवासी एक ब्राह्मण। यह अग्निला का पति तथा इन्द्रभूति और अग्निभूति का पिता था। मपु० ६२ ३२५-३२६, पापु० ४ १९४-१९५

धरणीतिलक—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में एक नगर। हपु० २७ ७७

धरणीधर—इक्ष्वाकु वश में उत्पन्न अयोध्या का एक नृप। यह श्रीदेवी का पति और त्रिदशजय का पिता था। पपु० ५ ५९-६०

धरणीमौलि—दक्षिण समुद्रतटवर्ती पृथ्वीकर्णतटा-अटवी के मध्य स्थित एक पर्वत। कालान्तर में यहाँ किष्किन्धपुर की रचना हो जाने से यह किष्किन्धगिरि नाम से विख्यात हुआ। पपु० ६ ५१०-५११, ५२०-५२१

धरणेन्द्र—(१) भवनवासी-नागकुमार देवो का इन्द्र। यह तीर्थंकर ऋषभदेव से भोग-सामग्री की याचना करनेवाले नमि और विनमि को भोग सामग्री देने का आश्वासन देकर उन्हें अपने साथ ले आया था। विजयार्ध पर आकर इसने नमि को विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का और विनमि को विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का स्वामी बनाया। दोनो को गान्धारपदा और पन्नगपदा विद्याएँ दी। इसने दिति और अदिति देवियो के द्वारा भी विद्याओ के सोलह निकायो में से अनेक विद्याएँ दिलवाकर नमि और विनमि को सन्तुष्ट किया था। मपु० १८ ९४-९६, १३९-१४५, १९ १८२-१८६, पपु० ३ ३०६-३०८, हपु० २२ ५६-६०

(२) पश्चिम विदेह की वीतशोका नगरी के राजा वैजयन्त ने दीक्षित होकर जब केवलज्ञान प्राप्त किया तो धरणेन्द्र उनकी वन्दना के लिए आया था। हपु० २७ ५-९

(३) राजा वैजयन्त के पुत्र जयन्त भी अपने पिता के साथ मुनि हो गये थे। वैजयन्त मुनि के केवलज्ञान के समय उनकी वन्दना के लिए आये हुए धरणेन्द्र को देखकर जयन्त ने भी धरणेन्द्र होने का निदान किया था जिससे यह भी धरणेन्द्र हो गया। हपु० २७ ५-९

(४) अपनी पूर्व पर्याय में यह एक सर्प था। तीर्थंकर पार्श्वनाथ के नाना तापस महीपाल ने पचाग्नि मे डालने के लिए लकडी को फाडने हेतु जैसे ही कुल्हाडी उठायी कि पार्श्वनाथ ने इसमें जीव है कहकर उसे रोका किन्तु तापस ने लकडी फाड ही डाली थी, जिससे लकडी के भीतर रहनेवाले नाग-नागिन आहत हुए। मरते समय दोनों को पार्श्वनाथ ने शान्ति-भाव का उपदेश दिया जिससे मरकर नाग तो भवनवासी धरणदेव हुआ और नागिन पद्मावती देवी हुई। तापस महीपाल मरकर शम्बर नामक ज्योतिष्क देव हुआ। ध्यानस्थ पार्श्वनाथ को देखकर पूर्व वैरवश उसने पार्श्वनाथ पर अनेक उपसर्ग किये किन्तु इसने और इसकी देवी दोनो ने उन उपसर्गों का निवारण किया। मपु० ७३ १०१-१०३, ११६-११९, १३६-१४१

धरा—मथुरा के राजा चन्द्रप्रभ की रानी। इसके तीन भाई थे—सूर्यदेव, सागरदेव और यमुनादेव। यह आठ पुत्रो की जननी थी। पुत्र थे—श्रीमुख, सन्मुख, सुमुख, इन्द्रमुख, प्रभामुख, उग्रमुख, अर्कमुख और अपरमुख। पपु० ९१ १९-२०

धरादेवी—चन्द्रपुर नगर के राजा हरि की रानी। व्रतकीर्तन इसका पुत्र था। पपु० ५ १३५-१३६

धराधर—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में छत्तीसवाँ नगर। हपु० २२ ९७

धरावती—अयोध्या नगरी के राजा हेमनाभ की रानी, मधु और कैटभ की जननी। हपु० ४३ १५९

धर्म—(१) एक चारण ऋद्धिधारी श्रमण। हपु० ६० १७

(२) तीर्थंकर वासुपूज्य के प्रमुख गणधर। मपु० ५८ ४४

(३) तीर्थंकर विमलनाथ के तीर्थ में हुआ तीसरा बलभद्र। यह द्वारावती नगरी के राजा भद्र और रानी सुभद्रा का पुत्र था। नारायण स्वयभू इसका भाई था। मपु० ५९ ८७ स्वयभू मधु प्रतिनारायण को मारकर अर्ध भरतक्षेत्र का स्वामी हुआ। उसने बहुत काल तक राज्य का उपभोग किया। मरकर वह भी सातवें नरक में गया। अपने भाई के वियोग से उत्पन्न शोक के कारण यह विमलनाथ के समीप सयमी हुआ। उग्र तपस्या की, केवलज्ञान प्राप्त किया और ससार से मुक्त हुआ। अपने दूसरे पूर्वभव में यह भरतक्षेत्र के पश्चिम विदेहक्षेत्र में मित्रनन्दी राजा था और प्रथम पूर्वभव में अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ५९ ६४-७१, ८७, ९५-१०६, वीवच० १८ १०१, १११

(४) एक देव। कृत्याविद्या द्वारा पाण्डवो को भस्म किये जाने

का षड्यन्त्र जानकर यह पाण्डवो के कुल की रक्षा करने के ध्येय से एकाएक पाण्डवो के पास आया था। इसने द्रौपदी को छिपा लिया और उसे मारने के लिए एक-एक करके आये हुए पाण्डवो को विष-मिश्रित सरोवर का जल पिलाकर मूच्छित कर दिया। कनकध्वज द्वारा भेजी हुई कृत्याविद्या के आने पर इसने भील का रूप धारण कर लिया। पाण्डवो के शरीर को मृत बताकर इसने कृत्या को धोखे में डाल दिया। कृत्याविद्या के द्वारा कार्य पूछे जाने पर इसने पाण्डवो को मारने की आज्ञा देनेवाले कनकध्वज को ही मारने के लिए कहा। तदनुसार कृत्याविद्या ने कनकध्वज के पास लौटकर उसे मार डाला। विद्या अपने स्थान पर चली गयी। धर्म ने अमृत बिन्दुओ से पाण्डवो को सींचकर सोये हुए के समान उठा दिया। अर्जुन को द्रौपदी दे दी। सारा वृत्तान्त सुनाया और युधिष्ठिर आदि की वन्दना करके अपने स्थान को लौट आया। पापु० १७ १५०-२२५

(५) राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १४

(६) अवसर्पिणी के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न एक शलाकापुरुष एव पन्द्रहवें तीर्थंकर। ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे विद्यमान रत्नपुर नगर में कुरुवशी-काश्यपगोत्री राजा भानु के घर जन्मे थे। रानी सुप्रभा इनकी माता थी। वैशाख शुक्ल त्रयोदशी के दिन रेवती नक्षत्र मे प्रात काल के समय इनकी माता ने सोलह स्वप्न देखे थे। उसी समय अनुत्तर विमान से च्युत होकर ये सुप्रभा रानी के गर्भ में आये। माघ शुक्ला त्रयोदशी के दिन गुरुयोग में अनन्तनाथ भगवान् के बाद चार सागर प्रमाण समय बीत जाने पर इनका जन्म हुआ। जन्माभिषेक के पश्चात् इन्द्र ने इनका यह नाम रखा था। इनकी आयु दस लाख वर्ष, शारीरिक कान्ति स्वर्ण के समान और अवगाहना एक सौ अस्सी हाथ थी। कुमारावस्था के अढ़ाई लाख वर्ष बीत जाने पर इन्हे राज्य मिला था। पाँच लाख वर्ष प्रमाण राज्यकाल बीत जाने पर उल्कापात देख इन्हें वैराग्य हो गया। अपने ज्येष्ठ पुत्र सुधर्म को इन्होने राज्य दे दिया। नागदत्ता नाम की पालकी में बैठ ये शीलवन आये और वहाँ माघ शुक्ला त्रयोदशी के दिन सायकाल के समय पुष्य नक्षत्र में एक हजार राजाओ के साथ दीक्षित हुए। इन्हे मन पर्ययज्ञान प्राप्त हो गया। ये आहारार्थ पाटलिपुत्र आये, वहाँ धन्यषेण नृप ने इन्हें आहार देकर पाँच आश्चर्य प्राप्त किये। एक वर्ष पर्यन्त छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद पौष शुक्ल पूर्णिमा के दिन सायकाल पुष्य नक्षत्र मे इन्होने केवलज्ञान प्राप्त किया। देवो ने महोत्सव किया। इनके सघ में अरिष्टसेन आदि तेंतालीस गणधर, नौ सौ ग्यारह पूर्वधारी, चालीस हजार सात सौ उपाध्याय, तीन हजार छ सौ अवधिज्ञानी, चार हजार पाँच सौ केवलज्ञानी, सात हजार विक्रिया ऋद्धिधारी, चार हजार पाँच सौ मन-पर्ययज्ञानी, दो हजार आठ सौ वादी कुल चौसठ हजार मुनि तथा सुव्रता आदि बासठ हजार चार सौ आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक, दो लाख श्राविकाएँ और असख्यात देव-देवियाँ तथा सख्यात तिर्यञ्च थे। विहार करते हुए अन्त में ये सम्मेदगिरि आये। यहाँ एक मास का योग-निरोध करके आठ सौ मुनियो के साथ ध्यानारूढ हो गये और ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्थी की रात्रि के अन्तभाग में सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और व्युपरतक्रियानिवर्ति नामक शुक्लध्यान को पूर्णकर पुष्य नक्षत्र में इन्होने मोक्ष प्राप्त किया। देवो ने आकर परम उत्साह से निर्वाण-कल्याणक उत्सव मनाया। दूसरे पूर्वभव में ये सुसीमा नगरी के राजा दशरथ थे और प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र रहे। मपु० २ १३१, ६१ २-५४, पपु० ५ २१५, २० १२०, हपु० १ १७, ६० १५३-१९६, ३४१-३४९, वीवच० १८ १०१, १०७

(७) जीव और पुद्गल के गमन में सहायक एक द्रव्य। मपु० २४ १३३-१३४, हपु० ४ ३, ७.२, ५८ ५४

(८) एक अनुप्रेक्षा (भावना)—आत्मज्ञान को ही परम धर्म समझकर उसका चिन्तन करना। पपु० १४ २३९, पापु० २५ ११७-१२३

(९) चतुर्विध पुरुषार्थों मे प्रथम पुरुषार्थ। यह अन्तिम पुरुषार्थ मोक्ष का साधन है। हपु० ३ १९३, ९ १३७

(१०) उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य इन तीनो से युक्त वस्तु का यथार्थ स्वरूप। मपु० २१.१३३

(११) प्राणियो को कुगति से सुगति मे ले जानेवाला। यह धर्म सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक् तप के भेद से चार प्रकार का होता है। उत्तम, क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, सयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य के भेद से इसके दस लक्षण हैं। मपु० ११ १०३-१०४, ४७ ३०२-३०३, पपु० १०६. ९०, हपु० २ १३०, पापु० २३.७१, वीवच० ११ १२२ इसके दो भेद भी हैं—सागार और अनगार। इनमे पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्तियो का पालन करना अनगार धर्म है। सम्यग्दर्शन पूर्वक, तप, दान, पूजा और पचाणुव्रतो का पालन सागार धर्म है। मपु० ४१ १०४, पपु० ४.४८, हपु० १० ७-९ ,पापु० ९ ८१-८२ पाण्डवपुराणकार ने ऊपर कहे सागार धर्म मे पूजा के स्थान पर शुभ-भावना को स्थान दिया है। पापु० १ १२३ आचार्य रविषेण ने पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतो को सागार धर्म कहा है। पपु० ४ ६ सामान्यत जीव-दया, सत्य, क्षमा, शौच, त्याग, सम्यग्ज्ञान और वैराग्य ये सब धर्म है। मपु० १० १५

धर्मकथा—धर्म से सम्बन्ध रखनेवाली कथा। यह चार प्रकार की होती है—आक्षेपिणी, निक्षेपिणी, सवेदिनी और निर्वेदिनी,। इसके सात अग होते हैं—द्रव्य, क्षेत्र, तीर्थ, काल, भाव, महाफल और प्रकृत। सातवें प्रकृत अग के द्वारा शेष छ अगो का इसमें प्रतिपादन हो जाता है। प्रकृत अग मे निर्ग्रन्थ सन्तो और त्रेसठशलाका महापुरुषो के चरितो, भवान्तरो आदि का और लौकिक तथा आध्यात्मिक वैभव का वर्णन समाहित होता है। मपु० १ १०७, १२२, १३५-१३६, ६२ ११-१४, वीवच० १ ७७-८१

धर्मघोषण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

धर्मचक्र—तीर्थंकर जिनेन्द्र के समवसरण में विद्यमान देवोपनीत चक्र। यह देवकृत चौदह अतिशयों में एक अतिशय होता है। सूर्य के समान कान्तिधारी और अपनी दीप्ति से हजार आरों से युक्त चक्रवर्ती के चक्ररत्न को भी तिरस्कृत करनेवाला यह चक्र जिनेन्द्र चाहे विहार करते हों, चाहे खड़े हों प्रत्येक दशा में उनके आगे रहता है। समवसरण में ऐसे चक्र चारों दिशाओं में रहते हैं। इनमें हजार आरे होते हैं तथा ये देवों से रक्षित रहते हैं। मपु० १ १, २२ २९२-२९३, २४ १९, २५ २५६, हपु० २ १४५, ३ २९-३०, वीवच० १९ ७६

धर्मचक्रव्रत—एक व्रत। इसमें धर्मचक्र के एक हजार आरों की अपेक्षा से एक उपवास और एक पारणा के क्रम से एक हजार उपवास किये जाते हैं। आदि और अन्त में एक एक बेला पृथक् रूप से किया जाता है। मपु० ६२ ४९७, हपु० ३४ १२४

धर्मचक्रायुध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

धर्मचक्री—(१) जिनेन्द्र देव। इनके आगे धर्मचक्र चलता है। हपु० ५४ ५८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

धर्मतीर्थ—धर्म की आम्नाय। जिनेन्द्र के द्वारा धर्म के प्रतिपादन से लोक के अज्ञान का निरास हुआ। वही तीर्थ जनता की मुक्ति का साधन बना। हपु० ३ १

धर्मतीर्थंकृत्—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

धर्मदेशक—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

धर्मध्यान—उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त वस्तु के स्वरूप/स्वभाव का चिन्तन। मूलतः इसके चार भेद हैं—आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थानविचय। हरिवंशपुराणकार के अनुसार इसके दस भेद हैं—अपायविचय, उपायविचय, जीवविचय, अजीव-विचय, विपाकविचय, विरागविचय, भवविचय, संस्थानविचय, आज्ञाविचय और हेतुविचय। धर्मध्याता सम्यग्दृष्टि होता है। वह ज्ञान, वैराग्य, धैर्य और क्षमा से युक्त होता है। अनुप्रेक्षाओं का चिन्तन करता रहता है। उसके पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याएँ होती है। यह ध्यान अप्रमत्त-अवस्था का अवलम्बन कर अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थित रहता है। उक्त लेश्याओं के द्वारा वृद्धि को प्राप्त यह ध्यान चौथे, पाँचवें और छठे गुणस्थान में भी होता है। अशुभ कर्मों की निर्जरा, स्वर्ग और परम्परा से अपवर्ग की प्राप्ति इसके फल हैं। इस ध्यान का ध्येय अर्हन्तदेव होता है। इसके लिए जहाँ न अधिक गर्मी हो और न शीत हो ऐसे गुफा, नदी-तट, पर्वत, उद्यान और वन ऐसे स्थान अपेक्षित हैं। मपु० २० २०८-२१०, २२६-२२८, २१ १३१-१३४, १५५-१६३, ३६ १६१ हपु० ५६ ३६-५२, वीवच० ६ ५१-५२

धर्मध्वज—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४०

धर्मनायक—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९

धर्मनेमि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

धर्मपति—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का नाम। मपु० २४ ४०, २५ ११५

धर्मपाल—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१७

धर्मपुत्र—राजा पाण्डु और रानी कुन्ती का ज्येष्ठ पुत्र, भीम और पार्थ का अग्रज। अपरनाम युधिष्ठिर। मपु० ७० ११४-११६, ७२ २१५

धर्मप्रभावना—सम्यग्दर्शन का आठवाँ अंग। संसार में फैले हुए मिथ्यात्व के अन्धकार को नष्ट करनेवाले जैनशासन का प्रसार करना। मपु० २४ ११, वीवच० ६ ७०

धर्मप्रिय—जम्बूस्वामी के पितामह और अर्हद्दास के पिता। मपु० ७६ १२४

धर्मफल—राज्य, सम्पदाएँ, भोग, योग्य कुल में जन्म, सुरूपता, पाण्डित्य, आयु और आरोग्य आदि की उपलब्धि। मपु० ५ १६

धर्मभावना—बारहवीं अनुप्रेक्षा। इसमें यह चिन्तन किया जाता है कि धर्म से ही जीव का कल्याण संभव है, उत्तम क्षमा आदि धर्म के बीज है, इन्हीं से दुःखों का नाश एवं मोक्ष प्राप्त होता है, तीन लोक की सम्पदाएँ भी सरलता से इन्हीं से प्राप्त हो जाती है। मपु० ११ १०९, पापु० २५ ११७-१२३, वीवच० ११ १२२-१३०

धर्ममन्त्र—गर्भाधान आदि क्रियाओं में व्यवहृत पीठिका और जाति मन्त्र। मपु० ३९ २६

धर्ममति—(१) कौशाम्बी नगरी के सेठ सुभद्र और सेठानी सुमित्रा की पुत्री। इसने जिनमति आर्यिका के पास जिनगुण नाम का तप ग्रहण किया। तप करते हुए यह मरकर महाशुक्र स्वर्ग में इन्द्राणी हुई थी। हपु० ६० १०१-१०२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

धर्ममित्र—हस्तिनापुर का राजा। तीर्थंकर कुन्थुनाथ को आहार देकर इसने पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६४ ४१

धर्ममित्रार्य—भरत के साथ दीक्षित तथा निर्वाण प्राप्त एक नृप। पपु० ८८ १-२, ६

धर्मयूप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८३

धर्मरत्न—एक मुनि। ये हनुमान् के दीक्षागुरु थे। पपु० ११३ २३-२८

धर्मरथ—एक मुनि। रावण ने इन्हीं से प्रेरणा पाकर यह नियम लिया था कि जो स्त्री उसे नहीं चाहेगी वह उसे ग्रहण नहीं करेगा। पपु० १४ ३५५-३५७, ३७०-३७१

धर्मराज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०७

धर्मरुचि—(१) चन्द्रचर्या व्रत का धारक एक यति। भरतक्षेत्र में चम्पा-नगरी के अग्निभूति ब्राह्मण की पुत्री नागश्री ने कोपवश इन्हें विष-मिश्रित आहार दिया था। ये समाधिमरण कर सर्वार्थसिद्धि में देव हुए। मपु० ७२ २२७-२३४, हपु० ६४ ६-११, पापु० २३ ९७-१०७

(२) जम्बूद्वीप के मंगला देश में भद्रिलपुर नगर के धनदत्त सेठ

अवायज्ञान द्वारा जानी गयी वस्तु का विस्मरण नहीं होता। हपु० १० १४६

(२) शास्त्रों में जप के लिए बताये गये मन्त्रों के बीजाक्षरों का अवधारण करना। मपु० २१ २२७

(३) तीर्थंकर श्रेयासनाथ के समवसरण की मुख्य आर्यिका। मपु० ५७ ५८

धारणी—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी की इक्यावनवी नगरी। मपु० १९ ८५

धारागृह—भरतेश चक्रवर्ती का ताप-विनाशी स्नानगृह। मपु० ८ २८, ३७ १५०

धारिणी—(१) सर्वहिकारितणी एक औषध-विद्या। यह मन्त्रों से परिष्कृत होती है। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ६८-७३

(२) पश्चिम पुष्करार्ध के पश्चिम विदेह क्षेत्र में विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में गण्यपुर नगर के राजा सूर्याभ की रानी। यह चिन्तागति, मनोगति, और चपलगति विद्याधरों की जननी थी। मपु० ७० २७-३०, हपु० ३४ १५-१७

(३) अयोध्या नगरी के समुद्रदत्त सेठ की स्त्री, पूर्णभद्र और मणिभद्र की जननी। पपु० १०९ १२९-१३०, हपु० ४३.१४८-१४९

(४) मेरुदत्त श्रेष्ठी की भार्या। मपु० ४६ ११२

(५) महापुर नगर के मेरु सेठ की स्त्री, पद्‌म-रुचि की जननी। इसके पुत्र ने एक मरते हुए बैल को णमोकार मन्त्र सुनाया था जिसके फलस्वरूप वह मरकर महापुर में ही राजा छत्रच्छाय का वृषभध्वज नाम का पुत्र हुआ। पपु० १०६ ३८-४३, ४८

(६) पद्‌मिनी नगरी के राजा विजयपर्वत की रानी। पपु० ३९ ८४

(७) चक्रवर्ती भरतेश की रानी, पुरूरवा भील के जीव मरीचि की जननी। वीवच० २ ६४-६९

(८) हरिवंशी राजा सूरसेन के पुत्र राजा वीर की रानी, अन्धकवृष्टि और नरवृष्टि की जननी। मपु० ७० ९२-९४

(९) रत्नद्वीप के मनुजोदय पर्वत पर स्थित रमणीक नगर निवासी विद्याधर गरुडवेग की पत्नी, गन्धर्वदत्ता की जननी। मपु० ७५ ३०२-३०४

(१०) विजयार्ध की अलका नगरी के राजा हरिबल की प्रथम रानी, भीमक की जननी। मपु० ७६ २६२-२६४

(११) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुरदेव की रानी। यह मरकर अच्युत स्वर्ग के प्रतीन्द्र की देवी हुई। मपु० ४६ ३५२

धार्मिकी—कौशाम्बी नगरी के श्रेष्ठी सुमति और उसकी भार्या सुभद्रा की पुत्री। मपु० ७१ ४३७

धिक्—आरम्भिक दण्ड-व्यवस्था का तीसरा भेद। धिक्कार है, आरम्भ में आदि के पाँच कुलकरों ने केवल "हा" इस दण्ड की व्यवस्था की थी, इनके आगे पाँच कुलकरों ने "हा" और "मा" दो प्रकार के दण्ड रखे थे, किन्तु अन्तिम पाँच कुलकरों को उक्त द्विविध दण्ड व्यवस्था में धिक को भी संयोजित करना पड़ा था। अब अपराधियों से कहा जाता था कि खेद है, अब ऐसा नहीं करना और तुम्हें धिक्कार है जो रोकने पर भी अपराध करते हो। मपु० ३ २१४-२१५

धिषण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

धी—(१) छः जिन मातृक देवियों (श्री, ह्री, धी, धृति, कीर्ति और लक्ष्मी में तीसरी देवी। ये कुलाचलों पर निवास करती हैं। मपु० ३८ २२६

(२) सूर्योदय नगर के निवासी राजा शक्रधनु की रानी। हरिषेण चक्रवर्ती की रानी जयचन्द्रा इसी की पुत्री थी। पपु० ८ ३६२-३६३, ३७१

धीन्द्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

धीमान्—(१) बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६७

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७९

धीर—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८२

(२) तीर्थंकर मल्लिनाथ के पूर्वभव का पिता। पपु० २० २९-३०

(३) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८ ७०

धीरधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

धीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

धीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

धुर्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

धूपघट—समवसरण की नाट्‌यशालाओं के आगे वीथियों के दोनों ओर धूपधूम्र से युक्त पात्र। मपु० २२ १५६-१५८

धूमकेतु—(१) विभंगावधिज्ञानी एक असुर। आकाशमार्ग में जाते हुए इसका विमान रुक्मिणी के महल पर रुक गया। गतिरोध के कारण को जानने के लिए वह इस महल में गया। वहाँ उसने अपने पूर्वभव के वैरी शिशु प्रद्युम्न को देखा। वैरवश उसने रुक्मिणी को महानिद्रा में निमग्न कर दिया और उस शिशु को उठाकर ले गया तथा खदिर अटवी में तक्षशिला के नीचे दबाकर चला गया। हपु० १ १०० ४३ ३९-४८, पूर्वभव में प्रद्युम्न के जीव मधु ने इसके पूर्वभव के जीव राजा वीरसेन की स्त्री को अपनी स्त्री बना लिया था। पूर्वभव के इस वैर के फलस्वरूप इस भव में इसने मधु के जीव प्रद्युम्न को मार डालने की इच्छा से तक्षक शिला के नीचे दबाया था। इसका अपरनाम धूम्रकेतु था। मपु० ७२ ४०-५३, हपु० ४३ २२०-२२२

(२) दीखते ही अदृश्य हो जानेवाला अमंगल का सूचक एक ग्रह। हपु० ४३ ४८

धूमकेश—चक्रपुर नगर के राजा चक्रध्वज का पुरोहित। यह स्वाहा नामा स्त्री का पति और पिंगल का पिता था। पपु० २६ ४-६

धूमप्रभा—नरक की पाँचवीं पृथिवी। इसका रूढ नाम अरिष्टा है। इसकी मोटाई बीस हजार योजन है। इसमें तीन लाख बिल तथा नगरों के आकार में तम, भ्रम, झप, अर्त और तामिस्र नाम के पाँच इन्द्रक बिल हैं। मपु० १० ३१, हपु० ४ ४४-४६, ८३ इन इन्द्रक बिलों की चारों महादिशाओं और विदिशाओं में श्रेणीबद्ध बिलों की संख्या इस प्रकार है—

क्र०	नाम इन्द्रक बिल	महादिशाओं के बिलों की सं०	विदिशाओं के बिलों की सं०
१.	तम	३६	३२
२.	भ्रम	३२	२८
३	झष	२८	२४
४	अर्त/अन्ध्र	२४	२०
५	तमिस्र	२०	१६
	कुल ५	१४०	१२०

इस पृथिवी में २.९९, ७३५ प्रकीर्णक बिल होते हैं। सारे बिलों की सख्या तीन लाख है। हपु० ४ १३८-१४४ तम इन्द्रक बिल के पूर्व में निरुद्ध, पश्चिम में अतिनिरुद्ध, दक्षिण में विमर्दन और उत्तर में महाविमर्दन महानरक हैं। इन्द्रक बिलो की मुटाई तीन कोस श्रेणिबद्ध बिलो की चार कोस और प्रकीर्णको की सात कोस होती है। हपु० ४ १५६,२२२ इन्द्रक बिलो की स्थिति इस प्रकार है—

नाम इन्द्रक	उत्कृष्ट स्थिति	जघन्य स्थिति	ऊँचाई
तम	११२/५ सागर	१० सागर,	७५ धनुष
भ्रम	१२४/५ सागर	११२/५ सागर,	८७ धनुष
झष	१४१/५ सागर	१२४/५ सागर,	१०० धनुष
अन्ध्र	१५३/५ सागर	१४१/५ सागर	१११ धनुष २ हाथ
तमिस्र	१७ सागर	१५३/५ सागर,	१२५ धनुष

हपु० ४ २८६-२९०, ३३३-३३५ इन्द्रक बिल तिकोने और तीन द्वारवाले तथा श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिल दो से सात द्वारवाले होते हैं। इसके साठ हजार बिल सख्यात योजन विस्तारवाले तथा दो लाख चालीस हजार बिल असख्यात योजन विस्तारवाले है। इस पृथिवी के ऊपरी भाग मे नील और अधोभाग में कृष्ण लेश्या होती है। यहाँ नारकी उष्ण और शीत दोनो प्रकार के कष्ट सहते हैं। इस पृथ्वी के निगोदो में नारकी अत्यन्त दु खी होकर एक सौ पच्चीस योजन आकाश मे उछल कर नीचे गिरते है। सिंह इस पृथिवी के आगे नही जन्मता। यहाँ से निकले जीव पुन यहाँ तीन बार तक आ जाते है। यहाँ से निकलकर जीव सयम तो धारण कर लेते हैं किन्तु वे मोक्ष प्राप्त नही कर पाते। मोक्ष पाने के लिए उन्हें आगे जन्म ग्रहण करने पडते हैं। मपु० १० ९७, हपु० ४ १६५, ३४४, ३४६, ३५२, ३५९, ३७४-३७९

धूमवेग—श्रीपाल के पूर्वभव का वैरी एक विद्याधर। इसने अपने सेवको को आदेश दिया कि वे श्रीपाल को श्मशान मे ले जाकर पाषाण-शस्त्रो से मार दे। इन शस्त्रो से मारे जाने पर भी श्रीपाल आहत नही हुआ, पत्थर उसे फूल बन गये। इसने श्रीपाल को एक अग्निकुण्ड में भी डाल दिया किन्तु इसके पास की महौषधि की शक्ति से वह अग्नि भी शान्त हो गयी और श्रीपाल अग्निकुण्ड से निकल गया। मपु० ४७ ८९-९०, १०७-११०

धूमसिंह—विजयार्ध पर शिवमन्दिर नगर के राजपुत्र अमितगति का मित्र एक विद्याधर। इसने राजकुमार अमितगति को कीलकर उसकी प्रेयसी को हर लिया था, जिसे राजकुमार ने बाद में छुडा लिया था। हपु० २१ २२-२८

धूलिसाल—समवसरण के बाहरी भाग में रत्नो को धूलि से निर्मित वलयाकार एक परकोटा। रत्न-धूलि के वर्णों के अनुसार यह कही काला, कही पीला, कही मूँगे के समान लाल, कही हरित वर्ण का होता है। इसके बाहर चारो दिशाओ में स्वर्णमय खम्भो के अग्रभाग पर अवलम्बित चार तोरणद्वार होते हैं। ऊँचे-ऊँचे मानस्तम्भ इन्ही के भीतर निर्मित किये जाते हैं। मपु० २२ ८१-९२, ३३ १६० वीवच० १४ ७१-७४

धृत—(१) कुरुवश का एक राजा। यह व्रतधर्मा का उत्तराधिकारी था। इसके बाद धारण राजा हुआ था। हपु० ४५ २१

(२) कुरुवशी राजा धृतमान् के बाद हुआ एक नृप। यह धृतराज का पिता था। हपु० ४५ ३२-३३

धृततेज—धृतोदय का पुत्र और धृतयश का पिता कुरुवशी एक राजा। हपु० ४५ ३२

धृतधर्मा—राजा धृतव्यास के पश्चात् हुआ एक कुरुवशी राजा। हपु० ४५ ३२

धृतपद्म—अनेक कुरुवशी राजाओ के पश्चात् हुआ एक राजा। हपु० ४५ १२

धृतमान्—राजा धृतयश के पश्चात् हुआ एक कुरुवशी राजा। हपु० ४५.३२

धृतयश—कुरुवशी राजा धृततेज के पश्चात् हुआ एक कुरुवशी राजा। हपु० ४५ ३२

धृतरथ—महारथ के बाद हुआ कुरुवशी राजा। हपु० ४५ २८

धृतराज—राजा धृत के पश्चात् हुआ एक कुरुवशी राजा। इसकी अम्बिका, अम्बालिका और अम्बा ये तीन रानियाँ थी। इनमें अम्बिका से धृतराष्ट्र, अम्बालिका से पाण्डु और अम्बा से विदुर ये तीन पुत्र हुए थे। रुक्मण इसका भाई था। हपु० ४५ ३३-३५ महापुराण और पाण्डवपुराण के अनुसार धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर ये तीनो राजा व्यास और उनकी स्त्री सुभद्रा के पुत्र थे। मपु० ७० १०३, पापु० ७ ११४-११७

धृतराष्ट्र—हस्तिनापुर नगर के कौरववशी राजा धृतराज और उसकी रानी अम्बिका का ज्येष्ठ पुत्र, पाण्डु और विदुर का अग्रज। इसका विवाह नरवृष्टि की पुत्री गान्धारी से हुआ था तथा इससे इसके दुर्योधन आदि सौ पुत्र हुए थे। मपु० ७० १०१ ११७-११८, हपु० ४५ ३३-३५ पाण्डवपुराणकार ने गान्धारा के पिता का नाम भोजकवृष्टि दिया है। पापु० ८ १०८-१११, १८७-२०५ सुव्रत मुनि से कुरुक्षेत्र के युद्ध में अपने पुत्रो का मरण जानकर, पुत्रो और निज को

धिक्कारते हुए स्त्रियो को जीवनहारिणी और पुत्रो को बेडी स्वरूप समझकर ससार के भोगो से विरक्त होकर गागेय और द्रोण के सान्निध्य में पुत्रो को राज्य सौंप करके इसने दीक्षा ग्रहण कर ली थी। पापु० ९ २२६-२२७, १० ३-१६

धृतवीर्य—धृतेन्द्र के पश्चात् हुआ एक कुरुवशी राजा। हपु० ४५ १२

धृतव्यास—कुरुवशी राजा शान्तनु का पुत्र। हपु० ४५ ३१

धृति—(१) छ -जिनमातृक देवियो में एक देवी। यह जिनमाता के शरीर में अपने धैर्य गुण को स्थापित करती है। मपु० ३८ २२६ वीवच० ७ १०७-१०८

(२) राजा समुद्रविजय के भाई राजा अक्षोभ्य की रानी। हपु० १९ ३

(३) तिगिंछ सरोवर के शोभितकमल-भवनो में रहनेवाली भवनवासिनी एक देवी। हपु० ५ १२१, १३०

(४) रुचकगिरि के सुदर्शनकूट की निवासिनी एक दिक्कुमारी देवी। यह चमर लेकर जिनमाता की सेवा करती है। मपु० १२ १६३-१६४, ३८ ३२२, पपु० ३ ११२-११३, हपु० ५ ७१७

(५) गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ में चौथी क्रिया। यह गर्भ की वृद्धि के लिए गर्भ से सातवें मास में की जाती है। प्रथम क्रिया के समान इसमें भी पूजन आदि कार्य किये जाते हैं। मपु० ३८ ५५-८२

धृतिकर—(१) कुरुवशी राजा शुभकर का पुत्र। हपु० ४५.९

(२) शुभकर के पुत्र के अनेक सागर काल के पश्चात् हुए राजा धृतिदेव के बाद का एक कुरुवशी नृप। हपु० ४५ १०-११

(३) कुरुवशी राजा प्रीतिकर के पूर्व और धृतिद्युति के बाद हुआ एक नृप। हपु० ४५ १३

धृतिकूट—निषधाचल के नौ कूटो में छठा कूट। हपु० ५ ८९

धृतिक्षेम—कुरुवशी एक राजा। कुरु के पश्चात् अनेक सागर काल बीतने पर तथा असख्य कुरुवशी राजाओ के पश्चात् धृतिमित्र नाम का राजा हुआ। इसके पश्चात् यह राजा हुआ। हपु० ४५ ११

धृतिवृष्टि—धृतद्युति का पूर्ववर्ती कुरुवशी राजा। हपु० ४५ १३

धृतिदेव—कुरुवशी राजा। इसके पूर्व असख्य कुरुवशी राजा हो गये थे। हपु० ४५ ११

धृतिद्युति—धृतिदृष्टि के पश्चात् हुआ कुरुवशी राजा। हपु० ४५ १३

धृतिमित्र—कुरुवशी राजा। यह गगदेव के पश्चात् हुआ था। हपु० ४५ ११

धृतिषेण—(१) तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के पश्चात् एक सौ बासठ वर्ष बाद एक सौ तिरासी वर्ष के काल में हुए दश पूर्व और ग्यारह अग के धारी ग्यारह आचार्यों में सातवें आचार्य। मपु० २ १४३, ७६ ५२१-५२४, हपु० १ ६२-६३

(२) एक चारण ऋणद्धिधारी मुनि। भरतक्षेत्र के नन्दनपुर नगर के राजा अमितविक्रम की धनश्री और अनन्तश्री पुत्रियो को इन्होंने बताया था कि उनकी मुक्ति भावी चौथे जन्म में हो जायगी। मपु० ६३ १२-२२, धातकीखण्ड में ऐरावत क्षेत्र के शखपुर नगर के राजा राजगुप्त ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३ २४६-२४८

(३) सिंहपुर के राजा आर्यवर्मा का पुत्र। मपु० ७५ २८१

(४) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश की पृथिवी नगरी के राजा जयसेन और रानी जयसेना का पुत्र। यह रतिषेण का सहोदर था। मपु० ४८ ५८-५९

धृतिषेणा—विजयार्ध उत्तरश्रेणी में कनकपुर नगर के राजा गरुडवेग की रानी। यह दिवितिलक और चन्द्रतिलक की जननी थी। मपु० ६३ १६४-१६६

धृतीश्वरा—राजा अन्धकवृष्टि के पुत्र राजा स्तिमितसागर की रानी। मपु० ७० ९५-९८

धृतेन्द्र—धृतपद्म के पश्चात् हुआ कुरुवशी राजा। हपु० ४५,१२

धृतोदय—धृतधर्मा के पश्चात् हुआ कुरुवशी राजा। हपु० ४५ ३२

धृष्टद्युम्न—(१) माकन्दी नगरी के राजा द्रुपद और रानी भोगवती का पुत्र, द्रौपदी का भाई। इसने कौरव दल के सेनापति द्रोणाचार्य को युद्ध में असि प्रहार से मार डाला था। हपु० ४५ १२०-१२२, पापु० १५ ४१-४४, १९ २०३, २१६-२२०, २० २३३

(२) यादवो का पक्षधर महारथ राजा। हपु० ५० ७९

धृष्टार्जुन—कृष्ण का योद्धा। मपु० ७१ ७५ अपरनाम धृष्टद्युम्न। दे० धृष्टद्युम्न

धैर्या—गोदावरी से आगे दक्षिण में बहनेवाली एक नदी। इस नदी के पास के राजा को भरतेश की सेना ने अपने अधीन किया था। मपु० २९ ८७

धैवत—सगीत का एक स्वर। हपु० १९ १५३

धैवती—सगीत के षड्ज स्वर से सम्बन्ध रखनेवाली एक जाति। हपु० १९ १७४

धौरित—अश्वो की एक जाति। मपु० ३१ ३

ध्यातमहाधर्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७३

ध्याता—ध्यान करनेवाला मुनि। यह वज्रवृषभनाराचसहनन शरीरधारी, तपस्वी, शास्त्राभ्यासी, आर्त और रौद्रध्यान तथा अशुभलेश्या से रहित होता है। यह राग-द्वेष और मोह को त्यागकर ज्ञान और वैराग्य की भावनाओ के चिन्तन में रत रहता है। यह चौदह, दश अथवा नौ पूर्व का ज्ञाता और धर्मध्यानी होता है। यह ध्यान के समय चित्त-वृत्ति को स्थिर रखता है। मपु० २१ ६३, ८५-१०२

ध्यान—शारीरिक नि स्पृहतापूर्वक किया गया अन्तिम आभ्यन्तर तप। इसमें तन्मय होकर चित्त को एकाग्र किया जाता है। यह वज्रवृषभ-नाराचसहननवालो के भी अधिक से अधिक अन्तर्मुहूर्त तक ही रहता है। योग, समाधि, धीरोध, स्वान्तनिग्रह, अन्त सलीनता इसके पर्याय-वाची नाम हैं। शुभाशुभ परिणामो के कारण इसके प्रशस्त और अप्रशस्त दो भेद हैं। इन दोनो के भी दो-दो भेद हैं। इनमें प्रशस्त ध्यान के भेद हैं-धर्म और शुक्लध्यान तथा अप्रशस्त ध्यान के भेद हैं-आर्त और रौद्र ध्यान। इन चारो में आर्त और रौद्र हेय हैं क्योंकि

वे खोटे ध्यान हैं, ससार के बढानेवाले हैं तथा धर्म और शुक्लध्यान उपादेय हैं। वे मुक्ति के साधन हैं। मपु० ५ १५३, २० १८९, २०२-२०३, २१ ८, १२, २७-२९, पपु० १४ ११६, हपु० ५६,२-३

ध्येय—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४५, २५ १०८

(२) ध्यान के विषय। ये विषय हैं—अध्यात्म, प्रमाण और नयो से सिद्धन्तत्वो का ज्ञान, पचपरमेष्ठी, मोक्षमार्ग-रत्नत्रय, अनुप्रेक्षाएँ। मपु० २१ १७ २१, ९४-९५, १०७-१३०, २२८

ध्रुव—(१) बलदेव का पुत्र। हपु० ४८.६६

(२) अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ में तीसरी वस्तु। हपु० १० ७८ दे० अग्रायणीयपूर्व

ध्रुवकुमार—यादवो का पक्षधर एक कुमार। यह लाखो रथो का स्वामी था और युद्ध मे कुशल था। हपु० ५० १२४

ध्रुवसेन—(१) तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के पश्चात् हुए ग्यारह अगधारी पाँच मुनियो मे चौथे मुनि, अपरनाम द्रुमसेन। मपु० २ १४६, ७६ ५२५, हपु० १ ६४

(२) सुप्रकारनगर के राजा शम्बर और रानी श्रीमती का पुत्र। कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा इसकी बहिन थी। मपु० ७१ ४०९-४१४

ध्रुवा—राजा बाली की रानी। यह अपने गुणो के प्रभाव से बाली की सौ पत्नियो में प्रधान थी। पपु० ९ २०

ध्रौव्य—(१) द्रव्य की तदवस्थ (स्थिर) पर्याय। मपु० २४ ११०, हपु० १ १

(२) शाण्डिल्य का गुरु। इसके चार अन्य शिष्य थे—क्षीरकदम्बक, वैन्य, उदच और प्रावृत। हपु० २३ १३४

ध्वजस्तम्भ—समवसरण में निर्मित ध्वजाओ के खम्भे। ये मणिमयी पीठिकाओ पर स्थित होते है। इनकी चौडाई अठासी अगुल, अन्तर पच्चीस-पच्चीस धनुष प्रमाण तथा ऊँचाई तीर्थंकरो के शरीर की ऊँचाई से बारह गुना अधिक होती है। मपु० २२ २१२-२१५

ध्वजा—समवसरण के ध्वजस्तम्भो पर सुशोभित ध्वजाएँ। माला, वस्त्र, मयूर, कमल, हस, गरुड, सिंह, बैल, हाथी और चक्र के चिह्नो से अकित होने के कारण ये दस प्रकार की होती हैं। ये प्रत्येक दिशा मे एक-एक प्रकार की एक सौ आठ रहती है। इस प्रकार कुल चारो दिशाओ में ये चार हजार तीन सौ बीस होती हैं। मपु० २२.२१९-२२०, २३८

न

नकुल—(१) पाँच पाण्डवो में चौथा पाण्डव। यह कुरुवशी राजा पाण्डु और उसकी दूसरी रानी माद्री का ज्येष्ठ पुत्र था। सहदेव इसका छोटा भाई था। पाण्डु राजा की पहली रानी कुन्ती से उत्पन्न युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन इसके बडे भाई थे। इनको पितामह भीष्म ने शिक्षा दी तथा गुरु द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या सिखायी थी। मपु० ७०.११४-११६, हपु० ४५ २, पापु० ८ १७४-१७५, २०८-२१२ इसने अपने भाइयो के साथ आयी हुई विपत्तियो को सहन किया और कौरवो के सहार में अपना वीरतापूर्ण योग दिया। युद्ध में विजय के पश्चात् इसने भी अपने भाइयो के साथ तीर्थंकर नेमिनाथ से दीक्षा ग्रहण की और तेरह प्रकार के चारित्र का पालन किया। पापु० २५.१२-१४, २० शत्रुजय पर्वत पर अन्य पाण्डवो के साथ इस पर दुर्योधन के भानजे कुर्यधर ने अनेक उपसर्ग किये थे। उसने इसे भी लोहे के तप्त आभूषण पहनाये थे। इसने भी उपसर्ग को सहन किया। कषाय के किंचित् अवशिष्ट रहने के कारण मरने पर यह सर्वार्थसिद्धि में देव हुआ। मपु० ७२.२६७-२७१, पापु० २५.५२-६५, १३८-१४० दूसरे पूर्वभव में यह धनश्री ब्राह्मणी और प्रथम पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में देव था। पापु० २३ ८२, ११४-११५, २४ ८९-९०

(२) उज्जयिनी नगरी के सेठ धनदेव के पुत्र नागदत्त का हिस्सेदार भाई, सहदेव का अग्रज। इसने नागदत्त के साथ छल किया था। यह मरकर चन्दना को सतानेवाला सिंह नामक भील हुआ था। मपु० ७५ ९५-९६, ११०, १३३-१३५, १७१

नकुलार्य—नकुल का जीव। यह भोगभूमि में आर्य हुआ। मपु० ९ १९२

नक्षत्र—महावीर के निर्वाण के पश्चात् तीन सौ पैंतालीस वर्ष का समय निकल जाने पर दो सौ बीस वर्ष की अवधि में हुए धर्म प्रचारक ग्यारह अगधारी पाँच मुनीश्वरो में प्रथम मुनि। मपु० २ १४१-१४७, ७६.५२१-५२५, हपु० १ ६४, वीवच० १ ४१-४९

नक्रवा—भरतक्षेत्र की एक नदी। यहाँ से भरतेश की सेना गगा की ओर बढी थी। मपु० २९ ८३

नक्षत्रमाला—सत्ताईस लडियो का एक हार। मपु० १६ ६०

नग—राजा अचल का छठा पुत्र। यह अचल का अग्रज तथा महेन्द्र, मलय, सह्य, गिरि और शैल का अनुज था। हपु० ४८ ४९

नगर—राज्य के सभी वर्गों के प्रधान लोगो की निवासस्थली। यह परिखा, गोपुर, अटारी, कोट और प्राकार के सुरक्षित, भवन, उद्यान चौराहो और जलाशयो से सुशोभित तथा अच्छे स्थान पर निर्मित होता है। ईशान दिशा की ओर इसके जलप्रवाह होते हैं। मपु० १६. १६९-१७०, २६ ३

नघुष—(१) राजा भरत के साथ दीक्षित विशुद्ध कुलोत्पन्न एक राजा। पपु० ८८ ६

(२) सुकोशल मुनि का पोता। यह राजा हिरण्यगर्भ और उसकी रानी अमृतवती का पुत्र था। उसके गर्भ काल में पृथ्वी पर कोई अशुभ शब्द सुनाई न पडने से वह इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसने उत्तर दिशा को और इसकी रानी सिंहिका ने दक्षिण दिशा को वश मे किया था। रानी की इस विजय से कुपित होकर यह उससे विरक्त हो गया था। इसने उसे महादेवी के पद से हटा दिया था। इसे एक समय दाहज्वर हुआ तब रानी सिंहिका ने अपने सतीत्व से करपुट द्वारा गृहीत जल-सिंचन कर इसकी उत्पन्न दाहज्वर वेदना को शान्त किया। रानी के इस कार्य से प्रसन्न होकर इसने उसे महादेवी के पद पर पुन: प्रतिष्ठित किया। अन्त में इसी सिंहिका

रानी से उत्पन्न पुत्र को राज्य देकर वह दीक्षित हो गया था। समस्त शत्रुओं को वश में कर लेने से यह सुदास नाम से विख्यात हो गया था इसीलिए इसका पुत्र सोदास कहलाया। पपु० २२ १०१-१३१

नति—दाता की नवधा भक्तियों में एक भक्ति। इसमें दाता मुनि आदि पात्रों को नमस्कार करके दान देता है। मपु० २० ८६

नन्द—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

(२) बलभद्र। यह बलि प्रतिनारायण के हन्ता पुण्डरीक नारायण का भाई था। हपु० २५ ३५

(३) अकृत्रिम चैत्यालयों की पूर्व दिशा में विद्यमान स्वच्छ जल से परिपूर्ण मच्छ तथा कूर्म आदि से रहित एक ह्रद। हपु० ५ ३७२

(४) राजा धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का इकतीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९६

(५) गोकुल का प्रधान पुरुष एक गोप। यह यशोदा का पति और कृष्ण का पालक था। मपु० ७० ३८९-४०२, पापु० ११ ५८

(६) तीर्थंकर शान्तिनाथ का चैत्यवृक्ष। पपु० २० ५२

(७) रावण का एक धनुर्धारी योद्धा। पपु० ७३ १७१

(८) भरत के साथ दीक्षित और मुक्त हुआ एक उच्च कुलीन नृप। पपु० ८८ ४

(९) तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६ ५४३ यह छत्रपुर नगर के राजा नन्दिवर्धन और उसकी रानी वीरमती का पुत्र था। आयु के अन्त में इसने गुरु प्रोष्ठिल से संयम धारण कर लिया था। इसने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया और समाधिपूर्वक शरीर त्यागा। यह अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुआ और वहाँ से च्युत होकर कुण्डपुर के राजा सिद्धार्थ के तीर्थंकर के अतिशयों से सम्पन्न वर्धमान नामक पुत्र हुआ। मपु० ७४ २४२-२७६, वीवच० ६ २-१०४,७ ११०-१११

(१०) राजा गंगदेव और रानी नन्दयशा का चतुर्थ पुत्र। मपु० ७१ २६१-२६२

(११) विदेहक्षेत्र के गन्धिला देश में पाटलिग्राम के निवासी वणिक् नागदत्त और उसकी स्त्री सुमति का ज्येष्ठ पुत्र। इसके नन्दिमित्र, नन्दिषेण, वरसेन और जयसेन छोटे भाई तथा मदनकान्ता और श्रीकान्ता छोटी बहिनें थी। मपु० ६ १२८-१३०

(१२) ऐशान स्वर्ग का देव-विमान। मपु० ९ १९०

(१३) एक यक्ष। इसने और इसके भाई महानन्द यक्ष ने प्रीतिंकर कुमार को बहुत सावन देकर सुप्रतिष्ठनगर पहुँचाया था। मपु० ७६ ३१५

नन्दक—(१) तिलकानन्द मुनि के साथ-साथ वनविहारी मासोपवासी मुनि। इन्होंने वन में ही आहार लेने का नियम किया था। कुमार लोहजंघ ने इन्हें वन में ही आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। आहार-स्थल देवावतार तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुआ। हपु० ५०. ५८-५९

(२) एक खड्ग। कुबेर ने द्वारिका की रचना करके यह आयुध कृष्ण को भेंट किया था। इसी नाम का खड्ग प्रद्युम्न को भी सहस्रवक्त्र नामक नागकुमार से प्राप्त हुआ था। मपु० ७२ ११५-११६, हपु० ४१ ३४-३५, ४३, ६७

नन्दघोषा—समवसरण के अशोकवन की एक वापी। हपु० ५७ ३२

नन्दन—(१) विजयार्ध उत्तरश्रेणी का चालीसवाँ नगर। हपु० २२ ८९

(२) मानुषोत्तर पर्वत की दक्षिण दिशा के रुचककूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०३

(३) सौधर्म और ऐशान नामक युगल स्वर्गों का सातवाँ इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४५, दे० सौधर्म

(४) बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८ ६७

(५) तीर्थंकर वृषभदेव के सातवें गणधर। मपु० ४३ ५५, हपु० १२ ५६

(६) मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में विद्यमान एक वन। अपरनाम महोद्यान। यह भद्रशाल वन से पाँच सौ योजन ऊपर मेरु पर्वत के चारों ओर पाँच सौ योजन चौड़ाई में स्थित है। इस वन के समीप मेरु की बाह्य परिधि इकतीस हज़ार चार सौ उन्यासी योजन तथा आभ्यन्तर परिधि अट्ठाईस हज़ार तीन सौ सोलह योजन तथा कुछ अधिक आठ कला प्रमाण है। इस वन के साढे बासठ हज़ार योजन ऊपर सौमनस वन है। मपु० ५ १४४, १७२, १८३, ७ ३५, १३ ६९, ४७ २६३, ५७ ७५, ७१ ३६२, पपु० ६ १३५, २२ १३, हपु० ५ २९०-२९५, ३०७, ३२८, ८ १९०, ६० ४६, वीवच० ८.१११-११२

(७) नन्दनवन का एक उपवन। हपु० ५ ३०७

(८) नन्दनवन का प्रथम कूट। हपु० ५ ३२९

(९) विजय नगर के राजा महेन्द्रदत्त के गुरु। महेन्द्रदत्त दसवें चक्रवर्ती हरिषेण के पूर्वभव का जीव था। पपु० २०.१८५-१८६

(१०) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में विद्यमान एक नगर। मपु० ६० ५८

(११) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी का नृप। यह जयसेना का पति और विजयभद्र का पिता था। मपु० ६२ ७५-७६

(१२) एक मुनि। अपनी आयु का एक मास शेष रह जाने पर अमिततेज ने अपने पुत्रों को राज्य देकर इनसे प्रायोपगमन सन्यास लिया था। मपु० ६२ ४०८-४१० नन्दनपुर के राजा अमितविक्रम की धनश्री और अनन्तश्री नामक पुत्रियों को इन्होंने धर्मोपदेश दिया था। मपु० ६३ १३

(१४) एक पर्वत। मपु० ६३ ३३

(१५) नन्दपुर नगर का राजा। इसने मेघरथ मुनि को आहार दिया था। मपु० ६३ ३३२-३३५

(१६) आगामी नवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७२

(१७) नन्दन भवन का राजा। यह भरत पर आक्रमण करने के लिए अतिवीर्य की सहायतार्थ उसके पास आया था। पपु० ३७ २०

(१८) एक देश । सीता के पुत्र लवण और अंकुश ने यह देश जीता था। पपु० १०१ ७७

(१९) एक वानरवंशी राजा। इसके रथ में सौ घोड़े जुते हुए थे। इसने रावण के ज्वर नामक योद्धा को मारा था। यह भरत के साथ दीक्षित हुआ और अपने तप के अनुसार शुभगति को प्राप्त हुआ। पापु० ६० ५-६, १०, ७० १२-१६, ८८ १-४

(२०) सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

नन्दनपुर—एक नगर। तेरहवें तीर्थंकर विमलवाहन को आहार देकर राजा कनकप्रभ ने इसी नगर में पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। तीसरे प्रतिनारायण सुप्रभ की यह जन्मभूमि थी। मपु० ५९ ४२-४३, पपु० २० २४२

नन्दनमाला—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के ज्योतिप्रभ नगर के राजा विशुद्धकमल की रानी। राजीवसरसी इसकी पुत्री थी। पपु० ८ १५०-१५१

नन्दभूति—आगामी चतुर्थ नारायण। अपर नाम नन्दिभूतिक। मपु० ७६ ४८८, हपु ६० ५६६

नन्दभूपति—सिद्धार्थनगर का राजा। इसने तीर्थंकर श्रेयासनाथ को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५७ ४९-५०

नन्दयन्ती—संगीत के मध्यम ग्राम के आश्रित ग्यारह जातियों में आठवीं जाति। हपु० १९ १७७

नन्दयशा—(१) जम्बूद्वीप में मंगला देश के सद्भद्रिलपुर नगर के सेठ धनदत्त की स्त्री। इसकी प्रियदर्शना (अपरनाम सुदर्शना) और ज्येष्ठा ये दो पुत्रियाँ तथा धनपाल, देवपाल, जिनदेव, जिनपाल, अर्हद्दत्त, अर्हद्दास, जिनदत्त, प्रियमित्र और धर्मरुचि ये नौ पुत्र थे। इसके पति और सभी पुत्र दीक्षित हो गये थे। गर्भवती होने से यह दीक्षा नहीं ले सकी थी किन्तु धनमित्र नामक पुत्र के जन्म लेते ही इसने भी अपनी दोनों पुत्रियों के साथ सुदर्शना आर्यिका से दीक्षा ले ली थी। अपने पुत्रों को मुनि अवस्था में देखकर इसने अग्रिम भव में भी इन्हीं पुत्रों की जननी होने का निदान किया था। अन्त में समाधिपूर्वक मरण कर यह तथा इसके पुत्र और पुत्रियाँ अच्युत स्वर्ग में देव हुए। निदान के फलस्वरूप स्वर्ग से चयकर यह अन्धकवृष्टि की सुभद्रा रानी हुई। पूर्वभव के सभी पुत्र समुद्रविजय आदि हुए। पूर्वभव की दोनों पुत्रियाँ कुन्ती और माद्री हुईं। मपु० ७० १८२-१९८, हपु० १८ ११३-१२४

(२) श्वेतिका नगर के राजा वासव और उसकी रानी वसुन्धरा की पुत्री। इसका विवाह हस्तिनापुर के राजा गंगदेव के साथ हुआ था। यह युगल रूप में उत्पन्न गंग और गंगदत्त, गंगरक्षित और नन्द तथा सुनन्द और नन्दिषेण की जननी थी। इसके सातवें पुत्र निर्नामक का रेवती धाय ने पालन किया था। इसने अन्त में रेवती धाय और बन्धुमती सेठानी के साथ सुव्रता आर्यिका के पास दीक्षा ले ली थी। यह इस पर्याय के पुत्र भावी पर्याय में भी प्राप्त हों इस निदान के साथ मरणकर तप के प्रभाव से महाशुक्र स्वर्ग में देव हुई तथा वहाँ से चयकर मृगावती देश के दशार्णनगर के राजा देवसेन की रानी धनदेवी की देवकी पुत्री हुई। पूर्वभव में यह एक अन्धी सर्पिणी थी। अकाम-निर्जरा से मरण कर इसने मनुष्यगति का बन्ध किया था। मपु० ७१ २६०-२६६, २८३-२९२, हपु० ३३ १४२-१४५, १५९-१६५

नन्दवती—(१) कौतुकमंगल नगर के राजा व्योमबिन्दु विद्याधर की रानी। इसकी कौशिकी और केकसी पुत्रियाँ थीं। अपरनाम मन्दवती था। पपु० ७ १२६-१२७, १६२

(२) समवसरण के अशोकवन की एक वापिका। हपु० ५७ ३२

(३) नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशा के अंजनगिरि की चार वापिकाओं में एक वापिका। यह ऐशानेन्द्र की क्रीडास्थली है। हपु० ५ ६५८-६५९

नन्दशोकपुर—धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु की पश्चिम दिशा का एक नगर। हपु० ६०.९६-९७

नन्दस्थली—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नगरी। राम ने मुनि-अवस्था में बारह दिन के उपवास के पश्चात् यहाँ पारणा की थी। पपु० १२० २

नन्दा—(१) रुचकगिरि के दिक्नन्दन कूट पर रहनेवाली एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०६

(२) समवसरण के अशोकवन की एक वापी। हपु० ५७ ३२

(३) समवसरण की चारों दिशाओं में विद्यमान चार वापिकाओं में एक वापिका। इसमें स्नान करनेवाले जीव अपना पूर्वभव जान लेते हैं। हपु० ५७ ७१-७४

(४) तीर्थंकर वृषभदेव की दूसरी रानी। भरतेश और उनकी बहिन ब्राह्मी इसी की कुक्षि से युगल रूप में जन्मे थे। इसने भरत के अतिरिक्त वृषभसेन आदि अठानवें पुत्रों को और जन्म दिया था। ये सभी पुत्र चरमशरीरी थे। पपु० ३ २६०, हपु० ९ १८-२३

(५) भरतखण्ड के मध्यदेश की एक नदी। यमुना पार करके भरतेश की सेना यहाँ भी आयी थी। मपु० २९ ६५

(६) नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशा के अंजनगिरि की चार वापिकाओं में एक वापिका। यह सौधर्मेन्द्र की क्रीडा स्थली है। हपु० ५ ६५८-६५९

(७) तीर्थंकर अजितनाथ की रानी। पपु० ५ ६४-६५

(८) भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा विष्णु की रानी। यह तीर्थंकर श्रेयासनाथ की जननी थी। मपु० ५७.१७-१८, २२

(९) पोदनपुर के राजा वसुषेण की प्रियतमा रानी। मलयदेश का राजा चण्डशासन इसे हरकर अपने देश ले गया था। वसुषेण उसे वापस नहीं ला सका था। मपु ६० ५०, ५२-५३

(१०) हेमांगद देश में राजपुर नगर के सेठ गन्धोत्कट की पत्नी। जीवन्धरकुमार का पालन-पोषण इसी ने किया था। मपु० ७५ २४६-२४९

(११) भद्रिलपुर के राजा मेघवाहन की रानी। मपु० ७१.३०४

नन्दाढ्य—सेठ गन्धोत्कट और उसकी स्त्री नन्दा का पुत्र। गायों के अपहर्ता कालकूट से गायों के विमोचक को गोपेन्द्र और गोपश्री की पुत्री गोदावरी दिये जाने के लिए की गयी राजा काष्ठांगारिक की घोषणा के अनुसार जीवन्धर कुमार ने कालकूट को जीतकर नन्दाढ्य के द्वारा गायें मुक्त कराये जाने का सन्देश भेजा था। फलस्वरूप घोषणा के अनुसार इसे उक्त कन्या प्राप्त हुई थी। वनराज द्वारा हरी हुई श्रीचन्द्रा कन्या भी इसे ही विवाही गयी थी। मपु० ७५ २६१, २८७-३००, ५२०-५२१

नन्दि—(१) नन्दीश्वर द्वीप का एक देव। हपु० ५ ६४४

(२) भरतक्षेत्र का एक देश। इसे लवण और अकुश ने जीता था। पपु० १०१ ७७

(३) आगामी प्रथम नारायण। मपु० ७६ ४८७-४८९

नन्दिघोष—(१) भरतक्षेत्र के नन्दिवर्धन नगर का समीपवर्ती एक वन। अग्निभूति और वायुभूति ब्राह्मणों का आत्म-विषय पर सत्यक मुनि से यहीं वाद हुआ था। मपु० ७२ ३-१४

(२) पुष्कलावती नगरी का राजा, नन्दिवर्धन का पिता। इसने पुत्र को राज्य सौंपकर यशोधर मुनिराज से दीक्षा ली और विधिपूर्वक शरीर त्यागकर यह स्वर्ग मे देव हुआ। पपु० ३१ ३०-३२

नन्दिन—आगामी तीसरा नारायण। मपु० ७६ ४८७

नन्दिनी—(१) विजयार्ध उत्तरश्रेणी की छियालीसवी नगरी। हपु० २२ ९०

(२) राजपुर नगर के सेठ धनदत्त की भार्या, चन्द्राभ की जननी। मपु० ७५ ५२८-५२९

(३) सगीत की एक जाति। पपु० २४ १४

नन्दिप्रभ—नन्दीश्वर द्वीप का एक रक्षक देव। हपु० ५ ६४४

नन्दिभद्र—एक चारण ऋद्धिधारी मुनि। राजा वासव की रानी सुमित्रा के जीव भील्नी ने इनसे अपने पूर्वभव सुने थे। इनका अपर नाम नन्दिवर्धन था। मपु० ७१ ३९९-४०३, हपु० ६० ७७-७९

नन्दिभूतिक—आगामी चतुर्थ नारायण। हपु० ६० ५६६

नन्दिमित्र—(१) आगामी दूसरा नारायण। मपु० ७६ ४८७, हपु० ६० ५६६

(२) सातवाँ बलभद्र। यह अवसर्पिणी काल के दुषमा-सुषमा नामक चौथे काल में जन्मा था। वाराणसी नगरी के राजा अग्निशिख और उसकी रानी अपराजिता इसके माता-पिता थे। दत्त नारायण इसका छोटा भाई था। इसकी आयु बत्तीस हजार वर्ष, शारीरिक अवगाहना बाईस धनुष और वर्ण चन्द्रमा के समान था। बलीन्द्र द्वारा भद्रक्षीर नामक हाथी के माँगने पर यह उसका विरोधी हो गया था। इसने बलीन्द्र के पुत्र शतबली को मारा था। यह अपने भाई के वियोग से वैराग्य को प्राप्त होकर सम्भूत मुनि से दीक्षित हुआ तथा केवली होकर मोक्ष गया। मपु० ६६ १०२-११२, ११८-१२३, हपु० ६० २९०, वीवच० १८ १११

(३) वृषभदेव के बयासीवें गणधर। मपु० ४३ ६६, हपु० १२ ६९

(४) महावीर के निर्वाण के पश्चात् बासठ वर्ष के बाद सौ वर्ष के काल में हुए विशुद्धि के धारक अनेक नयो से विचित्र अर्थों के निरूपक, पूर्ण श्रुतज्ञान को प्राप्त, पाँच श्रुतकेवली मुनियो मे चौदह पूर्व के ज्ञाता दूसरे मुनि। इनके पूर्व नन्दि तथा बाद में क्रमश अपराजित गोवर्धन और भद्रबाहु हुए। मपु० २ १३९-१४२, ७६ ५१८-५२१, हपु० १ ६१, वीवच० १ ४१-४४

(५) पाटलिग्रामवासी वैश्य नागदत्त और सुमति का द्वितीय पुत्र। यह नन्द का अनुज तथा नन्दिषेण, वरसेन और जयसेन का अग्रज था। इसकी तीन बहिनें थीं—मदनकान्ता, श्रीकान्ता और निर्नामा। मपु० ६ १२८-१३०

(६) अयोध्या का एक गोपाल। ऐरावत क्षेत्र के भद्र और धन्य दोनो भाई मरकर इसके यहाँ भैंसे हुए थे। मपु० ६३ १५७-१६०

(७) तीसरे बलभद्र के पूर्वभव का जीव। इसकी जन्मभूमि आनन्दपुरी और गुरु सुव्रत थे। अनुत्तर विमान से चयकर यह बलभद्र हुआ। इस पर्याय मे इसकी माता सुवेषा थी। गुरु सुभद्र से दीक्षित होकर इसने निर्वाण प्राप्त किया था। पपु० २० २३०-२४८

नन्दिवर्द्धन—(१) श्रुत के पारगामी एक आचार्य। य अवधिज्ञानी थे। इन्होंने अग्निभूति और वायुभूति को पूर्व जन्म में वे दोनो शृगाल थे ऐसा कहा था। इससे वे दोनो कुपित हुए और उन्होंने निर्जन वन में प्रतिमायोग मे इन्हें ध्यानस्थ देखकर वैरवश तलवार से मारना चाहा था किन्तु एक यक्ष ने मारने के पूर्व ही उन्हें कील कर उनके द्वारा किये उपसर्ग से इनकी रक्षा की थी। अग्निभूति और वायुभूति दोनों उनके माता-पिता के निवेदन करने पर इनका सकेत पाकर ही यक्ष द्वारा मुक्त हुए थे। महापुराण में यह उपसर्ग मुनि सत्यक के ऊपर किया गया कहा है। मपु० ७२ ३-२२, पपु० १०९.३७ १२३, हपु० ४३ १०४

(२) एक चारणऋद्धिधारी मुनि। मपु० ७१ ४०३ दे० नन्दिभद्र

(३) छत्रपुर नगर का राजा। मपु० ७४ २४२-२४३, वीवच० ५ १३४-१४६

(४) विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा मेघरथ और उसकी रानी प्रियमित्रा का पुत्र। मपु० ६३ १४२-१४३, १४७-१४८, पापु० ५ ५७

(५) जम्बूद्वीप के मगधदेश का एक नगर। शालिग्राम के अग्निभूति और वायुभूति ने इस नगर के नन्दिघोष वन में सत्यक मुनि से वाद किया था। मपु० ७२ ३-१४

(६) शशाकनगर का राजा। मृदुमति चोर ने इस नृप और इसकी रानी के बीच विषयो के सम्बन्ध में हुए वार्तालाप को सुनकर दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० ८५ १३३-१३७

(७) पुष्कलावती नगरी के राजा नन्दिघोष और रानी वसुधा का पुत्र। यह गृहस्थधर्म धारण कर नमस्कार मत्र की आराधना करते हुए एक करोड पूर्व तक महाभोगो को भोगता हुआ सन्यास के साथ शरीर छोडकर पचम स्वर्ग गया था। वहाँ से च्युत होकर इसी

विदेहक्षेत्र में सुमेरु पर्वत के पश्चिम की ओर विजयार्ध पर्वत पर स्थित शशिपुर नगर में राजा रत्नमाली और रानी विद्युल्लता का सूर्यंजय नाम का पुत्र हुआ। पपु० ३१ ३०-३५

नन्दिषेण—(१) वसुदेव के पूर्वभव का जीव। यह मगध देश के एक दरिद्र ब्राह्मण का पुत्र था। इसके गर्भ में आते ही इसके पिता मर गये थे। जन्म होते ही माँ भी मर गयी थी। पालन-पोषण करनेवाली मौसी भी इसकी आठ वर्ष की अवस्था में ही चल बसी थी। मामा के घर रहते हुए इसने मामा की पुत्रियों से विवाह करना चाहा था किन्तु उन पुत्रियों ने विवाह न कर इसे घर से निकाल दिया था। इसने वैभारगिरि पर जाकर आत्मघात करना चाहा किन्तु वहाँ तपस्या करनेवाले मुनियों से इसने धर्माधर्म का फल सुना और आत्म-निन्दा करते हुए सख्य नामक मुनि से दीक्षा ली तथा तप में लीन हो गया। इसके तप की इन्द्र ने भी देवसभा में प्रशंसा की थी। एक देव ने इसके वैयावृत्ति धर्म की परीक्षा भी ली थी तथा उसकी प्रशंसा करता हुआ ही वह स्वर्ग लौटा था। इसने पैंतीस हजार वर्ष तप किया। अन्त में इसने छः मास के प्रायोपगमन सन्यास को धारण कर अग्रिम भव में लक्ष्मीवान् एवं सौभाग्यवान् बनने का निदान किया और मरकर निदान के फलस्वरूप यह महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ। स्वर्ग से चयकर यह वसुदेव हुआ। महापुराण में इसे नन्दी कहा है। हपु० १८ १२७-१४०, १५८-१७५ दे० नन्दी ६

(२) आचार्य जितदण्ड के परवर्ती एवं स्वामी दीपसेन के पूर्ववर्ती एक आचार्य। हपु० ६६ २७

(३) विदेहक्षेत्र के गन्धिल देश में पाटली ग्राम के वैश्य नागदत्त और उसकी स्त्री सुमति का तीसरा पुत्र। इसके क्रमशः नन्द और नन्दिमित्र दो बड़े भाई तथा वरसेन और जयसेन दो छोटे भाई और मदनकान्ता तथा श्रीकान्ता दो बहिनें थीं। मपु० ६ १२८-१३०

(४) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के पूर्वभव का जीव। पपु० २० १९

(५) विदेह का एक नृप, अनन्तमति रानी का पति, वरसेन का पिता। मपु० १० १५०

(६) सुकच्छ देश में क्षेमपुर नगर के राजा धनपति का पिता। इसने पुत्र को राज सौंपकर अर्हनन्दन गुरु से दीक्षा ले ली। तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध करते हुए यह अहमिन्द्र हुआ। मपु० ५३.२, १२-१५

(७) जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत की उत्तर दिशा में विद्यमान ऐरावत क्षेत्र के पद्मिनीखेट नगर के सागरसेन वैश्य का पुत्र और धनमित्र का सहोदर। मपु० ६३ २६२-२६४

(८) हस्तिनापुर के राजा गंगदेव और रानी नन्दयशा का सातवाँ पुत्र। मपु० ७१.२६०-२६३

(९) मिथिला नगरी का राजा। इसने तीर्थंकर मल्लिनाथ को आहार दिया था। मपु० ६६ ५०

(१०) आगामी तीसरा नारायण। मपु० ७६ ४८७

(११) सातवाँ बलभद्र। भरतक्षेत्र में चक्रपुर नगर के राजा वरसेन और उसकी दूसरी रानी वैजयन्ती का पुत्र। यह सुभौम चक्रवर्ती के छः सौ करोड वर्ष बाद हुआ था। इसकी आयु छप्पन हजार वर्ष की और शारीरिक अवगाहना छब्बीस धनुष थी। भाई के वियोग से यह वैराग्य को प्राप्त हुआ। इसने शिवघोष मुनि से दीक्षा ली तथा तप द्वारा कर्मों का नाशकर मोक्ष प्राप्त किया। मपु० ६५ १७४-१७८, १९०-१९१ पूर्वभव में यह वसुन्धर नाम से सुसीमा नगरी में जन्मा था। सुधर्म गुरु से दीक्षा लेकर यह ब्रह्म स्वर्ग गया था। वहाँ से चयकर यह बलभद्र हुआ। पपु० २० २२९-२३९

नन्दी—(१) वृषभदेव के अस्सीवें गणधर। मपु० ४३ ६६, हपु० १२ ६९

(२) आगामी प्रथम नारायण। मपु० ७६ ४८७ हपु० ६० ५६६

(३) कौशाम्बी नगरी का जिनभक्त एक सेठ। यह विभूति में राजा के समान ही था। भवदत्त मुनि ने इसका उसके योग्य सम्मान किया। वहीं बैठे हुए पश्चिम नामक क्षुल्लक ने निदान किया कि अगले भव में वह इसी सेठ का पुत्र हो। इस निदान से वह इसी सेठ की इन्दुमुखी सेठानी के गर्भ से रतिवर्द्धन नामक पुत्र हुआ। पपु० ७८ ६३-७२

(४) महावीर निर्वाण के बासठ वर्ष बाद सौ वर्ष के काल में समस्त अंगों और पूर्वों के वेत्ता पाँच श्रुतकेवली मुनीश्वरों में प्रथम मुनि। मपु० ७६ ५१९, वीवच० १ ४३

(५) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एवं छठा बलभद्र। वीवच० १८ १०१, १११

(६) कुरुदेश के पलाशकूट ग्राम के निवासी सोमशर्मा ब्राह्मण का पुत्र। यह अपने मामा की पुत्रियों का इच्छुक था किन्तु उनके न मिलने से तथा लोगों के उपहास करने से मरने के लिए तत्पर हो गया था। इसे शंख और निर्नामिक मुनियों ने समझाकर तप ग्रहण कराया था। तप के प्रभाव से यह मरकर महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ तथा वहाँ से चयकर वसुदेव हुआ। मपु० ७० २००-२११ दे० नन्दिषेण।

(७) नन्दीश्वर द्वीप का एक देव। हपु० ५ ६४४

नन्दीघोषा—नन्दीश्वर द्वीप में पूर्व दिशा की एक वापी। हपु० ५ ६५८

नन्दीश्वर—(१) एक व्रत। इसमें नन्दीश्वर द्वीप की प्रत्येक दिशा में विद्यमान चार दधिमुख, आठ रतिकर और एक अंजनगिरि को लक्ष्य कर प्रत्येक दिशा-सम्बन्धी क्रमशः चार और आठ उपवास तथा एक बेला करने का विधान है। इस प्रकार इस व्रत में चारों दिशाओं के अड़तालीस उपवास और चार बेला करने पड़ते हैं। इसका फल चक्रवर्तित्व तथा जिनेन्द्र पद की प्राप्ति है। हपु० ३४ ८४

(२) आठवाँ द्वीप। इसे इसी नाम का सागर घेरे हुए है। इन्द्र इसका जल तीर्थंकर के अभिषेक के लिए लाता है। इसका विस्तार एक सौ तरेसठ करोड चौरासी लाख, आभ्यन्तर परिधि एक हजार छत्तीस करोड बारह लाख दो हजार सात सौ योजन तथा बाह्य परिधि दो हजार बहत्तर करोड तैंतीस लाख चौवन हजार एक सौ नब्बे योजन है। इसमें चार अंजनगिरि, सोलह वापियाँ, सोलह दधिमुख और बत्तीस रतिकर आभ्यन्तर कोणों में तथा बत्तीस बाह्य कोणों में हैं। यहाँ बावन जिनालय हैं। इनमें रत्न और स्वर्णमय

प्रतिमाएँ विराजमान होने से प्रतिवर्ष फाल्गुन, आषाढ और कार्तिक मास के आष्टाह्निक पर्वों में देव आकर पूजा करते हैं। यहाँ चौसठ वनखण्डो पर भव्य प्रासाद हैं, जिनमें उन वनो के नामधारी देव रहते हैं। मपु० ५ २१२, २९२, ७ १६१, १६ २१४-२१५, पपु० १५ ७४, २९ १, ९ हपु० ५ ६१६, ६४७-६८२, २२ १-२

नन्दीश्वरमह्—नन्दीश्वर द्वीप में आष्टाह्निक पर्वों पर देवो के द्वारा आयोजित जिनेन्द्र-पूजा। यह कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ मास के अन्तिम आठ दिनो मे की जाती है। दे० नन्दीश्वर-२ इन दिनो में देव भोग आदि छोड देते हैं। इन्द्रो के साथ वे जिनेन्द्र की पूजा में तत्पर रहते हैं। यह पूजन जिनेन्द्र के अभिषेक पूर्वक की जाती है। ऐसी पूजा के करनेवाले देवो की सम्पदा, चक्रवर्तियो के भोग और मुक्ति प्राप्त करते हैं। पपु० ६८.१, ५-६, २४

नन्दोत्तर—मानुषोत्तर के दक्षिण दिशा में विद्यमान लोहिताक्षकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०३

नन्दोत्तरा—(१) समवसरण के अशोकवन की एक वापी। हपु० ५७ ३२

(२) रुचकगिरि के स्वस्तिकनन्दनकूट की निवासिनी देवी। हपु० ५ ७०६

(३) नन्दीश्वर द्वीप की एक वापी। मपु० १६ २१४

(४) समवसरण में निर्मित मानस्तम्भ के निकट विद्यमान एक वापी। मपु० २२ ११०

नन्द्यावर्त—(१) एक नगर। यहाँ के राजा अतिवीर्य ने विजयनगर के राजा पृथ्वीधर को लिखा था कि वह राम के भ्राता भरत को जीतने में उसकी सहायता करे। पपु० ३७ ६

(२) राम-लक्ष्मण का वैभव सम्पन्न भवन। पपु० ८३.३-४

(३) पश्चिम विदेहक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का एक नगर। यहाँ के राजा नन्दीश्वर की कनकाभा रानी से नयनानन्द नाम का पुत्र हुआ था। पपु० १०६ ७१-७२

(४) सौधर्म युगल का छब्बीसवाँ पटल। हपु० ६ ४७

(५) रुचक पर्वत की पूर्व दिशा मे विद्यमान एक कूट। यह एक हजार योजन चौडा और पाँच सौ योजन ऊँचा है। यहाँ पद्मोत्तर देव रहता है। हपु० ५ ७०१-७०२

(६) तेरहवें स्वर्ग का विमान। मपु० ९ १९१, ६२ ४१०

(७) भरत चक्रवर्ती की शिविर-स्थली। मपु० ३७ १४७

(८) सहस्राम्रवन का एक वृक्ष। तीर्थंकर शान्तिनाथ ने इसी वृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त किया था। मपु० ६३ ४८१, ४८६

(९) राजा सिद्धार्थ का राजभवन। महावीर की जननी प्रियकारिणी को इसी भवन में सोलह स्वप्न दिखायी दिये थे। मपु० ७४.२५४-२५६

नभसेन—हरिषेण का पुत्र। यह कुरुवशी राजा था। हपु० १७ ३४

नभस्—(१) श्रावण मास। हपु० ५५ १२६

(२) अवगाहदान में समर्थ आकाश। पपु० ४ ३९, हपु० ५८ ५४

नभस्तडित्—दैत्यो के अधिपति मय का मन्त्री। पपु० ८ २८, ४३-४४

नभस्तिलक—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का एक नगर। यह विनमि की निवासभूमि था। हपु० ९ १३२-१३३, २५ ४

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का इकतालीसवाँ नगर। हपु० २२ ९८

(३) एक पर्वत। इस पर्वत पर अजितसेन अपना शरीर छोडकर सोलहवे स्वर्ग में अच्युतेन्द्र हुआ था। मपु० ५४ १२५-१२६

नमस्कार-पद—नमस्कार (णमोकार) मन्त्र। इसकी साधना में मस्तक पर सिद्ध और हृदय में अर्हन्त परमेष्ठी को विराजमान कर आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी का ध्यान किया जाता है। इससे मोह और तज्जनित अज्ञान का विनाश हो जाता है। मपु० ५ २४५-२४९ वीवच० १८९

नमि—(१) महापुराणकार के अनुसार वृषभदेव के पचहत्तरवे और हरिवशपुराणकार के अनुसार सतत्तरवें गणधर। मपु० २ ४३, ६५, हपु० १२ ६८ ये वृषभदेव के साले कच्छ राजा के पुत्र थे। वृषभदेव से ध्यानस्थ अवस्था में भोग और उपभोग की सामग्री की याचना करने पर धरणेन्द्र ने इन्हें विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का राज्य और दिति तथा अदिति ने सोलह निकायो की अनेक विद्याएँ प्रदान की थी। मपु० १८ ९१-९५, १९ १८२, १८५, ३२ १८०, पपु० ३ ३०६-३०९, हपु० ९ १२८ विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में विद्यमान मनोहर देश में रत्नपुर नगर के राजा पिंगलगाधार और रानी सुप्रभा की पुत्री विद्युत्प्रभा इनकी पत्नी थी। इनके रवि, सोम, पुरुहूत, अशुमान्, हरि, जय पुलस्त्य, विजय, मातग तथा वासव आदि कान्तिधारी अनेक पुत्र तथा कनकपुञ्जश्री और कनकमजरी नामक दो पुत्रियाँ थी। इन्होने भरतेश की अधीनता स्वीकार की थी और अपनी बहिन सुभद्रा का भरतेश से विवाह कर दिया था। इसके पश्चात् इन्होने ससार से विरक्त होकर जिनदीक्षा धारण कर ली थी। इनके पुत्रो में मातग के अनेक पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र हुए। अन्त में वे अपनी-अपनी साधना के अनुसार स्वर्ग और मोक्ष गये। मपु० ३२ १८३, ४७ २६१-२६३, हपु० २२ १०७-११०

(२) विजयार्ध पर्वत के निवासी पवनवेग का पुत्र। यह जाम्बवती का हरण कर लेना चाहता था। इसके इस कुविचार को ज्ञातकर जाम्बव ने इसे मारने के लिए माक्षिकलक्षिता नाम की विद्या भेजी थी किन्तु कुमार के मामा किन्नरपुर के राजा यक्षमाली विद्याधर ने उस विद्या को छेद दिया था। अनन्तर जम्बूकुमार के आक्रमण करने पर इसे वहाँ से भाग जाना पडा था। मपु० ७१ ३७०-३७४

(३) एक यादव नृप। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में यह समुद्र-विजय की रक्षा-पक्ति मे था। हपु० ५० १२१

नमिनाथ—अवसर्पिणी काल के दुषमा-सुषमा नामक चौथे काल मे उत्पन्न शलाकापुरुष और इक्कीसवें तीर्थङ्कर। ये जम्बूद्वीप में वग देश की मिथिला नगरी के राजा विजय और रानी वप्पिला के पुत्र थे। ये आश्विन मास के कृष्ण पक्ष की द्वितीया को रात्रि के पिछले पहर मे अश्विनी नक्षत्र में गर्भ में आये तथा आषाढ कृष्णा दशमी के दिन

स्वाति नक्षत्र के योग मे जन्मे थे। यह नाम इन्हें देवो ने दिया था। इनकी आयु दस हज़ार वर्ष, शारीरिक अवगाहना पन्द्रह धनुष और कान्ति स्वर्ण के समान थी। कुमारकाल के अढाई हजार वर्ष बीत जाने पर इन्होने अभिषेकपूर्वक राज्य किया था। मपु० २ १३३-१३४, ६९ १८-३४, पपु० १ १२, ५.२१५, हपु० १ २३, वीवच० १ ३१, १८ १०७। हरिवशपुराणकार ने इनकी आयु पन्द्रह हज़ार वर्ष तथा तीर्थ पाँच लाख वर्ष का कहा है। हपु० १८ ५ राज्य करते हुए पाँच हज़ार वर्ष पश्चात् सारस्वत देवो द्वारा पूजे जाने पर उत्पन्न वैराग्य-वश इन्होने अपने पुत्र सुप्रभ को राज्यभार सौंपा था तथा देवो द्वारा किये गये दीक्षाकल्याणक को प्राप्त कर ये उत्तरकुरु नाम की पालकी मे बैठकर चैत्रवन गये थे। वहाँ इन्होने आषाढ कृष्ण दशमी के दिन अश्विनी नक्षत्र में सायकाल के समय एक हज़ार राजाओ के साथ सयम धारण किया था। इनको उसी समय मन पर्ययज्ञान प्राप्त हो गया था। वीरपुर नगर मे राजा दत्त ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। छद्मस्थ अवस्था के नौ वर्ष बीत जाने पर ये दीक्षावन मे बकुल वृक्ष के नीचे वेला का नियम लेकर ध्यानारूढ हुए और इन्हें मार्गशीर्ष के शुक्लपक्ष की एकादशी के दिन सायकाल के समय केवल-ज्ञान हुआ। इनके सघ मे सुप्रभार्य सहित सत्रह गणधर, चार सौ पचास समस्त पूर्वों के ज्ञाता, बारह हज़ार छ सौ व्रतधारी शिक्षक, एक हजार छ सौ अवधिज्ञानी, इतने ही केवलज्ञानी, पन्द्रह सौ विक्रिया ऋद्धिधारी, बारह सौ पचास परिग्रह रहित मन पर्ययज्ञानी और एक हजार वादी थे। कुल मुनि बीस हज़ार, पतालीस हज़ार आर्यिकाएँ, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकाएँ तथा असख्यात देव-देवियाँ और असख्यात तिर्यच थे। इन्होने आर्यक्षेत्र में अनेक स्थानो पर विहार किया था। आयु का एक मास शेष रह जाने पर विहार बन्द कर ये सम्मेदगिरि पर आये और एक हज़ार मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण कर वैशाख कृष्ण चतुर्दशी के दिन रात्रि के अन्तिम समय अश्विनी नक्षत्र मे मोक्ष गये। देवो ने निर्वाणकल्याणक मनाया था। मपु० ६९.३५, ५१-६९ दूसरे पूर्वभव मे ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में वत्स देश की कौशाम्बी नगरी के राजा पार्थिव और उनकी सुन्दरी नामक रानी के सिद्धार्थ नामक पुत्र तथा प्रथम पूर्वभव मे अपराजित नामक विमान मे अहमिन्द्र थे। मपु० ६९ २-४, १६, पपु० २० १४-१७, हपु० ६० १५५

नमुचि—(१) सुराष्ट्र देश मे अजाखुरी नगरी के राजा राष्ट्रवर्धन और उसकी रानी विनया का पुत्र। नीति सम्पन्न, गुणवान् तथा पराक्रमी होते हुए भी यह बडा अभिमानी था। कृष्ण ने इसे मारकर इसकी बहिन सुसीमा का अपहरण किया था। हपु० ४४ २६-३०

(२) उज्जयिनी के राजा श्रीधर्मा का एक मत्री। यह मन्त्रमार्ग का वेत्ता था। हपु० २० ३-४

नय—(१) वस्तु के अनेक धर्मों में विवक्षानुसार किसी एक धर्म का बोधक ज्ञान। इसके दो भेद है—द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक। इनमें द्रव्यार्थिक यथार्थ और पर्यायार्थिक अयथार्थ है। ये ही दो मूल नय है और परस्पर सापेक्ष हैं। वैसे नय सात होते हैं—नैगम, सग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ और एवभूत। इन सात नयो में आरम्भ के तीन द्रव्यार्थिक और शेष चार पर्यायार्थिक नय हैं। निश्चय और व्यवहार इन दो भेदो से भी नय का कथन होता है। मपु० २.१०१ पपु० १०५ १४३, हपु० ५८ ३९-४२

(२) यादवो का पक्षधर एक राजा। हपु० ५० १२१

नयचक्र—नीति से युक्त सुदर्शन चक्र-रत्न। मपु० ३४ १८६

नयदत्त—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के एकक्षेत्र नगर का एक वणिक्। इसकी सुनन्दा नाम की स्त्री और धनदत्त नाम का पुत्र था। पपु० १०६ १०-११

नयन—राजा सुभानु का पुत्र और राजा भीम का पिता। इसने पुत्र को राज्य सौंप कर दीक्षा ले ली थी। हपु० १८.३-४

नयनसुन्दरी—त्रिशृगपुर के निवासी सेठ प्रियमित्र और उसकी पत्नी सोमिनी की पुत्री। यह पाण्डव युधिष्ठिर की पत्नी थी। हपु० ४५. १००-१०२, पापु० १३ १११-११३

नयनानन्द—पश्चिम विदेहक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत के नन्द्यावर्त नगर के राजा नन्दीश्वर तथा उसकी कनकाभा नाम की रानी का पुत्र। इसने चिरकाल तक विशाल लक्ष्मी का उपभोग करने के बाद मुनि-दीक्षा धारण की थी तथा समाधिमरण पूर्वक शरीर त्यागकर माहेन्द्र स्वर्ग प्राप्त किया था। पपु० १०६ ७१-७३

नयुत—नयुताग प्रमित काल में चौरासी लाख का गुणा करने पर प्राप्त सख्या प्रमित समय। मपु० ३ १३५, २२२

नयुताग—पूर्व प्रमित काल मे चौरासी का गुणा करने से प्राप्त समय। मपु० ३ १४०, २१९-२२२

नयोत्तुग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

नरक—चार गतियो में एक गति। यहाँ निमिषमात्र के लिए भी सुख नही मिलता। ये सात हैं, उनके क्रमश नाम ये है—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा और महातम:-प्रभा। ये तीनो वात-वलयो पर अधिष्ठित तथा क्रम से नीचे-नीचे स्थित हैं। इनके क्रमश रूढ नाम हैं—घर्मा, वशा, मेघा, अजना, अरिष्टा, मघवी और माघवी। पहली पृथिवी मे नारकी जीव जन्म-काल में सात योजन सवा तीन कोस ऊपर आकाश मे उछलकर पुन: नीचे गिरते है। अन्य छ पृथिवियो मे उछलने का प्रमाण क्रम से उत्त-रोत्तर दूना होता जाता है। उत्पन्न होते समय यहाँ जीवो का मुँह नीचे रहता है। अन्तर्मुहूर्त में ही दुर्गन्धित, घृणित, बुरी आकृतिवाले शरीर की रचना पूर्ण हो जाती है। शरीर-रचना पूर्ण होते ही भूमि मे गडे हुए तीक्ष्ण हथियारो पर ऊपर से नारकी जीव गिरते हैं और सन्तप्त भूमि पर भाड में डले तिलो के समान पहले तो उछलते हैं और फिर वहाँ जा गिरते है। तीसरी पृथिवी तक असुरकुमार देव नारकियो को परस्पर लडाते है। नारकी स्वय भी पूर्व वैरवश लडते है। खण्ड-खण्ड होने पर भी पारे के समान यहाँ नारकियो के शरीर के टुकडो का पुन समूह बन जाता है। वे एक दूसरे के द्वारा

दिये हुए शारीरिक एवं मानसिक दु ख सहते रहते हैं। खारा, गरम, तीक्ष्ण वैतरणी नदी का जल पीते हैं और दुर्गन्ध युक्त मिट्टी का आहार करते है। यहाँ गीध वज्रमय चोच से और सुना कुत्ते नाखूनो से नारकियो के शरीर भेदते हैं। उन्हें कोल्हू मे पेला जाता है, कडाही में पकाया जाता है, ताँबा आदि धातुएँ पिलायी जाती हैं, पूर्व जन्म मे रहे मास-भक्षियो को उनका मास काटकर उन्हें ही खिलाया जाता है और तपे हुए गर्म लोह गोले उन्हें निगलवाये जाते हैं। पूर्व जन्म मे व्यभिचारी रहे जीवो को अग्नि से तप्त पुतलियो का आलिगन कराया जाता है। यहाँ कटीले सेमर के वृक्षो पर ऊपर-नीचे की ओर घसीटा जाता है और अग्नि-शय्या पर सुलाया जाता है। गर्मी मे सन्तप्त होने पर छाया की कामना से वन में पहुँचते ही असिपत्रो से उनके शरीर विदीर्ण हो जाते है। पर्वत से नीचे की ओर मुँह कर पटका जाता है और घावो पर खारा पानी सीचा जाता है। तीसरी पृथिवी तक असुरकुमार देव मेढा बनाकर परस्पर लडाते हैं और उन्हें तप्त लोहे के आसनो पर बैठाते हैं। आदि की चार भूमियो में उष्णवेदना, पाँचवी पृथिवी में उष्ण और शीत दोनो तथा छठी और सातवी भूमि में शीत वेदना होती है। सातो पृथिवियो में क्रमश तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह लाख, दस लाख, तीन लाख, पाँच कम एक लाख और पाँच बिल हैं। इन नरको में क्रम से एक सागर, तीन सागर, सात सागर, दस सागर, सत्रह सागर, बाईस सागर और तेंतीस सागर उत्कृष्ट आयु है। पहली पृथिवी मे नारकियो के शरीर की ऊँचाई सात धनुष तीन हाथ छ अगुल प्रमाण तथा द्वितीयादि पृथिवियो में क्रम-क्रम से दूनी होती गयी है। नारकी विकलाग, हुण्डक सस्थान, नपुसक, दुर्गन्धित, काले, कठोर स्पर्शवाले, दुर्भग और कठोर स्वरवाले होते हैं। इनके शरीर में कडवी तूम्बी और काजीर के समान रस उत्पन्न होता है। एक नारकी एक समय में एक ही आकार बना सकता है। आकार भी विकृत, घृणा का स्थान और कुरूप ही बना सकता है। इन्हें विभगावधिज्ञान होता है। यहाँ हिंसक, मृषावादी चोर, परस्त्रीरत, मद्यपायी, मिथ्यादृष्टि, क्रूर, रौद्रध्यानी, निर्दयी, बह्वारम्भी, धर्म-द्रोही, अधर्मपरिपोषक, साधुनिन्दक, साधुओ पर अकारण क्रोधी, अतिशय पापी, मधु-मासभक्षी, हिंसकपशुपोषी, मधुमासभक्षियो के प्रशसक, क्रूर जलचर-थलचर, सर्प, सरीसृप, पापिनी स्त्रियाँ और क्रूर पक्षी जन्म लेते हैं। असैनी पचेन्द्रिय जीव प्रथम पृथिवी तक, सरीसृप-दूसरी पृथिवी तक, पक्षी तीसरी पृथिवी तक, सर्प चौथी पृथिवी तक, सिंह पाँचवी पृथिवी तक, स्त्रियाँ छठी पृथिवी तक और पापी मनुष्य तथा मच्छ सातवी पृथिवी तक जाते हैं। मपु० १० २२-६५, ९०-१०३, पपु० २ १६२, १६६, ६ ३०६-३११, १४ २२-२३, १२३ ५-१२, हपु० ४ ४३-४६, ३५५-३६६, वीवच० १७ ६५-७२

(२) रावण का एक योद्धा। पपु० ६६ २५

(३) घर्मा पृथिवी के तेरह इन्द्रक बिलो में दूसरा इन्द्रक बिल। हपु० ४ ७६ दे० घर्मा

नरकान्तक—नील कुलाचल के नौ कूटो में छठा कूट। हपु० ५ १००-१०१

नरकान्ता—चौदह महानदियो मे दसवी महानदी। यह केशरी सरोवर से निकली है। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १२४, १३४

नरगीत—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो मे तीसरा नगर। यहाँ स्त्री और पुरुष उत्सव आदि के द्वारा मनोरजन करते रहते हैं। मपु० १९ ३४

नरदेव—(१) कृष्ण के भाई बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८ ६८

(२) रावण के पूर्वभव का जीव। धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरत-क्षेत्र सम्बन्धी सारसमुच्चय देश के नागपुर (हस्तिनापुर) नगर का राजा। इसने एक दिन अनन्त गणधर से धर्मकथा सुनकर अपने बडे पुत्र भोगदेव को राज्य सौंपकर सयम धारण कर लिया था। तपश्चरण करते हुए इसने चपलवेग विद्याधर के ऐश्वर्य को देखकर देव होने का निदान किया। फलत आयु के अन्त में सन्यासमरण कर यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६८ ३-७

नरपति—तीर्थंकर नेमिनाथ के तीर्थ मे हुए राजा यदु का पुत्र। इसके दो पुत्र थे—शूर और सुवीर। यह अपने पुत्रो को राज्य सौंपकर तप करने लगा था। हपु० १८ ७-८

(२) शिल्पपुर नगर का राजा, रतिविमला का पिता। मपु० ४७ १४४-१४५

(३) वासुपूज्य तीर्थंकर के तीर्थ में हुआ एक नृप। उत्कृष्ट तपश्चरण करते हुए मरकर यह मध्यम ग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ६१ ८९-९०

(४) तालपुरनगर का राजा, तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के यागहस्ती का जीव। यह पात्र-अपात्र की विशेषता से अनभिज्ञ था। यह किमिच्छक दान देने से हाथी हुआ था। मपु० ६७ ३४-३५

नरपाल—चक्रवर्ती श्रीपाल और रानी सुखावती का पुत्र। राजा श्रीपाल ने इसे राज्य देकर दीक्षा धारण कर ली थी। मपु० ४७ २४४-२४५

नरवक्त्र—आठवाँ नारद। हपु० ६० ५४९ दे० नारद

नरवर—राजा वसु की वश-परम्परा में हुआ एक नृप। यह राजा दृढरथ का पुत्र था। इसने अपने पिता के नाम पर ही पुत्र का भी नाम रखा था। हपु० १८ १८

नरवृषभ—जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत के पूर्व की ओर स्थित वीतशोकापुरी का राजा। राजभोगो को भोगकर और उनसे विरक्त होकर इसने दमवर मुनि से दीक्षा ले ली थी। उग्र तपश्चरण करते हुए मरकर यह सहस्रार स्वर्ग मे देव हुआ था। मपु० ६१ ६६-६८

नरवृष्टि—शौर्यपुर नगर के राजा शूरवीर और उसकी पत्नी धारिणी का कनिष्ठ पुत्र। यह अन्धकवृष्टि का अनुज था। इसकी रानी का नाम पद्मावती था। इसके तीन पुत्र थे—उग्रसेन, देवसेन और महासेन। गान्धारी इसकी पुत्री थी। मपु० ७०.९३-९४, १००-१०१

नरहरि—कुरुवशी एक राजा। यह नारायण के पश्चात् राजा हुआ था। हपु० ४५ १९

नर्तकीसेना—अच्युतेन्द्र की सात प्रकार की सेना में एक सेना। मपु० १० १९८-१९९

नर्मद—भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का भरतेश के भाई के अधीन एक देश। इस भाई ने भरतेश की अधीनता स्वीकार नहीं की थी और वह दीक्षित हो गया था। हपु० ११ ७२, १७ २१, ४५.११३

नर्मदा—(१) पूर्व-दक्षिण आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। यह गम्भीर नदी कही मन्द, कहीं तीव्र तथा कहीं टेढे-मेढे प्रवाह से युक्त है। कुम्भकर्ण का निर्वाण इसी नदी के तट पर हुआ था। मपु० २९.५२, ३० ८२, पपु० १० ६३, ८० १४०

(२) वसुन्धरपुर के राजा विन्ध्यसेन की स्त्री, वसन्तसुन्दरी की जननी। हपु० ४५ ७०

नल—किष्कुप्रमोद नगर का राजा एक विद्याधर। यह सूर्यरज के छोटे भाई और सुग्रीव के चाचा ऋक्षरज और उसकी हरिकान्ता रानी का पुत्र तथा नील का अग्रज था। इसने हरिमालिनी अपनी पुत्री हनुमान् को दी थी, राम-लक्ष्मण के साथ सिद्धशिला के दर्शन किये थे और अपने भाई के साथ राम की सहायता की थी। इसी ने वेलन्धर नगर के स्वामी समुद्र विद्याधर को बाहुबल से बांधा था तथा राम का आज्ञाकारी होने से उसे सम्मान पूर्वक छोडते हुए उसी नगर का राजा बना दिया था। इसने युद्ध में रावण के मन्त्री हस्त को रथ रहित करके उसे विह्वल कर दिया था। लका विजय के पश्चात् इसने राम से किष्किन्धपुर का राज्य प्राप्त किया। कुछ समय तक राज्य का भोग करके यह दीक्षित हो गया। पपु० ९ १३, १९.१०४, ४८ १८९-१९५, ५४ ३४-३६, ६५-६७, ५८ ४५, ५९ १७, ८८ ४०, ११९ ३९

नलकूबर—दुर्लंध्यपुर नगर में राजा इन्द्र द्वारा नियुक्त एक लोकपाल। रावण के आक्रमण करने पर नगर की सुरक्षा के लिए इसने विद्या के प्रभाव से सौ योजन ऊँचा और तिगुनी परिधि से युक्त वज्रशाल नाम का कोट बनाया था। इसकी स्त्री का नाम उपरम्भा था। वह रावण पर मुग्ध थी। उसने अपनी सखी द्वारा रावण के पास अपना सन्देश भेजा था। रावण ने उसे बुलवाकर तथा उससे-उसके ही नगर में मिलने का आश्वासन देकर उससे आशालिका विद्या प्राप्त की थी। रावण इसके मायामय कोट को हराकर सेना सहित इसके निकट गया। युद्ध में यह विभीषण द्वारा जीवित पकडा गया। रावण ने उपरम्भा को समझाकर इससे मिला दिया। उपरम्भा अत्यधिक लज्जित हुई और प्रतिबोध को प्राप्त होकर शील की रक्षा करती हुई पति में ही सन्तुष्ट हो गयी थी। अपनी स्त्री के व्यभिचार का प्रतिबोध न हो सकने से रावण द्वारा प्रदत्त सम्मान को प्राप्त कर यह पूर्ववत् अपनी स्त्री के साथ रहने लगा था। पपु० १२ ७९-८७, १५३

नलिन—(१) रुचकगिरि के पश्चिम दिशावर्ती आठ कूटो में तीसरा कूट। यहाँ पृथिवी देवी निवास करती है। हपु० ५ ७१२

(२) पूर्व विदेह के चार वक्षारगिरियों में तीसरा वक्षारगिरि। यह नील पर्वत और सीता नदी के मध्य स्थित है। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२८

(३) आगामी छठा कुलकर (मनु)। मपु० ७६ ४६४, हपु० ६० ५५६

(४) सौधर्म युगल का आठवाँ इन्द्रक। हपु० ६ ४५ दे० सौधर्म

(५) चौरासी लाख नलिनांग प्रमाण काल। मपु० ३.११३, ३२०, हपु० ७ २७ दे० काल

(६) एक नगर। राजा सोमदत्त ने यहाँ तीर्थंकर चन्द्रप्रभ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५४.२१७-२१८

नलिनकेतु—जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र में गान्धार देश के विन्ध्यपुर नगर के राजा विन्ध्यसेन और उनकी रानी सुलक्षणा का पुत्र। अपने नगर के एक वणिक् धनमित्र के पुत्र सुदत्त की स्त्री प्रीतिंकरा का इसने अपहरण किया। एक दिन उल्कापात देखने से इसे आत्मज्ञान हुआ। विरक्त होकर अपने दुश्चरित्र की निन्दा करते हुए सीमकर मुनि के पास इसने दीक्षा ले ली तथा उग्र तप से क्रम-क्रम से केवलज्ञान प्राप्त करके मोक्ष-लाभ किया। मपु० ६३.९९-१०४

नलिनगुल्म—तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २१

नलिनगुल्मा—मेरु पर्वत की उत्तर-पूर्व (ऐशान) दिशा में विद्यमान चार वापियो में दूसरी वापी। हपु० ५.३४५

नलिनध्वज—आगामी नवम कुलकर। हपु० ६० ५५७

नलिनपुंगव—आगामी दसवा कुलकर। हपु० ६० ५५७

नलिनप्रभ—(१) आगामी सातवाँ कुलकर। मपु० ७६ ४६४, हपु० ६० ५५६

(२) पुष्करार्ध द्वीप सम्बन्धी पूर्व विदेह के सुकच्छ देश में सीता नदी के उत्तरी तट पर स्थित क्षेमपुर नगर का राजा। इसे सहस्राम्रवन में अनन्त जिनेन्द्र से धर्मोपदेश सुनकर तत्त्वज्ञान हुआ अतः विरक्त होकर सुपुत्र नामक पुत्र को राज्य देकर यह सयमी हुआ। इसने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। आयु के अन्त में समाधिमरण पूर्वक देह त्याग करके यह सोलहवें स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान मे अच्युतेन्द्र हुआ। मपु० ५७ २-३, ९-१४

नलिनराज—आगामी आठवाँ कुलकर। हपु० ६० ५५६

नलिनांग—पद्मप्रमित आयु में चौरासी का गुणा करने से प्राप्त काल। मपु० ३ २२०, २२३ दे० काल, हपु० के अनुसार चौरासी लाख पद्म का एक नलिनांग होता है। हपु० ७.२७

नलिना—(१) मेरुपर्वत की उत्तर-पूर्व (ऐशान) दिशा में विद्यमान चार वापियो में प्रथम वापी। हपु० ५ ३४५

(२) मेरु पर्वत की पूर्व-दक्षिण (आग्नेय) दिशा में स्थित चार वापियो में दूसरी वापी। हपु० ५ ३३४

(३) विदेह क्षेत्र की बत्तीस नगरियो मे एक नगरी। मपु० ६३ २११

(४) हेमाभ नगर के राजा दृढमित्र की रानी, जीवधर की सास। मपु० ७५ ४२०-४२८

नलिनी—(१) पूर्व विदेहक्षेत्र में सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित आठ देशों में छठा देश। हपु० ५ २४९-२५०

(२) समवसरण के चम्पक वन की छः वापियों में दूसरी वापी। हपु० ५७ ३४

नवकेवललब्धि—तपस्वियों को तप से प्राप्त होनेवाली नौ लब्धियाँ-क्षायिकज्ञान, क्षायिकदर्शन, क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकचारित्र, क्षायिकदान, क्षायिकलाभ, क्षायिकभोग, क्षायिक-उपभोग और क्षायिकवीर्य। मपु० २० २६६, २५ २२३, ६१ १०१

नव-पुण्य—दाताओं के नौ पुण्य–(नवधाभक्ति)–१ मुनियों को पडगाहना २ उन्हें ऊँचे स्थान पर विराजमान करना ३ उनके चरण धोना ४ उनकी पूजा करना ५ उन्हें नमस्कार करना ६-९ मनशुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि और आहारशुद्धि बोलना। मपु० २० ८६-८७, हपु० ९ १९९-२००

नवनवम—एक व्रत। इसमें प्रथम दिन उपवास, पश्चात् एक-एक ग्रास बढ़ाते हुए नवें दिन नौ ग्रास लिये जाते हैं तथा एक-एक घटाते हुए नवें दिन उपवास किया जाता है। इस विधि को नौ बार करने से यह व्रत पूर्ण होता है। हपु० ३४ ९१-९३

नवमिका—(१) रुचकपर्वत के पश्चिम दिशावर्ती आठ कूटों में छठे सौमनस कूट की रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७१३

(२) सौधर्मेन्द्र की एक देवी। मपु० ६३ १८

नवराष्ट्र—दक्षिण दिशा का एक देश। यह भरतेश के एक भाई के अधीन था। उसने भरतेश की अधीनता स्वीकार नहीं की और दीक्षा ले ली थी। हपु० ११ ७०

नष्ट—छन्द शास्त्र का एक प्रकरण-प्रत्यय। मपु० १६ ११४

नाग—(१) पाताल लोकवासी भवनवासी देव। इनकी उत्कृष्ट आयु तीन पल्य की होती है। पपु० ७ ३४२ हपु० ४ ६३, ६५-६६

(२) इस नाम का एक नगर। यहाँ के राजा हरिपति और उसकी रानी मनोलूता का पुत्र कुलकर हुआ। पपु० ८५ ४९-५१

(३) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। भरतेश का सेनापति विंध्याचल के प्रदेशों को जीतता हुआ यहाँ आया था और यहाँ से वह मलयपर्वत पर गया था। मपु० २९ ८८

(४) सानत्कुमार युगल का तीसरा इन्द्रक। हपु० ६ ४८

(५) महावीर निर्वाण के एक सौ बासठ वर्ष के बाद एक सौ तेरासी वर्ष के काल में हुए दस पूर्व और ग्यारह अंग के धारी ग्यारह मुनियों में पाँचवें मुनि। हपु० १ ६२ वीवच० १ ४५-४७

(६) हाथी की एक जाति। इस जाति का हाथी फुर्तीला, तेज और अधिक समझदार होता है। यह जलक्रीडा करता है और युद्ध में इसका अत्यधिक उपयोग होता है। मपु० २९ १२२

नागकुमार—भवनवासी देव। ये और असुरकुमार परस्पर की मत्सरता से एक-दूसरे के प्रारम्भ किये कार्यों में विघ्न करते हैं। मपु० ६७ १७३, हपु० २ ८२, ११ ४४

नागदत्त—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु से पश्चिम दिशा की ओर स्थित विदेह क्षेत्र में गन्धिल देश के पाटली ग्राम का एक वैश्य। इसकी सुमति नाम की भार्या थी। इससे इसके नन्द, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, वरसेन और जयसेन पाँच पुत्र तथा मदनकान्ता और श्रीकान्ता नाम की दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुई थी। मपु० ६ १२६-१३०

(२) आभियोग्य जाति के देवों में मुख्य देव। मपु० २२ १७

(३) धान्यपुर नगर के कुबेर नामक वणिक् और उसकी पत्नी सुदत्ता का पुत्र। यह अप्रत्याख्यानावरण माया का धारक था। आर्त्तध्यान से मरकर तिर्यंच आयु का बन्ध कर लेने से यह वानर हुआ। मपु० ८ २३०-२३३

(४) भरतक्षेत्र के अवन्ति देश में उज्जयिनी नगर के सेठ धनदेव और सेठानी धनमित्रा का पुत्र। यह महाबल का जीव था। इसकी अर्थस्वामिनी नाम की एक छोटी बहिन थी। इसकी माँ धनदेव के दूसरा विवाह कर लेने से उसके द्वारा त्यागे जाने पर इसे (नागदत्त को) लेकर मुनि शीलदत्त के पास चली गयी थी। वहाँ इसने शीलदत्त मुनि से विद्याभ्यास किया और वहाँ के शिष्ट पुरुषों से उपाध्याय पद भी प्राप्त हुआ। बहिन को अपनी मामी के पुत्र कुलवाणिज को देकर यह अपने पिता के पास आया। पिता के कहने पर अपने हिस्से का धन लेने के लिए यह अपने हिस्सेदार भाई नकुल और सहदेव के साथ पलाशद्वीप के मध्य स्थित पलाश-नगर गया। वहाँ एक दुष्ट विद्याधर का वध करके इसने वहाँ के राजा महाबल और उसकी रानी काचनलता की पुत्री पद्मलता के साथ बहुत धन प्राप्त किया। इसने पद्मलता और धन दोनों को रस्सी से नाव पर पहुँचा दिया। इधर पाप बुद्धि से नकुल और सहदेव दोनों इसे छोड़कर चले गये। यह किसी विद्याधर की सहायता प्राप्त कर घर आया। नागदत्त के न आने पर राजा नकुल का विवाह पद्मलता से करना चाहता था परन्तु इसके पहुँचते ही तथा इससे यात्रा के समाचार ज्ञात करके राजा ने पद्मलता नकुल को न देकर इसे प्रदान की। इससे सेठ धनदेव भी बहुत लज्जित हुआ। आयु के अन्त में यह सन्यासपूर्वक देह त्याग कर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७५ ९५-१६२

(५) मगध देश में सुप्रतिष्ठ नगर के निवासी सेठ सागरदत्त और उसकी स्त्री प्रभाकरी का ज्येष्ठ पुत्र, कुबेरदत्त का अग्रज। पिता के सन्यास धारण कर लेने पर इसने अपने भाई कुबेरदत्त से पिता के धन के सम्बन्ध में प्रश्न किया जिसके उत्तर में कुबेरदत्त ने इसे पिता के धन की सम्पूर्ण जानकारी दी। दोनों ने चतुर्विध दान दिये। इसने कुबेरदत्त के पुत्र को धोखा दिया था। प्रीतिंकर को प्राप्त अलका नगरी के राजा हरिबल के छोटे भाई महासेन की पुत्री वसुन्धरा तथा धन को प्राप्त कर लेने पर इसने वसुन्धरा के भूले हुए आभरणों को लाने के लिए उसे नगर में भेजा और जहाज से उतरने की रस्सी खींच ली। इस तरह प्रीतिंकर को छोड़कर यह वहाँ से चला आया था। नगरवासियों के पूछने पर इसने प्रीतिंकर के सम्बन्ध में अपनी अनभिज्ञता प्रकट की। प्रीतिंकर जैन मन्दिर गया, वहाँ नन्द और महानन्द यक्षों ने प्रीतिंकर के कान में बँधे पत्र को पढ़कर उसे अपना साधर्मी भाई समझा। उन्होंने उसे धरणिभूषण पर्वत पर छोड़ दिया। प्रीतिंकर से गुप्त रहस्य ज्ञात कर राजा ने क्रोधित होते हुए इसका

धन लुटवा दिया था और प्रीतिंकर को अपनी पृथिवीसुन्दरी तथा अन्य बत्तीस कन्याएँ दी थी। मपु० ७६ २१६-२१८, २३२-२३७, २९५-३४७

नागदत्ता—(१) तीर्थंकर धर्मनाथ की शिविका। वे इसमें बैठकर शाल्वन में गये थे और वहाँ उन्होंने दीक्षा ली थी। मपु० ६१ ३८

(२) कौमुदी नगर के राजा सुमुख की मदना नामक वेश्या की पुत्री। इसकी माँ ने एक तपस्वी के ब्रह्मचर्य की परीक्षा के लिए उसके पास इसे ही भेजा था। इसने तपसी का तप भग करके राजा के समक्ष उसका अभिमान भग करने मे माँ का सहयोग किया था। पपु० ३९ १८०-२१२

नागपुर—(१) भरतक्षेत्र का एक नगर-हस्तिनापुर। शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ तीर्थंकरो तथा सनत्कुमार और महापद्म चक्रवर्तियो की यह जन्मभूमि है। पपु० १७ १६२, २० १२, ५२-५४, १५३, १६४-१७९

(२) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र में सारसमुच्चय देश का एक नगर। मपु० ६८ ३-४

नागप्रिय—मध्य भरतखण्ड के चेदि देश के पास का एक पर्वत। भरतेश ने इस पर्वत को लाँघकर चेदि देश के हाथियो को अपने वश मे किया था। मपु० २९ ५७-५८

नागमाल—पश्चिम विदेह का वक्षारगिरि। हपु० ५ २३२

नागमुख—म्लेच्छ राजाओ का कुलदेव। इसने भरतेश की सेना पर घनघोर वर्षा की थी। भरतेश ने अपनी शक्ति से इस वर्षा को विराम दिया था। मपु० ३२ ५६-६७

नागरमण—मेरु का एक वन। हपु० ५ ३०७

नागवती—चम्पा-नगरी के राजा जनमेजय की रानी। यह काल-कल्प राजा की चम्पा नगरी को घेर लेने पर पूर्व निर्मित सुरग से अपनी पुत्री के साथ निकलकर शतमन्यु ऋषि के आश्रम मे आ गयी थी। इसने अपनी कन्या का विवाह चक्रवर्ती हरिषेण के साथ किया था। पपु० ८ ३०१-३०३, ३९२-३९३

नागवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीप सागरो मे ग्यारहवाँ द्वीप-सागर। हपु० ५ ६२४

नागवसु—भरतक्षेत्र में मगध देश के वृद्ध नामक ग्राम के निवासी दुर्मर्षण की भार्या। यह नागश्री की जननी थी। मपु० ७६ १५२-१५६

नागवाहिनी—(१) लक्ष्मण की एक शय्या। मपु० ६८ ६९२

(२) एक विद्या। विद्याधरो के राजा ज्वलनजटी ने अपनी पुत्री स्वयप्रभा के साथ यह विद्या त्रिपृष्ठ को दी थी। पापु० ४ ५४

नागवृक्ष—चन्द्रप्रभ तीर्थंकर का वैराग्य वृक्ष। इसी वृक्ष के नीचे चन्द्रप्रभ को केवलज्ञान हुआ था। मपु० ५४ २१६, २२३, २२९, पपु० २० ४४

नागवेलन्धर—वेलन्धर जाति के नागकुमार देव। हपु० ५ ४६५

नागश्री—(१) दुर्मर्षण की पुत्री, भवदेव की पत्नी। भवदेव उसे छोडकर अपने बडे भाई भगदत्त मुनि के उपदेश से मुनि हो गया था। मपु० ७६ १५२-१५७ दे० नागवसु

(२) भरतक्षेत्र में अगदेश की चम्पापुरी के निवासी ब्राह्मण अग्निभूति और उसकी पत्नी अग्निला की छोटी पुत्री। यह धनश्री और मित्रश्री की छोटी बहिन थी। ये तीनो बहिनें क्रमश अपने ही नगर में फुफेरे भाई सोमदत्त, सोमिल और सोमभूति से विवाही गयी थी। सोमदत्त ने धर्मरुचि मुनि को पडगाहकर इसे आहार कराने के लिए कहा था। कुपित होकर इसने मुनि को विष मिश्रित आहार दिया। उसके इस कृत्य से तीनो भाई बहुत दुखी हुए और ससार से विरक्त होकर वरुण गुरु के समीप दीक्षित हो गये। इसकी दोनो बहिनें भी आर्यिका हो गयी। पाप के कारण यह मरकर पाँचवें नरक मे उत्पन्न हुई। इसके पश्चात् यह क्रमश दृष्टिविष सर्प, चम्पापुरी में चाण्डाली, सुकुमारी और अन्त मे द्रौपदी हुई। मपु० ७२ २२७-२६३, हपु० ६४ ४-१३९, पापु० २३ ८१-८६, १०३, २४.२-७८

नागसुर—नागकुमार देव। यह जयकुमार का मित्र था। इसने जयकुमार को नागपाश और अर्द्धचक्र नामक दो बाण दिये थे। मपु० ४४ ३३५, पापु० ३ ११७

नागसेन—अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु के पश्चात् एक सौ तेरासी वर्ष की अवधि मे हुए ग्यारह अग और दस पूर्व के धारी ग्यारह आचार्यों में पाँचवें आचार्य। मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२१-५२४

नागहस्ती—व्याघ्रहस्ती आचार्य के शिष्य तथा आचार्य जितदण्ड के गुरु। हपु० ६६ २७, ३१

नागामर—नागकुमार जाति का देव। यह पूर्वभव मे एक सर्प था। महामुनि शीलगुप्त से धर्म का श्रवण करके यह देव हुआ था। मपु० ४३ ९१

नागास्त्र—नागरूप एक अस्त्र। इसे नष्ट करने के लिए गरुड अस्त्र का व्यवहार किया जाता है। पपु० १२ ३३२, हपु० ५२ ४८-४९

नागी—कृष्ण की सुसीमा नामक पटरानी के पूर्वभव का जीव-नागकुमारी। मपु० ७१ ३९३

नागेन्द्र—(१) सजयन्त केवली का भाई-धरणेन्द्र। मपु० ५९ १२८

(२) मरुभूति का जीव-वज्रघोष हाथी। मपु० ७३ १२, २०

नाग्न्य—अचेलकत्व। यह एक परीषह है। इसके द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत का उत्कृष्ट रूप पालन किया जाता है। मपु० ३६ ११७

नाट्यक्रीडा—प्राचीनकाल से प्रयोग मे आता हुआ मनोरजन का एक उत्तम साधन। पहले किसी के द्वारा किये गये कार्य का कलापूर्ण अनुकरण नाट्य है। वृषभदेव के मनोरजन के लिए देव नाट्यक्रीडा किया करते थे। लोक मे यह सर्वाधिक प्रिय रही है। मपु० १४ ९७

नाट्यमाल—एक देव। इसने भरतेश को विजयार्ध के काण्डक प्रपात / खण्डका प्रपात के समीप आभूषण और कुण्डल भेंट मे दिये थे। मपु० ३२ १९१, हपु० ११ ५३-५४

नाट्यमालिका—पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के नाट्याचार्य की पुत्री। यह नृत्य मे रस और भाव का प्रदर्शन बडे आकर्षक रूप से करती थी। मपु० ४६ २९९

नाट्यशाला—देवागनाओ के नृत्य करने का स्थान। समवसरण में दो

नाट्यशालाओ की रचना होती है। ये तीन-तीन खण्ड की होती हैं। मपु० २२ १४८-१५५

नाडी—दो किष्कु—चार हाथ प्रमाण माप। अपरनाम दण्ड, धनुष। हपु० ७ ४६

नाथता—पारिव्राज्य सम्बन्धी नवम सूत्रपद। इसमें मुनि इस लोक सबधी स्वामित्व का परित्याग करके जगत् के जीवो के सेव्य हो जाते हैं। मपु० ३९ १६३, १७७

नाथवश—तीर्थंकर आदिनाथ द्वारा स्थापित तथा भरतेश द्वारा वर्द्धित एव पालित वश। अकम्पन इस वश का अग्रणी नृप था। महावीर के पिता राजा सिद्धार्थ इसी वश के थे। मपु० १६ २६०, ४३ १४३, ४४, ३७, ४५ १३४, ७५ ८, पापु० २ १६४

नार्रर्षि—नारद। यह ऋषियो के समान सयमी तथा बालब्रह्मचारी होता है। पापु० १७ ७५, ८०, ८२

नानैकतत्त्वदृक्—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८७

नान्दी—(१) छठा बलभद्र। हपु० ६० २९०

(२) नाटक के आदि में गेय एक मगल गान। इसके पश्चात् ही नाटक के पात्र रगभूमि में प्रवेश करते हैं। मपु० १४ १०७

नान्दीवर्द्धना—रुचकपर्वत के अजनकूट की निवासिनी दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०६

नान्दीश्वरी-पूजा—आष्टाह्निक पूजा। यह कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ़ के अन्तिम आठ दिनो में की जाती है। मपु० ६३ २५८

नाभान्त—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में चौबीसवां नगर। हपु० २२ ९६

नाभि—(१) वर्तमान कल्प के चौदहवें कुलकर। इनके समय में कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट हो गये थे। भोगभूमि की व्यवस्था समाप्त हो गयी थी। उत्पन्न होते समय शिशु की नाभि में नाल दिखाई देने लगा था। उसे काटने का उपाय सुझाने और आज्ञा देने से ये इस नाम से विख्यात हुए। इनकी आयु एक करोड पूर्व और शारीरिक ऊँचाई पाँच सौ पच्चीस धनुष थी। इनके समय में काल के प्रभाव से पुद्गल परमाणुओ में मेघ बनाने की सामर्थ्य उत्पन्न हो गयी थी। मेघ गम्भीर गर्जना के साथ पानी बरसाने लगे थे। कल्पवृक्षो का अभाव हो गया था। इन्होंने प्रजा को सम्बोधित करते हुए कहा था कि पके हुए फल भोग्य है। मसालो के प्रयोग से अन्न आदि को स्वादिष्ट बनाया जा सकता है। ईख का रस पेय है। इन्होने मिट्टी के बर्तन बनाना सिखाया था। पूर्वभव में ये विदेह क्षेत्र मे उच्च कुलीन महापुरुष थे। इन्होंने उस भव मे पात्र दान, व्रताचरण आदि से सम्यग्दर्शन प्राप्त कर भोगभूमि की आयु का बन्ध किया था। क्षायिक सम्यग्दर्शन तथा श्रुतज्ञान का प्राप्ति होने से ये आयु के अन्त मे मरकर भरतक्षेत्र मे उत्पन्न हुए थे। ये प्रजा के जीवन का उपाय जानने से मनु, आर्य-पुरुषो को कुल को भाँति इकट्ठा रहने का उपदेश देने से कुलकर, तथा वश-सस्थापक होने से कुलधर और युग के आदि मे होने से युगादिपुरुष कहे गये है। ये कुलकर प्रसेनजित् के पुत्र थे। इनके देह की कान्ति तपाये हुए स्वर्ण के समान थी। इन्होने मरुदेवी के साथ विवाह किया था। अयोध्या की रचना इस दम्पति के निवास हेतु की गयी थी। वृषभदेव इनके पुत्र थे। मपु० ३ १५२-१५३, १६४-१६७, १९०, २००-२१२ पपु० ३ ८७, ८८, ९५, २१९, हपु० ७ १६९, १७५, पापु० २ १०३-१०८

(२) एक पर्वत। जयकुमार ने म्लेच्छ राजाओ को जीतकर इस पर्वत पर भरतेश की ध्वजा फहरायी थी। श्रद्धावान्, विजयावान्, पद्मवान् और गन्धवान् इन चार वर्तुलाकार विजयार्ध पर्वतों का अपरनाम नाभि-गिरि है। ये पर्वत मूल में एक हजार योजन, मध्य में सात सौ पचास योजन और मस्तक पर पाँच सौ योजन चौडे तथा एक हजार योजन ऊँचे है। मपु० ४५ ५८, हपु० ५ १६१-१६३

नाभिज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

नाभिनन्दन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

नाभिनाल—सन्तान की उत्पत्ति के समय नाभि से सम्बद्ध नाल। इसे शिशु के गर्भाशय से बाहर आने पर काट दिया जाता है। मपु० ३ १६४

नाभिराय—चौदहवें कुलकर। मपु० ३ १५२ दे० नाभि

नाभेय—(१) नाभि के पुत्र तीर्थंकर वृषभदेव। मपु० १ १५, १५ २२२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

नाम—(१) जीवादि तत्त्वो के निरूपण के लिए अभिहित नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव रूप चतुर्विध निक्षेपो में प्रथम निक्षेप। हपु० २ १०८, १७ १३५

(२) पदगत गान्धर्व की एक विधि। हपु० १९ १४९

नामकर्म—प्राणियो के आकारो का सृष्टिकर्ता कर्म। जीव इसीसे विविध नामो को प्राप्त करते है। जीवो के शारीरिक अगो की रचना यही कर्म करता है। इसकी उत्कृष्ट स्थिति बीस कोडा-कोडी सागर तथा जघन्य स्थिति आठ मुहूर्त तक की होती है। मपु० १५ ८७, हपु० ३ ९७, ५८ २१७, वीवच० १६ १५२, १५७-१६०

नामकर्मक्रिया—गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओ में सातवी क्रिया। इसमे जिनेन्द्र के एक हजार आठ नामो में शिशु का कोई एक अन्वयवृद्धिकारी नामकरण होता है। क्रिया शिशु के जन्म-दिन से बारह दिन के बाद जो दिन माता-पिता और पुत्र के अनुकूल हो उसी दिन की जाती है। इस क्रिया में अपने वैभव के अनुसार अर्हन्त देव और ऋषियों की पूजा की जाती है। मपु० ३८.५५, ८७-८९

नामसत्य—दस प्रकार के सत्य मे प्रथम सत्य-व्यवहार चलाने के लिए इन्द्र आदि नाम रख लेना। हपु० १० ९८

नारक—नरक के जीव। ये विकलाग, हुण्डक-सस्थानी, नपुसक, दुर्गन्धित, दुर्वर्ण, दु-स्वर, दु स्पर्श, दुर्भग, कृष्ण और रूक्ष होते हैं। मपु० १० ९५-९६ दे० नरक

नारद—ये नारायणो के समय में होते हैं। ये अतिरुद्र होते हैं और दूसरो को रुलाया करते हैं। ये कलह और युद्ध के प्रेमी होते हैं। ये एक स्थान का सन्देश दूसरे स्थान तक पहुँचाने में सिद्धहस्त होते

हैं। ये जटा मुकुट, कमण्डलु, यज्ञोपवीत, काषायवस्त्र और छत्र धारण करते हैं। ये ब्रह्मचारी होते हैं। ये धर्म में रत होते हुए भी हिंसा-दोष के कारण नरकगामी होते हैं। पर जिनेन्द्र भक्त और भव्य होने के कारण इन्हें परम्परा से मुक्ति मिलती है। वर्तमान काल के नौ नारद ये है—भीम, महाभीम, रुद्र, महारुद्र, काल, महाकाल, चतुर्मुख, नरवक्त्र और उन्मुख। पुराणो मे नारद नाम के कुछ व्यक्तियो की सूचनाएँ निम्न प्रकार है—

(१) वसुदेव और रानी सोमश्री का ज्येष्ठ पुत्र, मरुदेव का सहोदर। हपु० ४८ ५७

(२) आगामी बाईसवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६.४७४

(३) गानविद्या का एक आचार्य। पपु० ३ १७९, हपु० १९ १४०

(४) भरतक्षेत्र मे धवलदेश की स्वस्तिकावती नगरी के निवासी क्षीरकदम्बक नामक विद्वान् ब्राह्मण अध्यापक का शिष्य। यह इसी नगरी के राजा विश्वावसु के पुत्र वसु और गुरु-पुत्र पर्वत का सहपाठी था। "अजैर्होतव्यम्" का अर्थ निरूपण करने मे इसका पर्वत के साथ विवाद हो गया था। इसका कथन था कि जिसमें अकुर उत्पन्न करने की शक्ति नष्ट हो गयी है ऐसा तीन वर्ष पुराना "जौ" अज है जबकि पर्वत "अज" का अर्थ "पशु" बताता था। पर्वत के विवाद और शर्त जानकर पर्वत की माँ राजा वसु के पास गयी तथा उसके उसने पर्वत की विजय के लिए उसे सहमत कर लिया। राजा वसु ने पर्वत को जैसे ही विजयी घोषित किया कि उसका सिंहासन महागर्त मे निमग्न हो गया। इससे प्रभावित होकर प्रजा ने नारद को 'गिरितट' नाम का नगर प्रदान किया। अन्त में यह देह त्याग कर सर्वार्थसिद्धि गया। मपु० ६७ २५६-२५९, ३२९-३३२, ४१४-४१७, ४२६, ४३३, ४४४, ४७३, पपु० ११ १३-७४, हपु० १७ ३७-१६३

(५) कृष्ण के समय का नारद। यह उछवृत्ति से रहनेवाले सुमित्र और सोमयशा का पुत्र था। इसके माता-पिता उछवृत्ति से भोजन-सामग्री एकत्र करने के लिए चले गये और इसे एक वृक्ष के नीचे छोड गये। यहाँ से जृम्भक नामक देव इसे वैताढ्य पर्वत पर ले गया और मणिकाचन गुहा में दिव्य आहार से उसने इसका लालन-पालन किया। आठ वर्ष की अवस्था में इसे देवो ने आकाशगामिनी विद्या दी। इसने सयमासयम धारण किया। काम-विजेता होकर भी यह काम के समान भ्रमणशील था। यह निर्लोभी, निष्कषायी और चरम-शरीरी था। हपु० ४२ १६-२४ यह अपराजित की सभा में आया था। वह नर्तकियो के नृत्य मे लीन था, इसलिए इसे नही देख सका। क्रुद्ध होकर यह राजा दमितारि के पास आया। उसे उन नतकियो को लाने के लिए प्रेरित किया। अपराजित अधिक शक्तिशाली था इसलिए उसने दमितारि के सारे प्रयत्न विफल कर दिये अन्त में दमितारि के द्वारा छोडे हुए चक्र से अपराजित ने दमितारि को मार दिया। पापु० ४ २५५-२७५ इसी ने पद्मनाभ के द्वारा द्रौपदी का हरण कराया था। इसमें भी पद्मनाभ सफल नही हो सका था। पापु० २१.१०

(६) एक देव। यह कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा का पूर्वभव का जीव था। हपु० ७ ७७-८१

नारसिंह—कृष्ण का पक्षधर एक राजा। हपु० ५१.३

नारायण—(१) तीर्थंकर कुन्थुनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३१-५३३

(२) तीर्थंकर शान्तिनाथ का पुत्र। हपु० ४५ १८-१९, पापु० ६ २

(३) राक्षसास्त्र का ध्वसक एक अस्त्र। हपु० ५२ ५४

(४) बलभद्रो के नौ भाई। ये है—त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयभू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, पुण्डरीक, दत्त, लक्ष्मण और कृष्ण। पापु० २० २२७ टिप्पणी, हपु० ६० २८८-२८९ दे० प्रत्येक का नाम

नारिकेलवन—दक्षिण में सिंहल के निकट का एक वन। यहाँ प्रधानता से नारियल के पेड उगते है। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० ३० १३-१४

नारी—चौदह महानदियो में एक महानदी। यह महापुण्डरीक पर्वत से निकलती है। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १२४, १३४

(२) वृषभदेव के समय मे कन्या और पुत्र दोनो की स्थिति समान थी। दोनो को शिक्षा-दीक्षा के समान अवसर थे। नारी को घूमने-फिरने की समान स्वतन्त्रता थी। दुराचारी पुरुषो की तरह दुराचारिणी स्त्रियाँ भी समाज में निन्द्य मानी जाती थी। मपु० ४ १३०-१४०, ६ ८३, १०२, १६९, १६ ९८, ४३.२९

नारीकूट—रुक्मि-कुलाचल का चौथा कूट। हपु० ५ १०३

नालिका—पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश की सेना इस नदी पर आयी थी। मपु० २९ ६१

नासारिक—भरतक्षेत्र के पश्चिमी आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ का शासक भरतेश का छोटा भाई था जिसने भरतेश की अधीनता स्वीकार न करके दीक्षा ग्रहण कर ली थी। हपु० ११ ७२

नि कषाय—भावी चौदहवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७९, हपु० ६० ५६० दे० तीर्थंकर

नि काक्षित—सम्यग्दर्शन के आठ अगो में दूसरा अग। इसमे इस लोक और परलोक सम्बन्धी भोगो की आकाक्षाओ का त्याग किया जाता है। मपु० ६३ ३१४, वीवच० ६ ६४

नि क्राम—तालगत गान्धर्व के बाईस भेदो में एक भेद। हपु० १९ १५०

नि कुन्दरी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक गहरी नदी। भरतेश की सेना ने इसे घेर लिया था। मपु० २९ ६१

नि कृतिवाक्य—सत्यप्रवाद नामक छठे पूर्व में वर्णित बारह प्रकार की भाषा का आठवाँ भेद। यह ऐसी भाषा है जिससे दूसरो को प्रवचित किया जाता है। हपु० १०.९५

निकाचित-कर्म—कर्मों का एक भेद। ऐसे कर्म जिनका फल नियम से भोगना ही पडता है। इनका अन्य प्रकृति रूप सक्रमण या उत्कर्पण नही किया जा सकता। पपु० ७२ ९७

निकुंज—(१) एक वन। इस वन मे रानी श्रीकामा ने अपने पति राजा कुलकर को विष देकर मारा था। पपु० ८५ ६३

(२) पर्वत । यहाँ मुनि मृदुमति का जीव स्वर्ग से च्युत होकर हाथी की पर्याय में आया था । पपु० ८५ १५१

निकोत—अनन्त दुःखों का सागर निगोद । नास्तिक, दुराचारी, दुर्बुद्धि विषयासक्त और तीव्र मिथ्यात्वी जीव यहाँ उत्पन्न होते हैं और एक श्वास में अठारह बार होनेवाले जन्म-मरण के महादुःख भोगते हैं । वीवच० १७ ७८-८०

निक्षेप—द्रव्यों के निर्णय के चार उपायों में एक उपाय । मपु० २ १०१, ६२ २८

निक्षेपादानसमिति—मुनि की पाँच समितियों में चौथी समिति । इसमें वस्तुओं को देखकर रखा और उठाया जाता है । हपु० २ १२५

निक्षेपाधिकरण—अजीवाधिकरण आस्रव के भेदों में एक भेद । यह चार प्रकार का होता है—सहसानिक्षेपाधिकरण, दुष्प्रमृष्टनिक्षेपाधिकरण, अनाभोगनिक्षेपाधिकरण और अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण । इनमें शीघ्रता से किसी वस्तु को रख देना सहसानिक्षेप, दुष्टतापूर्वक साफ की हुई भूमि में किसी वस्तु को रखना दुष्प्रमृष्टनिक्षेप, अव्यवस्था के साथ चाहे जहाँ किसी वस्तु को रख देना अनाभोगनिक्षेप और बिना देखी-शोधी भूमि में किसी वस्तु को रख देना अप्रत्यवेक्षितनिक्षेप है । हपु० ५८ ८४-८८

निक्षेपिणी—(१) अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने अन्य अनेक विद्याओं के साथ यह विद्या भी सिद्ध की थी । मपु० ६२ ३९१-४००

(२) चतुर्विध कथाओं में एक प्रकार की कथा । इसमें अपने पक्ष का प्रतिपादन किया जाता है । पपु० १०६ ९२

निगड—बेड़ी । सैन्य सामग्री का एक अंग । मपु० ४२ ७६-७८

निगलनिदर्शन—जीव की कर्मबन्धन की स्थिति को बतलाने के लिए बेड़ी से बँधे हुए व्यक्ति की उपमा । जिस प्रकार बेड़ी से बँधा हुआ व्यक्ति अपने इष्ट स्थान पर नहीं पहुँच सकता उसी प्रकार कर्मबद्ध जीव भी अपने इष्ट स्थान पर नहीं पहुँच सकता । मपु० ४२ ७६-७८

निगोत—एकेन्द्रिय जीवों का जन्मस्थान-निगोद । यहाँ खौलते हुए जल में उठने वाली खलबलाहट के समान जीवों का अनेक बार जन्म-मरण होता है । मपु० १० ७, ३८ १८

निगोद—(१) नारकियों के उत्पत्ति स्थान । हपु० ४ ३४७-३५३

(२) एकेन्द्रिय जीवों का उत्पत्ति स्थान । इसमें पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति कायों के जीव उत्पन्न होते हैं । ये जीव अनेक कुयोनियों तथा कुलकोटियों में भ्रमण करते हैं । इसके दो भेद हैं—नित्य-निगोद और इतरनिगोद । हपु० १८ ५४-५७

निचुरा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी । भरतेश की सेना अरुणा नदी से चलकर यहाँ आयी थी । मपु० २९ ५०

नित्य—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ४४, २५ १३०

नित्यनिगोद—निगोद के दो भेदों में प्रथम भेद । यहाँ उत्पन्न जीवों की सात लाख कुयोनियाँ होती हैं । हपु० १८ ५७

नित्यमह—चतुर्विध अर्हत्पूजा का प्रथम भेद । इसका अपर नाम सदार्चन है । इस पूजा में प्रतिदिन अपने घर से गन्ध, पुष्प और अक्षत आदि लेकर जिनालय में जिनेन्द्र की पूजा करना, भक्तिपूर्वक अर्हन्तदेव की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवाना और मन्दिर का निर्माण कराना, दानपत्र लिखकर ग्राम, खेत आदि का दान देना तथा शक्ति के अनुसार नित्य दान देते हुए महामुनियों की पूजा करना सम्मिलित है । मपु० ३८ २६-२९

नित्यवाहिनी—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी की पचास नगरियों में एक नगरी । मपु० १९ ५२

नित्यालोक—धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र में स्थित विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर । मपु० ७१ २४९-५०, हपु० ३३ १३१

(२) इस नाम के नगर का इसी नाम का एक नृप । इसकी पुत्री रत्नावली को दशानन ने विवाहा था । पपु० ९ १०२-१०३

(२) रुचकगिरि के दक्षिण भाग का एक कूट । यह कनकचित्रा देवी की निवासभूमि है । हपु० ५ ७१९

नित्योद्योत—रुचकगिरि की उत्तर दिशा का एक कूट । यह सूत्रामणि देवी की निवासभूमि है । हपु० ५ ७२०

नित्योद्योतिनी—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की पचास नगरियों में छियालीसवीं नगरी । मपु० १९ ५२

निदाघ—तीसरी वालुकाप्रभा पृथिवी के पंचम प्रस्तार का इन्द्रक बिल । हपु० ४ १२२

निदान—चार प्रकार के आर्त्तध्यान में तीसरे प्रकार का आर्त्तध्यान । यह भोगों की आकांक्षा से होता है । दूसरे पुरुषों की भोगोपभोग की सामग्री देखने से संक्लिष्ट चित्तवाले जीव के यह ध्यान होता है । मपु० २१ ३३

(२) सल्लेखना के पाँच अतिचारों में तीसरा अतिचार । इसमें आगामी भोगों की आकांक्षा होती है । हपु० ५८ १८४

निदानप्रत्यय—अनुपलब्ध इष्ट पदार्थ के चिन्तन से हुआ आर्त्तध्यान । मपु० २१ ३४

निधत्तानिधत्तक—अग्रायणीपूर्व की पंचम वस्तु के बीस प्राभृतों में कर्मप्रकृति नामक चतुर्थ प्राभृत के चौबीस योगद्वारों में बीसवाँ योगद्वार । हपु० १० ८१-८५ दे० अग्रायणीयपूर्व

निधि—(१) समवसरण के गोपुरों के बाहर विद्यमान शंख आदि नौ निधियाँ । मपु० २२ १४६-१४७

(२) चक्रवर्ती की नौ निधियाँ—काल, महाकाल, नस्सर्प, पाण्डुक, पद्म, माणव, पिंग, शंख और सर्वरत्न पद । जो मुनि अपना घर छोड़कर निर्मम हो जाते हैं उनकी दूर से ये निधियाँ सेवा करती हैं । मपु० ३७ ७३-७४, ३९ १८५, हपु० ११ ११०-१११, वीवच० ५ ४५, ५७-५८

निधीश्वर—नन्दीश्वर-द्वीप का कुबेर नामक देव । मपु० ७२ ३३

निपुणमति—सिंहपुर नगर की रानी रामदत्ता की धाय । इसे श्रीभूति पुरोहित के यहाँ से सुमित्रदत्त के रत्न लाने के लिए भेजा गया था । हपु० २७ २०-३८

निबन्ध—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी के सौ पुत्रों में इकहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०१

निबन्धन—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु की बीस प्राभृतो में कर्म प्रकृति नामक चतुर्थ प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में सातवाँ योगद्वार। हपु० १० ८२ दे० अग्रायणीयपूर्व

निमग्नजला—विजयार्घ पर्वत की तमिस्रा गुहा में विद्यमान एक नदी। मपु० ३२ २१, हपु० ११ २६

निमित्त—अन्तरिक्ष, भौम, अग, स्वर, व्यजन, लक्षण, छिन्न और स्वप्न ये आठ निमित्त होते है। इनके द्वारा भावी शुभाशुभ जाना जाता है। मपु० ६२ १८०-१८१, हपु० १० ११७

निमित्तशास्त्र—निमित्तो का फल बतानेवाला शास्त्र। भरतेश इस शास्त्र के ज्ञाता थे। मपु० ४१ १४७-१४८

निमिष—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो मे चौतीसवाँ नगर। मपु० १९ ८३

नियम—मधु, मद्य, मास, जुआ, रात्रिभोजन और वेश्या-सगम से विरति। नियमवान् जन तपस्वी कहलाते हैं। पपु० १४ २०२, २४२-२४३, हपु० ५८ १५७

नियमदत्त—कुमुदावती नगरी का निवासी एक वणिक्। राजपुरोहित ने इसका धन छिपा लिया था। राजा की आज्ञा से रानी ने जुए में पुरोहित को हराकर उसकी अँगूठी जीत ली और अगूठी को पुरोहित की पत्नी के पास भेजकर तथा इसका धन मँगाकर इसे दिया था। अन्त में यह तपश्चरणपूर्वक मरकर नागकुमारो का राजा धरणेन्द्र हुआ। पपु० ५ ३७-४२, ४६

नियमितेन्द्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

नियुत—चौरासी लाख नियुताग प्रमाण काल। हपु० ७ २६, दे० काल

नियुतांग—चौरासी लाख पूर्व प्रमाण काल। हपु० ७ २६ दे० काल

निरंजन—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५ ११४

निरंबर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

निरक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४४

निरनुकप—पलाशकूट नगर के यक्षदत्त गृहस्थ के ज्येष्ठ पुत्र यक्ष का अपर नाम। मपु० ७१ २७८-२८०

निरस्तैना—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निराबाध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

निराशंस—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

निरास्रव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निराहार—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निरीति—ईतियो का अभाव। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषण, शलभ, शुक और निकटवर्ती शत्रु—ये छ. ईतियाँ हैं। मपु० १३ १६९

निरुक्तवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०९

निरुक्तोक्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. ११४

निरुत्तर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७३

निरुत्सुक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७२

निरुद्ध—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८

(२) पाँचवी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार में तम इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा में विद्यमान महानरक। हपु० ४ १५६

निरुद्धव—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५.१८५

निरुपप्रव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३८

निरुपप्लव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १३९

निरोध—चौथी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार में आर इन्द्रकबिल की दक्षिण दिशा में विद्यमान महानरक। हपु० ४ १५५

निर्गुण—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १३६

निर्ग्रन्थ—निष्परिग्रही, शरीर से नि स्पृही, करपात्री मुनि। ये तप का साधन मानकर देह की स्थिति के लिए एक, दो उपवास के बाद भिक्षा के समय याचना के बिना ही शास्त्रोक्त विधि के अनुसार आहार ग्रहण करते है। रक्षक एव घातक दोनो के प्रति ये समभाव रखते हैं। ये सदैव ज्ञान और ध्यान में लीन रहते हैं। मपु० ७६. ४०२-४०९, पपु० ३५ ११४-११५ ये पाँच प्रकार के होते है—पुलाक, वकुश, कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक। इनमें पुलाक साधु उत्तरगुणो की भावना से रहित होते हैं। मूल व्रतो का भी वे पूर्णत. पालन नही करते। बकुश मूलव्रतो का तो अखण्ड रूप से पालन करते हैं परन्तु शरीर और उपकरणो को साफ, सुन्दर रखने मे लीन रहते है। इनका परिवार नियत नही होता है। इनमे जो कषाय रहित हैं वे प्रतिसेवनाकुशील और जिनके मात्र सज्वलन का उदय रह गया है वे कषायकुशील होते हैं। जिनके जल-रेखा के समान कर्मों का उदय अप्रकट है तथा जिन्हें एक मुहूर्त के बाद ही केवलज्ञान उत्पन्न होनेवाला है वे निर्ग्रन्थ होते हैं। जिनके घातियाकर्म नष्ट हो गये है वे अर्हन्त स्नातक कहलाते हैं। हपु० ६४ ५८-६४

निर्ग्रन्थेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०४

निर्घात—महाविद्या और महापराक्रमधारी एक विद्याधर। अशनिवेग ने उसे लका का शासक नियुक्त किया था। अलकारपुर के राजा सुकेश के पुत्र माली विद्याधर ने उसे मारकर लका में अपने वश का राज्य पुन प्राप्त किया था। पपु० ६ ५०५, ५३८, ५६०

निर्जरा—कर्मों का क्षय हो जाना। यह दो प्रकार की होती है—सविपाक और अविपाक। इनमें अपने समय पर कर्मों का झड़ना सविपाक और

तप के द्वारा पूर्वोपार्जित कर्मों का क्षय करना अविपाक-निर्जरा है। मपु० १८, वीवच० ११.८१-८७

निर्जरानुप्रेक्षा—बारह भावनाओं में नौवीं भावना। इसमें कर्मों की निर्जरा किस प्रकार से हो इसका चिन्तन किया जाता है। मपु० ११ १०५-१०९, पपु० १४ २३८-२३९, पापु० २५ १०५-१०७, वीवच० ११ ८१-८७ दे० निर्जरा

निर्द्वन्द्व—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३८

निर्धूतागा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निर्नामक—हस्तिनापुर के राजा गंगदेव और रानी नन्दयशा का सातवाँ पुत्र। रानी ने इसे उत्पन्न होते ही त्याग दिया था। रेवती धाय के द्वारा इसका पालन-पोषण हुआ। इसी नगर के एक सेठ का पुत्र शख इसका मित्र था। शख एव अन्य राजकुमारो के साथ इसे भोजन करते हुए देखकर इसकी माँ ने इसे लात मारकर अपमानित किया। इस अपमान से दु खी होकर शख के साथ वह वन चला गया। पूर्वभव में रसोइया की पर्याय में इसने सुधर्म मुनि को मारा था। यक्षलिक की पर्याय में इसने सर्पिणी को सताया था। वह सर्पिणी ही इस पर्याय मे नन्दयशा हुई थी। इसी कारण यह अपनी माँ के द्वेष का कारण बना। अपने पूर्वभव को द्रुमषेण मुनि से ज्ञात कर इसने सिंह-निष्क्रीडित नामक कठिन तप किया तथा आगामी भव में नारायण होने का निदान बाँधा। अन्त में मरकर यह कस का शत्रु कृष्ण हुआ। मपु० ७१ २९८, हपु० ३३ १४१-१६६

निर्नामा—विदेहक्षेत्र में गन्धिल देश के पाटली ग्राम में उत्पन्न वैश्य नागदत्त और उसकी स्त्री सुमति की छोटी पुत्री। यह वज्रजघ की पत्नी श्रीमती के पूर्वभव का जीव थी। मपु० ६ १२६-१३०

निर्निमेष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३९

निर्मद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३८

निर्मल—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

(२) वृषभदेव के एक गणधर। मपु० ४३ ६०

(३) आगामी सोलहवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७९

निर्मोह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३८

निर्लेप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२८

निर्व्रजशाद्वला—दिति और अदिति द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को प्रदत्त सोलह निकायों की विद्याओं में से एक विद्या। हपु० २२ ६३

निर्वर्तना—अजीवाधिकरण आस्रव का एक भेद। इसके दो भेद हैं—मूलगुण निर्वर्तना और उत्तरगुण निर्वर्तना। इनमें शरीर, वचन, मन तथा श्वासोच्छ्वास आदि की रचना मूलगुण निर्वर्तना है और काष्ठ, पाषाण, मिट्टी आदि से चित्र आदि का बनाना उत्तरगुण निर्वर्तना है। हपु० ५८ ८६-८७

निर्वाण—(१) मोक्ष। समस्त कर्मों के क्षय से प्राप्य, शाश्वत सुख। मपु० ७२ २७०, हपु० १ १२५, वीवच० ५ ७

(२) प्रथम अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओं में ग्यारहवीं वस्तु। हपु० १० ७७-८०, दे० अग्रायणीयपूर्व

निर्वाणकल्याणक—तीर्थंकरो का निर्वाण-महोत्सव। चारों निकायों के देवेन्द्र अपने-अपने चिह्नों से तीर्थंकरों का निर्वाण ज्ञात करके अपने परिवार के साथ आते हैं और उनकी सोत्साह पूजा करते हैं। तीर्थंकरो की देह को निर्वाण का साधक मानकर उसे पालकी में विराजमान करते हैं और सुगन्धित द्रव्यों से पूजकर उसे नमस्कार करते हैं। इसके पश्चात् अग्निकुमार देवों के मुकुट से उत्पन्न हुई अग्नि से उसे भस्म कर देते हैं। देव उस भस्म को निर्वाण का साधक मानकर अपने मस्तक, नेत्र, बाहु, हृदय और फिर सर्वांग में लगाते हैं तथा उस पवित्र भूमितल को निर्वाणक्षेत्र घोषित करते हैं। वीवच० १९ २३९-२४६

निर्वाणशिला—सुरासुरो से वन्दित सिद्ध-शिला। अनेक शीलधारी मुक्तात्मा इसी शिला से सिद्ध हुए हैं। अनन्तवीर्य योगीन्द्र ने इसी शिला के सम्बन्ध में कहा था कि जो इसे उठायेगा वही रावण को मार सकेगा। लक्ष्मण ने इसे उठाया था। पपु० ४८ १८५-२१४

निर्विघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

निर्विचिकित्सा—सम्यग्दर्शन का तीसरा अग। इसमें शारीरिक मैल से मलिन किन्तु गुणशाली योगियों के प्रति मन, वचन और काय से ग्लानि का त्याग किया जाता है। शरीर को अत्यन्त अशुचि मानकर उसमें शुचित्व के मिथ्या सकल्प को छोड दिया जाता है। मपु० ६३ ३१५-३१६, हपु० १८ १६५, वीवच० ६ ६५

निर्विन्ध्या—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ६२

निर्वृति—(१) विद्याधर राजाओं के सोलह निकायो की विद्याओं में से एक विद्या। हपु० २२ ६५

(२) निर्वाण। मपु० २ १४०, पपु० ४ १३०

(३) क्षेमपुर नगर के सेठ सुभद्र की स्त्री, क्षेमसुन्दरी की जननी। मपु० ७५ ४१०

निर्वृत्त—सगीत सम्बन्धी सचारी पद के छ अलकारो में प्रथम अलकार। मपु० २४ १७

निर्वृत्ति—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित सिद्धायतनो (जिनमन्दिरो) की रक्षिका एक देवी। हपु० ५ ३६३

(२) द्रव्येन्द्रिय का एक रूप। इसका दूसरा रूप उपकरण है। हपु० १८ ८५

(३) एक आर्यिका। अरिंजयपुर के राजा अरिंजय और उसकी रानी अजितसेना की पुत्री प्रीतिमती ने उसके पास दीक्षा ली थी। हपु० ३४ ३१

(४) तीर्थंकर पद्मप्रभ की शिविका। मपु० ५२ ५१

निर्वेद—शरीर, भोग और ससार से विरक्ति। ससार नाशवान् है, लक्ष्मी चचल है, यौवन, देह, नीरोगता और ऐश्वर्य अशाश्वत हैं, ऐसे भाव निर्वेद में उत्पन्न होते हैं। मपु० १० १५७, १७ ११-१३

निर्वेदिनी-कथा—भोगों से वैराग्य उत्पन्न करनेवाली कथा। मपु० १ १३५-१३६, पपु० १०६ ९३

निःशंकिता—सम्यग्दर्शन का प्रथम अंग। इसमें जिन भाषित धर्म के सूक्ष्म तत्त्व-चिन्तन में आप्त पुरुषों के वचन अन्यथा नहीं हो सकते ऐसा विश्वास होता है। मपु० ६३ ३१२-३१३, वीवच ६ ६३

निशुम्भ—चौथा प्रतिनारायण। यह पुण्डरीक के साथ युद्ध करते हुए उसके द्वारा चलाये चक्र से निष्प्राण होकर नरक में गया। दूरवर्ती पूर्वभव में यह राजसिंह मल्ल था तथा यहीं राजसिंह हस्तिनापुर में मधुक्रीड प्रसिद्ध राजा हुआ। मपु० ६१ ५९, ७४-७५, ६५.१८३-१८४ पपु० २० २४४, हपु० ६० २९१, वीवच० १८ ११४

निश्चयकाल—लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर रत्नों की राशि के समान निष्क्रिय स्वरूप से स्थित कालाणु। हपु० ७ ३, ७-८, वीवच० १६ १३५-१३६

निश्चयसम्यक्चारित्र—अन्तरंग और बहिरंग सभी प्रकार के संकल्पों को त्याग कर अपनी आत्मा के स्वरूप में विचरण करना। वीवच० १८ २९

निश्चयसम्यग्ज्ञान—स्वसंवेदन ज्ञान के द्वारा अपने ही आत्मा का परमात्मा रूप से परिज्ञान। वीवच० १८ २८

निश्चल—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

निषंग—तरकश। सैन्य सामग्री का एक अंग। मपु० १६ ४२

निषंगी—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पचासवाँ पुत्र। पापु० ८ १९९

निषद्यका—अंगबाह्यश्रुत का चौदहवाँ भेद। इस प्रकीर्णक में प्रायश्चित्त का वर्णन किया गया। हपु० २ १०५, १० १३८, दे० अंगबाह्यश्रुत

निषद्याक्रिया—उपासकाध्ययनांग में वर्णित गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में नवीं क्रिया। इस क्रिया में मांगलिक द्रव्यों के पास रखे हुए आसन पर बालक को बैठाया जाता है और उसकी उत्तरोत्तर दिव्य-आसनों पर बैठने की योग्यता की कामना की जाती है। मपु० ३८ ५५, ९३-९४

निषद्यापरीषह—तपस्या काल में एक आसन से स्थिर रहने से उत्पन्न वेदना को सहन करना। मपु० ३६ १२०

निषद्या-मंत्र—निषद्याक्रिया के समय पढ़े जानेवाले मंत्र। ये मंत्र हैं—दिव्यसिंहासनभागी भव, विजयसिंहासनभागी भव, परमसिंहासनभागी भव। मपु० ४० १४०

निषध—(१) वसुदेव का एक पुत्र। हपु० ४८.६६

(२) निषध देश का अर्धरथ नृप। मपु० ६३ १९३, हपु० ५० ८३, १२८

(३) जम्बूद्वीप के छः कुलाचलों में तीसरा कुलाचल। इस पर सूर्योदय और सूर्यास्त होते हैं। इसका विस्तार सोलह हजार आठ सौ बयालीस योजन तथा एक योजन के उन्नीस भागों में दो भाग प्रमाण, ऊँचाई चार सौ योजन और गहराई सौ योजन है। इसके नौ कूटों के नाम हैं—१ सिद्धायतन कूट, २. निषध कूट, ३ हरिवर्ष कूट, ४. पूर्वविदेहकूट, ५ ह्रीकूट, ६ धृतिकूट, ७ सीतोदाकूट, ८ विदेह कूट, ९. रुचककूट। इनकी ऊँचाई और मूल की चौड़ाई सौ योजन, बीच की चौड़ाई पचहत्तर योजन और ऊर्ध्व भाग की चौड़ाई पचास योजन होती है। मपु० १२ १३८, ३३ ८०, ३६ ४८, ६३ १९३, पपु० १०५ १५७-१५८, हपु० ५ १५, ८०-९०, १८७-१८८

(४) निषध पर्वत से उत्तर की ओर नदी के मध्य स्थित सातवाँ ह्रद। मपु० ६३ १९८, हपु० ५ १९६

(५) नन्दन वन का एक कूट। हपु० ५ ३२९

(६) निषधाचल के नौ कूटों में दूसरा कूट। हपु० ५ ८८

निषाद—(१) संगीत के सात स्वरों में एक स्वर। पपु० १७ २७७, हपु० १९ १५३

(२) भील। हपु० ३५ ६

निषादजा—संगीत के षड्ज ग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली एक जाति। हपु० १९ १७४

निषादिनी—संगीत की आठ जातियों में पाँचवी जाति। पपु० २४ १२

निष्कंप—समुद्रविजय के भाई विजय का पुत्र। हपु० ४८ ४८

निष्कलंक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निष्कलंकात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

निष्कल—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

निष्कषाय—आगामी उत्सर्पिणी काल के चौदहवें तीर्थंकर। हपु० ६०. ५६०

निष्किंचन—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०४

निष्कुन्दरी—भरतक्षेत्र की एक नदी। भरतेश ने सिन्धु नदी को पार करके इसे पार किया था। मपु० २९ ६१

निष्क्रमण—वैराग्यवृद्धिपूर्वक दीक्षा के लिए तीर्थंकरों के घर से निकलने तथा दीक्षा धारण करने पर होनेवाला देवकृत विशिष्ट नृत्य। इसमें देवियाँ तीर्थंकरों के निष्क्रमण का प्रदर्शन करती हैं। इसका अपरनाम निष्क्रान्ति कल्याणक है। मपु० १४ १३४, ४८ ३७, पपु० ३.२७३, २७८, हपु० २ ५५

निष्क्रान्ति—गर्भान्वय की तिरेपन क्रियाओं में अड़तालीसवीं क्रिया। इसमें तीर्थंकर संसार से विरक्त होनेपर गृहस्थ का दायित्व अपने पुत्र को सौंपते हैं। इस समय लौकान्तिक देव आते हैं। इन्हें पालकी में बैठाकर पहले कुछ देर तो मनुष्य फिर देव वन में ले जाते हैं। दीक्षित होने पर देव उनकी पूजा करते हैं। मपु० ३८ ६३, २९६-२९४

निष्काम—तालगत गान्धर्व का एक नाम। हपु० १९ १५०

निष्क्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३९

निष्टप्तकनकच्छाय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९९

निष्परिग्रह—परिग्रह-विहीनता। यह अहिंसा आदि पाँच सनातन धर्मों/महाव्रतों में पाँचवाँ धर्म/महाव्रत है। इसमें शरीर से भी ममत्व नहीं रहता। मपु० ५ २३, ३४, १६८-१७३

निष्पावक—मोठ। आदिपुराण में वर्णित एक अन्न। मपु० ३ १८७

नि सपत्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८६

निसर्ग—अजीवाधिकरण-आस्रव का एक भेद। इसके तीन भेद होते हैं—वाङ्निसर्ग, मनोनिसर्ग और कायनिसर्ग। इनमें वचन की स्वच्छन्द प्रवृत्ति वाङ्निसर्ग, मन की स्वच्छन्द प्रवृत्ति मनोनिसर्ग और काय की स्वच्छन्द प्रवृत्ति कायनिसर्ग है। हपु० ५८ ८६, ९०

निसर्गक्रिया—आस्रव बढानेवाली पच्चीस क्रियाओं में ग्यारहवीं क्रिया। इस क्रिया से पापोत्पादक वृत्तियों को अच्छी तरह समझ लिया जाता है। हपु० ५८ ७५

निस्तारकमन्त्र—कष्ट निवारक मन्त्र। निम्न मन्त्र निस्तारक मन्त्र हैं—सत्यजाताय स्वाहा, अर्हज्जाताय स्वाहा, षट्कर्मणे स्वाहा, ग्रामपतये स्वाहा, अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा, स्नातकाय स्वाहा, श्रावकाय स्वाहा, देवब्राह्मणाय स्वाहा, सुब्राह्मणाय स्वाहा, अनुपमाय स्वाहा, सम्यग्दृष्टे-सम्यग्दृष्टे, निधिपते-निधिपते, वैश्रवण-वैश्रवण स्वाहा, सेवाफल षट्-परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु। मपु० ४० ३२-३७

निसृष्ट—चौथी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार सम्बन्धी आर इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५५

निसृष्टार्थ—सन्देशवाहक सर्वश्रेष्ठ दूत। यह स्वय विचार करके राजा का सन्देश यथोचित रूप से सम्बद्ध व्यक्ति तक पहुँचाता है। कार्य में सफलता प्राप्त करना उसका उद्देश्य होता है। मपु० ४३ २०२

निस्संगत्वात्मभावना—गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओं में तीसवीं क्रिया। इसमें अपना सम्पूर्ण भार किसी सुयोग्य शिष्य को सौंपकर साधु अकेले विहार करते हुए अपनी आत्मा को सब प्रकार के परिग्रह से रहित मानता है। ऐसा साधु प्रवचन आदि में भी राग छोडकर निर्ममत्व की भावना से एकाग्रबुद्धि होता है और चारित्रिक शुद्धि प्राप्त करता है। मपु० ३८ ५९, १७५-१७७

निहतशत्रु—यदुवशी एक राजा। यह शतधनु के बाद हुआ था। हपु० १८ २१

निह्नव—ज्ञानावरण और दर्शनावरण का एक आस्रव। इससे आत्मा के ज्ञान और दर्शन पर आवरण छा जाता है। हपु० ५८ ९२

नीरजस्क—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

नीरा—एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ होकर विन्ध्याचल पर गयी थी। मपु० ३० ५६

नील—(१) छठी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार सम्बन्धी हिम इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५७

(२) शटकामुख नगर के अधिपति विद्याधर नीलवान् का पुत्र। यह नीलाजना का भाई था। इसके एक पुत्र हुआ था जिसका नाम नीलकठ था। हपु० २३ १-७

(३) जम्बूद्वीप का चौथा कुलाचल। मपु० ५ १०९, ३६ ४८, ६३ १९३, पपु० १०५ १५७-१५८, हपु० ५.१५

(४) नील पर्वत। यह वैडूर्यमणिमय है। विदेहक्षेत्र के आगे स्थित है। इसके नौ कूट हैं। इनके नाम हैं—१ सिद्धायतनकूट, २ नीलकूट, ३ पूर्वविदेहकूट, ४ सीताकूट, ५ कीर्तिकूट, ६ नरकान्तककूट, ७ अपरविदेहकूट, ८ रम्यककूट, और ९ अपदर्शनकूट। इनकी ऊँचाई और मूल की चौडाई सौ योजन, बीच की चौडाई पचहत्तर योजन और ऊर्ध्व भाग की चौडाई पचास योजन है। मपु० ४ ५१-५२, हपु० ५ ९९-१०१

(५) एक वन। यह तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ की दीक्षाभूमि थी। मपु० ६७.४१

(६) राम का पक्षधर एक विद्याधर। यह सुग्रीव के चाचा किष्कुपुर के राजा ऋक्षराज और उसकी रानी हरिकान्ता का पुत्र तथा नल का भाई था। लका-विजय के बाद राम ने इसे किष्किन्ध नगर का राजा बनाया था। अन्त में इसने राज्य का परित्याग कर दीक्षा धारण कर ली थी। मपु० ६८ ६२१-६२२, पपु० ९ १३, ८८. ४०, ११९ ३९-४०

नीलक—रुचकगिरि की पश्चिम दिशा में स्थित श्रीवृक्षकूट का निवासी देव। हपु० ५ ७०२

नीलकंठ—(१) शकटामुख नगर के राजा नीलवान् का पौत्र और नील का पुत्र। हपु० २३ ३

(२) आगामी तीसरा प्रतिनारायण। हपु० ६० ५७०

(३) एक विद्याधर राजा। यह त्रिशिखर विद्याधर का सहायक था। त्रिशिखर ने वसुदेव के श्वसुर विद्युद्वेग को कारागृह में डाल दिया था। वसुदेव ने त्रिशिखर के साथ युद्ध करके अपने श्वसुर को छुडा लिया था। इस युद्ध में नीलकठ भी हारा था। इस युद्ध में हारे हुए नीलकठ ने एक बार अपनी विद्या से वसुदेव का हरण किया पर वह उसे नही ले जा सका। उसने उसको आकाश में छोड दिया था। हपु० २५ ६३, ३१ ४

नीलकूट—नील कुलाचल के नौ कूटों में दूसरा कूट। हपु० ५ ९९

नीलगुहा—राजगृह के समीप स्थित एक गुफा। हपु० ६० ३७

नीलयशा—(१) सिंहदंष्ट्र और नीलाजना की पुत्री। इसका विवाह वसुदेव के साथ हुआ था। हपु० २२ ११३, १५२

(२) चारुदत्त की स्त्री। हपु० १ ८२

नीलरथ—अलकानगरी के राजा मयूरग्रीव का पुत्र। मपु० ६२ ५९, दे० नीलकठ-४

नीललेश्या—दूसरी लेश्या। यह तीसरे नरक के अधोभाग में रहनेवाले नारकियों के होती है। हपु० ४, ३४३

नीलवान्—(१) शकटामुख नगर का विद्याधर। इसका नील पुत्र और नीलाजना पुत्री थी। हपु० २३ ३-४

(२) नील कुलाचल से साढ़े पाँच सौ योजन दूर नदी के मध्य में स्थित एक सरोवर। मपु० ६३ १९९, हपु० ५ १९४

नीलवेगा—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में काचनतिलक नगर के राजा महेन्द्रविक्रम की रानी, अजितसेन की जननी। मपु० ६३ १०५-१०६

नीलांजना—(१) शकटामुख नगर के स्वामी विद्याधर नीलवान् की पुत्री। यह नील विद्याधर की बहिन थी। इसका विवाह राजा सिंह-द्रष्ट्र से हुआ था। इसकी पुत्री नीलयशा थी। हपु० २२ ११३-११४ २३ १-६,

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित अल्का नगरी के राजा मयूरग्रीव की रानी। अश्वग्रीव, नीलरथ, नीलकठ, सुकठ और वज्र-कठ इसके पुत्र थे। मपु० ६२.५८-५९, वीवच० ३.६८-७०

(३) इन्द्र की अप्सरा। इन्द्र तीर्थंकर वृषभदेव को वैराग्य उत्पन्न करने के लिए इसे स्वर्ग से धरा पर लाया था। इसने हाव-भाव-पूर्वक वृषभदेव के समक्ष नृत्य किया। नृत्य करते-करते इसकी आयु क्षीण हो गयी। इसके अदृश्य होनेपर वृषभदेव देह को क्षणभगुर जानकर ससार से विरक्त हो गये थे। इसका अपरनाम नीलाजना था। मपु० १७ ६-८, १४९, पपु० ३ २६३, हपु० ९ ४७, पापु० २ २१५-२२१

नीवार—एक अन्न। इसका व्यवहार प्राचीन भारत में विशेष रूप से होता था। मपु० ३ १८६

नूपुर—स्त्रियो के पैरो का आभूषण। आदिपुराण में अनेक प्रकार के नूपुरो का उल्लेख है। उनमें मुख्य है—शिजित-नूपुर और मणिनूपुर। मपु० ६ ६३, १६ २३७

नृगति—मनुष्यगति। यह गति उन जीवो को मिलती है जो सरल स्वभावी, सन्तोषी, सदाचारी, मन्दकषायी, शुद्ध अभिप्रायी, विनीत और जिनेन्द्र, गुरू तथा धर्म के भक्त होते हैं। सम्यग्दर्शन और ज्ञान से भूषित स्त्रियाँ भी अगले जन्म में पुरुष होती हैं। वीवच० १७ ९२-११८

नृत्य—भावो का अनुकरण। आदिपुराण में अनेक प्रकार के नृत्यो का उल्लेख है। ये मुख्य नृत्य हैं—ताण्डव, लास्य, अलातचक्र, इन्द्रजाल, चक्र, निष्क्रमण, सूची, कटाक्ष, बहुरूपी आदि। मपु० १२ १९०-१९७, १४ १२१-१५०

नृत्यगोष्ठी—प्राचीन भारत का मनोरजन का एक प्रमुख साधन। उत्सवो ने अवसरो पर नृत्य-गोष्ठियो की योजना होती थी। नृत्य देव-देवियाँ और पुरुष-स्त्रियाँ करते थे। मपु० १२ १८८ १४ १९२

नृपदत्त—राजा वसुदेव तथा देवकी का ज्येष्ठ पुत्र। देवपाल, अनीकदत्त, अनीकपाल, शत्रुघ्न और जितशत्रु इसके छोटे भाई थे। इसका पालन सुभद्रिल नगर के सेठ सुदृष्टि की स्त्री अलका के द्वारा हुआ था। इनमें प्रत्येक की बत्तीस-बत्तीस स्त्रियाँ थी ये तीर्थंकर नेमि के सम-वसरण में गये थे तथा वहाँ धर्मोपदेश सुनकर ससार से विरक्त हुए और इन्होंने निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण कर ली थी। धीर तप करके इन्होंने अनेक ऋद्धिया प्राप्त की थी। अन्त में गिरनार पर्वत पर तपस्या करके ये सभी मोक्ष गये। हपु० ३३ १७०-१७१, ३५. ३-५, ५९ ११५-१२४, ६५ १६-१७ तीसरे पूर्वभव में यह मथुरा के भानु सेठ का भानुकीर्ति दूसरा पुत्र था। दूसरे पूर्वभव में यह विजयार्ध-पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल का गरुडकान्त पुत्र और प्रथम पूर्वभव में हस्तिनापुर में राजा गगदेव और रानी नन्दयशा का गग पुत्र हुआ। हपु० ३३ ९७-९८, १३२-१३३, १४२-१४३

नृलोक—मनुष्यो की आवासभूमि-अढाई द्वीप-जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, धातकीखण्ड द्वीप, कालोदधि समुद्र और पुष्करार्ध द्वीप। मपु० ६१ १२

नेता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

नेत्रवितान—एक वस्त्र। यह कलापूर्वक रेशम से बनाया जाता था। मपु० ४३ २११

नेदीयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

नेपाल—विन्ध्याचल के ऊपर स्थित एक देश। पपु० १०१ ८१, हपु० ११ ७४

नेमि—अवसर्पिणी काल के दु खमा-सुखमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव बाईसवें तीर्थंकर। ये अरिष्टनेमि के नाम से विख्यात हैं। मपु० २ १३२, पपु० १ १३, हपु० १ २४, वीवच० १८ १०१-१०७। ये काश्यपगोत्री हरिवश के शिखामणि द्वारावती नगरी के राजा समुद्रविजय के पुत्र थे। रानी शिवदेवी इनकी माँ थी। जयन्त विमान से चयकर कार्तिक शुक्ल षष्ठी के दिन उत्तरा-षाढ नक्षत्र में रात्रि के पिछले प्रहर में सोलह स्वप्नपूर्वक माँ के गर्भ में आये तथा श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन ब्रह्मयोग के समय चित्रा नक्षत्र में इनका जन्म हुआ। जन्म से ही ये तीन ज्ञान के धारी थे। सौधर्म और ईशानेन्द्र ने चमर ढोरते हुए पाण्डुक पाण्डुक शिला पर विराजमान कर क्षीरसागर के जल से इनका अभि-षेक किया था। ये नमिनाथ की तीर्थ परम्परा के पाँच लाख वर्ष बीत जाने पर उत्पन्न हुए थे। इनकी आयु एक हजार वर्ष तथा शारी-रिक अवगाहना दस धनुष थी। सस्थान और सहनन उत्तम थे। ये अपूर्व शौर्य के धारक थे। एक समय इन्होंने कृष्ण की पटरानी सत्य-भामा से अपना स्नानवस्त्र धोने को कहा था जिसके उत्तर मे सत्य-भामा ने कहा था कि मैं ऐसे साहसी के ही वस्त्र धोती हूँ जिसने नागशय्या पर अनायास ही शार्ङ्ग नामक दिव्य धनुष चढाया है तथा शख फूँका है। यह सुनकर इन्होंने भी दोनो काम कर दिखाये थे। इस कार्य से कृष्ण ने समझ लिया कि ये विवाह के योग्य हो गये हैं। इन्होंने भोजवशी राजा उग्रसेन और रानी जयावती की पुत्री राजीमति के साथ इनका सम्बन्ध तय कर दिया। विवाह की तैयारियाँ हुई। मासाहारी म्लेच्छ राजाओ के लिए मृगसमूह को एकत्र करके एक वाडे में बाँधा गया। जब वरात उग्रसेन के नगर के पास पहुँची तो इन्होंने पशुओ के बन्धन का कारण पूछा। कारण बता दिया गया।

इससे वे राजीमती के साथ विवाह न करके विरक्त हो गये और बारात लौट गयी। लौकान्तिक देवो ने आकर इनके वैराग्य की स्तुति की और दीक्षाकल्याणक का उत्सव मनाया। इसके पश्चात् ये देवकुरु नामक पालकी पर बैठकर सहस्राम्रवन गये। वहाँ श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन सायकाल कौमार्यकाल के तीन सौ वर्ष बीत जाने पर एक हजार राजाओ के साथ सयमी हुए। इसी समय इन्हें मन पर्ययज्ञान भी हो गया। राजीमति भी विरक्त होकर इनके पीछे-पीछे तपश्चरण के लिए चली आयी। पारणा के दिन राजा वरदत्त ने इन्हें नवधा-भक्ति पूर्वक आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। तपस्या करते हुए छद्मस्थ अवस्था के छप्पन दिन बीत जाने पर ये रैवतक पर्वत पर वेला का नियम लेकर महावेणु (बडे बाँस) वृक्ष के नीचे नीचे विराजमान हो गये। वहाँ आश्विन शुक्ला प्रतिपदा के दिन चित्रा नक्षत्र में प्रात काल के समय इन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। देवो ने केवलज्ञान-कल्याणक मनाया। इनके समवसरण मे वरदत्त आदि ग्यारह गणधर, चार सौ पूर्व श्रुतविज्ञ, ग्यारह हजार आठ सौ शिक्षक, पन्द्रह सौ तीन ज्ञान के धारी, इतने ही केवली, ग्यारह सौ विक्रियाऋद्धिधारी, नौ सौ मन पर्ययज्ञानी और आठ वादी इस प्रकार कुल अठारह हजार मुनि थे। यक्षी, राजीमती, कात्यायनी आदि चालीस हजार आर्यिकाएँ, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकाएँ, असख्यात देवी-देवियाँ और सख्यात तिर्यञ्च थे। मपु० ७१ २७-५१, १३४-१८७, पापु० २२ ३७-६६ बलदेव द्वारा यह पूछे जाने पर कि कृष्ण का निष्कण्टक राज्य कब तक चलेगा ? उत्तर में इन्होंने कहा था कि बारह वर्ष बाद मदिरा का निमित्त पाकर द्वीपायन के द्वारा द्वारिका जलकर नष्ट हो जावेगी। जरत्कुमार के बाण द्वारा कृष्ण की मृत्यु होगी। कृष्ण आगामी तीर्थङ्कर होंगे। मपु० ७२ १७८-१८२, पापु० २२ ८०-८३ इन्होंने सुराष्ट्र, मत्स्य, लाट, शूरसेन, पटच्चर, कुरुजागल पाँचाल, कुशाग्र, मगध, अजन, अग, वग तथा कलिंग आदि देशो मे विहार कर जनता को धर्मोपदेश दिया। हपु० ५९ ११०-१११ इस प्रकार इन्होंने छ सौ निन्यानवें वर्ष नौ मास चार दिन विहार करने के पश्चात् पाँच सौ तैंतीस मुनियो के साथ एक मास तक योग-निरोधकर आषाढ शुक्ल सप्तमी के दिन चित्रा नक्षत्र में रात्रि के आरम्भ में ही अघातिया कर्म विनाश करके मोक्ष प्राप्त किया। इन्द्र और देवो ने सभक्ति विधिपूर्वक इनके इस पचम कल्याणक का उत्सव किया। मपु० ७२ २७२-२७४, पापु० २५ १४७-१५१ ये छठे पूर्वभव में पुष्करार्ध द्वीप के गन्धिल देश में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में सूर्यप्रभ नगर के राजा सूर्यप्रभ के पुत्र चिन्तागति, पाँचवें पूर्वभव में चौथे स्वर्ग में सामानिक देव, चौथे पूर्वभव मे सुगन्धिला देश के सिंहपुर नगर के राजा अर्हद्दास के पुत्र अपराजित, तीसरे पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में इन्द्र, दूसरे पूर्वभव मे हस्तिनापुर के राजा श्रीचन्द्र के पुत्र सुप्रतिष्ठ और प्रथम पूर्वभव में जयन्त नामक अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ७० २६-२८, ३६-३७, ४१, ५०-५१, ५९

नैकधर्मकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १८०

नैकरूप—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

नैकात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

नैगम—(१) एक देव। इसने शुद्ध भावों से दर्भासन पर बैठकर अष्टोपवासपूर्वक मत्र का सविधि जाप करते हुए कृष्ण से कहा था कि वह घोडे के रूप में आयेगा तब वे उस पर सवार होकर समुद्र के भीतर बारह योजन तक चले जावें, वहाँ सुन्दर नगर बन जावेगा। कृष्ण इसकी सहायता से समुद्र में पहुँच गये थे। वहीं पर कुबेर ने इनके लिए द्वारावती नगरी की रचना की थी। मपु० ७१ १९-२८

(२) व्यापारी। ये विलास-वैभव सम्बन्धी वस्तुओं को बेचते थे। मपु० १६.२४७

नैगमनय—सात नयो में प्रथम नय। यह अनिष्पन्न पदार्थ के सकल्प मात्र को विषय करता है। यह तीन प्रकार का होता है, भूत नैगम, भावी नैगम और वर्तमान नैगम। हपु० ५८ ४१-४३

नैगमर्ष—एक देव। इन्द्र की आज्ञा से इसी ने देवकी के तीन बार में उत्पन्न हुए युगल-पुत्रो को भद्रिलपुर नगर में अलका नामक वैश्य-पत्नी के पास तथा अलका के मृत युगल-पुत्रों को देवकी के पास स्थानान्तरित किये थे। मपु० ७० ३८४-३८६

नैरात्म्यवाद—बौद्धों का शून्यवाद। इसके अनुसार जगत् शून्यरूप है। महाबल के मन्त्री शतमति ने इसका प्रतिपादन किया था और उसके महामन्त्री स्वयबुद्ध ने इस मत का खण्डन करके आत्मा की सत्ता सिद्ध की थी। मपु० ५ ४५-४८, ७४-८१

नैषध—भरतक्षेत्र के विन्ध्याचल पर्वत पर स्थित एक देश। हपु० ११ ७३

नैःसङ्ग्यभावना—पचेन्द्रिय सम्बन्धी सचित्र और अचित्र विषयो में अनासक्ति। ये दो प्रकार की होती है—बाह्य और आभ्यन्तर। मपु० २० १६५

नैसर्प्य—चक्रवर्ती की नौ निधियो में एक निधि। इससे शय्या, आसन तथा मकान मिलते है। गृहोपयोगी वर्तन भी इससे मिल जाते हैं। मपु० ३७ ७३-७८, हपु० ११ ११८

नोकर्म—कर्म के उदय से होनेवाला शरीररूप पुद्गल परिणाम। यह परिणाम तीन प्रकार का होता है—औदारिक, वैक्रियिक और आहारक। मपु० ४२ ९१

नोकषाय—किंचित् कषाय। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसकवेद ये नोकषाय हैं। मपु० २० २४५

नोदन—धान्यग्राम का एक ब्राह्मण। भूख की बाधा के कारण इसने अपनी पत्नी अभिमाना का परित्याग कर दिया था। मपु० ८० १५९-१६१

न्यग्रोध—वटवृक्ष। वृषभदेव को केवलज्ञान इसी वृक्ष के नीचे हुआ था। उस समय देवो ने वृषभदेव की इसी वृक्ष के नीचे पूजा की थी। उसी के फलस्वरूप आज भी वटवृक्ष पूजा जाता है। पपु० ११-२९२-२९३

न्यायशास्त्रकृत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

प

पंक—छठी नरकभूमि के हिम इन्द्रक बिल की दक्षिण दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५७

पंकजगुल्म—तीर्थंकर वासुपूज्य के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २०-२४

पंकप्रभा—चौथी नरकभूमि, अपरनाम अंजना। यहाँ दस लाख बिल हैं। नारकियों की उत्कृष्ट आयु दस सागर प्रमाण तथा उनके शरीर की ऊँचाई बासठ धनुष दो हाथ होती है। वे मध्यम नील लेश्यावाले होते हैं। मपु० १० ३१-३२, ९०-९४, ९७, हपु० ४ ४४, ४६, इस नरकभूमि की मुटाई चौबीस हजार योजन है। इस पृथिवी के सात प्रस्तारों में क्रम से निम्न सात इन्द्रक बिल हैं—१ आर, २. तार, ३. मार, ४ वर्चस्क, ५ तमक, ६. खड और ७ खडखड, हपु० ४ ८९, इनमें आर इन्द्रक बिल की चारों दिशाओं में चौसठ और विदिशाओं में साठ श्रेणीबद्ध बिल हैं। अन्य इन्द्रक बिलों की संख्या निम्न प्रकार है—

नाम इन्द्रक बिल,	चारों दिशाओं में,	विदिशाओं में—
तार	६०	५६
मार	५६	५२
वर्चस्क	५२	४८
तमक	४८	४४
खड	४४	४०
खडखड	४०	३६

इस प्रकार इस भूमि में इन्द्रक और श्रेणीबद्ध बिलों की संख्या सात सौ सात तथा प्रकीर्णक बिलों की संख्या ९९९२९३ है। इस भूमि के आर इन्द्रक बिल के पूर्व में नि.सृष्ट, पश्चिम में अति-नि सृष्ट, दक्षिण में निरोध और उत्तर मे महानिरोध नाम के चार महानरक हैं। यहाँ दो लाख बिल संख्यात और आठ लाख बिल असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं। हपु० ४ ५७, १२९-१६४ इन्द्रक बिलों का विस्तार निम्न प्रकार है—आर–१४, ७५००० योजन, तार १३८३,३३३ योजन और एक योजन के तीन भाग प्रमाण, मार–१२,९१,६६६ योजन और एक योजन के तीन भागों में दो भाग प्रमाण, वर्चस्क–१२०००० योजन, तमक–११०८३३३ योजन और तीन भागों में एक भाग प्रमाण, खड–१०१६६६६ योजन और एक योजन के तीन भागों में दो भाग प्रमाण तथा खडखड नामक इन्द्रक का ९२५००० योजन है। इस पृथिवी के इन्द्रकों की मुटाई अढाई कोस, श्रेणीबद्ध बिलों की तीन कोस और एक कोस के तीन भागों में एक भाग तथा प्रकीर्णक बिलों की पाँच कोस और एक कोस के छ भागों पाँच भाग प्रमाण है। इन्द्रक बिलों का विस्तार छत्तीस सौ पैंसठ योजन और पचहत्तर सौ धनुष तथा एक धनुष के नौ भागों में पाँच भाग प्रमाण तथा प्रकीर्णक बिलों का विस्तार छत्तीस सौ चौसठ योजन, सतहत्तर सौ बाईस धनुष और एक धनुष के नौ भागों में दो भाग प्रमाण है। हपु० ४ २०३-२३९ इस पृथिवी के इन्द्रक बिलों के नारकियों की उत्कृष्ट और जघन्य स्थिति निम्न प्रकार है—

नाम इन्द्रक बिल	उत्कृष्ट स्थिति	जघन्य स्थिति
आर	७$\frac{७}{३}$	७ सागर
तार	७$\frac{७}{६}$ सागर	७$\frac{७}{३}$ सागर
मार	८$\frac{७}{२}$ सागर	७$\frac{७}{६}$ सागर
वर्चस्क	८$\frac{७}{५}$ सागर	८$\frac{७}{२}$ सागर
तमक	९$\frac{७}{१}$ सागर	८$\frac{७}{५}$ सागर
खड	९$\frac{७}{४}$ सागर	९$\frac{७}{१}$ सागर
खडखड	१० सागर	९$\frac{७}{४}$ सागर।

हपु० ४ २७९-२८५

इन इन्द्रक बिलों में नारकियों की ऊँचाई निम्न प्रकार होती है—

आर—पैंतीस धनुष, दो हाथ, बीस अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में चार भाग प्रमाण।

तार—चालीस धनुष, दो हाथ, तेरह अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में पाँच भाग प्रमाण।

मार—चवालीस धनुष, दो हाथ, तेरह अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में पाँच भाग प्रमाण।

वर्चस्क—उनचास धनुष, दस अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में दो भाग प्रमाण।

तमक—त्रेपन धनुष, दो हाथ, छ अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में छ भाग प्रमाण।

खड—अठावन धनुष, तीन अंगुल और एक अंगुल के सात भागों में तीन भाग प्रमाण।

खडखड—बासठ धनुष, दो हाथ प्रमाण। हपु० ४ ३२६-३३२ इस पृथिवी तक के नारकी उष्ण वेदना से दुःखी होते हैं। यहाँ नारकियों के जन्मस्थान गो, गज, अश्व और धौंकनी, नाव तथा कमल के आकार के होते हैं। इस पृथिवी के निगोदों में जन्मनेवाले जीव बासठ योजन दो कोस ऊँचे उछल-कर नीचे गिरते हैं। यहाँ तीव्र मिथ्यात्वी और परिग्रही तिर्यंच तथा मनुष्य जन्मते हैं। सर्प इसी पृथिवी तक जाते हैं। जीव यहाँ से निकलकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है किन्तु तीर्थङ्कर नहीं हो सकता। हपु० ४ ३४६-३८०

पंकबहुल—रत्नप्रभा पृथिवी के तीन भागों में द्वितीय भाग। यह भाग चौरासी हजार योजन मोटा है। यहाँ राक्षसों और असुरकुमारों के रत्नमय देदीप्यमान भवन होते हैं। हपु० ४ ४७-५०

पंकवती—पूर्व विदेह क्षेत्र की बारह विभंगानदियों में तीसरी नदी। मपु० ६३,२०५-२०७

पंचकल्याणक—तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म, तप, दीक्षा/निष्क्रमण और निर्वाण-कल्याण। इन कल्याणकों के समय सोलह स्वर्गों के देव और इन्द्र स्वयमेव आते हैं। तीर्थंकर प्रकृति के प्रभाव से स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतार

लेने के छः माह पूर्व से कुबेर साढे तीन करोड़ रत्नों की वर्षा करता है। मपु० ४८ १८-२०, २०५-२२२, हपु० ८ १३१, ३७ १-५५, १००-१२९, ५६ ११२-११८, ६५ १-१७

पंचकल्याणकव्रत—एक व्रत। इसमें आवश्यक (षडावश्यक) कार्य करते हुए चौबीस तीर्थंकरों के पाँच कल्याणकों की १२० तिथियों के १२० उपवास किये जाते हैं। हपु० ३४ १११

पंचगिरि—एक पर्वत। यह मुनि संजयन्त की केवलज्ञानस्थली है। पपु० ५ २५-२९

पंचगुरु—अर्हंत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। ये अतीत की अपेक्षा अनन्त, वर्तमान की अपेक्षा संख्यात तथा भविष्यतकाल की अपेक्षा अनन्तानन्त हैं। हपु० १ २७-२८

पंचनद—(१) ह्रीमन्त पर्वत का एक तीर्थ। हपु० २६ ४५

(२) पाँच नदियों से सम्बोधित देश-पंजाब। यहाँ के हाथी-चक्री भरत को भेंट में दिये गये थे। मपु० ३०.९८

पंचनमस्कार—अर्हंत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु को नमस्कार सूचक मंत्र (णमोकार)। यह मंत्र समस्त पापों से मुक्त करता है। इसके प्रभाव से कई तिर्यंच मनुष्य और देव हुए हैं। इसे पंच-नमस्कृति तथा पंचनमस्कारपद नाम से भी अभिहित किया गया है। मपु०३९ ४३, ७०.१३६-१३८, पपु० ६ २३८-२४२, हपु० २१ १०७

पंचब्रह्म—अर्हंत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। मपु० २५ २२२

पंचब्रह्ममय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

पंचम—संगीत का एक स्वर। हपु० १९ १५३

पंचममहाव्रत—अपरिग्रह-महाव्रत। इसके पालन में बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह को छोड़ा जाता है। हपु० २ १२१

पंचमार्णव—क्षीरसागर। इसके जल से भगवान् का प्रथम अभिषेक किया जाता है। मपु० १३ ११२

पंचमावगमेश—पंचमज्ञान-केवलज्ञान के स्वामी। मपु० ४९ ५७

पंचमी—संगीत की मध्यम ग्राम के आश्रित एक जाति। हपु० १९ १७६

पंचमुख—पंचमुखी पाञ्चजन्य शंख। यह लक्ष्मण के सात रत्नों में एक था। मपु० ६८ ६७६-६७७

पंचमेरु—निम्न पाँच मेरु—

जम्बूद्वीप के पूर्व-पश्चिम दिशावर्ती दो मेरु। धातकीखण्ड के दो मेरु तथा पुष्करवर द्वीप का एक मेरु। इनके आगे मनुष्यों का गमन नहीं है। हपु० ५ ४९४, ५१३, ५७६-५७७

पंचरत्नवृष्टि—तीर्थंकरों को आहार देनेवालों के घर पर देवों के द्वारा की जानेवाली पाँच प्रकार के रत्नों की वर्षा। मपु० १ ११ दे० पंचाश्चर्य

पंचविंशतिकल्याणभावना—एक व्रत। इसमें अहिंसा आदि महाव्रतों में प्रत्येक महाव्रत की पाँच-पाँच भावनाएँ होने से पच्चीस भावनाओं को लक्ष्य करके एक उपवास और एक पारणा के क्रम से पच्चीस उपवास और पच्चीस पारणाएँ की जाती हैं। भावनाओं के नाम निम्न प्रकार हैं—१ सम्यक्त्व भावना २ विनय भावना ३ ज्ञान भावना ४ शील भावना ५ सत्य भावना ६ श्रुतभावना ७ समिति भावना ८ एकान्त भावना ९ गुप्ति भावना १० धर्मध्यान भावना ११ शुक्लध्यान भावना १२ संक्लेश-निरोध भावना १३. इच्छा-निरोध भावना १४ संवर भावना १५ प्रशस्तयोग भावना १६ संवेग भावना १७ करुणा भावना १८ उद्वेग भावना १९. भोग-निर्वेद भावना २० संसार-निर्वेद भावना २१ भुक्ति-वैराग्य भावना २२ मोक्ष भावना २३ मैत्री भावना २४ उपेक्षा भावना और २५ प्रमोद भावना हपु० ३४ ११२-११६

पंचशतग्रीव—राजा बलि के वंश में उत्पन्न हुआ विद्याधर राजा। हपु० २५ ३६

पंचशिरा—कुण्डलवर द्वीप के कुण्डलगिरि पर्वत पर पूर्व दिशावर्ती वज्र-प्रभ नाम के दूसरे कूट का निवासी देव। यह इस पर्वत के नागकुमार देवों के सोलह इन्द्रों में एक इन्द्र है। हपु० ५ ६८६, ६८९-६९०

पंचशैलपुर—राजगृह नगर का दूसरा नाम। पाँच पर्वतों से युक्त होने के कारण यह नगर इस नाम से विख्यात है। पाँचों पर्वतों के नाम हैं—ऋषिगिरि, वैभार, विपुलाचल, बलाहक और पाण्डुक। यहाँ तीर्थंकर मुनिसुव्रत का जन्म हुआ था। इन्हीं पर्वतों पर तीर्थंकर वासुपूज्य को छोड़कर शेष तेईस तीर्थंकरों के समवसरण हुए हैं। हपु० ३ ५१-५८

पंचसूनावृत्ति—चक्की, चूल्हा, ओखल, बुहारी और पानी की आरम्भिक क्रियाएँ। इनसे उत्पन्न दोष पात्रदान आदि से दूर होते हैं। मपु० ६३ ३७४

पंचाग्नि—एक तप। तापस पाँच अग्नियों के मध्य बैठकर यह तप करते हैं। मपु० ५९ २८९, ६५ ६०-६१, ७३ ९८

पंचाल—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित देश। तीर्थंकर वृषभदेव नेमिनाथ और महावीर ने यहाँ विहार किया था। भरतेश ने इस देश को अपने आधीन किया। इसका अपरनाम पाचाल था। मपु० १६ १४८, १५३, २५ २८७, २९ ४०, ३७ १६, हपु० ३ ३, ४५४ ५९ ११०

पंचाशद्ग्रीव—लंका का राजा। यह राजा विनमि के वंश में उत्पन्न सहस्रग्रीव का पौत्र और शतग्रीव का पुत्र था। इसने लंका में बीस हजार वर्ष तक राज्य किया था। पुलस्त्य इसका पुत्र और रावण पौत्र था। मपु० ६८ ४-१२

पंचाश्चर्य—तीर्थंकरों और सिद्धि प्राप्त मुनियों को विधिपूर्वक आहार देने के पश्चात् होनेवाली आश्चर्यकारी पाँच बातें—देवकृत रत्नवर्षा, पुष्पवर्षा, गन्धोदकवृष्टि, शीतल, मन्द और सुगन्धित वायुप्रवाह और अहोदान अहोदान की ध्वनि। मपु० ८ १७३-१७५, हपु० ९ १९०-१९५

पंचास्तिकाय—बहुप्रदेशी द्रव्य। ये द्रव्य पाँच हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश। इनमें जीव, धर्म और अधर्म तो असंख्यात प्रदेशी

है और पुद्गल सख्यात, असख्यात तथा अनन्त प्रदेशी है। आकाश अनन्त प्रदेशी है। काल एक प्रदेशी है। उसके बहुप्रदेशरूप काय न होने से उसे अस्तिकायों में सम्मिलित नहीं किया जाता। इन पाँच द्रव्यों में काल को जोड़ देने से द्रव्य छः हो जाते हैं। मपु० २४.९०, वीवच० १६.१३७-१३८

पंचेन्द्रिय—स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र इन पाँच इन्द्रियों से युक्त जीव। मपु० ३६.१३०, पपु० १०५.१४७-१४९

पंचोदुम्बर—बड़, पीपल, पाकर, ऊमर और अंजीर। इनका त्याग आजीवन होता है। मपु० ३८.१२२

पक्ष—(१) व्यवहार काल का एक भेद। पन्द्रह अहोरात्र (दिनरात) के समय को पक्ष कहते हैं। प्रत्येक मास में दो पक्ष होते हैं—कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष। मपु० ३.२१, १३.२, हपु० ७.२१

(२) षट्कर्म जनित हिंसा-दोषों की शुद्धि का प्रथम उपाय। मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ्य भाव से समस्त हिंसा का त्याग करना पक्ष कहलाता है। मपु० ३९.१४३-१४६

पटच्चर—मध्य देश। तीर्थंकर महावीर और नेमिनाथ की विहारभूमि। हपु० ३.३१, ११.६४, ५९.११०

पटवास—वस्त्रों को सुवासित करनेवाला चूर्ण। मपु० १४.८८

पटविद्या—विषापहारिणी गारुडी-विद्या। मपु० २४.१,३८२

पटह—चर्म से मढ़ा हुआ नगाड़ा। यह आदिपुराण कालीन एक वाद्य है। इसे डंडों से बजाया जाता है। मपु० २३.६३

पटांशुक—कमर में बाँधा जानेवाला रेशमी वस्त्र। मपु० ११.४४

पट्टबन्ध—राज्याभिषेक के समय जिसका राज्याभिषेक होना है उसके सिर पर बाँधा जानेवाला एक अलकरण-मुकुट। मपु० १६.२३३

पणव—एक पुष्करवाद्य। इसकी ध्वनि मधुर और गम्भीर होती है। मपु० २३.६२, हपु० ३१.३९

पण्डित—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का चवालीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९८

पण्डितमरण—भक्तप्रत्याख्यान समाधिमरण का एक भेद। इसे चारित्र-पूर्वक मरण भी कहते हैं। ऐसे मरण से जीव स्वर्ग प्राप्त करता है। पपु० ८० २०८

पण्डिता—पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त की पुत्री श्रीमती की धाय। यह यशोधर योगीन्द्र के शिष्य गुणधर से दीक्षित हो गयी थी। मपु० ६.५८-६०, १०२, ८.८६

पद्म—[illegible] मेरु के नन्दनवन की पूर्व दिशा में स्थित एक भवन। हपु० ५.३१५, ३१७

पतङ्गक—वैशाली नगर के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा के दस पुत्रों में आठवाँ पुत्र। मपु० ७५.३-५

पति—सौधर्मेन्द्र देव द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४१

पत्तन—(१) समुद्रतटवर्ती नगर। मपु० १६.१७२

(२) [illegible] एक देश। हपु० ११.७४

पत्ति—सेना का एक भाग। इसमें एक रथ, एक हाथी, पाँच पैदल और तीन घोड़े होते हैं। अक्षौहिणी सेना के परिगणित अंगों (हाथी, घोड़े, रथ और पैदल) की गणना करने के लिए निर्दिष्ट आठ भेदों में यह प्रथम भेद है। पपु० ५६.२-६

पत्र-रचना—कपोलों पर की जानेवाली पत्र-रचना। यह गोरोचन और कुंकुम से की जाती थी। मपु० ७.१३४

पद—श्रुतज्ञान के बीस भेदों में पाँचवाँ भेद। यह अर्थ पद, प्रमाणपद और मध्यमपद के भेद से तीन प्रकार का होता है। एक से सात अक्षर तक का पद अर्थपद, आठ अक्षररूप प्रमाणपद और सोलह सौ चौंतीस करोड़ तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी अक्षर का मध्यमपद होता है। अंगों तथा पूर्वों की पद-संख्या इसी मध्यमपद से होती है। हपु० १०.१२-१३, २२-२५

पदगोष्ठी—वैयाकरणों के साथ व्याकरण सम्बन्धी चर्चा। मपु० १४.१९१

पदज्ञान—व्याकरण ज्ञान। इसे पद-विद्या भी कहते हैं। मपु० १६.१११-११३

पदशास्त्र—स्वयम्भू वृषभदेव द्वारा निर्मित सौ से अधिक अध्यायों से युक्त अति गम्भीर व्याकरण शास्त्र। मपु० १६.११२

पदसमास—श्रुतज्ञान के बीस भेदों में छठा भेद। इस समास से पूर्व समास पर्यन्त समस्त द्वादशांग श्रुत स्थित है। हपु० १०.१२-१३, २६

पदातिसेना—सेना की सात कक्षाओं में एक कक्षा। इसमें सैनिक पैदल होते थे। मपु० १०.१९८-१९९

पदानुसारिणी-ऋद्धि—एक ऋद्धि। इससे आगम का एक पद सुनकर पूर्ण आगम का बोध हो जाता है। परभव सम्बन्धी गमनागमन की भी जानकारी इससे प्राप्त हो जाती है। ऐसी ऋद्धियाँ मुनियों को प्राप्त होती हैं। मपु० २.६७, ११.८०-८१, हपु० १८.१०७

पदार्थ—सामान्यतः जीव और अजीव के भेद से द्विविध। तत्त्वों में पुण्य और पाप के संयोग से ये नौ प्रकार के हो जाते हैं। इनकी यथार्थ श्रद्धा और ज्ञान से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान हो जाते हैं। मपु० २.११८, ९.१२१, २४.१२७, वीवच० १७.२

पद्म—(१) तीर्थङ्कर सुविधिनाथ के पूर्व जन्म का नाम। पपु० २०.२०-२४

(२) एक सरोवर। कुम्भकर्ण के विमोचन का आदेश राम ने यहीं दिया था। मपु० ६३.१९७, पपु० ७८.८-९

(३) नव निधियों में पाँचवीं निधि। इससे रेशमी सूती आदि सभी प्रकार के वस्त्र तथा रत्न आदि इच्छित वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। मपु० ३७.७३, ७६, ७९, ३८.२१, हपु० ११.१११, ५९.६३, दे० नवनिधि

(४) सौमनस नगर का राजा। इसने तीर्थङ्कर सुमतिनाथ को आहार दिया था। मपु० ५१.७२

(५) वसुदेव तथा रानी [illegible] का पुत्र। [illegible]। हपु० ५०.११८-११९

(६) वसुदेव और पद्मावती का पुत्र। यह पद्मक का अग्रज था। हपु० ४८.५८

(७) [illegible] भाई। यह हस्तिनापुर

२७

के राजा शम्बर और रानी श्रीमती का पुत्र तथा ध्रुवसेन का भाई था। मपु० ७१ ४०९-४१०

(८) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह का देश। मपु० ७३ ३१

(९) भविष्यत्कालीन ग्यारहवाँ कुलकर। मपु० ७६ ४६५

(१०) भविष्यत्कालीन आठवाँ चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८३

(११) व्यवहार काल का एक भेद। यह चौरासी लाख पद्मांग प्रमाण होता है। यह संख्या का भी एक भेद है। मपु० ३ ११८, २२३, हपु० ७ २७

(१२) सौधर्म स्वर्ग का एक पटल एवं विमान। हपु० ६ ४६ दे० सौधर्म

(१३) पुष्करवर द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६३९

(१४) कुण्डलगिरिवासी देव। हपु० ५ ६९१

(१५) हिमवत् कुलाचल का सरोवर। एक हजार योजन लम्बा, पाँच सौ योजन चौड़ा और सवा सौ योजन गहरा है। इसके पूर्व द्वार से गंगा, पश्चिम द्वार से सिन्धु और उत्तर द्वार से रोहितास्या नदी निकली हैं। मपु० ३२ १२१-१२४, हपु० ५ १२१, १२६ १३२

(१६) कृष्ण का एक योद्धा। इसने कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में भाग लिया था। मपु० ७१ ७३-७७

(१७) अनन्तनाथ तीर्थङ्कर के पूर्वभव का नाम। हपु० ६० १५३

(१८) चन्द्रप्रभ तीर्थङ्कर के पूर्वभव का नाम। हपु० ६० १५२

(१९) हस्तिनापुर के राजा महापद्म का पुत्र। हपु० २० १४

(२०) तीर्थङ्कर मल्लिनाथ के तीर्थकाल में उत्पन्न नवम चक्रवर्ती। तीसरे पूर्वभव में ये सुकच्छ देश में श्रीपुर नगर के प्रजापाल नामक नृप थे। आयु पूर्ण कर अच्युत स्वर्ग में देव हुए और वहाँ से च्युत होकर काशी देश की वाराणसी नगरी में इक्ष्वाकुवंशी राजा पद्मनाभ के इस नाम के पुत्र हुए। इनकी आयु तीस हजार वर्ष की थी, शारीरिक ऊँचाई बाईस धनुष, वर्ण-स्वर्ण के समान देदीप्यमान था। पुण्योदय से इन्होंने चक्रवर्तित्व प्राप्त किया था। पृथिवी, सुन्दरी आदि इनकी आठ पुत्रियाँ थीं जो सुकेतु विद्याधर के पुत्रों को दी गयी थी। अन्त में मेघों की क्षणभंगुरता देखकर ये विरक्त हो गये। पुत्र को राज्य सौंपा, सुकेतु आदि के साथ समाधिगुप्त जिन से संयमी हुए और घातियाकर्मों के क्षय से ये परम पद में अधिष्ठित हुए। मपु० ६६ ६७-१००, पपु० २० १७८-१८४

(२१) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नाम के चौथेकाल में उत्पन्न शलाका पुरुष एवं आठवें बलभद्र। ये तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत और नमिनाथ के मध्यकाल में राजा दशरथ और उनकी रानी अपराजिता से उत्पन्न हुए थे। इनका नाम माता-पिता ने पद्म रखा। पर लोक में ये राम के नाम से ही प्रसिद्ध हुए। पपु० २० २३२-२४१, २५ २२, १२३ १५१, वीवच० १८ १०१-१११ इनकी आयु सत्रह हजार वर्ष तथा ऊँचाई सोलह धनुष प्रमाण थी। दशरथ की सुमित्रा रानी का पुत्र लक्ष्मण, केकया रानी का पुत्र भरत और सुप्रभा रानी का पुत्र शत्रुघ्न इनके अनुज थे। इन्हें और इनके सभी भाइयों को एक ब्राह्मण ने अस्त्र-विद्या सिखायी थी। पपु० २५ २३-२६, ३५-३६, ५४-५६, १२३ १४२ राजा जनक और मयूरमाल नगर के राजा आन्तरगतम के बीच हुए युद्ध में इन्होंने जनक की सहायता की थी, जिसके फलस्वरूप जनक ने इन्हें अपनी पुत्री जानकी को देने का निश्चय किया। विद्याधरों के विरोध करने पर सीता की प्राप्ति के लिए वज्रावर्त धनुष चढ़ाना आवश्यक माना गया। पद्म ने धनुष चढ़ाकर सीता प्राप्त की थी। पपु० १८ १६९-१७१, २४०-२४४, २७ ७, ७८-९२ केकयी के द्वारा भरत के लिए राज्य माँगे जाने पर राजा दशरथ ने इनके समक्ष अपनी चिन्ता व्यक्त की। इन्होंने उनसे सत्य व्रत की रक्षा करने के लिए साग्रह निवेदन किया। ये लक्ष्मण और सीता के साथ घर से निकलकर वन की ओर चले गये। भरत ने राज्य लेना स्वीकार नहीं किया। भरत और केकयी दोनों ने इन्हें वन से लौटकर अयोध्या आने के लिए बहुत आग्रह किया किन्तु इन्होंने पिता की वचन-रक्षा के लिए आना उचित नहीं समझा। वन में इन्होंने बालखिल्य को बन्धनों से मुक्त कराया, देशभूषण और कुलभूषण मुनियों का उपसर्ग दूर किया और सुगुप्ति तथा गुप्ति नाम के मुनियों को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये। पपु० ३१ ११५-१२५, १८८, २०१, ३२ ११६-१३३, ३४ ९५-९७, ३९ ७०-७४, २२२-२२५, ४१ १३-१६, २२-३१ वन में एक गीध पक्षी इन्हें बहुत प्रिय रहा। इन्होंने उसका नाम जटायु रखा। चन्द्रनखा के प्रयत्न करने पर भी ये शील से विचलित नहीं हुए। लक्ष्मण के द्वारा शम्बूक के मारे जाने से इन्हें खरदूषण से युद्ध करना पड़ा। रावण खरदूषण की सहायता के लिए आया। वन में सीता को देखकर वह उस पर मुग्ध हो गया तथा उसे हर ले गया। पपु० ४१ १६४ ४३ ४६-६२, १०७-१११, ४४ ७८-९० रावण सीता को हरकर ले गया है यह सूचना रत्नजटी से पाकर ये सेना सहित लंका गये वहाँ इन्होंने भानुकर्ण को नागपाश से बाँधा और रावण को छः बार रथ से गिराया। विभीषण रावण से तिरस्कृत होकर इनसे मिल गया था। शक्ति लगने से लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर ये भी मूर्च्छित हो गये थे। विशल्या के स्पर्श से लक्ष्मण की शक्ति के दूर होने पर ही इनका दुःख दूर हुआ। बहुरूपिणी विद्या की साधना में रत रावण को वानरों ने कुपित करना चाहा था किन्तु इन्होंने वानरों को ऐसा करने से रोका था। बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करने के पश्चात् रावण ने पुनः युद्ध करना आरम्भ किया। लक्ष्मण ने चक्र चलाकर रावण का वध किया। इस प्रकार रण में इन्हीं की विजय हुई। मपु० ६२ ६६-६७, ८३ ९५, पपु० ७६ ३३-३४ ५५ ७१-७३, ६३ १-२, ६५ ३७-३८, ७० ८-९, इनके लंका में सीता से मिलने पर देवों ने पुष्पवृष्टि की थी। लंका में ये लक्ष्मण और सीता के साथ छः वर्ष तक रहे। पश्चात् लंका से ये पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या आये। अयोध्या आकर इन्होंने माताओं को प्रणाम किया। माताओं ने इन्हें आशीर्वाद दिया। इनके आते ही भरत दीक्षित हो गये। इन्हें अयोध्या का राजा बनाया गया था। पपु० ७९ ५४-५७, ८० १२३, ८२ १, १८-१९, ५६-५८ ८६ ८-९, ८८ ३२-३३ वन से लौटकर आने पर इन्होंने सीता की अग्नि-परीक्षा

भी ली किन्तु लोकापवाद नही रुका और इन्हें सीता का परित्याग करना राजोचित प्रतीत हुआ। कृतान्तवक्त्र को आदेश देकर इन्होंने गर्भवती होने हुए भी सीता को वन में भिजवा दिया। इनके वन में दो पुत्र हुए अनगलवण और लवणाकुश। इनसे इन्हें युद्ध भी करना पड़ा। पपु० ९६ २९-५१, ९७ ५०-१४०, १०२ १७७-१८२, १०५ ५७ ५८ लक्ष्मण के प्रति उनके हृदय में कितना अनुराग है यह जानने के लिए स्वर्ग के दो देव आये। उन्होंने विक्रियाऋद्धि से लक्ष्मण को निष्प्राण कर दिया। लक्ष्मण के मर जाने पर भी ये लक्ष्मण की मृत देह को छ मास तक साथ-साथ लिये रहे। जटायु और कृतान्तवक्त्र के जीव देव हो गये थे। वे आये और उन्होंने इनको समझाया तब इन्होंने लक्ष्मण का अन्तिम मस्कार किया था। पपु० ११८ २९-३०, ४०-११३ अन्त मे ससार से विरक्त होकर इन्होंने अनगलवण को राज्य दिया और स्वय सुव्रत नामक मुनि के पास दीक्षित हो गये। इनका दीक्षा का नाम पद्ममुनि था। इनके साथ कुछ अधिक सोलह हजार राजा मुनि और सत्ताईस हजार स्त्रियाँ आर्यिका हुई थी। इन्हें माघ शुक्ल द्वादशी को रात्रि के पिछले प्रहर में केवलज्ञान हुआ था। सीता के जीव स्वयप्रभ देव ने इनकी पूजा कर क्षमा-याचना की। अन्त में ये सिद्ध हुए। पपु० ११९.१२-३३, ४१-४७, ५४, १२२ ६६-७३, १२३ १४४-१४७

पद्मक—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। पपु० ५ ११४

(२) वसुदेव तथा उनकी रानी पद्मावती का पुत्र, पद्म का अनुज। हपु० ४८ ५८

(३) पुष्करार्ध द्वीप के पश्चिम विदेह का एक देश। मपु० ४७ १८०

पद्मक कूट—विद्युत्प्रभ पर्वतस्थ नौ कूटो में चतुर्थ कूट। हपु० ५ २२२-२२३

पद्मकावती—पूर्व विदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य का एक देश। हपु० ५.२४९

पद्मकूट—(१) विदेहक्षेत्र के सोलह वक्षारागिरियो में पूर्व विदेहस्थ वक्षारगिरि। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२८

(२) रुचकवर पर्वत की पश्चिम दिशा में स्थित आठ कूटो में चतुर्थ कूट। यह पद्मावती देवी की निवास-भूमि है। हपु० ५ ७१२-७१४

पद्मखण्डपुर—जम्बूद्वीप सबधी भरतक्षेत्र में स्थित नगर। यहाँ सुदत्त सेठ रहता था। मपु० ५९ १४६-१४८, हपु० २७ ४४

पद्मगर्भ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८९

पद्मगुल्म—पुष्करवर द्वीप के विदेह क्षेत्र में स्थित वत्स देश की सुसीमा नगरी के राजा। ये उपाय, सहाय-साधन, देशविभाग, कालविभाग और विनिपात-प्रतीकार इन पाँचो राज्यांगो में सधि और विग्रह के रहस्यो को जानते थे। न्यायमार्ग पर चलने से इनके राज्य तथा प्रजा दोनो की समृद्धि बढी। आयु के चतुर्थ भाग के शेष रहने पर वसन्त की शोभा को विलीन होते देखकर ये वैराग्य को प्राप्त हुए। इन्होंने अपने पुत्र चन्दन को राज्य सौंपकर आनन्द मुनि से दीक्षा ली और विपाकसूत्र पर्यन्त समस्त अगो का अध्ययन किया। चिरकाल तक तपश्चरण करने के पश्चात् इन्होंने तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया और ये पन्द्रहवें स्वर्ग आरण मे इन्द्र हुए। इस स्वर्ग से च्युत होकर यही राजा दृढरथ और रानी सुनन्दा के पुत्र के रूप में दसवें तीर्थङ्कर शीतलनाथ हुए। मपु० ५६ २-५८, हपु० ६० १५३

पद्मचरित—पद्मपुराण। यह वर्द्धमान जिनेन्द्र के मोक्ष जाने के एक हजार दो सौ तीन वर्ष छ माह पश्चात् ई० ६७७ मे रविषेणाचार्य द्वारा पद्ममुनि (बलभद्रराम) के चरित्र को विषय वस्तु बनाकर रचा गया था। पपु० १२३ १६८, १८२

पद्मदेव—(१) कुरुवशी महापद्म चक्रवर्ती का पुत्र। विष्णु और पद्म के बाद यह राजा हुआ था। हपु० ४५ २४-२५

(२) कुण्डल पर्वतस्थ रजतकूट का स्वामी देव। हपु० ५ ६९१

पद्मदेवी—भरतक्षेत्र के मगधदेश मे स्थित शाल्मलि-ग्रामवासी जयदेव और देविला की पुत्री। अज्ञात फल का भक्षण न करने से इसके उत्तर जन्म सुधरते गये। आर्या, स्वयप्रभा, विमलश्री, इन्द्र की प्रधान देवी, पद्मावती और देव होकर यह ससार से मुक्त हुई। हपु० ६०. १०९-१२२

पद्मध्वज—(१) समवसरण से सबधित कमलाकित ध्वजाएँ। मपु० २२ २२५

(२) भविष्यत्कालीन चौदहवे कुलकर। मपु० ७६ ४६६ हपु० ६० ५५७

पद्मनाभ—पूर्व धातकीखण्ड में मगलावती देश के रत्नसचय नगर के राजा कनकप्रभ के पुत्र। इनकी सोमप्रभ आदि अनेक रानियाँ तथा सुवर्णनाभ आदि अनेक पुत्र थे। अन्त मे इन्होंने पुत्र सुवर्णनाभ को राज्य देकर दीक्षा ले ली तथा सिंहनिष्क्रीडित तप तपकर सम्यक् आराधना करते हुए समाधि पूर्वक शरीर त्यागा। ये वैजयन्त विमान में तैंतीस सागर की आयु के धारक अहमिन्द्र हुए। इस स्वर्ग से च्युत होकर ये तीर्थंकर चन्द्रप्रभ हुए। मपु० ५४.१३०-१७३

(२) तीर्थंकर मुनिसुव्रत के तीर्थं मे उत्पन्न भोगपुर नगर का इक्ष्वाकुवशी राजा। यह चक्रवर्ती हरिषेण का पिता था। मपु० ६७ ६१-६४

(३) भावी तीर्थंकर राजा पद्मसेन का पुत्र। मपु० ५९.८

(४) काशी देश की वाराणसी नगरी का राजा। यह तीर्थङ्कर मल्लिनाथ के तीर्थंकाल में हुए चक्रवर्ती पद्म का पिता था। मपु० ६६ ६७, ७६-७९

(५) दशरथ पुत्र राम का अपरनाम। पपु० ५८ २४, ८१. ५४, ६३

(६) पूर्वधातकीखण्ड के भरतक्षेत्र की अमरककापुरी का राजा। हपु० ५४.८, पापु० २१ २८-२९

पद्मनाभि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

पद्मनिधि—एक निधि । यह एक प्रकार की उद्योग-शाला थी । इसमें रेशमी और सूती वस्त्र बनाये जाते थे । मपु० ३७.७९

पद्मनिभ—अश्वध्वज का पुत्र । पद्ममाली का पिता और विद्याधर दृढ़-रथ का वंशज था । पपु० ५.४७-५६

पद्मपुंगव—उत्सर्पिणी काल के दुःषमा नामक काल में होने वाले सोलह कुलकरों में पन्द्रहवें कुलकर । मपु० ७६.४६६ हरिवंशपुराण के अनुसार ये चौदहवें और अन्तिम कुलकर होंगे । हपु० ६० ५५३-५५७

पद्मप्रभ—(१) उत्सर्पिणी काल के दुःषमा काल में होनेवाले सोलह कुलकरों में बारहवें कुलकर । मपु० ७६.४६५ हरिवंशपुराण के अनुसार ये ग्यारहवें कुलकर होंगे । हपु० ६० ५५७

(२) अवसर्पिणी काल के चतुर्थ दुःषमा-सुषमा काल में उत्पन्न शलाकापुरुष और छठे तीर्थंकर । मपु० २ १२९, १३४, हपु० १ ८, २२-३२, वीवच० १८ ८७, १०१-१०५ कौशाम्बी नगरी के इक्ष्वाकु-वंशी काश्यपगोत्री राजा धरण के यहाँ उनकी रानी सुसीमा के माघ कृष्णा षष्ठी तिथि की प्रभात वेला में ये गर्भ में आये थे तथा कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन त्वष्ट्रयोग में इन्होंने जन्म लिया । तीस लाख पूर्व प्रमाण इनकी आयु थी और दो सौ पचास धनुष ऊँचा शरीर था । आयु का एक चौथाई भाग बीत जाने पर इन्हें एकछत्र राज्य प्राप्त हुआ था । सोलह पूर्वांग कम एक लाख पूर्व की आयु शेष रहने पर ये काम-भोगों से विरक्त हुए और निवृत्ति नामा शिविका पर आरूढ होकर मनोहर वन में कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी की अपराह्न वेला और चित्रा नक्षत्र में एक हजार राजाओं के साथ दीक्षित हुए । दीक्षा लेते ही इन्हें मनःपर्ययज्ञान हो गया था । वर्धमान नगर के राजा सोमदत्त के यहाँ इनकी प्रथम पारणा हुई थी । ये छद्मस्थ अवस्था में छः मास तक मौन रहे । इसके पश्चात् घातिया कर्मों का नाश करके इन्होंने चैत्र शुक्ल में पौर्णमासी की मध्याह्न वेला और चित्रा नक्षत्र में केवलज्ञान प्राप्त किया । इनके वज्रचामर आदि एक सौ दस गणधर थे । तीन लाख तीस हजार मुनि और चार लाख बीस हजार आर्यिकाएँ इनके साथ थी । सम्मेदगिरि पर एक मास का योग धारण करके ये एक हजार मुनियों के साथ प्रतिमायोग में स्थिर हुए और फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी के दिन अपराह्न वेला और चित्रा नक्षत्र में समुच्छिन्न क्रियाप्रतिपाति शुक्लध्यान से कर्म नष्ट करके इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया । मपु० ५२.१८-६८, पपु० २० ४२, ६१, ८४, ११३, ११९ इसके पूर्व ये धातकीखण्ड के पूर्व विदेह में वत्स देश की सुसीमा नगरी के अपराजित नामक राजा थे । ये राजा सीमन्धर के पुत्र थे । आयु के अन्त में समाधिमरण के द्वारा शरीर छोड़कर इन्होंने ग्रैवेयक के प्रीतिंकर विमान में अहमिन्द्र पद पाया था । यहाँ से च्युत होकर ये इस नाम के छठे तीर्थङ्कर हुए । मपु० ५२ २-३, १२-१४, पपु० २०.२६-३५, हपु० ६० १५२

पद्ममाल—कुरुवंश का एक राजा । सुभौम इसके बाद हुआ था । हपु० ४५ २४

पद्मयान—पद्मरागमणियों से निर्मित एक योजन विस्तृत सहस्रदल कमल की रचना । तीर्थङ्कर नेमिनाथ के विहार के समय यह देवों द्वारा चरणों के नीचे रखी गयी थी । हपु० ५९ ७, १०, ३०

पद्मयोनि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । हपु० २५ १३४

पद्मरथ—(१) कुण्डपुर नगर का राजा । वसुदेव ने इस राजा की पुत्री को माल्य कौशल (माला गूँथने की कुशलता) से पराजित कर विवाहा था । हपु० ३१ ३

(२) पद्ममाली का पुत्र और सिंहयान का पिता । यह विद्याधर दृढरथ का वंशज था । पपु० ५ ४७-५६

(३) तीर्थङ्कर धर्मनाथ के पूर्व जन्म का नाम । पपु० २० २१-२४

(४) अक्षौहिणी सेना से युक्त सिंहल देश का राजा । इसने कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में कृष्ण का साथ दिया था । हपु० ५० ७१

(५) पाँच सौ धनुष की ऊँची काया से युक्त एक चक्रवर्ती राजा । इसने सीमन्धर भगवान् से प्रद्युम्न का परिचय प्राप्त किया था । हपु० ४३ ९२-९७

(६) विद्याधरों की नगरी मेघपुर का स्वामी । मपु० ६२ ६६, पापु० ४ २६

(७) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु से उत्तर की ओर विद्यमान अरिष्टनगरी के राजा । स्वयप्रभ जिनेन्द्र से धर्म श्रवण करके इन्होंने धनरथ नामक पुत्र को राज्य दे दिया और संयम धारण कर लिया । ये अगों के वेत्ता हुए । इन्होंने तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया । अन्त में सल्लेखना पूर्वक मरकर ये अच्युत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में इन्द्र हुए । यहाँ से च्युत होकर ये अनन्तनाथ तीर्थङ्कर हुए । मपु० ६० २-२२

(८) कुरुवंशी का एक राजा । यह सुभौम के बाद हुआ था । हपु० ४५ २४

(९) हस्तिनापुर के राजा मेघरथ और उसकी रानी पद्मावती का पुत्र । यह विष्णुकुमार का बड़ा भाई था । पिता तथा भाई के दीक्षित हो जाने पर इसने राज्य किया । राजा सिंहबल को पकड़ लाने से प्रसन्न होकर बलि आदि मन्त्रियों को इसने ही इच्छित वर के रूप में सात दिन का राज्य दिया था । राज्य पाकर बलि आदि मन्त्रियों ने अकम्पनाचार्य आदि मुनियों पर घोर उपसर्ग किया था । इस उपसर्ग का निराकरण इसके छोटे भाई मुनि विष्णुकुमार ने किया था । मपु० ७० २७४-२९८, हपु० २० १४-२६

पद्मरागमय—मेरु पर्वत की छः पृथ्वीकाय परिधियों में एक परिधि । हपु० ५.३०५

पद्मरागा—किष्किन्धपुर के राजा सुग्रीव और उसकी भार्या तारा की पुत्री । इसका विवाह हनुमान् के साथ हुआ था । पपु० १९ १०७-१२५

पद्मराज—उत्सर्पिणी काल में होनेवाले तेरहवें कुलकर । मपु० ७६ ४६६ हरिवंश पुराण के अनुसार ये बारहवें कुलकर होंगे । हपु० ६० ५५४-५५७

पद्मरुचि—क्षेमपुर के राजा विपुलवाहन का पुत्र। यह एकक्षेत्र नगर के वणिक् धर्मदत्त का जीव था। इसने एक मुनि के उपदेश से रात्रि-जल का त्याग किया था। फलस्वरूप मरकर यह स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर यह महापुर नगर में मेरु नामक सेठ और उसकी भार्या धारिणी का पुत्र हुआ। एक समय इसने एक मरणासन्न बैल को पञ्च नमस्कार मंत्र सुनाया था। मंत्र के प्रभाव से बैल मरकर महापुर नगर में ही छत्रच्छाय का पुत्र हुआ। उसका नाम वृषभध्वज रखा गया था। वृषभध्वज से परिचय होने पर इसकी वृषभध्वज ने अर्चना की थी। अन्त में इसने श्रावक व्रत लेकर वृषभध्वज के साथ जिनमन्दिर और जिनबिम्ब बनवाये तथा समाधिमरण करके यह ईशान स्वर्ग में वैमानिक देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर विजयार्ध पर्वत के नन्द्यावर्त नगर के राजा नन्दीश्वर का पुत्र हुआ। इसने संयम धारण कर लिया और तप तपते हुए मरण करके यह माहेन्द्र स्वर्ग में देव हो गया। वहाँ से च्युत होकर यह इस भव मे पद्मरुचि हुआ। पपु० १०६ ३०-७६

पद्मलता—(१) पुष्करवरद्वीप के सरित् देश में स्थित वीतशोकपुर के राजा चन्द्रध्वज और कनकमालिनी की पुत्री। इसने गणिनी अमित-सेना के पास संयम धारण किया और मरकर स्वर्ग में देव हुई। मपु० ६२ ३६५

(२) पलाश द्वीप में स्थित पलाशनगर के राजा महाबल और उसकी रानी कांचनलता की पुत्री। इसका राजश्रेष्ठी नागदत्त से विवाह हुआ। अनेक उपवास करती हुई मरण करके यह स्वर्ग गयी और वहाँ से च्युत होकर चन्दना हुई। मपु० ७५ ९७-९८, ११८, १३३-१३४, १५३-१५४, १७०

पद्मलोचन—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का चालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

पद्मवती—(१) सुरसुन्दर और उसकी भार्या सर्वश्री की पुत्री। इसने गान्धर्व-विधि से विवाह किया था। पपु० ८ १०३-१०८

(२) मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में स्थित क्षेमपुरी नगरी के राजा विपुलवाहन की भार्या। यह श्रीचन्द्र की जननी थी। पपु० १०६ ७५-७६

पद्मविष्टर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

पद्मवेदिका—विदेहक्षेत्र के स्वर्णमय स्थल में स्थित पीठिका के नीचे-चारो ओर रत्ननिर्मित छ वेदिकाओ पर बनी लघु वेदिकाएँ। हपु० ५ १७५-१७६

पद्मश्री—(१) चम्पानगर-निवासी सागरदत्त तथा उसकी भार्या पद्मा-वती की पुत्री। इसका विवाह अन्तिम केवली जम्बूस्वामी के साथ हुआ था। मपु० ७६ ४६-५०

(२) चन्द्रपुर-नगर के राजा चित्राम्बर की रानी तथा चन्द्रानन की जननी। पपु० ६ ४०२

(३) अरिंजयपुर के राजा मेघनाद की पुत्री। सुभौम चक्रवर्ती ने इसे पाकर अपने श्वसुर मेघनाद को विद्याधरों का राजा बनाया था। हपु० २५ २-३, ३१

पद्मसंभूति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

पद्मसेन—(१) पश्चिम धातकीखण्ड में स्थित रम्यकावती देश के महा-नगर के प्रजा हितैषी एक राजा। सर्वगुप्त केवली से धर्मतत्त्व को जानकर तथा यह भी जानकर कि उनके मुक्त होने मे केवल दो आगामी भव शेष रह गये हैं—उन्होंने अपने पुत्र पद्मनाभ को राज्य दे दिया। इन्होंने ग्यारह अंगो का अध्ययन किया और उत्कृष्ट तप से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया। मृत्यु होने पर ये सहस्रार स्वर्ग के विमान में इन्द्र हुए और वहाँ से च्युत होकर तेरहवें तीर्थंकर विमल-नाथ हुए। मपु० ५९.२-३, ७-१०, २१-२२

(२) अयोध्या का राजा। इसने पूर्व विदेहक्षेत्र के मंगलावती देश में रत्नसंचय नगर के राजा विश्वसेन को मारा था। हपु० ६० ५७-५९

(३) भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् हुए आचार्यों में एक आचार्य। हपु० ६६ २७

पद्मांग—चौरासी लाख कुमुद वर्ष का समय। हपु० ७ २७

पद्मा—(१) लंका के राजा घनप्रभ की रानी और कीर्तिधवल की जननी। पपु० ५ ४०३-४०४

(२) रत्नपुर के राजा विद्याधर पुष्पोत्तर की पुत्री। यह पद्मोत्तर की बहिन थी। इसका विवाह मेघपुर के राजा अतीन्द्र के पुत्र श्रीकण्ठ से हुआ था। पपु० ६.२-८, ५३

(३) रावण की रानी। पपु० ७७ ९-१४

(४) त्रिश्रृंग नगर के राजा प्रचण्डवाहन और उसकी रानी विमलप्रभा की पुत्री। इसने अपनी बहिनो के साथ यह निश्चय किया हुआ था कि ये युधिष्ठिर से ही विवाह करेंगी। हपु० ४५.९५-९८, १०४

(५) समवसरण के चम्पक वन की एक वापी। हपु० ५७.३४

(६) विदेह क्षेत्र का एक देश। यह सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित है। मपु० ६३ २०८-२१५ हपु० ५ २४९-२५०

(७) लक्ष्मी। मपु० ५२ १

पद्माल—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो में एक नगर। हपु० २२ ८६

पद्मावती—(१) पूर्व विदेहस्थ रम्यका देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१४, हपु० ५ २६०

(२) एक आर्या। गन्धर्वपुर के राजा वासव की रानी प्रभावती ने इससे दीक्षा ली थी। भद्रिलपुर के राजा मेघनाद की रानी विमलश्री ने भी इसी आर्या से दीक्षा ली थी। मपु० ७ ३१, हपु० ६० ११९

(३) इन्द्रपुर नगर के स्वामी उपेन्द्रसेन की पुत्री। यह पुण्डरीक नारायण से विवाही गयी थी। मपु० ६५ १७९

(४) हरिवंशी राजा नरवृष्टि की रानी। उग्रसेन, देवसेन और महासेन इसके पुत्र तथा गान्धारी इसकी पुत्री थी। मपु० ७० १००-१०१

(५) हस्तिनापुर के राजा मेघरथ की रानी। यह विष्णु और पद्म राजकुमारों की जननी थी। मपु० ७० २७४

(६) अरिष्टपुर के राजा हिरण्यवर्मा की रानी। रोहिणी इसी की पुत्री थी। मपु० ७० ३०७, पापु० ११ ३१

(७) मथुरा नगरी के राजा उग्रसेन की रानी। यह कंस की जननी थी। मपु० ७० ३३१-३३२, ३४१-३४४

(८) चम्पा नगर के सेठ सागरदत्त की पत्नी, पद्मश्री की जननी। मपु० ७६ ४५-५०

(९) कृष्ण की आठवी पटरानी। यह अरिष्टपुर नगर के राजा हिरण्यवर्मा और उसकी रानी श्रीमती की पुत्री थी। पूर्वभवों में यह उज्जयिनी में विजयदेव की विनयश्री नामा पुत्री, चन्द्रमा की रोहिणी नामा देवी, शाल्मलि ग्राम के विजयदेव की पुत्री, स्वर्ग में स्वयप्रभा नामा देवी, जयन्तपुर नगर में श्रीधर राजा की पुत्री और तत्पश्चात् स्वर्ग में देवी हुई थी। मपु० ७१ १२६-१२७, ४४३-४५८, हपु० ४४ ३८, ४२-४३

(१०) वीतशोकपुर के राजा चक्रध्वज और उसकी रानी विद्युन्मती की पुत्री। मपु० ६२ ३६६

(११) राजपुर के वृषभदत्त सेठ की भार्या। इसने सुव्रता आर्यिका के पास संयम धारण कर लिया था। मपु० ७५ ३१४-३१९

(१२) तीर्थंकर पार्श्वनाथ की शासनदेवी। पूर्वभव की सर्पिणी पर्याय में अपने पति सर्प के साथ यह जिस काष्ठ-खण्ड में बैठी थी उस काष्ठखण्ड को कमठ की आठवी उत्तर पर्याय के जीव राजा महीपाल ने अपनी तापस अवस्था में तपस्या के लिए कुल्हाड़ी से फाड़ना आरम्भ किया। उस समय महीपाल के दौहित्र कुमार पार्श्वनाथ भी वही खड़े थे। उन्होंने महीपाल को लकड़ी फाड़ने को रोका। वह नही माना और उसने कुल्हाडी से उस काष्ठखण्ड को फाड़कर देखा। उसने उसमें क्षत-विक्षत सर्प-युगल को पाया। पार्श्वनाथ ने मरते हुए इस युगल को नमस्कार मंत्र सुनाकर धर्मोपदेश दिया जिससे अगली पर्याय में यह युगल भवनवासी देव और देवी हुए। सर्पिणी पद्मावती हुई और सर्प धरणेन्द्र। जब पार्श्वनाथ तपश्चर्या में लीन थे उस समय कमठ-महीपाल के जीव शम्बर देव के द्वारा उन पर किये गये घोर उपसर्ग का निवारण इन दोनों ने ही किया था। तब से यह देवी मातृदेवी के रूप में पूजी जाने लगी। मपु० ७३ १०१-११९, १३९-१४१ दे० कमठ

(१३) कुशाग्र नगर के राजा सुमित्र की रानी। यह तीर्थंकर मुनिसुव्रत की जननी थी। हपु० १५ ६१-६२, १६ २, २० ५६

(१४) अरिष्टपुर नगर के राजा प्रियव्रत की द्वितीय महादेवी। यह रत्नरथ और विचित्ररथ की जननी थी। पपु० ३९ १४८-१५०

(१५) सुग्रीव की बारहवी पुत्री। पपु० ४७ १३६-१४४

(१६) रुचकगिरि के पश्चिम दिशावर्ती पद्मकूट में रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७१३

(१७) वसुदेव की रानी। हपु० १ ८३, २४ ३०

(१८) आठ दिक्कुमारियों में एक दिक्कुमारी। हपु० ८ ११०

(१९) राजगृही के सागरदत्त सेठ की स्त्री। मपु० ७६ ४६

(२०) राजा भोजकवृष्णि की रानी। इसके तीन पुत्र थे—उग्रसेन, महासेन और देवसेन। हपु० १८ १६

पद्मासन—(१) तीर्थंकर अनन्तनाथ के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २४ हपु० के अनुसार तीर्थंकर अनन्तनाथ के पूर्वजन्म का नाम पद्म है। हपु० ६० १५३

(२) तीर्थंकर विमलनाथ के पूर्वजन्म का नाम। हपु० ६० १५३ पपु० के अनुसार विमलनाथ के पूर्वजन्म का नाम नलिनगुल्म है। पपु० २० २१

पद्मिनीखेट—जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत की उत्तर दिशा में स्थित एक नगर। मपु० ६२ १९१, ६३ २६२-२६३ पापु० ४ १०७

पद्मेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

पद्मोत्तमा—चन्द्राभ नगर के राजा तथा उसकी रानी तिलोत्तमा की पुत्री। सर्प द्वारा काटे जाने पर जीवन्धरकुमार द्वारा इसका विष दूर किया गया था। राजा ने जीवन्धर के इस कार्य से प्रभावित होकर इसका जीवन्धर के साथ विवाह कर दिया था। मपु० ७५ ३९१-४००

पद्मोत्तर—(१) कुण्डल पर्वतस्थ रजतप्रभ कूट का स्वामी देव। हपु० ५ ६९१

(२) रुचक पर्वतस्थ नन्द्यावर्तकूट का निवासी देव। हपु० ५ ७०२

(३) मेरु पर्वत से पूर्व की ओर सीता नदी के उत्तरी तट पर स्थित कूट। हपु० ५ २०५

(४) वत्सकावती देश के रत्नपुर नगर के राजा। ये युगन्धर जिनेश के उपासक थे। धनमित्र इनका पुत्र था। पुत्र को राज्य देकर आत्मशुद्धि के लिए ये अन्य अनेक राजाओं के साथ दीक्षित हो गये थे। ग्यारह अंगों का अध्ययन करके इन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध किया था। आयु के अन्त में समाधिपूर्वक मरण कर ये महाशुक्र स्वर्ग में महाशुक्र नाम के इन्द्र हुए। वहाँ से च्युत होकर ये तीर्थंकर वासुपूज्य हुए। मपु० ५८ २, ७, ११-१३, २०, हपु० ६० १५३

(५) तीर्थंकर श्रेयांस के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २०-२४

(६) रत्नपुर नगर के विद्याधर पुष्पोत्तर का पुत्र। पपु० ६ ७-९

पनस—कटहल। भरतेश ने इसका उपयोग वृषभदेव की पूजा में किया था। मपु० १७ २५२

पनसा—भरतक्षेत्र के मध्य देश की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ५४

पन्नग—नागकुमार जाति के देव। मपु० १९ ९३

पम्पा—चेदि देश के पास इस नाम का एक सरोवर। यहाँ आकर ही भरतेश की सेना चेदि देश में प्रविष्ट हुई थी। मपु० २९ ५५

पयोबल—पश्चिम विदेहक्षेत्र में रत्नसंचय नगर के राजा महाघोष और रानी चन्द्रिणी का पुत्र। मुनि होकर इसने तीव्र तप किया था। यह मरकर प्राणत स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ५ १३६-१३७

परंब्रह्म—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

पर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

परग्राम—ग्राम का एक भेद। इसमें पाँच सौ घर तथा सम्पन्न किसान रहते हैं। इसकी सीमा दो कोस की होती है। मपु० १६ १६५

परचक्र—पर राष्ट्र। मपु० ५ ११

परतत्त्व—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३

परतर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

परम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६५

परमज्योति—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०, २५ ११०

परमनिर्वाण—कर्त्रन्वय क्रिया का एक भेद। मपु० ३८ ६७

परमपुरुष—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

परमशुक्लध्यान—शुक्लध्यान का दूसरा भेद। यह सूक्ष्मक्रियापाति और समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति भेद से दो प्रकार का होता है। यह केवली स्नातक मुनि को प्राप्त होता है। मपु० २१ १६७, १८८, १९४-१९७

परमसिद्धत्व—मुक्तात्मा का एक विशिष्ट गुण। इसमें समस्त पुरुषार्थों की पूर्णता होती हैं। मपु० ४२.१०७

परमस्थान—सात उत्तम स्थान। ये स्थान हैं—सज्जाति, सद्गृहस्थता, पारिव्राज्य, सुरेन्द्रता, साम्राज्य, परम आर्हन्त्य और निर्वाण। ये पद भव्य जनों को ही प्राप्त होते हैं। मपु० ९ १९६, ३९ ८२-२०९

परमा—दिव्या, विजयाश्रिता, परमा और स्वा इन चार जातियों मे एक जाति। यह अर्हन्तों को प्राप्त होती है। मपु० ३९ १६८

परमाणु—आदि, मध्य और अन्त से रहित, अविभागी, अतीन्द्रिय, एक प्रदेशी द्रव्य। यह एक काल में एक रस, एक वर्ण, एक गन्ध और परस्पर अविरुद्ध दो स्पर्शों को धारण करनेवाला और अभेद्य होता है। शब्द का कारण होते हुए भी यह स्वयं शब्द रहित होता है। हपु० ७ १७, ३२-३३

परमात्मा—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३, २५ ११०

(२) स्वयं के द्वारा स्वयं मे ही लीन हो जानेवाला आत्मा। यह दो प्रकार का होता है—सकल और निकल। दिव्य देह में स्थित सकल आत्मा परमात्मा और देह रहित आत्मा निकल परमात्मा है। तेरहवें गुण स्थानवर्ती जीव सयोगी (सकल) और चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव अयोगी (निकल) परमात्मा होते है। मपु० ४६.२१५ वीवच० १६ ८४, ९७

परमानन्द—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। २५-१७०, १८९

परमार्हन्त्य—कर्त्रन्वय-क्रिया का एक भेद। मपु० ३८ ६७

परमावगाढ़-सम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेदों में दसवाँ भेद। केवलज्ञान के द्वारा आलोकित समस्त पदार्थों पर चरम सीमा में उत्पन्न रुचि इसी सम्यक्त्व के कारण होती है। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४९ वीवच० १९ १५२ अपरनाम परावगाढ सम्यक्त्व। मपु० ५४. २२९

परमेश्वर—(१) वागर्थसंग्रह पुराण के कर्त्ता एक आचार्य। मपु० १ ६२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

परमेष्ठी—(१) समस्त दोषो से रहित और समस्त गुणो सहित परमपद में स्थित अर्हत् (अर्हन्त) और सिद्ध तथा मोक्षमार्ग में प्रवृत्त आचार्य, उपाध्याय और साधु। ये पंच परमेष्ठी हैं। इनके नाम-स्मरण से मन मे पवित्रता का संचार होता है और पारिणामिक विशुद्धि उत्पन्न होती है। ये ही 'पंच गुरु' भी हैं। मपु० ५.२३५, २४५, ६ ५६, ३८ १८८

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३, २५ १०५

परमोदय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १६५

परमौदारिक—अर्हन्तो का शरीर। महाभ्युदय रूप निःश्रेयस (मोक्ष) इसी से होता है। मपु० १५ ३२

परविवाहकरण—स्वदारसन्तोषव्रत के पाँच अतिचारो में इस नाम का एक अतिचार। अपनी या अपने संरक्षण में रहनेवाली सन्तान के सिवाय दूसरो की सन्तान का विवाह करना, कराना इस अतिचार में आता है। हपु० ५८ १७४-१७५

परशुराम—जमदग्नि ऋषि और रेणुकी का पुत्र। इसका अपरनाम इन्द्र था। यह श्वेतराम का अग्रज था। इसकी माँ रेणुकी को एक सिद्ध पुरुष से कामधेनु (विद्या) और मंत्र सिद्ध परशु प्राप्त थे। रेणुकी की बड़ी बहिन का पुत्र कृतवीर रेणुकी से कामधेनु चाहता था पर रेणुकी ने नहीं दी। इस पर वह उसे बलपूर्वक ले जाने लगा। जमदग्नि ने उसे रोका। रोकने से दोनों में युद्ध हुआ और जमदग्नि मारा गया। इस पर परशुराम ने अयोध्या जाकर कृतवीर्य और उसके पिता से युद्ध किया तथा दोनों को मार डाला। इतना ही नहीं एक क्षत्रिय द्वारा किये गये पिता के वध का बदला लेने के लिए इसने इक्कीस बार पृथिवी को क्षत्रिय विहीन किया था। अन्त में यह सुभौम चक्रवर्ती के चक्र से मारा गया था। मपु० ६५ ९०-११२, १२७, १४९-१५० हपु० २५ ८-९

परस्परकल्याण—एक व्रत। इस व्रत की साधना के लिए कल्याणकों के पाँच, प्रातिहार्यों के आठ और अतिशयो के चौंतीस कुल सैंतालीस उपवासों को चौबीस बार गिनने पर उपलब्ध संख्यानुसार (ग्यारह सौ अट्ठाईस) उपवास किये जाते हैं। इसमें आरम्भ में एक बेला (दो उपवास) और अन्त में एक तेला (तीन उपवास) करना होता है। हपु० ३४ १२४-१२५

परा—वत्स देश के आगे की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ६९

पराश्य—वृषभदेव के चौरासी गणधरों में चौतीसवें गणधर। हपु० १२ ६१

पराजयपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का स्वामी मन्त्रियो सहित युद्ध में रावण की सहायतार्थ आया था। पपु० ५५ ८७-८८

पराजित—धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का इक्यासीवाँ पुत्र। पापु० ८ २००

परात्पर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८९

परात्मज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८९

परामभोधि—नारायण लक्ष्मण के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २० २१६-२१७

परार्घ्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

परावगाढ़सम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन का एक भेद। अपरनाम परमावगाढ़ सम्यक्त्व। मपु० ५४ २२९ दे० परमावगाढ सम्यक्त्व

परावर्त्त—तालगत गान्धर्व के बाईस प्रकारो में एक प्रकार। हपु० १९ १५०

परावर्तन—जीव का ससार में भ्रमण। यह भ्रमण द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव के भेद से पाँच प्रकार का होता है। वीवच० ११ २६-३२

पराशर—हस्तिनापुर नगर के कौरववशी राजा शक्ति और उसकी रानी शतकी का पुत्र। यह मत्स्य कुल में उत्पन्न राजपुत्री सत्यवती से विवाहित हुआ था। महर्षि व्यास का यह पिता था। मपु० ७० १०१-१०३

परिजा—भरतक्षेत्र की एक नदी। यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ६९

परिकर्म—(१) स्निग्ध पदार्थों का शोधन। पपु० २४ ५१

(२) बारहवें दृष्टिवाद अग का एक भेद। हपु० २ ९५-९६

परिक्रम—नृत्य का पद-विक्षेप और चक्रण (फिरकी लगाना) मपु० १३ १७९, १८ २००

परिक्षोदपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का नृप मन्त्रियो सहित युद्ध में रावण की सहायतार्थ उसके निकट गया था। पपु० ५५ ८७-८८

परिग्रह—चेतन और अचेतन रूप बाह्य सम्पत्ति में तथा रागादि रूप अन्तरग विकार में ममताभाव रखना। यह बाह्य और आभ्यन्तर के के भेद से दो प्रकार का होता है। इसकी बहुलता नरक का कारण है। इससे चारो प्रकार का बन्ध होता है। परिग्रही मनुष्यो के चित्त-विशुद्धि नहीं होती, जिससे धर्म की स्थिति उनमें नहीं हो पाती। इसकी आसक्ति से जीववध सुनिश्चित रूप से होता है और राग-द्वेष जन्मते हैं जिससे जीव सदैव ससार के दु ख पाता रहता है। मपु० ५ २३२, १० २१-२३, १७ १९६, ५९ ३५, पपु० २ १८०-१८२, हपु० ५८ १३३

परिग्रहत्यागप्रतिमा—श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओ में नवमी प्रतिमा। इसमें वस्त्र के अतिरिक्त अन्य समस्त परिग्रहों का मन, वचन और काय से त्याग किया जाता है। इसे परिग्रह परिच्युति भी कहते हैं। मपु० १० १६० वीवच० १८ ६६

परिग्रहपरिमाणुव्रत—क्षेत्र, वास्तु, धन, धान्य, दासी-दास, पशु, आसन, शयन, वस्त्र और भाण्ड इन दस प्रकार के परिग्रहों का लोभरूप पाप के विनाशनार्थ किसी निश्चित सख्या में परिमाण करना। वीवच० १८ ४५-४७

परिग्रहानन्द—रौद्रध्यान के चार भेदो में चौथा भेद। बाह्य और आभ्यन्तर दोनो प्रकार के परिग्रहो की रक्षा में आनन्द मानना। हपु० ५६ १९, २५-२६

परिणय—विवाह। यह प्रजा सन्तति का कारण है और मनुष्यों के गृहस्थ-धर्म का प्रवेश द्वार है। मपु० १५ ३०, २५ ६२-६४

परिणामक्रिया—कालद्रव्य का कार्य। समस्त पदार्थों में अन्तरग और बहिरग निमित्तो से होनेवाला परत्व और अपरत्व रूप परिणमन परिणामक्रिया है। हपु० ७ ५

परिदेवन—असातावेदनीय कर्म का आस्रव। यह ऐसा विलाप है जिसे सुनकर श्रोता भी दयार्द्र हो जाता है। हपु० ५८ ९३

परिभोग—आसन आदि वे वस्तुएँ जिनका बार-बार भोग किया जाता है। हपु० ५८ १५५

परिनिर्वाण—एक व्रत। इसकी साधना के लिए प्रतिवर्ष भादो सुदी सप्तमी को उपवास किया जाता है। इससे अनन्त सुख रूप फल प्राप्त होता है। हपु० ३४ १२७

परिनिर्वाणकल्याणपूजा—तीर्थंकरो के अन्तिम शरीर से सम्बन्ध रखने-वाली पूजा। इस पूजा को चारो निकायो के देव अपने-अपने इन्द्रो के नेतृत्व में करते हैं। इस पूजा के पश्चात् मोक्षगामी जीवो के शरीर क्षण भर में बिजली के समान आकाश को देदीप्यमान करते हुए विलीन हो जाते हैं। हपु० ६५ ११-१२

परिनिष्क्रमण—ससार से विरक्ति होने पर इन्द्र और लौकान्तिक देवो के द्वारा तीर्थंकरो का अभिषेक और अलकरण। इसके पश्चात् तीर्थंकर राज्य करके दीक्षा के लिए नगर से निष्क्रमण करते हैं। मपु० १७ ४६-४७, ७०-७५, ९१, ९९, १३०

परिवृढ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

परिव्राजक—(१) काषायवस्त्रधारी साधु। ऐसा साधु ससार के कारण स्वरूप परिग्रह को त्याग कर मुक्तिमार्ग का पथिक हो जाता है। पपु० ३ २९३, १०९ ८६, हपु० २१.१३४

(२) एक मत। इसे मरीचि ने चलाया था। पपु० ८५ ४४

परिषद्—इन्द्र की सभा। यह तीन प्रकार की होती है—अन्त परिषद्, मध्यम परिषद् और बाह्य परिषद्। इनमें अन्त परिषद् में एक सौ पच्चीस देव, मध्यम परिषद् में दो सौ पचास देव और बाह्य परिषद् में पाँच सौ देव होते हैं। मपु० १० १९१

परिहार—प्रायश्चित के नौ भेदो में आठवाँ भेद। पक्ष, मास आदि एक निश्चित समय के लिए दोषी मुनि को सघ से दूर कर देना परिहार कहलाता है। हपु० ६४ २८, ३७

परिहारविशुद्धि—साधु के पाँच प्रकार के चारित्रो में एक चारित्र। इससे जीव-हिंसा आदि के परिहार से आत्मा की विशिष्ट शुद्धि होती है। हपु० ६४.१७

परीक्षित—अभिमन्यु और उत्तरा का पुत्र। कृष्ण ने इसे अभिमन्यु के पश्चात् पाण्डवो के राज्य का अधिकारी बनाया था। पापु० २२ ३३-३४

परीषह—सहनशक्ति की प्रबलता से सही जानेवाली एव मोक्षमार्ग में आने वाली बाधाएँ। इन्ही के कारण सम्यक्चारित्र को पाकर भी तपस्वी भ्रष्ट हो जाते हैं। ये बाधायें बाईस होती है। वे हैं—क्षुधा, पिपासा (तृषा) शीत, उष्ण, दश-मशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री, चर्या, शय्या, निषद्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, अदर्शन, रोग, तृण-स्पर्श, प्रज्ञा, अज्ञान, मल और सत्कार-पुरस्कार। मार्ग से च्युत न होने तथा कर्मों की निर्जरा हेतु इनको सहन किया जाता है। इनकी विजय पर ही महात्माओ की सिद्धि आश्रित होती हैं। इनकी विजय के लिए अनुप्रेक्षाओ का चिन्तन किया जाता है। मपु० ५ २४३-२४४, ११ १००-१०२, ३६ ११६, १२८, ४२ १२६-१२७, पपु० २ १८४, २२ १६९

परोक्ष—प्रमाण का दूसरा भेद। मति और श्रुत ज्ञान से प्राप्त ज्ञान परोक्ष प्रमाण कहलाता है। इससे हेय पदार्थ को छोडने और उपादेय को ग्रहण करने की बुद्धि उत्पन्न होती है। मपु० २ ६१, हपु० १०. १४४-१४५, १५५

पर्णलघ्वी—एक विद्या। इससे पत्तो के समान शरीर हल्का और छोटा बनाया जाता है। यह विद्या आकाश से नीचे इच्छित स्थान पर उतरने में सहायक होती है। यह विद्या वसुदेव और भामण्डल को प्राप्त थी। श्रीपाल इसी विद्या के द्वारा रत्नावर्त पर्वत पर गये थे। मपु० ४७ २१-२२, ६२.३९८, ७० २५८-२५९ पपु० २६ १२९ हपु० १९ ११३, पापु० ११ २४

पर्याप्त—(१) जीव की एक अवस्था। इसमें उसकी सभी पर्याप्तियाँ पूर्ण होती हैं। मपु० १० ६५, १७.२४

(२) पर्याप्ति की अवस्था को प्राप्त जीव। पपु० १०५ १४५

पर्याप्ति—आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन की शक्तियो की पूर्णता। यह नामकर्म का एक भेद है। हपु० १८ ८३, ५६ १०४, पापु० २२ ७२

पर्याय—(१) द्रव्य मे प्रति समय होनेवाला गुणो का परिणमन। मपु० ३ ५-८

(२) श्रुतज्ञान के बीस भेदो में प्रथम भेद। यह ज्ञान सूक्ष्म निगोदिया लब्धपर्याप्तक जीवो के होता है और श्रुतज्ञानावरण पर होनेवाले आवरण से रहित होता है। हपु० १० १२,१६

पर्यायसमास—श्रुतज्ञान के बीस भेदो में दूसरा भेद। श्रुतज्ञान का आवरण होने पर भी प्रकट रहनेवाला पर्याय-श्रुतज्ञान जब ज्ञान के अनन्तवें भाग के साथ मिल जाता है तब वह ज्ञान इस नाम से सम्बोधित किया जाता है। पर्याय-ज्ञान के ऊपर सख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि के क्रम से वृद्धि होते-होते जब अक्षर-ज्ञान की पूर्णता होती है तब पर्यायसमास का ज्ञान होता है। हपु० १० १२-१३, १९-२१

पर्यायार्थिक—नय के दो भेदो मे दूसरा भेद। इसमें द्रव्य से अभिन्न पर्याय विशेष का मुख्य रूप से कथन किया जाता है। यह श्रुतज्ञान का एक भेद है। हपु० १० १२

पर्व—(१) पर्वांग प्रमाणकाल में चौरासी लाख का गुणा करने से उपलब्ध सख्या प्रमाण काल। यह सख्या का भी एक भेद है। मपु० ३ १४७, २१९

(२) आष्टाह्निक जिन-पूजा। हपु० १८ ९९

पर्वत—स्वस्तिकावती नगर के निवासी ब्राह्मण क्षीरकदम्बक अध्यापक का पुत्र। इसी नगर के राजा विश्वावसु और उसकी रानी श्रीमती का पुत्र राजकुमार वसु इसका सहपाठी था। इसकी जननी स्वस्तिमती थी। पद्मपुराण मे राजा वसु को विनीता नगरी के राजा ययाति और उसकी रानी सुरकान्ता का पुत्र बताया गया है। नारद नामक छात्र भी इन्ही के गुरु के पास इन दोनो के साथ पढता था। नारद के साथ इसका "अज" शब्द के अर्थ में विवाद हो गया था। यह अज का अर्थ बकरा पशु बताता था जबकि नारद अज का अर्थ—वह धान्य जो अकुरोत्पत्ति में असमर्थ हो, करता था। अपने पक्ष में राजा से निर्णय प्राप्त कर लेने के कारण यह लोक में निन्दित हुआ तथा कुतप के कारण मरकर राक्षस हुआ। राक्षस होकर पृथिवी पर इसने हिंसापूर्ण यज्ञो का प्रचार किया था। मपु० ६७ २५६-४५५, पपु० ११ १३-१५, ४२-१०५ हपु० १७ ३८, ६४, १५७-१६०

पर्वतक—गन्धावती नदी के किनारे गन्धमादन पर्वत पर उत्पन्न भील। यह वल्लरी का पति था। धर्मपूर्वक मरण करके यह विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी में महाबल विद्याधर का हरिवाहन नामक पुत्र हुआ था। हपु० ६० १६-१८

पर्वांग—पूर्वप्रमाणकाल में चौरासी का गुणा करने से प्राप्त संख्या-प्रमित काल। मपु० ३.२१९-२२०

पर्वोपवास—पर्व के दिनो मे उपवास का नियम लेकर स्थिर चित्त से जिनमन्दिर में रहना। इन दिनो में सामायिक आदि से आत्म-शुद्धि की जाती है। मपु० ४१ ११२

पलालपर्वत—धातकीखण्ड के पूर्व मेरु से पश्चिम दिशा की ओर स्थित विदेहक्षेत्र के गन्धिला देश का एक ग्राम। यहाँ ललिताग देव की महादेवी स्वयप्रभा ने अपने पूर्वभव में धनश्री के रूप में जन्म लिया था। मपु० ६ १२६-१२७, १३४-१३५

पलाशकूट—(१) कुरुदेश का एक ग्राम। यहाँ वसुदेव ने अपने पूर्वभव में नन्दी के रूप मे जन्म लिया था। मपु० ७० २००

(२) भद्रशाल वन के कूटो में एक कूट। यह सीतोदा नदी के उत्तरी तट पर मेरु की पश्चिम दिशा में स्थित है। यहाँ दिग्गजेन्द्र देव रहते है। हपु० ५ २०७-२०९

पलाशद्वीप—एक द्वीप। राजा महाबल का पलाशनगर इसी द्वीप में स्थित था। मपु० ७५ ९७

पल्य—व्यवहार काल का एक भेद। एक योजन लम्बे, चौड़े और गहरे गर्त को नवजात शिशु-भेड़ के बालों के अग्रभाग से ठीक-ठीक कर भरने के उपरान्त सौ सौ वर्ष के बाद एक-एक रोमखण्ड निकालते हुए रिक्त करने में जितना समय लगे वह पल्य है। इतने काल को असंख्यात वर्ष भी कहते हैं। मपु० ३ ५३, पपु० २० ७४-७६, हपु० ३ १२४

पल्यंक—एक आसन। इस आसन में अंक में बायें हाथ की हथेली पर दायें हाथ की हथेली रहती है। दोनों हाथों की हथेलियाँ ऊपर की ओर होती हैं। आँखों को न तो अधिक खोला जाता है न बिल्कुल बन्द किया जाता है। दृष्टि नासाग्र होती है। मुख बन्द और शरीर सम, सरल तथा निश्चल होता है। यह आसन धर्मध्यान के लिए सुखकर होता है। मपु० २१ ६०-६२, ७२, ३४ १८८

पल्लव—वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित देश। यह भरतक्षेत्र के दक्षिण में स्थित है। यहाँ तीर्थंकर नेमिनाथ ने विहार किया था। मपु० १६ १४१-१४८, १५५, ७२ १९६, पपु० १७ २१३, हपु० ६१ ४२-४३ पापु० २३ ३३

पल्लवक—कुशस्थल नगर का निवासी एक ब्राह्मण। यह इन्धक का भाई था। मुनियों को आहार देने के प्रभाव से यह मरकर मध्यम भोगभूमि के हरिक्षेत्र में आर्य हुआ और वहाँ पल्य की आयु भोगकर देव हुआ। पपु० ५९ ६-११

पल्ली—एक छोटा गाँव। दक्षिण में छोटे-छोटे गाँवों को पल्ली कहते हैं। कृत्याकृत्य के विवेक रहित म्लेच्छ (भील) पल्लियों में निवास करते हैं। पपु० ९९ ६९

पवनकुमार—देवों की एक जाति। ये शीतल, मन्द और सुगन्धित वायु का संचालन करते हुए मन्द-मन्द गति से चलते हैं। मपु० १३ २०९

पवनगिरि—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के हरिपुर नगर का रक्षक विद्याधर। यह और इसकी पत्नी मृगावती सुमुख के पूर्वभव में उसके पिता और माता थे। हपु० १५ २३

पवनजय—(१) तीर्थंकर अरनाथ का इस नाम का अश्व। पापु० ७ २३

(२) भरत चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक रत्न। यह रत्न उनका अश्व था। मपु० ३७ ८३-८४, १७९

(३) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित आदित्यपुर के राजा प्रह्लाद और रानी केतुमती का पुत्र, अपर नाम वायुगति। इसका विवाह महेन्द्रगिरि के राजा महेन्द्र और रानी हृदयवेगा की पुत्री अंजनासुन्दरी से हुआ था। इसने अंजना की सखी मिश्रकेशी को अंजना से विद्युत्प्रभ की प्रशंसा करते हुए सुना था। इस घटना से कुपित होकर इसने विवाह के पश्चात् अंजना के साथ समागम न करने का निश्चय किया था। रावण का वरुण के साथ विरोध उत्पन्न हो जाने से रावण ने अपनी सहायता के लिए इसके पिता प्रह्लाद को बुलवाया था। इसने रावण के पास जाना अपना कर्त्तव्य समझकर पिता से इस कार्य की स्वीकृति प्राप्त की और यह वहाँ गया। जाते समय इसने अंजना को देखा था। यह अंजना पर इस समय भी कुपित ही था। रास्ते में इसे क्रौंच पक्षी की विरह व्यथा देखने से अंजना का बाईस वर्ष का वियोग स्मरण हो आया और यह अपने किये पर बहुत पछताया। यह गुप्त रूप से रात्रि में अंजना से मिला। गर्भ की प्रतीति के लिए इसने अंजना को स्वनाम से अंकित कड़ा दे दिया। यह कड़ा अंजना ने अपनी सास को भी दिखाया किन्तु सास केतुमती ने अंजना को कुलटा कहकर घर से निकाल दिया। पिता ने भी अंजना को आश्रय नहीं दिया। परिणामस्वरूप अंजना ने वन में ही एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम हनुमान् रखा गया था। इसने रावण के पास पहुँचकर उसकी आज्ञा से वरुण से युद्ध किया और उसे पकड़कर उसकी रावण से सन्धि करा दी। और खरदूषण को भी मुक्त कराया था। यह सब करने के पश्चात् घर आने पर अंजना से भेंट न हो सकने से यह बहुत दुःखी हुआ। शोक से व्याकुल होकर इसने अंजना के अभाव में वन में ही मर जाने का निश्चय किया था किन्तु प्रतिसूर्य ने समय पर अंजना पर घटित घटना सुनाकर इसे अंजना से मिला दिया। अपनी पत्नी और पुत्र को पाकर यह अति आनन्दित हुआ। पपु० १५ ६-२१७, १६ ५९-२३७, १७ १०-४०३, १८ २-११, ५४, १२७-१२९

पवनवेग—(१) केवली मुनि। मुनि अजितसेन को भी इन्हीं के साथ केवलज्ञान हुआ था। वायुवेग की पुत्री शान्तिमती इनके केवलज्ञान के समय मौजूद थी। मपु० ६३ ११४

(२) एक विद्याधर। इसने पटरानी लक्ष्मणा की प्राप्ति में कृष्ण की सहायता की थी। मपु० ७१ ४१०-४१३

(३) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित शिवंकर नगर का विद्याधरों का स्वामी। इसकी रानी सुवेगा से मनोवेग उत्पन्न हुआ था। मपु० ७५ १६३-१६५

(४) पवनंजय का अपर नाम। पपु० १०२ १६७ दे० पवनंजय

(५) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के मेघपुर नगर का राजा। मनोहरी इसकी रानी थी। राजा सुमुख की रानी मनोरमा इसी नृप की पुत्री थी। मपु० ७१ ३६९, हपु० १५ २५-२७

(६) गुणमित्र का जीव एक कबूतर। यह अगले भव में जीवन्धर का छोटा भाई नन्दाढ्य हुआ। मपु० ७५ ४५७, ४७४

पवनवेगा—किन्नरगीत नगर के राजा अशनिवेग की रानी। यह शाल्मलिदत्ता की जननी थी। मपु० ७० २५४-२५५

पवि—राजा मृगारिदमन के पश्चात् हुआ लंका का एक राक्षसवंशी राजा। यह मायावी, पराक्रमी और विद्याबल से युक्त था। पपु० ५ ३८७, ३९४, ३९९-४००

पवित्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

पश्चिम—मेघवाहन के पूर्वभव का जीव। यह कौशाम्बी नगरी के एक दरिद्र कुल में उत्पन्न हुआ था। प्रथम इसका सहोदर था। यह भवदत्त मुनि से दीक्षित होकर क्षुल्लक हो गया था तथा मरकर

निदान के कारण नन्दि सेठ का पुत्र हुआ। पूर्वभव का भाई मरकर देव हुआ था। उसके द्वारा सम्बोधे जाने से यह भी देव हो गया था। दोनों देव स्वर्ग से चयकर मन्दोदरी के इन्द्रजित् और मेघवाहन नामक पुत्र हुए। पपु० ७८ ६३-८०

पश्चिमतीर्थंकृत—अन्तिम तीर्थंङ्कर महावीर। मपु० १ २०१

पाञ्चजन्य—(१) पचमुखी शख। यह लक्ष्मण को प्राप्त रत्नो में एक रत्न था। मपु० ६८.६७६-६७७

(२) कस के यहाँ प्रकट हुआ एक शख। इस शख की मेघ के समान गर्जना होती थी। कस से ही यह शख कृष्ण को प्राप्त हुआ था। यह उनके सात रत्नो मे एक रत्न था। हपु० १ ११२, ३५ ७२, ५३ ४९-५०, पापु० २२ ४

पाचाल—अर्जुन तथा द्रौपदी से उत्पन्न पाँच पुत्र। मपु० ७२ २१४

पाशुमूल—विजयार्ध दक्षिणश्रेणी का तियालीसवाँ नगर। हपु० २२ ९९

पाक-सत्व—सिंह आदि दुष्ट जन्तु। मपु० ३३ ५४

पाटनमण्डल—विद्याधरो का स्वामी। यह राम का शार्दूलरथवाही योद्धा था। पपु० ५८ ३-७

पाटला—तीर्थङ्कर वासुपूज्य का चैत्यवृक्ष। पपु० २० ४८, हपु० ६०. १९३

पाटलिग्राम—धातकीखण्ड द्वीप के विदेह क्षेत्र मे स्थित गन्धिल देश का एक ग्राम। मपु० ६ १२७-१२८

पाटलिपुत्र—मगध का एक प्रसिद्ध नगर। तीर्थङ्कर धर्मनाथ की दीक्षा के पश्चात् प्रथम पारणा यही हुई थी। राजा शिशुपाल और उसकी रानी पृथिवीसुन्दरी के पुत्र चतुर्मुख (प्रथम कल्की) का जन्म यही हुआ था। मपु० ६१ ४०, ७६ ३९८

पाटलीग्राम—धातकीखण्ड महाद्वीप के विदेहक्षेत्र में स्थित गन्धिल देश का एक ग्राम। यहाँ नागदत्त सेठ और सुमति रहते थे। उसके पाँच पुत्र और दो पुत्रियाँ थी। छोटी पुत्री का नाम निर्नामा था। मपु० ६ १२७-१३०

पाणिग्रहण—वैवाहिक क्रिया। विवाह-यज्ञ में करग्रहण के पश्चात् वर और कन्या दोनो पति-पत्नी हो जाते हैं। मपु० ७ २४८-२४९, पपु० ६ ५३ हपु० ४५ १४६

पाणिपात्र—कर पात्र में आहार ग्रहण करनेवाले निर्ग्रन्थ मुनि। इस वृत्ति का प्रवर्तन तीर्थङ्कर वृषभदेव ने किया था। मपु० २० ८९, पपु० ४ २१

पाण्ड्य—(१) भरतक्षेत्र में दक्षिण का एक देश। यहाँ के राजा को भरतेश के सेनापति ने दण्डरत्न द्वारा अपने अधीन किया था। इस देश के लोगो के भुजदण्ड बलिष्ठ थे और उन्हें हाथियो से स्नेह था। युद्ध में वे धनुष और भाला शस्त्रो का अधिक प्रयोग करते थे। मपु० २९ ८०, ९५

(२) एक पर्वत। भरतेश का सेनापति इस पर्वत को पारकर सेना के साथ आगे बढा था। मपु० २९ ८९

पाण्डव—राजा पाण्डु के युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव पाँच पुत्र। इनमें प्रथम तीन पाण्डु की रानी कुन्ती के तथा अन्तिम दो उसकी दूसरी रानी माद्री से उत्पन्न हुए थे। राज्य के विषय को लेकर इनका कौरवो से विरोध हो गया था। द्वेषवश कौरवो ने इन्हें लाक्षागृह में जलाकर मारने का षड्यन्त्र किया था किन्तु ये माता कुन्ती सहित सुरग से निकलकर बच गये थे। स्वयवर में अर्जुन ने गाण्डीव धनुष को चढाकर माकन्दी के राजा द्रुपद की पुत्री द्रौपदी प्राप्त की थी। अर्जुन के गले में डालते समय माला के टूट जाने से उसके फूल वायु वेग से उसी पक्ति में बैठे अर्जुन के अन्य भाइयो पर भी जा पडे इसलिए चपल लोग यह कहने लगे थे कि द्रौपदी ने पाँचो भाइयो को वरा है। हपु० ४५ २, ३७-३९, ५६-५७, १२१-१३०, १३८, पापु० १२ १६६-१६८, १५.११२-११५ जुए में कौरवो से हार जाने के कारण इन्हे बारह वर्ष का वन और एक वर्ष का अज्ञातवास करना पडा था। द्रौपदी का अपमान भी इन्हें सहना पडा। विराट नगर में इन्हें गुप्त वेष में रहना पडा, इसी नगर में भीम ने कीचक को मारा था। हपु० ४६.२-३६, पापु० १६ १२१-१४१, १७ २३०-२४४, २९५-२९६ अन्त में कृष्ण-जरासन्ध का युद्ध हुआ। इसमें पाण्डव कृष्ण के पक्ष में और कौरव जरासन्ध की ओर से लडे थे। इस युद्ध में द्रोणाचार्य को धृष्टार्जुन ने, भीष्म और कर्ण को अर्जुन ने तथा दुर्योधन और उसके निन्यानवें भाइयो को भीम ने मारा था। कृष्ण ने जरासन्ध को मारा था। कृष्ण की इस विजय के साथ पाण्डवो को भी कौरवो पर पूर्ण विजय हो गयी। उन्हें उनका खोया राज्य वापस मिला। पापु० १९ २२१-२२४, २० १६६-२३२, २९६ राज्य प्राप्त करने के पश्चात् नारद की प्रेरणा से विद्याधर पद्मनाभ द्वारा भेजा गया देव द्रौपदी को हरकर ले गया था। नारद ने ही द्रौपदी के हरे जाने का समाचार कृष्ण को दिया था। पश्चात् श्री स्वस्तिक देव को सिद्ध कर कृष्ण अमरककापुरी गये और वहाँ के राजा को पराजित कर द्रौपदी को ससम्मान ले आये थे। पापु० २१ ५७-५८, ११३-१४१ इन्होंने पूर्व जन्म में निर्मल काम किये थे। युधिष्ठिर ने निर्मल चरित्र पाला था, सत्य-भाषण से उसे यश मिला था। भीम वैयावृत्ति तप के प्रभाव से अजेय और बलिष्ठ हुआ, पवित्र चारित्र के प्रभाव से अर्जुन धनुर्धारी वीर हुआ, पूर्व तप के फलस्वरूप नकुल और सहदेव उनके भाई हुए। पापु० २४.८५-९० अन्त में नेमि जिन से इन्होंने दीक्षा ली। तप करते समय ये शत्रुजय गिरि पर दुर्योधन के भानजे कुर्यधर द्वारा किये गये उपसर्ग-काल में ध्यानरत रहे। ज्ञान-दर्शनोपयोग मे रमते हुए अनुप्रेक्षाओ का चिन्तन करते हुए ये आत्मलीन रहे। इस कठिन तपश्चरण के फलस्वरूप युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन ने केवलज्ञान प्राप्त किया तथा वे मुक्ति को प्राप्त हुए। अल्प कषाय शेष रह जाने से नकुल और सहदेव सर्वार्थसिद्धि स्वर्ग मे अहमिन्द्र हुए। वहाँ से च्युत होकर वे आगे मुक्त होंगे। कुन्ती, द्रौपदी, राजीमती और सुभद्रा आर्यिका के व्रत पालकर सोलहवें स्वर्ग मे उत्पन्न हुई थी। पापु० २५ १२-१४, ५२-१४३

पाण्डवपुराण—आचार्य शुभचन्द्र द्वारा सस्कृत भाषा में लिखा गया पुराण, अपरनाम "भारत"। पापु० १ २०, २५ इस पुराण की

रचना शाकवट नगर में की गयी थी। इस पुराण में पच्चीस पर्व तथा ५३१० श्लोक हैं। यह वि०स० १६०८ में भाद्रपद की द्वितीया तिथि मे पूर्ण हुआ था। पापु० २५ १८७-१८८

पाण्डित्य—ससारोद्धारक ज्ञान। यह मानवो को दुराचरण, दुरभिमान तथा पाप की कारणभूत क्रियाओ से दूर रखता है। मपु० ८ ८६, वीवच० ८ ४७

पाण्डु—(१) ग्यारह अग के ज्ञाता पाँच आचार्यों में तीसरे आचार्य। वे महावीर निर्वाण के पश्चात् हुए थे। मपु० २.१४६-१४७, ७६ ५२०-५२५, हपु० १ ६४, वीवच० १ ४१-४९

(२) पाण्डुक वन का एक भवन। हपु० ५ ३२२

(३) हस्तिनापुर के निवासी-कौरववशी भीष्म के सौतेले भाई व्यास और उसकी रानी सुभद्रा का पुत्र। धृतराष्ट्र इसके अग्रज और विदुर अनुज थे। हपु० ४५ ३४, पापु० ७ ११७ इसे वज्रमाली विद्याधर से इच्छित रूप देनेवाली एक अगूठी प्राप्त थी। कर्ण इसकी अविवाहित अवस्था का पुत्र था। इसके पश्चात् इसने कुन्ती के साथ विधिवत् विवाह कर लिया था। कुन्ती की बहिन माद्री भी इसी से विवाही गयी थी। विवाह के पश्चात् इसके कुन्ती से तीन पुत्र हुए—युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन तथा माद्री से दो पुत्र हुए—नकुल और सहदेव। ये पाँचो भाई पाण्डव कहे जाते थे। मपु० ७० १०१-११६, हपु० ४५ १-२, ३४, पापु० ७ १६४-१६६, २०४-२१३, २६१-२६४, ८ ६४-६६, १४२-१७५, ९ १० सुव्रत योगी से इसने धर्मोपदेश सुना। उनसे अपनी आयु तेरह दिन की शेष जानकर इसने पुत्रो को राज्य सौंप दिया तथा उन्हें धृतराष्ट्र के अधीन कर वह सयमी हो गया। अन्त में आत्मस्वरूप मे लीन होते हुए इसने समाधिमरण किया और सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। पापु० ९ ७०-१३८

पाण्डुक—(१) सदैव पुष्पित वृक्षो से युक्त मेरु पर्वत का एक वन। तीर्थंकरो के जन्माभिषेक के लिए पाण्डुकशिला इसी वन में बनी हुई है। यहाँ जिन प्रतिमाओ की वन्दना के लिए देव आते है। मपु० ५ १८३, पपु० १२ ८४-८५, हपु० ८ ३८, ४४, १९०, पापु० २ १२३ दे० पाण्डुकवन

(२) पाण्डुक वन का एक भाग। हपु० ५ ३०८-३०९

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का बाईसवाँ नगर। हपु० २२ ८८

(४) चक्रवर्ती की नौ निधियो में धान्य तथा रसो की उत्पादिनी निधि। यह भरतेश को प्राप्त थी। मपु० ३७ ७३, ७८, हपु० ११ ११६

(५) राजगृह की पाँच पहाडियो में एक पहाडी। यह आकार में गोल है तथा पूर्व और उत्तर दिशा के अन्तराल में सुशोभित है। हपु० ३.५५

(६) पाण्डुक स्तम्भ के पास बैठनेवाले विद्याधर। हपु० २६ १७

(७) कुण्डलगिरि के महेन्द्रकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६९४

पाण्डुकम्बला—सुमेरु पर्वत के शिखर पर स्थित पाण्डुक वन की एक शिला। यह रजतमयी, अर्द्धचन्द्राकार, आठ योजन ऊँची, सौ योजन योजन लम्बी और पचास योजन चौडी है। इसकी लम्बाई दक्षिणोत्तर दिशा में है। इस शिला पर पाँच सौ धनुष ऊँचे तथा इतने ही चौडे रत्नमयी तीन पूर्वमुखी सिंहासन बने हुए है। इनमें दक्षिण सिंहासन सौधर्मेन्द्र का, उत्तर सिंहासन जिनेन्द्र देव का होता है। जम्बूद्वीप में उत्पन्न हुए तीर्थंकरो का जन्माभिषेक इसी शिला पर किया जाता है। पपु० ३ १७५-१७६, हपु० ५ ३४७-३५२

पाण्डुकवन—सुमेरु पर्वत के चार वनो में एक वन। यह सौमनस वन से छत्तीस हजार योजन ऊपर स्थित है। यह सघन वृक्ष समूहो से युक्त है। इसमें चार उत्तु ग चैत्यालय, पाण्डुकशिला और सिंहासनो की रचना है। मध्य मे चालीस योजन ऊँची स्वर्ग के अधोभाग में स्थित एव स्थिर उत्तम चूलिका है। जब जिनेन्द्र का इस पर अभिषेक होता है तो अभिषेक-जल से यह क्षीरसागर सा लगता है। वीवच० ८ ११५-११७, ९ २५, दे० पाण्डुक-१

पाण्डुकशिला—पाण्डुक वन मे स्थित चार शिलाओ में एक सुवर्णमयी शिला। यह पाण्डुक वन के पूर्व और उत्तर दिशा के बीच (ईशान) मे स्थित, सौ योजन लम्बी, पचास योजन चौडी और आठ योजन ऊँची अर्द्धचन्द्राकार है। इसमें सिंहासन और मगल द्रव्य की रचनाएँ भी हैं। मपु० १३ ८२-८४, ८८-९३, हपु० ५ ३४७-३४८, ३४४, पापु० २ १२३, वीवच० ८ ११८-१२२

पाण्डुका—सुमेरु पर्वत के पाण्डुकवन में स्थित शिला। हपु० २ ४१ दे० पाण्डुशिला

पाण्डुकी—एक विद्या। नमि और विनमि ने लोगो को अनेक विद्याएँ दी। उनमें से एक यह है। इस विद्या से पाण्डुकेय विद्याधर सिद्ध हुए थे। हपु० २२ ८०

पाण्डुकेय—पाण्डुकी विद्या से सम्बद्ध विद्याधर। हपु० २२ ८०

पाण्डुर—(१) क्षीरवर द्वीप का रक्षक एक देव। हपु० ५ ६४१

(२) कुण्डलवर द्वीप में स्थित कुण्डलगिरि के हिमवत् नामक कूट का निवासी देव। हपु० ५ ६८६-६९४

पाण्ड्यकवाटक—मलयगिरि पर स्थित पर्वत। इस पर किन्नर देवियो का आवागमन रहता है। मपु० २९ ८९, ३० २६

पाता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

पाताल—पृथिवी का अधोभाग। यह दस प्रकार के भवनवासी देवो की निवासभूमि है। हपु० ४ ६२-६५

पातालपुण्डरीक—ध्वजाओ और रत्नमयी तोरणो से युक्त वरुण का नगर। पपु० १९ ३७

पातालस्थिर—राजा स्तिमितसागर का पुत्र। हपु० ४८ ४६ दे० ऊर्मिमान

पात्र—मोक्षमार्ग के पथिक तथा भव्य जीवो के हितोपदेशी मुनि। ये उत्तम, मध्यम और जघन्य भेद से तीन प्रकार के होते हैं। इनमें उत्तम पात्र वे हैं जो व्रतशील आदि से सहित रत्नत्रय के धारक होते हैं, मध्यम वे हैं जो व्रतशील आदि से यद्यपि रहित होते हैं किन्तु

सम्यग्दृष्टि होते हैं तथा जघन्य पात्र वे हैं जो शीलवान् तो हैं परन्तु मिथ्यादृष्टि होते हैं। मपु० २० १३९-१४६, ६३ २७३-२७५, हपु० ७ १०८-१०९

पात्रकेसरी—जिनसेन के पूर्ववर्ती एक आचार्य। महापुराण में कवि ने भट्टाकलंक और श्रीपाल के बाद इनका स्मरण किया है। मपु० १ ५३

पात्रत्व—उपासकाध्ययन-सूत्र में कथित द्विज के दस अधिकारों में चतुर्थ अधिकार। गुणों का गौरव ही पात्रता है। मपु० ४० १०५, १७३-१७५,

पात्रदत्ति—मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका आदि को पडगाहकर सत्कारपूर्वक दान-विधि के अनुसार दान देना। ऐसे दान से कीर्ति निर्मल होती है और स्वर्ग तथा देवकुरु भोगभूमि के सुख मिलते हैं। मपु० ३ २०८, ९ ११२, ३८ ३५-३७, पपु० ५३ १६१-१६४, १२३ १०५, वीवच० १३ २-३०

पात्री—विजयार्ध के जिनमन्दिरों की प्रतिमाओं के पास रखे हुए एक सौ आठ मांगलिक उपकरणों में से एक उपकरण। हपु० ५ ३६४

पाद—(१) छ अंगुल प्रमाण विस्तार। हपु० ७ ४५

(२) तालगत गान्धर्व का एक प्रकार। हपु० १९ १५१

पादपीठ—आसन-चौकी। पपु० ७ ३६१

पादभाग—तालगत गान्धर्व के बाईस भेदों में इस नाम का इक्कीसवाँ भेद। हपु० १९ १५१

पादप्रधावन—पाद-प्रक्षालन। नवधा भक्तियों में तृतीय भक्ति। इसमें पात्र को पडगाहने के पश्चात् उच्च आसन पर विराजमान करके उसके चरण धोये जाते हैं। मपु० २० ८६-८७

पाप—दुश्चरित। इसके पाँच भेद हैं—हिंसा, अनृत (झूठ), चोरी, अन्यरामारति और आरम्भ-परिग्रह। मपु० २ २३, हपु० ५८ १२७-१३३

(२) राम का शार्दूलवाही एक योद्धा। पपु० ५८ ६-७

(३) एक अस्त्र। यह धर्मास्त्र से नष्ट होता है। पपु० ७४ १०४

पापपित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१३८

पापावग्रह—पाप का प्रतिबन्ध। मपु० २५ २२८

पापोपदेश—अनर्थदण्डव्रत के पाँच भेदों में प्रथम भेद। वणिक् अथवा वधक आदि को सावद्य कार्यों में प्रवृत्त करानेवाले पापपूर्ण वचनों का उपदेश पापोपदेश है। हपु० ५८ १४६-१४८

पारग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

पारणा—व्रत के बाद किया जानेवाला भोजन। हपु० ३३ ७९

पारत—कान्यकुब्ज का राजा। साकेत के स्वामी सहस्रबाहु की रानी चित्रमति का यह पिता था। श्रीमती इसकी एक बहिन थी जो शतबिन्दु को बियाही गयी थी। जमदग्नि इसका भानेज था। इसकी सौ पुत्रियाँ थी। मपु० ६५ ५७-६०, ८१-८५

पारमेश्वरीदीक्षा—तीर्थंकर आदिदेव द्वारा धारण की गयी दीक्षा। मपु० १७ २०८

पारशर—कुरुवंश का एक राजा। यह शन्तनु के पूर्वजों में एक था। हपु० ४५ २९

पारशरी—मगध देश के राजगृह नगर निवासी शाण्डिल्य ब्राह्मण की पत्नी। यह मरीचि के जीव स्थावर ब्राह्मण की जननी थी। मपु० ७४ ८२-८४, वीवच० ३ १-३ अपरनाम पाराशरी।

पारशैल—(१) राम-लक्ष्मण और वज्रजंघ के बीच हुए युद्ध में वज्रजंघ का सहयोगी एक राजा। पपु० १०२ १५४-१५७

(२) इस नाम का देश। लवणांकुश ने यहाँ के नृप को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२-८६

पारा—भरतक्षेत्र के मध्यदेश की एक नदी। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६१, ३० ५९

पाराशरी—शाण्डिल्य ब्राह्मण की पत्नी, अपरनाम पारशरी। वीवच० ३ १-३ दे० पारशरी

पारिग्राहिकी-क्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में एक क्रिया। यह परिग्रह में प्रवृत्ति करानेवाली होती है। हपु० ५८ ६०, ८०

पारिणामिक-भाव—कर्म के उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम की अपेक्षा से रहित स्वभावभूत भाव। हपु० ३ ७९

पारितापिकी-क्रिया—श्रावक के साम्परायिक आस्रव से सबंधित पच्चीस क्रियाओं में एक क्रिया। यह स्वयं को और पर को दुःख देनेवाली होती है। हपु० ५८ ६०, ६७

पारियात्र—एक पर्वत। यहाँ भरतेश की सेना कूटचित्र को पार करके आयी थी। मपु० २९ ६७

पारिव्राज्य—कर्त्रन्वयी सात क्रियाओं में तीसरी क्रिया। इसमें गार्हस्थ्य-धर्म का पालन करने के पश्चात् गृहवास से विरक्त होकर निर्वाण की प्राप्ति के भाव से मुनि-दीक्षा ग्रहण की जाती है। मपु० ३८ ६६-६७, ३९ १५५-१५७ इस सत्ताईस सूत्रपद होते हैं—१ जाति २ मूर्ति ३ मूर्ति के लक्षण ४. शारीरिक सौन्दर्य ५. प्रभा ६ मण्डल ७. चक्र ८ अभिषेक ९. नाथता १०. सिंहासन ११ उपधान १२ छत्र १३ चमर १४ घोषणा १५ अशोकवृक्ष १६ निधि १७ गृहशोभा १८. अवगाहन १९ क्षेत्रज्ञ २०. आज्ञा २१ सभा २२. कीर्ति २३ वन्दनीयता २४ वाहन २५ भाषा २६ आहार और २७ सुख। ये परमेष्ठियों के गुण कहलाते हैं। भव्य पुरुष को अपने गुण आदि का ध्यान न रखते हुए और परमेष्ठियों के इन गुणों का आदर करते हुए दीक्षा ग्रहण करना चाहिए। मपु० ३९ १६२-१६६

पारिषद—वैमानिक देवों का एक वर्ग। ये देव सौधर्मेन्द्र की सभा में उपस्थित रहते हैं। इनका इन्द्र के साथ पीठमर्द (मित्र) जैसा सबंध होता है और ये इन्द्रसभा के सदस्य होते हैं। मपु० १३.१७-१८, २२ २६, वीवच ६.१३१-१३२

पार्थ—युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन का मातृकुल सूचक नाम। यह शब्द अर्जुन के लिए रूढ हो गया है। हपु० ४५ १३०-१३१ दे० अर्जुन

पार्थिव—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३३

(२) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का राजा। इसकी रानी सुन्दरी और पुत्र सिद्धार्थ था। इसने परमावधि-ज्ञान के धारी मुनिवर नामक मुनि से धर्मोपदेश सुना और वैराग्य-भाव उत्पन्न होने से यह पुत्र को राज्य देकर दीक्षित हो गया। मपु० ६९ २-१०

पार्वतेय—मातग विद्याधरो का एक निकाय। ये विद्याधर हरे वस्त्र पहनते हैं, नाना प्रकार के मुकुट और मालाओ को धारण करते हैं तथा समवसरण में पार्वत-स्तम्भ के सहारे बैठते हैं। हपु० २६ १४, २०

पार्श्वग—एक ज्योतिर्विद भविष्यवक्ता। इसने अजना को हनुमान् के सबध में भविष्यवाणी की थी कि इसके अच्छे योग होने से यह उत्तम पुरुष होगा और अनेक सिद्धियाँ इसे प्राप्त होगी। पपु० १७ ३५९, ३७६

पार्श्वनाथ—अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चतुर्थ काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव तेईसवें तीर्थंकर। तीर्थंकर नेमिनाथ के पश्चात् तेरासी हजार सात सौ पचास वर्ष का काल बीत जाने पर ये काशी देश की वाराणसी नगरी में काश्यप गोत्र के उग्रवशी राजा विश्वसेन की रानी ब्राह्मी (पद्मपुराण के अनुसार वामादेवी) के सोलह स्वप्नपूर्वक वैशाख कृष्ण द्वितीया प्रात वेला में विशाखा नक्षत्र में गर्भ मे आये तथा पौष कृष्ण एकादशी के अनिल योग में इनका जन्म हुआ। जन्माभिषेक करने के पश्चात् सौधर्मेन्द्र ने इनका यह नाम रखा। इनकी आयु सौ वर्ष थी, वर्ण हरा था और शरीर ९ हाथ था। सोलह वर्ष की अवस्था में ये नगर के बाहर अपने नाना महीपाल के पास पहुँचे। वह पचाग्नि तप के लिए लकडी फाड रहा था। इन्होने उसे रोका और बताया कि लकडी में नागयुगल है। वह नही माना और क्रोध से युक्त होकर उसने वह लकडी काट डाली। उसमें सर्प युगल था वह कट गया। मरणासन्न सर्पयुगल को इन्होने धर्मोपदेश दिया जिससे यह सर्पयुगल स्वर्ग में धरणेन्द्र हुआ। तीस वर्ष के कुमारकाल के पश्चात् अपने पिता के वचनो के स्मरण से ये विरक्त हुए और आत्मज्ञान होने पर पौष कृष्णा एकादशी के दिन ये विमला नामक शिविका में बैठकर अश्ववन मे पहुँचे और वहाँ प्रात वेला में तीन सौ राजाओ के साथ दीक्षित हुए। प्रथम पारणा गुल्मखेट नगर में हुई। अश्ववन में जब ये ध्यानावस्था में थे कमठ के जीव शम्बर देव ने इन पर उपसर्ग किया। उस समय धरणेन्द्र देव और पद्मावती ने आकर उपसर्ग का निवारण किया। ये चैत्र चतुर्दशी के दिन प्रातःवेला में विशाखा नक्षत्र में केवली हुए। उपसर्ग के निवारण के पश्चात् शम्बर देव को पश्चाताप हुआ। उसने क्षमा माँगी और धर्मश्रवण करके वह सम्यक्त्वी हो गया। सात अन्य मिथ्यात्वी और सयमी हुए थे। इनके सघ में स्वयभू आदि दस गणधर, सोलह हजार मुनि, सुलोचना आदि छत्तीस हजार आर्यिकाएँ थी। उनहत्तर वर्ष सात मास विहार करके अन्त में एक मास की आयु शेष रहने पर सम्मेदाचल पर छत्तीस मुनियो के साथ इन्होने प्रतिमायोग धारण किया और श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन प्रात वेला में विशाखा नक्षत्र में इनका निर्वाण हुआ। मपु० २ १३२-१३४, ७३ ७४-१५७, पपु० ५ २१६, २० १४-१२२, हपु० १ २५, ६० १५५-२०४, ३४१-३४९, पापु० २५ १, वीवच० १ ३३, १८ १०१-१०८, पूर्वभवो के नवें भव में ये विश्वभूति ब्राह्मण के मरुभूति नामक पुत्र थे, इस भव मे कमठ इनका भाई था। कमठ के जीव के द्वारा आगे के भवो में इन पर अनेक उपसर्ग किये गये। मरुभूमि की पर्याय के पश्चात् से वज्रघोष नामक हाथी हुए। फिर सहस्रार स्वर्ग मे देव हुए। इसके पश्चात् ये क्रम से रश्मिवेग विद्याधर, अच्युत स्वर्ग में देव, वज्रनाभि चक्रवर्ती, मध्यम ग्रैवेयक में अहमिन्द्र, राजा आनन्द और अच्युत स्वर्ग के प्राणत विमान में इन्द्र हुए। वहाँ से च्युत होकर वर्तमान भव में ये तेईसवें तीर्थङ्कर हुए। मपु० ७३ ७-६८, १०९

पार्श्वस्थ—मुनियों का एक भेद। दर्शन, ज्ञान और चारित्र के ये निकट तो रहते हैं पर सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र के ज्ञाता होते हुए भी इनका आचरण तन्मय नही होता। य केवल मुनियो की क्रियाएँ करते रहते हैं। मपु० ७६ १९१-१९२

पालक—मगध का एक राजा। इसने मगध पर साठ वर्ष तक शासन किया था। हपु० ६० ४८७-४८८

पावकस्यन्दन—इन्द्र विद्याधर के पक्ष का एक देव। पपु० १२ २

पावन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

पावा—भगवान् महावीर की निवास भूमि। अपरनाम पावानगरी। इसे पावापुर भी कहते है। यह नगर मनोहर नामक वन में सरोवरो के मध्य था। मपु० ७६ ३८, ५०८-५१२, पपु० २० ६०, हपु० ६६ १५-१९

पाश—राजा धृतराष्ट्र तथा उसको रानी गान्धारी का पुत्र। पापु० ८ १९९

पाखण्डमौढ्य—पाखण्डमूढता। पचाग्नि के मध्य दुस्सह तप करना आदि मूढताएँ। मपु० ७४ ४८८-४९०

पिंगल—(१) चक्रवर्ती की नौ निधियो में दिव्याभरण उत्पन्न करनेवाली एक निधि। मपु० ३७ ८०, हपु० ११ १२२

(२) वसुदेव तथा उसकी रानी प्रभावती का पुत्र। हपु० ४८.६३

(३) एक नृप। पपु० ९६ २९-५०

(४) चक्रपुर नगर के राजा चक्रध्वज के पुरोहित धूमकेश का पुत्र। अन्त में विरक्त हो इसने दिगम्बर दीक्षा धारण की थी। मरकर यह महाकाल नामक असुर हुआ। इसने पूर्व विरोधवश भामण्डल को मारने के लिए उसके उत्पन्न होने की प्रतीक्षा की थी किन्तु भामण्डल के उत्पन्न होते ही इसके विचार बदल गये थे। अत यह भामण्डल को कुण्डल पहनाकर तथा उसे पर्णलघ्वी विद्या देकर सुखकर स्थान में छोड गया था। पपु० २६ ४-४४, ११३-११९

पिंग—भरतेश को एक निधि। इससे आजीविका सम्बन्धी चिन्ताओ से मुक्ति मिल जाती है। मपु० ३७ ७३

पिंगल—(१) एक नगर रक्षक। यह पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुरदेव का जीव था। मपु० ४६ ३५६

(२) वसुदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६३

पिंगलगांधार—(१) भरत क्षेत्रस्थ विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में मनोहर देश के रत्नपुर नगर का राजा। इसकी रानी सुप्रभा तथा पुत्री विद्युत्प्रभा थी। मपु० ४७.२६१-२६२, पापु० ३ २६४-२६५

(२) वसुदेव का हितचिन्तक एक विद्याधर। हपु० ५१ १-४

पिठर—थाली, बटलोई। यह भोजनशाला का एक पात्र है। मपु० ५ ७२

पिठरक्षत—मुनि कुम्भकर्ण की निर्वाण-स्थली। यह नर्मदा नदी के तट पर स्थित एक तीर्थ है। पपु० ८० १४०

पिण्डशुद्धि—भोजनशुद्धि। हपु० २ १२४

पिण्डार—श्रावस्ती की गोशाला का अधिकारी। यह एक गोपाल था। हपु० २८ १९

पिता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

पितामह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२, ४४ २८

पितृमेध—एक यज्ञ। इसमे पिता को होमा जाता है। राजा वसु के समय मे नारद और पर्वत का अज शब्द के अर्थ पर विवाद हुआ था। पर्वत मरकर एक राक्षस हुआ। उसने इस प्रकार के यज्ञो का प्रचार किया। पपु० ११.८६

पिपास—प्रथम पृथिवी के प्रथम प्रस्तार में सीमान्तक इन्द्रक बिल की दक्षिण दिशा में स्थित महानरक। इसमें दुर्वर्ण नारकी रही है। हपु० ४ १५१-१५२

पिपासा—एक परीषह। इस परीषह में मार्ग से च्युत न होने के लिए पिपासा को सहन किया जाता है। मपु० ३६ ११६

पिप्पला—राजा अकम्पन की पुत्री। यह विद्याधरो के राजा धरकीकप की पुत्री सुखावती की सखी थी। मपु० ४७ ७५-७६

पिप्पलाद—याज्ञवल्क्य और सुलसा का पुत्र। इसके माता-पिता इसे पीपल के वृक्ष के नीचे रखकर कही चले गये थे। इसकी मौसी भद्रा ने इसका पिप्पलाद नाम रखकर पालन पोषण किया था। हपु० २१. १३८-१३९

पिहितास्रव—(१) तीर्थंकर पद्मप्रभ तथा सुपार्श्वनाथ के पूर्वभव के गुरु। पपु० २० २५-३०, हपु० ६० १५९

(२) वैजयन्त तथा उनके दोनो पुत्र सजयन्त और जयन्त मुनियो के साथ विहरणशील आचार्य। हपु० २७ ५-८ ९३

(३) अयोध्या के राजा जयवर्मा और रानी सुप्रभा के अजितजय नामक पुत्र। अभिनन्दन स्वामी की वन्दना करते हुए इनका पापास्रव रुक गया था। इसी से इसका नाम पिहितास्रव हो गया। मन्दिर-स्थविर मुनि से ये दीक्षित होकर केवली हुए। चारणचरित वन के अम्बरतिलक पर्वत पर इन्होने निर्नामा का उसके पूर्वभव की बात बताकर भविष्य सुधारने के लिए जिनेन्द्र गुणसम्पत्ति और श्रुतज्ञानव्रत करने का उपदेश दिया था। मपु० ६ १२७-१४१, २०२-२०३, ७ ५२,९६ प्रभाकरी नगरी के राजा प्रीतिवर्धन ने भी इनको आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ८ २०२-२०३ सुसीमा नगर का राजा अपराजित भी इन्ही से दीक्षित हुआ था। मपु० ५२ ३, १३,५९ २४४

(४) विजयभद्र प्रजापति और सहस्रायुध के दीक्षागुरु। मपु० ६२ ७७, १५४, ६३ १६९

(५) पाण्डवो और बलराम के दीक्षागुरु। पापु० २२ ९९

पीठिका—(१) विदेह क्षेत्र के जम्बूस्थल मे निर्मित इस नाम का एक स्थान। यह मूल में १२, मध्य मे ८, और अन्त में ४ कोस चौड़ी है। इसके नीचे चारो ओर छ वेदिकाएँ हैं। यहाँ देवो के तीस योजन चौड़े और पचास योजन ऊँचे अनेक भवन निर्मित है। हपु० ५ १७१-१८२

(२) महापुराण के प्रथम तीन पर्वों की विषयवस्तु। मपु० ४ २

पीठिकामन्त्र—गृहस्थ को सस्कार युक्त करने के लिए की जानेवाली गर्भाधान आदि क्रियाओ में सिद्ध पूजन पूर्वक प्रयुक्त मन्त्र। ये मन्त्र सात प्रकार के होते हैं—पीठिका, जाति, निस्तारक, ऋषि, सुरेन्द्र, परमराजादि और परमेष्ठी। पीठिका मन्त्र निम्न प्रकार हैं—

सत्यजाताय नम, अर्हज्जाताय नम, परमजाताय नम, अनुपमजाताय नम, स्वप्रधानाय नम, अचलाय नम, अक्षयाय नम, अव्याबाधाय नम, अनन्तज्ञानाय नम, अनन्तदर्शनाय नम, अनन्तवीर्याय नम, अनन्तसुखाय नम, नीरजसे नम, निर्मलाय नम, अच्छेद्याय नम, अभेद्याय नम, अजराय नम, अमराय नम, अप्रमेयाय नम, अगर्भवासाय नम, अक्षोभ्याय नम, अविलीनाय नम, परमघनाय नम, परमकाष्ठायोगरूपाय नम, लोकाग्रवासिने नमो नम, परमसिद्धेभ्यो नमो नम, अनादि परम्परसिद्धेभ्यो नमो नम, अनाद्यनुपम सिद्धेभ्यो नमो नम, सम्यग्दृष्टे-सम्यग्दृष्टे, आसन्नभव्य-आसन्नभव्य, निर्वाण-पूजार्ह-निर्वाणपूजार्ह अग्नीन्द्र स्वाहा, सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु। मपु० ४० १०-२५, ७७

पुण्डरीक—(१) पुष्करवरद्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६३९

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में एक नगर। यह नगर कोट, गोपुर और तीन परिखाओ से युक्त हैं। मपु० १९ ३६, ५३

(३) छ कुलाचलो के मध्य स्थित ह्रद (सरोवर)। यह स्वर्णकूला, रक्ता और रक्तोदा नदियो का उद्गम स्थान है। मपु० ६३ १९८, हपु० ५ १२०-१२१, १३५

(४) अगबाह्यश्रुत के चौदह प्रकीर्णको में एक प्रकीर्णक। इसमे देवो के अपवाद का वर्णन किया गया है। हपु० २ १०१-१०४, १० १३७

(५) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त का पौत्र और अमित-तेज का पुत्र। इसे शिशु अवस्था मे ही वज्रदन्त से राज्य प्राप्त हो गया था। मपु० ८ ७९-८८

(६) चक्रपुर नगर के राजा वरसेन तथा रानी लक्ष्मीमती का पुत्र। इसका विवाह इन्द्रपुर के राजा उपेन्द्रसेन की पुत्री पद्मावती

से हुआ था। निशुम्भ ने इस विवाह से असन्तुष्ट होकर इसे मारने के लिए युद्ध किया था किन्तु यह अपने चलाये चक्र से इसके द्वारा मारा गया था। मपु० ६५ १७४-१८४ इसने कोटिशिला को अपनी कमर तक ऊपर उठाया था जिसे नवें नारायण कृष्ण चार अंगुल मात्र ऊपर उठा सके थे। हपु० ३५ ३६-३८ यह तीन खण्ड का स्वामी, धीरवीर और स्वभाव से अतिरौद्र चित्त था। वीवच० १८.११२-११३ इसकी आयु पैंसठ हजार वर्ष थी। इसमें दो सौ पचास वर्ष कुमार अवस्था में और चौसठ हजार चार सौ चालीस वर्ष राज्य अवस्था में इसने बिताये थे। हपु० ६०.५२८-५२९ इसने चिरकाल तक भोगों का भोग किया था। भोगों में आसक्ति के कारण इसने नरकायु का बन्ध किया और अन्त में रौद्रध्यान के कारण मरकर तम प्रभा नामक छठें नरक में उत्पन्न हुआ। यह नारायणों में छठा नारायण था। मपु० ६५ १८८-१८९, १९२

(७) विदेह क्षेत्र का देश। पपु० ६४ ५०

(८) सातवाँ रुद्र। इसकी अवगाहना साठ धनुष, आयु पचास लाख वर्ष थी। यह दश पूर्व का पाठी था। मरकर नरक गया। हपु० ६० ५३५-५४७

पुण्डरीकाक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

पुण्डरीकिणी—(१) जम्बूद्वीप के महामेरु से पूर्व दिशा की ओर पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की राजधानी। यशोधर मुनि इसी नगर के मनोहर नामक उद्यान में केवली हुए थे। नारदमुनि ने यहाँ सीमन्धर जिनेन्द्र के दर्शन किये थे। यह नगरी बारह योजन लम्बी और नौ योजन चौड़ी है और एक हजार चतुष्पथों और द्वारों से युक्त है। इसमें बारह हजार राजमार्ग हैं। मधुक वन जिसमें पुरुरवा भील रहता था, इसी नगरी का वन था। मपु० ६ २६, ४६ १९, ५८, ८५-८६, ६३.२०९-२१३ हपु० ५ २५७, २६३-२६५, ४३ ९०, वीवच० २ १५-१९ यह नगरी ऋषभनाथ, अजितनाथ, सम्भवनाथ और शान्तिनाथ के पूर्वभवों की राजधानी है। प्रथम चक्रवर्ती भरतेश का जीव पीठ नामक राजकुमार, मघवा नामक चक्रवर्ती के पूर्वभव का जीव, प्रथम बलभद्र अचल के पूर्वभव का जीव ये सभी इसी नगरी के निवासी थे। पपु० २० ११-१७, १२४-१२६, १३१-१३३, २२९ एक नगरी धातकीखण्ड के पूर्व विदेहक्षेत्र में भी है। मपु० ७ ८०-८१

(२) रुचकवर द्वीप में रुचकवर पर्वत के उत्तर दिशावर्ती आठ कूटों में तीसरे अंजनक नामक कूट की निवासिनी दिक्कुमारी देवी। यह हाथ में चँवर धारण कर तीर्थंकर की माता की सेवा करती है। इसके चँवर-दण्ड स्वर्णमयी होते हैं। हपु० ५ ६९९, ७१५-७१७, ८ ११२-११३, ३८ ३५

पुण्ड्र—(१) वृषभदेव की प्रेरणा से इन्द्र द्वारा निर्मित गौड़ (बंग) देश। वृषभदेव ने यहाँ के भव्य जीवों को सम्बोधित किया था। मपु० १६. १४३-१५२, २५ २८७-२८८, २९ ४१

(२) आकार में लम्बे और मीठे पौंडे (गन्ना)। मपु० ३ २०२

पुण्य—(१) सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र से, अणुव्रतों और महाव्रतों के पालन से, कषाय, इन्द्रिय और योगों के निग्रह से तथा नियम, दान, पूजन, अर्हद्भक्ति, गुरुभक्ति, ध्यान, धर्मोपदेश, संयम, सत्य, शौच, त्याग, क्षमा आदि से उत्पन्न शुभ परिणाम। सुन्दर स्त्री, कामदेव के समान सुन्दर शरीर, शुभ वचन, करुणा से व्याप्त मन, रूप लावण्य सम्पदा, अन्यान्य दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति, नरेश का वैभव, इन्द्र पद और चक्रवर्ती की सम्पदाएं इसी से प्राप्त होती हैं। इसके अभाव में विद्याएँ भी साथ छोड़ देती हैं। कोई विद्या भी सहयोग नहीं कर पाती। मपु० ५ ९५, १००, १६ २७१, २८ २१९, ३७ १९१-१९९, वीवच० १७ २४-२६, ३५-४१

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ८२, २५.१३५

पुण्यकथा—त्रेसठ शलाका-पुरुषों का जीवन चरित। इसके श्रवण से त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) की प्राप्ति होती है। मपु० २ ३१, ४५

पुण्यकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

पुण्यगण्य—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

पुण्यगी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३६

पुण्यधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

पुण्यनायक—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ १३७, २५ १३६

पुण्यबन्ध—शुभ की प्राप्ति का साधन। यह सरागियों को उपादेय तथा मुमुक्षुओं को हेय है। इसका बन्ध अविरत सम्यग्दृष्टि, देशव्रती गृहस्थ और सकलव्रती सराग संयमी के होता है। ऐसे ही जन पुण्यास्रव और पुण्यबन्ध से तीर्थंकरों की विभूति भी प्राप्त करते हैं। मिथ्यादृष्टि जीव भी पापकर्मों का मन्द उदय होने पर भोगों की प्राप्ति के लिए शारीरिक क्लेश आदि सहकर पुण्यास्रव और पुण्यबन्ध दोनों करते हैं। वीवच० १७,५०-५५, ६१

पुण्यमूर्ति—भविष्यत्कालीन तेरहवें तीर्थंकर। हपु० ६० ५६०

पुण्ययज्ञक्रिया—एक दीक्षान्वय क्रिया। इससे पुण्य को बढ़ानेवाली चौदह पूर्व विद्याओं का अर्थ-श्रवण होता है। मपु० ३८ ६४, ३९ ५०

पुण्यराशि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१७

पुण्डरीकाक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

पुण्यवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३६

पुण्यशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. ३७

पुण्यापुण्यनिरोधक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३७

पुण्यास्रव—पुण्य की प्राप्ति। यह सरागी जीवो को उपादेय किन्तु मुमुक्षुओ के लिए हेय होता है। वीवच० १७ ५०

पुत्र—(१) तीर्थंकर महावीर के सातवें गणधर। मपु० ७४.३७३, वीवच० १९ २०६-२०७

(२) काम पुरुषार्थ का फल। मपु० २.४६

पुद्गल—उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त द्रव्य। यह मूर्तीक जड पदार्थ वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से युक्त एक द्रव्य है। इसके दो भेद होते हैं—स्कध और अणु। इस द्रव्य का विस्तार दो परमाणुवाले द्वचणुक स्कन्ध से लेकर अनन्तानन्त परमाणुवाले महास्कन्ध तक होता है। इसके छ भेद हैं—सूक्ष्मसूक्ष्म, सूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, स्थूल सूक्ष्म, स्थूल और स्थूल स्थूल। अदृश्य और अस्पृश्य रहनेवाला अणु सूक्ष्म-सूक्ष्म है। अनन्त प्रदेशो के समुदाय रूप होने से कर्म-स्कन्ध सूक्ष्म पुद्गल कहलाते है। शब्द, स्पर्श, रस और गन्ध सूक्ष्मस्थूल हैं, क्योकि चक्षु इन्द्रिय के द्वारा इनका ज्ञान नही होता इसलिए तो ये सूक्ष्म है और कर्ण आदि इन्द्रियो द्वारा ग्रहण हो जाने से ये स्थूल है। छाया, चाँदनी और आतप स्थूल सूक्ष्म हैं क्योकि चक्षु इन्द्रिय द्वारा दिखायी देने के कारण ये स्थूल हैं और विघात रहित होने के कारण सूक्ष्म है अत ये स्थूल-सूक्ष्म हैं। पानी आदि तरल पदार्थ जो पृथक् करने पर मिल जाते हैं, स्थूल हैं। पृथिवी आदि स्कन्ध भेद किये जाने पर फिर नही मिलते इसलिए स्थूल-स्थूल हैं। मपु० २४ १४४-१५३, हपु० २.१०८, ५८ ५५, ४ ३ शरीर, वचन, मन, श्वासोच्छ्वास और पाँच इन्द्रियाँ आदि सब इसी की पर्याय है। एक अणु से शरीर की रचना नही होती, किन्तु अणुओ के समूह से शरीर बनता है। इसकी गति और स्थिति मे क्रमश धर्म और अधर्म द्रव्य सहकारी होते हैं। वीवच० १६ १२६-१३०

पुद्गलात्मा—प्रथम अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के बीस प्राभृतो में कर्म प्रकृति नामक चौथे प्राभृत के चोबीस योगद्वारो में उन्नीसवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१-८६ दे० अग्रायणीयपूर्व

पुनर्वसु—(१) अरिष्टनगर का नृप। इसने तीर्थंकर शीतलनाथ को दीक्षोपरान्त आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५६ ४६-४७

(२) एक नक्षत्र। तीर्थंकर अभिनन्दननाथ का जन्म इसी नक्षत्र में हुआ था। पपु० २० ४०

(३) लक्ष्मण के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २०७, २११

(४) प्रतिष्ठपुर नगर का स्वामी और विदेहक्षेत्र में स्थित पुण्डरीक देश के चक्रधर नगर के चक्री त्रिभुवनानन्द का सामन्त। इसने त्रिभुवनानन्द की पुत्री अनगशरा का अपहरण किया था। परिस्थिति-वश उसे अनगशरा को छोडना पडा। श्वापद अटवी मे दुखी होकर अनगशरा ने व्रत लिये और सल्लेखना से मरण प्राप्त किया। उसे न पाकर पुनर्वसु ने द्रुमसेन मुनि से ही दीक्षा ली और अन्त में निदान-पूर्वक मरण करके तप के प्रभाव से स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर लक्ष्मण हुआ। पपु० ६४ ५०-५५, ९३-९५

पुन्नागपुर—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के दक्षिण भाग में स्थित एक महान् नगर। भरतेश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। मपु० २९. ७९, ७१ ४२९

पुन्नाट—एक सघ। हरिवशपुराण के कर्ता आचार्य जिनसेन इसी सघ के थे। हपु० ६६ ५४

पुमान्—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ १४२

(२) जीव का पर्यायवाची शब्द। अच्छे-अच्छे भोगो में शयन करने से यह पुरुष कहलाता है। यह अपने पौरुष से अपने कुल और जन्म को पवित्र करता है। गुणहीन केवल नाम से ही पुरुष होते हैं। वे चित्रांकित वा तृण अथवा काष्ठ आदि से निर्मित पुरुष सदृश होते हैं। मपु० २४ १०३, १०६, २८ १३०-१३१

पुरंजय—कोट, गोपुर और तीन-तीन परिखाओ से आवृत्त विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सोलहवाँ नगर। मपु० १९ ४३, ५३

पुर—परिखा, गोपुर, अटारी, कोट और प्राकार से शोभित, अनेक भवन, उद्यान और जलाशयो से युक्त प्रधान पुरुषो की आवासभूमि। आदि-नाथ के समय में ऐसे अनेक नगर निर्मित किये गये थे। मपु० १६. १६९-१७०, हपु० ९ ३८

पुरन्दर—(१) मन्दरकुजनगर के राजा मेरुकान्त और उसकी भार्या श्रीरम्भा का पुत्र। यह रथनूपुर नगर के राजा अशनिवेग की पौत्री श्रीमाला के स्वयवर में आया था। पपु० ६ ३५९, ४०८-४०९

(२) विनीता नगरी के राजा सुरेन्द्रमन्यु और उसकी रानी कीर्ति-सभा का द्वितीय पुत्र, वज्रबाहु का सहोदर। इसकी भार्या का नाम पृथिवीमती था। यह ससार से विरक्त हो गया था और अपने पुत्र कीर्तिधर को राज्य देकर क्षेमकर मुनि से दीक्षित हो गया था। पपु० २१ ७३-७७, १४०-१४३

(३) शक्र (इन्द्र)। मपु० १६ १७७, हपु० २ २९

(४) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ २९-४०

पुरबल—विजयार्ध पर्वत की अलकापुरी का स्वामी। इसकी रानी का नाम ज्योतिर्माला तथा पुत्र का नाम हरिबल था। इसने मुनिराज अनन्तवीर्य के पास सयम ले लिया था। यह मरकर स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से च्युत होकर यह कृष्ण की पटरानी सत्यभामा हुआ। मपु० ७१ ३११-३१५

पुराण—(१) पुरातन महापुरुषो से उपदिष्ट मुक्तिमार्ग की ओर ले जाने-वाले त्रेसठ शलाका पुरुषो के चरित्र के वर्णन से युक्त रचनाएँ। ये ऋषि-प्रणीत होने से आर्ष, सत्यार्थ का निरूपक होने से सूक्त, धर्म का प्ररूपक होने से धर्मशास्त्र तथा इति + ह् + आस् यहाँ ऐसा हुआ यह बताने के कारण इतिहास कहलाते हैं। मपु० १ १९-२६ इनमे क्षेत्र, काल, तीर्थ, सत्पुरुष और उनकी चेष्टाओ का वर्णन रहता है। क्षेत्र रूप से ऊर्ध्व, मध्य और पाताल लोक का, काल रूप से भूत, भविष्यत् और वर्तमान का, तीर्थ रूप से सम्यग्दर्शन-ज्ञान और चारित्र

का, तथा तीर्थसेवी सत्पुरुष (शलाकापुरुष) और उनके आचरण का इनमें वर्णन होता है। मपु० २ ३८-४०

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३७, २५ १९२

पुराणपुरुष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४३, ३४ २२०

पुराणपुरुषोत्तम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३२

पुराणाद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९२

पुरातन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११०

पुरातनमन्दिर—भारतवर्ष का एक प्राचीन नगर। यह मारीच के जीव भारद्वाज की जन्मभूमि था। वीवच० २ १२५-१२७

पुराविद्—पूर्व की बातों के ज्ञाता-इतिहासज्ञ, पौराणिक। मपु० ४३ १८८

पुरिमताल—एक नगर। आदिनाथ के पुत्र और चक्रवर्ती भरत के छोटे भाई वृषभसेन इसी नगर के नृप थे। ये बाद में दीक्षित होकर तीर्थंकर आदिनाथ के गणधर हो गये थे। मपु० २० २१८, २४ १७१-१७२

पुरु—(१) विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का पैंतालीसवाँ नगर। हपु० २२ ८५-९२

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ ७५, १४३, ४३ ४९, ७३ १२२

पुरुदेव—आदिनाथ का अपरनाम। पुराण पुरुषों में प्रथम, महान् और अत्यन्त दीप्तिमान् होने से तीर्थंकर आदिनाथ को इस नाम से भी व्यवहृत किया गया है। सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव की इसी से स्तुति की गयी है। मपु० १७ ७२, २५ १९२, ६३ ४०४, हपु० ८ २११

पुरुबल—विजयार्द्ध पर्वत की अलकापुरी का स्वामी। यह ज्योतिर्माला का पति और हरिवल का पिता था। मपु० ७१.३११

पुरुरवा—पुण्डरीकिणी नगरी के समीपवर्ती मधुक वन का निवासी भील। यह स्वय भद्र प्रकृति का था और इसकी प्रिया कालिका भी वैसे ही स्वभाव की थी। एक दिन सागरसेन मुनि उस वन में आये। वे अपने सघ से बिछुड गये थे। दूर से पुरुरवा ने उन्हें मृग समझकर अपने बाण से मारना चाहा। कालिका ने उसे बाण चढ़ाते देखा। उसने कहा कि ये मृग नही है ये तो वन देवता है, वन्दनीय हैं। यह उनके पास गया उनकी इसने वन्दना की। व्रत अगीकार किये और मास का त्याग किया। व्रतो का निर्वाह करते हुए इसने अन्त में समाधिमरण किया जिससे यह सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुआ। वहाँ से च्युत होकर चक्री भरत और उनकी रानी धारिणी का मरीचि नाम का पुत्र हुआ। यही मरीचि अनेक जन्मो के पश्चात् राजा सिद्धार्थ और उसकी रानी प्रियकारिणी के पुत्र के रूप में चौबीसवाँ तीर्थंकर महावीर हुआ। मपु० ६२ ८६-८९, वीवच० २ १८-४०, ६४-६९, ९ ८८-८९ दे० महावीर

पुरुष—(१) अच्छे भोगो मे प्रवृत्त जीव। इसी को पुमान् भी कहते हैं क्योकि जीव इसी भव में अपनी आत्मा को कर्म मुक्त करता है। मपु० २४ १०६

(२) भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में स्थित एक देश। यह देश भरतेश के छोटे भाई के पास था। जब वह दीक्षित हो गया तो यह भरतेश के साम्राज्य का अग हो गया। हपु० ११.६९-७१

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९२

पुरुष पुण्डरीक—तीर्थंकर अनन्तनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६. ५३१-५३३

पुरुषर्षभ—पाँचवें बलभद्र सुदर्शन के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २३२

पुरुषसिंह—अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चतुर्थ काल में उत्पन्न पाँचवाँ वासुदेव (नारायण)। यह तीर्थंकर धर्मनाथ के समय में हुआ था। मपु० ६१ ५६, हपु० ६० ५२७, वीवच० १८ १०१, ११२ तीसरे पूर्वभव में यह राजगृह नगर का राजा था। अपने मित्र राजसिंह से पराजित होने के कारण इसने अपने पुत्र को राज्य दे दिया और कृष्णाचार्य से धर्मोपदेश सुनकर दीक्षित हो गया। अन्त में सन्यासपूर्वक मरण कर यह माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६१ ५९-६५ वहाँ से चयकर खगपुर नगर के इक्ष्वाकुवशी राजा सिंहसेन और उसकी रानी अम्बिका के पाँचवें नारायण के रूप में पुत्र हुआ। इसकी कुल आयु दस लाख वर्ष की थी जिसमें इसने तीन सौ वर्ष कुमारकाल में, एक सौ पच्चीस वर्ष मण्डलीक अवस्था मे, सत्तर वर्ष दिग्विजय मे और नौ लाख निन्यानवें हजार पाँच सौ वर्ष राज्य-शासन में बिताये थे। इसने प्रतिनारायण मधुक्रीड को मारा था। अन्त में मरकर यह सातवें नरक में गया। मपु० ६१ ७०-७१, ७४ ४९, पपु० २० २१८-२२८, हपु० ६० ५२६-५२७

पुरुषार्थ—जीवन के कर्त्तव्य। ये चार होते हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मपु० २ ३१-६७, १२०

पुरुषोत्तम—(१) अवसर्पिणी काल के दु.षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष तथा चौथा वासुदेव। यह अर्धचक्री था। इसने कोटिशिला को अपने वक्षस्थल तक उठाया था। इसका जन्म भरत-क्षेत्र में स्थित द्वारवती नगरी के राजा सोमप्रभ और उसकी रानी सीता से हुआ था। इसकी पटरानी का नाम मनोहरा था। यह कृष्ण-कान्तिधारी, लोकव्यवहार प्रवर्तक, पचास धनुष प्रमाण ऊँचा था और इसकी आयु तीस लाख वर्ष की थी। इसने लोक-व्यवहार का प्रवर्तन किया था। प्रतिनारायण मधुसूदन को मारकर यह छठे नरक में उत्पन्न हुआ। तीसरे पूर्वभव में यह भरतक्षेत्र के पोदनपुर नगर का वसुषेण नामक राजा था। सन्यासपूर्वक मरण कर यह सहस्रार स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर नारायण हुआ। मपु०

६० ६८-८२, ६७ १४२-१४४, पपु० २० २२३-२२८, हपु० ५३ ३७, ६०.५२३-५२५, वीवच० १८ १०१, ११२

(२) तीर्थंकर विमलनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३०-५३३

पुरुहूत—(१) विद्याधर नमि राजा का पुत्र। रवि और सोम इसके बड़े भाई तथा अंशुमान्, हरि, जय, पुलस्त्य, विजय, मातग और वासव छोटे भाई थे। कनकपुंजश्री और कनकमंजरी इसकी बहिनें थी। हपु० २२ १०७-१०८

(२) इन्द्र। मपु० १४ १६३

पुरोधस्—पुरोहित। यह भरतेश चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक सजीव रत्न था। इसकी एक हजार देव रक्षा करते थे। यह चक्रवर्ती का मार्गदर्शक था। मपु० २८ ६०, ३७ ८३-८६, हपु० ११ १०८-१०९

पुलस्त्य—(१) विद्याधर नमि का पुत्र। हपु० २२ १०७-१०८ दे० पुरुहूत

(२) विनमि के वंशज पचाशद्ग्रीव का पुत्र। इसने लका मे पन्द्रह हजार वर्ष तक राज्य किया था। मेघश्री इसकी रानी थी। दशानन इन्ही दोनो का पुत्र था। मपु० ६८ ११-१२

पुलाक—निर्ग्रन्थ साधु के पाँच भेदो में प्रथम भेद। ये उत्तरगुणो के अन्तर्निहित भावना से रहित होते हैं। मूलव्रतो का भी पूर्णत पालन नही करते हैं। हपु० ६४ ५८-५९ ये सामायिक और छेदोपस्थापना इन दो सयमो को पालते है और दशपूर्व के धारी होते हैं। इनके पीत, पद्म और शुक्ल ये तीन लेश्याएँ होती हैं और मृत्यु के बाद इनका उपपाद (जन्म) सहस्रार स्वर्ग में होता है। हपु० ६४ ५८-७८

पुलिन्द—वृषभदेव के काल के वन्य जाति के लोग। मपु० १६ १५६, १६१

पुलोम—हरिवंश के राजा कुणिम का पुत्र। इसका पिता इसे राज्य सौंपकर तप के लिए चला गया था। इसने पुलोमपुर नगर बसाया था। कुछ वर्षों तक न्यायपूर्वक प्रजा-पालन के पश्चात् यह भी अपने पौलोम और चरम नामक पुत्रो को राज्य सौंपकर तप के लिए चला गया था। हपु० १७ २४-२५

पुलोमपुर—राजा कुणिम के पुत्र पुलोम द्वारा बसाया गया विदर्भ का एक नगर। हपु० १७ २४-२५

पुष्कर—(१) वाद्यो की एक जाति। ये चर्मावृत होते हैं। मुरज, पटह, पणावजक आदि वाद्य पुष्कर वाद्य ही है। मपु० ३ १७४, १४ ११५

(२) अच्युत स्वर्ग का एक विमान। मपु० ७३ ३०

(३) तीसरा द्वीप। चन्द्रादित्य नगर इसी मे स्थित था। इसकी पूर्व पश्चिम दिशाओ मे दो मेरु हैं। यह कमल के विशाल चिह्न से युक्त है। इसका विस्तार कालोदधि से दुगुना है और यह उसे चारो ओर से घेरे हुए है। इसका आधा भाग मनुष्य क्षेत्र की सीमा निश्चित करनेवाले मानुषोत्तर पर्वत से घिरा हुआ है। उत्तर-दक्षिण दिशा में इष्वाकार पर्वतो से विभक्त होने से इसके पूर्व पुष्करार्ध और पश्चिम पुष्करार्ध ये दो भेद हैं। दोनो खण्डो के मध्य में मेरु पर्वत है। इसकी बाह्य परिधि एक करोड बयालीस लाख तीस हजार दो सौ पच्चीस योजन से कुछ अधिक है। इसका तीन लाख पचपन हजार छ. सौ चौरासी योजन प्रमाण क्षेत्र पर्वतो से रुका हुआ है। मपु० ७ १३, ५४ ८, पपु० ८५ ९६, हपु० ५ ५७६-५८९

पुष्करवर—पुष्करवरद्वीप को घेरे हुए एक समुद्र। मपु० ५ ६२८-६२९

पुष्करार्ध—धातकीखण्ड के समान क्षेत्रो तथा पर्वतो से युक्त आधा पुष्करद्वीप। हपु० ५.१२ दे० धातकीखण्ड

पुष्करावर्त—चक्रवर्ती भरतेश का एक महल। मपु० ३७ १५१

पुष्करेक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

पुष्करोद—मानुषोत्तर पर्वत के पश्चिम का एक समुद्र। इस पर्वत के चौदह गुहा-द्वारो से निकलकर पूर्व-पश्चिम मे बहनेवाली नदियाँ इसी उदधि में आकर गिरती हैं। हपु० ५ ५९५-५९६

पुष्कल—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

पुष्कलावती—(१) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र में सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य प्रदक्षिणा रूप से स्थित छ खण्डो मे विभाजित एक देश। पुण्डरीकिणी नगरी इसकी राजधानी थी। विजयार्ध पर्वत भी इसी देश में है। यह तीर्थंकरो के मन्दिरो, चतुर्विध सघ और गणधरो से युक्त रहता है। यहाँ मनुष्यो की शारीरिक ऊँचाई सौ धनुष और आयु एक पूर्व कोटि वर्ष प्रमाण होती है। यहाँ सदा चौथा काल रहता है। यहाँ के मनुष्य मरकर स्वर्ग और मोक्ष ही पाते हैं। मपु० ४६ १९, ५१ २-३, २०९-२१३, हपु० ५ २४४-२४६ २५७-२५८, ३४ ३४, वीवच० २ ६-१७

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र मे भी इस नाम का एक देश है। मपु० ६ २६-२७, ६३, १४२, पापु० ५ ५३

(३) जम्बूद्वीप के गान्धार देश की नगरी। मपु० ७१ ४२५, हपु० ४४ ४५, ६० ४३, ६८

पुष्ट—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

पुष्टि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

पुष्पक—(१) आकाशगामी विमान। यह विमान स्वामी की इच्छानुसार गमनशील होता है। यह विमान रावण के मौसेरे भाई वैश्रवण के पास था। रावण ने वैश्रवण को जीतकर इसे प्राप्त कर लिया था। इसी में बैठकर रावण ने सीता का हरण किया था और राम से युद्ध करने के लिए इसी विमान पर आरूढ होकर लका से उसने निर्गमन किया था। रावण-वध के पश्चात् राम-लक्ष्मण और सीता आदि इसी यान से अयोध्या आये थे। मपु० ६८ १९३-१९४, पपु० ७ १२६-१२८, ८ २५३-२५८, ४१६, १२ ३७०, ४४ ९०, ५७ ६४-६५, ८२.१

(२) आनत-प्राणत स्वर्गों का तृतीय पटल एव इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५१

(३) राजपुर का एक वन। यह तीर्थंकर पुष्पदन्त की दीक्षाभूमि था। मपु० ५५.४६-४७, ७५.४६९

पुष्पकरण्डक—पोदनपुर का एक कुसुमोद्यान। मपु० ६२ ९९, ७४ १४२

पुष्पगिरि—एक पर्वत। पारियात्र के बाद भरतेश की सेना इस पर्वत पर आयी थी। मपु० २९ ६८

पुष्पचारण—एक ऋद्धि। इस ऋद्धि से पुष्पो और उनमें रहनेवाले जीवो को क्षति पहुँचाये बिना पुष्पों पर गमन किया जा सकता है। मपु० २ ७३

पुष्पचूल—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल और उसकी रानी मनोहरी से उत्पन्न सात पुत्रो में पाँचवाँ पुत्र। यह चित्रागज, गरुडध्वज, गरुडवाहन और मणिचूल का अनुज तथा गगननन्दन और गगनचर का अग्रज था। मपु० ७१ २४९-२५२

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का छप्पनवाँ नगर। अपरनाम पुष्पचूड है। मपु० १९ ७९, हपु० २२ ९१

पुष्पदत्ता—भरतक्षेत्र के स्थूणागार नगर के भारद्वाज ब्राह्मण की भार्या। यह मरीचि के जीव पुष्यमित्र की जननी थी। मपु० ७४ ७०-७१ दे० पुष्यमित्र

पुष्पदन्त—(१) धातकीखण्ड में पूर्व भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी का चक्रवर्ती राजा। इसकी प्रीतिंकरी रानी और सुदत्त पुत्र था। मपु० ७१ २५६-२५७

(२) राजपुर नगर निवासी धनी मालाकार। मपु० ७५ ५२७-५२८

(३) श्रुत को ग्रन्थारूढ करनेवाले एक आचार्य। तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के पश्चात् छ सौ तिरासी वर्ष बीत जाने पर काल दोष से श्रुतज्ञान की हीनता होने लगी। तब इन्होंने आचार्य भूतवलि के साथ अवशिष्ट श्रुत को पुस्तकारूढ किया और सब सघो के साथ ज्येष्ठ शुक्ला पचमी के दिन उसकी महापूजा की। वीवच० १ ४१-५५

(४) क्षीरवर द्वीप का एक रक्षक व्यन्तर देव। हपु० ५ ६४१

(५) एक क्षुल्लक। विष्णुकुमार मुनि के गुरु ने मुनियो पर हस्तिनापुर में बलि द्वारा किये जाते हुए उपसर्ग को जानकर दुख प्रकट किया था। क्षुल्लक ने उनसे यह जानकर कि विक्रिया ऋद्धि धारक विष्णुकुमार मुनि इस उपसर्ग को दूर कर सकते हैं ये उनके पास पहुँचे। इनके द्वारा प्राप्त सन्देश से विष्णुकुमार ने गुरु की आज्ञा के अनुसार इस उपसर्ग का निवारण किया। हपु० २० २५-६०

(६) अवसर्पिणी काल के चौथे दुषमा-सुषमा काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव नौवें तीर्थङ्कर। अपरनाम सुविधिनाथ। चन्द्रप्रभ तीर्थङ्कर के पश्चात् नब्बे करोड सागर का समय निकल जाने पर ये फाल्गुन कृष्ण नवमी के दिन भरतक्षेत्र में स्थित काकन्दी नगरी के स्वामी सुग्रीव की महारानी जयरामा के गर्भ में आये और मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा के दिन जैत्रयोग में इनका जन्म हुआ। जन्माभिषेक के पश्चात् इन्द्र ने इन्हें यह नाम दिया। इनकी आयु दो लाख पूर्व की थी और शरीर सौ धनुष ऊँचा था। इनका पचास हजार पूर्व का समय कुमारावस्था में बीता। पचास हजार पूर्व अट्ठाईस पूर्वांग वर्ष इन्होंने राज्य किया। उल्कापात देखकर ये प्रबोध को प्राप्त हुए। तब इन्होंने अपने पुत्र सुमति को राज्य सौंप दिया और सूर्यप्रभा नाम की शिविका में बैठकर ये पुष्पक वन गये। वहाँ ये मार्गशीर्ष के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के दिन अपराह्न में षष्ठोपवास का नियम लेकर एक हजार राजाओ के साथ दीक्षित हुए। दीक्षित होते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान हो गया। शैलपुर नगर के राजा पुष्यमित्र के यहाँ प्रथम पारणा हुई। छद्मस्थ अवस्था में तप करते हुए चार वर्ष बीत जाने पर कार्तिक शुक्ला द्वितीया को साय वेला में मूल नक्षत्र में दो दिन का उपवास लेकर नागवृक्ष के नीचे स्थित हुए। वहाँ इन्होंने घातिया कर्मों का नाश करके अनन्त चतुष्टय प्राप्त किया। इनके सघ में विदर्भ आदि अठासी गणधर, दो लाख मुनि, तीन लाख अस्सी हजार आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक और पाँच लाख श्राविकाएँ थी। आय देशो में विहार करके भाद्र मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि की अपराह्न वेला में, मूल नक्षत्र में एक हजार मुनियो के साथ इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। दूसरे पूर्वभव में ये पुण्डरीकिणी नगरी के महापद्म नामक नृप थे, पहले पूर्वभव में ये प्राणत स्वर्ग में इन्द्र हुए। वहाँ से च्युत होकर इस भव में ये तीर्थङ्कर हुए। मपु० २ १३०, ५० २-२२, ५५ २३-३०, ३६-३८, ४५-५९, ६२, पपु० ५ २१४, २० ६३, हपु० १ ११, ६० १५६-१९०, ३४१-३४९, वीवच० १ १९, १८ १०१-१०६

पुष्पदन्ता—(१) तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के सघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ६७ ५३

(२) स्थूणागार नगर के निवासी भारद्वाज द्विज की पत्नी। यह पुरुरवा के जीव पुष्यमित्र की जननी थी। वीवच० २ ११२, दे० पुष्पदत्ता

पुष्पनखा—राक्षस वश के स्थापक राजा राक्षस के युवराज बृहत्कीर्ति की स्त्री। पपु० ५ ३८१

पुष्पपालिता—एक मालिन की पुत्री। श्रावक के व्रतो को धारण करने से यह स्वर्ग की शची देवी हुई। मपु० ४६ २५७

पुष्पप्रकीर्णक—लका का एक पर्वत। सीता इस पर्वत पर भी रही थी। पपु० ७९ २७-२८

पुष्पमाल—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का बावनवाँ नगर। हपु० २२ ९१

पुष्पमाला—नन्दनवन में स्थित सागरकूट की स्वामिनी दिक्कुमारी। हपु० ५ ३२९-३३३

पुष्यमित्र—(१) शैलपुर नगर का राजा। इसने तीर्थङ्कर पुष्पदन्त को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५५ ४८

(२) तीर्थङ्कर महावीर के पूर्वभव का नाम। इसका दूसरा नाम

पुष्यमित्र था। मपु० ७४ ७०-७४, ७६ ५३५, वीवच० २ ११२-११८ दे० पुरूरवा

(३) एक नृप। इसने महावीर के निर्वाण के दो सौ पचपन वर्ष बाद तीन वर्ष तक राज्य किया था। हपु० ६० ४८७-४८९

पुष्पवती—(१) विद्याधर चन्द्रगति की रानी। भामण्डल का पुत्रवत् लालन-पालन तथा नामकरण इसी ने किया था। पपु० २६ १३०-१४९

(२) एक मालिन की पुत्री। यह पुष्पपालिता की बहिन थी। श्रावक के व्रतों को धारण करने के कारण यह स्वर्ग में मेनका देवी हुई थी। मपु० ४६ २५७

पुष्पवन—भूत-पिशाच आदि से व्याप्त महाभयानक एक वन। अलंकार पुर के राजा सुमाली के पुत्र रत्नश्रवा ने विद्यासिद्धि इसी वन मे की थी। पपु० ७ १४६

पुष्पवृष्टि—केवलज्ञान की प्राप्ति पर तथा मुनियो की पारणा के पश्चात् देवो द्वारा की जानेवाली पुष्पवर्षा। यह अष्ट प्रातिहार्यो मे एक प्रातिहार्य एव पचाश्चर्यो में एक आश्चर्य है। मपु० ६ ८७, ८ १७३-१७५, २४ ४६, ४९

पुष्पान्तक—(१) सुमाली के पुत्र रत्नश्रवा द्वारा बसाया गया नगर। पपु० १ ६१

(२) असुरसगीतनगर के राजा विद्याधर मय का विमान। पपु० ८ १९

पुष्पोत्तर—(१) रत्नपुर नगर का राजा एक विद्याधर। यह अपने पुत्र पद्मोत्तर के लिए श्रीकण्ठ की बहिन चाहता था, परन्तु श्रीकण्ठ ने अपनी बहिन पद्मोत्तर को न देकर पद्मोत्तर की बहिन पद्माभा को स्वय विवाह लिया था। पपु० ६ ७-५२

(२) स्वर्ग। तीर्थङ्कर श्रेयान्, धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और महावीर इसी स्वर्ग से च्युत होकर तीर्थङ्कर हुए थे। पपु० २०. ३१-३५ मपु० के अनुसार यह अच्युत स्वर्ग का एक विमान है। मपु० ५७.१४

(३) अच्युत स्वर्ग का एक विमान। तीर्थङ्कर अनन्तनाथ पूर्वभव मे इसी विमान मे इन्द्र थे। मपु० ६० १२-१४

पुष्य—एक नक्षत्र। तीर्थङ्कर धर्मनाथ ने इसी नक्षत्र में जन्म लिया था। पपु० २०.५१

पुष्यमित्र—यह मरीचि का जीव था और भारद्वाज की भार्या पुष्पदत्ता का पुत्र था। यह पारिव्राजक हुआ और इसने मरयात तत्त्वो का उपदेश दिया। मरकर यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। अनेक पर्यायो के पश्चात् यह चौबीसवाँ तीर्थङ्कर महावीर हुआ। मपु० ७४ ६६-७३ दे० महावीर

पुस्तकर्म—लकड़ी आदि से बनाये जानेवाले खिलौने। यह क्षय, उपचय और संक्रम के भेद से तीन प्रकार का होता है। यन्त्र, नियन्त्र, सछिद्र और निश्छिद्र ये भी इसके भेद होते है। मपु० २८ ३८-४०

पूगी—सुपारी। यह समुद्र के किनारे की भूमि मे सम्पन्न होती है। भरतेश दक्षिण विजय के समय पूगी-वनो में गये थे। मपु० ३०.१३

पूजा—गृहस्थ के चार प्रकार के धर्मों में एक धर्म। यह अभिषेक के पश्चात् जल, गंध, अक्षत, पुष्प, अमृतपिण्ड (नैवेद्य), दीप, धूप और फल द्रव्यो से की जाती है। याग, यज्ञ, क्रतु, सपर्या, इज्या, अध्वर, मख और मह इसके अपरनाम हैं। मपु० ६७ १९३ यह चार प्रकार की होती है। सदार्चन, चतुर्मुख, कल्पद्रुम और आष्टाह्निक। इनके अतिरिक्त एक ऐन्द्रध्वज पूजा भी होती है जिसे इन्द्र किया करता है। पूजा के और भी भेद है जो इन्ही चार पूजा-भेदो में अन्तर्भूत हो जाते हैं। मपु० ८ १७३-१७८, १३.२०१, २३ १०६, ३८ २६-३३, ४१.१०४, ६७ १९३

पूजाराध्यक्रिया—दीक्षान्वय की पाँचवी क्रिया। इसमे जिनेन्द्र-पूजा और उपवासपूर्वक द्वादशाग का अर्थ सुना जाता है। मपु० ३८ ६४, ३९ ४९

पूजार्ह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

पूज्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९१

पूज्यपाद—व्याकरण के पारगामी देवनन्दी आचार्य। अपरनाम जिनेन्द्र-बुद्धि और देवेन्द्रकीर्ति। पापु० १ १६

पूत—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३७, २५ १३६

पूतगन्धिका—रुक्मिणी के भवान्तर का एक नाम। हपु० ६० ३३

पूतन—विन्ध्याचल का एक यक्षाधिपति। इसने राम और लक्ष्मण को क्रमश बलभद्र और नारायण जानकर उनके रहने के लिए एक नगर की रचना की थी। पपु० ३५ ४३-४५

पूतना—एक व्यन्तर देवी। यह पूर्वकाल में कस द्वारा सिद्ध की गयी सात व्यन्तर देवियो में एक देवी थी। इसे विभगावधिज्ञान था। कस के आदेश से उसके शत्रु कृष्ण को खोजकर इसने उसे (कृष्ण को) मारना चाहा था। यह माता का रूप धारण करके उसके पास गयी थी। अपने विष भरे स्तन से जैसे ही इसने दूध पिलाने की चेष्टा की कि कृष्ण की रक्षा करने मे तत्पर किसी दूसरी देवी ने इसके स्तन मे असह्य पीडा उत्पन्न की जिससे यह अपने उद्देश्य में सफल नही हो सकी। मपु० ७० ४१४-४१८

पूतवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११

पूतशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११

पूतात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १११

पूतिका—मन्दिर ग्राम के निवासी मत्स्य धीवर और उसकी पत्नी मण्डूकी की पुत्री। माता द्वारा त्यागे जाने पर समाधिगुप्त नामक मुनिराज द्वारा दिये गये उपदेश को ग्रहण करके इसने सल्लेखनापूर्वक मरण किया और अच्युत स्वर्ग में अच्युतेन्द्र की गानवल्लभा नाम की महादेवी हुई। इसका दूसरा नाम पूतिगन्धिका था। मपु० ७१ ३३८-३४०, हपु० ६० ३३-३८

पूतिगन्धिका—दे० पूतिका।

पूरण—अन्धकवृष्टि और उसकी रानी सुभद्रा के दस पुत्रों में [illegible]

के अनुसार आठवाँ पुत्र। समुद्रविजय, स्तिमितसागर, हिमवान्, विजय, अचल और धारण ये छः इसके अग्रज थे तथा पूरितार्थीच्छ, अभिनन्दन और वसुदेव ये तीन अनुज थे। कुन्ती और माद्री इसकी बहिनें थीं। इसके चार पुत्र हुए—दुष्पूर, दुर्मुख, दुर्दर्श और दुर्धर। मपु० ७० ९५-९७, हपु० १८ १२-१५, ४८ ५१

पूरितार्थीच्छ—अन्धकवृष्टि और उसकी रानी सुभद्रा का पुत्र। समुद्रविजय, स्तिमितसागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण और पूरण नामक भाइयों का यह अनुज तथा अभिनन्दन और वसुदेव का अग्रज था। यह कालिका का पति था। मपु० ७० ९५-९९

पूर्ण—(१) भवनवासी देवों का इन्द्र। यह महावीर को प्राप्त केवलज्ञान की पूजा के लिए आया था। वीवच० १४ ५४-५८

(२) इक्षुवर द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६४३

पूर्ण-कामक—समवसरण के तीसरे कोट में उत्तरी द्वार का एक नाम। हपु० ५७ ६०

पूर्णघन—भरतक्षेत्र में स्थित विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के चक्रवाल नगर का नृप। इसके मेघवाहन नाम का पुत्र था। इसने विहायस्तिलक नगर के राजा सुलोचना से उसकी कन्या उत्पलमती की याचना की थी किन्तु सुलोचना ने अपनी कन्या इसे न देकर निमित्तज्ञानी के सकेतानुसार सगर चक्रवर्ती को दी थी। इससे क्रुद्ध होकर इसने राजा सुलोचन को युद्ध में मार डाला था और यह स्वयं भी उसके पुत्र सहस्रनयन द्वारा मारा गया। पपु० ५ ७६-८७

पूर्णचन्द्र—(१) विद्याधर दृढ़रथ का वंशज। वह पूरचन्द्र का पुत्र और बालेन्दु का पिता था। पपु० ५ ४७-५६

(२) राम का सिंहरथवाही सामन्त। बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण की साधना में विघ्न उत्पन्न करने के लिए यह लंका गया था। यह भरत के साथ दीक्षित हो गया। पपु० ५८ ९-११, ७० १२-१६, ८८ १-६

(३) भरतक्षेत्र के सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन और उसकी रानी रामदत्ता का छोटा पुत्र। यह सिंहचन्द्र का अनुज था। सिंहसेन के मरने पर सिंहचन्द्र राजा और यह युवराज हुआ। सिंहचन्द्र के दीक्षित होने पर इसने कुछ समय तक राज्य किया। सिंहचन्द्र मुनि से इसे धर्मोपदेश मिला। यह भी विरक्त होकर मुनि हो गया और मरने के पश्चात् महाशुक्र स्वर्ग के वैडूर्य विमान में वैडूर्य देव हुआ। मपु० ५९ १४६, १९२-२०२, २२४-२२६ हपु० २७ ४६-५९

(४) पोदनपुर का राजा। हिरण्यवती इसकी रानी और रामदत्ता इसकी पुत्री थी। इसने राहुभद्र मुनि से दीक्षा लेकर अवधिज्ञान प्राप्त किया था। रानी हिरण्यवती ने भी दत्तवती आर्या के समीप आर्यिका के व्रत धारण किये थे। इसी के उपदेश से रामदत्ता और उसका पुत्र सिंहचन्द्र दोनों दीक्षित हो गये थे। यह स्वयं सम्यग्दर्शन और व्रत से रहित हो जाने के कारण भोगों में आसक्त हो गया था। अन्त में यह रामदत्ता द्वारा समझाये जाने पर दान, पूजा, तप, शील और सम्यक्त्व का अच्छी तरह पालन करके सहस्रार स्वर्ग के वैडूर्यप्रभ नामक विमान में देव हुआ। मपु० ५९ २०७-२०९, हपु० २७. ५५-७४

(५) भविष्यत् कालीन सातवाँ बलभद्र। मपु० ७६ ४८६, हपु० ६० ५६८

पूर्णचन्द्रा—महापुर नगर के राजा सोमदत्त की रानी। यह भूरिश्रवा नामक पुत्र तथा सोमश्री नामा पुत्री की जननी थी। सोमश्री वसुदेव से विवाही गयी थी। हपु० २४ ३७-५९

पूर्णप्रभ—इक्षुवर द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६४३

पूर्णभद्र—(१) साकेतपुर निवासी अर्हद्दास श्रेष्ठी का ज्येष्ठ पुत्र। मणिभद्र इसका छोटा भाई था। इसने श्रावक की सातवीं प्रतिमा धारण की थी। इसके प्रभाव से यह मरकर सौधर्म स्वर्ग में सामानिक देव हुआ। सौधर्म स्वर्ग से च्युत होकर यह साकेत नगरी के राजा हेमनाभ का मधु नामक पुत्र हुआ था। मपु० ७२ ३६-३७, पपु० १०९ १३१-१३२

(२) एक यक्ष। इसने बहुरूपिणी विद्या की सिद्धि के समय रावण की रक्षा की थी। पपु० ७० ६८-९५

(३) कुबेर का साथी एक यक्ष। द्वारिका के निर्माण के पश्चात् कुबेर के चले जाने पर उसकी आज्ञा से वहाँ बचे हुए कार्य को इसने सम्पन्न किया था। हपु० ४१ ४०

(४) विजयार्ध की दक्षिण और उत्तर श्रेणी से पन्द्रह योजन ऊपर स्थित एक पर्वत-श्रेणी। यह दस योजन चौड़ी है। विजयार्ध देव इसका स्वामी है। हपु० ५ २४-२५

(५) ऐरावत क्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का चतुर्थ कूट। हपु० ५ २६, १०९-११२

(६) माल्यवान् पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २१९-२२०

(७) किन्नर आदि अष्टविध जातियों के व्यन्तर देवों में यक्ष जातियों के व्यन्तरों का इन्द्र। वीवच० १४ ५९-६३

(८) अयोध्या के समुद्रदत्त सेठ का पुत्र। यह अपने पूर्वभव में अग्निभूति था। हपु० ४३ १४८-१४९

पूर्व—(१) चौरासी लाख पूर्वाङ्ग प्रमाण काल। मपु० ३ २१८, ४८ २८, हपु० ७ २५ दे० काल

(२) श्रुतज्ञान के पर्याय आदि बीस भेदों में उन्नीसवाँ भेद। पूर्व चौदह होते हैं—१ उत्पादपूर्व २ अग्रायणीयपूर्व ३ वीर्यप्रवादपूर्व ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व ५ ज्ञानप्रवादपूर्व ६ सत्यप्रवादपूर्व ७ आत्मप्रवादपूर्व ८ कर्मप्रवादपूर्व ९ प्रत्याख्यानपूर्व १० विद्यानुवादपूर्व ११ कल्याणपूर्व १२ प्राणावायपूर्व १३ क्रियाविशालपूर्व और १४ लोकबिन्दुपूर्व। हपु० २ ९८-१००, १० १२-१३

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १९२

पूर्वकोटि—एक करोड़ पूर्व प्रमित काल। मपु० ३ १५३, २१८

पूर्वगत—श्रुतज्ञान के बारहवें दृष्टिवाद अंग का पाँचवाँ भेद। हपु० २ ९५-१००

पूर्वतालपुर—एक नगर । यह भरतेश के छोटे भाई वृषभसेन की निवास-भूमि था । इसी नगर के शकटास्य नामक उद्यान में तीर्थङ्कर आदिनाथ को केवलज्ञान हुआ था । हपु० ९ २०५-२१०

पूर्वधर—चौदह पूर्वों के ज्ञाता मुनि । वृषभदेव के सघ मे चार हजार सात सौ पचास पूर्वधर मुनि थे । इसी प्रकार शेष तीर्थङ्करो के सघो मे भी पूर्वधर मुनि होते रहे हैं । हपु० १२ ७१-७२

पूर्वधारी—चौदह पूर्वों के ज्ञाता मुनि । मपु० ४८ ४३

पूर्वपक्ष—सिद्धान्त विरोधी । परमत का पक्ष । हपु० २१ १३६

पूर्वमन्दर—पूर्वमेरू । मपु० ७ १३

पूर्वरग—मगलाचरण के पश्चात् नाटक का आरम्भिक (आमुख) अश । मपु० २.८८, १४ १०५

पूर्व-विदेह—(१) विदेहक्षेत्र का एक भाग । यह सुमेरु पर्वत की पूर्व दिशा में स्थित है । सीता नदी इसी क्षेत्र के मध्य बहती है । यह सीमन्धर स्वामी की निवासभूमि है । यहाँ तीर्थङ्कर चतुर्विध सघ तथा गणधरो सहित धर्म-प्रवर्तन के लिए सदा विहार करते हैं । यहाँ अहिंसा धर्म नित्य प्रवर्तमान रहता है । ज्ञानी अग और पूर्वगत श्रुत का अध्ययन करते हैं । यहाँ मनुष्यो का शरीर पाँच सौ धनुष ऊँचा और उनकी आयु एक पूर्वकोटि वर्ष की होती है । यहाँ के मनुष्य मरण कर नियम से स्वर्ग और मोक्ष ही प्राप्त करते हैं । नारद का यहाँ गमनागमन रहता है । हपु० ४३ ७९, वीवच० २ ३-१४

(२) नील पर्वत का एक कूट । हपु० ५ ९९

पूर्वसमास—श्रुतज्ञान का अन्तिम बीसवाँ भेद । हपु० १० १२-१३

पूर्वांग—चौरासी लाख वर्ष प्रमाण काल । मपु० ३.२१८, हपु० ७ २४ दे० काल

पूर्वास्ति—अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओ में प्रथम वस्तु । हपु० १० ७७-७८ दे० अग्रायणीयपूर्व

पूर्वाषाढ़—एक नक्षत्र । तीर्थङ्कर सभवनाथ तथा शीतलनाथ ने इसी नक्षत्र मे जन्म लिया था । पपु० २० ३९,४६

पृच्छना—स्वाध्याय की एक भावना । इसमें प्रश्नोत्तर के द्वारा तत्त्वज्ञान प्राप्त किया जाता है । मपु० २१ ९६

पृतना—अक्षौहिणी सेना का एक अग । इसमें २४३ रथ, २४३ हाथी, १२१५ प्यादे और १२१५ घुडसवार होते हैं । मपु० ६ १०९, पपु० ५६ २-५, ८

पृथक्त्व—(१) तीन से ऊपर और नौ मे नीचे की सख्या । मपु० ५.२८६

(२) विचारो की अनेकता या नानात्व पृथक्त्व कहलाता है । योगो से क्रान्त होकर यह पृथक्त्व ध्यान का विषय बन जाता है । हपु० ५६ ५७

पृथक्त्ववितर्कविचार—शुक्लध्यान का एक भेद । शुक्लध्यान के दो भेद हैं—शुक्ल और परमशुक्ल । इनमें प्रथम शुक्लध्यान के दो भेद हैं । उनमें यह प्रथम भेद है । ध्यानी श्रुतस्कन्ध से कोई एक विषय लेकर उसका ध्यान करने लगता है । तब एक शब्द से दूसरे शब्द का और एक योग से दूसरे योग का सक्रमण होता है । सक्रमणात्मक यह ध्यान सवितर्क और सविचार कहलाता है । इस ध्यान से ही उत्कृष्ट समाधि की उपलब्धि होती है । यह ध्यान उपशान्त मोह और क्षीणमोह आदि गुणस्थानो मे होता है । इसमें क्षायोपशमिक भाव विद्यमान रहते हैं । मपु० ११ ११०, २१ १६७-१८३, हपु० ५६ ५४, ५७-६४

पृथिवी—(१) तीर्थङ्कर सुपार्श्व की जननी । यह काशी-नरेश सुप्रतिष्ठ की रानी थी । पपु० २० ४३

(२) द्वारावती के राजा भद्र की रानी । यह तीसरे नारायण स्वयभू की जननी थी । मपु० ५९ ८६-८७ पद्मपुराण के अनुसार तीसरा नारायण स्वयभू हस्तिनापुर के राजा रौद्रनाद और उसकी रानी पृथिवी का पुत्र था । पपु० २० २२१-२२६

(३) राजा वालखिल्य की रानी और कल्याणमाला की जननी । पपु० ३४ ३९-४३

(४) वत्सकावती देश का एक नगर । मपु० ४८ ५८-५९

(५) आठ दिक्कुमारी देवियो में एक देवी । यह तीर्थङ्कर की माता पर छत्र धारण किये रहती है । हपु० ८ ११०

(६) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गन्धसमृद्धनगर के राजा गाधार की महादेवी । हपु० ३० ७

(७) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुरदेव की रानी । दान धर्म के पालन के प्रभाव से यह अच्युत स्वर्ग में सुप्रभा देवी हुई । मपु० ४६ ३५२

पृथिवीकाय—तिर्यञ्च गतियो में पाये जानेवाले जीवा मे स्थावर जीवो का प्रथम भेद । ऐसे जीव पृथिवी को खोदे जाने, जलती हुई अग्नि द्वारा तपाये जाने, बुझाये जाने, अनेक कठोर वस्तुओ से टकराये जाने तथा छेदे-भेदे जाने से दुःख प्राप्त करते हैं । इन जीवो की सात लाख कुयोनियो तथा बाईस लाख कुल कोटियाँ हैं । खर पृथिवी के जीवो की आयु बाईस हजार वर्ष और कोमल पृथिवी की बारह हजार वर्ष होती है । मपु० १७ २१-२३, हपु० ३ १२०-१२१, १८ ५७-६४

पृथिवीचन्द्र—लक्ष्मण का पुत्र । मपु० ६८ ६९०

पृथिवीतिलक—(१) विदेह क्षेत्र के वत्सकावती देश का एक नगर । मपु० ४८ ५८, ५९ २४१, हपु० २७ ९१

(२) लक्ष्मण और उसकी महादेवी रूपवती का पुत्र । पपु० ९४ २७-२८ ३१

पृथिवीतिलका—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित मन्दारनगर के राजा शख और उसकी रानी जयदेवी की पुत्री । इसका विवाह तिलक नगर के राजा अभयघोष से हुआ था । मपु० ६३ १६८-१७१

पृथिवीदेवी—लक्ष्मण की भार्या । मपु० ६८ ४७-४८

पृथिवीधर—(१) वैजयन्तपुर का राजा । इसकी रानी इन्द्राणी से वनमाला नाम की एक पुत्री हुई थी । शरीर से निस्पृह होकर इसने भरत के साथ मुनि होकर घोर तपस्या की थी और निर्वाण प्राप्त किया था । पपु० ३६.११-१५

पृथिवीनगर—(१) राजा पृथु की राजधानी । पपु० १०१ ५-८

(२) विदेह क्षेत्र के वत्सकावती देश का एक नगर । मपु० ४८ ५८

पृथिवीपुर—भरतक्षेत्र का नगर। द्वितीय चक्रवर्ती सगर के पूर्वभव के जीव विजय, चतुर्थ प्रतिनारायण मधुकैटभ और राजा पृथिवीधर की निवासभूमि। पपु० ५ १३८, २० १२७-१३०, २४२-२४४, ८०. १११

पृथिवीमती—(१) हस्तिनापुर के राजा पुरन्दर की रानी और कीर्तिधर की जननी। पपु० २१ १४०

(२) अयोध्या के राजा अनरण्य की महोदवी। यह अनन्तरथ और दशरथ की जननी थी। इसका अपरनाम सुमगला था। पपु० २२ १६०-१६२, २८ १५८

(३) आर्यिका। सीता ने इससे ही दीक्षा ली थी। पपु० १०५ ७८

पृथिवीमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

पृथिवीषेणा—काशी नरेश सुप्रतिष्ठ की रानी। यह तीर्थङ्कर सुपार्श्वनाथ की जननी थी। मपु० ५३ १९, २४

पृथिवीसुन्दरी—(१) वाराणसी के चक्रवर्ती पद्म की प्रथम पुत्री। यह सुकेतु विद्याधर के पुत्र से विवाहित हुई थी। मपु० ६६.७६-७७, ८०

(२) विदेह देश के विदेहनगर के राजा गोपेन्द्र की रानी रत्नवती की जननी। मपु० ७५,६४३-६४४

(३) राजा शिशुपाल की रानी। यह कल्कि नाम से प्रसिद्ध चतुर्मुख की जननी थी। मपु० ७६ ३९७-३९९

(४) लक्ष्मण की भार्या। मपु० ६८ ६६६

(५) सेठ कुबेरदत्त और उसकी भार्या धनमित्रा के पुत्र प्रीतिकर की स्त्री। मपु० ७६ ३४७

पृथु—पृथिवीनगर का राजा। इसकी रानी अमृतवती से कनकमाला पुत्री हुई थी। यह कन्या मदनाकुश को देने के लिए कहे जाने पर इसने मदनाकुश को अकुलीन समझ कर कन्या देना स्वीकार नही किया था किन्तु लवणाकुश और मदनाकुश दोनो भाइयो के द्वारा परास्त कर दिये जाने पर इसने मदनाकुश से अपनी कन्या का विवाह कर दिया था। इसके पश्चात् तो इसने राम और लक्ष्मण के साथ हुए युद्ध में मदनाकुश के सारथी का कार्य भी किया था। पपु० १०१ १-६७, १०३ २

(२) इक्ष्वाकुवशी राजा शतरथ का पुत्र, अज का पिता। पपु० २२ १५४-१५९

(३) कुरुवशी एक राजा। यह सुतेज के पश्चात् और इभवाहन से पूर्व हुआ था। हपु० ४५ १४

(४) रावण का सिंहरथारूढ सामन्त। पपु० ५७ ४५-४८

(५) कृष्ण के भाई बलदेव का १५वाँ पुत्र। हपु० ४८ ६६-६८

(६) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

पृथुश्री—पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वसुपाल का माला। यह उत्पलमाला गणिका का प्रेमी था। इसने उत्पलमाला के आभूषण अपनी बहिन सत्यवती को दे दिये थे तथा मांगने पर यह मुकर गया था। राजा ने सत्यवती से पूछा तो उसने सारे आभूषण राजा के सामने रख दिये। इस पर राजा ने क्रुद्ध होकर उसे मारने की आज्ञा दे दी थी किंतु नगर के कुबेरप्रिय सेठ ने दयार्द्र होकर उसे बचाया। इसने अपने अपमान का कारण सेठ को ही समझा। इसलिए इसने किसी विद्याधर से इच्छानुसार रूप बनानेवाली अँगूठी प्राप्त की और उसके प्रभाव से छलपूर्वक अपने रक्षक सेठ को भी मारने का प्रयास किया था किन्तु सफल नही हो सका। मपु० ४६ २८९, ३०४-३२५

पृथुश्री—कौतुकमगल नगर के राजा शुभमति की रानी। यह द्रोणमेघ और केकया की जननी थी। पपु० २४ २-४, ८९-९०

पेय—आहार योग्य पदार्थों के पाँच भेदो में (भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और चूष्य) एक भेद। शीतल, जल, मिश्रित जल और मद्य के भेद से यह तीन प्रकार का होता है। पपु० २४ ५३-५४

पैशुन्यभाषण—पीठ पीछे निन्दा करना। दुष्ट लोग पैशुन्यभावी होते हैं। हपु० १० ९३

पोदनपुर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी सुरम्य देश का एक सुन्दर नगर। यह प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ की जन्मभूमि था। बाहुबली को भगवान् वृषभदेव ने यहाँ का राज्य दिया था। यह उनके राज्य की राजधानी था। मपु० ५४ ६८, ५९ २०९, ७० १३८-१३९, ७३ ६, पपु० २० २१८-२२१, हपु० ११ ७८, पापु० ९ २२५, ४४१, ११ ४३, वीवच० ३ ६१-६३

पौंड्र—(१) भरतक्षेत्र की पूर्वदिशा में स्थित देश। यह भरतेश के एक भाई के अधीन था। उसने भरतेश की अधीनता स्वीकार नही की और वह दीक्षित हो गया। इसलिए यह देश भरतेश के साम्राज्य में मिल गया था। यहाँ के राजा ने राम-लक्ष्मण और वज्रजघ के बीच हुए युद्ध मे वज्रजघ का साथ दिया था। पपु० १०२ १५४-१५७

(२) वसुदेव की पौण्ड्रा रानी से उत्पन्न पुत्र। हपु० ४८ ५९

(३) वसुदेव की रानी चारुहासिनी से उत्पन्न पुत्र। हपु० २४ ३१-३३

(४) भद्रिलपुर नगर का राजा। इसकी पुत्री चारुहासिनी वसुदेव को विवाही गयी थी। इसने तीर्थंकर नेमि के समवसरण में जाकर उनकी वन्दना की थी। हपु० २४ ३१-३२, ३१ २८, ३२ ३९, ५९. ११४

पौण्ड्रा—वसुदेव की एक रानी। पौण्ड्र इसका पुत्र था। हपु० ४८ ५९

पौरवी—सगीत के धैवत की एक मूर्च्छना। हपु० १९ १६३

पौलोम—हरिवशी राजा पुलोम का पुत्र। यह चरम का भाई था। पिता के दीक्षित होने पर इसे उनका राज्य मिला था। हपु० १७ २४-२५

प्रच्छना—स्वाध्याय तप का एक भेद। दे० स्वाध्याय

प्रकाण्डक—एक हार। इस हार में क्रम से बढ़ते हुए पाँच मोती लगते है। मपु० १६ ४७, ५३

प्रकाम—भविष्यत् कालीन रुद्र। हपु० ६० ५७१-५७२

प्रकाशयश—पुष्करद्वीप के चन्द्रादित्य नगर का राजा। इसकी रानी माधवी से जगद्द्युति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। हपु० ८५ ९६-९७

प्रकाशात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९६

प्रकीर्णक—(१) अगबाह्यश्रुत का अपर नाम। इसके चौदह भेद हैं—सामायिक, जिनस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुण्डरीक, महापुण्डरीक और निषद्यका। इसमें आठ करोड एक लाख आठ हज़ार एक सौ पचहत्तर अक्षर, एक करोड तेरह हज़ार पाँच सौ इक्कीस पद और पच्चीस लाख तीन हज़ार तीन सौ अस्सी श्लोक है। हपु० १०.१२५-१३८, ५० १२४

(२) लका के प्रमदवन पर्वत पर स्थित सात वनो में एक वन। पपु० ४६ १४३-१४६

(३) अच्युत स्वर्ग के एक सौ तेईस विमान। मपु० १० १८७

(४) ताण्डव-नृत्य का एक भेद। इसमें नाचते हुए पुष्प वर्षा की जाती है। मपु० १४ ११४

प्रकुब्जा—तीर्थंकर अजितनाथ के सघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ४८ ४७

प्रकृति—(१) कर्म की प्रकृतियाँ। अघाति कर्मों की पचासी तथा घाति कर्मों की तिरेसठ कर्म प्रकृतियाँ होती हैं। मपु० ४८ ५२, वीवच० १९ २२१-२३१

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६५

(३) अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के कर्म प्रकृति प्राभृत का पाँचवाँ अनुयोग द्वार। हपु० १० ८२

प्रकृतिद्युति—बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६६-६८

प्रक्रम—अग्रायणीयपूर्व की कर्मप्रकृति वस्तु का आठवाँ अनुयोग द्वार। हपु० १० ८३

प्रक्षीणबन्ध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १६५

प्रख्यात—चक्रपुर नगर का राजा। इसकी रानी अम्बिका से पाँचवाँ नारायण पुरुषसिंह उत्पन्न हुआ था। पपु० २०.२२१-२२६

प्रचण्डवाहन—त्रिश्रृग नगर का राजा। इसकी रानी विमलप्रभा के दस पुत्रियाँ थी—गुणप्रभा, सुप्रभा, ह्री, श्री, रति, पद्मा, इन्दीवरा, विश्वा, आचर्या और अशोका। इन कन्याओ का विवाह युधिष्ठिर से करने का निर्णय लिया गया था किन्तु लाक्षागृह के दाह का समाचार पाकर इस निर्णय को समाप्त कर दिया गया था। इन कन्याओ ने अणुव्रत धारण कर लिये थे। हपु० ४५ ९६-९८

प्रचला—दर्शनावरण कर्म का एक भेद। हपु० ५६.९७

प्रचला-प्रचला—दर्शनावरण कर्म का एक भेद। हपु० ५६ ९१

प्रच्छाल—भरतखण्ड के उत्तर का एक देश। यहाँ भगवान् महावीर की देशना हुई थी। हपु० ३ ६

प्रजा—(१) सन्तान। मपु० ३ १४२

(२) शासको द्वारा रक्षित एव अनुशासित जन। ये दो प्रकार के होते हैं—प्रथम वे लोग जो रक्ष्य होते हैं और दूसरे वे जो रक्षक होते हैं। क्षत्रियो को रक्षक माना गया है। मपु० ४२ १०

प्रजाग—भगवान् वृषभदेव का दीक्षा स्थान। पपु० ८५ ४०, हपु० ९ ९६

प्रजापति—(१) वृषभदेव के चौरासी गणधरो में ५८ वें गणधर। महापुराण में ये ५७ वें गणधर हैं। मपु० ४३ ६३, हपु० १२ ६५

(२) वृषभदेव का दूसरा नाम। अपूर्व रूप से प्रजा की रक्षा करने के कारण उन्हें इस नाम से सबोधित किया गया था। सौधर्मेन्द्र ने वृषभदेव की इस नाम से भी स्तुति की थी। मपु० २५ ११३ ७३ ७, हपु० ८ २०९

(३) पोदनपुर नगर का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—मृगावती और जयावती। प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ मृगावती का तथा विजय नामक बलभद्र जयावती का पुत्र था। मपु० ५७ ८४-८६, ७० १२०-१२२, पपु० २० २२१-२२६, वीवच० ३ ६१-६३

(४) मलय देश के रत्नपुर नगर का राजा। यह गुणकान्ता का पति और चन्द्रचूल का पिता था। मपु० ६७ ९०-९१

(५) अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी का राजा। मपु० ७५ ९५

प्रजापाल—(१) पाँचवाँ बलभद्र। पपु० २० २३४

(२) पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। इसकी गुणवती और यशस्वती नाम की दो पुत्रियाँ तथा लोकपाल नाम का पुत्र था। इसने पुत्र को राज्य सौंपकर शिवकर वन मे शीलगुप्त मुनि से सयम धारण कर लिया था। मपु० ४५ ४८-४९, ४६ १९-२०, पापु० ३.२०१

(३) जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व की ओर स्थित सुकच्छ देश के श्रीपुर नगर का राजा। यह तीर्थङ्कर मल्लिनाथ के तीर्थ में हुए पद्म चक्रवर्ती के तीसरे पूर्वभव का जीव था। उल्कापात देखकर इसे प्रबोध हो गया था। फलस्वरूप इसने पुत्र को राज्य सौंपकर शिवगुप्त जिनेश्वर के पास सयम धारण कर लिया था। समाधिमरण से यह अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुआ तथा यहाँ से च्युत होकर वाराणसी नगरी में इक्ष्वाकुवशी राजा पद्मनाभ का पद्म नामक पुत्र हुआ। मपु० ६६.६७-७७

(४) विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती देश के शोभानगर का राजा। मपु० ४६ ९५

प्रजापालन—राजधर्म। न्यायवृत्ति से प्रजा को अपने धर्म के पालन में यथेष्ट सुविधा देना राजधर्म है। मपु० ४२ १०-१४

प्रजावती—मिथिलेश कुम्भ की महादेवी। यह तीर्थङ्कर मल्लिनाथ की जननी थी। मपु० ६६.३२-६४

प्रजाहित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०७

प्रज्वलित—तीसरी मेघा नामक पृथिवी के छठे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४.८०-८१

प्रज्वलितोत्तम—एक रथ। रावण ने बहुरूपिणी विद्या से इसका निर्माण करके इसे अपने मय नामक योद्धा को दिया था। मय योद्धा ने इसी रथ पर आरूढ होकर हनुमान् को रथ रहित किया था। पपु० ७४ ६९-७३

प्रज्ञप्ति—विद्याधरों की एक विद्या। इसमें विमानों का निर्माण किया जाता था। राम और लक्ष्मण ने इसी विद्या से विमान निर्मित करके अपनी सेना लंका भेजी थी। इसमें रूप में भी यथेष्ट परिवर्तन किया जा सकता था। मपु० ६२ ३९१, ५२२-५२३ ७२, ७८, १२३ हपु० २७ १३१ रावण को भी यह विद्या प्राप्त थी। अचिमाली ने यह विद्या अपने पुत्र ज्वलनवेग को दी थी। वसुदेव को भी यह प्राप्त हो गयी थी। प्रद्युम्न ने इसे कनकमाला से प्राप्त किया था। पपु० ७ ३२५-३३२, हपु० १९ ८१-८२, २७ १३१, ३० ३७, ४७ ७६-७७

प्रज्ञा—एक परीषह। ज्ञान का उत्कर्ष सर्वज्ञ होने तक है, इसके पूर्व ज्ञान बढता रहता है, ऐसा चिन्तन करते हुए अपने विशेष ज्ञान का अभिमान न करना इस परीषह का ध्येय है। मपु० ३६ १२५

प्रज्ञापारमित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

प्रणत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

प्रणव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

प्रणाली—नहरों से खेतों को जल पहुँचानेवाली नालियाँ। ये कृषि के लिए सिंचाई का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। मपु० ३५ ४०

प्रणिधान्या—जिनेन्द्र की माता के गर्भकाल में उसकी दर्पण लेकर सेवा करनेवाली एक दिक्कुमारी। हपु० ८ १०८

प्रणिधि—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

(२) भगवान के जन्माभिषेक के समय सेवा करने वाली एक देवी। हपु० ३८ ३३

प्रणीताग्नि—संस्कारित अग्नि। मपु० ३४ २१५

प्रणेता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११५

प्रतिक्रमण—(१) अंगबाह्यश्रुत के चौदह भेदों में चौथा भेद। द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि में हुए पाप की शुद्धि के लिए किये जानेवाले प्रतिक्रमण का इसमें कथन किया गया है। हपु० १० १२५, १३१

(२) मुनि के षडावश्यकों में एक आवश्यक कर्त्तव्य। इसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के विषय में किये हुए प्रमाद का मन, वचन और काय की शुद्धि से निराकरण किया जाता है। हपु० ३४ १४५

(३) प्रायश्चित्त। यह आभ्यन्तर तप के नौ भेदों में दूसरा भेद है। इसमें लगे हुए दोषों का प्रायश्चित्त किया जाता है। मपु० २०. १९१, हपु० ६४ ३२

प्रतिग्रहण—दाता के नौ पुण्यों (नवधा-भक्तियों) में प्रथम पुण्य (भक्ति)। इसमें साधु को आहार के लिए पड़गाहने की क्रिया होती है। अपरनाम प्रतिग्रह। मपु० २० ८६-८७, हपु० ९ १९९-२००

प्रतिचन्द्र—महोदधि का पुत्र। इसने पिता से राज्य प्राप्त किया था। इसके किष्किन्ध और अन्ध्रकरूढ नामक दो पुत्र थे। किष्किन्ध को राज्य देकर इसने निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली थी। अन्त में समाधिमरण पूर्वक शरीर त्याग कर इसने मोक्ष पाया। पपु० ६ ३४९, ३५२-३५३

प्रतिच्छन्द—प्रतिनिधि। मपु० १२ ७१

प्रतिनन्दी—नन्दस्थली नगरी का राजा। इसने वन में मुनि रामचन्द्र को आहार दिया था। पपु० १२० २, १२१.१-२७

प्रतिनारायण—(१) नारायणों के शत्रु। ये अधोगामी होते हैं और निदान पूर्वक मरण करते हैं। ये नौ हैं—अश्वग्रीव, तारक, मेरुक, निशुम्भ, मधुकैटभ, बलि, प्रहरण, रावण और जरासन्ध। महापुराण के अनुसार इनके नाम है—अश्वग्रीव, तारक, मधु, मधुसूदन, मधुक्रीड, निशुम्भ, बलीन्द्र, रावण और जरासन्ध। मपु० ५७ ८७-९०, ५८ १०२-११५, ५९ ९९, ६० ७१, ७८, ६१ ८१, ६५ १८०-१८४, ६६ १०९-११०, ६८ ६२५-६६०, ७१ ५४, ६९, ७६-७७, हपु० ६० २९१-२९३

(२) भविष्यत् कालीन प्रतिनारायण ये हैं—श्रीकण्ठ, हरिकण्ठ, नीलकण्ठ, अश्वकण्ठ, सुकण्ठ, शिखिकण्ठ, अश्वग्रीव, हयग्रीव और मयूरग्रीव। हपु० ६० ५६८-५७०

प्रतिपत्तिसमास—श्रुतज्ञान से बीस भेदों में एक भेद। हपु० १० १२

प्रतिबल—वानर द्वीप में स्थित किष्किन्धपुर के राजा कपिकेतु और उसकी रानी श्रीप्रभा का पुत्र। यह गगनानन्द का पिता था। पपु० ६ १९८-२००, २०५

प्रतिबोधिनी—एक विद्या। यह निद्रा-भंग करती है। सुग्रीव ने योद्धाओं को नींद से शिथिल होते देखकर इसी विद्या से उनकी निद्रा दूर की थी। पपु० ६० ६०-६२

प्रतिमा—(१) मूर्ति। इनका निर्माण चक्रवर्ती भरत के समय में ही आरम्भ हो गया था। स्वयं भरत ने कैलाश पर्वत पर सर्वरत्नमय दिव्य मन्दिर बनवाकर उसमें पाँच सौ धनुष ऊँची जिनेश की प्रतिमा स्थापित करायी थी। पपु० ५२ १-५, ९८ ६३-६५

(२) श्रावक की ग्यारह श्रेणियाँ। ये हैं—दर्शन प्रतिमा, व्रत प्रतिमा, सामायिक प्रतिमा, प्रोषधोपवास प्रतिमा, सचित्तत्याग प्रतिमा, रात्रिभुक्तित्याग प्रतिमा, ब्रह्मचर्य प्रतिमा, आरम्भत्याग प्रतिमा, परिग्रहत्याग प्रतिमा, अनुमतित्याग प्रतिमा और उद्दिष्ट त्याग प्रतिमा। वीवच० १८.३६-७२

प्रतिमायोग—कायोत्सर्ग मुद्रा। इसमें प्रतिमा के समान नग्न खड़े होकर ध्यान किया जाता है। यह अघातिया कर्मों की घातिनी साधनावस्था है। ध्यान की इस मुद्रा का आरम्भ वृषभदेव ने किया था। मपु० १८ ९०, ३९ ५२, पपु० ३ १०७-१०८, १२७, हपु० ९ १३५, वीवच० १९ २२१

प्रतिरूप—भूत जाति के व्यन्तर देवों का एक भेद। वीवच० १४.५२-६३ दे० किन्नर

वह इसे उठा ले गया। इसके बाद उसने इसे खदिर अटवी में तक्षक शिला के नीचे दबा दिया और वहाँ से चला गया। कुछ समय बाद मेघकूट नगर का राजा कालसंवर भी उधर से अपनी रानी कनकमाला के साथ आ रहा था। तक्षकशिला के पास उसका विमान रुक गया। वह नीचे आया और उसने इसे शिला से निकालकर अपनी कांचनमाला को दे दिया। कालसंवर इसे लेकर अपने नगर आया और उसने विधिपूर्वक इसका देवदत्त नाम रखा तथा उसे युवराज बना दिया। इसने युवा होने पर अपने पिता की सलाह लेकर शत्रु अग्निराज पर आक्रमण किया और उसे जीतकर ले आया तथा उसे कालसंवर को सौंप दिया। इससे कालसंवर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने इसके पराक्रम की प्रशंसा की तथा श्रेष्ठ वस्तुएँ देकर इसका सम्मान किया। इसके यौवन और पराक्रम से कांचनमाला प्रभावित हुई। वह इस पर काममुग्ध हो गयी किन्तु यह उससे किसी भी प्रकार से आकृष्ट नहीं हुआ। निराश होकर कांचनमाला ने अपनी निर्लज्जता के निवारण के लिए अपने पति को इसे कुचेष्टावान् और अकुलीन बताया। रानी पर विश्वास कर राजा कालसंवर ने अपने पाँच सौ पुत्रों को इसे एकान्त में ले जाकर मार डालने की आज्ञा दी। राजकुमार इसे वन में ले गये। वहाँ राजकुमारों ने इसे एक अग्निकुण्ड दिखाकर कहा कि जो इस अग्निकुण्ड में प्रवेश करेगा वह निर्भय माना जायगा। इस बात को सुनकर यह अग्निकुण्ड में कूद गया। कुण्ड की देवी ने इसे जलने से बचाकर इसकी पूजा की और उसने इसे बहुमूल्य वस्त्र और आभूषण भेंट में दिये। राजकुमार इसे मेषाकार दो पर्वतों के बीच ले गये किन्तु वहाँ भी एक देवी ने इसकी सहायता की और उसने इसे दो दिव्य कुण्डल दिये। राजकुमारों की प्रेरणा से यह वाराह गुहा में गया। इस गुहा की देवी ने भी इसके पराक्रम से प्रसन्न होकर इसे विजयघोष शंख और महाजाल ये दो वस्तुएँ दीं। इसी तरह इसने कालगुहा में प्रवेश किया और वहाँ के राक्षस महाकाल को जीता। इसे उससे वृषभरथ तथा रत्नमय कवच प्राप्त हुए। इसने एक कीलित विद्याधर को बन्धन मुक्त कर उससे सुरेन्द्रजाल और नरेन्द्रजाल तथा प्रस्तर ये तीन वस्तुएँ प्राप्त कीं। इसके पश्चात् वह सहस्रवक्त्र नागकुमार के भवन में गया। यहाँ भी इसका सम्मान हुआ। नागकुमार ने इसे मकर चिह्नित ध्वजा, चित्रवर्ण धनुष, नन्दक खड्ग, और कामरूपिणी अंगूठी दी। इसके बाद सुवर्णार्जुन वृक्ष के नीचे पाँच फणवाले नागराज से तपन, तापन, मोदन, विलापन और मारण ये पाँच बाण प्राप्त किये। यहाँ से यह क्षीरवन गया। यहाँ मर्कटदेव ने इसे मुकुट, औषधिमाला, छत्र और दो चमर दिये। इसके पश्चात् यह कदम्बमुखी बावडी गया। यहाँ इसे नागपाश प्राप्त हुआ। राजकुमारों के पातालमुखी बावडी में कूदने के लिए कहने पर यह उनका मन्तव्य समझ गया। अतः बावडी में यह स्वयं न जाकर इसने प्रज्ञप्ति विद्या को अपना एक रूप और बनाकर उसे वापी में भेज दिया। जब राजकुमारों ने वापी को शिला से ढँकने का प्रयत्न किया तो इसने ज्योतिप्रभ को छोडकर शेष सभी राजकुमारों को नागपाश से बाँधकर इसी बावडी में औंधे मुँह लटका दिया और वापी को शिला से ढक दिया। राजकुमार ज्योतिप्रभ को भेजकर इस घटना की सूचना कालसंवर को भेज दी। क्रुद्ध होकर कालसंवर वहाँ ससैन्य आया। इसने अपनी विद्याओं तथा दिव्यास्त्रों से सेना सहित कालसंवर को हरा दिया। इसके पश्चात् इसने वन की समस्त घटनाओं से कालसंवर को अवगत कराया तथा सभी राजकुमारों को बन्धन रहित किया। इसके पश्चात् कालसंवर की अनुमति से यह नारद के पास गया और उनके साथ नारद से अपने पूर्वभवों की घटनाएँ सुनता हुआ हस्तिनापुर आया। यहाँ से द्वारिका गया। अपने रूप बदलकर विद्या बल से कई आश्चर्यकारी कार्य करके इसने कृष्ण, रुक्मिणी, सत्यभामा और जाम्बवती आदि का मनोरंजन किया। इसके पश्चात् अपने असली रूप में आकर इसने सबको प्रसन्न कर दिया। सत्यभामा के पुत्र और इसके भाई भानुकुमार के लिए आयी हुई कन्याओं के साथ इसके विवाह हुए। द्वारिका में बहुत समय तक रहते हुए इसने राज-परिवार तथा समाज का मन जीत लिया। एक दिन बलराम के साथ यह तीर्थंकर नेमिनाथ के पास गया। उन्होंने उनसे कृष्ण के राज्य की अवधि जानने का प्रश्न किया। नेमिनाथ ने उन्हें बारह वर्ष में द्वारिका दहन, कृष्ण का मरण आदि सभी बातें बतायी। यह सुनकर इसने और इसके साथ रुक्मिणी आदि देवियों ने कृष्ण से पूछकर संयम धारण किया। इसने गिरिनार पर्वत पर प्रतिमायोग में स्थिर होकर कर्म-निर्जरा करते हुए, नौ केवल-लब्धियाँ प्राप्त की और संसार से मुक्त हुआ। जाम्बवती का पुत्र शम्भव और इसका पुत्र अनिरुद्ध भी इसका अनुगामी हुआ। मपु० ७२ ३५-१९१, हपु० ४३.३५-९७, ६६ १६-९७ सातवें पूर्वभव में यह शृगाल, छठे पूर्वभव में अग्निभूत, पाँचवें पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग का देव, चौथे पूर्वभव में अयोध्या के समुद्रदत्त का पुत्र पूर्णभद्र, तीसरे पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग का देव, दूसरे पूर्वभव में मधु और प्रथम पूर्वभव में आरणेन्द्र था। पपु० १०९ २६-२९, हपु० ४३ १००, ११५, १४६, १४८-१४९, १५८-१५९, २१५

प्रपा—पथिकों को जल पिलाने का स्थान। प्राचीन काल में जन-सेवा का यह एक प्रमुख साधन था। मपु० ४ ७१

प्रपौण्डनगर—अनंगलवण और मदनांकुश युगल भाइयों की क्रीडास्थली। पपु० १०० ८३

प्रबुद्धात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०

प्रबोध—समवसरण के अनेक स्तूपों में एक स्तूप। इसे देखकर लोगों को तत्त्वज्ञान हो जाता है। हपु० ५७ १०६

प्रभंकर—सौधर्म और ऐशान दोनों स्वर्गों के ३१ पटलों में २७वाँ पटल। हपु० ६ ४७, दे० सौधर्म

प्रभंकरा—विदेह के वत्सकावती देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१४, हपु० ५ २५९

प्रभंकरी—अयोध्या के राजा वज्रबाहु की रानी, आनन्द नामक पुत्र की जननी। मपु० ४६ ४२-४३

प्रभंजन—(१) मानुषोत्तर पर्वत की पश्चिमोत्तर दिशा में नीलाचल से स्पृष्ट भाग में स्थित इस नाम का एक कूट। हपु० ५ ६१०

(२) मानुषोत्तर पर्वत के इस नाम के कूट का निवासी और वायुकुमारो का इन्द्र। हपु० ५ ६१०

(३) राजा विनमि विद्याधर का पुत्र। हपु० २२ १०३-१०४

(४) भरतक्षेत्र मे स्थित हरिवर्ष देश के भोगपुर नगर का राजा। इसकी मृकण्डु नामा रानी और उससे उत्पन्न सिंहकेतु नामक पुत्र था। मपु० ७० ७५, पापु० ६ ११८-१२०

(५) वैशाली नगर के राजा चेटक और उसकी रानी सुप्रभा के दस पुत्रो में नवाँ पुत्र। मपु० ७५ ३-५

(६) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के विद्युत्कान्तपुर का राजा (विद्याधर)। यह अजना का पति और अमिततेज का जनक था। अपर नाम अणुमान्। मपु० ६८ २७५-२७६ दे० अमिततेज

(७) ऐशान स्वर्ग के रुचित विमान में उत्पन्न एक देव। मपु० ८ २१४

(८) विदेह का एक राजा। दूसरी रानी चित्रमालिनी और प्रशान्तमदन इसका पुत्र था। मपु० १० १५२

(९) भूमिगोचरी एक राजा। यह अकम्पन की पुत्री सुलोचना के स्वयवर में आया था। पापु० ३ ३६-३७

प्रभव—(१) सुधर्माचार्य से प्राप्त श्रुत के अवधारक आचार्य। पपु० १ ४१-४२

(२) ऐरावत क्षेत्र के शतद्वारपुर का निवासी सुमित्र का मित्र। सुमित्र ने इसे अपने राज्य का एक भाग देकर अपने समान राजा बना दिया था। यह सुमित्र की ही पत्नी वनमाला पर आसक्त हो गया था तथा उसकी पत्नी को इसने अपनी पत्नी बनाना चाहा था। मित्रभाव से सुमित्र ने वनमाला उसे अर्पित कर दी। जब वनमाला से उसका अपना परिचय पाया तो मित्र के साथ इसे अपना अनुचित व्यवहार समझकर यह ग्लानि से भर गया और आत्मघात के लिए तैयार हो गया था परन्तु इसके मित्र ने इसे ऐसा करने से रोक लिया। मरकर यह अनेक दुर्गतियाँ पाते हुए विश्वावसु की ज्योतिष्मती भार्या का शिखी नाम का पुत्र हुआ। आगे चलकर यही चमरेन्द्र हुआ और इसने सुमित्र के जीव मधु को शूलरत्न भेंट किया। पपु० १२ २२-२५, ३१, ३५-४९, ५५

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

प्रभवा—तीसरे नारायण स्वयभू की पटरानी। पपु० २० २२७

प्रभविष्णु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

प्रभा—(१) दूसरे स्वर्ग का एक विमान। मपु० ८ २१४

(२) सौधर्म स्वर्ग का एक पटल। हपु० ६ ४७

प्रभाकर—(१) भरत के साथ दीक्षित तथा मुक्तिमार्ग का पाथिक एक राजा। पपु० ८८ १-६

(२) ऐशान स्वर्ग का एक विमान। मपु० ९ १९२

(३) प्रभाकरी नगरी के राजा प्रीतिवर्धन के सेनापति का जीव। यह प्रभा नाम के विमान में प्रभाकर देव हुआ। मपु० ८ २१३-२१४

प्रभाकरपुरी—पुष्करवर द्वीप मे विदेह की एक नगरी। यहाँ विनयन्धर मुनि का निर्वाण हुआ था। मपु० ७ ३४

प्रभाकरी—(१) पुष्करार्ध द्वीप के पश्चिमी भाग में स्थित वत्सकावती देश की नगरी। मपु० ७.३३-३४, पापु० ४.२६४, ६२ ७५

(२) मगध देश के सुप्रतिष्ठ नगर के निवासी श्रेष्ठी सागरदत्त की भार्या। यह नागदत्त और कुबेरदत्त की जननी थी। मपु० ७६. २१६-२१८

(३) वत्स देश की कौशाम्बी नगरी के राजा विजय की रानी। यह चक्रवर्ती जयसेन की जननी थी। मपु० ६९.७८-८२

(४) कौशिकपुरी के राजा वर्ण की रानी। पापु० १३ ५-६

प्रभाचक्र—सीता का भाई (भामण्डल)। पपु० १ ७८

प्रभाचन्द्र—चन्द्रोदय के रचयिता एक कवि। आचार्य जिनसेन ने आचार्य यशोभद्र के पश्चात् तथा आचार्य शिवकोटि के पूर्व इनका स्मरण किया है। ये कुमारसेन के शिष्य थे। मपु० १ ४६-४९

प्रभापुर—एक नगर। राजा श्रीनन्दन और रानी धरणी से उत्पन्न सप्तर्षियो की जन्मभूमि। पपु० ९२ १-७

प्रभामण्डल—भगवान् का एक प्रातिहार्य। हपु० ३ ३४

प्रभावती—(१) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में स्थित विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गन्धर्वपुर नगर के राजा विद्याधर वासव की रानी। यह महीधर की जननी थी। इसने पद्मावती आर्यिका से रत्नावली तप धारण किया था तथा मरकर यह अच्युतेन्द्र स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुई थी। मपु० ७ ३०, २९ ३२

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी मे स्थित भोगपुर नगर के राजा वायुरथ को रानी, स्वयप्रभा की पुत्री। मपु० ४६.१४७-१४८, पापु० ३ २१३

(३) इस नाम की विद्या। इसे अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने अन्य कई विद्याओ के साथ सिद्ध किया था। मपु० ६२ ३९५

(४) वैशाली गणराज्य के शासक चेटक और उसकी रानी सुभद्रा की चौथी पुत्री। मपु० ७५ ३-६, ११-१२

(५) आठवें नारायण लक्ष्मण की पटरानी। पपु० २० २२८

(६) रावण की भार्या। पपु० ८८ ९-१५

(७) राम की महादेवी। पपु० ९४.२४-२५

(८) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहस्थ वत्सकावती देश की नगरी। पापु० ४ २४६-२४७

(९) तीर्थंकर मुनिसुव्रत की रानी। इसी रानी से उत्पन्न सुव्रत नामक पुत्र को राज्य देकर मुनिसुव्रत ने सयम धारण किया था। हपु० १६ ५५

(१०) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गान्धार देश में स्थित गन्धसमृद्धनगर के राजा गान्धार और उनकी रानी पृथिवी की पुत्री। यह वसुदेव की रानी थी। हपु० १ ८६, ३० ६-७, ३२ २३

(११) राजा समुद्रविजय के छोटे भाई धारण की रानी। हपु० १९ २-५

(१२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के किन्नरोद्गीतनगर के राजा अर्चिमाली की रानी। यह ज्वलनवेग और अशनिवेग पुत्रो की जननी थी। हपु० १९ ८०-८१

(१३) कौशिक नगर के राजा वर्ण की भार्या। हपु० ४५ ६१-६२

(१४) जयकुमार के पूर्वभव की भार्या। हपु० १२ ११-१४

प्रभावना—सम्यग्दर्शन के आठ अगो में एक अग। इसके द्वारा जिनेन्द्र के द्वारा प्रदर्शित मोक्षमार्ग के माहात्म्य को प्रकाशित और प्रसारित किया जाता है। मपु० ६३ ३२०

प्रभावगा—ब्रह्म स्वर्ग के इन्द्र विद्युन्माली की चौथी देवी। मपु० ७६ ३२-३३

प्रभास—लवणसमुद्रवासी अतिशय कान्तिमान् व्यन्तराधिप। दिग्विजय के समय भरतेश ने इसे पराजित किया था। मपु० ३० १२३

(२) तीर्थंकर महावीर के ग्यारहवें गणधर। मपु० ७४ ३७४, हपु० ३ ४३, वीवच० १९ २०६-२०७

(३) वैशाली नगर के राजा चेटक तथा उसकी रानी सुप्रभा के दस पुत्रों में दसवाँ पुत्र। मपु० ७५ ३-५

(४) सिन्धु नदी के गोपुर (द्वार) का निवासी देव। इसे लक्ष्मण ने पराजित किया था। मपु० ६८ ६५३

(५) धातकीखण्ड द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६३८

प्रभासकुन्द—कुशध्वज ब्राह्मण और उसकी भार्या सावित्री का पुत्र। यह शम्भु का जीव था। (दे० शम्भु) इसने विचित्रसेन मुनि के पास दीक्षा लेकर तपश्चरण किया था। मरण काल में कनकप्रभ विद्याधर की विभूति देखकर इसने वैसा ही बनने का निदान किया था और निदान वश यह मरकर सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुआ था। वहाँ से च्युत होकर यह लका नगरी में रत्नश्रवा और उनकी रानी केकसी के रावण नाम का पुत्र हुआ। पपु० १०६ १५५-१७१

प्रभासतीर्थ—समुद्रतटवर्ती एक तीर्थ। यहाँ कृष्ण ने राष्ट्रवर्धन नगर के राजकुमार नमुचि को मारा था तथा उसकी बहिन सुसीमा को हरकर द्वारिका लाये थे। हपु० ४४ २६-३०

प्रभासा—समवसरण के आम्र वन की छ वापियों में एक वापी। हपु० ५७ ३५

प्रभास्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८१

प्रभु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १००

प्रभुशक्ति—तीन राजशक्तियो में एक शक्ति। हपु० ८ २०१

प्रभूततेज—भरतवश में हुए राजा शशी का पुत्र। हपु० १३ ९

प्रभूतविभव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८

प्रभूतात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८

प्रभूष्णु—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०, २५ १०९

प्रभोदय—सातवें भावी तीर्थंकर। हपु० ६० ५५९

प्रमत्तसयत—छठा गुणस्थान। इससे आगे चौदहवें गुणस्थान तक मनुष्यो मे बाह्य रूप की अपेक्षा कोई भेद नही होता, सभी निर्ग्रन्थ मुद्रा के धारक होते है परन्तु आत्मिक विशुद्धि की अपेक्षा उनमें भेद होता है। जैसे-जैसे ऊपर बढते जाते हैं वैसे-वैसे उनमें विशुद्धि बढती जाती है। ऐसे जीव शान्त और पच-पापो से रहित होते हैं। हपु० ३ ८१-८४, ८९-९०

प्रमथ—भावी प्रथम रुद्र। हपु० ६० ५७१

प्रमदवन—(१) राजप्रासाद का एक महत्त्वपूर्ण अग। आदिपुराण में भी प्रमदवन का वर्णन आया है। मपु० ४७ ९

(२) लका में स्थित विस्तीर्ण उद्यान। यह तडित्केश की क्रीडा-स्थली था। रावण ने सीता को यहाँ रखा था। इसके सात विभाग थे—प्रकीर्णक, जनानन्द, सुखसेव्य, समुच्चय, चारणप्रिय, निबोध और प्रमद। यहाँ स्नान करने के योग्य वापियाँ निर्मित की गयी थी और सभागृह बनाये गये थे। पपु० ५ २९७-३००, ६ २२७, ४६ १४१-१४५, १५२-१५३

(३) कौशिकपुरी का एक उद्यान। यहाँ के राजा वण की पुत्री कमला की पाण्डवो से भेंट इसी उद्यान मे हुई थी तथा उसके युधिष्ठिर की ओर आकृष्ट होने पर यह उसी से विवाही गयी थी। पापु० १३ ७-३४

प्रमदा—समवसरण की नाट्यशाला। हपु० ५७ ९३

प्रमाण—(१) द्रव्यानुयोग का एक प्रमुख विषय। द्रव्यो के निर्णय करने का यही एक मुख्य साधन है। यह पदार्थ के सकल देश का (विरोधी, अविरोधी धर्मों का) एक साथ बोध करनेवाला ज्ञान होता है। मपु० २ १०१, ६२ २८, पपु० १०५ १४३

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६६

प्रमाणपद—अक्षरसमास के बाद होनेवाला पदज्ञान। यह आठ अक्षरो का होता है। हपु० १० २२

प्रमाणागुल—उत्सेधागुल से पाँच सौ गुना बडा अगुल। हपु० ७ ४२

प्रमाथी—धृतराष्ट्र तथा उनकी रानी गान्धारी का नवासीवाँ पुत्र। पापु० ८ २०४

प्रमाद—(१) छठे गुणस्थान में व्रतो में असावधानता को उत्पन्न करनेवाली मन-वचन और काय की प्रवृत्ति। इससे कर्मबन्ध होता है। इसके पन्द्रह भेद होते है। ये भेद हैं—चार कषाय, चार विकथा, पाँच इन्द्रिय-विषय, निद्रा और स्नेह। ये भेद सज्वलन कषाय का उदय होने से होते है तथा सामायिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धि इन तीन चारित्रो से युक्त जीव के प्रायश्चित्त के कारण बनते हैं। मपु० ४७ ३०९, ६२ ३०५-३०६, हपु० ५८ १९२

(२) मद्यपायी के सदृश शिथिल आचरण। पापु० २३ ३२

प्रमादाचरित—अनर्थदण्ड का एक भेद। अनर्थ-छेदन, भेदन आदि करना प्रमादाचरण है। हपु० ५८ १४६

प्रमामय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०७

प्रमृशा—भरतक्षेत्र की एक नदी। इसे भरतेश की सेना ने तमसा नदी को पार करने के बाद पार किया था। मपु० २९ ५४

प्रमोद—(१) सवेग और वैराग्य के लिए साधनभूत तथा अहिंसा के लिए आवश्यक मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ इन चार भावनाओं में

द्वितीय भावना। इस भावना से गुणी जनों के गुणों को देखकर प्रसन्नता होती है। मपु० २० ६५, ३९ १४५ हपु० ५८ १२५

(२) लंका का राक्षसवंशी एक नृप। यह माया और पराक्रम से सहित बल और महाकान्ति का धारक था। पपु० ५.३९५-४००

प्रमोदय—भावी सातवें तीर्थंकर। हपु० ६० ५५९

प्रयोगक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में असयमवर्धिनी एक क्रिया। इसमें गमनागमन आदि में प्रवृत्ति बढ़ती है। हपु० ५८ ६३-६५

प्रवक्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

प्रवचनभक्ति—तीर्थङ्कर नामकर्म के बन्ध में कारण भूत सोलह भावनाओं में तेरहवी भावना। इस भावना से मन, वचन और काय की शुद्धता पूर्वक आगम में श्रद्धा बढ़ती है। मपु० ६३ ३११, ३२७, हपु० ३४ १३१, १४१

प्रवचनमाता—पाँच समिति और तीन गुप्तियाँ। ये आठ प्रवचन माताएँ कहलाती हैं। वीवच० १३ ५७

प्रवर—(१) एक राजा। इन्द्र-दशानन संग्राम में इसने इन्द्र की ओर से युद्ध किया था। पपु० ९ २८, १२ २१७

(२) गन्धवती नगरी का एक सम्पत्तिशाली वैश्य। यह रुचिरा का पिता था। पपु० ४१ १२७

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ २९-४०

प्रवरदत्त—द्वारिकापुरी में तीर्थङ्कर नेमिनाथ का प्रथम आहारदाता। हपु० ५५ १२९

प्रवरा—रावण की एक रानी। पपु० ७७ ९-१२

प्रवाल—(१) मानुषोत्तर पर्वत में स्थित एक कूट। यह सुप्रबुद्ध देव की निवासभूमि था। हपु० ५ ६०६

(२) रत्नप्रभा नरकभूमि के तीन भागों में खरभाग के सोलह पटलों में सातवाँ पटल। हपु० ४ ४७, ५२-५४

प्रवीचार—मैथुन। ज्योतिषी, भवनवासी, व्यन्तर और सौधर्म तथा ऐशान स्वर्ग के देव काय से, सानत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग के देव स्पर्श मात्र से, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव और कापिष्ट स्वर्ग के देव रूपमात्र से, शुक्र, महाशुक्र, शतार और सहस्रार स्वर्ग के देव शब्द से तथा आनत, प्राणत, आरण और अच्युत स्वर्ग के देव मन से प्रवीचार करते हैं। हपु० ३ १६२-१६६

प्रवेणी—भरतक्षेत्र में दक्षिण की एक नदी। इसे भरतेश की सेना ने पार किया था। मपु० २९ ८६

प्रवेशन—तालगत गन्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५०

प्रव्रज्या—गृहस्थ का दीक्षा-ग्रहण। इसमें दीक्षार्थी निर्ममत्वभाव धारण करता है। विशुद्ध कुल, गोत्र, उत्तम चारित्र, सुन्दर मुखाकृति के लोग ही इसके योग्य होते हैं। इष्ट जनों की अनुज्ञापूर्वक ही सिद्धों को नमन करके इसे ग्रहण किया जाता है। इसके लिए तरुण अवस्था सर्वाधिक उचित होती है। मपु० ३८ १५१, ३९ १५८-१६०, ४१ ७५

प्रशम—सम्यग्दर्शन की अभिव्यक्ति में आवश्यक रूप से हेतुभूत आत्मा का प्रथम गुण। इससे कषायों का शमन हो जाता है। मपु० ४ १२३ १५.२१४

प्रशमारक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

प्रशमात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३२

प्रशस्तध्यान—ध्यान के प्रशस्त और अप्रशस्त दो भेदों में प्रथम भेद। शुभ परिणामों से किया हुआ ध्यान प्रशस्त ध्यान है। इसके भी दो भेद होते हैं-धर्मध्यान और शुक्लध्यान। मपु० २१ २७-२९

प्रशस्तवक—एक चारणऋद्धिधारी मुनि। जीवन्धरस्वामी ने इनसे अपने पूर्वभव ज्ञात किये थे। मपु० ७५ ६७८

प्रशस्ति—शिलाखण्डों पर उत्कीर्ण परिचयात्मक विवरण-लेख। सर्व-प्रथम चक्रवर्ती भरत ने वृषभाचल पर्वत पर काकिणी रत्न द्वारा अपनी विजय का विवरण उत्कीर्ण कराया था। मपु० ३२ १४६-१५५

प्रशान्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

प्रशान्तमदन—राजा प्रभंजन और उसकी रानी चित्रमालिनी का पुत्र। पूर्वभव में यह स्वर्ग में मनोरथ नाम का देव था। मपु० १० १५२

प्रशान्तरसशैलूष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०८

प्रशान्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५,१३२

प्रशान्तारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०७

प्रशान्ति—तीर्थङ्कर शान्तिनाथ के पश्चात् दो राजाओं के बाद हुआ कुरुवंशी राजा। हपु० ४५ १९

प्रशान्तिक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में इक्कीसवी तथा दीक्षान्वय की अड़तालीस क्रियाओं में सोलहवी क्रिया। इसमें विषयों से अना-सक्त होकर अपने पुत्र को गृहस्थभार देने के पश्चात् नित्य स्वाध्याय तथा विविध उपवास आदि करते हुए शान्ति का मार्ग अपनाया जाता है। मपु० ३८ ५५-६५, १४८-१४९, ३९ ७५

प्रशास्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०१

प्रश्नकीर्ति—आगामी नवम तीर्थङ्कर। हपु० ६० ५५९

प्रश्नव्याकरण—द्वादशांगश्रुत का दसवाँ अंग। इसमें जीवों के सुख-दुःख आदि से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर का निरूपण है। इसमें आक्षेपिणी आदि कथाओं का भी वर्णन किया गया है। इसके पदों की कुल संख्या तेरानवें लाख सोलह हजार है। मपु० ३४ १४४, हपु० १० ४३

प्रश्नोत्तरविधि—एक शिक्षा-विधि। यह स्वाध्याय का एक भेद है। इसे पृच्छना कहते हैं। मपु० २१ ९६

प्रष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

प्रष्ठक—सौधर्म स्वर्ग का एक पटल। हपु० ६ ४०

प्रसन्नकीर्ति—वानरवंशी राजा महेन्द्र का पुत्र। यह हनुमान् का मामा था। गर्भकाल में महेन्द्र ने हनुमान् की माता अंजना को अपने यहाँ आश्रय नहीं दिया था। हनुमान् का जन्म वन की एक गुहा में हुआ

था। जब हनुमान् सीता की खोज में महेन्द्र के नगर से होता हुआ आगे बढ़ रहा था तो उसके मन में महेन्द्र को दण्ड देने का भाव हुआ। उसने युद्धध्वनियाँ की जिससे महेन्द्र उससे ससैन्य लड़ने आया। प्रसन्नकीर्ति ने भी इस युद्ध में भाग लिया। इस युद्ध में प्रसन्नकीर्ति हारा और हनुमान् ने उसे अपने विद्याबल से बाँध लिया। यह देखकर महेन्द्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने हनुमान् की प्रशंसा की। हनुमान् ने प्रसन्नकीर्ति को छोड़ दिया। इसके पश्चात् वह रावण का पक्ष छोड़कर राम का सहायक हो गया। पपु० १२ २०५-२१०, ५० १७-४६, ५४ ३८

प्रसन्नात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३२

प्रसेन—गर्भस्थ शिशु का आवरण-जरायुपटल (नाल)। कुलकर प्रसेनजित् ने इसे दूर करने की विधि बतायी थी। मपु० ३ १५०

प्रसेनिक—चन्दना के पूर्वभव में हुआ मगधदेश की वत्सा नामक नगरी का एक राजा। मपु० ७५ ७१

प्रसेनजित्—(१) तेरहवें मनु (कुलकर)। इनकी पर्व प्रमित आयु थी और शरीर की ऊँचाई पाँच सौ धनुष की थी। जरायुपटल के दूर करने की विधि इन्होंने लोगों को बतायी थी। ये अपने पिता मरुदेव के अकेले पुत्र थे। मरुदेव के पहले युगल सन्तान हुई थी। उस समय लोगों को पसीना आने लगा था। इनका विवाह विवाह-विधि से सपन्न हुआ। अन्तिम कुलकर नाभिराय इन्ही के पुत्र थे। मपु० ३ १४६-१५१, पपु० ३ ८७, हपु० ७ १६५-१७०, पापु० २ १०३-१०६

(२) कृष्ण का सोलहवाँ पुत्र। हपु० ४८ ६९-७२

प्रस्तर—(१) हाथियों से जुते रथ पर आरूढ राम के पक्ष का एक योद्धा। पपु० ५८ ८

(२) किसी विद्याधर द्वारा कीलित विद्याधर का उपकार करने से प्रद्युम्न को प्राप्त हुई एक विद्या। इस विद्या मे शिला उत्पन्न करके उससे किसी को ढका या दबाया जा सकता है। मपु० ७२ ११४-११५, १३५-१३६

प्रस्तार—छन्द शास्त्र का एक प्रकरण। मपु० १६ ११४

प्रहरण—सातवाँ प्रतिनारायण। हपु० ५० २९१

प्रहरा—भरतक्षेत्र की पश्चिम समुद्र की ओर बहनेवाली एक गहरी नदी। इसे भरतेश की सेना ने पार किया था। मपु० ३० ५४, ५८

प्रहसित—(१) हनुमान् के पिता पवनजय का मित्र। पपु० १५ ११९, १६ १२७

(२) इक्कीसवें तीर्थङ्कर नेमिनाथ के तीर्थ मे मातग वश में उत्पन्न असितपर्वत नगर का विद्याधर राजा। हिरण्यवती इसकी रानी थी। हपु० २२ १११-११२

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहस्थ वत्सकावती देश के सुसीमा नगर का एक विद्वान्। यह इसी नगर के राजा अजितजय के मत्री अमित-मति और उसकी स्त्री सत्यभामा का पुत्र था। विकसित इसका मित्र था। इन दोनो ने मुनिराज मतिसागर से धर्मोपदेश सुना और सयम धारण करके तप किया। अन्त में शरीर छोड़कर दोनों महाशुक्र स्वर्ग में इन्द्र और प्रतीन्द्र हुए। मपु० ७ ६०-७९

प्रहस्त—रावण का आज्ञाकारी सेनापति। लका में हुए राम-रावण युद्ध में यह राम के सेनानायक के द्वारा मारा गया था। पपु० ८ ४१०-४११, १२ ८८, ५८ ४५

प्रहारसक्रामिणी—धरणेन्द्र द्वारा नमि और विनमि को प्रदत्त लोकहित-कारिणी एक विद्या। हपु० २२ ७०

प्रहेलिका—पहेली। मनोरजन का एक साधन। प्रहेलिका के द्वारा देवियाँ जिन-माताओ का गर्भकाल में मनोविनोद करती हैं। मपु० १२ २२०-२४८

प्रह्लाद—(१) उज्जयिनी नगरी के राजा श्रीधर्मा के बलि आदि चार मन्त्रियो में चतुर्थ मन्त्री। यह तन्त्र मार्ग का ज्ञाता था। श्रुतसागर मुनि से विवाद में पराजित होने के कारण इसी मन्त्री के साथी बलि नामक मन्त्री ने अकम्पनाचार्य आदि मुनियो पर उपसर्ग किया था। हपु० २० ४-६२

(२) आदित्यपुर नगर का राजा। यह उसकी रानी केतुमती के पुत्र पवनगति का पिता था। इसके पुत्र का अपर नाम पवनंजय था। वरुण के साथ युद्ध होने पर रावण ने इसे अपनी सहायतार्थ आमन्त्रित किया था। तब इसने रावण की सहायतार्थ अपने पुत्र को भेजा था। इसकी पत्नी केतुमती ने दोष लगाकर अपनी बहू अजना को गर्भावस्था में घर से निकाल दिया था। पपु० १५ ६-८, १६ ५७-७४, १७ ३-२१

(३) सातवाँ प्रतिनारायण। पपु० २० २४४-२४५

प्रह्लावना—विनीता नगरी के राजा सुप्रभ की पटरानी। यह सूर्योदय तथा चन्द्रोदय की जननी थी। पपु० ८५ ४५

प्राशु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१४

प्राकाम्य—आठ ऋद्धियों में एक ऋद्धि। यह कामनाओ की पूर्ति करती है। मपु० ३८ १९३

प्राकार—समवसरण की शोभा के लिए उसके चारों ओर निर्मित ऊँची दीवार। इसमें चारो दिशाओ मे गोपुरो की रचना की जाती है। प्राचीनकाल में नगरो की रक्षा के लिए भी प्राकार बनाये जाते थे। मपु० १६ १६९, १९ ५७-६२, पपु० २ ४९, १३५, हपु० २ ६५

प्राकृत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

प्राग्भार-भू—सिद्ध-शिला (अष्टम भूमि)। यह ४५ लाख योजन प्रमाण है। हपु० ६ ८९

प्राग्रहर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

प्राग्र्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

प्राग्विदेह—पूर्व विदेहक्षेत्र। मपु० ५ १९३, ४६ १९, ४८ ५८

प्राङ्माल्यगिरि—ऋष्यमूक पर्वत के आगे माल्य पर्वत का पूर्वभाग। यहाँ भरतेश की हस्तिसेना पहुँची थी। मपु० २९ ५६

प्राजापत्य—विवाह का एक भेद। यह विवाह माता-पिता और परिवार के गुरुजनो की सम्मति से होता है। मपु० ६२ १५१, ७० ११४-११५

प्राज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २१३

प्राण—(१) व्यवहार काल का एक प्रमाण । श्वास लेने और छोड़ने मे लगनेवाला समय प्राण कहलाता है । हपु० ७ १६, १९

(२) जीव की जीवितव्यता का लक्षण । इन्द्रियाँ, मन, वचन, काय, आयु और श्वासोच्छ्वास ये प्राण कहलाते हैं । इनकी विद्यमानता से ही जीव प्राणी कहा जाता है । मपु० २४ १०५

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६६

प्राणत—(१) ऊर्ध्वलोक मे स्थित चौदहवाँ कल्प । मपु० ७ ३९, ५५. २०-२२, ६७ १६-१७, पपु० १०५ १६६-१६९, हपु० ३ १५५, ६ ३८

(२) आनत स्वर्ग का एक विमान । मपु० ७३ ६८, हपु० ६ ५१

प्राणतेन्द्र—चौदहवें स्वर्ग का इन्द्र । मपु० ५५ २२

प्राणतेश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६६

प्राणद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६६

प्राणातिपातिकीक्रिया—एक आध्यात्मिक क्रिया । यह साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओ में एक क्रिया है । इससे प्राणो का वियोग होता है । हपु० ५८ ६८

प्राणायाम—योगो का निग्रह । इसमें शुभभावना के साथ मनोयोग, वचनयोग और काययोग इन तीनो योगो का निग्रह किया जाता है । मपु० २१ २२७

प्राणावायपूर्व—तेरह करोड पदो से युक्त बारहवाँ पूर्व । इसमें काय-चिकित्सा आदि आठ प्रकार के आयुर्वेद का तथा प्राण अपान आदि विभागो का और उनकी पार्थिवी आदि धारणाओ का वर्णन है । हपु० २ ९९, १० ११८-११९

प्रातर—दक्षिण का समुद्रतटवर्ती एक देश । इसे भरतेश ने जीता था । मपु० २९ ७९

प्रातिहार्य—तीर्थंकर प्रकृति कर्म के उदय से अभिव्यक्त अर्हन्त की विभूतियाँ । ये आठ होती हैं—१. अशोकवृक्ष २ तीन छत्र ३ सिंहासन ४ दिव्यध्वनि ५ दुन्दुभि ६ पुष्पवृष्टि ७. भामण्डल और ८. चौसठ चमर । मपु० ७ २९३-३०२, ४२ ४५, ५४ २३१, पपु० २ १४८-१५४, हपु० ३ ३१-३९, वीवच० १५ १-१९

प्रातिहार्य-प्रसिद्ध—उपवास । यह भादो सुदी एकादशी के दिन किया जाता है । प्रतिमास कृष्णपक्ष की एकादशियो के दिन किये गये छियासी उपवासो से अनन्त सुख मिलता है । हपु० ३४ १२८

प्रादोषिकी-क्रिया—एक आध्यात्मिक क्रिया । यह साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओ के अन्तर्गत क्रोध के आवेश से उत्पन्न होनेवाली एक क्रिया है । हपु० ५८ ६६

प्राग्ज्योतिष—पूर्व दिशा में स्थित एक जनपद । यह भरतेश के एक भाई के पास था । भरतेश की अधीनता स्वीकार न करके वह दीक्षित हो गया था । तब यह जनपद भरतेश के साम्राज्य में मिल गया था । हपु० ११ ६८-६९

प्रान्तकल्प—अच्युत स्वर्ग । मपु० ४८ १४३

प्राप्तमहाकल्याणपंचक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५५

प्राप्ति—आठ ऋद्धियो में एक ऋद्धि । इस ऋद्धि का धारक समृद्ध रहता है । मपु० ३८ १९३

प्राभृत—श्रुतज्ञान के बीस भेदो मे पन्द्रहवाँ भेद । यह ज्ञान प्राभृत-प्राभृतसमास मे एक अक्षर रूप श्रुतज्ञान की वृद्धि होने से होता है । हपु० १० १३, दे० श्रुतज्ञान ।

प्राभृत-प्राभृत—श्रुतज्ञान के बीस भेदो में तेरहवाँ भेद । यह ज्ञान अनुयोग समास ज्ञान में एक अक्षर रूप श्रुतज्ञान की वृद्धि होने से होता है । हपु० १० १२-१३ दे० श्रुतज्ञान

प्राभृत-प्राभृत-समास—श्रुतज्ञान के बीस भेदो मे चौदहवाँ भेद । यह ज्ञान प्राभृत-प्राभृत श्रुतज्ञान मे एक अक्षर के बढने से होता है । हपु० १० १२-१३ दे० श्रुतज्ञान

प्राभृत-समास—श्रुतज्ञान के बीस भेदो में सोलहवाँ भेद । प्राभृत श्रुतज्ञान मे एक अक्षर के बढने से यह ज्ञान होता है । हपु० १०,१२-१३ दे० श्रुतज्ञान

प्रायश्चित्त—आभ्यन्तर छ तपो में प्रथम तप । इसमे अज्ञानवश पूर्व में किये अपराधो की शान्ति के लिए पश्चात्ताप किया जाता है और मोहवश किये हुए पाप-कर्म से निवृत्ति पाने की भावना की जाती है । यह आलोचना, प्रतिक्रमण, तदुभय, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहार और उपस्थापन के द्वारा किया जाता है । मपु० २ २२, १८ ६९, २० १८९-१९०, ६७ ४५८-४५९, पपु० १४ ११६-११७, हपु० ६४. २८, ३७, वीवच० ६ ४१-४२

प्रायोपगमन—सन्यास (समाधिमरण, सल्लेखना) का उत्कृष्ट रूप । इसकी साधना शरीर से ममत्व छोडकर निर्जन स्थान या वन में की जाती है । साधक वहाँ कर्मों का नाश करके रत्नत्रय की उपलब्धि करता है । इसका साधक जीवो में मैत्रीभाव, गुणियो में प्रमोदभाव विपरीत स्वभावधारियो में माध्यस्थ भाव रखते हुए आमरण साधना में रत रहता है । प्रायेणापगम, प्रायेणोपगम और प्रायोपवेशन इसी सन्यास के अपर नाम हैं । मपु० ५ २३४, ११.९४-९८, ६२ ४१०, ७० ४९, हपु० १८ १२१, ३४ ४२, ४३ २१४, पापु० ९ १२९-१३०

प्रारम्भक्रिया—आस्रव की पच्चीस क्रियाओ में एक क्रिया । इसमें दूसरो के द्वारा किये जानेवाले आरम्भ में प्रमादी होकर स्वय हर्ष मानना अथवा छेदन-भेदन आदि क्रियाओ में अत्यधिक तत्पर रहना समाविष्ट है । हपु० ५८ ७९

प्रालम्ब—जानु तक पहुँचने वाला हार । मपु० ७ ३४

प्रावार—बहुमूल्य उत्तरीय वस्त्र । यह रेशमी होता है । इसे दुशाला भी कहते हैं । भोगभूमि में ये वस्त्राग जाति के कल्पवृक्षो से प्राप्त होते हैं । मपु० ९ ४८

प्रावृत—गुरु ध्रौव्य के पाँच शिष्यो में पाँचवाँ शिष्य । शाण्डिल्य, क्षीर-कदम्बक, वैन्य और उदच इसके सहपाठी थे । हपु० २३ ३४

प्राशन—गर्भान्वय क्रिया का एक भेद । इस क्रिया में आठ मास की अवस्था में भगवत्पूजा के पश्चात् बालक को अन्न दिया जाता है। मपु० ३८ ५५, ९५

प्रास—भाला । यह एक अस्त्र होता है । इसे फेंककर प्रहार किया जाता है । मपु० ४४ ८१, १८०

प्रासुक—जीव रहित शुद्ध द्रव्य । मपु० ३४ १९२, हपु० १८ १४२

प्रासुकाहार—सचित्त पदार्थों से रहित आहार । राजा श्रेयांस ने ऐसा ही आहार वृषभदेव को देकर उनकी पारणा करायी थी । मपु० २० ८८

प्रास्थाल—भरतक्षेत्र की उत्तर दिशा में स्थित एक देश । यह भरतेश के छोटे भाई के पास था । उसने भरतेश की अधीनता स्वीकार नहीं की और पिता के पास दीक्षा ले ली । तब यह देश भरत-साम्राज्य में मिल गया । हपु० ११ ६८-८७

प्रियंकर—(१) लवणांकुश के पूर्वभव का जीव । काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्धन और उसकी रानी सुदर्शना का पुत्र और हितंकर का अग्रज । इस पर्याय के पश्चात् इसने ग्रैवेयक में जन्म लिया और वहाँ से च्युत होकर लवणांकुश हुआ । पपु० १०८ ७, ३९.४६

(२) धरणिभूषण गिरि का इस नाम का उद्यान । यहाँ सागरसेन मुनि से जयसेन आदि राजाओं ने धर्मोपदेश पाया था । मपु० ७६ २२०

(३) प्रीतिंकर तथा उसकी रानी वसुन्धरा से उत्पन्न पुत्र । यह तीर्थंकर महावीर के समय में हुआ था । मपु० ७६ ३८५

(४) पृथ्वीतिलक नगर का राजा । इसकी रानी का नाम अतिवेगा और पुत्री का नाम रत्नमाला था । हपु० २७ ९१

प्रियंगु—(१) सहेतुक वन का एक वृक्ष । यह तीर्थंकर सुमतिनाथ और पद्मप्रभ का चैत्यवृक्ष था । मपु० ५१ ७४-७५, पपु० २० ४१-४२

(२) शामली नगर के दामदेव ब्राह्मण के पुत्र सुदेव की भार्या । पपु० १०८ ३९-४४

प्रियंगुखण्ड—वाराणसी नगरी का इस नाम का एक वन । यहाँ क्षत्रपुर नगर के व्याध दारुण के पुत्र अतिदारुण ने प्रतिमायोग में स्थित वज्रायुध मुनि को मार दिया था जिससे वह सातवें नरक में गया था। मपु० ५९ २७४, ७० १९१, हपु० २७ १०८

प्रियंगुलक्ष्मी—मृगांक नगर के राजा हरिश्चन्द्र की रानी । इसका पुत्र सिंहचन्द्र था जो अगली पर्याय में सिंहवाहन राजा हुआ था । पपु० १७ १५०-१५५

प्रियंगुश्री—विन्ध्यपुरी के राजा विन्ध्यकेतु की रानी । यह विन्ध्यश्री की जननी थी । मपु० ४५ १५३-१५४

प्रियंगसुन्दरी—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित किलकिल नगर के स्वामी विद्याधर बलीन्द्र की रानी । यह बाली और सुग्रीव की जननी थी । मपु० ६८ २७१-२७३

(२) श्रावस्ती नगरी के राजा एणीपुत्र की पुत्री । इसका वसुदेव के साथ गान्धर्व विवाह हुआ था । हपु० २८ ६, २९ ६७

प्रियकारिणी—(१) वैशाली के राजा चेटक और उसकी रानी सुभद्रा की सात पुत्रियों में सबसे बड़ी पुत्री । यह भरतक्षेत्र में विदेह देश के कुण्डपुर नगर के राजा सिद्धार्थ की रानी थी । गर्भ धारण करते समय इसने सोलह स्वप्न देखे और मास पूर्ण होने पर चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन अर्यमा योग में चौबीसवें तीर्थङ्कर महावीर को जन्म दिया था । मपु० ७४ २५१-२७६, ७५ ३-७, पपु० २० ३६, ६०, हपु० २ १५-२१, पापु० १ ७८-८५, वीवच० ७ ५९-६९, ८ ५९-६०

(२) पृथिवीतिलकपुर के राजा अतिवेग की रानी । इसकी पुत्री वज्रायुध की रानी रत्नमाला थी । मपु० ५९ २४१-२४२

प्रियदत्ता—(१) राजा विभीषण की रानी और वरदत्त की जननी । मपु० १० १४९

(२) सेठ समुद्रदत्त और उसकी प्रिया कुबेरमित्रा की ज्येष्ठ पुत्री । इसकी इकतीस छोटी बहिनें थीं । मपु० ४६ ४१-४२

प्रियदर्शन—(१) धातकीखण्ड द्वीप का रक्षक देव । हपु० ५ ६३८

(२) सुमेरु पर्वत का अपर नाम । हपु० ५ ३७३-३७६

प्रियदर्शना—(१) हस्तिनापुर के राजा अजितसेन की रानी । यह तीर्थङ्कर शान्तिनाथ की माता ऐरा के पति विश्वसेन की जननी थी । मपु० ६३ ३८२-४०६

(२) धनदत्त और उसकी पुत्री नन्दयशा की पुत्री । यह अगले भव में पाण्डवों की माता कुन्ती हुई थी । मपु० ७०.१८६, १९८

(३) इस नाम की एक आर्यिका । इसने अयोध्या के राजा अरविन्द की पुत्री सुप्रबुद्धा को दीक्षा दी थी । मपु० ७२ ३४-३५

(४) ब्रह्मस्वर्ग के विद्युन्माली नामक इन्द्र की प्रधान देवी । मपु० ७६ ३२

प्रियधर्म—एक राजा । वह भरत के साथ दीक्षित हो गया था । पपु० ८८ १-६

प्रियनन्दी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित मन्दरनगर का निवासी एक गृहस्थ । इसकी भार्या का नाम जाया और पुत्र का नाम दमयन्त था । पपु० १७ १४१-१४२

प्रियमित्र—(१) छठे नारायण पुण्डरीक के पूर्वभव का नाम । पपु० २० २०७, २१०

(२) अयोध्या के इक्ष्वाकुवंशी तीसरे चक्रवर्ती मघवा का पुत्र । इसने पिता से साम्राज्य प्राप्त किया था । मपु० ६१ ८८, ९९

(३) धनदत्त और उसकी पत्नी नन्दयशा के नौ पुत्रों में आठवाँ पुत्र । आयु के अन्त में मरकर यह अन्धकवृष्णि और उसकी पत्नी सुभद्रा का पूरण नाम का पुत्र हुआ । मपु० ७० १८६-१९८, हपु० १८ १३-१४, ११५-१२४

(४) एक अवधिज्ञानी मुनि । इनसे तीर्थङ्कर महावीर के पूर्वभव के जीव विद्याधर राजा कनकोज्ज्वल ने दीक्षा ली थी । मपु० ७४ २२३, ७६ ५४१

(५) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र और उसकी सुव्रता नामा रानी का चक्रवर्ती पुत्र । युवा अवस्था में पिता का पद प्राप्त करने

के पश्चात् इसके चौदह रत्न और नौ निधियाँ स्वयमेव प्रकट हुई थी। दिग्विजय में इसने अनेक राजाओ को पराजित किया था। बत्तीस हजार मुकुटबद्ध नृप इसे सिर झुकाते थे। आयु के अन्त में समस्त वैभव का त्याग कर इसने क्षेमकर मुनि से धर्मोपदेश सुना और सर्वमित्र नामक पुत्र को राज्य देकर एक हजार राजाओ के साथ जिनदीक्षा ले ली। इसके पश्चात् निर्दोष सयम पालते हुए समाधि-पूर्वक शरीर त्याग कर यह सहस्रार स्वर्ग मे उत्पन्न हुआ और वहाँ से च्युत हो छत्रपुर नगर में वहाँ के राजा नन्दिवर्धन और उसकी रानी वीरमती का नन्द नामक पुत्र हुआ। यही आगे चलकर तीर्थंकर महावीर हुआ। मपु० ७४ २३५-२४३, २७७-२७८, ७६ ५४२, वीवच० ५ ३५-५३, ७२-११७, १३४-१३६

(६) त्रिशृङ्गपुर नगर का निवासी एक सेठ। इसकी पत्नी मोमिनी से नयनसुन्दरी नामा एक पुत्री थी जिसे वह युधिष्ठिर को देने का निश्चय कर चुका था, पर लाक्षागृह की घटना के कारण युधिष्ठिर की अनुपस्थिति मे उसे नही दे सका था। हपु० ४५ १००-१०४, पापु० १३ ११०-११३

प्रियमित्रा—(१) एक गणिनी (आर्यिका)। इसने विजयार्ध पर्वत के वस्त्वालय नगर के राजा सेन्द्रकेतु की पुत्री मदनवेगा को दीक्षा दी थी। मपु० ६३ २४९-२५३

(२) सेठ कुबेरदत्त के पुत्र प्रीतिंकर कुमार की बडी माँ। अपर नाम प्रियमित्रिका। मपु० ७६ ३३१-३३३

(३) राजा मेघरथ की पत्नी, नन्दिवर्धन की जननी। यह अत्यधिक रूपवती थी। देव-सभा मे इसके सौन्दर्य की प्रशसा सुनकर रतिषेणा और रति नामा दो देवियाँ इसका रूप देखने के लिए स्वर्ग से आयी थी। तैल मर्दन कराती हुई इसे देखकर वे देवियाँ सतुष्ट हुई किन्तु सुसज्ज अवस्था में इससे मिलकर उन्हें प्रसन्नता नही हुई थी। वे इसके बाद नश्वर रूप को धिक्कारती हुई वहाँ से चली गयी। मपु० ६३ १४७-१४८, २८८-२९५ राजा और रानी दोनो विरक्त हो गये और राजा ने अपने पुत्र को राज्य देकर सयम धारण कर लिया। पापु० ५ ७८-९५

प्रियवाक्—अन्धकवृष्णि के पुत्र धारण की भार्या। मपु० ७० ९९ दे० धारण

प्रियव्रत—भरतक्षेत्र के अरिष्टपुर का राजा। इसकी दो महादेवियाँ थी—काचनाभा और पद्मावती। रानी पद्मावती से इसे रत्नरथ और विचित्ररथ नाम के दो पुत्र हुए। काचनाभा का अनुन्धर नाम का पुत्र हुआ। इसने इन पुत्रों के लिए राज्य छोड दिया। सल्लेखना के द्वारा देह त्यागा और यह स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ३९ १४८-१५२

प्रियसेन—(१) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। यह सुन्दरी का पति और प्रीतिदेव तथा प्रीतिंकर का पिता था। मपु० ९ १०८-१०९

(२) पुण्डरीकिणी नगरी के राजश्रेष्ठी कुबेरमित्र के पुत्र कुबेरकात का अनुचर। मपु० ४६ १९-२१, ३२

प्रियानन्दा—लक्ष्मण की भार्या। पपु० ८३ ९२-१००

प्रियालापा—राजा समुद्रविजय के लघुभ्राता अचल की महादेवी। हपु० १९ २-५

प्रियोद्भव—गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओ में छठी क्रिया। यह क्रिया प्रसूति के पश्चात् की जाती है। इसमें सिद्धपूजा के पश्चात् जिन मन्त्रो का जाप किया जाता है वे ये हैं—दिव्यनेमिविजयाय स्वाहा, परमनेमि-विजयाय स्वाहा, आर्हन्त्य नेमिविजयाय स्वाहा। मपु० ३८ ५५, ८५-८६, ४० १०८-१०९

प्रीतिंकर—(१) वानरवशी नृप। यह बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण की क्रोधाग्नि भडकाने लका गया था। पपु० ६०.५-६, ७० १२-१६।

(२) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रियसेन और उसकी रानी सुन्दरी का पुत्र। प्रीतिदेव इसका सहोदर था। स्वयप्रभ जिन से दीक्षा लेकर इसने अवधिज्ञान और आकाशगामिनी विद्याएँ प्राप्त की थी और अन्त मे यह केवली हुआ था। इसने मन्त्री स्वयबुद्ध की पर्याय में तीर्थङ्कर वृषभदेव को उनके महाबल के भव मे जैनधर्म का ज्ञान कराया था। मपु० ९ १०५-११०, १० १-३

(३) भरतक्षेत्र में छत्रपुर नगर के राजा प्रीतिभद्र और उसकी रानी सुन्दरी का पुत्र। यह धर्मरुचि नामक मुनि से धर्मोपदेश सुनकर तप करने लगा था। इसे क्षीरास्रव नाम की ऋद्धि प्राप्त हो गयी थी। साकेतपुर में चर्या के लिए जाने पर बुद्धिषेणा वेश्या ने इसी से उत्तम कुल की प्राप्ति का मार्ग जाना था। मपु० ५९ २५४-२६७, हपु० २७ ९७-१०१

(४) सिंहपुर का राजा। इसने अपने पिता अपराजित से राज्य प्राप्त किया था। मपु० ७० ४८, हपु० ३४ ४१

(५) वन। इसी वन में तीर्थंकर विमलनाथ के दूसरे पूर्वभव के जीव पद्मसेन ने सर्वगुप्त केवली से धर्मोपदेश सुना था। मपु० ५९ २-७

(६) ऊर्ध्व ग्रैवेयक का विमान। मपु० ५९ २२७

(७) मगध देश के सुप्रतिष्ठ नगर के निवासी सेठ कुबेरदत्त और उसकी भार्या धनमित्रा का पुत्र। इसने पाँच वर्ष से पन्द्रह वर्ष तक मुनिराज सागरसेन से शास्त्रशिक्षा प्राप्त की। जब इसने दीक्षित होना चाहा तो उन्होंने ऐसा करने से उसे रोका। विवाह करने से पूर्व उसने धन कमाने का निश्चय किया और कई व्यापारियो तथा अपने भाई नागदत्त के साथ वह एक जलयान में सवार होकर भूमितिलक नगर में पहुँचा। वहाँ उसे महासेन की पुत्री वसुन्धरा मिली। इसे उसने बताया कि भीमक ने उसके पिता को मारकर उसके राज्य पर अधिकार कर लिया है और वह प्रजा को बहुत कष्ट देता है। प्रीतिंकर ने उससे युद्ध किया और भीमक मारा गया। वसुन्धरा उसे अपना धन देकर उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। उसने बताया कि माता-पिता की आज्ञा से वह ऐसा कर सकता है। वसुन्धरा और धन को लेकर अपने जहाज पर आया। नागदत्त ने धन समेत

वसुन्धरा को तो जहाज में बैठा लिया और प्रीतिंकर को वही धोखे से छोड दिया। नागदत्त वसुन्धरा के साथ अपने नगर लौट आया। कुबेरदत्त और नगरवासियो के पूछने पर उसने प्रीतिंकर के विषय में अपने अज्ञान को प्रकट किया। इधर निराश होकर प्रीतिंकर जिन-मन्दिर गया। वहाँ जिनपूजा के लिए दो देव आये। उन्होने इसके कान में बँधे हुए पत्र से इसे अपना गुरु भाई जाना। देवो ने प्रीतिंकर की सहायता की। उन्होने उसे उसके नगर के पास के धरणीभूषण पर्वत पर छोड दिया। अपने नगर आने पर प्रीतिंकर ने सम्पूर्ण घटना से राजा को अवगत किया। राजा ने नागदत्त का सब कुछ छीन लिया। उसे मारना भी चाहा पर प्रीतिंकर ने राजा को ऐसा नही करने दिया। राजा ने प्रीतिंकर के सौजन्य से मुग्ध होकर अपनी पृथिवीसुन्दरी कन्या तथा वसुन्धरा और वैश्यो की अन्य बत्तीस कन्याओ के साथ विवाह करा दिया। राजा ने इसे अपना आधा राज्य भी दे दिया। अन्त में इसने चारण ऋद्धिधारी ऋजुमति मुनि से धर्मोपदेश सुना और अपने पुत्र प्रीतिंकर को राज्य देकर पत्नी और भाई बन्धुओ के साथ राजगृहनगर में तीर्थङ्कर महावीर के पास सयम धारण कर लिया। मपु० ७६ २१४-३८८

(८) अक्षपुर नगर के राजा अरिंदम का पुत्र। अरिंदम को मुनि कीर्तिधर से ज्ञात हुआ था कि वह मरकर विष्टा-कीट होगा। उसने अपने पुत्र प्रीतिंकर को आदेश दिया कि जैसे ही वह कीट हो वह उसे मार दे। पिता के मरने के पश्चात् उसके कीट होते ही इसने उसे मारने का बहुत यत्न किया, किन्तु मल मे प्रविष्ट हो जाने से यह उसे नही मार सका। तब यह मुनि कीर्तिधर के पास गया। उसने इसे प्रबोधा कि प्राणी को अपनी योनि से मोह हो जाता है इसलिए उसे मारने की आवश्यकता नही है। इसे ससार की गति से विरक्ति हुई और इसने दीक्षा धारण कर ली। पपु० ७७ ५७-७०

(९) एक केवली। ये सप्तर्षियों और उनके पिता श्रीनन्दन के दीक्षा गुरु थे। पपु० ९२ १-७

(१०) कुरुवशी एक राजा। हपु० ४५ १३

प्रीतिंकरा—गाँधार देश में विध्यपुर नगर के निवासी वणिक् सुदत्त की भार्या। इसी नगरी के राजकुमार नलिनकेतु ने कामासक्त होकर इसका अपहरण किया था जिससे उसका पति विरक्त होकर दीक्षित हो गया। इसे भी विरक्ति हुई और इसने आर्यिका सुव्रता से दीक्षा ले ली। मरकर यह ऐशान स्वर्ग में देवी हुई। मपु० ६३ ९९-१००

प्रीतिंकरी—भरतक्षेत्र में अयोध्या नगर के राजा चक्रवर्ती पुष्पदन्त की रानी। मपु० ७१ २५६-२५७

प्रीति—(१) प्रीतिकूट नगर के राजा प्रीतिकान्त और उसकी रानी प्रीतिमती की पुत्री। यह सुमाली की भार्या और रत्नश्रवा की जननी थी। पपु० ६ ५६६, ७ १३३

(२) रावण की रानी। पपु० ७७ ९-१५

(३) समवरण की एक वापिका। इसकी पूजा से प्रीति मिलती है। हपु० ५७ ३६

प्रीतिकंठ—विद्याधरो का स्वामी। यह राम का व्याघ्ररथी योद्धा था। पपु० ५८ ३-७

प्रीतिकान्त—प्रीतिकूट नगर का राजा। इसकी प्रीतिमती नामा रानी और प्रीति नामा पुत्री थी। पपु० ६ ५६६

प्रीतिक्रिया—गृहस्थ की गर्भान्वयी त्रेपन क्रियाओ में द्वितीय क्रिया। इसके अन्तर्गत गर्भाधान के तीसरे मास में जिनेन्द्र की पूजा की जाती है, तोरण बाँधे जाते है, दो पूर्ण कलश रखे जाते है तथा प्रतिदिन वाद्य-ध्वनि पूर्वक उल्लास प्रकट किया जाता है। मपु० ३८ ७७-७९

प्रीतिदेव—पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रियसेन का कनिष्ठ पुत्र। प्रीतिंकर इसका अनुज था। मपु० ९ १०८-११०

प्रीतिभद्र—छत्रपुर नगर का राजा। इस राजा की सुन्दरी रानी से प्रीतिंकर नाम का पुत्र हुआ था। मपु० ५९ २५४-२५५ हरिवशपुराण में इस नृप को चित्रकारपुर नगर का शासक बताया गया है। हपु० २७ ९७ दे० प्रीतिंकर

प्रीतिमती—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में अरिन्दमपुर नगर के राजा अरिंजय और अजितसेना की पुत्री। इसने अपनी विद्या से चिन्तागति को छोड शेष विद्याधरो को मेरु-प्रदक्षिणा में जीत लिया था। यह चिन्तागति को चाहती थी, किन्तु चिन्तागति ने यह कहकर इसे त्याग दिया था कि उसने उसके छोटे भाइयो में किसी एक को प्राप्त करने की इच्छा से गतियुद्ध किया था इसलिए वह उसके योग्य नही है। चिन्तागति के इस कथन से यह ससार से विरक्त हुई और विवृता नामा आर्यिका के पास इसने उत्कृष्ट तप धारण कर लिया। मपु० ७० ३०-३७, हरिवशपुराण में चिन्तागति को भी इससे पराजित कहा गया है। हपु० ३४ १८-३३

(२) सिहपुर नगर के राजा अर्हद्दास के पुत्र अपराजित की भार्या। मपु० ३४ ६

(३) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के रथनूपुर नगर के स्वामी विद्याधर मेघवाहन की रानी। यह घनवाहन की जननी थी। पापु० १५ ६-८

प्रीतिवर्द्धन—(१) प्रभाकरी नगरी का राजा। इसने मासोपवासी पिहितास्रव मुनि को आहार दिया था। जिससे उसे पचाश्चर्य प्राप्त हुए थे। इसने मुनि के कहने से राजा अतिगृध्र के जीव सिंह की समाधि में यथोचित सेवा की जिससे उसे देवगति मिली। मपु० ८ १९२, १९५, २०१-२०९

(२) दशागपुर के राजा वज्रकर्ण का उपदेशक एक साधु। पपु० ३३ ७५-१२०

(३) अच्युत स्वर्ग का एक विमान। मपु० ७ २६

प्रेक्षणगोष्ठी—तीर्थंकर की माता की तोष-कारिणी देवियो द्वारा आयोजित नृत्य गोष्ठी। मपु० १२ १८९

प्रेक्षाशाला—समवसरण मे गोपुरो के आगे वीथियो की दोनो ओर निर्मित तीन-तीन खण्ड की नाट्यशालाएँ। इनमें बत्तीस-बत्तीस देव-कन्याएँ नृत्य करती हैं। मपु० २२ २६०, हपु० ५७ २७-९३

प्रेमक—भविष्यत् कालीन तेरहवें तीर्थङ्कर । मपु० ७६.४७३

प्रेष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १२२

प्रेष्यप्रयोग—देशव्रत का प्रथम अतिचार-मर्यादा के बाहर सेवक को भेजना । हपु० ५८ १७८

प्रोषधोपवास—(१) चार शिक्षाव्रतो में दूसरा शिक्षाव्रत । इसमें मास के अष्टमी और चतुर्दशी इन चार पर्व के दिनो में निरारम्भ रहकर चारो प्रकार के आहार का त्याग किया जाता है । इसमें इन्द्रियाँ बहिर्मुखता से हटकर अन्तर्मुख हो जाती हैं । हपु० ५८ १५४, वीवच० १८ ५६ इसके पांच अतिचार होते हैं—अनवेक्ष्यमलोत्सर्ग, अनवेक्ष्यादान, अनवेक्ष्यसस्तरसक्रम, अनैकाग्रय तथा व्रत के प्रति अनादर । एक प्रोषधोपवास को चतुर्थक कहते हैं । मपु० २० २८-२९, ३६, १८५, हपु० ३४ १२५, ५८ १८१

(२) श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओ में चौथी प्रतिमा । इसे प्रोषधव्रत भी कहते हैं । वीवच० १८ ६०

प्रोष्ठिल—(१) एक मुनि । ये दन्तपुर नगर के निवासी वणिक् वीरदत्त के दीक्षा-गुरु थे । मपु० ७० ६५-७१

(२) तीर्थंकर वर्द्धमान के पूर्वभव का जीव । यह नन्द नामक राजकुमार का गुरु एव उपदेशक था । मपु० ७४ २४३, वीवच० ६. २ ३० दे० महावीर

(३) तीर्थङ्कर वर्द्धमान का पूर्वभव का पिता । मपु० २० २९-३० दे० महावीर

(४) तीर्थङ्कर वर्द्धमान के पूर्वभव के गुरु । हपु० ६० १६३

(५) भविष्यत् कालीन स्वयप्रभ चौथे तीर्थङ्कर के पूर्वभव का जीव । मपु० ७६ ४७२

(६) भविष्यत् कालीन नौवें तीर्थङ्कर । मपु० ७६ ४७८

(७) दशपूर्वधारी मुनि । तीर्थङ्कर वर्द्धमान के मोक्ष जाने के पश्चात् हुए दशपूर्व और ग्यारह अगधारी ग्यारह मुनियो में ये दूसरे मुनि थे । मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२१, हपु० १ ६२, वीवच० १ ४५-४७

प्लक्ष—तीर्थंकर शीतलनाथ का चैत्यवृक्ष (वटवृक्ष) । पपु० २० ४६

प्लवग-विद्या—बन्दर जैसा रूप प्रदान करने मे समर्थ विद्या । अणुमान् (हनुमान्) ने इसी विद्या से लका में बन्दर का रूप धारण किया था । मपु० ६८ ३६३-३६४

फ

फलकहार—एक हार । यह अर्धमाणवहार के मध्य में मणि लगाकर तैयार किया जाता है । मपु० १६.६५

फलचारणऋद्धि—एक ऋद्धि । इसके प्रभाव से फलो पर गमनागमन होने पर भी फल यथावत् बने रहते है । मपु २ ७३

फल्गुमति—पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा लोकपाल का असत्यवादी और मूर्ख मन्त्री । मपु० ४६ ५०-५१

फल्गुसेना—दु षमा काल की अन्तिम श्राविका । यह साकेत की निवासिनी होगी । पाँचवें दु षमा काल के साढे आठ मास शेष रहने पर कार्तिक मास में कृष्णपक्ष के अन्तिम दिन प्रात. वेला और स्वाति नक्षत्र के उदय काल मे शरीर त्यागकर प्रथम स्वर्ग मे जायगी । इसके साथ वीरागज मुनि, अग्निल श्रावक और आर्यिका सर्वश्री भी वहीं जायेंगे । मपु० ७६ ४३२-४३६

फेन—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का सैंतालीसवाँ नगर । मपु० १९ ८५, ८७

फेनमालिनी—विदेहक्षेत्र की बारह विभगा नदियो मे ग्यारहवी नदी । यह नीलाचल से निकलकर सीतोदा में मिली है । मपु० ६३ २०७, हपु० ५ २४२

ब

बंहिष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १२२

बक—श्रुतपुर नगर का राजा । यह बगुले के समान धर्महीन था । नर-मास भक्षी होने से प्रजा द्वारा नगर से निष्कासित कर दिया गया था । यह वन में रहा और वहाँ भी नर-मास खाता रहा । नगरवासी इसे प्रति परिवार एक मनुष्य भेजते रहे । एक दिन किसी वैश्य-पत्नी के निवेदन पर कुन्ती ने अपने पुत्र भीम से इसका प्रतिकार करने को कहा । माँ का आदेश प्राप्त कर भीम ने इससे युद्ध किया और इसका मान-मर्दन किया । अन्त में यह मनुष्यो का घात करने से विरक्त हो गया । पापु० १४ ८५-१३६

बडवामुख—लवणसमुद्र का दक्षिण दिशा में स्थित पातालविवर । हपु० ५ ४४३

बन्दी—उत्साहवर्द्धक मगल पाठ करनेवाले चारण अथवा देव । ये तीर्थंकर की माता को जगाने और प्रस्थान के समय उच्च स्वर से मगल पाठ करते हैं । मपु० ७ २४३, १२ १२१-१२२, १७ १०२

बन्ध—(१) आत्मा और कर्मों का एक क्षेत्रावगाह होना । कषाय-कलुषित जीव प्रत्येक क्षण बन्ध करता है । सामान्य रूप से इसके चार भेद कहे हैं—प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश । यह पाँच कारणो से होता है वे हैं—मिथ्यात्व, अव्रताचरण, प्रमाद, कषाय और योग । इनमें मिथ्यात्व के पाँच, अविरति के एक सौ आठ, प्रमाद के पन्द्रह, कषाय के चार और योग के पन्द्रह भेद होते हैं । मपु० २ ११८, ४७ ३०९-३१२, हपु० ५८ २०२-२०३

(२) जीवो की गति का निरोधक तत्त्व-बन्ध । यह अहिंसाणुव्रत का एक अतिचार है । हपु० ५८.१६४

बन्धन—एक विद्यास्त्र । चण्डवेग ने यह अस्त्र वसुदेव को दिया था । हपु० २५ ४८

बन्धमोक्षज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. २०८

बन्धु—(१) सीता-स्वयवर में सम्मिलित एक नृप । पपु० २८ २१५

(२) बन्धन रूप व्यक्ति । ये सुख और दु ख दोनो के कारण होते है । मपु० ४ १४९, ६३ २२८

बन्धुदत्त—मृत्तिकावती नगरी के राजा कनक और उसकी रानी धुर का पुत्र । यह राजकुमारी मित्रवती के साथ विवाहित हुआ था । क्रौंचपुर

नगर के राजा यक्ष और उसकी रानी राजिला द्वारा पालित यक्षदत्त इसका पुत्र था। पपु० ४८ ३६-५०

बन्धुमती—(१) भरतक्षेत्र में कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर के सेठ श्वेतवाहन की भार्या। यह शख पुत्र की जननी और इसी नगर के राजा गगदेव की रानी नन्दयशा की बडी बहिन थी। इसने नन्दयशा के सातवें पुत्र निर्नामक का पालन किया था। मपु० ७१ २६०-२६६ हपु० ३३ १४१

(२) विजयपुर नगर निवासी मधुषेण वैश्य की भार्या और बन्धुयशा की जननी। इसके पति का अपर नाम बन्धुषेण था। मपु० ७१ ३६३-३६४, हपु० ६० ४८

(३) एक आर्यिका। हनुमान् के दीक्षित होने के पश्चात् उसकी रानियो ने इसी आर्यिका से दीक्षा ली थी। पपु० ११३ ४०-४२

(४) भरत की भाभी। पपु० ८३ ९४

(५) कामदत्त सेठ के वश में उत्पन्न कामदेव सेठ की पुत्री। किसी निमित्तज्ञानी ने कामदत्त सेठ द्वारा बनवाये कामदेव-मन्दिर के द्वार खोलनेवाले को इसका पति होना बताया था। वसुदेव ने इस मन्दिर के द्वार खोलकर जिनेन्द्र की अर्चना की थी। भविष्यवाणी के अनुसार कामदेव ने प्रसन्न होकर यह कन्या वसुदेव को दी थी। हपु० २९ १-११

(६) अरिष्टपुर नगर के राजा हिरण्यनाभ के भाई रेवत की पुत्री। रेवती इसकी बडी बहिन और सीता तथा राजीवनेत्रा छोटी बहिनें थी। इसका विवाह कृष्ण के भाई बलदेव से हुआ था। मपु० ४४ ३७-४१

बन्धुयशा—कृष्ण की पटरानी जाम्बवती के तीसरे पूर्वभव का जीव। यह उस भव में जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के विजयपुर नगर के मधुषेण/बन्धुषेण वैश्य और उसकी स्त्री बन्धुमती की पुत्री थी। मपु० ७१ ३५९-३६९, हपु० ६० ४८-४९

बन्धुश्री—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित शख नगर के देविल वैश्य की भार्या। इसकी पुत्री का नाम श्रीदत्ता था। मपु० ६२ ४९२-५००

बन्धुषेण—(१) जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र में स्थित विजयपुर नगर का नृप। यह बन्धुमती का पति तथा बन्धुयशा का पिता था। हपु० ६० ४८-४९

(२) वसुदेव और रानी बन्धुमती का पुत्र, सिंहसेन का सहोदर। हपु० ४८ ५३, ६२

बर्बरी—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभावती अपर नाम प्रभाकरी नगरी के राजा अनन्तवीर्य की नटी। इसी कारण नारद की कुमन्त्रणा से अनन्तवीर्य और उसके बडे भाई अपराजित का शिवमन्दिर नगर के राजा दमितारि के साथ युद्ध हुआ। इस युद्ध में दमितारि मारा गया था। मपु० ६२ ४२९, पापु० ४ २४६-२७५, दे० अपराजित १२

बर्हणास्त्र—उरगास्त्र का निवारक शस्त्र। पपु० ७४ ११०-१११

बल—(१) भगवान् वृषभदेव के सतत्तरवें गणधर। मपु० ४३ ६५

(२) अर्ककीर्ति के पुत्र स्मितयश का पुत्र। हपु० १३ ७-८

(३) प्रथम बलभद्र विजय के पूर्व जन्म का नाम। मपु० २०. २३२-२३३

(४) विद्याधरो का स्वामी, राम का व्याघ्ररथारोही योद्धा। पपु० ५८ ३-७

(५) राम का एक योद्धा। यह बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण को विद्या की साधना से च्युत करने के लिए लका गया था। पपु० ७० १२-१६

(६) तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ५३ ४६

(७) आगामी पाँचवा नारायण। मपु० ७६ ४८७-४८८

(८) बलभद्र। ये नारायण के भाई होते हैं। ये नौ हैं—विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नान्दी, नन्दिमित्र, रामचन्द्र और पद्म (बलराम)। मपु० २ ११७, हपु० ६० २९०

(९) बलराम। मपु० ७१ ७६

(१०) सैन्य शक्ति और आत्मबल। स्वयबुद्ध ने महाबल में मन्त्र-शक्ति के द्वारा इन दोनो बलो का यथासमय सचार किया था। मपु० ५ २५१

बलदेव—(१) आगामी सत्रहवें तीर्थंकर निर्मल का जीव-वासुदेव। मपु० ७६ ४७३

(२) लोहाचार्य के पश्चात् हुए आचार्यों में एक आचार्य। हपु० ६६ २४-२६

(३) वसुदेव और रोहिणी के पुत्र। ये नवम बलभद्र थे। महापुराण में इन्हें पद्म भी कहा है। ये वसुदेव की दूसरी रानी देवकी के पुत्र थे। देवकी के सातवें पुत्र कृष्ण को जन्मते ही ये और वसुदेव दोनो गोकुल में नन्दगोप को दे आये। ये गोकुल, मथुरा और द्वारिका में कृष्ण के साथ ही रहे। जब द्वैपायन मुनि द्वारिका आये तो शम्ब आदि कुमारो ने मदोन्मत्त अवस्था में मुनि का तिरस्कार किया। मुनि ने क्रुद्ध होकर यादवो समेत द्वारिका के नष्ट होने का शाप दिया। इन्होने अनुनय विनय के साथ मुनि से शाप को निरस्त करने की प्रार्थना की। मुनि ने सकेत से बताया कि बलराम और कृष्ण को छोडकर शेष नष्ट हो जायेंगे। द्वारिका नष्ट हुई। कुछ समय पश्चात् मृग समझकर छोडे हुए जरत्कुमार के बाण से कृष्ण की मृत्यु हो गयी। ये शोकाकुल होकर कृष्ण को लिये हुए छ मास तक इधर-उधर घूमते रहे। जब सारथी सिद्धार्थ के जीव एक देव ने इन्हें सम्बोधा तो इन्होने शव का दाह-सस्कार किया। इसके पश्चात् इन्होने जरत्कुमार को राज्य देकर तीर्थंकर नेमिनाथ से परोक्ष में और पिहितास्रव मुनि से साक्षात् दीक्षा ली। तु गीगिरि पर सौ वर्ष तक कठिन तप करके ये ब्रह्मलोक मे इन्द्र हुए। ये पूर्वजन्म में हस्तिनापुर में शख नाम के मुनि थे। वहाँ से ये महाशुक्र स्वर्ग में देव हुए। वहाँ मे च्यकर ये रोहिणी पुत्र बलराम हुए। पपु० ७० ३१८-३१९, ७१,१२५-१३८, हपु० ६१ ४८, ६१-६६, ६३. १२-

७४, ६५ २६-५६, पापु० २२ ९९ इनके रत्नमाला, गदा, हल और मूसल ये चार महारत्न थे। इनकी आठ हजार रानियाँ थी और इनके निषध, प्रकृतिद्युति, चारुदत्त आदि अनेक पुत्र थे। मपु० ७१. १२५-१२८, हपु० ४८. ६४-६८, ५३ ४१-५६

बलभद्र—(१) सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग के इन्द्र का विमान। मपु० ७६ १९९, हपु० ६ ४८

(२) नारायण के भ्राता। नियम से तद्भव मोक्षगामी पुरुष। ये नौ होते है—दे० बल। इनमें विजय आदि पाँच बलभद्र श्रेयासनाथ से धर्मनाथ तीर्थंकर के अन्तराल में हुए है। आरम्भिक आठ बलभद्र मोक्ष गये और नवें बलभद्र ब्रह्म स्वर्ग। नियम से ये सभी ऊर्ध्वगामी (स्वग अथवा मोक्षगामी) होते हैं, भवान्तर मे कोई निदान नही बांधते। हपु० ६० २९३-३०३ इन बलभद्रो मे सुधर्म को धर्म तथा नान्दी को नन्दिषेण नाम से भी सम्बोधित किया गया है। मपु० ५९ २७१, ६५ १७४ नामो मे अन्तर के साथ क्रम में भी अन्तर प्राप्त होता है। पद्मपुराण में वे निम्न क्रम मे मिलते है—अचल, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, पद्म और बल। पपु० ५ २२५, २२६, २० २४२ टिप्पणी। पूर्व जन्म सम्बन्धी इनके नगर क्रमश ये थे—पुण्डरीकिणी, पृथिवीसुन्दरी, आनन्दपुरी, नन्दपुरी, वीतशोका, विजयपुर, सुसीमा, क्षेमा और हस्तिनापुर। पूर्वजन्म के नाम क्रमश -बल, मारुतवेग, नन्दिमित्र, महाबल, पुरुषर्षभ, सुदर्शन, वसुन्धर, श्रीचन्द्र और शख। गुरु जिनसे पूर्वजन्म में ये दीक्षित हुए—अमृतार, महासुव्रत, सुव्रत, वृषभ, प्रजापाल, दमवर, सुधर्म, अर्णव और विद्रुम। स्वर्गों के नाम जहाँ से अवतरित हुए—तीन सहस्रार स्वर्ग से, तीन अनुत्तर विमान से, दो ब्रह्म स्वर्ग से और एक महाशुक्र स्वर्ग से। पूर्वजन्म की माताएँ-भद्राम्भोजा, सुभद्रा, सुवेषा, सुदर्शना, सुप्रभा, विजया, वैजयन्ती, अपराजिता और रोहिणी। पपु० २० २२९-२३९ उत्सर्पिणीकाल मे निम्न बलभद्र होंगे—चन्द्र, महाचन्द्र, चन्द्रधर, सिंहचन्द्र, हरिश्चन्द्र, श्रीचन्द्र, पूर्णचन्द्र, सुचन्द्र और बालचन्द्र। हपु० ६० ५६६-५६९ इन बलभद्रो के नाम एव क्रम परिवर्तित रूप में भी मिलते हैं जैसे—चन्द्र, महाचन्द्र, चक्रधर, हरिचन्द्र, सिंहचन्द्र, वरचन्द्र, पूर्णचन्द्र, सुचन्द्र और श्रीचन्द्र। मपु० ७६ ४८५-४८६ बलभद्रो को राम भी कहते हैं। मपु० ७६ ४९५, पपु० २० २३१, १२३.१५१

(३) अनागत सातवा नारायण। हपु० ६० ५६६

बलभद्रककूट—मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में नन्दनवन का कूट। हपु० ५.३२८

बलभद्रकदेव—नन्दनवन के बलभद्रककूट पर रहनेवाला देव। हपु० ५.३२८

बलरिपु—इन्द्र। हपु० ५५ १३

बलर्द्धि—परीषहो के सहने में बलप्रदायिनी ऋद्धि। बाहुबली ने यह ऋद्धि अपने तपोबल से प्राप्त की थी। मपु० ११ ८७, ३६.१५४

बलसिंह—वैजयन्ती नगरी का न्यायप्रिय नृप। 'कुमार वसुदेव हमारी स्त्री सोमश्री के साथ रूप बदलकर रहता है' ऐसी मानसवेग द्वारा शिकायत किये जाने पर इसने छानबीन की थी तथा मानसवेग को असत्यभाषी पाया था। हपु० ३० ३३-३४

बलांक—आदित्य (सूर्य) वश का एक नृप। यह अर्ककीर्ति का पौत्र, सितयश का पुत्र और राजा सुबल का जनक था। यह स्वभाव से नि स्पृह और चरित्र से निर्ग्रन्थव्रतधारी था। पपु० ५ ४-१०

बलाहक—(१) कामग विमान का निर्माता देव। मपु० २२ १५, वीवच० १४ १३-१४

(२) कृष्ण के सेनापति अनावृष्टि का शख। हपु० ५१.२०

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का ग्यारहवाँ नगर। हरिवश पुराण में इस नगर का नाम अठानवें क्रमाक पर दिया है, तथा इस क्रमाक पर धनजय नगर का उल्लेख है। मपु० १९ ७९-८७, हपु० २२ ९३-१०१

बलि—(१) भरतेश के पुत्र अर्ककीर्ति का समकालीन भूगोचरी एक नृप। पापु० ३ ३४-३६

(२) राम का एक योद्धा। पपु० ५८.१३-१७

(३) छठा प्रतिनारायण। यह मेघनाद का छठा वशज था। इसे तीन खण्ड का स्वामित्व तथा विद्याबल प्राप्त था। यह बलशाली बलभद्र नन्द और नारायण पुण्डरीक द्वारा युद्ध में मारा गया था। हपु० २५ ३४-३५ दे० निशुम्भ

(४) उज्जयिनी के राजा श्रीधर्मा का मत्री। एक समय सात सौ मुनियो के सघ सहित अकम्पनाचार्य उज्जयिनी मे आये थे। राजा भी अपने मन्त्रियो के साथ इनके दर्शनार्थ आया था। लौटते समय श्रुतसागर मुनि से मन्त्रियो का विवाद हो गया, जिसमें मन्त्री पराजित हुए। राजा ने इन मन्त्रियो को अपने राज्य से निकाल दिया। इसकी प्रमुखता में ये हस्तिनापुर आये। यहाँ इन्होंने राजा पद्मरथ को उसके शत्रु सिंहरथ को जीतने में सहायता की। राजा ने प्रसन्न होकर इन्हें सात दिन का राज्याधिकार दिया। दैवयोग से अकम्पनाचार्य ससघ यहाँ भी आये। इन्होंने उन पर घोर उपसर्ग किया। इस उपसर्ग को विष्णुकुमार मुनि ने विक्रियाऋद्धि से दूर किया। सात दिन की अवधि समाप्त होने पर राजा ने इसे इस नगर से निष्कासित कर दिया। यह विष्णुकुमार मुनि की शरण में आया और उनसे श्रावक धर्म को ग्रहण कर लिया। मपु० ७० २७४-२९९ हपु० २० ३-६०

(५) कुरुवश के राजा विजय का पुत्र। वसुदेव की कथा के प्रसग में छ भाइयो के साथ इसका नाम आया है। हपु० ४८ ४८

(६) तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ के प्रथम गणधर। इनका अपर नाम बल था। मपु० ५३ ४६, हपु० ६० ३४७

बलीन्द्र—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित मन्दरपुर का स्वामी। यह विद्याधरो का राजा था। इसने बलभद्र नन्दिमित्र और नारायणदत्त से गन्धगज की प्राप्ति के लिए युद्ध किया था। इस युद्ध में इसका पुत्र

शतवलि वलभद्र नन्दिमित्र द्वारा मारा गया था। अपने पुत्र की मृत्यु का प्रतिशोध लेने के लिए नारायणदत्त के मारने को इसने चक्र चलाया था किन्तु चक्र प्रदक्षिणा देकर नारायणदत्त की दायी भुजा पर जाकर ठहर गया। इसी चक्र से यह नारायण दत्त द्वारा मारा गया और मरकर नरक गया। मपु० ६६ १०९-१२५

(२) विजयार्ध पर्वत के किलकिल नगर का स्वामी विद्याधर। यह प्रियगुसुन्दरी का पति तथा वाली और सुग्रीव का जनक था। मपु० ६८.२७१-२७३

बह्लाशी—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का सातवाँ पुत्र। पापु० ८. २०१

बहिरात्मा—देह और देही को एक माननेवाला व्यक्ति। यह तत्त्व-अतत्त्व में गुण-अवगुण में, सुगुरु-कुगुरु मे, धर्म-अधर्म में, शुभ-अशुभ मार्ग में, जिनसूत्र-कुशास्त्र मे, देव-अदेव में और हेयोपादेय के विचार में विवेक नही करता। तप, श्रुत और व्रत से युक्त होकर भी यह स्व-पर विवेक मे रहित होता है। वीवच० १६ ६७-७२

बहिर्द्विष्—वाह्य शत्रु। हपु० १ २३

बहिर्यान—गर्भान्वय क्रियाओं मे आठवी क्रिया। इस क्रिया में जन्म के दो-तीन अथवा तीन-चार माम पश्चात् अपनी अनुकूलता के अनुसार किसी शुभ दिन तुरही आदि मागलिक बाजो के माथ शिशु को प्रसूतिगृह के बाहर लाया जाता है। इस क्रिया के समय बन्धुजन शिशु को उपहार देते हैं। मपु० ३८ ५१-५५, ९०-९२ इस क्रिया में निम्न मन्त्र का जाप होता है—उपनयनिष्क्रान्तिभागी भव, वैवाहनिष्क्रान्तिभागी भव, मुनीन्द्रनिष्क्रान्तिभागी भव, सुरेन्द्रनिष्क्रान्तिभागी भव, मन्दरेन्द्राभिषेकनिष्क्रान्तिभागी भव, यौवराज्यनिष्क्रान्तिभागी भव, महाराज्यनिष्क्रान्तिभागी भव और आर्हन्त्यराज्यभागी भव। मपु० ४० १३५-१३९

बर्हिध्वज—मयूराकृतियो से चिह्नित ध्वजाएँ। मपु० २२ २२४

बहुकेतुक—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में चौथा नगर। मपु० १९ ३०-३१, ३५, हपु० २२ ९२-९३

बहुमित्र—सुजन देश में हेमाभनगर के राजा दृढमित्र का द्वितीय पुत्र। यह गुणमित्र का अनुज, सुमित्र और धनमित्र का अग्रज, हेमाभा का भाई तथा जीवन्धर का साला था। यह अनेक विद्याओ मे निपुण था। मपु० ७५ ४२०-४३०

बहुमुखी—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की उन्नीसवी नगरी। मपु० १९ ४५, ५३-५४

बहुरूपिणी—अनेक रूप बनाने की शक्तिशाली एक विद्या। इस पर देवकृत विघ्न नही होते। यह विद्या चौबीस दिन में सिद्ध होती है। जिसे यह सिद्ध हो जाती है वह इन्द्र से भी अजेय हो जाता है। इसकी साधना के समय साधक को क्रोधजयी होना पडता है। मपु० १४ १४१, ७० ३-४, ९४, पपु० ६७ ६

बहुलपक्ष—महीने का कृष्ण पक्ष। पपु० ६ ७७

बहुवज्रा—भरतक्षेत्र की एक नदी। इसे पार करके भरतेश की सेना आगे बढी थी। मपु० २९ ६१

बहुशिलापटल—रत्नप्रभा नाम की प्रथम नरकभूमि के तीन भागों में प्रथम खरभाग का सोलवाँ (अन्तिम) पटल। हपु० ४ ४३, ४७-४८, ५२-५४

बहुश्रुत—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में रथनूपुरचक्रवाल नगर के राजा ज्वलनजटी विद्याधर का द्वितीय मन्त्री। मपु० ६२ २५-३०, ६३ पापु० ४ २२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

(३) अनेक शास्त्रो के ज्ञाता आचार्य और उपाध्याय। मपु० ६३ ३२७

बहुश्रुतभक्ति—अनेक शास्त्रो के ज्ञाता आचार्य और उपाध्याय परमेष्ठी मे तथा आगम में मन, वचन और कार्य से भावो की शुद्धतापूर्वक श्रद्धा रखना। मपु० ६३ ३२७, हपु० ३४ १४१

बाण—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित श्रुतशोणित नगर का निवासी एक विद्याधर। हपु० ५५ १६

बाणमुक्त—भरतक्षेत्र में आर्यखण्ड के दक्षिण का देश। हपु० ११ ६९, ७१

बाणा—पश्चिम समुद्र की ओर बहनेवाली एक नदी। इसे भरतेश के सेनापति ने ससैन्य पार किया था। मपु० ३० ५४, ५७

बादर—वे जीव जिनके शरीर का घात हो सकता है। मपु० १७ २४, पपु० १०५ १४५

बाधा—इष्ट पदार्थों को उपलब्धि में अन्तराय। मपु० ६६ ६९

बालचन्द्र—(१) राजा अनरण्य का सेनापति। विदग्ध नगर के राजा प्रकाशसिंह के पुत्र कुण्डलमण्डित को इसी ने बाँधा था। पपु० २६. ५१-५६

(२) आगामी काल में होनेवाला नौवाँ बलभद्र। हपु० ६० ५६९

बालचन्द्रा—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित गगनवल्लभ नगर के राजा की पुत्री। इसका विवाह वसुदेव से हुआ था। अन्त में यह वसुदेव के कहने से उसकी दूसरी रानी वेगवती को विद्याएँ देकर निःशल्य हो गयी थी। हपु० २६ ५०, ५६, ३२ १७-१८

बालनया—दुःषमाकाल के अन्त में होनेवाले कल्किराज के बुद्धिमान् पुत्र अजितजय की भार्या। मपु० ७६ ४२८

बालमित्र—इन्द्रनगर के राजा का पुत्र। लक्ष्मण के अभाव में पृथिवीधर ने अपनी पुत्री वनमाला इसे ही देने का निश्चय किया था। पपु० ३६ ११-१७

बालार्काभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९८

बालिखिल्य—सिंहोदर राजा के अधीन कूबर नगर का एक नृप। यह कौशाम्बी नगरी के राजा विश्वानल और उसकी रानी प्रतिसन्ध्या

के पुत्र रौद्रभूति म्लेच्छराज द्वारा युद्ध मे पकड कर कैद कर लिया गया था। इसकी स्त्री पृथिवी इस समय गर्भवती थी। इस समय यह घोषणा की गयी थी कि यदि बालिखिल्य के पुत्र हो तो वह राज्य करे। वसुवृद्धि मन्त्री ने राज्य-लोभ-वश पुत्र होने की खबर राजा को प्रेषित की। निश्चयानुसार कल्याणमाला को राज्य मिला। पुरुष वेष मे वह राज्य करती रही। राम और लक्ष्मण से इस कन्या ने अपना गुप्त रहस्य प्रकट किया। राम ने बालिखिल्य को बन्धनो से मुक्त कराकर उसे उसका राज्य दिलवा दिया। इससे प्रसन्न होकर इसने अपनी पुत्री कल्याणमाला का विवाह लक्ष्मण से कर दिया। पपु० ३३.२३२ ३४ ३९-५१, ७६-९७, ८२ १४

बाली—किष्किन्धपुर के राजा सूर्यरज और उसकी रानी इन्दुमालिनी का पुत्र। यह सुग्रीव का अग्रज एव श्रीप्रभा का भाई था। ध्रुवा इसकी भार्या थी। भोगो को क्षणभगुर जानकर इसने गगनचन्द्र गुरु के निकट दिगम्बरी दीक्षा ग्रहण की थी। यह एक समय योगधारण करके कैलास पर्वत पर तप कर रहा था। इसके तप के प्रभाव से रावण का विमान रुक गया था, जिससे कुपित होकर रावण ने पर्वत सहित इसे समुद्र मे फेंकने के लिए उठा लिया था किन्तु भरत के द्वारा बनवाये जिनमन्दिर नष्ट न हो इस भाव से इसने अपने पैर के अगूठे से पर्वत को दबा दिया जिससे रावण भी दबने लगा था। मन्दोदरी के निवेदन पर ही रावण बच सका था। जिनेन्द्र के चरणो को छोड अन्य किसी को नमस्कार न करने की प्रतिज्ञा के पालन से ही उसे ऐसी शक्ति प्राप्त हुई थी। रावण को दबाने के कार्य से बाद में यह दुखी हुआ। गुरु के समक्ष प्रायश्चित्त लेकर इसने इस दु ख को दूर किया। फिर तप से कर्मो की निर्जरा करके केवली हुआ तथा निर्वाण प्राप्त किया। पपु० ९ १-२०, ७८-१६१, ९ २१७-२२१ पूर्वभवो में यह मेघदत्त था, पश्चात् स्वर्ग गया और वहाँ से च्युत होकर सुप्रभ हुआ फिर इस पर्याय में आया। पपु० १०६ १८७-१९७ महापुराण के अनुसार बाली का जीवन वृत्त इस प्रकार है—यह विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में किलकिल नगर के राजा विद्याधर बलीन्द्र और उसकी रानी प्रियगुसुन्दरी का ज्येष्ठ पुत्र और सुग्रीव का अग्रज था। पिता के मरने पर यह तो किलकिल नगर का राजा हुआ और सुग्रीव युवराज। इसने सुग्रीव को राज्य से निकाल दिया और उसका राज्य-भाग अपने राज्य में मिला लिया। वनवास की अवधि में जब राम चित्रकूट वन मे थे इसने दूत के द्वारा यह कहलाया कि यह सीता की खोज के लिए स्वय जा सकता है और रावण का मानभग करके लका से सीता को तत्काल ला सकता है। इसने यह भी कहलाया कि वे यह कार्य सुग्रीव और अणुमान् को न दें। राम ने दूत के कथन का मन्तव्य जानकर अपने मन्त्रियो के परामर्श से अपने दूत के द्वारा इसे यह सन्देश भेजा कि यह उन्हें अपना महामेघ हाथी समर्पित कर दे तब वे भी इसके साथ लका चलेंगे। इस सन्देश से इसने स्वय को अपमानित समझा और राम के दूत से कहा कि उन्हे महामेघ गज तो उससे युद्ध में विजय प्राप्त करने से ही मिल सकेगा। परिणामत लक्ष्मण के नेतृत्व में खदिर-वन में इससे राम का युद्ध हुआ जिसमें यह लक्ष्मण द्वारा मारा गया। मपु० ६८ २७१-२७५, ४४०-४६४

बालुकाप्रभा—तीसरी नरक भूमि। यह रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा के नीचे तथा घनोदधि वातवलय के ऊपर अधिष्ठित है। इसका अपर नाम मेघा है। यह अट्ठाईस हजार योजन मोटी, महान्धकार से युक्त और दुर्गन्धित है। यहाँ नारकियो का आक्रन्दन अति तीव्र है। मपु० १० ३१-३२, पपु० ७८ ६२, हपु० ४ ४३-४८

बाल्हीक—(१) कर्मभूमि के आरम्भ होते ही इन्द्र द्वारा निर्मित मध्य देश। इस देश के घोडे भी बाल्हीक कहलाते थे। मपु० १६.१४८-१५६, ३० १०७, हपु० ३ ४-७

(२) रानी जरा से उत्पन्न वसुदेव का पुत्र। जरत्कुमार इसका भाई था। हपु० ४८ ६३

बालेन्दु—विद्याधर दृढरथ के वशज पूर्णचन्द्र का पुत्र और चन्द्रचूड का पिता। पपु० ५ ४७-५६

बाहुबली—भगवान् वृषभदेव और उनकी सुनन्दा नामा द्वितीय रानी के पुत्र तथा सुन्दरी के भाई। सुन्दरता के कारण ये कामदेव कहलाते थे। चरमशरीरी थे और पोदनपुर राज्य के नरेश थे। महाबली और चन्द्रवश का सस्थापक सोमयश इसका पुत्र था। मपु० १६ ४-२५, १७ ७७, ३४ ६८, पपु० ५ १०-११, हपु० ९ २२ स्वाभिमानी होने के कारण इन्होने भरत की अधीनता स्वीकार न कर उन्हें जल, दृष्टि और बाहु युद्ध मे पराजित किया था। भरत ने कुपित होकर इन पर चक्र चलाया था, परन्तु चक्र निष्प्रभावी हुआ था। राज्य के कारण अपने भाई के इस व्यवहार को देखकर इन्हें राज्य से विरक्ति हुई। अपने पुत्र महाबली को राज्य सौपकर ये दीक्षित हो गये। इन्होने प्रतिमायोग धारण करके एक वर्ष तक निराहार रहकर उग्र तप किया। सर्पो ने चरणो में वामियाँ बना ली, केश बढ़कर कधो पर लटकने लगे और लताएँ इनके शरीर से लिपट गयी। तपश्चर्या के समाप्त होने पर भरत ने इनकी पूजा की और तभी इन्हें केवलज्ञान हो गया। इन्द्र आदि देव आये और इनकी उन्होने पूजा की। अन्त में विहार कर ये तीर्थंकर आदिनाथ के निकट कैलास पर्वत पर गये। वहाँ शेष कर्मो का क्षय करके इन्होने सिद्ध पद प्राप्त किया। अव-सर्पिणी काल के ये प्रथम मुक्ति प्राप्त-कर्त्ता हैं। मपु० ३६ ५१-२०३, पपु० ४ ७७, हपु० ११ ९८-१०२ इनको भवावलि इस प्रकार है—पूर्व में ये सेनापति थे, पश्चात् क्रमश भोग-भूमि में आर्य, प्रभकरदेव, अकम्पन, अहमिन्द्र, महाबाहु, पुन अहमिन्द्र और तत्पश्चात् बाहुबली हुए थे। मपु० ४७ ३६५-३६६

बाहुयुद्ध—हाथ मिलाकर और ताल ठोककर खडे होने के पश्चात् दो व्यक्तियो के बीच भुजाओ से होनेवाला युद्ध। भरत और बाहुबली का परस्पर ऐसा ही युद्ध हुआ था जिसमें बाहुबली विजयी हुए थे। मपु० ३६ ५७-५९

बाह्यतप—कायक्लेश के द्वारा किया जानेवाला तप। इस तप के छ भेद

है—अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिसख्यान, रसत्याग, काय-निग्रह और विविक्तशय्यासन। मपु० २० १७५-१८९

बाह्यपरिग्रहविरति—पंचम अपरिग्रह महाव्रत। यह धन, धान्य आदि दस प्रकार के परिग्रह के त्याग से होता है। हपु० २ १२१

बिम्बोष्ठ—विद्याधर दृढरथ का वंशज, मण्यास्य का पुत्र और लम्बिताधर का पिता। पपु० ५ ५१

बीजबुद्धि—(१) एक ऋद्धि। इसमें बीजों को स्पर्श किये बिना उन पर होकर चला जाता है। गौतम मुनि ने कठिन तपस्या से इस ऋद्धि को प्राप्त किया था। मपु० ११ ८०, हपु० १८ १०७

(२) आगम रूप बीज के धारक आचार्य गौतम। मपु० २ ६७

बीजसम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेदों में पाँचवाँ भेद, अपरनाम बीज-समुद्भव। इससे बीजपदों को ग्रहण करने और उनके सूक्ष्म अर्थ को सुनने से भव्यजीवों की तत्त्वार्थ में रुचि उत्पन्न होती है। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४४, वीवच० १९ १४७

बीजा—भरतक्षेत्र के मध्यदेश की एक नदी। भरतेश की सेना ने इसे पार किया था। मपु० २९ ५२

बुद्ध—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभ देव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५ १०८

बुद्धबोध्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

बुद्धवीर्य—तीर्थङ्कर पुष्पदन्त का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३०

बुद्धसन्मार्ग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

बुद्धार्थ—विहार करते हुए सिद्धार्थ वन में आगत एक मुनिराज। इनको आहार देकर अयोध्या के राजा रुद्र की रानी विनयश्री सद्गति को प्राप्त हुई। मपु० ७१ ४१७-४२८

बुद्धि—(१) एक दिक्कुमारी देवी। यह तीर्थंकर की माता के बोध गुण का विकास करती है। इन्द्र जिन-माता के गर्भ का सशोधन करने इसे ही भेजता है। इसके रहने के लिए सरोवरों में कमलों पर भवन बनाये जाते हैं। महापुण्डरीक नामक सरोवर इसका मूल निवास स्थान है। यह व्यन्तरेन्द्र की प्रियागना व्यन्तरी देवी है। मपु० १२ १६३-१६४, ६३ २००, हपु० ५ १३०, वीवच० ७ १०५-१०८

(२) विवेचिका शक्ति। यह स्वभावज और विनयज के भेद से दो प्रकार की होती है। मपु० ६८ ५९

बुद्धिकूट—रुक्मि-पर्वतस्थ आठ कूटों में पाँचवाँ कूट। हपु० ५ १०२-१०४

बुद्धिल—महावीर के मोक्ष जाने के पश्चात् एक सौ बासठ वर्ष का समय निकल जाने पर एक सौ तेरासी वर्ष में हुए दस पूर्व और ग्यारह अंग धारी ग्यारह मुनि-पुंगवों में नौवें मुनि। ये अन्तिम श्रुतकेवली भद्र-बाहु के पश्चात् हुए थे। इनका अपर नाम बुद्धिमान् था। मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२१-५२४, हपु० १ ६२-६३, वीवच० १ ४५-४७

बुद्धिषेण—राजा सत्यधर के पुरोहित सागर का पुत्र। जीवन्धर का अभिन्न साथी। मपु० ७५ २५६-२६०

बुद्धिषेणा—साकेतपुर निवासिनी एक गणिका। यह प्रीतिंकर मुनि की भक्त थी। इसका दूसरा नाम बुद्धिसेना था। मुनि विचित्रमति इस वेश्या की प्राप्ति के लिए मुनिपद त्यागकर राजा गन्धमित्र का रसोइया बन गया था। मपु० ५९ २५८-२६७, हपु० २७ ९७-१०४

बुद्धिसागर—(१) भरतेश का बुद्धिमान् पुरोहित। राज्य में जब कभी दैवी उत्पात होते थे तब उनका प्रतिकार यही करता था। यह भर-तेश के सजीव रत्नों में सातवाँ रत्न था। मपु० ३७ ८३-८४, १७५

(२) पुष्कलावती देश के वीतशोक नगर के राजा महापद्म का मन्त्री। मपु० ७६ १३०-१३२

(३) पोदनपुर के राजा श्रीविजय का मन्त्री। पापु० ४ ९६-९८, ११६

बुध—रावण का श्वसुर एक नृप। इसकी रानी मनोवेगा से उत्पन्न अशोकलता का विवाह गान्धर्व विधि से रावण के साथ हुआ था। यह मय का मन्त्री था और इसने दशानन की दक्षिणी-विजय की यात्रा में उसका साथ दिया था। यह राजा सीता के स्वयंवर में भी सम्मिलित हुआ था। पपु० ८ १०४-१०८, २६९-२७१, २८ २१५

बृषाण—एक देश। यहाँ का राजा लवणांकुश से पराजित हुआ था। पपु० १०१ ७९-८६

बृहत्कीर्ति—मेघवाहन के वंशज राजाओं में राक्षस का पुत्र। यह आदित्यगति का भाई था। इसकी पत्नी का नाम पुष्पनखा था। पपु० ५ ३७८-३८१

बृहद्गृह—विजयार्ध पर्वत पर स्थित दक्षिणश्रेणी का बाईसवाँ नगर। हपु० २२ ९५

बृहद्धन—कौशाम्बी नगर-निवासी एक वणिक्। इसकी पत्नी कुरुविन्दा थी और उससे उत्पन्न पुत्र अहिदेव और महीदेव थे। पपु० ५५ ६०-६१

बृहद्ध्वज—(१) राजा वसु का दसवाँ पुत्र। हपु० १७ ५९

(२) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३१

(३) कुरुवंश का एक राजा। यह सनत्कुमार के पश्चात् हुआ था। हपु० ४५ १७

बृहद्बलि—राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ४०

बृहद्रथ—(१) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८ ६९-७२

(२) राजगृह नगर का स्वामी और त्रिखण्डाधिपति जरासन्ध का पिता। यह राजा शतपति का पुत्र था और श्रीमती इसकी रानी थी। हपु० १८ २२, पापु० ७ १४७-१४८

बृहद्बृहस्पति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

बृहद्वसु—राजा वसु का प्रथम पुत्र। हपु० १७ ५८

बृहस्पति—(१) इन्द्र का प्रभावशाली मंत्री। पपु० ७ ३१

(२) उज्जयिनी के राजा श्रीधर्मा का द्वितीय मन्त्री। हपु० २० ४

(३) एक साधु (मुनि)। इनके कहने से ही सिंहदंष्ट्र ने अपनी पुत्री नीलयशा कुमार वसुदेव को दी थी। हपु० २३ ८

(४) मघाधिपति सेठ मेरुदत्त का विद्वान् और शास्त्रज्ञ मन्त्री। मपु० ४६ ११३

बेलाक्षेपी—राम का एक योद्धा। पपु० ५८ १५-१७

बोधचतुष्क—मति, श्रुत, अवधि और मन पर्यय ये चार ज्ञान। हपु० ५५ १२५

बोधि—रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र। मपु० ३९ ८५-८६, हपु० ३ १९०

बोधिदुर्लभ—रत्नत्रय-प्राप्ति की दुर्लभता का चिन्तन। यह बारह भावनाओं में ग्यारहवीं भावना है। इसमें मनुष्य भव, आर्यखण्ड में जन्म, उत्तम कुल, दीर्घायु की उपलब्धि, इन्द्रियों की पूर्णता, निर्मल बुद्धि, देव, शास्त्र-गुरु का समागम, दर्शन विशुद्धि, निर्मलज्ञान, चारित्र, तप और समाधिमरण इनकी उत्तरोत्तर दुर्लभता का चिन्तन किया जाता है। मपु० ११ १०८-१०९, पपु० १४ २३९ पापु० २५ १११-११६, वीवच० ११ ११३-१२१

ब्रध्नमंडल—सूर्य मंडल। मपु० १८ १७८, हपु० २ १४५

ब्रह्म—(१) ब्रह्मलोक के चार इन्द्रक विमानों में तीसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४९

(२) पाँचवाँ कल्प (स्वर्ग)। यह लौकान्तिक देवों की आवासभूमि है। नवें चक्री महापद्म और ग्यारहवें चक्री जयसेन इसी स्वर्ग से च्युत होकर चक्री हुए थे। सातवें, आठवें बलभद्र पूर्वभव में इसी स्वर्ग में थे। मरीचि इसी स्वर्ग में देव हुआ था। ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर इन दोनों स्वर्गों का यह एक पटल है। इसके चार इन्द्रक विमान हैं—अरिष्ट, देवसगीत, ब्रह्म और ब्रह्मोत्तर। मपु० १७ ४७, पपु० २० १७८-१७९, १८८-१८९, २३६, हपु० ६ ३६,४९, वीवच० २.९७-१०५

(३) भरतक्षेत्र की द्वारावती नगरी का राजा। सुभद्रा इसकी पहली रानी थी और अचलस्तोक इसका पुत्र था। यह बलभद्र था। इसकी दूसरी रानी उषा थी। नारायण द्विपृष्ठ इसका पुत्र था। मपु० ५८ ८३-८४

ब्रह्मचर्य—अहिंसा आदि पाँच महाव्रतों में एक महाव्रत। इसमें मन, वचन, काय से स्त्रियों को माता के समान माना जाता है। यह ग्यारह प्रतिमाओं में सातवीं प्रतिमा है। इसमें स्त्री मात्र के संसर्ग का त्याग होता है। यह उत्तम क्षमा आदि दस धर्मों में दसवाँ धर्म है। मपु० १० १६०, ३६ १५८, पापु० २३ ६७, वीवच० १८ ६४, २३ ६४-६८ ऐसा महाव्रती देव, मनुष्य, पशु तथा कृत्रिम स्त्रियों (चित्र आदि) से पूर्ण विरक्त रहता है। इस महाव्रत के पालन के लिए स्त्रीरागकथा श्रवण, स्त्री-मनोहराग निरीक्षण, स्त्रीपूर्वरतानुस्मरण, स्वशरीरसंस्कार और कामोद्दीपक गरिष्ठ-रस-त्याग ये पाँच भावनाएँ होती है। इसके पाँच अतिचार होते हैं—१ परविवाहकरण २ अनंगक्रीडा ३ गृहीतेत्वरिकागमन ४. अगृहीतेत्वरिकागमन और ५ कामतीव्राभिनिवेश। मपु० २० १६४, हपु० ५८ १२१, १७४, पापु० ९ ८६ अपने ब्रह्म में (आत्मा) में विचरण करना स्वभावज ब्रह्मचर्य है। परस्त्रियों में राग-भाव का परित्याग कर स्वस्त्रियों में ही सन्तोष करना ब्रह्मचर्याणुव्रत है। इससे अहिंसा आदि गुणों की वृद्धि होती है। इसका अपरनाम स्वदारसन्तोषव्रत है। हपु० ५८ १३२, १४१, १७५, पापु० २३ ६७

ब्रह्मचारी—मन, वचन, काय, कृत-कारित-अनुमोदना से स्त्री मात्र का त्यागी। (दे० ब्रह्मचर्य) यह श्वेत वस्त्र धारण करता है। अन्य वेष और विकारों से रहित रहकर व्रतचिह्न स्वरूप यज्ञोपवीत धारण करता है। उपनीति क्रिया के समय बालक भी ब्रह्मचारी होता है। मपु० ३८ ३९, ९४, ९५, १०४-१२०

ब्रह्मतत्त्वज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०

ब्रह्मदत्त—(१) वेदों का ज्ञाता-गिरितट नगर का वासी एक उपाध्याय। कुमार वसुदेव इसी उपाध्याय के निकट अध्ययनार्थ आये थे। हपु० २३ ३३

(२) साकेत नगर का राजा। इसने तीर्थंकर अजितनाथ को दीक्षा के पश्चात् किये हुए षष्ठोपवास के अनन्तर आहार दिया था। पपु० ५ ६३-७०

(३) अवसर्पिणीकाल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एवं बारहवाँ चक्रवर्ती। तीर्थंकर नेमिनाथ और पार्श्वनाथ के अन्तराल में यह काम्पिल्य नगर के राजा ब्रह्मरथ और उसकी चूडादेवी नामा रानी के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था। इसकी शारीरिक ऊँचाई सात धनुष तथा आयु सात सौ वर्ष थी। इसने अट्ठाईस वर्ष कुमारावस्था में, छप्पन वर्ष मण्डली अवस्था में, सोलह वर्ष दिग्विजय में और छः सौ वर्ष राज्यावस्था में बिताये थे। यह संयम धारण नहीं कर सका था। मपु० ७२ २८७-२८८, हपु० ६० २८७, ५१४-५१६ वीवच० १८.१०१-११० पूर्वभव में यह काशी नगरी में सम्भूत नामक राजा था। मरने के बाद यह कमलगुल्म नामक विमान में देव हुआ और वहाँ से च्युत होकर चक्रवर्ती हुआ। लक्ष्मी से विरक्त न हो सकने से मरकर सातवें नरक गया। पपु० २० १९१-१९३

ब्रह्मनिष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

ब्रह्मपदेश्वर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४५

ब्रह्मभूति—द्वापुरी का राजा। यह द्वितीय नारायण द्विपृष्ठ का पिता था। माधवी इसकी रानी थी। पपु० २० २२१-२२६

ब्रह्मयोनि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

ब्रह्मरथ—(१) काम्पिल्य नगर का राजा। यह बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त का पिता था। पपु० २० १९१-१९२

(२) इक्ष्वाकुवंशी राजा। यह सिंहरथ का पुत्र और चतुर्मुख का पिता था। पपु० २२ १५४

ब्रह्मरुचि—एक वैदिक ब्राह्मण। इसने एक मुनि के उपदेश से अपना पूर्व मत त्यागकर दिगम्बर दीक्षा धारण कर ली थी। इसकी पत्नी कूर्मी से नारद उत्पन्न हुआ था। पपु० ११.११७-१४४

ब्रह्मलोक—पाँचवाँ स्वर्ग। यह सारस्वत आदि देवो की निवासभूमि है। मपु० ४८ ३४

ब्रह्मवित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०७

ब्रह्मविद्-ध्येय—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४५

ब्रह्मशिरस्—अश्वग्रीव नामक शस्त्र को रोकने में समर्थ शस्त्र। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में कृष्ण ने इसका उपयोग किया था। मपु० ५२ ५५

ब्रह्मसंभव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

ब्रह्मसुत—सर्वज्ञ-कथित समस्त विद्याओं के ज्ञाता होने से गौतम गणधर के लिए व्यवहृत नाम। मपु० २ ६३

ब्रह्मसूत्र—स्कन्ध भाग से घुटनो तक प्रलम्बित सूत्र। यह एक से लेकर ग्यारह सूत्रों का होता है। इसे यज्ञोपवीत कहते हैं। व्रती इसी से पहचाने जाते हैं। ब्रह्मचारी सप्त परम स्थानो के सूचक सात धागो से निर्मित यज्ञोपवीत धारण करते हैं। मपु० ३ २७, १५ १९८, ३९ ७३, ३८ २१-२३, १०६, ११२

ब्रह्महृदय—ब्रह्म स्वर्ग का (लान्तव युगल का) इस नाम का प्रथम इन्द्रक विमान। विद्युन्माली इसी में जन्म लेकर ब्रह्म स्वर्ग का इन्द्र हुआ था। मपु० ७६ ३२, हपु० ६ ५०

ब्रह्मा—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २ ९७, २४ ३०, २५ १०५

(२) अयोध्या का एक राजा। तीर्थंकर अजितनाथ को उनकी दीक्षा के पश्चात् इसने प्रथम आहार दिया था। मपु० ४८ ४१

(३) बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त का पिता और चूडादेवी का पति। मपु० ७२ २८७-२८८ अपरनाम ब्रह्मरथ। दे० ब्रह्मरथ

(४) पञ्चाग्नि-तप तपनेवाले तापस वसिष्ठ का पिता। हपु० ३३ ६९

ब्रह्मात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

ब्रह्मेन्द्र—ब्रह्म स्वर्ग का इन्द्र। यह केवलज्ञान प्राप्त होने पर तीर्थंकर वर्द्धमान की पूजा के लिए गया था। मपु० ७ ५७, ६३.२४९ वीवच० १४ ४४

ब्रह्मेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

ब्रह्मोत्तर—(१) ब्रह्म स्वर्ग का चतुर्थ पटल एव इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४९

(२) छठा कल्प (स्वर्ग)। इस कल्प में एक लाख चार हजार विमान हैं। चौरानवें श्रेणीबद्ध विमान हैं। पूर्वभव में दशरथ के पुत्र भरत इसी स्वर्ग में थे। पपु० ८३ १०५, १२८-१२९, १६६-१६८, हपु० ६ ३६, ५६, ७०

ब्रह्मोद्यावित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०७

ब्राह्मण—भरतेश द्वारा स्थापित वर्ण। ये जन्म से ब्राह्मण न होकर गुण और कर्म से ब्राह्मण होते हैं। ये सुसंस्कृत और व्रती होते हैं। पूजा, वार्ता, दान, स्वाध्याय, सयम और तप ये छ विशुद्धियाँ करते हैं। ये मुक्तिमार्ग पर चलते हैं। द्विजो मे ये मूर्धन्य होते हैं। मपु० ३८ ७-४३, पपु० १०९ ८०-८४, दे० द्विज

ब्राह्मी—(१) तीर्थंकर वृषभदेव और रानी यशस्वती की पुत्री। यह शील और विनय से युक्त थी। इसने अपने पिता से सर्वप्रथम लिपि-विद्या सीखी थी। यह भरत की छोटी बहिन थी। तीर्थंकर वृषभदेव की दो रानियाँ थी। पहली रानी यशस्वती मे यह और भरत आदि सौ पुत्र तथा दूसरी रानी सुनन्दा से सुन्दरी और बाहुबली हुए। इसने अपने पिता से दीक्षित होकर आर्यिकाओ मे गणिनी पद प्राप्त किया था। देवो ने भी इसकी पूजा की थी। सुन्दरी भी इसके साथ दीक्षित हो गयी थी। सुलोचना ने इसी से दीक्षा ली थी। मपु० १६ ४-७, ९६-१०८, २४ १७५, ४७ २९८, पपु० २४ १७७, हपु० ९ २१

(२) वाराणसी नगरी के राजा विश्वसेन की रानी। यह तीर्थंकर पार्श्वनाथ की जननी थी। मपु० ७३ ७४-९२

भ

भग—(१) भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा त्यक्त देशो में भरत-क्षेत्र के मध्य का एक देश। हपु० ११ ७५

(२) राम का एक योद्धा। युद्ध के समय इसने गजरथ और अश्वरथ दोनो का प्रयोग किया था। पपु० ५८ ८, १३

भक्ति—दानदाता के श्रद्धा, शक्ति, भक्ति, विज्ञान, अलुब्धता, क्षमा और त्याग इन सात गुणो में तीसरा गुण। इसमें पात्र के गुणो के प्रति श्रद्धा का भाव रहता है। मपु० २० ८२-८३

भक्ष्य—खाद्य पदार्थों के पाँच भेदो—(भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और चूष्य) में प्रथम भेद। ये पदार्थ स्वाद के लिए खाये जाते हैं। कृत्रिम और अकृत्रिम के भेद से ये दो प्रकार के होते हैं। पपु० २४ ५३

भगदत्त—(१) राजा जरासन्ध के पक्ष का एक नृप। यह जरासन्ध के साथ कृष्ण से युद्ध करने समरभूमि में गया था। मपु० ७१ ८०

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध देश के वृद्धग्राम का निवासी वैश्य राष्ट्रकूट और उसकी पत्नी रेवती का ज्येष्ठ पुत्र तथा भवदेव का अग्रज। इसने मुनिराज सुस्थित से दीक्षा ले ली थी। इसका छोटा भाई भवदत्त भी मुनि हो गया था। अन्त में यह मरकर माहेन्द्र स्वर्ग के बलभद्र विमान में सात सागर की आयु का धारी सामानिक देव हुआ। मपु० ७६ १५२-१५४, १९८-२००

भगदत्तक—कृष्ण का पक्षधर एक समरथ राजा। यह समुद्रविजय और वसुदेव के समान शक्तिशाली था। हपु० ५० ८२

भगलि—(१) आगामी सत्रहवें तीर्थङ्कर चित्रगुप्त के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६ ४७४, ४७९

(२) भरतक्षेत्र का एक देश। राजा भागीरथ की माँ विदर्भा इसी देश के राजा सिंहविक्रम की पुत्री थी। मपु० ४८ १२७

भगली—भरतक्षेत्र का अश्वोत्पादन के लिए प्रसिद्ध एक देश। हपु० ६० २०

भगवती—(१) बहुरूपविधायिनी एक विद्या। युद्ध में रावण का एक अग कटने पर इसी विद्या के प्रभाव से उसके दो नये अग उत्पन्न हो जाते थे। पपु० ७५ २२-२५

(२) लक्ष्मण की आठ महादेवियो मे सातवी महादेवी। यह सत्य-कीर्ति की जननी थी। पपु० ९४ १८-२३, ३४

भगवान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

भगीरथ—(१) एक विद्याधर। निमित्तज्ञ ने राजा जरासन्ध की पुत्री केतुमती की पिशाच-बाधा दूर करनेवाले को राजगृह के राजा का घात करनेवाले का पिता बताया था। दैवयोग से वसुदेव ने केतुमती के पिशाच का निग्रह कर केतुमती को स्वस्थ किया। निमित्तज्ञ के कथनानुसार इस घटना को देखनेवाले राजपुरुष वसुदेव को अपने राजा का हन्ता जानकर उसे मारने वधस्थान ले गये किन्तु इस विद्याधर ने वध होने के पहले ही वसुदेव को उनसे छीन लिया तथा उसे लेकर वह आकाश मे चला गया था। अन्त में वसुदेव को इसने विजयार्ध पर्वत के गन्धसमृद्ध नगर मे ले जाकर उसको अपनी दुहिता प्रभावती विवाह दी थी। हपु० ३० ४५-५५

(२) भगलि देश के राजा सिंहविक्रम की पुत्री विदर्भा और चक्रवर्ती सगर का पुत्र। नागेन्द्र की क्रोधाग्नि से इसके अन्य भाई तो भस्म हो गये थे किन्तु भीम और यह वहाँ न रहने से दोनो बच गये थे। सगर इसे राज्य देकर दृढ़वर्मा केवली से दीक्षित हो गया था। इसने भी वरदत्त को राज्य देकर कैलास पर्वत पर महामुनि शिवगुप्त से दीक्षा ले ली थी और गगातट पर प्रतिमा योग धारण कर लिया था। अन्त में देह त्यागकर इसने निर्वाण प्राप्त किया। इन्द्र ने क्षीरसागर के जल से इसका अभिषेक किया था। अभिषेक का जल गगा में जाकर मिल जाने से गगा नदी तीर्थ मानी जाने लगी। मपु० ४८ १२७-१२८, १३८-१४१, पपु० ५ २५२-२५३

भट्टारक—स्वामी अर्थ में व्यवहृत शब्द। मपु० २० ११, ६८ ३९८

भदन्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

भद्र—(१) सूर्यवश में हुए राजा सागर का पुत्र और राजा रवितेज का पिता। इसने सार सागर से भयभीत होकर निर्ग्रन्थ व्रत ले लिया था। पपु० ५ ६, ९

(२) सौधर्म और ऐशान युगल स्वर्गों का इक्कीसवाँ इन्द्रक। हपु० ६ ४६, दे० सौधर्म

(३) नन्दीश्वर समुद्र के दो रक्षक देवो में प्रथम रक्षक देव। हपु० ५ ६४५

(४) भरतेश के भाइयो द्वारा त्यक्त देशो में भरतक्षेत्र के मध्य का एक देश। हपु० ११ ७५

(५) राजा शख का पुत्र और चेदिराट् के सस्थापक तथा शुक्तिमती नगरी के निर्माता अभिचन्द्र का पिता। हपु० १७ ३५-३६

(६) तीसरे बलभद्र। ये अनुत्तर विमान से चयकर सुवेषा स्त्री के गर्भ से उत्पन्न हुए थे। आयु के अन्त में ये ससार से उदासीन हुए और तप से कर्मों को भस्म करके मोक्ष गये। पपु० २० २३६-२३८, २४८

(७) द्वारावती नगरी का नृप। इसकी दो रानियाँ थी—सुभद्रा और पृथिवी। बलभद्र धर्म और नारायण स्वयभू इसी के पुत्र थे। मपु० ५९.७१, ८६-८७

(८) जम्बूद्वीप में ऐरावत क्षेत्र के रत्नपुर नगर का एक गाडीवान। यह धन्य गाडीवान का अग्रज था। किसी बैल के निमित्त से ये दोनो एक-दूसरे का घात कर मर गये थे। मपु० ६३ १५७-१५८

(९) कुलकर सन्मति के समयवर्ती सरल परिणामी आर्य पुरुष। मपु० ३ ८३, ९३

(१०) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

भद्रक—(१) सुषमा-सुषमा काल के कोमल परिणामी पुरुष। मपु० ३ ४३, ७१

(२) श्रावस्ती का एक शुभ परिणामी भैंसा। इसे यह नाम श्रावस्ती नगरी के एक सेठ कामदत्त से मिला था। यहाँ के राजकुमार मृगध्वज के द्वारा पूर्वजन्म के वैरवश इसका एक पैर काट दिये जाने से यह अठारहवें दिन मर गया था। हपु० २८ १४-२८

भद्रकलश—राम का कोषाध्यक्ष। वनवास से पूर्व सीता ने इसे बुलाकर प्रसूति पर्यन्त प्रतिदिन किमिच्छक दान देने का आदेश दिया था। पपु० ९६ १८

भद्रकार—भरतक्षेत्र का एक देश। वृषभदेव और महावीर ने यहाँ विहार किया था। हपु० ३ ३

भद्रकाली—सोलह निकाय विद्याओ मे विद्याधरो की एक विद्या। हपु० २२ ६६

भद्रकूट—रुचकवरगिरि के पश्चिमी आठ कूटो में आठवाँ कूट। यहाँ भद्रिका देवी रहती है। हपु० ५.७१४

भद्रकृत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

भद्रक्षीर—बलभद्र नन्दिमित्र और नारायण दत्त का गन्ध गज। इसी हाथी के कारण प्रतिनारायण विद्याधर बलीन्द्र इनके द्वारा मारा गया था। मपु० ६६ १०६-१२०

भद्रपुर—एक नगर। यह जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के मलय देश में स्थित था। तीर्थङ्कर शीतलनाथ का जन्म इसी नगर में राजा दृढरथ के यहाँ हुआ था। मपु० ५६ २३-२४, २९ हपु० १७ ३०

भद्रबल—(१) वृषभदेव के उन्तीसवें गणधर। हपु० १२ ६९

(२) सीता के स्वयवर में सम्मिलित एक नृप। पपु० २८ २१५

भद्रबाहु—(१) अन्तिम केवली जम्बूस्वामी के पश्चात् हुए पाँच श्रुत-केवलियो में पाँचवें श्रुतकेवली। इनके पूर्व क्रमश. विष्णु, नन्दिमित्र, अपराजित और गोवर्धन ये चार श्रुतकेवली हुए। ये महाभद्र, महाबाहु और महातपस्वी थे। इन्होंने सम्पूर्ण श्रुत का ज्ञान प्राप्त किया था। मपु० २ १४१-१४२, ७६ ५२०, हपु० १ ६०-६१, पापु० १ १२

(२) एक मुनि। जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन की रानी रामदत्ता के पिता ने इन्हीं से दीक्षा ली थी। मपु० ५९ १४६, २११

(३) एक आचार्य। ये त्रिकालकीर्ति के धारी तथा प्रथम अंग के पारगामी थे। ये यशोभद्र के शिष्य तथा लोहाचार्य के गुरु थे। इनका अपर नाम यशोबाहु था। मपु० २ १४९, ७६ ५२५-५२६

भद्रमित्र—सिंहपुर के राजकुमार सिंहचन्द्र का जीव। यह पद्मखण्डपुर नगर के सेठ सुदत्त और उसकी स्त्री सुमित्रा का पुत्र था। यह एक बार सिंहपुर के राजा सिंहसेन के मंत्री श्रीभूति के पास कुछ रत्न धरोहर के रूप में रखकर अपने नगर लौट गया था। अपने नगर से आकर इसने श्रीभूति से अपने रत्न माँगे थे किन्तु वह रत्न देने से मुकर गया था। यह अपने रत्नों के लिए रोने-चिल्लाने लगा। राजा सिंहसेन की रानी रामदत्ता ने इसके रुदन का कारण जानकर राजा की आज्ञा ली और श्रीभूति के साथ जुआ खेला। जुए में रानी ने श्रीभूति को पराजित किया और श्रीभूति के घर से इसके रत्न मँगवा लिये। राजा ने अन्य रत्नों में इसके रत्न मिलाकर इसे अपने रत्न लेने के लिए कहा। इसने रत्नों के ढेर से अपने रत्न चुनकर ले लिये। इसकी सत्य दृढ़ता और निर्लोभवृत्ति से प्रसन्न होकर राजा ने इसे मंत्री पद देकर इसका 'सत्यघोष' नाम रखा। एक बार इसने मुनि वरधर्म से धर्म का स्वरूप सुनकर बहुत धन दान में दिया, जिससे इसकी माँ सुमित्रा अत्यन्त क्रुद्ध हुई। वह क्रोधपूर्वक मरकर व्याघ्री हुई। पूर्व वैर के कारण इस व्याघ्री ने इसे मार डाला। यह मरकर रानी रामदत्ता का सिंहचन्द्र नामक पुत्र हुआ। मपु० ५९ १४८-१९२

भद्रमुख—भरतेश का स्थपति रत्न। यह वास्तुकला का ज्ञाता था। मपु० ३७ १७७

भद्रवती—श्रावस्ती नगरी के राजा सुमित्र की रानी और तीसरे चक्रवर्ती मघवा की जननी। पपु० २० १३२

भद्रबाण—तीर्थङ्कर महावीर के निर्वाणोपरान्त हुए कतिपय शासकों में एक शासक। हपु० ६० ४९१

भद्रशाल—मेरु पर्वत का एक वन। मेरु पर्वत के चारों ओर स्थित यह वन तीन कोट और ध्वजाओं से भूषित चार चैत्यालयों से शोभायमान है। यह मेरु की पूर्व-पश्चिम दिशा में नाना प्रकार के वृक्षों और लताओं से व्याप्त है। इसकी पूर्व-पश्चिम भाग की लम्बाई बाईस हज़ार योजन और दक्षिण-उत्तर भाग की चौड़ाई ढाई सौ योजन है। पूर्व-पश्चिम भाग में एक वेदिका है जो एक योजन ऊँची, एक कोस गहरी और दो कोस चौड़ी है। मपु० ५ १८२, पपु० ६ १३५, हपु० ५ २०९, २३६-२३८, वीवच० ८.१०९

भद्रा—(१) विद्याधर विनमि की पुत्री। यह भरत चक्रवर्ती की रानी सुभद्रा की बड़ी बहिन थी। हपु० २२ १०६

(२) समवसरण की चार वापियों में दूसरी वापी। इसका जल समस्त रोगों को हरनेवाला है। इसमें देखनेवाले जीवों को अपने आगे-पीछे के सात भव दीखते हैं। हपु० ५७ ७३-७४

(३) राजा अन्धकवृष्टि की महारानी। इसके समुद्रविजय आदि दस पुत्र थे। पपु० ७ १३२-१३४

(४) रावण की एक रानी। पपु० ७७ १३

(५) दशरथ की पुत्र-वधू। पपु० ८३ ९४

(६) साकेत नगरी के राजा सुमित्र की रानी। यह चक्रवर्ती मघवा की जननी थी। मपु० ६१ ९१-९३

(७) वत्स देश में कौशाम्बी नगर के सेठ वृषभसेन की स्त्री। इसने चन्दना को अनेक प्रकार से सताया था। मपु० ७५ ५२-५८, ६६

(८) पोदनपुर के राजा प्रजापति की दूसरी रानी। यह बलभद्र विजय की जननी थी। मपु० ६२ ९१-९२

भद्राचार्य—शोभपुर नगर के एक प्रभावक दिगम्बर मुनि। एक स्त्री ने इनसे अणुव्रत धारण किये थे तथा मरकर वह देवी हुई थी। पपु० ८० १८९

भद्राम्भोजा—प्रथम बलभद्र अचल की जननी। पपु० २० २३८

भद्रावलि—तीर्थंकर वृषभदेव के छिहत्तरवें गणधर। हपु० १२ ६८

भद्राश्व—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का चवालीसवाँ नगर। मपु० १९ ८४, ८७

भद्रासन—एक दिव्य आसन। सिन्धु देवी ने यह आसन भरतेश को दिया था। मपु० ३२ ८३

भद्रिका—रुचकवरगिरि के भद्रकूट पर रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७१४

भद्रिलपुर—मलय देश का एक नगर। वसुदेव ने इस नगर के राजा पौण्ड्र की पुत्री चारुहासिनी को विवाहा था। तीर्थंकर शीतलनाथ की यह जन्मभूमि और तीर्थंकर नेमिनाथ की विहार भूमि थी। मपु० ५६ २४, ६४, ७१ ३०३, हपु० २४ ३१-३२, ५९ ११२-११४

भद्रिलसा—भरतक्षेत्र की एक नगरी। धाय रेवती इसी नगरी के सुदृष्टि सेठ की स्त्री थी। हपु० ३३ १६७

भम्भा—राम के समय का एक मंगल-वाद्य। पपु० ५८ २७, ८२ २९

भयंकर—एक पल्ली। यहाँ भील निवास करते हैं। भील कालक ने चन्दना को इसी पल्ली के राजा सिंह को सौंपा था। मपु० ७५ ४८

भय—(१) भीति। यह सात प्रकार का होता है—इहलोक-भय, परलोक भय, अरक्षा-भय, अगुप्ति-भय, मरण भय, वेदना-भय और आकस्मिक भय। मपु० ३४ १७६

(२) आहार, भय, मैथुन और परिग्रह इन चार संज्ञाओं में एक संज्ञा। मपु० ३६ १३१

भयत्याग—सत्यव्रत की पाँच भावनाओं में एक भावना-भीतित्याग। मपु० २० १६२, दे० सत्य महाव्रत

भयसभूति—राजा दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३०

भयानक—रावण का एक योद्धा। पपु० ५७ ५७-५८

भर—एक विद्याधर। यह राम का शार्दूलरथवाही एक योद्धा था। पपु० ५८ ५

भरक्षम—लंका द्वीप में स्थित एक देश। यहाँ देव भी उपद्रव नहीं कर सकते थे। पपु० ६.६६

भरत—(१) भरतेश-वर्तमान प्रथम चक्रवर्ती एवं शलाका-पुरुष। ये अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न हुए थे। अयोध्या के राजा वृषभदेव इनके पिता और रानी नन्दा इनकी माता थी। ब्राह्मणी इन्हीं के साथ युगल रूप से उत्पन्न हुई थी। इनके अठानबे भाई थे। सभी चरमशरीरी थे। इन्हें पिता से राज्य मिला था। चक्ररत्न, पुत्ररत्न, वृषभदेव को केवलज्ञान की प्राप्ति ये तीन सुखद समाचार इन्हें एक साथ ही प्राप्त हुए थे। इनमें सर्वप्रथम इन्होंने वृषभदेव के केवलज्ञान की उनके एक सौ आठ नामों द्वारा स्तुति की थी। इनकी छः प्रकार की सेना थी—हस्तिसेना, अश्वसेना, रथसेना, पदातिसेना, देवसेना और विद्याधर-सेना। इस सेना के आगे दण्डरत्न और पीछे चक्ररत्न चलता था। विद्याधर नमि की बहिन सुभद्रा को विवाहने के बाद इन्होंने पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशा के देवों तथा राजाओं को जीतकर उत्तर की ओर प्रयाण किया था तथा उत्तर भारत पर विजय की थी। इस प्रकार साठ हजार वर्ष में छः खण्ड युक्त भरतक्षेत्र को जीतकर ये अयोध्या लौटे थे। दिग्विजय के पश्चात् सुदर्शन चक्र के अयोध्या में प्रवेश न करने पर बुद्धिसागर मंत्री से इसका कारण-भाइयों द्वारा आधीनता स्वीकार न किया जाना" ज्ञात कर इन्होंने उनके पास दूत भेजे थे। बोधि प्राप्त होने से बाहुबली को छोड़ शेष भाइयों ने इनकी अधीनता स्वीकार न करके अपने पिता वृषभदेव से दीक्षा ले ली थी। बाहुबली ने इनके साथ दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध किये तथा तीनों में इन्हें हराया था। इन्होंने बाहुबली पर सुदर्शन चक्र भी चलाया था किन्तु इससे भी वे बाहुबली को पराजित नहीं कर सके। अन्त में राज्यलक्ष्मी को हेय जान उसे त्याग करके बाहुबली कैलास पर्वत पर तप करने लगे थे। बाहुबली के ऐसा करने से इन्हें सम्पूर्ण पृथिवी का राज्य प्राप्त हो गया था। इन्होंने ब्राह्मण वर्ण की स्थापना की थी। चक्र, छत्र, खड्ग, दण्ड, काकिणी, मणि, चर्म, सेनापति, गृहपति, हस्ति, अश्व, पुरोहित, स्थपति और स्त्री इनके ये चौदह रत्न, आठ सिद्धियाँ तथा काल, महाकाल, पाण्डुक माणव, नैसर्प, सर्वरत्न, शंख, पद्म और पिंगल ये नौ इनकी निधियाँ थी। बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा और इतने ही देश इनके आधीन थे। इन्हें छियानवें हजार रानियाँ, एक करोड़ हल, तीन करोड़ कामधेनु-गायें, अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी लाख हाथी और इतने ही रथ, अर्ककीर्ति और विवर्धन को आदि लेकर पाँच सौ चरम शरीरी तथा आज्ञाकारी पुत्र, भाजन, भोजन, शय्या, सेना, वाहन, आसन, निधि, रत्न, नगर और नाट्य ये दस प्रकार के भोग उपलब्ध थे। अवतंसिका माला, सूर्यप्रभ छत्र, सिंहवाहिनी शय्या, देवरम्या चाँदनी, अनुत्तर सिंहासन, अनुपमान चमर, चिन्तामणि रत्न, दिव्य रत्न, वीरांगद कड़े, विद्युत्प्रभ कुण्डल, विषमोचिका खड़ाऊँ, अभेद्य कवच, अजितंजयरथ, वज्रकाण्ड धनुष, अमोघ बाण, वज्रतुण्डा शक्ति आदि विभूतियों से ये सुशोभित थे। सोलह हजार गणबद्ध देव सदा इनकी सेवा करते थे। इनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिह्न था। ये चौंसठ लक्षणों से युक्त समचतुरस्रसंस्थानमय देह से सम्पन्न थे। बहत्तर हजार नगर, छियानवें करोड़ गाँव, निन्यानवें हजार द्रोणमुख, अड़तालीस हजार पत्तन, सोलह हजार खेट, छप्पन अन्तर्द्वीप, चौदह हजार संवाह इनके राज्य में थे। इनके विवर्द्धन आदि नौ सौ तेईस राजकुमारों ने वृषभदेव के समवसरण में संयम धारण किया था। इनके साम्राज्य में ही सर्वप्रथम स्वयंवर प्रथा का शुभारम्भ हुआ था। चिरकाल तक लक्ष्मी का उपभोग करने के पश्चात् अर्ककीर्ति को राज्य सौंप करके इन्होंने जिन-दीक्षा ले ली थी। केशलोंच करते ही इन्हें केवलज्ञान हो गया था। इन्द्रों द्वारा इनके केवलज्ञान की पूजा किये जाने के पश्चात् इन्होंने बहुत काल तक विहार किया। आयु के अन्त समय में वृषभसेन आदि गणधरों के साथ कैलास पर्वत पर कर्मों का क्षय करके इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। इनकी आयु चौरासी लाख पूर्व की थी। इसमें इनका सतहत्तर लाख पूर्व समय कुमारकाल में, छः लाख पूर्व समय साम्राज्य में और एक लाख पूर्व समय मुनि अवस्था में व्यतीत हुआ था। इस प्रकार चौरासी लाख पूर्व आयु काल में ये सतहत्तर लाख पूर्व काल तो कुमारावस्था में तथा एक हजार वर्ष मण्डलेश्वर अवस्था में, साठ हजार वर्ष दिग्विजय में, एक पूर्व कम छः लाख पूर्व चक्रवर्ती होकर राज्य शासन में, तथा एक लाख पूर्व तेरासी लाख निन्यानवें हजार नौ सौ निन्यानवें पूर्वांग और तेरासी लाख नौ हजार तीस वर्ष संयमी और केवली अवस्था में रहे। ये वृषभदेव के मुख्य श्रोता थे। ये आठवें पूर्वभव में वत्सकावती देश के अतिगृध्र नामक नृप, सातवें में चौथे नरक के नारकी, छठे पूर्वभव में व्याघ्र, पाँचवें में दिवाकरप्रभ देव, चौथे में मतिसागर मंत्री, तीसरे में अहमिन्द्र, दूसरे में सुबाहु राजपुत्र और प्रथम पूर्वभव में सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र थे। कैलास पर्वत पर इन्होंने महारत्नों से चौबीसों अर्हन्तों के मन्दिरों का निर्माण कराया था। कैलास पर्वत पर ही पाँच सौ धनुष ऊँची एक वृषभदेव की प्रतिमा भी इन्होंने स्थापित करायी थी। भरतक्षेत्र का 'भारत' यह नामकरण इन्हीं के नाम पर हुआ था। मपु० ३.२१३, २३२, ८.१९१-१९४, २१०, २१५, ९.९०-९३, ११.१२, १६०, १५.१५९, २१०, १६.१-४, १७.७६, २४.२-३, ३०-४६, २९.६-७, ३०.३, ३२.१९८, ३३.२०२, ३६.४१, ५१-६१, ३७.२३-३६, ५३, ६०-६६, ७३-७४, ८३, १४५, १५३, १६४, १८१-१८५, ३८.१९३, ४६.३९३-३९५, ४७.३९८, ४८.१०७, ७६.५२९, पपु० ४.५९-७८, ८३-८४, १०१-११२, ५.१९५, २००-२२२, २०.१२४-१२६, ९८.६३-६५, हपु० ९.२१-२३, ९५, २१३, ११.१-३१, ५६-६२, ८१, ९२, ९८, १०३, १०७-११३, १२६-१३५, १२.३-५, ८, १३.१-६, ६०.२८६, ४९४-४९७, वीवच० १८.८७, १०९, १८१

(२) अयोध्या के राजा दशरथ और इनकी रानी केकया का पुत्र। इसका विवाह जनक के भाई कनक की पुत्री लोकसुन्दरी के साथ

हुआ था। केकया के निवेदन पर दशरथ ने इसे राज्य देकर राज्य करने के लिए प्रेरित किया था। यह पिता के समान प्रजा का पालन करता था। राज्य में इसकी आसक्ति नही थी। यह तीनो काल अरनाथ तीर्थंकर की वन्दना करता तथा भोगो से उदास रहता था। इसने राम के दर्शन मात्र से मुनि-दीक्षा धारण करने की प्रतिज्ञा की थी। इसकी डेढ़ सौ रानियाँ थी परन्तु वे इसे विषयाधीन नही कर सकी थी। राम के वनवास से लौटने पर केवली देशभूषण से इसने परिग्रह त्याग करके पर्यंकासन मे स्थित होकर केशलोंच किया तथा मुनि-दीक्षा ले ली थी। इसके साथ एक हजार से अधिक राजा मुनि हुए थे। अन्त में केवलज्ञान प्राप्त कर यह मुक्त हुआ। त्रिलोकमण्डन हाथी और यह दोनो पूर्वभव में चन्द्रोदय और सूर्योदय नामक सहोदर थे। इसका जीव चन्द्रोदय तथा त्रिलोकमण्डन का जीव सूर्योदय था। दोनो ब्राह्मण के पुत्र थे। मपु० ६७ १६४-१६५, पपु० २५ ३५, २८ २६२-२६३, ३१ ११२-११४, १५१-१५३, ३२ १३६-१४०, १८८, ८३ ३९-४०, ८५ १७१-१७२, ८६ ६-११, ८७ १५-१६, ३८, ९८

(२) अनागत प्रथम चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८२, हपु० ६० ५६३

भरतकूट—प्रथम जम्बूद्वीप में हिमवत् कुचालक के ग्यारह कूटो में तीसरा कूट। यह मूल में पच्चीस योजन, मध्य में पौने उन्नीस योजन और ऊपर साढे बारह योजन विस्तार से युक्त है। हपु० ५ ५३-५६

भरतक्षेत्र—जम्बूद्वीप का प्रमुख क्षेत्र। यह छ खण्डो में विभक्त है। इनमें पाँच म्लेच्छ खण्ड तथा एक आर्यखण्ड है। यह लवणसमुद्र तथा हिमवान् पर्वत के मध्य मे स्थित है। यहाँ चक्रवर्ती के दस प्रकार के भोग, तीर्थंकरो का ऐश्वर्य और अघातिया कर्मों के क्षय से मोक्ष भी प्राप्त होता है। यहाँ ऐरावत क्षेत्र के समान वृद्धि और ह्रास के द्वारा परिवर्तन होता रहता है। इसके ठीक मध्य में पूर्व से पश्चिम तक लम्बा विजयार्ध पर्वत है। इसकी दक्षिण दिशा में जिन प्रतिमाओं से युक्त एक राक्षस द्वीप है। वृषभदेव के पुत्र भरतेश के नाम पर इसका भरतक्षेत्र नाम प्रसिद्ध हुआ। इसका अपर नाम भारत है। मपु० ६२ १६-२०, ६३ १९१-१९३, पपु० ३ ४३, ४५९, हपु० ५ १३ दे० भारत

भरणी—एक नक्षत्र। तीर्थंकर शान्तिनाथ का जन्म इसी नक्षत्र मे हुआ था। पपु० २० ५२

भरद्वाज—समुद्र तट पर स्थित भरतक्षेत्र का एक देश। महावीर ने विहार करते हुए यहाँ भी आकर धर्मोपदेश दिया था। हपु० ३ ६

भरुकच्छ—भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र की पश्चिम दिशा में स्थित एक देश। हपु० ११ ७२

भर्त्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

भर्माभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९७

भल्लकी—भरतक्षेत्र मे भीलो की एक पल्ली। यह गन्धमादन पर्वत से निकली गन्धवती नदी के समीप है। मपु० ७१ ३०९

भव—(१) अनागत ग्यारह रुद्रो में छठा रुद्र। हपु० ६० ५७१

(२) जम्बूस्वामी का प्रमुख शिष्य। मपु० ७६ १२०

(३) चारो गतियो में भ्रमण करनेवाले जीवों को वर्तमान शरीर त्यागने के बाद प्राप्त होनेवाला आगामी दूसरा शरीर। हपु० ५६.४७

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

भवतारक—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४९

भवन—तीर्थंकरो के गर्भ में आने पर तीर्थंकर-जननी द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नो मे चौदहवाँ स्वप्न। पपु० २१ १२-१५

भवदेव—(१) मृणालवती नगरी के सेठ सुकेतु और सेठानी कनकश्री का पुत्र। दुराचारी होने के कारण इसे 'दुर्मुख' कहते थे। यह इसी नगरी के सेठ श्रीदत्त की पुत्री रतिवेगा को विवाहना चाहता था। व्यापार के निमित्त बाहर जाने से श्रीदत्त ने अपनी पुत्री का विवाह इसके साथ न करके सुकान्त से कर दिया। देशान्तर से लौटने पर यह सब जानकर यह अति रुष्ट हुआ। झगडे की सम्भावना के फलस्वरूप सुकान्त अपनी वधू के साथ शोभानगर के सामन्त शक्तिषेण की शरण में जा पहुँचा। यह निराश हो गया। अवसर मिलते ही इसने सुकान्त और रतिवेगा दोनो को जला दिया था। मपु० ४६ १०३-१०९, १३४

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध देश के वृद्धग्राम के वैश्य राष्ट्रकूट का कनिष्ठ पुत्र और भगदत्त का अनुज। इसके बडे भाई भगदत्त ने मुनि-दीक्षा ले ली थी। भगदत्त चाहता था कि वह भी सयम धारण कर ले। विवाह हो जाने से यह ऐसा नही कर पा रहा था। अत मुनि भगदत्त ने इसे अपने गुरु के पास ले जाकर सयम धारण करा दिया था परन्तु स्त्री-मोह के कारण यह सयम में स्थिर न रह सका। सयम में स्थिर करने के लिए गुणमती आर्यिका ने इसे कथाओ के माध्यम से समझाकर और इसकी पत्नी नागश्री इसे दिखाकर विरक्ति उत्पन्न की थी। यह भी ससार को स्थिति का स्मरण कर अपनी निन्दा करता हुआ सयम मे स्थिर हो गया और मृत्यु के पश्चात् भाई भगदत्त मुनिराज के साथ माहेन्द्र स्वर्ग के बलभद्र नामक विमान में सात सागर की आयु का धारी सामानिक देव हुआ। मपु० ७६ १५२-२००

भवधारण—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के बीस प्राभृतो (पाहुड) में कर्म प्रकृति नामक चौथे प्राभृत के चौबीस योग द्वारो में अठारहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१, ८४ दे० अग्रायणीयपूर्व

भवनवासी—चतुर्णिकाय के देवो में प्रथम निकाय के देव। ये दस प्रकार के होते हैं—असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, वायुकुमार, द्वीपकुमार, सुपर्णकुमार, महोदधिकुमार, स्तनितकुमार और दिक्कुमार। जिनेन्द्र के जन्म की सूचना देने के लिए इन देवो के भवनो में बिना बजाये शख बजते हैं। इन देवो में असुरकुमार देव नारकियों का परस्पर में लडाकर दु ख पहुँचाते हैं। ये देव रत्नप्रभा पृथिवी के पकभाग में और शेष नौ प्रकार के भवनवासी देव खरभाग

में रहते हैं। वहाँ असुरकुमारों के चौंसठ लाख, नागकुमारों के चौरासी लाख, गरुडकुमारों के बहत्तर लाख, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, मेघकुमार, दिक्कुमार, अग्निकुमार और विद्युत्कुमार इन छः कुमारों के छिहत्तर-छिहत्तर लाख तथा वायुकुमारों के छियानवें लाख, इस प्रकार इनके कुल सात करोड़ बहत्तर लाख भवन हैं। इन देवों के बीस इन्द्र और बीस ही प्रतीन्द्र होते हैं। उनके नाम ये हैं—१ चमर २ वैरोचन ३ भूतेश ४ धरणानन्द ५ वेणुदेव ६ वेणुधारी ७ पूर्ण ८ अवशिष्ट ९ जलप्रभ १० जलकान्ति ११ हरिषेण १२ हरिकान्त १३ अग्निशिखी १४ अग्निवाहन १५ अमितगति १६ अमितवाहन १७ घोष १८ महाघोष १९ वेलंजन और २०. प्रभंजन। पपु० ३ ८२, १५९-१६२, २६ ९४, हपु० ४ ५०-५१, ५९-६१, ३८ १४, १७ वीवच० १४ ५४-५७

भवनश्रुत—सातवें बलभद्र नन्दिषेण के गुरु। पपु० २० २४६-२४७

भवपरिवर्तन—द्रव्य, क्षेत्र आदि पाँच प्रकार के परावर्तनों में चौथा परावर्तन। देवलोक के नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर इन चौदह विमानों को छोड़कर शेष चारों गतियों में गमनागमन भवपरिवर्तन कहलाता है। वीवच० ११ २६-३१

भवप्रत्यय—अवधिज्ञान के दो भेदों में से प्रथम भेद। इसके होने में भव निमित्त होता है। स्वर्ग और नरक में उत्पन्न होनेवालों के भी यह ज्ञान होता है। स्वर्ग में ये देव हैं, ये देवियाँ हैं, यह हमारे तप का फल है आदि भव-सम्बन्धी ज्ञान देवों को इसी से उत्पन्न होता है। मपु० ५ २६७-२७१

भवविचय—धर्मध्यान के दस भेदों में सातवाँ भेद। चारों गतियों में भ्रमण करनेवाले जीवों को मरने के बाद जो पर्याय प्राप्त होती है उसे भव कहते हैं। यह भव दुःखरूप है—ऐसा चिन्तन करना भवविचय धर्मध्यान है। हपु० ५६ ४७, ५२

भवान्तक—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४, २५ ११७

भवोद्भव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १०९

भवोन्माद—वरुण का उद्यान। युद्ध में वरुण को जीतने के पश्चात् रावण ने ससैन्य यहाँ विश्राम किया था। पपु० १९ ६४

भव्य—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की प्राप्ति पूर्वक मोक्ष पाने की योग्यता रखनेवाला जीव। यह देशनालब्धि और काललब्धि आदि बहिरंग कारण तथा करणलब्धि रूप अन्तरंग कारण पाकर प्रयत्न करने पर सिद्ध हो जाता है। जो प्रयत्न करने पर भी सिद्ध नहीं हो पाते वे अभव्य कहलाते हैं। मपु० ४.८८, ९.११६, २४. १२८, ७१ १९६-१९७, पपु० २, १५५-१५७, हपु० ३ १०१

भव्यकूट—समवसरण का देदीप्यमान शिखरों से युक्त एक स्तूप। इसे अभव्य जीव नहीं देख पाते क्योंकि स्तूप के प्रभाव से उनके नेत्र अन्धे हो जाते हैं। हपु० ५७ १०४

भव्यत्व—जीव का वह स्वभाव जिससे सम्यक्त्व प्रकट होता है। दूसरे गुणस्थान से लेकर अन्तिम गुणस्थान तक के तेरह गुणस्थानों में नियम से जीवों के भव्यपना ही रहता है। प्रथम गुणस्थान में भव्यपना तथा अभव्यपना दोनों होते हैं। हपु० ३ १००, १०४, वीवच० १६ ६४

भव्यपेटकनायक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०८

भव्यबन्धु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १०४

भव्यभास्कर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६

भव्यमार्गणा—जीवों को ढूँढने के चौदह स्थानों में एक स्थान। यह भव्य और अभव्य के भेद से दो प्रकार का होता है। वीवच० १६. ५३ ५५

भव्याब्जिनीबन्धु—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४१

भागदत्त—वृषभदेव के चौरासी गणधरों में त्रेपनवें गणधर। मपु० ४३. ६२, हपु० १२ ६४,

भागफल्गु—वृषभदेव के चौरासी गणधरों में चौवनवें गणधर। मपु० ४३ ६२, हपु० १२.६४,

भागीरथी—भरतक्षेत्र की गंगा नदी। पपु० ११ ३८२, हपु० ३१ ५

भाजनांग—उत्तरकुरु-भोगभूमि के दस प्रकार के रत्नमय कल्पवृक्षों में एक प्रकार के कल्पवृक्ष। इनसे थाली, कटोरा, सीप के आकार के बर्तन, भृंगार और अन्य इच्छित बर्तन प्राप्त होते हैं। मपु० ९ ३४-३६, ४७, हपु० ७ ८०, ८६, वीवच० १८ ९१-९२

भानु—(१) एक नृप। यह कृष्ण के कुल की रक्षा करता था। हपु० ५० १३०

(२) कृष्ण और सत्यभामा का पुत्र। सूर्य के प्रभामण्डल के समान देदीप्यमान होने से इसका यह नाम रखा गया था। यह अन्त में दीक्षा धारण कर मुनि हो गया था। हपु० ४४ १, ४८ ६९, ६१ ३९

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३१

(४) मथुरा के राजा लब्धाभिमान का पुत्र और यवु का पिता। हपु० १८.३

(५) मथुरा का बारह करोड़ मुद्राओं का स्वामी एक श्रेष्ठी। यमुना इसकी स्त्री थी। इन दोनों के सुभानु, भानुकीर्ति, भानुषेण, शूर, सूरदेव, शूरदत्त और शूरसेन ये सात पुत्र तथा क्रमशः कालिन्दी, तिलका, कान्ता, श्रीकान्ता, सुन्दरी, द्युति और चन्द्रकान्ता पुत्रवधुएँ थीं। इसने अभयनन्दी गुरु से तथा इसकी स्त्री यमुना ने जिनदत्ता आर्यिका से दीक्षा ले ली थी। इसके पुत्र भी धरधर्म गुरु के समीप दीक्षित हो गये थे। आयु के अन्त में समाधिमरण करके यह सौधर्म स्वर्ग में एक सागर की आयुवाला त्रायस्त्रिंश जाति का उत्तम देव हुआ। इसका अपर नाम भानुदत्त था। मपु० ७१ २०१-२०६, हपु० ३३ ९६-१००, १२४-१३०

(६) जीवद्यशा के भाई और कंस के साले सुभानु का पुत्र। कंस ने यह घोषणा करायी थी कि नागशय्या पर चढ़कर एक हाथ से शंख बजाते हुए दूसरे हाथ से धनुष चढ़ानेवाले को वह अपनी पुत्री देगा। इस घोषणा को सुनकर यह अपने पिता के साथ मथुरा आया था। कृष्ण इसके साथ थे। कृष्ण ने इसे पास में खड़ा करके कंस के तीनों कार्य कर दिखाये और वह शीघ्र व्रज वापस आ गया। कुछ पहरेदारों ने कंस को यह बताया कि ये कार्य इसने किये हैं और कुछ ने यह बताया कि ये कार्य इसने नहीं किसी अन्य कुमार ने किये हैं। मपु० ७० ४४७-४५६, हपु० ३५ ७५

(७) भरतक्षेत्र के रत्नपुर नगर का कुरुवंशी एवं काश्यपगोत्री एक राजा। यह तीर्थंकर धर्मनाथ का पिता था। इसकी रानी का नाम सुप्रभा था। मपु ६१ १३-१४, १८, पपु० २०.५१

(८) लंका का राक्षसवंशी एक नृप। यह राजा भानुवर्मा का उत्तराधिकारी था। यह सीता के स्वयंवर में आया था। पपु० ५ ३८७, ३९४, २८ २१५

(९) तीर्थंकर की माता द्वारा उसकी गर्भावस्था में देखे गये सोलह स्वप्नों में सातवाँ स्वप्न। पपु० २१ १२-१४

(१०) चम्पा नगरी का राजा। इसकी पत्नी का नाम राधा था। इन दोनों के कोई सन्तान न थी। इन्हें बताया गया था कि यमुना-तट पर उन्हें पेटी में एक बालक की प्राप्ति होगी। इस कथन के अनुसार इन्हें पेटी में एक बालक की प्राप्ति हुई थी। बालक ग्रहण करते समय रानी ने अपना कान खुजाया था। रानी की इस प्रवृत्ति को देखकर राजा ने बालक का नाम कर्ण रखा था। पापु० ७ २७९-२९७

भानुकर्ण—रत्नश्रवा और रानी केकसी के तीन पुत्रों में दूसरा पुत्र। रावण इसका बड़ा भाई तथा चन्द्रनखा छोटी बहिन और विभीषण छोटा भाई था। इसने अपने भाइयों के साथ एक लाख जप करके सर्वकामान्नदा आठ अक्षरों की विद्या आधे ही दिन में सिद्ध की थी। यह विद्या इसे मनचाहा अन्न देती जिससे इसे क्षुधा-सम्बन्धी पीड़ा नहीं होती थी। इसे सर्वाहा, इतिसंवृद्धि, जृम्भिणी, व्योमगामिनी और निद्राणी ये पाँच विद्याएँ भी प्राप्त थीं। इसने कुम्भपुर नगर के राजा महोदर की सुरूपाक्षी रानी की पुत्री तडिन्माला प्राप्त की थी। इसने अनन्तबल केवली के साथ तब तक आहार न करने की प्रतिज्ञा की थी जब तक कि वह अर्हन्त, सिद्ध, साधु और जिनधर्म की शरण में रहकर प्रतिदिन प्रातःकाल अभिषेक पूर्वक जिनेन्द्रदेव और साधुओं की पूजा नहीं कर लेगा। युद्ध में राम ने सूर्यास्त्र को नष्ट कर तथा नागास्त्र चलाकर इसे रथ रहित कर दिया था। राम के द्वारा नागपाश से बाँधे जाने पर यह पृथिवी पर गिर गया था परन्तु राम की आज्ञा पाकर भामण्डल ने इसे रथ पर बैठा दिया था। अन्त में रावण की मृत्यु के पश्चात् इसने विद्याधरों के वैभव को तृण के समान त्याग कर विधिपूर्वक निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली थी। पश्चात् यह केवली होकर मुक्त हुआ। इसका अपर नाम कुम्भकर्ण था। पपु० ७ १६४-१६५, २२२-२२५, २६४-२६५, ३३३, ८ १४२-१४३, १४ ३७२-३७४, ६२ ६६-६७, ७०, ७८ ८२-८४, ८० १२९-१३०

भानुकीर्ति—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की मथुरा नगरी के सेठ भानुदत्त और सेठानी यमुनादत्ता के सात पुत्रों में दूसरा पुत्र, सुभानु का छोटा भाई। भानुषेण, भानुशूर, शूरदेव, शूरदत्त, शूरसेन इसके छोटे भाई थे। इन्होंने मुनि दीक्षा ले ली थी तथा आयु के अन्त में सन्यासमरण कर सातों भाई प्रथम स्वर्ग में त्रायस्त्रिंश जाति के देव हुए थे। मपु० ७१ २०१-२०६, २४५-२४८, हपु० ३३ ९६-९८, १४०

भानुकुमार—कृष्ण और उसकी पटरानी सत्यभामा का पुत्र। इसका अपरनाम भानु था। मपु० ७२ १५६, १५८, हपु० ४४ १, ४८ ६९ दे० भानु—२

भानुगति—राक्षसवंशी एक विद्याधर। यह अमृतवेग का पुत्र था। इसने पिता से प्राप्त राज्य अपने पुत्र चिन्तागति को सौंप करके जैनदीक्षा ले ली थी। पपु० ५ ३९३, ४००

भानुदत्त—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की मथुरा नगरी का एक सेठ। इसकी स्त्री का नाम यमुनादत्ता था। इन दोनों के सात पुत्र थे। इसका दूसरा नमा भानु था। यह बारह करोड़ मुद्राओं का स्वामी था। मपु० ७१ २०१-२०३, हपु० ३३ ९६ दे० भानुकीर्ति

(२) चम्पापुरी नगरी का एक धनाढ्य वैश्य। सुभद्रा इसकी स्त्री और चारुदत्त पुत्र था। हपु० २१ ६, ११

भानुप्रभ—राक्षसवंशी एक विद्याधर। राजा भानु के पश्चात् लंका का राज्य इसे ही प्राप्त हुआ था। मपु० ५ ३८७-३९४, ३९९-४००

भानुमण्डल—एक विद्याधर। यह राम की ओर से युद्ध करने ससैन्य समरभूमि में गया था। पपु० ५८ ३-७

भानुमती—(१) लक्ष्मण की रानी। पपु० ८३ ९३

(२) दुर्योधन की रानी। पापु० १७ १०८

भानुमालिनी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२५

भानुरक्ष—लंकाधिपति महारक्ष और उसकी रानी विमलाभा का तीसरा पुत्र। अमरक्ष और उदधिरक्ष इसके छोटे भाई थे। इसका दूसरा नाम भास्कररक्ष था। इसने गन्धर्वगीत नगर के सुरसन्निभ की पुत्री गन्धर्वा को विवाहा था। इससे इसके दस पुत्र और छः पुत्रियाँ हुई थी। आयु के अन्त में इसने दीक्षित होकर तप किया और मोक्ष पाया। पपु० ५ २४१-२४४, ३६१, ३६७, ३६९, ३७६

भानुवर्मा—राक्षसवंशी एक विद्याधर। राजा इन्द्रजित् के पश्चात् लंका का राज्य इसे ही प्राप्त हुआ था। पपु० ५ ३८७, ३९४, ३९९-४००

भानुशूर—सेठ भानुदत्त का पुत्र। मपु० ७१ २०३ दे० भानुकीर्ति

भानुषेण—सेठ भानुदत्त का तीसरा पुत्र। मपु० ७१ २०३, हपु० ३३ ९७ दे० भानुकीर्ति

भामण्डल—(१) अष्ट प्रातिहार्यों में एक प्रातिहार्य। यह भगवान् के दिव्य औदारिक शरीर से उत्पन्न होता है। वीवच० १५ १२-१३, १९

(२) राजा जनक और रानी विदेहा का सीता के साथ (युगल संतान के रूप में) उत्पन्न पुत्र। पूर्वभव के वैरी महाकाल असुर ने इसे जन्म लेते ही मारने के लिए विदेहा के पास से अपहरण किया था। पश्चात् विचारों में परिवर्तन आने से उसने दयार्द्र होकर इसे मारने का विचार त्यागा तथा इसे देदीप्यमान किरणों वाले कुण्डल पहिना कर और पर्णलघ्वी-विद्या का इसमें प्रवेश कराकर आकाश से सुखकर स्थान में छोड़ दिया था। आकाश से इसे गिरते हुए देखकर विद्याधर चन्द्रगति ने बीच में ही रोक लिया था और रथनूपुर ले जाकर नगर में इसका जन्मोत्सव मनाया था। कुण्डलों के किरण समूह से घिरे हुए होने से उसने इसका "भामण्डल" नाम रखा था। यह सीता पर मुग्ध था। सीता को भामण्डल की पत्नी बनाने के लिए चन्द्रगति ने चपलवेग विद्याधर को भेजकर जनक को रथनूपुर बुलाया था और उनसे सीता की याचना की थी किन्तु जनक ने अपने निश्चय के अनुसार सीता देने की स्वीकृति नहीं दी। यह सीता को पाने के लिए उसके स्वयंवर में भी गया था किन्तु विदग्ध देश में अपने पूर्वभव के मनोहर नगर को देखते ही इसे जाति-स्मरण हुआ था। सचेत होने पर इसने अत्यन्त पश्चाताप भी किया। पश्चात् सीता एवं परिजनों से मिलकर और मिथिला का राज्य कनक के लिए सौंपकर तथा माता-पिता को साथ लेकर यह अपने नगर लौट आया। इसका दूसरा नाम प्रभामण्डल था। युद्ध में मेघवाहन के नाग बाणों से छिदकर यह भूमि पर गिर गया था। लक्ष्मण की शक्ति दूर करने के लिए विशल्या को लेने यही गया था। लंका की विजय के बाद राम ने इसे रथनूपुर का राजा बनाया था। भोग-भोगते हुए इसके सैंकड़ों वर्ष निकल गये किन्तु यह दीक्षित न हो सका था। अचानक महल की सातवीं मंजिल के ऊपर मस्तिष्क पर वज्रपात होने से इसकी मृत्यु हुई। इसने और इसकी पत्नी मालिनी दोनों ने मिल कर वज्राक और उसके अशोक तथा तिलक दोनों पुत्रों को मुनि अवस्था में आहार कराया था। इस दान के प्रभाव से मरकर यह मेरु पर्वत के दक्षिण में विद्यमान देवकुरु भोगभूमि में तीन पल्य की आयु का धारी आर्य (भोगभूमिज) हुआ। पपु० २६ २, १२१-१४८, २८ २२, ११७-१२५, ३०.२९-३८, १६७-१६९, ५४ ३७, ६० ९८-१०३, ६४ ३२, ८८ ४१, १११ १-१४, १२३ ८६-१०५

भामा—सत्यभामा का संक्षिप्त नाम। यह कृष्ण की पटरानी थी। हपु० ४३ १-३

भामारति—राजा सत्यन्धर की रानी। मधुर इसका पुत्र था। इसने धर्म का स्वरूप जानकर श्रावक के व्रत ले लिये थे। मपु० ७५ २५४-२५५

भारत—(१) जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रों में प्रथम क्षेत्र। इसका विस्तार ५२६$\frac{6}{19}$ योजन है। इसके ठीक मध्य में विजयार्ध पर्वत है। इस पर्वत के दो अन्तभाग पूर्व और पश्चिम समुद्रों का स्पर्श करते हैं। इसकी पूर्व-पश्चिम भुजाओं का विस्तार एक हजार आठ सौ बानवे योजन तथा कुछ अधिक साढ़े सात भाग है। इसके छः खण्ड हैं और उनमें निम्न देश हैं—कुरुजांगल, पंचाल, शूरसेन, पटच्चर, तुलिंग, काशी, कौशल्य, मद्रकार, वृकार्थक, सोल्व, आवृष्ट, त्रिगर्त, कुशाग्र, मत्स्य, कुणीयान्, कोशल और मोक। ये देश मध्य में हैं। वाल्हीक, आत्रेय, काम्बोज, यवन, आभीर, मद्रक, क्वाथतोय, शूर, वाटवान्, कैकय, गान्धार, सिन्धु, सौवीर, भारद्वाज, दशेरुक, प्रास्थाल और तीर्णकर्ण ये उत्तर की ओर हैं। खड्ग, अगारक, पौण्ड्र, मल्ल, प्रवक, मस्तक, प्राग्ज्योतिष, वंग, मगध, मानवर्तिक, मलद और भार्गव ये देश पूर्व दिशा में और बाणमुक्त, वैदर्भ, माणव, सक्कापिर, मूलक, अश्मक, दाण्डीक, कलिंग, आसिक, कुंतल, नवराष्ट्र, माहिषक, पुरुष और भोगवर्द्धन ये दक्षिण दिशा में तथा माल्य, कल्लीवनोपान्त, दुर्ग, सूर्पार, कर्बुक, काक्षि, नासारिक, अगर्त, सारस्वत, तापस, माहेभ, भरुकच्छ, सुराष्ट्र और नर्मद ये देश पश्चिम में हैं। दशार्णक, किष्किन्ध, त्रिपुर, आवर्त, निषध, नैपाल, उत्तमवर्ण, वैदिक, अन्तप, कौशल, पत्तन और विनिहात्र ये देश विन्ध्याचल के ऊपर तथा भद्र, वत्स, विदेह, कुश, भंग, सैतव और वज्रखण्डिक ये देश मध्यप्रदेश के आश्रित हैं। इसके भारतवर्ष, भारतविजय और भरतक्षेत्र अपर नाम हैं। मपु० ३ २४, ४७, ५३, ५ २०१, १२ २, पपु० २ १, हपु० ५ १३, १७-१८, २०, ४४, ११ १, ६४-६५, ४३ ९९ दे० भरतक्षेत्र

(२) पाण्डवपुराण का अपर नाम। पापु० १ ७१

भारतवर्ष—भरतक्षेत्र। मपु० ३ २४, ४७, ५३, १२ २, १५ १५९, हपु० ४३ ९९

भारती—तीर्थंकर द्वारा कथित तत्त्वोपदेश। वीवच० १ ५९-६०

भारद्वाज—(१) भरतक्षेत्र के स्थूणागार नगर का निवासी एक ब्राह्मण। ब्राह्मणी पुष्पदत्ता इसकी स्त्री और उससे उत्पन्न पुष्यमित्र इसका पुत्र था। मपु० ७४ ७०-७१, वीवच० २ ११०-११३

(२) तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव का जीव। यह भारतवर्ष के पुरातनमन्दिर नगर के ब्राह्मण सालकायन तथा उसकी स्त्री ब्राह्मणी मन्दिरा का पुत्र था। इसने तप के द्वारा देवायु का बन्ध किया था तथा मरकर माहेन्द्र स्वर्ग में सात सागरोपम आयु का धारी देव हुआ था। पश्चात् वहाँ से च्युत होकर यह बहुत समय तक त्रस स्थावर योनियों में भटकने के बाद मगध देश का राजगृही नगरी में शाण्डिल्य का स्थावर नामक पुत्र हुआ था। मपु० ७४ ७८-८३, ७६ ५३६, वीवच० २ १२५-१३१, ३ २-३

(३) भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश के पूर्व यहाँ उनके एक छोटे भाई का शासन था। हपु० ११ ६७

भार्गव—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ६९, ७६

भार्गवाचार्य—धनुर्विद्या में प्रसिद्ध आचार्य। इनकी शिष्य परम्परा में क्रमशः निम्न व्यक्ति हुए हैं—आत्रेय, कौथुमि, अमरावर्त, सित, वामदेव, कपिष्ठल, जगत्स्थामा, सरवर, शरासन, रावण, विद्रावण और द्रोणाचार्य। हपु० ४५ ४३-४८

भाव—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७७

(२) नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपों में चौथा निक्षेप। हपु० १७ १३५

(३) जीव के पाँच परावर्तनों में पाँचवाँ परावर्तन-मिथ्यात्व आदि सत्तावन आस्रव-द्वारों से परिभ्रमण करते हुए निरन्तर दुष्कर्मों का उपार्जन करना। वीवच ११ २६, ३२ दे० परावर्तन

भावन—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सद्‌तु नगर का एक वणिक्। आत्की इसकी स्त्री और हरिदास पुत्र था। यह चार करोड दीनारों का स्वामी था। देशान्तर जाते ही इसके पुत्र ने व्यसनों में पड़कर सम्पत्ति का नाश कर दिया। वह चोरी करने लगा। इसे देशान्तर से लौटने पर अपना पुत्र दिखायी न देने से यह उसे खोजने सुरग-मार्ग से गया और इसका पुत्र चोरी करके उसी सुरगमार्ग से लौटा। इसने अपना वैरी जानकर इसको तलवार से मार डाला था। पपु० ५ ९६-१०५

(२) असरकुमार आदि भवनवासी देव। हपु० ३ १३५

भावना—(१) देह और देही के यथार्थ स्वरूप का बार-बार चिन्तन करना। ये बारह होती हैं। उनके नाम हैं—अनित्य, अशरण, ससार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, सवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्म। इनका अपरनाम अनुप्रेक्षा है। मपु० ११ १०५-१०९ पापु० १ १२७, वीवच० १ १२७

(२) तीर्थंकर नामकर्म का बन्ध करानेवाली भावनाएँ। ये सोलह हैं। उनके नाम हैं—दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेश्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, सवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधु-समाधि, वैयावृत्य, अर्हद्‌भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्गप्रभावना और प्रवचनवात्सल्य। मपु० ४८ ५५, ६३ ३१२-३३०

भावनाविधि—एक व्रत। इसमें अहिंसा आदि पाँचों व्रतों की पच्चीस भावनाओं को लक्ष्य कर दस दशमी, पाँच पचमी, आठ अष्टमी और दो प्रतिपदा के कुल पच्चीस उपवास तथा एक-एक उपवास के बाद एक-एक पारणा की जाती है। कुछ भावनाएँ निम्न प्रकार हैं—सम्यक्त्वभावना, विनयभावना, ज्ञानभावना, शीलभावना, सत्यभावना, ध्यानभावना, शुक्लध्यानभावना, सक्लेशनिरोधभावना, इच्छानिरोध-भावना, सवरभावना, प्रशस्तयोगभावना, सवेगभावना, करुणाभावना, उद्वेगभावना, भोगनिर्वेदभावना, ससारनिर्वेदभावना, भुक्तिवैराग्य-भावना, मोक्षभावना, मैत्रीभावना, उपेक्षाभावना और प्रमोदभावना। हपु० ३४ ११२-११६

भावपरावर्तन—जीव के पाँच परावर्तनों में पाँचवाँ परावर्तन। वीवच० ११ ३२ दे० परावर्तन

भावबन्ध—जीव का कर्मों का बन्ध करनेवाला राग-द्वेष आदि रूप अशुद्ध-परिणाम। वीवच० १६ १४३

भावमोक्ष—सर्व कर्मों का क्षय करनेवाला आत्मा का निर्मल परिणाम। वीवच० १६ १७२

भावसवर—कर्मास्रव के निरोध का कारणभूत राग-द्वेष रहित आत्मा का परिणाम। वीवच० १६ १६७

भावसत्य—दस प्रकार के सत्यों में एक सत्य। छद्मस्थ को द्रव्यों का यथार्थ ज्ञान नही होता है। अत जो पदार्थ इन्द्रियगोचर न हो उसके सम्बन्ध में केवली द्वारा कथित वचनों को प्रमाण मानना भावसत्य है। प्रासुक और अप्रासुक द्रव्यों का निर्णय इसी प्रकार किया जाता है। हपु० १० १०६

भावसूत्र—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीन गुणों से निर्मित उपासक का वैचारिक सूत्र। मपु० ३९ ९५

भावास्रव—राग आदि से दूषित वह भाव जिससे कर्म आते हैं, भावास्रव कहलाता है। वीवच० १६ १४०

भावित—राम का एक योद्धा। यह रावण की सेना से युद्ध करने ससैन्य आया था। पपु० ५८ २१

भाविता—तीर्थंकर कुन्थुनाथ के सघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ६४ ४९

भाषकुन्तल—एक देश। राम के पुत्र लवण और अकुश दोनों राजकुमारों ने यहाँ के राजा को जीतकर पश्चिम समुद्र के दूसरे तटवर्ती राजाओं को अपने अधीन किया था। पपु० १०१ ७७-७८

भाषाक्रिया—पारिव्राज्य क्रिया के सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। इसमें मुनियों को हित-मित वचन रूप भाषा-समिति का पालन करना होता है। मपु० ३९ १६२-१६५, १९४

भाषा-समिति—पाँच समितियों में दूसरी समिति। दस प्रकार के कर्कश और कठोर वचनों का त्याग करके हित-मित और प्रिय वचन बोलना भाषा-समिति है। हपु० २ १२३, पापु० ९ ९२

भास्कर—(१) महाशुक्र स्वर्ग का विमान एव इसी नाम का एक देव। मपु० ५९ २२६

(२) रावण का एक योद्धा। इसने राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५५ ५

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

भास्करश्रवण—कुम्भकर्ण का दूसरा नाम। पपु० ८ १४३-१४५

भास्कराभ—(१) लका एक राक्षसवशी नृप। इसे लंका का शासन मनोरम्य राजा के पश्चात् प्राप्त हुआ था। पपु० ५ ३९७

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। लक्ष्मण ने इस नगर को अपने आधीन किया था। पपु० ९४ ७, ९

भास्करास्त्र—एक अस्त्र। कृष्ण ने जरासन्ध के तामसास्त्र को इसी से नष्ट किया था। हपु० ५२ ५५

भास्करी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३०

भास्वती—समवसरण के आम्रवन की एक वापी। हपु० ५७ ३५

भास्वान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

भिक्षा—दिगम्बर मुनियों की निर्दोष आहारविधि। मुनि अपने उद्देश्य से तैयार किया गया आहार नही लेते। वे अनेक उपवास करने के बाद भी श्रावकों के घर ही आहार के लिए जाते है और वहाँ प्राप्त हुई निर्दोष भिक्षा को मौनपूर्वक खडे होकर ग्रहण करते हैं। उनकी यह प्रवृत्ति रसास्वादन के लिए न होकर केवल धर्म के साधन-स्वरूप देह की रक्षा के लिए ही होती है। पपु० ४ ९५-९७

भिक्षु—शुद्ध भिक्षा का ग्राही अनगार और निर्ग्रन्थ साधु। पपु० १०९ ९०

भिण्डिमाल—राम के समय का एक शस्त्र। माल्यवान् ने सोम राक्षस को इसी शस्त्र के प्रहार से मूर्च्छित किया था। पपु० ७ ९५-९६, १२ २३६, ५८ ३४

भित्तिचित्र—चित्रकला का एक भेद। इसमे दीवार पर विभिन्न रगो का प्रयोग कर आकृतियाँ चित्रित की जाती हैं। मपु० ६ १८१, ९ २३

भिन्नांजनप्रभ—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७ ५३, ६२ ३६

भिषग्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४२

भीति—रावण को प्राप्त एक विद्या। इस विद्या से शत्रु-पक्ष में भय उत्पन्न किया जाता है। पपु० ७.३३१

भीम—(१) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८ ६९

(२) भरतक्षेत्र का प्रथम नारद। हपु० ६०.५४८

(३) भरतक्षेत्र के मनोहर नगर का समीपवर्ती एक वन। इस वन के निवासी भीमासुर को पाण्डव भीम ने मुष्टि-प्रहार से इतना अधिक मारा था कि विवश होकर वह उसके चरणो मे पडकर उसका दास बन गया था। मपु० ५९ ११६, पापु० १४ ६७, ७५-७८

(४) भरतक्षेत्र के सिंहपुर नगर का दूसरा स्वामी। मासभोजी कुम्भ इस नगर का पहला स्वामी था। मपु० ६२.२०५, पापु० ४ ११९

(५) पुण्डरीकिणी नगरी के शिवकर उद्यान मे स्थित एक मुनि। इन्होने हिरण्यवर्मा और प्रभावती के जीव देव और देवी को धर्मोपदेश दिया था। पूर्वभव में ये मृणालवती नगरी में भवदेव वैश्य थे। इस पर्याय में इन्होंने रतिवेगा और सुकान्त को मारा था। उनके कबूतर-कबूतरी होने पर इन्होने उन्हें विलाव होकर मारा। जब ये विद्याधर और विद्याधरी हुए तब इन्होने विद्युच्चोर होकर उन्हे मारा था। अन्त में बहुत दु ख भोगने के पश्चात् ये इस पर्याय मे आये और केवली हुए। मपु० ४६ २६२-२६६, ३४३-३४९, पापु० ३ २४४-२५२

(६) व्यन्तर देवो का इन्द्र। इसने सगर चक्रवर्ती के शत्रु पूर्णधन के पुत्र मेघवाहन को अजितनाथ भगवान् की शरण में प्रवेश कराया था और उसे राक्षसी-विद्या दी थी। पपु० ५ १४९-१५१, १६०-१६८, वीवच० १४.६१

(७) बलाहक और सन्ध्यावर्त पर्वतो के बीच स्थित एक अन्धकारमय महावन। यह हिंसक प्राणियो से व्याप्त था। रावण, भानुकर्ण और विभीषण ने यहाँ तप किया तथा एक लाख जप करके सर्वकामान्नदा आठ अक्षरो की विद्या आधे ही दिनो मे सिद्ध की थी। पपु० ७.२५५-२६४, ८ २१-२४

(८) एक विद्याधर। यह रावण का अनेक विद्याओ का धारक तेजस्वी सामन्त था। गजरथ पर आरूढ होकर इसने राम के विरुद्ध ससैन्य युद्ध किया था। पपु० ४५ ८६-८७, ५७ ५७-५८

(९) राम का एक महारथी योद्धा विद्याधर। यह रावण के विरुद्ध लडा था। पपु० ५४ ३४-३५, ५८ १४, १७

(१०) एक देश। लवण और अकुश ने यहाँ के राजा को जीतकर पश्चिम समुद्र की ओर प्रयाण किया और वहाँ के राजाओ को अपने अधीन किया था। पपु० १०१ ७७

(११) एक शक्तिशाली नृप। यह अयोध्या के राजा मधु की आज्ञा नही मानता था। फलस्वरूप अपने भक्त सामन्त वीरसेन का पत्र पाकर मधु ने इसे युद्ध में जीत लिया था। इसका अपर नाम भीमक था। पपु० १०९ १३१-१४०, हपु० ४३ १६२-१६३

(१२) राजा वसु की वश-परम्परा में हुआ सुभानु नृप का पुत्र। हपु० १८ ३

(१३) यादवो का भानजा। यह हस्तिनापुर के कुरुवशी राजा पाण्डु और उनकी पत्नी कुन्ती का पुत्र था। पाँच पाण्डवो में यह दूसरा पाण्डव था। युधिष्ठिर इसका अग्रज और अर्जुन अनुज था। पराक्रम पूर्वक लडनेवाले शत्रु वीरो को भी इससे भय उत्पन्न होने के कारण इसे यह सार्थक नाम प्राप्त हुआ था। पितामह भीष्माचार्य ने इसे पाला तथा द्रोणाचार्य ने इसे शिक्षित किया था। कौरवो ने इसे वृक्ष से नीचे गिराने के लिए वृक्ष उखाडना चाहा किन्तु कौरव तो वृक्ष न उखाड सके। कौरवो ने इसे मारने के लिए पानी में डुबाया था किन्तु यह वहाँ भी बच गया था। सोया हुआ जानकर कपटपूर्वक दुर्योधन ने इसे गगा मे फेंका था किन्तु यह तैरकर घर आ गया था। दुर्योधन ने भोजन में विष देकर भी इसे मारना चाहा था किन्तु इसे वह विष भी अमृत हो गया था। कौरवो ने सर्प द्वारा दश कराया था परन्तु सर्प-विष भी इसका घात नही कर सका था। लाक्षागृह में जलाकर मारने का यत्न भी किया गया था किन्तु इसने भूमि में निर्मित सुरग की खोज कर अपना और अपने भाइयो का बचाव कर लिया था। इसने मगर रूप में नदी मे विद्यमान तुण्डा-देवी से युद्ध किया था। देवी इसे निगल गयी थी किन्तु इसने अपने हाथ से उसका पेट फाडकर उसको पीठ की हड्डी को उखाड दिया था। अन्त में इसके पौरुष से पराजित होकर देवी इसे गगा में छोड-कर भाग गयी थी। इसने पिशाच विद्याधर को हराकर उसकी पुत्री हिडिम्बा को विवाहा था। हिडिम्बा से इसका एक पुत्र हुआ था जिसका नाम घुटुक था। इसने भीम वन में असुर राक्षस को हराया तथा मनुष्य भक्षी राजा वक को पराजित किया था। राजा कर्ण के हाथी को मद रहित कर भयभीत जन-समूह को निर्भय बनाया था। राजा वृषभध्वज ने अपनी दिशानन्दा कन्या इसको विवाही थी। मणिभद्र यक्ष ने इसे शत्रुक्षयकारिणी गदा प्रदान को थी। चूलिका नगरी का राजकुमार कीचक द्रौपदी पर मोहित था। उसकी कुटिल-ताओ को देखकर द्रौपदी का वेष धारण कर इसने उसे मारा था। कौरव-पाण्डव युद्ध में इसने निन्यानवें कौरवो का वध किया था। दुर्योधन इसी की गदा की मार से मरणोन्मुख होकर पृथिवी पर गिरा था। आयु के अन्त में नेमिनाथ तीर्थंकर से इसने तेरह प्रकार का

चरित्र धारण कर लिया था। महातपश्चरण में लीन रहते हुए इसने कुर्यधर द्वारा किया गया उपसर्ग सहा। कुर्यधर ने गर्म लोहवस्त्र भी इसे पहनाये। फिर भी यह ध्यान में ही लीन रहा। इस उपसर्ग को जीतकर एव कर्मों का क्षय करके यह केवली हुआ और इसे मुक्ति प्राप्त हुई। इसका अपर नाम भीमसेन था। मपु० ७२ २०८, २६६-२७०, हपु० ४५ १-७, ३७-३८, ९३-११८, ४६ २७-४१, पापु० ८ १६७-१६८, २०८-२२०, १० ५२-६५, ७३-७६, ९२-११७, १२ १६६-१६८, ३५६-३६१, १४ ५५-६५, ७५-७८, १३१-१३४,१६८-१६९, १८८, २०३-२०६, १७ २४५-२४६, २८९-२९५, २० २६६-२६७, २९४-२९६, २५ १२-१४, ६२-७४, १३१-१३३

भीमक—(१) अपर नाम भीम। हपु० ४३ १६२-१६३, दे० भीम-२

(२) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा हरिबल और उसकी रानी धारिणी का पुत्र। इसके पिता ने इसे अलकापुरी का राज्य दिया था। इसने अपने सौतेले भाई हिरण्यवर्मा की विद्याएँ हर ली थी। अत त्रस्त होकर वह अपने चाचा महासेन के पास चला गया था। इस घटना से क्षुब्ध होकर इसने अपने चाचा महासेन को भी मार डाला था। अन्त में यह कुमार प्रीतिंकर द्वारा मारा गया था। मपु० ७६ २६३-२८९

भीमकूट—एक पर्वत। भीलो का राजा सिंह इसी पर्वत के पास रहता था। कालक भीम ने इसी पर्वत में इसे चदना सौंपी थी। मपु० ७५ ४५-४८

भीमनाद—रावण का सामन्त। यह गजरथ पर आरूढ़ होकर समरभूमि में आया था। पपु० ५७ ५७-५८

भीमप्रभ—राजा आदित्यगति और उसकी रानी सदनपद्मा का पुत्र। इसकी एक हजार स्त्रियाँ तथा एक सौ आठ पुत्र थे। आयु के अन्त में इसने बडे पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ले ली थी तथा तपश्चरणपूर्वक परम पद पाया था। पपु० ५ ३८२-३८४

भीमबल—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का बयालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

भीमबाहु—राजा धृतराष्ट्र और उसकी रानी गान्धारी का इकतालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

भीमरथ—(१) नागेन्द्र की क्रोधाग्नि से भस्म होने से बचे सगर के पुत्रो में एक पुत्र। इसने दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० ५ २५१-२५४, २८३

(२) राम का योद्धा। यह अपने महासैनिको के साथ युद्ध में रावण के विरुद्ध लडा था। पपु० ५८ १४, १७

(३) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का अठहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

भीमरथी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की पश्चिम समुद्र की ओर बहनेवाली एक नदी। भरतेश की सेना ने इसे पार किया था। मपु० ३० ३५

भीमवर्मा—राजा सुवसु का पुत्र। यह कलिंग देश का रक्षक था। हपु० ६६ ४

भीमसेन—(१) राजा पाण्डु और कुन्ती का दूसरा पुत्र। यह युधिष्ठिर का अनुज तथा पार्थ का अग्रज था। मपु० ७० ११४-११६, हपु० ४५ २, ३७ दे० भीम-१३

(२) आचार्य अभयसेन के शिष्य और जिनसेन के गुरु एक आचार्य। हपु० ६६ २९

भीमारण्य—विदेहक्षेत्र के मनोहर नगर का समीपवर्ती एक भयकर वन। सजयन्त मुनि ने यहाँ प्रतिमायोग धारण किया था। मपु० ५९ ११६

भीमावलि—वर्तमान भरतक्षेत्र का प्रथम रुद्र। यह भगवान् वृषभदेव के तीर्थ में हुआ था। इसके शरीर की ऊँचाई पाँच सौ धनुष और आयु तेरासी लाख पूर्व थी। यह मरकर सातवें नरक में उत्पन्न हुआ। हपु० ६० ५३४-५४७

भीमासुर—एक असुर। पाण्डव भीम ने इसे मल्लयुद्ध में पराजित किया था। पापु० १४ ७२, ७५ दे० भीम-१३

भीरस—भयानक रस। युद्धस्थल में जर्जरित अगो को तथा जहाँ-तहाँ पडे हुए योद्धाओ को देखकर द्रष्टा के मन में उत्पन्न भयकारी भाव। मपु० ६८ ६०७-६०८

भीरु—भरतक्षेत्र का एक देश—तीर्थंकर महावीर की विहार-भूमि। पपु० १०१ ८१, हपु० ३ ५

भीलुक—हाथी। यह भीरु-स्वभावी होता है। मपु० २९ १३७

भीषण—राम का एक योद्धा। यह राम की सेना से लडा था। पपु० ५८ १५, १७

भीष्म—(१) कौरववशी राजा शान्तनु के वश में हुए धृतराज के भाई रुक्मण तथा राजपुत्री गगा का पुत्र। यह कुण्डिनपुर नगर का राजा था। कृष्ण और जरासन्ध के बीच हुए युद्ध में इसने जरासन्ध की ओर से युद्ध किया था। मपु० ७१ ७६-७७, हपु० ४२ ३३-३४, ४५ ३५, ६० ३९

(२) राक्षसवशी एक विद्याधर-नृप। इसने लका का स्वामित्व प्राप्त किया था। पपु०५ ३९६-४००

भुजगवरद्वीप—जम्बूद्वीप के प्रथम सोलह द्वीपों में चौदहवाँ द्वीप। हपु० ५ ६१९

भुजगवरोदधि—जम्बूद्वीप के प्रथम सोलह सागरो में चौदहवाँ सागर। यह भुजगवर-द्वीप को घेरे हुए है। हपु० ५ ६१९

भुजगशैल—भरतेश का एक नगर। कीचक यही मारा गया था। मपु० ७२ २१५

भुजगिनी—रावण को प्राप्त अनेक विद्याओ में एक विद्या। पपु० ७. ३२९

भुजबली—सोमवशी नृप सुबल का पुत्र। इसने हेमागद पर आक्रमण किया था। पपु० ५ १२, हपु० १३ १७, पापु० ३ ११४

भुवना—रावण को प्राप्त अनेक विद्याओ में एक विद्या। पपु० ७ ३२४

भुवनाम्बिका—मरुदेवी। वृषभदेव की जननी होने से इसे इस नाम से सम्बोधित किया गया था। मपु० १२ २२४, २६८

भुवनेश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

भुवनैकपितामह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४३

भुशुण्डी—एक शस्त्र। इसका व्यवहार रावण के काल में हुआ है। पपु० १२ २५८

भूतदेव—हरिवंशी राजा। यह राजा सभूत का पुत्र था। पपु० २१ ९

भूतनाद—विद्याधरो का राजा। यह राम का सेनापति था। यह विद्याधर सेना के आगे-आगे चलता था। पपु० ५४ ३४-३५, ६०

भूतनार्थ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८

भूतभव्यभवद्भर्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२१

भूतभावन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

भूतभृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५,११७

भूतमुखखेट—चक्रवर्ती भरतेश तथा तीर्थंकर अरनाथ का अस्त्र (ढाल)। यह भूतो की मुखाकृतियो से चिह्नित होता था। मपु० ३७ १६८, पापु० ७ २१

भूतरमण—(१) भद्रशाल वन के पाँच उपवनो में पाँचवाँ उपवन। हपु० ५ ३०७

(२) ऐरावती नदी के किनारे स्थित एक अटवी। अपनी पत्नी के क्रोध से भयभीत होकर विद्याधर मनोवेग ने अपने द्वारा अपहृता चन्दना को इसी अटवी में छोडा था। मपु० ७५ ४२-४४, हपु० २७ ११९

भूतरव—एक देश। लवण और अकुश ने इसे जीता था। पपु० १०१ ७७

भूतवन—विजयार्ध पर्वत की पूर्व दिशा और नीलगिरि की पश्चिम की ओर विद्यमान सुसीमा देश का एक वन। श्रीपाल ने यहाँ सात शिलाखण्डो को एक के ऊपर एक रखकर स्वय चक्रवर्ती होने की सूचना दी थी। मपु० ४७ ६५-६७

भूतवर—जम्बूद्वीप के अन्तिम सोलह द्वीपो में बारहवाँ द्वीप एव सागर। हपु० ५ ६२५

भूतवाद—पृथिवी, जल, वायु और अग्नि के सयोग से चैतन्य की उत्पत्ति तथा वियोग से उसके विनाश की मान्यता। इस वाद को माननेवाले आत्मा, पुण्य-पाप और परलोक नही मानते। इसकी मान्यता है कि जो प्रत्यक्ष सुख को त्याग कर पारलौकिक सुख की कामना करता है वह दोनो लोको के सुखो से वचित हो जाता है। मपु० ५ २९-३५

भूतस्वन—एक वानरवशी राजा। राम-लक्ष्मण युद्ध मे इसने रावण की सेना को पराजित किया था। पपु० ७४ ६१-६२

भूतहित—निर्ग्रन्थ एक मुनि। इन्होने पुण्डरीकिणी नगरी के राजा महीपद्म को धर्मोपदेश दिया था। मपु० ५५ १३-१४

भूतात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

भूतानन्द—एक निर्ग्रन्थ मुनि। चित्रचूल के चित्रागद आदि सात पुत्रो के ये दीक्षा-गुरु थे। मपु० ७१ २५८, हपु० ३३ १३९

भूतारण्यक—सीता और सीतोदा नदियो के तटो पर पूर्व-पश्चिम विदेह पर्यन्त लम्बे तथा लवण समुद्रतट से मिले हुए चार देवारण्यो में इस नाम के दो वन। हपु० ५.२८१

भूति—(१) वृषभदेव के चौरासी गणधरो में चौबीसवें गणधर। हपु० १२ ५९

(२) भरतक्षेत्र की गान्धारी नगरी का राजा। यह मास-भोजी था। पूर्व पुण्य के प्रभाव से मरकर यह राजा जनक हुआ। पपु० ३१ ४१, ५७

भूतिलक—(१) वलयाकार पर्वत से आवृत एक नगर। वैश्य प्रीतिंकर ने यहाँ के राजा भीमक को मारा था। मपु० ७६.२५२, २८६-२८९ दे० प्रीतिंकर

(२) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के तीन स्वामियो में तीसरा स्वामी। मपु० ७६.२६३, २६७

भूतिशर्मा—मलय देश के भद्रिलपुर नगर का निवासी एक ब्राह्मण। यह तीर्थंकर शीतलनाथ के तीर्थकाल मे उत्पन्न हुआ था। मुण्डशालायन इसका पुत्र था। मपु० ५६ ७९, ७१ ३०४

भूतेश—भवनवासी देवो के बीस इन्द्रो में तीसरा इन्द्र। वीवच० १४. ५४-५८

भूधर—(१) राम का एक योद्धा। पपु० ७४ ६५-६६

(२) धरणेन्द्र। पार्श्वनाथ के उपसर्ग काल में इसने और इसकी पत्नी पद्मावती ने उनकी रक्षा की थी। मपु० ७३ १-२

भूपाल—(१) सुभौम चक्रवर्ती के तीसरे पूर्वभव का जीव, भरतक्षेत्र का एक नृप। युद्ध में पराजित होने के कारण हुए मानभग से ससार से विरक्त होकर इसने सभूत गुरु से दीक्षा ले ली थी तथा तपश्चरण करते हुए चक्रवर्ती पद का निदान किया था। आयु के अन्त में सन्यास-मरण करके यह महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर अयोध्या में राजा सहस्रबाहु का पुत्र कृतवीराधिप हुआ। मपु० ६५ ५१-५८

(२) राजा का एक भेद। यह साधारण नृप की अपेक्षा अधिक शक्ति सम्पन्न होता है। इसके पास चतुरगिणी सेना होती है। यह दिग्विजय करता है। मपु० ४ ७०

भूमि—(१) जीवो की निवास-भूमियाँ। मपु० ३ ८२, १६ १४६, दे० कर्मभूमि एव भोगभूमि

(२) अधोलोक में विद्यमान नरको की सात भूमियाँ। इनके नाम हैं—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तम-प्रभा और महातम प्रभा। हपु० ४ ४३-४५

भूमिकुण्डलकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के पचास नगरो में उनचासवाँ नगर। हपु० २२ १००

भूमितिलक—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का चौंतीसवाँ नगर। मपु० १९.८३, ८७

भूमिदान—देय विविध वस्तुओ मे एक वस्तु-भू-खण्ड । तत्त्व-वेत्ताओ ने प्राणिघात का निमित्त होने से इसे निंद्य कहा है परन्तु जिन-मन्दिर आदि के लिए दिये गये दान को उन्होंने निंद्य नही कहा अपितु इसे दीर्घकाल तक स्थिर रहनेवाले भोगो का प्रदाता माना है । पपु० १४. ७३-७५, ७८

भूमिशय्याव्रत—साधु के अट्ठाईस मूलगुणो में एक मूलगुण-पृथिवी पर शयन करना । मपु० १८ ७१, हपु० २ १२९

भूरि—राम का एक योद्धा । पपु० ५८ २१-२३

भूरिचूड—एक विद्याधर । यह वज्रचूड का पुत्र और अर्कचूड का पिता था । पपु० ५ ५३

भूरिश्रवा—भरतक्षेत्र के महापुर नगर के राजा सोमदत्त और रानी पूर्णचन्द्रा का पुत्र । सोमश्री इसकी बहिन थी जिसे वसुदेव ने विवाहा था । यह पिता का आज्ञाकारी था । पिता के साथ यह रोहिणी के स्वयवर में आया था । यह महारथी था । इसने कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में कृष्ण की सहायता की थी । हपु० २४ ३७, ५१-५२, ५९, ३१ २९, ५० ७९

भूषण—काम्पिल्य नगर के धनिक वैश्य धनद और उसकी पत्नी वारुणी का पुत्र । इसके पिता को किसी निमित्तज्ञानी ने इसके दीक्षित होने की भविष्यवाणी की थी । एक मात्र पुत्र होने से यह दीक्षित न हो सके । इसके लिए पिता ने इसे रहने को एक पृथक् भवन बनवाया था । यह एक दिन मुनीन्द्र श्रीधर को अपने महल के पास आया जानकर उनकी वन्दना के लिए महल से नीचे आ रहा था कि किसी सर्प ने इसे काट लिया जिससे यह मरकर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ तथा वहाँ से चयकर पुष्करद्वीप के चन्द्रादित्य नगर में राजा प्रकाशयश का पुत्र हुआ । पपु० ८५ ८५-९६

भूषांग—इस जाति के कल्पवृक्ष । इनसे स्त्री-पुरुषो के योग्य हार, कुण्डल, बाजूबन्द तथा मेखला आदि आभूषण प्राप्त होते थे । मपु० ९ ३५, ४१, हपु० ७ ८०, ८९

भूष्णु—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ४४

भृंगनिभा—समवसरण मेरु के नैऋत्य मे स्थित चार वापिकाओ में दूसरी वापिका । हपु० ५ ३४३

भृंगराक्षस—ईहापुर नगर का महाभयकर नर-पीडक एक राक्षस । भीमसेन ने इसे मारकर नगर के निवासियो का भय दूर किया था । हपु० ४५ ९३-९४

भृंगा—समवसरण-मेरु के नैऋत्य में विद्यमान चार वापिकाओं में प्रथम वापी । हपु० ५ ३४३

भृंगार—भोगभूमि के भाजनाग कल्पवृक्षों से प्राप्त होनेवाला टोंटीदार कलश । मपु० ९ ४७

भृगु—(१) वृषभदेव के समय में व्रतो से च्युत हुए साधुओ के प्रशिष्यो में वल्कलधारी एक तापस । कपिल, अत्रि, आदि साधु इसी के समय में हुए । मपु० ४ १२४-१२७

(२) पहाड की एक चट्टान का नाम । हपु० १ १२८

भेद—राजाओ की प्रयोजन सिद्धि (राजनीति) के साम, दान, भेद और दण्ड इन चार उपायो में तीसरा उपाय । शत्रु पक्ष में फूट डालकर कार्यसिद्धि करना भेद कहलाता है । मपु० ६८ ६२, ६४, हपु० ५० १८

भेद्यत्व—ससारी जीव का एक गुण-शरीर विदीर्ण किया जा सकना। मपु० ४२ ८९

भेरी—युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय बजाया बजानेवाला वाद्य । राम के लका की ओर प्रयाण करते समय तथा लका से विजयोपरान्त अयोध्या लौटने पर यही वाद्य बजाया गया था । यह तीर्थंकरों के जन्म की सूचना देने के लिए देवो के यहाँ स्वय बजता है । मपु० १३ १३, पपु० ५८ २७-२९, ६३ ३१९

भेरुण्ड—एक पक्षी । लाल कम्बल ओढे हुए श्रीपाल को मास-पिण्ड समझकर यही पक्षी सिद्धकूट ले गया था । मपु० ४७ ४४-४५

भेषज—भरतक्षेत्र के कौशल नगर का राजा । मद्री इसकी रानी थी । इस रानी से इसके एक तीन नेत्रवाला पुत्र जन्मा था जिसका नाम शिशुपाल था । मपु० ७१ ३४२

भेषजदान—औषधिदान । प्राणियो की पीडा को दूर करनेवाला होने से ज्ञानदान, अभयदान और अन्न-वस्त्र दान के समान यह भी प्रशसनीय होता है । पपु० १४ ७५-७६

भोक्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १००

भोगकरा—गन्धमादन गजदन्त पर्वत के स्फटिककूट पर रहनेवाली देवी । हपु० ५ २२७

भोग—पाँचो इन्द्रियो के विषय । इनके भोगने से भोगेच्छा बढती है, घटती नही । ये अनुभव में आते समय ही रम्य प्रतीत होते हैं बाद में नही । ससारी जीवो को ये लुभाते हैं । ये स्त्री और शरीर के सघटन से उत्पन्न होते हैं । ये दस प्रकार के होते है । इनके नाम हैं—भाजन, भोजन, शय्या, सेना, वाहन, आसन, निधि, रत्न, नगर, और नाट्य । मपु० ४ १४६, ८ ५४, ६९, ५४ ११९, हपु० ११. १३१ वीवच० ६ २५-२६

भोगदेव—धातकीखण्ड द्वीप में पूर्व भरतक्षेत्र के सारसमुच्चय देश के नागपुर नगर के राजा नरदेव का ज्येष्ठ पुत्र । राजा ने इसे ही राज्य सौंपकर सयम धारण किया था । मपु० ६८ ४-५

भोगपुर—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गौरी देश का एक नगर । विद्याधर वायुरथ यहाँ का स्वामी था । मपु० ४६ १४७

(२) भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश का नगर । सुमुख का जीव यहाँ के राजा प्रभजन का सिहकेतु नामक पुत्र हुआ था । इसका अपर नाम भोगिपुर था । मपु० ७० ७४-७५, पापु० ७ ११८-११९

(३) भरतक्षेत्र का एक नगर । चक्रवर्ती हरिषेण की यह जन्मभूमि है । मपु० ६७ ६३

भोगभूमि—अवसर्पिणी के प्रथम तीन कालो में विद्यमान भरतक्षेत्र की भूमि । यहाँ स्त्री-पुरुष युगल रूप में उत्पन्न होते हैं । इसे उत्तम, मध्यम और जघन्य के भेद से तीन भागो में विभाजित किया गया है ।

अवसर्पिणी के प्रथम सुषमा-सुषमा काल मे उत्तम भोगभूमि होती हैं। इस समय मनुष्यो की आयु तीन पल्य और शरीर की अवगाहना छ. हजार धनुष होती है। वे सौम्याकृति तथा आभूषणो से अलकृत होते हैं। ये तीन दिन के अन्तर से हरिवशपुराण के अनुसार चार दिन के अन्तर से कल्पवृक्षो से प्राप्त बदरीफल के बराबर भोजन करते है। उन्हें कोई श्रम नही करना पडता। इनके न रोग होता है, न मल-मूत्र आदि की बाधा। न मानसिक पीडा होती है, न पसीना ही आता है और न इनका असमय में मरण होता है। स्त्रियो की आयु और ऊँचाई पुरुषो के समान होती है। स्त्री-पुरुष दोनो जीवन पर्यन्त भोग भोगते हैं। भोग-सामग्री इन्हें कल्पवृक्षो से प्राप्त होती है। इस समय मद्याग, तूर्यांग, विभूषाग, माल्याग, ज्योतिरग, दीपाग, गृहाग, भोजनाग, पात्राग और वस्त्राग जाति के दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं जो विभिन्न सामग्री देते है। आयु के अन्त में पुरुष को जिह्माई और स्त्री को छीक आती है और वे मरकर स्वर्ग जाते हैं। दूसरे सुषमा काल मे मध्यम भोगभूमि रहती है। इस काल के मनुष्य देवो के समान कान्ति के धारी होते हैं। उनकी आयु दो पल्य की तथा शारीरिक ऊँचाई चार हजार धनुष होती है। ये दो दिन हरिवशपुराण के अनुसार तीन दिन बाद कल्पवृक्ष से प्राप्त बहेडे के बराबर आहार करते है। तीसरे सुषमा-दुषमा काल में जघन्य भोगभूमि रहती है। इसमें मनुष्यो की आयु एक पल्य की तथा शरीर दो हजार धनुष ऊँचा और श्याम वर्ण का होता है। ये एक दिन के हरिवशपुराण के अनुसार दो दिन के अन्तर से आँवले के बराबर भोजन करते हैं। यहाँ कर्मभूमिज मनुष्य और तिर्यंच ही जन्मते हैं तथा मरकर वे पहले और दूसरे स्वर्ग में अथवा भवनवासी आदि तीन निकायो में उत्पन्न होते हैं। यहाँ की भूमि इन्द्रनील आदि नीलमणि, जात्यदन आदि कृष्णमणि, पद्मराग आदि लालमणि, हैमा आदि पीतमणि और मुक्ता आदि सफेद-मणियो से व्याप्त होती है तथा चार अगुल प्रमाण तृणो से आच्छादित होती है तथा दूध, दही, घी, मधु, ईख से भरपूर होती है। यहाँ गर्भ से युगल रूप मे उत्पन्न स्त्री-पुरुषो के सात दिन तो अँगूठा चूसने में बीतते हैं, पश्चात् सात दिन तक वे रेंगते हैं, फिर सात दिन लडखडाते हुए चलते, फिर सात दिन तक स्थिर गति से चलते, पश्चात् सात दिन कला-अभ्यास में निपुणता प्राप्त करते और इसके पश्चात् सात दिन इनके यौवन में बीतते हैं। सातवें सप्ताह में इन्हें सम्यग्दर्शन ग्रहण करने की योग्यता हो जाती है। पुरुष-स्त्री को आर्या तथा स्त्री-पुरुष को आर्य कहती है। इस समय न ब्राह्मण आदि चार वर्ण होते है और न असि-मसि आदि षट्कर्म। सेव्य-सेवक भी नही होते। मनुष्य विषयो में मध्यस्थ होते है। उनके न मित्र होते हैं न शत्रु। वे स्वभाव से अल्प कषायी होते है। आयु पूर्ण होने पर युगल रूप में ही मरते है। यहाँ के सिंह भी हिंसा नही करते। नदियों में मगरमच्छ नहीं होते। यहाँ न अधिक शीत पडती है न अधिक गर्मी। तीव्र वायु भी नहीं चलती। जम्बूद्वीप मे छ. भोगभूमियाँ होती हैं। उनके नाम हैं—हैमवत, हरिवर्ष, रम्यक, हैरण्यवत्, देवकुरु तथा उत्तरकुरु। मपु० ३.२४-५४, ९ १८३, ७६ ४९८-५००, पपु० ३ ४०, ५१-६३ हपु० ७ ६४-७८, ९२-९४, १०२-१०४

भोगमालिनी—माल्यवान् गजदन्त के रजतकूट पर रहनेवाली दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ २२७

भोगलक्ष्मी—भोग सम्पदा। यह विष-बेल के समान होती है। मपु० १७ १५

भोगवती—(१) गन्धमादन गजदन्त पर्वत के लोहितकूट पर रहनेवाली एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ २२७

(२) शिवकरपुर के राजा अनिलवेग और उसकी कान्ता कान्तवती की पुत्री, हरिकेतु की बहिन। मपु० ४७ ४९-५०, ६०

(३) हेमपुर के राजा हेम विद्याधर की रानी और चन्द्रवती की जननी। पपु० ६.५६४-५६५

(४) माकन्दी नगरी के राजा द्रुपद की प्रिया और द्रौपदी की जननी। हपु० ४५ १२१, पापु० १५ ४१-४२

भोगवर्द्धन—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ तारक प्रतिनारायण का जन्म हुआ था। मपु० ५८ ९०-९१, हपु० ११ ७०

भोगिनी—(१) एक विद्या। यह स्मरतरगिणी शय्या पर सोये हुए मनुष्य को उसके इष्ट से मिला देती है। नदाढ्य को जीवन्धर से मिलाने के लिए गन्धर्वदत्ता ने इसी विद्या का प्रयोग किया था। मपु० ७५. ४३२-४३६

(२) पार्श्वनाथ की छत्रधारिणी देवी पद्मावती। मपु० ७३ १

भोगोपभोगसंख्यान—त्रिविध गुणव्रतो में एक गुणव्रत। इसमें भोग और उपभोग की वस्तुओ का परिमाण किया जाता है। इन्द्रिय-विषयो को जीतने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। इसके पाँच अतिचार हैं—१ सचित्ताहार २ सचित्तसबधाहार ३ सचित्तसन्मिश्राहार ४. अभिषवाहार ५ दुष्पक्वाहार। इसका दूसरा नाम (भोगोपभोगपरिमाण) उपभोग-परिभोग परिमाणव्रत है। पपु० १४ १९८ हपु० ५८ १८२, वीवच० १८ ५१

भोज—(१) वृषभदेव के समय का एक वश। इस वश के राजा न्यायपूर्वक प्रजा का पालन करने से भोज कहलाते थे। मपु० १.६, हपु० ९ ४४

(२) भोजवशी एक राजा। यह सीता के स्वयवर में आया था। पपु० २८ २२१

(३) कृष्ण के पक्ष का एक नृप। यह महारथी था। इसके रथ मे लाल रग के घोडे जोते जाते थे। हपु० ५२ १५

भोजकवृष्टि—मथुरा नगरी के राजा सुवीर और रानी पद्मावती का पुत्र। इसकी रानी का नाम सुमति था। इसके तीन पुत्र थे—उग्रसेन, महासेन और देवसेन। गाधारी इसकी पुत्री थी। इसका अपर नाम भोजकवृष्णि था। हपु० १८ ९-१०, पापु० ७ १४२-१४५

भोजकवृष्णि—मथुरा के राजा सुवीर का पुत्र। हपु० १८ १०, १६ दे० भोजकवृष्टि

भोजनांग—कल्पवृक्षों की एक जाति। ये भोगभूमि के मनुष्यों के लिए इच्छित छ प्रकार के रसों से परिपूर्ण, अत्यन्त स्वादिष्ट खाद्य, स्वाद्य, लेह्य और पेय के भेद से चार प्रकार की भोजन सामग्री प्रदान करते हैं। मपु० ९ ३५-३६, ४५, हपु० ७ ८०, ८५, वीवच० १८ ९१-९२

भोजसुता—भोजवंशी उग्रसेन की राजकुमारी राजीमती (राजुल)। कृष्ण ने नेमिनाथ के लिए इसकी याचना की थी। मपु० ७१ ४५, हपु० ५५ ७१-७२

भोज्य—भोजन के पाँच भेदों में दूसरा भेद क्षुधानिवृत्ति के लिए खाने योग्य पदार्थ। इसके मुख्य और साधक की अपेक्षा दो भेद हैं। इनमें रोटी आदि मुख्य और दाल शाक आदि साधक भोज्य हैं। पपु० २४ ५४

भौम—(१) व्यन्तर देव। हपु० ३.१६२

(२) पृथिवीकायिक जीव। हपु० १८ ७०

(३) अष्टांग निमित्तज्ञान का एक अंग। इससे पृथिवी के स्थान आदि के भेद से हानि-वृद्धि तथा पृथिवी के भीतर रखे हुए रत्न आदि का पता लगाया जाता है। मपु० ६२ १८१, १८४, हपु० १० ११७

भौमावय—प्रथम अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओं में नवीं वस्तु। हपु० १० ७९ दे० अग्रायणीयपूर्व

भ्रम—पाँचवीं पृथिवी के द्वितीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल। यह नगराकार है। इसकी चारों महादिशाओं में बत्तीस और विदिशाओं में अट्ठाईस श्रेणीबद्ध बिल हैं। इस इन्द्रक का विस्तार सात लाख इकतालीस हज़ार छ सौ छियासठ योजन और एक योजन के तीन भागों में से दो भाग प्रमाण है। इसकी जघन्य स्थिति ग्यारह सागर तथा एक सागर के पाँच भागों में दो भाग प्रमाण और उत्कृष्ट स्थिति बारह सागर तथा एक सागर के पाँच भागों में चार भाग प्रमाण होती है। यहाँ नारकियों की अवगाहना सत्तासी धनुष और दो हाथ प्रमाण होती है। हपु० ४ ८३, १३९, २१०, २८६-२८७, ३३३

भ्रमरघोष—एक कुरुवंशी नृप। इसके पश्चात् हरिघोष राजा हुआ था। हपु० ४५ १४

भ्राजिष्णु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

भ्रान्त—प्रथम रत्नप्रभा पृथिवी के चतुर्थ प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४ ७६

भ्रामरी-विद्या—विद्याधर अशनिघोष द्वारा सिद्ध की गयी एक विद्या। इससे अनेक रूप बनाये जाते हैं। मपु० ६२.२३०, २७८

म

मंगल—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

(२) लक्ष्मण तथा उसकी महादेवी कल्याणमाला का पुत्र। पपु० ९४ ३२

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक देश। इसमें पलाशकूट नगर था। मपु० ७१ २७८

(४) रजतमय सौमनस्य पर्वत के सात कूटों में चौथा कूट। हपु० ५ २१२, २२१

मंगल द्रव्य—समवसरण-भूमि के गोपुरों की शोभा-विधायक वस्तुएँ। ये भृङ्गार, कलश आदि के रूप में एक सौ आठ होती हैं। मुख्य रूप से अष्ट मंगल द्रव्य ये हैं—पंखा, छत्र, चँमर, ध्वजा, दर्पण, सुप्रतिष्ठक, भृङ्गार और कलश। जन्म लेते ही तीर्थंकरों को जब इन्द्राणी इन्द्र को देती है तब दिक्कुमारियाँ इन्हीं अष्ट मंगल द्रव्यों को अपने हाथों में लेकर, इन्द्राणी के आगे चलती हैं। मपु० २२ १४३, २७५, हपु० २ ७२, वीवच० ८ ८४-८५

मंगला—(१) परमकल्याणक मन्त्रों से परिष्कृत एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि विद्याधरों को दी थी। हपु० २२ ७०

(२) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा मेघरथ की महादेवी और तीर्थंकर सुमतिनाथ की जननी। मपु० ५१ १९-२०, २३-२४

मंगलावती—(१) पुष्कर द्वीप में पूर्व मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहक्षेत्र का एक देश। रत्नसंचयपुर इसी देश का नगर था। यह सीता नदी और निषध पर्वत के मध्य दक्षिणोत्तर दिशा में विस्तृत है। मपु० ७ १३-१४, १० ११४-११५, हपु० ५ २४७-२४८

(२) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वार्ध में स्थित मेरु पर्वत के पूर्व विदेह क्षेत्र का एक देश। यहाँ भी एक रत्नसंचय नामक नगर था। मपु० ५४ १२९-१३०, हपु० ६० ५७-५८, वीवच० ४ ७२

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के दक्षिणी तट पर स्थित एक देश। मपु० ५० २, पापु० ५ ११

मंगिनी—तीर्थंकर नमिनाथ के संघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ६९ ६४

मंगी—(१) अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी के सेठ विमलचन्द्र की पुत्री। इसका विवाह उज्जयिनी के राजकुमार वज्रमुष्टि से हुआ था। ईर्ष्यावश इसकी सास ने कलश में फूलों के साथ सर्प भी रख छोड़ा था। जैसे ही इसने पूजा के हेतु फूल निकालने के लिए कलश में हाथ डाला कि सर्प ने इसे डस लिया। सास ने इसे निश्चेष्ट देखकर श्मसान में डलवाया दिया था परन्तु वज्रमुष्टि इसे अचेतावस्था में मुनिराज के समीप ले आया था। मुनि के चरणस्पर्श से वह विषहीन हो गयी थी। माता के इस कुकृत्य से विरक्त होकर वज्रमुष्टि ने वरधर्म मुनि से दीक्षा ग्रहण कर ली तथा इसने भी आर्यिका के समीप आर्यिका-दीक्षा ले ली। मपु० ७१ २०८-२२८, २४७-२४८, हपु० ३३ १०४-१२३, १२८-१२९

(२) श्रीभूति पुरोहित का जीव-एक भीलनी। यह दारुण भील की भार्या थी। मपु० ५९ २७३, हपु० २७ १०७

मंजरिका—रावण की दूती। सीता का अभिप्राय जानने के लिए रावण ने सीता के पास इसे भेजा था। मपु० ६८.३२१-३२२

मंजुस्वनी—रथनूपुर नगर के राजा सहस्रार की एक नर्तकी। यह इन्द्र की अप्सरा के समान थी। पपु० ७ ३१

मजूषा—विदेह क्षेत्र की एक नगरी। यह विदेह क्षेत्र के लागला देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २०८, २१३, हपु० ५ २५७

मंजोदरी—कौशाम्बी की एक कलारिन। इसने कस का पालन किया था। इसका अपर नाम मण्डोदरी था। मपु० ७०.३४७, हपु० ३३ १३-१७

मंडव—एक तापस। अयोध्या के राजा मधु का सामन्त वीरसेन अपनी प्रिया के हरी जाने पर इसका शिष्य हो गया था और इसके पास पचाग्नितप करने लगा था। पपु० १०९ १३५, १४७-१४८

मंडित—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित पाँचवाँ नगर। हपु० २२ ९३

मंडुक—रण के लिए प्रस्थान करते समय बजाया जानेवाला एक वाद्य। यह वाद्य राम की सेना के लका की ओर प्रस्थान करते समय बजाया गया था। पपु० ५८ २७

मडूक—राजगृह का समीपवर्ती एक ग्राम। रुक्मिणी अपने पूर्वभव मे इसी ग्राम के त्रिपद धीवर की पूतिगन्धिका नाम की पुत्री थी। हपु० ६०.३३

मंडूकी—मण्डूक ग्राम के निवासी त्रिपद धीवर की स्त्री। मपु० ७१ ३२६, हपु० ६० ३३

मकर—रावण का एक सामन्त। यह राम की सेना से लडने के लिए सिंहरथ पर आरूढ होकर निकला था। पपु० ५७.४६-४८

मकरध्वज—(१) एक विद्याधर। यह लोकपाल सोम का पिता था। पपु० ७.१०८

(२) एक वानर कुमार। यह राम के रोकने पर भी बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण को कुपित करने की भावना से लका गया था। पपु० ७० १५-१६

(३) रावण का सहायक योद्धा। पपु० ७४ ६३-६४

(४) लक्ष्मण का पुत्र। पपु० ९४ २७-२८

(५) प्रद्युम्न। हपु० ५५ ३१ दे० प्रद्युम्न

मकरव्यूह—युद्ध में आयोजित विशिष्ट सैन्य-रचना। जयकुमार ने अर्ककीर्ति के साथ युद्ध करते समय इसी व्यूह की रचना की थी। कौरव-पाण्डव युद्ध में भी अठारहवें दिन अर्जुन ने कर्ण के विरुद्ध इसी व्यूह की रचना की थी। मपु० ४४ १०९, पापु० ३ ९६, २० २४३-२४४

मकरी—अयोध्या के निवासी करोडपति सेठ वज्राक की प्रिया। इसके अशोक और तिलक नाम के दो विनीत पुत्र थे। पपु० १२३ ८६, ८९-९१

मख—पूजाविधि का पर्यायवाची शब्द। मपु० ६७ १९३

मखज्येष्ठ—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४१

मखाग—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४१

मगध—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की पूर्व दिशा में विद्यमान एक देश। राजगृह इसी देश का एक नगर है। कर्मभूमि के आरम्भ में वृषभदेव की इच्छा से इस देश की रचना स्वय इन्द्र ने की थी। केवलज्ञान होने पर तीर्थंकर वृषभदेव और नेमिनाथ ने यहाँ विहार किया था। यहाँ का भू-भाग ईख, मूँग, मौठ, धान्य आदि धान्यो से सम्पन्न रहा है। यहाँ सभी वर्णों के लोग धर्म, अर्थ और काम इस त्रिवर्ग के साधक थे। यहाँ चैत्यालय थे। भरतेश ने इस पर विजय की थी। मपु० २४-७, १६ १५३, २५.२८७-२८८, २९ ४७, ५७ ७० पपु० १०९ ३५-३६, हपु० ११ ६८-६९, ४३.९९, ५९.११०, पापु० १. १०१-१०२

मगधराज—राजा श्रेणिक। पपु० २ १४३

मगधा-सारनलका—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित बियालीसवी नगरी। हपु० २२ ९९

मघवा—(१) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र से सम्बन्धित वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का नृप। इसकी वीतशोका महादेवी तथा रघु पुत्र था। मपु० ७० ६३-६४

(२) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३०

(३) अवसर्पिणी काल के चौथे दु षमा-सुषमा काल मे उत्पन्न शलाका पुरुष एव तीसरे चक्रवर्ती। ये तीर्थंकर धर्मनाथ के तीर्थ में उत्पन्न हुए थे। कोशलदेव की अयोध्या नगरी के राजा सुमित्र इनके पिता तथा रानी भद्रा इनकी माता थी। इनकी आयु पाँच लाख वर्ष थी। शरीर स्वर्ण के समान कान्तिधारी साढे चालीस धनुष ऊँचा था। इनके पास चौदह महारत्न, नौ निधियाँ थी। इनकी छियानवें हजार रानियाँ थी। इन्होंने मुनि अभयघोष से तत्त्वोपदेश सुनकर प्रियमित्र पुत्र को राज्य सौंप करके तथा सयम धारण करके कर्मों का नाश किया और ये ससार से मुक्त हुए। दूसरे पूर्वभव में ये पुण्डरीकिणी नगरी के शशिप्रभ राजा और प्रथम पूर्वभव में स्वर्ग में देव थे। मपु० ६१ ८८-१०२, पपु० २० १३१-१३३, हपु० ६०. २८६, वीवच० १८.१०१, १०९-११०

मघवी—छठी तम प्रभा पृथिवी का रूढ नाम। हपु० ४ ४५-४६, दे० तम प्रभा

मघा—एक नक्षत्र। तीर्थङ्कर सुमतिनाथ इसी नक्षत्र में पैदा हुए थे। पपु० २० ४१

मघोनी—मेघपुर नगर के राजा मेरु विद्याधर की रानी और मृगारिदमन की जननी। पपु० ६ ५२५

मटम्ब—पाँच सौ ग्रामो का समूह। अपर नाम मडम्ब। मपु० १६ १७२, हपु० २ ३, पापु० २ १५९

मठ—तापसियो का आश्रम। ये विशाल पत्तो से आच्छादित होते थे। इनमें पालतू पशु-पक्षी भी रहते थे। यहाँ धान्य न्यूनतम श्रम से उत्पन्न होता था। अनेक फलोवाले वृक्ष भी होते थे। मपु० ६५. ११५-११७, पपु० ३३ ३-६

मडम्ब—पाँच सौ ग्रामो से आवृत नगर। इसका अपर नाम मटम्ब था। मपु० १६.१७२ दे० मटम्ब

मण्डलेश्वर—अर्धचक्री से छोटा शासक। इसके आठ चमर ढोरे जाते हैं। इसके पास चक्रवर्ती का चौथाई वैभव होता है। मपु० २३ ६०

मण्डोदरी—कौशाम्बी नगरी की शौण्डकारिणी (मद्य बेचनेवाली)। मपु० ७० ३४७ दे० मजोदरी

मणि—(१) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। मपु० ३७. ८३-८५

(२) विदेहक्षेत्र के रत्नसंचयन नगर का अमात्य। इसकी गुणावली स्त्री और सामन्तवर्द्धन पुत्र था। पपु० १३ ६२

(३) कुण्डलगिरि के पश्चिम दिशा सम्बन्धी चार कूटों में एक कूट। श्रीवृक्षदेव इसी कूट पर रहता है। हपु० ५ ६९३

मणिकांचन—वैताढ्य पर्वत की एक गुहा। तापस सुमित्र और उसकी पत्नी सोमयशा के पुत्र को जृम्भक देव हरकर इसी गुहा में लाया था तथा कल्पवृक्षों से उत्पन्न दिव्य आहार से उसने उसका पालन किया था। इसी ने उसका नाम नारद रखा था। हपु० ४२ १४-१८

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का छत्तीसवाँ नगर हपु २२ ८९

(३) कुलाचल शिखरी का ग्यारहवाँ कूट। हपु० ५ १०७

(४) कुलाचल रुक्मी का आठवाँ कूट। हपु० ५ १०४

मणिकान्त—एक पर्वत। अनुराधा के पुत्र विराधित का यहीं जन्म हुआ था। पपु० ९ ४०-४२

मणिकुण्डल—(१) विजयार्ध-पर्वत की दक्षिणश्रेणी में आदित्य नगर के राजा सुकुण्डली विद्याधर और उसकी रानी मित्रसेना का पुत्र। मपु० ६२ ३६१-३६२

(२) मणियों से निर्मित कर्णाभूषण। वृषभदेव ने यह आभूषण धारण किया था। मपु० ९ १९०, १४ १०, ३३, १२४

मणिकुण्डली—(१) नन्द-विमान का वासी एक देव। यह मणिखचित मुकुट, केयूर और कुण्डलों से विभूषित था। मपु० ९ १९०

(२) पुष्करवर-द्वीप के वीतशोक-नगर के राजा चक्रध्वज की रानी कनकमाला का जीव—एक राजा। मपु० ६२ ३६३-३६९

मणिकेतु—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह सम्बन्धी वत्सकावती देश में पृथिवी-नगर के राजा जयसेन के साले महारुत का जीव—अच्युत स्वर्ग का देव। पूर्वभव का इसका बहनोई जयसेन भी सन्यासमरण करके इसी स्वर्ग में महाबल नाम का देव हुआ था। मणिकेतु और महाबल दोनों ने परस्पर पृथिवी पर प्रथम अवतरित होनेवाले को सम्बोध कर दीक्षा धारण कराने हेतु प्रेरणा देने की प्रतिज्ञा की थी। महाबल देव इसके पूर्व स्वर्ग से च्युत हुआ। पृथिवी पर महाबल का नाम सगर चक्रवर्ती रखा गया। स्वर्ग में की गयी प्रतिज्ञा के अनुसार इसने युक्तिपूर्वक सगर के पास जाकर उसे दीक्षा धारण करा दी थी। अन्त में इसने अपने द्वारा किये गये मायावी व्यवहार को सगर और उसके पुत्रों के समक्ष प्रकट करके उससे क्षमायाचना की थी। इस प्रकार यह अपना कार्य सिद्ध करके सन्तुष्ट होकर स्वर्ग लौट गया था। मपु० ४८ ५८-६९, ८२-१३६

मणि-गंगा—गंगा नदी का तटवर्ती एक वैदिक तीर्थ। तीसरे पूर्वभव में श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार का जीव एक ब्राह्मण का पुत्र था। उसने तीर्थ समझकर यहाँ स्नान किया था। मपु० ७४ ४६५-४६६, ४७९-४८८

मणिग्रीव—एक विद्याधर। यह चक्रध्वज का पुत्र और मण्यंक का पिता था। पपु० ५ ५१

मणिचूल—(१) पर्यंक गुफा का निवासी एक गन्धर्व देव। इसकी देवी का नाम रत्नचूला था। पर्यंक-गुफा में अंजना की रक्षा इसी देव ने की थी पपु० १७ २१३, २४२-२४९

(२) सौधर्म स्वर्ग का एक देव। यह पूर्वभव में राजा महाबल का स्वयंबुद्ध नामक मन्त्री था। मपु० ९ १०७

(३) लक्ष्मण का जीव-एक देव। मपु० ६७ १५२

(४) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०४

(५) धातकीखण्ड द्वीप में भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल और रानी मनोहरी रानी का युगल रूप में उत्पन्न पुत्र। इसके साथ पुष्पचूल का जन्म हुआ था। मपु० ७१ २४९-२५२, हपु० ३३ १३१-१३३

मणिचूलक—तेरहवें स्वर्ग के स्वस्तिक विमान का एक देव। मपु० ६२ ४१०-४११

मणिचूला—अयोध्या नगरी के राजा अरिंदम की पुत्री सुप्रबुद्धा का जीव-सौधर्मेन्द्र की एक देवी। मपु० ७२.२५-३६

मणिनागदत्त—रतिकूल मुनि की गृहस्थावस्था का पिता। मपु० ४६ ३६३

मणिप्रभ—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का छब्बीसवाँ नगर। हपु० २२ ९६

(२) दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य) विदिशा में स्थित एक कूट। यह देवी रुचकाभा की निवासभूमि था। हपु० ५ ७२३

(३) कुण्डलगिरि की पश्चिम दिशा में विद्यमान चार कूटों में एक कूट। यह स्वस्तिक देव की निवासभूमि था। हपु० ५ ६९३

मणिभद्र—(१) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र में विजयार्ध के नौ कूटों में छठा कूट। हपु० ५ २७

(२) ऐरावत क्षेत्र के मध्य स्थित विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में चौथा कूट। हपु० ५ ११०

(३) अयोध्या नगरी के सेठ समुद्रदत्त और उसकी पत्नी धारिणी का कनिष्ठ पुत्र तथा पूर्णभद्र का अनुज। ये दोनों भाई चिरकाल तक श्रावक के उत्तम व्रतों का पालन करके अन्त में सल्लेखनापूर्वक मरे और सौधर्म स्वर्ग में उत्तम देव हुए। वहाँ से चयकर ये मधु और कैटभ हुए। मपु० ७२ २५-२६, ३६-३७, हपु० ५ १५८-१५९, ४३ १४८-१४९

(४) वैश्रवण का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ८ १९५

(५) रावण का पक्षधर का एक यक्ष। इसने अपने साथी यक्षेन्द्र पूर्णभद्र के साथ रहकर ध्यानस्थ रावण पर उपसर्ग करनेवाले वानरकुमारों का सामना किया था और रावण की रक्षा की थी। हपु० ७० ६८-७८

(६) व्यन्तर देवों का एक इन्द्र । वीवच० १४.५९-६३

(७) एक यक्ष । इसने विन्ध्याचल पर्वत के शिवमन्दिर के द्वार खोलने के उपलक्ष्य में पाण्डव भीम को शत्रु का क्षय करनेवाली एक गदा दी थी । पापु० १४.२०३-२०६

मणिभासुर—विद्याधर वंश का एक राजा । यह मण्यक का पुत्र और मणिस्पन्दन का पिता था । पपु० ५.५१

मणिमती—विजयार्ध पर्वत पर स्थित स्थालक नगर के विद्याधर राजा अमितवेग की पुत्री । इसे विद्या-सिद्धि मे सलग्न देखकर रावण कामासक्त हो गया था । उसने इसकी विद्या हर ली थी जिससे कुपित होकर इसने रावण वध का निदान किया था । इसी निदान के कारण यह आयु के अन्त में मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न हुई थी । इस पर्याय में इसका नाम सीता था । मपु० ६८.१३-१७

मणिमध्यमा—कण्ठ का आभूषण—एक हार । इसके मध्य में मणि लगा रहता था । सूत्र और एकावली इसके अपर नाम हैं । मपु० १६.५०

मणिमाली—विद्याधर दण्ड का पुत्र । इसका पिता आर्तध्यान से मरकर इसके भण्डार में अजगर हुआ था । किसी निमित्तज्ञानी ने पिता को विषय-त्याग का उपदेश दिया था । अजगर ने उपदेश सुना और विषयो का त्याग किया । मरकर वह ऋद्धिधारी देव हुआ । इस देव ने आकर इसे एक हार उपहार में दिया । मपु० ५.११७-१३७

मणिवज्र—जम्बूद्वीप सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का इकतीसवाँ नगर । मपु० १९.८४, ८७, हपु० २२.८८

मणिसोपान—सोने की पाँच लड़ियों से युक्त रत्नजटित हार । मपु० १६. ६५-६६

मणिस्यन्दन—एक विद्याधर । यह मणिभासुर का पुत्र और मण्यास्य का पिता था । पपु० ५.५१

मणिहार—कंठ का आभूषण-मणियों से निर्मित हार । मपु० ५.१३६, १४.११

मण्यंक—एक विद्याधर । यह मणिग्रीव का पुत्र और मणिभासुर का पिता था । पपु० ५.५१

मण्यास्य—एक विद्याधर । यह मणिस्यन्दन का पुत्र और बिम्बोष्ठ का पिता था । पपु० ५.५१

मतगज—राजा वसुदेव और रानी नीलयशा का कनिष्ठ पुत्र और सिंह का अनुज । मपु० ४८.५७, ६५

मति—इहलौकिक तथा पारलौकिक पदार्थों के विषय में हित तथा अहित का ज्ञान । मपु० ३८.२७१, ४२.३१

मतिकान्त—राम का मंत्री । इसने विभीषण को राम के पास आने पर उसे रावण द्वारा छलपूर्वक भेजे जाने की आशका प्रकट की थी । पपु० ५५.५२

मतिज्ञान—पाँच प्रकार के ज्ञान मे प्रथम ज्ञान । यह पाँच इन्द्रियों तथा मन की सहायता से प्रकट होता है । यद्यपि यह परोक्ष ज्ञान है परन्तु इन्द्रियो की अपेक्षा से उत्पन्न होने के कारण साव्यवहारिक प्रत्यक्ष भी कहलाता है । यह अन्तरग कारण मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम की अपेक्षा रखता है । इसके अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा ये चार भेद हैं । यह ज्ञान पाँच इन्द्रियो और मन इन छ साधनो से होता है । अत उक्त चारो भेदो में प्रत्येक के छ छ भेद कर देने से इसके चौबीस भेद हो जाते हैं । इन भेदो में शब्द, गन्ध, रस और स्पर्श ये व्यजनावग्रह के चार भेद मिला देने से अट्ठाईस भेद और इनमें अवग्रह आदि चार मूल भेद मिला देने से बत्तीस भेद हो जाते हैं । इस प्रकार इस ज्ञान के चौबीस, अट्ठाईस और बत्तीस ये तीन मूल भेद हैं । इनमें क्रम से बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनि सृत, अनुक्त ध्रुव इन छ का गुणा करने पर क्रमश· एक सौ चवालीस, एक सो अड़सठ और एक सौ बानवे भेद हो जाते हैं । बहु आदि छ और इनके विपरीत एक आदि छ इन बारह भेदो का उक्त तीनो राशियो चौबीस, अट्ठाईस और बत्तीस में गुणा करने से इस ज्ञान के क्रमश दो सौ अठासी, तीन सौ छत्तीस और तीन सौ चौरासी भेद हो जाते है । मिथ्यादृष्टि जीवो को प्राप्त यह ज्ञान कुमतिज्ञान कहलाता है । यह ज्ञान पदार्थ-चिन्तन में सहायक तथा कोष्ठबुद्धि आदि ऋद्धियो का साधक भी होता है । मपु० ३६.१४२, १४६, हपु० १०.१४५-१५१

मतिज्ञानावरण—मतिज्ञान को रोकनेवाला कर्म । इसके उदय से जीव विकलागी होते है । इस कर्म का उदय उन जीवो के होता है जो हिंसा आदि पाँच पापो मे अपनी इच्छा से प्रवृत्त होते हैं । श्रीजिनेन्द्र द्वारा उपदिष्ट तत्त्वार्थ को उन्मत्त पुरुष के समान यद्वा-तद्वा रूप से ग्रहण करते है और सच्चे तथा झूठे दोनो देव, शास्त्र, गुरु, धर्म, प्रतिमा आदि को समान मानते हैं । दूसरो को छल से ठगने से उद्यत जो पुरुष खोटी शिक्षा देते हैं और जो अज्ञानी पुरुष सद्-असद् विचार के बिना धर्म के लिए सच्चे और झूठे देव-शास्त्र-गुरुओ की भक्ति-पूर्वक पूजा करते हैं वे इस कर्म के उदय से दुर्बुद्धि और अशुभ प्रवृत्ति के होते हैं । वीवच० १७.१११-११२, १२९-१३०

मतिप्रिया—नैषिक ग्राम के राजा सूर्यदेव की रानी । इसने गिरि और गोभूति बटुको को कपालो मे भात से ढककर स्वर्ण दान में दिया था । पपु० ५५.५७-५९

मतिवर—मतिसागर और श्रीमती का पुत्र । यह उत्पलखेटपुर के नृप वज्रजघ का महामन्त्री था । इसने राजा वज्रजघ और रानी श्रीमती के वियोग से शोक-सतप्त होकर मुनि दृढधर्म से दीक्षा ले ली थी तथा तपश्चरण करते हुए मरकर यह अधोग्रैवेयक के सबसे नीचे विमान में देव हुआ था । मपु० ८.११६, २१५, ९.९१-९३

मतिवर्धन—मुनि-सघ के महातपस्वी एक आचार्य । इनका धर्मोपदेश सुनकर पद्मिनी नगरी का राजा विजयपर्वत मुनि हो गया था । पपु० ३९.९५-१२७

मतिवाकसार—मलय देश के राजा मेघरथ का सचिव, अपर नाम सत्यकीर्ति । इसने राजा के पूछने पर शास्त्रदान, अभयदान और अन्नदान इन तीन प्रकार के दानो में शास्त्रदान को श्रेष्ठ दान निरू-पित किया था । मपु० ५६.६४-७३

मण्डलेश्वर—अर्धचक्री से छोटा शासक। इसके आठ चमर ढोरे जाते हैं। इसके पास चक्रवर्ती का चौथाई वैभव होता है। मपु० २३ ६०

मण्डोदरी—कौशाम्बी नगरी की शौण्डकारिणी (मद्य बेचनेवाली)। मपु० ७० ३४७ दे० मजोदरी

मणि—(१) चक्रवर्ती के चौदह रत्नों में एक अजीव रत्न। मपु० ३७. ८३-८५

(२) विदेहक्षेत्र के रत्नसंचयन नगर का अमात्य। इसकी गुणावली स्त्री और सामन्तवर्द्धन पुत्र था। पपु० १३ ६२

(३) कुण्डलगिरि के पश्चिम दिशा सम्बन्धी चार कूटों में एक कूट। श्रीवक्षदेव इसी कूट पर रहता है। हपु० ५ ६९३

मणिकांचन—वैताढ्य पर्वत की एक गुहा। तापस सुमित्र और उसकी पत्नी सोमयशा के पुत्र को जृम्भक देव हरकर इसी गुहा में लाया था तथा कल्पवृक्षों से उत्पन्न दिव्य आहार से उसने उसका पालन किया था। उसी ने उसका नाम नारद रखा था। हपु० ४२ १४-१८

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का छत्तीसवाँ नगर हपु २२ ८९

(३) कुलाचल शिखरी का ग्यारहवाँ कूट। हपु० ५ १०७

(४) कुलाचल रुक्मी का आठवाँ कूट। हपु० ५.१०४

मणिकान्त—एक पर्वत। अनुराधा के पुत्र विराधित का यहीं जन्म हुआ था। पपु० ९.४०-४२

मणिकुण्डल—(१) विजयार्ध-पर्वत की दक्षिणश्रेणी में आदित्य नगर के राजा सुकुण्डली विद्याधर और उसकी रानी मित्रसेना का पुत्र। मपु० ६२.३६१-३६२

(२) मणियों से निर्मित कर्णाभूषण। वृषभदेव ने यह आभूषण धारण किया था। मपु० ९ १९०, १४ १०, ३३, १२४

मणिकुण्डली—(१) नन्द-विमान का वासी एक देव। यह मणिखचित मुकुट, केयूर और कुण्डलों से विभूषित था। मपु० ९ १९०

(२) पुष्करवर-द्वीप के वीतशोक-नगर के राजा चक्रध्वज की रानी कनकमाला का जीव—एक राजा। मपु० ६२ ३६३-३६९

मणिकेतु—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह सम्बन्धी वत्सकावती देश में पृथिवी-नगर के राजा जयसेन के साले महारुत का जीव—अच्युत स्वर्ग का देव। पूर्वभव का इसका बहनोई जयसेन भी सन्यासमरण करके इसी स्वर्ग में महाबल नाम का देव हुआ था। मणिकेतु और महाबल दोनों ने परस्पर पृथिवी पर प्रथम अवतरित होनेवाले को सम्बोध कर दीक्षा धारण कराने हेतु प्रेरणा देने की प्रतिज्ञा की थी। महाबल देव इसके पूर्व स्वर्ग से च्युत हुआ। पृथिवी पर महाबल का नाम सगर चक्रवर्ती रखा गया। स्वर्ग में की गयी प्रतिज्ञा के अनुसार इसने युक्तिपूर्वक सगर के पास जाकर उसे दीक्षा धारण करा दी थी। अन्त में इसने अपने द्वारा किये गये मायावी व्यवहार को सगर और उसके पुत्रों के समक्ष प्रकट करके उससे क्षमायाचना की थी। इस प्रकार यह अपना कार्य सिद्ध करके सतुष्ट होकर स्वर्ग लौट गया था। मपु० ४८ ५८-६९, ८२-१३६

मणि-गंगा—गंगा नदी का तटवर्ती एक वैदिक तीर्थ। तीसरे पूर्वभव में श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार का जीव एक ब्राह्मण का पुत्र था। उसने तीर्थ समझकर यहाँ स्नान किया था। मपु० ७४ ४६५-४६६, ४७९-४८८

मणिग्रीव—एक विद्याधर। यह चक्रध्वज का पुत्र और मण्यक का पिता था। पपु० ५ ५१

मणिचूल—(१) पर्यंक गुफा का निवासी एक गन्धर्व देव। इसकी देवी का नाम रत्नचूला था। पर्यंक-गुफा में अजना की रक्षा इसी देव ने की थी पपु० १७ २१३, २४२-२४९

(२) सौधर्म स्वर्ग का एक देव। यह पूर्वभव में राजा महाबल का स्वयबुद्ध नामक मन्त्री था। मपु० ९ १०७

(३) लक्ष्मण का जीव-एक देव। मपु० ६७ १५२

(४) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०४

(५) धातकीखण्ड द्वीप में भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर के राजा चन्द्रचूल और रानी मनोहरी रानी का युगल रूप में उत्पन्न पुत्र। इसके साथ पुष्पचूल का जन्म हुआ था। मपु० ७१ २४९-२५२, हपु० ३३ १३१-१३३

मणिचूलक—तेरहवें स्वर्ग के स्वस्तिक विमान का एक देव। मपु० ६२ ४१०-४११

मणिचूला—अयोध्या नगरी के राजा अरिंदम की पुत्री सुप्रबुद्धा का जीव-सौधर्मेन्द्र की एक देवी। मपु० ७२ २५-३६

मणिनागदत्त—रतिकूल मुनि की गृहस्थावस्था का पिता। मपु० ४६ ३६३

मणिप्रभ—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का छब्बीसवाँ नगर। हपु० २२ ९६

(२) दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य) विदिशा में स्थित एक कूट। यह देवी रुचकाभा की निवासभूमि था। हपु० ५ ७२३

(३) कुण्डलगिरि की पश्चिम दिशा में विद्यमान चार कूटों में एक कूट। यह स्वस्तिक देव की निवासभूमि था। हपु० ५ ६९३

मणिभद्र—(१) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र में विजयार्ध के नौ कूटों में छठा कूट। हपु० ५ २७

(२) ऐरावत क्षेत्र के मध्य स्थित विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में चौथा कूट। हपु० ५.११०

(३) अयोध्या नगरी के सेठ समुद्रदत्त और उसकी पत्नी धारिणी का कनिष्ठ पुत्र तथा पूर्णभद्र का अनुज। ये दोनों भाई चिरकाल तक श्रावक के उत्तम व्रतों का पालन करके अन्त में सल्लेखनापूर्वक मरे और सौधर्म स्वर्ग में उत्तम देव हुए। वहाँ से चयकर ये मधु और कैटभ हुए। मपु० ७२ २५-२६, ३६-३७, हपु० ५ १५८-१५९, ४३ १४८-१४९

(४) वैश्रवण का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ८ १९५

(५) रावण का पक्षधर का एक यक्ष। इसने अपने साथी यक्षेन्द्र पूर्णभद्र के साथ रहकर ध्यानस्थ रावण पर उपसर्ग करनेवाले वानरकुमारों का सामना किया था और रावण की रक्षा की थी। हपु० ७० ६८-७८

(६) व्यन्तर देवो का एक इन्द्र । वीवच० १४ ५९-६३

(७) एक यक्ष । इसने विन्ध्याचल पर्वत के शिवमन्दिर के द्वार खोलने के उपलक्ष्य में पाण्डव भीम को शत्रु का क्षय करनेवाली एक गदा दी थी । पापु० १४ २०३-२०६

मणिभासुर—विद्याधर वंश का एक राजा । यह मण्यक का पुत्र और मणिस्पन्दन का पिता था । पपु० ५ ५१

मणिमती—विजयार्ध पर्वत पर स्थित स्थालक नगर के विद्याधर राजा अमितवेग की पुत्री । इसे विद्या-सिद्धि मे संलग्न देखकर रावण कामासक्त हो गया था । उसने इसकी विद्या हर ली थी जिससे कुपित होकर इसने रावण वध का निदान किया था । इसी निदान के कारण यह आयु के अन्त में मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न हुई थी । इस पर्याय में इसका नाम सीता था । मपु० ६८ १३-१७

मणिमध्यमा—कण्ठ का आभूषण—एक हार । इसके मध्य में मणि लगा रहता था । सूत्र और एकावली इसके अपर नाम है । मपु० १६ ५०

मणिमाली—विद्याधर दण्ड का पुत्र । इसका पिता आर्तध्यान से मरकर इसके भण्डार में अजगर हुआ था । किसी निमित्तज्ञानी ने पिता को विषय-त्याग का उपदेश दिया था । अजगर ने उपदेश सुना और विषयो का त्याग किया । मरकर वह ऋद्धिधारी देव हुआ । इस देव ने आकर इसे एक हार उपहार में दिया । मपु० ५ ११७-१३७

मणिवज्र—जम्बूद्वीप सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का इकतीसवाँ नगर । मपु० १९ ८४, ८७, हपु० २२ ८८

मणिसोपान—सोने की पाँच लड़ियो से युक्त रत्नजटित हार । मपु० १६. ६५-६६

मणिस्पन्दन—एक विद्याधर । यह मणिभासुर का पुत्र और मण्यास्य का पिता था । पपु० ५ ५१

मणिहार—कठ का आभूषण-मणियो से निर्मित हार । मपु० ५ १३६, १४.११

मण्यंक—एक विद्याधर । यह मणिग्रीव का पुत्र और मणिभासुर का पिता था । पपु० ५ ५१

मण्यास्य—एक विद्याधर । यह मणिस्पन्दन का पुत्र और बिम्बोष्ठ का पिता था । पपु० ५ ५१

मतगज—राजा वसुदेव और रानी नीलयशा का कनिष्ठ पुत्र और सिंह का अनुज । मपु० ४८ ५७, ६५

मति—इहलौकिक तथा पारलौकिक पदार्थों के विषय मे हित तथा अहित का ज्ञान । मपु० ३८ २७१, ४२ ३१

मतिकान्त—राम का मन्त्री । इसने विभीषण को राम के पास आने पर उसे रावण द्वारा छलपूर्वक भेजे जाने की आशंका प्रकट की थी । पपु० ५५ ५२

मतिज्ञान—पाँच प्रकार के ज्ञान में प्रथम ज्ञान । यह पाँच इन्द्रियो तथा मन की सहायता से प्रकट होता है । यद्यपि यह परोक्ष ज्ञान है परन्तु इन्द्रियो की अपेक्षा से उत्पन्न होने के कारण साव्यवहारिक प्रत्यक्ष भी कहलाता है । यह अन्तरग कारण मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम की अपेक्षा रखता है । इसके अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा ये चार भेद है । यह ज्ञान पाँच इन्द्रियो और मन इन छ साधनो से होता है । अत उक्त चारो भेदो में प्रत्येक के छ छ भेद कर देने से इसके चौबीस भेद हो जाते हैं । इन भेदो में शब्द, गन्ध, रस और स्पर्श ये व्यजनावग्रह के चार भेद मिला देने से अट्ठाईस भेद और इनमें अवग्रह आदि चार मूल भेद मिला देने से बत्तीस भेद हो जाते हैं । इस प्रकार इस ज्ञान के चौबीस, अट्ठाईस और बत्तीस ये तीन मूल भेद है । इनमे क्रम से बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनि सृत, अनुक्त ध्रुव इन छ का गुणा करने पर क्रमश एक सौ चवालीस, एक सो अडसठ और एक सौ बानवे भेद हो जाते हैं । बहु आदि छ और इनके विपरीत एक आदि छ इन बारह भेदो का उक्त तीनो राशियो चौबीस, अट्ठाईस और बत्तीस मे गुणा करने से इस ज्ञान के क्रमश दो सौ अठासी, तीन सौ छत्तीस और तीन सौ चौरासी भेद हो जाते है । मिथ्यादृष्टि जीवो को प्राप्त यह ज्ञान कुमतिज्ञान कहलाता है । यह ज्ञान पदार्थ-चिन्तन में सहायक तथा कोष्ठबुद्धि आदि ऋद्धियो का साधक भी होता है । मपु० ३६ १४२, १४६, हपु० १० १४५-१५१

मतिज्ञानावरण—मतिज्ञान को रोकनेवाला कर्म । इसके उदय से जीव विकलागी होते हैं । इस कर्म का उदय उन जीवो के होता है जो हिंसा आदि पाँच पापो में अपनी इच्छा से प्रवृत्त होते हैं । श्रीजिनेन्द्र द्वारा उपदिष्ट तत्त्वार्थ को उन्मत्त पुरुष के समान यद्वा-तद्वा रूप से ग्रहण करते हैं और सच्चे तथा झूठे दोनो देव, शास्त्र, गुरु, धर्म, प्रतिमा आदि को समान मानते हैं । दूसरो को छल से ठगने से उद्यत जो पुरुष खोटी शिक्षा देते है और जो अज्ञानी पुरुष सद्-असद् विचार के बिना धर्म के लिए सच्चे और झूठे देव-शास्त्र-गुरुओ की भक्ति-पूर्वक पूजा करते हैं वे इस कर्म के उदय से दुर्बुद्धि और अशुभ प्रवृत्ति के होते हैं । वीवच० १७ १११-११२, १२९-१३०

मतिप्रिया—नैषिक ग्राम के राजा सूर्यदेव की रानी । इसने गिरि और गोभूति बटुको को कपालो में भात से ढककर स्वर्ण दान में दिया था । पपु० ५५ ५७-५९

मतिवर—मतिसागर और श्रीमती का पुत्र । यह उत्पलखेटपुर के नृप वज्रजघ का महामन्त्री था । इसने राजा वज्रजघ और रानी श्रीमती के वियोग से शोक-सतप्त होकर मुनि दृढधर्म से दीक्षा ले ली थी तथा तपश्चरण करते हुए मरकर यह अधोग्रैवेयक के सबसे नीचे विमान में देव हुआ था । मपु० ८ ११६, २१५, ९ ९१-९३

मतिवर्धन—मुनि-सघ के महातपस्वी एक आचार्य । इनका धर्मोपदेश सुनकर पद्मिनी नगरी का राजा विजयपर्वत मुनि हो गया था । पपु० ३९ ९५-१२७

मतिवाकसार—मलय देश के राजा मेघरथ का सचिव, अपर नाम सत्यकीर्ति । इसने राजा के पूछने पर शास्त्रदान, अभयदान और अन्नदान इन तीन प्रकार के दानो में शास्त्रदान को श्रेष्ठ दान निरूपित किया था । मपु० ५६ ६४-७३

मतिसमुद्र—(१) चक्रवर्ती भरत का मन्त्री । इसने वृषभदेव के समवसरण में सुने वचनों के अनुसार भरतेश के समक्ष ब्राह्मणों की पंचमकालीन स्थिति का यथावत् कथन किया था । भरतेश इसे सुनकर कुपित हुए थे और वे ब्राह्मणों को मारने को उद्यत हुए थे किन्तु वृषभदेव ने "मा-हन्" कहकर उनकी रक्षा की थी । वृषभदेव इस कारण भ्राता कहलाये तथा "मा-हन" ब्राह्मणों का पर्याय हो गया । पपु० ४.११५-१२३

(२) राम का एक मन्त्री । इसने कथाओं के माध्यम से राम को यह विश्वास दिलाया था कि एक योनि से उत्पन्न होने के कारण जैसा रावण दुष्ट है, वैसा विभीषण को भी दुष्ट होना चाहिए, यह बात नहीं है । इसके ऐसा कहने पर ही विभीषण को राम के पास आने दिया गया था । पपु० ५५.५४-७१

मतिसागर—(१) राजा श्रीविजय का मन्त्री । यह सूझबूझ का धनी था । निमित्तज्ञानी द्वारा पोदनपुर के राजा के ऊपर वज्रपात होना बताये जाने पर इसी ने पोदनपुर के राजा श्रीविजय को वज्रपात के संकट से बचाया था । इसने राज्यसिंहासन से राजा श्रीविजय को हटाकर राज्य-सिंहासन पर उसका पुतला स्थापित करने के लिए अन्य मन्त्रियों से कहा था । सभी मन्त्रियों ने इसकी बुद्धि की प्रशंसा करते हुए पुतले की सिंहासन पर स्थापना की थी तथा वे पोदनाधीश की कल्पना से उसे नमस्कार करने लगे थे । राजा ने राज्य त्यागकर जिनमन्दिर में जिन पूजन आरम्भ की थी । वह दान देने लगा, कर्मों की शान्ति के लिए उसने उत्सव किये । परिणामस्वरूप सातवें दिन उस पुतले के ऊपर वज्रपात हुआ और राजा इस उपसर्ग से बच गया । मपु० ६२.१७२, २१७-२२४, पापु० ४.१२९-१३५

(२) पूर्व विदेह क्षेत्र के अमृतस्राविणी ऋद्धि के धारी एक मुनिराज । इन्होंने प्रहसित् और विकसित दो विद्वानों को जीव-तत्त्व समझाया था । मपु० ७.६६-७६

(३) एक श्रावक । यह राजा सत्यन्धर का मन्त्री था । इसकी स्त्री का नाम अनुपमा तथा पुत्र का नाम मधुमुख था । मपु० ७५.२५६-२५९

(४) भरतक्षेत्र संबंधी विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में गगनवल्लभ नगर के राजा विद्याधर गरुडवेग का मन्त्री । इसने राजा से उसकी पुत्री गन्धर्वदत्ता के विवाह के संबंध में निमित्तज्ञानी मुनि से सुनकर कहा था कि इसे राजा सत्यन्धर का पुत्र वीणा-वादन से स्वयंवर में जीतेगा और यह उसी की भार्या होगी । अन्त में इसी मन्त्री के परामर्शानुसार राजा गरुडवेग के निवेदन पर सेठ जिनदत्त ने अपने राजपुर नगर में स्वयंवर रचाया था । उसमें सुघोषा वीणा को बजाकर जीवन्धरकुमार ने गन्धर्वदत्ता को पराजित किया और उसे विवाहा था । मपु० ७५.३०१-३३६

मत्त—राम का पक्षधर एक योद्धा । यह रथासीन होकर ससैन्य रणांगण में पहुँचा था । पपु० ५८.१४

मत्तकोकिल—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में विजयावती नगरी के समीप स्थित एक ग्राम । बाली के पूर्वभव का जीव सुप्रभ इसी ग्राम में उत्पन्न हुआ था । पपु० १०६.१९०-१९७

मत्तजला—पूर्व विदेह की एक विभंगा नदी । मपु० ६३.२०६, हपु० ५.२४०

मत्यनुपालन—क्षत्रियों का दूसरा धर्म-लोक परलोक संबंधी हिताहित ज्ञान का पालन करना । यह अविद्या के नाश से होता है । अविद्या मिथ्याज्ञान है तथा मिथ्याज्ञान अतत्त्वों में तत्त्वबुद्धि है और तत्त्व अर्हन्त-वचन हैं । मपु० ४२.४, ३१-३३

मत्सरीकृता—षड्ज ग्राम की पाँचवीं मूर्च्छना । हपु० १९.१६१

मत्स्य—(१) भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश—महावीर की विहारभूमि । तीर्थंकर नेमि भी विहार करते हुए यहाँ आये थे । हपु० ३.४, ११.६५, ५९.११०

(२) एक नृप । यह रोहिणी के स्वयंवर में सम्मिलित हुआ था । हपु० ३१.२८

(३) कल्पपुर नगर के हरिवंशी राजा महीदत्त का कनिष्ठ पुत्र और अरिष्टनेमि का अनुज । इसने अपनी चतुरंग सेना से भद्रपुर और हस्तिनापुर को जीता था । इस विजय के पश्चात् हस्तिनापुर को इसने निवास स्थान के रूप में चुना था । इसके अयोधन आदि सौ पुत्र हुए थे । अन्त में यह ज्येष्ठ पुत्र को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गया था । हपु० १७.२९-३१

(४) मन्दिर ग्राम का एक धीवर । मण्डूकी इसकी पत्नी तथा पूतिका पुत्री थी । मपु० ७१.३२६

(५) जल-जन्तु-मछली । ये जल में ही रहती हैं । ये मरकर सातवीं नरकभूमि तक जाती हैं । चरणतल में इनकी रेखांकित रचना शुभ मानी गयी है । मपु० ३.१६२, ४.११७, १०.३०, पपु० २६.८४

मत्स्यगन्धा—राजा शान्तनु की पुत्री । लोककथा के अनुसार इसका जन्म एक मछली से हुआ था । युद्ध के लिए जाते हुए शान्तनु को अपनी पत्नी के ऋतुकाल का स्मरण हो आया । उन्होंने रतिदान हेतु वीर्य ताम्र-कलश में रखकर उस कलश को एक बाज के गले में बाँधकर पत्नी के पास भेजा । इस श्येन का एक दूसरे श्येन से युद्ध हुआ । युद्ध करते समय कलश से वीर्य नदी में गिरा जिसे एक मछली निगल गयी । फलस्वरूप वह गर्भवती हुई और उसके गर्भ से एक कन्या उत्पन्न हुई । इसके शरीर से मत्स्य के समान दुर्गन्ध आने के कारण इसे यह नाम दिया गया । युवा होने पर पाराशर ऋषि से यह गर्भवती हुई और इससे व्यास नामक पुत्र हुआ । पाराशर ने इसे योजनगन्धा बनाया था । आगे शान्तनु ने इससे विवाह किया तथा चित्र और विचित्र नाम के इससे दो पुत्र हुए । पापु० २.३०-४३

मथुरा—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की पाण्डवों द्वारा बसायी गयी नगरी । यह यमुना-तट पर स्थित है । राजा बृहद्ध्वज ने यहाँ शासन किया था । भोजकवृष्णि ने उग्रसेन को इसी नगरी का राज्य देकर निर्ग्रन्थ दीक्षा धारण की थी । कंस ने अपनी बहिन देवकी का विवाह वसुदेव के साथ इसी नगरी में किया था । यह सूरसेन देश की राजधानी

थी। राजा उग्रसेन के पूर्व उसके पितामह सुवीर तथा भोजकवृष्टि यहाँ राज्य करते थे। कस यही पैदा हुआ था। इसका अपर नाम मधुरा था। अन्तिम नारायण कृष्ण का जन्म भी यही हुआ था। राजा मधु को पराजित कर राजा दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न ने भी यहाँ राज्य किया था। राजा रत्नवीर्य भी यहाँ का शासक रहा है। इसकी रानी मेघमाला से मेरू पुत्र भी यहाँ हुआ था। मपु० ७० ३४४, ३५७, ३६७, पपु० २० २१८-२२२, ८९ १-११७, हपु० १७ १६२, १८ १७९, २७ १३५, ३३ २८-३१, ४७, ५४ ७३, ७९, ६२ ४, पापु० ७ १४२-१४४, ११ ६५

मद—मान (घमण्ड)। यह सज्जाति, सुकुल, ऐश्वर्य, रूप, ज्ञान, तप, बल तथा शिल्पचातुर्य इन आठो के आश्रय से उत्पन्न होता है। मपु० ४ १६७, पपु० ५.३१८, ११९ ३०, वीवच० ६ ७३-७४

मदन—(१) कृष्ण का पुत्र प्रद्युम्न। हपु० ४३ २४४, ५५ १७

(२) लक्ष्मण का पुत्र। पपु० ६० ५-६, ९४.२७-२८

मदनकान्ता—धातकीखण्ड द्वीप के विदेहक्षेत्र में स्थित गन्धिल देश के पाटली ग्राम का वासी वैश्य नागदत्त और उसकी स्त्री सुमति की बड़ी पुत्री। इसकी श्रीकान्ता छोटी बहिन और नन्द, नन्दमित्र, नन्दिषेण, वरसेन तथा जयसेन ये पाँच भाई थे। पूर्वजन्म में वज्रदन्त की पुत्री श्रीमती इसकी बहिन थी। मपु० ६ ५८-६०, १२०-१३०

मदनलता—राजपुर नगर की एक नर्तकी। यह इसी नगर के रगतेज नामक नट की पत्नी थी। मपु० ७५ ४६७-४६९

मदनवती—काचनपुर नगर की एक कन्या। यह वत्सकावती देश के राजा अकम्पन की पुत्री पिप्पला की सखी थी। मपु० ४७ ७२-७९

मदनवेगा—(१) हस्तिनापुर के कुरुवशी राजा विद्युद्वेग विद्याधर की पुत्री। चण्डवेग और दधिमुख इसके भाई थे। एक निमित्तज्ञानी मुनि ने बताया था कि चण्डवेग के कधे पर जिसके गिरने से चण्डवेग को विद्या सिद्ध होगी वह इसका पति होगा। एक समय मानसवेग विद्याधर वसुदेव को हरकर ले गया और उसे गगा में डाल दिया। वह चण्डवेग पर गिरा। चण्डवेग पर यह घटना घटते ही दधिमुख ने इसका विवाह वसुदेव से कर दिया। इसने वसुदेव से अपने पिता को बन्धन मुक्त कराने का वर माँगा था। वसुदेव ने भी इसकी इच्छा पूर्ण की थी। अनावृष्टि इसी का पुत्र था। हपु० २४ ८०-८६, २५ ३६-३९, ७१, २६ १

(२) वासव नट तथा प्रियरति नटी की पुत्री। इसने श्रीपाल के समक्ष पुरुष-वेश मे और इसके पिता ने स्त्री-वेष मे नृत्य किया था। श्रीपाल ने नट और नटी को पहचान लिया था। निमित्तज्ञ ने नट और नटी के इस गुप्त रहस्य के जाननेवाले को सुरम्य देश में श्रीपुर नगर के राजा श्रीधर की पुत्री जयवती का पति होना बताया था। मपु० ४७ ११-१८

(३) विजयार्घ पर्वत के दक्षिण-तट पर स्थित वस्त्वालय नगर के राजा सेन्द्रकेतु और उसकी रानी सुप्रभा से उत्पन्न पुत्री। इसने आर्यिका प्रियमित्रा से दीक्षा ले ली थी तथा तपश्चरण करने लगी थी। मपु० ६३ २४९-२५४

मदनांकुश—अयोध्या के राजा राम और उनकी रानी सीता का पुत्र। इसका जन्म जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे पुण्डरीक नगर के राजा वज्रसघ के यहाँ श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन युगल रूप मे हुआ था। अनगलवण इसका भाई था। इसने उसके साथ शस्त्र और शास्त्र विद्याएँ सीखी थी। वज्रसघ ने इसके लिए राजा पृथु का पुत्री चाही थी किन्तु पृथु के न देने पर वज्रसघ पृथु से युद्ध करने को तैयार हुआ ही था कि इसने युद्ध का कारण स्वय को जानकर वज्रजघ को रोकते हुए अपने भाई को साथ लेकर पृथु से युद्ध किया और उसे पराजित कर दिया। इसके पश्चात् पृथु ने वैभव सहित अपनी कन्या इसे देने का निश्चय किया था। इसने पृथु को अपना सारथी बनाकर लक्ष्मण से युद्ध किया था। इस युद्ध में इसने सापेक्षभाव से युद्ध किया था जबकि लक्ष्मण ने निरपेक्ष भाव से। लक्ष्मण ने इसके ऊपर चक्र भी चलाया था किन्तु यह चक्र से प्रभावित नही हुआ था। पश्चात् सिद्धार्थ क्षुल्लक से गुप्त भेद ज्ञातकर राम और लक्ष्मण इससे आकर मिल गये थे। काचनस्थान के राजा काचनरथ को पुत्री चन्द्रभाग्या ने इसे वरा था। लक्ष्मण के मरण से इसे वैराग्य-भाव जागा था। मृत्यु बिना जाने निमिष मात्र में आक्रमण कर देती है ऐसा ज्ञात कर पुन गर्भवास न करना पड़े इस उद्देश्य से इसने अपने भाई के साथ अमृतस्वर से दीक्षा ले ली थी। सीता के पूछने पर केवली ने कहा था कि यह अक्षय पद प्राप्त करेगा। इसका दूसरा नाम कुश था। पपु० १००.१७-२१, ३२-४८, १०१.१-९०, १०२ १८३-१८४, १०३ २, १६, २७-३०, ४३-४८, ११०.१, १९, ११५ ५४-५९, १२३ ८२

मदना—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने ससैन्य इसे पार किया था। मपु० ३० ५९

(२) कौमुदी नगरी के राजा सुमुख की वेश्या। तापस अनुन्धर की प्रशसा सुनकर इसने उसकी परीक्षा ली थी तथा तप से उसे भ्रष्ट किया था। पपु० ३९ १८०-२१२

मदनाशिनी—दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७.३२९

मदनोत्सवा—सुग्रीव की दसवी पुत्री। यह राम के गुण सुनकर तथा गुणो से आकृष्ट होकर स्वयवरण की इच्छा से उनके निकट आयी थी। सीता के ध्यान में मग्न राम ने उसे स्वीकार नही किया था। पपु० ४७ १३६-१४४

मदिरा—राम के समय का एक मादक पेय। कामसेवन के समय स्त्री-पुरुष दोनो इसका पान करते थे। पपु० ७३ १३६-१३७

मदेभ—भरतक्षेत्र का एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ७०

मद्य—मादक पेय। अपर नाम मदिरा। यह नरक का कारण होता है। इसके त्याग मे उत्तम कुल तथा रूप की प्राप्ति होती है। मपु० ९ ३९, १० २२, ५६ २६१

मघवान्—जरासन्ध के अनेक पुत्रों में एक पुत्र। हपु० ५२ ३६

मद्यांग—भोगभूमि के दस प्रकार के कल्पवृक्षों में एक प्रकार का कल्पवृक्ष। ये स्त्री-पुरुषों को उनकी इच्छानुसार मादक पेय देते थे। मपु० ९ ३६-३८, हपु० ७ ८०, ९०, वीवच० १८ ९१-९२

मद्र—भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ तीर्थंकर वृषभदेव ने विहार किया था। भरत चक्रवर्ती के सेनापति ने इस देश को भरतेश के आधीन किया था। मपु० २५ २८७, २९ ४१

मद्रक—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में उत्तर आर्यखण्ड का एक देश। चक्रवर्ती भरत के एक छोटे भाई का यहाँ शासन था। भरतेश की आधीनता स्वीकार न कर वह वृषभदेव के पास दीक्षित हो गया था। तब यह भरतेश के साम्राज्य में मिल गया था। हपु० ११ ६६-७७

मद्रकार—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र सबधी आर्यखण्ड के मध्य में स्थित एक देश। यह देश भी भरतेश के साम्राज्य में मिल गया था। हपु० ११ ६४-६५

मद्री—(१) राजा अन्धकवृष्णि और उसकी रानी सुभद्रा की दूसरी पुत्री, कुन्ती की छोटी बहिन। समुद्रविजय आदि इसके दस भाई थे। यह पाण्डु की द्वितीय रानी थी। नकुल और सहदेव इसके पुत्र थे। पति के दीक्षित हो जाने पर इसने भी ससार के भोगों से विरक्त होकर पुत्रों को कुन्ती के सरक्षण में छोड दिया था और सयम धारण करके गगा-तट पर घोर तप किया था। अन्त में मरकर सौधर्म स्वर्ग में उत्पन्न हुई। इसका अपर नाम माद्री था। मपु० ७० ९४-९७, ११४-११६, हपु० १८ १२-१५, पापु० ८ ६५-६७, १७४-१७५, ९ १५६-१६१

(२) कौशल नगरी के राजा भेषज की रानी और शिशुपाल की जननी। इसने सौ अपराध हुए बिना पुत्र को न मारने का कृष्ण से वचन प्राप्त किया था। मपु० ७१ ३४२-३४८

मधु—(१) वसन्त ऋतु। हपु० ५५ २९

(२) एक लेह्य पदार्थ-शहद। इसकी इच्छा, सेवन और अनुमोदना नरक का कारण है। मपु० १० २१, २५-२६

(३) तापस सित तथा तापसी मृगशृंगिणी का पुत्र। एक दिन इसने विनयदत्त द्वारा दत्त आहारदान का माहात्म्य देखकर दीक्षा ले ली थी। अन्त में यह मरकर स्वर्ग में उत्पन्न हुआ था और वहाँ से चयकर कीचक हुआ। हपु० ४६ ५४-५५

(४) भरतक्षेत्र का एक पर्वत। इसका अपर नाम धरणीमौलि था। किष्किन्धपुर की रचना हो जाने के बाद यह किष्किन्ध नाम से विख्यात हुआ। पपु० १.५८, ५ ५०८-५११, ५२०-५२१

(५) रत्नपुर नगर का नृप-तीसरा प्रतिनारायण। पूर्वभव में यह राजा बलि था। इसने इस पर्याय में वर्तमान नारायण स्वयभू के पूर्वभव के जीव सुकेतु का जुए में समस्त धन जीत लिया था। पूर्व जन्म के इस वैर से नारायण स्वयभू मधु का नाम भी नहीं सुनना चाहता था। वह मधु के लिए प्राप्त किसी भी राजा की भेंट को स्वय ले लेता था। इससे कुपित होकर मधु ने स्वयभू को मारने के लिए चक्र चलाया था किन्तु चक्र स्वयभू की दाहिनी भुजा पर आकर स्थिर हो गया। इसी से स्वयभू ने मधु को मारा था। वह मरकर सातवें नरक में उत्पन्न हुआ। मपु० ५९ ८८-९९

(६) प्रद्युम्नकुमार के दूसरे पूर्वभव का जीव—जम्बूद्वीप के कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर के राजा अर्हद्दास और उसकी रानी काश्यपा का ज्येष्ठ पुत्र और क्रीडव का बडा भाई। अर्हद्दास ने इसे राज्य और क्रीडव को युवराज पद देकर दीक्षा ले ली थी। अमलकण्ठ नगर का राजा कनकरथ इसका सेवक था। एक दिन यह कनकरथ की स्त्री कनकमाला को देखकर उस पर आसक्त हो गया। इसने कनकमाला को अपनी रानी भी बना लिया। अन्त में विमलवाहन मुनि से धर्म-श्रवण कर इसने दुराचार की निन्दा की और भाई क्रीडव के साथ यह सयमी बन गया। आयु के अन्त मे विधिपूर्वक आराधना करके दोनों भाई महाशुक्र स्वर्ग में इन्द्र हुए। यह वहाँ से च्युत होकर रुक्मिणी का पुत्र हुआ। हरिवशपुराण में इसे अयोध्या नगरी के राजा हेमनाभ की रानी धरावती का पुत्र कहा है तथा वटपुर नगर के वीरसेन की स्त्री चन्द्राभा पर आसक्त बताया गया है। परस्त्री-सेवी को क्या दण्ड दिया जावे पूछे जाने पर इसने उसके हाथ-पैर और सिर काटकर शारीरिक दण्ड देने के लिए ज्यों ही कहा कि चन्द्राभा ने तुरन्त ही इससे कहा था कि परस्त्रीहरण का अपराध तो इसने भी किया है। यह सुनकर यह विरक्त हुआ और इसने दीक्षा ले ली। इस प्रकार दोनों भाई शरीर-त्याग कर क्रमश आरण और अच्युत स्वर्ग में इन्द्र और सामानिक देव हुए। इसके पुत्र का नाम कुलवर्धन था। मपु० ७२ ३८-४६, हपु० ४३ १५९-२१५

(७) मथुरा नगरी के हरिवशी राजा हरिवाहन और उसकी रानी माधवी का पुत्र। असुरेन्द्र ने इसे सहस्रान्तक शूलरत्न दिया था। रावण की पुत्री कृतचित्रा इसकी पत्नी थी। शत्रुघ्न ने मथुरा का राज्य लेने के लिए इससे युद्ध किया था। युद्ध में अपने पुत्र लवणार्णव के मारे जाने पर इसने अपना अन्त निकट जान लिया था। अत उसी समय दिगम्बर मुनियो के वचन स्मरण करके इसने दोनों प्रकार के परिग्रह का त्याग किया और मुनि होकर केशलोच किया था। अन्त में समाधिपूर्वक शरीर त्याग कर यह सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुआ। पपु० १२ ६-१८, ५३-५४, ८०, १११, ११५, ८९ ५-६

(८) एक नृप। जरासन्ध ने कृष्ण के पक्षधरों से युद्ध करने के लिए इसके मस्तक पर चर्मपट्ट बाँध कर इसे सेना के साथ समरभूमि में भेजा था। इसने कृष्ण का मस्तक काटने और पाण्डवों का विनाश करने की घोषणा की थी पर यह सफल नहीं हुआ। पापु० २० ३०४

(९) राम के समय का एक पेय-मदिरा। इसका व्यवहार सैनिकों में होता था। स्त्रियाँ भी मधु-पान करती थीं। पपु० ७३ १३९, १०२ १०५

मधुक—जम्बूद्वीप में पूर्व विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी

नगरी का समीपवर्ती एक वन। भीलराज पुरुरवा इसी वन में रहता था। मपु० ६२ ८६-८७, ७४ १४-१६, वीवच० २ १७-१९

मधुकर—एक कीट-भ्रमर। यह मकरन्द के रस मे इतना आसक्त हो जाता है कि उसे सूर्य कब अस्त हो गया यह ज्ञात नही हो पाता। रात्रि आरम्भ होते ही कमल सकुचित हो जाते है और यह उसमें बन्द होकर मर जाता है। इसका अपर नाम द्विरेफ है। पपु० ५ ३०५-३०७

मधुकैटभ—चौथा प्रतिनारायण। दूरवर्ती पूर्वभव मे यह मलय देश का राजा चण्डशासन था। अनेक योनियो में भटकने के बाद यह प्रतिनारायण हुआ। यह वाराणसी नगरी का नृप था। नारद से बलभद्र सुप्रभ और नारायण पुरुषोत्तम का वैभव सुनकर इसने उनसे हाथी तथा रत्न कर के रूप में माँगे थे। इनकी इस माँग से क्षुब्ध होकर नारायण ने इससे युद्ध किया। इसने नारायण पुरुषोत्तम पर चक्र चलाया किन्तु चक्र से नारायण की कोई हानि नही हुई अपितु उसी चक्र से यह मारा गया और मरकर नरक गया। मपु० ६० ५२, ७०-७८, ८३, हपु० ६० २९१ दे० मधुसूदन

मधुक्रीड—भरतक्षेत्र के कुरुजागल देश में हस्तिनापुर नगर का राजा। धर्मनाथ तीर्थङ्कर के तीर्थ में प्रतिनारायण था। बलभद्र सुदर्शन और नारायण पुरुषसिंह के तेज को न सह सकने से इसने उनसे श्रेष्ठ रत्न माँग कर विरोध उत्पन्न कर लिया था। नारायण और इसके बीच युद्ध हुआ जिसमे इसने चक्र चलाकर नारायण को मारना चाहा किन्तु नारायण तो नही मारा गया उसी चक्र से नारायण के द्वारा यह मारा गया। मपु० ६१,५६, ७४-८१

मधुपिंगल—सुरम्य देश में पोदनपुर नगर के राजा तृणपिंगल और उसकी रानी सर्वयशा का पुत्र। भरतक्षेत्र में चारण-युगल नामक नगर के राजा सुयोधन और रानी अतिथि की पुत्री सुलसा चक्रवर्ती सगर में आसक्त थी। सुलसा की माता अतिथि मधुपिंगल के साथ सुलसा को विवाहना चाहती थी। उसने मधुपिंगल से सुलसा का वरण करने के लिए कहा और सुलसा ने भी माँ के आग्रहवश इसे स्वीकार कर लिया। यह सब देखकर सगर के मत्री ने शास्त्रानुकूल वर के गुणो का शास्त्र निर्माण कराया और सभा में उनकी वाचना करायी। अपने में शास्त्रोक्त सब गुण विद्यमान न देखकर मधुपिंगल लज्जावश वहाँ से चला गया और गुरु हरिषेण से उसने तप धारण कर लिया। आहार के लिए जाते हुए किसी निमित्तज्ञानी से मधुपिंगल ने अपने सम्बन्ध मे सुना था कि 'सगर के मत्री ने झूठ-मूठ कृत्रिम शास्त्र दिखलाकर मधुपिंगल को दूषित ठहराया है' ऐसा ज्ञातकर मधुपिंगल ने निदान किया और मरकर वह असुरेन्द्र की महिष-जातीय सेना की पहली कक्षा में चौसठ हजार असुरो का नायक महाकाल असुर हुआ। मपु० ६७ २२३-२३६, २४५-२५२, हपु० २३ ४७-१२३

मधुमान्—अयोध्या का एक प्रभावशाली पुरुष। लका से सीता के अयोध्या आने पर यह सीता के अयोध्या मे रहने का विरोध करना चाहता था किन्तु राम के भय से यह अपने विरोध को व्यक्त नही कर सका था। पपु० ९६ ३०-३१

मधुमुख—राजा सत्यन्धर के मत्री मतिसागर का पुत्र और जीवधरकुमार का मित्र। मपु० ७५ २५६-२६०

मधुर—राजा सत्यन्धर और रानी भामारति का पुत्र एव वकुल का भाई। कुमार जीवधर के साथ इन दोनो का पालन भी सेठ गन्धोत्कट ने ही किया था। मपु० ७५ २५४-२५९

मधुरा—(१) मेरु गणधर के नौवें पूर्वभव का जीव—भरतक्षेत्र के कोशल देश में अवस्थित वृद्धग्राम के निवासी ब्राह्मण मृगायण की स्त्री और वारुणी की जननी। यह मरकर पोदनपुर नगर के राजा पूर्णचन्द्र की पुत्री रामदत्ता हुई थी। मपु० ५९ २०७-२१०, हपु० २७ ६१-६४

(२) इसका अपर नाम मथुरा था। दे० मथुरा

मधुषेण—पुष्कलावती देश के विजयपुर नगर का एक वैश्य। इसकी स्त्री बन्धुमती तथा पुत्री बन्धुयशा थी। मपु० ७१ ३६३-३६४

मधुसूदन—(१) अवसर्पिणीकाल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष और छठा प्रतिवासुदेव। यह काशी देश में वाराणसी नगरी का स्वामी था। इसने बलभद्र सुप्रभ तथा नारायण पुरुषोत्तम से कर स्वरूप गज और रत्न माँगे थे। फलस्वरूप बलभद्र और नारायण इसके विरोधी हो गये। इसने उनसे युद्ध किया और अपने ही चक्र से मृत्यु को प्राप्त होकर नरक गया। मपु० ६० ७१-७८, ८३, ६७ १४२-१४४, वीवच० १८ १०१, ११४-११५ दे० मधुकैटभ

(२) कृष्ण का अपर नाम। मपु० ७० ४७०

मधुस्राविणी—एक रस ऋद्धि। इससे भोजन मीठा न होने पर भी मीठा हो जाता है। मपु० २ ७२

मधूक—राम के समय का एक जगलीवृक्ष-महुआ। पपु० ४२.१५

मध्य—(१) गायन सम्बन्धी त्रिविध लयो में दूसरी लय। पपु० २४ ९

(२) वारुणीवर समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५ ६४१

मध्यदेश—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का मध्यवर्ती देश। चक्रवर्ती भरतेश के सेनापति ने इसे अपने आधीन किया था। मपु० २९ ४२, हपु० २ १५१, ३ १

मध्यप्रसाद—सगीत सबधी स्थायी-पद के चतुर्विध अलकारो में तीसरा अलकार। पपु० २४ १६

मध्यम—(१) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

(२) सगीत सबधी सप्त स्वरो मे एक स्वर। पपु० १७ २७७, हपु० १९ १५३

(३) मध्यदेश की एक लिपि। केकया को इसका ज्ञान था। पपु० २४ १६

(४) वारुणीवर समुद्र का एक रक्षक देव। हपु० ५ ६४१

मध्यमखण्ड—भरतक्षेत्र का मध्य भाग। मपु० ३ २२

मध्यमपचमी—सगीत की दस जातियो में दूसरी जाति। पपु० २४ १३

मध्यमपद—पद का तीसरा भेद। यह सोलह सौ चौंतीस करोड़ तेरासी लाख सात हजार आठ सौ अठासी अक्षर प्रमाण होता है। अंगों तथा पूर्वों के पदों की संख्या इसी पद से परिगणित होती है। हपु० १० २२-२५

मध्यमपात्र—पात्र के उत्तम, मध्यम और जघन्य इन तीन भेदों में दूसरा भेद। संयतासंयत श्रावक मध्यम पात्र कहलाते हैं। हपु० ७ १०८-१०९

मध्यमवृत्ति—कुमार्ग की ओर जाने में रोक लगाकर इन्द्रियों को वश में रखने के लिए व्यवहृत मुनियों की आहारवृत्ति। इसमें न पौष्टिक आहार ग्रहण किया जाता है और न ऐसा आहार ग्रहण किया जाता है जिससे कि काय कृश हो जाय अपितु ऐसा आहार लिया जाता है जिससे इन्द्रियाँ वश में रह सकें। मपु० २० ५-६

मध्यम-शातकुम्भ—शातकुम्भ व्रत का एक भेद। इसमें नौ, आठ, सात, छ, पाँच, चार, तीन, दो, एक-आठ, सात, छ, पाँच, चार, तीन, दो, एक, आठ, सात, छ, पाँच, चार, तीन, दो, एक, आठ, सात, छ, पाँच, चार, तीन, दो, एक, इस क्रम से एक सौ त्रेपन उपवास तथा उपवासों की एक संख्या के पूर्ण होने पर एक पारणा के क्रम से कुल तैंतीस पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ ८७-८८

मध्यमसिंहनिष्क्रीडित—सिंहनिष्क्रीडित व्रत का दूसरा भेद। इसमें क्रमशः एक, दो, एक, तीन, दो, चार, तीन, पाँच, चार, छ, पाँच, सात, छ, आठ, सात, आठ, नौ, आठ, सात, आठ, छ, सात, पाँच, छ, चार, पाँच, तीन, चार, दो, तीन, एक, दो, एक कुल एक सौ त्रेपन उपवास तथा प्रत्येक उपवास के क्रम के बाद एक पारणा करने से तैंतीस पारणाएँ की जाती हैं। इस व्रत के फलस्वरूप मनुष्य वज्र-वृषभनाराचसंहनन का धारक, अनन्तवीर्य से सम्पन्न, सिंह के समान निर्भय और अणिमा आदि गुणों से युक्त होकर शीघ्र ही सिद्ध हो जाता है। हपु० ३४ ७९, ८३

मध्यमा—मध्यमग्रामाश्रित संगीत की दस जातियों में पाँचवीं जाति। मपु० २४.१३, हपु० १९ १७६

मध्यमोदीच्या—संगीत की दस जातियों में सातवीं जाति। यह सात स्वर वाली होती है। पपु० २४ १४, हपु० १९ १७६, १८०

मध्यलोक—लोक का दूसरा भाग। यह झालर के समान है। इसका दूसरा नाम तिर्यग्लोक है। यह पृथिवीतल के एक हजार योजन नीचे से निन्यानवे हजार योजन ऊपर तक विस्तृत है। इसमें जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप और लवणसमुद्र आदि असंख्यात समुद्र तथा पाँच मेरु, तीस कुलाचल, बीस गजदन्त पर्वत, एक सौ सत्तर विजयार्ध गिरि, अस्सी वक्षार पर्वत, चार इष्वाकार पर्वत, दस कुरुद्रुम, एक मानुषोत्तर पर्वत, एक सौ सत्तर बड़े देश और एक सौ सत्तर महा-नगरियाँ हैं। यहाँ मुक्ति के योग्य पन्द्रह कर्मभूमियाँ, तीस भोगभूमियाँ, गंगा-सिन्धु आदि महानदियाँ, ह्रदा आदि विभंग नदियाँ, पद्म आदि ह्रद, गंगाप्रपात आदि कुण्ड भी हैं। ह्रदों में अवस्थित कमल और उन पर निवासिनी श्री, ह्री आदि देवियाँ यहीं रहती हैं। अंजनगिरि आदि पर्वतों पर निर्मित बावन जिनालयों से शोभित आठवाँ नन्दीश्वर द्वीप भी यहीं है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह, तारा और नक्षत्र-पाँच प्रकार के असंख्यात ज्योतिष्क देव इसी लोक में ७९० योजन की ऊँचाई और ११० योजन के बीच में रहते हैं। हपु० ४ ६, ५ १-१२, वीवच० ११.९४-१०२ दे० तिर्यग्लोक

मध्यलोक-स्तूप—समवसरण का स्तूप। इसके भीतर मध्यलोक की रचना स्पष्ट दिखायी देती है। हपु० ५७ ९७

मनःपर्यय—ज्ञान के पाँच भेदों में चौथा ज्ञान। यह देश (विकल) प्रत्यक्ष होता है। इसके ऋजुमति और विपुलमति ये दो भेद होते हैं। यह ज्ञान अवधिज्ञान की अपेक्षा सूक्ष्म पदार्थ को विषय करता है। अवधि-ज्ञान यदि परमाणु को जानता है तो यह उसके अनन्तवें भाग को जानता है। हपु० २ ५६, १० १५३

मनःशिलद्वीप—मध्यलोक का मनःशिलसागर से वेष्टित अन्तिम सोलह द्वीपों में प्रथम द्वीप। हपु० ५ ६२२

मनःस्तम्भनकारिणी—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२६

मन—एक आभ्यन्तर इन्द्रिय। यह अपने विषयमार्ग में मदोन्मत्त हाथी के समान भ्रमणशील होती है। ज्ञानी और विरक्त पुरुष ही इसे वश में कर पाते हैं। पपु० ३९ १२२

मनक—शर्कराप्रभा पृथिवी के तृतीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में एक सौ छत्तीस, विदिशाओं में एक सौ बत्तीस कुल दो सौ अड़सठ श्रेणीबद्ध बिल होते हैं। हपु० ४ १०७

मनसाहार—देवों की आहारविधि। देवों को आहार की इच्छा होते ही उनके कण्ठ में अमृत झरने लगता है, जिससे उनकी क्षुधा शान्त हो जाती है। देवों का ऐसा आहार मनसाहार कहलाता है। मपु० ६१ ११

मनस्विनी—चक्रपुर नगर के राजा चक्रध्वज की रानी और चित्तोत्सवा की जननी। पपु० २६ ४-५

मनीषी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

मनु—(१) भरतक्षेत्र में भोगभूमि की स्थिति समाप्त होने पर तीसरे काल में पल्य का आठवाँ भाग शेष रहने पर उत्पन्न हुए कुलों के कर्त्ता-कुलकर। ये चौदह हुए हैं। वे हैं—प्रतिश्रुत, सन्मति, क्षेमंकर, क्षेमन्धर, सीमंकर, सीमन्धर, विपुलवाहन, चक्षुष्मान्, यशस्वी, अभि-चन्द्र, चन्द्राभ, मरुदेव, प्रसेनजित् और नाभिराय। इन्होंने हा, मा और धिक् ऐसे शब्दों का दण्ड रूप में प्रयोग करके प्रजा के कष्ट को दूर किया था। ये प्रजा के जीवन का उपाय जानने, मनन करने और बताने से इस नाम से विख्यात हुए थे। आर्य पुरुषों को कुल की भाँति इकट्ठे रहने का उपदेश देने से ये कुलकर, वंश-संस्थापक होने से कुलधर और युग के आदि में होने से युगादि पुरुष भी कहे जाते थे। इन कुलकरों में आदि के पाँच ने अपराधी मनुष्यों के लिए "हा" नामक दण्ड की व्यवस्था की थी। छठे से दसवें कुलकर तक हुए पाँच कुलकरों ने "हा" "मा" और शेष ने "हा" "मा" "धिक्" इस प्रकार की दण्ड व्यवस्था की थी। वृषभदेव तीर्थंकर भी थे और कुलकर भी। कल्पवृक्षों का ह्रास होने पर ये गंगा और सिन्धु महा-

नदियों के दक्षिण भरतक्षेत्र में उत्पन्न हुए थे। प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति की ऊँचाई अठारह सौ धनुष, इसके पुत्र दूसरे कुलकर सन्मति की तेरह सौ धनुष और तीसरे कुलकर क्षेमकर की आठ सौ धनुष थी। आगे प्रत्येक कुलकर की ऊँचाई पच्चीस-पच्चीस धनुष कम होती गयी। अन्तिम कुलकर नाभिराय की ऊँचाई पाँच सौ धनुष थी। सभी कुलकर समचतुरस्रसंस्थान और वज्रवृषभनाराचसंहनन से युक्त गम्भीर तथा उदार थे। इन्हें अपने पूर्वभव का स्मरण था। इनकी मनु संज्ञा थी। इनमें चक्षुष्मान्, यशस्वी और प्रसेनजित् ये तीन प्रियंगुपुष्प के समान श्याम-कान्ति के धारी थे। चन्द्राभ चन्द्रमा के समान और शेष तप्त स्वर्णप्रभा से युक्त थे। मपु० ३ २११-२१५, २२९-२३२, हपु० ७ १२३-१२४, १७१-१७५, ८१, पापु० २ १०३-१०७

(२) अदिति देवी द्वारा नमि और विनमि को दिये गये विद्याओं के आठ निकायों में प्रथम निकाय। हपु० २२ ५७

(३) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का सत्ताईसवाँ नगर। हपु० २२ ८८

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

मनुजोदय—रत्नद्वीप का एक पर्वत। गगनवल्लभनगर का स्वामी गरुडवेग अपने राज्य से यहाँ भाग आया था और रमणीय नामक नगर बसाकर रहने लगा था। मपु० ७५ ३०१-३०३

मनुपुत्रक—मानस्तम्भ के निकट बैठनेवाले विद्याधर। ये अरुणाभ वस्त्रधारी और देदीप्यमान आभूषणों से सुसज्जित होते हैं। हपु० २६ ९

मनुष्यक्षेत्र—जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड द्वीप और पुष्करार्द्ध ये ढाई द्वीप तथा लवणोदधि और कालोदधि ये दो समुद्र मनुष्यक्षेत्र कहलाते हैं। इसका विस्तार पैंतालीस लाख योजन है। पपु० १४ २३४, हपु० ५ ५९०

मनुष्यभव—अशुभकर्मों की मन्दता से लभ्य मनुष्य-पर्याय। यहाँ जीव अनिच्छापूर्वक शारीरिक और मानसिक दुःख पाता है। दूसरों की सेवा करना, दरिद्रता, चिन्ता और शोक आदि से इस पर्याय में जो दुःख प्राप्त होते हैं वे प्रत्यक्ष नरक के समान जान पड़ते हैं। यहाँ इष्टवियोग और अनिष्ट संयोग से जीव दुखी होता है। इस गति के प्राणी गर्भ में चर्म के जाल से आच्छादित होकर पित्त, श्लेष्म आदि के मध्य स्थित रहते हैं। नालद्वार से च्युत माता द्वारा उपभुक्त आहार का आस्वादन करते हैं। उनके अंगोपांग संकुचित और दुःखभार से पीड़ित रहते हैं। जीवों को यह पर्याय बड़ी कठिनाई से प्राप्त होती है। मपु० १७ २९-३१, पपु० २ १६४-१६७, ५.३३३-३३८

मनोगति—(१) पश्चिम पुष्करार्ध के पश्चिम विदेहक्षेत्र में रूप्याचल की उत्तरश्रेणी के गण्यपुर नगर के स्वामी सूर्याभ और उसकी रानी धारिणी का दूसरा पुत्र, चिन्तागति का अनुज तथा चपलगति का अग्रज। ये तीनों भाई अरिंजयपुर के राजा अरिंजय की पुत्री प्रीतिमति के साथ गतियुद्ध में पराजित हो जाने से दमवर मुनिराज के समीप दीक्षित हो गये थे। आयु के अन्त में तीनों भाई माहेन्द्र स्वर्ग के अन्तिम पटल में सात सागर की आयु प्राप्त कर सामानिक जाति के देव हुए। हपु० ३४ १५-१८, ३२-३३

(२) वज्रदन्त चक्रवर्ती का एक विद्याधर दूत। यह गन्धर्वपुर के राजा मन्दरमाली और रानी सुन्दरी का पुत्र तथा चिन्तागति का भाई था। यह स्नेही, चतुर, उच्चकुलोत्पन्न, शास्त्रज्ञ और कार्य पटु था। यह और चिन्तागति दोनों भाई अश्वग्रीव के भी दूत रहे। मपु० ६२ १२४-१२६

(३) एक शिविका-पालकी। तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ इसी पालकी पर आरूढ होकर सहेतुक दीक्षावन गये थे। मपु० ५३ ४१

मनोगुप्ति—त्रिविध गुप्तियों में प्रथम गुप्ति। यह अहिंसाव्रत की पाँच भावनाओं में प्रथम भावना है। इसमें मन को अपने आधीन रखा जाता है और रौद्रध्यान, आर्तध्यान, मैथुनसेवन, आहार की अभिलाषा, इस लोक और परलोक सम्बन्धी सुखों की चिन्ता इत्यादि विकल्पों का त्याग किया जाता है। मपु० २० १६१, पापु० ९ ८८

मनोजव—नाकार्धपुर का स्वामी। इसकी रानी का नाम वेगिनी और पुत्र का नाम महाबल था। पपु० ६ ४१५-४१६

मनोज्ञ—राम का एक दुर्धर योद्धा। पपु० ५८ २२

मनोज्ञांग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८२

मनोदया—नागपुर (हस्तिनापुर) के राजा इभवाहन और उसकी रानी चूडामणि की पुत्री। इसका विवाह वज्रबाहु से हुआ था। भाई के दीक्षित होते ही इसने भी दीक्षा ले ली थी। इसके दीक्षित होने पर वज्रबाहु ने भी विषयों से विरक्त होकर मुनि निर्वाणघोष से दीक्षा ले ली थी। पपु० २१ १२६-१२७, १३९

मनोनुगामिनी—एक विद्या। यह छ: वर्ष से भी अधिक समय की कठिन साधना के बाद सिद्ध होती है। विशिष्ट तप के द्वारा इसके पूर्व भी इसकी सिद्धि हो जाती है। दधिमुख नगर के राजा की तीन पुत्रियों-चतुर्लेखा, विद्युत्प्रभा और तरंगमाला ने इसे हनुमान की सहायता से सिद्ध किया था। पपु० ५१ २५-४०

मनोभव—(१) मोक्ष जानेवाला आगामी आठवाँ रुद्र। हपु० ६० ५७१-५७२

(२) प्रद्युम्न। मपु० ७५ ५६९

मनोयोग—मन के निमित्त से आत्म-प्रदेशों में उत्पन्न क्रिया-परिस्पन्दन। यह चार प्रकार का होता है—सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, सत्य-मृषा-उभय मनोयोग और अनुभय मनोयोग। मपु० ६२ ३०९-३१०

मनोयोग-दुष्प्रणिधान—सामायिक शिक्षाव्रत का एक अतिचार-मन को अन्यथा चलायमान करना। हपु० ५८ १८०

मनोरथ—नकुल का जीव-प्रभाकर-विमान में उत्पन्न एक देव। मपु० ९ १९२

मनोरस—एक विशाल उद्यान। चक्रपुर नगर का राजा रत्नायुध इसी उद्यान में वज्रदन्त महामुनि से मेघविजय हाथी का पूर्वभव सुनकर संयमी हुआ था। मपु० ५९ २४१-२७१

मनोरमा—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित मेघपुर नगर के राजा पवनवेग और उसकी रानी मनोहरी की पुत्री। यह पूर्वभव में राजा सुमुख की रानी वनमाला थी। इसका विवाह पूर्वभव के पति

सुमुख के जीव आर्य के साथ हुआ था। इस आर्य विद्याधर को हरिक्षेत्र में इसके साथ क्रीड़ा करते हुए देखकर इसके पूर्वभव का पति देव पूर्व वैरवश इसके इस भव के पति आर्य विद्याधर की विद्याएँ हरकर इसे और इसके पति को चम्पापुरी लाया था। उसने इसके पति को चम्पापुरी का राजा बनाकर वहीं छोड़ दिया। हरि इसका पुत्र था। इसी हरि के नाम से जगत् में "हरिवंश" नाम की प्रसिद्धि हुई। हपु० १५ २५-२७, ३३, ४८-५८

(२) चक्रवर्ती अभयघोष की पुत्री। इसका विवाह अभयघोष के भानजे सुविधि के साथ हुआ था। केशव इसका पुत्र था। मपु० १० १४३-१४५

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा घनरथ की दूसरी रानी और दृढ़रथ की जननी। मपु० ६३ १४४, पापु० ५ ५३-५५

(४) घनरथ के पुत्र मेघरथ की रानी। मपु० ६३ १४७, पापु० ५ ५६

(५) विजयार्ध पर स्थित अलका नगरी के राजकुमार विद्याधर सिंहरथ की स्त्री। इसके पति के विमान की गति रुक जाने पर मेघरथ को इसका कारण जानकर इसके पति ने शिला सहित मेघरथ को उठाकर फेंकना चाहा था किन्तु मेघरथ ने अंगूठे से शिला दबा दी थी जिससे इसका पति रोने लगा था। रुदन सुनकर इसने मेघरथ से पति-भिक्षा मांगी और अपने पति को शिला के नीचे दबाये जाने से बचाया। मपु० ६३ २४१-२४४, पापु० ५ ६१-६८

(६) धातकीखण्ड द्वीप की पूर्व दिशा सबंधी विदेहक्षेत्र के पूर्वभाग में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र की रानी और प्रियमित्र की जननी। मपु० ७४ २३५-२३७

(७) लक्ष्मण की पटरानी। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध की दक्षिण दिशा में स्थित रत्नपुर नगर के राजा रत्नरथ और रानी चन्द्रानना की पुत्री थी। इसके विवाह के सम्बन्ध में अवद्वार नारद के द्वारा लक्ष्मण का नाम प्रस्तावित किये जाने पर इसके तीनों भाई—हरिवेग, मनोवेग और वायुवेग कुपित हो गये थे। नारद द्वारा यह समाचार लक्ष्मण से कहे जाने पर लक्ष्मण भी कुपित हुआ। उसने युद्ध में इसके भाइयों और पिता का पीछा किया। यह कन्या इसी बीच लक्ष्मण के समीप आयी। रत्नरथ ने अन्त में इसका विवाह लक्ष्मण से कर दिया। यह लक्ष्मण की प्रमुख आठ रानियों में आठवीं रानी थी। सुपार्श्वकीर्ति इसका पुत्र था। पपु० १ ९४, ८३ ९५, ९३ १-५६, ९४ २०-२३

(८) विद्याधर अमितगति की दूसरी स्त्री। इन दोनों के सिंहयश और वाराहग्रीव दो पुत्र थे। हपु० २१ ११८-१२१

मनोरम्य—राक्षसवंशी एक राजा। राजा महाबाहु के पश्चात् लंका का स्वामित्व इसे ही प्राप्त हुआ था। पपु० ५ ३९७

मनोरोध—मन का निरोध। इन्द्रियों का निग्रह होने से मन का भी निरोध हो जाता है। इसका निरोध ही वह ध्यान है जिससे कर्मक्षय होकर अनन्त सुख मिलता है। मपु० २०.१७९-१८०

मनोलूता—नागनगर के राजा हरिपति की रानी। यह चन्द्रोदय के जीव कुलकर की जननी थी। पपु० ८५ ४९-५०

मनोवती—रावण की रानी। पपु० ७७ १५

मनोवाहिनी—सुग्रीव की तेरह पुत्रियों में आठवीं पुत्री। यह राम के गुणों को सुनकर अनुरागपूर्वक स्वयंवरण की इच्छा से राम के पास आयी थी। राम ने इसे स्वीकार नहीं किया था। पपु० ४७ १३९

मनोवेग—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के स्वर्णाभ नगर का विद्याधर राजा। मनोवेगा इसकी रानी थी। इसने रूपिणी विद्या से दूसरा रूप बनाकर अशोक वन में स्थित चन्दना का अपहरण किया। इसकी पत्नी ने इसकी माया जानकर रूपिणी विद्या-देवता को बायें पद-प्रहार से जैसे ही ठुकराया कि विद्या अट्टहास करती हुई इसके पास से चली गयी थी। इसकी पत्नी ने आलोकिनी विद्या से इसकी इन चेष्टाओं को जानकर इसे बहुत डाँटा था। पत्नी से भयभीत होकर इसे पर्णलघ्वी विद्या से चन्दना को भूतरमण वन में ऐरावती नदी के तट पर छोड़ देना पड़ा था। हरिवंशपुराण के अनुसार इसका नाम चित्तवेग और इसकी रानी का नाम अंगारवती था। इन दोनों के एक पुत्र और एक पुत्री हुई थी। पुत्र का नाम मानसवेग और पुत्री का नाम वेगवती था। यह पुत्र को राज्य देकर दीक्षित हो गया और तपस्या करने लगा था। पाँचवें पूर्वभव में यह सौधर्म स्वर्ग से चयकर शिवकर नगर के राजा विद्याधर पवनवेग और रानी सुवेगा का पुत्र मनोवेग हुआ था। चौथे पूर्वभव में मगध देश की वत्सा नगरी के ब्राह्मण अग्निमित्र का पुत्र शिवभूति हुआ। तीसरे पूर्वभव में वंग देश के कान्तपुर नगर में राजा सुवर्णवर्मा का पुत्र महाबल हुआ। दूसरे पूर्वभव में भरतक्षेत्र के अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी के सेठ धनदेव का नागदत्त पुत्र हुआ और प्रथम पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७५ ३६-४४, ७०-७२, ८१, ९५-९६, १६२-१६५, हपु० २४ ६९-७१

(२) धूकर वन में कीलित एक विद्याधर। प्रद्युम्न ने इसके वैरी वसन्त विद्याधर से इसकी मित्रता कराके इसे मुक्त करा दिया था। इसने भी प्रद्युम्न को हार और इन्द्रजाल ये दो वस्तुएँ दी थीं। हपु० ४७ ३९-४०

(३) भरतेश का एक अस्त्र। मपु० ३७ १६६

(४) राक्षस वंश के संस्थापक राजा राक्षस का पिता। पपु० ५ ३७८

(५) विजयार्ध पर्वत पर रत्नपुर नगर के राजा रत्नरथ और उसकी रानी चन्द्रानना का दूसरा पुत्र। यह हरिवेग का अनुज और वायुवेग का अग्रज तथा मनोरमा का भाई था। पपु० ९३.१-५७

मनोवेगा—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में सुवर्णाभ नगर के स्वामी मनोवेग की रानी। पति द्वारा चन्दना का अपहरण किये जाने पर इसने पति को भयभीत कर उससे चन्दना को छुड़ाया था। मपु० ७५ ३६-४४ दे० मनोवेग

(२) अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त एक विद्या। मपु० ६२ ३९७

(३) राजा बुध की रानी और अशोकलता की जननी। पपु० ८ १०४

(४) रावण की एक रानी। पपु० ७७ १५

मनोहर—(१) पुण्डरीकिणी नगरी का एक उद्यान। मुनि यशोधर यहीं केवली हुए थे। मपु० ६ ८५-८६, हपु० ३३ १४५

(२) कौशाम्बी का एक उद्यान। तीर्थंकर श्रेयांस ने यहाँ दीक्षा धारण कर मन पर्ययज्ञान प्राप्त किया था। मपु० ५७ ४८, ६९ ४

(३) भोगपुर नगर का समीपवर्ती एक उद्यान। राजा पद्मनाभ यहाँ दीक्षित हुए थे। मपु० ६७ ६३-६८

(४) एक वन। तीर्थंकर पद्मप्रभ ने यहाँ दीक्षा ली थी। मपु० ५२ ५१, पापु० ४ १४

(५) महाबुद्धि और पराक्रमधारी अमररक्ष के पुत्रों द्वारा बसाये गये दस नगरों में एक नगर। पपु० ५ ३७१

(६) नन्द्यावर्त विमान का एक देव। मपु० ९ १९१

(७) भरतक्षेत्र मे विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक देश। मपु० ४७ २६१-२६२

(८) विदेहक्षेत्र के वत्सकावती देश का एक पर्वत। मपु० ५८.७

(९) गन्धर्व विद्या का एक शिक्षक। मपु० ७० २६२

(१०) रौद्र, राक्षस गन्धर्व और मनोहर रात्रि के इन चार प्रहरों में चौथा प्रहर—रात्रि का अवसान-काल। मपु० ७४ २५५

(११) ऋजुकूला नदी का तटवर्ती एक वन। महावीर इसी वन में केवली हुए थे। मपु ७४ ३४८-३५२, वीवच० १३ १००-१०१

(१२) एक सरोवर। नेमि और सत्यभामा के बीच वार्तालाप यहीं हुआ था। मपु० ७१ १३०

(१३) राजतमालिका नदी का तटवर्ती एक वन, तीर्थङ्कर वासुपूज्य की निर्वाणभूमि। मपु० ५८ ५१-५२

(१४) पावा नगरी के समीप स्थित एक वन। तीर्थङ्कर महावीर ने इसी वन से निर्वाण पाया था। हपु० ६० १५-१७

(१५) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८२

मनोहरपुर—पश्चिम-विदेहक्षेत्र का एक नगर। भीम-वन इसी नगर के पास था। मपु० ५९ ११६

मनोहरमुख—राम का एक योद्धा। पपु० ५८ १४, १७

मनोहरवन—(१) भरतक्षेत्र के सिंहपुर नगर का समीपवर्ती एक उद्यान। सिंहपुर नगर के राजा सिंहचन्द्र की मुनि अवस्था मे उनकी माता रामदत्ता ने यहीं वन्दना की थी। मपु० ५९ १४६, १९८-२०५

(२) गरुडवेग की पुत्री गधर्वदत्ता का स्वयवर-स्थल। मपु० ७५ ३२५

मनोहरा—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र मे स्थित पुष्कलावती देश की पुडरीकिणी नगरी के राजा धनरथ की रानी और मेघरथ की जननी। मपु० ६३ १४२-१४३, पापु० ५ ५३-५४

(२) चौथे नारायण पुरुषोत्तम की पटरानी। पपु० २० २२७

(३) पुष्करद्वीप में मंगलावती देश सम्बन्धी रत्नसंचयनगर के राजा श्रीधर की पत्नी। यह बलभद्र श्रीवर्मा और नारायण विभीषण की जननी थी। यह आयु के अन्त में समाधिपूर्वक शरीर छोड स्वर्ग में ललितांग देव हुई। मपु० ७ १३-१८

(४) राजपुर नगर के सेठ जिनदत्त की स्त्री। मपु० ७५ ३१४-३१५, ३२१

मनोहरी—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी मे मेघपुर नगर के राजा पवनवेग की रानी और मनोरमा की जननी। हपु० १५ २५-२७

(२) हरिवंशी राजा दक्ष और रानी इला की पुत्री और ऐलेय की बहिन। दक्ष ने प्रजा को छलपूर्वक अपनी ओर करके इसे पत्नी बना लिया था। इस कृत्य से दु खी होकर इसकी माँ पुत्र ऐलेय को लेकर दुर्गम स्थान में चली गयी थी। हपु० १७ १-१७

(३) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र मे स्थित विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल की रानी। चित्रागद के सिवाय इसके युगल रूप में गरुडकान्त, सेनकान्त, गरुड-ध्वज, गरुडवाहन, मणिचूल तथा हिमचूल नामक छ पुत्र और हुए थे। इसके सातो पुत्र भूतानन्द जिनराज के समीप दीक्षित हो गये थे। हपु० ३३ १३१-१३३, १३९

मनोह्लाद—एक नगर। इसे राजा अमररक्ष के पुत्रो ने बसाया था। यहाँ राक्षस रहते थे। यह नगर लका में था। देव भी यहाँ उपद्रव नही कर सकते थे। वानरद्वीप इस नगर की वायव्य दिशा में था। पपु० ५ ३७१-३७२, ६ ६६-६८, ७१

मन्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५८

मन्त्रकल्प—गर्भाधान आदि क्रियाओं के आरम्भ में वेदी के मध्य-भाग मे जिनेन्द्र देव की प्रतिमा और तीन छत्र, तीन चक्र तथा तीन अग्नियाँ विराजमान करके यथाविधि उनकी पूजा करना। इसमे जल से भूमि शुद्ध करते समय "नीरजसे नम", विघ्नों की शान्ति के लिए "दर्पमथनाय नम", गन्ध समर्पण करने के लिए "शीलगन्धाय नम", पुष्प अर्पण करते समय "विमलाय नम", अक्षत अर्पण करते समय "अक्षताय नम", धूप अर्पण करते समय "श्रुतधूपाय नम.", दीपदान के समय "ज्ञानोद्योताय नम" और नैवेद्य चढाते समय "परमसिद्धाय नम" मन्त्र बोले जाते हैं। मपु० ४० ३-९

मन्त्रकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

मन्त्रमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

मन्त्रवित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१२९

मन्त्रशक्ति—शत्रु को जीतने के लिए आवश्यक तीन शक्तियो-मन्त्र, उत्साह और प्रभु मे प्रथम शक्ति। इसके द्वारा सहायको और साधनो के उपाय, देश-विभाग, काल-विभाग और बाधक कारणो का प्रतिकार इन पाँच अगो का निर्णय किया जाता है। मपु० ६८ ६०, हपु० ८ २०१

मन्त्री—(१) राजा का उसके कार्यों में मन्त्रणा दाता। इसके दो कार्य

होते हैं—हितकारी कार्य में राजा की प्रवृत्ति करना तथा अहितकारी कार्यों को नहीं करने का परामर्श देना। मपु० ६८ ११५

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १२९

मन्दर—सुमेरु पर्वत का अपर नाम। यह जम्बूद्वीप के मध्य में स्थित है। मपु० ५१ २, पपु० ८२ ६-८, हपु० २ ४०, ४ ११

(२) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५

(३) मथुरा नगरी के राजा अनन्तवीर्य और रानी अमितवती का पुत्र। मेरु इसका बड़ा भाई था। ये दोनों भाई निकटभव्य थे। दोनों ने विमलनाथ तीर्थङ्कर से अपने पूर्वभव सुनकर उनसे दीक्षा ग्रहण कर ली थी तथा उन्हीं के दोनों गणधर होकर मोक्ष गये। हरिवंश-पुराण के अनुसार इसके पिता का नाम रत्नवीर्य और माता का नाम अमितप्रभा था। मपु० ५९ ३०२-३०४, ३१०-३१२ हपु० २७ १३६

(४) कुरुवंशी एक नृप। यह राजा व्रात का पुत्र तथा श्रीचन्द्र का पिता था। हपु० ४५ ११-१२

(५) मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में स्थित नन्दन वन का दूसरा कूट। हपु० ५ ३२९

(६) रुचकगिरि की दक्षिण दिशा के आठ कूटों में तीसरा कूट। यहाँ सुप्रबुद्धा देवी रहती है। हपु० ५ ७०८

(७) वानरवंशी राजा मेरु का पुत्र तथा समीरणगति का पिता। पपु० ६ १६१

(८) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ के सद्गृहस्थ प्रियनन्दी के पुत्र दमयन्त ने सप्त गुणों से युक्त होकर साधुओं की पारणा करायी थी। अनेक सद्गतियों को प्राप्त करके मोक्ष पानेवाला दमयन्त यहीं के निवासी एक सद्गृहस्थ प्रियनन्दी का पुत्र था। पपु० १७ १४१-१६५ दे० दमयन्त

(९) सीता-स्वयंवर में सम्मिलित एक नृप। पपु० २८ २१५, ५४ ३४-३६

मन्दरकुंज—जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र का एक नगर। यहाँ के राजा विद्याधर मेरुकान्त का पुत्र आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दिर की पुत्री श्रीमाला के स्वयंवर में सम्मिलित हुआ था। पपु० ६.३५७-३६३, ४०९

मन्दरपुर—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित एक नगर। यहाँ का स्वामी विद्याधर बलीन्द्र था। मपु० ६६ १०९

(२) भरतक्षेत्र का एक नगर। राजा सुमित्र ने यहाँ बड़े उत्सव के साथ तीर्थङ्कर शान्तिनाथ को प्रासुक आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३ ४७८-४७९

मन्दरमालिनी—शिवमन्दिर नगर के राजा दमितारि की रानी और कनकश्री की जननी। मपु० ६२ ४३३-४३४, ४६५, ५००

मन्दरमाली—गन्धर्वपुर का एक विद्याधर राजा। सुन्दरी इसकी रानी थी। इन दोनों के दो पुत्र थे—चिन्तागति और मनोगति। मपु० ८ ९२-९३

मन्दरशैल—रजतमालिका नदी के किनारे विद्यमान एक गिरि। तीर्थंकर वासुपूज्य ने इसी गिरि से निर्वाण पाया था। मनोहर उद्यान इसी पर्वत के शिखर पर स्थित है। मपु० ५८ ५१-५२

मन्दर-स्तूप—समवसरण का स्तूप। इसकी चारों दिशाओं में जिन प्रतिमाएँ स्थापित होती हैं। हपु० ५७ ९८

मन्दरार्य—लोहाचार्य के पश्चात् हुए आचार्यों में एक आचार्य। अर्हद्-बलि इनके पूर्ववर्ती आचार्य थे। हपु० ६६ २६

मन्दरेन्द्राभिषेक—श्रावक की त्रेपन क्रियाओं में चालीसवीं क्रिया। इसमें तीर्थंकर का जन्म होने पर इन्द्रों के द्वारा उनका मेरु पर्वत के उच्चतम शिखर पर क्षीरसागर के पवित्र जल से अभिषेक किया जाता है। मपु० ३८ ६१, २२७-२२८

मन्दवती—कौतुकमंगल नगर के राजा विद्याधर व्योमबिन्दु की रानी। कौशिकी और केकसी इसकी पुत्रियाँ थीं। इसका अपर नाम नन्दवती था। पपु० ७ १२६-१२७, १६२

मन्दाकिनी—कांचनस्थान नगर के राजा कांचनरथ और रानी शतह्रदा की बड़ी पुत्री तथा चन्द्रभाग्या की बड़ी बहिन। इसने अपने स्वयंवर में आये राजाओं में अनंगलवण का वरण किया था। पपु० ११० १, १७-१८

मन्दार—गन्धिलदेश के विजयार्ध पर्वत के पुष्पपादप। इन वृक्षों के पास शीतल, मन्द और सुगन्धित वायु बहती है। मपु० ४ १००, १९७

मन्दारपुर—धातकीखण्ड द्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। यहाँ का राजा शंख था। मपु० ६३ १७०

मन्दारमालिका—कल्पवृक्ष के पुष्पों से निर्मित माला। देवों की इस माला का मुरझा जाना मालाधारी देवों का स्वर्ग से च्युत होने का संकेत होता है। पपु० ११ २-४

मन्दारणारण्य—सम्मेदाचल और कैलास पर्वत के बीच स्थित वन। पपु० ८ २४

मन्दिर—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का उन्नीसवाँ नगर। मपु० १९ ८२, ८७

(२) भरतक्षेत्र का एक ग्राम। भारद्वाज ब्राह्मण का जन्म यहीं हुआ था। मपु० ७१ ३२६, ७४ ७८

मन्दिरस्थविर—एक मुनि। भद्रिलपुर नगर के राजा मेघरथ और वणिक् धनदत्त तथा उसके नौ पुत्रों के ये दीक्षागुरु थे। वाराणसी के बाहर प्रियंगुखण्ड वन में ये केवली हुए तथा राजगृह के समीप सिद्धशिला से सिद्ध हुए थे। मपु० ७० १८२-१९२

मन्दिरा—मन्दिर नगर के ब्राह्मण शीलकायन की पत्नी और जगत्प्रसिद्ध भारद्वाज की जननी। मपु० ७४ ७८-७९, वीवच० २ १२५-१२६

मन्दुरा—अश्वशाला। चक्रवर्ती भरतेश के काल में ये तालाबों के पास निर्मित होती थी। इसके प्रांगण में चरने योग्य घास भी रहता था। सवारी के लिए व्यवहृत घोड़े यहाँ रहते थे। इनमें घोड़ों को स्वस्थ रखने के लिए उनकी देह पर अंगराग का लेप किया जाता था। मपु० २९.१११, ११६

मन्दोदरी—(१) साकेत के राजा सगर की प्रतीहारी। इसने सुलसा के पास जाकर सगर के कुल, रूप, सौन्दर्य, पराक्रम, नय, विनय, विभव, बन्धु, सम्पत्ति तथा वर के अन्य गुणों का वर्णन कर उसे सगर में आसक्त किया था। मपु० ६७ २२०-२२२ हपु० २३ ५०

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में असुरसंगीत नगर के विद्याधर राजा मय और उसकी रानी हेमवती की पुत्री। इसके पिता दैत्यों के राजा होने से दैत्य नाम से प्रसिद्ध थे। इसका विवाह दशानन के साथ किया गया था। सीता इसी की पुत्री थी। रावण द्वारा सीता का अपहरण किये जाने पर इसने रावण से सीता को लौटाने हेतु निवेदन किया था। इन्द्रजित् और मेघनाद इसी के पुत्र थे। पिता और पुत्रों के दीक्षित हो जाने पर यह भी शशिकान्ता आर्यिका के पास आर्यिका हो गयी थी। मपु० ८ १७-२७, ६८ ३५६, पपु० ८ १-३, ४७, ८०, ७३ ९३-९४, ७८ ८५-९४

मन्वन्तर—एक कुलकर के बाद दूसरे कुलकर के उत्पन्न होने के बीच का असंख्यात करोड़ वर्षों का समय। मपु० ३ ७६, १०२

मय—(१) राजा समुद्रविजय का पुत्र और अरिष्टनेमि का अनुज। हपु० ४८ ४४

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के असुरसंगीत नगर का विद्याधर। यह दैत्य नाम से प्रसिद्ध था। इसकी हेमवती भार्या तथा मन्दोदरी पुत्री थी। यह रावण का सचिव था। इसने राम के योद्धा अंगद के साथ युद्ध किया था। रावण का दाह-संस्कार करने के बाद राम ने इसे पद्मसरोवर पर बन्धन-मुक्त करने के आदेश दिये थे। बन्धन अवस्था में इसने बन्धनों से मुक्त होने पर निर्ग्रन्थ साधु होकर पाणिपात्र से आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा की थी। बन्धनों से मुक्त होने के पश्चात् भोगों का उपभोग करने के लिए लक्ष्मण के द्वारा निवेदन किये जाने पर प्रतिज्ञानुसार इसने लक्ष्मण से भोगोपभोगों के प्रति निरभिलाषा ही प्रकट की थी। बन्धन मुक्त होते ही प्रतिज्ञा के अनुसार मुनि होकर इसने आकाशगामिनी-विद्या द्वारा इच्छानुसार तीर्थंकरों की निर्वाणभूमियों में विहार कर उनके दर्शन किये थे। इसके चरणस्पर्श मात्र से व्याघ्रनगर के राजा सुकान्त का पुत्र सिंहेन्दु निर्विष हो गया था। अन्त में यह पण्डितमरण-विधि से मरकर देव हुआ। पपु० ८ १-३, ६२ ३७, ७३ १०-१२, ७८ ८-९, १४-१५, २४-२६, ३०-३१, ८० १४१-१४२, १७३-१८३, २०८

मयूरग्रीव—(१) एक विद्याधर। विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में अलका नगरी का राजा। इसकी रानी नीलांजना से पाँच पुत्र हुए थे—अश्वग्रीव, नीलरथ, नीलकण्ठ, सुकण्ठ और वज्रकण्ठ। पाण्डवपुराण के अनुसार इसके चार पुत्र थे—अश्वग्रीव, नीलकंठ, वज्रकंठ और महाबल। मपु० ५७ ८७-८८, ६२ ५८-५९, ७४ १२८, पापु० ४ १९-२०

(२) आगामी नौवाँ प्रतिनारायण। हपु० ६० ५७०

मयूरमाल—अर्धबर्बर देश का एक नगर। यहाँ म्लेच्छ रहते थे। आन्तरगतम यहाँ का राजा था। पपु० २७ ६-९

मयूरवान्—राक्षस वंश का एक प्रसिद्ध विद्याधर। लंका का राज्य इसे राजा लंकाशोक से प्राप्त हुआ था। पपु० ५ ३९७

मयूरी—हस्तिनापुर के राजा पद्मरथ की रानी। यह नौवें चक्रवर्ती महापद्म की जननी थी। पपु० २० १७८-१७९

मरणाशंसा—सल्लेखना का दूसरा अतीचार-पीड़ा के कारण शीघ्र मरने की इच्छा करना। हपु० ५८ १८४

मरीच—(१) रावण के पक्ष का एक योद्धा राक्षस। यह दैत्यराज मय का मंत्री था। पपु० ८ ४३-४४, १२ १९६

(२) एक फल-वृक्ष। इसके फल गुच्छों में फलते हैं। स्वाद में चरपरे होते हैं। मपु० ३० २१-२२

मरीचि—(१) तीर्थंकर आदिनाथ का पौत्र और चक्रवर्ती भरत का उनकी अनन्तमती रानी से उत्पन्न पुत्र। इसने तीर्थंकर वृषभदेव के साथ संयम धारण किया था। भूख-प्यास की अतीव वेदना से व्याकुलित होकर यह संयम से भ्रष्ट हुआ तथा स्वेच्छाचारी होकर जंगल के फलों और जल का सेवन करने लगा था। वन-देवता ने इसकी संयम-विरोधी प्रवृत्तियाँ देखकर इसे समझाया था कि—'गृहस्थवेष में किया पाप तो संयमी होने से छूट जाता है किन्तु संयम अवस्था में किया गया पाप वज्रलेप हो जाता है।' वन-देवता की इस बात का इस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। योग और सांख्यदर्शन के सिद्धान्त आरम्भ में इसी ने बनाये थे। यह परिव्राजक बन गया। संयम से भ्रष्ट हुए इसके साथी सम्बोधि प्राप्त कर पुनः दीक्षित हो गये थे किन्तु यह पथभ्रष्ट ही रहा। आयु के अन्त में शारीरिक कष्ट सहता हुआ यह मरकर अज्ञान-तप के प्रभाव से ब्रह्म कल्प में देव हुआ। वहाँ से चयकर साकेत नगरी में यह कपिल ब्राह्मण और उसकी काली ब्राह्मणी का जटिल नामक पुत्र हुआ। दीक्षा लेकर जटिल तप के प्रभाव से देव हुआ और स्वर्ग से चयकर स्थूणागार नगर में पुष्यमित्र ब्राह्मण हुआ। यह मन्द कषायों के साथ मरने से सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से चयकर श्वेतिका नगरी में अग्निसह विप्र हुआ और इसके पश्चात् सनत्कुमार स्वर्ग में देव। स्वर्ग से चयकर रमणीकमन्दिर नगर में अग्निमित्र ब्राह्मण हुआ। इसके पश्चात् माहेन्द्र स्वर्ग गया और वहाँ से चयकर पुरातनमन्दिर नगर में सालंकायन का भारद्वाज पुत्र हुआ। त्रिदण्डी दीक्षा पूर्वक मरण होने से यह पुनः माहेन्द्र स्वर्ग गया और वहाँ से चयकर त्रस, स्थावर, योनियों में भटकता रहा। पश्चात् यह राजगृही में स्थावर नाम से उत्पन्न हुआ तथा मरकर स्वर्ग गया और वहाँ से चयकर पुनः इसी नगर में विश्वनन्दी नाम से उत्पन्न हुआ और इसके बाद स्वर्ग गया तथा वहाँ से चयकर पोदनपुर में त्रिपृष्ठ राजपुत्र हुआ। इस पर्याय से मरकर नरक पहुँचा और वहाँ से निकल कर सिंह हुआ। पुनः नरक (रत्नप्रभा) गया और पुनः सिंह हुआ। सिंह पर्याय में इसने श्रावक के व्रत ग्रहण किये और मरकर व्रतों के प्रभाव से सौधर्म स्वर्ग में सिंहकेतु देव हुआ। पश्चात् क्रमशः कनकपुंख विद्याधर का कनकोज्ज्वल पुत्र, स्वर्ग में देव, अयोध्या में हरिषेण नृप

का पुत्र, पुनः देव, पश्चात् पुण्डरीकिणी नगरी में राजा सुमित्र का प्रियमित्र पुत्र, सहस्रार स्वर्ग में देव, छत्रपुर में नन्द राजपुत्र हुआ। इस पर्याय से यह स्वर्ग गया और वहाँ से चयकर अन्तिम तीर्थंकर महावीर हुआ। मपु० १८ ६१-६२, २४ १८२- ६२ ८८-८९, ७४ ४९-५६, ६२-६८, २१९, २२२, २२९-२४६, २७६, पपु० ३ २८९-२९३, ८५ ४४, हपु० ९ १२५-१२७, वीवच० २ ७४-९०, १०७-१३१, ३ १-७, ५६, ६१-६३, ४ २-५९, ७२-७६, ५ १३४-१३५, ६ २-१०४, ७ ११०-१११

(२) रथनूपुर के राजा विद्याधर अमिततेज का दूत। अमिततेज ने अशनिघोष के पास इसे ही भेजा था। मपु० ६२ २६९

(३) भद्रिलपुर नगर का एक ब्राह्मण। कपिला इसकी पत्नी और मुण्डशलायन पुत्र था। हपु० ६० ११

मरुत् अस्त्र—राम का बाण। राम को यह गरुडेन्द्र के संकेत से चिन्तागति देव से प्राप्त हुआ था। पपु० ६० १३८

मरुत्व—राजपुर नगर का राजा। रावण के राजपुर नगर में आने पर इसने उसे अपनी कन्या कनकप्रभा विवाही थी। पपु० ११ १०६, ३०४-३०७

मरुत्सुर—पवनकुमार देव। ये देव ही समवसरण के एक योजन भूभाग को तृण, कटक और कीडों से रहित एवं मनोहर करते हैं। वीवच० १९ ६९

मरुदेव—(१) वसुदेव तथा रानी सोमश्री का कनिष्ठ पुत्र और नारद का अनुज। हपु० ४८ ५७

(२) बारहवें कुलकर। ये ग्यारहवें कुलकर चन्द्राभ के पुत्र थे। इनके समय स्त्री-पुरुष अपनी सन्तान से "हे माँ" "हे पिता" ऐसे मनोहर शब्द सुनने लगे। इनके शरीर की ऊँचाई पाँच सौ पचहत्तर धनुष और इनकी आयु नयुतांग प्रमाण वर्ष थी। ये तेजस्वी और प्रभावान् थे। इनके समय में प्रजा अपनी सन्तान के साथ बहुत दिनों तक जीवित रहने लगी थी। इन्होंने जलमय दुर्गम स्थानों में गमन करने के लिए छोटी बड़ी नाव चलाने का उपदेश दिया था। दुर्गम स्थानों पर चढने के लिए सीढियाँ बनवाई थी। इन्हीं के समय में अनेक छोटे-छोटे पहाड, उपसमुद्र तथा छोटी-छोटी नदियाँ उत्पन्न हुई थी। मेघ भी वर्षा करने लगे थे। इनका अपर नाम मरुद्देव था। मपु० ३ १३९-१४५, पपु० ३ ८७, हपु० ७ १६४-१६५, पापु० २ १०६

मरुदेवी—अन्तिम कुलकर नाभिराय की पटरानी और प्रथम तीर्थंकर वृषभदेव की जननी। यह अक्षर-आलेखन, गीत-वाद्य, गणित, आगम, विज्ञान और कला कौशल में निपुण थी। मपु० १२ ९-१२, पपु० ३ ९१-९५, २० ३७, हपु० ८ ६, ४३, १०३ पापु० २ १०८-१३२

मरुद्गिरि—सुमेरु पर्वत। यह जिन चैत्यालयों से विभूषित है। मपु० ७१ ४२१

मरुद्देव—बारहवें कुलकर। मपु० ३ १३९-१४५ दे० मरुदेव

मरुद्बाहु—राम का एक सामन्त। पपु० ५८ १८

मरुभूति—(१) चम्पापुरी के वैश्य चारुदत्त का मित्र। हपु० २१ ६-१३

(२) तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्वभव के जीव। पूर्वभवों में ये जम्बूद्वीप के दक्षिण भरतक्षेत्र में पोदनपुर नगर के ब्राह्मण विश्वभूति और उसकी स्त्री अनुन्धरी के कनिष्ठ पुत्र थे। कमठ इनका बडा भाई था। दुराचारी होने से कमठ ने इसकी पत्नी वसुन्धरी के निमित्त इन्हें मार डाला था। ये मरकर मलय देश के कुब्जक नामक सल्लकी वन में वज्रघोष नामक हाथी हुए। इस पर्याय में पूर्व पर्याय के भाई कमठ की स्त्री वरुणा मरकर इनकी स्त्री हुई। हाथी की पर्याय में इन्होंने प्रोपधोपवास किये। एक दिन ये वेगवती नदी में पानी पीने गये। वहाँ कीचड में धँस गये। कमठ मरकर इसी नदी में कुक्कुट साँप हुआ था। पूर्व वैरवश उसने इन्हें काटा जिससे मरकर ये सहस्रार स्वर्ग में देव हुए। स्वर्ग से चयकर ये विदेहक्षेत्र में त्रिलोकोत्तम नगर के राजा विद्युद्गति और रानी विद्युन्माला के पुत्र रश्मिवेग हुए। इन्होंने इस पर्याय में दीक्षा धारण कर तप किया। ये हिमगिरि पर्वत की जिस गुहा में ध्यानरत थे वहीं कमठ का जीव कुक्कुट सर्प नरक से निकल अजगर हुआ। पूर्व वैर के कारण अजगर ने इन्हें निगल लिया। ये मरकर अच्युत स्वर्ग के पुष्पक विमान में देव हुए और स्वर्ग से चयकर विदेहक्षेत्र के अश्वपुर नगर में चक्रवर्ती राजा वज्रनाभि हुए। दीक्षित होकर जब वज्रनाभि तप कर रहे थे तब कुरंग नामक भील पर्याय में कमठ ने इन पर अनेक उपसर्ग किये थे। वज्रनाभि धर्मध्यान से मरकर मध्यम ग्रैवेयक विमान में अहमिन्द्र हुए। स्वर्ग से चयकर ये देव अयोध्या नगरी में आनन्द राजा हुए। इस पर्याय में इन्होंने मुनि विपुलमति से धर्मश्रवण किया तथा मुनि समुद्रगुप्त से दीक्षा धारण की थी। क्षीरवन में कमठ के जीव सिंह ने इन्हें मार डाला था। मरकर ये आनत स्वर्ग के इन्द्र हुए। इस स्वर्ग से चयकर ये बनारस में राजा विश्वसेन के पुत्र हुए। इस पर्याय में इनका नाम पार्श्वनाथ था। ये जब वन में ध्यानस्थ थे कमठ के जीव शम्बर देव ने उन पर अनेक उपसर्ग किये थे। इस पर्याय में धरणेन्द्र और पद्मावती ने इनकी सहायता की थी। इन्होंने कर्मों का नाश कर इस पर्याय में केवलज्ञान प्रकट किया और इसी पर्याय से मोक्ष पाया था। कमठ का जीव शम्बर देव भी काललब्धि पाकर संयमी हो गया था। मपु० ७३ ६-१४७

मर्कट—(१) क्षीरवन का एक देव। इसने मुकुट, औषधि माला, छत्र और दो चमर प्रद्युम्न को दिये थे। मपु० ७२ १२०

(२) वृषभदेव के समय का एक जंगली प्राणी वानर। ये मिर्च जैसे फल भी खा लेते हैं किन्तु चरपरी लगने पर सिर भी हिलाते हैं। मपु० ३० २२

मर्त्यानुगीत—एक नगर। लक्ष्मण ने इस पर विजय की थी। पपु० ९४ ६

मर्दक—एक मांगलिक वाद्य। राम के समय में यह स्वयंवर आदि अवसरों पर बजाया जाता था। पपु० ६ ३७९

मलघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०९

मलद—भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड का एक जनपद। इसके शासक भरतेश के छोटे भाई ने उनकी आधीनता स्वीकार न करके इसे त्याग दिया था और दीक्षा ले ली थी। हपु० ११ ६०-६१, ६९

मल-परीषह—एक परीषह-मन मे किसी प्रकार की ग्लानि रखना। मपु० ३६ १२३

मलय—(१) भरतक्षेत्र का एक देश। भद्रिलपुर इसी देश का एक नगर था। लक्ष्मण ने इस पर विजय प्राप्त की थी। तीर्थंकर नेमिनाथ यहाँ विहार करते हुए आये थे। मपु० ५६ २३, ६४, ७१ २९३, पपु० ५५ २८, ९४ ६, हपु० ३३ १५७, ५८.११२

(२) राजा अचल का दूसरा पुत्र। मपु० ४८ ४९

(३) राजा जरासन्ध के ज्येष्ठपुत्र कालयवन का हाथी। हपु० ५२ २९

(४) उत्तम चन्दन वृक्षो से सम्पन्न दक्षिण भरतक्षेत्र का एक पर्वत। चक्रवर्ती भरतेश का सेनापति दिग्विजय के समय यहाँ आया था। मपु० २९ ८८, ३० २६-२८, ३६, हपु० ५४ ७४

(५) दशानन का पक्षधर एक नृप। पपु० १० २८,३७

मलयकाचन—विजयार्ध पर्वत का समीपवर्ती पर्वत। यहाँ मुनियो का आवागमन होता था। मपु० ४६ १३५

मलयगिरि—दक्षिण भारत का एक पर्वत। यहाँ भरतेश चक्रवर्ती ने विजय प्राप्त की थी। सह्य पर्वत इसके निकट था। यहाँ भील रहते थे। किन्नर देवियो का भी यहाँ गमनागमन था। पाण्डव विहार करते हुए यहाँ आये थे। मपु० ३० २६-१७, हपु० ५४ ७४

मलयानन्द—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा रावण की सहायतार्थ अपने मन्त्रियो के साथ रावण के पास आया था। पपु० ५५ ८६, ८८

मलहा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

मल्ल—भरतेश की अधीनता स्वीकार न करके उनके छोटे भाइयो द्वारा स्वय छोडे गये जनपदो में भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड का एक जनपद। चक्रवर्ती भरतेश के साम्राज्य में इसका विलय हो गया था। मपु० २९ ४८, हपु० ११ ६०-६१, ६८-६९

मल्लयुद्ध—वृषभदेव के समय की एक युद्ध प्रणाली। भरतेश और बाहुबली ने सैन्य युद्ध रोककर परस्पर यह युद्ध किया था। इसमें योद्धा युद्धस्थल में भुजबल से परस्पर युद्ध करते हैं। ऐसे युद्धो का सैन्य-सहार रोकना लक्ष्य होता था। मपु० ३६ ४०-४१, ५८

मल्लिनाथ—(१) तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ६७ ४९, हपु० ६० ३४८

(२) अवसर्पिणी के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव उन्नीसवें तीर्थंकर। ये भरतक्षेत्र के वग देश में मिथिला नगरी के इक्ष्वाकुवशी, काश्यपगोत्री राजा कुम्भ की रानी प्रजावती के पुत्र थे। सोलह स्वप्नपूर्वक चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के दिन रात्रि के अन्तिम प्रहर मे गर्भ में आये तथा मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी के दिन अश्विनी नक्षत्र में जन्मे थे। ये जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी थे। देवो ने जन्माभिषेक के समय इन्हें यह नाम दिया था। ये अरनाथ तीर्थंकर के बाद एक हजार करोड वर्ष बीत जाने पर हुए थे। इनकी आयु पचपन हजार वर्ष तथा शरीर पच्चीस धनुष ऊँचा था। देह की कान्ति स्वर्ण के समान थी। अपने विवाह के लिए सुसज्जित नगर को देखते ही इन्हें पूर्वजन्म के अपराजित विमान का स्मरण हो आया था। इन्होने सोचा कि कहाँ तो वीतरागता से उत्पन्न प्रेम और उससे प्रकट हुई महिमा तथा कहाँ सज्जनो को लज्जा उत्पन्न करनेवाला यह विवाह। ये ऐसा सोचकर विरक्त हुए। इन्होने विवाह न कराकर दीक्षा धारण करने का निश्चय किया। लौकान्तिक देवो ने आकर स्तुति की तथा दीक्षा की अनुमोदना की। दीक्षाकल्याणक मनाये जाने के पश्चात् ये जयन्त नामक पालकी में आरूढ होकर श्वेतवन (उद्यान) गये। वहाँ जन्म के ही मास, नक्षत्र, दिन और पक्ष में सिद्ध भगवान् को नमस्कार कर बाह्य और आभ्यन्तर दोनो परिग्रहो को त्यागते हुए तीन सौ राजाओ के साथ सयमी हुए। सयमी होते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान हुआ। पारणा के दिन ये मिथिला आये। वहाँ राजा नन्दिषेण ने इन्हें प्रासुक आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। छद्मस्थ अवस्था के छ. दिन व्यतीत हो जाने पर इन्होने श्वेतवन में ही अशोकवृक्ष के नीचे दो दिन के लिए गमनागमन त्याग कर जन्म के समान शुभदिन और शुभ नक्षत्र आदि में चार घातिया कर्मों—मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया। इनके समवसरण में विशाख आदि अट्ठाईस गणधर और पाँच सौ पचास पूर्वधारी, उनतीस हजार शिक्षक, दो हजार दो सौ अवधिज्ञानी और इतने ही केवली तथा एक हजार चार सौ वादी, दो हजार नौ सौ विक्रियाऋद्धिधारी, एक हजार सात सौ पचास मन पर्ययज्ञानी इस प्रकार कुल चालीस हजार मुनिराज तथा बन्धुषेणा आदि पचपन हजार आर्यिकाएँ, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकाएँ, असख्यात देव-देवियाँ और सख्यात तिर्यञ्च थे। इन्होने विहार कर भव्य जीवो को सम्बोधते हुए मुक्ति-मार्ग में लगाया था। जब इनकी आयु एक मास की शेष रह गयी थी तब ये सम्मेदाचल आये तथा इन्होने यहाँ पाँच हजार मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण कर फाल्गुन शुक्ला पचमी के दिन भरणी नक्षत्र में सध्या के समय मोक्ष पाया। इस समय देवो ने इनका निर्वाण कल्याणक मनाया था। दूसरे पूर्वभव मे ये जम्बूद्वीप में कच्छकावती देश के वीतशोक नगर के वैश्रवण नामक राजा तथा प्रथम पूर्वभव में अनुत्तर विमान मे देव थे। मपु० २ १३२, ६६ २-३, १५-१६, २०-२२, ३१-६२, पपु० ५ २१५, २० ५५, हपु० १ २१, पापु० २१ १, वीवच० १८ १०१-१०७

मषिकर्म—वृषभदेव द्वारा बताये गये आजीविका के छ कर्मों मे एक कर्म-लेखन कार्य द्वारा आजीविका करना। मपु० १६ १७९, १८१, हपु० ९ ३५

मसारगल्व—रत्नप्रभा प्रथम नरक का पाँचवाँ पटल। हपु० ४ ५३

मसूर—वृषभदेव के समय का एक खाद्यान्न। यह दाल बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। मपु० ३ १८७

मस्तक—भरतेश की अधीनता स्वीकार न कर उनके छोटे भाइयों द्वारा छोड़े गये जनपदों में भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड का एक जनपद। हपु० ११ ६०-६१, ६८

मह—पूजा का एक पर्यायवाची नाम। दे० मख

महतिमहावीर—महावीर का नाम। उज्जयिनी के अतिमुक्तक श्मसान में एक स्थाणु रुद्र ने महावीर पर अनेक उपसर्ग करने के बाद उनके अविचल रहने से उन्हें यह नाम दिया था। मपु० ७४ ३३१-३३६

महर्धिक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

महर्षि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

महसाधाम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

महसापति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५८

महाकक्ष—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का तीसवाँ नगर। हपु० २२ ९७

महाकच्छ—(१) पूर्व विदेहक्षेत्र का एक जनपद। मपु० ५ १९३

(२) एक राजा। ये राजा कच्छ के अनुज, यशस्वती और सुनन्दा के भाई और वृषभदेव के साले थे। विनमि विद्याधर इनके पिता थे। कच्छ और महाकच्छ वृषभदेव के साथ मुनि होकर छः मास के भीतर क्षुधा आदि कठिन परीषहों को न सह सके और तप से भ्रष्ट हो गये। पश्चात् पुनः दीक्षा लेकर ये वृषभदेव के तिहत्तरवें गणधर हुए। मपु० १५ ७०, १८ ९१-९२, हपु० ९ १०४, १२.६८

महाकच्छा—पश्चिम विदेहक्षेत्र में सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य प्रदक्षिणा रूप से स्थित आठ देशों में तीसरा देश। इसके छः खण्ड हैं। मपु० ६३ २०८, हपु० ५.२४५-२४६

महाकर्मारिहा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६२

महाकल्प—अंगबाह्य प्रकीर्णक (श्रुतज्ञान) के चौदह भेदों में ग्यारहवाँ भेद। इसमें यति के द्रव्य, क्षेत्र तथा काल के योग्य कार्यों का वर्णन है। हपु० २ १०४, १० १२५, १३६

महाकल्याण भाजन—शारीरिक तुष्टि और पुष्टि का हेतु भरतेश का एक दिव्याशन (दिव्य भोजन)। मपु० ३७ १८७

महाकवि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५३

महाकाक्ष—प्रथम नरक के प्रथम प्रस्तारवर्ती सीमन्तक इन्द्रक बिल की पश्चिम दिशा में विद्यमान नरक। हपु० ४ १५१-१५२

महाकान्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महाकान्तिधर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५७

महाकाम—रावण का पक्षधर एक योद्धा सामन्त। पपु० ५७ ५५-५६

महाकाय—किन्नर जाति के व्यन्तर देवों का छठा इन्द्र। यह तीर्थंकर वर्द्धमान के ज्ञानकल्याणक में आया था। वीवच० १४ ६०

महाकारुणिक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५८

महाकाल—(१) उज्जयिनी का एक वन। हपु० ३३ १०२

(२) उज्जयिनी का एक श्मसान। मुनि वरधर्म ने यहाँ ध्यान किया था। हपु० ३३ १०९-११

(३) सातवीं नरकभूमि के अप्रतिष्ठान इन्द्रक बिल की पश्चिम दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५८

(४) भरतेश की नौ निधियों में दूसरी निधि। इससे परीक्षकों द्वारा निर्णय करने योग्य पंचलौह आदि अनेक प्रकार के लोहों का सद्भाव रहता है। इसी निधि से उनके यहाँ असि, मषि आदि छः कर्मों के साधनभूत द्रव्य और सम्पदाएँ निरन्तर उत्पन्न की जाती थीं। मपु० ३७ ७३, ७७, हपु० ११ ११०, ११५

(५) मधुपिंगल का जीव—एक असुर देव। इसने वैरवश राजा सगर और सुलसा को यज्ञ में होम दिया था। इसने माया से अश्व-मेध, अजमेध, गोमेध और राजसूय यज्ञ भी करके दिखाये थे। मपु० ६७ १७०-१७४, २१२, २५२, हपु० १७ १५७, २३ १२६, १४१-१४२, १४५-१४६

(६) कालोदधि द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६३८

(७) काल गुफा का निवासी एक राक्षस। प्रद्युम्न ने इसे पराजित कर इससे वृषभ नाम का रथ तथा रत्नमय कवच प्राप्त किये थे। मपु० ७२.१११

(८) एक गुहा। प्रद्युम्न ने तलवार, ढाल, छत्र तथा चमर इसी गुहा में प्राप्त किये थे। हपु० ४७ ३३

(९) एक व्यन्तर देव। यह इसी नाम की गुहा में रहता था। इसने वैर वश श्रीपाल को इस गुहा में गिराया था। मपु० ४७ १०३-१०४

(१०) व्यन्तर देवों का सोलहवाँ इन्द्र और प्रतीन्द्र। वीवच० १४ ६१-६२

(११) छठा नारद। हपु० ६० ५४८ दे० नारद

महाकाली—धरणेन्द्र द्वारा नमि और विनमि विद्याधरों को दी गयी एक विद्या। हपु० २२ ६६

महाकाव्य—प्राचीन इतिहास, त्रेसठ शलाका महापुरुषों का चरित्र और धर्म, अर्थ काम रूप त्रिवर्ग के फल का वर्णन करनेवाला प्रबन्ध काव्य। मपु० १ ९९

महाकीर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महाकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का उन्तालीसवाँ नगर। मपु० १९ ५१

महाक्रोधरिपु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६०

महाक्लेशांकुश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६०

महाक्षम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५६

महाक्षान्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५३

महागन्ध—इक्षुवर समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५ ६४४

महागन्धवती—गन्धमादन पर्वत से निकली एक नदी। इसके किनारे भीलों की भल्लकी पल्ली थी। मपु० ७१ ३०९

महागिरि—हरिवंशी राजा हरि का पुत्र और हिमगिरि का पिता। मपु० ६७ ४२०, पपु० २१ ७-८, हपु० १५ ५८-५९

महागुण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महागुणाकर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६१

महागौरी—धरणेन्द्र द्वारा नमि और विनमि विद्याधरों को दी गयी एक विद्या। हपु० २२ ६२

महाघोर—तपश्चरण का एक भेद-कठोर तप। बाहुबली ने ऐसा ही तप किया था। मपु० ३६ १५०

महाघोष—(१) पश्चिम विदेहक्षेत्र के रत्नसंचय नगर का राजा। इसकी रानी चन्द्रिणी और पुत्र पयोबल था। पपु० ५ १३६-१३७

(२) असुरकुमार आदि दस जाति के भवनवासी देवों का अठारहवाँ इन्द्र और प्रतीन्द्र। वीवच० १४ ५६-५७

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५८

महाघोषा—अच्छे स्वरवाली वीणा। देवों ने यह वीणा भूमिगोचरियों को दी थी। हरिवंशपुराण के अनुसार यह वीणा किन्नर देवों द्वारा सिद्धकूटवासी विद्याधरों को दी गयी थी। मपु० ७० २९५-२९६, हपु० २० ६१

महाचन्द्र—आगामी दूसरा बलभद्र। मपु० ७६ ४८५

महाजठर—रावण का पक्षधर एक राक्षस विद्याधर। यह कवचधारी था। इसके पास अनेक शस्त्र थे। पपु० १२ १९७

महाजय—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

(२) भरतेश चक्रवर्ती का पुत्र। यह चरमशरीरी जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७.२८२-२८३

महाजाल—एक शंख। प्रद्युम्न को वाराह पर्वत की गुफा में वहाँ की एक देवी से यह प्राप्त हुआ था। मपु० ७२ १०७-११०

महाज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५२

महाज्वाल—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का उन्तालीसवाँ नगर। मपु० १९ ८४, ८७ हपु० २२ ९०

महाज्वाला—समस्त विद्याओं को छेदनेवाली एक विद्या। रथनूपुर के राजा अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ २७३

महाज्ञान—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महातपा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१

महातम प्रभा—नरक की सातवीं भूमि, अपरनाम माघवी। यह घनोदधिवातवलय पर स्थित है। इसकी मोटाई आठ हजार योजन है। इस पृथिवी के मध्य में पैंतीस कोस के विस्तारवाले पाँच बिल हैं। इसमें एक ही प्रस्तार और उसके मध्य एक अप्रतिष्ठान नामक इन्द्रक है, जिसकी चारों दिशाओं में चार श्रेणीबद्ध बिल हैं। एक इन्द्रक और चार श्रेणीबद्ध दोनों मिलकर इसमें पाँच बिल हैं। इस भूमि के अप्रतिष्ठान इन्द्रक की पूर्व दिशा में काल, पश्चिम दिशा में महाकाल, दक्षिण दिशा में रौरव और उत्तर दिशा में महारौरव नाम के चार प्रसिद्ध नरक हैं। यहाँ का इन्द्रक बिल संख्यात योजन विस्तारवाला और चारों दिशाओं के बिल असंख्यात योजन विस्तारवाले हैं। अप्रतिष्ठान इन्द्रक का विस्तार एक लाख योजन तथा अन्तर ऊपर-नीचे तीन हजार नौ सौ निन्यानवें योजन और एक कोस प्रमाण है। यहाँ की जघन्य आयु बाईस सागर तथा उत्कृष्ट आयु तैंतीस सागर है। यहाँ नारकियों की ऊँचाई पाँच सौ धनुष होती है। वे उत्कृष्ट कृष्णलेश्यावान् होते हैं। इस पृथिवी से निकला हुआ प्राणी नियम से संज्ञी तिर्यंच होता है तथा संख्यात वर्ष की आयु का धारक होकर फिर से एक बार नरक जाता है। मपु० १० ३१-३२, ९३-९४, ९८, हपु० ४ ४५-४६, ५७, ७२-७४, १५०, १५८, १६८, २१७, २४७, २९३-२९४, ३३९, ३७५, ३७८

महातेज—तीर्थंकर अजितनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २५

महातेजा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१

महात्मा—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २५९

(२) क्षमाधारी पुरुष। अपराधियों के अपराध क्षमा करना ही इनका स्वभाव होता है। मपु० ४५ १२

महादम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५६

महादान—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महादुःख—तीसरी पृथिवी में प्रथम प्रस्तार के तप्त इन्द्रक की पश्चिम दिशा का महानरक। हपु० ४ १५४

महादेव—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६२

(२) वृषभदेव के दर्शाये चारित्र में स्थिर रहनेवाले एक राजा। मपु० ४२ ३५-३६

महादेवी—(१) राजाओं की प्रधान रानियाँ। मपु० ४२ ३७

(२) रावण की अठारह सहस्र रानियों में एक सामान्य रानी का नाम। पपु० ७७ १२

(३) पट्टरानी। हपु० १ ११५

महाद्युति—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५२

(२) रावण का पक्षधर एक सामन्त। पपु० ५७ ५३

(३) एक यादव नृप। समुद्रविजय की रक्षा के लिए इसकी नियुक्ति की गयी थी। हपु० ५० १२१

महाधनु—बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६८

महाधर—राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १५

महाधामा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१

महाधृति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१

महाधैर्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५२

महाध्यानपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६२

महाध्यानी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५६

महाध्वरधर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

महाधेर्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५२

महानगर—(१) पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप के मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर सीता नदी के दक्षिणी तट पर स्थित रम्यकावती देश का एक नगर। मपु० ५९ २-३

(२) भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ के राजा सुन्दर ने वासुपूज्य को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५८ ४०-४१

महानदी—पद्म आदि सरोवर से निकलनेवाली तथा पूर्व-पश्चिम समुद्र की ओर बहनेवाली चौदह नदियाँ। इनके नाम हैं—गंगा, सिन्धु, रोहित, रोहितास्या, हरित, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नारी, नरकान्ता, सुवर्णकूला, रूप्यकूला, रक्ता और रक्तोदा। मपु० ६३ १९४-१९६

महानन्द—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५३

(२) विजयनगर का राजा। इसकी रानी का नाम वसन्तसेना और पुत्र का नाम हरिवाहन था। मपु० ८ २२७-२२८

(३) नन्द यक्ष का साथी एक यक्ष देव। इन दोनों देवों ने कुमार प्रीतिंकर को धरणिभूषण पर्वत पर पहुँचाया था। मपु० ७६ ३१५, ३२९-३३१

(४) इन्द्र द्वारा किया गया एक नाटक। हपु० ३९ ४१५

महान्—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४, २५ १४८

महानाग—जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

महानाद—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५८

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३४

महानिच्छ—दूसरी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार में तरक इन्द्रक बिल की पूर्व दिशा का महानरक। हपु० ४ १५३

महानिरोध—चौथी पृथिवी (नरकभूमि) के प्रथम प्रस्तार में आर इन्द्रक की उत्तर दिशा का महानरक। हपु० ४ १५५

महानीति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५३

महानील—छठी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार के हिम इन्द्रक की पश्चिम दिशा का महानरक। हपु० ४ १५७

महानुभाव—वृषभदेव के इक्यासीवें गणधर। हपु० १२ ६९

महानेमि—(१) राजा समुद्रविजय का पुत्र। यह यादवों का पक्षधर एक अर्धरथी राजा था। वसुदेव द्वारा की गयी गरुड-व्यूह रचना में इसे कृष्ण के रथ की रक्षा के लिए नियुक्त किया गया था। हपु० ४८ ४३, ५० ८३-८५, १२०, ५२ १४

(२) उग्रसेन का पुत्र। श्रीकृष्ण ने इसे शौर्यनगर का राज्य दिया था। हपु० ५३ ४५

महान्—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४, २५ १४८

महापक—छठी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार मे हिम इन्द्रक की उत्तर दिशा का महानरक। हपु० ४ १५७

महापद्म—(१) अवसर्पिणी काल का नौवाँ चक्रवर्ती। यह हस्तिनापुर के राजा पद्मरथ और रानी मयूरी का पुत्र था। इसकी आठ पुत्रियाँ थी। विद्याधर इसकी आठों पुत्रियों को हरकर ले गये थे। इससे विरक्त होकर इसने अपने पुत्र पद्म को राज्य देकर इसके पुत्र विष्णु के साथ दीक्षा धारण कर ली थी तथा केवलज्ञान प्राप्त कर अन्त में सिद्ध पद प्राप्त किया था। बलि आदि इसी के मन्त्रियों ने अकम्पनाचार्य आदि मुनियों पर उपसर्ग किया था। इसकी आयु तीस हजार वर्ष की थी। इसमें इसके पाँच सौ वर्ष कुमार अवस्था में, पाँच सौ वर्ष मण्डलीक अवस्था में, तीन सौ वर्ष दिग्विजय में, अठारह हजार सात सौ चक्रवर्ती होकर राज्य अवस्था में और दस हजार वर्ष संयमी अवस्था में व्यतीत हुए थे। पपु० २० १७८-१८४, हपु० २० १२-२३, ६० २८६-२८७, ५१०-५११, वीवच० १८ १०१, ११०

(२) तीर्थङ्कर शीतलनाथ के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २०-२४

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

(४) कुण्डलगिरि के सुप्रभकूट का निवासी देव। हपु० ५ ६९२

(५) महाहिमवत् कुलाचल का ह्रद-सरोवर। रोहित और हरिकान्ता ये दो नदियाँ इसी ह्रद से निकली हैं। ह्री देवी यहीं रहती हैं। मपु० ६३ १०३, १९७, २००, हपु० ५ १२१, १३०, १३३

(६) आगामी नौवाँ चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८३, हपु० ६० ५६४-५६५

(७) आगामी प्रथम तीर्थङ्कर—राजा श्रेणिक का जीव। मपु० ७४ ४५२, ७६ ४७७, हपु० ६० ५५८, वीवच० १९ १५४-१५७

(८) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के वीतशोक नगर का राजा। इसकी रानी का नाम वनमाला तथा पुत्र का नाम शिवकुमार था। मपु० ७६ १३०-१३१

(९) आगामी सोलहवाँ कुलकर। मपु० ७६.४६६

(१०) तीर्थङ्कर सुविधिनाथ के दूसरे पूर्वभव का जीव-पुष्करार्ध

द्वीप के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। यह जिनराज भूतहित से धर्मोपदेश सुनकर ससार से विरक्त हो गया। पुत्र धनद को राज्य सौंपने के पश्चात् यह दीक्षित हुआ। तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध कर अन्त में यह समाधिपूर्वक मरा और प्राणत स्वर्ग में इन्द्र हुआ। वहाँ से चयकर काकन्दी नगरी के राजा सुग्रीव और उसकी पट्टरानी जयरामा के पुष्पदन्त नामक पुत्र हुआ। मपु० ५५ २-२८

महापद्मा—पूर्व विदेहक्षेत्र में सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित दक्षिणोत्तर फैले हुए आठ देशो में तीसरा देश। मपु० ६३ २१०, हपु० ५ २४९-२५०

महापराक्रम—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६०

महापादप—जम्बूद्वीप के जम्बू और शाल्मली दो वृक्ष। इनमें जम्बूवृक्ष पर अनावृत नामक देव रहता है। पपु० ३.३८, ४८

महापीठ—सेठ धनमित्र का जीव—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन का पुत्र। यह वज्रनाभि, विजय, वैजयन्त, अपराजित, बाहु, सुबाहु, पीठ और वज्रदन्त भाइयो के साथ सर्वार्थसिद्धि मे अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ११ ८-९, १३, १६० दे० धनमित्र

महापुण्डरीक—(१) द्वादशाग श्रुत के दूसरे भेद अगबाह्य का तेरहवाँ प्रकीर्णक। इनमें देवियो के उपपाद का निरूपण किया गया है। हपु० २ १०४, १० १३७

(२) छ महाकुलाचलो के मध्यभाग में पूर्व से पश्चिम तक फैले छ विशाल सरोवरो में पाँचवाँ सरोवर। यह नारी और रूप्यकूला नदियो का उद्गमस्थान है। बुद्धि देवी यहीं रहती है। मपु० ६३ १९७-१९८, २००, हपु० ५ १२०-१२१, १३०-१३४

महापुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा वायुरथ अपने पुत्र घनरथ को राज्य देकर सुव्रत जिनेन्द्र से दीक्षित हो गया था। मपु० ५८ ८०, पपु० १०६ ३८, हपु० २४ ३७, ३० ३९

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का इक्यावनवाँ नगर। हपु० २२ ९१

महापुराण—आचार्य जिनसेन द्वारा रचित और आचार्य गुणभद्र द्वारा सम्पूरित त्रेसठ शलाका पुरुषो का पुराण। इसके दो खण्ड हैं—आदिपुराण या पूर्वपुराण और उत्तरपुराण। आदिपुराण सैतालीस पर्वो में पूर्ण हुआ है। इसके बयालीस पर्व पूर्ण और तैंतालीसवें पर्व के तीन श्लोक भगवज्जिनसेनाचार्य द्वारा लिखे गये हैं। शेष ग्रन्थ की पूर्ति उनके शिष्य गुणभद्राचार्य ने की है। जिनसेन कृत खण्ड का नाम आदिपुराण और गुणभद्र कृत खण्ड का नाम उत्तरपुराण है। दोनो मिलकर महापुराण कहलाता है। आदिपुराण मे भगवान् ऋषभदेव और भरत चक्रवर्ती के चरित्र का विस्तृत वर्णन है। इसी प्रकार उत्तरपुराण में अजित से महावीर पर्यन्त तेईस तीर्थङ्करो के जीवन चरित्र का उल्लेख है। इस पुराण मे आचार्य जिनसेन द्वारा रचित नौ हजार दो सौ पचासी तथा आचार्य गुणभद्र द्वारा रचित नौ हजार दो सौ सैंतीस श्लोक है। कुल श्लोक अठारह हजार पाँच सौ बाईस हैं। यह मात्र धर्मकथा ही नहीं एक सुन्दर महाकाव्य है। आचार्य जिनसेन ने इसे 'महापुराण' कहा है। महापुरुषो से सम्बन्धित तथा महान् अभ्युदय-स्वर्ग मोक्ष आदि कल्याणो का कारण होने से महर्षियो ने भी इसे महापुराण माना है। इसे ऋषि प्रणीत होने से आर्ष, सत्यार्थ प्रणीत होने से "धर्मशास्त्र" और प्राचीन कथाओ का निरूपक होने से "इतिहास" कहा गया है। मपु० १ २३-२५, २ १३४

महापुरी—विदेह की एक नगरी। यह महापद्म देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २०८-२१५, हपु० ५ २४९, २६१-२६२

महापुरुष—किन्नर जाति के व्यन्तर देवो का एक इन्द्र और प्रतीन्द्र। वीवच० १४ ५९, ६१-६२

महाप्रज्ञप्ति—एक विद्या। यह विद्याधरो को सिद्ध होकर उन्हें यथेष्ट फल देती है। मपु० १९ १२

महाप्रभ—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२८

(२) घृतवर द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६४२

(३) कुण्डलगिरि का दक्षिणदिशावर्ती एक कूट। यह वासुकि देव की निवासभूमि है। हपु० ५ ६९२

महाप्रभु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५५

महाप्राज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५३

महाप्रातिहार्याधीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५५

महाबल—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के नौवें पूर्वभव का जीव-विजयार्ध पर्वत पर स्थित अलकापुरी के राजा अतिबल और उसकी रानी मनोहरा का पुत्र। राजा अतिबल ने राजोचित गुण देखकर इसे युवराज पद दिया था। मत्री स्वयबुद्ध द्वारा प्रतिपादित जीव के अस्तित्व की सिद्धि सुनकर इसने आत्मा का पृथक् और स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार किया था। अवधिज्ञानी आदित्यगति ने इसे आगामी दसवें भव में तीर्थंकर पद की प्राप्ति होने की भविष्यवाणी की थी तथा कहा था कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में यह प्रथम तीर्थंकर होगा। मुनि आदित्यगति से अपनी एक मास की आयु शेष जानकर इसने अपने पुत्र अतिबल को राज्य दे दिया और सन्यास धारण कर लिया था। आयु के अन्त में यह निरन्तर बाईस दिन तक सल्लेखना मे रत रहा और शरीर छोडकर ऐशान स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में ललिताग देव हुआ। पूर्वभव में यह जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में गन्धिल देश के सिंहपुर नगर के राजा श्रीषेण का जयवर्मा पुत्र था। राज्य दिये जाने में पिता की उपेक्षा से इसे वैराग्य हुआ और विद्याधरो के भोग की प्राप्ति की निदान करके यह सर्पदश से मरकर महाबल हुआ था। मपु० ४ १३३, १३८, १५१, १५९, ५ ८६, २००, २११, २२१, २२६, २२८-२२९, २४८-२५४, हपु० ६० १८-१९

(२) एक यादव कुमार। हपु० ५० १२५

(३) सूर्यवशी राजा सुबल का पुत्र और अतिबल का पिता। पपु० ५ ५, हपु० १३ ८

(४) चन्द्रवंशी राजा सोमयश का पुत्र और सुबल का पिता। पपु० ५ ११-१२, हपु० १३ १६-१७

(५) वृषभदेव के छियासठवें गणधर। हपु० १२ ६६

(६) तीर्थंकर-मुनिसुव्रत के एक गणधर। मपु० ६७ ११९

(७) उत्सर्पिणी काल का छठा नारायण। मपु० ७६ ४८८

(८) नाकार्धपुर के राजा मनोजव और रानी वेगिनी का पुत्र। आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दर विद्याधर की पुत्री श्रीमाला के स्वयंवर मे यह सम्मिलित हुआ था। पपु० ६ ३५७-३५८, ४१५-४१६

(९) चौथे बलभद्र सुप्रभ के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २३२

(१०) राम का पक्षधर एक विद्याधर राजा। इसने व्याघ्ररथ पर आसीन होकर युद्ध किया था। पपु० ५८ ४

(११) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा धनजय और रानी जयसेना का पुत्र। नारायण अतिबल इसका छोटा भाई था। अतिबल की आयु पूर्ण हो जाने पर इसने समाधिगुप्त मुनिराज के पास दीक्षा लेकर अनेक तप तपे थे। आयु के अन्त में शरीर छोडकर यह प्राणत स्वर्ग में इन्द्र हुआ। मपु० ७ ८०-८३

(१२) अच्युत स्वर्ग का एक देव। पूर्वभव में यह जम्बूद्वीप के पूर्व-विदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश के पृथ्वीनगर का नृप था। जयसेना इसकी रानी और रतिषेण तथा धृतिषेण पुत्र थे। मपु० ४८ ५८-५९, ६८

(१३) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिणी तट पर स्थित मगलावती देश में रत्नसचयनगर का नृप। इसने अपने पुत्र धनपाल को राज्य देकर विमलवाहन गुरु के पास सयम धारण कर लिया था। पश्चात् यह ग्यारह अग का पाठी हुआ। सोलह कारण भावनाओ के चिन्तन से तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध कर आयु के अन्त में इसने समाधिमरण पूर्वक देह त्यागी और विजय नामक प्रथम अनुत्तर में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ५० २-३, १०-१३, २१-२२, ६९

(१४) बलभद्र सुप्रभ के दूसरे पूर्वभव का जीव—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में नन्दन नगर का नृप। शरीर आदि के नश्वर स्वरूप का बोध हो जाने से इसने पुत्र को राज्य देकर अर्हन्त प्रजापाल से सयम धारण करके सिंह-निष्क्रीडित तप किया। अन्त में यह सन्यास मरण करके सहस्रार स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६० ५८-६२

(१५) कौशाम्बी नगरी का राजा। इसकी श्रीमती नाम की रानी और श्रीकान्ता नाम की पुत्री थी। इसने श्रीकान्ता का विवाह इन्द्रसेन से किया था। श्रीकान्ता के साथ इसने अनन्तमति नाम की एक दासी भी भेजी थी। इस दासी के कारण इन्द्रसेन और उसके भाई उपेन्द्रसेन में युद्ध होने की तैयारी सुनकर यह उन्हें रोकने गया किन्तु रोकने असमर्थ रहने से विष-पुष्प सूँघकर मर गया था। मपु० ६२ ३५१-३५५, पापु० ४ २०७-२१२

(१६) एक केवली। ये तीर्थंकर नेमिनाथ के दूसरे पूर्वभव के जीव श्रीदत्त के पिता सिद्धार्थ के दीक्षा गुरु थे। मपु० ६९ १२-१४

(१७) बंग देश के कान्तपुर नगर के राजा सुवर्णवर्मा और रानी विद्युल्लेखा का पुत्र। इसका लालन-पालन मामा के यहाँ चम्पानगरी में हुआ था। पूर्व निश्चयानुसार मामा की पुत्री कनकलता से इसका विवाह होने ही वाला था कि विवाह के पूर्व ही दोनो का समागम हो गया। इससे लज्जित होकर दोनो कान्तपुर गये किन्तु इसके पिता ने इसे दूसरे देश जाने के लिए कहा। ये दोनो प्रत्यन्तनगर में रहने लगे। इन दोनो ने मुनिगुप्त मुनि को आहार देकर पुण्य सचय किया। वन में घूमते हुए किसी विषैले सर्प द्वारा इसे काटे जाने से यह वन में ही मर गया था। पति को मृत देखकर इसकी स्त्री कनकलता ने भी तलवार से आत्मघात कर लिया। मपु० ७५ ८२-९४

(१८) एक असुर। पूर्वभव में यह अश्वग्रीव का रत्नायुध नामक पुत्र था। मपु० ६३ १३५-१३६

(१९) राजा दशरथ का सेनापति। इसने यज्ञ में होनेवाले पुण्य-पाप की उपेक्षा कर यज्ञ में राम और लक्ष्मण दोनो कुमारो का प्रभाव दिखलाना श्रेयस्कर माना था। मपु० ६७ ४६३-४६४

(२०) पलाशद्वीप सम्बन्धी पलाशपुर नगर का राजा। इसकी रानी काचनलता तथा पुत्री पद्मलता थी। इसे इसके भागीदार ने तलवार से मार डाला था। मपु० ७५ ९७-९८, ११८-१२०

(२१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५२

(२२) सगर चक्रवर्ती के दूसरे पूर्वभव का जीव। मपु० ४८ १४३

(२३) अनागत छठा नारायण। मपु० ७६ ४८८

महाबली—बाहुबली का पुत्र। बाहुबली इसे राज्य देकर दीक्षित हो गये थे। मपु० ३६ १०४

महाबाहु—(१) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र मे पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन का पुत्र। यह पूर्वभव में महाबल राजा का आनन्द नामक पुरोहित था। यह मरकर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ११ ९, १२, १६०

(२) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०५

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३४

(४) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का अडतीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

(५) राक्षसवशी एक विद्याधर। यह लका का राजा था। पपु० ५ ३९७

महाबुद्धि—एक राजा। यह भरत (दशरथ के पुत्र) के साथ दीक्षित हो गया था। पपु० ८८ १-४

महाबोधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

महाब्रह्मपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

महाब्रह्मपदेश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३१

महाभवाब्धिसंतारी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६१

महाभाग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५३

महाभानु—कृष्ण का पुत्र । हपु० ४८ ६९

महाभिषेक—तीर्थंकरो का जन्माभिषेक । इन्द्राणी प्रसूतिगृह मे जाकर मायामय शिशु तीर्थंकर की माता के पास सुला देती है और तीर्थङ्कर को वहाँ से बाहर लाकर इन्द्र को सौंपती है । इन्द्र जिन-शिशु को ऐरावत हाथी पर बैठाकर सुमेरु पर्वत ले जाता है और वहाँ पाण्डुक शिला पर विराजमान करता है तथा हाथो हाथ लाये गये क्षीरसागर के जल से जिनशिशु का अभिषेक करता है । हपु० ३८ ३९-४८

महाभीम—(१) किन्नर आदि व्यन्तर देवो का बारहवाँ इन्द्र और प्रतीन्द्र । वीवच० १४ ६१

(२) राक्षसो का स्वामी । इसने मेघवाहन से लका में रहने तथा परचक्र द्वारा आक्रान्त होने पर दण्डक पर्वत के नीचे स्थित अलकारोदय नगर में आश्रय लेने के लिए कहा था । पपु० ४३ १९-२८

(३) नौ नारदो में दूसरा नारद । हपु० ६० ५४८ दे० नारद

महाभुज—कुण्डलगिरि के कनकप्रभ कूट का निवासी एक देव । हपु० ५ ६९१

महाभूतपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६०

महाभूति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५२

महाभैरव—सिंहरथ पर सवार राम का एक सामन्त । पपु० ५८ १०-११

महामंडप—तीर्थङ्कर के जन्माभिषेक के समय इन्द्र द्वारा रचित मण्डप । इसके नीचे समस्त प्राणी निराबाध बैठ सकते है । मपु० १३ १०४-१०५

महामडलिक—चार हजार छोटे-छोटे राजाओ का अधिपति । यह दण्डधर (प्रजा को दण्ड देनेवाले) होता था । वृषभदेव ने अपने समय मे हरि, अकम्पन, काश्यप और सोमप्रभ को उनका राजाभिषेक कर महा-मण्डलिक नृप बनाया था । इसके ऊपर केवल दो चमर ढोरे जाते हैं । मपु० १६ २५५-२५७

महामख—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५६

महामति—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक माम । मपु० २५ १५३

(२) विजयार्ध पर्वत की अलकापुरी के राजा के जन्मोत्सव पर भूतवादी चार्वाक मत का आवलम्बन लेकर मन्त्री स्वयबुद्ध द्वारा कथित जीव-तत्त्व की सिद्धि मे दोष लगाये थे । अन्त मे यह मरकर निगोद मे उत्पन्न हुआ था । मपु० ४ १९१, ५ २८-३५, १० ७

महामन्त्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५८

महामंत्री—राज्य का एक अधिकारी । यह सामन्त और पुरोहित के समान राजा का परम हितैषी होता है । हपु० २ १४९

महामह—एक पूजा । चक्रवर्ती भरतेश ने ससार को सतुष्ट करने के लिए द्रव्य दान में देते हुए ऐसी पूजा करने की भावना की थी और जीवन्धर ने ऐसी पूजा आयोजित की थी । मपु० ३८.६, ७५ ४७७

महामहपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५५

महामहा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५४

महामाली—(१) रावण का व्याघ्ररथ पर आसीन एक योद्धा । पपु० ५७ ५०

(२) जरासन्ध का पुत्र । हपु० ५२.४०

महामुख—रावण का पक्षधर एक विद्याधर । यह राम के दूत अणुमान् के साथ लका गया था । मपु० ६८ ४३१

महामुनि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५६

महामेघरथ—तीर्थङ्कर कुन्थुनाथ के पूर्वभव का नाम । पपु० २० २२

महामेरु—सुमेरु पर्वत । यह जम्बूद्वीप के मध्यभाग में अवस्थित तथा एक लाख योजन विस्तारवाला है । यह कभी नष्ट नही होता । इसका मूलभाग वज्रमय है । ऊपर का भाग स्वर्ण तथा मणियो एव रत्नो से निर्मित है । सौधर्म स्वर्ग की भूमि और इस पर्वत के शिखर मे केवल बाल के अग्रभाग बराबर ही अन्तर रह जाता है । समतल पृथिवी से यह निन्यानवें हजार नीचे पृथिवी के भीतर है । पृथिवी पर दश हजार योजन और शिखर पर एक हजार योजन चौडा है । इसके मध्यभाग के नीचे भद्रशाल महावन, कटिभाग में नन्दनवन, इसके ऊपर सौमनस वन और सबसे ऊपर मुकुट के समान पाण्डुकवन है । इस पाण्डुकवनमें तीर्थकरो के अभिषेक हेतु एक पाण्डुक शिला भी है । मपु० १३ ६८-७१,७८, ८२, पपु० ३ ३२-३६, हपु० ५ १-३

महामैत्री—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५७

महामोहाद्रिसूदन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६१

महामौनी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५६

महायज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५६

महायति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५.१५८

महायश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५१

महायोग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १५४

महायोगीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६१

महारक्ष—लका के राजा मेघवाहन और रानी सुप्रभा का पुत्र । पिता के दीक्षित होने पर इसे राज्य प्राप्त हुआ था । रानी विमलाभा से उत्पन्न अमररक्ष, उदधिरक्ष और भानुरक्ष इसके तीन पुत्र थे । प्रमदवन में कमलसपुट के भीतर एक मृत भ्रमर देखकर यह विषयो से विरक्त हुआ । इसने ज्येष्ठ पुत्र अमररक्ष को राज्य दिया और भानुरक्ष को युवराज बनाया था तथा स्वय सयमी हो गया था । अन्त में समाधि-

मरण कर यह उत्तम देव हुआ। पपु० ५ १७९-१८३, २३९, २४३-२४४, ३०५-३१४, ३६०-३६२, ३६५

महारक्त—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७ ५४

महारत्नपुर—विजयार्ध का एक नगर। विद्याधर धनंजय यहाँ का राजा था। राजा ज्वलनजटी के मंत्री बहुश्रुत ने राजकुमारी स्वयंप्रभा के विवाह हेतु इसका नाम भी प्रस्तावित किया था। मपु० ६२ ३०, ४४, ६३-६८

महारथ—(१) पूर्वधातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में वत्स देश की सुसीमा नगरी के राजा दशरथ का पुत्र। राजा दशरथ इसे राज्य देकर संयमी हो गया था। मपु० ६१ २-८

(२) एक वानर कुमार विद्याधर। यह हरिवंशी राजा कुणिम का पुत्र था। यह बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण को कुपित करने लंका गया था। पपु० २१ ५०-५१, ७० १४-१६

(३) कुरुवंशी एक नृप। यह राजा चित्ररथ का उत्तराधिकारी था। हपु० ४५ २८

(४) राजा वसुदेव और उसकी रानी अवन्ती का तीसरा पुत्र। सुमुख और दुर्मुख इसके अनुज थे। हपु० ४८.६४

(५) वृषभदेव के चौसठवें गणधर। हपु० १२ ६६

(६) अतिरथ, महारथ, समरथ और अर्धरथ इन चार प्रकारों के राजाओं में दूसरे प्रकार के राजा। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में ऐसे राजा भी युद्ध करने आये थे। ये शस्त्र और शास्त्रार्थ में निपुण दयालु, महाशक्तिमान् और धैर्यशाली थे। हपु० ५० ७७-८५

महारव—लंका के राक्षसवंशी राजा चन्द्रावर्त का पुत्र और मेघध्वान का पिता। पपु० ५ ३९८-४०१

महाराज—चक्रवर्ती सनत्कुमार का पूर्वज कुरुवंशी एक नृप। हपु० ४५ १५-१६

(२) अधमण्डलेश्वर के अधीनस्थ राजा। इसके दो चमर ढोरे जाते जाते हैं। मपु० २३ ६०

महाराष्ट्र—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश के पृथिवी-नगर का राजा और जयसेन का साला। यह राजा जयसेन के साथ दीक्षित हो गया था। अन्त में यह समाधिपूर्वक मरकर अच्युत स्वर्ग में मणिकेतु नामक देव हुआ। मपु० ४८ ५८-५९, ६७, ६९

महारुद्र—नौ नारदों में चौथा नारद। हपु० ६० ५४८, दे० नारद

महारौरव—सातवीं पृथिवी के अप्रतिष्ठान इन्द्रक की उत्तर दिशा का महानरक। हपु० ४ १५८

महालक्ष्मी—भरतक्षेत्र के काम्पिल्यनगर के राजा मृगपतिध्वज की दूसरी रानी। यह पटरानी वप्रा की सौत थी। वप्रा जैन थी और यह अजैन। दोनों में वैर था। वप्रा ने एक बार नगर में जिनेन्द्र का रथ निकलवाना चाहा था किन्तु इसने जैन-रथ निकलवाने के पूर्व ब्रह्मरथ निकलवाने का आग्रह कर वप्रा का विरोध किया था। पपु० ८ २८१-२८६

महालताग—चौरासी लाख लताग प्रमाण काल। मपु० ३ २२६, हपु० ७ २९

महालता—चौरासी लाख महालताग प्रमाण काल। मपु० ३ २२६, हपु० ७ २९

महालोचन—एक गरुडेन्द्र। राम के स्मरण मात्र से इसने दो विद्याएँ देकर उनके पास चिन्तावेग देव को भेजा था। इसके संकेतानुसार चिन्तावेग देव ने राम को सिंहवादिनी और लक्ष्मण को गरुडवाहिनी विद्याएँ दी थी। पपु० ६० १३२-१३५, ६१ १८

महावक्षा—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का तेरानवेवाँ पुत्र। पापु० ८ २०४

महावत्सा—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित आठ देशों में तीसरा देश। अपराजिता नगरी इस देश की राजधानी थी। मपु० १० १२१, ६३ २०९, हपु० ५ २४७-२४८

महावपु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५४

महावप्रा—पश्चिम विदेहक्षेत्र में नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित दक्षिणोत्तर फैले हुए आठ देशों में तीसरा देश। मपु० ६३ २११, हपु० ५ २५१

महावसु—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३२

(२) राजा वसु का पाँचवाँ पुत्र। हपु० १७ ५८

महाविघ्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

महाविद्या—विद्याधरों को प्राप्त इच्छानुसार फल देनेवाली विद्याएँ। ये दो प्रकार से प्राप्त होती हैं—१ पितृपक्ष अथवा मातृपक्ष से, २ तपस्या से। इसमें दूसरे प्रकार की विद्याएँ सिद्धायतन के समीप-वर्ती द्वीप, पर्वत, नदी तट या किसी भी पवित्र स्थान में शुद्ध वेष और ब्रह्मचर्यपूर्वक तपश्चरण नित्यपूजा, जप, हवन तथा महोपवास करते हुए सिद्ध होती हैं। मपु० १९ ११-१६

महाविन्ध्य—दूसरी नरकभूमि से प्रथम प्रस्तार सम्बन्धी नरक इन्द्रक की उत्तर दिशा में स्थित नरक। हपु० ४ १५३

महाविमर्दन—पाँचवी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार के तम इन्द्रक की उत्तरदिशा का महानरक। हपु० ४,१५६

महावीर—अन्तिम चौबीसवें तीर्थंकर। ये भरतक्षेत्र के विदेह देश में कुण्डपुर नगर के राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी के पुत्र थे। सोलह स्वप्नपूर्वक आषाढ शुक्ला षष्ठी के दिन मनोहर नामक चौथे प्रहर और उत्तराषाढ़ नक्षत्र में चौथे काल के पचहत्तर वर्ष साढ़े आठ माह शेष रहने पर ये गर्भ में आये थे। गर्भ में आने के छः मास पूर्व से ही इनके पिता सिद्धार्थ के प्रांगण में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्न बरसने लगे थे। देवों ने इनके पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी के निकट आकर इनका गर्भकल्याणक उत्सव किया था। गर्भवास का नौवाँ माह पूर्ण होने पर चैत्र मास के शुक्लपक्ष की त्रयोदशी के दिन अर्यमा नाम के शुभयोग में इनका जन्म हुआ था। ये पार्श्वनाथ तीर्थंकर के ढाई सौ वर्ष बाद हुए थे। इनकी अवगाहना सात हाथ तथा आयु बहत्तर वर्ष की थी। ये हरिवंशी और काश्यप-गोत्री थे। जन्म से ही तीन ज्ञान से विभूषित थे। इन्हें जन्म देकर प्रियकारिणी ने मनुष्य, देव और तिर्यञ्चों को बहुत प्रेम प्राप्त होने से अपना नाम सार्थक किया था। सौधर्मेन्द्र ने इन्हें अपनी गोद में

लेकर और ऐरावत हाथी पर बैठाकर सुमेरु पर ले गया था। वहाँ पाण्डुक शिला पर विराजमान करके उसने क्षीरसागर के जल से इनका अभिषेक किया था। इन्हें वीर एव वर्द्धमान दो नाम दिये थे तथा सोत्साह "आनन्द" नाटक भी किया था। वीर-वर्धमान चरित के अनुसार ये कर्मरूपी शत्रुओ को नाश करने से "महावीर" और निरन्तर बढनेवाले गुणो के आश्रय होने से "वर्धमान" कहलाये थे। महावीर नाम के सम्बन्ध में यह भी कहा गया है कि सगम नामक देव ने इनके बल की परीक्षा लेकर इन्हें यह नाम दिया था। यह देव सर्प के रूप मे आया था। जिस वृक्ष के नीचे ये खेल रहे थे उसी वृक्ष के तने से वह लिपट गया। इन्होने इस सर्प के साथ निर्भय होकर क्रीडा की। इनकी इस निर्भयता से प्रसन्न होकर देव ने प्रकट होकर इन्हें "महावीर" कहा था। पद्मपुराण के अनुसार इन्होने अपने पैर के अगूठे से अनायास ही सुमेरु पर्वत को कम्पित कर इन्द्र द्वारा यह नाम प्राप्त किया था। तीव्र तपश्चरण करने से ये लोक मे "महतिमहावीर" नाम से विख्यात हुए थे। सजय और विजय नाम के चारण ऋद्धिधारी मुनियो का सशय इनके दर्शन मात्र से दूर हो जाने से उनके द्वारा इन्हें "सन्मति" नाम दिया गया था। ये स्वय बुद्ध थे। आठ वर्ष की अवस्था में इन्होने श्रावक के बारह व्रत धारण कर लिये थे। इनका शरीर अतिसुन्दर था। रक्त दूध के समान शुभ्र था। ये समचतुरस्रसस्थान और वज्रवृषभनाराचसहनन के धारी थे। एक हजार आठ शुभ लक्षणो से इनका शरीर अलकृत तथा अप्रमाण महावीर्य से युक्त था। ये विश्वहितकारी कर्णसुखद् वाणी बोलते थे। तीस वर्ष की अवस्था में ही इन्हें वैराग्य हो गया था। लौकान्तिक देवो के द्वारा स्तुति किये जाने के पश्चात् इन्होने माता-पिता से आज्ञा प्राप्त की और ये चन्द्रप्रभा पालकी में बैठकर दीक्षार्थ खण्डवन गये थे। इनकी पालकी सर्वप्रथम भूमिगोचरी राजाओ ने, पश्चात् विद्याधर राजाओ ने और फिर इन्द्रो ने उठाई थी। खण्डवन मे पालकी से उतरकर वर्तुलाकार रत्नशिला पर उत्तर की ओर मुखकर इन्होने वेला का नियम लेकर मार्गशीर्ष मास के कृष्णपक्ष की दशमी के दिन अपराह्न काल में उत्तराफाल्गुन और हस्तनक्षत्र के मध्यभाग मे सध्या के समय निर्ग्रन्थ मुनि होकर सयम धारण किया। इनके द्वारा उखाडकर फेंकी गयी केशराशि को इन्द्र ने उठाकर उसे मणिमय पिटारे में रखकर उसकी पूजा की तथा उसका क्षीरसागर में सोत्साह निक्षेपण किया। सयमी होते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान प्राप्त हुआ। कूलग्राम नगरी मे राजा कूल ने इन्हें परमान्न खीर का आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। उज्जयिनी के अतिमुक्तक श्मसान मे महादेव रुद्र ने प्रतिमायोग में विराजमान इनके ऊपर अनेक प्रकार से उपसर्ग किये किन्तु वह इन्हें समाधि से विचलित नही कर सका था। एक दिन ये वत्स देश की कौशाम्बी नगरी में आहार के लिए आये थे। राजा चेटक की पुत्री चन्दना जैसे ही इन्हें आहार देने के लिए तत्पर हुई, उसके समस्त बन्धन टूट गये तथा केश, वस्त्र और आभूषण सुन्दर हो गये। यहाँ तक कि उसका मिट्टी का सकोरा स्वर्णपात्र बन गया और आहार में दिया गया कोदो का भात चावलो में बदल गया। उसे पचाश्चर्य प्राप्त हुए। छद्मस्थ अवस्था के बारह वर्ष व्यतीत करके एक दिन जृम्भिक ग्राम के समीप ऋजुकूला नदी के तट पर मनोहर वन में सालवृक्ष के नीचे शिला पर प्रतिमायोग में विराजमान हुए। परिणामो की विशुद्धता से वैशाख मास के शुक्लपक्ष की दशमी तिथि की अपराह्न वेला में उत्तरा-फाल्गुन नक्षत्र में शुभ चन्द्रयोग के समय इन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ और ये अनन्तचतुष्टय के धारक हो गये। सौधर्मेन्द्र ने इनका ज्ञानकल्याणक मनाया। समवसरण में तीन प्रहर बीत जाने पर भी इनकी दिव्यध्वनि न खिरने पर सौधर्मेन्द्र ने इसका कारण गणधर का अभाव जाना। वह इस पद के योग्य गौतम इन्द्रभूति विप्र को ज्ञातकर वृद्ध ब्राह्मण के वेष में उसके पास गया तथा उनसे उसने निम्न गाथा का अर्थ स्पष्ट करने के लिए कहा।

त्रैकाल्य द्रव्यषट्क सकलगतिगणा सत्पदार्था नवैव
विश्व पचास्तिकाया व्रतसमितिचिद सप्ततत्त्वानि धर्मा ।
सिद्धेर्मार्ग स्वरूप विधिजनितफल जीवषट्कायलेश्या
एतान् य श्रद्धाति जिनवचनरतो मुक्तिगामी स भव्य ॥

गौतम इस गाथा का अर्थ ज्ञात न कर सकने से इनके पास आये। वहाँ मानस्तम्भ पर अनायास दृष्टि पडते ही गौतम का अज्ञान दूर हो गया। अपने अज्ञान की निवृत्ति से प्रभावित होकर गौतम अपने पाँच सौ शिष्यो के साथ इनके शिष्य हो गये। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के दिन पूर्वाह्न काल में समस्त अगो और पूर्वो को जानकर गौतम ने रात्रि के पूर्वभाग में अगो की और पिछले भाग मे पूर्वो की रचना की तथा वे इनके प्रथम गणधर हुए। महापुराण और वीरवर्द्धमान चरित के अनुसार शेष दस गणधरो के नाम हैं वायुगति, अग्निभूति, सुधर्म, मौर्य, मौन्द्रय, पुत्र, मैत्रेय, अन्धवेला तथा प्रभास। हरिवशपुराण के अनुसार ये निम्न प्रकार हैं—इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति, शुचिदत्त, सुधर्म, माण्डव्य, मौर्यपुत्र, अकम्पन, अचल, मेदार्य और प्रभास। इस प्रकार इनके कुल ग्यारह गणधर थे। इनके सघ में तीन सौ ग्यारह अग और चौदहपूर्वधारी सयमी, नौ हजार नौ सौ शिक्षक, तेरह सौ अवधिज्ञानी, सात सौ केवलज्ञानी, नौ सौ विक्रिया-ऋद्धिधारी, पाँच सौ मन पर्ययज्ञानी और चार सौ अनुत्तरवादी कुल मुनि चौदह हजार, चन्दना आदि छत्तीस हजार आर्यिकाएँ, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकाएँ तथा असख्यात देव-देवियाँ और सख्यात तिर्यंच थे। इनके विहार-स्थलो के नाम केवल हरिवशपुराण में बताये गये हैं। वे नाम हैं—काशी, कौशल, कौशल्य, कुसन्ध्य, अस्वष्ट, साल्व, त्रिगर्त, पचाल, भद्रकार, पटच्चर, मौक, मत्स्य, कनीय, सूरसेन और वृकार्थक, समुद्रतटवर्ती कलिंग, कुरुजागल, कैकेय, आत्रेय, कम्बोज, वाह्लीक, यवन, सिन्धु, गाधार, सौवीर, सूर, भीरु, दशेरुक, वाडवान, भरद्वाज और क्वाथतोय तथा उत्तर दिशा के तार्ण, कार्ण और प्रच्छाल। इन्होने इन स्थलो में विहार करते हुए अर्धमागधी भाषा में द्रव्य, तत्त्व, पदार्थ, ससार और मोक्ष तथा उनके कारण

एत्र उनके फल का प्रमाण, नय और निक्षेप आदि द्वारा उपदेश किया था। अन्त में ये राजगृह नगर के निकट विपुलाचल पर्वत पर स्थिर हुए। वीरवर्धमानचरित के अनुसार इन्होंने छः दिन कम तीस वर्ष तक विहार करने के बाद चम्पानगरी के उद्यान में दिव्यध्वनि और योगनिरोध कर प्रतिमायोग धारण किया तथा कार्तिक मास की अमावस्या के दिन स्वाति नक्षत्र के रहते प्रभातवेला में उनका निर्वाण हुआ। महापुराण और पद्मपुराण के अनुसार निर्वाण स्थली पावापुर का मनोहर वन है। दूरवर्ती पैंतीसवें पूर्वभव में ये पुरुरवा भील थे। चौंतीसवें पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग के देव, पश्चात् तेंतीसवें में मरीचि, बत्तीसवें में ब्रह्म स्वर्ग के देव, इकतीसवें मे जटिल ब्राह्मण, तीसवें में सौधर्म स्वर्ग में देव, उन्तीसवें में पुष्यमित्र नामक ब्राह्मण, अट्ठाइसवें मे सौधर्म स्वर्ग के देव, सत्ताइसवें में अग्निसह ब्राह्मण, छब्बीसवें में सनत्कुमार स्वर्ग में देव, पच्चीसवें में अग्निमित्र ब्राह्मण, चौबीसवें में माहेन्द्र स्वर्ग में देव, तेईसवें में भरद्वाज नामक ब्राह्मण, बाईसवें में माहेन्द्र स्वर्ग में देव, इक्कीसवें मे निगोदादि अधोगतियो के जीव, बीसवें में त्रस, उन्नीसवें में स्थावर, अठारहवें में स्थावर ब्राह्मण, सत्रहवें में माहेन्द्र स्वर्ग में देव, सोलहवें में विश्वनन्दी ब्राह्मण, पन्द्रहवें मे महाशुक्र स्वर्ग में देव, चौदहवें में त्रिपृष्ठ चक्रवर्ती, तेरहवें में सातवें नरक के नारकी, बारहवें में सिंह, ग्यारहवें में प्रथम नरक के नारकी, दसवें में सिंह, नौवें मे सिंहकेतु देव, आठवें में कनकोज्ज्वल विद्याधर, सातवें में सातवें स्वर्ग में देव, छठे मे हरिषेण राजपुत्र, पाँचवें में महाशुक्र स्वर्ग में देव, चौथे में प्रियमित्र राजकुमार, तीसरे में सहस्रार स्वर्ग में सूर्यप्रभ देव, दूसरे में नन्द राजपुत्र और प्रथम पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग के अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ७४ १४-१६, २०-२२, ५१-८७, ११८, १२२, १६७, १६९-१७१, १९३, २१९, २२१-२२२, २२९, २३२, २३४, २३७, २४१, २४३, २४६, २५१-२६२, २६८, २७१-२७६, २८२-३५४, ३६६-३८५, ७६ ५०९, ५३४-५४३, पपु० २ ७६, २० ६१-६९, ९०, ११५, १२२, हपु० २ १८-३३, ५०-६४, ३ ३-७, ४१-५०, वीवच० १४, ७, ७ २२, ८ ५९-६१, ७९, ९ ८९, १० १६-३७, १२ ४१-४७, ५९-७२, ८७-८८, ९९-१०३, १३७-१३८, १३ ४-२८, ८१, ९१-१०१, १३१-१३२, १५ ७८-७९, ९९, १९ २०६-२१५, २२०-२२१, २३२-२३३

महावीर्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु २५ १५२

महावेगा—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को प्राप्त एक विद्या। मपु० ६२ ३९७

महावेदन—तीसरी नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार सम्बन्धी तप्त इन्द्रक बिल की उत्तरदिशा का महानरक। हपु० ४ १५४

महाव्रत—महाव्रतियो का एक आचार धर्म। इस व्रत में हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँच पापो का सूक्ष्म और स्थूल दोनो रूप से त्याग करके अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का निरतिचार पूर्ण रूप से पालन किया जाता है। मपु० ३९.३-४, पपु० ४ ४८, हपु० २,११७-१२१, १८ ४३

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१६२

महाव्रतपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५७

महाशक्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १५२

महाशनिरव—रावण का व्याघ्र-रथ पर आसीन एक सामन्त। पपु० ५७ ४९

महाशिरस्—कुण्डलगिरि के कनककूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६९०

महाशील—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५६

महाशुक्र—(१) दसवाँ स्वर्ग। मपु० ५७ ८२, ५९ २२६, पपु० १०५, १६८, हपु० ४ २५, ६ ३७

(२) एक विमान। मपु० ५८ १३

(३) इस नाम के विमान मे उत्पन्न इन्द्र। मपु० ५८ १३-१५

(४) जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३३

महाशुभस्तुति—अर्हन्तो की गुणराशि का यथार्थरूप से किया गया कीर्तन। वीवच० १९ ९

महाशैलपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा मन्त्रियो सहित रावण की सहायतार्थ उसके पास आया था। पपु० ५५ ८६

महाशोकध्वज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३३

महाश्वसन—एक अस्त्र। श्रीकृष्ण ने जरासन्ध के तीव्र वर्षाकारी सवर्तक अस्त्र का इसी से तीव्र आँधी चलाकर निवारण किया था। हपु० ५२ ५०

महाश्वेता—दिति और अदिति देवियो द्वारा विद्याधर नमि और विनमि को दिये गये सोलह विद्यानिकायो की एक विद्या। हपु० २२.९३

महासत्त्व—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५१

महासम्पत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५२

महासर—धृतव्यास का पूर्वज कुरुवशी एक नृप। इसे राजा धारण से राज्य प्राप्त हुआ था। हपु० ४५ २९

महासर्वतोभद्र—एक व्रत। इसमें सात भागवाला एक चौकोर प्रस्तार बनाकर एक से सात तक के अक इस रीति से लिखे जाते हैं कि सब ओर से सख्या का जोड अट्ठाईस आ जाता है। इस प्रकार एक भाग के अट्ठाईस उपवास और सात पारणाओ के क्रम से सातो भागों के कुल एक सौ छियानवें उपवास और उनचास पारणाएँ की जाती है। इस महाव्रत में दो सौ पैंतालीस दिन लगते हैं। हपु० ३४ ५७-५८

महासुव्रत—द्वितीय बलभद्र विजय के पूर्वजन्म का दीक्षा-गुरु। पपु० २० २३४

महासूर्यप्रभ—सहस्रार स्वर्ग का एक देव। यह पूर्वभव में प्रियमित्र चक्रवर्ती था। वीवच० ५.३७-३९, ११७ दे० प्रियमित्र

महासेन—(१) भोजकवृष्णि और रानी पद्मावती का दूसरा पुत्र। यह उग्रसेन का अनुज और देवसेन का अग्रज था। मपु० ७० १००, हपु० १८ १६

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

(३) कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा का भाई। हपु० ४४ २५

(४) उग्रसेन के चाचा शान्तनु का पुत्र। हपु० ४८ ४०

(५) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८.७०, ५० १३१

(६) रविषेणाचार्य के पूर्व हुए एक कवि-आचार्य। ये सुलोचना कथा के लेखक थे। हपु० १ ३३

(७) भरतक्षेत्र में स्थित चन्द्रपुर नगर का राजा। यह इक्ष्वाकुवंशी और काश्यपगोत्री चन्द्रप्रभ तीर्थंकर का पिता था। इसकी रानी का नाम लक्ष्मणा था। मपु० ५४ १६३-१६४, १७३, पपु० २० ४४

(८) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी का राजा। वसुन्धरा इसकी रानी तथा जयसेन पुत्र था। मपु० ७ ८४-८६

(९) चक्रवर्ती हरिषेण का पुत्र। हरिषेण इसे ही राज्य देकर संयमी हुआ था। मपु० ६७ ८४-८६

(१०) विजयार्ध पर्वत की उत्तरदिशा में स्थित अल्का नगरी के राजा हरिबल का भाई और भूतिलक का अग्रज। इसके स्त्री सुन्दरी से उग्रसेन और वरसेन नाम के दो पुत्र तथा वसुन्धरा नाम की एक कन्या हुई थी। इसने व्यन्तर देवताओं को युद्ध में जीतकर एक सुन्दर नगर को अपनी आवासभूमि बनाया था। अपने भाई हरिबल के पुत्र भीमक को इसने पराजित कर उसे पहले तो बन्धनों में रखा फिर शान्त होने पर उसे मुक्त कर दिया। भीमक अपनी पराजय भूल नहीं सका। उसने उसका राज्य लौटा दिया और राक्षसी विद्या सिद्धकर इसे मार डाला। मपु० ७६ २६२-२८०

(११) तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६ ५३२

महाहिमवत्—(१) छः कुलाचलों में दूसरा कुलाचल। इसका विस्तार चार हजार दो सौ दस योजन तथा दस कला प्रमाण है। यह पृथिवी से दो सौ योजन ऊपर तथा पचास योजन पृथिवी के नीचे है। इसकी प्रत्यंचा का विस्तार तिरेपन हजार नौ सौ इकतीस योजन तथा कुछ अधिक छः कला है। इस प्रत्यंचा के धनुःपृष्ठ का विस्तार सत्तावन हजार दो सौ तिरानवे योजन तथा कुछ अधिक दस अंश है। इसके बाण की चौड़ाई सात हजार आठ सौ चौरानवे योजन तथा चौदह भाग है। चूलिका आठ हजार एक सौ अट्ठाईस योजन तथा साढ़े चार कला प्रमाण। इसकी दोनों भुजाएँ नौ हजार दो सौ छिहत्तर योजन तथा साढ़े नौ कला प्रमाण है। इसके आठ कूट हैं—सिद्धायतन, महाहिमवत्, हैमवत, रोहित, ह्री, हरिकान्त, हरिवर्ष और वैडूर्य। इन सब कूटों की ऊँचाई पचास योजन है। मूल में इनका विस्तार पचास योजन, मध्य में साढ़े सैंतीस योजन और ऊपर पच्चीस योजन है। मपु० ६३ १९३, पपु० १०५ १५७-१५८, हपु० ५.१५, ६३-७३

महाहिमवत्कूट—महाहिमवान् पर्वत के आठ कूटों में दूसरा कूट। हपु० ५ ७१

महाहृदय—कुण्डलगिरि के अंकप्रभकूट का निवासी देव। हपु० ५ ६९३

महितोदय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १५९

महिदेव—कौशाम्बी के वैश्य बृहद्घन का पुत्र और अहिदेव का भाई। इन दोनों भाइयों के पास एक रत्न था। वह जिस भाई के पास रहता वह दूसरे भाई को मारने की इच्छा करने लगता। अतः ये दोनों भाई रत्न माता को देकर विरक्त हो गये थे। पपु० ५५ ६०-६३

महिम—भरतेश के भाइयों द्वारा छोड़े गये देशों में भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ७२

महिमा—चक्रवर्ती भरत को प्राप्त आठ असाधारण गुणों में दूसरा गुण। मपु० ३८ १९३ दे० अणिमा

महिष—(१) मध्य आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश ने यहाँ के राजा को दण्डरत्न से वश में किया था। मपु० २९.८०

(२) चक्रवर्ती भरत के समय का एक जंगली पशु भैंसा। इसके खुर होते हैं। मपु० ३१ २६, पपु० २ १०

महिष्ठवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

महीकम्प—राजा महीधर विद्याधर का ज्येष्ठ पुत्र। महीधर ने इसे राज्य-भार सौंपकर मुनि जगन्नन्दन से दीक्षा ली थी। मपु० ७ ३८-३९

महीजय—(१) राजा समुद्रविजय का पुत्र। हपु० ४८.४४

(२) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३०

महीदत्त—राजा पौलोम का पुत्र। यह अरिष्टनेमि और मत्स्य का पिता था। इसने कल्पपुर नगर बसाया था। हपु० १७ २८-२९

महीधर—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के अठारहवें गणधर। हपु० १२ ५८

(२) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में मंगलावती देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित गन्धर्वपुर के राजा वासव विद्याधर और उसकी रानी प्रभावती देवी का पुत्र। इसने अपने पुत्र महीकम्प को राज्य सौंपकर मुनि जगन्नन्दन से दीक्षा ली थी। यह मरकर व्रत और तप के प्रभाव से प्राणत स्वर्ग का इन्द्र हुआ था। मपु० ७ २८-२९, ३५-३९

(३) पुष्करद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में मंगलावती देश में रत्नसंचय नगर का चक्रवर्ती नृप। इसकी रानी सुन्दरी और पुत्र जयसेन था। नरक की वेदनाओं का स्मरण कराकर किसी श्रीधर नामक देव के द्वारा समझाये जाने पर इसने विरक्त होकर यमधर मुनिराज से दीक्षा ली थी। यह कठिन तपश्चरण करके आयु के अन्त में समाधिपूर्वक मरा और ब्रह्म स्वर्ग में इन्द्र हुआ। मपु० १० ११४-११८

(४) एक विद्याधर। जयवर्मा ने इस विद्याधर की भोगोपभोग सामग्री को देखकर आगामी भव में उसके समान भोगों की उपलब्धि का निदान किया था। मपु० ५ २०९-२१०

(५) सूर्योदय नगर का राजा एक विद्याधर। शक्रधनु की पुत्री जयचन्द्रा इसके फूफा की लडकी थी। भूमिगोचरी चक्रवर्ती हरिषेण का विवाह जयचन्द्रा से होने पर इसने हरिषेण से युद्ध किया था तथा भयग्रस्त होकर यह युद्ध से भाग गया था। पपु० ८ ३६२-३६३, ३७३-३८८

महोपद्म—पुष्करार्ध द्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का नृप। इसने मुनि भूतहित से उपदेश सुनकर पुत्र धनद को राज्य सौंपा और अनेक राजाओ के साथ दीक्षा ले ली थी। अन्त में यह तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध कर प्राणत स्वर्ग का इन्द्र हुआ। मपु० ५५ २-३, १३-१४, १८-१९, २२

महीपाल—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३१

(२) भरतक्षेत्र के महीपाल नगर का राजा। यह तीर्थंकर पार्श्वनाथ का नाना था। यह अपनी रानी के वियोग से साधु होकर पचाग्नि तप करने लगा था। पार्श्वनाथ के नमन न करने से क्षुब्ध होकर इसने पार्श्वनाथ को अवज्ञा की थी। पार्श्वनाथ के रोकने पर भी इसने बुझती हुई अग्नि में लकडी डालने के लिए कुल्हाडी से उसे काट ही डाला था। इससे लकडी के भीतर रहनेवाला नाग-युगल क्षत-विक्षत हो गया था। पार्श्वनाथ को अपना तिरस्कर्ता जानकर यह पार्श्वनाथ पर क्रोध करते हुए सशल्य मरा और ज्योतिषी देव शम्बर हुआ। मपु० ७३ ९६-१०३, ११७-११८

महीपालपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के नाना राजा महीपाल यहीं रहते थे। मपु० ७३ ७६

महीपुर—गान्धार देश का एक नगर। इसी नगर के राजा सत्यक ने चेटक से उसकी ज्येष्ठा पुत्री की याचना की थी। मपु० ७५ १३

महीयस्—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३

महीयित—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४

महेज्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५८

महेन्द्र—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

(२) कुण्डलगिरि का उत्तरदिशावर्ती एक कूट। यहाँ पाण्डुक देव रहता है। हपु० ५ ६९४

(३) विजयार्ध पर्वत का उत्तरश्रेणी का अडतालीसवाँ नगर। हपु० २२ ९०

(४) राजा अचल का ज्येष्ठ पुत्र। हपु० ४८ ४९

(५) भरतक्षेत्र के चन्दनपुर नगर का राजा। इसकी रानी अनुन्धरी तथा पुत्री कनकमाला थी। मपु० ७१ ४०५-४०६, हपु० ६० ८०-८१

(६) एक पर्वत। चक्रवर्ती भरत का सेनापति इस पर्वत को लाँघकर विन्ध्याचल की ओर गया था। मपु० २९ ८८

(७) एक मुनि। ये अयोध्या के राजा अरिंजय के दीक्षागुरु थे। मपु० ७२ २७-२८

(८) एक विद्याधर। यह नगर बसाकर भरतक्षेत्र के दन्ती पर्वत पर रहने लगा था। इसके रहने से नगर का नाम महेन्द्रगिरि हो गया था। इसकी हृदयवेगा रानी से इसके अरिंदम आदि सौ पुत्र तथा अजना पुत्री हुई थी। इसने पुत्री का विवाह आदित्यपुर के राजा प्रह्लाद के पुत्र पवनजय के साथ किया था। इसने सहायतार्थ रावण का पत्र आने पर और पवनजय का विशेष आग्रह देखकर उसे रावण की सहायता के लिए भेजा था। पवनजय की पत्नी को रानी केतुमती द्वारा दोष लगाकर घर से निकाल दिये जाने पर पत्नी के न मिलने से पवनजय दुःखी होकर वन-वन भटका। पवनजय को ढूढने यह भी घर से निकल गया था। वन में पवनजय को देखकर यह बहुत प्रसन्न हुआ था और प्रिया को पाये बिना पवनज की भोजन न करने की प्रतिज्ञा सुनकर बहुत दुःखी भी हुआ था। अन्त में अजना और पवनजय का मिलन हो जाने से यह और इसकी पत्नी दोनों हर्ष विभोर हो गये थे। पपु० १५ ११-१६, ८९-९०, १६ ७९-८१, १७ २१, १८ ७२, १०२-१०९, १२७

(९) राम का पक्षधर एक विद्याधर राजा। पपु० ५८ ३

महेन्द्रका—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश का सेनापति इस नदी को पार कर ससैन्य शुष्क नदी की ओर गया था। मपु० २९ ८४

महेन्द्रकेतु—राम का पक्षधर एक सामन्त विद्याधर। यह पराक्रमी था। पपु० ५४ ३८

महेन्द्रगिरि—(१) भरतक्षेत्र के अन्त में महासागर के निकट आग्नेय दिशावर्ती दन्ती पर्वत। राजा महेन्द्र द्वारा इस पर्वत पर महेन्द्रपुर नगर बसाये जाने तथा वहाँ निवास करने से दन्ती पर्वत इस नाम से कहा जाने लगा। पपु० १५ ११-१४

(२) राजा वसुदेव और रानी गन्धर्वसेना के तीन पुत्रों में तीसरा पुत्र। यह वायुवेग और अमितगति का छोटा भाई था। हपु० ४८ ५५

महेन्द्रजित्—आदित्यवशी राजा इन्द्रद्युम्न का पुत्र और प्रभु का जनक। पपु० ५ ७-८, हपु० १३ १०-११

महेन्द्रदत्त—(१) वृषभदेव तीर्थङ्कर के बासठवें गणधर। हपु० १२ ६६

(२) राजा अकम्पन का कचुकी। सुलोचना को स्वयवर मण्डप में यही लाया था। मपु० ४३ २७७-२७८, पापु० ३ ४८

(३) सोमखेट नगर का राजा। इसने तीर्थङ्कर सुपार्श्वनाथ को पडगाहकर आहार दिया था। मपु० ५३ ४३

(४) विजयनगर का राजा। यह मरकर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ तथा स्वर्ग से चयकर हरिषेण चक्रवर्ती हुआ। पपु० २० १८५-१८६

महेन्द्रनगर—(१) राजा महेन्द्र द्वारा महेन्द्रगिरि पर बसाया गया नगर। अजना का जन्म यहीं हुआ था। पपु० १५ १३-१६ दे० महेन्द्र-८

(२) एक नगर। चन्दनपुर नगर के राजा महेन्द्र की पुत्री कनकमाला ने राजा हरिवाहन विद्याधर का इसी नगर में वरण किया था। हपु० ६० ७८-८२

महेन्द्रपुर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का पचपनवाँ नगर। मपु० १९ ८६-८७

महेन्द्रमहित—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४८

महेन्द्रवन्द्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

महेन्द्रविक्रम—(१) एक राजा। यह आदित्यवंशी राजा उदितपराक्रम का पुत्र और सूर्य का जनक था। पपु० ५ ७, हपु० १३ १०

(२) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के शिवमन्दिर नगर का राजा। इसके पुत्र का नाम अमितगति था। हपु० २१ २२

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के काचनतिलक नगर का राजा। इसकी रानी नीलवेगा और पुत्र अजितसेन था। मपु० ६३ १०५-१०६

(४) नित्यालोकनगर का राजा विद्याधर। इसका विवाह गगनवल्लभ नगर के राजा विद्युद्वेग की पुत्री सुरूपा से हुआ था। इसने सुमेरु पर्वत के चैत्यालयों की वन्दना कर वहाँ चारणमुनि से दीक्षा ले ली थी। इसकी पत्नी ने भी सुभद्रा आर्यिका के पास सयम धारण कर लिया था। मपु० ७१ ४१९-४२३

महेन्द्रसेन—(१) वानरवंशी एक राजा। इसका पुत्र प्रसन्नकीर्ति रावण का पक्षधर था। पपु० १२ २०५-२०६

(२) एक मुनि। अयोध्या का सेठ समुद्रदत्त और उसके दोनो पुत्र पूर्णभद्र इन्ही से धर्म श्रवण कर दीक्षित हुए थे। हपु० ४३ १५०

महेन्द्रोदय—अयोध्या का एक उद्यान। लक्ष्मण के आठो पुत्र इसी उद्यान में दीक्षित हुए थे। पपु० ९९ ८५-९३, ११० ९२

महेशिता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६२

महेश्वर—भरतेश एव सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३०, २५ १५५

महोत्साह—महेन्द्रनगर के राजा महेन्द्र का सामन्त। इसने अजना को निर्दोष बताकर उसे शरण देने की राजा से याचना की थी किन्तु इसकी इस याचना का राजा पर कोई प्रभाव नही पड़ा था। पपु० १७ ४०-५०

महोदधि—किष्कुनगर का वानरवंशी विद्याधरो का स्वामी एक नृप। इसकी रानी विद्युत्प्रकाशा तथा उससे उत्पन्न इसके एक सौ आठ पुत्र थे। राक्षसवश के शिरोमणि विद्युत्केश के दीक्षित होते ही प्रतिचन्द्र पुत्र को राज्य देकर इसने भी दीक्षा धारण की थी और अन्त मे तपश्चरण कर मोक्ष प्राप्त किया था। पपु० ६ २१८-२२५, ३४९-३५१

महोदधिकुमार—एक भवनवासी देव। पूर्वभव में यह एक वानर था। वानर-योनि मे इसने राक्षसवंशी राजा विद्युत्केश की पत्नी श्रीचन्द्रा के स्तन विदीर्ण किये थे। इस अपराध के फलस्वरूप विद्युत्केश के बाणो से आहत होकर यह एक मुनि के निकट पहुँचा था। मुनि ने दयार्द्र होकर इसे सब पदार्थों का त्याग कराकर पच नमस्कार मत्र का उपदेश दिया था। मत्र के प्रभाव से वह वानर मरकर इस नाम का देव हुआ। पपु० ६ २३६-२४२

महोदय—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१, १५३

(२) समवसरण का एक मण्डप। यह एक हजार स्तम्भो पर आश्रित रहता है। इसमें श्रुतदेवी निवास करती है। हपु० ५७ ८६

महोदर—(१) राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गान्धारी का अड़तालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

(२) खरदूषण का मित्र एक विद्याधर। यह कुम्भपुर नगर का एक नृप था। इसकी सुरूपाक्षी रानी से तडिन्माला पुत्री हुई थी, जो भानुकर्ण से विवाही गयी थी। पपु० ८ १४२-१४३, ४५.८६

महोदर्क—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५१

महोपाय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५७

महोमय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१५७

महोदार्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५९

मह्य—भरत एव सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४, २५ १५७

मा—कुलकरो के समय में व्यवहृत हा-मा और धिक् इन तीन प्रकार के दण्डो मे दूसरे प्रकार का दण्ड—'खेद है जो तुमने अपराध किया है आगे नही करना'। छठे से दसवें कुलकर तक अपराधी को यही दण्ड दिया जाता था। मपु० ३ २१५

माकन्दी—भरतक्षेत्र की एक नगरी। यह राजा द्रुपद की राजधानी थी। वनवास के समय पाण्डव यहाँ आये थे। हपु० ४५ ११९-१२१

माकोट—रावण का पक्षधर एक नृप। रथनूपुर के राजा इन्द्र विद्याधर को जीतने के लिए यह रावण के साथ गया था। पपु० १० ३६-३७

माक्षिकलक्षिता—राजा जाम्बव को प्राप्त एक विद्या। शत्रु का वध करने के लिए इसका प्रयोग होता था। मपु० ७१ ३६६-३७२

मागध—(१) पूर्व लवणसमुद्र का वासी एक देव। भरतेश ने दिग्विजय के समय इसे अपने आधीन कर इससे भेंट स्वरूप हार, मुकुट, कुण्डल, रत्न, वस्त्र तथा तीर्थोदक प्राप्त किया था। इसी देव को लक्ष्मण ने बाण-कौशल से अपने अधीन किया था तथा उससे भेंट प्राप्त की थी। मपु० २७ ११९-१२२, १२८, १६५, ६८ ६४७-६५०, हपु० ११ ५-११

(२) भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ के राजा को चक्री भरतेश ने अपने आधीन किया था। मपु० २९ ३९, हपु० १८ १२७

(३) वज्रजघ का एक सहयोगी। पपु० १०२ १५४-१५७

मागधेशपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। राजा बृहद्रथ की यह निवास-भूमि था। हपु० १८ १७

माघवी—महातम प्रभा नामक सातवी नरकभूमि का नाम। हपु० ४ ४५-४६

माणव—(१) चक्रवर्ती की नौ निधियो मे एक निधि। इससे नीतिशास्त्र के ज्ञान से अतिरिक्त अनेक प्रकार के कवच, ढाल, तलवार, बाण, शक्ति, धनुष और चक्र आदि आयुध उत्पन्न होते थे। मपु० ३७ ७३, ८० हपु० ११ ११०-१११, ११७

(२) कण्ठ का आभूषण-बीस लड़ियो वाला हार। मपु० १६ ६१

(३) भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा त्यक्त देशो में भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ६९

माण्डव्य—तीर्थङ्कर महावीर के छठें गणधर। हपु० ३ ४२ दे० महावीर

मातंग—(१) धरणेन्द्र की दूसरी देवी दिति द्वारा विद्याधर नमि और विनमि के लिए दिये गये आठ विद्या-निकायों में प्रथम विद्या-निकाय। हपु० २२ ५९

(२) विद्याधर नमि का पुत्र। हपु० २२ १०८

(३) विद्याधरों की जाति। ये विद्याधर मेघ-समूह के समान श्याम वर्ण के होते हैं। नीले वस्त्र और नीली मालाएँ पहिनते हैं तथा मातंगस्तम्भ के सहारे बैठते हैं। हपु० २६ १५

(४) गंधिल देश के जंगलों में प्राप्त हाथी। ये उन्मत्त और सबल होते हैं। इनके गण्डस्थल से मद प्रवाहित होता रहता है। मद से इनके नेत्र निमीलित रहते हैं। इस जाति के हाथी भरतेश की सेना में थे। अपना परिश्रम दूर करने के लिए ये जल में क्रीडा करते हैं। ये ऊँचे होते हैं। स्नान के पश्चात् ये स्वयं धूल उड़ाकर धूल-धूसरित हो जाते हैं। मपु० ४ ७५, २९ १३४, १३९, १४१-१४२, पपु० २८ १४८

(५) चाण्डाल। पपु० २ ४५

मातंगपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का अड़तालीसवाँ नगर। हपु० २२ १००

मातंगी—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को सिद्ध विद्याओं में एक विद्या। मपु० ६२ ३९५

मातलि—इन्द्र के द्वारा प्रेषित नेमिनाथ के रथ का वाहक सारथी। हपु० ५१ ११

मातुलिंग—एक फल-बिजौरा। यह नीबू से बड़ा होता है। भरतेश ने यह फल चढ़ाकर वृषभदेव की पूजा की थी। मपु० १७ २५२, पपु० २ १७

मातृक—व्यक्तवाक्, लोकवाक् और मार्ग व्यवहार ये तीन मातृकाएँ कहलाती हैं। पपु० २४.३४

मात्रा—तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

मात्राष्टक—आठ मातृकाएँ-पाँच समितियाँ और तीन गुप्तियाँ। मपु० ११ ६५

मात्सर्य—अतिथिसंविभाग व्रत का चौथा अतीचार-अन्य दाता के गुणों को सहन नहीं करना। हपु० ५८ १८३

मात्स्यन्याय—सबल पुरुषों द्वारा निर्बल पुरुषों का शोषण। राजा के अभाव में प्रजा इसी न्याय का आश्रय लेती है। मपु० १६ २५२

माद्री—हरिवंशी राजा अन्धकवृष्टि और उसकी रानी सुभद्रा की पुत्री। इसके वसुदेव आदि दस भाई तथा कुन्ती बहिन थी। इसका राजा पाण्डु के साथ पाणिग्रहण पूर्वक प्राजापात्य विवाह हुआ था। नकुल और सहदेव इसी के पुत्र थे। दूसरे पूर्वभव में यह भद्रिलपुर नगर के सेठ धनदत्त और सेठानी नन्दयशा की ज्येष्ठा नाम की पुत्री थी। प्रियदर्शना इसकी एक बड़ी बहिन तथा धनपाल आदि नौ भाई थे। यह और इसके सभी भाई-बहिन तथा माता-पिता दीक्षित हुए। इसकी माँ ने परजन्म में भी इस जन्म की भाँति पुत्र-पुत्रियों से सम्बन्ध बना रहने का निदान किया था। अन्त में यह और इसके भाई-बहिन और माँ सभी आनत स्वर्ग में उत्पन्न हुए। वे सब वहाँ से चयकर इस पर्याय में आये। इनमें ज्येष्ठा का जीव इस नाम से उत्पन्न हुआ। इसका दूसरा नाम मद्री था। मपु० ७० ९४ ९७, ११४-११६, १८२-१९८, हपु० १८ १२-१५, १२३-१२४, ४५ ३८

माधव—वैशाख मास। मपु० ६१ ५

(२) वसन्त ऋतु। मपु० २७ ४७, पु०० ५५.४३

(३) कृष्ण। हपु० ४२ ६८, ७०, ५५ ४३

माधवी—राम के समय की एक लता। इसके फूल गुच्छों में होते हैं। मपु० २७ ४७, पपु० २८ ८८, हपु० ११,१००

(२) पोदनपुर के निवासी हित श्रावक की पत्नी। इसके पुत्र का नाम प्रीति था। पपु० ५ ३४५

(३) मथुरा नगरी के राजा हरिवाहन की रानी। चमरेन्द्र से शूलरत्न पानेवाले मधु की यह जननी थी। पपु० १२ ५४, ६८

(४) द्वापुरी के राजा ब्रह्मभूति की रानी। यह द्वितीय नारायण द्विपृष्ठ की जननी थी। पपु० २० २२१-२२६

(५) पुष्करद्वीप में स्थित चन्द्रादित्य नगर के राजा प्रकाशयश की रानी और जगद्युति की जननी। पपु० ८५ ९६-९७

माध्यस्थभाव—संवेग और वैराग्यसिद्धि के चतुर्विध भावों में चौथा भाव—अविनयी जीवों पर रागद्वेष रहित होकर समतावृत्ति धारण करना ऐसे भाव से युक्त जन उपकारियों से न तो प्रेम करते हैं और न द्वेष। वे उदासीन रहते हैं। मपु० २० ६५, पपु० १७ १८३

मान—(१) क्रोध, मान, माया और लोभ इन चार कषायों में दूसरी कषाय—अभिमान। इसे (अहंकार का त्याग कर) मृदुता से जीता जाता है। मपु० ३६ १२९, पपु० १४ ११०-१११

(२) प्रमाण या माप। इसके चार भेद हैं—मेय, देश, तुला और काल। इनमें प्रस्थ आदि मेयमान, वितस्ति (हाथ) देशमान, ग्राम, किलो आदि तुलामान और समय, घड़ी, घण्टा कालमान है। पपु० २४ ६०-६१

मानव—(१) एक विद्या-निकाय। धरणेन्द्र की अदिति देवी ने यह निकाय नमि और विनमि को दिया था। हपु० २२ ५४-५८

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का पन्द्रहवाँ नगर। हपु० २२ ९५

(३) विजयपर्वत की उत्तरश्रेणी का छब्बीसवाँ नगर। हपु० २० ८८

मानवर्तिक—भरत चक्रवर्ती के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ६८

मानवपुत्रक—विद्याधरों की एक जाति। ये विद्याधर नाना वर्णों होते हैं, पीत वस्त्र पहनते हैं और मानवस्तम्भ के आश्रयी होते हैं। हपु० २६ ८

मानवी—रावण की रानी। पपु० ७७ १४

मानसचेष्टित—सातवें नारायणदत्त के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २१०

मानसवेग—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्वर्णिम नगर के स्वामी मनोवेग विद्याधर का पुत्र और वेगवती का भाई। यह यद्यपि वसुदेव की सोमश्री रानी को हरकर अपने नगर ले गया था परन्तु अन्त में वह वसुदेव का हितैषी हो गया था। हपु० २४ ६९-७२, २६ २७, ५१ ३

मानस-सर—मानसक्षेत्र में गोदावरी नदी का समीपवर्ती सरोवर। भरतेश का सेनापति भरतेश की दिग्विजय के समय यहाँ आया था। मपु० २९ ८५

मानससुन्दरी—रथनूपुर नगर के राजा सहस्रार की रानी और इन्द्र विद्याधर की जननी। इसका दूसरा नाम हृदयसुन्दरी था। पपु० ७ १-२, १३ ६५-६६

मानसोत्सवा—भरत की भाभी। पपु० ८३ ९५

मानस्तम्भ—समवसरण-रचना में धूलिसाल के भीतर गलियों के बीच में चारों दिशाओं में इन्द्र द्वारा स्वर्ण से निर्मित चार उन्नत स्तम्भ। इनके ऊपरी भाग में चारों ओर मुख किये चार प्रतिमाएँ विराजमान रहती हैं। जिस जगती पर इनकी रचना होती है, वह चार-चार गोपुर द्वारों से युक्त तीन कोटों से वेष्टित रहती है। उसके बीच में एक में एक पीठिका बनायी जाती है। पीठिका के ऊपर चढ़ने के लिए सोलह सीढ़ियाँ रहती हैं। ये ऊँचाई के कारण दूर से दिखाई देते हैं। इन्हें देखते ही मिथ्यादृष्टियों का मान-भंग हो जाता है। ये घण्टा, चमर और ध्वजाओं से सुशोभित होते हैं। कमलों से आच्छादित जल से भरी बावड़ियाँ इनके समीप ही होती हैं। इनकी इन्द्र द्वारा रचना की जाने से इन्हें इन्द्रध्वज भी कहा जाता है। मपु० २२ ९२-१०३, २५ २३७, ६२ २८२, वीवच० १४ ७९-८०

मानस्तम्भिनी—अलकारपुर नगर के राजा रत्नश्रवा को प्राप्त एक विद्या। यह जिसे सिद्ध हो जाती है उसका मनचाहा काम करती है। पपु० ७ १६३

मानांगणा—इन्द्र आदि द्वारा नमस्कृत समवसरण-भूमि। हपु० ५७ ९

मानार्हता—व्रत से पवित्र द्विज के दस अधिकारों में नौवाँ अधिकार-मान्यता की योग्यता। मपु० ४० १७६, २०४

मानिनी—धान्य ग्राम के अग्नि ब्राह्मण की स्त्री। इसकी पुत्री का नाम अभिमाना था। पपु० ८० १६०

मानुष—मानुषोत्तर पर्वत के रजतकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०५

मानुषक्षेत्र—मनुष्यों के गमनागमन के योग्य भूमि। यह जम्बूद्वीप धातकीखण्डद्वीप और पुष्करार्द्ध इस प्रकार अढ़ाई द्वीप तथा लवणोदधि और कालोदधि समुद्र तक है। इसका विस्तार पैंतालीस लाख योजन है। हपु० ५.५९०

मानुषोत्तर—(१) मेरु पर्वत का एक वन। हपु० ५ ३०७

(२) मध्यलोक में पुष्करद्वीप के मध्य स्थित एक वलयाकार पर्वत। इसके कारण ही पुष्करवर द्वीप के दो खण्ड हो गये हैं। इसके भीतरी भाग में दो सुमेरु पर्वत हैं—एक पूर्वमेरु और दूसरा पश्चिम मेरु। मनुष्यों का गमनागमन इसी पर्वत तक है आगे नहीं। इस पर्वत की ऊँचाई एक हजार सात सौ इक्कीस योजन, गहराई चार सौ तीस योजन एक कोश, मूल विस्तार एक हजार बाईस योजन, मध्यविस्तार सात सौ तेईस योजन और ऊपरी भाग का विस्तार चार सौ चौबीस योजन है। इसकी परिधि का विस्तार एक करोड़ ब्यालीस लाख छत्तीस हजार सात सौ तेरह योजन है। यह भीतर की ओर टाँकी से कटे हुए के समान है तथा इसका बाह्यभाग पिछली ओर से क्रम से ऊँचा उठाया गया है। इसका आकार भीतर की ओर मुख करके बैठे हुए सिंह के समान जान पड़ता है। इसमें चौदह गुहाद्वार हैं। जिन गुहाद्वारों से नदियाँ निकलती हैं। ये गुहाद्वार पचास योजन लम्बे, पच्चीस योजन चौड़े और साढ़े सैंतीस योजन ऊँचे हैं। इसके ऊपरी भाग में चारों दिशाओं में आठ योजन ऊँचे और चार योजन चौड़े गुहाद्वारों से सुशोभित चार जिनालय है। चारों दिशाओं में तीन-तीन और विदिशाओं में एक-एक कूट है। ऐशान दिशा में वज्रकूट और आग्नेय दिशा में तपनीयक कूट और होने से कुल यहाँ के सारे कूट अठारह है। पूर्वदिशा के कूट और उन कूटों के निवासी देव निम्न प्रकार है—

कूट	देव
वैडूर्य	यशस्वान्
अश्मगर्भ	यशस्कान्त
सौगन्धिक	यशोधर

दक्षिण दिशा के कूट और वहाँ के निवासी देव—

कूट	देव
रुचक	नन्दन
लोहिताक्ष	नन्दोत्तर
अंजन	अशनिघोष

पश्चिम दिशा के कूट और उनके निवासी देव—

कूट	देव
अंजनमूल	सिद्धदेव
कनक	क्रमणदेव
रजत	मानुषदेव

उत्तर दिशा के कूट और उनके देव—

कूट	देव
स्फटिक	सुदर्शन
अंक	मोघ
प्रवाल	सुप्रवृद्ध

आग्नेय दिशा के तपनीयक कूट पर स्वातिदेव तथा ऐशान दिशा के वज्रक कूट पर हनुमान् देव रहता है। इस पर्वत के पूर्व दक्षिण कोण में रत्नकूट है। यहाँ नागकुमारों का स्वामी वेणदेव, पूर्वोत्तर कोण के

सर्वरत्न कूट में गरुडकुमारो का इन्द्र वेणदारी, दक्षिण-पश्चिम कोण वेलम्ब कूट में वरुणकुमार देवो का स्वामी अतिवेलम्ब और पश्चिमोत्तर दिशा के प्रभजन कूट में वायुकुमार देवो का इन्द्र प्रभजन देव रहता है। पूर्व-दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम कोणो में निषधाचल और पूर्वोत्तर तथा पश्चिमोत्तर कोणो में नीलाचल पर्वत है। समुद्घात और उपपाद के सिवाय इस स्वर्णमय पर्वत के आगे विद्याधर और ऋद्धिधारी मुनि भी नही जा सकते। मपु० ५ २९१, ५४८-९, ७० २९२, हपु० ५ ५७७, ५९१-६१२

मान्धाता—(१) इक्ष्वाकुवशी राजा दिननाथरथ का पुत्र और राजा वीरसेन का पिता। पपु० २२ १५४-१५५

(२) मथुरा के राजा मधु से पराजित एक महाशक्तिशाली नृप। पपु० ८९ ४१

मान्या—अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को सिद्ध विद्याओं में एक विद्या। मपु० ६२-३९३

माया—क्रोध, मान, माया और लोभ—इन चार कषायो में तीसरी कषाय। इसका निग्रह सरल भाव द्वारा किया जाता है। ससार में इसके कारण जीव तिर्यञ्च योनि में उत्पन्न होते हैं। मपु० ३६ १२९, पपु० १४ ११०-१११, ८५ ११८-१६३

माया-क्रिया—साम्परायिक आस्रवकारी पच्चीस क्रियाओ में तेईसवी क्रिया-ज्ञान, दर्शन आदि के सम्बन्ध में वचना-प्रवृत्ति। हपु० ५८ ८०

मायागता—दृष्टिवाद अग गत चूलिका भेद के पाँच भेदो में एक भेद। हपु० १० १२३

मायानिद्रा—मायामय नीद। तीर्थंकर के जन्म के समय शची तीर्थंकर की माता को इसी नीद में सुलाकर और प्रसूति से उन्हें बाहर लाकर अभिषेक हेतु इन्द्र को देती है। मपु० १३ ३१, १४ ७५

मायूरी—दिति और अदिति देवियो द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को दी गयी विद्याओ में एक विद्या। हपु० २२ ६३

मार—(१) चौथी पृथिवी के तीसरे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इस इन्द्रक की चारो महादिशाओ मे छप्पन, विदिशाओ में बावन कुल एक सौ आठ विमान हैं। हपु० ४ ८२-१३१

(२) आगामी नौवाँ रुद्र। हपु० ६० ५७१

मारजित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

मारण—(१) पाँच फणोवाला बाण। नागराज ने यह बाण प्रद्युम्न को दिया था। मपु० ७२ ११८-११९

(२) लका का राक्षसवशी एक विद्याधर राजा। इसके पूर्व लका मे राजा चामुण्ड का प्रशासन था। पपु० ५ ३९६

मारिदत्त—वत्स देश का एक राजा। राम लक्ष्मण और लवणाकुश के बीच हुए युद्ध में इसने राम और लक्ष्मण का सहयोग किया था। पपु० ३७ २२, १०२ १४७

मारीच—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में सुरेन्द्रकान्तार नगर के राजा मेघवाहन और रानी अनन्तसेना का पुत्र। दूसरे पूर्वभव में यह जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के समीप मधुक वन में भीलो का राजा पुरूरवा नामक भील था। यह भील मद्य-मास-मधु के त्याग का नियम लेकर समाधिपूर्वक मरने से सौधर्म-स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर इस पर्याय में आया था। मपु० ६२ ७१, ८६-८९

(२) एक विद्याधर। यह विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में असुर-सगीत नगर के राजा मय का मन्त्री था। इसने मन्दोदरी का विवाह दशानन के साथ करने में राजा मय का समर्थन किया था। मन्दोदरी से उत्पन्न रावण की पुत्री को यही मिथिला नगरी के उद्यान के पास एक प्रकट स्थान में छोड़ने गया था। यही रावण की आज्ञा से श्रेष्ठ मणियो से निर्मित हरिणशिशु का रूप बनाकर सीता के सामने गया था, जिसे सीता की इच्छानुसार राम पकड़ने गये थे। इस प्रकार इसकी सहायता से ही रावण सीताहरण कर सका था। पद्मपुराण के अनुसार रावण शम्बूक का वध करनेवाले को मारने आया था। सीता का सौन्दर्य देखकर वह लुभा गया। उसने अवलोकिनी-विद्या से राम-लक्ष्मण और सीता के नाम, कुल आदि जान लिये। शम्बूक का वध हो जाने से खरदूषण और लक्ष्मण को परस्पर युद्धरत देखकर रावण ने सिंहनाद कर बार-बार राम! राम! कहा। राम ने इस सिंहनाद को लक्ष्मण द्वारा किया गया जाना और दुःखी हुए। वे सीता को फूलो से ढककर और उसे निर्भय होकर रहने के लिए कहकर तथा जटायु से सीता की रक्षा करने का निवेदन करने के पश्चात् वहाँ से लक्ष्मण को बचाने चले गये। इधर रावण ने जटायु के विरोध करने पर उसके पख काटकर सीता को पुष्पक विमान में बैठाकर अपहरण किया। इसने रावण से स्त्रीमोह को त्यागने तथा उसके हिताहित होने का विचार करने का आग्रह किया था। राम और रावण के युद्ध में युद्ध के प्रथम दिन ही राम के योद्धा सन्ताप को इसने ही मार गिराया था। रावण की ओर से युद्ध करते समय युद्ध में बन्धनो से आबद्ध होने पर इसने बन्धनो से मुक्त होते ही निर्ग्रन्थ साधु होकर पाणिपात्र से आहार ग्रहण करने को प्रतिज्ञा की थी। लक्ष्मण ने इसके बन्धनो से मुक्त होने पर इसे पूर्व की भाँति भोगोपभोग करते हुए सानन्द रहने के लिए कहा था किन्तु इसने प्रतिज्ञा भग न करके भोगो में अपनी अनिच्छा ही प्रकट की थी। अन्त में यह विद्याधर अत्यधिक सवेग से युक्त और कषाय तथा राग भावो से विमुक्त होकर मुनि हो गया था। तप के प्रभाव से मरणोपरान्त यह कल्पवासी देव हुआ। मपु० ६८ १९-२४, १९७-१९९, २०४-२०९, पपु० ८ १६, ४४ ५९-९०, ४६ १२९-१३०, ६० १०, ७८ ९, १४, २३-२६, ३०-३१, ८२, ८० १४३

मारुत—सौधर्म और ऐशान स्वर्गों के इकतीस पटलो में बारहवाँ पटल। हपु० ६ ४५

मारुतवेग—दूसरे बलभद्र विजय के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २३२

मार्कण्डेय—भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश में भोगपुर नगर के हरिवशी राजा प्रभजन और रानी मृकण्डु का पुत्र। इसका विवाह इसी देश में वस्वालय नगर के राजा वज्रचाप की पुत्री विद्युन्माला से हुआ था। चित्रागद देव ने इसे मारना चाहा था किन्तु सूर्यप्रभ देव के समझाने

पर उसने इसे सपत्नीक चम्पापुर के वन में छोड दिया था। चम्पापुर का राजा चन्द्रकीर्ति निस्सन्तान था। उसके मर जाने पर वहाँ मत्रियो ने इसे अपना राजा बनाया था। मूलत इसका नाम सिंहकेतु था किन्तु चम्पापुर की प्रजा इसे मृकण्डु का पुत्र जानकर इस नाम से पुकारती थी। मपु० ७० ७४-९०

मार्ग—तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

मार्गणस्थान—जीवो के अन्वेषण के स्थान। ये चौदह होते हैं—
१ गति २ इन्द्रिय ३ काय ४ योग ५ वेद ६ कषाय ७ ज्ञान ८ सयम ९ दर्शन १०. लेश्या ११ भव्यत्व १२ सम्यक्त्व १३ सज्ञित्व और १४ आहारक। मपु० २४ ९५-९६, हपु० २ १०७ ५८ ३६-३७, वीवच० १६ ५३-५६

मार्गप्रभावना—तीर्थंकर नामकर्म के बन्ध की कारण सोलह भावनाओं में एक भावना। इसमें ज्ञान, तप, जिनेन्द्र की पूजा आदि के द्वारा धर्म का प्रकाश फैलाया जाता है। मपु० ६३ ३२९, ३३१, हपु० ३४ १४७

मार्गवी—सगीत के मध्यमग्राम की पाँचवी मूर्च्छना। हपु० १९ १६३

मार्ग सम्यक्त्व—सम्यक्त्व का दूसरा भेद। यह परिग्रह-रहित निश्चैल और पाणिपात्रत्व लक्षणवाले मोक्षमार्ग को सुनकर उसमें उत्पन्न श्रद्धा से होता है। मपु० ७४ ४३९-४४२, वीवच० १९ १४४

मार्तण्डकुण्डल—विद्याधरो का राजा। यह नभस्तिलक नगर के राजा चन्द्रकुण्डल और रानी विमला का पुत्र था। यह आदित्यपुर के राजा विद्याधर विद्यामन्दर की पुत्री श्रीमाला के स्वयवर मे सम्मिलित हुआ था। पपु० ६ ३५७-३५९, ३८४-३८८

मार्तण्डाभपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मत्रियो सहित रावण की सहायता के लिए गया था। पपु० ५५ ८७-८८

मार्दव—धर्मध्यान की दस भावनाओ में दूसरी भावना। इसमें मान-मोचन के लिए मन, वचन और काय की कोमलता से मार्दव भाव रखा जाता है। मनुष्य पर्याय की प्राप्ति इसका फल है। मपु० ३६ १५७-१५८, पपु० १४ ३९, पापु० २३ ६४, वीवच० ६.६

मालती—एक लता। मरुदेवी ने सोलह स्वप्नो में से एक स्वप्न में अन्य फूलो और इस लता के फूलो से निर्मित दो मालाएँ देखी थी। पपु० ३ १२८

मालव—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। भरतेश का सेनापति ससैन्य यहाँ आया था। तीर्थंकर वृषभदेव और महावीर ने यहाँ विहार किया था। मपु० १६ १५३, २५.२८७-२८८, २९ ४७, पपु० १०१ ८१, पापु० १.१३३

माली—(१) लका का राक्षसवशी एक नृप। यह अलकारपुर के राजा सुकेश और रानी इन्द्राणी का ज्येष्ठ पुत्र तथा सुमाली और माल्यवान् का बडा भाई था। इसके पूर्वज लका के राजा थे किन्तु वे क्रूर और बलवान् निर्घात विद्याधर के भय से अलकारपुर मे रहने लगे थे। इसने पिता के समक्ष चोटी खोलकर पूर्वजो का राज्य वापिस लेने की प्रतिज्ञा की थी। इस कार्य के लिए अपने भाइयो को साथ लेकर यह लका गया था। वहाँ निर्घात को युद्ध में मारकर इसने लका पर विजय प्राप्त की थी। इसके माता-पिता और भाई भी लका पहुँच गये थे। इसके पश्चात् इसने हेमपुर के राजा हेम विद्याधर तथा रानी भोगवती की पुत्री चन्द्रवती को विवाहा था। यह लका का राजा होकर भी सभी विद्याधरो पर शासन करता था। इसने मेरु पर्वत तथा नन्दन वन मे जिनमन्दिर बनवाये थे और किमिच्छक दान दिया था। अन्त में यह सहस्रार के पुत्र लोकरक्षक इन्द्र विद्याधर द्वारा युद्ध में चक्र से मारा गया। पपु० ६ ५३०-५६५, ७ ३३-३४, ५३-५४, ८७-८८

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३५

माल्य—(१) भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा त्यक्त देशो में भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ७१

(२) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का चवालीसवाँ नगर। हपु० २२ ९०

माल्यगिरि—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ५६

माल्यवती—भरतक्षेत्र के पूर्वी आर्यखण्ड की एक नदी। इसके तटवर्ती वन में जगली हाथी विचरते थे। भरतेश की सेना इस नदी को पार कर यमुना की ओर गयी थी। मपु० २९.५९

माल्यवत्कूट—माल्यवान् पर्वत का दूसरा कूट। हपु० ५ २१९

माल्यवान्—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३७

(२) यदुवशी राजा अन्धकवृष्णि का पौत्र और हिमवान् का पुत्र। यह तीर्थंकर नेमिनाथ का चचेरा भाई था। हपु० ४८ ४७

(३) मानुषोत्तर पर्वत के भीतर विद्यमान सोलह सरोवरो में सोलहवाँ सरोवर। यह नील पर्वत से साढे पाँच सौ योजन दूर नदी के मध्य में है। मपु० ६३ १९७-१९९, हपु० ५.१९४

(४) अनादि निधन, वैडूर्यमणिमय एक वक्षार पर्वत। यह मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में स्थित है। इस पर्वत के नौ कूट हैं। उनके नाम हैं—सिद्धकूट, माल्यवत्कूट, सागरकूट, रजतकूट, पूर्णभद्रकूट, सीताकूट और हरिसहकूट। मपु० ६३ २०४, हपु० ५ २११, २१९-२२०

(५) अलकारपुर के राजा सुकेश और रानी इन्द्राणी का तीसरा पुत्र, माली और सुमाली का अनुज। इसका विवाह कनकाभनगर के राजा कनक और रानी कनकश्री की पुत्री कनकावली से हुआ था। इसकी एक हजार से कुछ अधिक रानियाँ थी। श्रीमाली इसका पुत्र था। यह रावण का सामन्त था। रावण के वध से दुखी होने पर इसे विभीषण ने सान्त्वना दी थी। पपु० ६ ५३०-५३१, ५६७-५६८, १२ २१२, ८० ३२-३३

(६) एक ह्रद। इस ह्रद के निवासी एक देव का नाम भी माल्यवान् ही था। मपु० ६३ २०१

माल्यांग—माल्यांग जाति के कल्पवृक्ष। इनका उत्तरकुरु भोगभूमि में सदैव सद्भाव रहता है। कुरुभूमि में ये अवसर्पिणी के तीसरे काल तक रहते है। ये वृक्ष सब ऋतुओ के फूलो से युक्त होते हैं। यहाँ के निवासी इनकी अनेक प्रकार की मालाएँ और कर्णफूल आदि कर्णा-

भरण धारण करते हैं । इनका अपर नाम स्रजांग है । मपु० ९.३४-३६, ४२, हपु० ७.८०, ८८ वीवच० १८.९१-९२

माष—वृषभदेव के समय का एक दालान्न-उड़द । मपु० ३.१८७, पपु० २.१५६, ३३.४७

माषवती—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड की एक नदी । भरत चक्रवर्ती की सेना इसे पार कर शुष्क नदी की ओर गयी थी । मपु० २९.८४

मास—दो पक्ष का व्यवहार काल । हपु० ७.२१

माहन—वृषभदेव द्वारा दिया गया ब्राह्मणों का एक नाम । इनके विषय में भगवान् वृषभदेव के समवसरण में मतिसमुद्र द्वारा श्रुत वचन को ज्ञातकर चक्रवर्ती भरतेश इन्हें मारने को उद्यत हुए ही थे कि वे भय-भीत हो वृषभदेव की शरण में गये । वृषभदेव ने "मा-हन" अर्थात् इनका हनन मत करो कहकर इनकी रक्षा की थी । तब से ब्राह्मण "माहन" कहलाने लगे । पपु० ४.१२१-१२२

माहिषक—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा छोड़े गये देशों में भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का एक देश । हपु० ११.७०

माहिष्मती—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नगरी । हरिवंशी राजा ऐलेय ने यह नगरी नर्मदा नदी के तट पर बसायी थी तथा यहाँ चिरकाल तक राज्य किया था । यहाँ का राज्य वे अपने पुत्र कुणिक को देकर दीक्षित हो गये थे । रावण के समय में यहाँ का राजा सहस्ररश्मि था । पपु० १०.६५, २२.१६५, हपु० १७.३, १७-२२

माहेन्द्र—(१) चौथा स्वर्ग । मपु० ७.११, ६१-६५, पपु० १०५.१६६-१६७, हपु० ६.३६

(२) तीर्थंकर वृषभदेव के उन्नीसवें गणधर । हपु० १२.५८

(३) देवों से सेवित एक विद्यास्त्र । वैरोचन शस्त्र और समीरास्त्र इसका निवारक होता है । पपु० ७४.१००-१०१, हपु० २५.४६-४७

माहेभ—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा छोड़े गये देशों में भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का एक देश । हपु० ११.७२

माहेश्वरी—अश्वत्थामा को सिद्ध एक विद्या । इसके हाथ में शूल और मस्तक पर चन्द्र होता है । इसके प्रभाव से पाण्डवों की सेना नष्ट हो गयी थी । पापु० २०.३०८

मितग्रहण—अचौर्य महाव्रत की पाँच भावनाओं में प्रथम भावना-परिमित आहार लेना । मपु० २०.१६३

मितसागर—धातकीखण्ड द्वीप सम्बन्धी विदेहक्षेत्र के एक चारण-ऋद्धि-धारी मुनि । भरतक्षेत्र के इभ्यपुर नगर निवासी सेठ धनदेव की पत्नी यशस्विनी ने पूर्वभव में इन्हीं मुनि को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे । हपु० ६०.९५-९८

मित्र—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के बयालीसवें गणधर । हपु० १२.६२

(२) सौधर्म और ऐशान युगल स्वर्ग का तीसरा पटल । हपु० ६.४७

मित्रक—आचारांग के धारी लोहाचार्य के पश्चात् हुए बलदेव आचार्य के बाद एक आचार्य । हपु० ६६.२६

मित्रनन्दी—बलभद्र धर्म के पूर्वभव का जीव । यह भरतक्षेत्र में पश्चिम विदेहक्षेत्र का राजा था । इसे शत्रु और मित्र समान थे । इसने जिनेन्द्र सुव्रत से धर्म का स्वरूप सुनकर संयम धारण कर लिया था । अन्त में यह समाधिपूर्वक देह त्याग कर अनुत्तर विमान में तैंतीस सागर की आयु का धारी अहमिन्द्र हुआ और स्वर्ग से चयकर बलभद्र धर्म हुआ । मपु० ५९.६३-७१

मित्रफल्गु—तीर्थंकर वृषभदेव के सत्तावनवें गणधर । हपु० १२.६५

मित्रभाव—तीर्थंकर अभिनन्दननाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता एक नृप । मपु० ७६.५२९

मित्रयशा—पुष्पप्रकीर्ण नगर के अमोघशर ब्राह्मण की पत्नी । यह विधवा थी । इसने पति की बाण-विद्या का स्मरण कराकर अपने पुत्र श्रीवर्धित को विद्या सीखने के लिए उत्साहित किया था तथा श्रीवर्द्धित भी विद्या पढ़कर इतना चतुर हो गया था कि चतुराई के कारण उसे पोदनपुर का राज्य भी मिल गया था । पपु० ८०.१६८-१७६

मित्रवती—(१) चम्पापुरी के निवासी सर्वार्थ और उसकी स्त्री सुमित्रा की पुत्री । यह इसी नगरी के राजा भानुदत्त के पुत्र चारुदत्त की पत्नी थी । हपु० २१.६, ११, ३८

(२) मृत्तिकावती नगरी के वणिक् कनक की पुत्रवधू और बन्धुदत्त की पत्नी । गुप्तरूप से पति के साथ सहवास करने से गर्भवती हो जाने के कारण सास-ससुर ने इसे दुश्चरित्रा समझकर घर से निकाल दिया था । देवार्चक उपवन में पुत्र उत्पन्न कर तथा उसे रत्न-कम्बल में लपेटकर यह समीपवर्ती एक सरोवर में वस्त्र धोने गयी थी कि इसी बीच इसके पुत्र को एक कुत्ता उठा ले गया । कुत्ते ने शिशु ले जाकर क्रौंचपुर के राजा यक्ष को दिया । यक्ष ने इसके उस पुत्र का नाम "यक्षदत्त" रखा । यह पुत्र के न मिलने से दुःखी होती हुई उपवन के स्वामी देवार्चक की कुटी में रहने लगी । कुछ समय बाद इसको पति और पुत्र दोनों से भेंट हो गयी थी । पपु० ८०.४३-५३, ५९

मित्रवीर—कौशाम्बी के सेठ वृषभसेन का सेवक । इसी ने भीलराज सिंह से चन्दना को छुड़ा करके सेठ वृषभसेन को सौंपी थी । मपु० ७५.४७-५३

मित्रवीरवि—ग्रन्थ की अन्तिम प्रशस्तिगत आचार्य मन्दरार्य के परवर्ती एक आचार्य । हपु० ६६.२६

मित्रवीर्य—तीर्थंकर सुमतिनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता । मपु० ७६.५२९

मित्रश्री—भरतक्षेत्र के अंग देश की चम्पा नगरी के ब्राह्मण अग्निभूति और उसकी स्त्री अग्निला की दूसरी पुत्री । यह धनश्री की छोटी बहिन तथा नागश्री की बड़ी बहिन थी । ये तीनों बहिनें अपने फुफेरे भाई सोमदत्त, सोमिल और सोमभूति से विवाही गयी थी । अपनी छोटी बहिन नागश्री द्वारा धर्मरुचि मुनिराज को विषमिश्रित आहार दिये जाने से यह और इसकी बड़ी बहिन धनश्री तथा सोमदत्त आदि तीनों भाई दीक्षित हो गये थे । दर्शन आदि आराधनाओं की आराधना करते हुए मरकर ये पाँचों जीव अच्युत स्वर्ग में सामानिक देव हुए । यह वहाँ से चयकर पाण्डुपुत्र सहदेव हुई थी । मपु० ७२.२२७-२३७, २६१, पापु० २३.८१-८२, २४.७७

मित्रसेना—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में आदित्याभनगर के

राजा सुकुण्डली की रानी। मणिकुण्डल इसका पुत्र था। मपु० ६२ ३६१-३६२

(२) हस्तिनापुर के राजा सुदर्शन की रानी। तीर्थङ्कर अरनाथ इसके पुत्र थे। इसका अपर नाम मित्रा था। मपु० ६५ १५, पपु० २० ५४

मित्रा—(१) राजा सुदर्शन की रानी और तीर्थंकर अरनाथ की जननी। पपु० २० ५४, हपु० ४५ २१-२२ दे० मित्रसेना-२

(२) कमलसकुल नगर के राजा सुबन्धुतिलक की रानी, कैकेयी की जननी। पपु० २२.१७३-१७४

(३) अरिष्टपुर के राजा रुधिर की रानी। इसके पुत्र का नाम हिरण्य और पुत्री का नाम रोहिणी था। हपु० ३१ ८-११

मित्रानुराग—सल्लेखनाव्रत का पाँचवाँ अतिचार-समाधि के समय मित्रो मे किये अथवा उनके दिये गये प्रेम की स्मृति करना। हपु० ५८ १८४

मिथिला—भरतक्षेत्र के वग देश की एक नगरी। तीर्थङ्कर मल्लिनाथ का जन्म तथा दीक्षा के बाद उनकी प्रथम पारणा यही हुई थी। तीर्थंकर नेमिनाथ और सातवें नारायण दत्त का जन्म भी इसी नगरी मे हुआ था। मपु० ६६ २०-२१, ३४ ५०, ६९ ७१, पपु० २० ५५-५७, २२१, हपु० २० २५

मिथिलानाथ—हरिवंशी राजा देवदत्त का पुत्र और हरिषेण का पिता। हपु० १७ ३३-३४

मिथ्याज्ञान—अविद्या-अतत्त्वो मे तत्त्वबुद्धि। मपु० ४२ ३२

मिथ्यातप—ससार का कारणभूत तप। ऐसा तपस्वी अल्प ऋद्धिधारी देव हो सकता है और वहाँ से चयकर मनुष्य पर्याय भी प्राप्त कर सकता है, पर भवभ्रमण से नही छूटता। पपु० ११४ ३६

मिथ्यात्व—जीव आदि पदार्थों के विषय मे विपरीत श्रद्धान। इससे जीव ससार मे भटकता है। चौदह गुणस्थानो मे इसका सर्वप्रथम कथन है। अभव्य जीवो के यही गुणस्थान होता है, भले ही वे मुनि होकर दीर्घकाल तक दीक्षित रहें और ग्यारह अगधारी क्यो न हो जावें। कर्मास्रव के पाँच कारणो मे यह प्रथम कारण है। अन्य चार कारण है—असयम (अविरति), प्रमाद, कषाय और योगो का होना। इसके उदय से उत्पन्न परिणाम श्रद्धा और ज्ञान को भी विपरीत कर देता है। इसके पाँच भेद हैं—अज्ञान, सशय, एकान्त, विपरीत और विनय। पाप से युक्त और धार्मिक ज्ञान से रहित जीवो के इसके उदय से उत्पन्न परिणाम अज्ञानमिथ्यात्व है। तत्त्व के स्वरूप में दोलायमानता सशयमिथ्यात्व है। द्रव्यपर्यायरूप पदार्थ मे अथवा रत्नत्रय मे किसी एक का ही निश्चय करना एकान्त मिथ्यादर्शन है। ज्ञान, ज्ञायक और ज्ञेय के यथार्थ स्वरूप का विपरीत निर्णय विपरीत मिथ्यादर्शन है और मन, वचन, काय से सभी देवो को प्रणाम करना, समस्त पदार्थों को मोक्ष का उपाय मानना विनयमिथ्यात्व है। मपु० ५४ १५१, ६२ २९६-३०२, वीवच० ४ ४०, १६ ५८-६२

मिथ्यात्वक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में दूसरी मिथ्यात्ववर्द्धिनी क्रिया। इससे मिथ्या देवी-देवताओं की स्तुति पूजा-भक्ति आदि में प्रवृत्ति होती है। हपु० ५८.६२, ६५

मिथ्यात्वप्रकृति—अतत्त्व श्रद्धान उत्पन्न करानेवाला कर्म। आसन्नभव्य जीव पाँच देशना आदि लब्धियो से युक्त होता हुआ तीन करणो-अध करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के द्वारा सम्यग्दृष्टि होता है। मपु० ९ १२०

मिथ्यादर्शन—ससार भ्रमण का कारण। इससे युक्त जीव तिर्यञ्च और नरकगति के दु खो को भोगते हैं। पपु० २ १९७, ६ २८० दे० मिथ्यात्व

मिथ्यादर्शनक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओ में चौबीसवी क्रिया। इसमें प्रोत्साहन आदि के द्वारा दूसरे के मिथ्यादर्शन के आरम्भ तथा उसमे दृढता लाने मे तत्परता होती है। हपु० ५८ ८१

मिथ्यादर्शनवाक्—सत्यप्रवाद पूर्व मे कथित बारह प्रकार की भाषाओ मे बारहवी-मिथ्यामार्ग का उपदेश करनेवाली भाषा। हपु० १०. ९१, ९७

मिथ्यादृष्टि—प्रथम गुणस्थानवर्ती जीव। यह मिथ्यात्व, सम्यक्-मिथ्यात्व, सम्यक्त्वप्रकृति तथा अनन्तानुबन्धीक्रोध, मान, माया और लोभ इन सात प्रकृतियों के उदय से अतत्त्व मे श्रद्धान करनेवाला होता है। इस गुणस्थान मे जीवो को स्व-पर का भेदज्ञान नही होता। आप्त, आगम और निर्ग्रन्थ गुरु पर ये विश्वास नही करते। दर्शन मोहनीय कर्म के कारण प्राणी इस गुणस्थान मे निरन्तर बद्ध रहते हैं। इसमें भव्यता और अभव्यता दोनो होती है। इस गुणस्थानवाले जीव दान आदि पुण्यकार्यों से स्वर्ग के सुख भी पा लेते हैं। स्वर्ग मे शान्त परिणामो के प्रभाव से काल आदि लब्धियाँ पाकर ये स्वयमेव अथवा दूसरो के निमित्त से समीचीन सम्यग्दर्शन रूप धर्म को प्राप्त कर सकते हैं। यह बात निकटकाल मे मोक्ष प्राप्त करनेवाले भव्यमिथ्यादृष्टियो की अपेक्षा से कही है। परन्तु जो निरन्तर भोगो मे आसक्त पर नारी रमण और आरम्भ परिग्रह के द्वारा पाप का सचय करते हैं वे ससार मे भटकते है। मपु० २ २४, ७६ २२३-२२६, पपु० ९१ ३४, हपु० ३ ८०, ९४, ९९-१००, ११९-१२०

मिथ्यान्धकार—अज्ञान-अन्धकार। यह तप से दूर होता है। मपु० ५ १४८

मिथ्योपदेश—सत्याणुव्रत का प्रथम अतिचार—किसी को धोखा देना तथा स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त करनेवाली क्रियाओं में दूसरो की अन्यथा प्रवृत्ति कराना। हपु० ५८ १६६

मिश्रकेशी—(१) रुचकगिरि के उत्तरदिशावर्ती आठ कूटो में दूसरे अङ्ककूट की वासिनी एक देवी। यह चमर लेकर जिनमाता की सेवा करती है। हपु० ५ ७१५, ७१७

(२) अजना की एक सखी। इसने अजना से कहा था कि विद्युत्प्रभ को छोडकर तूने पवनजय को ग्रहण करके अज्ञानता की है। इसे सुनकर पवनजय अजना से विमुख हो गया था। उसने अजना को दुख देने का निश्चय किया था। पपु० १५ १५४-१५५, १९६-१९७, २१७ दे० पवनजय और अजना

मिश्रगुणस्थान—तीसरा गुणस्थान। इसका अपर नाम सम्यग्मिथ्यादृक्

हैं। इसमें जीव के परिणाम सम्यक्त्व और मिथ्यात्व से मिश्रित होते हैं। ऐसे परस्पर विरुद्ध परिणामधारी जीवों के अन्तःकरण सुख और दुःख दोनों से मिश्रित रहते हैं। हपु० ३.८०, ९२, वीवच० १६.५८

मीन—जलचर प्राणी-मछली। तीर्थंकर के गर्भावतरण के पूर्व उनकी माता को दिखायी देनेवाले सोलह स्वप्नों में आठवाँ स्वप्न। इस स्वप्न में माता को मछलियों का जोड़ा दिखायी देता है। मपु० ५.३४, २८.१७१, पपु० ३.१३१

मीनार्या—तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ के समवसरण में विद्यमान तीन लाख तीस हजार आर्यिकाओं में मुख्य आर्यिका। मपु० ५३.५०

मुकुट—सिर का एक दैदीप्यमान आभूषण। यह मस्तक पर उसकी शोभा हेतु धारण किया जाता है। भोग-भूमियों में यह भूषणांग जाति के कल्पवृक्षों से प्राप्त हो जाता था। प्राचीन काल में इसका बड़ा महत्त्व था। राजा, महाराजा तथा विद्याधर इसे धारण करते थे। मपु० ३.९१, १३०, १५४, ५.४, ९.४१, १०.१२६, १५५, १६.२३४

मुकुन्द—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० ३०.५०

मुक्त—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११३

(२) जीवों का एक भेद। ये अष्टकर्मों से रहित, सम्यक्त्व आदि आठ गुणों से विभूषित, सुख के सागर, सर्व दुःखों से रहित लोकाग्रवासी, सर्व बाधाओं से विमुक्त, ज्ञानशरीरी और अनन्त गुण-सम्पन्न होते हैं। इन्हें अन्तराय से रहित अतुल और अनन्त सुख होता है। इनमें अचलत्व, अक्षयत्व, अव्याबाधत्व, अनन्तज्ञानत्व, अनन्त-दर्शनत्व, अनन्तवीर्यता, अनन्तसुखता, नीरजस्त्व, निर्मलत्व, अच्छेद्यत्व, अभेद्यत्व, अक्षरत्व, अप्रमेयत्व, अगौरवलाघव, अक्षोभ्यत्व, अविलीनत्व, परमसिद्धता ये गुण भी होते हैं। मपु० २४.८८-८९, ४२.९७-१०७, ६७.५, १०, पपु० १०५.१४८, वीवच० १६.३३-३५

मुक्तवन्त—आगामी तीसवाँ चक्रवर्ती। मपु० ७६.४८२

मुक्तादाम—मोतियों से निर्मित मालाएँ। इन्हें विमानों में लटकाकर उनकी शोभावृद्धि की जाती है। मपु० ११.१२१

मुक्तावलीव्रत—एक व्रत। इसमें १, २, ३, ४, ५, ४, ३, २, १ के क्रम से पच्चीस उपवास और उपवासों के पश्चात् एक पारणा की जाती है। इस प्रकार यह व्रत चौंतीस दिनों में पूर्ण होता है। ऐसा व्रती मनुष्यों में श्रेष्ठ होकर अन्त में मोक्ष जाता है। मपु० ७.३०-३१, हपु० ३४.६९-७०, ६०.८३-८४

मुक्ताहार—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का छत्तीसवाँ नगर। मपु० १९.८३, ८७

(२) कण्ठ का आभूषण—मोतियों से निर्मित हार। इसे स्त्री और पुरुष दोनों धारण करते थे। इसका अपर नाम मुक्तामाला था। मपु० १५.८१, पपु० ३.२७७, ७१.२

मुक्तिलक्ष्मी—मोक्षलक्ष्मी। यह संयम और तप से प्राप्त होती है। मपु० १.३, ५.१५१

मुखभाण्ड—घोड़ों की लगाम। इसे घोड़ों के मुख में रखकर उन्हें नियन्त्रण में रखा जाता है। मपु० २९.११२

मुख्यकाल—वर्त्तना लक्षण काल का प्रथम भेद। गौण काल की प्रवृत्ति इसी काल के कारण होती है। हपु० ७.१, ४

मुण्डशालायन—भद्रिलपुर नगर के ब्राह्मण भूतिशर्मा और उसकी स्त्री कमला का पुत्र। हरिवंशपुराण के अनुसार इसकी माँ का नाम कपिला था। मलय देश के राजा मेघरथ के मन्त्री द्वारा शास्त्रदान, अभयदान और अन्नदान करने के लिए कहे जाने पर इसने विरोध करते हुए मेघरथ को उक्त तीनों दान मुनियों और दरिद्रियों के लिए ठीक तथा राजाओं के लिए अनुपयुक्त बताये थे। इसने कन्यादान, हस्तिदान, स्वर्णदान, अश्वदान, गोदान, दासीदान, तिलदान, रथदान, भूमिदान और गृहदान ये दस प्रकार के दान चलाये थे। इसका अभिमत था कि तप क्लेश व्यर्थ है। जिनके पास धन नहीं है ऐसे साहसी मूर्ख मनुष्यों ने ही परलोक के लिए इस तप के क्लेश की कल्पना की है। वास्तव में पृथिवीदान, स्वर्णदान आदि से ही सुख प्राप्त होता है। सम्यकदान का विरोध करने और मिथ्या दानों का प्रचार करने से अन्त में मरकर तह सातवें नरक गया तथा वहाँ से निकलकर तिर्यंचगति में भटकता रहा। मपु० ५६.६६-६७, ८०-८१, ९६, ७१.३०४-३०८, हपु० ६०.११-१४

मुचिलिन्द—राम के समय का एक वन। पपु० ४२.१५

मुदित—पद्मिनी नगर के राजा विजयपर्वत के दूत अमृतस्वर और उसकी स्त्री उपयोगा का कनिष्ठ पुत्र, उदित का छोटा भाई। वसुभूति इन दोनों के पिता का मित्र था। वह इसकी माता को चाहता था और इसकी माता उसे चाहती थी। वसुभूति ने इसके पिता को मार डाला था। इस घटना से कुपित होकर इसके भाई उदित ने वसुदेव को मार डाला। वह मरकर म्लेच्छ हुआ। इसके पश्चात् दोनों भाई मतिवर्धन आचार्य द्वारा राजा को दिये गये उपदेश को सुनकर उनसे दीक्षित हो गए। विहार करते हुए दोनों भाई सम्मेदाचल जा रहे थे। राह भूल जाने से वे उस अटवी में पहुँचे जहाँ वसुभूति का जीव म्लेच्छ हुआ था। इस अटवी में म्लेच्छ इन्हें मारने के लिए तत्पर दिखाई दिया। ये दोनों प्रतिमायोग में स्थिर हो गये। म्लेच्छ इन्हें मारने आया किन्तु उसके सेनापति ने उसे इन्हें नहीं मारने दिया। इस उपसर्ग से बचकर दोनों सम्मेदाचल गये। वहाँ दोनों ने जिन-वन्दना की। अन्त में दोनों चिरकाल तक रत्नत्रय की आराधना करते हुए मरे और स्वर्ग गये। पपु० ३९.८४-१४५

मुद्ग—वृषभदेव के समय का एक धान्य-मूंग। मपु० ३.१८७, पपु० २.७, ३३.४७

मुद्गर—(१) लौह निर्मित एक अस्त्र। इन्द्र विद्याधर के साथ युद्ध करते समय रावण ने इसका व्यवहार किया था। मपु० ४४.१४३, पपु० १२.२५८, ७२.७४-७७

(२) पवनजय का सेनापति। पपु० १६ १४७

मुद्रिका—हाथ की अगुलि का आभूषण—अगूठी। यह अगुली में धारण की जाती थी। इसका प्रयोग स्त्री-पुरुष दोनो करते थे। मपु० ७ २३५, ४७ २१९

मुनि—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

(२) महाव्रती निर्ग्रन्थ साधु। इनके अट्ठाईस मूलगुण होते हैं—पाँच महाव्रत, पाँच समितियाँ, पाँच इन्द्रिय-निरोध, छ आवश्यक केशलोच, भूशयन, अदन्तधावन, अचेलत्व, अस्नान, स्थितिभोजन और एक भुक्त। ये पैदल चलते हैं। इनके उद्देश्य से बनाया गया आहार ये ग्रहण नही करते। ये अपना आहार न स्वय बनाते हैं न किसी से बनवाते हैं और न अनुमोदना करते हैं। तीनो गुप्तियो का पालन करते हुए ये बारह प्रकार का तपश्चरण करते हैं और बाईस प्रकार के परीषहो को समता भावो से सहते हैं। ये नवधाभक्ति पूर्वक चान्द्रीचर्या से श्रावको के घर पाणिपात्र से आहार ग्रहण करते हैं। ये अपना शरीर न कृश करते हैं और न उसे रसीले मधुर पौष्टिक आहार लेकर पुष्ट करते हैं। ये ऐसा आहार ग्रहण करते हैं जो इन्द्रियो को वश में रखने में सहायक होता है। ये शारीरिक स्थिति के लिए ही आहार लेते हैं। शरीर से इन्हें ममत्व नही होता। ये प्राणी मात्र से मैत्री रखते है। गुणियो को देखकर प्रमुदित होते है। दु खी जीवो पर करुणाभाव और अविनयी जीवो पर मध्यस्थ-भाव रखते हैं। चार हाथ प्रमाण मार्ग देखकर चलते है। न बहुत धीमे चलते है और न बहुत शीघ्र। ये नि शल्य होकर विहार करते, उत्तम-क्षमा आदि दस धर्म पालते तथा बारह भावनाओ का चिन्तन करते हैं। ये सातो भयो से रहित होते हैं। सदैव आत्मा के अर्थ में प्रवृत्त होते हैं। इनमे स्वाभाविक सरलता होती है। अपने आचार्य की आज्ञा मानते है। जो पुरुष इनका वचन द्वारा अनादर करते हैं वे दूसरे भव मे गूंगे होते है। जो मन से निरादर करते हैं उनकी स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है और जो शरीर से तिरस्कार करते है उन्हें शारीरिक व्याधियाँ होती है। ये अपने निन्दको से द्वेष नही करते क्योकि क्षमाधारी होते है। मपु० ६ १५३-१५५, ११ ६४-६५, ७५, १८ ५-८, ६७-७२, २० ५-६, ६५-६६, ७८-८८, १६९, २०६, ३४ १६९-१७३, ३६.११६, १५६-१६१, पपु० ९२ ४७-४८, वीवच० १७ ८२, ३७ १६३, १०६ ११३, १०९.८९

मुनिगुप्त—प्रत्यन्तनगर मे विराजमान एक मुनि। महाबल और कनकलता दोनो पति-पत्नी ने इन्ही मुनि को आहार देकर पुण्यसचय किया था। मपु० ७५ ८९-९२

मुनिचन्द्र—एक मुनि। ये पुष्पपुर नगर के राजा सूर्यावर्त के धर्मोपदेशक एव दीक्षागुरु थे। मपु० ५९ २३१-२३२, हपु० २७ ८१

मुनिज्येष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०२

मुनिधर्म—पच महाव्रत, पच समिति और त्रिगुप्तियो का धारण करना, परीषहो को सहना, अट्ठाईस मूलगुणो का पालन करना, सप्त भयो से रहित होना, शका आदि सम्यग्दर्शन के आठ दोषो से दूर रहना और चारित्र धर्म तथा अनुप्रेक्षा से युक्त होना मुनिधर्म है। पपु० ९ २१९, २० १४९, १५१, ३७ १६५, १०६ ११३-११४ दे० मुनि

मुनिभद्र—एक पराक्रमी म्लेच्छ राजा। यह नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का पक्षधर था। पपु० ३७ २०

मुनिवर—एक मुनि। ये भरतक्षेत्र के वत्सदेश की कौशाम्बी नगरी के राजा पार्थिव के दीक्षागुरु थे। मपु० ६९ २, १०

मुनिवेलाव्रत—मुनियो के आहार का समय निकल जाने के पश्चात् भोजन करने का नियम। पपु० १४.३२८

मुनिसंयम—मुनियो का सयम-सकल संयम। यह ससार के जन्म-मरण का नाशक और सिद्धि का कारण होता है। वीवच० ६ २९

मुनिसागर—सुकच्छ देश का एक पर्वत। विद्याधर वायुवेग की पुत्री शान्तिमती ने इसी पर्वत पर विद्या-सिद्ध की थी। मपु० ६३ ९१-९५

मुनिसुव्रत—(१) उत्सर्पिणी काल के ग्यारहवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७९

(२) अवसर्पिणी काल के दु खमा-सुखमा नामक चौथे काल के उत्तरार्ध मे उत्पन्न हुए बीसवें तीर्थंकर। मुनियो को अहिंसा आदि सुव्रतो के दाता होने से ये सार्थक नामधारी थे। इनकी जन्मभूमि भरतक्षेत्र में स्थित मगध देश का राजगृह नगर था। इनके पिता का नाम हरिवशी काश्यपगोत्री राजा सुमित्र और माता का नाम सोमा था। हरिवशपुराण के अनुसार इनकी जन्मभूमि कुशाग्रपुर नगर तथा माता का नाम पद्मावती था। इनके गर्भ में आने पर इनकी माता ने रात्रि के अन्तिम प्रहर में सोलह स्वप्न देखे थे। वे है—गज, वृषभ, सिंह, लक्ष्मी, पुष्पमाला, चन्द्रमा, बालसूर्य, मत्स्य, कलश, कमलसर, समुद्र, सिंहासन, देवविमान, नागेन्द्रभवन, रत्नराशि और निर्धूम अग्नि। ये श्रावण कृष्णा द्वितीया तिथि और श्रवण नक्षत्र में प्राणत स्वर्ग से, हरिवशपुराण के अनुसार सहस्रार स्वर्ग से अवतरित होकर गर्भ मे आये तथा नौ मास साढे आठ दिन गर्भ में रहकर मल्लिनाथ तीर्थंकर के पश्चात् चौवन लाख वर्ष व्यतीत हो जाने पर माघ कृष्णा द्वादशी को श्रवण नक्षत्र मे उत्पन्न हुए थे। सुमेरु पर्वत पर इनका जन्माभिषेक कर इन्द्र ने इनका मुनिसुव्रत नाम रखा था। ये समस्त शुभ लक्षणो से सम्पन्न थे। शारीरिक ऊँचाई बीस धनुष और कान्ति मयूरकठ के समान नीली थी। पूर्ण आयु तीस हजार वर्ष थी। इसमें साढे सात हजार वर्ष का इनका कुमारकाल रहा। पन्द्रह हजार वर्ष तक इन्होने राज्य किया और शेष साढे सात हजार वर्ष तक सयमी होकर विहार करते रहे। इनके वैराग्य का कारण उनके यागहस्ती नामक हाथी का सयमासयम ग्रहण करना था। लौकान्तिक देवों ने आकर इनके विचारो का समर्थन किया और दीक्षा कल्याणक मनाया। हरिवशपुराण मे इनके वैराग्य का कारण शुभ्रमेघ के उदय और उनके शीघ्र विलीन होने का दृश्यावलोकन कहा है। इन्होने युवराज विजय को और हरिवशपुराण के अनुसार रानी प्रभावती के पुत्र सुव्रत को राज्य दिया। इसके पश्चात् ये अपराजित नाम की पालकी में बैठकर

नील वन गये थे । वहाँ इन्होने षष्ठोपवास पूर्वक वैशाख कृष्णा दशमी के दिन श्रवण नक्षत्र में सायकाल के समय एक हज़ार राजाओ के साथ सयम धारण किया था । प्रथम पारणा राजगृहनगर मे राजा वृषभसेन के यहाँ हुई थी । उन्होने इन्हें आहार देकर पाँच आश्चर्य प्राप्त किये थे । इन्होने खडे होकर पाणिपात्र से खीर का आहार किया था । उसी खीर का आहार हज़ारो मुनियो को भी दिया गया था, किन्तु खीर समाप्त नही हुई थी । ग्यारह मास/तेरह मास छद्मस्थ रहकर दीक्षावन (नीलवन) में चम्पक वृक्ष के नीचे दो दिन के उपवास का नियम लेकर ध्यान के द्वारा चारो घातिकर्म नाशकर वैशाख कृष्णा दसवी श्रवण-नक्षत्र में केवली हुए थे । अहमिन्द्रो ने इस समय अपने-अपने आसनो से सात-सात पद आगे चलकर हाथ जोड करके मस्तक से लगाये और इन्हें परोक्ष नमन किया था । सौधर्मेन्द्र ने ज्ञान-कल्याणक का उत्सव कर समवसरण की रचना की थी । इनके सघ में महापुराण के अनुसार अठारह और हरिवशपुराण के अनुसार अट्ठाईस गणधर थे । तीस हज़ार मुनियो में पाँच सौ द्वादशाग के ज्ञाता इक्कीस हज़ार शिक्षक, एक हज़ार आठ सौ अवधिज्ञानी, एक हज़ार आठ सौ केवलज्ञानी, दो हज़ार दो सौ विक्रियाऋद्धिधारी, एक हज़ार पाँच सौ मन पर्ययज्ञानी और एक हज़ार दो सौ वादी तथा पुष्पदन्ता आदि पचास हज़ार आर्यिकाएँ और असख्यात देव-देवियो का समूह था । इन्होने आर्य क्षेत्र में विहार किया था । एक मास की आयु शेष रह जाने पर ये सम्मेदाचल आये तथा यहाँ योग-निरोध कर एक हज़ार मुनियो के साथ खड्गासन से फाल्गुन कृष्णा द्वादशी के दिन रात्रि के पिछले प्रहर में मोक्ष गये । इन्द्र ने सोत्साह इनका निर्वाण-कल्याणक मनाया था । मपु० २ १३२, १६ २०-२१, ६७ २१-६०, हपु० १५ ६१-६२, १६ २-७६, पापु० २२ १, वीवच० १ ३०, १८ १०७

मुनीन्द्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७०

मुनीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८३

मुमुक्षु—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०८

(२) मोक्षाभिलाषी, अनासक्त जीव । ये न शरीर को कृश करते हैं और न रसीले तथा मधुर मनचाहे भोजनो से उसे पुष्ट करते हैं । मपु० २० ५

मुरज—वृषभदेव के समय का एक मागलिक वाद्य । इसकी ध्वनि मधुर और सुखद होती थी । राम के समय में भी इसका प्रयोग होता था । ये मागलिक अवसरो पर बजाये जाते थे । मपु० १२ २०७, पपु० ४० ३०

मुरजमध्य—एक व्रत । इसमें क्रमश पाँच उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा और पाँच उपवास एक पारणा की जाती है । इस प्रकार इसमें अट्ठाईस उपवास और आठ पारणाएँ की जाती हैं । हपु० ३४.६६

मुररा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी । इसके तट पर कुरर पक्षी रहते थे । भरतेश का सेनापति सेना के साथ यहाँ आया था । मपु० ३० ५८

मुष्टिक—मथुरा के राजा कस का एक मल्ल । कस ने कृष्ण और चाणूर मल्ल का मुष्टियुद्ध होने पर इसे पीछे से कृष्ण पर आक्रमण करने के लिए सकेत किया था । हपु० ३६ ४०

मुसल—रावण के समय का एक शस्त्र । विद्या बल से लका-सुन्दरी ने इसका हनुमान् पर प्रयोग किया था । पपु० १२ २५७, ५२ ४०

मूहूर्त—सत्तर लव प्रमाण काल । हपु० ७ २० दे० काल

मूढ़ता—तत्त्वो के यथार्थ ज्ञान मे बाधक कुदृष्टि । यह तीन प्रकार की होती है—देवमूढता, लोकमूढ़ता और पाखण्डिमूढता । इन मूढ़ताओ से आविष्ट प्राणी तत्त्वो को देखता हुआ भी नही देखता है । इनके त्याग से विशुद्ध सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है । मपु० ९.१२२, १२८, १४०

मूर्च्छना—वीण स्वर । यह इक्कीस प्रकार का होता है । पपु० १७ २७८, हपु० १९ १४७

मूर्ति—सत्ताईस सूत्रपदो में दूसरा सूत्रपद-परमेष्ठियो का एक गुण । जो मुनि दिव्य आदि मूर्तियो को प्राप्त करना चाहता है (अर्थात् इन्द्र चक्रवर्ती, अर्हन्त और सिद्ध होना चाहता है) उसे अपना शरीर कृश कर अन्य जीवो की रक्षा करते हुए तपश्चरण करना चाहिए । मपु० ३९ १६३, १६८-१७०

मूर्तिमान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८७

मूल—(१) एक नक्षत्र । तीर्थङ्कर पुष्पदन्त इसी नक्षत्र में जन्मे थे । पपु० २० ४५

(२) हरिवशी राजा अयोधन का पुत्र और राजा शील का पिता । हपु० १७ ३२

मूलक—भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा छोडे गये देशो मे भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का एक देश । हपु० ११ ७०-७१

मूलकर्त्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. २०९

मूलकारण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०९

मूलगुण—साधु-चर्या के आगमोक्त अट्ठाईस नियम । मपु० १८ ७०-७२, ३६ १३३-१३५, वीवच० १८ ७४-७६ दे० मुनि

मूलवीर्य—विद्याधरो की एक जाति । ये आभूषणो से अलकृत होकर औषधि-स्तम्भ के सहारे बैठते हैं । इनके हाथो में औषधियाँ रहती हैं । हपु० २६ १०

मूलवीर्यक—अदिति देवी द्वारा नमि-विनमि को दिये गये आठ विद्या-निकायो में सातवाँ विद्या-निकाय । हपु० २२ ५६-५८

मूला—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी । भरतेश की सेना यहाँ आयी थी । मपु० ३० ५६

मूषा—ढलाई के काम आनेवाला साँचा। इसमें ताँबा आदि धातुओं को गरम कर गलाया जाता था। मपु० १०.८३

मृकण्डू—भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश में भोगपुर नगर के हरिवंशीय राजा प्रभंजन की रानी और सिंहकेतु की जननी। मपु० ७०.७४-७५

मृग—जंगली पशु-हरिण। ये लतागृहों और वन के भीतरी प्रदेशों में विचरते हैं। समवसरण में ये पशु भी रहते हैं। मपु० २.११, ९.५४, १९.१५४, पापु० २.२४७

मृगचारी—स्वच्छन्द विहार करनेवाले साधु। मपु० ७६.१९५

मृगचिह्न—एक विद्याधर। यह इन्द्र विद्याधर का भानेज था। इसने इन्द्र विद्याधर की ओर से रावण के पक्षधर श्रीमाली से युद्ध किया था और युद्ध में यह उसके द्वारा मारा गया। पपु० १२.२१८-२१९

मृगचूल—राम-लक्ष्मण के भ्रातृ-स्नेह का परीक्षक सौधर्म स्वर्ग का एक देव। यह रत्नचूल देव को साथ लेकर अयोध्या आया था। वहाँ इसने राम के भवन में दिव्य माया से अन्तःपुर की स्त्रियों के रुदन की विक्रिया से आवाज की। इसमें द्वारपाल, मंत्री और पुरोहित ने लक्ष्मण को राम की मृत्यु के समाचार कहे। लक्ष्मण राम का मरण जानकर सिंहासन पर बैठे-बैठे ही निष्प्राण हो गया। लक्ष्मण को निर्जीव देखकर यह बहुत व्याकुलित हुआ। लक्ष्मण को जीवित करने में समर्थ न हो सकने पर 'लक्ष्मण की इसी विधि से मृत्यु होनी होगी' ऐसा विचार कर यह देव अपने साथी रत्नचूल के साथ सौधर्म स्वर्ग लौट गया था। पपु० ११५.२-१५

मृग-द्विप—मृग जाति के हाथी। ये भयभीत होकर भागनेवाले हरिणों के समान भागने में कुशल होते हैं। युद्ध में इनका धीरे-धीरे चलना अशुभ सूचक होता है। मपु० ४४.२०४, २२६

मृगध्वज—भरतक्षेत्र की श्रावस्ती नगरी के राजा जितशत्रु का पुत्र। इसी नगरी के सेठ कामदत्त द्वारा पालित भद्रक भैंसे का एक पैर चक्र से काटने के कारण इसके पिता ने इसे मारने का आदेश दिया था, किन्तु बुद्धिमान् मंत्री ने इसे जीवित छोड़कर मुनिदीक्षा दिला दी थी। बाईसवें दिन इसे केवलज्ञान प्रकट हो गया था। हपु० २८.१७-२८

मृगपतिध्वज—भरतक्षेत्र के काम्पिल्यनगर का राजा। यह हरिषेण चक्रवर्ती का पिता था। इसकी रानी वप्रा थी। पपु० ८.२८१-२८३

मृगया-विनोद—मनोरंजन का साधन-शिकार। यह हेय और पाप का कारण है। मृग के शिकारी पहले गीत गाकर हरिण को लुभाते हैं और इसके पश्चात् मार डालते हैं। विषय भी शिकारी के समान हैं। ये मनुष्य को पहले विश्वास दिलाते हैं और इसके पश्चात् उसके प्राणों को हर लेते हैं। अतः विषय भी त्याज्य हैं। मपु० ५.१२८, ११.२०२

मृगयु—शिकारी। ये वनों में हरिणों को गीतों से आकृष्ट कर उनका शिकार करते हैं। मपु० ११.२०२

मृगपोषित—शाकाहारी एक जंगली चौपाया मादा जानवर हरिणी। ये झुंड में रहते हैं। जंगल में इच्छानुसार यहाँ वहाँ घूमते हैं और कोमल तथा स्वादिष्ट घास के अंकुर खाकर पुष्ट रहते हैं। संगीत इन्हें प्रिय होता है। शिकारी अपने गीत और वाद्यों से आकृष्ट कर इन्हें मार डालते हैं। मपु० ११.२०२, १९.१५६

मृगशृंग—भूतरमण अटवी में ऐरावत नदी के तटवासी सुमाली तापस और उसकी स्त्री कनकेशी का पुत्र। यह विद्याधर होने का निदान कर पंचाग्नि तप करते हुए मरा था तथा निदान के कारण विद्युद्दंष्ट्र विद्याधर हुआ। मपु० ६२.३७९-३८२, हपु० २७.११९-१२१

मृगशृंगिणी—एक तपस्विनी। यह तापस सित की स्त्री और मधु की जननी थी। हपु० ४६.५४

मृगांक—(१) रावण का मंत्री। इसने राम-लक्ष्मण को क्रमशः सिंहवाहिनी और गरुडवाहिनी विद्याओं की प्राप्ति की सूचना रावण को देते हुए उसे सीता छोड़कर धर्मबुद्धि धारण करने के लिए समझाया था। पपु० ६६.२-८

(२) आदित्यवंशी राजा गरुडांक का पुत्र। पपु० ५.८, हपु० १३.११

(३) जम्बूद्वीप का एक नगर। यह सिंहचन्द्र की जन्मभूमि थी। पपु० १७.१५०

(४) चौथे बलभद्र सुप्रभ के दीक्षागुरु। पपु० २०.२४६

मृगायण—(१) कोशल देश के वृद्धग्राम का एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री मधुरा तथा पुत्री वारुणी थी। यह आयु के अन्त में मरकर साकेत नगर के राजा दिव्यबल और उसकी रानी सुमति से हिरण्यवती पुत्री हुआ था। मपु० ५९.२०७-२०९, हपु० २७.६१-६३

(२) सिन्धु नदी का तटवासी एक तापस। इसकी विशाला पत्नी और उससे उत्पन्न गौतम पुत्र था। मपु० ७०.१४२

मृगारिदमन—(१) राक्षसवंशी एक विद्याधर। यह लंका का राजा था। पपु० ५.३९४

(२) मेघपुर नगर के राजा मेरु विद्याधर और रानी मघोनी का पुत्र। इसने किष्किन्ध की पुत्री सूर्यकमला से विवाह कर लौटते समय कर्णपर्वत पर कर्णकुण्डल नगर बसाया था। पपु० ६.५२५-५२६

मृगावती—(१) भरतक्षेत्र के सुरम्य देश में पोदनपुर के राजा प्रजापति की रानी। यह प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ की जननी थी। मपु० ५७.८४-८५, ६२.९०, ७४.११९-१२२, पपु० २०.२२५, वीवच० ३.६१-६३

(२) रावण की रानी। पपु० ७७.१३

(३) भरतक्षेत्र का एक देश। दशार्णपुर इसी देश में था। मपु० ७१.२९१, पापु० ११.५५

(४) भरतक्षेत्र के विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में हरिपुर नगर के राजा पवनगिरि विद्याधर की रानी। यह सुमुख के जीव की जननी थी। हपु० १५.२१-२३

(५) वैशाली नगरी के राजा चेटक और रानी सुभद्रा की द्वितीय पुत्री तथा त्रिशलादेवी की छोटी बहिन। यह कौशाम्बी के राजा शतानीक से विवाही गयी। [illegible] और [illegible] इसका पुत्र था। मपु० ७५.३-९, १४

मृगेन्द्र—(१) विद्याधरो का स्वामी एक विद्याधर। इसने राम की सहायता की थी। पपु० ५४ ३४-३६

(२) वृषभदेव के समय का एक जगली-पशु सिंह। तीर्थंकरो के गर्भ में आने पर उनकी माता को यह पशु स्वप्न में सफेद तथा इसके कधे लाल रग के दिखायी देते हैं। मपु० १२ १०६

मृगेन्द्रकेतन—समवसरण की सिंहाकृतियो से अकित ध्वजाएँ। मपु० २२.२३१

मृगेन्द्रवाहन—राम का एक सामन्त। यह लवणाकुश और मदनाकुश का राम और लक्ष्मण से होनेवाले युद्ध के समय राम-लक्ष्मण की ओर से युद्ध करने बाहर निकला था। पपु० १०२ १४७-१४८

मृगेशदमन—इक्ष्वाकुवशी राजा द्विरदरथ का पुत्र और हिरण्यकशिपु का का पिता। पपु० २२ १५७-१५८

मृगोद्वर्मा—विद्याधरवशी राजा सिंहयान का पुत्र और सिंहप्रभु का पिता। पपु० ५ ४९

मृणालकुण्ड—भरतक्षेत्र का एक नगर। रावण के पूर्वभव का जीव शम्भु इसी नगर के राजा वज्रकम्बु और रानी हेमवती का पुत्र था। पपु० १०६ १३३-१३४, १५८, १६९-१७१

मृणालवती—जम्बूद्वीप में पूर्वविदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की एक नगरी। यहाँ का राजा धरणीपति था। मपु० ४६ १०३, पापु० ३ १८७-१८८

मृतसजीवनी—धरणेन्द्र द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को दी गयी एक विद्या। हपु० २२ ७१

मृत्तिकाभक्षणदण्ड—दण्ड-व्यवस्था का प्रथम भेद। अपराधी को दण्ड स्वरूप मिट्टी का भक्षण कराया जाना मृत्तिकाभक्षणदण्ड कहलाता था। मपु० ४६ २९२-२९३

मृत्तिकावती—भरतक्षेत्र की एक नगरी। क्रौंचपुर नगर के राजा यक्ष और उनकी रानी राजिला के द्वारा पाला गया यक्षदत्त इसी नगर में बन्धुदत्त गृहस्थ के घर जन्मा था। पपु० ४८ ४३-५०

मृत्यु जय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७०, १३०

मृत्यु—(१) रावण का सामन्त। यह व्याघ्ररथ पर आरूढ होकर रावण की ओर से युद्ध करने घर से निकला था। पपु० ५७ ४९

(२) जीवो के प्राणो का विसर्जन। जीव को अपने मरण का पूर्वबोध नही हो पाता, पलभर मे वह निष्प्राण हो जाता है। पपु० ११५ ५५

(३) हरिविक्रम भीलराज का सेवक। मपु० ७५ ४७८-४८१

मृत्यु-आशंका—मरणाशसा। यह सल्लेखनाव्रत का दूसरा अतिचार है। इसमे पीडा से व्याकुलित होकर शीघ्र मरने की इच्छा की जाती है। हपु० ५८ १८४

मृदग—एक मागलिक वाद्य। यह स्वयवर और सैन्य प्रस्थान काल आदि मागलिक अवसरो पर बजाया जाता है। बजाने के लिए इसके ऊपरी भाग को पीटा जाता है। इसका खोल मिट्टी से निर्मित होने के कारण इसे मृदग कहते हैं। इसके दोनो ओर के मुख चमडे से मढे जाते हैं। यह बीच में चौडा और दोनो भागों में सकीर्ण होता है। ऊर्ध्व लोक का आकार इसके ही समान है। मपु० ३ १७४, ४४१, १२ २०४-२०६, १३ १७७, १७ १४३, पपु० ६ ३७९, ३६ ९२, ५८ २७

मृदंगमध्यमव्रत—एक व्रत। इसमें क्रमश दो, तीन, चार, पाँच, चार, तीन और दो उपवास किये जाते हैं। प्रत्येक क्रम के बाद एक पारणा की जाती है। इस प्रकार इसमें तेईस उपवास और सात पारणाएँ की जाती हैं। इसके करने से क्षीरस्रावि आदि ऋद्धियाँ, अवधिज्ञान और क्रमश मोक्ष प्राप्त होता है। हपु० ३४ ६४-६५

मृदुकान्ता—राजा आकाशध्वज की रानी और उपरम्भा की जननी। पपु० १२ १५१

मृदुमति—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में स्थित पोदनपुर नगर के निवासी ब्राह्मण अग्निमुख और उसकी स्त्री शकुना का पुत्र। लोक के उलाहनो से खिन्न होकर इसे माता-पिता ने घर से निकाल दिया था। यह यौवन अवस्था में पोदनपुर आया। यहाँ रुदन करती हुई माँ शकुना को धैर्य बँधाकर उसके साथ रहने लगा। एक दिन यह शशाकनगर के राजा नन्दिवर्धन के राजमहल में चोरी करने गया वहाँ राजा को अपने शशाकमुख गुरु से दीक्षा लेने का निश्चय रानी से कहते हुए सुना। यह सुनकर विषयो से विरक्त हुआ और इसने जिनदीक्षा धारण कर ली तथा तप करने लगा। इधर गुणनिधि मुनि ने दुर्गगिरि पर्वत पर निराहार चार माह का वर्षायोग समाप्त कर विधिपूर्वक जैसे ही विहार किया कि दैवयोग से यह मृदुमति मुनि वहाँ आहार के लिए आया। नगरवासियो ने इसे गुणनिधि मुनि समझकर महान् आदर-सत्कार किया। नगरवासियो के यह पूछने पर कि क्या आप वही मुनिराज हैं जो पर्वत के अग्रभाग पर स्थित थे तथा देवो ने जिनकी स्तुति की थी। इन्होने इसके उत्तर में स्थिति स्पष्ट नही की। इस माया के कारण मरकर प्रथम तो यह स्वर्ग गया। पश्चात् जम्बूद्वीप में निकु ज पर्वत के शल्लकी वन में गजराज हुआ। रावण ने इसका त्रिलोककटक नाम रखा था। पपु० ८५. ११८-१५२, १६३

मृषानन्द—रौद्रध्यान का दूसरा भेद। झूठ बोलने में आनन्द मनाना मृषानन्द कहलाता है। कठोर वचन आदि इसके बाह्य चिह्न हैं। मपु० २१ ५०, हपु० ५६ २१, २३

मेखला—(१) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ५२

(२) कटिभाग का आवर्तक एक आभूषण-करधनी। इसे पुरुष भी धारण करते थे। मपु० ३.२७, १५ २३

(३) लका का समीपवर्ती वन। राम और रावण के युद्ध में हता-हत योद्धा यहाँ शीतल उपचार प्राप्त करते थे। पपु० ८ ४५२-४५३

(४) भरतक्षेत्र का एक देश। लवणाकुश और मदनाकुश ने इस पर विजय की थी। पपु० १०१ ८३

मेखलाग्रपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का तेईसवाँ नगर। मपु० १९.४८, ५३

मेखलादाम—कटि का आभूषण-करधनी। इसकी पट्टी चौड़ी होती है। मपु० ४.१८४

मेघंकरा—नन्दन वन के नन्दनकूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५.३३१-३३२

मेघ—(१) मेघदल नगर का एक श्रेष्ठी। इसकी सेठानी अलका तथा पुत्री चारुलक्ष्मी थी। भीमसेन पाण्डव इसका दामाद था। हपु० ४६.१४-१५

(२) सौधर्म और ऐशान युगल स्वर्गों का बीसवाँ इन्द्रक विमान एवं पटल। इस विमान की चारों दिशाओं में चवालीस श्रेणीबद्ध विमान हैं। हपु० ६.४५

(३) राजा समुद्रविजय का पुत्र। इसके ग्यारह बड़े भाई और तीन छोटे भाई थे। हपु० ४८.४४

(४) लंका का राक्षसवंशी एक नृप। यह इन्द्रप्रभ के बाद राजा हुआ था। पपु० ५.३९४

(५) विजयार्ध पर्वत का एक नगर। इसे लक्ष्मण ने जीता था। पपु० ९४.४

(६) यादवों का पक्षधर एक राजा। कृष्ण की सुरक्षा के लिए दायीं ओर तथा बायीं ओर नियुक्त किये गये राजाओं में यह एक राजा था। हपु० ५०.१२१

मेघकान्त—राम का पक्षधर एक विद्याधर नृप। इसकी ध्वजा में हाथी अंकित था। पपु० ५४.५९

मेघकुमार—एक नृप। दिग्विजय के समय जयकुमार ने इसे पराजित किया। तब स्वयं भरतेश चक्रवर्ती ने जयकुमार को वीरपट्ट बाँधा था। इस विजय से जयकुमार को मेघघोषा भेरी प्राप्त हुई थी। मपु० ४३.५०-५१, ४४.९३-९५

मेघकूट—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का पच्चीसवाँ नगर। यह अमृतवती देश में था। मपु० १९.५१, ७२.५४, हपु० २२.९६, ४३.४८

(२) निषध पर्वत का एक कूट। यह इस पर्वत की उत्तरदिशा में सीतोदा नदी के तट पर स्थित है। इसका विस्तार नाभि पर्वत के समान है। हपु० ५.१९२-१९३

(३) एक देव। यह सीतोदा नदी के तट पर स्थित मेघकूट पर क्रीडा करता है। हपु० ५.१९२-१९३

मेघघोष—भद्रिलपुर के राजा मेघनाद और रानी विमलश्री का पुत्र। हपु० ६०.११८

मेघघोषा—मेघकुमार को जीतने से उसके द्वारा जयकुमार को प्राप्त एक भेरी-वाद्य। मपु० ४४.९३, पापु० ३.९०

मेघदत्त—ऐरावत क्षेत्र में दिति नगर के निवासी विहीत सम्यग्दृष्टि और उसकी स्त्री शिवमति का पुत्र। यह अणुव्रती था। जिनपूजा में सदैव यह उद्यत रहता था। आयु के अन्त में यह समाधिमरण कर ऐशान स्वर्ग मे उत्पन्न हुआ। पपु० १०६.१८७-१८९

मेघदल—एक नगर। भीमसेन ने वनवास काल में यहाँ के राजा सिंह की पुत्री कनकावती तथा इसी नगर के मेघ सेठ की पुत्री चारुलक्ष्मी इन दोनों कन्याओं को विवाहा था। हपु० ४६.१४-१६

मेघध्वान—लंका का राक्षसवंशी एक विद्याधर राजा। इसे लंका का राज्य महारव राजा के पश्चात् प्राप्त हुआ था। पपु० ५.३९८

मेघनाद—(१) तीर्थंकर शान्तिनाथ के प्रथम गणधर चक्रायुद्ध के छठे पूर्वभव का जीव। जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में गगनवल्लभ नगर के राजा मेघवाहन और उसकी रानी मेघमालिनी का पुत्र। यह विजयार्ध की दोनों श्रेणियों का स्वामी था। मेरु पर्वत के नन्दन वन में प्रज्ञप्ति विद्या सिद्ध करते समय अपराजित बलभद्र के जीव अच्युतेन्द्र द्वारा समझाये जाने पर इसने सुरामरगुरू मुनि से दीक्षा ली थी। एक असुर ने प्रतिमायोग में विराजमान देखकर इसके ऊपर अनेक उपसर्ग किये। उपसर्ग सहते हुए यह अडिग रहा। इसने आयु के अन्त मे सन्यासमरण किया और यह अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ। मपु० ६३.२९-३६, पापु० ५.५-१०

(२) भद्रिलपुर नगर का राजा। जयन्तपुर के राजा श्रीधर की पुत्री विमलश्री इसकी रानी थी। इसने धर्म मुनि के समीप व्रत धारण कर लिया था। आयु के अन्त मे मरकर यह सहस्रार स्वर्ग मे अठारह सागर की आयु का धारी इन्द्र हुआ। इसकी पत्नी विमलश्री ने भी पद्मावती नामक आर्यिका से संयम धारण किया तथा आचाम्लवर्धन उपवास के फलस्वरूप वह आयु के अन्त में सहस्रार स्वर्ग में देवी हुई। मपु० ७१.४५३-४५७, हपु० ६०.११८-१२०

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३४

(४) अरिंजयपुर का राजा। इसकी पुत्री का नाम पद्मश्री था। इसे अपनी इस कन्या के कारण नभस्तिलक नगर के राजा वज्रपाणि से युद्ध करना पड़ा था। इसे एक केवली ने इसकी पुत्री का वर सुभौम चक्रवर्ती बताया था। अतः इतने सुभौम को चक्ररत्न प्राप्त होते ही उसे अपनी कन्या दे दी थी। सुभौम ने भी इसे विद्याधरों का राजा बना दिया था। शक्ति पाकर इसने अन्त में अपने वैरी वज्रपाणि को मार डाला था। प्रतिनारायण बलि राजा इसकी सन्तति मे छठा राजा था। हपु० २५.१४, ३०-३१, ३४

मेघनिनाद—चक्रपुर के राजा रत्नायुध का हाथी। इसे एक मुनिराज के दर्शन होने से जातिस्मरण हो गया था। फलस्वरूप इसने उनसे जलपान त्याग करके श्रावक के व्रत ले लिये थे। पूर्वभव में यह भरतक्षेत्र के चित्रकारपुर में राजा प्रतिभद्र के मंत्री विचित्रबुद्धि का पुत्र था। विचित्रमति इसका नाम था। इस पर्याय में यह श्रुतसागर मुनि से दीक्षित हो गया था। साकेतनगर मे वेश्या बुद्धिसेना पर आकृष्ट होकर यह मुनि पद से च्युत हुआ। राजा गन्धमित्र का रसोइया बना। मास पकाकर राजा को खिलाता रहा। राजा को प्रसन्न करके इसने वेश्या प्राप्त कर ली। भोगो में लिप्त रहा। अन्त में

मरकर नरक गया और नरक से निकलकर हाथी हुआ था। हपु० २७ ९५-१०६

मेघपाट—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक देश। महावीर विहार करते हुए यहाँ आये थे। पापु० १ १३३

मेघपुर—(१) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। रथनूपुर के राजा ज्वलनजटी को उसकी पुत्री स्वयंप्रभा के लिए मन्त्री बहुश्रुत ने यहाँ के राजा पद्मरथ का नाम प्रस्तावित किया था। मपु० ६२ २५-३०, ६३, ६६, हपु० १९ २५

(२) धातकीखण्ड द्वीप के भरतक्षेत्र मे विजयार्ध पर्वत की दक्षिण-श्रेणी का नगर। धनश्री इसी नगर के राजा धनंजय की पुत्री थी। मपु० ७१ २५२-२५३

(३) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिण-श्रेणी का एक नगर। विद्याधर अतीन्द्र यहाँ का राजा था। इन्द्र ने वरुण विद्याधर को लोकपाल के रूप में नियुक्ति कर उसे इसी नगर की पश्चिम दिशा में स्थापित किया था। पपु० ६ २-३, ७ १११

मेघप्रभ—(१) विद्याबल से युक्त एक विद्याधर। अर्ककीर्ति और जयकुमार के बीच हुए युद्ध में यह जयकुमार का पक्षधर था। मपु० ४४ १०८, पापु० ३ ९६

(२) विद्याधर खरदूषण का पिता। पपु० ९ २२

(३) अयोध्या का राजा। इसकी रानी सुमंगला थी। ये दोनों तीर्थंकर सुमतिनाथ के माता-पिता थे। पपु० २० ४१

मेघमाल—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का तिरेपनवाँ नगर। हपु० २२ ९१

(२) पश्चिम विदेहक्षेत्र में नील और सीतोदा के मध्य स्थित चौथा वक्षारगिरि। हपु० ५ २३२

मेघमाला—मथुरा के राजा रत्नवीर्य की रानी। लान्तवेन्द्र आदित्याभ के जीव मेरु की यह जननी थी। हपु० २७ १३५

मेघमालिनी—(१) नन्दन वन के हिमवत् कूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ३३३

(२) नारद देव की देवी। हपु० ६० ८०

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के सुरेन्द्रकान्तार नगर के राजा मेघवाहन की रानी। इसके विद्युत्प्रभ पुत्र तथा ज्योतिर्माला पुत्री थी। मपु० ६२ ७१-७२, पापु० ४ २९-३०

(४) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में व्योमवल्लभ नगर के राजा मेघवाहन की रानी। मेघनाद इसका पुत्र था। मपु० ६३ २९-३०, पापु० ५ ५-६, दे० मेघनाद

(५) राजा हेमांगद की रानी। यह राजा घनरथ की जननी थी। मपु० ६३ १८१

मेघमाली—रथनूपुर के राजा इन्द्र विद्याधर का पक्षधर एक देव। इसने राक्षस-सेना को भग कर दिया था। पपु० १२ २००-२०४

मेघमुख—आवर्त म्लेक्ष का कुलदेवता। इसने भरतेश के सेनापति जय-कुमार के साथ युद्ध किया था। इस युद्ध में यह पराजित हुआ था। इसी विजय के अवसर पर जयकुमार को "मेघस्वर" नाम मिला था। मपु० ६२ ५६-७१, हपु० ११ ३२-३७

मेघरथ—(१) भद्रिलपुर का निवासी और मलय देश का राजा। इसकी रानी सुभद्रा और पुत्र, दृढरथ था। इसने सुमन्दर मुनि से दीक्षा लेकर तप किया और बनारस में यह केवली हुआ। बारह वर्ष तक विहार करने के बाद राजगृही से इसने मोक्ष पाया। मपु० ५६ ५४, हपु० १८ ११२-११९

(२) सुराष्ट्र देश में गिरिनगर के राजा चित्ररथ और रानी कनकमालिनी का पुत्र। पिता के दीक्षित होने पर राज्य प्राप्त करते ही इसने मास पकाने में दक्ष अमृत-रसायन रसोइए से पिता द्वारा दिये गये बारह गाँवों में से ग्यारह गाँव वापिस ले लिये थे। जिस मुनि के उपदेश से यह श्रावक बना था तथा इसके पिता दीक्षित हुए थे उन मुनिराज को अमृतरसायन रसोइए ने कड़वी तुम्बी का आहार देकर मार डाला था। मपु० ७१ २७०-२७५, हपु० ३३ १५०-१५४

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी का एक क्षत्रिय राजा। तीर्थंकर सुमतिनाथ इसकी रानी मंगला के गर्भ से ही जन्मे थे। इसका अपर नाम मेघप्रभ था। मपु० ५१ १९-२०, २३-२४ दे० मेघप्रभ

(४) तीर्थंकर शान्तिनाथ के दूसरे पूर्वभव का जीव-जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा घनरथ और उसकी रानी मनोहरा का पुत्र। यह वज्रायुध का जीव था। इसकी दो रानियाँ थी—प्रियमित्रा और मनोरमा। इनमें प्रियमित्रा रानी से इसके नन्दिवर्धन पुत्र हुआ। जब मेघरथ एक शिला पर वनक्रीडा करते हुए बैठे थे उसी समय इनके ऊपर से जाते हुए एक विद्याधर के विमान की गति अवरुद्ध हो गयी। विद्याधर ने इन्हें शिला सहित उठाना चाहा किन्तु इन्होंने पैर के अगूठे से जैसे ही शिला दबाई कि वह विद्याधर आकुलित हो उठा। विद्याधर की पत्नी के पति-भिक्षा माँगने पर इन्होंने उस विद्याधर को मुक्त कर दिया था। ईशानेन्द्र ने इनके सम्यक्त्व की प्रशंसा की थी। प्रशंसा सुनकर परीक्षा करने की दृष्टि से अतिरूपा और सुरूपा नाम की दो देवियों ने इनके कामोन्माद को बढ़ाने की अनेक चेष्टाएँ की किन्तु दोनों विफल रही। पिता घनरथ तीर्थंकर से उपासक का धर्म श्रवण-कर पुत्र मेघसेन को राज्य सौंपकर भाई दृढ़रथ तथा अन्य सात हजार राजाओं के साथ इन्होंने दीक्षा ले ली थी। तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध कर ये दृढ़रथ के साथ नभस्तिलक पर्वत पर एक मास का प्रायोपगमन-सन्यास धारण करते हुए शान्त परिणामों से शरीर छोड़-कर अहमिन्द्र हुए और स्वर्ग से चयकर तीर्थंकर शान्तिनाथ हुए। मपु० ६३ १४२-१४८, २३६-२४०, २८१-२८७, ३०६ ३११, ३३१, ३३६-३३७, पपु० ७ ११०, २० १६४-१६५, पापु० ५ ५३-१०६

(५) जम्बूद्वीप सम्बन्धी मगला देश के भद्रिलपुर नगर के नृप। इनकी रानी सुभद्रा तथा पुत्र दृढरथ था। इन्होंने मन्दिरस्थविर मुनिराज से धर्म सुना था। इससे इन्हे ससार से विरक्ति हुई। इन्होने पुत्र दृढरथ को राज्य सौंपकर सयम धारण कर लिया। पश्चात् विहार कर ये बनारस के प्रियगुखण्ड वन में ध्यान द्वारा घातिया कर्मों को नाशकर केवली हुए तथा आयु के अन्त में राजगृह नगर के समीप इन्होने सिद्धपद पाया। मपु० ७० १८२-१९२

(६) हस्तिनापुर का राजा। पद्मावती इसकी रानी तथा विष्णु और पद्मरथ पुत्र थे। यह पद्मरथ को राज्य सौंपकर पुत्र विष्णुकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ७० २७४-२७५, पापु० ७ ३७-३८

मेघरव—(१) एक पर्वत। यहाँ एक स्वच्छ जल से भरी वापी थी। दशानन और मन्दोदरी दोनो यहाँ आये थे। उन्होने इस पर्वत की वापी मे छ हजार कन्याओ को क्रीडारत देखा था। पपु० ८ ९०-९५

(२) विन्ध्यवन का एक तीर्थ। इन्द्रजित् और मेघनाद के तप करने से यह इस नाम से विख्यात हुआ। पपु० ८० १३६

मेघवती—नन्दन वन के मन्दर कूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ३२९, ३३२

मेघवाण—विद्यामय एक बाण। विद्याधर सुनमि द्वारा फेंके गये इस बाण को जयकुमार ने पवन बाण से नष्ट किया था। मपु० ४४ २४२

मेघवाहन—(१) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के अग देश की चम्पा नगरी का एक कुरुवशी राजा। मपु० ७२ २२७, हपु० ६४४, पापु० २३ ७८-७९

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के सुरेन्द्रकान्तार नगर का राजा। मेघमालिनी इसकी रानी, विद्युत्प्रभ पुत्र तथा ज्योतिर्माला पुत्री थी। मपु० ६२ ७१-७२ पापु० ४ २९-३०

(३) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पवत की उत्तरश्रेणी के व्योमवल्लभ नगर का नृप एक विद्याधर। राजा मेघनाद इसके पिता तथा रानी मेघमालिनी इसकी जननी थी। मपु० ६३ २९-३०, पापु० ५ ५-६

(४) एक विद्याधर। यह भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के रथनूपुर नगर का राजा था। प्रीतिमती इसकी रानी तथा घनवाहन इसका पुत्र था। पापु० १५ ४-८

(५) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के शिवमन्दिर नगर का राजा। इसकी विमला रानी और इससे प्रसूता कनकमाला पुत्री थी। मपु० ६३ ११६-११७

(६) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के चक्रवालनगर का राजा। यह पूर्णघन का पुत्र था। इसका अपरनाम तोयदवाहन था। सहस्रनयन और पूर्णघन के बीच हुए युद्ध में पिता पूर्णघन के मारे जाने पर सहस्रनयन ने इसे चक्रवालनगर से निर्वासित कर दिया था। विद्याधरो के पीछा करने पर यह अजितनाथ तीर्थंकर की शरण मे गया वहाँ इसका शत्रु सहस्रनयन भी पहुँचा था। यहाँ अजित जिन का प्रभामण्डल देखकर दोनो वैरभाव भूल गये थे। राक्षसो के इन्द्र भीम और सुभीम ने सन्तुष्ट होकर इसे लका मे रहने का परामर्श देते हुए देवाधिष्ठित हार और अलकारोदय नगर तथा राक्षसी-विद्या प्रदान की थी। अन्त में इस विद्याधर ने महाराक्षस पुत्र को राज्य सौंपकर अजित जिन के पास दीक्षा ले ली थी। इसके साथ अन्य एक सौ दस विद्याधर भी वैराग्य प्राप्त कर सयमी हुए और मोक्ष गये। पपु० ५ ७६-७७, ८५-९५, १६०-१६७, २३९-२४०

(७) दशानन और रानी मन्दोदरी का पुत्र। इसका जन्म नाना के यहाँ हुआ था। रावण पक्ष से युद्ध करते हुए रामपक्ष के योद्धा द्वारा बाँध लिये जाने पर इसने बन्धनो से मुक्त होने पर निर्ग्रन्थ साधु होकर पाणिपात्र से आहार ग्रहण करने की प्रतिज्ञा की थी। रावण का दाह सस्कार कर पद्म सरोवर पर राम के द्वारा मुक्त किये जाने पर लक्ष्मण ने इसे पूर्ववत् रहने के लिए आग्रह किया था। इसने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार निरभिलाषा प्रकट करके दीक्षा ले ली थी। अन्त में यह केवली होकर मुक्त हुआ। पपु० ८ १५८, ७८ ८-९, १४-१५, २४-२६, ३०-३१, ८१-८२, ८० १२८

(८) राम का सामन्त। यह रावण की सेना से युद्ध करने ससैन्य आया था। पपु० ५८ १८-१९

मेघविजय—जम्बूद्वीप में चक्रपुर नगर के राजा रत्नायुध का एक हाथी। वज्रदन्त मुनि से लोकानुयोग का वर्णन सुनकर इसे अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया था। अत इसने योग धारण कर हिंसा आदि पाँच पापो और मद्य, मास एव मधु का त्याग कर अष्टमूलगुणो को धारण कर लिया था। इसका अपर नाम मेघनिनाद था। मपु० ५९ २४६-२६७ दे० मेघनिनाद

मेघवेग—त्रिकूटाचल का राजा। यह सध्याकार नगर के राजा सिंहघोष की पुत्री हृदयसुन्दरी को चाहता था किन्तु उसे वह प्राप्त नही कर सका था। हपु० ४५ ११५

मेघश्री—राजा विनमि विद्याधर के वशज राजा पुलस्त्य की रानी। रावण की यह जननी थी। मपु० ६८ ११-१२

मेघसेन—पुण्डरीकिणी नगरो के राजा मेघरथ का पुत्र। दीक्षा लेते समय इसके पिता ने राज्य इसे ही सौंपा था। मपु० ६३ ३१०

मेघस्वर—सुलोचना के स्वयवर में सम्मिलित एक भूमिगोचरी नृप जयकुमार। पापु० ३ ३७ दे० मेघमुख

मेघा—तीसरी बालुकाप्रभा-नरक पृथिवी का एक रूढ नाम। हपु० ४ २२० दे० वालुकाप्रभा

मेघानीक—विद्याधर विनमि के अनेक पुत्रो मे एक पुत्र। भद्रा और सुभद्रा इसकी बहिनें थी। हपु० २२ १०४

मेघेश्वर—वृषभदेव के इकहत्तरवें गणधर। पपु० ९ ७५, हपु० १२.६७ दे० जयकुमार

मेदार्य—तीर्थङ्कर महावीर के दसवें गणधर। हपु० ३ ४३, दे० महावीर

मेधावी—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में असुरसगीत नगर के दैत्यराज मय का मत्री। पपु० ८ ४३, ४७

मेनका—देवागना। इन्द्र की अप्सरा। यह पूर्वभव में एक मालिन की

कन्या थी। इसका नाम पुष्पवती था। श्रावकव्रत पूर्वक मरने से यह देवागना हुई थी। मपु० ४६ २५७-२५९, पापु० ७ ३१

मेय—मेय, देश, तुला और काल के भेद से चतुर्विध मानो में प्रथम मान। प्रस्थ आदि के द्वारा मापने योग्य वस्तु मेय कहलाती है। पपु० २४ ६०

मेरक—तीसरा प्रतिनारायण। मेरुक और मधु ये इसके दो अपर नाम थे। मपु० ५९ ८८, पपु० २० २४४, हपु० ६० २९१, वीवच० १८ ११४ दे० मधु

मेरु—(१) तीर्थङ्कर वृषभदेव के तेईसवें गणधर हपु० १२ ५९

(२) सिन्धु देश के वीतभय नगर का राजा। इसकी रानी का नाम चन्द्रवती और पुत्री का नाम गौरी था। कृष्ण इसके दामाद थे। इसने कृष्ण से अपनी पुत्री गौरी विवाही थी। पपु० ४४ ३३-३६, हपु० ४४ ३३

(३) एक पर्वत। देव तीर्थङ्करो के जन्माभिषेक के लिए इसी पर्वत पर पाण्डुकशिला की रचना करते हैं। इसका विस्तार एक लाख योजन होता है। यह एक हजार योजन पृथिवीतल से नीचे और निन्यान्नवें हज़ार योजन पृथिवीतल के ऊपर है। इस पर्वत का स्कन्ध एक हज़ार योजन है। इसके भूमितल पर भद्रशाल नामक प्रथम वन है। इस वन से दो हज़ार कोश ऊपर इसकी प्रथम मेखला पर नन्दन वन है। इस वन से साढे बासठ हज़ार योजन ऊपर तीसरा सौमनस-वन और इसके भी छत्तीस हज़ार योजन ऊपर पाण्डुक वन है। इन चारो वनो से शोभित यह मेरु पर्वत अनादिनिधन, सुवृत्त और स्वर्णमय है। यह एक लाख योजन ऊँचा है। इस पर सर्वदा प्रकाशमान देवार्चित अकृत्रिम चैत्यालय विद्यमान हैं। इसकी पश्चिमोत्तर दिशा में स्वर्णमय गन्धमादन पर्वत, पूर्वोत्तर दिशा में वैडूर्यमणिमय माल्यवान्, पूर्वदक्षिणदिशा में रजतमय सौमनस और दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्वर्णमय विद्युत्प्रभ पर्वत हैं। इन चारो पर्वतो पर क्रम से सात, नौ, सात और नौ कूट हैं। यह मध्यलोक के मध्य में स्थित लवणसमुद्र से आवेष्टित जम्बूद्वीप के मध्य में नाभि के समान है। मपु० ४४७-४८, ५ १६२-२१६, हपु० ५ १, २० ५३, ३८ ४४, वीवच० ८ १०८-११६

(४) उत्तर-मथुरा के राजा अनन्तवीर्य और रानी मेरुमालिनी का पुत्र। आदित्यप्रभदेव का जीव। इसने विमलवाहन तीर्थंकर से अपने पूर्वभव सुनकर दीक्षा ग्रहण की थी तथा उनका यह गणधर हुआ। अन्त मे यह सप्त ऋद्धियो से युक्त होकर मोक्ष गया। नौवें पूर्वभव में यह कौशल देश के वृद्धग्राम में ब्राह्मण मृगायण की पुत्री मथुरा, आठवें में पोदनपुर के राजा पूर्णचन्द्र की रानी रामदत्ता, सातवें में महाशुक्र स्वर्ग में भास्करदेव, छठे में धरणीतिलक नगर के राजा अशनिवेग की पुत्री श्रीधरा, पाँचवें में कापिष्ठ स्वर्ग के रुचक विमान का देव, चौथे में धरणीतिलक के राजा अतिवेग की पुत्री रत्नमाला, तीसरे में स्वर्ग में देव, दूसरे में पूर्वधातकीखण्ड के गन्धिल देश की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास का पुत्र वीतमय और प्रथम पूर्वभव में लान्तव स्वर्ग में आदित्यप्रभ देव हुआ था। इसके पिता का अपर नाम रत्नवीर्य और माता का अपर नाम अमितप्रभा था। मपु० ५९ २०७-३०९, हपु० २७ १३५-१३६

(५) कृष्ण का पक्षधर इक्ष्वाकुवंशी राजा। यह एक अक्षौहिणी सेना का अधिपति था। हपु० ५० ७०

(६) राजा इन्द्रमत् का पुत्र और मन्दर का पिता। पपु० ६ १६१

(७) राम का सामन्त। राम-रावण युद्ध में यह राम की ओर से रावण से लड़ा था। मपु० ५८ १५-१७

(८) मेघपुर नगर का राजा एक विद्याधर। इसकी रानी मघोनी तथा पुत्र मृगारिदमन था। पपु० ६ ५२५

(९) महापुर नगर का एक सेठ। इसकी पत्नी धारिणी और पुत्र पद्मरुचि था। पपु० १०६ ३८

(१०) तीर्थंकर विमलनाथ के एक गणधर। मपु० ५९ १०८

मेरुकदत्त—एक श्रेष्ठी। इसकी स्त्री का नाम धारिणी था। इसके शास्त्रज्ञ चार मत्री थे—भूतार्थ, शकुनि, वृहस्पति और धन्वन्तरि। इसने और इसकी पत्नी दोनो ने पुष्कलावती देश के धान्यकमाल नगर के सामन्त शक्तिवेग और उसकी पत्नी अटवीश्री को मुनियो को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त करते हुए देखकर अगले जन्म में उन दोनो को अपने यहाँ उत्पन्न होने का निदान किया था। मपु० ४६ ९४-९६, ११२-११३, १२३-१२५

मेरुकान्त—मन्दरकु ज नगर का राजा। श्रीरम्भा इसकी रानी और पुरन्दर पुत्र था। पपु० ६ ४०८-४०९

मेरुचन्द्र—भरतक्षेत्र के वीतशोक नगर का राजा। इसकी रानी चन्द्रमती थी। इसने पुत्री गौरी कृष्ण को दी थी। हपु० ६० १०३-१०४

मेरुदत्त—यादवो का एक पक्षधर राजा। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध के समय इसके रथ में सफेद और लाल रग के पाँच वर्ष के घोडे जोते गये थे। यह राजा नग्नजित् का पुत्र था। हपु० ५२ २१

मेरुनन्दना—नन्दनवन के एक व्यन्तरदेव की स्त्री। यह आगामी चौथे भव में कृष्ण की पटरानी जाम्बवती हुई थी। हपु० ६० ४६

मेरुपक्तिव्रत—एक व्रत। इसमें जम्बूद्वीप, पूर्वधातकीखण्ड, पश्चिम धातकीखण्ड, पूर्व पुष्करार्ध, पश्चिम पुष्करार्ध इस प्रकार ढाई द्वीपों के पाँच मेरु, प्रत्येक मेरु के चार-चार वन तथा प्रत्येक वन के चार-चार चैत्यालयो को लक्ष्य करके अस्सी उपवास और बीस वन सम्बन्धी बीस बेला किये जाते हैं। सौ स्थानो की सौ पारणाएँ करने का विधान होने से इसमें दो सौ बीस दिन लगते है। हपु० ३४ ८५

मेरुमती—गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी के राजा इन्द्रगिरि की रानी। यह कृष्ण की पटरानी गान्धारी की जननी थी। मपु० ७१ ४२५-४२८, हपु० ६० ९३

मेरुमालिनी—उत्तर मथुरा नगरी के राजा अनन्तवीर्य की रानी। मेरु इसका पुत्र था। मपु० ५९ ३०२ दे० मेरु–४

मेरुषेणा—तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के सघ की तीन लाख तीन हजार छ सौ आर्यिकाओ में प्रधान आर्यिका। मपु० ५० ६१-६२

मेरुमती—गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी के राजा इन्द्रगिरि की

रानी। हिमगिरि इसका पुत्र तथा गान्धारी पुत्री थी। हपु० ४४ ४५-४८

मेष—पालतू पशु-भेड। आगम में अप्रत्याख्यानावरण माया की तुलना इसी पशु के सीगो से की गयी है। मपु० ८ २३१

मेषकेतन—एक देव। इसने सीता की अग्नि परीक्षा के समय सीता के ऊपर आये उपसर्ग को दूर करने के लिए इन्द्र से कहा था किन्तु इन्द्र ने सकलभूषण मुनि की वन्दना की शीघ्रता के कारण इसे ही सीता की सहायता करने की आज्ञा दी थी। इसने भी अग्निकुण्ड को जल-कुण्ड बनाकर और सीता को सिंहासन पर विराजमान दर्शाकर सीता के शील की रक्षा की थी। पपु० १०४ १२३-१२६, १०५ २९, ४८-५०

मेषशृंग—एक वृक्ष। तीर्थंकर नेमिनाथ को इसी वृक्ष के नीचे वैराग्य हुआ था। पपु० २० ५८

मैत्री—(१) मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ्य इन चार भावनाओ में प्रथम भावना-प्राणियो के सुखी रहने की समीचीन वृद्धि। मपु० २० ६५

(२) मित्रता—दो प्राणियो का एकचित्त होना। मपु० ४६ ४०

मैत्रेय—तीर्थंकर महावीर के आठवें गणघर। मपु० ७४ ३७३, हपु० ३.४१-४३ दे० महावीर

मैथिक—राम के समय का सब्जी को स्वादिष्ट बनाने में व्यवहृत एक मसाला-मैथी। पपु० ४२ २०

मैथुन—आहार, भय, मैथुन और परिग्रह इन चार सज्ञाओ मे तीसरी सज्ञा-कामेच्छा। मपु० ३६ १३१

मैरेय—उत्तरकुरु-भोगभूमि के निवासियो का एक पेय पदार्थ। यह मद्याग जाति के कल्पवृक्षो से निकाला जाता था। यह सुगन्धित और अमृत के समान स्वादिष्ट होता था। मपु० ९ ३७

मोक—चक्रवर्ती भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा छोडे गये देशो में भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ६५

मोक्ष—(१) अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के कर्म प्रकृति चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में ग्यारहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१-८६

(२) चार पुरुषार्थो मे चौथा पुरुषार्थ। यह धर्म साध्य है और पुरुषार्थ इसका साधन है। हपु ९ १३७

(३) कर्मों का क्षय हो जाना। यह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र रूप मार्ग से प्राप्त होता है। ध्यान और अध्ययन इसके साधन हैं। यह शुक्लध्यान के बिना नही होता है। इसे प्राप्त करने पर जीव "सिद्ध" सज्ञा से सम्बोधित किये जाते है। मोक्ष प्राप्त जीवो को अतुल्य अन्तराय से रहित अत्यन्त सुख प्राप्त होता है। इससे अनन्तज्ञान आदि आठ गुणो की प्राप्ति होती है। स्त्रियो के दोष स्वरूप और चचल होने से उन्हें इसकी प्राप्ति नही होती। जीव स्वरूप की अपेक्षा रूप रहित है परन्तु शरीर के सम्बन्ध से रूपी हो रहा है अत· जीव का रूप रहित होना ही मोक्ष कहलाता है। इसके दो भेद हैं—भावमोक्ष और द्रव्यमोक्ष। कर्मक्षय से कारण भूत अत्यन्त शुद्ध परिणाम भावमोक्ष और अन्तिम शुक्लध्यान के योग द्वारा सर्व कर्मो से आत्मा का विश्लेष होना द्रव्यमोक्ष है। मपु० २४ ११६, ४३ १११, ४६ १९५, ६७ ९-१०, पपु० ६ २९७, हपु० २ १०९, ५६ ८३-८४, ५८ १८, वीवच० १६.१७२-१७३

मोक्षज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०८

मोक्षण—एक विद्यास्त्र। चण्डवेग ने वसुदेव के लिए अनेक अस्त्रो में एक अस्त्र यह भी दिया था। हपु० २५ ४८

मोक्षमार्ग—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनो से समन्वित मुक्ति मार्ग। मपु० २४ ११६, १२०, पपु० १०५ २१०, हपु० ४७ १०-११

मोक्षशिला—सिद्धशिला। यह लोक के अग्रभाग मे वर्तुलाकार पैंतालीस लाख योजन विस्तृत तथा बारह योजन मोटी है। वीवच० ११ १०९

मोघ—मानुषोत्तर पर्वत के अककूट का निवासी देव। हपु० ५ ६०६

मोघवाक्—सत्यप्रवाद की बारह भाषाओ मे चोरी में प्रवृत्ति करानेवाली एक भाषा। हपु० १० ९६

मोच—मगध देश का एक फल-केला। भरतेश ने यह फल चढाकर वृषभदेव की पूजा की थी। मपु० १७ २५२, पपु० २ ११

मोचनी—दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३०

मोदक्रिया—उपासक की त्रेपन क्रियाओ में पाँचवी क्रिया। यह गर्भ-पुष्टि के लिए नौवें मास में की जाती है। इसमें गर्भिणी के शरीर पर गात्रिकाबन्ध (बीजाक्षर) लिखा जाता है। उसे मगलमय आभूषण आदि पहनाये जाते है तथा रक्षा के लिए ककणसूत्र बाँधा जाता है। इस क्रिया में निम्न मन्त्र पढे जाते हैं—सज्जाति-कल्याणभागी भव, सद्गृहितकल्याणभागी भव, वैवाहककल्याणभागी भव, मुनीन्द्रकल्याण-भागी भव, सुरेन्द्रकल्याणभागी भव, मन्दराभिषेक कल्याणभागी भव, यौवराज्यकल्याणभागी भव, महाराजकल्याणभागी भव, परमराज्य-कल्याणभागी भव और आर्हन्त्यकल्याणभागी भव। मपु० ३८ ५५, ८३-८४, ४० १०३-१०७

मोह—सासारिक वस्तुओ में ममत्व भाव। इसे नष्ट करने के लिए परिग्रह का त्याग कर सब वस्तुओ में समताभाव रखा जाता है। यह अहित और अशुभकारी है। इससे मुक्ति नही होती। जीव इसी के कारण आत्महित मे भ्रष्ट हो जाता है। मपु० १७.१९५-१९६, ५९.३५, पपु० १२३ ३४, वीवच० ५ ८, १०३

मोहन—(१) एक विद्यास्त्र। वसुदेव के साले चण्डवेग ने यह अस्त्र वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४८

(२) नागराज द्वारा प्रद्युम्न को प्रदत्त तपन, तापन, मोहन विलापन और मारण इन पाँच बाणो में एक बाण। हपु० ७२ ११८-११९

(३) राक्षसवशी एक विद्याधर नृप। यह भीम के बाद राजा बना था। पपु० ५ ३९५

मोहनीय—आठ कर्मो मे चौथा कर्म। इसकी अट्ठाईस प्रकृतियाँ होती हैं। मूलत इसके दो भेद हैं—दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय। इसमें

दर्शनमोहनीय की तीन उत्तर प्रकृतियाँ हैं—मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व। चारित्र मोहनीय के दो भेद हैं—नोकषाय और कषाय। इसमें हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसकवेद ये नौ नोकषाय हैं। अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन के भेद से कषाय के मूल में चार भेद हैं। अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यग्दर्शन तथा स्वरूपाचरण चारित्र का घात करती है। अप्रत्याख्यानावरण हिंसा आदि रूप परिणतियो का एक देश त्याग नही होने देती। प्रत्याख्यानावरण से जीव सकल सयमी नही हो पाता तथा सज्वलन यथाख्यातचारित्र का उद्भव नही होने देती। इसकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर तथा जघन्य स्थित अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होती है। हपु० ५८.२१६-२२१, २३१-२४१, वीवच० १६ १५७, १६०

मोहारिविजयी—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

मोहासुरारि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६

मौक—जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र का एक देश। विहार करते हुए महावीर यहाँ आये थे। हपु० ३ ४

मौक्तिकहारावलि—गोल और आकार में बडे मोतियो से गूथा गया एक लडी का हार। मपु० ७ २३१, १५ ८१

मौखर्य—अनर्थदण्डव्रत का तीसरा अतिचार-हास्यमिश्रित वचन बोलना। हपु० ५८ १७९

मौंजीबन्धन—रत्नत्रय विशुद्धि का प्रतीक तीन लर की मूँज की पतली रस्सी से निर्मित कटिबन्धन। इसे द्विज का चिह्न माना गया है। मपु० ३८ ११०, ४०.१५७

मौण्ड्य—तीर्थंकर महावीर के छठे गणधर। इनके अपर नाम माण्डव्य और मौन्द्र थे। मपु० ७४ ३७३, हपु० ३ ४२, वीवच० १९ २०६

मौण्डकौशिक—चण्डकौशिक ब्राह्मण और सोमश्री ब्राह्मणी का पुत्र। इसका अपर नाम मौड्यकौशिक था। मपु० ६२ २१३-२१६, पापु० ४ १२६-१२८

मौनाध्ययनवृत्तत्व—गर्भाधान से निर्वाण पर्यन्त गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओ में पैंतीसवी क्रिया। दीक्षा लेकर उपवास के बाद पारणा करके साधु का शास्त्र समाप्ति पर्यन्त मौनपूर्वक अध्ययन करना मौनाध्ययनवृत्तत्व कहलाता है। इसमें मौनी, विनीत, मन-वचन-काय से शुद्ध साधु को गुरु के समीप शास्त्रो का अध्ययन करना होता है। इससे इस लोक में योग्यता की वृद्धि तथा परलोक में सुख की प्राप्ति होती है। मपु० ३८ ५८, ६३, १६१-१६३

मौन्द्र—तीर्थङ्कर महावीर के छठें गणधर। मपु० ७४.३७३ दे० महावीर

मौर्य—तीर्थङ्कर महावीर के पाँचवें गणधर। मपु० ७४ ३७३, वीवच० १९ २०६ दे० महावीर

मौर्यपुत्र—तीर्थङ्कर महावीर के सातवें गणधर। हपु० ३ ४२ दे० महावीर

मौलि—एक प्रकार का दैदीप्यमान मुकुट। यह सामान्य मुकुट की अपेक्षा अधिक अच्छा माना जाता है। इसे स्वर्ग के देव धारण करते हैं। यह रत्न-जटित और स्वर्ण से वेष्टित होता है। मपु० ९ १८९, पपु० ११ ३२७, ७१ ७

म्लेच्छ—मनुष्य जाति का एक भेद-आर्येतर मनुष्य। ये सदाचारादि गुणो से रहित और धर्म-कर्म से हीन होते हुए भी अन्य आचरणो से समान होते हैं। भरतेश चक्रवर्ती ने इन्हें अपने अधीन किया था और इनसे उपभोग के योग्य कन्या आदि रत्न प्राप्त किये थे। ये हिंसाचार, मासाहार, पर-धनहरण और धूर्तता करने में आनन्द मनाते थे। ये अर्धबर्बर देश में रहते थे। जनक के देश को इन्होने उजाडने का उद्यम किया था किन्तु वे सफल नही हो सके थे। जनक के निवेदन पर राम-लक्ष्मण ने वहाँ पहुँचकर उन्हें परास्त कर दिया था। पराजित होकर ये सह्य और विन्ध्य पर्वतो पर रहने लगे थे। ये लाल रग का शिरस्त्राण धारण करते थे। इनका शरीर पुष्ट और अजन के समान काला, सूखे पत्तो के समान कातिवाला तथा लाल रग का होता था। ये पत्ते पहिनते थे। हाथो में ये हथियार लिये रहते थे। मास इनका भोजन था। इनकी ध्वजाओ में वराह, महिष, व्याघ्र, वृक और कक चिह्न अकित रहते थे। मपु० ३१ १४१-१४२, ४२ १८४, पपु० १४ ४१, २६ १०१, २७.५-६, १०-११, ६७-७२

म्लेच्छखण्ड—आर्येतर मनुष्यो की आवासभूमि। मपु० ७६ ५०६-५०७

य

यक्ष—(१) एक विद्याधर। इसने राक्षस विद्याधर के साथ युद्ध किया था। पपु० १ ६४

(२) यक्षगीत नगर के विद्याधर। इन्द्र विद्याधर ने यहाँ के विद्याधरो को इस नगर का निवासी होने के कारण यह नाम दिया था। पपु० ७ ११६-११८

(३) व्यन्तर देवो का एक भेद। ये जिनेन्द्र के जन्माभिषेक के समय सपत्नीक मनोहर गीत गाते हैं। पपु० ३ १७९-१८०

(४) भरतक्षेत्र के क्रौंचपुर नगर का एक राजा। राजिला इसकी रानी थी। इसके यहाँ यक्ष नामक एक पालतू कुत्ता था। उसने एक दिन रत्नकम्बल में लिपटा हुआ एक शिशु लाकर इसे दिया था। राजा और रानी ने इस कुत्ते से प्राप्त होने के कारण उसका यक्षदत्त नाम रखा था। पपु० ४८ ३६-३७, ४८-५०

(५) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में पलाशकूट ग्राम के यक्षदत्त और यक्षदत्ता का ज्येष्ठ पुत्र। यह यक्षिल का बडा भाई था। निर्दय होने से इसे लोग निरनुकम्प कहते थे। इसने एक अन्धे सर्प के ऊपर से बैलगाडी निकाल कर उसे मार डाला था। इस कृत्य से दुःखी होकर छोटे भाई द्वारा समझाये जाने पर यह शान्त हुआ। आयु के अन्त में मरकर यह निर्नामिक हुआ। इसका दूसरा नाम यक्षलिक था। मपु० ७१ २७८-२८५, हपु० ३३ १५७-१६२

(६) कृष्ण की पटरानी सुसीमा के पूर्वभव का पिता। यह जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के शालिग्राम का निवासी था। इसकी पत्नी देवसेना तथा पुत्री यक्षदेवी थी। इसका दूसरा नाम यक्षिल था। मपु० ७१. ३९०, हपु० ६० ६२-६७

यक्षगीत—विद्याधरों का एक नगर। इन्द्र विद्याधरों ने यहाँ के निवासी विद्याधरों को यक्ष सज्ञा दी थी। पपु० ७ ११८ दे० यक्ष–२

यक्षदत्त—(१) क्रौंचपुर नगर के राजा यक्ष और रानी राजिला का पालित पुत्र। मित्रवती इसकी माता और बन्धुदत्त पिता था। पपु० ४८ ३६-५९

(२) भरतक्षेत्र में मलय देश के पलाशनगर का गृहस्थ। यह यक्ष का पिता था। पत्नी का नाम यक्षिला और पुत्रों के नाम यक्षलिक तथा यक्षस्व थे। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्ष–५

यक्षदत्ता—राजा यक्षदत्त की रानी और यक्ष तथा यक्षिल की जननी। इसका अपर नाम यक्षिला था। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५८ दे० यक्ष–५

यक्षदेवी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में शालिग्राम के निवासी यक्ष और उसकी पत्नी देवसेना की पुत्री। इसने धर्मसेन मुनि से व्रत ग्रहण कर मासोपवासी एक मुनिराज को आहार दिया था। इसे अन्त में एक अजगर ने निगल लिया था जिससे मरकर यह हरिवर्ष भोगभूमि में उत्पन्न हुई। इसके पिता का दूसरा नाम यक्षिल था। यक्ष की आराधना से जन्म होने के कारण यह इस नाम से प्रसिद्ध हुई। मपु० ७१ ३८८-३९२, हपु० ६० ६२-६७, दे० यक्ष–६

यक्षपुर—विद्याधरों का एक नगर। कौतुकमगल नगर के विद्याधर व्योमबिन्दु की बड़ी पुत्री कौशिकी इसी नगर के निवासी विश्रवा धनिक से विवाही गयी थी। पपु० ७ १२६-१२७

यक्षमाली—किन्नरपुर नगर का विद्याधर राजा। नमि विद्याधर इसका भानजा था। जाम्बव द्वारा नमि विद्याधर को मारने के लिए भेजी गयी माक्षित-लक्षिता विद्या का इसने छेदन करके नमि की रक्षा की थी। मपु० ७१ ३६६-३७२

यक्षमित्र—भरतक्षेत्र के सुजन देश मे नगरशोभ नगर के राजा दृढमित्र के भाई सुमित्र और वसुन्धरा का पुत्र। किन्नरमित्र का यह अनुज और श्रीचन्द्रा इसकी बहिन थी। मपु० ७५ ४३८-४३९, ४७८-४९३, ५०५-५२१

यक्षलिक—कृष्ण के तीसरे पूर्वभव का जीव–भरतक्षेत्र के मलय देश में पलाशनगर के यक्षदत्त और उसकी पत्नी यक्षिला का छोटा पुत्र। यक्षस्व का यह छोटा भाई था। इसका अपर नाम यक्षिल था। हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्ष–५

यक्षवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपों में तेरहवाँ द्वीप। यह इसी नाम के सागर से घिरा हुआ है। हपु० ५ ६२५

यक्षस्थान—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ सुरप और कर्षक दो भाई रहते थे जो आगामी भव में उदित और मुदित नामक मुनि हुए। पपु० ३९ १३७-१३९

यक्षस्व—यक्षदत्त का ज्येष्ठ पुत्र। यह यक्षलिक का बड़ा भाई था। इसका अपर नाम यक्ष था। हपु० ३३ १५७-१६२ दे० यक्ष–५

यक्षिल—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगल देश के पलाशकूट ग्राम का एक वैश्य। यक्षदत्त इसका पिता और यक्षदत्ता माता थी। यक्ष इसका बड़ा भाई था। दयावान होने से इसका नाम सानुकम्प प्रचलित हो गया था। मपु० ७१ २७८-२८०

(२) महाशुक्र स्वर्ग का एक देव। यह कृष्ण के पूर्वभव का छोटा भाई था। इस देव ने कृष्ण को सिंहवाहिनी और गरुडवाहिनी विद्याओं को सिद्ध करने की विधि बताई थी। मपु० ७१ ३७९-३८१

(३) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के शालिग्राम का एक वैश्य। मपु० ७१ ३९०, हपु० ६० ६२-६७, दे० यक्ष–६

यक्षिला—(१) तीर्थंकर अरनाथ के सघ की साठ हजार आर्यिकाओं में मुख्य आर्यिका। मपु० ६५ ४३

(२) यक्षदत्त की रानी। इसका अपर नाम यक्षदत्ता था। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्षदत्त–२

यक्षलिक—पलाशकूट ग्राम के वैश्य यक्षदत्त का ज्येष्ठ पुत्र। इसका दूसरा नाम यक्ष था। हपु० ३३.१५७-१५८, दे० यक्ष–५

यक्षी—तीर्थंकर नेमिनाथ के सघ की एक आर्यिका। मपु० ७१ १८६

यजमानात्म—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यजुर्वेद—चार वेदों में इस नाम का एक वेद। हपु० १७ ८८

यज्ञ—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

(२) दान देना, देव और ऋषियों की पूजा करना। याग क्रतु, पूजा, सपर्या, इज्या, अध्वर, मख और मह इसके अपर नाम हैं। आर्ष और अनार्ष के भेद से इसके दो भेद होते हैं। इनमें तीर्थंकर, गणधर और केवलियों के शरीर से उत्पन्न त्रिविध अग्नियों में परमात्मपद को प्राप्त अपने पिता तथा प्रपितामह को उद्देश्य कर मन्त्र के उच्चारणपूर्वक अष्टद्रव्य की आहुति देना आर्षयज्ञ है। यह मुनि और गृहस्थ के भेद से दो प्रकार का होता है। इनमें प्रथम साक्षात् और दूसरा परम्परा से मोक्ष का कारण है। क्रोधाग्नि, कामाग्नि और उदराग्नि मे क्षमा, वैराग्य और अनशन की आहुतियाँ देना आत्मयज्ञ है। मपु० ६७ १९२-१९३, २००-२०७, २१०

(३) तीर्थंकर वृषभदेव के छब्बीसवे गणधर। हपु० १२ ५९

यज्ञगुप्त—तीर्थङ्कर वृषभदेव के उन्चासवें गणधर। हपु० १२ ६३

यज्ञदत्त—तीर्थङ्कर वृषभदेव के इक्यावनवें गणधर। हपु० १२ ६४

यज्ञदेव—तीर्थङ्कर वृषभदेव के अडतालीसवें गणधर। हपु० १२ ६३

यज्ञपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यज्ञबलि—वसुदेव का मित्र। यह विभीषण के पूर्वभव का जीव था। पपु० १०६ १०

यज्ञमित्र—तीर्थङ्कर वृषभदेव के पचासवें गणधर। हपु० १२.६४

यज्ञरज—राजा किष्किन्ध और रानी श्रीमाला का छोटा पुत्र। यह सूर्यरज का छोटा भाई था। इसकी सूर्यकमला एक बहिन भी थी। पपु० ६ ५२३-५२४

यज्ञांग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यज्ञोपवीत—एक सस्कार। चक्रवर्ती भरत ने ग्यारह प्रतिमाओं के विभाग

दर्शनमोहनीय की तीन उत्तर प्रकृतियाँ हैं—मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व। चारित्र मोहनीय के दो भेद हैं—नोकषाय और कषाय। इसमें हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये नौ नोकषाय हैं। अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और सज्वलन के भेद से कषाय के मूल में चार भेद हैं। अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यग्दर्शन तथा स्वरूपाचरण चारित्र का घात करती हैं। अप्रत्याख्यानावरण हिंसा आदि रूप परिणतियों का एक देश त्याग नहीं होने देती। प्रत्याख्यानावरण से जीव सकल सयमी नही हो पाता तथा सज्वलन यथाख्यातचारित्र का उद्‌भव नहीं होने देती। इसकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर तथा जघन्य स्थित अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होती है। हपु० ५८.२१६-२२१, २३१-२४१, वीवच० १६ १५७, १६०

मोहारिविजयी—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

मोहासुरारि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६

मौक—जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र का एक देश। विहार करते हुए महावीर यहाँ आये थे। हपु० ३ ४

मौक्तिकहारावलि—गोल और आकार में बड़े मोतियों से गूथा गया एक लड़ी का हार। मपु० ७ २३१, १५ ८१

मौखर्य—अनर्थदण्डव्रत का तीसरा अतिचार-हास्यमिश्रित वचन बोलना। हपु० ५८ १७९

मौंजीबन्धन—रत्नत्रय विशुद्धि का प्रतीक तीन लर की मूँज की पतली रस्सी से निर्मित कटिबन्धन। इसे द्विज का चिह्न माना गया है। मपु० ३८ ११०, ४०.१५७

मौण्ड्य—तीर्थंकर महावीर के छठे गणधर। इनके अपर नाम माण्डव्य और मौन्द्र थे। मपु० ७४ ३७३, हपु० ३ ४२, वीवच० १९ २०६

मौण्डकौशिक—चण्डकौशिक ब्राह्मण और सोमश्री ब्राह्मणी का पुत्र। इसका अपर नाम मौड्यकौशिक था। मपु० ६२ २१३-२१६, पापु० ४ १२६-१२८

मौनाध्ययनवृत्तत्व—गर्भाधान से निर्वाण पर्यन्त गृहस्थ की त्रेपन क्रियाओं में पैंतीसवीं क्रिया। दीक्षा लेकर उपवास के बाद पारणा करके साधु का शास्त्र समाप्ति पर्यन्त मौनपूर्वक अध्ययन करना मौनाध्ययनवृत्तत्व कहलाता है। इसमें मौनी, विनीत, मन-वचन-काय से शुद्ध साधु को गुरु के समीप शास्त्रों का अध्ययन करना होता है। इससे इस लोक में योग्यता की वृद्धि तथा परलोक में सुख की प्राप्ति होती है। मपु० ३८ ५८, ६३,१६१-१६३

मौन्द्र—तीर्थङ्कर महावीर के छठें गणधर। मपु० ७४.३७३ दे० महावीर

मौर्य—तीर्थङ्कर महावीर के पाँचवें गणधर। मपु० ७४ ३७३, वीवच० १९ २०६ दे० महावीर

मौर्यपुत्र—तीर्थङ्कर महावीर के सातवें गणधर। हपु० ३ ४२ दे० महावीर

मौलि—एक प्रकार का दैदीप्यमान मुकुट। यह सामान्य मुकुट की अपेक्षा अधिक अच्छा माना जाता है। इसे स्वर्ग के देव धारण करते है। यह रत्न-जटित और स्वर्ण से वेष्टित होता है। मपु० ९ १८९, पपु० ११ ३२७, ७१ ७

म्लेच्छ—मनुष्य जाति का एक भेद-आर्येतर मनुष्य। ये सदाचारादि गुणो से रहित और धर्म-कर्म से हीन होते हुए भी अन्य आचरणों से समान होते है। भरतेश चक्रवर्ती ने इन्हें अपने अधीन किया था और इनसे उपभोग के योग्य कन्या आदि रत्न प्राप्त किये थे। ये हिंसाचार, मांसाहार, पर-धनहरण और धूर्तता करने में आनन्द मनाते थे। ये अर्धबर्बर देश में रहते थे। जनक के देश को इन्होंने उजाड़ने का उद्यम किया था किन्तु वे सफल नहीं हो सके थे। जनक के निवेदन पर राम-लक्ष्मण ने वहाँ पहुँचकर उन्हें परास्त कर दिया था। पराजित होकर ये सह्य और विंध्य पर्वतों पर रहने लगे थे। ये लाल रंग का शिरस्त्राण धारण करते थे। इनका शरीर पुष्ट और अंजन के समान काला, सूखे पत्तों के समान कांतिवाला तथा लाल रंग का होता था। ये पत्ते पहिनते थे। हाथों में ये हथियार लिये रहते थे। मांस इनका भोजन था। इनकी ध्वजाओं में वराह, महिष, व्याघ्र, वृक और कंक चिह्न अंकित रहते थे। मपु० ३१ १४१-१४२, ४२ १८४, पपु० १४ ४१, २६ १०१, २७.५-६, १०-११, ६७-७३

म्लेच्छखण्ड—आर्येतर मनुष्यों की आवासभूमि। मपु० ७६ ५०६-५०७

य

यक्ष—(१) एक विद्याधर। इसने राक्षस विद्याधर के साथ युद्ध किया था। पपु० १ ६४

(२) यक्षगीत नगर के विद्याधर। इन्द्र विद्याधर ने यहाँ के विद्याधरों को इस नगर का निवासी होने के कारण यह नाम दिया था। पपु० ७ ११६-११८

(३) व्यन्तर देवों का एक भेद। ये जिनेन्द्र के जन्माभिषेक के समय सपत्नीक मनोहर गीत गाते हैं। पपु० ३ १७९-१८०

(४) भरतक्षेत्र के क्रौंचपुर नगर का एक राजा। राजिला इसकी रानी थी। इसके यहाँ यक्ष नामक एक पालतू कुत्ता था। उसने एक दिन रत्नकम्बल में लिपटा हुआ एक शिशु लाकर इसे दिया था। राजा और रानी ने इस कुत्ते से प्राप्त होने के कारण उसका यक्षदत्त नाम रखा था। पपु० ४८ ३६-३७, ४८-५०

(५) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में पलाशकूट ग्राम के यक्षदत्त और यक्षदत्ता का ज्येष्ठ पुत्र। यह यक्षिल का बड़ा भाई था। निर्दय होने से इसे लोग निरनुकम्प कहते थे। इसने एक अन्धे सर्प के ऊपर से बैलगाड़ी निकाल कर उसे मार डाला था। इस कृत्य से दु:खी होकर छोटे भाई द्वारा समझाये जाने पर यह शान्त हुआ। आयु के अन्त में मरकर यह निर्नामिक हुआ। इसका दूसरा नाम यक्षलिक था। मपु० ७१ २७८-२८५, हपु० ३३ १५७-१६२

(६) कृष्ण की पटरानी सुसीमा के पूर्वभव का पिता। यह जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के शालिग्राम का निवासी था। इसकी पत्नी देवसेना तथा पुत्री यक्षदेवी थी। इसका दूसरा नाम यक्षिल था। मपु० ७१. ३९०, हपु० ६० ६२-६७

यक्षगीत—विद्याधरो का एक नगर। इन्द्र विद्याधरो ने यहाँ के निवासी विद्याधरो को यक्ष संज्ञा दी थी। पपु० ७ ११८ दे० यक्ष–२

यक्षदत्त—(१) क्रौंचपुर नगर के राजा यक्ष और रानी राजिला का पालित पुत्र। मित्रवती इसकी माता और बन्धुदत्त पिता था। पपु० ४८ ३६-५९

(२) भरतक्षेत्र में मलय देश के पलाशनगर का गृहस्थ। यह यक्ष का पिता था। पत्नी का नाम यक्षिला और पुत्रो के नाम यक्षलिक तथा यक्षस्व थे। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्ष–५

यक्षदत्ता—राजा यक्षदत्त की रानी और यक्ष तथा यक्षिल की जननी। इसका अपर नाम यक्षिला था। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५८ दे० यक्ष–५

यक्षदेवी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे शालिग्राम के निवासी यक्ष और उसकी पत्नी देवसेना की पुत्री। इसने धर्मसेन मुनि से व्रत ग्रहण कर मासोपवासी एक मुनिराज को आहार दिया था। इसे अन्त मे एक अजगर ने निगल लिया था जिससे मरकर यह हरिवर्ष भोगभूमि में उत्पन्न हुई। इसके पिता का दूसरा नाम यक्षिल था। यक्ष की आराधना से जन्म होने के कारण यह इस नाम से प्रसिद्ध हुई। मपु० ७१ ३८८-३९२, हपु० ६० ६२-६७, दे० यक्ष–६

यक्षपुर—विद्याधरो का एक नगर। कौतुकमगल नगर के विद्याधर व्योमबिन्दु की बड़ी पुत्री कौशिकी इसी नगर के निवासी विश्रवा धनिक से विवाही गयी थी। पपु० ७ १२६-१२७

यक्षमाली—किन्नरपुर नगर का विद्याधर राजा। नमि विद्याधर इसका भानजा था। जाम्बव द्वारा नमि विद्याधर को मारने के लिए भेजी गयी माक्षित-लक्षिता विद्या का इसने छेदन करके नमि की रक्षा की थी। मपु० ७१ ३६६-३७२

यक्षमित्र—भरतक्षेत्र के सुजन देश मे नगरशोभ नगर के राजा दृढमित्र के भाई सुमित्र और वसुन्धरा का पुत्र। किन्नरमित्र का यह अनुज और श्रीचन्द्रा इसकी बहिन थी। मपु० ७५ ४३८-४३९, ४७८-४९३, ५०५-५२१

यक्षलिक—कृष्ण के तीसरे पूर्वभव का जीव–भरतक्षेत्र के मलय देश में पलाशनगर के यक्षदत्त और उसकी पत्नी यक्षिला का छोटा पुत्र। यक्षस्व का यह छोटा भाई था। इसका अपर नाम यक्षिल था। हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्ष–५

यक्षवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपो में तेरहवाँ द्वीप। यह इसी नाम के सागर से घिरा हुआ है। हपु० ५ ६२५

यक्षस्थान—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ सुरप और कर्षक दो भाई रहते थे जो आगामी भव में उदित और मुदित नामक मुनि हुए। पपु० ३९ १३७-१३९

यक्षस्व—यक्षदत्त का ज्येष्ठ पुत्र। यह यक्षलिक का बड़ा भाई था। इसका अपर नाम यक्ष था। हपु० ३३ १५७-१६२ दे० यक्ष–५

यक्षिल—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगल देश के पलाशकूट ग्राम का एक वैश्य। यक्षदत्त इसका पिता और यक्षदत्ता माता थी। यक्ष इसका बड़ा भाई था। दयावान होने से इसका नाम सानुकम्प प्रचलित हो गया था। मपु० ७१ २७८-२८०

(२) महाशुक्र स्वर्ग का एक देव। यह कृष्ण के पूर्वभव का छोटा भाई था। इस देव ने कृष्ण को सिंहवाहिनी और गरुडवाहिनी विद्याओ को सिद्ध करने की विधि बताई थी। मपु० ७१ ३७९-३८१

(३) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के शालिग्राम का एक वैश्य। मपु० ७१ ३९०, हपु० ६० ६२-६७, दे० यक्ष–६

यक्षिला—(१) तीर्थंकर अरनाथ के सघ की साठ हज़ार आर्यिकाओ में मुख्य आर्यिका। मपु० ६५ ४३

(२) यक्षदत्त की रानी। इसका अपर नाम यक्षदत्ता था। मपु० ७१ २७८-२७९, हपु० ३३ १५७-१६२, दे० यक्षदत्त–२

यक्षलिक—पलाशकूट ग्राम के वैश्य यक्षदत्त का ज्येष्ठ पुत्र। इसका दूसरा नाम यक्ष था। हपु० ३३.१५७-१५८, दे० यक्ष–५

यक्षी—तीर्थंकर नेमिनाथ के सघ की एक आर्यिका। मपु० ७१ १८६

यजमानात्म—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यजुर्वेद—चार वेदो में इस नाम का एक वेद। हपु० १७ ८८

यज्ञ—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

(२) दान देना, देव और ऋषियो की पूजा करना। याग क्रतु, पूजा, सपर्या, इज्या, अध्वर, मख और मह इसके अपर नाम है। आर्ष और अनार्ष के भेद से इसके दो भेद होते है। इनमें तीर्थंकर, गणधर और केवलियो के शरीर से उत्पन्न त्रिविध अग्नियो में परमात्मपद को प्राप्त अपने पिता तथा प्रपितामह को उद्देश्य कर मन्त्र के उच्चारणपूर्वक अष्टद्रव्य की आहुति देना आर्षयज्ञ है। यह मुनि और गृहस्थ के भेद से दो प्रकार का होता है। इनमें प्रथम साक्षात् और दूसरा परम्परा से मोक्ष का कारण है। क्रोधाग्नि, कामाग्नि और उदराग्नि मे क्षमा, वैराग्य और अनशन की आहुतियाँ देना आत्मयज्ञ है। मपु० ६७ १९२-१९३, २००-२०७, २१०

(३) तीर्थंकर वृषभदेव के छब्बीसवे गणधर। हपु० १२ ५९

यज्ञगुप्त—तीर्थङ्कर वृषभदेव के उन्चासवें गणधर। हपु० १२ ६३

यज्ञदत्त—तीर्थङ्कर वृषभदेव के इक्यावनवें गणधर। हपु० १२ ६४

यज्ञदेव—तीर्थङ्कर वृषभदेव के अड़तालीसवें गणधर। हपु० १२ ६३

यज्ञपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यज्ञबलि—वसुदेव का मित्र। यह विभीषण के पूर्वभव का जीव था। पपु० १०६ १०

यज्ञमित्र—तीर्थङ्कर वृषभदेव के पचासवें गणधर। हपु० १२.६४

यज्ञरज—राजा किष्किन्ध और रानी श्रीमाला का छोटा पुत्र। यह सूर्यरज का छोटा भाई था। इसकी सूर्यकमला एक बहिन भी थी। पपु० ६ ५२३-५२४

यज्ञांग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

यज्ञोपवीत—एक सस्कार। चक्रवर्ती भरत ने ग्यारह प्रतिमाओ के विभाग

से व्रतो के चिह्न के स्वरूप एक से लेकर ग्यारह तार के सूत्र व्रतियों को दिये थे तथा उन्हें, इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, सयम और तप का उपदेश दिया था। सूत्र के तीन तार सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनो के सूचक हैं। असि, मषि, कृषि और वाणिज्य कर्म से आजीविका करनेवाले द्विज इसके पात्र होते हैं। इसके धारण करनेवाले को मास, परस्त्री-सेवन, अनारभी हिंसा, अभक्ष्य और अपेय पदार्थों का त्याग करना होता है। यह सस्कार बालक के आठवें वर्ष में सम्पन्न किया जाता है। मपु० ३८ २१-२४, १०४, ११२, ३९ ९४-९५, ४० १६७-१७२, ४१ ३१

यज्वा—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४२

यति—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

(२) जीव मात्र के कल्याण की भावना रखनेवाले साधु। समवसरण में इनका पृथक् स्थान होता है। मपु० ९ १६६, हपु० ३ ६१

(३) सगीत के तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

यतिधर्म—सर्व आरम्भ त्यागी और देह से निःस्पृही साधुओ का पच महाव्रत, पच समिति और तीन गुप्तियो का पालन करना। मपु० ४ ४७-४९, पापु० ९ ८२ दे० मुनिधर्म

यतिवर—भरतक्षेत्र के एक मुनि। इन्होने याज्ञिक हिंसा को अधर्म बताकर राजा सगर की भ्राति दूर की थी। मपु० ६७ ३६५-३६७

यतिवृषभ—विदेहक्षेत्र के एक ऋषि। सुसीमा नगरी का राजा सिंहरथ उल्कापात देखने से विरक्त होकर इन्ही से सयमी हुआ था। मपु० ६४ २-९

यतीन्द्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

यतीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०७

यथाख्यातचारित्र—मोहनीय कर्म का उपशम अथवा क्षय होने पर प्राप्त आत्मा का शुद्ध स्वरूप। इसे मोक्ष का साधन कहा है। यह कषाय रहित अवस्था में उत्पन्न होता है। मपु० ४७ २४७, हपु० ५६ ७८, ६४ १९

यदु—यादव वश का सस्थापक हरिवशी एक राजा। यह अपने पुत्र नरपति को राज्य देकर तपश्चरण करता हुआ स्वर्ग गया। हपु० १८ ६-७

यम—(१) निर्दोष चारित्र का पालन करने के लिए भोग और उपभोग की वस्तुओ का आजीवन त्याग। मपु० ११ २२०

(२) तीर्थंकर वृषभदेव का जन्माभिषेक करनेवाला एक देव। पपु० ३ १८५

(३) लोकपाल। यह कालाग्नि विद्याधर और उसकी स्त्री श्रीप्रभा का पुत्र था। यह रुद्रकर्मा और तेजस्वी था। इन्द्र विद्याधर ने इसे दक्षिण सागर के द्वीप में किष्कुनगर की दक्षिण दिशा मे लोकपाल के पद पर नियुक्त किया था। किष्कुनगर सूर्यरज और ऋक्षरज दोनो विद्याधर भाइयो का था। अपना नगर लेने के लिए दोनो ने मध्यरात्रि में इससे युद्ध किया और दोनो असफल रहे। ऋक्षरज के किंकर शाखावली से ऋक्षरज की पराजय के समाचार ज्ञातकर रावण ने इससे युद्ध किया था। इस युद्ध में यह पराजित हुआ। यह रथ रहित होने पर रथनूपुर गया। वहाँ इसने इन्द्र विद्याधर से लोकपाल का कार्य नही करने की इच्छा प्रकट की थी। इन्द्र विद्याधर इसका जामाता था। उसे इसकी पुत्री सर्वश्री विवाही गयी थी। अत इन्द्र ने इसका सम्मान किया। इसे सुरसगीत नगर का स्वामित्व प्राप्त हुआ। दशानन ने इससे किष्किन्धनगर और किष्कुपुर छीनकर क्रमश सूर्यरज और ऋक्षराज विद्याधरो को दे दिये थे। पपु० ७ ११४-११५, ८ ४३९-४९८

(४) नन्दनवन की दक्षिणदिशा के चारण भवन का एक देव। हपु० ५ ३१५-३१७

यमकूट—(१) निषध पर्वत की उत्तर दिशा में सीतोदा नदी के तट पर स्थित एक कूट। हपु० ५ १९२-१९३

(२) निषध पर्वत के यमकूट का एक देव। हपु० ५ १९२-१९३

यमदण्ड—(१) रावण का एक मत्री। रावण के विद्या-सिद्धि के समय मन्दोदरी ने इसे सभी नागरिकों को सयम से रहने की घोषणा कराने का आदेश दिया था। पपु० ६९ ११-१४

(२) एक विद्यास्त्र। अपने पिता को बन्धनो से मुक्त कराने के लिए चण्डवेग विद्याधर ने यह अस्त्र अपने बहनोई वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४८

यमधर—(१) एक राजर्षि। राजा वज्रबाहु और उनके वीरबाहु आदि अट्ठानवे पुत्र तथा पाँच सौ अन्य राजा इन्ही से सयमी हुए थे। मपु० ८ ५७-५८

(२) सिद्धकूट पर विराजमान एक गुरु-मुनि। चन्द्रपुर नगर के राजा विद्याधर महेन्द्र की पुत्री कनकमाला ने इन्हो से अपनी भवावलि सुनकर मुक्तावली व्रत लिया था। मपु० ७१ ४०५-४०८

यमन—एक देश। इस देश का राजा कृष्ण का पक्षधर था। हपु० ५० ७३

यमुनदेव—शत्रुघ्न के पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की मथुरा नगरी का निवासी था। यह अधार्मिक तथा क्रूर था। पपु० ९१ ५-१०

यमुनावत्ता—(१) कुन्दनगर के समुद्रसगम की स्त्री। यह विद्युदग की जननी थी। पपु० ३३ १४३-१४४

(२) मथुरा नगरी की निकटवर्तिनी एक नदी। इसका अपर नाम कालिन्दी-कलिंदकन्या था। मपु० ७० ३४६-३४७, ३९५-३९६

(३) मथुरा के बारह करोड मुद्राओ के अधिपति सेठ भानु की स्त्री। इन दोनो के सुभानु, भानुकीर्ति, भानुषेण, शूर, सूरदेव, शूरदत्त और शूरसेन मे सात पुत्र थे। अन्त में इसने और इसकी पुत्र-वधुओ ने जिनदत्ता आर्यिका के समीप तथा इसके पति भानु सेठ और इसके पुत्रो ने वरधर्म मुनि से दीक्षा ले ली थी। मपु० ७१ २०१-२०६, २४३-२४४, हपु० ३३.९६-१००, १२६-१२७

यमुनादेव—मथुरा के राजा चन्द्रप्रभ का छोटा साला। सूर्यदेव और सागरदेव इसके बड़े भाई थे। पपु० ९१ १९-२०

ययाति—विनीता नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम सुरकान्ता और पुत्र का नाम वसु था। अन्त में यह अपने पुत्र को राज्य देकर श्रमण गया था। पपु० ११ ११-१४, १७-२६, ३४

यव—क्षेत्र सम्बन्धी आठ यूका प्रमित एक प्रमाण। हपु० ७ ४०

यवन—(१) भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा छोड़े गये देशो में भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक देश। इस पर भरतेश का स्वामित्व हो था। मपु० १६ १५५, पपु० १०१ ८१, हपु० ३ ५, ११ ६६

(२) यादवो का पक्षधर एक अर्धरथी नृप। हपु० ५० ८४

यवु—हरिवंशी राजा भानु का पुत्र और सुभानु का पिता। हपु० १८ ३

यश कूट—रुचकगिरि की पश्चिम दिशा का एक कूट। हपु० ५ ७१४

यश पाल—(१) ग्यारह अग के ज्ञाता एक आचार्य। हपु० १ ६४

(२) विजयार्ध पर्वत के राजपुर नगर के राजा धरणीकम्प की पुत्री सुखावली का पुत्र। यह जिनेन्द्र गुणपाल के पास दीक्षित हो गया था मपु० ४७ ७३-७४, १८८

यश समुद्र—एक निर्ग्रन्थ-आचार्य। मथुरा के राजा चन्द्रप्रभ का पुत्र अचल इन्ही आचार्य से दीक्षित हुआ था। पपु० ९१ १९-२१, २३ ३९-४१

यशस्कान्त—मानुषोत्तर पर्वत की पूर्व दिशा के अश्मगर्भकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०२

यशस्वती—(१) तीर्थङ्कर वृषभदेव की प्रथम रानी। यह राजा कच्छ की बहिन थी। भरत आदि इसके सौ पुत्र तथा ब्राह्मी एक पुत्री थी। मपु० १५ ७०, १६ ४-५

(२) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा धनजय की दूसरी रानी। यह नारायण अतिबल की जननी थी। मपु० ७ ८१-८२

(३) हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की दूसरी रानी। यह चक्रायुद्ध की जननी थी। मपु० ६३ ३८२-३८३, ४१४

(४) जम्बूद्वीप में स्थित पुन्नागपुर के राजा हेमाभ की रानी। मपु० ७१ ४२९-४३०

(५) एक आर्यिका। राजा चेटक की पुत्री ज्येष्ठा ने इन्ही से दीक्षा ली थी। मपु० ७५ ३१-३३

यशस्वान्—(१) मानुषोत्तर पर्वत की पूर्व दिशा के वैडूर्य कूट का निवासी एक देव। हपु० ५.६०२

(२) चक्षुष्मान के पुत्र। ये वर्तमानकालीन नौवें मनु थे। इनकी आयु कुमुद प्रमाण वर्ष और शरीर की ऊँचाई छ सौ पचास धनुष थी। इनके समय में प्रजा अपनी सन्तान का मुख देखने के साथ-साथ उन्हें आशीर्वाद देकर तथा क्षणभर ठहर कर मृत्यु को प्राप्त होती थी। आशीर्वाद देने की क्रिया उनके उपदेश से आरम्भ हुई थी। इन्होने प्रजा को पुत्र का नाम रखना भी सिखाया था। प्रजा ने प्रसन्न होकर इनका यशोगान किया था। मपु० ३ १२५-१२८, पपु० ३ ८६, हपु० ७ १६०, पापु० २.१०६

यशस्विनी—(१) कृष्ण की पटरानी जाम्बवती के पूर्वभव का जीव। जम्बूद्वीप के पुष्कलावती देश की वीतशोका नगरी के देविल वैश्य और उसकी पत्नी देवमती की पुत्री। इसका विवाह सुमित्र के साथ हुआ था। पति के मर जाने पर दु.खपूर्वक मरण करके यह नन्दनवन में मेरुनन्दना व्यन्तरी हुई थी। हपु० ६० ४२-४६

(२) भरतक्षेत्र में इभ्यपुर नगर के सेठ धनदेव की स्त्री। अपने पूर्वभवो का स्मरण करके इसने सुभद्र मुनि से प्रोषधव्रत लिया था। अन्त में यह मरकर प्रथम स्वर्ग के इन्द्र की इन्द्राणी हुई। हपु० ६० ९५-१००

यशोग्रीव—वसुदेव का श्वसुर। चारुदत्त की पुत्री गन्धर्वसेना को विवाहने के पश्चात् उपाध्याय सुग्रीव और इसने अपनी-अपनी पुत्रियों का विवाह वसुदेव के साथ किया था। हपु० १९ २६६-२६९

यशोदया—राजा जितशत्रु की रानी। यह कुण्डपुर के राजा सिद्धार्थ की छोटी बहिन तथा तीर्थंकर महावीर की बुआ थी। यह अपनी पुत्री यशोदा का विवाह महावीर के साथ करना चाहती थी किन्तु उनके तपोवन में चले जाने पर इसकी इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी थी। हपु० ६६ ६-९, दे० जितशत्रु-३

यशोदा—(१) वृन्दावन के सुनन्द गोप की पत्नी। बलदेव और वसुदेव ने कृष्ण को शिशु-अवस्था में इसी गोप-दम्पत्ति को उसका पुत्रवत् लालन-पालन करने के लिए सौंपा था। देवकी के पुत्री हुई है यह बताने के लिए सद्य प्रसूत इसकी पुत्री देवकी को दे दी गयी थी। इसने वात्सल्य भाव से कृष्ण का पालन किया था। हपु० ३५ २७-३२, ४५, पापु० ११ ५८

(२) राजा जितशत्रु और रानी यशोदया की पुत्री। राजा जितशत्रु इस पुत्री का विवाह अपने साले कुण्डपुर के राजा सिद्धार्थ के पुत्र महावीर के साथ करना चाहता था पर महावीर विरक्त होकर साधु हो गये थे। हपु० ६६.६-९

यशोधन—यादवो का पक्षधर एक नृप। वसुदेव के द्वारा की गयी गरुड व्यूह रचना में यह कौरव-वध का निश्चय किये हुए था। हपु० ५० १२६

यशोधर—(१) एक मासोपवासी मुनि। नागपुर के राजा सुप्रतिष्ठ ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ७० ५१-५२, ५४, ७१ ४३०, हपु० ३४ ४४-४५

(२) मध्यम ग्रैवेयक का एक इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५२

(३) मानुषोत्तर पर्वत के सौगन्धिक कूट का एक देव। यह सुपर्णकुमार देवो का स्वामी था। हपु० ५ ६०२

(४) भरतक्षेत्र के पृथिवीपुर नगर का राजा। इसकी रानी का नाम जया था। यह सगर चक्रवर्ती के पूर्वभव के जीव जयकीर्तन का पिता एव दीक्षागुरु था। मपु० ४८ ५८-५९, ६७, पपु० ५ १३८-१३९, २० १२७

(५) बलभद्र अपराजित का दीक्षागुरु। मपु० ६३ २६, पापु० ५ ३

(६) एक केवली। ये राजा वज्रदन्त के पिता थे। कैवल्य अवस्था में इन्हें प्रणाम करते ही वज्रदन्त को अवधिज्ञान प्राप्त हो गया था। गुणधर मुनि इनके शिष्य थे। मपु० ६ ८५, १०३, ११०, ८.८४

यशोधरा—(१) रूचकपर्वत के विमलकूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०९

(२) पूर्णभद्र का जीव। अलका नगरी के राजा सुदर्शन और रानी श्रीधरा की पुत्री। यह विजयार्घ की उत्तरश्रेणी में प्रभाकरपुर के राजा सूर्यावर्त के साथ विवाही गयी थी। रश्मिवेग इसका पुत्र था। इसने अपनी माँ के साथ गुणवती आर्यिका से दीक्षा ले ली थी। अन्त में इसका पति और पुत्र दोनों दीक्षित हो गये थे। मपु० ५९ २३०, हपु० २७ ७९-८३

(३) जम्बूद्वीप के सुकच्छ देश में स्थित विजयार्घ पर्वत की उत्तरश्रेणी के शुक्रप्रभनगर के राजा इन्द्रदत्त विद्याधर की रानी। यह वायुवेग विद्याधर की जननी थी। मपु० ६३ ९१-९२

(४) पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदत्त की रानी। यह सागरदत्त की जननी थी। मपु० ७६ १३९-१४२

यशोबाहु—आचारांग के ज्ञाता चार आचार्यों में तीसरे आचार्य। सुभद्र और यशोभद्र इनके पूर्ववर्ती तथा लोहाचार्य परवर्ती आचार्य थे। हरिवंशपुराण के अनुसार इनके पूर्ववर्ती आचार्य सुभद्र और जयभद्र थे। मपु० ७६ ५२५-५२६ हपु० १ ६५,६६ २४, वीवच० १ ४१-५०

यशोभद्र—महावीर के निर्वाणोपरान्त हुए आचारांग के ज्ञाता चार मुनियों में दूसरे मुनि। इनके पूर्व सुभद्र और बाद में क्रमश यशोबाहु जयबाहु और लोहाचार्य हुए थे। इनका अपर नाम जयभद्र था। मपु० २ १४९, ७६ ५२५, हपु० १ ६५, ६६ २४, वीवच० १ ४१-५० दे० यशोबाहु

यशोवती—(१) तीर्थंकर वृषभदेव की रानी और भरत की जननी। इसका अपर नाम यशस्वती था। मपु० १५.७०, पपु० १ २४ दे० यशस्वती

(२) काम्पिल्यनगर के राजा विजय की रानी और ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन की जननी। पपु० २० १८९

यष्टि—(१) कुलकर क्षेमन्धर द्वारा क्रूर पशुओं से रक्षा करने के लिए बताया गया एक शस्त्र-लाठी। मपु० ३ १०५, पपु० ६२.७

(२) मोती और रत्नों से निर्मित हार। यह शीर्षक, उपशीर्षक, अवघाटक, प्रकाण्डक और तरलप्रबन्ध के भेद से पाँच प्रकार का होता है। लड़ियों के भेद से इसके पचपन भेद होते हैं। मपु० १६ ४६-४७, ६३-६४

यांचा—याचना। बाईस परीषहों में एक परीषह। इसमें मौन रहकर याचना सम्बन्धी बाधाएँ सहर्ष सहन की जाती है। मपु० ३६ १२२

यागहस्ती—तालपुर नगर के राजा नरपति का जीव-एक हाथी। पूर्वभव में यह मिथ्याज्ञानी था। इस पर्याय में इसने तीर्थंकर मुनिसुव्रत से अपना पूर्वभव सुनकर संयमासंयम धारण कर लिया था। इसकी यह प्रवृत्ति तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के वैराग्य की निमित्त हुई थी। मपु० ६७ ३१-३८

याज्ञवल्क्य—एक परिव्राजक। बनारस के सोमशर्मा ब्राह्मण की पुत्री सुलसा परिव्राजिका को शास्त्रार्थ में पराजित करने यह बनारस आया था। उसमें यह सफल हुआ। सुलसा इसकी पत्नी हुई। इसके एक पुत्र हुआ जिसे यह एक पीपल के पेड़ के नीचे छोड़कर पत्नी के साथ अन्यत्र चला गया था। सुलसा की बड़ी बहिन भद्रा ने इसका पालन किया और उसका नाम 'पिप्पलाद' रखा था। अपनी मौसी भद्रा से अपना जन्म वृत्त ज्ञातकर पिप्पलाद ने मातृपितृ सेवा नाम का यज्ञ चलाकर तथा उसे कराकर अपने जन्मदाता इस पिता और माता सुलसा दोनों को मार डाला था। हपु० २१ १३१-१४६

यादव वंश—हरिवंशी राजा यदु के द्वारा संस्थापित वंश। हपु० १८.६

यान—(१) राजा के छ गुणों में चौथा गुण-अपनी वृद्धि और शत्रु की हानि होने पर दोनों का शत्रु के प्रति किया गया उद्यम-शत्रु पर चढ़ाई करना। मपु० ६८ ६६, ७०

(२) देवों का एक वाहन। मपु० १३ २१४

याम्य—समवसरण के तीसरे कोट में दक्षिणी-द्वार के आठ नामों में एक नाम। हपु० ५७.५८

युक्ति—पदार्थों को सिद्ध करने के लिए प्रयुक्त हेतु अथवा साधन। हपु० ७.१५, १७ ६६

युक्तिक—राजा उग्रसेन का तीसरा पुत्र। धर और गुणधर इसके बड़े भाई तथा सगर और चन्द्र इसके छोटे भाई थे। हपु० ४८ ३९

युक्त्यनुशासन—आचार्य समन्तभद्र द्वारा रचित एक स्तोत्र। हपु० १ २९

युगज्येष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

युगन्त—समुद्रविजय के भाई राजा विजय का चौथा पुत्र। निष्कम्प, अकम्पन और बलि इसके बड़े भाई तथा केशरिन् और अलम्बुष छोटे भाई थे। हपु० ४८ ४८

युगन्धर—(१) तीर्थंकर सुविधिनाथ (पुष्पदन्त) के पिता। पपु० २० २६

(२) पुष्करार्ध द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र मे मंगलावती देश के रत्नसंचयनगर के राजा अजितंजय और रानी वसुमती का पुत्र। मपु० ७ ९०-९४

(३) पुष्करार्द्ध द्वीप के मनोहर वन में विराजमान मुनि। रत्नपुर नगर के राजा पद्मोत्तर ने इनकी उपासना की थी। मपु० ५८ २-७

युगमुख्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

युगादि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

युगादिकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

युगादिपुरुष—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

(२) युग के आदि में होने से इस नाम से विख्यात कुलकर। मपु० ३ १५२, २१२

युगादिस्थितिदेशक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९३

युगाधार—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १४७

युद्ध—द्वन्द । प्राचीन काल में युद्ध के तीन कारण होते थे—१ स्त्रियों की प्राप्ति । २ राज्य का विस्तार और ३. आत्माभिमान की रक्षा । भरतेश ने दिग्विजय तथा बाहुबली से युद्ध चक्रवर्तित्व के लिए किया था । सुलोचना के द्वारा जयकुमार का वरण किये जाने के पश्चात् अर्ककीर्ति ने बलपूर्वक सुलोचना को पाने के लिए ही युद्ध की घोषणा की थी । युद्ध दिन में होते थे । रात्रि में युद्ध करना अधर्म माना गया था । सैनिकों के प्रयाणकाल मे युद्ध भेरी बजाई जाती थी । युद्धस्थल के समीप सेवादल रहता था । यह दल दोनों के आहत सैनिकों की सेवा करता था । पिपासुओं को शीतल-जल, भूखों को मधुर भोजन, श्रमार्त सैनिकों को पखो की हवा का प्रबन्ध करता था । सेवकों में निज-पर का भेद नहीं था । युद्ध के तीन फल प्राप्त होते हैं—१ सेवकों के कर्त्तव्य की पूर्ति २ किसी एक को यश की प्राप्ति और ३ शूरवीरों को वीरगति । मपु० २६ ५९, ३५ १०७-११०, ३६ ४५-४६, ४४ १०-११, ९३-९५, २७२, ६८ ५८७, पपु० ७५ १-४

युद्धवीर्य—एक विद्या । रथनूपुर के राजा अमिततेज ने चमरचचनगर के राजा अशनिघोष को मारने के लिए यह विद्या अपने बहनोई पोदनपुर के राजा श्रीविजय को दी थी । मपु० ६२ २७१, ३९९

युद्धावर्त—राम का पक्षधर एक योद्धा । पपु० ५८ २१

युधिष्ठिर—हस्तिनापुर के कुरुवंशी राजा पाण्डु और रानी कुन्ती का ज्येष्ठ पुत्र । यह भीम और अर्जुन का बड़ा भाई था । ये तीनों भाई पाण्डु और कुन्ती के विवाह के पश्चात् हुए थे । विवाह के पूर्व कर्ण हुआ था । इसकी दूसरी माँ माद्री से उत्पन्न नकुल और सहदेव दो छोटे भाई और थे । कर्ण को छोड़कर ये पाँचों भाई पाण्डव नाम से विख्यात हुए । इसका अपर नाम धर्मपुत्र था । इसके गर्भावस्था में आने से पूर्व बन्धु वर्ग में प्रवृत्त था । इससे इसे यह नाम दिया गया था । इसी प्रकार इसके गर्भ में आते ही बन्धुगण धर्माचरण में प्रवृत्त हुए थे अत इसे "धर्मपुत्र" नाम से सम्बोधित किया गया था । इसके अन्नप्राशन, चौल, उपनयन आदि संस्कार कराये गये थे । ताऊ भीष्म तथा गुरु द्रोणाचार्य से इसने और इसके इतर भाइयों ने शिक्षा एवं धनुर्विद्या प्राप्त की थी । प्रवास काल में इसने अनेकों कन्याओं के साथ विवाह किया था । इन्द्रप्रस्थ नगर इसी ने बसाया था । यह दुर्योधन के साथ द्यूतक्रीड़ा में पराजित हो गया था । उसमें अपना सब कुछ हार जाने पर बारह वर्ष तक गुप्त रूप से इसे भाइयों सहित वन में रहना स्वीकार करना पड़ा था । वन में मुनि संघ के दर्शन कर इसने आत्मनिन्दा की थी । शल्य को सत्रहवें दिन मारने की प्रतिज्ञा करते हुए प्रतिज्ञा पूर्ण होने पर अग्नि में आत्मदाह करने का भी इसने निश्चय किया था । इस प्रतिज्ञा के अनुसार यह शल्य के पास गया और बाणों से इसने शल्य का सिर काट डाला था । अन्त में तीर्थङ्कर नेमिनाथ से अपने पूर्वभव सुनकर यह भाइयों के साथ संयमी हो गया था । नेमिनाथ के साथ विहार करता रहा । इसके शत्रुंजय पर्वत पर आतापन योग में स्थिर होने पर दुर्योधन के भानजे कुर्यधर ने इसके और इसके भाइयों को लोहे के तप्त मुकुट आदि आभरण पहनाकर विविध रूप से उपसर्ग किये थे । इसने उन उपसर्गों को जीत कर और कर्मों को ध्यानाग्नि में जलाकर मोक्ष पाया । दूसरे पूर्वभव में यह सोमदत्त था और प्रथम पूर्वभव में आरण स्वर्ग में देव हुआ था । मपु० ७० ११५, ७२ २६६-२७०, हपु० ४५ २, ३७-३८, ६४ १३७, १४१, पापु० ७ १८७-१८८, ८ १४२, १४७, २०८-२१२, १३ ३४, १६३, १६ २-४, १०, १०५-१२५, १७ २-४, १९ २००-२०१, २० २३९, २४ ७५, २५ १२४-१३३

युयुत्सु—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का सत्ताईसवाँ पुत्र । पापु० ८ १९६

यूका—आठ लीखों की एक यूका होती है । हपु० ७ ४०

यूपकेसर—लवणसमुद्र की उत्तर दिशा-स्थित पाताल-विवर । इसके मूल और अग्रभाग का विस्तार दश हजार योजन तथा गहराई और मध्य भाग का विस्तार एक-एक लाख योजन है । हपु० ५ ४४३-४४४

यूपकेसरिणी—भरतक्षेत्र की एक नदी । अशनिघोष हाथी को इसी नदी के एक कुक्कुट सर्प ने डसा था । मपु० ५९ २१२-२१८

योग—काय, वचन और मन के निमित्त से होनेवाली आत्मप्रदेशों की परिस्पन्दन क्रिया । कर्मबन्ध के पाँच कारणों मे यह भी एक कारण है । जहाँ कषाय होती है वहाँ यह अवश्य होता है । यह एक होते हुए भी शुभ और अशुभ के भेद से दो प्रकार का होता है । मन, वचन और काय की अपेक्षा से तीन प्रकार का तथा मनोयोग और वचनयोग के चार-चार और काययोग के सात भेद होने से यह पन्द्रह प्रकार का होता है । इनके द्वारा जीव कर्मों के साथ बद्ध होते हैं और इनकी एकाग्रता से आन्तरिक एवं बाह्य विकार रोके जा सकते हैं । मपु० १८.२, २१ २२५, ४७ ३११, ४८ ५२, ५४ १५१-१५२, ६२. ३१०-३११, ६३ ३०९, हपु० ५८ ५७, पपु० २२ ७०, २३ ३१, वीवच० ११ ६७

योगत्यागक्रिया—दीक्षान्वय की एक क्रिया । इसमें मुनि विहार करना छोड़कर योगों का निरोध करता है । मपु० ३८ ६२, ३०५-३०७

योगनि प्रणिधान—सामायिक शिक्षाव्रत के तीन अतिचारों का निरोध । ये अतिचार हैं—मनयोग दुष्प्रणिधान-(मन का अनुचित प्रवर्तन), वचनयोग दुष्प्रणिधान-(वचन की अन्यथा प्रवृत्ति) और काययोग दुष्प्रणिधान (काय की अन्यथा प्रवृत्ति) । हपु० ५८ १८०

योगनिर्वाण सम्प्राप्ति—दीक्षान्वय की एक क्रिया । यह योगों (ध्यान) के हटाने के लिए संवेगपूर्वक की गयी परम तप रूप एक क्रिया है । इसमें राग आदि दोषों को छोड़ते हुए शरीर कृश किया जाता है । साधक सल्लेखना में स्थिर होकर सांसारिकता से हटते हुए मोक्ष का ही चिन्तन करता है । मपु० ३८.५९, १७८-१८५

योगनिर्वाणसाधन—दीक्षान्वय की एक क्रिया । इसमें साधु जीवन के अन्त में शरीर और आहार से ममत्व छोड़कर पचपरमेष्ठियों का ध्यान करता है । मपु० ३८.५९, १८६-१८९

योगवन्दित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५.१८८

योगविद्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५,१८८

योगविदांवर—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३७

योगसम्मह—दीक्षान्वय की एक क्रिया। इससे निष्परिग्रही योगी तपोयोग को धारण कर शुक्लध्यानाग्नि से कर्म जलाते हुए केवलज्ञान प्रकट करता है। मपु० ३८.६२, २९५-३००

योगात्मा—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५ १६४

योगी—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३७, २५ १०७

योगीन्द्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७०

योगीश्वरार्चित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०७

योगेश्वरी—दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३१-३३२

योजन—क्षेत्र का आठ हजार दण्ड प्रमित प्रमाण। यह अकृत्रिम रचना के मापने में दो हजार कोश का और कृत्रिम रचना के माप में चार कोश का होता है। हपु० ४ ३६, ७ ४६

योध—महाबुद्धि और पराक्रमधारी अमररक्ष के पुत्रों द्वारा बसाये गये दस नगरों में एक नगर। इसका दूसरा नाम योधन था। पपु० ५ ३७१-३७२, ६.६६

योधन—(१) लंका के आस-पास में स्थित एक सुन्दर द्वीप। पपु० ४८ ११५-११६

(२) एक नगर। पपु० ५.३७१-३७२ दे० योध

योधिनी—वरुण लोकपाल को प्राप्त एक विद्या। रावण ने इस विद्या को छेदकर वरुण को जीवित पकडा था। पपु० १९ ६१

यौधेय—चार प्रकार की लिपियों में परिगणित नैमित्तिक लिपि का एक भेद। यह लिपि यौधेय देश में प्रचलित थी। इसलिए इसका नाम भी यौधेय पडा। केकया इसे जानती थी। पपु० २४ २६

योनि—जीवों की उत्पत्ति के स्थान। ये नौ प्रकार के होते हैं। वे हैं—सचित्त, अचित्त, सचित्ताचित्त, शीत, उष्ण, शीतोष्ण, सवृत, विवृत और सवृत-विवृत। मपु० १७ २१, हपु० २ ११६

योषित—स्त्री। यह चक्रवर्ती भरतेश के चौदह रत्नों में एक रत्न था। मपु० ३७ ८३-८६, हपु० २ ८

यौवराज्य—गर्भान्वय की तिरेपन क्रियाओं में बयालीसवी क्रिया। इसमें युवराज को अभिषेकपूर्वक राजपट्ट बाँधा जाता है। वह इससे युवराज पद प्राप्त करता है। मपु० ३८ ६१, २३१

र

रंगतेज—सुजन देश के नगरशोभ नगर का नट। मदनलता इसकी स्त्री थी। इस नगर के राजा दृढमित्र ने भाई सुमित्र की पुत्री श्रीचन्द्रा के वर की खोज करने के लिए श्रीचन्द्रा के पूर्वभव का वृतान्त एक पट्टिये पर अंकित कराकर इसे दिया था। इसने हेमाभनगर में नृत्य का आयोजन किया। नृत्य देखने नदाढ्य और जीवन्धर दोनों गये थे। नदाढ्य वहाँ पूर्वभव का स्मरण कर मूर्च्छित हुआ। जीवन्धर ने उससे उसकी मूर्च्छा का कारण जाना और अन्त में श्रीचन्द्रा का उससे विवाह करा दिया। मपु० ७५ ४३८-४३९, ४६७-५२१

रंगसेना—भरतक्षेत्र में चन्दनवन नगर के राजा अमोघदर्शन की एक वेश्या। यह वेश्या कामपताका की जननी थी। इसकी पुत्री के नृत्य पर राजकुमार चारुचन्द्र और ऋषि कौशिक दोनों मुग्ध थे। चारुचन्द्र के उसे विवाह लेने पर कौशिक ऋषि ने इसकी पुत्री को पाने के लिए राजा से याचना की थी और राजा ने कौशिक ऋषि के पास उसकी कन्या राजकुमार द्वारा विवाहे जाने की सूचना भिजवाई थी। इस समाचार से क्षुब्ध होकर कौशिक ऋषि ने सर्प बनकर मारने की धमकी दी, जिसे सुनकर राजा तापस हो गया था। हपु० २९ २४-३३ दे० कौशिक

रक्तकम्बला—सुमेरु पर्वत के पाण्डुक वन की पाण्डुक, पाण्डुकम्बला, रक्ता और रक्तकम्बला इन चार शिलाओं में वायव्य-दिशा में स्थित चौथी शिला। यह लोहिताक्ष मणियों से निर्मित अर्द्धचन्द्राकार है। इसकी ऊँचाई आठ योजन, लम्बाई सौ योजन और चौडाई पचास योजन है। पूर्व विदेहक्षेत्र में उत्पन्न तीर्थंकरों का यहाँ अभिषेक होता है। इस शिला पर तीन सिंहासन हैं। वे पाँच सौ धनुष ऊँचे और इतने ही चौडे हैं। इनका निर्माण रत्नों से किया गया है। दक्षिण सिंहासन पर सौधर्मेन्द्र और उत्तर सिंहासन पर ऐशानेन्द्र तथा मध्य सिंहासन पर जिनेन्द्रदेव विराजते हैं। हपु० ५ ३४७-३५३

रक्तगान्धारी—मध्यग्रामाश्रित संगीत की एक जाति। पपु० २४.१३-१५, हपु० १९ १७६

रक्तपंचमी—मध्यग्रामाश्रित संगीत की एक जाति। हपु० १९ १७६

रक्तवतीकूट—शिखरी-कुलाचल के ग्यारह कूटों में आठवाँ कूट। यह आकार में हिमवत् कूटों के समान है। हपु० ५ १०७

रक्ता—(१) चौदह महानदियों में तेरहवी नदी। यह शिखरी पर्वत के पुण्डरीक सरोवर से निकलकर ऐरावतक्षेत्र में पूर्व की ओर बहती हुई पूर्वसमुद्र में गिरती है। मपु० ६३.१९६, हपु० ५ १२५, १३५, १६०

(२) सुमेरु पर्वत के पाण्डुक वन की नैऋत्य दिशा में स्थित स्वर्णमय एक शिला। इस पर पश्चिम विदेह के तीर्थङ्करों का अभिषेक होता है। हपु० ५ ३४७-३४८

(३) शिखरी कुलाचल का पाँचवाँ कूट। हपु० ५ १०६

रक्तोदा—चौदह महानदियों में चौदहवी महानदी। यह नदी शिखरी पर्वत के पुण्डरीक सरोवर से निकलकर ऐरावतक्षेत्र में पश्चिम की ओर बहती हुई पश्चिम समुद्र में गिरती है। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १२४, १३५, १६०

रक्तोष्ठ—विद्याधर वंशी एक राजा। यह विद्याधर लम्बिताधर का पुत्र और विद्याधर हरिश्चन्द्र का जनक था। पपु० ५ ५२

रक्षद्वीप—एक राक्षसद्वीप। इस द्वीप के स्वामी व्यन्तर देव ने यह द्वीप पूर्णमेघ को दिया था। पपु० ५ ५३-५४

रक्षिता—तीर्थङ्कर मल्लिनाथ की जननी। पपु० २० ५५ दे० मल्लिनाथ

रघु—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की कौशाम्बी नगरी के राजा मघवा और रानी वीतशोका का पुत्र। यह अणुव्रतों का पालन करते हुए मरा और सौधर्म स्वर्ग में सूर्यप्रभ देव हुआ। मपु० ७० ६३-६४, ७९

(२) इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न अयोध्या के राजा ककुत्थ का पुत्र। यह अनरण्य का पिता और दशरथ का दादा था। पपु० २२ १५८-१६०

रजक—(१) धोबी। यह कारु शूद्र होता है। मपु० १६ १८५

(२) मेरु के नन्दनवन का छठा कूट। इसकी ऊँचाई पाँच सौ योजन, मूलभाग की चौड़ाई पाँच सौ योजन, मध्यभाग की तीन सौ पचहत्तर योजन और ऊर्ध्वभाग की ढाई सौ योजन है। विचित्रा दिक्कुमारी देवी यहाँ निवास करती है। हपु० ५ ३२९-३३३

रजत—(१) कुण्डलगिरि की दक्षिण दिशा का प्रथम कूट। यहाँ पद्म देव रहता है। हपु० ५ ६९१

(२) मेरु के नन्दनवन का पाँचवाँ कूट। तोयधारा-दिक्कुमारी देवी यहाँ रहती है। हपु० ५.३२९-३३३ दे० रजक—२

(३) रुचकगिरि की उत्तरदिशा का पाँचवाँ कूट। यहाँ आशा दिक्कुमारी देवी रहती है। हपु० ५ ७१६

(४) मानुषोत्तर पर्वत की पश्चिम दिशा का कूट। यहाँ मानुष देव रहता है। हपु० ५ ६०५

रजतप्रभ—कुण्डलगिरि की दक्षिण दिशा का दूसरा कूट। यहाँ पद्मोत्तर देव रहता है। हपु० ५ ६९१

रजतमालिका—भरतक्षेत्र की एक नदी। मन्दरगिरि का मनोहर उद्यान जहाँ से तीर्थङ्कर वासुपूज्य ने मुक्ति प्राप्त की थी, इसी नदी का तटवर्ती प्रदेश था। मपु० ५८ ५०-५३

रजनी—संगीत सम्बन्धी षड्जग्राम की दूसरी मूर्च्छना। हपु० १९ १६१

रजस्वलत्व—संसारी जीव का एक गुण-मलिनता, जीव का कर्मों से आबद्ध होना। मपु० ४२.८७

रजोरूपा—दशानन को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२७

रजोवली—भरतक्षेत्र की एक नगरी। रूपानन्द का जीव यहाँ कुलधर नाम से उत्पन्न हुआ था। पपु० ५ १२४

रज्जु—लोक को नापने का एक प्रमाण विशेष। मध्यलोक का विस्तार एक रज्जु है। समस्त लोक की ऊँचाई चौदह रज्जु है। मपु० ५ ४४-४५, हपु० ४ ९-१०

रणखनि—राम का पक्षधर एक योद्धा। यह अश्वरथ पर आरूढ़ होकर ससैन्य रणारण में पहुँचा था। पपु० ५८ १५

रणदक्ष—ऋक्षरज वंश के भृत्य शाखावली का पिता। इसकी स्त्री का नाम सुश्रेणी था। इसके पुत्र ने युद्ध में हुई ऋक्षरज की स्थिति रावण को बताई थी। पपु० ८ ४५६-४५७

रणशोण्ड—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौहत्तरवाँ पुत्र। पापु० ८.२०२

रणश्रान्त—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पाँचवाँ पुत्र। पापु० ८ १९३

रणोर्मि—अग देश का एक राजा। नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य द्वारा अयोध्या के राजा भरत पर आक्रमण करते समय सहयोग के लिए अंग देश से बुलाये गये चार राजाओं में यह दूसरा राजा था। यह छ. सौ हाथियों और पाँच हजार अश्व लेकर उसकी सहायतार्थ उसके पास गया था। पपु० ३७ ६-८, १४, २५-२६

रतवती—भरतक्षेत्र की कौमुदी नगरी के राजा सुमुख की रानी। यह परम सुन्दरी थी। पपु० ३९.१८०-१८१

रति—(१) बाईस परीषहों में एक परीषह-राग के निमित्त उपस्थित होने पर राग नहीं करना। मपु० ३६ ११८

(२) कुबेर की देवी। पूर्वभव में यह नन्दनपुर के राजा अमितविक्रम की पुत्री धनश्री की बहिन अनन्तश्री थी। इस पर्याय में इसने सुव्रता आर्यिका से दीक्षा ली, तप किया और अन्त में मरकर आनत स्वर्ग के अनुदिश विमान में देव हुई। मपु० ६३ १९-२४

(३) एक देवी। ऐशानेन्द्र से राजा मेघरथ की रानी प्रियमित्रा के सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर यह रतिषेणा देवी के साथ सौन्दर्य को देखने के लिए प्रियमित्रा के पास गयी थी। इसने उसे देखकर उसके अकृत्रिम सौन्दर्य की तो प्रशंसा की, किन्तु जब रानी को सुसज्जित देखा तब इसे रानी का सौन्दर्य उतना रुचिकर नहीं लगा जितना रुचिकर उसे रानी का पूर्व रूप लगा था। संसार में कोई भी वस्तु नित्य नहीं है ऐसा ज्ञात करके यह रतिषेणा के साथ स्वर्ग लौट गयी थी। मपु० ६३ २८८-२९५

(४) किन्नरगीत नगर के राजा श्रीधर और रानी विद्या की पुत्री। यह विद्याधर अमररक्ष की पत्नी थी। इसके दस पुत्र और छ पुत्रियाँ थीं। इसका पति (अमररक्ष) पुत्रों को राज्य देकर दीक्षित हो गया और तीव्र तपस्या द्वारा कर्मों का नाश कर सिद्ध हुआ। पपु० ५.३६६, ३६८, ३७६

(५) एक दिक्कुमारी देवी। जाम्बवती ने अपने सौन्दर्य से इसे लज्जित किया था। हपु० ४४ ११

(६) विद्याधर वायु तथा विद्याधरी सरस्वती की पुत्री और प्रद्युम्नकुमार की रानी। प्रद्युम्न को यह जयन्तगिरि के दुर्जय वन में प्राप्त हुई थी। हपु० ४७ ४३

(७) सहदेव पाण्डव की रानी। हपु० ४७ १८, पापु० १६.६२

रतिकर—नन्दीश्वर द्वीप की चारों दिशाओं में विद्यमान वापिकाओं के कोणों के समीप स्थित पर्वत। ये एक-एक वापी के चार-चार होने से सोलह वापियों के चौसठ होते हैं। इनमें बत्तीस वापियों के भीतर और बाह्य कोणों पर स्थित हैं। ये स्वर्णमय ढोल के आकार में होते हैं। ये ढाई सौ योजन गहरे एक हजार योजन ऊँचे, इतने ही चौड़े और इतने ही लम्बे तथा अविनाशी हैं। ये पर्वत देवों के द्वारा सेवित और एक-एक चैत्यालय से विभूषित हैं। इस तरह एक दिशा की चार वापियों के ये आठ और चारों दिशाओं के बत्तीस होते हैं। नन्दीश्वर

द्वीप की चारों दिशाओं में चार अजनगिरि, सोलह दधिमुख और बत्तीस रतिकरों के बावन चैत्यालय प्रसिद्ध हैं। हपु० ५ ६७२-६७६

रतिकर्मा—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की मृणालवती नगरी का निवासी एक सेठ। कनकश्री इसकी पत्नी तथा भवदेव पुत्र था। पापु० ३ १८७-१८९

रतिकान्ता—रावण की एक रानी। पपु० ७७ १५

रतिकीर्ति—व्यन्तर देवों के सोलह इन्द्रों मे आठवाँ व्यन्तरेन्द्र। वीवच० १४ ६०

रतिकूट—विजयार्घ की दक्षिणश्रेणी का सैतीसवाँ नगर। मपु० १९.५१

रतिकूल—एक मुनि। सर्वज्ञ मुनि भीम ने चित्रपेणा, चित्रवेगा, धनवती और धनश्री व्यन्तर कन्याओं को इन मुनिराज का चरित्र सुनाया था। मपु० ४६ ३४८-३६४

रतिनिभा—राम की आठ हजार रानियाँ थी। इनमें चार महादेवियाँ थी। यह तीसरी महादेवी है। पपु० ९४ २४-२५

रतिपिंगल—विदेहक्षेत्र का एक कोतवाल। इसे एक सेठ के घर से बहुमूल्य मणियों का हार चुराकर वेश्या को देने के अपराध में प्राण दण्ड दिया गया था। मपु० ४६ २७५-२७६

रतिप्रभा—राजा हिरण्यवर्मा विद्याधर और रानी प्रभावती की पुत्री। इसके नाना वायुरथ के भाई बन्धुओं ने इसे मनोरथ के पुत्र चित्ररथ के साथ विवाहा था। मपु० ४६ १७७-१८१

रतिभाषा—सत्यप्रवादपूर्व में वर्णित बारह प्रकार की भाषाओं में राग को उत्पन्न करनेवाली एक भाषा। हपु० १० ९१-९४

रतिमयूख—किन्नरगीत नगर का विद्याधर राजा। अनुमति इसकी रानी तथा सुप्रभा पुत्री थी। पपु० ५ १७९

रतिमाल—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के रथनूपुर-चक्रवाल-नगर के राजा सुकेतु विद्याधर का भाई। इसने अपनी पुत्री रेवती मथुरा ले जाकर कृष्ण के भाई बलभद्र को दी थी। हपु० ३६ ५६, ६०-६१

रतिमाला—कलिंग के राजा अतिवीर्य और रानी अरविन्दा की पुत्री तथा लक्ष्मण की आठ महादेवियों में पाँचवी महादेवी। श्रीकेशी इसका पुत्र था। विजयस्यन्दन इसका भाई और विजय सुन्दरी इसकी बड़ी बहिन थी जो भरत को दी गयी थी। पपु० ३७ ८६, ३८ १-३, ९, ९४ १८-२३, ३४

रतिवर—जम्बूद्वीप-पूर्वविदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के कुबेरमित्र सेठ का एक कबूतर। इसकी पत्नी रतिषेणा कबूतरी थी। यह जयकुमार के पूर्वभव का जीव तथा कबूतरी जयकुमार के पूर्वभव की पत्नी सुलोचना का जीव थी। मपु० ४६ १९-३० दे० जयकुमार

रतिवर्द्धन—(१) विद्याधरों का स्वामी। यह राम का पक्षधर योद्धा था। भरत के साथ इसने दीक्षा ले ली थी। मपु० ५८ ३-७, ८८ १-९

(२) भरतक्षेत्र की काकन्दी नगरी का राजा। इसकी रानी सुदर्शना थी। इसके दो पुत्र थे—प्रियंकर और हितकर। सर्वगुप्त इसका मन्त्री था। वह ईर्षा वश इसका वध करना चाहता था। मन्त्री की पत्नी विजयावली इसे चाहती थी अत उसने अपने पति का रहस्य इससे प्रकट कर दिया जिससे यह सावधान रहने लगा था। एक दिन मन्त्री सर्वगुप्त ने इसके महल में आग लगवा दी। यह अपनी स्त्री और बच्चों के साथ पूर्व निर्मित सुरग से बाहर निकल गया और काशी के राजा कशिपु के पास गया। कशिपु और इसके मन्त्री सर्वगुप्त के बीच युद्ध हुआ। सर्वगुप्त जीवित पकड़ा गया और इसे अपने राज्य की प्राप्ति हो गयी। अन्त में यह भोगों से विरक्त हुआ और इसने जिन-दीक्षा धारण कर ली। मन्त्री की पत्नी विजयावली मरकर राक्षसी हुई। इस राक्षसी ने मुनि-अवस्था में इसके ऊपर घोर उपसर्ग किये किन्तु ध्यान में लीन रहकर इसने उन्हें सहन किया। पश्चात् शुक्ल-ध्यान द्वारा कर्म नाश करके यह मुक्त हुआ। पपु० १०८ ७-३८, ४५

(३) कौचक मुनिराज के दीक्षागुरु एक मुनि। हपु० ४६ ३७

रतिवर्मा—मृणालवती नगरी के सेठ सुकेतु का पिता। भवदत्त इसका पौत्र था। मपु० ४६ १०४

रतिवेग—राम के समकालीन एक मुनि। इन्द्रजित् के पुत्र वज्रमाली और सुन्द के पुत्र चारुरत्न के ये दीक्षागुरु थे। पपु० ११८ ६६-६७

रतिवेगा—(१) मृणालवती नगरी से सेठ श्रीदत्त और सेठानी विमलश्री की सती पुत्री। इसी नगरी के सेठ सुकेतु का पुत्र भवदेव धन उपार्जन करके इसे विवाहना चाहता था, किन्तु विवाह के समय तक धन कमाकर न लौट सकने से इस कन्या का विवाह इसी नगरी के अशोक-देव सेठ के पुत्र सुकान्त के साथ कर दिया गया। भवदेव ने इसे पराजित करना चाहा परन्तु सुकान्त और यह दोनों शक्तिषेण सामन्त की शरण में जा पहुँचे। भवदेव उसे पराजित नहीं कर सका और निराश होकर लौट आया। मपु० ४६.९४-११०

(२) राजपुर नगर के गन्धोत्कट सेठ की कबूतरी। पति पवनवेग कबूतर के साथ इसने अक्षर लिखना सीखा था। दोनों का उपयोग शान्त था। एक दिन किसी बिलाव ने इसे पकड़ लिया। पवनवेग कबूतर ने कुपित होकर नख और पखों की ताड़ना तथा चोंच के आघात से बिलाव को मारकर इसे मरने से बचा लिया था। यह अपने पति पवनवेग को बहुत चाहती थी। इसने पवनवेग के जाल में फँसकर मर जाने पर उसके मरण की सूचना चोंच से लिखकर अपने घर दी थी। अन्त में यह पति के वियोग से पीड़ित होकर मर गयी थी तथा सुजन देश के नगरशोभ नगर के राजा दृढमित्र के भाई सुमित्र की श्रीचन्द्रा पुत्री हुई। इस पर्याय के पूर्व यह हेमागद देश में राजपुर नगर के वैश्य रत्नतेज और उसकी स्त्री रत्नमाला की अनुपमा नाम की पुत्री थी। इसका विवाह वैश्य गुणमित्र से हुआ था। गुणमित्र भँवर में फसकर मरा अत प्रेमवश यह भी उसी स्थान पर जाकर जल में डूब मरी थी। मरणोपरान्त गुणमित्र सेठ गन्धोत्कट के यहाँ पवन-वेग नामक कबूतर हुआ और अनुपमा इस नाम की उसकी स्त्री कबूतरी हुई। हरिवशपुराण के अनुसार यह कबूतरी की पर्याय के पूर्व इसी नाम से सुकान्त की पत्नी थी। आगे इसका जीव प्रभावती नाम की विद्याधरी हुई तथा कबूतर का जीव हिरण्यवर्मा विद्याधर हुआ। मपु० ७५ ४३८-४३९, ४५०-४६४, हपु० १२ १८-२०

रतिशैल—भरतक्षेत्र का नन्दिवृक्षों से युक्त एक पर्वत । वनवास के समय राम-लक्ष्मण और सीता यहाँ आये थे । पपु० ५३.१५८-१६०

रतिषेण—(१) एक राजा । चन्द्रमती इसकी रानी थी । वानर का जीव मनोहर देव दूसरे स्वर्ग के नन्द्यावर्तविमान से चयकर इसी राजा-रानी का चित्रागद नामक पुत्र हुआ था । मपु० ९ १८७, १९१, १० १५१

(२) एक मुनि । हिरण्यवर्मा के तीसरे पूर्वभव का पिता इनसे दीक्षित हुआ था । मपु० ४६ १७३

(३) विजयार्ध पर्वत के गाधार नगर का एक विद्याधर । गाधारी इसकी स्त्री थी । इसने सर्प-दश के बहाने औषधि लाने इसे भेजकर स्वय कुबेरकान्त के साथ काम की कुचेष्टाएँ करनी चाही थी किन्तु सेठ ने 'मैं तो नपु सक हूँ' कहकर गाधारी के मन में विरक्ति उत्पन्न की । गाधारी ने सेठ की पत्नी से यथार्थता ज्ञात करके इसके साथ-साथ सयम धारण कर लिया था । विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा लोकपाल इससे दीक्षित हुए थे । मपु० ४६ १९-२०, ४८, २२८-२३८

(४) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश के पृथिवीनगर के राजा जयसेन और रानी जयसेना का ज्येष्ठ पुत्र । यह धृतिषेण का बड़ा भाई था । इसका अल्पायु मे ही मरण हो गया था । मपु० ४८ ५८-६१

(५) धातकीखण्ड द्वीप के विदेहक्षेत्र मे स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा । यह नीतिज्ञ, धर्मज्ञ और धनाढ्य था । मुनि धर्म को ही पाप रहित जानकर इसने राज्य-भार पुत्र अतिरथ को सौंप करके अर्हन्नन्दन मुनि से दीक्षा ले ली थी तथा अन्त में यह सन्यासमरण कर वैजयन्त विमान में अहमिन्द्र हुआ था । मपु० ५१ २-१५

रतिषेणा—(१) एक कबूतरी । यह रतिवर कबूतर की पत्नी थी । यह पूर्वभव में जयकुमार की पत्नी सुलोचना थी । मपु० ४६.२९-३० दे० रतिवर और सुलोचना

(२) एक देवी । यह रति देवी के साथ राजा मेघरथ की रानी प्रियमित्रा का रूप देखने उसके निकट गयी थी तथा उसका रूप देखकर विरक्त होती हुई स्वर्ग लौट गयी थी । मपु० ६३ २८८-२९५, दे० रति-३

रत्न—(१) चक्रवर्ती के यहाँ स्वयमेव प्रकट होनेवाली उसके भोगोपभोग की सामग्री । यह दो प्रकार की होती है—सजीव और अजीव । दोनो में सात-सात वस्तुएँ होती हैं । कुल वस्तुएँ चौदह होती हैं । इनमें अजीव रत्न हैं—चक्र, छत्र, दण्ड, असि, मणि, चर्म और काकिणी तथा सजीवरत्न है—सेनापति, गृहपति, गज, अश्व, स्त्री, सिलावट और पुरोहित । मपु० ३७ ८३-८४, वीवच० ५ ४५, ५५-५६

(२) रुचक पर्वत की ऐशान दिशा का एक कूट । यहाँ विजयादेवी रहती है । हपु० ५ ७२५

रत्नकण्ठ—अश्वग्रीव का ज्येष्ठ पुत्र और रत्नायुध का भाई । ये दोनो भाई मरकर चिरकाल तक भव-भ्रमण करने के पश्चात् अतिबल और महाबल असुर हुए थे । इसका अपरनाम रत्नग्रीव था । मपु० ६३ १३५-१३६ दे० रत्नग्रीव

रत्नकुण्डल—रत्न जटित कर्णभूषण । इसे पुरुष धारण करते थे । मपु० ४ १७७, १५.१८९

रत्नकूट—मानुषोत्तर पर्वत के पूर्व-दक्षिण कोण मे स्थित एक कूट । यहाँ नागकुमारो का स्वामी वेणुदेव रहता है । हपु० ५ ६०७

रत्नगर्भ—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८१

(२) वसुदेव तथा रानी रत्नवती का ज्येष्ठ पुत्र । यह सुगर्भ का बड़ा भाई था । हपु० ४८ ५९

रत्नग्रीव—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में स्थित अलका नगरी के राजा अश्वग्रीव और रानी कनकचित्रा का ज्येष्ठ पुत्र । यह रत्नागद, रत्नचूड और रत्नरथ आदि का बड़ा भाई था । मपु० ६२ ५८-६१

रत्नचतुष्टय—बलभद्र के चार रत्न-रत्नमाला, गदा, हल और मूसल । मपु० ७१ १२५

रत्नचित्र—विद्याधर नमि का वशज । यह रत्नरथ का पुत्र और चन्द्ररथ का पिता था । पपु० ५ १६-१७

रत्नचूड—विद्याधर अश्वग्रीव का पुत्र । मपु० ६२ ६० दे० रत्नग्रीव

रत्नचूल—एक देव । इसने राम-लक्ष्मण के स्नेह की परीक्षा ली थी । यह मृगचूल देव को अपने साथ लेकर स्वर्ग से अयोध्या आया तथा अयोध्या में इसने अन्त पुर की स्त्रियो का मायामय रुदन बताकर लक्ष्मण को राम का मरण दर्शाया था । इससे लक्ष्मण राम का मरण जानकर प्राण रहित हो गये थे । यह देव लक्ष्मण को निर्जीव देख 'लक्ष्मण का इसी प्रकार मरण होना होगा' ऐसा विचार करता हुआ सौधर्म स्वर्ग लौट गया था । पपु० ११५ २-१६

रत्नचूला—(१) पर्यंकगुहा के निवासी गन्धर्व मणिचूल की देवी । इसके निवेदन पर गन्धर्व मणिचूल ने अष्टापद का रूप धारण कर सिंह के द्वारा किये गये उपसर्ग से गुहा मे अजना की रक्षा की थी । पपु० १७ २४२-२४८, २६०

(२) वेलन्धर नगर के स्वामी विद्याधर समुद्र की पुत्री । यह सत्यश्री, कमला और गुणमाला की छोटी बहिन थी । ये सभी बहिनें पिता के द्वारा लक्ष्मण को दी गयी थी । पपु० ५४.६५, ६८-६९

(३) मृणालकुण्ड नगर के राजा विजयसेन की रानी । यह वज्रकम्बु की जननी थी । पपु० १०६ १३३-१३४

रत्नजटी—विद्याधर अर्कजटी का पुत्र । इसने सीता को हरकर आकाश-मार्ग से जाते हुए रावण को देखा और सीता को छुड़ाने के लिए रावण से युद्ध करना चाहा था । रावण ने इसे अजेय जानकर इसकी विद्या का हरण करके इसे निर्बल बनाया । यह विद्या के न रहने से समुद्र के बीच कम्बु नामक द्वीप में आ गिरा था । सुग्रीव के साथ राम के निकट आकर इसने अपनी विद्या का और सीताहरण का समाचार राम को दिया था । सीता की जानकारी पाकर राम ने इसे देवोपगीत नगर का स्वामित्व देते हुए इसका सत्कार किया था । पपु० ४५ ५८-६९, ४८ ८९-९१, ९६-९७, ८८ ४२

रत्नतेज—हेमागद देश के राजपुर नगर का एक वैश्य । इसकी स्त्री रत्नमाला और पुत्री अनुपमा थी । मपु० ७५ ४५०-४५१

रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र । इनमें सम्यग्दर्शन को ज्ञान और चारित्र का बीज कहा है । मपु० ४ १५७, ११ ५९, पपु० ४.५६, वीवच० १८ २-३, ६, १०-११

रत्नद्वीप—(१) एक द्वीप । यह भारतीय रत्न-व्यवसाय का केन्द्र था । मपु० ३ १५९, ५९ १४८-१४९, पपु० १४ ३५८

(२) भरत क्षेत्र का एक नगर । यह भानुरक्ष के पुत्रो द्वारा बसाया गया था । पपु० ५ ३७३

रत्ननगर—विदेहक्षेत्र का एक नगर । रथनूपुर-नगर का राजा इन्द्र पूर्वभव में यहाँ उत्पन्न हुआ था । गोमुख और धरणी उसके माता-पिता थे । उसका नाम सहस्रभाग था । पपु० १३ ६०, ६६-६७

रत्नपटली—रत्ननिर्मित पिटारा । वृषभदेव द्वारा उखाडे गये केश समुद्र में क्षेपण करने के पूर्व इसी में रखे गये थे । इसका अपर नाम रत्नपुट था । मपु० १७ २०४, २०९, पपु० ३ २८४

रत्नपुर—(१) विदेहक्षेत्र का एक नगर । यहाँ विद्याधर पुष्पोत्तर रहता था । राजा विद्याग के पुत्र विद्यासमुद्घात यहाँ के नृप थे । राम और लक्ष्मण के समय यहाँ राजा रत्नरथ था । पपु० ६ ७, ३१०, ९३ २२

(२) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर । सुलोचना के शील का परीक्षा के लिए सौधर्म स्वर्ग से आयी देवी ने जयकुमार को अपना परिचय देते हुए स्वय को इस नगर के राजा की पुत्री बताया था । मपु० ४७ २६१-२६२, पापु० ३ २६३-२६४

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर । यहाँ राजा मधु जन्मे थे । तीर्थंकर धर्मनाथ ने भी यहाँ जन्म लिया था । मपु० ५९ ८८, ६१ १३, १९, ६२ ३२८, पपु० २० ५१

(४) पुष्करार्द्ध द्वीप के वत्सकावती देश का एक नगर । तीसरे पूर्वभव में तीर्थंकर वासुपूज्य यहाँ के राजा थे । इस पर्याय में उनका नाम पद्मोत्तर था । मपु० ५८ २-४

(५) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र का एक नगर । भद्र और धन्य दोनों भाई बैल के निमित्त से परस्पर लडकर यहाँ मारे गये थे । मपु० ६३ १५७-१५९

(६) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का साठवाँ नगर । मपु० १९ ८७

(७) मलयदेश का एक नगर । बलभद्र राम तीसरे पूर्वभव में इसी नगर के राजा प्रजापति के पुत्र चन्द्रचूल थे । मपु० ६७ ९०-९१, १४८-१४९

रत्नप्रभ—(१) विभीषण का एक विमान । राम की ओर से रावण की सेना से युद्ध करने विभीषण इसी विमान में गया था । पपु० ५८ २०

(२) रुचगिरि की आग्नेय दिशा का एक कूट । यहाँ वैजयन्ती देवी रहती है । हपु० ५ ७२५

रत्नप्रभा—अधोलोक की प्रथमभूमि, रूढ नाम घर्मा । इसके तीन भाग होते हैं—खर भाग, पकभाग और अब्बहुल भाग । इन अशो की क्रमश मुटाई सोलह हज़ार, चौरासी हज़ार और अस्सी हज़ार होती है । खरभाग के चित्र आदि सोलह भेद हैं । खरभाग में असुरकुमारों को छोडकर शेष नौ प्रकार के भवनवासी देव रहते हैं । इनमें नागकुमारो के चौरासी लाख, गरुडकुमारो के बहत्तर लाख, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, मेघकुमार, दिक्कुमार, अग्निकुमार और विद्युत्कुमार इन छ कुमारो के छिहत्तर लाख तथा वायुकुमारो के छियानवे लाख भवन हैं । ये भवन इस भाग में श्रेणी रूप से स्थित है तथा प्रत्येक में एक-एक चैत्यालय है । इस खरभाग के नीचे पकभाग में असुरकुमारो के चौंसठ लाख भवन है । खरभाग में राक्षसो को छोडकर शेष सात प्रकार के व्यन्तर देव रहते हैं । पकभाग में राक्षसो का निवास है । यहाँ राक्षसो के सोलह हज़ार भवन हैं । अब्बहुल भाग में ऊपर नीचे एक-एक हज़ार योजन स्थान छोडकर नारकियो के बिल हैं । इस पृथिवी के तेरह प्रस्तार और प्रस्तारो के तेरह इन्द्रक बिल है । इन्द्रक बिलो के नाम ये हैं—सीमान्तक, नरक, रौरुक, भ्रान्त, उदभ्रान्त, असम्भ्रान्त, विभ्रान्त, त्रस्त, त्रसित, वक्रान्त, अवक्रान्त और विक्रान्त । सीमान्तक-इन्द्रक बिल की पूर्व-दिशा में काक्ष, पश्चिम दिशा में महाकाक्ष, दक्षिणदिशा में पिपास और उत्तर दिशा में अतिपिपास ये चार महानरक हैं । इस पृथिवी के कुल तीस लाख बिल हैं जिनमें छ लाख बिल सख्यात योजन और चौबीस लाख बिल असख्यात योजन विस्तारवाले हैं । सीमन्तक इन्द्रक का विस्तार पैंतालीस लाख योजन होता है । इसी प्रकार नरक इन्द्रक का विस्तार चवालीस लाख आठ हज़ार तीन सौ तैंतीस और १/३ योजन प्रमाण, रौरव, इन्द्रक का तैतालीस लाख, सोलह हज़ार, छ सौ सडसठ और २/३ योजनप्रमाण, चौथे भ्रान्त इन्द्रक का बयालीस लाख पच्चीस हज़ार, उद्भ्रान्त इद्रक का इकतालीम लाख तैंतीस हज़ार तीन सौ तेतीस और १/३ योजन प्रमाण, सम्भ्रान्त इन्द्रक का चालीस लाख इकतालीस हज़ार छ सौ छियासठ और २/३ योजन प्रमाण, असम्भ्रान्त इन्द्रक का उनतालीस लाख पचास हज़ार योजन, विभ्रान्त इन्द्रक का अडतीस लाख अठावन हज़ार तीन सौ तैंतीस और १/३ योजन प्रमाण, नौवें त्रस्त इन्द्रक का सैंतीस लाख छियासठ हज़ार छ सौ छियासठ और २/३ योजन प्रमाण, त्रसित इन्द्रक का छत्तीस लाख पचहत्तर हज़ार, वक्रान्त इन्द्रक का पैंतीस लाख तेरासी हज़ार तीन सौ तेतीस योजन और १/३ योजन प्रमाण तथा बारहवें अवक्रान्त इन्द्रक का विस्तार चौंतीस लाख इकानवें हज़ार छ सौ छियासठ और २/३ योजन प्रमाण तथा तेरहवें विक्रान्त इन्द्रक का विस्तार चौंतीस लाख योजन होता है । इस पृथिवी के इन्द्रक बिलो की मुटाई एक कोश, श्रेणीबद्ध बिलो की $1\frac{1}{2}$ कोश और प्रकीर्णक बिलो की $2\frac{1}{3}$ कोश प्रमाण है । इसका आकार वेत्रासन रूप होता है । यहाँ के जीवो की अधिकतम ऊँचाई सात धनुष, तीन हाथ, छ अगुल प्रमाण तथा आयु एक सागर प्रमाण होती है । मपु० १० ९०-९४, हपु० ४ ६, ४३-६५, ७१, ७६-७७, १५१-१५२, १६१, १७१-१८३, २१८, ३०५

रत्नभद्रमुख—भरतेश चक्रवर्ती का एक स्थपति रत्न । हपु० ११ २८

रत्नमय-पूजा—एक पूजा । इसमें रत्नो के अर्घ, गगाजल, रत्नज्योति के

द्वीप, मोतियों के अक्षत, अमृतपिण्ड से निर्मित नैवेद्य, कल्पवृक्षों से निर्मित धूप और फल के रूप में रत्ननिधियाँ चढाई जाती हैं। भरतेश ने बाहुबलि के मुनि होने पर उनकी ऐसी ही पूजा की थी। मपु० ३६ १९३-१९५

रत्नमाला—(१) रावण की एक रानी। पपु० ७७ १३

(२) विदेहक्षेत्र में पृथिवीतिलक नगर के राजा प्रियंकर और रानी अतिवेगा की पुत्री। अतिवेग इसके पिता और प्रियकारिणी इसकी माँ थी। इसका विवाह जम्बूद्वीप के चक्रपुर नगर के राजा अपराजित के राजकुमार वज्रायुध से हुआ था। रत्नायुध इसका पुत्र था। मपु० ५९ २४१-२४३, हपु० २७ ९१

(३) हेमांगद देश में राजपुर नगर के वैश्य रत्नतेज की पत्नी। यह अनुपमा की जननी थी। मपु० ७५ ४५०-४५१ दे० अनुपमा

रत्नमालिनी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की एक नदी। चम्पापुरी के वणिक भानुदत्त का पुत्र चारुदत्त जल-विहार के लिए यहाँ आया था। हपु० २१ ६-१४

रत्नमाली—(१) विद्याधर नमि का पुत्र और विद्याधर रत्नवज्र का पिता। पपु० ५.१६

(२) विजयार्ध पर्वत के शशिपुर नगर का राजा। विद्युल्लता इसकी पत्नी तथा सूर्यंजय पुत्र था। पपु० ३१ ३४-३५

रत्नमुक्तावली—एक व्रत। इसमें एक-एक का अन्तर देते हुए सोलह अंक तक लिखकर आगे एक-एक अंक कम करते हुए एक अंक तक लिखने के पश्चात् उन अंकों के अनुसार इसमें दो सौ चौरासी उपवास और उनसठ पारणाएँ की जाती हैं। इसमें कुल तीन सौ तेतालीस दिन लगते है। रत्नत्रय प्राप्ति इसका फल है। प्रस्तार क्रम निम्न प्रकार बनाया जाता है—१, १, २, १, ३, १, ४, १, ५, १, ६, १, ७, १, ८, १, ९, १, १०, १, ११, १, १२, १, १३, १, १४, १, १५, १, १६, १, १५, १, १४, १, १३, १, १२, १, ११, १, १०, १, ९, १, ८, १, ७, १, ६, १, ५, १, ४, १, ३, १, २, १, १, १, हपु० ३४ ७२-७३

रत्नरथ—(१) विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण-दिशा मे स्थित रत्नपुर नगर का राजा। इसकी रानी चन्द्रानना से दामा और मनोरमा दो पुत्रियाँ तथा हरिवेग, मनोवेग और वायुवेग ये तीन पुत्र हुए थे। राम और लक्ष्मण ने इसे युद्ध में पराजित करके राम ने इसकी श्रीदामा पुत्री को तथा लक्ष्मण ने मनोरमा को विवाहा था। पपु० ९३ १-५७

(२) विद्याधर निम का वंशज एक विद्याधर। यह रत्नवज्र का पुत्र और रत्नचित्र का पिता था। पपु० ५ १६-१७

(३) भरतक्षेत्र में अरिष्टपुर नगर के राजा प्रियव्रत और रानी पद्मावती का पुत्र। राजा की दूसरी रानी काञ्चनाभा का पुत्र विचित्ररथ इसका भाई था। इसने श्रीप्रभा को विवाहा था। अन्त में यह तप करके स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ३९ १४८-१५७

(४) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में अलका नगरी के राजा अश्वग्रीव और रानी कनकचित्रा का एक पुत्र। मपु० ६८ ५८-६१

रत्नराशि—तीर्थंकर की माता द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नों में पन्द्रहवाँ स्वप्न। पपु० २१ १२-१५

रत्नवज्र—विद्याधर नमि का पौत्र। यह रत्नमाली का पुत्र तथा रत्नरथ का पिता था। पपु० ५ १६

रत्नवती—(१) भरत की भाभी। पपु० ८३ ९४

(२) विदेह देश में विदेहनगर के राजा गोपेन्द्र और रानी पृथिवीसुन्दरी की पुत्री। इसका विवाह सत्यधर के पुत्र जीवन्धरकुमार से हुआ था। मपु० ७५ ६४३-६५२

(३) राजा वसुदेव की रानी। रत्नगर्भ और सुगर्भ इसके पुत्र थे। हपु० २४.३६, ४८ ५९

रत्नवीर्य—(१) साकेत का एक राजा। अन्धकवृष्णि तीसरे पूर्वभव में इसी राजा की नगरी अयोध्या में रुद्रदत्त नामक ब्राह्मण था। हपु० १८.९७-११०

(२) मथुरा का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—मेघमाला और अमितप्रभा। मेघमाला के पुत्र का नाम मेरु और अमितप्रभा के पुत्र का नाम मन्दर था। ये दोनों पुत्र दीक्षित हुए। इनमें मेरु केवली होकर मोक्ष गया और मन्दर तीर्थङ्कर श्रेयांस का गणधर हुआ। हपु० २७ १३५-१३८

रत्नवृष्टि—तीर्थङ्करो की गर्भावस्था के समय होनेवाले दस अतिशयों मे एक अतिशय-रत्नवर्षा। कुबेर तीर्थंकरों के पिता के आँगन में उनके गर्भावतार के छ मास पहले से जन्म-पर्यन्त पन्द्रह मास ऐसी वर्षा करता है। मपु० १२ ९७

रत्नश्रवा—अलकारपुर नगर के राजा सुमाली और रानी प्रीतिमती का पुत्र। अपने वंश परम्परा से प्राप्त विभूति को विद्याधर इन्द्र द्वारा छोड़े जाने पर उसे पुन पाने के लिए मानस्तम्भिनी विद्या सिद्ध करनी चाही। यह पुष्पवन गया। वहाँ इसकी सहायता करने व्योमबिन्दु ने अपनी पुत्री केकसी को नियुक्त किया था। तप के पश्चात् इसने केकसी का परिचय ज्ञात किया। इसी समय उसे विद्या सिद्ध हुई। विद्या के प्रभाव से इसने पुष्पान्तक नगर बसाया और केकसी को विवाह कर भोगों में मग्न हो गया। केकसी से इसके दशानन, भानुकर्ण और विभीषण ये तीन पुत्र और एक चन्द्रनखा नाम की पुत्री हुई। रावण के मरण से दु खी होने पर विभीषण ने इसे सान्त्वना दी थी। पपु० ७ १३३, १६१-१६५, २२२-२२५, ८० ३२-३३

रत्नसंचय—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का तेरहवाँ नगर। हपु० २२ ९४

(२) पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक नगर। चक्रवर्ती सगर पूर्वभव में यहाँ राजा महाघोष का पयोबल नामक राजकुमार था। पपु० ५. १३७, १३ ६२

(३) पुष्करार्द्धद्वीप के पूर्व मेरु सम्बन्धी पूर्व विदेहक्षेत्र में मंगलावती देश का एक नगर। बलभद्र श्रीवर्मा और नारायण विभीषण इसी नगर में राजा श्रीधर के घर जन्मे थे। मपु० ७ १३-१५, १० ११४-११५

(४) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में मंगलावती देश का एक नगर। महाबल यहाँ का राजा था। मपु० ५० २-३, पापु० ५ ११ दे० महाबल

(५) पूर्व धातकीखण्ड द्वीप के मंगलावती देश का एक नगर। कनकप्रभ यहाँ का राजा था। मपु० ५४.१२९-१३०, हपु० ६० ५७ दे० कनकप्रभ

रत्नसंचया—विदेह की बत्तीस नगरियों में सोलहवीं नगरी। यह विदेह के बत्तीस देशों में सोलहवें मंगलावती देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २१०, २१५

रत्नसेन—विदेहक्षेत्र के रत्नपुर नगर का राजा। इसने मुनिराज कनकशान्ति को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३ १२७

रत्नस्थलपुर—राम के भाई भरत का एक नगर। पुराण मे उल्लेख है कि सीता का जीव इसी नगर में चक्ररथ चक्रवर्ती होगा तथा रावण और लक्ष्मण के जीव इसी नगर में उसके क्रमश इन्द्ररथ और मेघरथ नाम के पुत्र होंगे। पपु० १२३ १२१-१२२

रत्नस्थली—लक्ष्मण की रानी। इसने अपने देवर भरत के साथ जलक्रीडा करके उसे विरक्ति से हटाना चाहा किन्तु भरत का मन रचमात्र भी चलायमान नही हुआ था। पपु० ८३ ९६-१०२

रत्नाक—राम का विरोधी एक नृप। लवणांकुश की ओर से राम की सेना के साथ युद्ध के लिए तैयार ग्यारह हजार राजाओ में यह भी एक राजा था। पपु० १०२ १५६-१५७, १६७-१६८

रत्नांगद—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित अलकानगरी के राजा अश्वग्रीव और रानी कनकचित्रा के रत्नग्रीव, रत्नचूड, रत्नरथ आदि पाँच सौ पुत्रो में एक पुत्र। मपु० ६२ ५८-६०

रत्ना—जम्बूद्वीप में पश्चिम विदेहक्षेत्र के चक्रवर्ती अचल की रानी। अभिराम इसका पुत्र था। पपु० ८५ १०२-१०३

रत्नाकर—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का उनसठवाँ नगर। मपु० १९ ८६-८७

रत्नाकिनी—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में मत्तकोकिल ग्राम के राजा कान्तिशोक की रानी। यह बाली के पूर्वभव के जीव सुप्रभ की जननी थी। पपु० १०६ १९०-१९७

रत्नायुध—(१) जम्बूद्वीप में चक्रपुर नगर के राजा वज्रायुध और रत्नमाला का पुत्र। इसके पिता ने राज्यभार इसे सौंपकर चक्रायुध के समीप दीक्षा ले ली थी। आयु के अन्त में मरकर यह पूर्व धातकीखण्ड के पश्चिम विदेहक्षेत्र में गन्धिल देश की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास और रानी जिनदत्ता का पुत्र विभीषण हुआ। मपु० ५९. २३९-२४३, २४६, २७६-२७९, हपु० २७ ९२

(२) अश्वग्रीव का पुत्र। मपु० ६३ १३५ दे० रत्नकण्ठ

रत्नावतंसिका—बलभद्र राम की माला। इसकी एक हजार देव रक्षा करते थे। राम को प्राप्त रत्नो में यह एक रत्न था। मपु० ६८. ६७४

रत्नावर्त—एक पर्वत। एक विद्याधर श्रीपाल चक्रवर्ती को हरकर ले गया था और उसने उन्हें पर्णलघु-विद्या से इसी पर्वत की शिखर पर छोड़ा था। मपु० ४७ २१-२२

रत्नावली—(१) एक तप। इसमें एक उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, चार उपवास एक पारणा, पाँच उपवास एक पारणा, पुन. पाँच उपवास एक पारणा, इसके पश्चात् चार उपवास एक पारणा, तीन उपवास एक पारणा, दो उपवास एक पारणा और एक उपवास एक पारणा के क्रम से तीस उपवास और दस पारणाएँ की जाती हैं। इसकी सर्वप्रथम वृहद्विधि में एक बेला और एक पारणा के क्रम से दस बेला और दस पारणाएँ की जाती हैं। पश्चात् एक-एक उपवास बढाते हुए सोलह उपवास और एक पारणा करने के बाद एक बेला और एक पारणा के क्रम से तीस बेला और तीस पारणाएँ की जाती हैं। इसके पश्चात् सोलह उपवासो से एक घटाते हुए एक उपवास और एक पारणा तक आकर एक बेला और एक उपवास के क्रम से बारह बेला और बारह पारणाएँ करने के बाद अन्त मे चार बेला और चार पारणाएँ की जाती हैं। इसमें कुल तीन सौ चौरासी उपवास और अठासी पारणाएँ की जाती हैं। यह एक वर्ष तीन मास बाईस दिन में पूरा होता है। इस व्रत से रत्नत्रय में निर्मलता आती है। मपु० ७ ३१, ४४, ७१.३६७, हपु० ३४ ७१, ७६, ६० ५१

(२) मोती और रत्नो तथा स्वर्ण और मणियो से निर्मित हार। इसके मध्य मे मणि होता है। मपु० १६ ४६, ५०

(३) नित्यालोक नगर के राजा नित्यालोक और उनकी रानी श्रीदेवी की पुत्री। यह रावण की रानी थी। पपु० ९ १०२-१०३

रत्नोच्चय—रुचक पर्वत का उसकी वायव्य दिशा में विद्यमान एक कूट। यहाँ अपराजिता देवी रहती है। हपु० ५ ७२६

रथ—प्राचीन काल का एक प्रसिद्ध वाहन। इसमें हाथी और घोडे जोते जाते थे। युद्ध के समय राजा इस पर आरूढ होकर समरांगण में जाता था। मपु० ५ १२७, १० १९९

रथचर—एक भूमिगोचरी राजा। राजा अकम्पन को उसके सिद्धार्थ मंत्री ने उसकी पुत्री सुलोचना के लिए योग्य वर के रूप में भूमिगोचरी राजाओ में इसका नाम प्रस्तावित किया था। पापु० ३ ३५-३७

रथनूपुर—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणदिशा का एक नगर। रावण-विजय के पश्चात् अयोध्या लौटकर राम ने भामण्डल को यहाँ का राजा नियुक्त किया था। इस नगर का अपर नाम रथनूपुर-चक्रवाल था। मपु० ६२ २५, ९६, पपु० ८८ ४१, हपु० ९ १३३, २२ ९३, पापु० ४ ११, १५ ६, १७ १४

रथनूपुरचक्रवाल—रथनूपुर का दूसरा नाम। मपु० १९ ४६-४७, ६२ २५-२८, हपु० ३६.५६

रथनेमि—पाण्डव पक्ष का एक राजा। इसके रथ पर बैल से अंकित ध्वजा थी। रथ के घोडे हरे थे। युद्धभूमि में जरासन्ध के सोमक दूत ने उसे इसके परिचायक चिह्न बताये थे। पापु० २० ३२०-३२१

रथपुर—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का ग्यारहवाँ नगर। हपु० २२ ९४

रथरेणु—एक क्षेत्र मापक प्रमाण। यह आठ त्रस रेणुओं के बराबर होता है। हपु० ७ ३९

रथसेना—अच्युतेन्द्र की सेना की सात कक्षाओं में तीसरा सैन्य कक्ष। यह सेना अपने सेनापति के आधीन रहती है। इसमें आठ हजार हाथी होते है। ये सेना युद्ध के समय अश्वसेना के पीछे चलती है। संग्राम के समय इस सेना के रथ सम्बद्ध राजाओं की ध्वजाओं से युक्त होते हैं। मपु० १० १९८-१९९, २६.७७

रथावर्त—(१) भरतक्षेत्र की हृसावली नदी का तटवर्ती एक पर्वत। मुनि आनन्दमाल ने यहीं तप किया था। मपु० ६२ १२६, ७४.१५७, पपु० १३ ८२-८६, पापु० ४ ६४

(२) एक पूजा। पार्श्वनाथ के पूर्वभव के जीव अयोध्या के राजा वज्रबाहु के पुत्र आनन्द ने यह पूजा की थी। मपु० ७३ ४१-४३, ५८

रथास्फा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना के हाथियों ने यहाँ विचरण किया था। मपु० २९ ४९

रथी—राजाओं का एक भेद। ये भेद हैं—अतिरथ, महारथ, समरथ, अर्धरथ और रथी। ये सामान्य योद्धा होते हैं। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में ऐसे अनेक राजा दोनों पक्षों में थे। हपु० ५० ७७-८६

रध्रपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा सीता के स्वयंवर में आया था। पपु० २८ २१९

रमण—वाराणसी के वैश्य धनदेव और जिनदत्ता का पुत्र। इसने सागरसेन मुनिराज से धर्म सुनकर मधु-मांस आदि का त्याग कर दिया था। सिंह के उपद्रव से यह मरकर अन्त में यक्ष देव हुआ। मपु० ७६ ३१९-३३१

रमणीकमन्दिर—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड एक नगर। तीर्थङ्कर महावीर पूर्वभव में यहाँ ब्राह्मण गौतम के अग्निमित्र नामक पुत्र थे। वीवच० २ १२१-१२२

रमणीय—रत्नद्वीप के मनुजोदय-पर्वत पर स्थित एक नगर। इसे विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के गगनवल्लभ नगर के राजा गरुडवेग ने बसाया था। मपु० ७५ ३०१-३०३

रमणीया—पूर्व विदेहक्षेत्र का एक देश। शुभा-नगरी इस देश की राजधानी थी। यह सीता नदी और निषध-पर्वत के मध्य दक्षिणोत्तर लम्बा है। मपु० ६३.२१०, २१५, हपु० ५ २४७-२४८

रम्भ—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में पद्मक नगर का एक धनिक एवं गणितज्ञ-पुरुष। इसके चन्द्र और आवलि दो शिष्य थे। मुनियों को आहार देने के फलस्वरूप यह देवकुरु नामक उत्तम भोगभूमि में आर्य हुआ था। पपु० ५ ११४-११६, १३५

रम्भा—(१) रावण की रानी। पपु० ७७ १२

(२) तिलोत्तमा देवी के साथ विहार करनेवाली एक देवी। इसने मुनि वज्रायुध का घात करने की दृष्टि से आये अतिबल और महाबल असुरों को डाटकर भगा दिया था। मपु० ६३ १३१-१३७

रम्य—एक सुन्दर क्षेत्र। यह जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर अवस्थित है। कृष्ण की चौथी पटरानी सुशीला पूर्वभव में इसी क्षेत्र के शालिग्राम नगर में यक्षिल की पुत्री यक्षदेवी हुई थी। हपु० ६० ६२-६३

रम्यक—(१) जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रों में पाँचवाँ क्षेत्र। यह नील और रुक्मि कुलाचल के मध्य में स्थित है। मपु० ६३ १९१, पपु० १०५. १५९-१६०, हपु० ५ १३-१५

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक देश। इसकी रचना तीर्थङ्कर वृषभदेव की इच्छा होते ही स्वयं इन्द्र ने की थी। मपु० १६ १५२

रम्यककूट—(१) नील पर्वत के नौ कूटों में आठवाँ कूट। हपु० ५ ९९-१०१

(२) रुक्मी पर्वत के आठ कूटों में तीसरा कूट। हपु० ५ १०२

रम्यका—पूर्व विदेहक्षेत्र में विद्यमान दक्षिणोत्तर लम्बे आठ देशों में छठा देश। पद्मावती नगरी इस देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २१०, २१४, हपु० ५ २४७-२४८

रम्यकावती—एक देश। यह पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप में मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर सीता नदी के दक्षिण तट पर विद्यमान है। मपु० ५९ २

रम्यपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का अड़तीसवाँ नगर। हपु० २२ ९८

रम्या—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६१

(२) पूर्व विदेहक्षेत्र का पाँचवाँ देश। अंकवती नगरी इस देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २०८-२१४, हपु० ५ २४७-२४८

रवि—(१) लंका का राक्षसवंशी एक राजा विद्याधर। पपु० ५ ३९५

(२) पद्मपुराण के कर्ता आचार्य रविषेण। इनके लक्ष्मणसेन गुरु और अर्हद्‌यति दादा गुरु थे। पपु० १ ४२, १२३ १६८, हपु० १ ३४

(३) राजा वसु का पुत्र। यह पर्वत और नारद का सहपाठी था। हपु० १७ ५९

रविकीर्ति—(१) भरतेश का पुत्र। इसने जयकुमार के साथ तीर्थङ्कर वृषभदेव से दीक्षा ले ली थी। मपु० ४७ २८१-२८४

(२) रावण का एक सेनापति। इसकी ध्वजा हरिण से अंकित थी। रावण ने रणभेरी बजाने का इसे ही आदेश दिया था। और इसने भी विनयपूर्वक उसका पालन किया था। मपु० ६८ ५३१-५३२

रविचूल—तेरहवें स्वर्ग के नन्द्यावर्त-विमान का एक देव। पूर्वभव में यह देव राजा अर्ककीर्ति का पुत्र अमिततेज था। मपु० ६२ ४०८-४१०

रवितेज—आदित्यवंशी राजा भद्र का पुत्र। यह राजा शशी का पिता था। पपु० ५ ६

रविप्रभ—(१) प्रथम स्वर्ग का विमान। मपु० ४७.२६०

(२) प्रथम स्वर्ग के रविप्रभ विमान का एक देव। इसने सुलोचना के शील की परीक्षा के लिए देवी कांचना को जयकुमार के पास भेजा था। देवी ने जयकुमार से अनेक चेष्टाएँ की किन्तु वह सफल न हो सकी। अन्त में कुपित होकर जब वह जयकुमार को ही उठाकर ले जाने लगी तब सुलोचना ने उसे ललकारा था। वह सुलोचना के शील के आगे कुछ न कर सकी और स्वर्ग लौट गयी। इस देवी ने इस देव को वह सब वृत्तान्त सुनाया। यह देव जयकुमार के निकट गया तथा क्षमायाचना कर इसने जयकुमार की रत्नों से पूजा की थी। मपु० ४७ २५९-२७३, पापु० ३ २६१-२७२

(३) वानरवंशी राजा समीरणगति का पुत्र। यह अमरप्रभ का पिता था। पपु० ६ १६१-१६२

(४) जम्बूद्वीप का एक नगर। लक्ष्मण ने इस पर विजय की थी। पपु० ९४ ४-९

रविप्रिय—सहस्रार स्वर्ग का एक विमान। अशनिघोष हाथी मरकर इसी विमान में श्रीधर देव हुआ था। मपु० ५९ २१२-२१९

रविमन्यु—इक्ष्वाकुवंशी राजा कमलबन्धु का पुत्र और वसन्ततिलक का पिता। पपु० २२ १५५-१५९

रवियान—राम का सामन्त। रावण की सेना को देखकर यह रथ पर आरूढ होकर युद्ध करने बाहर निकला था। पपु० ५८ १८-१९

रविवीर्य—चक्रवर्ती भरतेश का पुत्र। इसने जयकुमार के साथ तीर्थङ्कर वृषभदेव से दीक्षा ले ली थी। मपु० ४७ २८३-२८४

रश्मिकलाप—एक हार। यह चौवन लड़ियों का होता है। मपु० १६ ५९

रश्मिवेग—(१) पुष्पपुर नगर के राजा सूर्यावर्त और रानी यशोधरा का पुत्र। यह चारणऋद्धिधारी मुनि हरिचन्द्र से धर्म का स्वरूप सुनकर उन्हीं से दीक्षित हो गया था। शीघ्र ही इसने आकाशचारणऋद्धि भी प्राप्त कर ली थी। कांचनगुहा में एक अजगर ने इसे पूर्व वैरवश निगल लिया था। अतः अन्त में सन्यासपूर्वक मरण करके यह कापिष्ठ-स्वर्ग के अर्कप्रभ-विमान में देव हुआ। मपु० ५९ २३१-२३८, हपु० २७ ८०-८७

(२) रथनूपुर के राजा अमिततेज ने अपने वैरी विद्याधर अशनिघोष को मारने अपने बहनोई विजय के साथ इसे और इसके अन्य भाइयों को भेजा था। मपु० ६२ २४१, २७२-२७५

(३) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के त्रिलोकोत्तम नगर के राजा विद्युद्गति और रानी विद्युन्माला का पुत्र। यह अपनी युवा अवस्था में ही समाधिगुप्त मुनिराज से दीक्षित हो गया था। हिमगिरि की एक गुफा में योग में लीन स्थिति में एक अजगर इसे निगल गया था। समाधिपूर्वक मरने से यह अच्युत स्वर्ग के पुष्कर-विमान में देव हुआ। मपु० ७३ २५-३०

रस—(१) रसना-इन्द्रिय का विषय। यह छः प्रकार का होता है—कड़वा, खट्टा, चरपरा, मीठा, कषायला और खारा। मपु० ९ ४६, ७५ ६२०-६२१

(२) काव्य का एक अंग। ये नौ होते हैं—शृंगार, हास्य, करुण वीर, अद्भुत, भयानक, रौद्र, वीभत्स और शान्त। पपु० २४ २२-२३

(३) रत्नप्रभा पृथिवी के खरभाग का नौवाँ पटल। हपु० ४ ५३

रसत्याग—निद्रा और इन्द्रिय विजय के लिए किया जानेवाला एक बाह्य तप। इसमें नित्य आलस्य रहित होकर दूध, घी, गुड़ आदि रसों का त्याग किया जाता है। इसका अपर नाम रसपरित्याग है। मपु० २० १७७, हपु० ६४ २४, वीवच० ६ ३५

रसना—(१) पाँच इन्द्रियों में दूसरी इन्द्रिय-जिह्वा। मपु० १४ ११३

(२) एक आभूषण-मेखला। इसे पुरुष और स्त्री दोनों अपने कटि प्रदेश पर धारण करते हैं। इससे नीचे छोटी-छोटी घंटियाँ लटकाई जाती हैं। मपु० ७ २३६, १५ २०३

रसर्द्धि—एक ऋद्धि। यह उग्र तपस्या से प्राप्त होती है। मपु० ३६ १५४ हपु० १८ १०७

रसातलपुर—लंका का एक नगर। राजा वरुण इसी नगर में रहता था। पपु० १९ ९

रसाधिकाम्भोद—रसाधिक जाति के मेघ। ये रस की वर्षा करते हैं। इनसे छहों रसों की उत्पत्ति होती है। ये मेघ उत्सर्पिणी काल के अतिदुःषमा काल में बरसते हैं। मपु० ७६ ४५४, ४५८

रसायनपाक—भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा कुम्भ का रसोइया। यह राजा को नर-मांस देकर जीवित रखता था। एक दिन राजा ने इस रसोइये को ही मारकर विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ २०५-२०९, पापु० ४ ११९-१२३

रहोभ्याख्यान—सत्याणुव्रत का एक अतिचार-स्त्री-पुरुषों की एकान्त चेष्टा को प्रकट करना। हपु० ५८ १६७

राक्षस—(१) व्यन्तर जाति के देव। ये पहली पृथिवी के पंकभाग में रहते हैं। हपु० ४ ५०

(२) रात्रि का दूसरा प्रहर। मपु० ७४ २५५

(३) पलाशनगर का राजा। इसे राक्षस-विद्या सिद्ध होने के कारण इसका यह नाम प्रसिद्ध हो गया था। मपु० ७५ ११६

(४) एक विद्या। मपु० ७५ ११६

(५) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में स्थित एक द्वीप। राक्षसवंशी-विद्याधरों द्वारा रक्षा किये जाने से यह द्वीप इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसकी परिधि इक्कीस योजन है। पपु० ३ ४३, ५ ३८६, ४८ १०६-१०७

(६) विद्याधर मनोवेग का पुत्र। सुप्रभा इसकी रानी थी। इसके दो पुत्र थे—आदित्यगति और बृहत्कीर्ति। इस राजा ने इन्हीं पुत्रों को राज्यभार सौंपकर दीक्षा ले ली थी। यह मरकर स्वर्ग में देव हुआ। पपु० ५ ३७८-३८०

(७) विद्याधरों का एक वंश। इस वंश में एक राक्षस नाम का विद्याधर हुआ है, जिसके नाम पर यह वंश प्रसिद्ध हुआ। पपु० ५ ३७८

(८) राक्षसवंशी-विद्याधर। राक्षस जातीय देवों के द्वारा द्वीप की

रक्षा होने से यहाँ के निवासी राक्षस नाम से प्रसिद्ध हुए। पपु० ५.३८६

(९) विद्याधर। ये न देव होते हैं न राक्षस। ये राक्षस नामक द्वीप के रक्षक होने से राक्षस कहलाते थे। पपु० ४३ ३८

(१०) एक अस्त्र-बाण। जरासन्ध ने इस को कृष्ण पर फेंका था और कृष्ण ने इस अस्त्र का नारायण अस्त्र से निवारण किया था। हपु० ५२ ५४

राक्षसद्वीप—लवणसमुद्र में विद्यमान द्वीपो के मध्य स्थित एक द्वीप। राक्षस विद्याधरो की क्रीडास्थली होने से यह इस नाम से प्रसिद्ध था। यह सात सौ योजन लम्बा और इतना ही चौडा था। इस द्वीप के मध्य में त्रिकूटाचल पर्वत और इस पर्वत के नीचे लका नगरी है। पपु० ५ १५२-१५८

राक्षस-विवाह—विवाह का एक भेद। इसमें कन्या का बलपूर्वक अपहरण करके उससे विवाह किया जाता है। मपु० ६८.६००

राक्षसी-विद्या—एक विद्या। राक्षसो के इन्द्र भीम ने यह विद्या पूर्णघन के पुत्र मेघवाहन को दी थी। पपु० ५ १६६-१६७

राग—(१) इष्ट पदार्थों के प्रति स्नेह-भाव। यह ससार के दु खो का कारण होता है। पपु० २ १८२, १२३ ७४-७५

(२) रावण का सामन्त। इसने राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ५३

राजगुप्त—ऐरावत क्षेत्र के शखपुर नगर का राजा। शखिका इसकी रानी थी। इसने यतीश्वर धृतिषेण को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। आयु के अन्त में यह सन्यासपूर्वक मरकर ब्रह्मेन्द्र हुआ। मपु० ६३.२४९

राजगृह—भरतक्षेत्र में मगधदेश का एक नगर। तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का जन्म इसी नगर मे हुआ था। इसका अपर नाम कुशाग्रपुर था। यह नगर पाँच शैलो के मध्य मे होने से इसे पचशैलपुर भी कहते थे। इसके पाँच शैल हैं—इसकी पूर्वदिशा में चौकोर ऋषिगिरि, दक्षिणदिशा में त्रिकोण वैभार, दक्षिण-पश्चिम दिशा में त्रिकोणाकार विपुलाचल, धनुषाकार बलाहक तथा पूर्व और उत्तर दिशा के अन्तराल में स्थित वर्तुलाकार पाण्डुक शैल। यह शैल केवल वासुपूज्य जिनेन्द्र को छोडकर अन्य सभी तीर्थंकरो के समवसरणो से पवित्र है। मपु० ५७ ७०-७२, ६७ २०-२८, पपु० २ १, ३३, ३५ ५३-५४, हपु० ३ ५२-५७, १८ ११९

राजत—रजतमय विजयार्द्ध पर्वत। इसके नौ शिखर हैं जो मणियो से निर्मित है। इसके शिखर भाग से झरने झरते है। यहाँ नाग, नागकेसर और सुपारी के सुन्दर वृक्ष है। दिग्विजय के समय भरतेश यहाँ ससैन्य आये थे। मपु० ३१ १४-१९

राजतमालिका—चम्पा नगरी की निकटवर्तिनी एक नदी। तीर्थङ्कर वासुपूज्य ने इसी नदी के तट पर स्थित मन्दागिरि के मनोहर उद्यान में योग-निरोध करके निर्वाण प्राप्त किया था। मपु० ५८ ५०-५३

राजधानी—आठ सौ ग्रामो में प्रमुख नगर। मपु० १६ १७५

राजपुर—(१) जम्बूद्वीप में वत्सकावती देश के विजयार्ध पर्वत का एक नगर। विद्याधरो का चक्रवर्ती राजा धरणीकम्प इसी नगर मे रहता था। मपु० ४७.७२-७३

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में हेमागद देश का नगर। राजा सत्यन्धर इस नगर का स्वामी था। मपु० ७५.१८८-१८९

राजमाष—रोसा। वृषभदेव के समय में भी इसका भोजन-सामग्री के रूप में व्यवहार होता था। मपु० ३.१८७

राजविद्या—राज्य सचालन की विद्या। यह धर्म, अर्थ और काम तीनो पुरुषार्थों को सिद्ध करनेवाली होती है और राजा के लिए परमावश्यक है। मपु० ४ १३६, ११.३३

राजवृत्ति—राजा का कार्य। पक्षपात रहित होकर कुल की मर्यादा, बुद्धि और अपनी रक्षा करते हुए न्यायपूर्वक प्रजा का पालन करना राजाओं की राजवृत्ति कहलाती है। मपु० ३८ २८१

राजसिंह—मधुक्रीड प्रतिनारायण का जीव-एक राजा। यह मल्लयुद्ध का जानकार था। राजगृह नगर के राजा सुमित्र को इसने पराजित किया था। मपु० ६१ ५९-६०

राजसूय—चक्रवर्ती सगर के समय में प्रचलित एक अनार्ष-यज्ञ। यह महाकाल देव के द्वारा हिंसा की प्रेरणा देने के लिए चलाया गया था। इसमे राजा होमे जाते थे। सगर चक्रवर्ती और उनकी पत्नी सुलसा इसी यज्ञ में होमे गये थे। हपु० २३ १४२-१४६

राजा—(१) देश का प्रधान पुरुष। यह प्रजा का रक्षक होता है। प्रजा का पालन करने मे इसकी न कठोरता अच्छी होती है और न कोमलता। इसे मध्यवृत्ति का आचरण करना होता है। अन्तरग शत्रु-काम, क्रोध, मद, मात्सर्य, लोभ और मोह को जीतकर बाह्य शत्रुओ को भी अपने आधीन करना इसका कर्त्तव्य है। यह धर्म, अर्थ और काम तीनो का सेवन करता है, राज्य प्राप्त होने पर मद नही करता, यौवन, रूप, कुल, ऐश्वर्य, जाति आदि मिलने पर अहकार नही करता तथा प्रजा का क्षोभ और भय दूर करके उन्हें न्याय देता है। अन्याय, अत्यधिक विषय-सेवन और अज्ञान इसके दुर्गुण हैं। मुख्यतः राजा के पाँच कर्त्तव्य होते हैं—कुल का पालन, बुद्धि का पालन, स्व-रक्षा, प्रजा-रक्षा और समजसत्व। इनमें कुल के आम्नाय की रक्षा करना कुलानुपालन और लोक तथा परलोक सम्बन्धी पदार्थों के हिताहित का ज्ञान प्राप्त करना मत्यनुपालन है। स्वात्मा का विकास आत्मरक्षा तथा प्रजा की रक्षा प्रजापालन है। दुष्टो का निग्रह और शिष्ट पुरुषो का पालन करना समजसत्व कहलाता है। राज्य सचालन में इसे अमात्य सहयोग करते हैं। इसकी मन्त्रिपरिषद् में कम से कम चार मन्त्री होते है। कार्य की योजना इसे ये ही बनाकर देते है। यह भी मन्त्रियो की स्वीकृति लिये बिना योजना लागू नही करता। पुरोहित भी राजकाज मे इसका सहयोग करते हैं। सेनापति इसकी सेना का सचालन करता है। यह साम, दाम, दण्ड और भेद इन चार उपायो से अपना प्रयोजन सिद्ध करता है। सन्धि, विग्रह, आसन, यान, सश्रय और द्वैधीभाव ये इसके छ गुण तथा स्वामी, मन्त्री, देश, खजाना,

दण्ड, गढ और मित्र ये सात प्रकृतियाँ होती हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं—लोभविजय, धर्मविजय और असुरविजय। इनमें प्रथम वे हैं जो दान देकर राजाओं पर विजय करते हैं। दूसरे वे हैं जो शान्ति का व्यवहार करके विजय करते हैं और तीसरे वे हैं जो भेद तथा दण्ड का प्रयोग करके राजाओं को अपने आधीन करते हैं। शत्रु, मित्र और उदासीन के भेद से भी ये तीन प्रकार के होते हैं। मन्त्रशक्ति, प्रभुशक्ति और उत्साहशक्ति से युक्त राजा श्रेष्ठ होता है। राजा के गुप्तचर भी होते हैं। ये रहस्यपूर्ण बातों का पता लगाकर राज्य-शासन को सुदृढ बनाते हैं। प्रभुशक्ति की हीनाधिकता के कारण ये आठ प्रकार के होते हैं—चक्रवर्ती, अर्धचक्रवर्ती, मण्डलेश्वर, अर्धमण्ड-लेश्वर, महामाण्डलिक, अधिराज, राजा और भूपाल। मपु० ४ ७०, १९५, ५ ७, १६ २५७, २६२, २३ ६०, ३७ १७४-१७५, ४२ ४-५, ३१-३२, ४९-१९९, ६२.२०८, ६८ ६०-७२, ३८४-४४५

राजाख्यान—जिनागम में कहे गये चार आख्यानों में (लोकाख्यान, देशाख्यान, पुराख्यान और राजाख्यान) चौथा आख्यान। इसमें राजा के अधीन देश और नगर आदि का तथा उसके प्रभाव क्षेत्र का वर्णन किया जाता है। मपु० ४ ४-७

राज्याभिषेक—राजा को राज्य का स्वामित्व प्राप्त होने के समय होने-वाली राजकीय एक विधि-स्नपनक्रिया। इस समय नगर ध्वजा और पताकाओं से सजाया जाता है। वन्दी जन मंगलपाठ करते है। जय-जय की ध्वनि होती है। सभामण्डप के मध्य मिट्टी की वेदी का सृजन होता है। आनन्दमण्डप में सुगन्धित पुष्प फैलाये जाते हैं। मोतियों के बन्दनवारे लटकाये जाते हैं। मण्डप के मध्य में अष्ट मंगलद्रव्य रखे जाते हैं। जिसका राज्याभिषेक होना होता है उसे पूर्व की ओर मुख करके सिंहासन पर बैठाया जाता है। सामन्त एवं अधीनस्थ राजन्यवर्ग स्वर्ण कलशों में रखे गये औषधिमिश्रित जल से उसका अभिषेक करते हैं। इसके लिए जल गंगा, सिन्धु आदि नदियों तथा गंगाकुण्ड और सिंधकुण्ड से लाया जाता। उत्तराधिकार प्रदान है करनेवाला राजा उत्तराधिकारी का अभिषेक होने के पश्चात् पट्ट बाँधकर उसे वस्त्राभूषण देते हुए राज्य का स्वामित्व प्रदान करता है। मपु० १६ १९६-२१५, २२५-२३३

राजिला—क्रौंचपुर नगर के राजा यक्ष की रानी। यह यक्षदत्त की जननी थी। पपु० ४८ ३६-३७

राजीमति—उग्रवंशी राजा उग्रसेन और रानी जयावती की पुत्री। कृष्ण ने इस कन्या की नेमिकुमार के लिए याचना की थी। स्वीकृति मिलने पर यह विवाह निश्चित हो गया। इधर राजा उग्रसेन ने विवाह मण्डप सजाया। उन्होंने मासाहारी राजाओं के लिए पशुओं को एक बाड़े में इकट्ठा किया। बारात आई। नेमिकुमार वहाँ बाँधे गये पशुओं को देखकर क्षुब्ध हुए। जब उन्हें यह पता चला कि इन पशुओं का बारात के भोजन के लिए वध किया जायेगा तो वे विरक्त हो गये और राज्य त्याग कर तप करने वन की ओर चले गये। यह जानकर राजीमति ने भी संयम धारण कर लिया। इसके साथ अन्य छ हजार रानियों ने भी दीक्षा ली थी। यह संघ की मुख्य आर्यिका बनी। कुन्ती, सुभद्रा और द्रौपदी ने इसी से दीक्षाएँ ली। आयु की समाप्ति होने पर यह सोलहवें स्वर्ग में देव हुई। मपु० ७१ १४५-१७२, १८६, हपु० ५५ ७२, १३४, ५७ १४६, पापु० २२ ४१-४५, २५ १५, १४१-१४३

राजीवसरसी—दक्षिणश्रेणी में ज्योत प्रभ नगर के राजा विशुद्धकमल और रानी नन्दनमाला की पुत्री। यह विभीषण की रानी थी। पपु० ८ १५०-१५१

रात्रिभुक्तित्याग—(१) श्रावक की छठी प्रतिमा। इसमें रात्रि में चतुर्विध आहार का और दिन में मैथुनसेवन का त्याग किया जाता है। वीवच० १८ ६२

(२) आचार्य जिनसेन द्वारा माने गये छ महाव्रतों में छठा महाव्रत। इसका पालन करनेवाला सब प्रकार के आरम्भ में प्रवृत्त रहने पर भी सुखदायी गति पाता है। मपु० ३४ १६९, पपु० ३२ १५७

रात्रिषेणा—तीर्थंकर पद्मप्रभ के संघ की चार लाख बीस हजार आर्यिकाओं में मुख्य आर्यिका। मपु० ५२ ६३

राधा—चम्पापुर के राजा आदित्य की रानी। आदित्य को यमुना में बहता हुआ सन्दूकची में बन्द एक शिशु प्राप्त हुआ था। उसने वह शिशु इसे दिया। इसने शिशु को कान का स्पर्श करते हुए देखकर उसका नाम "कर्ण" रखा था। मपु० ७० १११-११४, पापु० ७ २८३-२९७ दे० कर्ण

राधावेध—द्रौपदी के स्वयंवर हेतु राजा द्रुपद द्वारा कराई गयी दो घोषणाओं में दूसरी घोषणा। इसमें घूमती हुई राधा-मछली की नाक के मोती का बाण से भेदन करना था। अर्जुन ने बाण चढ़ाकर राधा के मोती को बेधा था और द्रौपदी को प्राप्त किया था। इसका अपर नाम चन्द्रकवेध था। हपु० ४५ १२७, १३४-१४६, पापु० १५ १०९-११०

राम—(१) बलभद्र। इनके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और तप के समान लक्ष्मी बढानेवाले गदा, रत्नमाला, मुसल और हल ये चार रत्न थे। अवसर्पिणी काल में ये नौ हुए हैं। इनमें विजय प्रथम बलभद्र था। शेष आठ बलभद्र थे—अचलस्तोक, धर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दिषेण, नन्दिमित्र, पद्म और राम। मपु० ७ ८२, ५७ ८६-८९, ९३, ५८ ८३, ५९ ६३, ७१, ६० ६३, ६१ ७०, ६५ १७६-१७७, ६६ १०६-१०७, ६७ ८९, ७० ३१९, हपु० ३२.१०, वीवच० १८. १११ दे० बलभद्र

(२) राम की जीवन कथा जैन-पुराणों में दो प्रकार की मिलती है। एक कथा आचार्य रविषेण के पद्मपुराण में है। वहाँ राम को पद्म कहा गया है अत वह पद्म के प्रसंग में दे दी गयी है। महा-पुराण में पद्म को राम ही कहा गया है। उनकी कथा इस प्रकार मिलती है—तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के तीर्थ में हुए आठवें बलभद्र। दूसरे पूर्वभव में ये भरतक्षेत्र के मलय देश में रत्नपुर नगर के राजा

प्रजापति के मत्री विजय के पुत्र और प्रथम पूर्वभव में देव थे। स्वर्ग से चयकर भरतक्षेत्र में ये वाराणसी नगरी के राजा दशरथ की रानी सुबाला के गर्भ में आये और फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी के दिन मघा नक्षत्र में इनका जन्म हुआ। इनकी तेरह हज़ार वर्ष की आयु थी। इनका नाम राम रखा गया था। रानी कैकयी का पुत्र लक्ष्मण इनका भाई था। दोनो भाई पन्द्रह धनुष ऊँचे, बत्तीस लक्षणो से सहित, वज्रवृषभनाराचसहनन और समचतुरस्रसस्थान के धारी थे। इनका शुभ्र वर्ण था। अयोध्या के राजा के मरने पर इनके पिता अयोध्या आये और वही रहने लगे थे। भरत और शत्रुघ्न का जन्म अयोध्या मे ही हुआ था। राजा जनक ने यज्ञ की रक्षा के लिए इन्हें मिथिला बुलाया था। यज्ञविधि पूर्ण करके जनक ने इनका विवाह अपनी पुत्री सीता से कर दिया। वहाँ से लौटने पर दशरथ ने इनके सिर पर स्वय राजमुकुट बाँधा तथा लक्ष्मण को युवराज बनाया था। राम, लक्ष्मण और सीता वनक्रीडा हेतु चित्रकूट गये। इसी बीच नारद ने सीता के सौन्दर्य की प्रशसा करके रावण को उसमें आकृष्ट किया। रावण ने जिस किसी प्रकार सीता को प्राप्त करना चाहा। उसकी आज्ञा से शूर्पणखा राम के पास गई। इन्हें देख वह मुग्ध हुई। वह सीता को रावण मे आकृष्ट न कर सकी। पश्चात् रावण की आज्ञा से मारीच हरिण का शिशु रूप बनाकर सीता के सामने आया। सीता उसे देखकर उस पर आकृष्ट हुई। उसने राम से हरिण-शिशु को पकड कर लाने के लिए कहा। राम उसे पकडने गये। इधर राम का रूप धारण कर रावण सीता के पास आया और छल से सीता को पाल्की में बैठाकर हर ले गया। आकाशगामिनी विद्या नष्ट हो जाने के भय से रावण ने शीलवती पतिव्रता सीता का स्पर्श नही किया। रात-भर राम वन मे भटकते रहे। प्रात लौटकर परिजनो से मिले। सीता के न मिलने से ये मूर्च्छित हो गये। इधर दशरथ को स्वप्न मे रावण द्वारा सीता का हरण दिखाई दिया। उन्होने पत्र लिखकर अपने स्वप्न की बात राम को भेजी। राम को पत्र से सीता के लका में होने का वृत्त मिला। वे चिन्तामग्न हो गये। इसी समय सुग्रीव और अणुमान् वहाँ आये। उन्होने आगमन का कारण बताया। इन्होने सब कुछ समझने के पश्चात् सुग्रीव को बाली द्वारा अपहृत किष्किन्धा का राजा बनाने का आश्वासन दिया और उन्होने अपनी चिन्ता से उनको अवगत किया। अणुमान् ने उन्हें कहा कि यदि आज्ञा दें तो वे सीता का पता लगाने लका चले जावेंगे। तब इन्होने एक पिटारे मे अपने परिचायक चिह्न मुद्रिका आदि सामग्री देकर हनुमान को सीता का पता लगाने भेजा। अणुमान् लका गया। वहाँ भ्रमर का आकार बनाकर वह सीता से मिला। उसने मुद्रिका सीता को दी और धैर्य बँधाया। इसके पश्चात् हनुमान् के लका से लौटकर आने पर उससे सीता के समाचार ज्ञात करके उसे इन्होने अपना सेनापति और सुग्रीव को युवराज बनाया। पश्चात् राम ने पुन हनुमान को लका भेजकर विभीषण को सन्देश भेजा था कि वह रावण को समझाये। हनुमान ने लंका जाकर सब कुछ कहा। यह भी बताया कि राम के अनुराग से पचास करोड चौरासी लाख भूमिगोचरी और तीन करोड विद्याधर-सेना उनके पास आ गई है। रावण यह सुनकर कुपित हो गया और उसने अणुमान् का निरादर किया। पश्चात् हनुमान लका से आये और उन्होने राम से यथावत् सर्व वृत्त कहा। इतना होनेपर भी राम चित्रकूट वन मे ही रहे। इसी बीच इन्होने मन्दोमत्त बाली का लक्ष्मण के द्वारा वध कराया। इसके पश्चात् ये किष्किन्ध नगर में रहे। यहाँ इनकी चौदह अक्षौहिणी सेनाएँ इकट्ठी हो गयी थी। इन्होने लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान को साथ लेकर सेना सहित लका की ओर प्रस्थान किया। रावण के प्रतिकूल व्यवहार से रुष्ट होकर विभीषण भी इनका पक्षधर हो गया था। समुद्रतट पर पहुँचने के पश्चात् इन्होने सुग्रीव और अणुमान् से गरुडवाहिनी, सिंहवाहिनी, बन्धमोचिनी और हननावरणी विद्याएँ प्राप्त की तथा प्रज्ञप्ति विद्या से निर्मित विमानो के द्वारा अपनी सेना लका भेजी। वहाँ रावण से युद्ध हुआ। रावण ने राम को मोहित करने माया से सीता का सिर काटकर दिखाया किन्तु विभीषण ने इन्हें इसे रावण का माया कृत्य बताकर सावधान किया। पश्चात् इन्होने रावण से युद्ध किया। रावण ने चक्र चलाया किन्तु चक्र लक्ष्मण के दायें हाथ में आकर स्थिर हो गया। तब लक्ष्मण ने इसी चक्र से रावण का सिर काट दिया। लका विजय के पश्चात् राम अशोक वन मे सीता से मिले। एक दूसरे को अपने-अपने दु ख बताकर सुखी हुए। इन्होने सीता को निर्दोष जानकर स्वीकार किया। इनकी आठ हज़ार रानियाँ थी। सोलह हज़ार देश और राजा इनके अधीन थे। ये अपराजित हलायुध, अमोघ बाण, कौमुदी गदा और रत्नावतसिका माला इन चार रत्नो के धारी थे। इन्होने शिवगुप्त मुनि से धर्मोपदेश सुना और श्रावक के व्रत लिये। कुछ दिन अयोध्या रहकर वहाँ का राज्य भरत और शत्रुघ्न को देकर वाराणसी चले गये। लक्ष्मण इनके साथ थे। विजयराम इनका पुत्र था। असाध्य रोग के कारण लक्ष्मण के मरने पर उनके पृथिवीचन्द्र पुत्र को राज्य देकर उसे इन्होने पट्ट बाँधा तथा सीता के विजयराम आदि आठ पुत्रो मे सात बडे पुत्रो के राज्य-लक्ष्मी स्वीकार न करने पर सबसे छोटे पुत्र अजितजय को युवराज बनाया। पश्चात् मिथिला देश उसे देकर ये विरक्त हो गये थे। शिवगुप्त केवली से निदान-शल्य से लक्ष्मण का मरण ज्ञात करके ये लक्ष्मण से भी निर्मोही हुए और पाँच सौ राजाओ तथा एक सौ अस्सी पुत्रो के साथ सयमी हो गये। सीता और पृथिवी सुन्दरी ने भी श्रुतवती आर्यिका के समीप दीक्षा धारण कर ली थी। ये और अणुमान् श्रुतकेवली हुए। तदनुसार छद्मस्थ अवस्था के तीन सौ पचानवें वर्ष बाद घातिया कर्मो का क्षय करके ये केवली हुए। इसके पश्चात् छः सौ वर्ष बाद फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी के दिन प्रात वेला में सम्मेदशिखर पर ये अघातिया कर्मो को नाश करके सिद्ध हुए। मपु० ६७ ८९-९१, १४६-१५४, १६४-१६७, १८०-१८१, ६८ ३४-७२१ पद्मपुराण के अनुसार रामचरित के लिए दे० पद्म—२१

रामगिरि—राम-लक्ष्मण द्वारा सेवित एक पर्वत। राम ने यहाँ अनेक जिनमन्दिर बनवाये थे। अज्ञात-वास के समय पाण्डव कौशल देश से

चलकर यहाँ आये थे और अज्ञातवास के बारह वर्षों में ग्यारह वर्ष उन्होंने इसी पर्वत पर बिताये थे। यहीं से चलकर वे विराट नगर गये थे। हपु० ४६ १७-२३

रामदत्ता—मेरु गणधर के नौवें पूर्वभव का जीव—पोदनपुर के राजा पूर्णचन्द्र और रानी हिरण्यवती की पुत्री। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन की रानी थी। इसका मन्त्री श्रीभूति सत्यघोष नाम से प्रसिद्ध था। पद्मखण्डपुर के भद्रमित्र के धरोहर के रूप में रखे गये रत्न उसे देने से मन्त्री के मुकर जाने पर इसने उसके साथ जुआ खेला और जुएँ में उसका यज्ञोपवीत तथा नामांकित अंगूठी जीत ली और अंगूठी अपनी निपुणमती धाय को देकर अपने चातुर्य से श्रीभूति मन्त्री के घर से भद्रमित्र का रत्नों का पिटारा उसकी स्त्री के पास से अपने पास मँगवा लिया था। राजा ने भी अपने रत्न उस पिटारे में मिलाकर भद्रमित्र से अपने रत्न ले लेने के लिए जैसे ही कहा था कि उसने उस पिटारे से अपने रत्न ले लिए थे। इस प्रकार भद्रमित्र को न्याय दिलाने और अपराधी मन्त्री को दण्डित कराने में इसका अपूर्व योगदान रहा। भद्रमित्र मरकर स्नेह के कारण इसका ज्येष्ठ पुत्र सिंहचन्द्र हुआ। पूर्णचन्द्र इसका छोटा पुत्र था। इसके पति को मन्त्री श्रीभूति के जीव अगन्धन सर्प ने डसकर मार डाला था। पति के मर जाने पर इसके बड़े पुत्र सिंहचन्द्र को राजपद और छोटे पुत्र पूर्णचन्द्र को युवराज पद मिला। इसने पति के मरने के पश्चात् हिरण्यमति आर्यिका से संयम धारण किया। इसके संयमी हो जाने पर इसके बड़े पुत्र सिंहचन्द्र ने भी अपने छोटे भाई पूर्णचन्द्र को राज्य सौंपकर दीक्षा ले ली। अपने पुत्र को मुनि अवस्था में देखकर यह हर्षित हुई थी। इसने उनसे धर्म के तत्त्व को समझा था। अन्त में यह पुत्र स्नेह से निदानपूर्वक मरकर महाशुक्र स्वर्ग के भास्कर विमान में देव हुई। मपु० ५९ १४६-१७७, १९२-२५६, हपु० २७ २०-२१, ४७-५८

रामपुरी—वनवास के समय में राम-लक्ष्मण के लिए यक्षराज पूतन द्वारा विन्ध्य-वन में निर्मित एक नगरी। राम के लिए निर्मित होने से यह नगरी इस नाम से अभिहित हुई। राम के द्वारपाल, भट, मन्त्री, घोड़े, हाथी जैसे अयोध्या में थे वैसे ही इस नगरी में भी थे। पपु० ३५ ४३-४५, ५१-५३

रामभद्र—कृष्ण का भाई बलभद्र। हपु० ५० ९३

रामा—तीर्थङ्कर सुविधिनाथ की जननी। यह भरतक्षेत्र की काकन्दी-नगरी के राजा सुग्रीव की रानी थी। पपु० २० ४५

रावण—(१) भार्गववंशी राजा शरासन का पुत्र। यह द्रोणाचार्य का दादा और विद्रावण का पिता था। हपु० ४५ ४६-४७

(२) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एवं आठवाँ प्रतिनारायण। यह राजा रत्नश्रवा और केकसी रानी का पुत्र था। लोक में दशानन नाम से विख्यात हुआ था। इसकी अठारह हजार रानियाँ थीं। इनमें मन्दोदरी प्रमुख थी। वेदवती की पर्याय में सीता के जीव के साथ यह सम्बन्ध करना चाहता था। इसी संस्कार से इसने सीता का हरण किया था। वेदवती की प्राप्ति के लिए इसने वेदवती के पिता श्रीभूति ब्राह्मण की हत्या की थी। फलतः श्रीभूति के जीव लक्ष्मण ने उसे मारा। पूर्वभव में सीता के जीव को रावण के जीव के द्वारा भाई के वियोग का दुःख उठाना पड़ा था, यही कारण है कि सीता भी इसके घात में निमित्त हुई। पपु० ७ १६५, २२२, ४६ २९, १०६ २०२-२०८, १२३ १२१-१३०, वीवच० १८.१०१, ११४-११५ दे० दशानन

राष्ट्रकूट—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध देश के वृद्ध ग्राम का एक वैश्य। रेवती इसकी स्त्री और भगदत्त तथा भवदेव इसके पुत्र थे। मपु० ७६ १५२-१५३

राष्ट्रवर्धन—(१) सुराष्ट्र देश की अजाखुरी नगरी का राजा। विनया इसकी रानी, नमुचि पुत्र तथा सुसीमा पुत्री थी। कृष्ण ने इसके पुत्र को मारकर इसकी पुत्री का हरण किया था। अन्त में इसने पुत्री के लिए वस्त्राभूषण तथा कृष्ण के लिए रथ, हाथी आदि भेंट में देकर पुत्री को कृष्ण के साथ विवाह दिया था। हपु० ४४ २६-३२

(२) भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ का राजा अर्ध अक्षौहिणी-सेना का स्वामी था। हपु० ५० ७०

राहु—ज्योतिर्लोक के देव। इनके विमान आठ मणियों से निर्मित तथा श्याम होते हैं। ये चन्द्र-सूर्य के नीचे रहते हैं। इनके विमान एक योजन चौड़े, इतने ही लम्बे तथा ढ़ाई सौ धनुष मोटे होते हैं। हपु० ६ १७-१८

राहुभद्र—एक मुनि। पोदनपुर नगर के राजा पूर्णचन्द्र ने इन्हीं से दीक्षा ली थी। हपु० २७ ५५-५६

रिपुंजयपुर—विद्याधरों का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मन्त्रियों के साथ सहयोग करने रावण के पास आया था। रावण ने भी यहाँ के विद्याधर को अस्त्र, वाहन और कवच देकर सम्मानित किया था। पपु० ५५ ८७-८९

रिपुदम—तीर्थङ्कर सम्भवनाथ के पूर्वभव के पिता। ये पुण्डरीकिणी नगरी के राजा थे। पपु० २० ११, २५

रिपुजयपुर—जयकुमार के साथ दीक्षित होनेवाला भरतेश चक्रवर्ती का एक पुत्र। मपु० ४७ २८१-२८३

रुक्मगिरि—विजयार्ध पर्वत का अपर नाम। पपु० २१ ३-४

रुक्मण—भीष्मपितामह के पिता। ये धृतराज के भाई थे। राजपुत्री गंगा इनकी रानी थी। हपु० ४५ ३५

रुक्मनाभ—राजा रुधिर का पौत्र। कृष्ण ने इसे कोशल देश का राजा बनाया था। हपु० ५३ ४६

रुक्माभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९७

रुक्मिकूट—रुक्मी पर्वत का दूसरा कूट। हपु० ५ १०२ दे० रुक्मी

रुक्मिणी—(१) रावण की रानी। पपु० ७७ १३

(२) कुण्डिनपुर के राजा भीष्म और रानी श्रीमती की पुत्री। इसके पिता ने इसे शिशुपाल को देना चाहा था किन्तु नारद के कहने पर कृष्ण शिशुपाल को मारकर तथा रुक्मी को नागपाश से बाँधकर

इसे हर लाये थे। उन्होंने गिरिनार पर्वत पर इसे विवाहा और अपनी पटरानी बनाया था। प्रद्युम्न इसका पुत्र था। वैर वश धूमकेतु ज्योतिषी देव जन्मते ही प्रद्युम्न को उठा ले गया था। उसने उसे खदिरसार अटवी मे तक्षशिला के नीचे दबाया था। पुत्र-वियोग से यह दुखी हुई। नारद से ज्ञातकर कृष्ण ने इसे इसका पुत्र पुण्डरीकिणी में बताया था तथा यह भी कहा था कि वह अपने पुत्र से सोलह वर्ष बाद मिल सकेगी। भविष्यवाणी के अनुसार नियत समय पर इसकी पुत्र से भेंट हुई। कृष्ण के द्वारा अनुमति दिये जाने पर अन्त मे यह कृष्ण की सभी पटरानियो और पुत्र-वधुओ के साथ दीक्षित हो गयी थी। मपु० ७१ ३५५-३५८, ७२ ४७-५३, ६८-७२, १४९-१५३, पपु० २० २२८, हपु० ४२.३३-३४, ४३ ३९-४८, ८९-९६, ६१ ३७-४०, पापु० १२ ३-१५

रुक्मी—(१) जम्बूद्वीप का पाँचवाँ कुलाचल। इस पर्वत के आठ कूट हैं—सिद्धायतनकूट, रुक्मिकूट, रम्यककूट, नारीकूट, बुद्धिकूट, रूप्यकूट, हैरण्यवत्कूट और मणिकाचनकूट। मपु० ६३ १९३, पपु० १०५ १५७-१५८, हपु० ५ १५, १०२-१०४

(२) यादवो का पक्षधर एक महारथी राजा। यह कुण्डिनपुर के राजा भीष्म और रानी श्रीमती का पुत्र था। रुक्मिणी इसकी बहिन थी। कृष्ण के द्वारा अपनी बहिन का हरण किये जाने पर इसने कृष्ण और बलदेव का सामना किया था। इस समय शिशुपाल इसके साथ था। इसकी सेना मे साठ हजार रथ, दस हजार हाथी, तीन लाख घोडे और कई लाख पैदल सैनिक थे। इसको बहिन ने युद्ध मे कृष्ण से इसकी रक्षा करने को कहा था। बलदेव ने इससे युद्ध किया था। उन्होंने इसे इतना आहत किया था कि इसके प्राण ही शेष रह गये थे। पाण्डवपुराण के अनुसार कृष्ण ने इसे नागपाश से बाँधकर रथ के नीचे डाल दिया था। हपु० ४२ ३३-३४, ७८-९६, ५०.७८, पापु० १२ ९, १२

रुचक—(१) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का पन्द्रहवाँ पटल। हपु० ६ ४५ दे० सौधर्म

(२) कापिष्ठ स्वर्ग का एक विमान। मपु० ५९ २३७-२३८

(३) रुचकवर पर्वत के दक्षिण-दिशावर्ती आठ कूटो में पाँचवाँ कूट। यहाँ दिक्कुमारी लक्ष्मीमती देवी रहती है। हपु० ५ ७०९ दे० रुचकवर

(४) रुचकवर पर्वत के उत्तर दिशावर्ती आठ कूटो मे सातवाँ कूट। यहाँ श्रीदिक्कुमारी देवी रहती है। हपु० ५ ७१६ दे० रुचकवर

(५) रुचकवर पर्वत की दक्षिणपूर्व-आग्नेय विदिशा मे स्थित एक कूट। यहाँ दिक्कुमारी रुचकोज्ज्वला देवी रहती है। हपु० ५.७२२ दे० रुचकवर

रुचकप्रभा—रुचकवर-पर्वत की वायव्य दिशा में विद्यमान रुचकोत्तम कूट पर रहनेवाली दिक्कुमारी देवी। हपु० ५.७२३ दे० रुचकवर

रुचकवर—(१) मध्यलोक का तेरहवाँ द्वीप एव सागर। हपु० ५ ६१९

(२) इस नाम के द्वीप के मध्य स्थित वलयाकार एक पर्वत। यह एक हजार योजन गहरा, चौरासी हजार योजन ऊँचा और बयालीस हजार योजन चौडा है। इसके शिखर पर चारो दिशाओ में एक हजार योजन चौडे और पाँच सौ योजन ऊँचे चार कूट हैं। इनमें पूर्व दिशा में नन्द्यावर्त, दक्षिण मे स्वस्तिक, पश्चिम मे श्रीवृक्ष और उत्तर में वर्धमानक कूट हैं। इन कूटो पर क्रमश पद्मोत्तर, स्वहस्ती, नीलक और अजनगिरि नाम के देव रहते हैं। ये चारो देव दिग्गजेन्द्र कहलाते हैं। इसके पूर्व में आठ कूट हैं जिनके नाम एव वहाँ की देवियाँ ये हैं—

पूर्व में विद्यमान आठ कूट एव देवियाँ

कूट का नाम	देवी का नाम
१ वैडूर्य	विजया
२ काचन	वैजयन्ती
३ कनक	जयन्ती
४. अरिष्ट	अपराजिता
५ दिक्नन्दन	नन्दा
६ स्वस्तिकनन्द	नन्दोत्तरा
७. अजन	आनन्दा
८ अजनमूलक	नान्दीवर्धना

दक्षिण में विद्यमान आठ कूट एवं देवियाँ

१ अमोघ	स्वस्थिता
२ सुप्रबुद्ध	सुप्रिधि
३. मन्दरकूट	सुप्रबुद्धा
४ विमल	यशोधरा
५ रुचक	लक्ष्मीमती
६ रुचकोत्तर	कीर्तिमती
७ चन्द्र	वसुन्धरा
८ सुप्रतिष्ठ	चित्रा

पश्चिम में विद्यमान आठ कूट एवं देवियाँ

१. लोहिताख्य	इला
२ जगत्कुसुम	सुरा
३ नलिन	पृथिवी
४ पद्मकूट	पद्मावती
५ कुमुद	काचना
६ सौमनस	नवमिका
७. यश कूट	शीता
८ भद्रकूट	भद्रिका

उत्तर में विद्यमान आठ कूट एवं देवियाँ

१ स्फटिक	लम्बुसा
२ अक	मिश्रकेशी
३. अजनक	पुण्डरीकिणी

४ काचन	वारुणी
५ रजत	आशा
६ कुण्डल	ह्री
७ रुचक	श्री
८ सुदर्शन	धृति

इनके अतिरिक्त चारो दिशाओ और विदिशाओ में एक-एक कूट और है। उनके नाम हैं—

दिशा	कूट	देवी जो वहाँ रहती है
१ पूर्व	विमल	चित्रा
२ पश्चिम	स्वयप्रभ	त्रिशिरस्
३ उत्तर	नित्योद्योत	सूत्रामणि
४ दक्षिण	नित्यालोक	कनकचित्रा
५ ऐशान	वैडूर्य	रुचका
६ आग्नेय	रुचक	रुचकोज्ज्वला
७ नैऋत्य	मणिप्रभ	रुचकाभा
८ वायव्य	रुचकोत्तम	रुचकप्रभा

विदिशाओ में निम्न चार कूट और हैं—

दिशा-नाम	कूट-नाम	देवी-नाम
ऐशान	रत्नकूट	विजयादेवी
आग्नेय	रत्नप्रभकूट	वैजयन्ती देवी
नैऋत्य	सर्वरत्नकूट	जयन्ती देवी
वायव्य	रत्नोच्चयकूट	अपराजिता देवी

इस पर्वत के ऊपर चारो ओर एक-एक जिनमन्दिर है। इन मन्दिरो के प्रवेशद्वार पूर्व की ओर है। हपु० ५ ६९९-७२८

रुचका—रुचकवर-पर्वत की पूर्वोत्तर-ऐशान-विदिशा में स्थित वैडूर्य कूट की दिक्कुमारी देवियों की प्रधान देवी। हपु० ५ ७२२ दे० रुचकवर

रुचकाभा—रुचकवर-पर्वत की दक्षिण-पश्चिम नैऋत्य विदिशा में स्थित मणिप्रभकूट की प्रधान दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७२३ दे० रुचकवर

रुचकालय—दिशाओ और विदिशाओ में रहनेवाली देवियो के निवास-कूटो तथा जिनमन्दिरो से विभूषित रुचकगिरि। हपु० ५ ७२९ दे० रुचकवर—२

रुचकोज्ज्वला—रुचकवर-पर्वत की दक्षिणपूर्व-आग्नेय दिशावर्ती रुचककूट की प्रधान दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७२२ दे० रुचकवर

रुचकोत्तम—रुचकवर पर्वत की पश्चिमोत्तर वायव्य विदिशा में स्थित एक कूट। यहाँ रुचकप्रभा प्रधान दिक्कुमारी-देवी रहती है। हपु० ५ ७२३ दे० रुचकवर

रुचकोत्तर—रुचकवर-पर्वत के दक्षिण दिशावर्ती आठ कूटो में छठा कूट। यहाँ कीर्तिमती-दिक्कुमारी-देवी रहती हैं। हपु० ५ ७०९-७१० दे० रुचकवर

रुचि—सम्यग्दर्शन की चार पर्यायों-श्रद्धा, रुचि, स्पर्श और प्रत्यय में दूसरी पर्याय का नाम। मपु० ९ १२३

रुचिर—सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का सोलहवाँ पटल एव इन्द्रक। हपु० ६ ४६ दे० सौधर्म

रुधिर—जरासन्ध का पक्षधर एक नृप। कृष्ण से युद्ध करने के लिए जरासन्ध इसे भी अपने साथ ले गया था। मपु० ७१ ७८-८०

रुद्र—(१) जम्बूद्वीप के सुकौशल देश की अयोध्या नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम विनयश्री था। मपु० ७१ ४१६

(२) तीसरा नारद। हपु० ६० ५४८

(३) रौद्र कार्य करनेवाले होने से इस नाम से प्रसिद्ध। ये दस पूर्व के पाठी होते हैं। असयमी होने से ये नरक में जन्म लेते हैं। ये ग्यारह होते हैं। इनमें भीमावली वृषभदेव के तीर्थ में हुआ। इसी प्रकार अजितनाथ के तीर्थ में जितशत्रु, पुष्पदन्त के तीर्थ में रुद्र, शीतलनाथ के तीर्थ में विश्वानल, श्रेयासनाथ के तीर्थ में सुप्रतिष्ठक, वासुपूज्य के तीर्थ में अचल, विमलनाथ के तीर्थ में पुण्डरीक, अनन्तनाथ के तीर्थ में अजितन्धर, धर्मनाथ के तीर्थ में अजितनाभि, शान्तिनाथ के तीर्थ में पीठ तथा महावीर के तीर्थ में सत्यकि पुत्र। इनकी ऊँचाई क्रमशः पाँच सौ धनुष, साढे चार सौ धनुष, सौ धनुष, नब्बे धनुष, अस्सी धनुष, सत्तर धनुष, साठ धनुष, पचास धनुष, अट्ठाईस धनुष, चौबीस धनुष और सात धनुष होती है। इनकी आयु क्रमश तेरासी लाख पूर्व, इकहत्तर लाख पूर्व, दो लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, चौरासी लाख पूर्व, साठ लाख पूर्व, पचास लाख पूर्व और उनहत्तर वर्ष की होती है। मरकर प्रारम्भ के दो रुद्र सातवें नरक मे, पाँच छठे नरक में, एक पाँचवें नरक में, दो चौथे नरक मे और अन्तिम तीसरे नरक में जन्म लेता है। आगे उत्सर्पिणी काल में भी ग्यारह रुद्र होंगे। वे सब भव्य होंगे और कुछ भवो में मोक्ष प्राप्त करेंगे। उनके नाम निम्न प्रकार होंगे—प्रमद, सम्मद, हर्ष, प्रकाम, कामद, भव, हर, मनोभव, मार, काम और अगज। हपु० ६० ५३४-५४१, ५४६-५४७, ५७१-५७२

(४) तीसरा रुद्र। हपु० ६० ५३४-५३६ दे० रुद्र-३

रुद्रदत्त—(१) वृषभदेव के तीर्थ में अयोध्या के राजा रत्नवीर्य के राज्य में हुए सेठ सुरेन्द्रदत्त का मित्र एक ब्राह्मण। सेठ इसे पूजा के लिए उपयुक्त धन देकर बाहर चला गया था। इसने जुआ और वेश्यावृत्ति में समस्त धन व्यय कर दिया और चोरी करने लगा। अन्त में यह सेनापति श्रेणिक के द्वारा मारा गया और सातवें नरक मे उत्पन्न हुआ। मपु० ७० १४७, १५१-१६१, हपु० १८ ९७-१०१

(२) हेमागद-देश में राजपुर नगर के राजा सत्यन्धर का पुरोहित। यह मत्री काष्ठागारिक को राजा के मार डालने की सलाह देने के फलस्वरूप तीन दिन बाद ही बीमार होकर मर गया था तथा मरकर नरक में उत्पन्न हुआ। मपु० ७५ २०७-२१६

(३) चारुदत्त का वह व्यसनी चाचा। चारुदत्त को व्यसनी इसी ने बनाया था। हपु० २१ ४०

रुद्राश्व—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का ग्यारहवाँ नगर। हपु० २२.८६

रुधिर—अरिष्टपुर नगर का राजा। इसकी महारानी मित्रा थी। इन दोनो का हिरण्यवर्मा पुत्र और रोहिणी पुत्री थी। वसुदेव इसका जामाता था। हपु० ३१.८-११, ४३

रुचित—देवो का एक विमान। जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र की प्रभाकरी नगरी के राजा प्रीतिवर्धन का आनन्द पुरोहित इसी विमान में प्रभजन नामक देव हुआ था। मपु० ८.२१३-२१४, २१७

रूक्ष—अवसर्पिणी-काल के अन्त में सरस, विरस और तीक्ष्ण मेघो के सात-सात दिन वर्षा करने के पश्चात् सात दिन तक बरसनेवाले-मेघ। मपु० ७६ ४५२-४५३

रूप—चक्षु इन्द्रिय का विषय। यह पाँच प्रकार का होता है—काला, पीला, नीला, लाल, सफेद। मपु० ७५ ६२३

रूपगता-चूलिका—दृष्टिवाद अग के पाँच भेदो मे चूलिका-भेद का एक उपभेद। हपु० १० ६१, १२३

रूपपरावर्तनविद्या—रूप-परिवर्तन करने मे समर्थ विद्या। सूर्पणखा ने इसी विद्या की सहायता से अपना एक वृद्धा का रूप बनाया था। मपु० ६८ १५२

रूपवती—(१) इन्द्र विद्याधर की पुत्री। इन्द्र के पिता सहस्रार ने इस कन्या को देकर रावण से सन्धि करने के लिए कहा था। पपु० १२ १६४-१६९

(२) दशागभोगनगर के राजा वज्रकर्ण की कन्या। यह लक्ष्मण की दूसरी पटरानी थी। इसके पुत्र का नाम पृथिवीतिलक था। पपु० ८० १०९, ९४.२०, ३१

रूपवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपो में सातवाँ द्वीप एव सागर। हपु० ५ ६२३

रूपश्री—सेठ रैदत्त और सेठानी धनश्री की पुत्री। इसका विवाह जम्बूस्वामी से हुआ था। मपु० ७६ ४८-५० दे० जम्बू-४

रूप सत्य—सत्यप्रवाद पूर्व में कथित दस प्रकार के सत्यभाषणो में एक प्रकार का सत्यभाषण। इसमें पदार्थ के न होने पर रूप मात्र की मुख्यता से कथन किया जाता है। हपु० १०.९१, ९९

रूपानन्द—एक व्यन्तर देव। इस योनि के पश्चात् यह रजोवली नगरी में कुलन्धर नाम से उत्पन्न हुआ था। पपु० ५ १२३-१२४

रूपानुपात—देशव्रत का पाँचवाँ अतिचार—मर्यादा के बाहर काम करने वालो को निजरूप दिखाकर सचेत करना। हपु० ५८.१७८

रूपिणी—(१) द्वितीय नारायण द्विपृष्ठ की पटरानी। पपु० २० २२७

(२) रावण की रानी। पपु० ७७ १३

(३) इच्छानुसार निज रूप परिवर्तन करने में सक्षम एक विद्या। मपु० ३८.३९

रूप्यकूट—रुक्मिपर्वतस्थ छठा कूट। हपु० ५ १०२-१०३

रूप्यकूला—जम्बूद्वीप के हैरण्यवत क्षेत्र में प्रवाहित एक महानदी। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १२४

रूप्याद्रि—पश्चिम पुष्करार्ध के पश्चिम विदेहक्षेत्र का विजयार्ध पर्वत। हपु० ३४ १५

रेचक—केवली के केवल समुद्घात में होनेवाली आत्मप्रदेशो की अन्तिम उपसहार की अवस्था। मपु० २१ १९१

रेणुकी—राजा पारत की कन्या। जमदग्नि ने इसे केला दिखाकर अपने में आकृष्ट करके इससे यह स्वीकार करा लिया था कि वह उसे चाहती है। इसके पश्चात् पारत से निवेदन करके जमदग्नि ने इसे विवाह लिया था। इसके दो पुत्र थे—इन्द्र (परशुराम) और श्वेतराम। अरिंजय मुनि इसके बडे भाई थे। इसे अरिंजय मुनि ने सम्यक्त्व धन के साथ-साथ कामधेनु नाम की एक विद्या भी दी थी। राजा कृतवीर इससे कामधेनु विद्या ले लेना चाहता था। उसने इससे विद्या देने को निवेदन भी किया किन्तु इसके द्वारा निषेध किये जाने पर कुपित होकर कृतवीर ने इसके पति को मार डाला था। प्रत्युत्तर में इसके पुत्रो ने जाकर कृतवीर के पिता सहस्रबाहु को मार दिया था। इसके पुत्रो ने इक्कीस बार क्षत्रियवश का निर्मूल नाश किया था। अन्त में यह इन्द्र (परशुराम) भी चक्रवर्ती सुभोम द्वारा मारा गया था। मपु० ६५ ८७-११२, १२७-१३२, १४९-१५०

रेवत—अरिष्टपुर के राजा हिरण्यनाभ का बडा भाई। यह बलदेव का मामा था। इसकी चार पुत्रियाँ थी—रेवती, बन्धुमती, सीता और राजीवनेत्रा। ये चारो बलदेव को दी गयी थी। अन्त में यह पिता के साथ दीक्षित हो गया था। हपु० ४४ ३७-४१

रेवती—(१) अरिष्टपुर के राजा के भाई रेवती की पुत्री। यह बलदेव की स्त्री थी। हपु० ४४ ४०-४१ दे० रेवत

(२) एक नक्षत्र। पपु० २० ५०

(३) भरतक्षेत्र में हस्तिनापुर के राजा गगदेव की रानी नदयशा की धाय। इसने नन्दयशा के सातवें पुत्र निर्नामक का पालन-पोषण किया था। महापुराण के अनुसार नदयशा द्वारा सातवाँ पुत्र अलग कर दिये जाने पर यही उसे नन्दयशा की बडी बहिन बन्धुमती को सौंपने गयी थी। मपु० ७१ २६०-२६५, हपु० ३३ १४१-१४४

(४) सुकेतु के भाई विद्याधर रतिमाल की कन्या। यह बलभद्र को दी गयी थी। हपु० ३६ ६०-६१

(५) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में वृद्ध ग्राम के राष्ट्रकूट वैश्य की स्त्री। इसके भगदत्त और भवदेव दो पुत्र थे। मपु० ७६ १५२-१५३

रेवा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। इसी नदी के तट पर पौलोम और चरम दोनो ने मिलकर इन्द्रपुर नगर बसाया था। मपु० २९. ६५, पपु० ३७ १८, हपु० १७ २७

रैदत्त—एक श्रेष्ठी। इसकी स्त्री का नाम धनश्री था। इन दोनो की एक पुत्री थी—रूपश्री जो जम्बूस्वामी से विवाही गयी थी। मपु० ७६ ४८-५०

रैवत—आगामी पन्द्रहवें तीर्थङ्कर का जीव। मपु० ७६.४७३

रैवतक—एक पर्वत-गिरनार। तीर्थंकर-नेमिनाथ का निर्वाण इसी पर्वत से हुआ था। इसी पर्वत पर रुक्मिणी को कृष्ण ने विधिपूर्वक विवाहा

था। इसका अपर नाम शत्रुन्जय था। मपु० ७१.१७९-१८१, ७२ २६७, २७४, हपु० ४२.९६, ५५ २९, पापु० १६ २२

रोग—एक परीषह। इसमें यह "शरीर रोगो का घर है"—ऐसा चिन्तन करते हुए रोग जनित असह्य वेदना होने पर मुनि उसके प्रतिकार की कामना नही करते। मपु० ३६ १२४

रोचन—भद्रसाल वन एक कूट। यह सीता नदी के पूर्वी तट पर मेरु पर्वत से उत्तर की ओर स्थित है। यहाँ दिग्गजेन्द्र-देव निवास करता है। हपु० ५ २०८-२०९

रोधन—लका का एक देश। यह अत्यधिक सुरक्षित था। देव भी यहाँ उपद्रव नही कर सकते थे। पपु० ६ ६७-६८

रोमशल्य—बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८.६८

रोरुका—कच्छ देश की एक नगरी। यहाँ के राजा उदयन को वैशाली के राजा चेटक की चौथी पुत्री प्रभावती विवाही गयी थी। मपु० ७५ ११-१२

रोहिणी—(१) एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने अनेक विद्याओ के साथ यह विद्या भी सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९७, हपु० २७ १३१

(२) अरिष्टपुर नगर के राजा रुधिर और रानी मित्रा की पुत्री। यह राजकुमार हिरण्य की बहिन थी। इसकी जननी का दूसरा नाम पद्मावती तथा पिता का दूसरा नाम हिरण्यवर्मा था। मपु० ७० ३०७, हपु० ३१ ८-११, पापु० ११ ३१ दे० रुधिर

(३) चन्द्रमा की देवी। मपु० ७१ ४४५, पपु० ३ ९१

(४) एक नक्षत्र। तीर्थंकर अजित और अर का जन्म इसी नक्षत्र में हुआ था। पपु० २० ३८, ५४

(५) अन्तिम बलभद्र बलराम की जननी। पपु० २० २३८-२३९

(६) विजयावती नगरी के गृहस्थ सुनन्द की पत्नी। रावण और लक्ष्मण के पूर्वभव के जीव क्रमश अर्हद्दास और ऋषिदास की यह जननी थी। पपु० १२३ ११४-११५

रोहित—(१) रुचक पर्वत का अधिष्ठाता एक देव। हपु० ५ ४६३

(२) चौदह महानदियो में तीसरी नदी। यह महापद्म-सरोवर से निकली है। इसका अपर नाम रोह्या है। मपु० ६३ १९५, हपु० ५ १२३, १३३

(३) सौधर्म और ऐशान स्वर्गो का दसवाँ पटल। हपु० ६ ४५

रोहितकूट—भरतक्षेत्र के हिमवत् कुलाचल का सातवाँ कूट। इसकी ऊँचाई पच्चीस योजन है। विस्तार मूल में पच्चीस योजन, मध्य में पौने उन्नीस योजन और ऊपर साढ़े बारह योजन है। हपु० ५ ५४-५६

रोहिताकूट—महाहिमवान् कुलाचल का चौथा कूट। इसकी ऊँचाई पचास योजन, मध्य में साढ़े सैंतीस योजन और ऊपर पच्चीस योजन है। हपु० ५ ७१-७३

रोहितास्या—चौदह महानदियो मे चौथी नदी। यह पद्मसरोवर के उत्तरी तोरणद्वार से निकलकर तथा उत्तर की ओर मुड़कर पश्चिम समुद्र मे मिली है। मपु० ६३ १९५, ३२ १२३, हपु० ५ १२३, १३२

रोह्या—चौदह महानदियो मे तीसरी नदी। इसका अपर नाम रोहित है। हपु० ५ १२३, दे० रोहित-२

रौद्र—(१) काव्य के नौ रसो में एक रस। मपु० ७४ २१०

(२) रात्रि का पहला प्रहर। मपु० ७४ २५५

रौद्रकर्मा—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बयालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ २०३

रौद्रध्यान—क्रूर और निर्दयी लोगो का आततायी ध्यान। इसके चार भेद है—हिंसानन्द, मृषानन्द, स्तेयानन्द और सरक्षणानन्द। यह पाँचवें गुणस्थान तक होता है। कृष्ण आदि तीन खोटी लेश्याओ से उत्पन्न होकर यह अन्तर्मुहूर्त काल तक रहता है। पहले आर्तध्यान के समान इसका क्षायोपशमिक भाव होता है। नरकगति के दुःख प्राप्त होना इसका फल है। भौहें टेढ़ी हो जाना, मुख का विकृत हो जाना, पसीना आने लगना, शरीर कांपने लगना और नेत्रो का लाल हो जाना इसके बाह्य चिह्न हैं। मपु० २१ ४१-४४, ५२-५३, पपु० १४ ३१, वीवच० ६ ४९-५०

रौद्रनाद—हस्तिनापुर का राजा। यह तीसरे नारायण स्वयभू का पिता था। इसकी रानी का नाम पृथिवी था। पपु० २० २२१-२२६

रौद्रभूति—कौशाम्बी नगरी के राजा विश्वानल और रानी प्रतिसन्ध्या का पुत्र। यह काकोनद म्लेच्छो का स्वामी था। यह लक्ष्मण के आगे नतमस्तक हो गया था। राम ने इससे बालखिल्य को बन्धनमुक्त कराया था। इसके पश्चात् यह बालखिल्य का मित्र बन गया था। अपना समस्त धन बालखिल्य को देकर यह उसका आज्ञाकारी हो गया था। पपु० ३४ ७६-७८, ८४, ९१, ९८, १०४-१०५

रौद्रास्त्र—हजारो अस्त्रो से युक्त एक दिव्य अस्त्र। समुद्रविजय ने भाई वसुदेव के लिए इसका व्यवहार किया था। वसुदेव ने समुद्रविजय के इस अस्त्र को ब्रह्मशिरि-अस्त्र के द्वारा काट डाला था। हपु० ३१ १२२-१२३

रौरुक—घर्मा प्रथम नरकभूमि के तीसरे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में एक सौ अट्ठासी और चारो विदिशाओ में एक सौ चौरासी कुल तीन सौ बहत्तर श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७६, ९१

रौरव—सातवी पृथिवी के अप्रतिष्ठान इन्द्रक की दक्षिण दिशा का महानरक। हपु० ४.१५८

रौप्याद्रि—चाँदी जैसे वर्णवाला विजयार्द्ध-पर्वत। इसका अपर नाम रौप्य शैल है। भरतेश को स्त्री, हाथी और अश्व रत्न इसी पर्वत पर प्राप्त हुए थे। मपु० ४ ८१, ३६ १७३, ३७ ८६, हपु० ४६ १३

ल

लंका—जम्बूद्वीप में दक्षिण दिशा का एक द्वीप एव नगरी। नगरी लवण-समुद्र में विद्यमान द्वीपो के मध्य स्थित राक्षस द्वीप और उसके भी मध्य में स्थित त्रिकूटाचल पर्वत के नीचे स्थित थी। राक्षसवशी

विद्याधर यहाँ रहते थे। रावण के पूर्वज मेघवाहन को राक्षसो के इन्द्र भीम और सुभीम ने द्वीप की रक्षार्थ यह नगरी दी थी। यह वारह योजन लम्बी, नौ योजन चौडी है। इसमे बत्तीस गोपुर और एक रत्नकोट है। यह मेरु के समान ऊँची तथा वनोपवनो से अलङ्कृत है। रावण यहाँ का राजा था। मपु० ६८ २५६-२५७, २९५-२९८, पपु० ५ १४९-१५८, ४३ २१

लंकाशोक—लका का एक राजा। लका मे इसके पूर्व चण्ड ने और बाद मे मयूरवान् ने शासन किया था। पपु० ५ ३९७

लंकासुन्दरी—लका के सुरक्षाधिकारी वज्रमुख की पुत्री। हनुमान ने युद्ध मे इसके पिता को मार डाला था। पितृ-वध से कुपित होकर इसने प्रथम तो हनुमान से युद्ध किया किन्तु वाद में कामवाणो से हनुमान के हृदय में प्रवेश कर गई। इसने हनुमान को मारने के लिए उठाई शक्ति सहृत कर ली थी। मुग्ध होकर इसने स्वनामाकित वाण भेजा। हनुमान उसे पढकर इसके पास आये और इसके प्रेमपाश में आबद्ध हो गये थे। हनुमान के समझाने से यह पिता के मरण का शोक भूल गयी थी। पपु० ५२ २३-६७

लकुच—एक प्रकार का फल। वर्तमान का यह लीची फल कहा जा सकता है। भरतेश ने वृषभदेव की पूजा मे अन्य फलो के साथ इस फल का भी व्यवहार किया था। मपु० १७ २५२

लकुट—एक शस्त्र-लाठी। चौथे मनु क्षेमन्धर ने सिह, व्याघ्र आदि पशुओ से अपनी रक्षा करने के लिए प्रजा को इसका उपयोग बताया था। मपु० ३ १०५

लक्षण—(१) अष्टाग निमित्त ज्ञान का छठा अग। इससे शारीरिक चिह्न देखकर मनुष्य के ऐश्वर्य एव दारिद्रय आदि को बताया जाता है। तीर्थंकरो के शरीर पर स्वस्तिक आदि एक सौ आठ लक्षण होते हैं। मपु० १५ ३७-४४, ६२ १८१, १८८, हपु० १० ११७ दे० अष्टाग-निमित्तज्ञान

(२) परमेष्ठियो के गुण रूप मे कहे गये सत्ताईस सूत्रपदो मे एक सूत्रपद। इसमें मुनि जिनेन्द्र के लक्षणो का चिन्तन करते हुए तप करता है। मपु० ३९ १६३-१६६, १७१

लक्षण्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

लक्षपर्वा—सोलह विद्या निकायो की एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि विद्याधरो को दी थी। हपु० २२ ६७

लक्ष्मण—(१) दुर्योधन का पुत्र। इसने युद्ध में अभिमन्यु का धनुष तोडा था। पापु० १९ २२६

(२) अवसर्पिणी काल के दु खमा-सुषमा नामक चौथे काल मे उत्पन्न शलाकापुरुष एव आठवें वासुदेव नारायण। इन्होंने कोटि-शिला घुटनो तक उठाई थी। ये तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत के तीर्थ में हुए थे। वाराणसी नगरी के राजा दशरथ इनके पिता और रानी कैकेयी माँ थी। ये माघ शुक्ल प्रतिपदा के दिन विशाखा नक्षत्र मे जन्मे थे। इनकी कुल आयु बारह हजार वर्ष थी। इसमें कुमारकाल का समय सौ वर्ष, दिग्विजय का समय चालीस वर्ष और राज्यकाल एक हजार अठारह सौ बासठ वर्ष रहा। ये पन्द्रह धनुष ऊँचे थे। शरीर बत्तीस लक्षणो से विभूषित था। ये वज्रवृषभनाराच सहनन और समचतुरस्र-सस्थान के धारी थे। इनकी नील कमल के समान शारीरिक कान्ति थी। राम इनके बडे भाई और भरत तथा शत्रुघ्न छोटे भाई थे। यज्ञ की सुरक्षा के लिए राजा जनक के आमन्त्रण पर राजा दशरथ ने पुरोहित से परामर्श करके राम के साथ ससैन्य इन्हें भेजा था। वहाँ से लौटकर दोनो भाई सीता सहित अयोध्या आये। अयोध्या मे राजा दशरथ ने पृथिवीदेवी आदि सोलह कन्याओ के साथ इनका विवाह किया था। दशरथ ने इन्हें युवराज बनाकर राम के साथ बनारस भेजा था। रावण द्वारा सीता-हरण किये जाने पर शोक-सन्तप्त राम को इन्होने धैर्य बँधाकर सीता वापस लाने का उपाय करने को कहा था। लका-विजय के पूर्व इन्होंने बाली को मारा था। जगत्पाद पर्वत पर सात दिन निराहार रहकर इन्होने प्रज्ञप्ति-विद्या सिद्ध की थी। रावण से युद्ध करने ये राम के साथ लका गये थे। लका पहुँचने पर सुग्रीव और अणुमान् इन्हें और राम को अपने द्वारा सिद्ध की हुई गरुडवाहिनी, सिंहवाहिनी, बन्धमोचिनी और हननावरणी ये चार विद्याएँ दी थी। रावण के युद्धस्थल में आने पर ये विजय-पर्वत-हाथी पर सवार होकर युद्धार्थ निकले थे। रावण के मायामय युद्ध करने पर इन्होने भी इन्द्रजीत के साथ मायामय युद्ध किया था। रावण द्वारा नारायण पजर मे घेर लिये जाने पर अपनी विद्या से ये उस पजर को तोडकर बाहर निकल आये थे। रावण ने इनके ऊपर चक्र भी चलाया था किन्तु वह इनके दाहिने हाथ पर आकर ठहर गया था। इन्होने इसी चक्र से रावण का सिर काट डाला था। विजयोपरान्त इन्होने विभीषण को लका का राजा बनाया और वहाँ की समस्त विभूति उसे दे दी। लंका से लौटकर राम के साथ ये सुन्दरपीठपर्वत पर ठहरे थे। यहाँ देव और विद्याधर राजाओ ने राम के साथ इनका अभिषेक किया था। यही इन्होने कोटिशिला उठाई थी। यहाँ के निवासी यक्ष सुनन्द ने प्रसन्न होकर इन्हें सौनन्दक नाम की तलवार दी थी। प्रभासदेव को वश मे करने से उससे सन्तानक माला, सफेद-छत्र और आभूषण प्राप्त हुए थे। इन्होने सोलह हजार पट्टबन्ध राजाओ और एक सौ दस नगरियो के स्वामी विद्याधर राजाओ को अपने अधीन किया था। इनकी यह विजय बयालीस वर्ष में पूर्ण हुई थी। इस विजय के पश्चात् ये अयोध्या लौट आये थे। पृथिवीसुन्दरी आदि इनकी सोलह हजार रानियाँ थी। सुदर्शन चक्र, कौमुदी गदा, सौनन्दक खड्ग, अधोमुखी शक्ति, शारग धनुष, पाचजन्य शख और कौस्तुभ महामणि ये सात इनके रत्न थे। इनके इन रत्नो की एक-एक हजार यक्ष देव रक्षा करते थे। शिवगुप्त मुनिराज के समझाने पर भी ये भोगो में आसक्त रहे। निदान-शल्य के कारण सम्यग्दर्शन आदि कुछ ग्रहण न कर सके। पृथिवीचन्द्र इनका पुत्र था। असाध्य रोग से इनका माघ कृष्ण अमावस्या के दिन मरण हुआ। ये मरकर पकप्रभा पृथिवी में गये। राम ने राज्यलक्ष्मी इन्ही के पुत्र

को सौंपकर अपने हाथ से उसका पट्ट बाँधा था। इनकी पृथिवी-सुन्दरी आदि रानियो ने श्रुतवती आर्यिका से दीक्षा ले ली थी। ये पकप्रभा से निकलकर क्रम-क्रम से सयम धारण कर मोक्ष प्राप्त करेंगे। पद्मपुराण के अनुसार ये अयोध्या के राजा दशरथ और उनकी रानी कैकेयी के पुत्र थे। इनके बडे भाई का नाम पद्म था। भरत और शत्रुघ्न इनके छोटे भाई थे। इन्हें सर्वशास्त्र विषयक ज्ञान इनके गुरु हरि से प्राप्त हुआ था। जनक के यज्ञ की सुरक्षा के लिए ये पद्म के साथ मिथिला गये थे। इनके इस कौशल को देखकर विद्याधर चन्द्रवर्धन ने इन्हें बुद्धिमती आदि अठारह कन्याएँ दी थी। पद्म के साथ ये भी वन गये थे। वनवास के समय इन्होने उज्जयिनी के राजा सिंहोदर को परास्त किया और वज्रकर्ण की उस सिंहोदर नामक राजा से मित्रता कराई थी। इस पर वज्रकर्ण ने इन्हें अपनी पुत्रियाँ विवाही थी। सिंहोदर ने भी इन्हें कन्याएँ दी थी। इन्हें यहाँ कुल तीन सौ कन्याएँ प्राप्त हुई थी। इन्होने विन्ध्यचल में म्लेच्छराज रौद्रभूति को परास्त किया था। वेजन्तपुर के राजा पृथिवीधर की पुत्री वनमाला को इन्होने आत्मघात से बचाया था और उसे अपनाया था। अतिवीर्य के पुत्र विजयरथ ने अपनी बहिन रतिमाला इन्हें दी थी। वशस्थल-पर्वत पर इन्हें सूर्यहास-खड्ग मिला। इससे इन्होने शम्बूक को और पिता खरदूषण को मारा था। वन में वेलन्धर नगर के राजा समुद्र-विद्याधर ने इन्हें अपनी चार कन्याएँ दी थी। महा-लोचन-गरुडेन्द्र ने गरुडवाहिनी-विद्या दी थी। सुग्रीव ने इनकी और इनके भाई राम की पूजा की थी। इन्होने कोटिशिला को अपनी भुजाओ से ऊपर उठाया था। पद्म-रावण युद्ध में इन्द्रजित् के महातामस अस्त्र को इन्होने सूर्यास्त्र से तथा नागास्त्र को गरुडास्त्र से दूर कर दिया था। इन्द्रजित् ने इन्हें रथ रहित भी किया। उसने तामशास्त्र छोडकर अन्धकार में रावण को छिपा लिया किन्तु इन्होने सूर्यास्त्र छोडकर इन्द्रजित् का मनोरथ पूर्ण नही होने दिया। इनके नागवाणो से आहत होकर वह पृथिवी पर गिर गया था। रावण द्वारा विभीषण पर चलाये गये शूल को इन्होने वाणो से ही नष्ट कर दिया था। इस पर कुपित होकर रावण ने इन पर शक्ति-प्रहार किया। उससे आहत होकर ये मूर्च्छित हो गये। देवगीतपुर के निवासी चन्द्रप्रतिम के यह बताने पर कि द्रोणमेघ की पुत्री विशल्या के आते ही लक्ष्मण की मूर्च्छा दूर हो जायगी। पद्म ने भामण्डल के द्वारा विशल्या को वहाँ बुलाया। वह आई और लक्ष्मण की मूर्च्छा दूर हुई। युद्ध पुन आरम्भ हुआ। इन्होने सिद्धार्थ अस्त्र से रावण के सभी अस्त्र विफल कर दिये। रावण ने बहुरूपिणी विद्या का प्रयोग किया। इन्होने उसे भी नष्ट किया। अन्त में रावण ने इन्हे मारने के लिए चक्र का प्रहार किया। चक्र इनकी प्रदीक्षणा देकर इनके हाथ में आ गया और स्थिर हो गया। इसी चक्र के प्रहार से इन्होंने रावण को मारा। इसके पश्चात् विभीषण के निवेदन पर ये भी राम के साथ लका मे छ वर्ष रहे। लंका से लौटते समय अनेक राजाओ को जीता। विद्या-धर भी इनके आधीन हुए। समस्त पृथिवी पर इनका स्वामित्व हुआ। इसी समय ये नारायण पद को प्राप्त हुए। चक्र, छत्र, धनुष, शक्ति, गदा, मणि और खड्ग ये सात रत्न भी इन्हें इसी समय प्राप्त हुए। इनकी सत्रह हजार रानियाँ थी। इनके कुल अढाई सौ पुत्र थे। राम के द्वारा किये गये सीता के परित्याग को इन्होने उचित नही समझा। परन्तु राम के आगे ये कुछ नही कह सके। परिचय के अभाव में अज्ञात अवस्था मे इन्हे लवणाकुश और मदनाकुश से भी युद्ध करना पडा पर यह विदित होते ही कि वे राम के ही पुत्र है, इन्होंने युद्ध छोडकर उन दोनो का स्नेह मे आलिंगन किया था। रत्नचूल और मृगचूल देवो के द्वारा राम के प्रति इनके स्नेह की परीक्षा के समय राम का कृत्रिम मरण दिखाये जाने से इनकी मृत्यु हुई। मरकर ये वालुकाप्रभा भूमि में उत्पन्न हुए। सीता के जीव ने स्वर्ग से इस भूमि में जाकर इन्हें सम्बोधा तथा सम्यक्दर्शन प्राप्त कराया। ये तीर्थंकर होकर आगे निर्वाण प्राप्त करेंगे। पाँचवें पूर्वभव में ये वसुदत्त और चौथे पूर्वभव में श्रीभूति ब्राह्मण, तीसरे में देव, दूसरे में विद्याधर पुनर्वसु और प्रथम पूर्वभव में सनत्कुमार स्वर्ग में देव थे। मपु० ६७ १४८-१५५, १६४-१६५, ६८ ३०-३८, ४७-४८, ७७-८३, ११०-११४, १७८-१८२, २६४-२६८, ४६४-४७२ ५०१, ५२१-५२२, ५४५-५४६, ६१८-६३४, ६४३-६९०, ७०१-७०४, ७१२, ७२२, पपु० २२ १७३-१७५, २५ २३-५८, २७ ७८-८३, २८ २४७-२५०, ३१ १९५-२०१, ३३ ७४, १८५-२००, २४१-२४३, ३०७-३१३, ३४ ७१-७८, ३५ २२-२७, ३६ १०-४९, ७३, ३७ १३९-१४७, ३८ १-३, ६०-१४१, ३९ ७१-७३, ४३ ४०-१११, ४४ ४८-१०३, ४५ १-३८, ४७ १२८, ४८ २१४, ५४ ६५-६९, ६० १२८-१३५, १४०, ६२ ३३-३४, ५७-६५, ७१-८४, ६३ १-३, २५, ६४ २४-४६, ६५ १-६, ३१-३८, ८०, ७४ ९१-११४, ७५ २२-६०, ७६ ३२-३३, ८०, १२३, ८३ ३६, ९४ १-३५, ४०, ९७ ७-१२, २६, ५०-५१, १०३ १६-५६, १०५ २६३, ११० १-९५, ११५ २-१५ १०६ ५-४४, १७५, २०५-२०६, ११८ २९-३०, १०६, १२३, १२३ १-५३, ११२-१३३, हपु० ५३ ३८, ६० ५३१, वीवच० १८ १०१, ११३

लक्ष्मणसेन—एक आचार्य। ये अर्हत् मुनि के शिष्य तथा पद्मपुराणकार रविषेण के गुरु थे। पपु० १२३ १६८

लक्ष्मणा—(१) सिंहलद्वीप के राजा श्लक्ष्णरोम और रानी कुरुमती की पुत्री। कृष्ण और बलदेव सिंहलद्वीप जाकर और वहाँ के सेनापति द्रुमसेन को मारकर इसे हर लाये थे। द्वारिका आकर कृष्ण ने इसे विधिपूर्वक विवाहा था तथा इसे अपनी पाँचवी पटरानी बनाया था। महासेन इसका भाई था। महापुराण में इसे सुप्रकारनगर के राजा शबर और रानी श्रीमती की पुत्री कहा है तथा पद्म और ध्रुवसेन इसके बडे भाई बताये हैं। पूर्वभवो में यह अरिष्टपुर नगर के राजा वासव की रानी वसुमती थी। कुचेष्टापूर्वक मरकर यह भीलनी हुई। इस पर्याय में इसका व्रताचरणपूर्वक मरण होने से यह इन्द्र की नर्तकी हुई। पश्चात् चन्द्रपुर नगर के राजा महेन्द्र की पुत्री कनकमाला हुई। इस पर्याय में इसने मुक्तावली तप किया। अन्त में मरकर

तप के प्रभाव से तीसरे स्वर्ग की इन्द्राणी हुई और इसके पश्चात् स्वर्ग से चयकर यह राजा शम्बर की पुत्री हुई। मपु० ७१ ११७, १२६-१२७, ४००-४१०, हपु० ४४ २०-२५, ६० ८५

(२) सन्ध्याकार नगर के राजा सिंहघोष की रानी और हिडिम्बा की जननी। पापु० २६ २९

(३) भरतक्षेत्र में चन्द्रपुर के राजा महासेन की रानी। यह तीर्थंकर चन्द्रप्रभा की जननी थी। मपु० ५४ १६३-१६४, १७०-१७३, पपु० २० ४४

(४) मगध देश में राजगृहनगर के राजा विश्वभूति के छोटे भाई विशाखभूति की रानी। यह विशाखनन्द की जननी थी। मपु० ५७ ७३, ७४.८८, वीवच० ३ ६-९

लक्ष्मी—(१) छः जिनमातृक देवियों में एक दिक्कुमारी देवी। इसकी आयु एक पल्य की होती है। गर्भावस्था में जिनमाता की सेवा करती है। महापुराण में यही देवी व्यन्तरेन्द्र की वल्लभा और पुण्डरीक हृदयवासिनी एक व्यन्तर देवी भी कही गयी है। मपु० १२ १६३-१६४, ३८ २२६, ६३.२०० पपु० ३ ११२-११३, हपु० ५ १३०-१३१, वीवच० ७ १०५-१०८

(२) कुशाग्रपुर के राजा शिवाकर की रानी। यह छठे नारायण पुण्डरीक की जननी थी। पपु० २० २२१-२२६

(३) रत्नपुर के राजा विद्याग की रानी। यह विद्यासमुद्घात की जननी थी। पपु० ६ ३९०

(४) अंजना के जीव कनकोदरी की सौत। पपु० १७ १६६-१६७

(५) रावण और लक्ष्मण की आगामी भव की जननी। पपु० १२३ ११२-११९

(६) रावण की रानी। पपु० ७७ १४

(७) अक्षपुर के राजा हरिध्वज की रानी। यह राजा अरिंदम की जननी थी। पपु० ७७ ५७

(८) दशरथ की पुत्रवधू और भरत की भाभी। पपु० ८३.९४

(९) राजा वज्रजंघ की रानी। शशिचूला इसकी पुत्री थी। पपु० १०१ २

लक्ष्मीकूट—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित पैंतीसवीं नगरी। हपु० २२.९७

(२) शिखरिन् कुलाचल का छठा कूट। हपु० ५ १०६

लक्ष्मीग्राम—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगधदेश का एक ग्राम। कृष्ण की पटरानी रुक्मिणी अपने एक पूर्वभव में यहाँ सोम ब्राह्मण की स्त्री लक्ष्मीमति थी। मपु० ७१ ३१७-३४१, हपु० ६० २६

लक्ष्मीतिलक—एक मुनि। ये भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित अरुणनगर के राजा सिंहवाहन के दीक्षागुरु थे। पपु० १७ १५४-१५८

लक्ष्मीधर—विद्याधरों का एक नगर। लक्ष्मण ने इसे अपने अधीन किया था। पपु० ९४ ५

लक्ष्मीपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०७

लक्ष्मीमति—(१) राजा युधिष्ठिर की रानी। पापु० १६.६२ दे०—लक्ष्मीमती-४

(२) कृष्ण की पटरानी रुक्मिणी के पूर्वभव का जीव। यह ब्राह्मण सोमदेव की पत्नी थी। मपु० ७१ ३१७-३१९ दे० लक्ष्मीग्राम

लक्ष्मीमती—(१) हस्तिनापुर के राजा सोमप्रभ की रानी। यह जयकुमार की जननी थी। मपु० ४३ ७८-७९, हपु० ९ १७९

(२) हस्तिनापुर के चक्रवर्ती महापद्म की रानी। चक्रवर्ती ने इसी रानी के ज्येष्ठ पुत्र पद्म को राज्य देकर छोटे पुत्र विष्णुकुमार के साथ दीक्षा ली थी। हपु० २०.१२-१४

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगधदेश के लक्ष्मीग्रामवासी ब्राह्मण सोमदेव की स्त्री। मुनि की निन्दा के फलस्वरूप यह मुनिनिन्दा के सातवें दिन ही उदुम्बर कुष्ठ से पीड़ित हो गयी थी। शरीर से दुर्गन्ध आने लगी थी। अनेक पर्यायों में भटकने के पश्चात् यही कृष्ण की पटरानी रुक्मिणी हुई। इसका अपर नाम लक्ष्मीमति था। मपु० ७१.३१७-३४१, हपु० ६० २६-३१

(४) पाण्डव-युधिष्ठिर की रानी। इसका अपर नाम लक्ष्मीमति था। हपु० ४७ १८, पापु० १६ ६२

(५) रुचकगिरि की दक्षिण दिशा में स्थित रुचककूट की रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७०९ दे० रुचकवर

(६) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में रत्नसंचयनगर के राजा क्षेमकर के पुत्र वज्रायुध की रानी। यह सहस्रायुध की जननी थी। मपु० ६३ ३७-३९, ४४-४५

(७) भरतक्षेत्र में चक्रपुर नगर के राजा वरसेन की रानी। यह नारायण पुण्डरीक की जननी थी। मपु० ६५ १७४-१७७

(८) विदेहक्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त की रानी। श्रीमती इसी की पुत्री थी। मपु० ६ ५८-६०

(९) वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन और रानी सुप्रभादेवी की दूसरी पुत्री। इसका अपर नाम अक्षमाला था जो अर्ककीर्ति को दी गयी थी। मपु० ४३ १२४, १२७, १३१, १३६, ४५ २१, २९

लक्ष्मीवती—हस्तिनापुर के राजा सोमप्रभ की रानी। मपु० ४३ ७८-७९ दे० लक्ष्मीमती-१

लक्ष्मीवान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १८२

लघिमा—(१) एक विद्या। यह दशानन को प्राप्त थी। पपु० ७.३२६-३३२

(२) अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व और वशित्व इन आठ सिद्धियों में चौथी सिद्धि। भरतेश को ये आठों सिद्धियाँ प्राप्त थी। मपु० ३८ १९३

लघुकरी—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने इसे सिद्ध किया था। मपु० ६२ ३९७

लतांग—चौरासी लाख ऊह प्रमित काल। महापुराण के अनुसार यह हूहू

काल चौरासी का गुणा करने से प्राप्त सख्या प्रमित होता है। मपु० ३ २२५-२२६, हपु० ७ २९

लता—चौरासी लाख लताग प्रमित काल। महापुराण के अनुसार यह लताग काल में चौरासी लाख का गुणा करने से प्राप्त सख्या प्रमित होता है। मपु० ३ २२६, हपु० ७ २९

लतावन—समवसरण का लता समूह से युक्त एक वन। मपु० १९ ११५, २२ ११८

लब्धाभिमान—राजा वसु की वश-परम्परा में हुआ राजा वज्रबाहु का पुत्र। वह राजा भानु का पिता था। हपु० १८ १-३

लब्धि—(१) भावेन्द्रिय के लब्धि और उपयोग इन दो रूपो मे प्रथम रूप। हपु० १८ ८५

(२) सम्यक्त्व प्राप्ति की पूर्व सामग्री। यह पाँच प्रकार की है—क्षयोपशम, विशुद्धि, प्रायोग्य, देशना तथा करण। इनके प्राप्त होने पर जो आत्मविशुद्धि के अनुसार दर्शनमोहनीय का उपशम, क्षयोपशम अथवा क्षय करता है उसे सर्वप्रथम औपशमिक, पश्चात् क्षायोपशमिक और तत्पश्चात् क्षायिक-सम्यक्त्व प्राप्त होता है। हपु० ३ १४१-१४४

लम्पाक—(१) एक मागलिक वाद्य। यह राम की सेना के लका की ओर प्रस्थान करते समय बजाया गया था। पपु० ५८ २७

(२) एक देश। लवणाकुश और मदनाकुश दोनो भाई लोकाक्ष-नगर के राजा कुबेरकान्त को पराजित करने के पश्चात् नौकाओ के द्वारा यहाँ आये थे और उन्होंने यहाँ के राजा एककर्ण को पराजित किया था। यहाँ से वे दोनो भाई कैलाश की ओर गये थे। पपु० १०१ ७०-७५

लम्बितांधर—यह विद्याधर विम्बोष्ठ का पुत्र और रक्तोष्ठ का पिता था। पपु० ५ ५१-५२

लम्बुसा—रुचकगिरि के उत्तरदिशावर्ती स्फटिककूट की एक देवी। हपु० ५ ७१५ दे० रुचकवर

लय—तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

ललाटिका—ललाट पर चन्दन की लिखी गयी अर्धचन्द्र की आकृति। यह स्त्रियो के सौन्दर्य की वृद्धि करती है। पपु० ३ १९०

ललितांग—(१) राजा महाबल का जीव। यह ऐशान स्वर्ग का एक देव था। यह तपाये हुए स्वर्ण के समान कान्तिमान था। इसकी ऊँचाई सात हाथ थी। यह एक हजार वर्ष बाद मानसिक आहार और एक पक्ष में श्वासोच्छ्वास लेता था। इसकी चार महादेवियाँ तथा चार हजार देवियाँ थी। महादेवियो के स्वयप्रभा, कनकप्रभा, कनकलता और विद्युल्लता नाम थे। आयु के अन्त में अच्युत स्वर्ग की जिन प्रतिमाओं की पूजा करते हुए तथा चैत्यवृक्ष के नीचे बैठकर नमस्कार मन्त्र को जपते हुए स्वर्ग से चयकर राजा वज्रबाहु का पुत्र वज्रजघ हुआ। यही जीव आगामी सातवें भव में नाभेय-वृषभदेव हुआ। मपु० ५ २५३-२५४, २७८-२८३, ६ २४-२९

(२) इस नाम का एक विट। जम्बूकुमार ने इसकी एक कथा विद्युच्चोर को सुनायी थी। मपु० ७६.९४

ललितांगद—त्रिपुर नगर का एक विद्याधर राजा। रथनूपुर के राजा ज्वलनजटी के बहुश्रुत मन्त्री ने राजा के समक्ष उसकी पुत्री स्वयप्रभा के लिए इस राजा का नाम प्रस्तावित किया था। मपु० ६२ २५, ३०, ४४, ६७

लल्लक—छठी पृथिवी के तीसरे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो महादिशाओ में आठ और विदिशाओ मे चार, कुल बारह श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४, ८४, १४७

लव—सात स्तोक प्रमित काल। हपु० ७ २०, दे० काल

लवणसैन्धव—लवणसमुद्र। इसके जल का स्वाद नमक के समान खारा होता है। इसके महामच्छो का सम्मूर्च्छन जन्म होता है। ये मच्छ इसके तट पर नौ योजन और मध्य में अठारह योजन लम्बे होते है। तीर्थङ्कर वृषभदेव के राज्याभिषेक के लिए इस समुद्र का जल लाया गया था। मपु० १६ २१३, हपु० ५ ६२८, ६३०, दे० लवणाम्भोधि

लवणांकुश—राम और सीता का पुत्र। यह मदनाकुश के साथ युगल रूप में पुण्डरीक नगर के राजा वज्रजघ के यहाँ श्रावण मास की पूर्णिमा के दिन जन्मा था। सिद्धार्थ क्षुल्लक ने इन्हें शस्त्र और शास्त्र विद्याएँ सिखाई थी। विवाह योग्य होने पर राजा वज्रजघ ने इन्हें शशिचूला आदि अपनी बत्तीस कन्याएँ दी थी। इन दोनो भाइयो ने विवाह के पश्चात् दिग्विजय करके अनेक राजाओ को अपने अधीन किया था। नारद से राम और लक्ष्मण का परिचय ज्ञातकर तथा गर्भावस्था मे उनके द्वारा सीता का त्याग किया जाना जानकर दोनो ने राम-लक्ष्मण से घोर युद्ध किया था। राम और लक्ष्मण इन्हें परास्त नही कर सके थे। इस युद्ध में राम ने लवणाकुश का तथा लक्ष्मण ने मदनाकुश का सामना किया था। ये दोनो कुमार राम और लक्ष्मण का परिचय ज्ञात कर चुके थे। अत ये दोनो तो राम लक्ष्मण को चोट पहुँचाये बिना युद्ध करते रहे जबकि राम और लक्ष्मण ने इन कुमारो को शत्रु समझकर युद्ध किया था। लक्ष्मण ने तो चक्र भी चलाया था। अन्त में सिद्धार्थ क्षुल्लक ने इन दोनो कुमारो का राम और लक्ष्मण को परिचय देते हुए जैसे ही उन्हें सीता का पुत्र बताया कि राम और लक्ष्मण ने अपने-अपने शस्त्र फेंक दिये और दोनो सहर्ष इन कुमारो से जा मिले थे। ससार से विरक्त होने पर राम ने इसी के पुत्र अनगलवण को राज्य सौंपा था। पपु० १०० १६-४७, ६९, १०१ १-२, ६७, १०२ ३१-४५, १६९-१७०, १८३, १०३ १६, २९-३०, ४३-४८, ११९ १-२, १२३ ८२ दे० मदनाकुश

लवणाम्भोधि—जम्बूद्वीप को घेरे हुए दो लाख योजन विस्तारवाला लवण-समुद्र। विजयार्ध पर्वत की पूर्व और पश्चिम कोटियाँ इसमें अवगाहन करती हैं। इसमें हजारों द्वीप स्थित स्थित हैं। इसकी परिधि पन्द्रह लाख, इक्यासी हजार, एक सौ उनतालीस और एक योजन में कुछ कम है। शुक्लपक्ष में इसका जल पाँच हजार योजन तक ऊँचा हो जाता है तथा कृष्णपक्ष में स्वाभाविक ऊँचाई ग्यारह हजार योजन तक घट जाती है। यह सकुचित होता हुआ नीचे भाग में नाव के

समान रह जाता है और ऊपर पृथिवी पर विस्तीर्ण हो जाता है। इसमें वेदी से पचानवे हजार योजन भीतर प्रवेश करने पर पूर्व में पाताल दक्षिण में बडवामुख, पश्चिम में कदम्बुक और उत्तर में यूपकेसर पातालविवर हैं। विदिशाओं में चार छुद्र पातालविवर हैं। वे ऊपर-नीचे एक-एक हजार तथा मध्य में दश हजार योजन विस्तृत हैं। इनकी ऊँचाई भी दश हजार योजन है। पूर्वदिशा के पातालविवरो की दोनो ओर कौस्तुभ और कौस्तुभास दक्षिणदिशा के पातालविवरो के समीप उदक और उदवास पर्वत हैं। इसकी पूर्वदिशा मे एक पैर-वाले, दक्षिण में सीगवाले, पश्चिम मे पूँछवाले और उत्तर में गूँगे मनुष्य रहते है। विदिशाओ में खरगोश के समान कानवाले मनुष्य हैं। एक पैरवालो की उत्तर और दक्षिण दिशा में क्रम से घोडे और सिंह के समान मुखवाले मनुष्य रहते है। सीगवाले मनुष्यो की दोनों ओर शष्कुली के समान कानवाले और पूँछवालो की दोनो ओर क्रम से कुत्ते और वानर मुखवाले मनुष्य रहते है। गूँगे मनुष्यो की दोनो ओर शष्कुली के समान कानवाले रहते है। एक पैरवाले मनुष्य गुफाओ मे रहते और मिट्टी खाते हैं। शेष वृक्षो के नीचे रहते और फल-फूल खाते हैं। मरकर ये भवनवासी देव होते हैं। मपु० ४ ४८, १८ १४९, पपु० ३ ३२, ५ १५२, हपु० ५ ४३०-४७४, ४८२-४८३, दे० लवणसैन्धव

लवणार्णव—मथुरा के राजा मधु का पुत्र। शत्रुघ्न के सेनापति कृतान्त-वक्त्र के साथ युद्ध करते हुए शक्ति लगने से यह पृथिवी पर गिर गया था। पपु० ८९ ४-९, ७१-८०

लांगल—(१) सनत्कुमार और माहेन्द्र स्वर्ग का पाँचवाँ इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४८

(२) रावण के समय का एक शस्त्र। पपु० १२ २५८

(३) बलभद्र राम का एक रत्न-हल। पपु० १०३ १३

लांगलखातिका—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। भरतेश के सेनापति ने भरतेश की दिग्विजय के समय इसे ससैन्य पार किया था। पापु० ३०.६२

लांगलावर्ता—पश्चिम विदेहक्षेत्र के आठ देशो में एक देश। यह सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य में प्रदक्षिणा रूप से स्थित है। इसके छ खण्ड हैं। मजूषा नगरी इसकी राजधानी है। मपु० ६३ २०८-२१३, हपु० ५ २४५-२४६

लांगूल—एक दिव्यास्त्र। यह हनुमान् के पास था। पपु० ५४ ३७, १०२ १७०-१७१

लाट—एक देश। भरतेश ने यहाँ के राजा को अपनी आधीनता स्वीकार करायी थी। तीर्थंकर नेमिनाथ विहार करते हुए यहाँ आये थे। मपु० ३० ९७, हपु० ५९ ११०

लान्तव—(१) सातवाँ स्वर्ग। मपु० ७ ५७, पपु० १०५ १६६-१६८, ५९ २८०, हपु० ६ ३७, ५०

(२) एक इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५०

लालाटिक—एक प्रकार का पद। इस पद के धारी अपने स्वामी के वशी-भूत होकर उनकी आज्ञा के लिए उनके मुख की ओर ताका करते है। मपु० ३० ९७

लास्य—सुकुमार प्रयोगो से युक्त ललित नृत्य। मपु० १४ १५५

लिक्षा—आठ बालाग्र प्रमित क्षेत्र का एक प्रमाण। हपु० ७ ४०

लिपिज्ञान—वाणिक बोध। इसके चार मुख्य भेद है। उनमे जो लिपि अपने देश मे आमतौर से प्रचलित होती है वह अनुवृत्त, लोग अपने-अपने संकेतानुसार जिसकी कल्पना कर लेते हैं वह विकृत, प्रत्यंग आदि वर्णों में जिसका प्रयोग होता है वह सामयिक तथा वर्णों के बदले पुष्प आदि पदार्थ रखकर जो ज्ञान किया जाता है वह नैमित्तिक लिपिज्ञान कहलाता है। इसके प्राच्य, मध्यम, यौधेय और समान आदि देशो की अपेक्षा अनेक अवान्तर भेद हैं। पपु० २४ २४-२६

लिपिसख्यानसंग्रह—गर्भान्वय-क्रियाओ में तेरहवी क्रिया। इसमें शिशु को पाँचवें वर्ष मे अक्षर-ज्ञान का आरम्भ किया जाता है। सामाजिक स्थिति के अनुसार सामग्री लेकर जिनेन्द्र-पूजा की जाती है। इसके पश्चात् अध्ययन कराने में कुशल व्रती गृहस्थ की शिशु को पढाने के लिए नियुक्ति की जाती है। इस क्रिया में शब्दपारभागी भव, अर्थ-पारभागी भव, शब्दार्थसबधपारभागीभव मन्त्रो का उच्चरण किया जाता है। मपु० ३८ ५६, १०२-१०३, ४० १५२

लुब्धक—म्लेच्छ जाति के लोग। इन्हें वर्तमान के बहेलिया से समीकृत किया जा सकता है। मपु० १६.१६१

लेश्या—(१) अग्रायणीयपूर्व की पचमवस्तु के चौथे कर्मप्रकृति प्राभृत का तेरहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१, ८३ दे० अग्रायणीयपूर्व

(२) कषाय के उदय से अनुरजित मन, वचन, काय की प्रवृत्ति। इसके मूलत. दो भेद हैं—द्रव्यलेश्या और भावलेश्या। विशेषरूप से इसके छ भेद हैं—पीत, पद्म, शुक्ल, कृष्ण, नील और कापोत। मपु० १० ९६-९८, पापु० २२ ७२

लेश्याकर्म—अग्रायणीयपूर्व के चौथे प्राभृत का चौदहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१, ८३, दे० अग्रायणीयपूर्व

लेश्यापरिणाम—अग्रायणीयपूर्व के चौथे प्राभृत का पन्द्रहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१, ८४ दे० अग्रायणीयपूर्व

लेह्य—भोज्य पदार्थों का एक भेद। ये चार प्रकार के होते हैं—खाद्य, स्वाद्य, लेह्य और पेय। इनमें लेह्य पदार्थ चाटकर खाये जाते है। पपु० २४ ५५

लोक—आकाश का वह भाग जहाँ जीव आदि छहो द्रव्य विद्यमान होते हैं। यह अनादि, असख्यातप्रदेशी तथा लोकाकाश सज्ञक होता है। इसका आकार नीचे, ऊपर और मध्य मे क्रमश. वेत्रासन, मृदग, और झालर सदृश है। इस प्रकार इसके तीन भेद है—अधोलोक, मध्य-लोक और ऊर्ध्वलोक। यह कमर पर हाथ रखकर और पैर फैलाकर अचल खडे मनुष्य के आकार के समान होता है। विस्तार की अपेक्षा यह अधोलोक में सात रज्जु है। इसके पश्चात् क्रमश. ह्रास होते-होते मध्यलोक में एक रज्जु और आगे प्रदेश वृद्धि होने से ब्रह्मब्रह्मोत्तर स्वर्ग के समीप पाँच रज्जु विस्तृत रह जाता है। तीनो लोकों की

लम्बाई चौदह रज्जु इसमें सात रज्जु सुमेरु पर्वत के नीचे तनुवातवलय तक और सात रज्जु ऊपर लोकाग्रपर्यन्त तनुवातवलय तक है। चित्रा पृथिवी से आरम्भ होकर पहला राजू शर्कराप्रभा पृथिवी के अधोभाग मे समाप्त होता है। इसके आगे दूसरा आरम्भ होकर वालुकाप्रभा के अधोभाग में समाप्त होता है। इसी प्रकार तीसरा राजू पकप्रभा के अधोभाग में, चौथा धूमप्रभा के अधोभाग में, पाँचवाँ तम प्रभा के अधोभाग में, छठा महातम'प्रभा के अन्तभाग में तथा सातवाँ राजू लोक के तलभाग में समाप्त होता है। रत्नप्रभा प्रथम पृथिवी के तीन भाग हैं—खर, पक और अब्बहुल। इनमें खर भाग सोलह हजार योजन, पकभाग चौरासी हजार योजन और अब्बहुल भाग अस्सी हजार योजन मोटा है। ऊर्ध्व लोक में ऐशान स्वर्ग तक डेढ़ रज्जु, माहेन्द्र स्वर्ग तक पुन डेढ रज्जु, पश्चात् कापिष्ठ स्वर्ग तक एक, सहस्रार स्वर्ग तक फिर एक, इसके आगे आरण अच्युत स्वर्ग तक एक और इसके ऊपर ऊर्ध्वलोक के अन्त तक एक रज्जु। इस प्रकार सात रज्जु प्रमाण ऊँचाई है। इमे सब ओर से घनोदधि, घनवात और तनुवात ये तीनो वातवलय घेरकर स्थित हैं। घनोदधि-वातवलय गोमूत्रवर्ण के समान, घनवातवलय मूँग वर्ण का और तनुवातवलय अनेक वर्णवाला है। ये वलय दण्डाकार लम्बे और घनीभूत होकर ऊपर-नीचे चारो ओर लोक के अन्त तक हैं। अधोलोक मे प्रत्येक का विस्तार बीस-बीस हजार योजन और लोक के ऊपर कुछ कम एक योजन है। जब ये दण्डाकार नही रहते तब क्रमश सात पाँच और चार योजन विस्तृत होते हैं। मध्यलोक में इनका विस्तार क्रमश पाँच चार और तीन योजन रह जाता है। ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग के अन्त में ये क्रमश सात, पाँच और चार योजन विस्तृत हो जाते हैं। पुनः प्रदेशो में हानि होने से मोक्षस्थान के पास क्रमश पाँच और तीन योजन विस्तृत रह जाते है। इसके पश्चात् घनोदधिवातवलय आधा योजन, घनवातवलय उससे आधा और तनुवातवलय उससे कुछ कम विस्तृत है। तनुवातवलय के अन्त तक तिर्यग्लोक है। इस लोक की ऊपरी और नीचे की अवधि सुमेरु पर्वत द्वारा निश्चित होती है और यह सुमेरु पर्वत पृथिवीतल में एक हजार योजन नीचे हैं तथा चित्रा पृथिवी के समतल से लेकर निन्यानवे हजार योजन ऊँचाई तक है। असख्यात द्वीप और समुद्रो से वेष्टित गोल जम्बूद्वीप इसी मध्यलोक में है। इस जम्बूद्वीप में सात क्षेत्र, एक मेरु, दो कुरु, जम्बू और शाल्मली दो वृक्ष, छ कुलाचल, छ महासरोवर चौदह महानदियाँ, बारह विभगा नदियाँ, बीस वक्षारगिरि, चौंतीस राजधानी, चौंतीस रूप्याचल, चौंतीस वृषभाचल, अडसठ गुहाएँ, चार नाभिगिरि और तीन हजार सात सौ चालीस विद्याधरो के नगर हैं। जम्बूद्वीप से दूने क्षेत्रोवाला धातकीखण्डद्वीप तथा दूने पर्वतो और क्षेत्र आदि से युक्त पुष्करार्घ इस प्रकार ढाई द्वीप तक मनुष्य लोक है। मपु० ४ १३-१५, ४०-४६, पपु० ३ ३०, २४७०, ३१ १५, १०५, १०९-११०, हपु० ४ ४-१६, ३३-४१, ४८-४९, ५ १-१२, ५७७, पापु० २२ ६८, वीवच० ११ ८८, १८ १२६

लोकचक्षु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

लोकज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

लोकधाता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

लोकनाडी—लोक के मध्य में स्थित एक चौदह राजू ऊँची और एक राजू चौडी नाडी। त्रस जीवो के रहने से इसे त्रसनाडी भी कहते हैं। मपु० ५ १७७, ४८ १६

लोकपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

लोकपाल—(१) इन्द्र द्वारा नियुक्त लोक-रक्षक। ये चार हैं—सोम, यम, वरुण और कुबेर। प्रत्येक दिशा मे एक होने से ये चारो दिशाओ में चार होते हैं। प्रत्येक लोकपाल की बत्तीस देवियाँ होती हैं। मपु० १० १९२, २२ २८, पपु० ७ २८, हपु० ५ ३२३-३२७, वीवच० ६ १३२-१३३

(२) जम्बूद्वीप की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रजापाल का पुत्र। इसकी दो बहिनें थी—गुणवती और यशस्वती। इसके पिता इसे राज्य देकर सयमी हो गये थे। मपु० ४६ १९-२०, ४५-४८, ५१

(३) चन्द्राभनगर के राजा धनपति तथा रानी तिलोत्तमा का पुत्र। इसकी पद्मोत्तम बहिन तथा इकतीस भाई थे। बहिन जीवन्धर को दी गयी थी। मपु० ७५ ३९०-३९१, ३९९-४०१

लोकपूरण—केवलि-समुद्घात का चौथा चरण। केवलियो के आयुकर्म की स्थिति जब अन्तर्मुहूर्त रह जाती है तथा तीन अघातिया कर्मों की स्थिति अधिक होती है तब वे दण्ड, कपाट, प्रतर और इसके द्वारा उन तीन अघाति कर्मों की स्थिति बराबर करते है। हपु० ५६ ७२-७५

लोकमूढ़ता—वृक्ष आदि में देवताओ का निवास मानकर उनकी पूजा करना। मपु० ७४ ४९६-४९९

लोकवत्सल—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

लोकविन्दुसार—पूर्वगत श्रुत का एक भेद-चौदहवाँ पूर्व। इसमें बारह करोड पचास लाख पद हैं। इन पदो में श्रुतसम्पदा के द्वारा अकराशि, आठ प्रकार के व्यवहार की विधि तथा परिकर्म बताये गये हैं। मपु० २ १००, हपु० १० १२१-१२२ दे० पूर्व

लोकसुन्दरी—राजा जनक के छोटे भाई कनक और उसकी रानी सुप्रभा की पुत्री। यह अयोध्या के राजा दशरथ के राजकुमार भरत से विवाही गयी थी। पपु० २८ २५८-२६३

लोकसेन—शास्त्रो के जानकार अखण्ड चारित्रधारी एक मुनि। ये आचार्य गुणभद्र के प्रमुख शिष्य थे। इन्होने उत्तरपुराण की रचना में सहायता देकर अपनी उत्कृष्ट गुरु-भक्ति प्रकट की थी। मपु० प्रशस्ति पद्य २८

लोकस्तूप—समवसरण में विजयागण के चारो कोनो में रहनेवाले चार स्तूप। ये एक योजन ऊँचे होते हैं। इनका आकार नीचे वेत्रासन के समान, मध्य में झालर के समान होता है। इनमें लोक की रचना दर्पणतल के समान दिखाई देती है। हपु० ५७ ५, ९४-९६

लोकाकाश—आकाश का वह भाग जिसमें धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय

काल, पुद्गल और जीव ये पाँच द्रव्य पाये जाते हैं। हपु० ७ ७, वीवच० १६ १३२

लोकाक्ष—रावण के पाँच मन्त्रियो में चौथा मन्त्री। अन्य मन्त्री थे—मय, उग्र, शुक और सारण। पपु० ७३.१२

लोकाक्षनगर—भरतक्षेत्र का एक नगर। लवणांकुश और मदनांकुश दोनो भाई दिग्विजय के समय यहाँ आये थे। उन्होने यहाँ के राजा कुबेरकान्त को पराजित किया था। वे दोनो कुमार यहाँ से लम्पाक देश गये थे। पपु० १०१ ७०-७३

लोकाख्यान—चार प्रकार के आख्यानो मे प्रथम आख्यान। इसमें लोक व्युत्पत्ति, उसकी प्रत्येक दिशा तथा उसके अन्तरालो की लम्बाई-चौडाई आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन होता है। मपु० ४ ४-७

लोकाग्रवास—लोक के शिखर पर स्थित अष्टम प्राग्भार भूमि। यहाँ मुक्त जीव रहते है। यह "लोकाग्रवासिने नमो नम" इस पीठिका मंत्र से प्रकट होता है। मपु० ४० १९, ४२ १०७

लोकाध्यक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

लोकानुप्रेक्षा—बारह भावनाओ मे दसवी भावना। इसमें लोक की स्थिति, विस्तार, वहाँ के निवासियो के सुख-दु ख, तथा इसके अनादि अनिधन अकृत्रिम आदि स्वरूप का बार-बार चिन्तन किया जाता है। पापु० २५ १०८-११० वीवच० ११ ८८-११२

लोकालोकप्रकाशक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०६

लोकेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

लोकोत्तर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

लोकोत्सादन—एक विद्यास्त्र। विद्याधर चण्डवेग ने अनेक विद्यास्त्रो के साथ यह विद्यास्त्र भी वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४७-५०

लोच—मुनियो का एक मूलगुण-सिर और दाढी के केशो को उखाडना। हपु० २ १२८

लोभ—चार कषायो में चौथी कषाय। इससे धन-सम्पत्ति पाने की तीव्र इच्छा बनी रहती है। इससे जीव ससार मे भ्रमता है। पपु० १४ ११०

लोभत्याग—सत्यव्रत की पाँच भावनाओ में दूसरी भावना। इसमें लोभ का त्याग करना होता है। जो ऐसा नही करते वे नरक जाते हैं। इसके लिए सतोषवृत्ति अपेक्षित होती है। मपु० २० १६२, ३६ १२९, ७० १२९

लोमास—वीणा की तात का एक दोष। वसुदेव इसे जानते थे। मपु० ७० २७१

लोल—(१) विद्याधरो का राजा। राम के पक्ष का यह एक योद्धा था। पपु० ५८ ६-७

(२) दूसरी नरकभूमि वशा के नवें प्रस्तार का नौवाँ इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में एक सौ बारह और विदिशाओ में एक सौ आठ श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४.७९, ११३

लोलप—राम का पक्षधर एक योद्धा। यह ससैन्य रणागण मे पहुँचा था। पपु० ५८ १३, १७

लोलुप—वशा नरकभूमि के दसवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ मे एक सौ आठ और विदिशाओ में एक सौ चार श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७९, ११४

लोलुभ—जयसेन के पूर्वभव का जीव-सुप्रतिष्ठ नगर का एक हलवाई। इसने लोभाक्रृष्ट होकर अपने पैर काट डाले थे। पुत्र को मार डाला था और स्वय भी राजा के द्वारा मारा गया तथा मरकर यह नेवला हुआ। मपु० ८ २३४-२४१, ४७ ३७६

लोहजघ—(१) एक यादव-कुमार। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध मे जरासन्ध को शान्त करने की दृष्टि से समुद्रविजय ने साम उपाय का आवलम्बन लेकर दूत भेजने का मन्त्रियो से परामर्श किया था और इस कुमार को दूत बनाकर जरासन्ध के पास भेजा था। यह चतुर, क्रूर और नीतिज्ञ था। जरासन्ध के साथ सन्धि करने यह ससैन्य गया था। पूर्व मालव देश के एक वन मे इसने तिलकानन्द और नन्दन मासोपवासी दो मुनिराजो को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। इसके समझाने से जरासन्ध ने छ. माह तक के लिए सन्धि कर ली थी। इसके इस प्रयत्न से यादव एक वर्ष तक शान्ति से रहे। हपु० ५० ५५-६४

(२) वनराज भील का मित्र। यह और इसका साथी श्रीषेण दोनो ससैन्य हेमाभनगर पहुँचे। यहाँ सुरगमार्ग से राजकुमारी श्रीचन्द्रा के महल में गये और उसे लेकर वनराज की ओर बढ़े। इन्होने श्रीचन्द्रा के भाइयो से युद्ध किया और उन्हें पराजित कर श्रीचन्द्रा वनराज को सौप दी थी। मपु० ७५ ४८१-४९३

लोहवासिनी—भरतेश चक्रवर्ती की छुरी। यह दैदीप्यमान थी। इसकी मूठ रत्नजटित और चमकदार थी। मपु० ३७ १६५

लोहाचार्य—तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के पश्चात् पाँच सौ पैसठ वर्ष बाद हुए आचारागधारी चार आचार्यों मे चौथे आचार्य। सुभद्र, यशोभद्र और जयबाहु इनके पहले हुए थे। इनके अपर नाम लोह और लोहार्य थे। मपु० २ १४९, ७६ ५२६, हपु० १ ६५, वीवच० १ ४१-५०

लोहार्गल—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का ग्यारहवाँ नगर। मपु० १९. ४१, ५३

लोहित—पाण्डुकवन का एक भवन। इसकी चौडाई पन्द्रह योजन, ऊँचाई पच्चीस योजन और परिधि पैंतालीस योजन है। यहाँ सोम लोकपाल का निवास है। हपु० ५ ३१६, ३२२

लोहिताक—रत्नप्रभा पृथिवी के खरभाग का चौथा पटल। हपु० ४ ५२

लोहिताक्ष—सौधर्म और ऐशान युगल स्वर्गों का चौबीसवाँ पटल। हपु० ६ ४७ दे० सौधर्म।

लोहिताक्षकूट—(१) मानुषोत्तर पर्वत की दक्षिणदिशा के चार कूटों में दूसरा कूट। यहाँ नन्दोत्तर देव रहता है। हपु० ५ ६०३

(२) गन्धमादन पर्वत के सात कूटो में पाँचवाँ कूट। हपु० ५ २१८

लोहिताक्षमय—मेरु पर्वत की छ परिधियों में प्रथम परिधि। इसे पृथिवीकाय रूप कहा है। इसका विस्तार सोलह हजार पाँच सौ योजन है। हपु० ५ ३०५-३०६

लोहिताख्य—रुचकवर पर्वत के पश्चिम में विद्यमान आठ कूटों में प्रथमकूट। यहाँ इला दिक्कुमारी देवी रहती है। हपु० ५ ७१२ दे० रुचकवर

लौहिकान्तिक—पाँचवें स्वर्ग के अन्त में रहनेवाले देव। ये तीर्थंकरों की वैराग्यवृद्धि में दृढ़ता लाने, उन्हें प्रबुद्ध करने तथा उनकी तपकल्याणक-पूजा के लिए ब्रह्मलोक से आते हैं। ये ब्रह्मचारी होते हैं। देवों में श्रेष्ठ होते हैं। इनके शुभ लेश्याएँ होती हैं। ये बड़ी-बड़ी ऋद्धियों से भी युक्त होते हैं। पूर्वभव में सम्पूर्ण श्रुतज्ञान का अभ्यास करने के कारण इनकी शुभ भावनाएँ होती हैं। ये आठ प्रकार के होते हैं—*सारस्वत, आदित्य, वह्नि, अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्याध और* अरिष्ट। मपु० १७ ४७-५०, पपु० ३ २६८-२६९, हपु० २ ४९

लौहित्यसमुद्र—भरतक्षेत्र का एक सरोवर। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु २९ ५१

व

वकापुर—भरतक्षेत्र की दक्षिण दिशा में स्थित एक प्राचीन नगर। राजा लोकादित्य ने इसका अपने पिता चेल्लकेत बकेय के नाम पर निर्माण कराया था। उत्तरपुराण की समाप्ति इसी नगर के शान्तिनाथ जिनालय मे शक सवत् ८२० में हुई थी। यह वर्तमान में धारवाड़ जिले में है। हपु० प्रशस्ति ३२-३६

वंग—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र की पूर्व दिशा में स्थित इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। दिग्विजय के समय यहाँ के राजा ने हाथी भेंट में देकर भरतेश को नमस्कार किया था। तीर्थंकर वृषभदेव, नेमिनाथ और महावीर विहार करते हुए यहाँ आये थे। तीर्थंकर मल्लिनाथ यहाँ के राजा कुम्भ के घर जन्मे थे और इसी देश की मिथिला नगरी में विजय महाराज के घर तीर्थंकर नमिनाथ का जन्म हुआ था। मपु० १६ १५२, २५ २८७-२८८, २९ ३८, ६६ २०, ३४, ६९ १८-१९, ३१, पपु० ३७ २१, हपु० ५९.१११, पापु० १ १३२

वंगा—मध्य आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय यहाँ भरतेश की सेना आयी थी। मपु० २९ ८३

वंशधर—दण्डकवन का एक पर्वत। यह वंशस्थलद्युति नगर के निकट था। इसमें बाँस के वृक्ष थे। वनवास के समय राम, लक्ष्मण और सीता यहाँ आये थे। उन्होंने यहाँ सर्प और बिच्छुओं से घिरे हुए देशभूषण और कुलभूषण दो मुनिराजों की सेवा की थी। सर्प और बिच्छुओं को हटाकर उनके उन्होंने पैर धोये थे और उन पर लेप लगाया था। वन्दना करके उनकी पूजा की थी। इसी पर्वत पर उन मुनियों को केवलज्ञान प्रकटा था और इसी पर्वत पर क्रौंचरवा नदी के तट पर एक वंश की झाड़ी में बैठकर शम्बूक ने सूर्यहास खड्ग पाने के लिए साधना की थी। पपु० १ ८४, ३९ ९-११, ३९-४६, ४३ ४४-४८, ६१, ८२ १२-१३, ८५ १-३

वंशस्थलद्युति—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। वंशधर पर्वत इसी नगर के पास है। इसका अपर नाम वंशस्थलपुर है। पपु० ३९ ९-११, ४० २

वंशा—शर्कराप्रभा दूसरी नरकभूमि का रूढ़ नाम। हपु० ४ ४३, ४६

वंशाल—(१) विजयार्ध-उत्तरश्रेणी का आठवाँ नगर। हरिवंशपुराण के अनुसार यह उनसठवाँ नगर है तथा इसका अपर नाम वंशालय है। मपु० १९.७९, हपु० २२ ९२

(२) धरणेन्द्र की दिति देवी के द्वारा नमि, विनमि विद्याधरों को प्रदत्त आठ विद्या-निकायों में छठा विद्या-निकाय। हपु० २२ ६०

वंशालय—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के आठ नगरों में उनसठवाँ नगर। हपु० २२.९२ दे० वंशाल

वक—भरतक्षेत्र का एक अर्धरथ नृप। यह कृष्ण और जरासन्ध के बीच हुए युद्ध में कृष्ण का पक्षधर था। हपु० ५० ८४

वकुल—(१) राजा सत्यन्धर और रानी अनगपताका का पुत्र। इसका लालन-पालन सेठ गन्धोत्कट ने किया था। जीवन्धर इसका भाई था। मपु० ७५ २५४-२५६

(२) तीर्थंकर नमि का चैत्यवृक्ष। पपु० २०.५७

वक्ता—शास्त्रों का व्याख्याता। यह स्थिर बुद्धि, इन्द्रियजयी, सुन्दर, हितमितभाषी, गम्भीर, प्रतिभावान्, सहिष्णु, दयालु, प्रेमी, निपुण, धीर-वीर, वस्तु-स्वरूप के कथन में कुशल और भाषाविद् होता है। चारों प्रकार की कथाओं का श्रोताओं की योग्यतानुसार कथन करता है। मपु० १ १२६-१२७, पापु० १ ४५-५१, वीवच० १ ६३-७१

वक्रान्त—रत्नप्रभा पृथिवी के ग्यारहवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। हपु० ४.७७ दे० रत्नप्रभा

वक्षारगिरि—विदेहक्षेत्र के अनादिनिधन सोलह पर्वत। इनमें चित्रकूट, पद्मकूट, नलिन और एकशैल ये चार पूर्वविदेह में नील पर्वत और सीता नदी के मध्य लम्बे स्थित हैं। त्रिकूट, वैश्रवण, अजन और आत्मांजन ये चार पर्वत पूर्वविदेह मे सीता नदी और निषध कुलाचल का स्पर्श करते हैं। श्रद्धावान्, विजयावान्, आशीविष और सुखावह ये चार पश्चिम विदेहक्षेत्र में सीतोदा नदी तथा निषध पर्वत का स्पर्श करते हैं और चन्द्रमाल, सूर्यमाल, नागमाल तथा मेघमाल ये चार पश्चिम विदेहक्षेत्र में नील और सीतोदा के मध्य स्थित हैं। इन समस्त पर्वतों की ऊँचाई नदी तट पर पाँच सौ योजन और अन्यत्र चार सौ योजन है। प्रत्येक के शिखर पर चार-चार कूट हैं। कुलाचलों के समीपवर्ती कूटों पर दिक्कुमारी देवियाँ रहती हैं। नदी के समीपवर्ती कूटों पर जिनेन्द्र के चैत्यालय है और बीच के कूटों पर व्यन्तर देवों के क्रीडागृह बने हुए हैं। मपु० ६३ २०१-२०५, हपु० ५ २२८-२३५

वचनयोग-दुष्प्रणिधान—सामायिक शिक्षाव्रत का दूसरा अतीचार-वचन की अन्यथा प्रवृत्ति करना। हपु० ५८ १८०

वचसामीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु २५ २१०

वचोगुप्ति—अहिंसा व्रत की पाँच भावनाओं में दूसरी भावना। इसमें

स्त्रीकथा आदि चारों विकथाओं से विरक्त रहना होता है। मपु० २० १६१, पापु० ९.८९

वचोयोग—योग के तीन भेदों में दूसरा भेद। वचन के निमित्त से आत्म-प्रदेशों में होनेवाला सचार वचोयोग कहलाता है। यह सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, अनुभयवचनयोग के भेद से चार प्रकार का होता है। मपु० ६२ ३०९-३१०

वज्र—(१) एक समरथ नृप। कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में यह यादवों का पक्षधर था। हपु० ५० ८१-८२

(२) नौ अनुदिश विमानों में तीसरा विमान। हपु० ६ ६३

(३) विद्याधर नमि का वशज। यह राजा वज्रायुध का पुत्र और राजा सुवज्र का पिता था। पपु० ५.१६-२१, हपु० १३ २२

(४) सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का पच्चीसवाँ पटल। हपु० ६ ४७ दे० सौधर्म

(५) कुण्डलगिरि की पूर्व दिशा का प्रथम कूट। यहाँ त्रिशिरस् देव रहता है। हपु० ५.६९०

(६) सौमनस वन के चार भवनों में प्रथम भवन। यह पन्द्रह योजन चौड़ा और पच्चीस योजन ऊँचा है। परिधि पैंतालीस योजन है। हपु० ५.३१९

(७) तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के प्रथम गणधर। हपु० ६० ३४७

(८) वृषभदेव के अड़सठवें गणधर। हपु० १२ ६७

(९) इन्द्र का प्रसिद्ध एक अस्त्र। यह इतना मजबूत होता है कि पर्वत भी इसकी मार से चूर-चूर हो जाते हैं। मपु० १ ४३, ३.१५८-१६०, पपु० २.२४३-२४४, ७ २९, हपु० २.१०

(१०) राजा अमर द्वारा बसाया गया एक नगर। हपु० १७ ३३

(११) पुण्डरीकिणी नगरी का एक वैश्य। इसकी स्त्री सुप्रभा और पुत्री सुमति थी। मपु० ७१ ३६६

(१२) दशानन का अनुयायी एक विद्याधर राजा। यह मय का मत्री था। पपु० ८ २६९-२७१

वज्रकूट—मानुषोत्तर पर्वत की ऐशान दिशा का एक कूट। हपु० ५ ६०६

वज्रकण्ठ—(१) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में अलका नगरी के राजा मयूरग्रीव और रानी नीलाजना का पाँचवाँ पुत्र। इसके चार बड़े भाई थे—अश्वग्रीव, नीलरथ, नीलकण्ठ और सुकण्ठ। मपु० ६२ ५८-५९

(२) किष्कुपुर का राजा। यह वानरवशी राजा श्रीकण्ठ का पुत्र था। चारुणी इसकी रानी थी। इसने वृद्धजनों से अपने पिता के पूर्वभव सुनकर पुत्र वज्रप्रभ के लिए राज्य सौंपकर जिन दीक्षा धारण कर ली थी और इसके पश्चात् वज्रप्रभ भी पुत्र इन्द्रमत् को राज्य सौंपकर मुनि हो गया था। पपु० ६ १५०-१६०

वज्रकपाट—हिमवत् पर्वत पर निर्मित भवन का एक द्वार। यह वज्रमय था। इसकी ऊँचाई तथा चौड़ाई चालीस योजन है। मपु० ४ ९६, हपु० ५ १४०-१४७

वज्रकम्बु—मृणालकुण्ड नगर के राजा विजयसेन और रानी रत्नचूला का पुत्र। इसकी रानी हेमवती और पुत्र शम्भु था। पपु० १०६ १३३-१३४

वज्रकर्ण—(१) दशागपुर का राजा। इसने उज्जयिनी के राजा सिंहोदर की अधीनता स्वीकार कर ली थी। यह सम्यग्दृष्टि होने से जिनेन्द्र और निर्ग्रन्थ मुनियों को छोड़कर किसी अन्य को नमस्कार नहीं करता था। अपनी इस प्रतिज्ञा के कारण राजा सिंहोदर को नमन करने से बचने के लिए इसने एक मुनिसुव्रत तीर्थंकर की प्रतिमा से अंकित मुद्रिका अपने अगूठे में पहिन रखी थी। जब सिंहोदर को नमस्कार करना होता तब यह अगूठे को सामने रखकर अगूठे में धारण की हुई अगूठी की प्रतिमा को नमस्कार कर लेता था। किसी ने राजा सिंहोदर से इसका यह रहस्य प्रकट कर किया। फलस्वरूप सिंहोदर ने इसे मारने का विचार किया। उसने इसे अपने यहाँ बुलाया। सरल परिणामी यह सिंहोदर के पास जा ही रहा था कि विद्युद्दग नामक एक पुरुष ने वध की आशका प्रकट करते हुए वहाँ जाने के लिए इसे रोक दिया। इससे कुपित होकर सिंहोदर ने इसके नगर को आग लगाकर उजाड़ दिया। वनवास के समय यहाँ आये राम-लक्ष्मण ने इसका पक्ष लेकर इसके शत्रु सिंहोदर को युद्ध में पराजित किया था। लक्ष्मण ने सिंहोदर से इसकी मित्रता भी करा दी थी। इसके निवेदन पर ही सिंहोदर बन्धनमुक्त हुआ और उसने इसे आधा राज्य देते हुए वह सब इसे लौटाया जो इसके यहाँ से ले गया था। लक्ष्मण के सहयोग से प्रसन्न होकर इसने उन्हें अपनी आठ पुत्रियाँ विवाही थी। पपु० ३३.७४-७७, ११७-११८, १२८-१३९, १७७, १९५-१९८, २६२-२६३, ३०३-३१३

वज्रकाण्ड—भरततेश का एक धनुष। चक्रवर्ती ने इसी धनुष से स्व नाम से अकित अमोघबाण चलाया था। अर्ककीर्ति के साथ युद्ध करते हुए जयकुमार ने भी इसका उपयोग किया था। मपु० ३२.८७, ३७ १६१, ४४.१३५, हपु० ११ ५, पापु० ३ ११८

वज्रखडिक—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतेश का मध्य आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ७५

वज्रघोष—(१) भरतक्षेत्र में स्थित हरिवर्ष देश के शीलनगर का राजा। इसकी रानी सुप्रभा तथा पुत्री विद्युन्माला थी। पापु० ७.१२३-१२४

(२) तीर्थंकर पार्श्वनाथ का जीव—मलय देश के कुब्जक वन का एक हाथी। पूर्वभव में इसका नाम मरुभूति और इसके बड़े भाई का नाम कमठ था। दोनों पोदनपुर के विश्वभूति ब्राह्मण के पुत्र थे। मरुभूति की स्त्री वसुन्धरी के निमित्त से कमठ ने मरुभूति को मार डाला था। मरकर वह मलयदेश के सल्लकी वन में इस नाम का हाथी हुआ। कमठ की पत्नी वरुणा मरकर हथिनी हुई। पूर्वभव के अपने नगर के राजा अरविन्द को मुनि अवस्था में देखकर प्रथम तो यह उन्हें मारने के लिए उद्यत हुआ किन्तु मुनि अरविन्द के वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिह्न को देखकर इसे पूर्वभव के सम्बन्ध दिखाई देने लगे।

इससे यह शान्त हो गया। मुनिराज ने इसे श्रावक के व्रत ग्रहण कराये। यह दूसरे हाथियो के द्वारा तोडी गयी डालियो और पत्तो को खाने लगा। पत्थरो पर गिरकर प्रासुक हुए जल को पीने लगा। यह प्रोषधोपवास के बाद पारणा करता था। एक दिन यह वेगवती नदी में पानी पीने गया। वहाँ कीचड मे ऐसा फँसा कि निकलने का बहुत उद्यम करने पर भी नही निकल सका। कमठ का जीव इसी नदी मे कुक्कुट सर्प हुआ था। उसने पूर्व वैरवश इसे काटा, जिससे यह समाधिपूर्वक मरणकर सहस्रार स्वर्ग में देव हुआ था। मपु० ७३. ६-२४

वज्रचमर—तीर्थंकर पद्मप्रभ के प्रथम गणधर। इनका अपर नाम वज्रचामर था। मपु० ५२ ५८, हपु० ६० ३४७

वज्रचाप—भरतक्षेत्र मे हरिवष देश के वस्वाल्य नगर का राजा। सुभा इसकी रानी थी। दन्तपुर नगर के वीरदत्त वैश्य की स्त्री वनमाला वज्रपात से मरकर इसकी विद्युन्माला पुत्री हुई थी। मपु० ७० ६४-७७

वज्रचामर—तीर्थंकर पद्मप्रभ के प्रथम गणधर। मपु० ५२ ५८ दे० वज्रचमर

वज्रचूड—विद्याधर-वश के राजा त्रिचूड का पुत्र। यह भूरिचूड का पिता था। पपु० ५ ५३

वज्रजघ—(१) तीर्थङ्कर वृषभदेव के सातवें पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के उत्पलखेटक नगर के राजा वज्रबाहु और रानी वसुन्धरा का पुत्र था। वज्र के समान जाँघ होने से इसका यह नाम रखा गया था। विदेहक्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त और रानी लक्ष्मीमती की श्रीमती कन्या को इसने विवाहा था। इसके पिता इसे राज्य देकर यमधर मुनि के समीप पाँच सौ राजाओ के साथ दीक्षित हो गये थे। इसके पिता के साथ इसके अट्ठानवें पुत्र भी दीक्षित हुए तथा तप कर ये सभी मोक्ष गये। इसने और इसकी पत्नी श्रीमती ने वन में दमधर और सागरसेन मुनियों को आहार कराकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। एक दिन शयनागार में सुगन्धित धूप के धुएँ से यह और इसकी पत्नी दोनो की श्वास रुक गयी और मध्यरात्रि मे दोनो मर गये। पात्रदान के प्रभाव से यह उत्तरकुरु भोगभूमि में उत्पन्न हुआ। मपु० ६ २६-२९, ५८-६०, ७ ५७-५९, २४९, ८ १६७-१७३, ९ २६-२७, ३३, हपु० ९ ५८-५९

(२) विद्याधर नमि का वशज। यह चन्द्ररथ का पुत्र और वज्रसेन का पिता था। पपु० ५ १७, हपु० १३ २१

(३) पुण्डरीकपुर नगर के राजा द्विरदवाह और रानी सुबन्धु का पुत्र। यह इन्द्रवश में उत्पन्न हुआ था। परित्यक्ता सीता को इसने धर्म की बडी बहिन माना था। यह सीता को एक अलंकृत पालकी में बैठाकर और सैनिक चारो ओर रखकर अपने नगर ले गया था। सीता के अनगलवण और मदनाकुश दोनो पुत्रो का जन्म तथा उनकी शिक्षा इसी के घर हुई थी। लक्ष्मी इसकी रानी थी। इस रानी से इसकी शशिचूला आदि बत्तीस कन्याएँ हुई थी। इन सब पुत्रियों को इसने अनगलवण को देने का निश्चय किया था। यह मदनाकुश के लिए पृथिवीपुर के राजा पृथु की पुत्री चाहता था किन्तु राजा पृथु कुल दोष के कारण अपनी कन्या मदनाकुश को नही देना चाहता था। इस विरोध के परिणाम स्वरूप राजा पृथु को युद्ध करना पड़ा। युद्ध में पृथु पराजित हुआ और उसने सादर अपनी पुत्री कनकमाला मदनाकुश को दी। राम ने सम्मान करते हुए इसे भामण्डल के समान माना था। पपु० ९८ ९६-९७, ९९ १-४, १०० १७-२१, ४७-४८ १०१ १-१०, १२३.६९

वज्रजातु—विद्याधर वश के राजा वज्रपाणि का पुत्र और वज्रवान् का पिता। इसका अपर नाम वज्रभानु था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३

वज्रतुण्डा—चक्रवर्ती भरतेश की एक शक्ति। यह शक्ति तीर्थंकर एवं चक्रवर्ती अरनाथ के पास भी थी। मपु० ३७ १६३, पापु० ७ २१

वज्रदड—एक अस्त्र। यह उल्का के आकार का होता है। दशानन ने इसका प्रयोग वैश्रवण पर किया था। उसका कवच इससे चूर-चूर कर डाला था। मपु० ८ २३८

वज्रदष्ट्र—(१) विद्याधर वश के राजा वज्रसेन का पुत्र। यह वज्रध्वज का पिता था। इसने राम की सहायता की थी। पपु० ५ १७-१८, ५४ ३४-३६, हपु० १३ २२, २७ १२१

(२) राजा वसुदेव और रानी बालचन्द्रा का पुत्र अमितप्रभ का बडा भाई था। हपु० ४८ ६५

(३) एक विद्याधर। विद्युत्प्रभा इसकी स्त्री थी। मृगशृग तापस विद्याधर के रूप में जन्म लेने का निदान करने के कारण मरकर इस विद्याधर का विद्युद्दष्ट्र पुत्र हुआ था। हपु० २७ १२०-१२१

वज्रदत्त—एक मुनि। राजा रत्नायुध ने अपने मेघनिनाद हाथी के पानी न पीने का कारण इन्ही मुनि से पूछा था और इन्होने बताते हुए कहा था कि पूर्वभव में यह हाथी भरतक्षेत्र के चित्रकारपुर नगर के मत्री का पुत्र विचित्रमती था। मुनि अवस्था में उसने एक वेश्या को देखा और लुभाकर उसे पाने का निश्चय किया। मुनि पद से च्युत होकर उसने राजा के यहाँ खाना बनाया और राजा को प्रसन्न करके वेश्या प्राप्त कर ली। मरकर वह नरक गया और अब इस पर्याय में उत्पन्न हुआ है। मुनि को देखकर इसे जातिस्मरण हुआ है। यह आत्मनिन्दा करता हुआ शान्त है। राजा रत्नायुध और हाथी मेघनिनाद ने यह सुनकर इनसे श्रावक के व्रत धारण किये थे। इनका अपर नाम वज्रदन्त था। मपु० ५९ २४८-२७१, हपु० २७. ९५-१०६

वज्रदन्त—विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा यशोधर और रानी वसुन्धरा का पुत्र। इसकी रानी लक्ष्मीवती तथा पुत्री श्रीमती थी। पिता को केवलज्ञान तथा इनकी आयुधशाला में चक्र का प्रकट होना ये दो कार्य एक साथ हुए थे। यह चक्रवर्ती था। इसके चौदह रत्न और नौ निधियाँ प्रकट हुई थी। अपनी पुत्री श्रीमती का विवाह

इसने वज्रजंघ से किया था। विषय भोगो से विरक्त होकर इसने अपना साम्राज्य पुत्र अमिततेज को देना चाहा था, किन्तु उसका राज्य नही लेने का 'दृढ निश्चय जानकर अमिततेज के पुत्र पुण्डरीक को राज्यभार सौंपा था। इसके पश्चात् यह अपने पुत्र, स्त्रियो तथा अनेक राजाओ के साथ दीक्षित हो गया था। इसके साथ इसकी साठ हजार रानियो, बीस हजार राजाओ और एक हजार पुत्रो ने दीक्षा ली थी। यह अवधिज्ञानी था। इसने अपनी पुत्री को बताया था कि तीसरे दिन उसका भानजा वज्रजघ आयेगा और वह ही उसका पति होगा। मपु० ६ ५८-६०, १०३, ११०, २०३, ७ १०२-१०५, २४९, ८ ७९-८५

(२) एक महामुनि। यह वज्रदत्त मुनि का ही अपर नाम है। मपु० ५९ २४८-२७१ दे० वज्रदत्त

(३) पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। यशोधरा इसकी रानी थी। श्रुतकेवली सागरदत्त इसी के पुत्र थे। मपु० ७६ १३४-१४२

(४) बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २७-३०

वज्रधर्म—राजा सत्यक का पुत्र। यह राजा शान्तन के पुत्र शिवि का पौत्र था। इसका पुत्र असग था। हपु० ४८ ४०-४२

वज्रध्वज—विद्याधरवशी राजा वज्रदष्ट्र का पुत्र। यह वज्रायुध का पिता था। पपु० ५ १८, हपु० १३ २२

वज्रनक—रावण का पक्षधर एक योद्धा। इसने राम के पक्षधर योद्धा विराधित से युद्ध किया था। पपु० ६० ५२, ८६-८७

वज्रनाद—रावण का एक सामन्त। इसने सिंहरथ पर आरूढ होकर राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ४६-४८

वज्रनाभ—राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३४

वज्रनाभि—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के तीसरे पूर्वभव का जीव—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और उनकी रानी श्रीकान्ता का पुत्र। विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित तथा सुबाहु, महाबाहु, पीठ और महापीठ ये इसके आठ भाई थे। वज्रदन्त इसका पुत्र था। महाराज वज्रसेन ने राज्याभिषेक पूर्वक इन्हें राज्य दिया था। ये चक्रवर्ती हुए। इन्होने न्यायोचित रीति से प्रजा का पालन किया। इन्हें अपने पिता से रत्नत्रय का बोध हुआ था। पुत्र वज्रदन्त को राज्य देकर ये सोलह हजार मुकुटबद्ध राजाओ, एक हजार पुत्रो, आठ भाइयो और धनदेव के साथ मोक्ष प्राप्ति के उद्देश्य से पिता वज्रसेन मुनि से दीक्षित हुए। मुनि के व्रतो का पालन करने से इन्हें तीर्थंकर-प्रकृति का बन्ध हुआ। अन्त में शररी त्यागकर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हुए और वहाँ से चयकर तीर्थंकर वृषभदेव हुए। मपु० ११ ८-१४, ३९-१११, १३ १, पपु० २०.१७-१८, हपु० ९.५९

(२) तीर्थंकर विमलनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २०.२८-३०

(३) तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के एक गणधर। मपु० ५०.५७

(४) तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ के चौथे पूर्वभव का जीव—विदेहक्षेत्र के पद्म देश मे स्थित अश्वपुर नगर के राजा वज्रवीर्य और रानी विजया का पुत्र। इसने चक्रवर्ती की अखण्ड लक्ष्मी का उपभोग कर मोक्षलक्ष्मी के उपभोग हेतु उद्यम किया था। क्षेमकर भट्टारक से धर्म श्रवण करने के पश्चात् राज्य पुत्र को सौंपकर इसने सयम धारण किया और इस अवस्था मे अपने पूर्वभव के बैरी कमठ के जीव कुरग भील द्वारा किये गये अनेक उपसर्ग सहे। आयु के अन्त में आराधनाओ की आराधना करते हुए समाधिपूर्वक मरणकर सुभद्र नामक मध्यम ग्रैवेयक के मध्यम विमान मे यह सम्यक्त्वी अहमिन्द्र हुआ। मपु० ७३ २९-४०

वज्रनाराच—एक सहनन। इस सहनन धारी की अस्थियाँ वज्रोपम होती है। तीर्थंकरो का शरीर इस सहनन से युक्त होता है। मपु० १५ २९

वज्रनेत्र—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के असुरसगीत नगर के राजा दैत्यराज मय का मन्त्री। पपु० ८ ४२-४८

वज्रपजर—एक नगर। वज्रायुध इसी नगर का राजा था। वज्रशीला उसकी रानी और खेचरभानु पुत्र था। यह इसी नगर से आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दिर की पुत्री श्रीमाला के स्वयवर मे गया था। पपु० ६ ३५७-३५९, ३९६

वज्रपाणि—(१) विद्याधर नमि के वशज वज्रास्य का पुत्र। यह वज्रभानु का पिता था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३

(२) नभस्तिलक नगर का राजा। यह अरिंजयपुर के राजा मेघनाद की पुत्री पद्मश्री को चाहता था जबकि निमित्तज्ञानियो ने पद्मश्री को चक्रवर्ती सुभौम की रानी होना बताया था। मेघनाद के साथ इसने युद्ध भी किया किन्तु यह सफल न हो सका था। अन्त मे यह उसी के द्वारा मारा गया। हपु० २४ २-३१

वज्रपुर—(१) राजा सूर्य के पुत्र अमर द्वारा बसाया गया भरतक्षेत्र का एक नगर। हपु० १७ ३३

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अठावनवाँ नगर। मपु० १९ ८६-८७

वज्रप्रभ—(१) कुण्डलगिरि पर्वत की पूर्व दिशा का दूसरा कूट। यहाँ पचशिरस् देव रहता है। हपु० ५ ६९०

(२) सौमनस वन का एक भवन। इसकी चौडाई पन्द्रह योजन, ऊँचाई पच्चीस योजन और परिधि पैंतालीस योजन है। हपु० ५ ३१९-३२०

(३) वानरवशी राजा वज्रकण्ठ का पुत्र। वज्रकण्ठ इसे राज्य सौंपकर मुनि हो गया था और इसने भी अपने पुत्र इन्द्रमत के लिए राज्य देकर मुनि-दीक्षा ले ली थी। पपु० ६ १६०-१६१

वज्रबाहु—(१) विद्याधर नमि के वश में हुए राजा वज्राभ का पुत्र और वज्राक का पिता। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३

(२) विद्याधर विनमि का पुत्र। इसकी बहिन सुभद्रा चक्रवर्ती भरतेश के चौदह रत्नो में एक स्त्री-रत्न थी। हपु० २२.१०५-१०६

(३) राजा वसु की वश परम्परा मे हुए राजा दीर्घबाहु का पुत्र। यह लब्धाभिमान का पिता था। हपु० १८.२-३

(४) विनीता नगरी के राजा सुरेन्द्रमन्यु और उसकी रानी कीर्तिसभा का पुत्र। यह पुरन्दर का सहोदर था। इसने नागपुर (हस्तिनापुर) के राजा इभवाहन और उसकी रानी चूडामणि की पुत्री मनोदया को विवाहा था। हँसी मे उदयसुन्दर साले के यह कहने पर कि यदि "आप दीक्षित हो तो मैं भी दीक्षा लूँगा" यह सुनकर मार्ग में मुनि गुणसागर के दर्शन करके यह उनसे दीक्षित हो गया था। इसके साले उदयसुन्दर ने भी दीक्षा ले ली थी। पपु० २१ ७५-१२६

(५) तीर्थंकर वृषभदेव के सातवें पूर्वभव का जीव। जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश के उत्पलखेटक नगर का राजा। इसकी रानी वसुन्धरा और पुत्र वज्रजघ था। यह शरदकालीन मेघो के उदय और विनाश को देख करके ससार के भोगों से विरक्त हो गया था। इसने पुत्र वज्रजघ को राज्य सौंपकर श्री यमधर मुनि के समीप पाँच सौ राजाओ के साथ दीक्षा ले ली। पश्चात् तपश्चर्या द्वारा कर्मों का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त करके यह मुक्त हुआ। मपु० ६ २६-२९, ८ ५०-५१

(६) जम्बूद्वीप के कौसल देश में स्थित अयोध्या नगर का राजा। इसका इक्ष्वाकु वश और काश्यप गोत्र था। प्रभकरी इसकी रानी और आनन्द इसका पुत्र था। मपु० ७३ ४१-४३

वज्रभानु—विद्याधर-वश का एक राजा। यह वज्रजाणि का पुत्र और वज्रवान् का पिता था। इसका अपर नाम वज्रजातु था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३

वज्रभृत—विद्याधर वश का एक राजा। यह विद्याधर नमि के वशज राजा सुवज्र का पुत्र और वज्राभ का पिता था। पपु० ५ १८-१९, हपु० १३ २२-२३

वज्रमध्य—(१) एक विद्याधर राजा। यह अपने पुत्र प्रमोद को राक्षसवश की सम्पदा सौंपकर तपस्वी हो गया था। पपु० ५ ३९५

(२) दैत्यराज मय का मन्त्री। पपु० ८ ४३

(३) एक व्रत। इसमें आरम्भ में पाँच और पश्चात् एक एक कम करते हुए अन्त में एक उपवास करने के पश्चात् एक-एक उपवास को बढ़ाते हुए अन्त मे पाँच उपवास किये जाते हैं। इस प्रकार कुल उनतीस उपवास और नौ पारणाएँ की जाती है। हपु० ३४ ६२-६३

वज्रमय—मेरु पर्वत की पृथिवीकाय रूप छ परिधियो में तीसरी परिधि। इसका विस्तार सोलह हजार पाँच सौ योजन है। हपु० ५ ३०५

वज्रमालिनी—त्रिपुर नगर के स्वामी वज्रागद विद्याधर की स्त्री। वज्रागद भरतक्षेत्र के नन्दनपुर के राजा अमितविक्रम की धनश्री और अनन्तश्री कन्याओ को देखकर उन पर आसक्त हो गया था। उसने उन्हें पकडकर ले जाना चाहा था किन्तु इससे भयभीत होकर उसे निराश होते हुए दोनो कन्याओ को वश वन में छोडकर लौट जाना पड़ा था। मपु० ६३ १२-१७

वज्रमाली—इन्द्रजित् का पुत्र। इसने राम पर उस समय आक्रमण किया था जब राम लक्ष्मण की निष्प्राण देह गोद में लिए हुए थे। जटायु के जीव ने इसे भ्रमित कर भगा दिया था। देवो के इस प्रभाव को देखकर इसे अपने ऐश्वर्य से वैराग्य उत्पन्न हो गया। फलस्वरूप सुन्द के पुत्र चारुरत्न के साथ मुनि रतिवेग के पास इसने दीक्षा ले ली थी। पपु० १०८ ३३-३६, ६२-६७

वज्रमुख—(१) पद्म-सरोवर का पूर्व द्वार-गगा नदी का उद्गम स्थान। यह छ योजन और एक कोश विस्तृत तथा आधा कोश गहरा है। इस द्वार पर चित्र-विचित्र मणियो से दैदीप्यमान एक तोरण भी विद्यमान है जो नौ योजन तथा एक योजन के आठ भागो मे तीन भाग प्रमाण ऊँचा है। हपु० ५ १३२, १३६-१३७

(२) लका के कोट का एक अधिकारी। यह हनुमान द्वारा मारा गया था। पपु० १२ १९६, ५२ २३-२४, ३० ३०

वज्रमुखकुण्ड—एक कुण्ड। गगा इसी कुण्ड में गिरती है। यह भूमि पर साठ योजन चौडा तथा दस योजन गहरा है। हपु० ५ १४१-१४२

वज्रमुष्टि—(१) उज्जयिनी के राजा वृषभध्वज के योद्धा दृढ़मुष्टि का पुत्र। इसकी माता वप्रश्री थी। इसका विवाह सेठ विमलचन्द्र की पुत्री मगी से हुआ था। थोडे समय बाद मगी अन्यासक्त हुई। इससे यह दु खी हुआ और विरक्त होकर इसने मुनि वरधर्म से दीक्षा ले ली। मपु० ७१ २०९-२४८, हपु० ३३ १०३-१२९

(२) भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन का मल्ल। धरोहर हडपने के अपराध में श्रीभूति मन्त्री को इस मल्ल के तीस घूसो का दण्ड दिया गया था। मपु० ५९ १४६-१७५

(३) जम्बूद्वीप की पुण्डरीकिणी नगरी का एक पुरुष। इसकी पत्नी सुभद्रा तथा पुत्री सुमति थी। आगामी दूसरे भव में सुमति कृष्ण की पटरानी जाम्बवती हुई। हपु० ६० ५०-५२

वज्ररथ—रावण का पक्षधर एक राजा। इसने राम के योद्धाओ के साथ युद्ध किया था। पपु० ७४ ६३-६४

वज्रवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपों में नौवाँ द्वीप और सागर। हपु० ५ ६२४

वज्रवान्—एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वशज राजा वज्रभानु अपर नाम वज्रजातु का पुत्र और विद्युन्मुख का पिता था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३-२४

वज्रवीर्य—तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्वभव का पिता। यह जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में पद्म देश के अश्वपुर नगर का राजा था। विजया इसकी रानी तथा वज्रनाभि पुत्र था। यही वज्रनाभि आगे तीर्थंकर पार्श्वनाथ हुआ। मपु० ७३ ३१-३२, ९१-९२

वज्रवृषभनाराच—एक सहनन। इससे शरीर वज्रमय हड्डियो से रचित, वज्रमय वेष्टनो से वेष्टित और वज्रमय कीलो से कीलित होता है। तीर्थङ्कर इस सहनन के धारी होते हैं। इसका अपर नाम वज्रनाराच सहनन है। हपु० ८ १७५, वीवच० ९ ६२

वज्रवेग—रावण का पक्षधर एक राक्षस। इन्द्र विद्याधर और रावण के

युद्ध में यह रावण की सेना का विनाश देखकर युद्ध के लिए आया था। पपु० १२ १९६

वज्रशाल—दुर्लङ्घ्यपुर नगर का एक कोट। यह सौ योजन ऊँचा तथा तिगुनी परिधि से युक्त है। लोकपाल नलकूवर ने इसका निर्माण कराया था। पपु० १२ ८६-८७

वज्रशीला—वज्रपंजर-नगर के राजा विद्याधर वज्रायुध की रानी। यह खेचरभानु की जननी थी। इसका पुत्र आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दिर की पुत्री श्रीमाला के स्वयंवर में गया था। पपु० ६ ३५७-३५८, ३९६

वज्रसंज्ञ—एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वंशज राजा वज्राक का पुत्र और वज्रास्य का पिता था। इसका अपर नाम वज्रसुन्दर था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३

वज्रसुन्दर—एक विद्याधर राजा। यह नमि का वंशज था। हपु० १२ २३, दे० वज्रसंज्ञ

वज्रसूरि—एक प्राचीन आचार्य। ये अपनी सूक्तियों के लिए प्रसिद्ध थे। हपु० १ ३२

वज्रसेन—(१) एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वंशज वज्रजंघ का पुत्र और वज्रदंष्ट्र का पिता था। पपु० ५ १७-१८, हपु० १३ २१-२२

(२) जम्बूद्वीप के कोसलदेश की अयोध्या नगरी का राजा। इसकी रानी का नाम शीलवती था। कनकोज्ज्वल का जीव स्वर्ग से चयकर इन्हीं राजा-रानी का हरिषेण नामक पुत्र हुआ था। मपु० ७४ २३१-२३२, वीवच० ४ १२१-१२३

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। श्रीकान्ता इसकी रानी और वज्रनाभि पुत्र था। मपु० ११ ८-९

वज्रांक—(१) एक विद्याधर राजा। यह नमि विद्याधर के वंशज वज्रबाहु का पुत्र और वज्रसुन्दर का पिता था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३, दे० वज्रसंज्ञ

(२) अयोध्या का एक धनिक। इसकी प्रिया का नाम मकरी था। इसके दो पुत्र थे—अशोक और तिलक। इसने मुनि द्युति से दीक्षा धारण कर ली थी तथा इसके दोनों पुत्र भी पिता के दीक्षागुरु से दीक्षित हो गये थे। मुनि द्युति के समाधिस्थ हो जाने के पश्चात् अपने दोनों पुत्रों के साथ इसने ताम्रचूडपुर की ओर विहार किया था। पिता और दोनों पुत्र ये तीनों मुनि निश्चित स्थान तक नहीं पहुँच पाये थे कि चातुर्मास का समय आरम्भ हो जाने से इन्हें एक वृक्ष के नीचे ही ठहर जाना पड़ा था। भामण्डल ने इन तीनों मुनियों की वन में आहार व्यवस्था की थी। भामण्डल मरकर इस व्यवस्था के फलस्वरूप मेरु पर्वत के दक्षिण में देवकुरू नामक उत्तर भोगभूमि में उत्पन्न हुआ था। पपु० १२३ ८६-१४५

वज्रांगद—त्रिपुर नगर का एक विद्याधर राजा। वज्रमालिनी इसकी रानी थी। मपु० ६३ १४-१५, दे० वज्रमालिनी

वज्रा—प्रथम नरक के खरभाग का दूसरा पटल। हपु० ४ ५२, दे० खरभाग

वज्राक्ष—दशानन का अनुयायी एक विद्याधर राजा। राम की वानर-सेना को इसने पीछे हटा दिया था। पपु० ८ २६९-२७१, ७४.६१

वज्राख्य—रावण का एक योद्धा। हस्त और प्रहस्त वीरों को मरा सुनकर इसने युद्धभूमि में वानरसेना के साथ भयकर युद्ध किया था। पपु० ६० १-७

वज्राढ्य—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का चौदहवाँ नगर। मपु० १९ ४२, ५३

वज्राभ—एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वंशज राजा वज्रभृत् का पुत्र और वज्रबाहु का पिता था। पपु० ५ १८-१९, हपु० १३ २२-२३

वज्रायुध—(१) एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वंशज राजा वज्रध्वज का पुत्र और वज्र का पिता था। पपु० ५ १८, हपु० १३ २२

(२) वज्रपंजर नगर का एक विद्याधर। इसकी रानी वज्रशीला तथा पुत्र खेचरभानु था। पपु० ६ ३९६, दे० वज्रपंजर

(३) मुनि संजयन्त के दूसरे पूर्वभव का जीव—चक्रपुर नगर के राजा अपराजित के पौत्र और राजा चक्रायुध के पुत्र। इनकी रानी रत्नमाला तथा पुत्र रत्नायुध था। ये पुत्र को राज्य देकर मुनि हो गये थे। महापुराण के अनुसार किसी समय ये मुनि-अवस्था में प्रतिमायोग धारण कर प्रियंगुखण्ड वन में विराजमान थे। इन्हें व्याध दारुण के पुत्र अतिदारुण ने मार डाला था। इस उपसर्ग को सहकर और धर्मध्यान से मरकर ये सर्वार्थसिद्धि में देव हुए थे। मपु० ५९ २७३-२७५, हपु० २७ ८९-९४

(४) भूमिगोचरी राजाओं में एक श्रेष्ठ राजा। यह सुलोचना के स्वयंवर में सम्मिलित हुआ था। पापु० ३ ३६-३७

(५) तीर्थंकर शान्तिनाथ के चौथे पूर्वभव का जीव—जम्बूद्वीप में स्थित पूर्वविदेहक्षेत्र के मंगलावती देश में रत्नसंचयनगर के राजा क्षेमंकर और रानी कनकचित्रा का पुत्र। इसकी रानी लक्ष्मीमती तथा पुत्र सहस्रायुध था। इन्द्र ने अपनी सभा में इसके सम्यक्त्व की प्रशंसा की थी, जिसे सुनकर विचित्रचूल देव परीक्षा लेने इसके निकट आया था। विचित्रचूल ने पण्डित का एक रूप धरकर इससे जीव सम्बन्धी विविध प्रश्न किये थे। इसने उत्तर देकर देव को निरुत्तर कर दिया था। एक समय सुदर्शन सरोवर में किसी विद्याधर ने इसे नागपाश से बाँधकर शिला से ढक दिया था किन्तु इसने शिला के टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे और नागपाश को निकालकर फेंक दिया था। इसे चक्ररत्न की प्राप्ति हुई थी। अन्त में यह अपने पोते का कैवल्य देखकर संसार से विरक्त हुआ और अपने पुत्र सहस्रायुध को राज्य देकर पिता क्षेमंकर के पास दीक्षित हो गया था। सिद्धगिरि पर इसने एक वर्ष का प्रतिमायोग धारण किया तथा सहस्रायुध के साथ वैभार पर्वत पर देहोत्सर्ग कर ऊर्ध्वग्रैवेयक के सौमनस अधोविमान में

उनतीस सागर की आयु का धारी अहमिन्द्र हुआ था। मपु० ६३.३७-३९, ४४-४५, ५०-७०, ८५, १३८-१४१, पापु० ५.११-१२, १७-३६, ४५-५२

वज्रार्गल—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का तेरहवाँ नगर। मपु० १९ ४२, ५३

वज्रावर्त—एक धनुष। राम ने इसी धनुष को चढ़ाकर स्वयंवर में सीता को प्राप्त किया था। पपु० २८ २४०-२४३

वज्रास्य—एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर नमि के वंशज राजा वज्रसंघ अपर नाम वज्रसुन्दर का पुत्र और वज्रपाणि का पिता था। पपु० ५ १९, हपु० १३ २३ दे० वज्रसंघ

वज्रोदर—दशानन का पक्षधर एक विद्याधर नृप। यह हनुमान द्वारा दो बार रथ से च्युत किये जाने के पश्चात् अन्त में मारा गया था। पपु० ८ २६९-२७३, ६० २८-३१

वज्रोदरी—एक विद्या। यह दशानन को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२८

वट—तीर्थंकर वृषभदेव का चैत्यवृक्ष। मपु० २० २२०, पपु० २० ३६-३७

वटपुर—एक नगर। मधु और कैटभ यहाँ आये थे। इस समय यहाँ का राजा वीरसेन था। हपु० ४३ १६३

वटवृक्ष—वनगिरि नगर के राजा हरिविक्रम के सात सेवकों में प्रथम सेवक। मपु० ७५.४८०

वणिक्पथपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। कौरव और पाण्डवों द्वारा राज्य विभाजन किये जाने के पश्चात् पाण्डव सहदेव ने इस नगर को अपनी निवासभूमि बनाया था। पापु १६ ७

वणिज्—तीर्थंकर वृषभदेव द्वारा निर्मित तीन वर्णों में दूसरा वर्ण। इसका अपर नाम वैश्य था। ये कृषि, व्यापार और पशुपालन आदि के द्वारा न्यायपूर्वक जीविका करते थे। इस वर्ण को वृषभदेव ने स्वयं यात्रा करके यात्रा करना सिखाया था। जल और स्थल आदि प्रदेशों में यात्रा करके व्यापार करना इस वर्ण की जीविका का मुख्य साधन था। मपु० १६.१८३-१८४, २४४, ३८४६

वतंसकूट—मेरु से उत्तर की ओर सीता नदी के पश्चिम तट पर भद्रशाल वन में स्थित एक कूट। यहाँ देव दिग्गजेन्द्र रहता है। हपु० ५ २०८

वत्स—(१) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। कौशाम्बी इस देश की मुख्य नगरी थी। इस देश की रचना तीर्थङ्कर वृषभदेव के समय में की गयी थी। मपु० १६ १५३, ७० ६३, पपु० ३७ २२, हपु० ११ ७५, १४ २

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर स्थित एक देश। सुसीमा इस देश की प्रसिद्ध नगरी है। मपु० ४८ ३-४

(३) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर स्थित देश। मपु० ५२ २-३

(४) पुष्करवर द्वीप के पूर्वार्ध भाग में स्थित मेरु-पर्वत की पूर्व दिशा के विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिणी-तट पर स्थित देश। सुसीमा नगरी इस देश की राजधानी है। मपु० ५६.२

वत्सकावती—पूर्व-विदेहक्षेत्र में सीता नदी और निषध-पर्वत के मध्य स्थित आठ देशों में चौथा देश। यह दक्षिणोत्तर लम्बा है। मपु० ७ ३३, ८ १९१, ४८ ५८, हपु० ५ २४७-२४८

वत्सनगरी—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की कौशाम्बी नगरी। पद्मप्रभ तीर्थंकर इसी नगरी में जन्मे थे। मपु० ५२ १८, पपु० २० ४२

वत्समित्रा—एक दिक्कुमारी देवी। यह मेरु सम्बन्धी सौमनस-पर्वत के एक कूट पर क्रीड़ा करती है। हपु० ५ २२७

वत्सराज—शक् सम्वत् सात सौ पाँच में हुआ अवन्ति देश का एक राजा। हरिवंशपुराण की रचना इसी राजा के समय में आरम्भ हुई थी। हपु० ६६ ५२

वत्सा—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में सीता नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित आठ देशों में प्रथम देश। यह दक्षिणोत्तर लम्बा है। मपु० ६३ २०९, हपु० ५ २४७-२४८

वदतांवर—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९, २५ १४६

वध—(१) असातावेदनीय कर्म के दुःख शोक आदि आस्रवों में एक आस्रव। हपु० ५८ ९३

(२) अहिंसाणुव्रत का दूसरा अतीचार-दण्ड आदि से मारना-पीटना। हपु० ५८ १६४-१६५

वधकारिणी—एक विद्या। रावण को यह विद्या प्राप्त थी। पपु० ७ ३२६

वधपरीषह—बाईस परीषहों में एक परीषह। इसमें शरीर में निःस्पृह-भाव रखते हुए पीड़ा, मारण आदि जनित वेदना सहन करनी होती है। मुनि इसे निष्कलेप-भाव से सहते हैं। मपु० ३६ १२१

वधमोचन—एक विद्या। रथनूपुर के स्वामी अमिततेज ने चमरचंच-नगर के राजा अशनिघोष को मारने के लिए पोदनपुर के राजा श्रीविजय को यह विद्या भेंट में दी थी। मपु० ६२ २४२-२४६ २६८-२७१

वनक—दूसरी नरकभूमि के चौथे प्रस्तारक का चौथा इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में एक सौ बत्तीस, विदिशाओं में एक सौ अट्ठाईस श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७८, १०८

वनक्रीड़ा—क्रीड़ा-विनोद का एक भेद। यह शिशिर के पश्चात् की जाती है। दम्पति यहाँ आकर वृक्षों की टहनियाँ हिलाकर और पत्र-पुष्प तोड़कर क्रीड़ा करते हैं। ऐसी क्रीड़ा करनेवाले यदि पति-पत्नी नहीं होते तो वे समवयस्क अवश्य होते हैं। मपु० १४ २०७-२०८

वनगिरि—(१) भरतक्षेत्र का एक पर्वत। भरतक्षेत्र में रत्नपुर नगर के राजा प्रजापति ने अपने पुत्र चन्द्रचूल को किसी वैश्य कन्या को बल-पूर्वक अपने अधीन करने के अपराध में प्राणदण्ड दिया था। मंत्री स्वयं दण्ड देने की राजा से अनुमति लेकर राजकुमार के साथ इसी पर्वत पर आया था और यहाँ मंत्री ने महाबल मुनि से राजकुमार का

आगामी तीसरे भव में नारायण होना जानकर उसे संयम धारण करा दिया था। मपु० ६७ ९०-१२१

(२) भीलराज हरिविक्रम द्वारा कपित्थ वन के दिशागिरि पर्वत पर बसाया गया एक नगर। मपु० ७५ ४७८-४७९

वनदेवता—वन के रक्षक देव। इन्हीं देवों ने वृषभदेव के साथ दीक्षित हुए साधुओं को तप से भ्रष्ट होने पर अपने हाथ से वन्य फल खाते और जल पीते देखकर उन्हें रोका था। मपु० १८ ५१-५४

वनमाल—सानत्कुमार और माहेन्द्र युगल स्वर्गों का दूसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४८

वनमाला—(१) कलिंग देश में दन्तपुर नगर के वणिक वीरदत्त अपर-नाम वीरक वैश्य की पत्नी। जम्बूद्वीप के वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का राजा सुमुख इसे देखकर आकृष्ट हो गया था। यह भी सुमुख को पाने के लिए लालायित हो गयी थी। अन्त में यह सुमुख द्वारा हर ली गयी। इसने और राजा सुमुख ने वरधर्म मुनिराज को आहार देकर उत्तम पुण्यबन्ध किया। इन दोनों का विद्युत्पात से मरण हुआ। दोनों साथ-साथ मरे और मरकर उक्त आहार-दान के प्रभाव से विजयार्ध पर्वत पर विद्याधर-विद्याधरी हुए। महापुराण के अनुसार यह हरिवर्ष देश में वस्वालय नगर के राजा वज्रचाप और रानी सुप्रभा की विद्युन्माला पुत्री और सिंहकेतु की स्त्री थी। इसी के पुत्र हरि के नाम पर हरिवंश की स्थापना हुई। मपु० ७० ६५-७७, हपु० १४ ९-१३, ४१-४२, ६१, ९५, १५ १७-१८, ५८, पापु० ७ १२१-१२२

(२) पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश के वीतशोक नगर के राजा महापद्म की रानी। यह शिवकुमार की जननी थी। मपु० ७६ १३०-१३१

(३) भरतक्षेत्र में अचलग्राम के एक सेठ की पुत्री। इसे वसुदेव ने विवाहा था। हपु० २४ २५

(४) भरतक्षेत्र के वैजयन्तपुर के राजा पृथिवीधर और रानी इन्द्राणी की पुत्री। यह लक्ष्मण में आसक्त थी। लक्ष्मण के चले जाने पर इसके पिता इसे इन्द्रनगर के राजा बालमित्र को देना चाहते थे। पिता के इस निर्णय से दुःखी होकर यह आत्मघात करने के लिए वन में गयी। वहाँ इसने ज्यों ही आत्मघात का प्रयत्न किया त्यों ही लक्ष्मण ने वहाँ पहुँचकर इसे बचा लिया था। इस प्रकार इसकी लक्ष्मण से अकस्मात् भेंट हो गयी थी और दोनों का सम्बन्ध हो गया था। यह लक्ष्मण की तीसरी पटरानी थी। इसके पुत्र का नाम अर्जुनवृक्ष था। पपु० ३६ १६-६२, ९४ १८-२३, ३३

(५) म्लेच्छराज द्विरदद्रंष्ट्र की पुत्री। धातकीखण्ड द्वीप के ऐरावत-क्षेत्र में शतद्वार के निवासी सुमित्र ने इसे विवाहा था। सुमित्र का मित्र प्रभव इसे देखकर कामासक्त हो गया था। सुमित्र ने मित्र प्रभव के दुःख का कारण अपनी स्त्री को समझकर इसे मित्र के पास भेज दिया था परन्तु प्रभव इनका परिचय ज्ञातकर निर्वेद को प्राप्त हुआ। इस कलंक को धोने के अर्थ प्रभव अपना सिर काटने के लिए तलवार जैसे ही कंठ के पास ले गया था कि छिपकर इस कृत्य को देखनेवाले सुमित्र ने अपने मित्र प्रभव का हाथ पकड़ लिया था। सुमित्र ने उसे आत्मघात के दुःख समझाये और उसकी ग्लानि दूर की। पपु० १२ २६-४९

वनराज—वनगिरि-नगर के भिल्लराज हरिविक्रम तथा भीलनी सुन्दरी का पुत्र। लोहजंघ और श्रीषेण इसके दो मित्र थे। ये दोनों मित्र इसके लिए हेमाभनगर के राजा की पुत्री श्रीचन्द्रा को हरकर सुरंग से ले आये थे। श्रीचन्द्रा के भाई किन्नरमित्र और यक्षमित्र ने इसके दोनों मित्रों के साथ युद्ध भी किया था किन्तु दोनों पराजित हो गये थे। श्रीचन्द्रा इस घटना से इससे विरक्त हो गयी थी। समझाने पर भी सफलता प्राप्त न होने पर दोनों ओर से युद्ध होना निश्चित हो गया। हेमाभनगर के जीवन्धरकुमार ने युद्ध को जीव-घातक जानकर उसे टालना चाहा। उन्होंने सुदर्शन यक्ष का स्मरण किया। यक्ष ने तुरन्त आकर श्रीचन्द्रा जीवन्धरकुमार को सौंप दी। इसे छोड़ शेष सभी नगर लौट गये। यह युद्ध की इच्छा से खड़ा रहा। फलतः यह यक्ष द्वारा पकड़ा गया तथा जीवन्धरकुमार द्वारा कैद किया गया। हरिविक्रम ने इसके पकड़े जाने से क्षुब्ध होकर युद्ध करना चाहा किन्तु यक्ष ने उसे भी पकड़कर जीवन्धरकुमार को सौंप दिया। इसे अन्त में अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया था। इसका श्रीचन्द्रा के साथ पूर्वभव का स्नेह जानकर सभी शान्त हो गये और पिता-पुत्र दोनों को मुक्त कर दिया गया तथा श्रीचन्द्रा नढाढ्य के साथ विवाह दी गयी थी। मपु० ७५ ४७८-५२१

वनवती—एणीपुत्र के पूर्वभव की माँ-एक देवी। वसुदेव के शौर्यपुर जाने की इच्छा प्रकट करने पर इसने रत्नों से देदीप्यमान एक विमान की रचना कर वसुदेव को दिया था और वसुदेव के शौर्यपुर-आगमन की सूचना इसी ने समुद्रविजय को दी थी। हपु० ३२ १९, ३८, ५३. १०, २४

वनवास—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। यह वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित किया गया था। मपु० १६ १५४

वनवास्य—भरतक्षेत्र का एक नगर। यह राजा चरम के द्वारा बसाया गया था। हपु० १७ २७

वनवीथी—समवसरण के मार्ग। धूपघटों के कुछ ही आगे मुख्य गलियों के समीप ये चार-चार होती हैं। इनमें अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्रवृक्षों के वन होते हैं। इन वनों के वृक्ष इतने अधिक प्रकाशमान होते हैं कि वहाँ रात और दिन में कोई भेद दिखाई नहीं देता। इनमें बावड़ी, सरोवर, चित्रशालाएँ भी होती हैं। मपु० २२ १६२-१६३, १७३-१८५

वनवेदिका—समवसरण के चारों वनों के अन्त में चारों ओर ऊँचे-ऊँचे गोपुरों से युक्त, रत्नजड़ित, स्वर्णमय वनवेदी। इसके चाँदी से निर्मित चारों गोपुर अष्ट मंगलद्रव्यों से अलंकृत रहते हैं। मपु० २२ २०५, २१०

वनस्पतिकायिक—वनस्पति-शरीरधारी एकेन्द्रिय जीव। ये छेदन-भेदन

जनित महादुःख सहते हैं। इन जीवों की कुयोनियाँ दस लाख और कुलकोटियाँ अट्ठाईस लाख तथा उत्कृष्ट आयु दस हजार वर्ष होती है। ये जीव अनेक आकारों के होते हैं। मपु० १७ २२-२३, हपु० ३ २२१, १८ ५४, ५८, ६०, ६६, ७१

वर्निसिंह—एक पर्वत। नारायण त्रिपृष्ठ का जीव नरकगति से निकलकर इसी पर्वत पर सिंह हुआ था। वीवच० ४ २

वन्दना—(१) अंगबाह्यश्रुत का तीसरा प्रकीर्णक। इसमें वन्दना करने योग्य परमेष्ठी आदि की वन्दना-विधि बतलायी गयी है। हपु० २ १०२, १० १३०

(२) छः आवश्यकों में तीसरा आवश्यक। इसमें बारह आवर्त और चार शिरोनतियाँ की जाती हैं। हपु० ३४ १४४

वन्द्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६७

वन्द्यता—पारिव्राज्यक्रिया के सत्ताईस सूत्रपदों में एक सूत्रपद। अर्हन्तदेव की वन्दना करते हुए तपश्चरण करने से मुनियों को यह गुण प्राप्त हो जाता है। वन्द्य पुरुष भी ऐसे मुनियों की वन्दना करते हैं। मपु० ३९ १६५, १९२

वप्पिला—जम्बूद्वीप के वंग देश की मिथिला नगरी के राजा विजय की रानी। यह तीर्थंकर नमि की जननी थी। इसका अपर नाम वप्रा था। मपु० ६९ १८-१९, २५, ३१ पपु० २० ५७

वप्रकावती—पश्चिम विदेहक्षेत्र के नीलपर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित देश। यह दक्षिणोत्तर लम्बे आठ देशों में चौथा देश है। अपराजित नगरी इस देश की राजधानी है। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २५१-२५२

वप्रथु—हरिवंशी राजा सुमित्र का पुत्र और विन्दुसार का पिता। हपु० १८ १९-२०

वप्रश्री—(१) उज्जयिनी के राजा वृषभध्वज के योद्धा दृढ़मुष्टि की स्त्री। वज्रमुष्टि इसका पुत्र था। मपु० ७१ २०९-२१० हपु० ३३ १०१-१०४

(२) जम्बूद्वीप के कोशल देश में स्थित अयोध्या नगरी के अर्हद्दास सेठ की पत्नी। पूर्णभद्र और मणिभद्र इसके पुत्र थे। मपु० ७२ २५-२६

वप्रा—(१) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक देश। विजया नगरी इस देश की राजधानी है। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २५१-२५२

(२) तीर्थंकर नमिनाथ की जननी। पपु० २० ५७ दे० वप्पिला

(३) काम्पिल्य नगर के राजा मृगपतिध्वज की रानी। दसवें चक्रवर्ती हरिषेण की यह माता थी। पपु० ८ २८१-२८३, २० १८५-१८६

वर—(१) समवसरण के तीसरे कोट की पूर्वदिशा में स्थित गोपुर के आठ नामों में आठवाँ नाम। हपु० ५७ ५६-५७

(२) प्रचलित विवाहविधि से कन्या ग्रहण करनेवाला पुरुष। कन्या देने के पूर्व इसमें निम्न गुण देखे जाते हैं—कुलीनता, आरोग्यता, अवस्था, शील, श्रुत, शरीर, लक्ष्मी, पक्ष और परिवार। मपु० ६२ ६४

वरका—वृषभदेव के समय का एक खाद्यान्न-मटर। मपु० ३ १८६

वरकीर्ति—विजयपुर का राजा। इसकी रानी कीर्तिमती थी। इसकी पुत्री का विवाह निमित्तज्ञानियों ने श्रीपाल के साथ होना बताया था। मपु० ४७ १४१

वरकुमार—कुरुवंश का एक नृप। यह राजा सुकुमार का पुत्र और विश्व का पिता था। हपु० ४५ १७

वरचन्द्र—(१) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का पुत्र। तीर्थंकर चन्द्रप्रभ इसे ही राज्य सौंप करके दीक्षित हुए थे। मपु० ५४ २१४-२१६

(२) आगामी छठा बलभद्र। मपु० ७६ ४८६

वरधर्म—एक मुनि। जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र में स्थित श्रीपुर नगर का राजा वसुन्धर अपनी रानी पद्मावती के वियोग से विरक्त होकर मनोहर वन में इन्हीं से संयमी होकर और समाधिमरण करके महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ था। मपु० ६९ ७४-७७

वरतनु—(१) एक व्यन्तर देव। यह व्यन्तर देवों का स्वामी था। चक्रवर्ती भरतेश ने इसे पराजित करके इससे भेंट में कवच, हार, चूड़ारत्न, कड़े, यज्ञोपवीत, कण्ठहार और करधनी आभूषण प्राप्त किये थे। मपु० २९ १६६-१६७, हपु० ११ १३-१४

(२) समुद्र के वैजयन्त गोपुर का एक देव। लक्ष्मण ने इसे पराजित किया था। मपु० ६८ ६५१

वरत्रा—मजबूत रस्सी। यह चर्म की होती थी। मपु० ३५ १४९

वरद—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४२

(२) समवसरण में स्थित तीसरे कोट के पश्चिम द्वार के आठ नामों में आठवाँ नाम। हपु० ५७ ५६, ५९

वरदत्त—(१) तीर्थङ्कर नेमिनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ७१ १८२, हपु० ५८ २, ६० ३४९, ६५ १५, पापु० २२ ५९

(२) राजा विभीषण और रानी प्रियदत्ता का पुत्र। मपु० १० १४९

(३) राजा भगीरथ का पुत्र। भगीरथ ने इसे ही राज्य सौंपकर कैलाश पर्वत पर योग धारण किया था। मपु० ४८ १३८-१३९

(४) एक केवली। ये जयसेन चक्रवर्ती के दीक्षागुरु थे। मपु० ६९ ८८-८९

(५) द्वारावती नगरी का राजा। इसने तीर्थङ्कर नेमि को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ७१ १७५-१७६

(६) राजा सत्यन्धर के नगर-श्रेष्ठी धनपाल का पुत्र। यह जीवन्धर का मित्र था। मपु० ७५ २५६-२६०

(७) एक मुनि। हस्तिनापुर के राजा हरिषेण ने अपनी रानी विनयश्री के साथ इन्हें आहार कराया था, जिसके फलस्वरूप इसकी रानी मरकर हैमवत क्षेत्र में आर्या हुई थी। हपु० ६० १०५-१०७

वरदा—विदर्भ देश की एक नदी। राजा कुणिम ने इसी नदी के किनारे कुण्डिन नगर बसाया था। हपु० १७ २३

वरधर्म—(१) एक मुनि। राजा सुमुख और वनमाला ने इन्हें आहार देकर पुण्यार्जन किया था। इन्ही मुनिराज के चरणस्पर्श से वज्रमुष्टि की प्रिया मगी विष रहित हुई थी। भरतक्षेत्र के मगध देश में स्थित शाल्मलिखण्ड ग्राम के निवासी जयदेव और देविला की पुत्री पद्मदेवी ने इन्ही से अज्ञातफल न खाने का नियम लिया था। कुबेरमित्र भी इन्ही से तप धारण कर ब्रह्मलोक के अन्त में लौकान्तिक देव हुआ था। मपु० ४७ ७३-७५, ७१ ४४६-४४८, हपु० १५ ६-१२, ३३ ११०-११३, ६० १०८-११०

(२) एक चारण ऋद्धिधारी मुनि। सुभानु ने अपने अन्य भाइयो के साथ इन्ही से दीक्षा ली थी और जीवन्धर भी इनसे ही व्रत धारण कर व्रती हुए थे। मपु० ६२.७३, ७१ २४३, ७५ ६७४-६७५

वरधर्मा—एक गणिनी। कलिंग के राजा अतिवीर्य द्वारा भरत पर आक्रमण किये जाने के समय राम और लक्ष्मण सीता को इन्ही के पास छोडकर नट के वेष मे भरत की सहायता करने गये थे। पपु० ३७.८६-९७

वरप्रद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१३

वरवंश—राजा धृतराष्ट्र और गाधारी का सत्रहवाँ पुत्र। पापु० ८.१९५

वरसेन—(१) राजा नन्दिषेण और रानी अनन्तमती का पुत्र। यह मणिकुण्डल देव का जीव था। मपु० १० १५०

(२) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा विमलसेन का पुत्र। पिता की आज्ञा से यह श्रीपालकुमार को उसके बन्धु वर्ग के समीप ले जा रहा था। विमलपुर नगर के पास श्रीपाल को अकेला छोडकर यह जल लेने गया। इधर सुखावती विद्याधरी ने श्रीपाल को कन्या का रूप दे दिया था। अत यह श्रीपाल को इष्ट स्थान नही ले जा सका। मपु० ४७ ११४-११७

(३) भरतक्षेत्र के चक्रपुर नगर का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—लक्ष्मीमती और वैजयन्ती। रानी लक्ष्मीमती से नारायण पुण्डरीक तथा वैजयन्ती रानी से बलभद्र नन्दिषेण हुए थे। मपु० ६५ १७४-१७७

(४) विजयार्घ पर्वत की अलका नगरी के राजा महासेन और रानी सुन्दरी का कनिष्ठ पुत्र। यह उग्रसेन का छोटा भाई था। वसुन्धरा इसकी बहिन थी। मपु० ७६,२६२-२६३, २६५

(५) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा दृढरथ और रानी सुमति का पुत्र। मपु० ६३ १४२-१४८, पापु० ५ ५३-५८

(६) विदेहक्षेत्र में स्थित पाटली ग्राम के वैश्य नागदत्त और उसकी पत्नी सुमति का पुत्र। इसके नन्द, नन्दिमित्र और नन्दिषेण तीन बडे भाई और जयसेन नाम का एक छोटा भाई था। मदनकान्ता और श्रीकान्ता इसकी ये दो बहनें भी थी। मपु० ६ १२६-१३०

वरवीर—वृषभदेव के पुत्र और भरतेश के छोटे भाई। ये चरम-शरीरी थे। इनका अपर नाम जयसेन था। भरतेश द्वारा राज्य पर अधिकार किये जाने से इन्होंने राज्य त्याग कर अपने पिता से दीक्षा ले ली थी। ये भरतेश के मुक्ति प्राप्त करने के पश्चात् मुक्त हुए। ये सातवें पूर्वभव में लोलुप हलवाई थे। छठे पूर्वभव में नकुल हुए। पाँचवें पूर्वभव में उत्तरकुरु में भद्रपरिणामी आर्य हुए। चौथे पूर्वभव में ऐशान स्वर्ग में ऋद्धिधारी देव, तीसरे पूर्वभव में राजा प्रभजन के प्रशान्तमदन नामक पुत्र, दूसरे पूर्वभव में अच्युत स्वर्ग में देव और प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ८ २३४, २४१, ९ ९०, १८७, १० १५२, १७२, ११ १६०, १६ ३-४, ३४ १२६, ४७. ३७६, ३९९

वरांगचरित—आचार्य जटासिंहनन्दी द्वारा रचित एक काव्य। हपु० १ ३५

वराट—एक अर्धरथ राजा। यह कृष्ण और जरासन्ध के युद्ध में कृष्ण का पक्षधर था। हपु० ५० ८३

वराह—(१) एक पर्वत। प्रद्युम्न को मारने के लिए कालसवर के पुत्र उसे इस पर्वत की गुफा में लाये थे। प्रद्युम्न ने यहाँ के इस नाम के देव से युद्ध किया था। युद्ध मेंउसे पराजित करने पर उससे विजयघोष शख तथा महाजाल ये दो वस्तुएँ यही प्राप्त हुई थी। मपु० ७२ १०८-११०

(२) इस नाम के पर्वत का निवासी एक देव। यह प्रद्युम्न से पराजित हुआ था। मपु० ७२ १०८-१०९

(३) विजयार्घ पर्वत की उत्तरश्रेणी का सत्रहवाँ नगर। हपु० २२ ८७

(४) चारुदत्त का मित्र। हपु० २१ १३

वराहक—वसुदेव का अनन्य भक्त। यह वसुदेव के साथ कृष्ण के कार्य से समुद्रविजय से मिला था। हपु० ५१ १-४

वरिष्ठ—समवसरण के तीसरे कोट में स्फटिक मणियो से बने चार खण्डवाले दक्षिण-गोपुर के आठ नामो मे चौथा नाम। हपु० ५७ ५८

वरिष्ठधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १२२

वरुण—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३९

(२) वृषभदेव के सातवें गणधर। हपु० १२ ६५

(३) वारुणीवर-द्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ६४०

(४) एक निमित्तज्ञ। इसने कस को उसका हन्ता उत्पन्न हो चुकने की बात बतायी थी। मपु० ७० ४१२, हपु० ३५ ३७

(५) एक मुनि। चम्पानगरी के सोमदत्त, सोमिल और सोमभूति तीनो भाई सोमभूति की स्त्री नागश्री के मुनि को विष मिश्रित आहार देने मे विरक्त होकर इन्ही से दीक्षित हुए थे। मपु० ७२ २३५, हपु० ६४.४-१२, पापु० २३ १०८-१०९

(६) समवसरण के तीसरे कोट के चार गोपुरो में पश्चिमी गोपुर के आठ नामो मे सातवाँ नाम। हपु० ५७ ५९

(७) भरतक्षेत्र में विजयार्घ के दक्षिण भाग के समीप स्थित एक

जानकर उसे अपने समान मानकर सम्मान देते हैं। मपु० ३० ६१-७१

वर्णाश्रम—वर्णों और आश्रमो की मस्था। वर्ण चार हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। आश्रम भी चार हैं—ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। वर्ण का सम्बन्ध मानवो की जाति से और आश्रमो का सम्बन्ध व्यक्तियो के जीवन से है। हपु० ५४ ३

वर्णोत्तमत्व—द्विजो के दस अधिकारो में तीसरा अधिकार—समस्त वर्णो मे श्रेष्ठ होने की मान्यता। मपु० ४० १७५, १८२

वर्तना—निश्चय काल का लक्षण। यह द्रव्यो की पर्यायो के बदलते रहने में सहायक होती है। मपु० ३ २, ११, हपु० ७.१-२

वर्दल—छठी पृथिवी के द्वितीय प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारो महादिशाओ में बारह और विदिशाओ मे आठ श्रेणीबद्ध बिल है। हपु० ४ १४६

वर्द्ध कि—भरतक्षेत्र के दक्षिण देश का एक ग्राम। यहाँ का ब्राह्मण मृगायण मरकर साकेत का राजा अतिबल और मृगायण की पत्नी मधुरा मरकर रामदत्ता हुई थी। हपु० २७ ६१-६४

वर्द्धमान—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

(२) रुचकवर पर्वत की उत्तर दिशा का एक कूट। यहाँ अजन गिरि का दिग्गजेन्द्र देव रहता है। हपु० ५.७०३, दे० रुचकवर

(३) नृत्य का एक भेद। मपु० १४ १३३

(४) कीर्ति तथा गुणो से वर्द्धमान होने के कारण इन्द्र द्वारा प्रदत्त तीर्थङ्कर महावीर का एक नाम। वीवच० १ ४, दे० महावीर

वर्द्धमानक—चक्रवर्ती भरतेश की नृत्यशाला। मपु० ३७.१४९, पपु० ८३ ७

वर्द्धमानपुर—भरतेश का एक नगर। यहाँ पद्मप्रभ तीर्थङ्कर की प्रथम पारणा हुई थी। इसी नगर के पार्श्वनाथ मन्दिर में हरिवशपुराण की रचना आरम्भ की गयी थी। मपु० ५२ ५३-५४, हपु० ६६ ५३

वर्द्धमानपुराण—तीर्थङ्कर महावीर के जीवनचरित से सम्बन्धित एक पुराण। हपु० १ ४१

वर्मदेवी—वाराणसी के राजा अश्वसेन अपर नाम विश्वसेन की रानी। ये तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ की जननी थी। अपर नाम ब्राह्मी था। मपु० ७३.७५, पपु० २०.३६, ५९, दे० ब्राह्मी

वर्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४२

वर्वर—राम के समय का भरतक्षेत्र एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२-८६

वर्वरक—एक विद्याधर राजा। यह राम का पक्षधर था। राम-रावण युद्ध में व्याघ्ररथ पर सवार होकर इसने राम की ओर से युद्ध किया था। पपु० ५८ ६

वर्वरी—एक नर्तकी। चिलातिका और इस नर्तकी को पाने के लिए राजा दमितारि ने वत्सकावती देश के राजा अपराजित के पास दूत भेजा था तथा नर्तकियो के न देने पर युद्ध करते हुए नारायण अनन्तवीर्य द्वारा मारा गया था। मपु० ६२ ४२९-४८४ दे० अपराजित-१२

वर्ष—दो अयन प्रमित काल। इसका अपर नाम अब्द है। मपु० ३. ११६, हपु० ७ २२

वर्षवृद्धिविनोत्सव—जन्मदिन का उत्सव। इस अवसर पर मगल-गीत, नृत्य और वादित्रो के आयोजन होते हैं। जिसका जन्मदिन मनाया जाता है उसे नये वस्त्र और आभूषणो से अलकृत करके उच्चासन पर बैठाते है। उस पर चमर ढोरे जाते हैं। उसे परिजन और प्रियजन भेंट और गुरुजन आशीर्वाद देते थे। मपु० ५ १-११

वर्षीयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४३

वलाहक—(१) एक पर्वत। यह राजगृही के पाँच पर्वतो में चौथा पर्वत है। इसका आकार डोरी सहित धनुष के समान है। पपु० ८.२४, हपु० ४ ५५ दे० राजगृह

(२) कृष्ण के सेनापति अनावृष्टि के शख का नाम। हपु० ५१ २०-२१

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अट्ठावनवाँ नगर। हपु० २२ ९१

वलिविन्यास—रगावलि-विन्यास-रत्नचूर्ण से रग-बिरगे चौक पूरना। मपु० १२ १७८

वल्कल—वृक्षो की छाल। तापस और जटाधारी साधु वस्त्र के रूप में इसका उपयोग करते थे। तीर्थङ्कर वृषभदेव के साथ दीक्षित कच्छ और महाकच्छ राजाओ ने वृषभदेव के समान निर्दोष वृत्ति धारण करने मे असमर्थ हो जाने पर वल्कल पहिनना आरम्भ कर दिया था। मपु० १ ७

वल्गु—सौधर्म और ऐशान स्वर्गों का चौथा पटल। हपु० ६ ४४ दे० सौधर्म

वल्गुप्रभ—एक विमान। कुबेर इस विमान का स्वामी है। हपु० ५. ३२७

वल्मीक—सर्प-बामी। तपस्यारत बाहुबली के चरणो के पास सर्पो ने बामियाँ बना ली थी। पपु० ४ ७६

वल्लरी—गन्धमादन-पर्वत के पवर्तक भील की स्त्री। यह कृष्ण की पटरानी सत्यभामा के पूर्वभव का जीव थी। हपु० ६० १६

वशकारिणी—एक विद्या। यह रावण को प्राप्त थी। पपु० ७.३३१-३३२

वशित्व—चक्रवर्ती भरतेश को प्राप्त आठ ऋद्धियो मे एक ऋद्धि। मपु० ३८ १९३ दे० अणिमा

वशिष्ठ—कस के पूर्वभव का जीव—गगा और गन्धावती नदियो के सगम पर स्थित जठरकौशिक तापस-बस्ती का प्रमुख तापस। पचाग्नि तप तपते देखकर गुणभद्र और वीरभद्र चारण ऋद्धिधारी मुनियो ने इस उसका तप अज्ञान तप बताया था। मुनियो से ऐसा सुनकर यह पहले तो कुपित हुआ किन्तु मुनियो द्वारा जटाओ में उत्पन्न जोल, जुआ, मृत मछलियाँ तथा जलती हुई अग्नि मे छटपटानेवाले कीटे दिखाये

जाने पर यह शान्त हो गया था और इसने उनसे दीक्षा ले ली थी। व्यन्तर देव इसके तप के प्रभाव से प्रसन्न हो गये थे। यहाँ से विहार करके यह मथुरा आया था। यहाँ इसने एक मास के उपवास का नियम लेकर आतापनयोग धारण किया था। मथुरा के राजा उग्रसेन ने इसके दर्शन किये थे। इनसे प्रभावित होकर उसने नगर में घोषणा कराई थी कि ये मुनिराज महल में ही आहार करेंगे अन्यत्र नही। पारणा के दिन ये नगर में आये किन्तु नगर में आग लग जाने से इन्हें निराहार ही लौट जाना पडा था। एक मास बाद पुन पारणा के लिए आने पर इन्हें हाथी के क्षुब्ध हो जाने से पुन निराहार लौट जाना पडा। तीसरी बार आहार के लिए आने पर राजा उग्रसेन व्याकुलित चित्त होने से ध्यान न दे सके। यह इस घटना से कुपित हुआ। इसने उग्रसेन का पुत्र होकर राज्य छीनने का निदान किया। आयु के अन्त में मरकर यह निदान के कारण राजा उग्रसेन का रानी पद्मावती के गर्भ से कस नाम का पुत्र हुआ। कस की पर्याय में इसने उग्रसेन को बन्दी बनाकर उसे बहुत दु ख दिये थे। मपु० ७० ३२२-३४१, ३६७-३६८, हपु० ३३ ४६-८४

वशी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१६०

वशीकरणी—एक विद्या। विद्याधर अमिततेज ने अनेक अन्य विद्याओ के साथ यह विद्या भी सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९२

वश्येन्द्रिय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८६

वसन्त—(१) एक पर्वत। अयोध्या का राजा वज्रबाहु अपनी रानी मनोदया और साले उदयसुन्दर के साथ यहाँ आया था। यहाँ उस समय गुणसागर मुनि थे। धर्मोपदेश सुनकर वही दीक्षित हो गया पपु० २१ ७३-१२७ दे० वज्रबाहु-४

(२) राम का एक योद्धा। इसने रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ २१-२३

(३) एक विद्याधर। प्रद्युम्नकुमार ने इसकी इसके वैरी मनोवेग विद्याधर से मित्रता कराकर एक कन्या और नरेन्द्र-जाल प्राप्त किया था। हपु० ४७ ४०

वसन्तअमरा—पोदनपुर नगर के ब्राह्मण मृदुमति की स्त्री। मृदुमति ने चोरी करते समय शशाकनगर के राजा नन्दिवर्धन को अपनी रानी से यह कहते हुए सुना था कि वह विषयो का त्याग करके प्रात दीक्षा धारण कर लेगा। यह सुनकर मृदुमति को बोधि प्राप्त हुई। उसने इसे त्याग कर दीक्षा ले ली थी। पपु० ८५ ११८-१३७

वसन्ततिलक—इक्ष्वाकुवश के राजा रविमन्यु का पुत्र। यह कुबेरदत्त का पिता था। पपु० २२ १५६-१५९

वसन्ततिलका—(१) अजना की सखी। इसका अपर नाम वसन्तमाला था। इसने अजना के समक्ष पवनजय की प्रशसा की थी। यह आकाश में मण्डलाकार भ्रमण करने में समर्थ थी। पपु० १५ १४७, १६०

(२) पद्मिनी नगरी का निकटवर्ती एक उद्यान। विध्यश्री को सर्प के काटने पर सुलोचना ने उसे पचनमस्कार मत्र इसी उद्यान में सुनाया था। मपु० ४५ १५५, पपु० ३९ ९५-९७

वसन्तभद्र—एक व्रत। इसमें पाँच उपवास एक पारणा, छ उपवास एक पारणा, सात उपवास एक पारणा, आठ उपवास एक पारणा और नौ उपवास एक पारणा के क्रम से पैंतीस उपवास और पाँच पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ ५६

वसन्तमाला—अजना की सखी। इसका अपर नाम वसन्ततिलका था। पपु० १५ १४७, १६०, १७ २५० दे० वसन्ततिलका

वसन्तसुन्दरी—वसुन्धरपुर के राजा विंध्यसेन और रानी नर्मदा की पुत्री। इसे गुरुजनो ने युधिष्ठिर को देना निश्चित किया था किन्तु युधिष्ठिर के लाक्षागृह की आग में जलकर मर जाने के समाचार से इसका युधिष्ठिर के साथ विवाह नही हो सका। तब यह ससार से विरक्त हुई और इसने दीक्षा ले ली थी। पाण्डवपुराण में इसके पिता-कौशाम्बी के राजा, माता का नाम विध्यसेना तथा इसका नाम वसन्तसेना बताया है। हपु० ४५ ७०-७२, पापु० १३ ७३-९९

वसन्तसेना—(१) वस्त्वोकसार नगर के राजा विद्याधर समुद्रसेन और रानी जयसेना की पुत्री। यह कनकशान्ति की दूसरी रानी थी। मपु० ६३ ११७-११९, पापु० ५ ४०-४१

(२) कौशाम्बी के राजा विध्यसेन की पुत्री। पपु० १३ ७३-९९ दे० वसन्तसुन्दरी

(३) विजयनगर के राजा महानद की रानी। यह हरिवाहन की जननी थी। मपु० ८ २२७-२२८

(४) चम्पापुरी की वेश्या कलिंगसेना की पुत्री। चारुदत्त इस पर आसक्त होकर इसके घर बारह वर्ष तक रहा। मपु० ७२ २५८, हपु० २१ ४१, ५९, ६४ १३४

वसु—(१) विनीता नगरी के इक्ष्वाकुवशी राजा ययाति और रानी सुरकान्ता का पुत्र। यह क्षीरकदम्बक गुरु का शिष्य और पर्वत तथा नारद का गुरुभाई था। सत्यवादी होते हुए भी इसने गुरु की पत्नी के कहने से उसके पुत्र पर्वत का पक्ष पुष्ट करने को "अजैर्यष्टव्यम्" शब्द का अर्थ "बकरे से यज्ञ करना बताया था। इसके परिणामस्वरूप यह मरकर सातवें नरक में उत्पन्न हुआ। महापुराण में इसे भरतक्षेत्र में धवल देश की स्वास्तिकावती नगरी के राजा विश्वावसु और रानी श्रीमती का पुत्र बताया है। हरिवशपुराण के अनुसार इसके पिता चेदि राष्ट्र के सस्थापक तथा शुक्तिमती नगरी के राजा अभिचन्द्र तथा माँ उनकी रानी वसुमती थी। राजा अभिचन्द्र ने इसे राज्य सौंपकर दीक्षा ले ली थी। यह सभा में आकाश-स्फटिक स्तम्भ के ऊपर स्थित सिंहासन पर बैठता था। इसकी दो रानियाँ थी—एक इक्ष्वाकुवश की और दूसरी कुरुवश की। इन दोनों रानियो से इसके दस पुत्र हुए थे। वे हैं—बृहद्वसु, चित्रवसु, वासव, अर्क, महावसु, विश्वावसु, रवि, सूर्य, सुवसु और बृहद्ध्वज। इन दोनों पुराणो में भी "अजैर्यष्टव्य" की कथा थोड़े अन्तर के साथ आयी है। दोनों ही जगह इस कथा के परिणामस्वरूप वसु का पतन हुआ है। मपु० ६७ २५६-२५७, ४१३-४३९, पपु० ११ १३-१४, ६८-७२, हपु० १७ ३७, ५३-५९, १४९-१५२

कुछ ही वर्ष जीवित रहा। इसके मर जाने से देविला ने व्रत ग्रहण कर लिये थे। मपु० ७१ ३६०-३६१ दे० देविला-२

वसुरय—कुरुवंशी एक राजा। यह राजा वसुन्वर का पुत्र और इन्द्रवीर्य का पिता था। हपु० ४५ २६-२७

वसुल—अयोध्या का एक धनी पुरुष। यह विजय आदि अनेक धनिक पुरुषो के साथ राजा राम को रावण द्वारा अपहृता सीता को वापिस ले आने के अवर्णवाद की सूचना देने गया था किन्तु राम के पूछने पर भी उनसे यह संकोचवश अपना मतव्य प्रकट नही कर सका था। पपु० ९६ ३०-५०

वसुषेण—पोदनपुर का राजा। इसकी पाँच सौ रानियाँ थी। इनमें नन्दा इसकी सर्वप्रिय रानी थी। मलयदेश का राजा चण्डशासन इसका मित्र था। इसकी रानी नन्दा को देखकर चण्डशासन मोहित हो गया था। अत वह उसे हरकर अपने देश ले गया था। इस दु ख से दु खी होकर इसने मुनि श्रेय से दीक्षा ले ली थी। आयु के अन्त में यह महाप्रतापी राजा होने का निदान कर सन्यासपूर्वक मरा और सहस्रार स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६०.५०-५७

वसुसेन—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के सैंतीसवें गणधर। हपु० १२ ६१

(२) जम्बूद्वीप के कच्छकावती देश में अरिष्टपुर के राजा वासव और रानी सुमित्रा का पुत्र। राजा वासव सागरसेन मुनिराज से धर्मश्रवण करके विरक्त हो गया था। उसने इसे राज्य देकर दीक्षा ले ली थी। इसकी माँ कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा के पूर्वभव का जीव थी। हपु० ६० ७५-८५

वस्तु—श्रुतज्ञान के बीस भेदो में सत्रहवाँ भेद। हपु० १० १३

वस्तु-समास—श्रुतज्ञान के बीस भेदो में अठारहवाँ भेद। हपु० १० १३

वस्त्वोकासार—विजयार्ध पर्वत का एक नगर। यहाँ के राजा समुद्रसेन की पुत्री राजा कनकशान्ति की छोटी रानी थी। मपु० ६३ ११८ दे० कनकशान्ति

वस्त्र—सिले हुए कपडे। ये रग-बिरगे होते थे। कुलकर सीमकर के समय मे इनका शरीर पर धारण करना आरम्भ हो गया था। मपु० ३ १०८, ५ २७८

वस्त्राग—इच्छित वस्त्र देनेवाले कल्पवृक्ष। मपु० ९ ३५-३६, ४८, हपु० ७.८०, ८७, वीवच० १८ ९१-९२

वस्त्राकित ध्वजा—समवसरण की दस प्रकार की ध्वजाओ मे एक प्रकार की ध्वजा। ये प्रत्येक दिशा मे एक सौ आठ होती थी। इनका निर्माण महीन और सफेद वस्त्रो से होता था। मपु० २२ २१९-२२०, २२३

वस्वालय—(१) भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश का एक नगर। इसी नगर में सेठ सुमुख की पत्नी वनमाला का जीव राजा वज्रचाप की विद्युन्माला नाम की पुत्री हुई थी। मपु० ७० ७४-७६ दे० वज्रचाप

(२) एक नगर। यह विजयार्ध पर्वत के दक्षिण में स्थित है। मपु० ६३ २५१

वस्वौक—जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का तेरहवाँ नगर। हपु० २२ ८७

वह्नि—(१) ब्रह्मलोक-निवासी, देवोत्तम, शुभलेश्यावाले, सौम्य एवं महाऋद्धिधारी लोकान्तिक देव। मपु० १७ ४७-५०, वीवच० १२ २-८

(२) वृषभदेव का अनुकरण करके उनके पथ से च्युत हुए साधुओ में एक साधु। यह अज्ञानवश वल्कलधारी तापस हो गया था। पपु० ४ १२६

वह्निकुमार—विजयार्ध का पर्वत का एक विद्याधर। अश्विनी इसकी स्त्री थी। इसके दो पुत्र थे—हस्त और प्रहस्त। रावण ने इसके इन पुत्रो को अपना मन्त्री बनाया था। पपु० ५९ १६-१७

वह्निजटी—एक विद्याधर राजा। यह विद्याधर-वश में हुए राजाओ मे राजा अर्कचूड का पुत्र और वह्नितेज का पिता था। पपु० ५ ५४

वह्नितेज—एक विद्याधर। यह विद्याधर वह्निजटी का पुत्र था। पपु० ५ ५४ दे० वह्निजटी

वह्निप्रभ—विद्याधरो का एक नगर। इसे लक्ष्मण ने अपने अधीन किया था। पपु० ९४ ४

(२) एक ज्योतिष्क देव। इसने वंशधर पर्वत पर विराजमान देशभूषण और कुलभूषण मुनियो पर अनेक उपसर्ग किये थे। वहाँ राम और लक्ष्मण के आने पर उन्हें क्रमश बलभद्र और नारायण जानकर यह उनके भय से तिरोहित हो गया था। पपु० ३९ ५९-७४

वह्निमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

वह्निशिख—कुमुदावती नगरी के राजा श्रीवर्द्धन का पुरोहित। यह यद्यपि सत्यवादी नाम से प्रसिद्ध था, परन्तु छिपकर खोटे कर्म करता था। इसने एक बार नियमदत्त वणिक् के रत्न छिपा लिए थे। राजा की अनुमति से रानी ने इसके साथ जुआ खेलकर जुए में इसकी अगूठी जीत ली और अगूठी दासी के द्वारा इसके घर भेजकर नियमदत्त के रत्न मँगवा लिए थे। नियमदत्त को उसके रत्न देकर राजा ने इसका सर्व धन छीनकर उसे नगर से निकाल दिया था। यह सब होने पर इसे सुबुद्धि उत्पन्न हुई। इसने तप किया और तप के प्रभाव से यह मरकर माहेन्द्र स्वर्ग मे देव हुआ। पपु० ५.३८-४३ दे० रामदत्ता

वह्निवेग—एक विद्याधर। यह अरिंजयपुर का राजा था। वेगवती इसकी रानी और आहल्या पुत्री थी। पपु० १३ ७३-७६ दे० आहल्या

वह्निरथ—विद्याधरो का एक नगर। इसे लक्ष्मण ने अपने अधीन किया था। पपु० ९४ ६

वाक्समिति—पाँच समितियों में दूसरी समिति। निर्ग्रन्थ साधु को इसका पालन करना होता है। इसमें सदा कर्कश और कठोर वचनो का त्याग और यत्नपूर्वक धार्मिक कार्यों में हित, मित और प्रिय भाषा

का व्यवहार किया जाता है। इसका अपर नाम भाषा-समिति है। पपु० १४.१०८, हपु० २.१२३ दे० भाषा-समिति

वाक्यालंकार—कौतुकमंगल नगर के राजा वैश्रवण का एक दूत। कुंभकर्ण द्वारा इसके राज्य से रत्न, वस्त्र और कन्याएँ आदि अपने नगर ले जाने पर इसने कुम्भकर्ण की इस प्रवृत्ति पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए सुमाली के पास इसी दूत के द्वारा समाचार भिजवाया था। पपु० ८.१६१-१७७

वागलि—आगामी उन्नीसवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६.४७४

वागीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०९

वाग्देवी—सरस्वती देवी। मपु० २.८६, ८८

वाग्मी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७९

वाग्वलि—माता-पिता-सेवायज्ञ का संचालक। यह पिप्पलाद का शिष्य था। बकरे की पर्याय में मरते समय इसे चारुदत्त ने पंच नमस्कार मंत्र दिया था जिसके प्रभाव से मरकर यह सौधर्म स्वर्ग में उत्तम देव हुआ। हपु० २१.१४६-१५१

वाग्विप्रुड्—एक ऋद्धि। इसके प्रभाव से वाणी के साथ बाहर निकली वायु भी सर्वरोगहरा हो जाती है। मपु० २.७१

वाचस्पति—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३९, २५.१७९

विजिष्णु—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३५

वाटवान—भरतेश के भाइयों द्वारा त्यक्त भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड में स्थित देशों में एक देश। तीर्थङ्कर महावीर विहार करते हुए यहाँ आये थे। इसका अपर नाम वाडवान था। हपु० ३.६, ११.६६-६७

वाण—भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ के घोड़े प्रसिद्ध थे। दिग्विजय के समय भरतेश को यहाँ के घोड़े भेंट में दिये गये थे। मपु० ३०.१०७

वाणिज्य—तीर्थंकर वृषभदेव द्वारा बताये गये आजीविका के षट्कर्मों में पाँचवाँ कर्म। व्यापार द्वारा आजीविका करना वाणिज्य कर्म कहलाता है। मपु० १६.१७९-१८१, हपु० ९.३५

वाणीक्रीडा—क्रीडा का एक भेद। इसमें नाना प्रकार के सुभाषित आदि कहकर मनोविनोद किया जाता है। पपु० २४.६७-६८

वातकुमार—वायुकुमार जाति के देव। ये तीर्थङ्करों के दीक्षा-कल्याणक में शीतल और सुगन्धित वायु का प्रसार करते हैं। वीवच० १२.४९

वातपृष्ठ—भरतक्षेत्र का एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश यहाँ ससैन्य आये थे। मपु० २९.६९

वातरशन—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०४

(२) दिगम्बर मुनि। मपु० २.६४

वातवलय—लोक को सब ओर से घेरकर स्थित वायु के वलय। ये तीन होते हैं—घनोदधि, घनवात और तनुवात। इनमें घनोदधि गोमूत्र के वर्ण समान, घनवात मूंगवर्ण के समान और तनुवात परस्पर मिले हुए अनेक वर्णोंवाला है। ये तीनों दण्डाकार लंबे, घनीभूत, ऊपर नीचे तथा चारों ओर लोक में स्थित हैं। अधोलोक में ये बीस-बीस हजार योजन और ऊर्ध्वलोक में कुछ कम एक योजन विस्तारवाले हैं। ऊर्ध्वलोक में जब ये दण्डाकार नहीं रह जाते तब क्रमशः सात, पाँच और चार योजन विस्तारवाले रह जाते हैं। मध्यलोक के पास इनका विस्तार पाँच, चार और तीन योजन रह जाता है और पाँचवें स्वर्ग के अन्त में ये क्रमशः सात, पाँच और चार योजन विस्तृत हो जाते हैं। मोक्षस्थल के समीप ता ये क्रमशः पाँच, चार और तीन योजन विस्तृत रह जाते हैं। लोक के ऊपर घनोदधि वातवलय इससे आधा (एक कोस) और तनुवातवलय इससे कुछ कम पन्द्रह से पचहत्तर धनुष प्रमाण विस्तृत है। हपु० ४.३३-४१

वातवल्कल—दिगम्बर मुनि। मपु० २.१८, २१.२१२

वातवेग—राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गान्धारी का अड़सठवाँ पुत्र। पापु० ८.२०१

वातायन—राम का पक्षधर एक विद्याधर। यह रावण की बहुरूपिणी विद्या-सिद्धि को भंग करने के लिए लंका गया था। मपु० ७०.१६

वात्सल्य—साधर्मी जनों के प्रति प्रेम-भाव। यह सम्यग्दर्शन का एक अंग तथा सोलहकारण भावनाओं में एक भावना है। मपु० ६३.३२०, ३३०, वीवच० ६.६९

वादित्रांग—वाद्य-यन्त्रों को प्रदान करनेवाले कल्पवृक्ष। ये भोगभूमि में होते हैं। मपु० ९.३६, ४०

वादिसिंह—एक आचार्य। आचार्य जिनसेन ने इनका नामस्मरण आचार्य पात्रकेसरी के बाद किया है। ये कवि और टीकाकार थे। मपु० १.५४

वादी—(१) सिद्धान्तों के प्रतिष्ठापक मुनि। वृषभदेव की सभा में ऐसे मुनियों का एक संघ था। हपु० १२.७१, ७७, ५९.१३०

(२) स्वर-प्रयोग के चार भेदों में प्रथम भेद। वसुदेव इसे जानते थे। हपु० १९.१५४

वाद्यगोष्ठी—मनोरंजन के विविध साधनों में एक साधन-वादकों की सभा। इसमें वादक वाद्य-संगीत के द्वारा श्रोताओं का मनोरंजन करते हैं। वृषभदेव के समय से ही ऐसी गोष्ठियाँ होती रही हैं। मपु० १२.१८८, १४.१९२

वानर—विद्याधर। ये वानर की आकृति से चित्रित छत्र धारण करने से वानर कहलाते थे। पपु० ६.२१४

वानरवंश—वानर-चिह्नांकित ध्वजाओं को धारण करनेवाले विद्याधर राजाओं का वंश। इसका आरम्भ किष्कुपुर के विद्याधर राजा अमरप्रभ से हुआ। इस वंश में निम्नलिखित विद्याधर राजा प्रसिद्ध हुए—राजा अतीन्द्र, श्रीकंठ, वज्रकंठ, वज्रप्रभ, इन्द्रमत, मेरु, मन्दर, समीरणगति, रविप्रभ, अमरप्रभ, कपिकेतु, प्रतिबल, गगनानन्द, खेचरानन्द और गिरिनन्दन। तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत के तीर्थ में इस वंश में महोदधि राजा हुआ। इसके पश्चात् प्रतिचन्द्र,

किष्किन्ध, अन्ध्रकरूढि, सूर्यरज, ऋक्षरज, वाली, सुग्रीव, नल, नील, अग और अगद राजा हुए। पपु० ६ ३-१०, १९-५५, ८३-८४, ११७-१२२, १५२-१६२, १८९-१९१, १९८-२०६, २१८, ३४९, ३५२, ५२३, ९ १, १०, १३, १० १२

वानरद्वीप—लका का अति रमणीय एव सुरक्षित द्वीप। लका के राजा कीर्तिधवल ने यह द्वीप अपने साले श्रीकठ विद्याधर को दिया था और श्रीकठ ने इसी द्वीप के किष्कु पर्वत पर किष्कुपुर नगर बसाया था। पपु० ६ ८२-८४, १२२

वानरविद्या—एक विद्या। अणुमान ने राम—रावण युद्ध मे इसी विद्या से वानरसेना की रचना की थी। मपु० ६८,५०८-५०९

वानायुज—भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ के घोडे प्रसिद्ध थे। दिग्विजय के समय भरतेश को यहाँ के घोडे भेंट में प्राप्त हुए थे। मपु० ३० १०७

वापि—भरतक्षेत्र का एक देश। यहाँ के घोडे प्रसिद्ध थे। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश को इस देश के घोडे भेंट में प्राप्त हुए थे। मपु० ३० १०७

वामदेव—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ७८

(२) भार्गवाचार्य की वश परम्परा में हुए राजा सित का पुत्र और कापिष्ठल का पिता। हपु० ४५ ४५-४६

(३) समुद्रविजय के भाई अक्षोभ्य का पुत्र। हपु० ४८.४५

वायु—जयन्तगिरि के दुर्जय वन का एक विद्याधर। सरस्वती इसकी स्त्री और रति पुत्री थी। हपु० ४७ ४३

(२) वायव्य दिशा का एक रक्षक देव। मपु० ५४ १०७

(३) लोक का आवर्तक वातवलय। हपु० ४ ३३, ४२, दे० वातवलय

वायुकायिक—स्थावर जीवोका एक भेद। इस जाति के जीवो की सात लाख कुयोनियाँ तथा इतनी ही कुलकोटियाँ होती है। इनकी उत्कृष्ट आयु तीन हजार वर्ष की होती है। ये जीव अनेक घात-प्रतिघात सहते हुए ससार में भ्रमते है। मपु० १७ २२-२३, हपु० १८ ५७-५९ ६५

वायुकुमार—दस प्रकार के भवनवासी देवो में एक प्रकार के देव। ये पाताल लोक मे रहते है। हपु० ३ २२, ४ ६४-५५

वायुगति—आदित्यपुर नगर के राजा प्रह्लाद तथा रानी केतुमती का पुत्र। इसका अपर नाम पवनजय था। पपु० १५ ७-८, ४७-४९, दे० पवनजय-३

वायुभूति—(१) शम्ब के छठें पूर्वभव का जीव—मगधदेश मे शालिग्राम के सोमदेव ब्राह्मण और उसकी पत्नी अग्निला का पुत्र। यह मिथ्यात्वी और मुनिनिन्दक था। मुनि सत्यक से पराजित होकर इसने मुनि को मारना चाहा था, किन्तु मुनि का घात करने में उद्यत देखकर सुवर्णयक्ष ने इसे कील दिया था। जैनधर्म स्वीकार करने पर ही यक्ष द्वारा यह अकीलित हुआ था। इस घटना के पश्चात् इसने व्रत सहित जीवन पूर्ण किया। आयु के अन्त में मरकर यह सौधर्म स्वर्ग का देव हुआ। मपु० ७२ १५-२४, पपु० १०९ ९२-१३०, हपु० ४३ ९९-१४८

(२) तीर्थंकर महावीर के दूसरे गणधर। हरिवशपुराण के अनुसार ये तीसरे गणधर थे। मपु० ७४ ३७३, हपु० ३ ४१, वीवच० १९ २०६-२०७

वायुमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

वायुरथ—(१) विद्याधरो का स्वामी। यह विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में गौरी देश के भोगपुर नगर का राजा था। स्वयप्रभा इसकी रानी थी। रतिषेणा कबूतरी मरकर इन्ही दोनो की प्रभावती नाम की पुत्री हुई थी। मपु० ४६ १४७-१४८, पापु० ३ २१२-२१३

(२) बलभद्र अचलस्तोक के दूसरे पूर्वभव का जीव—भरतक्षेत्र के महापुर नगर का राजा। यह अर्हत् सुव्रत से धर्म का उपदेश सुनकर विरक्त हो गया था। फलस्वरूप पुत्र घनरथ को राज्य देकर यह तपस्वी हो गया तथा सुमरण करके प्राणत स्वर्ग के अनुत्तर विमान में इन्द्र हुआ। मपु० ५८ ८०-८३

वायुवेग—(१) राजा वसुदेव और रानी गन्धर्वसेना का ज्येष्ठ पुत्र। अमितगति और महेन्द्रगिरि का यह अग्रज था। हपु० ४८ ५५

(२) राजा वसुदेव तथा रानी वेगवती का कनिष्ठ पुत्र। वेगवान् का यह अनुज था। हपु० ४८ ६०

(३) एक विद्याधर। इसने अचिमाली विद्याधर के साथ हस्ति-क्रीडा मे लीन वसुदेव का अपहरण किया था और ले जाकर उसे विजयार्ध पर्वत पर कुंजरावर्त नगर के सर्वकामिक उद्यान मे छोडा था। हपु० १९ ६७-७१

(४) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी पर स्थित शुक्रप्रभ नगर के राजा इन्द्रदत्त और रानी यशोधरा का पुत्र। किन्नरगीत नगर के राजा चित्रचूल की पुत्री सुकान्ता इसकी पत्नी तथा शान्तिमती पुत्री थी। मपु० ६३ ९१-९४

(५) विजयार्ध पर्वत की दक्षिण दिशा में स्थित रत्नपुर नगर के विद्याधरो के स्वामी रत्नरथ और रानी चन्द्रानना का तीसरा पुत्र। हरिवेग और मनोवेग का यह छोटा भाई और मनोरमा बहिन थी। युद्ध में पराजित होने पर अपनी बहिन मनोरमा इसे लक्ष्मण के साथ विवाहनी पडी थी। पपु० ९३.१-५६

वायुवेगा—विजयार्ध पर्वत पर द्यु तिलक नगर के राजा विद्याधर चन्द्राभ और रानी सुभद्रा की पुत्री। इसका विवाह रथनूपुर के राजा विद्याधर ज्वलनजटी से हुआ था। अर्ककीर्ति इसका पुत्र और स्वयप्रभा पुत्री थी। मपु० ६२.३६-३७, ४१, पापु० ४ ११-१३, वीवच० ३ ७१-७५

वायुशर्मा—वृषभदेव के दसवें गणधर। हपु० १२ ५७

वायुवावर्त—वायुकुमार जाति का एक भवनवासी देव। पूर्वभव में यह अयोध्या में विन्ध्य धनवान का भैंसा था। यह तीव्र रोग हो जाने मे नगर के बीच मरा। अकाम-निर्जरा पूर्वक मरण होने से वह देव हुआ। इस पर्याय में वह अश्व चिह्न से चिह्नित था। वायुकुमार

देवो का राजा और श्रेयस्करपुर का स्वामी था। यह रसातल में रहता था। स्वच्छन्दता से अपनी क्रियाएँ करता था। इसने अवधिज्ञान से अपने पूर्वभव को जान लिया था। अयोध्या के लोगों ने उसकी तनिक भी चिन्ता न की थी यह भी उसे याद हो आया था। अत वैर-वश अयोध्या में इसने अनेक रोग उत्पन्न करनेवाली वायु चलाई थी। इसका विशल्या के स्नान-जल से क्षणभर में नाश हो गया था। पपु० ६४ १०१-१११

वारवधू—विवाह के समय मगलगीत गानेवाली वारागनाएँ। मपु० ७ २४३-२४४

वाराणसी—काशी-देश की प्रसिद्ध नगरी। तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ, पार्श्वनाथ और बलभद्र पद्म की यह जन्मभूमि है। मपु० ४३ १२१-१२४, ५३ २४, ६६ ७६-७७, ७३ ७४-९२, पपु० २० ५९, ९८५०, हपु० १८ ११८, २१ १३१, ३३ ५८

वाराहग्रीव—विद्याधर अमितगति की दूसरी रानी मनोरमा का छोटा पुत्र। यह सिंहयश का अनुज था। इसका पिता इसे युवराज पद देकर दीक्षित हो गया था। हपु० २१ ११८-१२२

वाराही—एक विद्या। यह दशानन को प्राप्त थी। पपु० ७ ३३०, ३३२

वारिषेण—श्रेणिक का एक पुत्र। पपु० २ १४५-१४६, हपु० २.१३९, पापु० २.११

वारिषेणा—(१) एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ २२७

(२) सेठ कुबेरप्रिय की पुत्री। राजा गुणपाल ने अपने पुत्र वसुपाल का इससे विवाह किया था। मपु० ४६ ३३१-३३२

वारुण—एक अस्त्र। राम और लक्ष्मण को यह एक देव से प्राप्त हुआ था। पपु० ६० १३८, हपु० २५ ४७, ५२ ५२

वारुणी—(१) विजयार्ध पर्वत सम्बन्धी उत्तरश्रेणी की दूसरी नगरी। मपु० १९ ७८, ८७

(२) भरतक्षेत्र के कौशल देश में वर्चकि अपर नाम वृद्ध ग्राम के मृगायण ब्राह्मण और उसकी स्त्री मधुरा की पुत्री। इसका पिता मरकर साकेत नगर का दिव्यबल अपर नाम अतिबल राजा हुआ था। सुमति उसकी रानी थी। यह मरकर उसकी हिरण्यवती पुत्री हुई जिसका विवाह पोदनपुर के राजा पूर्णचन्द्र से हुआ। पूर्वभव की इसकी माँ मधुरा इस पर्याय में इसकी रामदत्ता नाम की पुत्री हुई। मपु० ५९ २०७-२११, हपु० २७ ६१-६४

(३) एक विद्या। यह रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२९-३३२

(४) काम्पिल्य नगर के धनद वैश्य की स्त्री। भूषण की यह जननी थी। पपु० ८५ ८५-८६

वारुणीवर—(१) मध्यलोक के आरम्भिक सोलह द्वीपो में चौथा द्वीप। इसे इसी नाम का समुद्र घेरे हुए है। हपु० ५ ६१४

(२) इस नाम के द्वीप को घेरे हुए वलयाकार एक समुद्र। हपु० ५ ६१४

वार्क्षमूलिक—विद्याधरो की एक जाति। इस जाति के विद्याधरो के आभूषण सर्पों के चिह्नो से युक्त होते हैं। ये वृक्षमूल नामक महास्तम्भो का आश्रय लेकर बैठते हैं। हपु० २६ २२

वार्ता—भरतेश द्वारा क्षत्रियो के लिए बताये गये छ कर्मों में दूसरा कर्म। विशुद्ध आचरणपूर्वक खेती आदि करके आजीविका चलाना वार्ता कहलाती है। मपु० ३८ २४-४०

वार्ष्णेय—जरासन्ध का सेनापति हिरण्यनाभ। यह कृष्ण के सेनापति अनावृष्टि के द्वारा मारा गया था। हपु० ५१ ४१

वाल्हीक—(१) यादवो का पक्षधर एक अर्धरथ नृप। हपु० ५० ८४

(२) राजा वसुदेव और रानी जरा का पुत्र। हपु० ४८ ६३

(३) वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। यहाँ के राजा ने दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश को घोड़े भेंट में देते हुए उनकी अधीनता स्वीकार की थी। मपु० १६.१५६, ३० १०७

वासव—(१) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

(२) राजा वसु का तीसरा पुत्र। हपु० १७ ५८

(३) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के अरिष्टपुर नगर का राजा। यह सुषेण का जनक था। मपु० ७१ ४००-४०१

(४) जम्बूद्वीप का सीता नदी के उत्तरतट पर स्थित कच्छकावती देश में अरिष्टपुर नगर का नृप। इसकी रानी सुमित्रा और उससे उत्पन्न वसुसेन पुत्र था। हपु० ६० ७५-७७

(५) कुरुवशी एक नृप। यह वासुकि का पुत्र और वसु का पिता था। हपु० ४५ २६

(६) विद्याधर नमि का पुत्र। हपु० २२ १०८

(७) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में स्थित मगलावती देश के विजयार्ध पर्वत का उत्तरश्रेणी में गन्धर्वपुर का एक विद्याधर राजा। इसकी रानी प्रभावती तथा पुत्र महीधर था। जीवन के अन्त में यह अरिंजय मुनि के निकट मुक्तावली-तप करके मोक्ष गया। मपु० ७ २८-३१

(८) झूठ-बोलने में चतुर एक व्यक्ति। इसने श्रीमती द्वारा चित्रपट पर अकित राजपुत्री को देखकर उसे स्वय की स्त्री होना बताया था किन्तु पूछे गये प्रश्नो के उत्तर न दे सकने से इसे लज्जित होना पड़ा था। मपु० ७ ११३-११५

(९) श्वेतविका नगरी का राजा। वसुन्धरा इसकी रानी तथा नन्दयशा पुत्री थी। मपु० ७१ २८३, हपु० ३३ १६१

(१०) विदर्भ देश के कुण्डलपुर नगर का राजा। श्रीमती इसकी रानी और रुक्मिणी पुत्री थी। मपु० ७१ ३४१

(११) स्त्री वेषधारी एक नट। कुमार श्रीपाल ने देखते ही इसे पुरुष समझ लिया था। नट और नटी के इस भेद ज्ञान से निमित्तज्ञानियो के कथनानुसार श्रीपाल को चक्रवर्ती के रूप में पहिचाना गया था। मपु० ४७ ९-१८

वासवकेतु—मिथिला नगरी का हरिवशी राजा। विपुला इसकी रानी और जनक इन्ही दोनो के पुत्र थे। पपु० २१ ५२-५४

वासवन्त—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। दिग्विजय के समय

भरतेश के सैनिक इसे पार करके असुरधूपन-पर्वत पर ठहरे थे। मपु० २९ ७०

वासवीर्य—समवसरण के तीसरे कोट में स्थित पूर्व द्वार के आठ नामो में सातवाँ नाम। हपु० ५७ ५७

वासुकि—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३७

(२) कुण्डलगिरि का दक्षिण दिशा में विद्यमान महाप्रभकूट का निवासी देव। हपु० ५.६९२

(३) कुरुवशी एक नृप। हपु० ४५ २६

(४) समुद्रविजय के छोटे भाई राजा धरण का ज्येष्ठ पुत्र। हपु० ४८ ५०

वासुदेव—(१) नवें नारायण कृष्ण। मपु० ७१ १६३, हपु० ४३ ९४ दे० नारायण

(२) अनागत सोलहवें तीर्थङ्कर का जीव। मपु० ७६ ४७३

वासुपूज्य—अवसर्पिणीकाल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल मे उत्पन्न शलाकापुरुष एव बारहवे तीर्थंकर। ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में चम्पानगर के राजा वसुपूज्य के पुत्र थे। इनका इक्ष्वाकुवश और काश्यपगोत्र था। इनकी माँ जयावती थी। ये आषाढ कृष्ण षष्ठी के दिन शतभिष नक्षत्र मे सोलह स्वप्नपूर्वक गर्भ मे आये थे। फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी इनका जन्म दिन था। सौधर्मेन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर क्षीरसार के जल से अभिषेक करके इनका "वासुपूज्य" नाम रखा था। ये सत्तर धनुष ऊँचे थे। बहत्तर लाख वर्ष की इनकी आयु थी। शरीर कुकुम के समान कान्तिमान था। कुमारकाल के अठारह लाख वर्ष बीत जाने पर ससार से विरक्त होकर जैसे ही इन्होने तप करने के भाव किये थे कि लौकान्तिक देवो ने आकर इनकी स्तुति की थी। इन्होने इनका दीक्षाकल्याक मनाया था। पश्चात् पालकी पर बैठकर ये मनोहर नाम के उद्यान मे गये थे। वहाँ एक दिन के उपवास का नियम लेकर फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी के दिन सायंकाल के समय विशाखा नक्षत्र में ये दीक्षित हुए। इनके साथ छ सौ छिहत्तर राजाओ ने भी बडे हर्ष से दीक्षा ली थी। राजा सुन्दर ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। छद्मस्थ अवस्था का एक वर्ष व्यतीत हो जाने पर ये मनोहर उद्यान में पुन आये। वहाँ कदम्ब वृक्ष के नीचे माघशुक्ल द्वितीया के दिन सायकाल के समय इन्हें केवलज्ञान हुआ। इनके सघ मे धर्म को आदि लेकर छियासठ गणधर, बारह सौ पूर्वाधारी, उनतालीस हजार दो सौ शिक्षक, पाँच हजार चार सौ अवधिज्ञानी, छ हजार केवलज्ञानी, दस हजार विक्रियाऋद्धिधारी, छ हजार मन पर्ययज्ञानी और चार हजार दो सौ वादी मुनि थे। एक लाख छ हजार आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक, चार लाख श्राविकाएँ और असख्यात देव-देवियाँ तथा तिर्यञ्च थे। ये आर्यक्षेत्र मे विहार करते हुए चम्पा नगरी आये थे। यहाँ एक वर्ष रहे। एक मास की आयु शेष रह जाने पर योग निरोध कर रजतमालिका नदी के किनारे मनोहर-उद्यान में ये पर्यंकासन से स्थिर हुए। भाद्र मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के दिन सायकाल के समय विशाखा नक्षत्र में चौरानवें मुनियो के साथ इन्होने मुक्ति प्राप्त की थी। दूसरे पूर्वभव में ये पुष्करार्ध द्वीप के पूर्व मेरु सबधी वत्सकावती देश के रत्नपुर नगर के राजा पद्मोत्तर तथा प्रथम पूर्वभव में महाशुक्र स्वर्ग में देव हुए थे। मपु० २ १३०-१३४, ५८ २-५३, पपु० ५ २१४, हपु० १.१४, ६० ३९४-३९८, वीवच० १८ १०१-१०६

वासुवेग—जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३९

वास्तुक्षेत्र-प्रामाणातिक्रम—परिग्रह-परिमाणव्रत का दूसरा अतीचार। यह गृह तथा क्षेत्र (खेत) के किये हुए प्रमाण का उल्लघन करने से उत्पन्न होता है। हपु० ५८ १७६

वास्तुविद्या—देव-मन्दिरो और मनुष्यो के आवास-गृहो के बनाने की कला। मपु० १६ १२२

वाहन—(१) ग्रामो का एक भेद। तीर्थंकर वृषभदेव के समय में पर्वतो पर बसे हुए ग्राम "वाहन" नाम से जाने जाते थे। पापु० २ १६१

(२) पारिव्राज्य क्रियाओ से सम्बन्धित चौबीसवाँ सूत्रपद। इसके अनुसार वाहनो का त्याग करके तपश्चरण करनेवाला कमलो के मध्य में चरण रखने के योग्य हो जाता है। मपु० ३९ १६५, १९३

वाहिनी—(१) सेना का एक भेद—तीन गुल्म सेना का एक दल। इसमें इक्यासी रथ, इतने ही हाथी, चार सौ पाँच पयादे तथा इतने ही घोडे ही रहते हैं। पपु० ५६ २-५, ८

(२) नदी के अर्थ में व्यहृत शब्द। हपु० २ १६

विकचा—चूलिका-नगरी के राजा चूलिक की रानी। इसके सौ पुत्र थे। कीचक इसी का पुत्र था। हपु० ४६ २६-२७, पापु० १७ २४५-२४६

विकचोत्पला—समवसरण के चम्पक वन की छ वापियो में पाँचवी वापी। हपु० ५७ ३४

विकट—(१) पाँचवें नारायण पुरुषसिंह के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २०६, २१०

(२) दशानन के पक्षधर राजाओ में एक राजा। इन्द्र-विद्याधर को जीतने के लिए रावण के साथ यह भी गया था। मपु० १० ३६-३७

(३) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का अट्ठाईसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९६

विकथा—धर्मकथा से रहित अर्थ और काम सम्बन्धी कथाएँ (स्त्रीकथा, राजकथा, चोरकथा, भक्तकथा)। ये पाप के आस्रव का कारण होती है। मपु० १ ११९

विकर्ण—कर्ण का छोटा भाई। यह कौरवो का पक्षधर था। कौरवो और पाण्डवो के युद्ध मे अर्जुन ने इसे युद्ध मे मार डाला था। पापु० १८ १०५-१०८

विकलंक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

विकलेन्द्रिय—दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय और चार इन्द्रिय जीव। ये मानुषोत्तर पर्वत तक ही रहते हैं। हपु० ५ ६३३

विकल्मष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९४

विकसित—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित वत्सकावती देश की सुसीमा नगरी का एक विद्वान्। यह राजकुमार प्रहसित का मित्र था। इन दोनो विद्वानो ने ऋद्धिधारी मतिसागर मुनिराज से जीव तत्त्व की चर्चा सुनकर तप ग्रहण कर लिया था। इसने नारायण पद की प्राप्ति का निदान किया। आयु के अन्त में शरीर छोडकर दोनो महाशुक्र स्वर्ग में इन्द्र और प्रतीन्द्र हुए। वहाँ से चयकर यह पुण्डरीकिणी नगरी में वहाँ के राजा धनजय और रानी यशस्वती का अतिबल नामक नारायण और प्रहसित इसी राजा की जयसेना रानी से महाबल नामक बलभद्र हुआ। मपु० ७ ७०-८२, दे० अतिबल-७

विकाल—राम का पक्षधर एक योद्धा। यह अनेक राजाओ के साथ ससैन्य समरभूमि में पहुँचा था। पपु० ५८ १३

विकालाशन—असमय में आहार लेना। तीर्थङ्कर वृषभदेव ने ऐसे आहार का त्याग कर दिया था। मपु० २० १६०

विकृत—लिपि के चार भेदो में एक भेद। लोग अपने-अपने सकेत के अनुसार इसकी रचना कर लेते हैं। पपु० २४ २४

विक्रम—रावण का पक्षधर एक राजा। वानरवशी राजाओ द्वारा राक्षसो की सेना नष्ट किये जाने पर अन्य अनेक राजाओ के साथ यह उनकी सहायता के लिए गया था। पपु० ७४ ६३-६४

विक्रमी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७२

विक्रान्त—(१) यादवो का पक्षधर एक अर्धरथ नृप। हपु० ५० ८५, १३२

(२) रत्नप्रभा पृथिवी के तेरह इन्द्रक बिलो में तेरहवाँ इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ मे एक सौ अडतालीस और विदिशाओ में एक सौ चवालीस श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७६-७७, १०१-१०२

विक्रियर्द्धि—वैक्रियक ऋद्धियाँ। ये आठ होती हैं—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व। मपु० २ ७१

विक्षेप—तालगत गान्धर्व के बाईस भेदो में तीसरा भेद। हपु० १९ १५०

विक्षेपिणी—एक प्रकार की धर्म-कथा। ऐसी कथाओ से मिथ्यामतो का खण्डन किया जाता है। मपु० १ १३५

विग्रह—(१) राजा के छ-सन्धि, विग्रह, आसन, यान, सशय और द्वैधीभाव गुणो मे दूसरा गुण। शत्रु तथा उसके विजेता दोनो का परस्पर में एक दूसरे का उपकार करना विग्रह कहलाता है। मपु० ६८.६६, ६८

(२) भोगो का आयतन-शरीर। पपु० १७ १७४

विघट—(१) एक नगर। यह भानुरक्षक के पुत्रो द्वारा बसाये गये दस नगरो में एक नगर था। यहाँ राक्षस रहते थे। पपु० ५ ३७३-३७४

(२) राम का पक्षधर एक योद्धा। यह अन्य अनेक राजाओ के साथ ससैन्य समरागण में पहुँचा था। पपु० ५८ १५

विघटोदर—रावण का एक सामन्त। अनेक राजाओ के साथ इसने राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ४९

विघ्न—(१) रावण का पक्षधर एक योद्धा। राम के पक्षधर राजा विराधित ने इसका सामना किया था। पपु० ६२ ३६

(२) ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्मों का एक आस्रव। इससे ज्ञान और दर्शन मे अन्तराय आता है। पपु० ५८ ९२

विघ्नविनायक—रावण के समय का एक अस्त्र। रावण के द्वारा इस अस्त्र का युद्ध में व्यवहार किये जाने पर लक्ष्मण ने इसका सिद्धार्थ महा अस्त्र से निवारण किया था। पपु० ७४ १११, ७५ १९

विघ्नविनाशक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०६

विघ्नसूदन—राम का पक्षधर एक विद्याधर योद्धा। इसने रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ ५

विचल—राम का पक्षधर एक योद्धा। महासैनिको के मध्य स्थित रथ पर सवार होकर इसने रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ १२, १७

विचिकित्सा—साधुओ को मलिन देखकर उनसे घृणा करना। इसका फल दुखदायी होता है। दमितारि की पुत्री कनकश्री को आर्यिका से घृणा करने के कारण बहुत दुख उठाना पडा था। मपु० ६२ ४९९-५०१ दे० निर्विचिकित्सा

विचित्र—(१) कुरुवशी एक नृप। यह राजा चित्र का उत्तराधिकारी था। हपु० ४५ २७

(२) कुरुवशी राजा। यह राजा वीर्य का उत्तराधिकारी था। हपु० ४५ २७

(३) राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का बाईसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९५

(४) नील पर्वत की दक्षिण-दिशा मे सीता नदी के पूर्व तट पर स्थित एक कूट। इसका योजन एक हजार योजन है। हपु० ५ १९१

विचित्रकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का बयालीसवाँ नगर। मपु० १९ ५१, ५३

विचित्रगुप्त—धान्यपुर नगर के राजा कनकाभ का गुरु। यह सुभूम चक्रवर्ती के पूर्वभव का जीव था। पपु० २० १७०

विचित्रचूल—वज्रायुध के सम्यक्त्व का परीक्षक एक देव। ऐशान स्वर्ग के इन्द्र ने अपनी सभा में वज्रायुध को सर्वाधिक सम्यक्त्वी होने से विशेष पुण्यवान् बताया। यह देव इन्द्र के इस कथन से सहमत नही हुआ। अत परीक्षा करने वज्रायुध के पास गया। इसने अपना रूप बदलकर वज्रायुध से पूछा था कि पर्याय और पर्यायी भिन्न हैं या अभिन्न। वज्रायुध ने मन में विचार किया कि यदि दोनो को भिन्न मानते हैं तो शून्यता की प्राप्ति होती है और अभिन्न मानने पर एकपना। दोनो के मिलने से सकर दोष आता है। दोनो नित्य मानने से कर्मबन्ध व्यवस्था नही बनती और दोनो को क्षणिक मानने से आपका मत काल्पनिक ज्ञात होता है अत. समाधान स्वरूप वज्रायुध ने इसे बताया

था कि संज्ञा, बुद्धि आदि चिह्नों के भेद से दोनों में भिन्नता है। दोनों में कार्य-कारण भाव है। स्कन्धों में क्षणिकता है परन्तु सन्तान की अपेक्षा किये हुए कर्म का सद्भाव रहता है और सद्भाव रहने से उसका फल भी भोगना सिद्ध होता है। स्याद्वाद पूर्वक कहे गये वज्रायुध के तर्कों के आगे इसका मान भंग हो गया। इसे सम्यक्त्व की उपलब्धि हुई। इसने सन्तुष्ट होकर अपने मनोगत विचार राजा ने प्रकट किये तथा यह स्वर्ग लौट गया। मपु० ६३ ४८-७०, पापु० ५ १७-२९

विचित्रभानु—अंजना के मामा प्रतिसूर्य का पिता। पपु० १७ ३४५-३४६

विचित्रमति—भरतक्षेत्र में चित्रकारपुर नगर के राजा प्रीतिभद्र के मंत्री चित्रबुद्धि का पुत्र। कमला इसकी माँ थी। श्रुतसागर मुनि से तप का फल सुनकर यह तप करने लगा था। साकेतनगर में यह बुद्धिसेना को देखकर पथभ्रष्ट हो गया था। यह उसे पाने के लिए गन्धमित्र राजा का रसोइया बना। अपनी पाक कला से राजा को प्रसन्न करके इसने इस वेश्या को प्राप्त कर लिया था। अन्त में भोग-भोगते हुए सातवें नरक गया। महापुराण में नगर का नाम छत्रपुर, मंत्री का नाम चित्रमति और मुनि का नाम धर्मरुचि तथा मरकर इसका हाथी की पर्याय में जन्म लेना बताया गया है। मपु० ५९ २५४-२५७, २६५-२६७, हपु० २७ ९७-१०३

विचित्रमाला—(१) नलकूबर की पत्नी उपरम्भा की सखी। उपरम्भा के द्वारा नलकूबर में अनासक्ति और रावण में आसक्ति प्रकट किये जाने पर इसने रावण के पास जाकर उपरम्भा के भाव प्रकट किये थे और यह रावण के कहने पर उपरम्भा को उसके निकट ले गयी थी। पपु० १२ ९७-१३३

(२) राजा सुकौशल की रानी। सुकौशल ने इसके गर्भस्थ शिशु को राज्य देकर तप धारण कर लिया था। गर्भ का समय पूर्ण होने पर इसके हिरण्यगर्भ नाम का पुत्र हुआ। पपु० २२ ४२-४७, १०१-१०२

विचित्ररथ—भरतक्षेत्र के अरिष्टपुर नगर के राजा प्रियव्रत तथा रानी पद्मावती का कनिष्ठ पुत्र। यह रत्नरथ का अनुज था। ये दोनों भाई चिरकाल तक राज्य भोगकर दीक्षित हो गये थे तथा तप करते हुए शरीर त्याग करके स्वर्ग में देव हुए थे। पपु० ३९ १४८-१५०, १५७, दे० रत्नरथ-३

विचित्रवाहन—आगामी दसवें चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८४

विचित्रवीर्य—कुरुवंश में हुआ एक नृप। इसने राजा चित्ररथ के पहले शासन किया था। हपु० ४५.२८

विचित्रांगद—सौधर्म स्वर्ग का एक देव। इसने स्वर्ग से आकर उत्तर की ओर पूर्वदिशाभिमुख एक सर्वतोभद्र नामक प्रासाद की रचना करके इस भवन के चारों ओर सुलोचना का स्वयंवर मण्डप रचा था। मपु० ४३ २०४-२०७, पापु० ३ ४२-४५

विचित्रा—नन्दनवन में स्थित रजक कूट की स्वामिनी एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ३२९, ३३३

विचेतस्—संसारी जीवों का एक भेद। ये असंज्ञी होते हैं। इनके मन नहीं होता। पपु० १०५ १४८

विच्छेदिनी—एक विद्या। इससे वैताली विद्या का विच्छेद किया जाता था। पापु० ४ १४९-१५०

विजय—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का पाँचवाँ नगर। हपु० २२ ८६

(२) राजा अन्धकवृष्णि और रानी सुभद्रा के दस पुत्रों में पाँचवाँ पुत्र। मपु० ७० ९६, हपु० १८ १२-१३

(३) विद्याधर नमि का पुत्र। हपु० २२.१०८

(४) अनेक द्वीपों के अनन्तर स्थित जम्बूद्वीप के समान एक अन्य जम्बूद्वीप का रक्षक देव। हपु० ५ ३९७

(५) समवसरण के तीसरे कोट में निर्मित पूर्व दिशा के गोपुर के आठ नामों में एक नाम। हपु० ५७ ५७

(६) वसुदेव के अनेक पुत्रों में एक पुत्र। हपु० ५० ११५

(७) प्रथम अनुत्तर विमान। मपु० ४८ १३, ५० १३, पपु० १०५ १७१, हपु० ६ ६५

(८) कुरुवंशी एक राजा। इसे राज्य शासन राजा इभवाहन से प्राप्त हुआ था। हपु० ४५ १५

(९) दश पूर्व और ग्यारह अंगों के धारी ग्यारह मुनियों में आठवें मुनि। मपु० २ १४१-१४५, ७६.५२१-५२४, हपु० १ ६३, वीवच० १ ४५-४७

(१०) जम्बूद्वीप की जगती (कोट) का पूर्व द्वार। हपु० ५. ३९०

(११) धातकीखण्ड के विजयद्वार का निवासी एक व्यन्तर देव। इसकी देवी ज्वलनवेगा थी। हपु० ६० ६०

(१२) जयकुमार का छोटा भाई। मपु० ४७.२५६, हपु० १२ ३२

(१३) अवसर्पिणी काल के प्रथम बलभद्र। ये जम्बूद्वीप में सुरम्य देश के पोदनपुर नगर के राजा प्रजापति और रानी जयावती अपर नाम भद्रा के पुत्र थे। नारायण त्रिपृष्ठ इनका छोटा भाई था। इनके देह की कान्ति चन्द्र वर्ण की थी। गदा, रत्नमाला, मूसल और हल इनके ये चार रत्न थे। इनकी आठ हजार रानियाँ थीं। त्रिपृष्ठ के मरने पर भाई के वियोग से दुःखी होकर इन्होंने अपने पुत्र विजय को राज्य और विजयभद्र को युवराज पद देकर सुवर्णकुम्भ मुनि से दीक्षा ले ली थी तथा तप करके कर्मों की निर्जरा की और निर्वाण पाया था। मपु० ५७ ९३-९४, ६२ ९२, १६५-१६७, हपु० ६० २९०, वीवच० ३ ६१-७०, १४६-१४८

(१४) तीर्थङ्कर वृषभदेव के नौवें गणधर। हपु० १२.६०

(१५) हस्तवप्र-नगर का समीपवर्ती एक वन। बलदेव और कृष्ण दोनों भाई यहाँ आये थे और यहाँ से वे कौशाम्बी वन गये थे। हपु० ६२ १३-१५

(१६) रावण द्वारा अपहृता सीता को उसके पास रहने के कारण

जन-जन में चर्चित अपवाद को राम से विनयपूर्वक कहनेवाला प्रजा का एक मुखिया। पपु० ९६.३०, ३९, ४७, ४८

(१७) भरतक्षेत्र की उज्जयिनी नगरी का राजा। इसकी रानी अपराजिता थी। मपु० ७१ ४४३

(१८) आगामी इक्कीसवें तीर्थङ्कर। मपु० ७६.४८०

(१९) तीर्थंकर नमिनाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६ ५३२-५३३

(२०) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और रानी श्रीकान्ता का पुत्र। यह वज्रनाभ, वैजयन्त आदि का भाई था। मपु० ११ ८-१०

(२१) एक नगर। महानन्द यहाँ का राजा था। मपु० ८ २२७

(२२) एक मुनि। अमिततेज और श्रीविजय के भय से अशनिघोष इन्हीं के समवसरण में पहुँचा था। यहाँ मानस्तम्भ देखकर ये सब वैर भूल गये थे। मपु० ६२ २८१-२८२

(२३) धातकीखण्ड द्वीप में ऐरावत क्षेत्र के तिलकनगर के राजा अभयघोष और रानी सुवर्णतिलका का पुत्र। जयन्त इसका भाई था। मपु० ६३ १६८-१६९

(२४) भरतक्षेत्र में मलय देश के रत्नपुर के मन्त्री का पुत्र। यह राजकुमार चन्द्रचूल का मित्र था। राजा द्वारा प्राणदण्ड देने पर मन्त्री ने इसे सयम दिला दिया था। मपु० ६७ ९०-९२, १२१

(२५) वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का राजा। यह चक्रवर्ती जयसेन का पिता था। मपु० ६९ ७८-८०, पपु० २० १८८-१८९

(२६) चारणऋद्धिधारी एक मुनि। महावीर के दर्शन मात्र से इनका सन्देह दूर हो जाने के कारण इन्होंने महावीर को 'सन्मति' कहा था। मपु० ७४ २८२-२८३

(२७) जम्बूद्वीप में पूर्व विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश का नगर। जाम्बवती पूर्वभव में यहाँ वैश्य मधुषेण को बन्धुयशा नाम की पुत्री थी। मपु० ७१ ३६३-३६९ दे० बन्धुयशा

(२८) राजगृह नगर का एक युवराज। तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ इसी युवराज को राज्य सौंपकर दीक्षित हुए थे। मपु० ६७ ३९

(२९) सनत्कुमार स्वर्ग के कनकप्रभ विमान का निवासी एक देव। यह पूर्वभव में चन्द्रचूल राजकुमार था। मपु० ६७ १४६ दे० चन्द्रचूल

(३०) एक विद्याधर। राम ने अणुमान् को इसे सहायक के रूप में देकर लका में विभीषण के पास सोता को मुक्त करने का सन्देश भेजा था। मपु० ६८ ३९०-३९६

(३१) तीर्थंकर नमिनाथ का पिता। यह जम्बूद्वीप के वग देश में मिथिला नगरी का राजा था। मपु० ६९ १८-३१, पपु० २० ५७

(३२) पृथिवीपुर नगर का राजा। यह चक्रवर्ती सगर का जीव था। पपु० २०.१२७-१३०

(३३) अयोध्या का राजा। यह चक्रवर्ती सगर का पिता था। पपु० २० १२७-१३०

(३४) सनत्कुमार चक्रवर्ती का पिता। पपु० २० १५३

(३५) विनीता नगरी का राजा। इसकी पटरानी हेमचूला तथा पुत्र सुरेन्द्रमन्यु था। पपु० २१ ७३-७५

(३६) राजा अतिवीर्य का पुत्र। यह राम का योद्धा था। यह युद्ध में रावण के योद्धा स्वयभू के द्वारा यष्टि प्रहार से मारा गया था। पपु० ३८ १, ५८ १६-१७, ६०.१९

(३७) समवसरण के चाँदी से निर्मित चार गोपुरो में एक गोपुर। हपु० ५७ २४

विजयखेट—एक नगर। क्षत्रिय गन्धर्वाचार्य सुग्रीव यहाँ रहता था। वसुदेव ने इस आचार्य की सोमा और विजयसेना कन्याओ को गन्धर्व कला में पराजित करके विवाहा था। मपु० १९ ५३-५८

विजयगिरि—एक हाथी। यक्ष सुदशन जीवन्धर को इसी हाथी पर बैठाकर अपने घर ले गया था। मपु० ७५ ३८२

विजयगुप्त—तीर्थंकर वृषभदेव के इकतीसवें गणधर। हपु० १२ ६०

विजयघोष—(१) चक्रवर्ती भरतेश और तीर्थंकर अरनाथ के बारह नगाड़े-पटहवाद्य। मपु० ३७ १८३, पापु० ७.२४

(२) राजा अर्ककीर्ति का हाथी। अर्ककीर्ति इसी हाथी पर बैठकर राजा अकम्पन पर आक्रमण करने निकला था। मपु० ४४ ८४-८५, पापु० ३ ८५

(३) एक शख। यह वराहवासिनी एक देवी के द्वारा प्रद्युम्न को दिया गया था। मपु० ७२ १०८-११०

विजयच्छन्द—पाँच सौ चार लड़ियोवाला हार। इसे अर्ध चक्रवर्ती और बलभद्र धारण करते हैं। मपु० १६ ५७

विजयदेव—कृष्ण की पटरानी पद्मावती के पूर्वभव के जीव पद्म देवी का पिता। इसकी देविला स्त्री थी। यह मगध देश के शाल्मलि ग्राम का निवासी था। मपु० ७१ ४४३-४५९

विजयनगर—एक नगर। यहाँ का राजा पृथिवीधर था। पपु० ३७ ९

विजयनन्दन—विजयपुर नगर का राजा। इसने वीतशोकनगर के राजा मेरुचन्द्र की पुत्री गौरी का विवाह कृष्ण के साथ किया था। मपु० ७१ ४४०

विजयपर्वत—(१) चक्रवर्ती भरतेश का हाथी। भरतेश ने इसी हाथी पर बैठकर विजयार्ध पर्वत की तमिस्र गुफा में प्रवेश किया था। मपु० २८ ४-६, हपु० ११ २५

(२) लक्ष्मण का हाथी। लक्ष्मण इसी पर बैठकर रावण से युद्ध करने गया था। मपु० ६८ ५४२-५४६

(३) पद्मिनी नगरी का राजा। धारिणी इसकी रानी थी। आचार्य मतिवर्धन का उपदेश सुनकर यह मुनि हो गया था। पपु० ३९ ८४, १२७

(४) कौरववंशी तीर्थंकर अरनाथ का हाथी। पापु० ७ २३

विजयपुर—(१) अन्तिम सोलह द्वीपों में दूसरे जम्बूद्वीप की पूर्वदिशा मे विद्यमान नगर। विजयदेव यहीं रहता है। यह नगर बारह योजन चौड़ा और चारो दिशाओ में चार तोरणो से विभूषित है। हपु० ५.३९७-३९८

(२) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र महापुराण के अनुसार विदेहक्षेत्र का एक नगर। कृष्ण की पटरानी जाम्बवती पूर्वभव मे इस नगर के राजा बन्धुषेण अपर नाम मधुषेण और रानी बन्धुमती की बन्धुयशा नाम की कन्या थी। मपु० ७१ ३६३-३६४, हपु० ६० ४८

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का छप्पनवाँ नगर। मपु० १९ ८६-८७

(४) मगध देश का एक नगर। घर से निकलकर सर्वप्रथम वसुदेव ने यहाँ आकर विश्राम किया था। यहाँ के राजा ने अपनी कन्या श्यामला वसुदेव को दी थी। मपु० ७० २४९-२५२, पापु० ११ १७

(५) एक नगर। यहाँ के राजा विजयनन्दन ने वीतशोकपुर नगर के राजा मेरुचन्द्र की पुत्री गौरी कृष्ण को दी थी। मपु० ७१ ४३९-४४१

विजयपुरी—विदेहक्षेत्र के पद्मावती अपर नाम पद्मकावती देश की मुख्य नगरी। मपु० ६३ २१५, हपु० ५ २४९-२५०, २६१-२६२

विजयभद्र—(१) राजा त्रिपृष्ठ और रानी स्वयप्रभा का दूसरा पुत्र। त्रिपृष्ठ के भाई विजय बलभद्र ने इसे युवराज बनाया था। मपु० ६२.१५३, १६६, पापु० ४ ४६ दे० त्रिपृष्ठ

(२) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी के राजा नन्दन और रानी जयसेना का पुत्र। इसने पिहितास्रव गुरु से चार हजार राजाओ के साथ सयम धारण किया और तप करते हुए शरीर का त्याग करके यह स्वर्ग के चक्रक नामक विमान में सात सागर की आयु का धारी देव हुआ। मपु० ६२ ७५-७८

विजयमति—हेमागद देश के राजपुर नगर का एक श्रावक। यह इसी नगर के राजा सत्यन्धर का सेनापति था। जयावती इसकी स्त्री थी। जीवन्धर के मित्र देवसेन के ये माता-पिता थे। मपु० ७५ २५६-२५९

विजयमित्र—तीर्थङ्कर वृषभदेव के बत्तीसवें गणधर। हपु० १२ ६०

विजयराम—बलभद्र राजा राम और रानी सीता का पुत्र। इसने अपने पिता के साथ सयम ले लिया था। मपु० ६८ ६९०, ७०५-७०६

विजयशार्दूल—नद्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का मित्र एक राजा। इसने विजयनगर के राजा पृथिवीधर के साथ अतिवीर्य का युद्ध होने पर अतिवीर्य की सहायता की थी। पपु० ३७ ५-६, १३

विजयश्री—तीर्थङ्कर वृषभदेव के सैंतीसवें गणधर। हपु० १२ ६१

विजयश्रुति—तीर्थङ्कर वृषभदेव के पैंसठवें गणधर। हपु० १२ ६६

विजयसागर—राजा जितशत्रु का अनुज और चक्रवर्ती सागर का पिता। सुमगला इसकी रानी थी। पपु० ५ ७४-७५

विजयसिंह—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत पर रथनूपुर नगर के राजा अशनिवेग विद्याधर का पुत्र। यह आदित्यपुर के राजा विद्याधर विद्यामन्दर की पुत्री श्रीमाला के स्वयवर मे गया था। श्रीमाला के किष्किन्धकुमार के गले में माला डालने से यह कुपित हुआ और जैसे ही अन्धकरूढ़ि के सामने आया कि अन्धकरूढि ने इसे असि प्रहार से मार डाला था। पपु० ६.३५५-३५९, ४२७, ४५२

विजयसुन्दरी—राजा अतिवीर्य और रानी अरविन्दा की बड़ी पुत्री। रतिमाला इसकी बहिन और विजयस्यन्दन इसका भाई था। इसके भाई ने इसे भरत को और इसकी बहिन रतिमाला लक्ष्मण को विवाही थी। पपु० ३८ १-३, ८-१०

विजयसेन—मृणालकुण्ड नगर का राजा। रत्नचूला इसकी रानी तथा वज्रकम्बु पुत्र था। पपु० १०६ १३३-१३४ दे०–वज्रकम्बु

विजयसेना—(१) साकेत नगर के राजा जितशत्रु की रानी। यह तीर्थङ्कर अजितनाथ की जननी थी। मपु० ४८ १९

(२) विजयखेट नगर के क्षत्रिय गन्धर्वाचार्य सुग्रीव की छोटी पुत्री। इसकी बड़ी बहिन सोमा थी। वसुदेव ने इन दोनो बहिनो को गन्धर्व विद्या मे पराजित किया था। अत- सन्तुष्ट होकर इनके पिता ने दोनों कन्याएँ वसुदेव को दे दी थी। अक्रूर इसी का पुत्र था। हपु० १९ ५२-५९

(३) अमितगति विद्याधर की प्रथम स्त्री। गन्धर्वसेना इसकी पुत्री थी। हपु० २१ ११८-१२० दे० अमितगति

विजयस्यन्दन—(१) राजा अतिवीर्य और रानी अरविन्दा का पुत्र। पपु० ३८ १ दे० विजयसुन्दरी

(२) वज्रबाहु का बाबा। अपने नाती के दीक्षित हो जाने पर यह भोगो से उदासीन हो गया था। अतः इसने छोटे पोते पुरन्दर को राज्य सौंपकर पुत्र सुरेन्द्रमन्यु के साथ निर्वाणघोष मुनि से दीक्षा ले ली थी। पपु० २१ १२८-१२९, १३८-१३९

विजया—(१) समवसरण के सप्तपर्ण वन की एक वापी। हपु० ५७ ३३

(२) रुचकगिरि की ऐशान दिशा में स्थित रत्नकूट की एक देवी। हपु० ५ ७२५

(३) अपरविदेहस्थ वप्रक्षेत्र की प्रधान नगरी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २६३

(४) भरतक्षेत्र की उज्जयिनी नगरी के राजा की रानी। इसकी विनयश्री पुत्री थी जो हस्तिनापुर के राजा से विवाही गयी थी। हपु० ६० १०५-१०६

(५) रुचकवरगिरि की पूर्वदिशा मे विद्यमान आठ कूटो मे प्रथम वैडूर्यकूट की दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०५

(६) नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिणदिशा में स्थित अजनगिरि की पूर्व दिशा मे स्थित एक वापी। हपु० ५ ६६०

(७) एक यादव-कन्या। इसे पाण्डव-नकुल ने विवाहा था। हपु० ४७ १८, पापु० १६ ६२

(८) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की बत्तीसवी नगरी। मपु० १९ ५०, ५३

(९) जम्बूद्वीप के खगपुर नगर के इक्ष्वाकुवशी राजा सिंहसेन की रानी। यह सुदर्शन बलभद्र की जननी थी। मपु० ६१ ७०

(१०) एक शिविका। तीर्थङ्कर कुन्थुनाथ इसी में बैठकर दीक्षार्थ वन गये थे। मपु० ६४ ३८

(११) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में पद्म देश में स्थित अश्वपुर नगर के राजा वज्रवीर्य की रानी। यह वज्रनाभि की जननी थी। मपु० ७३ ३१-३२

(१२) जम्बूद्वीप के हेमागद देश में राजपुर नगर के राजा सत्यन्धर की रानी। राजा सत्यन्धर के मन्त्री काष्ठागारिक द्वारा मारे जाने के पूर्व ही यह गर्भावस्था में गरुडयन्त्र पर बैठाकर उडा दी गयी थी। यन्त्र श्मशान मे नीचे आया। यह श्मशान में रही और श्मशान में ही इसके एक पुत्र हुआ। इसने लालन-पालन के लिए अपना पुत्र गन्धोत्कट सेठ को दे दिया था। गन्धोत्कट ने पुत्र का नाम जीवन्धर रखा था। इसके पश्चात् यह दण्डकारण्य के एक आश्रम में रहने लगी थी। पुत्र को राज्य प्राप्त होने के पश्चात् इसने चन्दना आर्या के समीप उत्कृष्ट सयम धारण कर लिया था। मपु० ७५ १८८-१८९, २२१-२२८, २४२-२४५, २५०-२५१, ६८३-६८४ दे० जीवन्धर

(१३) अपराजित बलभद्र की रानी। सुमति इसकी पुत्री थी। मपु० ६३ २-४

(१४) पोदनपुर के राजा व्यानन्द और रानी अम्भोजमाला की पुत्री। यह राजा जितशत्रु की रानी तथा तीर्थङ्कर अजितनाथ की जननी थी। इसका अपर नाम विजयसेन था। मपु० ४८ १९, पपु० ५ ६०-६३

(१५) एक विद्या। यह रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३३०-३३२

(१६) छठें बलभद्र नन्दिमित्र की जननी। पपु० २० २३८-२३९

विजयार्ध—(१) राजा अर्ककीर्ति का हाथी। अर्ककीर्ति ने इसी पर सवार होकर जयकुमार को युद्ध से रोका था। पापु० ३ १०८-१०९

(२) इस नाम के पर्वत का निवासी इस नाम का एक देव। चक्रवर्ती भरतेश से पराजित होकर इसने भरतेश का तीर्थजल से अभिषेक किया था। मपु० ३१ ४१-४५, हपु० ५ २५

(३) भरतक्षेत्र के मध्य में स्थित एक रमणीय पर्वत। इसके दोनो अन्तभाग पूर्व और पश्चिम के दोनो समुद्रो को छूते हैं। इस पर विद्याधरों का निवास है। यह पृथिवी से पच्चीस योजन ऊँचा पचास योजन चौडा और सवा छ योजन पृथिवी के नीचे गहरा है। इसका वर्ण चाँदी के समान है। पृथिवी से दस योजन ऊपर इस पर्वत की दो श्रेणियाँ हैं। वे पर्वत के ही समान लम्बी तथा विद्याधरो के आवास से युक्त हैं। इसकी दक्षिणश्रेणी में पचास और उत्तरश्रेणी में साठ नगर हैं। इसके दस योजन ऊपर आभियोग्य जाति के देवो के नगर हैं। इनके पाँच योजन ऊपर पूर्णभद्रश्रेणी में इस नाम के देव का निवास है। इस पर्वत पर नौ कूट हैं—१ सिद्धायतन २ दक्षिणार्धक ३ खण्डकप्रपात ४ पूर्णभद्र ५ विजयार्धकुमार ६ मणिभद्र ७ तामिस्रगुहक ८ उत्तरार्ध और ९ वैश्रवणकूट। इस पर्वत की उत्तरश्रेणी में निम्न साठ नगरियाँ हैं—१ आदित्यनगर २ गगनवल्लभ ३ चमरचम्पा ४ गगनमण्डल ५ विजय ६ वैजयन्त ७ शत्रुजय ८ अरिंजय ९. पद्माल १०. केतुमाल ११ रुद्राश्व १२ धनजय १३ वस्वौक १४ सारनिवह १५ जयन्त १६ अपराजित १७ वराह १८ हस्तिन १९ सिंह २० सौकर २१, हस्तिनायक २२ पाण्डुक २३ कौशिक २४ वीर २५ गौरिक २६ मानव २७ मनु २८ चम्पा २९ काचन ३० ऐशान ३१ मणिवज्र ३२ जयावह ३३ नैमिष ३४ हास्तिविजय ३५ खण्डिका ३६ मणिकाचन ३७ अशोक ३८ वेणु ३९ आनन्द ४० नन्दन ४१ श्रीनिकेतन ४२ अग्निज्वाल ४३ महाज्वाल ४४ माल्य ४५ पुरु ४६ नन्दिनी ४७ विद्युत्प्रभ ४८ महेन्द्र ४९ विमल ५० गन्धमादन ५१ महापुर ५२ पुष्पमाल ५३ मेघमाल ५४ शशिप्रभ ५५ चूडामणि ५६ पुष्पचूड ५७ हसगर्भ ५८ वलाहक ५९ वशालय और ६० सौमनस। दक्षिणश्रेणी के पचास नगर इस प्रकार हैं—१ रथनूपुर २ आनन्द ३ चक्रवाल ४ अरिंजय ५ मण्डित ६ बहुकेतु ७ शकटामुख ८ गन्धसमृद्ध ९ शिवमन्दिर १० वैजयन्त ११ रथपुर १२ श्रीपुर १३ रत्नसचय १४ आषाढ़ १५. मानव १६ सूर्यपुर १७ स्वर्णनाभ १८ शतह्रद १९ अगावर्त २० जलावर्त २१ आवर्तपुर २२ वृहद्गृह २३ शखवज्र २४ नाभान्त २५ मेघकूट २६ मणिप्रभ २७ कुजरावर्त २८. असितपर्वत २९ सिन्धुकक्ष ३० महाकक्ष ३१ सुकक्ष ३२ चन्द्रपर्वत ३३ श्रीकूट ३४ गौरिकूट ३५ लक्ष्मीकूट ३६ धराधर ३७ कालकेशपुर ३८ रम्यपुर ३९ हिमपुर ४० किन्नरोद्गीतनगर ४१ नभस्तिलक ४२ मगधासारनलका ४३ पाशुमूल ४४ दिव्यौषध ४५ अर्कमूल ४६ उदयपर्वत ४७ अमृतधार ४८ मातगपुर ४९. भूमिकुण्डलकूट और ५० जम्बूशकुपुर। जम्बूद्वीप मे बत्तीस विदेहो के बत्तीस तथा एक भरत और एक ऐरावत को मिलाकर ऐसे चौंतीस पर्वत हैं। प्रत्येक में एक सौ दस विद्याधरो की नगरियाँ है। यहाँ का पृथिवीतल सदा भोगभूमि के समान सुशोभित रहता है। चक्रवर्ती के विजयक्षेत्र की आधी सीमा का निर्धारण इस पर्वत के होने के कारण इसे इस नाम से सम्बोधित किया गया है। इस पर्वत का विद्याधरो से ससर्ग रहने तथा गगा-सिन्धु नदियो के नीचे होकर बहने से कुलाचलो का विजेता होना भी इसके नामकरण में एक कारण है। यह पर्वत, अचल, उत्तु ग, निर्मल, अविनाशी, अभेद्य, अलघ्य तथा महोन्नत् है। पृथिवीतल से दस योजन ऊपर तीस योजन चौडा है। इसके दस योजन ऊपर अग्रभाग में यह मात्र दस योजन चौडा रह गया है। यहाँ किसी भी प्रकार का राजभय नही है। यहाँ अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि ईतियाँ भी नही होती। यहाँ के वन प्रदेशो में कोयलें कूकती हैं। भरतक्षेत्र के चौथे काल के आरम्भ में मनुष्यो की जो स्थित होती है वही यहाँ के मनुष्यो की उत्कृष्ट स्थिति होती है और चतुर्थ काल की अन्त की स्थिति यहाँ की जघन्य स्थित है। उत्कृष्ट आयु एक करोड वर्ष पूर्व तथा जघन्य आयु सौ वर्ष, उत्कृष्ट ऊँचाई पाँच सौ धनुष तथा जघन्य ऊँचाई सात हाथ होती है। कर्मभूमि के समान ऋतुपरिवर्तन तथा आजीविका के षटकर्म यहाँ भी होते हैं। अन्तर यही है कि यहाँ महाविद्याएँ इच्छानुसार फल दिया करती हैं। विद्याएं यहाँ तीन प्रकार की होती हैं—कुल, जाति और तप से उत्पन्न। प्रथम विद्याएँ कुल परम्परा से प्राप्त होती है, जाति

(मातृपक्षाश्रित) विद्याएँ आराधना करने से और तीसरी तपश्चरण से प्राप्त होती है। धान्य बिना बोये उत्पन्न होते हैं और नदियाँ बालू रहित होती हैं। मपु० १८.१७०-१७६, २०८, १९८-२०, ३२-५२, ७८-८७, १०७, ३१ ४३ पपु० ३ ३८-४१, ३१८-३३८, हपु० ५ २०-२८, ८५-१०१, पापु० १५.४-६

(४) ऐरावत क्षेत्र के मध्य में स्थित एक पर्वत। इसके नौ कूट हैं—सिद्धायतनकूट, उत्तरार्द्धकूट, तामिस्रगुहकूट, मणिभद्रकूट, विजयार्धकुमारकूट, पूर्णभद्रकूट, खण्डकप्रपातकूट, दक्षिणार्धकूट और वैश्रवणकूट। ये सब कूट भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर स्थित कूटों के तुल्य हैं। अन्य रचना भी भरतक्षेत्र के समान ही होती है। हपु० ५ १०९-११२

विजयार्धकुमार—(१) जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का पाँचवाँ कूट। हपु० ५ २७

(२) ऐरावतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत का पाँचवाँ कूट। हपु० ५ १११

(३) विजयार्ध पर्वत का अधिष्ठाता देव। इसने झारी, कलशजल, सिंहासन, छत्र और चमर भेंट करते हुए चक्रवर्ती भरतेश की अधीनता स्वीकार की थी। मपु० ३७ १५५, हपु० ११ १८-२०

विजयापुरी—पूर्व विदेहक्षेत्र के पद्मकावती देश की राजधानी। हपु० ५ २४९-२५०, २६१-२६२

विजयावती—(१) विदेहक्षेत्र का एक वक्षार पर्वत। इसका अपर नाम विजयावान् है। मपु० ६३ २०३

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र की नगरी। पपु० १०६ १९०

विजयावली—काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्धन के मन्त्री सर्वगुप्त की स्त्री। इसने राजा को मारने का मन्त्री का कूट रहस्य राजा से प्रकट प्रकट कर दिया था। यह मन्त्री की अपेक्षा राजा को अधिक चाहती थी। इसके कहने से राजा सावधान रहने लगा। इसके राजा से भेद प्रकट कर देने से इसका पति इससे द्वेष करने लगा। फलस्वरूप 'यह न तो राजा की हो सकी और न पति की ही" यह ज्ञान इसे होते ही इसने शोकयुक्त होकर अकाम तप किया। आयु के अन्त में यह मरकर राक्षसी हुई। तीव्र वैर-वश इसने रतिवर्धन पर उसकी मुनि अवस्था मे घोर उपसर्ग किये थे। पपु० १०८ ७-११, ३५-३८

विजयावह—राजा श्रेणिक एक पुत्र। पपु० २ १४५

विजयावान्—(१) हैमवत् क्षेत्र के मध्य मे स्थित वर्तुलाकार विजयार्ध पर्वत। हपु० ५ १६१

(२) पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक वक्षारगिरि। इसका अपर नाम विजयावती था। मपु० ६३ २०३, हपु० ५ २३०

विजयाश्रिता—चक्रवर्तियो की दिव्या, विजयाश्रिता, परमा और स्वा इन चार जातियो में दूसरी जाति। मपु० ३९ १६७, १६८

विजर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विजितान्तक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विजिष्णु—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५

विज्ञान—दान दातार के सात गुणो मे चौथा गुण। इसमे दान के पात्र और देय आदि के क्रम का ज्ञान अपेक्षित होता है। मपु० २० ८२, ८४ दे० आहारविधि

विज्ञानवादी—जीव और विज्ञानवाद के विवेचक। ये अपने अनुभव के अतिरिक्त अन्य किसी बाह्य ज्ञेय की सत्ता नही मानते। पृथक् रूप से उपलब्ध न होने के कारण ये जीव नामक कोई पदार्थ नही मानते। उसे अपने कर्म-फल का भोक्ता नही मानते। इन्हें परलोक का भय नही होता। ये जगत् को स्वप्न के समान मिथ्या मानते हैं। मपु० ५ ३८-४३

विटप—रावण का सामन्त। गजरथ पर बैठकर इसने राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ५७-५८

वितत—चमड़े से मढे हुए तबला, मृदग आदि वाद्य। हपु० ८ १५९

वितता—भरतक्षेत्र की एक नदी। इसी नदी के पश्चिम में भरतेश और बाहुबली की सेनाओ में युद्ध हुआ था। हपु० ११ ७९

वितर्क—श्रुत (शास्त्र)। मपु० २१ १७२

वितस्ति—बारह अगुल लम्बाई का प्रमाण। कायोत्सर्ग के समय दोनो पैरो के अग्रभाग मे एक वितस्ति प्रमाण का अन्तर रखा जाता है। मपु० १८ ३, हपु० ७ ४५

वितापि—रावण का सामन्त। यह युद्ध में राम के सामन्त विधि के द्वारा गदा प्रहार से मारा गया था। पपु० ६० २०

विद—(१) वल्कलधारी एक तापस। यह वृषभदेव के साथ दीक्षित हुआ था किन्तु अज्ञानवश लिए हुए व्रत से च्युत होकर तापस बन गया था। पपु० ४ १२६

(२) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का सातवाँ पुत्र। पापु० ८ १९३

विदग्धनगर—एक नगर। राजा प्रकाशसिंह और रानी प्रवरावली का पुत्र राजा कुण्डलमण्डित यहाँ का शासक था। पपु० २६ १३-१५

विदग्धा—राजा विभीषण की प्रधान रानी। विभीषण के कहने पर इसने राम के पास जाकर उनसे अपने घर चलने का सविनय निवेदन किया था। पपु० ८० ४६-४८

विदर्भ—(१) वृषभदेव के समय का इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। वृषभदेव यहाँ विहार करते हुए आये थे। कुण्डलपुर इसी देश का नगर था। इसी देश में वरदा नदी के तट पर राजा कुणिम ने कुण्डिनपुर नगर बसाया था। मपु० १६ १५३, २५ २८७, ७१ ३४१, हपु० १७ २३

(२) तीर्थंकर पुष्पदन्त के मुख्य गणधर। मपु० ५५ ५२

विदर्भा—भगलि देश के राजा सिंहविक्रम की पुत्री। यह भगीरथ की जननी थी। मपु० ४८ १२७

विदावर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४६

विदारणक्रिया—साम्परायिक आस्रव की अठारहवी क्रिया। इसमें दूसरो के द्वारा आचरित पापपूर्ण क्रियाओ को प्रकट किया जाता है। हपु० ५८ ७६

विदुर—कौरववशी पाराशर के मत्स्यकुल में उत्पन्न बुद्धिमान् व्यास और रानी सुभद्रा के तीसरे पुत्र। ये धृतराष्ट्र और पाण्डु के छोटे भाई थे। इनका विवाह राजा देवक की कन्या कुमुद्वती के साथ हुआ था। न्यायमार्ग में स्थित पाण्डवो के ये परम हितैषी थे। इन्होने कौरवो पर विश्वास न करने का पाण्डवो को उपदेश दिया था। पाण्डवो को लाक्षागृह के सकट से बचने के लिए गुप्त रूप से लाक्षागृह में इन्होने ही सुरग का निर्माण कराया था। इन्होंने पाण्डवो और कौरवों के मध्य चलते हुए विरोध को देखकर दोनो को आधा-आधा राज्य देकर सतुष्ट करने का धृतराष्ट्र को परामर्श दिया था। दुर्योधन के न मानने पर विरक्त इन्होने मुनि विश्वकीर्ति से मुनिदीक्षा ले ली थी। हरिवशपुराण के अनुसार इनकी माँ का नाम अम्बा था। राजा दुर्योधन, द्रोण तथा दु शासन आदि ने इन्ही से दीक्षा ली थी। मपु० ७०.१०१-१०३, हपु० ४५ ३३-३४, ५२ ८८, पापु० ७ ११६-११७, ८ १११, १२ ८९-१०९, १८ १८७-१९१, १९ ६-७

विदूरथ—यादव वश का एक राजा। यह राजा वसुदेव और रानी रोहिणी का पुत्र था। हपु० ४८ ६४, ५० ८१, ५२ २२

विदेह—जम्बूद्वीप का चौथा क्षेत्र। यहाँ विद्याधरो का गमनागमन होता है। भव्य जिन-मन्दिरो के आधारभूत सुमेरु, गजयन्त, विजयार्ध आदि पर्वतो से यह युक्त है। इसका विस्तार तैंतीस हजार छ सौ चौरासी योजन तथा एक योजन के उन्नीस भागो में चार भाग प्रमाण है। यहाँ वक्षारगिरि और विभगानदियो के मध्य में सीता-सीतोदा नदियो के तटो पर मेरु की पूर्व और पश्चिम दिशाओ में बत्तीस विदेह हैं। पश्चिम विदेहक्षेत्र के देश और उनकी राज्यधानियाँ निम्न प्रकार हैं—

नाम देश	नाम राजधानी
कच्छा	क्षेमा
सुकच्छा	क्षेमपुरी
महाकच्छा	रिष्टा
कच्छकावती	रिष्टपुरी
आवर्ता	खड्गा
लागलावर्ता	मजूषा
पुष्कला	औषधी
पुष्कलावती	पुण्डरीकिणी
वप्रा	विजया
सुवप्रा	वैजयन्ती
महावप्रा	जयन्ती
वप्रकावती	अपराजिता
गन्धा	चक्रा
सुगन्धा	खड्गा
गन्धिका	अयोध्या
गन्धमालिनी	अवध्या

पूर्व विदेहक्षेत्र के देश एव राजधानियाँ

नाम देश	नाम राजधानी
वत्सा	सुसीमा
सुवत्सा	कुण्डला
महावत्सा	अपराजिता
वत्सकावती	प्रभकरा
रम्या	अकावती
रम्यका	पद्मावती
रमणीया	शुभा
मगलावती	रत्नसचय
पद्मा	अश्वपुरी
सुपद्मा	सिंहपुरी
महापद्मा	महापुरी
पद्मकावती	विजयापुरी
शखा	अरजा
नलिनी	विरजा
कुमुदा	अशोका
सरिता	वीतशोका

इनमें पश्चिम विदेहक्षेत्र के कच्छा आदि आठ देश सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य में प्रदक्षिणा रूप से तथा वप्रा आदि आठ देश नील कुलाचल और सीतोदा नदी के मध्य में दक्षिणोत्तर लम्बे स्थित हैं। पूर्व विदेहक्षेत्र के देशो में वत्सा आदि आठ देश सीता नदी और निषिध पर्वत के मध्य में तथा पद्मा आठ देश सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य में दक्षिणोत्तर लम्बे स्थित हैं। यहाँ चक्रवर्तियो का निवास रहता है। राजधानियाँ दक्षिणोत्तर-दिशा में बारह योजन लम्बी और पूर्व-पश्चिम में नौ योजन चौडी, स्वर्णमय कोट और तोरणो से युक्त हैं। अढाई द्वीप में जम्बूद्वीप के दो, धातकीखण्ड के दो और पुष्करार्ध का एक इस प्रकार पाँच विदेहक्षेत्र होते हैं। इनमें प्रत्येक के बत्तीस-बत्तीस भेद बताये है। अत ढाई द्वीप में कुल एक सौ आठ विदेहक्षेत्र हैं। सभी विदेहक्षेत्रो में मनुष्यो की ऊँचाई पाँच सौ धनुष प्रमाण तथा आयु एक कोटि पूर्व वर्ष प्रमाण रहती है। प्रत्येक विदेहक्षेत्र में तीर्थंकर चक्रवर्ती, बलभद्र और नारायण अधिक से अधिक एक सौ आठ और कम से कम बीस होते हैं। चौदहो कुलकर पूर्वभव में इन्ही क्षेत्रो में उच्चकुलीन महापुरुष थे। इन क्षेत्रो से मुनि अपने कर्मों को नष्ट करके विदेह-देह रहित होकर निर्वाण प्राप्त करते हैं। परिणामस्वरूप क्षेत्र का "विदेह" नाम सार्थक है। मपु० ३ २०७, ४ ५३, ६३ १९१, ७६ ४९४-४९६, पपु० ५,२५-२६, ९१, १७१, २४४-२६५, २३.७, १०५, १५९-१६०, हपु० ५ १३

(२) मध्यदेश का एक देश। वृषभदेव के समय में स्वय इन्द्र ने इसका निर्माण किया था। यह जम्बूद्वीप में स्थित भरतक्षेत्र के आर्यखड में है। राजा सिद्धार्थ का कुण्ड नगर इसी देश में था। मपु०

१६.१५५, ७४ २५१-२५२, हपु० ११.७५, पापु० १.७१-७७, वीवच० ७ २-३, ८-१०

(३) विदेह देश का एक नगर। गोपेन्द्र यहाँ का राजा था। मपु० ७५ ६४३

विदेहकूट—निषधाचल के नौ कूटो में आठवाँ कूट। इसकी ऊँचाई और मूल की चौडाई सौ योजन, मध्य की चौडाई पचहत्तर योजन और ऊर्ध्व भाग की चौडाई पचास योजन है। हपु० ५ ८९-९०

विदेहा—राजा जनक की रानी। यह सीता और भामण्डल की जननी थी। पपु० २६ २, १२१, दे० जनक

विद्यांग—रत्नपुर नगर का राजा। लक्ष्मी इसकी रानी और विद्यासमुद्घात इसका पुत्र था। पपु० ६ ३९०

विद्या—(१) किन्नरगीतनगर के विद्याधर श्रीधर की स्त्री और रति की जननी। पपु० ५ ३६६

(२) विद्याधरो की विद्याएँ। ये विद्याएँ शक्ति रूप होती हैं। इन विद्याओ के नाम हैं—प्रज्ञप्ति, कामरूपिणी, अग्निस्तम्भिनी, उदकस्तम्भिनी, आकाशगामिनी, उत्पादिनी, वशीकरणी, दशमी, आवेशिनी, माननीय, प्रस्थापिनी, प्रमोहिनी, प्रहरणी, सक्रमणी, आवर्तनी, सग्रहणी, भजनी, विपाटिनी, प्रावर्तनी, प्रमोदिनी, प्रहापणी, प्रभावती, प्रलापिनी, निक्षेपिणी, शर्वरी, चाण्डली, मातगी, गौरी, षडगिका, श्रीमत्कन्या, शतसकुला, कुभाण्डी, विरलवेगिका, रोहिणी, मनोवेगा, महावेगा, चण्डवेगा, चपलवेगा, मधुकरी, पर्णलघु, वेगावती, शीतदा, उष्णदा, वेताली, महाज्वाला, सर्वविद्याछेदिनी, युद्धवीर्या, बन्धमोचिनी, प्रहारावरणी, भ्रामरी और अभोगिनी। पद्मपुराण में इनके अतिरिक्त भी कुछ विद्याओ के नाम आये हैं। वे हैं—कामदायिनी, कामगामिनी, दुर्निवारा, जगत्कम्पा, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोभ्या, मन स्तम्भनकारिणी सवाहिनी, सुरध्वसी, कौमारी, वधकारिणी, सुविधाना, तपोरूपा, दहनी, विपुलोदरी, शुभप्रदा, रजोरूपा, दिनरात्रि-विधायिनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शनी, अजरा, अमरा, गिरिदारणी, अवलोकिनी, अरिध्वसी, धीरा, घोरा, भुजगिनी, वारुणी, भुवना, अवध्या, दारुणा, मदनाशिनी, भास्करी, भयसभूति, ऐशानी, विजया, जया, बन्धनी, वाराही कुटिलाकृति, चित्तोद्भवकरी, शान्ति, कौबेरी, वशकारिणी, योगेश्वरी, बलोत्सादी, चण्डा, भीति और प्रर्वाषणी। ये विद्याएँ दशानन को प्राप्त थी। सर्वाहा, इतिसवृद्धि, जृम्भिणी, व्योमगामिनी और निद्राणी विद्याएँ भानुकर्ण को तथा सिद्धार्था, शत्रुदमनी, निर्व्याघाता और आकाशगामिनी ये चार विद्याएँ विभीषण को प्राप्त थी। तीर्थङ्कर वृषभदेव से नमि और विनमि द्वारा राज्य की याचना किये जाने पर धरणेन्द्र ने उन दोनो को अपनी देवियो से कुछ विद्याएँ दिलवाकर सन्तुष्ट किया था। अदिति देवो ने विद्याओ के उन्हें जो आठ निकाय दिये थे वे इस प्रकार है—मनु, मानव, कौशिक, गौरिक, गान्धार, भूमितुण्ड, मूलवार्यक और शकुक। दूसरी देवी दिति ने भी उन्हें आठ निकाय निम्न प्रकार दिए थे—मातग, पाण्डुक, काल, स्वपाक, पर्वत, वशालय, पाशुमूल और वृक्षमूल। इन सोलह निकायो की निम्न विद्याएँ हैं—प्रज्ञप्ति, रोहिणी, अगारिणी, महागौरी, गौरी, सर्वविद्याप्रकर्षिणी, महाश्वेता, मायूरी, हारी, निर्वज्ञशाड्वला, तिरस्कारिणी, छायासक्रामिणी, कूष्माण्डगणमाता, सर्वविद्या-विराजिता, आर्यकूष्माण्डदेवी, अच्युता, आर्यवती, गान्धारी, निर्वृति, दण्डाध्यक्षगण, दण्डभूतसहस्रक, भद्रकाली, महाकाली, काली और कालमुखी। इनके अतिरिक्त एकपर्वा, द्विपर्वा, त्रिपर्वा, दशपर्वा, शतपर्वा, सहस्रपर्वा, लक्षपर्वा, उत्पातिनी, त्रिपातिनी, धारिणी, अन्तर्विचारिणी, जलगति और अग्निगति ये औषधियो से सम्बन्ध रखनेवाली विद्याएँ थी। सर्वार्थसिद्धा, सिद्धार्था, जयन्ती, मगला, जया, प्रहारसक्रामिणी, अशय्याराधिनी, विशल्यकारिणी, व्रणसरोहिणी, सवर्णकारिणी और मृतसजीवनी ये सभी तथा ऊपर कथित समस्त विद्याएँ और दिव्य औषधियाँ धरणेन्द्र ने नमि-विनमि दोनो को दी थी। पाण्डवपुराण में महापुराण की अपेक्षा कुछ नवीन विद्याओ के उल्लेख हैं। वे विद्याएँ है—प्रवर्तिनी, प्रहापनी, प्रमादिनी, पलायिनी, खट्वागिका, श्रीमद्गुण्या, कूष्माण्डी, वरवेगा, शीतवैतालिका और उष्णवैतालिका। मपु० ४७ ७४, ६२ ३९१-४००, पपु० ७ ३२५-३३४, हपु० २२ ५७-७३, पापु० ४ २२९-२३६

(३) शिक्षा। रूप लावण्य और शील से समन्वित होने पर भी जन्म की सफलता शिक्षित होने में ही मानी गयी है। लोक मे विद्वान् सर्वत्र सम्मानित होता है। इससे यश मिलता है और आत्मकल्याण होता है। अच्छी तरह अभ्यास की गयी विद्या समस्त मनोरथो को पूर्ण करती है। मरने पर भी इसका वियोग नही होता। यह बन्धु, मित्र और धन है। कन्या या पुत्र यह समान रूप से दोनो को अर्जनीय है। इसके आरम्भ मे श्रुतदेवता की पूजा की जाती है। इसके पश्चात् लिपि और अको का ज्ञान कराया जाता है। वृषभदेव ने अपने पुत्र और पुत्रियो को विद्याभ्यास कराया था। मपु० १६ ९७-१०४, १२५

विद्याकर्म—प्रजा की आजीविका के लिए वृषभदेव द्वारा उपदेशित छ कर्मों मे चौथा कर्म। शास्त्र लिखकर, रचकर अथवा अध्ययन-अध्यापन के द्वारा आजीविका प्राप्त करना विद्या-कर्म है। मपु० १६ १७९-१८१, हपु० ९ ३५

विद्याकोश—विद्याओ का भण्डार। अदिति देवो ने अनेक विद्या-कोश नमि और विनमि विद्याधर को दिये थे। हपु० २२.५५-५६, दे० विद्या।

विद्याकौशिक—रावण का सामन्त। इसने राम-रावण युद्ध में राम के विरुद्ध युद्ध किया था। पपु० ५७ ५३

विद्याधर—नमि और विनमि के वश में उत्पन्न विद्याओ को धारण करनेवाले पुरुष। ये गर्भवास के दुख भोगकर विजयार्ध पर्वत पर उनके योग्य कुलो में उत्पन्न होते हैं। आकाश में चलने से इन्हें खेचर कहा जाता है। इनके रहने के लिए विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में पचास और उत्तरश्रेणी में साठ कुल एक सौ दस

नगर है। पपु० ६ २१०, ४३ ३३-३४, हपु० २२ ८५-१०१, दे० विजयार्ध–२

विद्याधरवंश—पौराणिक चार महावंशो में तीसरा महावंश। विद्याधर नमि इस वंश का प्रथम राजा था। नमि के पश्चात् उसका पुत्र रत्नमाली राजा हुआ। इसके पश्चात् रत्नवज्र, रत्नरथ, रत्नचित्र, चन्द्ररथ, वज्रजघ, वज्रसेन, वज्रदष्ट्र, वज्रध्वज, वज्रायुध, वज्र, सुवज्र, वज्रभृत, वज्राभ, वज्रबाहु, वज्रसज्ञ, वज्रास्य, वज्रपाणि, वज्रजातु, वज्रवान्, विद्युन्मुख, सुवक्त्र, विद्युद्दष्ट्र, विद्युत्वान्, विद्युदाभ, विद्युद्वेग, वैद्युत राजा हुए। इन राजाओ के पश्चात् विद्युद्दृढ राजा हुआ। यह दोनो श्रेणियो का स्वामी था। यह दृढरथ पुत्र को राज्य सौंप कर तप करते हुए मरकर स्वर्ग गया। इसके पश्चात् अश्वधर्मा, अश्वायु, अश्वध्वज, पद्मनिभ, पद्ममाली, पद्मरथ, सिंहयान, मृगोद्धर्मा, सिंहसप्रभु, सिंहकेतु, शशाकमुख, चन्द्र, चन्द्रशेखर, इन्द्र, चन्द्ररथ, चक्रधर्मा, चक्रायुध, चक्रध्वज, मणिग्रीव, मण्यक, मणिभासुर, मणिस्यन्दन, मण्यास्य, विम्बोष्ठ, लम्बिताधर, रक्तोष्ठ, हरिचन्द्र, पूश्चन्द्र, पूर्णचन्द्र, बालेन्दु, चन्द्रचूड, व्योमेन्दु, उडुपालन, एकचुड, द्विचूड, त्रिचूड, वज्रचूड, भूरिचूड, अर्कचूड, वह्निजटी, वह्नितेज, इसी प्रकार इस वंश में और भी राजा हुए। इनमें अनेक नृप पुत्रो को राज्य सौंपते हुए कर्मों का क्षय करके सिद्ध हुए हैं। पपु० ५ ३, १६-२५, ४७-५५

विद्यानिधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

विद्यानुवाद—चौदहपूर्वो में दसवाँ पूर्व। इसका अपर नाम विद्यानुवाद है। इसमें एक करोड दस लाख पद है। इन पदो में अगुष्ठ, प्रसेन आदि सात सौ लघु विद्याएँ और रोहिणी आदि पाँच सौ महाविद्याओ का वर्णन है। हपु० २ ९९, १० ११३-११४

विद्यामन्दिर—आदित्यपुर का राजा एक विद्याधर। वेगवती इसकी रानी तथा श्रीमाला पुत्री थी। पपु० ६ ३५७-३५८, ३६३

विद्याविच्छेदिनी—एक विद्या। इससे वैतालिक-क्रिया का विच्छेद किया जाता था। यह विद्या विद्याधरो के पास होती थी। मपु० ६२ २३४-२३९

विद्यासवादगोष्ठी—विद्या-सम्बन्धी विषयो पर चर्चा करने के लिए आयोजित एक सभा। मपु० ७ ६५

विद्यासमुद्घात—रत्नपुर नगर के राजा विद्याग और रानी लक्ष्मी का पुत्र। यह विद्याधरो का स्वामी था। पपु० ६.३९०

विद्युच्चोर—सुरम्य देश के प्रसिद्ध पोदनपुर के राजा विद्युद्राज और रानी विमलमती का पुत्र। इसका मूल नाम यद्यपि विद्युत्प्रभ था परन्तु यह इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह तन्त्र-मन्त्र आदि के द्वारा किवाड खोलना, अदृश्य होकर रहना आदि जानता था। जम्बूस्वामी के पिता सेठ अर्हद्दास के घर यह धन चुराने आया था। वहाँ इसे जम्बूस्वामी की माँ उदास दिखाई दी थी। उदासी का कारण पूछने पर जिनदासी ने इसे प्रात. जम्बूस्वामी का दीक्षा लेना बताया था उन्हें दीक्षा से रोकनेवाले को मनचाहा धन दिये जाने की उसने घोषणा की थी। यह सुनकर इसे बोध जागा। इसने अपने को बहुत धिक्कारा। इसने सोचा था कि ये जम्बूस्वामी है जो भोग सामग्री रहते हुए भी विरक्त होना चाहते है और मैं यहाँ धन चुराने के लिए आया हूँ। इन विचारो के साथ यह जम्बूस्वामी के पास गया। वहाँ इसने अनेक कहानियाँ सुनाकर जम्बूस्वामी को ससार की विरक्ति से रोकने का यत्न किया किन्तु जम्बूस्वामी कहानियो के माध्यम से ही इसे निरुत्तर करते रहे। यह जम्बूस्वामी को विरक्ति से न रोक सका, किन्तु यह स्वय ही विरक्त हो गया। मपु० ४६ २८९, २९४-३४२, ७६ ५३-१०८

विद्युज्जिह्व—रावण का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५७ ५०

विद्युत्कर्ण—राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १२

विद्युत्कान्त—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। प्रभजन यहाँ का राजा और विद्याधर अमिततेज उसका पुत्र था। मपु० ६८ २७५

विद्युत्कुमार—पाताललोक में रहनेवाले देवो में एक प्रकार के भवनवासी देव। हपु० ४ ६४-६५

विद्युत्केतु—राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५

विद्युत्केश—लका का राजा। यह राक्षसवशी था। श्रीचन्द्रा आदि इसकी अनेक रानियाँ थी। श्रीचन्द्रा को एक वानर ने नोच लिया था जिससे कुपित होकर इसने उस वानर को मार कर घायल कर दिया था। यह वानर घायल अवस्था में मुनि सघ के निकट पृथिवी पर भागते हुए गिर गया था। मुनियो के पच-नमस्कार मन्त्र का उपदेश देने से वानर मरकर महोदधिकुमार नामक भवनवासी देव हुआ। इस देव ने इसे कर्त्तव्य-बोध कराया। यह इस अपने गुरु के पास ले गया। वहाँ दोनो ने गुरु से धर्म का उपदेश सुना और अपना पूर्वभव ज्ञात किया। इससे इसे प्रबोध हुआ। अपने पुत्र सुकेश को अपना पद सौंप कर इसने दीक्षा ले ली तथा समाधिमरण के प्रभाव से उत्तम देव हुआ। इसकी दीक्षा के समाचार पाकर महोदधिकुमार ने भी विरक्त होकर दीक्षा ले ली। पपु० ६ २२३-३५०

विद्युत्प्रकाशा—किष्कुनगर के राजा विद्याधर महोदधि की रानी। इसके एक सौ आठ पुत्र थे। पपु० ६ २१८-२२०

विद्युत्प्रभ—(१) मेरु के दक्षिण-पश्चिम कोण में स्थित स्वर्णमय एक पर्वत। इसके नौ कूट हैं—१ सिद्धकूट २ विद्युत्प्रभकूट ३ देवकुरुकूट ४ पद्मककूट ५ तपनकूट ६ स्वस्तिककूट ७ शतज्वलकूट ८ सीतोदाकूट और ९ हरिसहकूट। हपु० ५ २१२, २२२-२२३

(२) इस नाम के पर्वत का दूसरा कूट। हपु० ५.२२२

(३) यदुवशी राजा अन्धकवृष्णि के पुत्र राजा हिमवान् का प्रथम पुत्र। माल्यवान् और गन्धमादन इसके भाई थे। हपु० ४८ ४७

(४) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित चौथा नगर। मपु० १९ ७८, ८७, हपु० २२ ९०

(५) हेमपुर नगर के राजा कनकद्युति का पुत्र। राजा महेन्द्र ने

अल्पायु जानकर इसे अपनी पुत्री अजना को देने योग्य नही समझा था। पपु० १५ ८५

(६) चक्रवर्ती भरतेश के कुण्डल। मपु० ३७ १५७

(७) जम्बूद्वीप के प्रसिद्ध सोलह सरोवरों में ग्यारहवाँ सरोवर। मपु० ६३ १९९

(८) चार गजदन्त पर्वतो में तीसरा पर्वत। यह अनादिनिधन है। मपु० ६३ २०५

(९) पोदनपुर नगर के राजा विद्युद्राज का पुत्र। इसका अपर नाम विद्युच्चोर था। मपु० ७६.५३-५५ दे० विद्युच्चोर

(१०) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में सुरेन्द्रकान्तार नगर के राजा मेघवाहन और रानी मेघमालिनी का पुत्र। यह ज्योतिर्माला का भाई था। दूसरे पूर्वभव मे यह वत्सकावती देश में प्रभाकरी नगरी के राजा नन्दन का पुत्र विजयभद्र और प्रथम पूर्वभव मे माहेन्द्र स्वर्ग के चक्रक विमान में देव था। मपु० ६२ ७१-७२, ७५-७८, पापु० ४ २९-३५

(११) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में रथनूपुर नगर का नृप एक विद्याधर। इसके दो पुत्र थे—इन्द्र और विद्युन्माली। इन पुत्रो में इन्द्र को राज्य सौंपकर तथा विद्युन्माली को युवराज बनाकर यह दीक्षित हो गया था। पापु० १७.४३-४५

विद्युत्प्रभा—(१) विद्याधर वज्रदंष्ट्र की रानी और विद्युद्दंष्ट्र की जननी। हपु० २७ १२१

(२) जयकुमार के शील की परीक्षा करनेवाली देवी। मपु० ४७ २५९-२७० दे० जयकुमार

(३) सौधर्म स्वर्ग के श्रीनिलय विमान की देवी। मपु० ६२ ३७५

(४) राजा कनक और रानी सन्ध्या की पुत्री। रावण ने इसे गन्धर्व-विधि से विवाहा था। पपु० ८ १०५, १०८

(५) दधिमुख नगर के राजा गन्धर्व तथा रानी अमरा की दूसरी पुत्री। यह चन्द्रलेखा की छोटी और तरगमाला की बडी बहिन थी। ये तीनो बहिनें राम के साथ विवाही गयी थी। पपु० ५१ २५-२६, २८

विद्युत्वान्—विद्याधरवशी राजा विद्युद्दंष्ट्र का पुत्र और विद्युद्राभ का पिता। पपु० ५.१६-२१, हपु० १३ २४

विद्युदग—कुन्दनगर के प्रधान वैश्य समुद्रसगम का पुत्र। यमुना इसकी जननी थी। इसका जन्म बिजली की चमक से प्रकाशित हुए समय में होने से इसके भाई बन्धुओ ने इसे यह नाम दिया था। धन कमाने के लिए यह उज्जयिनी गया था। वहाँ कामलता वेश्या पर यह आसक्त हो गया था। इसने इस व्यसन में पडकर अपने पिता का सचित धन छ मास में ही समाप्त कर दिया। एक दिन कामलता से रानी के कुण्डलो की प्रशसा सुनकर यह रानी के कुण्डल चुराने राजा सिंहोदर के राजमहल में गया। वहाँ इसने राजा को अपनी रानी से यह कहते हुए सुना कि दशागपुर का राजा वज्रकर्ण उसका वैरी है। वह उसे नमस्कार नही करता। अत जब तक वह उसे मार नही डालता उसे चैन नही। राजा से ऐसा सुनकर अपना परिचय देते हुए इसने कुण्डल नही चुराये। चुपचाप बाहर निकल कर इसने राजा वज्रकर्ण को सम्पूर्ण घटना निवेदित की। वज्रकर्ण नही माना। उसने सिंहोदर को नमस्कार नही किया। फलस्वरूप सिंहोदर ने आग लगाकर इस नगर को उजाड दिया। राम ने इससे दशागनगर के निर्जन हो जाने को कथा ज्ञात करने के पश्चात् इसे दु खी देखकर अपने रत्नजटित स्वर्णसूत्र दिये थे। पपु० ३३ ७३-१८३ दे० वज्रकर्ण

विद्युद्गति—जम्बूद्वीप में पूर्व विदेहक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित त्रिलोकोत्तम नगर का राजा। इसकी रानी विद्युन्माला तथा पुत्र रश्मिवेग था। मपु० ७३ २५-२७

विद्युद्घन—विभीषण का एक शूरवीर सामन्त। विभीषण के साथ यह भी राम के पास गया था। पपु० ५५ ४०

विद्युद्दंष्ट्र—(१) एक विद्याधर। यह विजयार्ध पर्वत के गगनवल्लभ नगर के राजा वज्रदंष्ट्र और रानी विद्युत्प्रभा का पुत्र था। इसके पिता मुनि सजयन्त इसके पूर्वभव के वैरी थे। वे किसी समय वीतशोका नगरी के भीमदर्शन-श्मशान में प्रतिमायोग से विराजमान थे। यह इसी मार्ग से कही जा रहा था। इन्हें तप में लीन देखकर पूर्व वैर के कारण यह भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत के दक्षिणभाग के समीप वरुण पर्वत पर उठा ले गया था। यहाँ से इसने उन्हें इला-पर्वत के दक्षिण में हरिद्वती, चण्डवेगा, गजवती, कुसुमवती और स्वर्णवती नदियो के सगम पर अगाध जल मे छोडा था। इसने विद्याधरो को राक्षस बताकर इन्हें मार डालने के लिए प्रेरित किया था। फलस्वरूप विद्याधरो ने उन्हें शस्त्र मार-मार कर सताया। सजयन्त मुनि तो केवलज्ञान प्राप्तकर निर्वाण को प्राप्त हुए किन्तु मुनि के भाई जयन्त के जीव धरणेन्द्र को जैसे ही उपसर्ग-वृतान्त ज्ञात हुआ कि उसने आकर उसकी समस्त विद्याएँ हर ली थी। वह इसे मारने को तैयार हुआ ही था कि आदित्याभ लान्तवेन्द्र ने आकर धरणेन्द्र को ऐसा करने से रोककर इसे मरण से बचा लिया था। इसका अपर नाम विद्युद्दृढ था। विद्याओ से रहित होने पर पुनः विद्या-प्राप्ति के लिए धरणेन्द्र ने इसे सजयन्त मुनि के चरणो में तपश्चरण करना एक उपाय बताया था। जिनप्रतिमा, मन्दिर तथा मुनियो के ऊपर गमन करने से विद्याएँ नष्ट हो जाती हैं ऐसा ज्ञातकर इसने सजयन्त मुनि के पादमूल में तपश्चरण किया और पुन· विद्याएँ प्राप्त कर ली थी। अन्त में दृढरथ पुत्र को राज्य सौंपकर तपश्चरण करते हुए मर-कर यह स्वर्ग गया। मपु० ५९ ११६-१३२, १९०-१९१, पपु० ५. २५-३३, ४७, हपु० २७ ५-१८, १२१

(२) विद्याधरो के राजा नमि का वशज। यह राजा सुवक्त्र का पुत्र और विद्युत्वान् का पिता था। पपु० ५.२०, हपु० १३ २४

(३) यादवो का पक्षधर एक विद्याधर। हपु० ५१.३

(४) चक्रवर्ती वज्रायुध का पूर्वभव का वैरी। इसने वज्रायुध को नागपाश में बाँधकर ऊपर से शिला रख दी थी किन्तु वज्रायुध ने

शिला के सौ टुकड़े कर दिये तथा नागपाश को निकाल कर फेंक दिया था। पापु० ५ ३२-३६

(५) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी का राजा। इसकी रानी अनिलवेगा तथा पुत्र सिंहरथ था। मपु० ६३ २४१, पापु० ५ ६५-६६

(६) एक विद्याधर। यह विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में मेघकूट नगर के स्वामी विद्याधर कालसंवर और रानी कांचनमाला का पुत्र था। यह पाँच सौ भाइयों में ज्येष्ठ था। मपु० ७२ ५४-५५, ८५ दे० प्रद्युम्न

विद्युद्दृढ़—विद्युद्दंष्ट्र का अपर नाम। पपु० ५ २५ दे० विद्युद्दंष्ट्र-१

विद्युद्म्बुक—रावण का सामन्त। इसने गजरथ पर बैठकर राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ५७

विद्युद्वक्त्रा—(१) एक गदा। चिन्तागति देव ने यह गदा लक्ष्मण को दी थी। पपु० ६० १४०

(२) महेन्द्रोदय उद्यान की एक राक्षसी। इसने सर्वभूषण मुनिराज पर अनेक उपसर्ग किये थे। यह पूर्वभव में इन्हीं मुनिराज की आठ सौ स्त्रियों में किरणमण्डला नाम की प्रधान स्त्री थी। इसने अपने मामा के पुत्र हेमशिख का सोते समय बार-बार नाम उच्चारण किया था। इसकी इस घटना से इसका पति और यह साध्वी हो गयी थी। आयु के अन्त में किसी कलुषित भावना से मरकर यह राक्षसी हुई। पपु० १०४.९९-११७

विद्युद्दाभ—एक विद्याधर। यह नमि विद्याधर के वंश में हुए विद्याधर विद्युत्वान् का पुत्र और विद्युद्वेग का पिता था। पपु० ५ २०, हपु० १३ २४

विद्युद्वाह—राम का सामन्त। पपु० ५८ १८

विद्युद्वेग—कृष्ण की पटरानी गान्धारी के पूर्वभव का पिता एक विद्याधर। यह जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी पर गगनवल्लभ नगर का राजा था। विद्युद्वेगा इसकी रानी और सुरूपा इसकी पुत्री थी। हरिवंशपुराण में इसकी रानी का नाम विद्युन्मती तथा पुत्री का नाम विनयश्री बताया है। विद्याधर नमि की वंश परम्परा में यह विद्युद्दाभ विद्याधर का पुत्र और विद्याधर वैद्युत का पिता था। मपु० ७१ ४१६-४२८, पपु० ५ २०, हपु० १३ २४, ६० ८९-९३

(२) बलि के सहस्रग्रीव आदि अनेक राजाओं के पश्चात् हुआ एक विद्याधर। यह वसुदेव का ससुर तथा दधिमुख और चण्डवेग विद्याधरों का पिता था। मदनवेगा इसकी पुत्री थी। इसे किसी निमित्तज्ञानी मुनि ने गगा में विद्या सिद्ध करनेवाले चण्डवेग के कन्धे पर आकाश से गिरने वाले पुरुष को इसकी पुत्री का होनेवाला पति बताया था। नभस्तिलक नगर का राजा त्रिशिखर अपने पुत्र सूर्यक को इसकी पुत्री मदनवेगा नहीं दिला सका। इस कारण वह विद्युद्वेग से रुष्ट हुआ और उसने उसे बन्दी बना लिया। दैवयोग से वसुदेव चण्डवेग के कंधे पर गिरे। चण्डवेग ने इसे मुक्त कराने के लिए वसुदेव को अनेक विद्यास्त्र दिये। वसुदेव ने विद्यास्त्र लेकर माहेन्द्रास्त्र से त्रिखर का शिर काट डाला और इसे बन्धनों से मुक्त करा दिया। इसने भी मदनवेगा वसुदेव को विवाह दी थी। हपु० २५ ३६-७०, ४८ ६१ दे० चण्डवेग

(३) पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का एक चोर। चोरी में पकड़े जाने पर दण्ड देनेवालों ने इसे तीन प्रकार के दण्ड निश्चित किये थे। इनमें प्रथम दण्ड था मिट्टी की तीन थाली शकृतभक्षण। दूसरा दण्ड था—मल्लों के तीस मुक्कों की मार और तीसरा दण्ड था—अपने सर्व धन का समर्पण। इसने जीवित रहने की इच्छा से तीनों दण्ड सहे थे। अन्त में यह मरकर नरक गया। मपु० ४६ २८९-२९४

विद्युद्वेगा—(१) विद्याधर विद्युद्वेग की रानी। मपु० ७१ ४१९-४२० दे० विद्युद्वेग-१

(२) एक विद्याधरी। विद्याधर अशनिवेग ने इसे कुमार श्रीपाल को मारने भेजा था। यह श्रीपाल को देखकर कामासक्त हो गयी थी। श्रीपाल को अपने घर ले जाने का भी इसने प्रयत्न किया किन्तु सफल नहीं हुई। इसकी सखी अनंगपताका ने इसका अभिप्राय कुमार के समक्ष प्रकट किया। कुमार ने माता-पिता द्वारा दी गयी कन्या के ग्रहण करने को अपनी प्रतिज्ञा बताकर अपनी असमर्थता प्रकट की। कुमार के इस उत्तर से यह कुमार को अपने मकान की छत पर छोड़कर और बन्द करके माता-पिता को लेने गयी थी, इधर लाल कम्बल ओढ़ कर सोये हुए श्रीपाल को मांस का पिण्ड समझकर भेरुण्ड पक्षी उठा ले गया और यह विवश होकर निराश हो गयी। मपु० ४७ २७-४४, दे० अशनिवेग

(३) ब्रह्म स्वर्ग के इन्द्र विद्युन्माली की चार देवियों में तीसरी देवी। मपु० ७५ ३२-३३

विद्युद्राज—सुरम्य देश के पोदनपुर नगर का राजा। विमलवती इसकी रानी और विद्युत्प्रभ इसका पुत्र था। यही पुत्र विद्युच्चोर के नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ७६ ५३-५५ दे० विद्युच्चोर

विद्युद्वाहन—एक विद्याधर। यह विद्याधर अशनिवेग का पुत्र था। इसने राजा किष्किन्ध के साथ युद्ध किया था। किष्किन्ध ने इसके वक्षस्थल पर एक शिला फेंकी थी जिससे यह मूर्च्छित हो गया था। कुछ ही समय में सचेत होकर इसने वही शिला किष्किन्ध के वक्षस्थल पर फेंकी थी जिससे किष्किन्ध भी मूर्च्छित हो गया था। पपु० ६ ४६२-४६७

विद्युद्विलसित—एक विद्याधर। इसने विभीषण के आदेश से राजा दशरथ और जनक के सिर काटकर विभीषण को दिखाये थे। विभीषण उन्हें समुद्र में फिकवा कर लंका चला गया था। ये दोनों सिर कृत्रिम प्रतिमाओं के थे। यह रहस्य सिर काटते समय न इसे विदित था और न विभीषण को ही। इसने और विभीषण ने दशरथ और जनक को मरा हुआ जानकर संतोष प्राप्त किया था। पपु० २३ ५४-५८

विद्युन्मती—(१) पुष्करवर द्वीप मे पश्चिम मेरु के पश्चिम की ओर गरिद् देश मे वीतशोक नगर के राजा चक्रध्वज की दूसरी रानी। इसकी पुत्री पद्मावती वेश्या होने के निदानपूर्वक मरकर स्वर्ग में अप्सरा हुई थी। मपु० ६२ ३६४-३६८

(२) कृष्ण की पटरानी गाधारी की पूर्वभव की जननी। यह गगनवल्लभ नगर के राजा विद्याधर विद्युद्वेग की रानी थी। गाधारी का जीव विनयश्री इसकी पुत्री थी जो नित्यालोक नगर के राजा महेन्द्रविक्रम को विवाही गयी थी। हपु० ६० ८९-९१

विद्युन्माला—(१) भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश में स्थित वस्वालय नगर के राजा वज्रचाप और रानी सुभा की पुत्री। यह सिंहकेतु की पत्नी थी। मपु० ७० ७६-७७

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश के विजयार्ध पर स्थित त्रिलोकोत्तम नगर के राजा विद्याधर विद्युद्गति की रानी। पार्श्वनाथ के पूर्वभव के जीव रश्मिवेग की यह जननी थी। मपु० ७३ २५-२७

विद्युन्माली—(१) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५

(२) ब्रह्महृदय विमान मे उत्पन्न ब्रह्म स्वर्ग का इन्द्र। इसकी चार रानियाँ थी—प्रियदर्शना, सुदर्शना, विद्युद्वेगा और प्रभावेगा। यह केवली जम्बूस्वामी का जीव था। मपु० ७६ ३२-३८

विद्युन्मुख—विद्याधर नमि का वशज। यह राजा वज्रवान् का पुत्र और सुवक्त्र का पिता था। पपु० ५ १९-२०, हपु० १३ २३-२४

विद्युल्लता—(१) राजपुर नगर के सेठ कुमारदत्त की पुत्री गुणमाला की दासी। मपु० ७५ ३३८-३५५

(२) विदेहक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित शशिपुर नगर के राजा रत्नमाली की रानी। सूर्यंजय की यह जननी थी। पपु० ३१ ३४-३५

विद्युल्लेखा—वग देश के कान्तपुर नगर के राजा सुवर्णवर्मा की रानी। यह महावल की जननी थी। मपु० ७५ ८१

विद्रावण—भार्गवाचार्य की वश परम्परा में हुए रावण का पुत्र। द्रोणाचार्य का यह पिता था। हपु० ४५ ४७

विद्रुम—(१) यह बलभद्र के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २० २३५

(२) बलभद्र बलदेव का पुत्र। हपु० ४८ ६७

विद्वान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५

विधाता—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ १२५, हपु० ८ २०८

विधि—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

(२) राम का सामन्त। इसने वितापि योद्धा को गदा के प्रहार से मारा था। पपु० ५८ ९-११, ६०.२०

विधिदान—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ मे पैतीसवी क्रिया। इसमें इन्द्र नम्रीभूत उत्तम देवो को अपने-अपने पद पर नियुक्त करता है और स्वय चिरकाल तक उनके सुखो का अनुभव करता है। मपु० ३८ ६०, १९९-२०१

विनमि—तीर्थंकर वृषभदेव के साले महाकच्छ के पुत्र और वृषभदेव के अठहत्तरवे गणधर। ये और इनके ताऊ कच्छ का पुत्र नमि दोनो वृषभदेव के उस समय निकट गये जब वृषभदेव छ. माह के प्रतिमा-योग में विराजमान थे। ये दोनो वृषभदेव के साथ दीक्षित हो गये थे किन्तु पद से च्युत होकर वृषभदेव से बार-बार भोग-सामग्री की याचना करते थे। इन्हें उचित-अनुचित का कुछ भी ज्ञान न था। दोनो जल, पुष्प तथा अर्घ से वृषभदेव की उपासना करते थे। इससे धरणेन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ। वह अवधिज्ञान से नमि और विनमि के वृत्तान्त को जान गया। अत वह वृषभदेव के पास आया। धरणेन्द्र ने इसे विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का राज्य देकर सतुष्ट किया। यह भी वहाँ नभस्तिलक नगर मे रहने लगा था। धरणेन्द्र ने इसे गान्धरपदा और पन्नगपदा दो विद्याएँ भी दी थी। धरणेन्द्र की देवी अदिति ने मनु, मानव, कौशिक, गौरिक, गान्धार, भूमितुण्ड, मूलवीर्यक और शकुक ये आठ तथा दूसरी दिति देवी ने—मातग, पाण्डुक, काल, स्वपाक, पर्वत, वशालय, पाशुमूल और वृक्षमूल ये आठ विद्या-निकाय दिये थे। इसने और इसके भाई नमि ने अनेक औषधियाँ तथा विद्याएँ विद्याधरो को दी थी जिन्हें प्राप्त कर विद्याधर विद्या-निकायो के नाम से प्रसिद्ध हो गये थे। वे गौरी विद्या से गौरिक, मनु से मनु, गान्धारी से गान्धार, मानवी से मानव, कौशिकी से कौशिक, भूमितुण्डक से भूमितुण्डक, मूलवीर्य से मूलवीर्यक, शकु से शकुक, पाण्डुकी से पाण्डुकेय, कालक से काल, श्वपाक से श्वपाकज, मातगी से मातग, पर्वत से पार्वतेय, वशालय से वशालयगण, पाशुमूल से पाशुमूलिक और वृक्षमूल से वार्क्षमूल कहे जाने लगे थे। इसके सजय, अरिंजय, शत्रुन्जय, धनजय, मणिचूल, हरिश्मश्रु, मेघानीक, प्रभजन, चूडामणि, शतानीक, सहस्रानीक, सर्वंजय, वज्रबाहु, महाबाहु, अरिंदम आदि अनेक पुत्र और भद्रा और सुभद्रा नाम की दो कन्याएँ थी। इनमें सुभद्रा चक्रवर्ती भरतेश के चौदह रत्नो में एक स्त्रीरत्न थी। अन्त में यह पुत्र को राज्य सौंपकर ससार से विरक्त हुआ और इसने दीक्षा ले ली थी। इसके मातग पुत्र से हुए अनेक पुत्र-पौत्र थे। वे भी अपनी-अपनी साधना के अनुसार स्वर्ग और मोक्ष गये। मपु० १८ ९१-९७, १९ १८२-१८५, ४३ ६५, पपु० ३ ३०६-३०९, हपु० ९ १३२-१३३, १२ ६८, २२ ५७-६०, ७६-८३, १०३-११०

विनयतप—आभ्यन्तर तप के छ भेदो मे एक भेद। मन, वचन और काय की शुद्धिपूर्वक दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप और वीर्य तथा इनके धारी योगियो के प्रति विनय करना विनय तप कहलाता है। हरिवश-पुराण में इसके चार भेद कहे है—१ ज्ञानविनय २ दर्शनविनय ३. चारित्रविनय ४ उपचारविनय। मपु० १८ ६९, २०.१९३, ५४. १३५ हपु० ६४ २९, ३८-४१, वीवच० ६ ४३

विनयचरी—विजयार्ध पर्वत पर स्थित दक्षिणश्रेणी की अट्ठाईसवी नगरी। मपु० १९ ४९, ५३

विनयदत्त—(१) एक मुनि। कीचक ने पूर्वभव में इन्ही मुनि को दिये गये आहारदान का माहात्म्य देखकर दीक्षा ली थी तथा मरकर स्वर्ग गया था। हपु० ४६ ५५

(२) एक श्रावक। राजा श्रीवर्धित को राजा सिंहेन्दु के नगर में आने की सूचना इसी ने दी थी। पपु० ८० १८४-१८५

विनयधर—लोहाचार्य के बाद हुए अग और पूर्वों के एक देश ज्ञाता चार मुनियो में प्रथम मुनि। श्रीदत्त, शिवदत्त और अर्हद्दत्त इनके पश्चात् हुए थे। वीवच० १ ५०-५२

विनयन्धर—(१) इनका अपर नाम विनयधर था। हपु० ६६ २५, वीवच० १ ५०-५२, दे० विनयधर

(२) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र में श्रीपुर नगर के राजा वसुन्धर का पुत्र। राजा वसुन्धर इसे राज्य सौंपकर सयमी हुए थे। मपु० ६९ ७४-७७

(३) एक मुनीन्द्र। ७५ ४१२

(४) प्रभाकरी नगरी के एक योगी। मपु० ७ ३४

विनयमिथ्यात्व—मिथ्यात्व के अज्ञान, सशय, एकान्त, विपरीत और विनय इन पाँच भेदों में पाँचवाँ भेद। मन, वचन और काय से सभी देवो को नमन करना, सभी पदार्थों को मोक्ष का उपाय मानना विनय मिथ्यात्व कहलाता है। मपु० ६२.२९७, ३०२

विनयवती—(१) सेठ वैश्रवणदत्त की स्त्री। विनयश्री की यह जननी थी। मपु० ७६ ४७-४८

(२) गोवर्धन नगर के श्रावक जिनदत्त की स्त्री। यह आर्यिका होकर तथा तप करते हुए मरकर स्वर्ग में देव हुई थी। पपु० २० १३७-१४३

विनयविलास—एक निर्ग्रन्थ मुनि। ये प्रभापुर नगर के राजा श्रीनन्दन और रानी धरणी के छठे पुत्र थे। सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान् इनके बडे भाई और जयमित्र छोटा भाई था। ये सातो भाई प्रीतिकर मुनिराज के केवलज्ञान के समय देवो का आगमन देखकर बोध को प्राप्त हुए। ये पिता के साथ धर्माराधन करने लगे थे। राजा श्रीनन्दन ने डमरमगल नामक एक मास के बालक को राज्य देकर अपने इन सातो पुत्रो के साथ प्रीतिकर मुनिराज से दीक्षा ली थी। इन्होने केवलज्ञान प्रकट किया और मोक्ष गये। ये सातो मुनि सप्तर्षि कहलाये। शत्रुघ्न ने इन सप्तर्षियो की प्रतिमाएँ मथुरा में स्थापित कराई थी। पपु० ९२ १-४२, ८१-८२

विनयश्री—(१) कृष्ण की पटरानी-गान्धारी के पाँचवें पूर्वभव का जीव। यह इस भव में कौशल देश की अयोध्या नगरी के राजा रुद्र की रानी थी। इसने सिद्धार्थवन में अपने पति के साथ बुद्धार्थ अपर नाम श्रीधर मुनि को आहार दिया था। इस दान के प्रभाव से यह उत्तर-कुरु में तीन पल्य की आयु धारिणी आर्या हुई थी। मपु० ७१ ४१६-४१८, हपु० ६० ८६-८८

(२) कृष्ण की आठवी पटरानी पद्मावती के आठवें पूर्वभव का जीव। यह भरतक्षेत्र के उज्जयिनी नगरी के राजा अपराजित और रानी विजया की पुत्री थी। इसका विवाह हस्तिनापुर के राजा हरिषेण से हुआ था। इसने पति के साथ वरदत्त मुनिराज को आहार दिया था। अत मरकर इस आहारदान के फलस्वरूप यह हैमवत क्षेत्र में एक पल्य की आयु लेकर आर्या हुई थी। मपु० ७१ ४४३-४४५ हपु० ६० १०४-१०७

(३) चम्पानगरी के सेठ वैश्रवणदत्त तथा उसकी स्त्री विनयवती की पुत्री। केवली जम्बूस्वामी की यह गृहस्थावस्था की स्त्री थी। मपु० ७६ ४७-५०

विनयसम्पन्नता—तीर्थंकर-प्रकृति के बन्ध की कारणभूत सोलह भावनाओ में दूसरी भावना। ज्ञान आदि गुणो और उनके धारको में कषाय-रहित परिणामो में आदरभाव रखना विनयसम्पन्नता-भावना कहलाती है। मपु० ६३ ३२१, हपु० ३४ १३३

विनया—सुराष्ट्र देश में अजाखुरी नगरी के राजा राष्ट्रवधन की रानी। नमुचि इसका पुत्र तथा सुसीमा पुत्री थी। हपु० ४४ २६-२७

विनिहात्र—जम्बूद्वीपस्थ भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में विध्याचल के ऊपर स्थित एक देश। भरतेश के छोटे भाई ने इसका परित्याग करके वृषभदेव से दीक्षा ली थी। हपु० ११ ७४-७६

विनीत—तीर्थङ्कर वृषभदेव के चवालीसवें गणधर। हपु० १२ ६८

विनीता—जम्बूद्वीपस्थ भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में कौशल देश की नगरी अयोध्या। प्रजा के विनयगुण के कारण यह इस नाम से विख्यात थी। इसका अपर नाम साकेत था। तीर्थङ्कर वृषभदेव, अनन्तनाथ, चक्रवर्ती भरतेश और सगर, आठवें बलभद्र और नारायण की यह जन्मभूमि है। यह नगरी नौ योजन चौडी तथा बारह योजन लम्बी है। मपु० १२ ७६-७८, ३४.१ पपु० २० ३६-३७, ५०, १२८-१२९, २१८-२२२, हपु० ९ ४२, ११ ५६, पापु० २ २४६, वीवच० २ ५९

विनेता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

विनेयचरी—विजयार्ध पर्वत पर दक्षिणश्रेणी की अट्ठाईसवी नगरी। मपु० १९ ४९, ५३

विनेयजनतावन्धु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५

विनोद—राजगृह नगर के वह्वाश और उसकी स्त्री उल्का का पुत्र। इसकी स्त्री समिधा के दुराचरण से यह मरा और मरकर शालवन में भैंसा हुआ। पपु० ८५ ६९-७८

विन्दु—सगीत सम्बन्धी सचारी पद के छ अलकारो में तीसरा अल-कार। पपु० २४ १७

विन्दुसार—हरिवशी राजा वप्रथु का पुत्र। यह देवगर्भ का पिता था। हपु० १८ १९-२०

विन्ध्य—(१) दूसरी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार में तरक इन्द्र बिल की दक्षिणदिशा में स्थित महाभयानक नरक। हपु० ४ १५३

(२) विध्याचल पर्वत। अभिचन्द्र राजा ने इसी पर्वत पर चेदि-राष्ट्र की स्थापना की थी। इस पर्वत के वन हाथी, सिंह और व्याघ्रो से युक्त थे। इसकी चोटियाँ ऊँची थी। विद्याधर यहाँ विद्याओ को सिद्ध करते थे। महर्षि विदुर का आश्रम इसी वन में था। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने इस प्रदेश को जीता था। मपु०

२९ ८८, ३०.६५-८३, हपु० १७ ३६, ४० २५-२६, ४५ ११६-११७, ४७ ८

(३) विन्ध्य पर्वत के अचल मे बसा हुआ देश। यहाँ के राजा को लवणांकुश ने पराजित किया था। पपु० १०१ ८३-८६

विन्ध्यकेतु—विन्ध्याचल के समीप स्थित विध्यपुरी का राजा। इसकी रानी प्रियगुश्री और पुत्री विंध्यश्री थी। विध्यध्वज इसका अपर नाम था। मपु० ४५ १५३-१५४, पापु० ३ १७१

विंध्यध्वज—विध्यपुरी का राजा। पापु० ३ १७१ दे० विंध्यकेतु

विंध्यपुर—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित गान्धार देश का एक नगर। मपु० ६३ ९९

(२) जम्बूद्वीप मे भरतक्षेत्र के मलय देश का एक नगर। इस नगर का राजा विंध्यशक्ति था। मपु० ५८ ६१-८५

विंध्यपुरी—विन्ध्याद्रि के निकट विद्यमान राजा विंध्यकेतु की एक नगरी। मपु० ४५ १५३, पापु० ३ १७१ दे० विन्ध्यकेतु

विन्ध्यशक्ति—प्रतिनारायण तारक के दूसरे पूर्वभव का जीव-जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित मलयदेश के विन्ध्यपुर नगर का राजा। इसने कनकपुर नगर के राजा सुषेण की नर्तकी गुणमजरी को पाने की राजा सुषेण से याचना की थी किन्तु याचना विफल होने पर इसे उससे युद्ध करना पडा था। युद्ध में इसने सुषेण को पराजित करके गुणमजरी प्राप्त की थी। मपु० ५८.६३-७८, ९०-९१

विन्ध्यश्री—विन्ध्यपुरी के राजा विन्ध्यकेतु और रानी प्रियगुश्री की पुत्री। वसन्ततिलका उद्यान मे इसे सर्प ने काट दिया था। सुलोचना ने इसे पच नमस्कार मत्र सुनाया था। मत्र के प्रभाव से यह मरणोपरान्त गगा देवी हुई। मपु० ४५ १५३-१५६

विन्ध्यसेन—(१) वसुन्धरपुर का राजा। इसकी रानी नर्मदा तथा पुत्री वसन्तसुन्दरी थी। हपु० ४५ ७०

(२) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र में गान्धार देश के विन्ध्यपुर नगर का राजा। इसकी रानी सुलक्षणा और पुत्र नलिनकेतु था। मपु० ६३ ९९-१००

(३) भरतक्षेत्र की कौशाम्बी नगरी का राजा। इसकी रानी विन्ध्यसेना और पुत्री वसन्तसेना थी। पापु० १३ ७३-७५

विन्ध्यसेना—कौशाम्बी नगरी के राजा विन्ध्यसेन की रानी। पापु० १३ ७३-७५ दे० विन्ध्यसेन–३

विपरीतमिथ्यात्व—मिथ्यात्व के पाँच भेदो में चौथा भेद। इससे ज्ञाता, ज्ञेय और ज्ञान का यथार्थ स्वरूप ज्ञात नही होकर विपरीत स्वरूप प्राप्त होता है। मपु० ६२ २९७, ३०१

विपलोदरी—दशानन को प्राप्त अनेक विद्याओ में एक विद्या। पपु० ७ ३२७

विपाकविचय—धर्मध्यान के चार भेदो में चौथा भेद। इसमें कर्मों के विपाक से उत्पन्न सासारिक विचित्रता का चिन्तन किया जाता है। शुभ और अशुभ कुछ कर्म ऐसे होते हैं जो स्थिति पूर्ण होने पर स्वय फल देते हैं और कुछ कर्म ऐसे भी होते हैं जो तपश्चरण आदि का निमित्त पाकर स्थिति पूर्ण होने के पूर्व फल देने लगते हैं। कर्मों के इस विपाक को जाननेवाले मुनि के द्वारा कर्मों को नष्ट करने के लिए किया गया चिन्तन विपाकविचय धर्मध्यान कहलाता है। मपु० २१.१३४, १४३-१४७

विपाकसूत्र—द्वादशागश्रुत का ग्यारहवाँ अग। इसमें ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों के विपाक का एक करोड चौरासी लाख पदो में वर्णन किया गया है। मपु० ३४ १४५, हपु० २.९४, १०.४४

विपाटिनी—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने अन्य अनेक विद्याओ के साथ इसे भी सिद्ध किया था। मपु० ६२ ३९४

विपापात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १३८

विपाप्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३८

विपुल—(१) आगामी पन्द्रहवें तीर्थङ्कर। मपु० ७६ ४७९, हपु० ६० ५६०

(२) नवें कुलकर। इनका अपर नाम यशस्वान् था। मपु० ३. १२५, पपु० ३ ८६ दे० यशस्वान्

(३) एक उद्यान। तीर्थंकर मुनिसुव्रत ने यहाँ दीक्षा ली थी। पपु० २१ ३६-३७ दे० मुनिसुव्रत

विपुलख्याति—तीर्थंकर सभवनाथ के पूर्वभव का नाम। पपु० २० १८

विपुलगिरि—तीर्थंकर महावीर की समवसरणभूमि। हपु० २ ६२

विपुलज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४०

विपुलमति—(१) मन पर्ययज्ञान के दो भेदो में दूसरा भेद। मपु० २ ६८, हपु० १० १५३

(२) ऋद्धिधारी मुनि विमलमति के सहयात्री मुनि। इन्ही मुनियो में राजा अमिततेज और राजा श्रीविजय ने अपनी आयु एक मास की शेष रह जाना ज्ञात कर मुनि नन्दन से प्रायोपगमन सन्यास धारण किया था। मपु० ६२ ४०७-४१०, पापु० ४ २४२-२४४

(३) चारणऋद्धिधारी एक मुनि। प्रियदत्ता ने इन्हें आहार दिया था। मपु० ४६ ७६

(४) चारणऋद्धिधारी मुनि ऋजुमति के सहयात्री मुनि। राजा प्रीतिंकर ने इन्ही से धर्म का स्वरूप और अपना पूर्वभव जाना था। मपु० ७६ ३५१

विपुलवाहन—(१) तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के पूर्वभव का नाम। पपु० २० १८

(२) तीर्थंकर कुन्थुनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २८

(३) मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में स्थित क्षेमपुरी नगरी का राजा। इसकी रानी पद्मावती तथा पुत्र श्रीचन्द्र था। पपु० १०६. ७५-७६

(४) सातवें कुलकर। बडे-बडे हाथियो को वाहन बनाकर उन पर अत्यधिक क्रीडा करने से इन्हें इस नाम से सबोधित किया गया था। इनके पिता कुलकर सीमन्धर थे। कुलकर चक्षुष्मान् इनका पुत्र था।

ये पल्य के करोड़वें भाग जीवित रहकर स्वर्ग गये थे। महापुराण में इन्हें विमलवाहन नाम दिया है। ये पद्म प्रमाण आयु के धारक थे। शरीर की ऊँचाई सात सौ धनुष थी। इन्होंने हाथी, घोड़ा आदि सवारी के योग्य पशुओं पर कुथार, अंकुश, पलान, तोबरा आदि का उपयोग कर सवारी करने का उपदेश दिया था। पपु० ३ ११६-११९, हपु० ७ १५५-१५७, पापु० २ १०६

विपुला—मिथिला के राजा वासवकेतु की रानी। यह जनक की जननी थी। पपु० २१ ५२-५४

विपुलाचल—राजगृह नगर की पाँच पहाड़ियों में तीसरी पहाड़ी। यह राजगृह नगर के दक्षिण-पश्चिम दिशा के मध्य में त्रिकोण आकृति में स्थित है। इन्द्र ने तीर्थंकर महावीर के प्रथम धर्मोपदेश के लिए यहाँ समवसरण रचा था। तीर्थंकर महावीर विहार करते हुए संघ सहित यहाँ आये थे। गौतम गणधर का तपोवन इसी पर्वत के चारों ओर था। जीवन्धर-स्वामी इसी पर्वत से कर्मों का नाश करके मोक्ष गये। इसका अपर नाम विपुलाद्रि है। मपु० १ १९६, २ १७, ७४ ३८५, ७५ ६८७, पपु० २ १०२-१०९, हपु० ३ ५४-५९, वीवच० १९ ८४ दे० राजगृह

विपृथु—पाण्डवों का पक्षधर एक कुमार। यह अनेक रथों से युक्त था। कौरवों का वध करना इसका लक्ष्य था। हपु० ५० १२६

विप्रयोवि—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बहत्तरवाँ पुत्र। पपु० ८ २०१

विभंग-विबोध—मिथ्या अवधिज्ञान। नारकियों को पर्याप्तक होते ही यह ज्ञान प्राप्त हो जाता है। यही कारण है कि वे पूर्वभव के वैर विरोध का स्मरण कर लेते हैं। उन्हें नरक के दुःख भोगने के कारण भी इससे याद आ जाते हैं। कमठ के जीव शम्बर असुर ने इसी ज्ञान से अपने पूर्वभव का वैर जाना था और उसने तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ पर अनेक उपसर्ग किये थे। मपु० १० १०३, ४६ २४९, ७३ १३७-१३८, वीवच० ३ १२०-१२८

विभगा—पूर्व और अपर विदेह की इस नाम से विख्यात बारह नदियाँ। उनके नाम हैं—ह्रदा, ह्रदवती, पंकवती, तप्तजला, मत्तजला, उन्मत्त-जला, क्षीरोदा, सीतोदा, स्रोतोऽन्तर्वाहिनी, गन्धमालिनी, फेनमालिनी और ऊर्मिमालिनी। मपु० ६३ २०५-२०७

विभय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विभव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८, १२४

विभावसु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११०

विभीषण—(१) पूर्व धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व मेरु सम्बन्धी पश्चिम विदेह में स्थित गन्धिला देश की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास और रानी जिनदत्ता का पुत्र। यह नारायण था। बलभद्र वीतमय इसके बड़े भाई थे। आयु का अन्त होने पर यह रत्नप्रभा पहली पृथिवी में, महापुराण के अनुसार दूसरी पृथिवी में उत्पन्न हुआ और वीतमय लान्तवेन्द्र हुआ। नरक में जाकर लान्तवेन्द्र ने इसे समझाया था। नरक से निकलकर यह जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत पर श्रीधर्म राजा और श्रीदत्ता रानी का श्रीदाम पुत्र, महापुराण के अनुसार जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा श्रीवर्मा और रानी सुसीमा के श्रीधर्मा नामक पुत्र होगा। मपु० ५९. २७७-२८३, हपु० २७ १११-११६

(२) पुष्करद्वीप के विदेहक्षेत्र में स्थित मंगलावती देश में रत्नसंचय नगर के राजा श्रीषेण का पुत्र। यह श्रीवर्मा का भाई था। यह नारायण था और इसका बड़ा भाई श्रीवर्मा बलभद्र था। मपु० ७ १३-१५

(३) एक राजा। इसकी रानी प्रियदत्ता तथा पुत्र वरदत्त था। मपु० १० १४९

(४) अलंकारपुर के राजा रत्नश्रवा और रानी केकसी का पुत्र। इसके दशानन और भानुकर्ण ये दो बड़े भाई तथा चन्द्रनखा बड़ी बहिन थी। इसने और इसके दोनों भाइयों ने एक लाख जपकर सर्वकामान्नदा नाम की आठ अक्षरोंवाली विद्या आधे ही दिनों में सिद्ध कर ली थी। इसे सिद्धार्थी, शत्रुदमनी, निर्व्याघाता और आकाशगामिनी चार विद्याएँ सहज ही प्राप्त हुई थीं। इसका विवाह दक्षिणश्रेणी में ज्योतिःप्रभ नगर के राजा विशुद्धकमल और रानी नन्दनमाला की पुत्री राजीवसरसी के साथ हुआ था। इन्द्र विद्याधर को जीतने में इसने रावण का सहयोग किया था। केवली अनन्तबल से हनुमान् के साथ इसने भी गृहस्थों के व्रत ग्रहण किये थे। सागर-बुद्धि निमित्तज्ञानी से राजा दशरथ को रावण की मृत्यु का कारण जानकर इसने राजा दशरथ और जनक को मारने का निश्चय किया था। यह रहस्य नारद से विदित होते ही दशरथ और जनक की कृत्रिम आकृतियाँ निर्मित कराई गयी थीं। उनके सिर काटकर प्रथम तो इसे हर्ष हुआ किन्तु वे कृत्रिम आकृतियाँ थीं यह विदित होने पर आश्चर्य करते हुए शान्ति के लिए इसने बड़े उत्सव के साथ दान-पूजादि कर्म किये थे। सीता-हरण करने पर इसने रावण की परस्त्री अभिलाषा को अनुचित तथा नरक का कारण बताया था। इसने सीता को लौटाने का उससे निवेदन भी किया था। इससे कुपित होकर रावण ने इसे असि-प्रहार से मारना चाहा और इसने भी अपने बचाव के लिए वज्रमय खम्भा उखाड़ लिया था। अन्त में यह लंका से निकलकर राम से जा मिला। इसने रावण से युद्ध भी किया। रावण के मरने पर शोक-वश इसने आत्मघात भी करना चाहा किन्तु राम ने समझाकर ऐसा नहीं करने दिया। राम ने इसे लंका का राज्य दिया। यह शासक बना और लंका में रहा। अन्त में यह राम के साथ दीक्षित हो गया। महापुराण में इसे जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के मेघकूट नगर के राजा पुलस्त्य और रानी मेघश्री का पुत्र बताया है। अणुमान् को रावण के पास राम का सन्देश कहने के लिए यही ले गया था। विद्याधरों के दुर्वचन कहने पर इसने उन्हें रोका था। रावण के राम को तृण तुल्य समझने

पर इसने उसकी यह अज्ञानता बताई थी। इसने रावण को उसके लिए हुए व्रत का स्मरण भी कराया था तथा सीता किसकी पुत्री है इस ओर भी ध्यान दिलाया था। इसने राम को सीता लौटा देने का बार-बार निवेदन किया था। इस पर रावण ने इसे अपने देश से निकाल दिया। अपना हित राम से जा मिलने में समझकर यह राम के समीप जा पहुँचा। रावण की विद्या सिद्धि का रहस्य इसी ने राम को बताया था। सीता का सिर कटा हुआ दिखाये जाने पर इसने राम को समझाकर इसे रावण की माया बताई थी। रावण के मारे जाने के पश्चात् राम और लक्ष्मण ने इसे ही लंका का राजा बनाया था और इससे राम को सीता से मिलाया था। अन्त में यह राम के साथ दीक्षित हुआ और देह त्याग करके अनुदिश विमान में देव हुआ। मपु० ६८ ११-१२, ४०६-४०७ ४३३-४३४ ४७३-५०१, ५१६-५२०, ६१३-६१६, ६३३-६३८, ७११, ७२१, पपु० ७ १३३, १६४-१६५, २२५, २६४, ३३४, ८ १५०-१५१, १० ४९, १५ १, २३, २५-२७, ५२-५८, ४६ १२३-१२६, ५५ ११-१३, ३१-३८, ७१-७३, ६२ ३०-३२, ७७.१-३, ८० ३२-३३, ६०, ८८.३८, ११७ ४५, ११९ ३९

विभु—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२, २५ १०२

(२) आदित्यवंशी राजा प्रभु का पुत्र। यह राजा अविध्वस का जनक था। पपु० ५ ६ हपु० १३ ११

विभूषाग—कल्पवृक्ष। ये तीसरे काल में पल्य का आठवा भाग समय शेष रह जाने तक सामर्थ्यवान् रहते हैं। तब तक इनसे विभिन्न प्रकार के आभूषण और प्रसाधन सामग्री प्राप्त होती रहती है। मपु० ३ ३९, वीवच० १८-९१-९२

विभ्रम—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७ ४७-४८

विभ्रान्त—घर्मा पृथिवी के अष्टम प्रस्तार का अष्टम इन्द्रक बिल। हपु० ४ ७७

विमर्दन—पाँचवी पृथिवी के प्रथम प्रस्तार के तम-इन्द्रक की दक्षिण दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४.१५६

विमल—(१) रुचकगिरि की दक्षिणदिशा का एक कूट। यशोधरादि-कुमारी-देवी यहाँ रहती हैं। हपु० ५.७०९

(२) समवसरण के तीसरे कूट के पूर्वी द्वार का एक नाम। हपु० ५७ ५७

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का उनचासवा नगर। हपु० २२-९०

(४) राजा समुद्र विजय का मन्त्री। हपु० ५० ४९

(५) रुचकगिरि की पूर्वदिशा का एक कूट, चित्रादेवी की निवास-भूमि। हपु० ५ ७१९

(६) सौधर्म युगल का दूसरा पटल। हपु० ६ ४४ दे० सौधर्म

(७) आगामी बाईसवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४८०, हपु० ६० ५६१

(८) वर्तमान काल के तेरहवें तीर्थंकर। मपु० २ १३१, हपु० १ १५ दे० विमलनाथ

(९) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में रम्य क्षेत्र का एक पर्वत। हपु० ६० ६६

(१०) क्षीरवर समुद्र का एक रक्षक देव। हपु० ५.६४२

(११) मघवा चक्रवर्ती के पूर्वभव के जीव राजा शशिप्रभ के दीक्षा-गुरू। पपु० २० १३१-१३३

(१२) सौमनस-पर्वत का एक कूट। हपु० ५ २२१

विमलकान्तार—असना-वन का एक पर्वत। इसी पर्वत पर विराजमान मुनि वरधर्म से सेठ भद्रमित्र ने धर्म का स्वरूप सुनकर बहुत सा धन दान में दिया था। मपु० ५९ १८८-१८९

विमलकीर्ति—तीर्थंकर सम्भवनाथ के पूर्वभव के जीव—जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में कच्छ देश के क्षेमपुर नगर के राजा विमलवाहन का पुत्र। इसका पिता इसे राज्य देकर दीक्षित हो गया था। मपु० ४९ २, ७

विमलचन्द्र—(१) उज्जयिनी नगरी का एक सेठ। इसकी सेठानी विमला और पुत्री मगी थी। मपु० ७१ २११, हपु० ३३ १०१-१०४

(२) रावण का एक धनुर्धारी योद्धा। पपु० ७३ १७१-१७२

विमलनाथ—अवसर्पिणी काल के चौथे दुःखमा-सुषमा काल में उत्पन्न शलाका पुरुष एवं वर्तमान के तेरहवें तीर्थंकर। दूसरे पूर्वभव में ये पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप में रम्यकावती देश के पद्मसेन नृप थे। तीर्थं-कर-प्रकृति का बन्ध कर सहस्रार स्वर्ग में इन्होंने इन्द्र पद प्राप्त किया था। ये सहस्रार स्वर्ग से चयकर भरतक्षेत्र के काम्पिल्य नगर में वृषभदेव के वंशज कृतवर्मा की रानी जयश्यामा के ज्येष्ठ कृष्ण दशमी की रात्रि के पिछले प्रहर में उत्तरा-भाद्रपद नक्षत्र के रहते हुए सोलह स्वप्नपूर्वक गर्भ में आय। माघ शुक्ल चतुर्थी के दिन अहिर्बुध योग में इनका जन्म हुआ। देवो ने इनका नाम विमलवाहन रखा। तीर्थंकर वासुपूज्य के तीर्थ के पश्चात् तीस सागर वर्ष का समय बीत जाने पर इनका जन्म हुआ। इनकी आयु साठ लाख वर्ष थी। शरीर साठ धनुष ऊँचा था। देह स्वर्ण के समान कान्तिमान् थी। पन्द्रह लाख वर्ष प्रमाण कुमार काल बीत जाने के बाद ये राजा बने। हेमन्त ऋतु में बर्फ की शोभा को तत्क्षण विलीन होते देखकर इन्हें वैराग्य हुआ। लौकान्तिक देवो ने आकर उनके वैराग्य की स्तुति की। अन्य देवो ने उनका दीक्षाकल्याणक मनाया। पश्चात् देवदत्ता नामक पालकी में बैठकर ये सहेतुक वन गये। वहाँ दो दिन के उपवास का नियम लेकर माघ शुक्ल चतुर्थी के सायकाल में ये एक हजार राजाओ के साथ दीक्षित हुए। दीक्षा लेते समय उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र था। दीक्षा लेते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान हो गया। ये पारणा के लिए नन्दनपुर आये वहाँ राजा कनकप्रभ ने आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। दीक्षित हुए तीन वर्ष बीत जाने के बाद दीक्षावन में दो दिन के उपवास का नियम लेकर जामुन वृक्ष के नीचे जैसे ही ये ध्यानारूढ हुए कि ध्यान के फल स्व-रूप माघ शुक्ल षष्ठी की सायवेला में दीक्षाग्रहण के नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान प्रकट हुआ। इनके संघ में पचपन गणधर, ग्यारह सौ पूर्व-

धारी मुनि, छत्तीस हजार पाँच सौ तीस शिक्षक मुनि, चार हजार आठ सौ अवधिज्ञानी मुनि, पाँच हजार पाँच सौ केवलज्ञानी मुनि, नौ हजार विक्रियाऋद्धिधारी मुनि, पाँच हजार पाँच सौ मन पर्यय-ज्ञानी मुनि और तीन हजार छ सौ वादी मुनि कुल अडसठ हजार मुनि तथा एक लाख तीन हजार आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक, चार लाख श्राविकाएँ, असख्यात देवी-देवता और सख्यात तिर्यंच थे। अन्त में ये सम्मेदशिखर आये। यहाँ इन्होंने एक माह का योग निरोध किया। आठ हजार छ· सौ मुनियों के साथ योग धारण करके आषाढ कृष्ण अष्टमी को उत्तराभाद्र पद नक्षत्र में प्रातः मोक्ष प्राप्त किया। मपु० ५९ २-५६, पपु० २० ६१, वीवच० १८ १०६

विमलपुर—एक नगर। वरसेन श्रीपाल को इसी नगर के बाहर बैठाकर उसे पानी लेने गया था और यहीं सुखावती ने श्रीपाल को कन्या बनाया था। मपु० ४७ १०८-११० दे० श्रीपाल

विमलप्रभ—(१) अनिन्दिता रानी का जीव इस नाम के विमान का एक देव। मपु० ६२ ३७६

(२) एक विमान। सत्यभामा का जीव इसी विमान में शुक्लप्रभा नाम की देवी हुआ था। मपु० ६२.३७६

(३) निर्ग्रन्थ मुनि। ये राजा कनकशान्ति के दीक्षागुरू थे। मपु० ६३ १२०-१२३ ७२ ४० दे० कनकशान्ति

(४) क्षीरवरसमुद्र का रक्षक एक देव। हपु० ५ ६४२

(५) लक्ष्मण और उनकी महादेवी जितपद्मा का पुत्र। पपु० ९४ २२,३३

विमलप्रभा—(१) तीर्थंकर श्रेयास की दीक्षा-शिविका। मपु० ५७ ४७-४८

(२) त्रिशृगपुर नगर के नृप प्रचण्डवाहन की रानी। इसकी गुणप्रभा आदि दस पुत्रियाँ थी। हपु० ४५ ९५-९८, पापु० १३ १०३ दे० गुणप्रभा

विमलमति—ऋद्धिधारी एक मुनि। मुनि विपुलमति इन्ही के साथ विहार करते थे। मपु० ६२ ४०७ दे० विपुलमति-२

विमलमती—एक गणनी। राजा कनकशान्ति की दोनों रानियाँ इन्ही से दीक्षित हुई थी। मपु० ६३ १२४

विमलमेघ—रावण का एक योद्धा। पपु० ७३ १७१

विमलवति—सुरम्य देश में पोदनपुर नगर के राजा विद्युद्राज की रानी। प्रसिद्ध विद्युच्चोर अपर नाम विद्युत्प्रभ की यह जननी थी। मपु० ७६.५३-५५ दे० विद्युद्राज

विमलवाह—विदेहक्षेत्र के एक मुनि। चक्रवर्ती अभयघोष के ये दीक्षागुरु थे। मपु० १० १५४-१५५

विमलवाहन—(१) सातवें मनु-कुलकर। मपु० ३ ११६-११९ दे० विपुलवाहन-४

(२) तीर्थंकर अजितनाथ के दूसरे पूर्वभव का जीव-पूर्वविदेह की सुसीमा नगरी का राजा। यह दीक्षा धारण कर और तीर्थंकर-प्रकृति का बन्ध कर समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके अनुत्तर विमान में देव हुआ। मपु० ४८ ३-४, ११-१३, २५-२७, पपु० २० १८-२४

(३) तीर्थङ्कर सुमतिनाथ के पूर्वभव का पिता। पपु० २० २५-३०

(४) आगामी ग्यारहवें चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८४, हपु० ६० ५६५

(५) विदेह के एक तीर्थङ्कर (मुनि)। ये जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा अर्हद्दास के दीक्षागुरु थे। ये दोनों गुरु-शिष्य गन्धमादन पर्वत से निर्वाण को प्राप्त हुए। मपु० ७० १२, १८, हपु० ३४ ३-१०, दे० अर्हद्दास-३

(६) एक मुनिराज। राजा मधु अपने छोटे भाई कैटभ के साथ इन्ही से दीक्षित हुआ था। मपु० ७२ ४३, हपु० ४३ २००-२०२, दे० मधु-६

(७) विदेहक्षेत्र के एक मुनि। इन्होंने तीर्थङ्कर अभिनन्दननाथ के दूसरे पूर्वभव के जीव रत्नसचय नगर के राजा महाबल को दीक्षा दी थी। मपु० ५० २-३, ११

(८) तेरहवें तीर्थङ्कर विमलनाथ का अपर नाम। मपु० ५९.२२

(९) अग देश की चम्पा नगरी के राजा श्वेतवाहन का पुत्र। यह उनका उत्तराधिकारी राजा हुआ। मपु० ७६ ७-९

(१०) तीर्थङ्कर सम्भवनाथ के दूसरे पूर्वभव का जीव-विदेहक्षेत्र में कच्छ देश के क्षेमपुर नगर का राजा। यह विमलकीर्ति को राज्य देकर स्वयप्रभ मुनि से दीक्षित हुआ। पश्चात् इसने तीर्थङ्कर-प्रकृति का बन्ध किया। अन्त में देह त्याग कर ग्रैवेयक के सुदर्शन विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ४९ २, ६-९

विमलश्री—(१) भरतक्षेत्र में जयन्त नगर के राजा श्रीधर और रानी श्रीमती की पुत्री। भद्रिलपुर के राजा मेघनाद की यह रानी थी। मेघघोष इसका पुत्र था। पति के मर जाने पर इसने पद्मावती आर्यिका के समीप दीक्षा लेकर आचाम्लवर्धन-तप किया था। अन्त में इस तप के प्रभाव से यह सहस्रार स्वर्ग के इन्द्र की प्रधान देवी हुई। मपु० ७१ ४५२-४५७, हपु० ६० ११७-१२० दे० पद्मावती-२

(२) मृणालवती नगरी के सेठ श्रीदत्त की वल्लभा। सती रतिवेगा की यह जननी थी। मपु० ४६ १०१-१०५

विमलसुन्दरी—छठे नारायण पुण्डरीक की पटरानी। पपु० २० २२७

विमलसेन—एक राजा। इसकी कमलावती पुत्री तथा वरसेन पुत्र था। मपु० ४७ ११४-११७ दे० वरसेन-२

विमलसेना—धान्यपुर नगर के राजा विशाल की पुत्री। निमित्तज्ञानियों के अनुसार इसका विवाह श्रीपाल से हुआ था। मपु० ४७ १३९, १४६-१४७

विमला—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में किन्नरोद्गीत नगर के राजा अर्चिमाली की पुत्रवधू और ज्वलनवेग विद्याधर की रानी। इसके पुत्र का नाम अगारक था। हपु० १९ ८०-८३

(२) उज्जयिनी के सेठ विमलचन्द्र की स्त्री। इसकी पुत्री मगी राजा वृषभध्वज के योद्धा दृढमुष्टि के पुत्र वज्रमुष्टि से विवाही गयी थी। मपु० ७१ २०९-२११, हपु० ३३.१०३-१०४

(३) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ की दीक्षा-शिविका। मपु० ५४ २१५-२१६

(४) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में शिवमन्दिर नगर के राजा मेघवाहन की रानी। इसकी पुत्री कनकमाला थी। मपु० ६३ ११६-११७

(५) सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र की इन्द्राणी। यह स्वर्ग से चयकर साकेत नगर के राजा श्रीषेण की पुत्री हरिषेणा हुई थी। मपु० ७२ २५१

(६) तीर्थंकर पार्श्वनाथ की दीक्षा-शिविका। पार्श्वनाथ इसी में बैठकर अश्ववन गये थे। मपु० ७३ १२७-१२८

(७) राजपुर नगर के सेठ सागरदत्त और सेठानी कमला की पुत्री। निमित्तज्ञानी के कहे अनुसार इसका विवाह जीवन्धर-कुमार के साथ हुआ था। जीवन्धर के दीक्षा ले लेने पर इसने भी चन्दना-आर्यिका से सयम धारण कर लिया था। मपु० ७५.५८४-५८७, ६७९-६८४

(८) राजपुर नगर के ही सेठ कुमारदत्त की स्त्री। यह गुणमाला की जननी थी। मपु० ७५ ३५१ दे० गुणमाला

(९) नभस्तिलक नगर के राजा चन्द्रकुण्डल की रानी। यह मार्तण्ड-कुण्डल की जननी थी। पपु० ६ ३८४-३८५

(१०) सिद्धार्थनगर के राजा क्षेमकर की महारानी। देशभूषण और कुलभूषण इसके पुत्र थे। पपु० ३९ १५८-१५९

विमलाभा—लका के राजा महारक्ष विद्याधर की रानी। अमररक्ष, उदधिरक्ष और भानुरक्ष ये तीनो इसके पुत्र थे। पपु० ५ २४३-२४४

विमान—(१) तीर्थंकर के गर्भावतरण के समय उनकी माता द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नो में तेरहवाँ स्वप्न। पपु० २१ १२-१५

(२) देवो के प्रासाद। इनके तीन भेद होते हैं। वे हैं—इन्द्रक विमान, श्रेणीबद्ध विमान और प्रकीर्णक विमान। हपु० ६.४२-४३, ६६-६७, ७७, १०१

(३) आकाशगामी वाहन। इसका उपयोग देव और विद्याधर करते हैं। मपु० १३ २१४

विमानपंक्ति—एक व्रत। इसमें त्रेसठ इन्द्रक विमानो की चारो दिशाओ में विद्यमान श्रेणीबद्ध विमानो की अपेक्षा चार उपवास और चार पारणाएँ तथा प्रत्येक इन्द्रक की अपेक्षा एक बेला और एक पारणा करने के पश्चात् एक तेला किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रक के चार-चार उपवास करने से दो सौ बावन उपवास तथा प्रत्येक इन्द्रक का एक वेला करने से त्रेसठ वेला और अन्त में एक तेला किया जाने का विधान होने से कुल तीन सौ सोलह उपवास और इतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। यह व्रत पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा के क्रम से होता है। चारो दिशाओ के चार उपवास के पश्चात् वेला किया जाता है और त्रेसठ वेला करने के बाद एक तेला करने का विधान है। ऐसा व्रती विमानो का स्वामी होता है। हपु० ३४ ८६-८७

विमानपंक्तिवैराज्य—एक व्रत। इस व्रत का धारी मार्गशीर्ष सुदी चतुर्थी के दिन वेला करता है। व्रती को इस व्रत के फलस्वरूप विमानो की पंक्ति का राज्य प्राप्त होता है। हपु० ३४.१२९

विमुक्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८६

विमुखी—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की सैंतालीसवी नगरी। मपु० १९ ५२-५३

विमुचि—दारू ग्राम का एक ब्राह्मण। इसकी अनुकोशा भार्या तथा अतिभूति पुत्र था। मुनि होकर इसने धर्मध्यान पूर्वक मरण किया और यह ब्रह्म स्वर्ग में देव हुआ था। पपु० ३० ११६, १२२-१२५

विमोच—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का पन्द्रहवाँ नगर। मपु० १९ ४३, ५३

वियोग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५

वियोनिक—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३२

विरजस्का—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की इक्कीसवी नगरी। मपु० १९ ४५, ५३

विरजा—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११२

(२) विदेह के नलिन देश की राजधानी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २६१-२६२

विरत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विरति—चित्त को कलुषित करनेवाले राग आदि के नष्ट होने से उत्पन्न निस्पृहता। मपु० २४.६३

विरलवेगिका—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने अनेक विद्याओ मे यह विद्या भी सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९६

विरस—(१) अवसर्पिणी काल के अन्त में सरस मेघो के बरसने के बाद सात दिन तक वर्षा करनेवाले मेघ। मपु० ७६ ४५२-४५३

(२) एक नृप। यह भरतेश के साथ दीक्षित होकर अन्त मे परम पद को प्राप्त हुआ था। पपु० ८८ १-४

विराग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विरागविचय—धर्मध्यान का छठा भेद। शरीर अपवित्र है और भोग किंपाक फल के समान मनोहर हैं अतः इनसे विरक्त रहना ही श्रेयस्कर है ऐसा चिन्तन करना विरागविचय धर्मध्यान है। हपु० ५६ ४६

विराजी—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का छियासीवाँ पुत्र। पापु० ८ २०३

विराट—(१) एक देश। महावीर यहाँ विहार करते हुए आये थे। पापु० १ १३४, १७.२४६

(२) एक नगर। राजा विराट यहाँ के राजा थे। मपु० ७२ २१६, हपु० ४६ २३, पापु० १७ २३०

(३) विराट नगर का राजा। पाण्डव छद्मवेश में इसी राजा के पास उनके सेवक बनकर बारह मास पर्यन्त रहे थे। इसका गोकुल

विख्यात था। राजा जालन्धर ने इसकी गायों का हरण किया था। फलस्वरूप इसने जालन्धर से युद्ध किया और युद्ध में यह पकड़ा गया था। युधिष्ठिर के कहने पर भीम ने तो इसे मुक्त कराया और अर्जुन ने इसकी गायें मुक्त कराई थी। इस सहयोग से कृतार्थ होकर इसने अपनी पुत्री उत्तरा अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के साथ विवाही थी। मपु० ७२ २१६, हपु० ४६ २३, पापु० १७ २४१-२४४, १८ २८-३१, ४०-४१, १६३-१६४

विराधित—एक विद्याधर। यह राजा चन्द्रोदर और रानी अनुराधा का पुत्र था। इसके पिता अलकारपुर नगर के नृप थे। खरदूषण ने उन्हें नगर से निकाल दिया था। गर्भावस्था में ही इसकी माँ अनुराधा वन-वन भटकती रही। उसने मणिकान्त पर्वत की एक समशिला पर इसे जन्म दिया था। गर्भ में ही शत्रु द्वारा विराधित किये जाने से इसका "विराधित" नाम प्रसिद्ध हुआ। यह राम का योद्धा था। इसने रावण के पक्ष के विघ्न नामक योद्धा के साथ युद्ध किया था। लका विजय के बाद राम ने इसे श्रीपुर नगर का राजा बनाया था। राम के दीक्षित होने पर विभीषण, सुग्रीव, नल, नील, चन्द्रनख और क्रव्य के साथ इसने भी दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० ९.३७-४४, ५८ १५-१७, ६२.३६, ८८ ३९, ११९ ३९

विराम—उक्तिकौशल कला की-स्थान, स्वर, सस्कार, विन्यास, काकु, समुदाय, विराम, सामान्याभिहित, समानार्थत्व और भाषा इन दस जातियो में चौथी जाति। किसी विषय का सक्षेप में उल्लेख करना विराम कहलाता है। पपु० २४ २७-२८, ३२

विरुद्धराज्यातिक्रम—अचौर्याणुव्रत का तीसरा अतीचार। अपने राज्य की आज्ञा को न मानकर राज्य विरुद्ध क्रय-विक्रय करना। हपु० ५८ १७१

विलम्बित—गाते समय व्यवहृत द्रुत, मध्य और विलम्बित इन तीन वृत्तियो में से एक वृत्ति। पपु० १७ २७८, २४९

विलापन—पाँच फणवाला बाण। यह बाण नागराज ने प्रद्युम्न को दिया था। मपु० ७२ ११८-११९

विलीनत्व—ससारी जीव का एक गुण। एक शरीर से दूसरे शरीर में सक्रमण करना विलीनता कहलाती है। मपु० ४२ ९१

विलीनाशेषकल्मष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५

विवर्द्धन—चक्रवर्ती भरतेश के चरमशरीरी तथा आज्ञाकारी पाँच सौ पुत्रो में दूसरा पुत्र। अर्ककीर्ति इसका बड़ा भाई था। किसी समय चक्रवर्ती के साथ इस सहित नौ सौ तेईस राजकुमार वृषभदेव के समवसरण में गये। इन्होंने तीर्थङ्कर के कभी दर्शन नहीं किये थे। ये अनादि से मिथ्यादृष्टि थे। तीर्थङ्कर वृषभदेव की विभूति देखकर अन्तर्मुहूर्त में ही ये सम्यग्दृष्टि होकर सयमी हो गये थे। हपु० ११ १३०, १२. ३-५

विवादी—स्वर प्रयोग के वादी, सवादी, विवादी और अनुवादी चार भेदों में तीसरा भेद। हपु० १९ १५४

विवाह—एक सस्कार। यह गृहस्थो का एक सामाजिक कार्य है। विवाह न करने से सन्तति का उच्छेद हो जाता है तथा सन्तति के उच्छेद से सामाजिक विशृंखलता और उसके फलस्वरूप वश-विच्छेद हो जाता है। वर या वधू में आवश्यक गुण माने गये थे—कुल, शील और सौन्दर्य। यह उत्सव सहित सम्पन्न किया जाता है। इस समय दान-सम्मान आदि क्रियाएँ की जाती हैं। दहेज भी यथाशक्ति दिया जाता है। शुभ दिन और शुभ लग्न मे एक सुसज्जित मण्डप में बैठाकर वर-वधू का पवित्र जल से अभिषेक कराया जाता और उन्हें वस्त्र तथा आभूषण पहनाये जाते हैं। ललाट पर चन्दन लगाया जाता है। वेदी-दीपक और मगल द्रव्यो से युक्त होती है। वर और कन्या को वहाँ बैठाकर वर के हाथ पर कन्या का हाथ रखा जाता है और जलधारा छोड़ी जाती है। इसके पश्चात् अग्नि की सात प्रदक्षिणाएँ देने के अनन्तर यह गुरुजनों की साक्षी मे होता है। यह गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ में सत्रहवी क्रिया है। मपु० ७ २२१-२५६, ८ ३५-३६, १० १४३, १५ ६२-६४, ६८-६९, ७५, १६ २४७, ३८ ५७, १२७-१३४, ३९ ५९-६०, ७२ २२७-२३०, हपु० ३३ २९

विवाहकल्याणक—विवाह का उत्सव। इस समय विवाह-मण्डप बनाया जाता है और उसे सजाया जाता है। वर और वधू अलकृत किये जाते हैं। दान, मान और सम्भाषण से आगन्तुको का सम्मान किया जाता है। इस उत्सव को सूचित करने के लिए मगल भेरी बजाई जाती है। परिणय गुरुजनो, बन्धुओ और मित्रो की साक्षी में होता है। मपु० ७ २१०, २२२-२२३, २३८-२९०, १५.६८-७५

विविक्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विविक्त-शय्यासन—छ बाह्य तपों में पाँचवाँ तप। व्रत की शुद्धि के लिए पशु तथा स्त्री आदि से रहित एकान्त प्रासुक स्थान में ध्यान तथा स्वाध्याय आदि करना विविक्तशय्यासन-तप कहलाता है। मपु० १८ ६८, पपु० १४ ११४, हपु० ६४ २५, वीवच० ६ ३६

विवियोग—विविध योनियो में जीव का परिभ्रमण करना। मपु० ४२ ९२

विवेक—प्रायश्चित्त के नौ भेदो में चौथा भेद। इसमें अन्न-पान का विभाग किया जाता है। इसके लिए दोषी मुनि को निर्दोष मुनियो के साथ चर्या के लिए जाने की अनुमति नही दी जाती। उसे पीछी-कमण्डलु पृथक् रखने के लिए कहा जाता है। अन्य मुनियों के आहार के पश्चात् ही आहार की अनुमति दी जाती है। हपु० ६४ ३५ दे० प्रायश्चित्त

विवेकी—देव, शास्त्र, गुरु और धर्म का निर्दोष विचार करनेवाला पुरुष। वीवच० ८ ३६

विवेद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४६

विशल्य—दुर्योधन की सेना का एक योद्धा। पापु० १७ ९०

विशल्यकरण—एक विद्यास्त्र। चण्डवेग ने यह अस्त्र वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४९

विशल्यकारिणी—धरणेन्द्र द्वारा विद्याधर नमि और विनमि को दी गयी विद्याओ में एक विद्या। हपु० २२ ७१

विशल्या—राजा द्रोणमेघ की पुत्री। इसके गर्भ में आते ही इसकी माँ के रोग दूर हो गये थे। लक्ष्मण के पास इसके पहुँचते ही उसकी लगी हुई शक्ति वक्ष स्थल से शीघ्र बाहर निकल गयी थी। इससे प्रभावित होकर लक्ष्मण ने युद्ध क्षेत्र में ही इससे विवाह कर लिया था। लका-विजय के पश्चात् अयोध्या आने पर लक्ष्मण ने इसे पटरानी बनाया था। श्रीधर इसी का पुत्र था। पूर्वभव में यह विदेहक्षेत्र के पुण्डरीक देश में चक्रधर-नगर के राजा त्रिभुवनानन्द-चक्रवर्ती की पुत्री अनगशरा थी। इसने मरणकाल में सल्लेखना धारण की थी। अजगर द्वारा खाये जाने पर भी दया-भाव से अजगर को थोडी भी पीडा नही होने दी थी। फलस्वरूप यह मरकर ईशान स्वर्ग में उत्पन्न हुई। वहाँ से चयकर इसने विशल्या के रूप में जन्म लिया। अनगशरा की पर्याय में किये गये महा-तप के प्रभाव से इसका स्नानजल महागुणो से युक्त हो गया था। पपु० ६४ ४३-४४, ५०-५१, ९१-९२, ९६-९८, ६५ ३७-३८, ८०, ९४.१८-२३, ३०

विशाख—(१) ग्यारह अग और दशपूर्व के ज्ञाता ग्यारह मुनियो में प्रथम मुनि। मपु० २ १४३-१४५, हपु० १ ६२, पापु० १ १३, वीवच० १ ४५-४७

(२) तीर्थङ्कर मल्लिनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ६६ ५०

(३) साकेत का नृप। इसने अनन्तनाथ तीर्थंकर को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६०.३३-३४

विशाखगणी—तीर्थङ्कर मुनिसुव्रतनाथ के प्रथम गणधर। हपु० १६ ६८

विशाखनन्द—भरतक्षेत्र के मगधदेश में राजगृह नगर के राजा विश्वभूति के अनुज विशाखभूति का पुत्र। इसकी माँ लक्ष्मणा थी। वीवच० ३ ६-९ दे० विशाखनन्दी

विशाखनन्दी—प्रतिनारायण अश्वग्रीव के तीसरे पूर्वभव का जीव राजगृह नगर के राजा विश्वभूति के अनुज और उसकी पत्नी लक्ष्मणा का पुत्र। इसने नन्दनवन की प्राप्ति के लिए अपने ताऊ विश्वभूति के पुत्र विश्वनन्दी से युद्ध किया था। युद्ध में इसे युद्धक्षेत्र से भागते हुए देखकर विश्वनन्दी को वैराग्य उत्पन्न हुआ और वह विशाखभूति के साथ सभूत-गुरु के पास दीक्षित हो गया। दैवयोग से विहार करते हुए मुनि विश्वनन्दी मथुरा आये। किसी गाय के धक्के से गिर जाने पर इसने क्रोधपूर्वक उनका उपहास किया। इस पर विश्वनन्दी ने निदानपूर्वक मरण किया और वे महाशुक्र स्वर्ग में देव हुए। वहाँ से चयकर प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ हुए। यह मुनि के उपहास करने से अनेक योनियो में भ्रमण करने के बाद अलका नगरी के राजा मयूरग्रीव का अश्वग्रीव नामक प्रतिनारायण हुआ। इसका दूसरा नाम विशाखनन्द था। मपु० ५७ ७०-८८, वीवच० ३ ६-७० दे० अश्वग्रीव

विशाखभूति—मगध देश में राजगृह नगर के राजा विश्वभूति का छोटा भाई। इसकी पत्नी लक्ष्मणा और पुत्र विशाखनन्दी था। विश्वनन्दी इसके भाई का पुत्र था। इसने छलपूर्वक विश्वनन्दी का उद्यान अपने पुत्र विशाखनन्दी को दिया था। अन्त में अपने कुकृत्य पर पश्चाताप करते हुए इसने दीक्षा ले ली और घोर तप करके सन्यासपूर्वक मरण किया। मरकर यह महाशुक्र स्वर्ग में महर्द्धिक देव हुआ। स्वर्ग से चयकर यह पोदनपुर नगर में राजा प्रजापति और रानी जयावती का विजय नामक पुत्र (प्रथम बलभद्र) हुआ। मपु० ५७ ७३, ७८, ८२, ८६, वीवच० ३ ६-९, १९-२६, ४२-४५, ६१-६२

विशाखा—एक नक्षत्र। तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ और तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ इसी नक्षत्र में जन्मे थे। पपु० २० ४३, ५९

विशारद—कुण्डलपुर के राजा सिंहरथ के पुरोहित सुरगुरु का शिष्य। यह अमोघजिह्व का गुरु था। पापु० ४ १०३-११२

विशाल—(१) धान्यपुर नगर का राजा। विमलसेना इसकी पुत्री थी। मपु० ४७ १४६-१४७ दे० विमलसेना

(२) एक राजकुमार। यह सीता स्वयवर में सम्मिलित हुआ था। पपु० २८ २०६-२१५

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १४०

विशालद्युति—राम के पक्ष का वानरवशी एक नृप। राम-रावण युद्ध में इसे रावण पक्ष के योद्धा शम्भु ने मार गिराया था। पपु० ६०. १४, १९

विशालपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मन्त्रियो के साथ रावण की सहायतार्थ उसके समीप आया था। मपु० ५५. ८७-८८

विशाला—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९.६१

(२) अवन्ति देश की नगरी-उज्जयिनी। मपु० ७१ २०८

(३) सिन्धु नदी के तट-वासी तपस्वी मृगायण की स्त्री। यह गौतम की जननी थी। मपु० ७० १४२

विशालाक्ष—(१) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का तिरेसठवाँ पुत्र। पापु० ८ २००

(२) कुण्डलगिरि के उत्तरदिशावर्ती स्फटिकप्रभकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६९४

विशिखाचार्य—एक धनुर्विद्या के आचार्य। इन्होने कौशाम्बी नगरी के राजा कौशावत्स के पुत्र इन्द्रदत्त को धनुर्विद्या का अभ्यास कराया था। इन्हें अचल ने पराजित किया था। पपु० ९१ २९-३२

विशिष्ट—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७२

विशुद्धकमल—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में स्थित ज्योतिप्रभ नगर का राजा। इसकी रानी नन्दनमाला तथा पुत्री राजीवसरसी थी। विभीषण इसका जामाता था। यह दैत्यराज मय का महामित्र था। पपु० ८ १५०-१५२

विशुद्धयंग—आजीविका के षट्कर्मों में हुई हिंसा की विशुद्धि के तीन अग-पक्ष, चर्या और साधन। इनमें मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्य-स्थभाव से समस्त हिंसा का त्याग करना पक्ष है। किसी देवी-देवता के लिए, मन्त्र की सिद्धि के लिए, औषधि और आहार के लिए हिंसा

नहीं करना चर्या तथा आयु के अन्त में शरीर का आहार और समस्त चेष्टाओं का परित्याग करके ध्यान की शुद्धि से आत्मा को शुद्ध करना साधन कहलाता है। मपु० ३९ १४३-१४९

विशोक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

विशोका—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी की चौबीसवीं नगरी। मपु० १९ ८१, ८७

विश्रवस—यक्षपुर का एक धनिक। कौतुकमंगल नगर के विद्याधर राजा व्योमबिन्दु और रानी नन्दवती की बड़ी पुत्री कौशिकी का पति। वैश्रवण इसका पुत्र था। पपु० ७ १२६-१२८

विश्रुत—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

(२) समवसरण के तीसरे कोट के पूर्व द्वार का एक नाम। हपु० ५७ ५७

विश्व—कुरुवंशी एक राजा। यह राजा वरकुमार का उत्तराधिकारी था। इसके पश्चात् राजा वैश्वानर हुआ था। हपु० ४५ १७

विश्वकर्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

विश्वकीर्ति—एक मुनि। धृतराष्ट्र के छोटे भाई विदुर ने इन्हीं मुनि से मुनि-धर्म श्रवणकर मुनिदीक्षा ग्रहण की थी। पापु० १९ ६-७

विश्वकेतु—कुरुवंशी एक राजा। इसे राज्य-शासन राजा वैश्वानर से प्राप्त हुआ था। हपु० ४५ १७

विश्वक्सेन—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में जम्बुपुर नगर के राजा जाम्बव-विद्याधर और रानी-शिवचन्द्रा का पुत्र। जाम्बवती इसकी बहिन थी जिसका कृष्ण के द्वारा हरण किये जाने पर इसके पिता ने अनावृष्टि-योद्धा का सामना किया। युद्ध में पकड़े जाने पर उत्पन्न वैराग्यवश वह इसको कृष्ण के आधीन कर तप के लिए वन चला गया था। कृष्ण सम्मान पूर्वक इसे द्वारिका लाये थे। हपु० ४४ ४-१६

विश्वजित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

विश्वतपाद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

विश्वतश्चक्षु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०१

विश्वतोऽक्षि—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२

विश्वतोमुख—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ १०२

विश्वदर्शी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.८१

विश्वदृक्—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२, २५ १०३

विश्वदृश्वा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

विश्वदेव—धातकीखण्ड द्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर का राजा। इसकी रानी अनुन्दरी थी। यह अयोध्या के राजा पद्मसेन द्वारा मारा गया था। इसका अपर नाम विश्वसेन था। मपु० ७१ ३८६-३९७, हपु० ६० ५८-५९

विश्वधुक्—समवसरण के तीसरे कोट के पूर्वी द्वार का एक नाम। हपु० ५७ ५७

विश्वनन्दी—प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के मगध देश में स्थित राजगृह-नगर के राजा विश्वभूति और रानी जैनी का पुत्र था। इसके चचेरे भाई विशाखनन्दी ने छलपूर्वक इसका नन्दन उद्यान ले लिया था। अतः इसने विशाखनन्द से युद्ध किया। युद्ध से विशाखनन्दी के भाग जाने पर इसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। यह विशाखभूति के साथ सम्भूत गुरु के समीप दीक्षित होकर विहार करते हुए मथुरा आया। वहाँ किसी गाय के मारने से गिर गया। इस पर चचेरे भाई विशाखनन्दी ने उपहास किया। यह निदानपूर्वक मरकर महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ हुआ। यही आगे तीर्थङ्कर महावीर हुआ। मपु० ५७ ७०-८५, ७६ ५३८, पपु० २० २०६-२०९, वीवच० ३ ६१-६३, दे० महावीर

विश्वनायक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वप्रवेशिनी—कुल और जाति में उत्पन्न विद्या। यह विद्याधरों के पास होती है। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३८७-३९१

विश्वभाववित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

विश्वभुक्—भरतेश एवं सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२, २५ १२३

विश्वभू—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १००

(२) राजा सगर चक्रवर्ती का मन्त्री। इसने षड्यन्त्र रचकर अपने स्वामी सगर का सुलसा से विवाह कराया था। इसका अपर नाम विश्वभूति था। मपु० ६७ २१४-४५५, हपु० २३,५६, दे० मधुपिंगल

विश्वभूति—(१) सगर चक्रवर्ती का पुरोहित। सगर के कहने पर इसने मनुष्यों के लक्षणों को बतानेवाला एक सामुद्रिक-शास्त्र बनाया था। इसी शास्त्र की रचना से सगर सुलसा को स्वयंवर में प्राप्त कर सका था। इसका अपर नाम विश्वभू था। हपु० २३ ५६, १०८-११०, १२५

(२) मगधदेश के राजगृह नगर का राजा। इसकी रानी जैनी और पुत्र विश्वनन्दि था। यह शरद् ऋतु के मेघों का विनाश

देखकर भोगों से विरक्त हो गया। फलस्वरूप इसने अपने छोटे भाई विशाखभूति को राजा तथा पुत्र विश्वनन्दी को युवराज बनाया। अन्त में इसने तीन राजाओं के साथ श्रीधर मुनि के पास मुनिदीक्षा ले ली। मपु० ७४ ८६-९१, ५७ ७०-७४, वीवच० ३.१०-१७

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित पोदनपुर नगर का एक ब्राह्मण। अनुन्धरी इसकी पत्नी तथा कमल और मरुभूति पुत्र थे। मपु० ७३ ६-९

विश्वभूतेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

विश्वमुट्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०३

विश्वयोनि—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२, २५ १०१

विश्वराट्—भरतेश द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२

विश्वरीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०४

विश्वरूप—समुद्रविजय के भाई राजा धरण का पाँचवाँ पुत्र। हपु० ४८ ५०

विश्वरूपात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वलोकेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

विश्वलोचन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

विश्वविद्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०१

विश्वविद्यामहेश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२१

विश्वविद्येश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०१

विश्वव्यापी—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३२, २५ १०२

विश्वशीर्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

विश्वसृट्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वसेन—(१) हस्तिनापुर के राजा अजितसेन तथा रानी प्रियदर्शना का पुत्र। गान्धार-नगर के राजा अजितजय और रानी अजिता की पुत्री ऐरा इसकी रानी थी। तीर्थङ्कर शान्तिनाथ इसके पुत्र थे। इसकी दूसरी रानी का नाम यशस्वती था। चक्रायुध इसी रानी का पुत्र था। मपु० ६३ ३८२-३८५, ४०६, ४१४, पपु० २० ५२, हपु० ४५ १७-१८, पापु० ५.१०२-१०३, ११०, ११४-११५, २० ५

(२) वाराणसी नगरी का राजा। ब्राह्मी इसकी रानी और तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ पुत्र थे। मपु० ७३.७४-९२

(३) धातकीखण्ड द्वीप के विदेहक्षेत्र में मंगलावती देश के रत्नसंचय नगर का राजा। इसकी रानी अनुन्दरी थी। यह युद्ध में अयोध्या के राजा पद्मसेन द्वारा मार डाला गया था। इसका अपर नाम विश्वदेव था। हपु० ६० ५८-५९ दे० विश्वदेव

(४) कुन्ती पुत्र कर्ण का पुत्र। यह महाभारत युद्ध में पाण्डवों द्वारा मारा गया था। पापु० २० २५४

(५) एक कौरववंशी राजा। हपु० ४५ १७-१८

विश्वांक—नागनगर का एक ब्राह्मण। इसकी अग्निकुण्डा स्त्री तथा श्रुतिरत पुत्र था। पपु० ८५ ४९-५१

विश्वा—शामिली-नगरी के ब्राह्मण वसुदेव की स्त्री। इस दम्पत्ति ने मुनि श्रीतिलक को आहार दिया था। दोनों मरकर इस आहार-दान के प्रभाव से भोगभूमि मे उत्पन्न हुए। पपु० १०८ ३९-४२

विश्वात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१०१

विश्वानल—(१) कौशाम्बी नगरी का राजा। यह ब्राह्मण था। इसकी स्त्री प्रतिसंध्या और पुत्र रौद्रभूति था। पपु० ३४ ७७-७८ प्रतिसंध्या

(२) चौथा रुद्र। हपु० ६० ५३४-५३६ दे० रुद्र

विश्वावसु—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे धवल-देश की स्वस्तिकावती-नगरी का राजा। श्रीमती इसकी रानी और वसु इसका पुत्र था। यह पुत्र वसु को राज्य देकर दीक्षित हुआ और तप करने लगा था। मपु० ६७ २५६-२५७, २७५

(२) राजा वसु का पुत्र। हपु० १७ ५९

(३) देवों का एक भेद। इस जाति के देव जिनाभिषेक के समय स्तुति करते हैं। पपु० ३ १७९-१८० हपु० ८ १५८

विश्वासी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२३

विश्वेट्—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ १२३

विश्वेश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

विष—एक प्रकार के मेघ। अवसर्पिणी काल के अन्त में सरस, विरस, तीक्ष्ण, रूक्ष, उष्ण और विष नाम के मेघ क्रमशः सात-सात दिन तक खारे पानी की बरसा करते हैं। मपु० ७६ ४५२-४५३

विषद—उग्रसेन के चाचा राजा शान्तन का पुत्र। हपु० ४८.४०

विषमोचिका—चक्रवर्ती भरतेश की पादुकाएँ। मपु० ३७ १५८, पपु० ८३ १२, पापु० ७ १९

विषय—(१) देश। मपु० ६२ ३६३, हपु० २ १४९

(२) इन्द्रिय-भोगोपभोग। ये स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण और स्वर के भेद से पाँच प्रकार के होते हैं। इनमें स्पर्श के आठ, रस के छ, गन्ध के दो, वर्ण के पाँच और स्वर के सात भेद कहे हैं। इस प्रकार स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र इन पाँचों इन्द्रियों के कुल अट्ठाईस विषय होते हैं। इनके इष्ट और अनिष्ट की अपेक्षा से प्रत्येक के दो-दो भेद होते हैं। अतः भेद-प्रभेदों को मिलाकर ये छप्पन होते हैं। ये विषय आरम्भ में सुखद और परिणाम में दुखद होते हैं। इनका सेवन संसार-भ्रमण का कारण है। मपु० ४ १४९,

५ १२५-१३०, ८ ७५, ११ १७१-१७४, ७५ ६२०-६२४, पपु० ५ २३०, २९ ७६-७७

विष्टरश्रवा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१६४

विष्णु—(१) महावीर-निर्वाण के बासठ वर्ष पश्चात् हुए पाँच आचार्यों में प्रथम आचार्य। ये श्रुतकेवली थे। मपु० २ १४०-१४१, हपु० १ ६१

(२) कृष्ण का एक नाम। मपु० ७२.१८१, हपु० ४७ १७, पापु० २ ९५

(३) कृष्ण के कुल का रक्षक एक नृप। हपु० ५० १३०

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित सिंहपुर नगर का राजा। यह इक्ष्वाकुवश में उत्पन्न हुआ था। नन्दा इसकी रानी और तीर्थङ्कर श्रेयासनाथ इसके पुत्र थे। मपु० ५७ १७-१८, ३३, पपु० २० ४७

(५) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५

(६) हस्तिनापुर के राजा महापद्म (नवें चक्रवर्ती) का दूसरा पुत्र। यह अपने पिता के साथ दीक्षित हुआ। तप के प्रभाव से इसे विक्रियाऋद्धि प्राप्त हुई। (लोक में यही मुनि विष्णुकुमार के नाम से प्रसिद्ध हुआ)। इसके भाई पद्म के मत्री बलि के द्वारा अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनियो पर उपसर्ग किये जाने पर इसने दो पद में विक्रियाऋद्धि से समस्त पृथिवी नाप कर उपसर्ग दूर किया था। तप द्वारा वह घातियाकर्मों का क्षय करके केवली हुआ और देह त्याग करके मुक्ति प्राप्त की। मपु० ७० २८२-३००, पपु० २० १७९-१८३, हपु० २० १५-६३, ४५ २४, पापु० ७ ५७-७२ दे० अकम्पनाचार्य, पुष्पदन्त और बलि

विष्णुश्री—सिंहपुरी के राजा विष्णु की रानी। यह तीर्थङ्कर श्रेयासनाथ की जननी थी। पपु० २० ४७

विष्णुसजय—कृष्ण का एक पुत्र। हपु० ४८ ६९

विष्णुस्वामी—राजा जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३९

विष्वाणसमिति—अहिंसाव्रत की पाँच भावनाओ में पाँचवी भावना। इसमें जल-पान और भोजन भली प्रकार देखकर ही करना होता है। मपु० २० १६१

विस्तारसम्यक्त्व—सम्यक्त्व के दस भेदो में सातवाँ भेद। जीव आदि पदार्थों का विस्तृत कथन सुनकर प्रमाण और नयो के द्वारा धर्म में उत्पन्न हुआ श्रद्धान विस्तार-सम्यक्त्व कहलाता है। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४५-४४६, वीवच० १९ १४१, १४९

विहतान्तक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४१

विहायस्तिलक—एक नगर। यहाँ का राजा सुलोचन था। इसने अपनी उत्पलमती कन्या का विवाह चक्रवर्ती सगर के साथ किया था। पपु० ५ ७६-८३, दे० पूर्णघन

विहारक्रिया—गर्भान्वयी त्रेपन क्रियाओ में इक्यावनवी क्रिया। धर्मचक्र को आगे करके तीर्थङ्करों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना विहारक्रिया कहलाती है। तीर्थङ्कर विहार करते समय आकाशमार्ग से चलते हैं। उनके चरणो के आगे और पीछे सात-सात तथा चरणो के नीचे एक इस प्रकार पन्द्रह कमलो की रचना की जाती है। मन्द-सुगन्धित वायु बहती है और भूमि निष्कण्टक हो जाती है। मपु० ३८ ६२-६३, ३०४, हपु० ३ २०-२४

विहीत—बाली के पूर्वभव के जीव मेघदत्त का पिता। यह ऐरावत क्षेत्र के दितिनगर का निवासी था। इसकी स्त्री का नाम शिवमति था। पपु० १०६ १८७-१८८

वीचार—अर्थ, व्यजन तथा योगो का सक्रमण (परिवर्तन)। मपु० २१ १७२

वीणागोष्ठी—वीणा-वादको की गोष्ठी। इसमें वीणा-वादक एकत्रित होकर वीणा-वादन द्वारा लोगो का मनोरजन करते हैं। तीर्थंकर-वृषभदेव ऐसी गोष्ठियो मे सम्मिलित होते थे। मपु० १४ १९२

वीतकल्मष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३८

वीतभय—(१) मेरु गणधर के दूसरे पूर्वभव का जीव। पूर्व धातकीखण्ड के पश्चिम विदेह क्षेत्र गन्धिल देश की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास और रानी सुव्रता का पुत्र। यह बलभद्र था। नारायण विभीषण इसका छोटा भाई था। आयु के अन्त में नारायण रत्नप्रभा पृथिवी मे उत्पन्न हुआ तथा यह अनिवृत्ति मुनि से सयम लेकर तप करके आदित्याभ नाम का लान्तवेन्द्र हुआ। मपु० ५९.२७६-२८०, हपु० २७ १११-११४

(२) सिन्धु देश का एक नगर। कृष्ण की पटरानी गौरी इसी नगर के राजा मेरु की पुत्री थी। हपु० ४४ ३३-३६

वीतभी—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

(२) सूर्यवशी राजा अविध्वस का पुत्र। वृषभदेव इसका पुत्र था। पपु० ५ ८, हपु० १३ ११

वीतमत्सर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

वीतराग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

वीतशोक—पुष्करवर द्वीप में पश्चिम मेरु के सरिद् देश का एक नगर। चक्रध्वज यहाँ का राजा था। मपु० ६२ ३६४-३६५

वीतशोकपुर—(१) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में गन्धमालिनी देश का एक नगर। वैजन्त यहाँ का राजा था। इसका अपर नाम वीतशोका था। मपु० ५९ १०९-११०, हपु० २७ ५

(२) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश का एक नगर। जाम्बवती सातवें पूर्वभव में यहाँ के वैश्य दमक की पुत्री देविला थी। वीतशोका इसका अपर नाम था। मपु० ७१ ३६०-३६१, ७६ १३०, हपु० ६० ४३, ६८-६९

वीतशोका—(१) एक नगर। इसका अपर नाम वीतशोकपुर था। मपु० ५९ १०९, हपु० २७ ५ दे० वीतशोकपुर–१

(२) एक नगर। इसका भी अपर नाम वीतशोकपुर था। हपु० ६० ४३, ६८-६९ दे० वीतशोकपुर–२

(३) विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में स्थित पच्चीसवी नगरी। हपु० १९ ८१, ८७

(४) विदेहक्षेत्र के सरिता देश की राजधानी। मपु० ६३ २११, २१६

(५) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित वत्स-देश की कौशाम्बी नगरी के राजा मघवा की महादेवी। रघु इसका पुत्र था। मपु० ७० ६३-६४ दे० मघवा–१

वीतशोकापुरी—जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत के पूर्व की ओर विद्यमान एक नगरी। यहाँ का राजा नरवृषभ था। मपु० ६१.६६

वीथी—समवसरणभूमि के मार्ग। इस भूमि के चारो महादिशाओ मे दो-दो कोश विस्तृत ऐसी चार महावीथियाँ होती हैं। ये अपने मध्य में स्थित चार महास्तम्भो के पीठ धारण करती हैं। हपु० ५७ १०

वीभत्स—रावण का एक सिंहरथी सामन्त। पपु० ५७ ४६, ४८

वीरजय—चक्रवर्ती भरतेश का पुत्र। यह जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७ २८२-२८३

वीर—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२४

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का चौवीसवाँ नगर। हपु० २२ ८८

(३) बलदेव और कृष्ण के रथ की रक्षा करने के लिए उनके पृष्ठरक्षक बनाये गये वसुदेव के पुत्रो में एक पुत्र। हपु० ५० ११५-११७

(४) राजा स्तिमितसागर का पुत्र। ऊर्मिमान् और वसुमान् इसके बड़े भाई और पातालस्थिर इसका छोटा भाई था। हपु० ४८ ४६

(५) सौधर्म युगल का पाँचवाँ पटल। हपु० ६ ४४

(६) एक नृप। यह सीता के स्वयवर में समिलित हुआ था। पपु० २८ २१५

(७) जन्माभिषेक के पश्चात् राजा सिद्धार्थ और रानी प्रियकारिणी के पुत्र के लिए इन्द्र द्वारा अभिहित दो नामो-वीर और वर्द्धमान मे एक नाम। वर्द्धमान इनका अपर नाम था। यह नाम इन्हें कर्मों को जीतने से प्राप्त हुआ था। पाण्डवपुराण के अनुसार इन्हें यह नाम सगम नामक देव से प्राप्त हुआ था। यह देव सर्प के रूप में क्रीडा के समय महावीर के पास आया था। महावीर ने इसे पराजित कर अपने धैर्य और पराक्रम का परिचय दिया था। उस समय उस सगम देव ने इन्हें "वीर" कहकर इनकी स्तुति की थी। मपु० ७४. २५२, २६८, २७६, हपु० २ ४४-४७, पापु० १ ११५, वीवच० १.३४ दे० महावीर

(८) राजा वृषभदेव और रानी यशस्वती का पुत्र। आगे यही वृषभदेव का गुणसेन नामक गणधर हुआ। मपु० १६.३,४७ ३७५ दे० गुणसेन

वीरक—जम्बूद्वीप के वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का एक वैश्य। वनमाला इसकी स्त्री थी। राजा सुमुख ने इसकी स्त्री का अपहरण करके उसे अपनी पत्नी बनाया था। यह मरकरन्तप के प्रभाव से देव हुआ। इस पर्याय में इसने अवधिज्ञान से पूर्वभव में वैरी सुमुख का विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के हरिपुर नगर में उत्पन्न हुआ जाना। इसने सुमुख के जीव-हरिक्षेत्र के विद्याधर को वहाँ से लाकर भरतक्षेत्र मे छोड़ा था। इसका अपर नाम वीरदत्त था। पपु० २१, २-६, हपु० १४ १-२, ६१ दे० वीरदत्त–१

वीरदत्त—(१) कलिंग देश के दन्तपुर नगर का एक वैश्य। यह भालो के भय से अपने साथियो और पत्नी वनमाला के साथ जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में वत्स देश की कौशाम्बी नगरी में आकर सुमुख सेठ के पास रहने लगा था। सुमुख सेठ इसकी पत्नी वनमाला को देखकर उस पर आसक्त हो गया था। उसने इसे बारह वर्ष के लिए व्यापार करने बाहर भेजकर इसकी पत्नी को अपनी स्त्री बना लिया था। बारह वर्ष बाद लौटने पर स्त्री की प्रतिकूल स्थिति देखकर यह विरक्त हो गया था तथा इसने प्रोष्ठिल मुनि के पास जिनदीक्षा ले ली थी। आयु के अन्त में सन्यासमरण करके यह सौधर्म स्वर्ग में चित्रागद देव हुआ। इसका अपर नाम वीरक था। मपु० ७० ६३-७२, पापु० ७ १२१-१२६

(२) एक मुनि। इन्होंने यति शिवगुप्त द्वारा सौंपे गये मुनि वशिष्ठ को छ मास पर्यन्त अपने पास रखा था। हपु० ३३ ७२-७३

वीरदीक्षा—निर्भय और वीर पुरुषो द्वारा ग्रहण की गयी निर्ग्रन्थ दीक्षा। ऐसा दीक्षित पुरुष देव, शास्त्र और गुरु को छोड़कर किसी अन्य को प्रणाम नही करता। मपु० ३४.१०९

वीरनन्दी—एक मुनि। जीवन्धरकुमार के गुरु सिंहपुर के राजा आर्यवर्मा ने धृतिषेण पुत्र को राज्य देकर इनसे सयम धारण किया था। मपु० ७५ २८१-२८२

वीरपट्ट—वीरता का प्रतीक-मुकुट। मेघकुमार को जीत लेने पर जयकुमार को चक्रवर्ती भरतेश ने यही पट्ट बाँधा था। मपु० ४३ ५०-५१

वीरपुर—एक नगर। तीर्थंकर नमिनाथ को इसी नगर के राजा दत्त ने आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६९ ३०-३१, ५६

वीरबाहु—राजा वज्रजघ और रानी श्रीमती का पुत्र। यह राजर्षि वज्रबाहु के साथ मुनि यमधर से अपने अन्य अट्ठानवे भाइयो के साथ सयमी हो गया था। मपु० ८ ५८-५९

वीरभद्र—एक चारणऋद्धिधारी मुनि। ये चारण मुनि गुणभद्र के साथ जठरकौशिक की एक तापसों की बस्ती मे आये थे। दोनों ने बस्ती के नायक तपस्वी वशिष्ठ के पचाग्नि-तप को अज्ञान तप कहा था। इस पर कुपित होकर वशिष्ठ ने इनसे अज्ञान क्या है? यह जानने की इच्छा प्रकट की थी। इनके साथी गुणभद्र ने वशिष्ठ को युक्ति-

पूर्वक समझाया। फलस्वरूप वशिष्ठ ने उनसे दीक्षा लेकर उपवास सहित तप करना आरम्भ कर दिया था। मपु० ७० ३२२-३२८ दे० वशिष्ठ

वीरमती—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में छत्रपुर नगर के राजा नन्दिवर्द्धन की रानी। महावीर के पूर्वभव के जीव नन्द की यह जननी थी। मपु० ७४ २४३, वीवच० ५ १३४-१३६, दे० नन्द-९

वीरवित—लोहाचार्य के पश्चात् हुए अनेक आचार्यों में एक आचार्य। ये सिंहबल के शिष्य तथा पद्मसेन के गुरु थे। हपु० ६६ २६-२७

वीरसेन—महावीर का अपर नाम। मपु० ७४ ३

(२) महापुराण के कर्त्ता जिनसेनाचार्य के गुरु मूलसघान्वय में सेनसघ के एक आचार्य। ये कविवृन्दावन, लोकविद्, काव्य के ज्ञाता और भट्टारक थे। इन्होंने षट्खण्डागम तथा कसायपाहुड इन सिद्धान्त ग्रन्थों की धवला, जयधवला टीकाएँ लिखी थी। सिद्धपद्धति ग्रन्थ की टीका का कर्ता भी इन्हें कहा गया है। मपु० १ ५५-५८, ७६ ५२७-५२८, प्रशस्ति २-८, हपु० १ ३९

(३) राजा मान्धाता का पुत्र और प्रतिमन्यु का पिता। पपु० २२ १५५

(४) वटपुर नगर का राजा। अपने यहाँ अयोध्या के राजा मधु के आने पर इसने उसका यथेष्ट सम्मान किया था। राजा मधु इसकी पत्नी चन्द्राभा पर आसक्त हो गया था। फलस्वरूप उसने छल-बल से चन्द्राभा को अपनी स्त्री बना ली थी। मधु द्वारा अपनी स्त्री का अपहरण किये जाने से यह विच्छिप्त होकर आर्तध्यान से मरा और चिरकाल तक ससार में भ्रमण करता रहा। अन्त में मनुष्य पर्याय प्राप्त कर इसने तप किया। इस तप के प्रभाव से आयु के अन्त में मरकर यह धूमकेतु देव हुआ। पपु० १०९ १३५-१४८, हपु० ४३ १५९-१६५, १७१-१७७, २२०-२२१

वीरांगज—पचम काल के अन्तिम मुनि। ये चन्द्राचार्य के शिष्य होगे। मपु० ७६ ४३२

वीरांगद—भरतेश-चक्रवर्ती के कराभूषण का नाम। मपु० ३७ १८५

वीराख्य—राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३३

वीर्य—(१) कुरुवश का एक राजा। इसे राजा विचित्र से राज्य मिला था। हपु० ४५ २७

(२) शक्ति। इससे भयभीत प्राणियो की रक्षा की जाती है। पपु० ९७ ३७

वीर्यदंष्ट्र—एक महापुरुष। रावण ने बार-बार स्तुति की थी। पपु० १३ १०३

वीर्यपुर—यादवो का एक नगर। हपु० ४१ ४४

वीर्यप्रवादपूर्व—अग-प्रविष्ट-श्रुतज्ञान के चौदह पूर्वों में तीसरा पूर्व। इसमें सत्तर लाख पदो में अतिशय पराक्रमी सत्पुरुषो के पराक्रम का वर्णन है। हपु० २.९८, १० ८८

वीर्यवान्—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का इकानवेवाँ पुत्र। पापु० ८ २०४

वीर्याचार—मुनियो के ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य इन पाँच आचारो में पाँचवाँ आचार। सामर्थ्य के अनुसार आचार का पालन करना वीर्याचार कहलाता है। हपु० २० १७३, पापु० २३ ५९

वृत्तिपरिसख्यान—बाह्य तप का तीसरा भेद। भोजन विषयक तृष्णा दूर करने के लिए मुनियो का आहार-वृत्ति में घरो की सीमा का नियम लेकर चर्या के लिए जाना वृत्तिपरिसख्यान तप कहलाता है। मपु० २० १७६, पपु० १४ ११४-११५, हपु० ६४ २३, वीवच० १३ ४२

वृत्रवती—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की एक नदी। भरतेश की सेना उनकी दिग्विजय के समय इस नदी को पार करके चित्रवती नदी पर पहुँची थी। मपु० २९ ५८

वृत्रसूदन—राजा सहस्रार का पुत्र-इन्द्र। आत्मरक्षा के लिए विद्याधरो द्वारा सहस्रार से निवेदन किये जाने पर उसने उन्हें इसी के पास भेजा था। पपु० ७ ६१-६३, दे० इन्द्र-६

वुष्किम—चित्रकला के तीन भेदो में प्रथम भेद। सुई अथवा दन्त आदि के द्वारा चित्र बनाना वुष्किम चित्रकला कहलाती है। पपु० २४ ४१

वृकार्थक—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। तीर्थङ्कर महावीर विहार करते हुए यहाँ आये थे। हपु० ३ ४, ११ ६४

वृकोदर—पाण्डव भीम का अपर नाम। हपु० ५४ ६६

वृक्षमूल—एक विद्या-निकाय। धरणेन्द्र की देवी दिति ने यह विद्या-निकाय नमि और विनमि को दिया था। हपु० २२ ६०

वृक्षमूलयोग—वर्षा काल में वृक्ष के नीचे ध्यान करना वृक्षमूलयोग कहलाता है। मपु० ३४ १५५-१५६

वृतरथ—कुरुवश का एक राजा। इसे राज्य शासन राजा महारथ से मिला था। हपु० ४५ २८

वृत्त—(१) पापारम्भ के कार्यो से विरक्त होने में सहायक कर्म। ये देव-पूजा आदि छ होते हैं। इनका आचरण करना वृत्त कहलाता है। मपु० ३९ २४, ५५

(२) पदगत गान्धर्व की एक विधि। हपु० १९ १४९

वृत्तलाभ—दीक्षान्वय-क्रियाओ में दूसरी क्रिया। गुरु के चरणो में नमस्कार करते हुए विधिपूर्वक व्रतो को ग्रहण करना वृत्तलाभ-क्रिया कहलाती है। मपु० ३९ ३६

वृत्तवैताढय—नाभिगिरि पर्वत। हपु० ५ ५८८

वृत्ति—(१) वैण स्वर का एक भेद। हपु० १९ १४७

(२) आजीविका। वृषभदेव ने प्रजा को उपदेश देते हुए उसकी आजीविका के छ साधन बताये थे। वे हैं—असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प। मपु० १६ १८०-१८१, २४२-२४५

वृद्ध—(१) कोशल देश का एक ग्राम। ब्राह्मण मृगायण इसी ग्राम का निवासी था। मपु० ५९ २०७

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगध देश का एक ग्राम। सयमी भगदत्त और भवदेव इसी ग्राम के थे। मपु० ७६ १५२

वृद्धार्थ—राजा वसुदेव और रानी पद्मावती का पुत्र। हपु० ४८.५६

वृन्द—कौरवों का पक्षधर एक राजा। यह राजा शतायुध के साथ युद्ध में मारा गया था। पापु० २०.१५२

वृन्दारक—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बावनवाँ पुत्र। पापु० ८ १९९

वृन्दावन—मथुरा का समीपवर्ती एक नगर। कृष्ण के पालक नन्द और यशोदा इसी नगर के निवासी थे। मथुरा से यहाँ जाने के लिए यमुना नदी को पार करना होता है। हपु० ३५ २७-२९

वृष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषकेतु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषध्वज—(१) वैदिशपुर का राजा। इसकी रानी दिशावली और पुत्री दिशानन्दा थी। हपु० ४५ १०७-१०८, पापु० १४ १७४-१७५

(२) कुरुवश का एक राजा। इसे वृषानन्द से राज्य मिला था। हपु० ४५ २८

वृषपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषभ—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३, ७०, २५ ७५, १००, १४३, हपु० १ ३, दे० ऋषभ

(२) राक्षस महाकाल से प्रद्युम्न को प्राप्त एक रथ। मपु० ७२. १११

(३) चौथे बलभद्र सुप्रभ के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २० २३४

वृषभदत्त—(१) कुशाग्रपुर का एक श्रावक। इसने तीर्थंकर मुनिसुव्रत-नाथ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। पपु० २१ ३८-३९, हपु० १६ ५९

(२) राजपुर नगर का एक सेठ। इसकी स्त्री पद्मावती और पुत्र जिनदत्त था। यह अन्त में मुनिराज गुणपाल के निकट दीक्षित हो गया था। इसकी पत्नी ने भी आर्यिका सुव्रता से सयम धारण कर लिया था। मपु० ७५ ३१४-३२०

(३) एक सेठ। इसकी स्त्री सुभद्रा थी। किसी वनेचर से इसे चेटकी की पुत्री चन्दना प्राप्त हुई थी। इसका अपर नाम वृषभसेन था। मपु० ७४ ३३८-३४२, ७५ ५२-५४ दे० वृषभसेन-३

वृषभध्वज—(१) सूर्यवशी एक राजा। यह राजा वीतभी का पुत्र और गरुडाक का पिता था। पपु० ५ ८, हपु० १३ ११

(२) उज्जयिनी का राजा। इसकी रानी कमला थी। मपु० ७१ २०८-२०९, हपु० ३३ १०३

(३) महापुर नगर के राजा छत्रच्छाय और रानी श्रीदत्ता का पुत्र। पूर्वभव में इसे मरते समय पद्मरुचि जैनी ने नमस्कार मत्र सुनाया था जिसके प्रभाव से यह तिर्यंच योनि से मनुष्य हुआ था। इसने अपने पूर्वभव के मरणस्थान पर जैन-मन्दिर बनवाकर मन्दिर के द्वार पर अपने पूर्वभव का एक चित्रपट लगवाया था। मन्दिर मे दर्शनार्थ आये अपने पूर्वभव के उपकारी पद्मरुचि को पाकर उसके चरणों में नमस्कार कर उसकी इसने पूजा की थी। अनुरागपूर्वक पद्मरुचि के साथ इसने चिरकाल तक राज्य किया था। दोनो ने अनेक जिनमन्दिर और जिन प्रतिमाएँ बनवाई थी। अन्त में समाधि-पूर्वक मरकर दोनो ऐशान स्वर्ग मे देव हुए। पपु० १०६ ३८-७०

(४) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३३, २५ ११६

वृषभपर्वत—जम्बूद्वीप के भरत और ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी एक-एक तथा विदेहक्षेत्र के बत्तीस कुल चौंतीस पर्वत। भरतेश ने इसी पर्वत पर काकणी-रत्न से अपनी प्रशस्ति लिखी थी। यह पर्वत सौ योजन ऊँचा है। मूल मे भी यह सौ योजन और शिखर पर पचास योजन विस्तृत है। यह आकल्पान्त अविनश्वर, आकाश के समान निर्मल, नाना चक्रवर्तियो के नामो से उत्कीर्ण तथा देव और विद्याधरो द्वारा सेवित है। मपु० ३२ १३०-१६०, हपु० ५.२८०, ११ ४७-४८

वृषभसेन—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के पुत्र एव पहले गणधर। वृषभदेव ने इन्हें गन्धर्वशास्त्र पढाया था। ये चार ज्ञान के धारी थे। सप्त ऋद्धियो से विभूषित थे। सातवें पूर्वभव में ये राजा प्रीतिवर्धन के मन्त्री, छठे पूर्वभव में भोगभूमि मे आर्य, पाँचवें में कनकप्रभ देव, चौथे में आनन्द, तीसरे में अहमिन्द्र, दूसरे में राजा वज्रसेन के पुत्र पीठ और प्रथम पूर्वभव में सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र थे। इस भव में ये चक्रवर्ती भरतेश के छोटे भाई हुए। इन्हें पुरिमताल नगर का राजा बनाया गया था। ये चरमशरीरी थे। इन्होंने वृषभदेव को केवलज्ञान प्रकट होने पर अन्य राजाओ के साथ उनकी वन्दना की थी। उनसे सयम धारण करके उनके ही ये प्रथम गणधर भी हुए। आयु के अन्त में कर्म नाश कर मुक्त हुए। मपु० ८ २११-२१६, ९ ९०-९२, ११.१३, १६०, १६ २-४, १२०, २४ १७१-१७३, ४७ ३६७-३६९, ३९९, पपु० ४ ३२, हपु० ९ २३, २०५, १२ ५५, वीवच० १ ४०

(२) राजगृही का राजा। इसने तीर्थंकर मुनिसुव्रत को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६७ ४५

(३) वत्स देश के कौशाम्बी नगर का एक सेठ। इसके मित्रवीर कर्मचारी ने अपने मित्र भीलराज से चन्दना (चेटक की पुत्री) प्राप्त करके इसे ही सौंपी थी। भद्रा इसकी पत्नी थी। उसने चन्दना के साथ अपने पति के अनुचित सम्बन्ध समझ कर पति के प्रवास काल में चन्दना को साकलो से बाँध रखा था। यह चन्दना को पुत्री के समान समझता था। प्रवास से लौटकर इसने चन्दना को अपना पूर्ण सहयोग दिया था। इसका अपर नाम वृषभदत्त था। मपु० ७५ ५२-५७, वीवच० १३ ८४-८८

वृषभांक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषभांकित ध्वजा—समवसरण की दस प्रकार की ध्वजाओ में एक ध्वजा। प्रत्येक दिशा में ये एक सौ आठ होती हैं। इन ध्वजाओ पर वृषभ का अकन किया जाता है। मपु० २२ २१९-२२०, २३३

वृषसेन—राजा जरासन्ध का पक्षधर एक राजा। कृष्ण-जरासन्ध युद्ध में यह जरासन्ध का पक्षधर योद्धा था। मपु० ७१ ७८

वृषसेना—इन्द्र की सात प्रकार की सेना का एक भेद। इसमें सैनिक बैलो पर सवार होते हैं। मपु० १० १९८-१९९

वृषाधीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषानन्त—एक कुरुवशी राजा। हपु० ४५ २८

वृषायुध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृषोद्भव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११६

वृष्यरसत्याग—ब्रह्मचर्यव्रत की पाँच भावनाओ में पाँचवी भावना। इसमे शक्तिवर्द्धक दूध आदि गरिष्ठ-रसो का त्याग किया जाता है। मपु० २० १६४, दे० ब्रह्मचर्य

वृहद्गृह—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी का बावीसवाँ नगर। हपु० २२ ९५

वेगवती—(१) भरतक्षेत्र की एक नदी। पार्श्वनाथ के पूर्वभव का जीव वज्रघोष हाथी इसी नदी की कीचड में फँसा था तथा कमठ के जीव कुक्कुट-सर्प के द्वारा डस लिए जाने से यही मरा था। मपु० ७३ २२-२४, हपु० ४६.४९

(२) आदित्यपुर के राजा विद्याधर विद्यामन्दर की रानी। यह श्रीमाला की जननी थी। पपु० ६ ३५७-३५८

(३) एक विद्याधरी। इसने चक्रवर्ती हरिषेण का अपहरण किया था। मपु० ८ ३५३

(४) अरिजयपुर नगर के राजा विद्याधर वह्निवेग की रानी। यह आहल्या की जननी थी। पपु० १३ ७३

(५) विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के स्वर्णाभ नगर के राजा विद्याधर मनोवेग ओर रानी अगारवती की पुत्री। यह मानसवेग की बहिन तथा वसुदेव की रानी थी। जरासन्ध के अधिकारियों ने वसुदेव को जब चमडे की भाथडी में बन्द कर पहाड की चोटी से नीचे गिराया था उस समय इसी ने वसुदेव को सँभाला था तथा पर्वत के तट पर ले जाकर भाथडी से उसे बाहर निकाला था। हपु० २४ ६९-७४, २६.३२-४०

वेगवान्—राजा वसुदेव तथा रानी वेगवती का पुत्र। वायुवेग इसका भाई था। हपु० ४८ ६०

वेगावती—एक विद्या। इस विद्या को विद्याधर अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने सिद्ध किया था। मपु० ६२ ३९८

वेगिनी—नाकार्द्धपुर के स्वामी विद्याधर मनोजव की रानी। महाबल की यह जननी थी। पपु० ६ ४१५-४१६

वेणा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने यहाँ आकर दक्षिण के राजाओ को उनकी आज्ञा प्रचारित की थी। मपु० २९ ८७

वेणु—(१) मानुषोत्तर पर्वत के पूर्व-दक्षिण कोण मे स्थित रत्नकूट का एक देव। यह नागकुमारो का स्वामी था। हपु० ५.६०७

(२) मेरु पर्वत की दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्थित शाल्मली वृक्ष की शाखाओ पर बने भवनो का निवासी एक देव। हपु० ५ १९०

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अडतीसवाँ नगर। हपु० २२ ८९

(४) असुरकुमार आदि दस जाति के भवनवासी देवो के बीस इन्द्र और बीस प्रतीन्द्रो में पाँचवाँ इन्द्र एव प्रतीन्द्र। यह तीर्थंकर महावीर के केवलज्ञान की पूजा के लिए महीतल पर आया था। वीवच० १४ ५४, ५७-५८

वेणुदारी—(१) यादवो का पक्षधर एक अर्धरथ नृप। हपु० ५० ८५

(२) शाल्मली वृक्ष का निवासी एक देव। हपु० ५ १८८-१९०

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३९

(४) मानुषोत्तर पर्वत के पूर्वोत्तर कोण में स्थित सर्वरत्नकूट का स्वामी सुवर्णकुमार जाति का भवनवासी देव। हपु० ५ ६०८

वेणुदेव—भवनवासी देवो का पाँचवाँ इन्द्र एव प्रतीन्द्र। वीवच० १४ ५४

वेणुधारी—असुरकुमार आदि दस जाति के भवनवासी देवो के बीस इन्द्र और बीस प्रतीन्द्रो में छठा इन्द्र और प्रतीन्द्र। यह भगवान महावीर के केवलज्ञान की पूजा के लिए महीतल पर आया था। वीवच० १४ ५४, ५७-५८

वेणुमती—भरतक्षेत्र के पूर्व आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना ने इसी नदी के किनारे-किनारे जाकर वत्स देश पर आक्रमण किया था। मपु० २९ ६०

वेताली—एक विद्या। विद्याधर अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। इसी विद्या से साहसगति ने सुग्रीव का रूप धारण कर उसकी प्रिया का अपहरण किया था। मपु० ६२ ३९८, पपु० ४९ २४-२८

वेत्रवन—एक वन। रुद्रदत्त और चारुदत्त इसी वन को पार कर टकण देश गये थे। हपु० २१ १०२-१०३

वेत्रासन—मूढे के समान आकार का आसन। अधोलोक का आकार इसी प्रकार का है। हपु० ४ ६

वेद—(१) ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। हपु० १.८३

(२) वेदनीय कर्म-परिणाम। ये तीन प्रकार के होते हैं—स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपु सकवेद। मपु० २० २४५

(३) निर्दोष श्रुत। इसके दो भेद हैं—आर्षवेद और अनार्षवेद। इनमें भगवान ऋषभदेव द्वारा दर्शाया गया द्वादशाग-श्रुत आर्षवेद और हिंसा आदि की प्रेरणा देनेवाले शास्त्राभास अनार्षवेद माने गये है। हपु० २३ ३३-३४, ४२-४३, १४०

वेदना—(१) तीसरी-नरकभूमि के प्रथम प्रस्तार मे तप्त-इन्द्रकबिल की दक्षिण दिशा में स्थित महानरक। हपु० ४ १५४

(२) अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के बीस प्राभृतो मे कर्मप्रकृति चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में दूसरा योगद्वार। हपु० १० ८१-८२, दे० अग्रायणीयपूर्व

वेदनीय—सुख और दु ख देनेवाला एक कर्म। इसकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोडाकोडी सागर, जघन्य स्थिति बारह मुहूर्त तथा मध्यम स्थिति विविध प्रमाण की होती है। हपु० ३.९६, ५८ २१६, वीवच० १६ १४९, १५६, १५९-१६०

वेदनोपगमोद्भवध्यान—आर्तध्यान। यह वेदना के उत्पन्न होने पर होता है। इस ध्यान में वेदना नष्ट करने के विचार बार-बार उत्पन्न होते हैं। मपु० २१ ३३, ३५

वेदवती—मृणालकुण्ड नगर के श्रीभूति पुरोहित और उसकी स्त्री सरस्वती की पुत्री। इसी नगर के राजकुमार शम्भु ने इसके पिता को मारकर बलपूर्वक इसके साथ कामसेवन किया था। शम्भु को इस कुचेष्टा के कारण इसने आगामी पर्याय में शम्भु के वध के लिए उत्पन्न होने का निदान किया था। घर आये मुनि की हँसी करने पर पिता के समझाने से यह श्राविका हो गयी थी। आयु के अन्त में आर्यिका हरिकान्ता से दीक्षा लेकर इसने कठिन तप किया तथा मरकर यह ब्रह्म स्वर्ग गई। शम्भु नरक गया और वहाँ से निकल कर तिर्यंचगति मे भ्रमण करने के पश्चात् प्रभासकुन्द हुआ और तप कर स्वर्ग गया। वहाँ से चयकर वह लका मे राजा रत्नश्रवा और केकसी का पुत्र रावण हुआ। वेदवती स्वर्ग से चयकर राजा जनक की पुत्री सीता हुई। यही सीता अपने पूर्वभव में किये निदान के अनुसार रावण के क्षय का कारण बनी। इसने इस पर्याय में मुनि सुदर्शन और आर्यिका सुदर्शना दोनो भाई-बहिन को एकान्त में बातचीत करते हुए देखकर अवर्णवाद किया था इसी के फलस्वरूप सीता की पर्याय में इसका भी अवर्णवाद हुआ। पपु० १०६ १३५-१७८, २०८, २२५-२३१

वेदविद्—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३९, २५ १४६

वेदवेद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४६

वेदसामपुर—एक नगर। वासुदेव ने यहाँ के राजा कपिल को युद्ध में जीतकर उसकी पुत्री कपिला को विवाहा था। हपु० २४ २५-२६

वेदांग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४६

वेद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४६

वेधा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१०२

वेलंधर—एक पर्वत। इसी पर्वत पर इसी नाम का एक नगर भी था। यहाँ का राजा विद्याधर समुद्र था। इसने अपनी सत्यश्री, कमला, गुणमाला और रत्नचूला इन चार पुत्रियो का विवाह लक्ष्मण के साथ किया था। पपु० ५४ ६४-६५, ६८-६९

वेलम्बकूट—मानुषोत्तर पर्वत के दक्षिण-पश्चिम कोण मे निषधाचल का एक कूट। यहाँ वरुणकुमारो का अधिपति देव अतिवेलम्ब रहता है। हपु० ५.६०९

वेलाजन—भवनवासी देवो के बीस इन्द्रो और बीस प्रतीन्द्रो मे उन्नीसवाँ इन्द्र और प्रतीन्द्र। वीवच० १४ ५६

वैकुण्ठ—कृष्ण का अपर नाम। हपु० ५०.९२

वैकृतान्तकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६८

वैक्रियिक—औदारिक आदि पाँच शरीरो मे दूसरा शरीर। यह औदारिक की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म होता है। देवो और नारकियो का ऐसा ही शरीर होता है। मपु० ५ २५५, ९ १८४, पपु० १०५ १५२

वैगारि—एक विद्याधर राजा। चण्डवेग ने इसे पराजित किया था। हपु० २५.६३

वैजयन्त—(१) जम्बूद्वीप का एक द्वार। यह आठ योजन ऊँचा, चार योजन चौडा, नाना रत्नो की किरणो से अनुरंजित और वज्रमय देदीप्यमान किवाडो से युक्त है। हपु० ५ ३९०-३९१

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का छठा नगर। हपु० २२ ८६

(३) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का दसवाँ नगर। मपु० १९ ५०, ५३, हपु० २२ ९४

(४) दक्षिण-समुद्र का तटवर्ती एक महाद्वार। भरतेश ने इस द्वार के निकट अपनी सेना ठहराई थी। इस क्षेत्र का स्वामी वरतनु देव था। मपु० २९ १०३, हपु० ११ १३

(५) चक्रवर्ती भरतेश के एक महल का नाम। मपु० ३७ १४७

(६) पाँच अनुत्तर विमानो मे एक विमान। मपु० ५१ १५, पपु० १०५ १७०-१७१, हपु० ६ ६५

(७) समुद्र का एक गोपुर। लक्ष्मण ने यहाँ वरतनु देव को पराजित करके उससे कटक, केयूर, चूडामणिहार और कटिसूत्र भेंट में प्राप्त किये थे। मपु० ६८ ६५१-६५२

(८) भरतक्षेत्र का एक नगर। रामपुरी से चलकर राम इसी नगर के समीप ठहरे थे। पपु० ३६ ९-११

(९) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह क्षेत्र मे गन्धमालिनी देश के वीतशोक नगर का राजा। इसकी रानी सर्वश्री तथा सजयन्त और जयन्त पुत्र थे। भोगो से विरक्त होने पर इसने सजयन्त के पुत्र वैजयन्त को राज्य देकर पिता के साथ स्वयभू मुनि से सयम धारण कर लिया था। यह कषायो का क्षय करके अन्त में केवली हुआ। मपु० ५९ १०९-११३, हपु० २७ ५-८

(१०) जम्बूद्वीप-विदेहक्षेत्र के गन्धमालिनी देश में वीतशोकपुर के स्वामी का प्रपौत्र और सजयन्त का पुत्र। मपु० ५९ १०९-११२

(११) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन और रानी श्रीकान्ता का पुत्र। मपु० ११ ८-१०

(१२) समवसरण-भूमि के तीसरे कोट के दक्षिण द्वार का प्रथम नाम। हपु० ५७ ५८

वैजयन्ती—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी की तैतीसवीं नगरी। यहाँ का राजा बलसिंह था। मपु० १९ ५०, हपु० ३० ३३

(२) समवसरण के सप्तपर्ण वन की छ वापियो में एक वापी। हपु० ५७ ३३

(३) पश्चिमविदेहक्षेत्र में सुवप्रा देश की राजधानी। हपु० ५. २५१, २६३

(४) एक शिविका-पालकी। तीर्थंकर अरनाथ इसी में बैठकर वन (सहेतुक वन) गये थे। मपु० ६५ ३३, पापु० ७ २६-

(५) राम का एक सभा-भवन। पपु० ८३ ५

(६) भरतक्षेत्र में चक्रपुर-नगर के राजा वरसेन की रानी। यह सातवें बलभद्र-नन्दिषेण की जननी थी। मपु० ६५ १७३-१७७, पपु० २० २३८-२३९

(७) नन्दीश्वर-द्वीप की दक्षिण-दिशा के अन्जनगिरि की दक्षिण-दिशा में स्थित वापी। हपु० ५ ६६०

(८) रूचकगिरि के कांचनकूट पर रहनेवाली दिक्कुमारी-देवी। हपु० ५ ७०५

(९) रूचकगिरि के रत्नप्रभकूट पर रहनेवाली एक देवी। हपु० ५ ७२५

वैडूर्य—(१) भरतक्षेत्र का एक पर्वत। चक्रवर्ती भरतेश के सैनिक दिग्विजय के समय यहाँ आये थे। मपु० २९ ६७

(२) महाशुक्र स्वर्ग का एक विमान। मपु० २९.२२६

(३) महाशुक्र स्वर्ग का देव। मपु० ५९ २२६

(४) नील-मणि। हपु० २.१०

(५) रत्नप्रभा-प्रथम नरक के खरभाग का तीसरा पटल। हपु० ४ ५२ दे० खरभाग

(६) महाहिमवत् कुलाचल का आठवाँ कूट। हपु० ५ ७२

(७) रूचकगिरि की पूर्वदिशा का एक कूट। यहाँ विजया-दिक्कुमारी देवी निवास करती है। हपु० ५ ७०५

(८) रूचकगिरि की ऐशान दिशा का एक कूट। यहाँ रूचका महत्तरिका देवी रहती है। हपु० ५ ७२२

(९) सौधर्म युगल का चौदहवाँ इन्द्रक। हपु० ६ ४५ दे० सौधर्म

(१०) मानुषोत्तर पर्वत को पूर्व दिशा का एक कूट। यहाँ यश-स्वान् देव रहता है। हपु० ५ ६०२

वैडूर्यप्रभ—सहस्रार स्वर्ग का एक विमान। रामदत्ता का पुत्र पूर्णचन्द्र इसी विमान में देव हुआ था। हपु० २७ ७४

वैडूर्यमय—मेरु पर्वत की पृथिवीकाय रूप एक परिधि। इसका विस्तार सोलह हजार पाँच सौ योजन है। हपु० ५ ३०५-३०६

वैडूर्यवर—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपों में दसवाँ द्वीप और सागर। हपु० ५ ६२४

वैणस्वर—वीणा सम्बन्धी स्वर। श्रुति, वृत्ति, स्वर, ग्राम, वर्ण, अलंकार, मूर्च्छना, धातु और साधारण ये स्वर वैण स्वर कहलाते हैं। हपु० १९ १४६-१४७

वैतरणी—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने यह नदी ससैन्य पार की थी और यहीं से वह शुष्क नदी की ओर गया था। मपु० २९ ८४

(२) नरक की नदी। नारकी अग्नि के भय से इस नदी के जल में पहुँचते ही खारी तरंगों के द्वारा और अधिक जलने लगते हैं। इसमें विक्रियाकृत मकर आदि जल-जन्तु रहते हैं। मपु० ७४ १८२-१८३, पपु० २६ ८५, १०५, १२१-१२२, १२३.१४, वीवच० ३ १३४-१३६

वैताढ्य—एक पर्वत। शौर्यपुर के तापस सुमित्र के पुत्र नारद को जृम्भक-देव पूर्वभव के स्नेहवश इसी पर्वत पर लाया था। नारद का यहाँ दिव्य-आहार से पालन-पोषण हुआ था। देवों ने यहीं उसे आकाश-गामिनी विद्या दी थी। हपु० ४२.१४-१९

वैदर्भ—(१) भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की दक्षिण-दिशा में स्थित एक देश। हपु० ११ ६९

(२) तीर्थंकर पुष्पदन्त के प्रथम गणधर। हपु० ६० ३४७

वैदर्भी—रुक्मिणी के भाई रुक्मी की पुत्री। रुक्मिणी द्वारा प्रद्युम्न के लिए यह कन्या माँगे जाने पर भी पूर्व विरोध-वश रुक्मी ने उसे यह कन्या नहीं दी थी। फलस्वरूप शम्ब और प्रद्युम्न ने भील के वेष में रुक्मी को पराजित करके बलपूर्वक इस कन्या का हरण किया तथा प्रद्युम्न ने इसे विवाहा था। हपु० ४८ ११-१३

वैदिश—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में विन्ध्याचल के ऊपर स्थित एक देश-विदिशा। हपु० ११ ७४

वैदिशपुर—भरतक्षेत्र आर्यखण्ड का एक नगर। यहाँ का राजा वृषध्वज था। इसका अपर नाम वैदेशिकपुर था। हपु० ४५ १०७, पापु० १४ १७३

वैद्य—भरतक्षेत्र का एक देश। लवणांकुश और मदनांकुश द्वारा यहाँ का राजा पराजित किया गया था। पपु० १०१.८२

वैद्युत—विद्याधरों के स्वामी नमि का वंशज एक विद्याधर राजा। यह विद्युद्वेग विद्याधर का पुत्र था। पपु० ५ २०, हपु० १३.२४

वैनयिक—(१) अंगबाह्यश्रुत का पाँचवाँ भेद। इसमें दर्शन-विनय, ज्ञान-विनय, चारित्र-विनय, तपो-विनय और उपचार विनय के भेद से पाँच प्रकार के विनयों का कथन किया गया है। हपु० २ १०३, १० १३२

(२) एकान्त, विपरीत, विनय, अज्ञान और संशय के भेद से पाँच प्रकार के मिथ्यात्वों में इस नाम का एक मिथ्यात्व। माता, पिता, देव, राजा, ज्ञानी, बालक, वृद्ध और तपस्वी इन आठों की मन, वचन, काय और दान द्वारा विनय की जाने से इसके बत्तीस भेद होते हैं। हपु० १० ५९-६०, ५८ १९४-१९५

वैन्य—धौम्य गुरु का शिष्य। शाण्डिल्य, क्षीरकदम्बक, उदच और प्रावृत इसके गुरु-भाई थे। हपु० २३ १३४

वैभार—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना ने इसे पार किया था। यह राजगृह नगर के पाँच पर्वतों में दूसरा पर्वत है। इसका आकार राजगृह-नगर के दक्षिण में त्रिकोण है। तीर्थंकर महावीर का यहाँ समवसरण आया था। मपु० २९ ४६, ६३ १४०, हपु० ३.५४, १८१ ३२, पापु० १ ९८

वैयावृत्य—(१) आभ्यन्तर तप का तीसरा भेद। १. आचार्य २. उपाध्याय ३ तपस्वी ४ शिक्षा ग्रहण करनेवाले शैक्ष्य, ५. रोग आदि से ग्रस्त ग्लान ६ वृद्ध मुनियों का समुदाय ७. दीक्षा देने वाले आचार्य के शिष्यों का समूह रूप कुल ८ गृहस्थ, क्षुल्लक, ऐलक तथा मुनियों का समुदाय रूप संघ ९ चिरकाल के दीक्षित गुणी मुनि,

साधु १०. और मनोज्ञ लोकप्रिय मुनि इनकी बीमारी के समय मोह के तीव्र उदय से मिथ्यात्व की ओर उनकी प्रवृत्ति होने पर, मिथ्या-दृष्टि जीवो के द्वारा कोई उपद्रव-उपसर्ग किया जाने पर और परीषहों के समय में सद्भाव पूर्वक यथायोग्य सेवा करना वैयावृत्य तप है। मपु० २० १९४, पपु० १४.११६-११७, हपु० ६४ २९, ४५-५५, १८ १३७, वीवच० ६ ४१-४४

(२) षोडशकारण भावनाओ में नौवी भावना। गुणवान् साधुजनो के क्षुधा, तृषा, व्याधि आदि से उत्पन्न दु ख को प्रासुक द्रव्यो के द्वारा दूर करने की भावना करना वैयावृत्य-भावना कहलाती है। मपु० ६३ ३२६, हपु० ३४ १४०

वैर—वृषभदेव के उनहत्तरवें गणधर। हपु० १२.६७

वैराग्यभावना—वैराग्य की कारणभूत भावनाएँ। इनसे पुरुष मोह को प्राप्त नही होता। वह ध्यान में स्थिर बना रहता है। जगत और शरीर के स्वरूप का बार-बार चिन्तन करने तथा विषयो में अनासक्त रहने से वैराग्य में स्थिरता आती है। मपु० २१ ९५, ९९

वैरोचन—(१) नौ अनुदिश विमानो में एक विमान। हपु० ६ ६३

(२) एक अस्त्र। जरासन्ध द्वारा छोडे इस अस्त्र का कृष्ण ने माहेन्द्र-अस्त्र से विच्छेद किया था। हपु० ५२ ५३

(३) भवनवासी देवों के बीस इन्द्र और प्रतीन्द्रो मे दूसरा इन्द्र और प्रतीन्द्र। यह जिनाभिषेक के समय चमर ढोरता है। मपु० ७१ ४२, वीवच० १४.५४

वैशाखस्थान—बाण चलाते समय प्रयुज्य एक आसन। इसमे दायें पैर का घुटना-पृथिवी में टेककर बायें पैर को घुटने से मोडकर रखा जाता है। मपु० ३२ ८७, हपु० ४ ८

वैशाली—भरतक्षेत्र को नगरी। यहाँ के राजा गणतन्त्र-नायक चेटक थे। मपु० ७५ ३

वैश्य—चार वर्णों में एक वर्ण। ये न्यायपूर्वक अर्थोपार्जन करते हैं। वृषभदेव ने यात्रा करना सिखाकर इस वर्ण की रचना की थी। जल, स्थल आदि प्रदेशो में व्यापार और पशुपालन करना इस वर्ण को आजीविका के साधन हैं। मपु० १६ १०४, २४४, ३८ ४६, हपु० ९ ३९, १७ ८४, पापु २ १६१

वैश्रवण—(१) पूर्वविदेह का सीता नदी और निषध-कुलाचल का एक वक्षारगिरि। मपु० ६३ २०२, हपु० ५ २२९

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत के नौ कूटो में नौवाँ कूट। हपु० ५.२८

(३) हिमवत्-कुलाचल के ग्यारह कूटो में ग्यारहवाँ कूट। हपु० ५.५५

(४) ऐरावत क्षेत्र मे विजयार्ध पर्वत के नौ कूटो मे नौवाँ कूट। हपु० ५ ११२

(५) कुबेर का एक नाम। हपु० ६१ १८

(६) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी का तैतालीसवाँ नगर। मपु० १९ ५१, ५३

(७) तीर्थंकर मल्लिनाथ के दूसरे पूर्वभव का जीव-कच्छकावती देश के वीतशोक नगर का नृप। यह वज्रपात से वटवृक्ष के समूल विनाश को देखकर ससार से भयभीत हुआ। फलस्वरूप पुत्र को राज्य देकर मुनि नाग के पास यह दीक्षित हो गया। तप करके तीर्थंकर-प्रकृति का बन्ध करने के पश्चात् मरकर यह अपराजित विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ६६ २-३, ११-१६

(८) भरतक्षेत्र के मलय देश में रत्नपुर नगर का सेठ। इसकी पत्नी गोतमा और पुत्र श्रीदत्त था। मपु० ६७ ९०-९४

(९) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर का एक सेठ। इसने मुनिराज समुद्रसेन को आहार देने के बाद मुनि-राज के पीछे-पीछे आये हुए गौतम ब्राह्मण को भोजन कराया था। फलस्वरूप गौतम ने इससे प्रभावित होकर मुनि सागरसेन मे दीक्षा ले ली थी। मपु० ७० १६०-१७६

(१०) यक्षपुर के धनिक विश्रवस और कौतुक मगल नगर के राजा व्योमबिन्दु विद्याधर की बडी पुत्री कौशिकी का पुत्र। इन्द्र विद्याधर ने इसे पाँचवाँ लोकपाल तथा लंका का राजा बनाया था। दशानन का यह मौसेरा भाई था। युद्ध में यह रावण से पराजित हुआ। अन्त में दिगम्बर दीक्षा लेकर इसने तप किया और तपश्चरण करते हुए मरकर परमगति पायी। पपु० ७ १२७-१३२, २३६, ८ २३९-२४०, २५०-२५१

वैश्रवणकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी का तियालीसवाँ नगर। मपु० १९ ५१

वैश्रवणदत्त—(१) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के निवासी सेठ सागरसेन की छोटी बहिन सागरसेना का पुत्र। इसकी एक बहिन थी जिसका नाम वैश्रवणदत्ता था। इसे इसी नगर के सेठ सागरसेन और देवश्री की पुत्री सागरदत्ता विवाही गयी थी। मपु० ४७.१८९-१९९

(२) राजपुर नगर का एक सेठ। इसकी पत्नी आम्रमजरी और पुत्री सुरमजरी थी। मपु० ७५ ३१४, ३४८

(३) भरतक्षेत्र के अग देश को चम्पा नगरी का सेठ। इसकी स्त्री का नाम विनयवती तथा पुत्री का नाम विनयश्री थी। जम्बूस्वामी इसके जामाता थे। मपु ७६.८, ४७-४८

वैश्रवणदत्ता—विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के सेठ सागरसेन की भानजी। मपु० ४७.१८९-१९८ दे० वैश्रवणदत्त

वैश्वानर—(१) कुरुवशी एक राजा। इसे राज्य राजा विश्व से मिला था। इसके पश्चात् विश्वकेतु राजा हुआ। हपु० ४५ १७

(२) विद्याधरो की एक जाति। इस जाति के विद्याधर विद्याबल वाले होते हैं तथा देवो के समान क्रीडाएँ करते हैं। पपु० ७ ११९

व्यंजन—(१) स्वप्न, अन्तरिक्ष, भौम, अग, स्वर, व्यजन, लक्षण और छिन्न इन अष्टाग निमित्तो में छठा निमित्त। शिर, मुख आदि में रहने वाले तिल आदि व्यंजन कहलाते हैं। इनसे स्थान, मान, ऐश्वर्य, लाभ-अलाभ आदि के संकेत मिलते है। मपु० ६२ १८१, १८७, हपु० १०.११७

(२) समाधी के साथ पकाये गये स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ। मपु० ३ २०२

व्यन्तर—देवों का एक भेद। ये आठ प्रकार के होते हैं। उनके नाम हैं—किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच। बाल तप करनेवाले साधु मरकर ऐसे ही देव होते हैं। इन देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्य प्रमाण तथा जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष होती है। ये मध्यलोक में रहते हैं। तीर्थंकरों के जन्म की सूचना देने के लिए इन देवों के भवनों में स्वयमेव भेरियों की ध्वनि होने लगती है। मध्यलोक में ये देव वटवृक्षों पर, छोटे-छोटे गड्ढों में, पहाड़ के शिखरों पर, वृक्षों के कोटरों, पत्तों की झोपड़ियों में रहते हैं। इनका सर्वत्र गमनागमन रहता है। द्वीप और समुद्रों की आभ्यन्तरिक स्थिति का इन्हें ज्ञान होता है। इन देवों के सोलह इन्द्र और सोलह प्रतीन्द्र होते हैं। उनके नाम ये हैं—१ किन्नर २ किंपुरुष ३ सत्पुरुष ४ महापुरुष ५ अतिकाय ६ महाकाय ७ गीतरति ८ रतिकीर्ति ९ मणिभद्र १० पूर्णभद्र ११ भीम १२ महाभीम १३ सुरूप १४ प्रतिरूप १५ काल और १६ महाकाल। मपु० ३१ १०९-११३, पपु० ३ १५९-१६२, ५ १५३, १०५ १६५, हपु० २ ८३, ३ १३४-१३५, १३९, ५ ३९७-४२०, वीवच० १४ ५९-६२, १७ ९०-९१

व्यन्तरी—श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी व्यन्तर-देवियाँ। छहों क्रमशः पद्म, महापद्म, तिगिञ्छ, केसरी, महापुण्डरीक और पुण्डरीक ह्रदों में निवास करती हैं। मपु० ६३ १९७-१९८, २००

व्यक्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

व्यक्तवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

व्यक्तशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४७

व्यतीतशोक—तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २९-३०

व्यय—नयी पर्याय की प्राप्ति। मपु० २४ ११०, हपु० १ १

व्यवहार काल—समय, आवलि, उच्छ्वास, प्राण, स्तोक और लव आदि काल। हपु० ७ १६

व्यवहारनय—संग्रह नय के विषयभूत सत्ता आदि पदार्थों का विधिपूर्वक भेद करनेवाला एक नय। हपु० ५८ ४५

व्यवहारपल्य—व्यवहारपल्योपम काल का परिमाण बताने के लिए बनाया गया एक योजन प्रमाण लम्बा और इतना ही चौड़ा तथा गहरा गड्ढा और दीवाल से युक्त गर्त। इसमें एक से सात दिन तक के मेढ़े के ऐसे बाल जिनका दूसरा टुकड़ा न हो सके, कूट-कूट कर भर दिये जाते हैं। हपु० ७ ४७-४८

व्यवहारपल्योपम—व्यवहारपल्य गर्त में भरे गये अविभागी रोम के बालों में से सौ-सौ वर्ष में एक-एक बाल को निकालते हुए उन समस्त बालों को निकालने में जितना समय लगे वह व्यवहार पल्योपम काल कहलाता है। हपु० ७ ४७-४९, ५० [illegible]

व्यवहारचारित्र—हिंसा आदि पाँचों पापों का कृत कारित और अनुमोदना से तीनों योगों की शुद्धिपूर्वक तीन गुप्ति और पंच समिति के परिपालन के साथ सदा के लिए त्याग करना व्यवहारचारित्र कहलाता है। वीवच० १८ १८-१९

व्यवहारदर्शन—तत्त्वार्थ का शंका आदि दोषों से रहित तथा निःशंकादि गुणों से सहित श्रद्धान व्यवहार-सम्यग्दर्शन कहलाता है। वीवच० १८ ३

व्यवहारसम्यग्ज्ञान—तत्त्वार्थ का यथार्थरूप से ज्ञान होना। वीवच० १८ १४

व्यवहारेशिता—उपासकाध्ययन सूत्र में द्विज के कहे गये दस अधिकारों में छठा अधिकार। परमागम का आश्रय लेने वाले द्विज को प्रायश्चित्त आदि कार्यों में स्वतन्त्रता की प्राप्ति उसका व्यवहारेशिता-अधिकार कहलाता है। मपु० ४० १७४-१७७, १९२

व्यसन—असत्प्रवृत्तियों में रति। ये सात होते हैं। उनके नाम हैं—जुआ, मांस, मद्य, वेश्यागमन, शिकार, चोरी और परस्त्रीरमण। इनमें मद्य, मांस और शिकार क्रोधज तथा जुआ, चोरी, वेश्यागमन और परस्त्रीरमण कामज व्यसन हैं। मपु० ५९ ७५, ६२ ४४१

व्यस्त्र—महास्तम्भक दिव्यास्त्र। दिग्विजय के समय भरतेश के सैनिक इनसे युक्त थे। मपु० ३१ ७२

व्याख्याप्रज्ञप्ति—(१) द्वादशांग श्रुत का पाँचवाँ अंग। इसमें दो लाख अट्ठाईस हजार पदों में मुनियों के द्वारा विनयपूर्वक पूछे गये प्रश्न और केवली द्वारा दिये गए उनके उत्तरों का विस्तृत वर्णन है। मपु० ३४ १३९, हपु० १० ३४-३५

(२) दृष्टिवाद अंग के परिकर्म भेद के पाँच भेदों में यह पाँचवाँ भेद है। इसमें चौरासी लाख छत्तीस हजार पद हैं जिनमें रूपी-अरूपी द्रव्य तथा भव्य-अभव्य जीवों का वर्णन किया गया है। हपु० १० ६१-६२, ६७-६८

व्याघ्रपुर—एक नगर। यहाँ का राजा सुकान्त था। पपु० ८० १७३

व्याघ्रविलम्बी—राजा बाली का एक योद्धा। दशानन के दूत से बाली की निन्दा सुनकर इसने दूत को मारना चाहा था किन्तु बाली ने दूत का वध नहीं करने दिया था। पपु० ९ ६४-६९

व्याघ्रहस्त—लोहाचार्य के पश्चात् हुए आचार्यों में एक आचार्य। ये आचार्य पद्मसेन के शिष्य और नागहस्ति के गुरु थे। हपु० ६६ २७

व्याघ्री—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६४

व्याघ्ररथ—पोदनपुर नगर का राजा। [illegible] इसकी रानी और विजया पुत्री थी। विजया का विवाह अयोध्या नगरी के राजा [illegible] और रानी [illegible] के पुत्र [illegible] के साथ हुआ था। पपु० ५ [illegible]

व्यायामिक—[illegible] भेद। [illegible] पपु० २८, ९, ४० [illegible]

व्यास—[illegible] का सौतेला भाई। यह हस्तिनापुर के कौरववंशी राजा

पाराशर और रानी सत्यवती का पुत्र था। इसकी सुभद्रा स्त्री थी। इन दोनों के तीन पुत्र हुए थे—धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर। इनकी माँ का नाम योजनगन्धा अपर नाम गुणवती था। व्यास का दूसरा नाम धृतमर्त्य था। मपु० ७०.१०१-१०३, पापु० २.३९-४१, ७.११४-११७, ८.१७

व्युत्सर्ग—(१) आभ्यन्तर तप का पाँचवाँ भेद। आत्मा को देह से भिन्न जानकर शरीर से निस्पृह होकर तप करना व्युत्सर्ग-तप कहलाता है। इसमें बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रहों का त्याग किया जाता है। यह दो प्रकार का होता है—आभ्यन्तरोपाधित्याग-तप और बाह्योपाधित्याग-तप। इनमें क्रोध आदि अन्तरंग उपाधि का त्याग करना तथा शरीर के विषय में "यह मेरा नहीं है" इस प्रकार का विचार करना आभ्यन्तरोपाधित्याग-तप और आभूषण आदि बाह्य उपाधि का त्याग करना बाह्योपाधित्याग-तप है। इन दोनों उपाधियों का त्याग निष्परिग्रहता, निर्भयता और जिजीविषा को दूर करने के लिए किया जाता है। मपु० २०.१८९, २००-२०१, पपु० १४.११६-११७, हपु० ६४.३०, ४९-५०, वीवच० ६.४१-४६

(२) प्रायश्चित्त के नौ भेदों में पाँचवाँ भेद। कायोत्सर्ग आदि करना व्युत्सर्ग प्रायश्चित्त-तप कहलाता है। यह अतिचार लगने पर उसकी शुद्धि के लिए किया जाता है। हपु० ६४.३५

व्युष्टिक्रिया—गर्भान्वय क्रियाओं में ग्यारहवीं क्रिया। यह जन्म से एक वर्ष बाद की जाती है। इसका दूसरा नाम वर्षवर्धन है। इसमें अर्हन्त की पूजा, अग्नियों में मन्त्रपूर्वक आहुति का क्षेपण, दान, इष्ट बन्धुओं को आमन्त्रित करके भोजन आदि कराया जाता है। इस क्रिया में आहुति-क्षेपण करते समय निम्न मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है—उपनयनजन्मवर्षवर्धन भागी भव, वैवाहनिष्ठ वर्षवर्द्धनभागीभव, मुनीन्द्रजन्म वर्षवर्द्धनभागीभव, सुरेन्द्रजन्मवर्षवर्द्धनभागीभव, मन्दराभिषेकवर्षवर्द्धनभागीभव, यौवनराज्यवर्षवर्द्धनभागीभव और आर्हन्त्यराज्यवर्षवर्द्धनभागीभव। मपु० ३८.५६, ९६-९७, ४०.१४३-१४६

व्यूह—सैन्य-रचना। यह विविध प्रकार से होती थी। भरतेश ने दिग्विजय के समय दण्डव्यूह, मण्डलव्यूह, भोगव्यूह और असहृत-व्यूह से अपनी सैन्य रचना की थी। जयकुमार और अर्ककीर्ति ने भी युद्ध के समय मकरव्यूह, चक्रव्यूह, गरुडव्यूह से सैन्य-गठन किया था। मपु० ३१.७६-७७, ४४.१०९-११२

व्योमगामिनी—एक विद्या। यह दशानन को प्राप्त थी। मपु० ५.१००, पपु० ७.३३३

व्योमबिन्दु—कौतुकमंगल नगर का एक विद्याधर। नन्दवती इसकी स्त्री थी। इसकी दो पुत्रियाँ थीं—कौशिका और केकसी। इनमें कौशिकी बड़ी और केकसी छोटी पुत्री थी। पपु० ७.१२६-१२७

व्योममूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१२८

व्योमवल्लभ—भरतक्षेत्र के विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का दूसरा नगर। इसका अपर नाम गगनवल्लभ था। हपु० २२.८५, पापु० ५५

व्योमेन्दु—एक विद्याधर राजा। यह चन्द्रचूड विद्याधर का पुत्र तथा उडुपालन विद्याधर का पिता था। पपु० ५.५२

व्रज—मथुरा के पास का एक नगर। कृष्ण यहाँ रहते थे। मपु० ७०.४५५, ४६१

व्रण संरोहिणी—एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२.७१

व्रत—हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील तथा परिग्रह इन पाँचों पापों से विरति। इसके दो भेद हैं—अणुव्रत और महाव्रत। इनमें उक्त पाँचों पापों से एक देश विरत होना अणुव्रत और सर्वदेश विरत होना महाव्रत है। प्रत्येक व्रत की पाँच पाँच भावनाएँ होती हैं। इनमें सम्यक् वचनगुप्ति, सम्यग्मनोगुप्ति, देखकर भोजन करना, ईर्या और आदान-निक्षेपण समिति ये पाँच अहिंसाव्रत की भावनाएं हैं। क्रोध, लोभ, भय और हास्य का त्याग करना तथा प्रशस्तवचन बोलना सत्यव्रत की पाँच भावनाएँ हैं। शून्य और विमोचित मकानों में रहना, परोपरोधाकरण, भैक्ष्यशुद्धि और सधर्माविसंवाद ये पाँच अचौर्यव्रत की भावनाएँ हैं। स्त्रीरागकथाश्रवण, स्त्रियों के अंगावयवों का दर्शन, शारीरिक प्रसाधन, गरिष्ठ-रस और पूर्व रति-स्मरण इनका त्याग ये पाँच ब्रह्मचर्यव्रत की और पंच इन्द्रियों के इष्ट-अनिष्ट विषयों में राग-द्वेष का त्याग करना ये पाँच अपरिग्रह की भावनाएं हैं। पंचाणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों को मिलाकर व्रत बारह प्रकार के होते हैं। ये स्वर्ग और मुक्ति-दायक होते हैं। मपु० १०.१६२, ३९.३,७६ ३६३-३७०, ३७८-३८०, पपु० ११.३८, हपु० ३४.५२-१४९,५८.११६-१२२

व्रतकीर्तन—चन्द्रपुर नगर के राजा हरि और रानी धरादेवी का पुत्र। यह मुनिधर्म को पालते हुए मरकर स्वर्ग गया और वहाँ से च्युत होकर पश्चिम विदेहक्षेत्र के रत्नसंचय नगर के राजा महाघोष और रानी चन्द्रिणी का पयोबल नाम का पुत्र हुआ। पपु० ५.१३५-१३७

व्रतचर्याक्रिया—(१) गर्भान्वय-त्रेपन क्रियाओं में पन्द्रहवीं क्रिया। इसमें ब्रह्मचर्यव्रत के योग्य कमर, जाँघ, वक्ष-स्थल और सिर के चिह्न धारण किये जाते हैं। कमर में रत्नत्रय का प्रतीक तीन लर का मौञ्जीबन्धन, जाँघ पर अर्हन्त कुल की पवित्रता और विशालता की प्रतीक धोती, वक्ष स्थल पर सप्त परमस्थानों का सूचक सात लर का यज्ञोपवीत और सिर का मुण्डन कराया जाता है। इस चर्या में लकड़ी की दातौन नहीं की जाती, पान नहीं खाया जाता, अंजन नहीं लगाया जाता हल्दी आदि का लेप लगाकर स्नान नहीं किया जाता, अकेले पृथ्वी पर शयन करना होता है। यह सब द्विज तब तक करता है जब तक उसका विद्याध्ययन समाप्त नहीं होता। इसके पश्चात् उसे गृहस्थों के मूलगुण धारण करना और श्रावकाचार एवं अध्यात्मशास्त्र आदि का अध्ययन करना होता है। मपु० ३८.५६, १०९-१२०।

(२) दीक्षान्वय क्रियाओं में दसवीं क्रिया। इसमें यज्ञोपवीत से युक्त होकर शब्द एवं अर्थ दोनों प्रकार से उपासकाध्ययन के सूत्रों का भली प्रकार अभ्यास किया जाता है। मपु० ३९.५७

व्रतधर—एक मुनि। कृष्ण की छोटी बहिन तथा यशोदा की पुत्री ने इन्हीं मुनि से अपने कुरूप होने का कारण ज्ञातकर आर्यिका के व्रत लिये थे। हपु० ४९ १, १३-१७, २१

व्रतधर्मा—कुरुवंश का एक राजा। यह श्रीव्रत का पुत्र और धृत का पिता था। हपु० ४५ २९

व्रतप्रतिमा—श्रावकधर्म और ग्यारह प्रतिमाओं में दूसरी प्रतिमा। इस प्रतिमा का धारी व्रती शल्य रहित होकर पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत धारण करता है। वीवच० १८ ३७

व्रतसंरोहण—एक विद्यास्त्र। विद्याधर चण्डवेग ने यह वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४९-५०

व्रतावतरणक्रिया—(१) गर्भान्वय-त्रेपन क्रियाओं में सोलहवीं क्रिया। यह गुरु की साक्षीपूर्वक बारह अथवा सोलहवें वर्ष में सम्पन्न की जाती है। इसमें मद्य-मांस और पाँच उदुम्बर फलों का तथा पंच स्थूल पापों का सार्वकालिक त्याग किया जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य गुरु की आज्ञा से वस्त्र, आभूषण और माला आदि ग्रहण कर सकते हैं। क्षत्रिय आजीविका की रक्षा अथवा शोभा के लिए शस्त्र भी धारण कर सकते हैं। जब तक आगे की क्रिया नहीं होती तब तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन तीनों वर्णों के लिए आवश्यक है। मपु० ३८ ५६, १२१-१२६

(२) दीक्षान्वय क्रियाओं में ग्यारहवीं क्रिया। इसमें विद्याभ्यास के पश्चात् शिष्य गुरु के समीप विधिपूर्वक पुनः आभूषण आदि ग्रहण करता है। मपु० ३९.५८

व्रती—माया, निदान और मिथ्यात्व इन तीन शल्यों से रहित व्रतधारी। ये हिंसा आदि पाँचों पापों से एक देश विरत रहते हैं। इनके दो भेद हैं—सागार और अनगार। इनमें व्रतों का एक देश पालन करनेवाले सागार अणुव्रती और पूर्ण रूप से व्रतों का पालन करनेवाले अनगार महाव्रती कहलाते हैं। मपु० ५६ ७४-७५, ७६.३७३-३७६, हपु० ५८ १३४-१३७

व्रात—कुरुवंशी का एक राजा। यह सुव्रत का पुत्र और मन्दर का पिता था। हपु० ४५ ११

व्रीहि—वर्षा के आरम्भ में बोया जानेवाला अनाज-धान्य। वृषभदेव के समय में यह उत्पन्न होने लगा था। मपु० ३ १८६

श

शंकर—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६, २५ ७४, १८९

शंकुक—विद्याओं का एक निकाय। अदिति देवी ने यह निकाय नमि और विनमि विद्याधरों को दिया था। हपु० २२ ५६, ५८ दे० विद्या

शंख—(१) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८.७१

(२) भरतक्षेत्र में हस्तिनापुर नगर के निवासी सेठ श्वेतवाहन और सेठानी बन्धुमती का पुत्र। इसने अपने मित्र निर्नामिक का पूर्वभव सुनकर मुनि द्रुमषेण से दीक्षा ले ली थी। मपु० ७१ २६०-२६१, २८७, हपु० ३३ १४१, १६४

(३) चक्रवर्ती भरतेश की नौ निधियों में एक निधि। मपु० ३७ ८१, हपु० ११ ११०, १२०

(४) हरिवंशी राजा नभसेन का पुत्र। यह राजा भद्र का पिता था। हपु० १७ ३५

(५) लवणसमुद्र की पश्चिम दिशा के वड़वामुख पाताल-विवर का समीपवर्ती एक पर्वत। हपु० ५ ४६२

(६) एक वाद्य। इसे फूंक कर बजाया जाता है। मपु० १३ १३, १७ ११३

(७) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। वैश्य देविल इसी नगर का निवासी था। मपु० ६२ ४९४

(८) धातुकीखण्ड द्वीप के ऐरावतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के मन्दारनगर का राजा। जयादेवी इसकी रानी तथा पृथिवी-तिलका पुत्री थी। मपु० ६३ १६८-१७०

(९) *आगामी आठवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७१-४७२*

(१०) रावण का एक योद्धा। पपु० ५७ ५३, ६६.२५

शंखपुर—धातकीखण्ड द्वीप के ऐरावतक्षेत्र का एक नगर। राजगुप्त यहाँ का नप था। मपु० ६३ २४६ दे० राजगुप्त

शंखवज्र—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का तेईसवाँ नगर। हपु० २२ ९६

शंखवर—मध्यलोक के प्रथम सोलह द्वीपों और सागरों में बारहवाँ द्वीप और सागर। यह द्वीप इसी नाम के सागर से घिरा हुआ है। हपु० ५ ६१८

शंखशैल—धातकीखण्ड द्वीप का एक पर्वत। शंखपुर के राजा राजगुप्त और रानी शंखिका ने इसी पर्वत पर सर्वगुप्त मुनि से जिनगुणख्याति-व्रत ग्रहण किया था। मपु० ६३ २४६-२४८

शंखा—पूर्व विदेह का एक देश। मपु० ६३ २११, हपु० ५ २४९

शंखिका—धातकीखण्ड द्वीप के ऐरावतक्षेत्र में स्थित शंखपुर नगर के राजा राजगुप्त की रानी। इसने और इसके पति दोनों ने शंखशैल पर मुनिराज धृतिषेण को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३ २४६-२५०

शंब—कृष्ण और उनकी पटरानी जाम्बवती का पुत्र। कृष्ण की पटरानी रुक्मिणी ने अपने भाई रुक्मी से अपने पुत्र प्रद्युम्न के लिए उसकी पुत्री वैदर्भी की याचना की थी। रुक्मी ने पूर्व विरोध के कारण यह निवेदन स्वीकार नहीं किया था। इससे कुपित होकर इसने और प्रद्युम्न दोनों ने भील के वेष में रुक्मी को पराजित कर बलपूर्वक वैदर्भी का हरण किया था। इसके पश्चात् वैदर्भी का विवाह प्रद्युम्न से हुआ। इसने कदम्ब वन में मदिरा-पान कर तप में लीन मुनि द्वैपायन पर अनेक उपसर्ग किये थे। *उपसर्ग के कारण उत्पन्न मुनि* के कोप को द्वारिका के भस्म होने का कारण जानकर यह दीक्षित हो गया था। अन्त में गिरनार पर्वत से इसका निर्वाण हुआ। यह सातवें पूर्वभव में शृगाल था, छठे पूर्वभव में वायुभूति-ब्राह्मण, पाँचवें पूर्वभव में सौधर्म स्वर्ग में देव, चौथे पूर्वभव में मणिभद्र सेठ का पुत्र, तीसरे

पूर्वभव मे सौधर्म स्वर्ग मे देव, दूसरे पूर्वभव में राजपुत्र कैटभ और प्रथम पूर्वभव में अच्युतेन्द्र हुआ था। इसका अपर नाम शभव था। मपु० ७२ १७४-१७५, १८९-१९१, हपु० ४३.१००, ११५, १४८-१४९, १५८-१६०, २१६-२१८, ४८ ४-२०, ६१ ४९-५५, ६८, ६५ १६-१७

शंबर—(१) सुप्रकारनगर का एक विद्याधर राजा। श्रीमती इसकी रानी तथा लक्ष्मणा पुत्री थी। कृष्ण इसके दामाद थे। मपु० ७१ ४०९-४१४

(२) तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पूर्वभव का भाई एक ज्योतिष देव। इसने पार्श्वनाथ पर अनेक उपसर्ग किये थे। पार्श्वनाथ को केवलज्ञान हो जाने पर उनसे क्षमा-याचना कर यह सम्यक्त्वी हो गया था। मपु० ७३ ११७-११८, १३६-१३८, १४५-१४६, १६८

(३) राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ६६ २५

शबुकुमार—यादवों का पक्षधर एक राजा। इसने क्षेमविद्ध विद्याधर से युद्ध करके उसे रथ-विहीन करते हुए युद्धभूमि से भगा दिया था। शब के साथ युद्ध कर रहे विद्याधर को भी इसने युद्धक्षेत्र से पलायन करने को बाध्य किया था। पापु० १९ १११-११३

शंबूक—अलकारपुर नगर के राजा खरदूषण तथा रावण की बहिन चुनंखा का ज्येष्ठ पुत्र। यह सुन्द का बड़ा भाई था। इसने सूर्यहास-खड्ग की प्राप्ति हेतु दण्डक वन में क्रौंचरवा नदी और समुद्र के उत्तर तट पर एक वश की झाड़ी में एकासन करते हुए ब्रह्मचर्य पूर्वक बारह वर्ष पर्यन्त साधना की थी। फलस्वरूप एक खड्ग प्रकट हुआ था। वह सात दिन बाद ग्राह्य होने से यह वहीं स्थिर रहा। इसी बीच लक्ष्मण इस वन मे आये और खड्ग से उत्पन्न सुगध का अनुसरण करते हुए वश की झाड़ी के निकट पहुँचे। लक्ष्मण को खड्ग दिखाई दिया। सहज भाव से खड्ग लेकर लक्ष्मण ने खड्ग की परीक्षा के लिए उस वश झाडी को काट डाला। झाड़ी के कटते ही यह भी निष्प्राण हो गया और मरकर असुरकुमार देव हुआ। पपु० ४३ ४१-६१, ७३, १२३ ४

शंभव—(१) भरतेश एव सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६, २५ ७४, १००

(२) कृष्ण और उनकी पटरानी जाम्बवती का पुत्र। मपु० ७२ १७४ दे० शब

(३) अवसर्पिणी काल के चौबीस तीर्थंकरो मे तीसरे तीर्थंकर। जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की श्रावस्ती नगरी क राजा दृढ़राज इनके पिता और रानी सुषेणा मां थी। ये सोलह स्वप्नपूर्वक फाल्गुन शुक्ल अष्टमी के दिन प्रातः वेला और मृगशिर नक्षत्र में गर्भ में आये थे। कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की पौर्णमासी के दिन मृगशिर नक्षत्र और सौम्ययोग में इन्होंने जन्म लिया था। जन्मोत्सव के समय इन्द्र ने इनका नाम शम्भव रखा था। ये दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ के बाद तीस लाख करोड सागर समय व्यतीत हो जाने पर उत्पन्न हुए थे। इनकी आयु साठ लाख पूर्व काल की थी। शरीर चार सौ धनुष ऊँचा था। आयु का चौथाई काल बीत जाने पर इन्हें राज्य मिला था। चवालीस लाख पूर्व और चार पूर्वाङ्ग काल तक राज्यशासन करने के उपरान्त एक दिन ये मेघो का विलय देखकर ससार से विरक्त हुए और इन्होने पुत्र को अपना राज्य सौंप दिया। इसके पश्चात् सिद्धार्थ नाम की पालकी में बैठकर ये सहेतुक वन गये। वहाँ इन्होंने एक हजार राजाओ के साथ सयम धारण किया। दीक्षा लेते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान हो गया। श्रावस्ती के राजा सुरेन्द्रदत्त ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। ये चौदह वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में मौन रहे। शाल्मलि वृक्ष के नीचे कार्तिक कृष्ण चतुर्थी के दिन मृगशिर नक्षत्र मे शाम के समय इन्हें केवलज्ञान हुआ। इसी दिन इन्होंने अनन्त चतुष्टयो को प्राप्त किया। इनके साथ चारुषेण आदि एक सौ पाँच गणधर, दो हजार एक सौ पचास मन पर्ययज्ञानी और बारह हजार वादी मुनि थे। सघ मे धर्मा आर्यिका सहित तीन लाख बीस हजार आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक और श्राविकाएँ भी थी। ये चौतीस अतिशय और अष्ट प्रातिहार्यों के स्वामी थे। अन्त मे एक माह की आयु शेष रह जाने पर विहार करते हुए ये सम्मेदाचल आये। यहाँ इन्होने एक हजार मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण किया। चैत्र शुक्ल षष्ठी के दिन सूर्यास्त वेला में ये मुक्त हुए। दूसरे पूर्वभव मे ये राजा विमलवाहन और प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र थे। मपु० ४९ २-५६, पपु० १ ४, हपु० १ ५, ६० १३८, १५६-१८४, ३४१-३४९, वीवच० १.१३, १८ १०५

शंभु—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६, २५ १००

(२) रावण का एक सामन्त राजा। इसने राम के पक्ष के विशाल्यद्युति योद्धा को मारा था। पपु० ५७ ४५-४८, ६० १९

(३) मृणालकुण्ड नगर के राजा वज्रकम्बु और उसकी स्त्री हेमवती का पुत्र। यह अपने पुरोहित श्रीभूति की पुत्री वेदवती में आसक्त था। वेदवती को पाने के लिए इसने रात्रि में श्रीभूति को मार डाला था तथा बलात् वेदवती का शील भग किया था। इसके इस कुकृत्य से रुष्ट होकर वेदवती ने आगामी पर्याय में इसके वध के लिए उत्पन्न होने का निदान किया। उसने आर्यिका होकर तप किया और अन्त में देह त्याग कर ब्रह्म स्वर्ग में उत्पन्न हुई। वेदवती के अभाव मे यह उन्मत्त हो गया। मुनियो की निन्दा करने लगा। पाप के फलस्वरूप नरक और तिर्यंचगति में भटकता रहा। अनेक पर्यायो में भ्रमण करने के पश्चात् रावण हुआ। पपु० १०६.१३३-१५७, १७५-१७८

शयु—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६

शंवद—भरतेश तथा सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३६, २५ १८९

शवान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०६

शक—भरतक्षेत्र का एक देश। कर्मभूमि के आरम्भ में इन्द्र ने इसका निर्माण किया था। लवणाकुश ने इस देश के राजा को पराजित किया था। मपु० १६ १५६, पपु० १०१.७९-८६

शकट—(१) भरतक्षेत्र का एक देश। सिंहपुर इस देश का एक नगर था। हपु० २७.२०

(२) एक ग्राम। यह संजयत मुनि की पूर्वभव की जन्मभूमि था। पपु० ५.३५-३६

(३) पुरिमताल नगर का निकटवर्ती एक उद्यान। वृषभदेव यहाँ वटवृक्ष के नीचे एक शिला पर पर्यंकासन से ध्यानस्थ हुए थे। केवलज्ञान उन्हें यहीं हुआ था। यहाँ चक्रवर्ती भरतेश के छोटे भाई वृषभसेन रहते थे। मपु० २०.२१८-२२०, हपु० ९.२०५-२१०

शकटमुखी—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी की सतरहवीं नगरी। हरिवंशपुराण के अनुसार यह सातवीं नगरी तथा इसका शकटामुख नाम है। मपु० १९.४४, ५३, हपु० २२.९३

शकटामुख—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सातवाँ नगर। हपु० २२.९३ दे० शकटमुखी

(२) ह्रीमत पर्वत पर स्थित एक नगर। यहाँ का राजा विद्याधरों का स्वामी नीलवान् था। हपु० २२.१४३, २३.३

शकराज—एक राजा। यह भगवान् महावीर के मोक्ष जाने के पश्चात् छ सौ पाँच वर्ष पाँच मास काल बीत जाने पर राजा बना था। हपु० ६०.५५१

शकुन—शुभ अथवा अशुभ सूचक लक्षण। अग्निज्वाला का दक्षिणावर्त से प्रज्वलित होना, मयूर का बोलना, अलङ्कृता नारी के दर्शन, सुगंधित वायु-प्रवाह, मुनि दर्शन, घोड़ों का हिनहिनाना, घण्टनाद, दधिपूरित कलश, गायों और नये गोबर को बिखेरते तथा पंख फैलाए कौए का दिखाई देना और भेरी-शंख-निनाद आदि शुभ सूचक शकुन हैं। पपु० ५४.४९-५३

शकुना—पोदनपुर नगर के निवासी ब्राह्मण अग्निमुख की स्त्री। यह मुनि मृदुमति की जननी थी। पपु० ८५.११८-११९

शकुनि—(१) दुर्योधन का मामा। इसने राज्य के विभाजन, लाक्षागृह निर्माण और द्यूतक्रीडा आदि पाण्डव-विरोधी कार्यों में दुर्योधन को मन्त्रणा दी थी और अनेक प्रकार से सहायता की थी। इसका चारुदत्त भाई था। वह कृष्ण का परम हितैषी था। हपु० ४५.४०-४१, ४६.३-५, ५०.७२

(२) मेरुकदत्त सेठ के चार मन्त्रियों में दूसरा मंत्री। किसी अंगहीन पुरुष को देखकर सेठ ने इससे उसकी अंगहीनता का कारण पूछा था और इसने भी जन्म के समय बुरे शकुन होना उसकी अंग-हीनता का कारण बताया था। मपु० ४६.११२-११५

शक्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११३

शक्ति—(१) दान-दातार के सात गुणों में दूसरा गुण। दान देने में प्रमाद नहीं करना दाता का शक्ति-गुण कहलाता है। मपु० २०.८२-८३

(२) एक शस्त्र। लक्ष्मण इसी से आहत हुए थे। मपु० ४४.२२७, पपु० ६२.७५-८२

(३) बल। यह तीन प्रकार का होता है—मन्त्रशक्ति, उत्साहशक्ति और प्रभुशक्ति। मपु० ६८.६०

(४) हस्तिनापुर नगर का एक कौरववंशी राजा। शतकी इसकी रानी और पराशर इसका पुत्र था। मपु० ७०.१०१-१०२

शक्तितस्तप—तीर्थंकर-प्रकृतिबंध की सोलहकारण भावनाओं में एक भावना। यथाशक्ति मोक्षमार्ग के अनुरूप तप करना शक्तितस्तप कहलाता है। हपु० ३४.१३८

शक्तितस्त्याग—तीर्थंकर प्रकृतिबंध की सोलहकारण भावनाओं में एक भावना। शक्ति के अनुसार पात्रों को आहारदान, औषधिदान, अभयदान और ज्ञानदान देना शक्तितस्त्याग-भावना है। हपु० ३४.१३७

शक्तिवरसेन—अयोध्या नगरी का एक राजकुमार। शब्दवरसेन इसका भाई था। मपु० ६३.१६२

शक्तिषेण—(१) पुष्कलावती देश में शोभानगर के राजा प्रजापाल का सामन्त। अटवीश्री इसकी स्त्री तथा सत्यदेव इसका पुत्र था। इसने मद्य-मांस का त्याग कर पर्व के दिनों में उपवास करने का नियम लिया था। अणुव्रत धारण किये थे और मुनि की आहार-वेला के पश्चात् भोजन करने का नियम लिया था। इसने दो चारण मुनियों को आहार देकर पंचाश्चर्य भी प्राप्त किये थे। इसका पुत्र ह्रीनाग था। अपनी मौसी के कुपित होने पर वह घर से भाग गया था। पुत्र के मिलने पर इसने उसे अपने साथ लाना चाहा किन्तु पुत्र के न आने पर इसने दुःखी होकर अगले भव में अपने पुत्र का स्नेह-भाजन होने का निदान किया और द्रव्य-संयमी हो गया। अन्त में यह पुत्र-प्रेम से मोहित होकर मरा और लोकपाल हुआ। मपु० ४६.९४-९८, १११, ११७-१२२, पापु० ३.१९६-२००

शक्रधनु—सूर्योदय नगर का राजा। इसकी रानी का नाम श्री था। ये दोनों जयचन्द्रा के माता-पिता थे। चक्रवर्ती हरिषेण इसका जामाता था। पपु० ८.३६२-३६३, ३७०-३७१

शक्रन्दमन—बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८.६६-६८

शक्रमह—इन्द्रध्वज विधान। इसका अपर नाम इन्द्रमह है। हपु० १६.१२, २४.३७, ४१

शक्राभ—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७.४९

शक्राशनि—रावण का एक योद्धा। इसने राम के दुष्ट नामक योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ६२.३६

शची—इन्द्र की पटरानी। यह तीर्थंकर के जन्मोत्सव के समय गर्भगृह में जाकर और तीर्थंकर को गर्भगृह से बाहर लाकर जन्माभिषेक हेतु इन्द्र को देती है। मपु० १३.३९, ४६.२५७, पपु० ७.२८

शतकी—हस्तिनापुर के कौरववंशी राजा शक्ति की रानी। यह पराशर की जननी थी। मपु० ७०.१०१-१०२

शतग्रीव—विद्याधर सहस्रग्रीव का पुत्र। इसने पिता से लंका का राज्य प्राप्त करके वहाँ पच्चीस हजार वर्ष राज्य किया था। मपु० ६८.८-१०

शतघ्नी—सौ व्यक्तियों पर एक साथ प्रहार करने वाली तोप। इसका रावण की सेना ने वरुण की सेना के साथ युद्ध करते समय प्रयोग किया। पपु० १९ ४२-४३

शतघोष—अशनिघोष विद्याधर के पाँच सौ पुत्रों में एक पुत्र। इसने श्रीविजय के साथ पन्द्रह दिन युद्ध किया और अन्त में यह पराजित हो गया था। मपु० ६२ २७५-२७६ दे० अशनिघोष

शतज्वलकूट—मेरु पर्वत के दक्षिण-पश्चिम कोण में स्थित स्वर्णमय विद्युत्प्रभ पर्वत का सातवाँ कूट। हपु० ५ २१२, २२२

शतद्वार—धातकीखण्ड द्वीप के ऐरावत क्षेत्र का एक नगर। सुमित्र और प्रभव दोनों विद्वान् इसी नगर के थे। पपु० १२ २२-२३

शतद्रुत—जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३५

शतधनु—(१) हरिवंशी राजा देवगर्भ का एक पुत्र। यह धनुर्धर था। हपु० १८ २०

(२) बलदेव का एक पुत्र। हपु० ४८ ६८, ५० १२६

शतपति—हरिवंशी राजा निहतशत्रु का पुत्र। यह वृहद्रथ का पिता था। हपु० १८ २१-२२

शतपर्वा—एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि विद्याधरों को दी थी। हपु० २२ ६७

शतबल—महाबल विद्याधर का दादा। यह सहस्रबल का पुत्र था। इसने सम्यक्त्वी होकर श्रावक के व्रत ग्रहण किये थे। यह आयु के अन्त में यथाविधि समाधिमरणपूर्वक देह त्याग कर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ और इसके पिता मोक्ष गये। इसका अपर नाम शतबलि, पिता का अपर नाम सहस्रायुध और बाबा का अपर नाम वज्रायुध था। मपु० ५ १३९-१४९, ६३.१३८-१३९

शतबलि—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित मन्दरपुर के राजा विद्याधर बलीन्द्र (प्रतिनारायण) का पुत्र। यह युद्ध में दत्त नारायण द्वारा मारा गया था। मपु० ६६ १०९-११०, ११८

(२) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के निवासी विद्याधर महाबल और विद्याधरी ज्योतिर्माला का पुत्र, हरिवाहन का भाई। इसने हरिवाहन को राज्य से निकाल दिया था। हपु० ६०.१८-२०

शतबाहु—माहिष्मती नगरी के राजा सहस्ररश्मि का पिता। यह पुत्र को राज्य सौंप करके मुनि हो गया था। इसे जंघाचारण ऋद्धि प्राप्त थी। रावण द्वारा पुत्र के पकड़े जाने पर यह रावण के पास उसे निर्बन्ध कराने गया था। पपु १० ६५, १३९-१४७, १६८

शतबिन्दु—(१) एक निमित्तज्ञ। प्रतिनारायण अश्वग्रीव ने अपने यहाँ विनाश सूचक हुए उत्पातों का फल इसी से पूछा था। मपु० ६२ ११३-११५, पापु० ४ ५५-५६

(२) राजा सहस्रबाहु का चाचा। श्रीमती इसकी रानी और जमदग्नि पुत्र था। मपु० ६५ ५७-६०

शतभिषा—एक नक्षत्र। तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म इसी नक्षत्र में हुआ था। पपु० २०.४८

शतभोगा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना ने इस नदी को पार किया था। मपु० २९ ६५

शतमख—इन्द्र का अपर नाम। हपु० १६ १८

शतमति—विजयार्ध पर्वत की अलकापुरी के राजा महाबल का एक मिथ्यादृष्टि मन्त्री। यह नैरात्म्यवादी (शून्यवादी) था। मिथ्यात्व के कारण मरकर यह नरक गया। मपु० ४ १९०-१९१, ५ ४४, १०८

शतमन्यु—एक ऋषि। इसका एक आश्रम था। चम्पा नगरी के राजा जनमेजय की माता नागवती कालकल्प राजा के आक्रमण करने पर पुत्री को लेकर सुरंग मार्ग से इसी के आश्रम में आयी थी। यह नागवती का पति तथा जनमेजय का पिता था। पपु० ८ ३०-३०३, ३९२

शतमुख—राजा धरण का चौथा पुत्र। हपु० ४८ ५०

शतरथ—अयोध्या में हुए इक्ष्वाकुवंशी राजाओं में एक राजा। यह राजा हेमरथ का पुत्र और राजा पृथु का पिता था। पपु० २२ १५३-१५४, १५९

शतसंकुला—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९६

शतह्रद—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का अठारहवाँ नगर। हपु० २२.९५

शतह्रदा—कांचनस्थान नगर के राजा कांचनरथ की रानी। इसकी दो पुत्रियाँ थीं—मन्दाकिनी और चन्द्रभाग्या। पपु० ११०.१-१९

शतानीक—(१) वत्स देश की कौशाम्बी नगरी का एक चन्द्रवंशी राजा। चेटक की दूसरी पुत्री मृगावती इसी की रानी थी। मपु० ७५ ३-५, ९

(२) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३८

(३) विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०५

शतायुध—कौरवों का पक्षधर एक राजा। इसने कृष्ण और अर्जुन को दु:साध्य समझकर देवी गदा का स्मरण किया था। जैसे ही गदा इसके हाथ आयी कि इसने कृष्ण के गले पर उससे प्रहार किया था। यह गदा कृष्ण के पास पुष्पहार की भाँति लटक गयी थी और उससे सुगन्ध फैलने लगी थी। कृष्ण ने इसी गदा से इसे मारा था। पापु० २० १३१-१३९

शतार—ऊर्ध्वलोक में स्थित ग्यारहवाँ कल्प। पपु० १०५.१६६-१६९, हपु० ६.३७

शतारक—सहस्रार स्वर्ग का इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५०

शतारेन्द्र—शतार स्वर्ग के देवों का स्वामी-इन्द्र। वीवच० १४.४६

शत्रुंजय—(१) भरतक्षेत्र का एक पर्वत। यहाँ पाँचों पाण्डवों ने आकर प्रतिमायोग से ध्यान लगाया था। दुर्योधन के भानजे कुर्यधर अपर नाम क्षुयवरोधन ने पाण्डवों को लोहे के तप्त वस्त्र और आभूषण इसी पर्वत पर पहनाये थे। उपसर्ग जीतकर युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन इसी पर्वत से मुक्त हुए और नकुल तथा सहदेव सर्वार्थसिद्धि विमान

में उत्पन्न हुए। यह पर्वत एक तीर्थ के रूप में मान्य हुआ। मपु० ७२ २६७-२७०, हपु० ६५ १८-२०

(२) राजा विनमि विद्याधर का पुत्र। हपु० २२ १०४

(३) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का सातवाँ नगर। मपु० १९ ८०, ८७, हपु० २२ ८६

(४) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का तिरेपनवाँ पुत्र। पापु० ८.१९९

(५) एक राजा। यह रोहिणी के स्वयंवर में आया था। रोहिणी के लिए इसने वसुदेव के साथ युद्ध किया था। वसुदेव ने इसका रथ और कवच तोड डाला था और इसे मूर्च्छित अवस्था में छोड दिया था। हपु० ३१ २७, ९४-९५, ५० १३१-१३२

शत्रु—आत्महितकारी तप, दीक्षा और व्रत आदि ग्रहण करने में बाधक कुबुद्धि। वीवच० ८ ४४

शत्रुघ्न—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०१

(२) वसुदेव और देवकी का पाँचवाँ पुत्र। यह अपने भाई जितशत्रु के साथ युगल रूप से उत्पन्न हुआ था। कंस का यह घातक था। कंस-जन्मते ही इसका वध करना चाहता था। सुनैगम देव ने भद्रिलसा नगर के सुदृष्टि सेठ की अलका सेठानी के यहाँ हुए मृत-युगल पुत्र लाकर देवकी के पास रखे और देवकी के ये युगल पुत्र उसके पास रखकर इनकी रक्षा की थी। कंस मृत पुत्र देवकी के ही समझा था। यह अपने अन्य पाँचो भाइयो के साथ अरिष्टनेमि के समवसरण में आया था। यहाँ धर्म को सुनकर ये सभी भाई अरिष्ट-नेमि से दीक्षित हो गये थे। अन्त में छहो भाई तपकर गिरनार पर्वत से मोक्ष गये। चौथे पूर्वभव में यह मथुरा नगरी के भानु सेठ का शूरदत्त नामक पुत्र था। तीसरे पूर्वभव में यह सौधर्म स्वर्ग में त्रायस्त्रिंश जाति का देव हुआ। इस स्वर्ग से च्यवकर दूसरे पूर्वभव में धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी में नित्यालोक नगर के राजा चित्रचूल का पुत्र मणिचूल विद्याधर और प्रथम पूर्वभव में यह भरतक्षेत्र के हस्तिनापुर नगर के राजा गगदेव और रानी नन्दयशा का पुत्र सुनन्द था। मपु० ७१ २०१-२०४, २४५-२५१, २६०-२६३, २९३-२९६, हपु० ३३.३-८, ९७, १३०-१४३, ५९ ११५-१२०, ६५.१६-१७

(३) जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा दशरथ और रानी सुप्रभा का पुत्र। पद्म (राम) लक्ष्मण और भरत इसके बड़े भाई थे। पद्म का दूसरा नाम राम था। राम और लक्ष्मण के जन्म के समय दशरथ वाराणसी के राजा थे और भरत तथा इसके जन्म के समय वे अयोध्या मे रहने लगे थे। लका विजय करने के पश्चात् अयोध्या आकर राम के द्वारा अयोध्या का आधा राज्य या पोदनपुर, राजगृह, पौड्रनगर आदि नगरों में किसी भी नगर का राज्य लेने के लिए इससे आग्रह किये जाने पर इसने राम से मथुरा का राज्य चाहा था। मथुरा में राजा मधु का शासन था। इसने कृतान्तवक्त्र के सेनापतित्व में सेना सगठित कर अर्धरात्रि के समय मधु पर आक्रमण किया। युद्ध करते-करते ही मधु को वैराग्य उत्पन्न हुआ। द्विविध परिग्रह त्याग करके मधु ने हाथी पर बैठे-बैठे ही केशलोंच किये। मधु की यह स्थिति देखकर इसने नमस्कार करते हुए उससे क्षमा याचना की थी। इस प्रकार इसे मथुरा का राज्य प्राप्त हो गया था। मधु को दिया गया शूलरत्न लौटकर आने से मधु का मरण जानकर चमरेन्द्र कुपित हुआ और उसने मथुरा में महारोग फैलाये थे। चमरेन्द्र के उपसर्गों से त्रस्त होकर और कुल देवता की प्रेरणा से यह अयोध्या लौट आया था। सप्तर्षियो के आने पर उपसर्ग दूर होने के समाचार ज्ञातकर यह मथुरा आया तथा इसने सप्तर्षियो के उपदेशानुसार नगर के भीतर और बाहर सप्तर्षि प्रतिमाएँ चारों दिशाओं में स्थापित कराई थी। अन्त में राम इसे राज्य देकर तप करना चाहते थे किन्तु इसने राज्य न लेकर समाधि रूपी राज्य प्राप्ति की कामना की थी। अन्त में यह निर्ग्रन्थ होकर श्रमण हो गया था। मपु० ६७ १४८-१५३, १६३-१६५, पपु० २५ १९, २२-२६, ३५-३६, ८९ १-१०, ३६, ५६, ९६-११६, ९० १-४, २२-२४, ९२.१-४, ७-११, ४४-५२, ७३-८२, ११८.१२४-१२६, ११९ ३८

शत्रुदमन—(१) कृष्ण का पक्षधर एक राजा। हपु० ५० १२४

(२) वृषभदेव के चौथे गणधर। हपु० १२ ५५

शत्रुदमनी—एक विद्या। यह विभीषण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३३४

शत्रुन्दम—क्षेमाजलि नगर का राजा। इसकी गुणवती रानी और जित-पद्मा पुत्री थी। लक्ष्मण ने इसे पराजित कर जितपद्मा को अपनी अर्धांगिनी बनाया था। पपु० ३८ ५७, ७२-७३, १०६-१३९

शत्रुमर्दन—कपित्थ वन के दिशागिर पर्वत पर वनगिरि नगर के भीलो के राजा हरिविक्रम का एक सेवक। मपु० ७५, ४७८-४८१

शत्रुसह—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौवनवाँ पुत्र। पापु० ८ १९९

शत्रुसेन—जरत्कुमार की सन्तति में हुए राजा अजातशत्रु का पुत्र और जितारि का पिता। हपु० ६६ १-५

शनि—ज्योतिर्लोक के देव। ये आधा पल्य जीते हैं। इनके विमान तप्त स्वर्ण वर्ण के होते हैं। हपु० ६ ९, २१

शन्तनु—(१) बलदेव का चौदहवाँ पुत्र। हपु० ४८ ६७, ५० १२५

(२) कुरुवंशी एक राजा। यह राजा शान्तिषेण का पुत्र था। योजनगन्धा इसकी रानी और धृतव्यास पुत्र था। पाण्डवपुराण में योजनगन्धा पाराशर ऋषि की पत्नी तथा व्यास की जननी भी कही गयी है। हपु० ४५ ३०-३१, पापु० २ ३०-४१

शबर—म्लेच्छ जाति के पुरुष। ये दूसरो की रक्षा करते थे। मपु० १६ १६१

शब्दनय—सात नयो में पाँचवाँ नय। यह नय लिंग, साधन (कारक), संख्या (वचन), काल और उपग्रह पद के दोषो को दूर करता है। यह व्याकरण के नियमो के आधीन होता है। हपु० ५८ ४१, ४७

शब्दवरसेन—अयोध्या नगरी का एक राजपुत्र । मपु० ६३ १६२, दे० शक्तिवरसेन

शब्दानुपात—देशव्रत के पाँच अतिचारो में चौथा अतीचार । निश्चित मर्यादा के बाहर अपना शब्द भेजना या बातचीत करना शब्दानुपात कहलाता है । हपु० ५८ १७८

शमात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६३

शमी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १६१

शम्याताल—तालगत गन्धर्व के बाईस भेदो में पाँचवाँ भेद । हपु० १९ १५०

शय्या-परीषह—बाईस परीषहो में एक परीषह । ध्यान और अध्ययन में हुए श्रम के कारण रात्रि में भूमि में एक करवट से बिना कुछ ओढे हुए अल्प निद्रा लेना शय्या परीषह है । मुनि इसे सहर्ष सहते है । उनके मन में इस परीषह को जीतने में कोई विकार पैदा नही होता मपु० ३६ १२०, हपु० ६३ १०२

शर—(१) कुरुवश का एक राजा । यह प्रतिशर का पुत्र और पारशर का पिता था । हपु० ४५ २९

(२) राम के समय का एक शस्त्र (वाण) । पपु० १२ २५७

शरण्य—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ३७, २५ १३६

शरद्वीप—कुरुवशी एक राजा । यह पारशर का पुत्र और द्वीप राजा का पिता था । हपु० ४५.२९-३०

शरभ—(१) एक जगली जानवर-अष्टापद । इसकी पीठ पर भी चार पैर होते है । आकाश में उछलकर पीठ के बल नीचे गिरने पर भी पृष्ठवर्ती पैरो के कारण इसे कोई चोट नही लगती । यह सिंह को भी परास्त कर देता है । मपु० २७ ७०, ३१ २५, पपु० १७ २६०

(२) लक्ष्मण का एक पुत्र । पपु० ९४ २८, १०२ १४६

शरभरथ—इक्ष्वाकुवशी एक राजा । यह कुन्थुभक्ति राजा का पुत्र तथा द्विरदरथ का पिता था । पपु० २२ १५७

शरासन—(१) भार्गवाचार्य की वश परम्परा मे हुआ एक राजा । यह राजा सरवर का पुत्र था । हपु० ४५ ४६

(२) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौबीसवाँ पुत्र । पापु० ८ १९५

शरीर—सप्तधातु से निर्मित देह । यह जड है । चैतन्य इसमे उसी प्रकार रहता है जैसे म्यान में तलवार । व्रत, ध्यान, तप, समाधि आदि की साधना का यह साधन है । सब कुछ होते हुए भी यह समाधि-मरणपूर्वक त्याज्य है । यह पाँच प्रकार का होता है । उनके नाम है—औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण । ये शरीर उत्तरोत्तर सूक्ष्म है । आदि के तीन शरीर-असख्यात गुणित तथा अन्तिम दो अनन्त गुणित प्रदेशोवाले है । अन्त के दोनो शरीर जीव के साथ अनादि से लगे हुए है । इन पाँचो में एक समय में एक साथ एक जीव के अधिक से अधिक चार शरीर हो सकते है । मपु० ५ ५१-५२, २२६, २५०, १७ २०१-२०२, १८.१००, पपु० १०५ १५२-१५३, वीवच० ५ ८१-८२

शरीरजन्म—जीवो के जन्म के दो भेद है—१ शरीरजन्म और २. सस्कारजन्म । इनमें जीव की वर्तमान पर्याय मे प्राप्त शरीर का क्षय होकर आगामी पर्याय में शरीर की प्राप्ति को शरीरजन्म कहते है । मपु० ३९ ११९-१२०

शरीरमरण—जीवो का मरण दो प्रकार का माना गया है—शरीरमरण और सस्कारमरण । इनमे अपनी आयु के अन्त में देह का विसर्जन शरीर-मरण है । मपु० ३९ ११९-१२२

शर्कराप्रभा—(१) शर्करा के समान प्रभाधारी नरक । यह सात नरको में दूसरा नरक है । इसका अपर नाम वशा है । इसके ग्यारह प्रस्तारों में ग्यारह इन्द्रक बिल है—स्तरक, स्तनक, मनक, वनक, घाट, सघाट, जिह्वा, जिह्विक, लोल, लोलुप और स्तनलोलुप । इनके श्रेणीबद्ध बिलो की सख्या निम्न प्रकार होती है—

नाम इन्द्रक	चारो दिशाओ में	विदिशाओ में	कुल
स्तरक	१४४	१४०	२८४
स्तनक	१४०	१३६	२७६
मनक	१३६	१३२	२६८
वनक	१३२	१२८	२६०
घाट	१२८	१२४	२५२
सघाट	१२४	१२०	२४४
जिह्व	१२०	११६	२३६
जिह्विक	११६	११२	२२८
लोल	११२	१०८	२२०
लोलुप	१०८	१०४	२१२
स्तनलोलुप	१०४	१००	२०४
योग	१३६४	१३२०	२६८४

यहाँ प्रकीर्णक बिल २४, ९७, ३०५ होते हैं । इस प्रकार कुल बिल यहाँ पच्चीस लाख है । स्तरक इन्द्र बिल के पूर्व में अनिच्छ, पश्चिम में महा अनिच्छ, दक्षिण में विन्ध्य और उत्तर में महाविन्ध्य नाम के महानरक है । पच्चीस लाख बिलो में पाँच लाख बिल असख्यात योजन विस्तारवाले होते हैं । इन्द्रक बिलो का विस्तार क्रम निम्न प्रकार है—

नामक इन्द्रक बिल	विस्तार प्रमाण
१ स्तरक	३३ ६० ३३३$\frac{१}{३}$ योजन
२ स्तनक	३२ १६,६६६$\frac{२}{३}$ योजन
३ मनक	३१ २५ ००० ,,
४ वनक	३० ३३ ३३३$\frac{१}{३}$,,
५ घाट	२९.४१ ६६६$\frac{२}{३}$,,

६ सघाट	२८ ५० ००० योजन
७ जिह्व	२७ ५८ ३३३$\frac{१}{३}$,,
८ जिह्विक	२६ ६६ ६६६$\frac{२}{३}$,,
९ लोल	२५ ७५ ००० ,,
१० लोलुप	२४ ८३ ३३३$\frac{१}{३}$,,
११ स्तनलोलुप	२३ ९१ ६६६$\frac{२}{३}$,,

इन्द्रक बिलो की मुटाई डेढ कोश, श्रेणीबद्ध बिलो की दो कोश और प्रकीर्णक बिलो की साढे तीन कोश होती है। इन्द्रक बिलो का अन्तर १९९९ योजन और ४७०० धनुष है। श्रेणीबद्ध बिलो का अन्तर २९९९ योजन और ३६०० धनुष तथा प्रकीर्णक बिलो का अन्तर २९९९ योजन और ३०० धनुष है। यहाँ के प्रस्तारो में नारकियों की आयु का क्रम इस प्रकार होता है—

नाम प्रस्तार	जघन्य आयु	उत्कृष्ट आयु
१ स्तरक	एक सागर, एक समय	१$\frac{२}{११}$ सागर
२ स्तनक	१$\frac{२}{११}$ सागर	१$\frac{४}{११}$,,
३ मनक	१$\frac{४}{११}$,,	१$\frac{६}{११}$,,
४ वनक	१$\frac{६}{११}$,,	१$\frac{८}{११}$,,
५ घाट	१$\frac{८}{११}$,,	१$\frac{१०}{११}$,,
६ सघाट	१$\frac{१०}{११}$,,	२$\frac{१}{११}$,,
७ जिह्व	२$\frac{१}{११}$,,	२$\frac{३}{११}$,,
८ जिह्विक	२$\frac{३}{११}$,,	२$\frac{५}{११}$,,
९ लोल	२$\frac{५}{११}$,,	२$\frac{७}{११}$,,
१० लोलुप	२$\frac{७}{११}$,,	२$\frac{९}{११}$,,
११ स्तनलोलुप	२$\frac{९}{११}$,,	३ ,,

इस नरक के नारकियो की ऊँचाई निम्न प्रकार होती है—

नाम प्रस्तार	धनुष	हाथ	अगुल
१ स्तरक	८	२	२$\frac{२}{११}$
२ स्तनक	९	—	२२$\frac{४}{११}$
३ मनक	९	३	१८$\frac{६}{११}$
४ वनक	१०	२	१४$\frac{८}{११}$
५ घाट	११	१	१०$\frac{१०}{११}$
६ सघाट	१२	—	७$\frac{१}{११}$
७ जिह्व	१२	३	३$\frac{३}{११}$
८. जिह्विक	१३	१	२३$\frac{५}{११}$
९ लोल	१४	—	१९$\frac{७}{११}$
१० लोलुप	१४	३	१५$\frac{९}{११}$
११ स्तनलोलुप	१५	२	१२

यहाँ अवधिज्ञान का विषय साढ़े तीन कोश प्रमाण है। नारकी कापोत लेश्यावाले होते हैं। उन्हें उष्ण-वेदना अधिक होती है। नारकियो के उत्पत्ति स्थानो का आकार ऊँट, कुम्भी, कुस्थली, मुद्गर, मृदग और नाडी के समान होता है। इन्द्रक-बिल तीन द्वारवाले तथा तिकोने होते हैं। श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिल तिकोने, पचकोने और सतकोने भी होते हैं। नारकियो के ये सभी उत्पत्ति स्थान हैं। इस पृथिवी के उत्पत्तिस्थानो में जन्मनेवाले जीव पन्द्रह योजन अढ़ाई कोश आकाश में उछलकर नीचे गिरते हैं। असुरकुमार देव यहाँ नारकियो को परस्पर मे पूर्व वैरभाव का स्मरण कराकर लडाते है। सरक कर चलनेवाले जीव इस भूमि के आगे की भूमियो मे उत्पन्न नही होते है। इस भूमि से निकला जीव मनुष्य या तिर्यंच होकर पुन इस भूमि में छ बार उत्पन्न हो सकता है। यहाँ से निकला जीव सम्यग्दर्शन की शुद्धि से तीर्थंकर पद प्राप्त कर सकता है। मपु० १० ३१-३२, ४१, हपु० ४ ७८-७९, १०५-११७, १५३, १६२, १८४-१९४, २१९, २२९-२३२, २५९-२६९ ३०६-३१६, ३४१-३४७, ३५१-३५२, ३५६, ३६२, ३७३, ३७७, ३८१

शर्करावती—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। यह समुद्र मे जाकर मिलती है। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६३

शर्मा—राजा कृतवर्मा की रानी। तीर्थंकर विमलनाथ की ये जननी थी। पपु० २० ४९

शर्वर—भरतक्षेत्र का एक देश। लवणाकुश और मदनाकुश ने इस देश के स्वामी को पराजित किया था। पपु० १०१ ८१

शर्वरी—(१) एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने इसे सिद्ध किया था। मपु० ६२ ३९५

(२) परियात्रा अटवी की एक नदी। वनवास के समय राम और लक्ष्मण यहाँ आये थे। पपु० ३२ २८-२९

शलभ—भरतक्षेत्र का एक देश। लवणाकुश और मदनाकुश कुमारों ने इस देश के स्वामी को पराजित किया था। पपु० १०१ ७७

शलाकापुरुष—प्रत्येक कल्पकाल के तिरेसठ महापुरुष। वे हैं—चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण और नौ बलभद्र। मपु १ १९-२०, पपु० २० २१४, २४२, हपु० ५४ ५९-६० ६० २८६-२९३, वीवच० १८ १०५-११६

शल्य—(१) यादवों का पक्षधर एक महारथी राजा। हपु० ५० ७९

(२) जरासन्ध का पक्षधर एक विद्याधर राजा। इसने प्रद्युम्न के साथ युद्ध किया था। इसके रथ के घोडे लाल और ध्वजा पर हल्की लकीरें थी। अन्त में यह युधिष्ठिर द्वारा युद्ध में मार डाला गया था। मपु० ७१ ७८, हपु० ५१ ३०, पापु० १९ ११९, १७५, २० २३९

(३) राम का पक्षधर एक राजा। यह विशुद्ध कुल में उत्पन्न हुआ था। इसने जीर्णतृण के समान राज्य त्याग करके महाव्रत धारण कर लिये थे। आयु के अन्त में इसने परमात्म पद पाया। पपु० ५४ ५६, ८८ १-३, ७-९

शल्लकी—जम्बूद्वीप के निकु ज पर्वत की एक अटवी-वन। मुनि मृदु-

मति का जीव स्वर्ग से चयकर माया-शल्य के कारण इसी अटवी में त्रिलोककटक नाम का हाथी हुआ था। पपु० ८५ १४७-१६३

शशरोम—दुर्योधन का मित्र। इसने मध्यस्थ बनकर कौरव और पाण्डवो का बटवारा कराया था। हपु० ४५ ४०-४१

शशांक—(१) आगामी ग्यारहवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७३

(२) भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा नन्दिवर्धन था। पपु० ८५ १३३

(३) राजा अभिचन्द्र का पुत्र। हपु० ४८ ५२

शशांकपाद—भरतक्षेत्र का एक राजा। शरीर से निस्पृह रहते हुए इसने भरत के साथ महाव्रत धारण कर लिए थे। आयु के अन्त मे यह परमपद को प्राप्त हुआ। पपु० ८८ १-९

शशांकमुख—एक मुनि। मृदुमति चोर इन्ही मुनि के पास दीक्षित हुआ हुआ था। पपु० ८५ १३३-१३७

शशांकांक—कुरुवंशी एक राजा। यह शान्तिचन्द्र का पुत्र और राजा कुरु का पिता था। हपु० ४५ १९

शशांकार्ध—वैश्रवण का एक अर्धचन्द्र बाण। वैश्रवण ने इस बाण से दशानन का धनुष तोडा था और उसे रथ से च्युत कर दिया था। पपु० ८ २३६

शशांकास्य—विद्याधर वंश का राजा। यह विद्याधर सिंहकेतु का पुत्र तथा चन्द्र का पिता था। पपु० ५ ५०

शशिकान्ता—एक आर्यिका। मन्दोदरी और चन्द्रनखा इन्ही से दीक्षा लेकर आर्यिकाएँ हुई थी। पपु० ७८ ९४-९५

शशिचूला—पौण्डरीकपुर के राजा वज्रजघ और उनकी रानी लक्ष्मी की पुत्री। राजा वज्रजघ ने इसे अन्य बत्तीस कन्याओ के साथ कुमार लवणांकुश को देने का निश्चय किया था। पपु० १०१ २, २४

शशिच्छाय—एक नगर। लक्ष्मण ने इस नगर को अपने अधीन किया था। पपु० ९४ ७

शशिपुर—विदेहक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित एक नगर। रत्नमाली यहाँ का राजा था। पपु० ३१ ३४-३५

शशिप्रभ—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का सातवाँ नगर। हरिवंशपुराण के अनुसार यह चौवनवाँ नगर है। मपु० १९ ७८, हपु० २२ ९१

(२) राजा जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३९

(३) राजा वसुदेव और सोमदत्त की पुत्री का कनिष्ठ पुत्र। यह चन्द्रकान्त का छोटा भाई था। हपु० ४८ ६०

(४) पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। यह मघवा चक्रवर्ती के पूर्व-भव का जीव था। मपु० २० १३१-१३३

शशिप्रभा—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का सातवाँ नगर। मपु० १९.७८

शशिमण्डल—राम के पक्ष का एक योद्धा। इसके दु सह युद्ध करने पर भानुकर्ण ने इसे निद्रा-विद्या के द्वारा सुला दिया था। पपु० ६० ५७-६०

शशिस्थानपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मन्त्री सहित रावण की सहायतार्थ उसके पास आया था। पपु० ९५ ८७-८८

शशी—(१) सूर्यवंशी राजा। यह रवितेज का पुत्र और प्रभूततेज का पिता था। पपु० ५ ४-१०, हपु० १३ ९

(२) राजा अभिचन्द्र का पुत्र। हपु० ४८.५२

शष्प—भरतक्षेत्र का एक सरोवर। राजा वज्रजघ की सेना ने यहाँ विश्राम किया था। मपु० ८ १५०-१५४

शांडिल्य—(१) गुरु क्षौव्य का शिष्य। क्षीरकदम्बक, वैन्य, उदच और प्रावृत इसके गुरु भाई थे। महाकाल देव ने इसका रूप धारण करके पर्वत के नेतृत्व मे रोग फैलाकर उनकी उसने पर्वत के द्वारा शान्ति करायी थी। राजा सगर भी पर्वत के पास निरोग हो गया था। इसने अश्वमेध, अजमेध, गोमेध और राजसूय यज्ञो को चालू किया था। अपने चातुर्य से इसने सगर और सुलसा को भी यज्ञ मे होम दिया था। हपु० २३ १३४-१४६

(२) एक तापस। अयोध्या के राजा सहस्रबाहु इसके बहनोई तथा चित्रमती इसकी बहिन थी। परशुराम को सहस्रबाहु की समस्त सन्तान नष्ट करने मे उद्यत देखकर इसने गर्भवती चित्रमती को अज्ञात रूप से ले जाकर सुबन्धु मुनि के पास रखा था। सुभौम चक्रवर्ती यही जन्मा था। अपने भानेज का सुभौम नाम इसी ने रखा था। मपु० ६५ ५६-५७ ११५-१२५

(३) मगध देश के राजगृह नगर का एक वेदो का जानने-वाला ब्राह्मण। पारशरी इसकी स्त्री थी। इसके पुत्र का नाम स्थावर था। मपु० ७४ ८२-८३, वीवच० ३ २-३

शाक्र—नेमिकुमार का शख। जरासन्ध से युद्ध करने के पूर्व उन्होने इसी शख को फूंककर सेना का उत्साह बढ़ाया था। हपु० ५१ २०-२१

शाखामृग—एक वानरद्वीप। यह लवणसमुद्र के मध्य पश्चिमोत्तर भाग मे तीन सौ योजन विस्तृत है। पपु० ६ ७०-७१

शाखावली—ऋक्षरज और सूर्यरज विद्याधरो का वश-परम्परागत सेवक। यह रणदक्ष और उसकी स्त्री सुश्रोणी का पुत्र था। पपु० ८ ४५६-४५७

शातंकर—आनत स्वर्ग का विमान। नन्दयशा निदानपूर्वक मरकर इसी विमान में उत्पन्न हुई थी। मपु० ७० १९४-१९६

शातकुम्भनिभप्रभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९९

शातकुम्भविधि—एक व्रत। इस व्रत के तीन भेद हैं—उत्तम, मध्यम और जघन्य। जिसमें पाँच से एक तक सख्या लिखने के पश्चात् पाँच को छोडकर चार से एक तक तीन बार सख्या लिखकर सख्याओ के योग के अनुसार उपवास और जितनी बार उपवास सूचक अको मे परिवर्तन हो उतनी पारणाएँ करना जघन्य शातकुम्भव्रतविधि है। इसमें पैंतालीस उपवास और सत्रह पारणाएँ की जाती हैं। मध्यम शातकुम्भविधि में नौ से एक तक तथा आठ से एक तक तीन बार अक लिखे जाते हैं। इसी प्रकार उत्तम शातकुम्भविधि में सोलह अको को सोलह से घटते क्रम में एक तक और पश्चात् तीन बार पन्द्रह से एक अक तक का प्रस्तार बनाया जाता है। मध्यमव्रत में एक सौ

तिरेपन उपवास और तैंतीस पारणाएँ तथा उत्तम व्रत में चार सौ छियानवे उपवास और इकसठ पारणाएँ की जाती हैं। हपु० ३४ ८७-८९

शाक्कर—तीर्थंकरो की माता के द्वारा उनकी गर्भावस्था के समय देखे गये सोलह स्वप्नों में दूसरे स्वप्न मे देखा गया वृषभ। मपु० २१ १३-१४

शान्त—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४४, २५ १३८

(२) शान्तिषेण नामक एक आचार्य। ये जटासिंहनन्दि के उत्तरवर्ती थे। हपु० १ ३६

शान्तन—राजा उग्रसेन का चाचा। इसके पाँच पुत्र थे महासेन, शिवि, स्वस्थ, विषद और अनन्तमित्र। हपु० ४८ ४०

शान्तनु—एक कौरव राजा। इसकी रानी का नाम सबकी तथा पुत्र का नाम पराशर था। इसने योजनगन्धा से भी विवाह किया था तथा इसके चित्र और विचित्र नाम के दोनों पुत्र योजनगन्धा से ही हुए थे। इसका दूसरा नाम शन्तनु था। हपु० ४५ ३०-३१, पापु० २ ४२-४३, ७ ७५-७६, दे० शन्तनु

शान्तमदन—जयसेन के चौथे पूर्वभव का जीव। मपु० ४७.३७६-३७७

शान्तव—वाराणसी के सेठ धनदेव और उसकी सेठानी जिनदत्ता का पुत्र। यह रमण का बड़ा भाई था। मपु० ७६ ३१९

शान्ताकार—सोलहवें स्वर्ग का एक विमान। धातकीखण्ड द्वीप की अयोध्या नगरी का राजा अजितजय मरकर इसी विमान में अच्युतेन्द्र हुआ था। मपु० ५४. ८६-८७ १२५-१२६

शान्तारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

शान्ति—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २०२

(२) एक विद्या। यह दशानन को सिद्ध थी। मपु० ७ ३३१-३३२

(३) भरत के साथ दीक्षित एवं परमात्मपद प्राप्त एक राजा। पपु० ८८ १-६

शान्तिकृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२०२

शान्तिचन्द्र—कौरववश का एक राजा। यह शान्तिवर्धन का पुत्र था। हपु० ४५ १९, पापु० ६ २

शान्तिद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०२

शान्तिनाथ—अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा काल में उत्पन्न शलाकापुरुष। ये सोलहवें तीर्थंकर और पाँचवें चक्रवर्ती थे। हस्तिनापुर के कुरुवंशी राजा विश्वसेन इनके पिता और गान्धारनगर के राजा अजितजय की पुत्री ऐरा इनकी माता थी। ये भाद्र मास के कृष्ण पक्ष की सप्तमी तिथि के दिन भरणी नक्षत्र में रात्रि के अन्तिम प्रहर में गर्भ में आये थे। ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी की प्रात वेला में साम्ययोग मे इनका जन्म हुआ था। जन्म से ही ये मति, श्रुत और अवधि तीन ज्ञान के धारी थे। जन्माभिषेक करके इन्द्र ने सबके शान्तिप्रदाता होने से इनका 'शान्ति' नाम रखा था। धर्मनाथ तीर्थंकर के बाद पौन पल्य कम तीन सागर प्रमाण काल बीत जाने पर इनका जन्म हुआ था। इनकी आयु एक लाख वर्ष, ऊँचाई चालीस धनुष और शरीर की कान्ति स्वर्ण के समान थी। शरीर मे ध्वजा, तोरण, सूर्य, चन्द्र, शख, चक्र आदि चिह्न थे। चक्रायुध नाम का इनकी दूसरी माँ यशस्वती से उत्पन्न भाई था। इनके पिता ने कुल, रूप, अवस्था, शील, कला, कान्ति आदि से सम्पन्न कन्याओ के साथ इनका विवाह किया था। कुमारकाल के पच्चीस हजार वर्ष व्यतीत हो जाने पर इनका राज्य तिलक हुआ। पच्चीस हजार वर्ष तक राज्य शासन करने के बाद चौदह रत्न और नौ निधियाँ प्रकट हुई थी। चौदह रत्नों में चक्र, छत्र, तलवार और दण्ड-आयुध शाला में तथा काकिणी, चर्म, चूडामणि-श्रीगृह में प्रकट हुए थे। पुरोहित, स्थपति, सेनापति, हस्तिनापुर में तथा कन्या, गज और अश्व विजयार्ध पर प्राप्त हुए थे। निधियाँ इन्द्रो ने दी थी। दर्पण में अपने दो प्रतिबिम्ब दिखाई देने से इन्हे वैराग्य हुआ। लौकान्तिक देवो द्वारा धर्म तीर्थ प्रवर्तन की प्रेरणा प्राप्त करके इन्होंने पुत्र नारायण को राज्य सौंपा और ये सिद्धि नाम की शिविका में बैठकर सहस्राम्र वन गये। वहाँ उत्तर की ओर मुख करके पर्यंकासन से एक शिला पर ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी, भरणी नक्षत्र की साय वेला मे केशलोच करके दिगम्बर दीक्षा धारण की। चक्रायुध सहित एक हजार अन्य राजाओ ने भी इनके साथ सयम लिया। मन्दिरपुर नगर के राजा सुमित्र ने इन्हें आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। सहस्राम्र वन में पौषशुक्ल दसमी की साय वेला में इन्हें केवलज्ञान हुआ। चक्रायुध सहित इनके छत्तीस गणधर थे। सघ में आठ सौ पूर्वधारी मुनि, इकतालीस हजार आठ सौ शिक्षक, तीन हजार विक्रियाधारी, चार हजार मन पर्ययज्ञानी, दो हजार चार सौ वादी मुनि, साठ हजार तीन सौ हरिषेण आदि आर्यिकाएँ, सुरकीर्ति आदि दो लाख श्रावक, अर्हद्दासी आदि चार लाख श्राविकाएँ, असख्यात देव-देवियाँ और तिर्यंच थे। एक मास की आयु शेष रह जाने पर ये सम्मेद-शिखर आये। यहाँ कर्मों का नाश कर ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन रात्रि के पूर्वभाग में इन्होंने देह त्याग की और ये मोक्ष गये। दसवें पूर्वभव में आय, नवें पूर्वभव में देव, आठवें मे विद्याधर, सातवें में देव, छठे पूर्वभव में बलभद्र, पाँचवें में देव, चौथे में वज्रायुध चक्रवर्ती, तीसरे में अहमिन्द्र दूसरे में मेघरथ और प्रथम पूर्वभव में सर्वार्थसिद्धि विमान में अहमिन्द्र थे। मपु० ६२ ३८३ ६३ ३८२-४१४,४५५-५०४. पपु० ५ २१५,२२३, २० ५२, हपु० १ १८, पापु० ४ १० ५ १०२-१०५ ११६-१२९, वीवच० १ २६ १८ १०१-११०

शान्तिनिष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०२

शान्तिपूजा—सर्व पापो की शान्ति के लिए की जानेवाली पूजा। यह पूजा आठ दिन तक वैभव सम्पन्न विधि-विधानो के साथ अभिषेक पूर्वक की जाती है। मपु० ४५ २७

शान्तिभद्र—कुरुवंशी एक राजा। यह सुशान्ति का पुत्र और शान्तिषेण का पिता था। हपु० ४५ ३०

शान्तिभाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

शान्तिमति—जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के शुक्रप्रभ नगर के राजा वायुवेग तथा रानी सुकान्ता की पुत्री। इसने मुनिसागर पर्वत पर विद्या सिद्ध की थी। राजा वज्रायुध से अपना पूर्वभव सुनकर यह संसार से विरक्त हो गयी और इसने सुलक्षणा आर्यिका से संयम धारण कर लिया था। अन्त मे यह सन्यासमरण कर ऐशान स्वर्ग में देव हुई। मपु० ६३ ९१-९५, १११-११३

शान्तिवर्धन—कुरुवंशी एक राजा। यह राजा नारायण का पुत्र और राजा शान्तिचन्द्र का पिता था। हपु० ४५ १९, पापु० ६.२

शान्तिषेण—(१) कुरुवंशी एक राजा। यह शान्तिभद्र का पुत्र और शन्तनु का पिता था। हपु० ४५ ३०-३१

(२) आचार्य जिनसेन के पश्चात् हुए एक आचार्य। हपु० ६६ २९

शामली—भरतक्षेत्र का एक नगर। राजा रतिवर्धन के पुत्र प्रियंकर और हितकर अपने चौथे पूर्वभव में इसी नगर में दामदेव ब्राह्मण के वसुदेव और सुदेव नामक गुणी पुत्र हुए थे। पपु० १०८ ३९-४०

शाम्ब—कृष्ण का कनिष्ठ पुत्र। यह प्रद्युम्न का छोटा भाई था। पपु० १०९ २७

शारंग—एक धनुष। कुबेर ने यह धनुष नारायण कृष्ण को दिया था। यह कृष्ण के सात रत्नो में दूसरा रत्न था। यह रत्न नारायण लक्ष्मण के पास भी था। मपु० ६८ ६७५-६७७, ७१ १२५, हपु० ४१ ३४-३५, ५३ ४९-५०

शारंगपाणि—कृष्ण का अपर नाम। हपु० ४२ ९७

शार्दूल—(१) राजा समुद्रविजय का तीसरा मन्त्री। इसने समुद्रविजय को जरासन्ध के साथ सामनीति का प्रयोग करने की सलाह दी थी। हपु० ५०.४९

(२) राम के पक्ष का एक योद्धा। इसने रावण के वज्रोदर योद्धा को मारा था। पपु० ६० १८

शार्दूलविक्रीडित—रावण का एक सामन्त। इसने गजरथ पर बैठकर राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ५७

शालंकायन—भरतक्षेत्र के मन्दिर-ग्राम का एक ब्राह्मण। मंदिरा स्त्री और भारद्वाज ऋषि इसके पुत्र थे। मपु० ७४ ७८-७९

शाल—(१) नगर का कोट। हपु० २ ११

(२) हरिवंशी राजा मूल का पुत्र और सूर्य का पिता। हपु० १७ ३२

(३) तीर्थंकर शंभवनाथ का बोधिवृक्ष। पपु० २० ३९

शालगुहा—भरतक्षेत्र की एक नगरी। वसुदेव ने यहाँ पद्मावती को विवाहा था। हपु० २४ २९-३०

शालवन—तीर्थंकर धर्मनाथ की दीक्षाभूमि-एक उद्यान। मपु० ६१.३८-३९

शालि—आदिनाथ के समय का एक धान्य-चावल। मपु० ४ ६०-६१

शालिग्राम—(१) जम्बूद्वीप मे भरतक्षेत्र के मगध देश का एक ग्राम। वसुदेव पूर्वभव मे इसी नगर के एक दरिद्र ब्राह्मण के पुत्र थे। शाल्मलि और शाल्मलिखण्ड इसके अपर नाम थे। मपु० ७१ ४१६, पपु० १०९.३५-३७, हपु० १८ १२७ ४३ ९९, ६० १०९

(२) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर रम्य नामक क्षेत्र का एक ग्राम। महापुराण में इसे भरतक्षेत्र बताया गया है। मपु० ७१ ३९०, हपु० ६० ६२-६३

शाल्मलि—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित मगध देश का एक ग्राम। इसका अपर नाम शालिग्राम था। मपु० ७१ ४४६ दे० शालिग्राम।

शाल्मलिदत्ता—विजयार्ध पर्वत के किन्नरगीत नगर के राजा विद्याधर अशनिवेग और रानी पवनवेगा की पुत्री। इसका विवाह कुमार वसुदेव के साथ हुआ था। मपु० ७० २५४-२५५, पापु० ११ २०-२१

शाल्मलीखण्ड—भरतक्षेत्र के मगध देश का एक ग्राम। इसके अपर नाम शाल्मलि और शालिग्राम थे। मपु० ७१ ४६६, हपु० १८ १२७, ६० १०९ दे० शालिग्राम

शाल्मलीवृक्ष—(१) जम्बूद्वीप मे स्थित वृक्ष। यह मेरु पर्वत की दक्षिण-पश्चिम दिशा मे विद्यमान शाल्मली स्थल मे पृथिवीकाय रूप से स्थित हैं। इसकी चारो दिशाओ मे चार शाखाएँ हैं। दक्षिण-शाखा पर अकृत्रिम जिनमन्दिर बने है। शेष तीन शाखाओ पर भवन बने हुए हैं, जिनमे वेणु और वेणुदारी देव रहते हैं। यह मूल में एक कोश चौड़ा है। इसकी शाखाएँ आठ योजन तक फैली है। मपु० ५ १८४, हपु० ५ १७७, १८७-१९०

(२) विक्रिया ऋद्धि से निर्मित कृत्रिम, लौह-निर्मित, कण्टकाकीर्ण नरक के वृक्ष। इन वृक्षो को धौंकनी से प्रदीप्त कर नारकियो को बलपूर्वक उन पर चढ़ने के लिए बाध्य किया जाता है। वृक्षो पर चढते समय उन्हे कोई नारकी नीचे की ओर घसीटता है, कोई ऊपर की ओर। इस प्रकार इन वृक्षो के द्वारा नारकियो को दु.ख सहन करने पडते हैं। मपु० १० ५२-५३, ७९, पपु० २६ ७९-८०, ३२ ९२

शावरी—एक विद्या। यह रूप बदलने में सहायक होती है। हपु० ४६ ९

शाश्वत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०२

शासिता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का नाम। मपु० २५.२०१

शास्ता—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११५

शास्त्र—आगम ग्रन्थ। ये सर्वज्ञ भाषित, पूर्वापर विरोध से रहित, हिंसा आदि पापो के निवारक, प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रमाणो से अबाधित हेय और उपादेय तत्त्वो के प्रकाशक होते है। इनका श्रवण, मनन और चिन्तन शुद्धबुद्धि का कारण कहा है। मपु० ५६ ६८, ७३-७४

शास्त्रदान—दान का एक भेद। सत्पुरुषो का उपकार करने की इच्छा से शास्त्र का व्याख्यान करना या पठन-सामग्री देना शास्त्रदान है। इसके देने और लेनेवाले दोनो के कर्मो का संवर-निर्जरा और पुण्य होता है। यह निजानन्द रूप मोक्ष-प्राप्ति का कारण है। मपु० ५६ ६६-६७, ६९, ७२-७३, ७६

शिक्षक—श्रुताभ्यास करानेवाले मुनि। हपु० १२.७३, ५९ १२८

शिक्षा—हिताहित का विवेक। यह विनय-सम्पत्ति से प्राप्त होता है। मपु० ३१ २-३

शिक्षाव्रत—मुनिधर्म के अभ्यास में हेतु रूप गृहस्थो के चार व्रत—(१) तीनो सध्याओ में सामायिक करना (२) प्रोषधोपवास करना (३) अतिथि पूजन करना और (४) आयु के अन्त में सल्लेखना धारण करना। महापुराण मे इन्हें क्रमश समता, प्रोवधविधि, अतिथिसग्रह तथा मरण समय में लिया जाने वाला सन्यास नाम दिये गये है। मपु० १० १६६, हपु० २ १३४, १८ ४५-४७

शिखण्डी—यादवो का पक्षधर एक अर्धरथ राजा। यह द्रुपद राजा का पुत्र था। इसने कौरव-पाण्डव युद्ध में नौवें दिन भीष्मपितामह को पराजित किया था। हपु० ५० ८४, पापु० १९ २०२-२०३, २४२-२४९

शिखरनल—विजयार्ध पर्वत का एक उद्यान। ज्योति प्रभ नगर का राजा सम्भिन्नरथनूपुर के राजा अमिततेज के साथ यहाँ विहार करने आया था। मपु० ६२ २४१-२४३

शिखरिकूट—शिखरी कुलाचल का दूसरा कूट। हपु० ५ १०५ दे० शिखरी

शिखरी—जम्बूद्वीप में पूर्व-पश्चिम लम्बा छठा कुलाचल। यह पर्वत हेममय है। इसके क्रमश ग्यारह कूट है—(१) सिद्धायतनकूट (२) शिखरिकूट (३) हैरण्यवतकूट (४) सुरदेवीकूट (५) रक्ताकूट (६) लक्ष्मीकूट (७) सुवर्णकूट (८) रक्तवतीकूट (९) गन्धदेवीकूट (१०) ऐरावतकूट और (११) मणिकाचनकूट। हपु० ५ १०५-१०८, दे० कुलपर्वत

शिखापद—(१) एक नगर। इन्द्र विद्याधर अपने एक पूर्वभव में यहाँ कुलवान्ता नाम से प्रसिद्ध हुआ था। पपु० १३ ५५

(२) एक देश। लवणाकुश और मदनाकुश कुमारो ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८३, ८६

शिखावीर—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७ ४८

शिखि—विश्वावसु और ज्योतिष्मती का पुत्र। श्रमण होकर इसने महातप किया था। आयु के अन्त में निदानपूर्वक मरकर यह असुरो का अधिपति चमरेन्द्र हुआ। पपु० १२ ५५-५६

शिखिकण्ठ—आगामी छठा-प्रतिनारायण। हपु० ६०.५७०

शिखिभूधर—धान्यपुर नगर का समीपवर्ती एक पर्वत। मपु० ७६ ३२२-३२४

शिखी—(१) काम्पिल्य नगर का एक ब्राह्मण। इषु इसकी स्त्री तथा एर पुत्र था। पपु० २५ ४२-४३

(२) सीता-स्वयवर में सम्मिलित हुआ एक राजकुमार। पपु० २८ २१५

शिर प्रकम्पित—चौरासी लाख महाल्ता प्रमित काल। मपु० ३ २२६, हपु० ७ ३० दे० काल-१०

शिरस्त्र—सिर की रक्षा करनेवाली सैनिको की टोपी। सैनिक इसका व्यवहार करते थे। मपु ३१ ७२, ३६.१४

शिरीष—तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ का बोधिवृक्ष। पपु० २० ४३

शिलाकपाट—अजना के पिता राजा महेन्द्र का द्वारपाल। अजना के आने पर राजा महेन्द्र को अजना के आने की सूचना देते हुए इसी ने उन्हें अजना के ससुराल मे निष्कासित किये जाने का वृत्त सुनाया था। पपु० १७ ३३-३७

शिलापट्ट—एक शिलाखण्ड। यह शिला पुरिमताल नगर के निकट शकट उद्यान में एक वटवृक्ष के नीचे विद्यमान थी। वृषभदेव इसी शिला पर ध्यानस्थ हुए थे। मपु० १७ १९०, २० २१८-२२१

शिलीमुख—(१) रावण का गजरथारोही योद्धा। पपु० ५७ ५५

(२) राम के समय का एक अस्त्र-बाण। पपु० ५८ ३४

शिल्पकर्म—तीर्थङ्कर वृषभदेव द्वारा बताये गये आजीविका के छ कर्मों में छठा कर्म। हस्त कौशल से जीविकोपार्जन करना शिल्पकर्म कहलाता है। चित्रकला, पत्रच्छेदन आदि शिल्पकार्य के भेद है। हपु० १६ १७९-१८२, हपु० ९ ३५

शिल्पपुर—एक नगर। नरपति यहाँ का राजा था। चक्रवर्ती श्रीपाल ने यहाँ के राजा की रतिविमला पुत्री को विवाहा था। हपु० ४७. १४४-१४५

शिवंकर—(१) विदेहक्षेत्र का एक वन। पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रजापाल ने अपने पुत्र लोकपाल को राज्य देकर इसी वन में शीलगुप्त मुनि के पास सयम धारण किया था। मपु० ४६ १९-२०, ४८

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के साठ नगरो में बारहवाँ नगर। मपु० १९ ७९

शिव—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४४, २५.७४, १०५

(२) राम का एक योद्धा। पपु० ५८ १४, १७

(३) समवसरण के तीसरे कोट के दक्षिण द्वार का एक नाम। हपु० ५७ ५८

(४) लवणसमुद्र की दक्षिण दिशा में पाताल विवर के समीप स्थित उदक पर्वत का अधिष्ठाता देव। हपु० ५ ४६१

शिवकुमार—(१) एक राजकुमार। श्रीपाल के पास आते ही इसके मुख की वक्रता ठीक हो गयी थी। मपु० ४७ १००

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के वीतशोक नगर के राजा महापद्म और रानी वनमाला का पुत्र। यह सागरदत्त मुनि से अपना पूर्वभव सुनकर विरक्त हो गया था। जल में कमल के समान घर में रहकर बारह वर्ष तक कठिन तप करते हुए आयु के अन्त में सन्यास-मरण से देह त्याग कर यह ब्रह्मस्वर्ग मे विद्युन्माली देव हुआ। मपु० ७६ १३०-१३१, २००-२०९

शिवकोटि—प्रभाचन्द्र आचार्य के उत्तरवर्ती आचार्य। ये आचार्य भगवती-आराधना के कर्त्ता थे। मपु० १ ४७-४९

शिवगुप्त—(१) एक महामुनि। राजा भगीरथ ने कैलाश पर्वत पर इन्ही मुनि से दीक्षा ली थी। मपु० ४८ १३८-१३९

(२) चक्रवर्ती सनत्कुमार के दीक्षागुरु। मपु० ६१ ११८

(३) एक मुनि । लक्ष्मण के बड़े भाई राम ने इन्हीं से धर्म का स्वरूप सुनकर श्रावक के व्रत लिये थे । मपु० ६८ ६७९-६८६

(४) एक यति । आगम-ज्ञान प्राप्त करने के लिए वशिष्ठ को इन्हीं यति के पास भेजा गया था । हपु० ३३ ७१-७२

(५) अर्हद्वलि के पूर्ववर्ती एक आचार्य । हपु० ६६ २५

शिवघोष—(१) एक मुनि । इन्हें वत्स देश में सुसीमा नगरी के समीप केवलज्ञान प्रकट हुआ था । मपु० ४६ २५६

(२) बलभद्र नन्दिषेण के दीक्षागुरु । ये जगत्पादगिरि से मुक्त हुए । मपु० ६५ १९०, ६८ ४६८

शिवचन्द्रा—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में जम्बुपुर नगर के राजा विद्याधर जाम्बव की रानी । विश्वसेन इसका पुत्र और जाम्बवती इसकी पुत्री थी । हपु० ४४ ४-५

शिवताति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । हपु० २५ २०२

शिवदत्त—महावीर की आचार्य परम्परा में लोहाचार्य के पश्चात् हुए चार आचार्यों में तीसरे आचार्य । ये अग और पूर्वश्रुतों के एक देश ज्ञाता थे । वीवच० १.५१

शिवदेव—लवणसमुद्र के उदवास पर्वत का अधिष्ठाता देव । हपु० ५ ४६१

शिवदेवी—हरिवंशी एवं काश्यप गोत्री अन्धकवृष्टि के पुत्र समुद्रविजय की पत्नी । यह तीर्थङ्कर नेमिनाथ की जननी थी । मपु० ७१ ३०-३२, ३८, ४६

शिवनन्द—राजा समुद्रविजय का पुत्र । हपु० ४८ ४४

शिवप्रद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०२

शिवभूति—मगध देश की वत्सा नगरी के अग्निमित्र ब्राह्मण का पुत्र । सोमिला ब्राह्मणी इसकी पत्नी और चित्रसेना इसकी बहिन थी । यह मरकर वग देश के कान्तपुर नगर में महाबल नाम का राजपुत्र हुआ था । मपु० ७५ ७१-८१

शिवमति—ऐरावत क्षेत्र में दितिनगर के विहीत सम्यग्दृष्टि की पत्नी । यह मेघदत्त की जननी थी । पपु० १०६ १८७-१८८

शिवमन्दिर—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का नौवां नगर । मपु० ६३ ११६, हपु० २२.९४

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का पन्द्रहवां नगर । मपु० १९ ७९,८७

शिवसेन—श्रेयपुर नगर का स्वामी । वीतशोका इसकी पुत्री थी । मपु० ४७.१४२-१४३

शिवा—शौर्यपुर के राजा समुद्रविजय की पटरानी । यह तीर्थंकर नेमिनाथ की जननी थी । इसका अपर नाम शिवदेवी था । पपु० २० ५८, हपु० १८ १८०, पापु० ११ १९५,१९८, दे० शिवदेवी

शिवाकर—कुशाग्रपुर का राजा । यह छठें नारायण पुण्डरीक का पिता था । लक्ष्मी इसकी रानी थी । पपु० २०.२२१-२२६

शिवि—राजा उग्रसेन के चाचा शान्तनु का पुत्र । हपु० ४८ ४०

शिविका—दीक्षावन जाने के लिए तीर्थंकरों द्वारा प्रयुक्त पालकी । सर्वप्रथम इसे मनुष्य उठाते हैं । उनके पश्चात् विद्याधर और अन्त में देव । मपु० १७ ८१,४८ ३७-३८

शिशुपाल—(१) कौशल नगरी के राजा भेषज और रानी मद्री का पुत्र । इसके तीन नेत्र थे । किसी निमित्तज्ञानी ने बताया था कि जिसके देखने से इसका तीसरा नेत्र नष्ट हो जावेगा वही इसका हन्ता होगा । एक बार इसके माता-पिता इसे लेकर कृष्ण के पास गये । वहाँ कृष्ण के प्रभाव से इसका तीसरा नेत्र अदृश्य हो गया । यह घटना घटते ही इसकी माता को कृष्ण के द्वारा पुत्र-मरण की आशका हुई । उसने कृष्ण से पुत्रभिक्षा माँगी । कृष्ण ने भी सौ अपराध होने पर ही इसे मारने का वचन दिया । इसने अहंकारी होकर कृष्ण के विरुद्ध सौ अपराध कर लिये थे । इसके पश्चात् जाम्बवती को पाने के लिए कृष्ण और इसके बीच युद्ध हुआ । इस युद्ध में यह कृष्ण द्वारा मारा गया । मपु० ७१ ३४२-३५७, हपु० ४२ ५६,९४,५० २४, पापु० १२ ९-१३

(२) पाटलिपुत्र नगर का राजा । यह प्रथम कल्की का पिता था । मपु० ७६ ३९८-३९९

शिष्ट—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. १७२

(२) क्षमा, शौच आदि गुणों से युक्त पुरुष । मपु० ४२ २०३

शिष्टपालन—राजधर्म । न्यायपूर्वक आजीविका करनेवाले पुरुषों का पालन करना शिष्टपालन कहलाता है । मपु० ४२ २०२

शिष्टभुक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. १७२

शिष्टेष्ट—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २०१

शीतगृह—भरतक्षेत्र का एक पर्वत । दिग्विजय के समय भरतेश का सेनापतिससैन्य कवाटक पर्वत को लाघकर इस पर्वत पर आया था । मपु० २९ ८९

शीतवा—शीतलता प्रदायिनी एक विद्या । विद्याधर अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी । मपु० ६२ ३९८

शीतपरीषह—मुनियों के बाईस परीषहों में एक परीषह । शीत-वेदना को जीतना शीतपरीषह है । हपु० ६३ ९१,९४

शीतलनाथ—अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एवं दसवें तीर्थंकर । जम्बूद्वीप—भरतक्षेत्र के मलय देश में भद्रपुर नगर के इक्ष्वाकुवंशी राजा दृढरथ इनके पिता तथा रानी सुनन्दा माता थी । माँ के गर्भ में इनके आने के छ. मास पहले से ही राजा दृढरथ के घर रत्नवृष्टि होने लगी थी । ये सोलह स्वप्न-पूर्वक चैत्र कृष्ण अष्टमी की रात्रि के अन्तिम पहर में माँ के गर्भ में आये थे । उस समय पूर्वाषाढ नक्षत्र था । गर्भवास के नौ मास व्यतीत होने पर माघ कृष्ण द्वादशी के दिन विश्वयोग में इनका जन्म हुआ था । देवों ने इन्हें सुमेरु पर्वत पर ले जाकर इनका अभिषेक किया और इनका यह नाम रखा । इनका जन्म तीर्थंकर पुष्पदन्त के मुक्त होने के बाद नौ करोड़ सागर का समय व्यतीत हो जाने पर

हुआ था। जन्म के पूर्व पल्य के चौथाई भाग तक धर्म-कर्म का विच्छेद रहा। इनके शरीर की कान्ति स्वर्ण के समान थी। आयु एक लाख पूर्व और शरीर नब्बे धनुष ऊँचा थी। आयु का चतुर्थ भाग प्रमाण कुमारकाल व्यतीत होने पर इन्हें पिता का पद प्राप्त हुआ था। भोग-भोगते हुए आयु का चतुर्थ भाग शेष रह जाने पर आच्छादित हिम-पटल को क्षण में विलीन होते देखकर ये विरक्त हुए। राज्य पुत्र को देकर इनके दीक्षित होने के भाव हुए। लौकान्तिक देवों ने उनके दीक्षा लेने के भावों की संस्तुति की। इसके पश्चात् ये शुक्रप्रभा-शिविका में बैठकर सहेतुक वन गये। वहाँ माघ कृष्ण द्वादशी के दिन साय बेला और पूर्वाषाढ नक्षत्र में दो उपवास का नियम लेकर ये एक हजार राजाओं के साथ दीक्षित हुए। अरिष्टपुर के पुनर्वसु राजा ने नवधाभक्ति पूर्वक इन्हें आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये। तीन वर्ष तक ये छद्मस्थ अवस्था में रहे। इन्हें पौष कृष्ण चतुर्दशी के दिन पूर्वाषाढ नक्षत्र में केवलज्ञान हुआ। इनकी समवसरण सभा में इक्यासी गणधर, चौदह सौ पूर्वधारी, उनसठ हजार दो सौ शिक्षक, सात हजार दो सौ अवधिज्ञानी, सात हजार केवलज्ञानी, बारह हजार विक्रिया धारी, सात हजार पाँच सौ मन पर्ययज्ञानी कुल एक लाख मुनि, धारण आदि तीन लाख अस्सी हजार आर्यिकाएँ, दो लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएँ, असंख्यात देव देवियाँ और संख्यात तिर्यञ्च थे। विहार करते हुए सम्मेद-शिखर आकर इन्होंने एक मास का योग निरोध करके प्रतिमायोग धारण किया। इन्होंने एक हजार मुनियों के साथ आश्विन शुक्ल अष्टमी के दिन साय बेला और पूर्वा-षाढ नक्षत्र में मुक्ति प्राप्त की। दूसरे पूर्वभव में ये विदेहक्षेत्र में वत्स देश की सुसीमा नगरी के पद्मगुल्म नाम के नृप और पहले पूर्वभव में आरणेन्द्र थे। मपु० २ १३०-१३४, ५६ २-३, १८ २३-५९, पपु० ५ २१४, २० ३१-३५, ४६, ६१-६८, ८४, ११३, ११९, हपु० १ १२, १३ ३२, ६० १५६-१९१, ३४१-३४९, वीवच० १८ १०१-१०६

शीतयोग—एक प्रकार का पेय (शर्बत)। पपु० २४.५४

शीतवेताली—रूप परिवर्तन करनेवाली विद्या। एक विद्याधर ने इसी विद्या से श्रीपाल को वृद्ध बनाकर उसे विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के मनोहर नगर के श्मसान में छोड़ा था। मपु० ४७ ५२-५४

शीता—(१) रुचकगिरि के पश्चिम दिशावर्ती सातवें यश कूट की रहने-वाली देवी। हपु० ५ ७१४

(२) राजा अन्धकवृष्टि और रानी सुभद्रा के पाँचवें पुत्र अचल की रानी। मपु० ७० ९५-९८

शीरवती—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गाधार देश की एक नगरी। रतिवर कबूतर इसी नगरी के राजा आदित्यगति विद्याधर का हिरण्यवर्म नामक पुत्र हुआ था। पापु० ३ २१०-२११

शीरायुध—बलभद्र का अपर नाम। हपु० ३५.३९

शीरी—बलदेव का अपर नाम। हपु० ४२ ९७

शीर्षकयष्टि—एक प्रकार का हार। इस हार के बीच में एक स्थूल मोती होता है। मपु० १६ ५२

शील—(१) राम का एक योद्धा। पपु० ५८.१२

(२) गृहस्थ धर्म। गृहस्थों में चार धर्म बताये गये हैं—दान, पूजा, शील और पर्व के दिनों में उपवास करना। पाण्डवपुराणकार ने इनमें शील और दान के साथ दो नये नाम बताये हैं—तप और शुभ भावना। इनमें दया, व्रतों की रक्षा, ब्रह्मचर्य का पालन और सद्‌गुणों का पालन करना शील कहलाता है। इसके पालने से स्वर्ग के सुख प्राप्त होते हैं। मपु० ५ २२, ४१ १०४, ६८ ४८५-४८६, पापु० १ १२३-१२४

शीलकल्याणक—एक व्रत। मनुष्यणी, देवांगना, अचित्ता (चित्रस्था) और तिर्यञ्चणी इन चार प्रकार की स्त्रियों का पाँचों इन्द्रियों और मन, वचन, काय तथा कृत, कारित-अनुमोदना रूप नौ कोटियों से किया गया एक सौ अस्सी (४×५=२०×९=१८०) प्रकार का त्याग ब्रह्मचर्य-महाव्रत है। इस व्रत में इस प्रकार एक सौ अस्सी उपवास और इतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। इसमें क्रमशः एक उपवास और एक पारणा करनी चाहिए। हपु० ३४ १०३, ११२

शीलगुप्त—(१) जम्बूद्वीपस्थ भरतक्षेत्र के एक मुनि। राजा जयकुमार तथा एक नागयुगल ने इन्हीं मुनि से धर्मश्रवण किया था। मपु० ४३. ८८-९०, पापु० ३ ५-६

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरी-किणी नगरी के राजा प्रजापाल के दीक्षागुरु। मपु० ४६ १९-२०, ४८

(३) राजपुर नगर के मनोहर उद्यान में स्थित अवधिज्ञानी मुनि। इन्होंने ही राजपुर नगर के गन्धोत्कट सेठ को उसके एक पुण्यात्मा पुत्र होना बताया था। मपु० ७५ १९८-२०४

शीलदत्त—एक मुनि। भरतक्षेत्र के अवन्ति देश में उज्जयिनी नगरी के धनदेव सेठ ने इनसे श्रावक के व्रत ग्रहण किये थे। मपु० ७५ १००, १३८

शीलनगर—भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश का एक नगर। राजा वज्रघोष इस नगर का स्वामी और विद्युन्माला राजकुमारी थी। पापु० ७ ११८, १२३-१२४

शीलवती—कौशल देश में स्थित साकेतनगर के राजा वज्रसेन की रानी। यह हरिषेण की जननी थी। मपु० ७४ २३१-२३२, वीवच० ४ १२१-१२३

शीलव्रत—तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। हपु० ४५ ८६, ५८ १६३

शीलव्रतेष्वनतिचार—तीर्थंङ्कर प्रकृति में कारणभूत सोलह कारण-भाव-नाओं में तीसरी भावना। शीलव्रतों को निरतिचार धारण करना शीलव्रतेष्वनतिचार-भावना कहलाती है। मपु० ६३ ३२२, हपु० ३४ १३४

शीलसागर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०५

शीला—(१) रावण की रानी। पपु० ७७ १३

(२) व्याघ्रपुर नगर के राजा सुकान्त की पुत्री और सिंहेन्दु की बहिन। श्रीवर्धित ब्राह्मण ने इसका अपहरण किया था। पूर्वभव में इसे कोढ़ हो गया था। इसने भद्राचार्य के समीप अणुव्रत धारण किये

थे, जिसके फलस्वरूप मरकर यह स्वर्ग गया और वहाँ से च्युत होकर इस नाम की स्त्री हुई। पपु० ८०.१७३, १९०-१९३

शीलायुध—(१) राजा वसुदेव तथा रानी प्रियंगुसुन्दरी का पुत्र। हपु० ४८ ६२

(२) श्रावस्ती का राजा। तापसी चारुमती की कन्या ऋषिदत्ता इसकी रानी थी। उसका प्रसूति के बाद स्वर्गवास हो गया था। ऋषिदत्ता से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम एणीपुत्र था। इस पुत्र को राज्य देकर यह मुनि धर्म का पालन करते हुए मरा और मरकर स्वर्ग में उत्पन्न हुआ। हपु० २९ ५३, २५-५७

शुक्तिमती—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश चक्रवर्ती की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९.५४, हपु० १७ ३६

(२) एक नगरी। यह राजा अभिचन्द्र द्वारा इसी नदी के तट पर बसाई गयी थी। हपु० १७ ३६

शुक्रप्रभ—जम्बूद्वीप के सुकच्छ देश में विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। विद्याधर इन्द्रदत्त यहाँ का राजा था। मपु० ६३ ९१

शुक्र—(१) ऊर्ध्वलोक में स्थित नौवा कल्प-स्वर्ग। इसमें बीस हजार बीस विमान हैं। पपु० १०५ १६६-१६८, हपु० ६ ३७,५९

(२) महाशुक्र स्वर्ग का इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५०

(३) रावण का सामन्त। पपु० ५७ ४५-४८, ७३ १०-१२

शुक्रपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का उनतीसवाँ नगर। मपु० १९ ४९, ५३

शुक्रप्रभा—तीर्थङ्कर शीतलनाथ की शिविका-पालकी। वे इसी में बैठकर सयम धारण करने के लिए सहेतुक वन गये थे। मपु० ५६ ४४-४५

शुक्लध्यान—स्वच्छ एव निर्दोष मन से किया गया ध्यान। इसके दो भेदहैं—शुक्लध्यान और परमशुक्लध्यान। इन दोनो के भी दो-दो भेद हैं। इसमें शुक्लध्यान के पृथक्त्ववितर्कविचार और एकत्ववितर्कविचार ये दो तथा दूसरे परमशुक्लध्यान के सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और समुच्छिन्नक्रियानिवृत्ति ये दो भेद हैं। इस प्रकार इसके चार भेद है। मपु० २१.३१-४३, १६५-१७७, १९४-१९५, ३१९, हपु० ५६ ५३-५४, ६५-८२, वीवच० ६ ५३-५४ परिभाषाएँ यथास्थान देखें

शुक्लप्रभा—विमलप्रभ देव की देवी। मपु० ६२ ३७६

शुक्ललेश्या—छ लेश्याओ में एक लेश्या। यह अहमिन्द्रो के होती है। इसके होने से अहमिन्द्रो का पर क्षेत्र में विहार नही होता। वे अपने ही प्राप्त भोगो से सतुष्ट रहते हैं। मपु० ११ १४१

शुचि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

शुचिदत्त—तीर्थङ्कर महावीर के चौथे गणधर। हपु० ३ ४२ दे० महावीर

शुचिश्रवा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

शुद्ध—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०८, २१२

शुद्धमध्यमा—सगीत के मध्यग्राम की चौथी मूर्च्छना। हपु० १९ १६३

शुद्धषड्जा—सगीत के षड्ज ग्राम की चौथी मूर्च्छना। हपु० १९.१६१

शुद्धहार—एक लडी का हार। इसके मध्य में एक शीर्षक होता है। मपु० १६ ६३

शुभंकर—कुरुवशी राजा कुरु का पौत्र तथा कुरुचन्द्र का पुत्र। यह राजा धृतिकर का पिता था। हपु० ४५ ९

शुभंयु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१७

शुभप्रदा—एक विद्या। यह दशानन को प्राप्त थी। मपु० ७.३२७

शुभमति--कौतुकमगल नगर का एक राजा। इसकी रानी पृथुश्री थी। द्रोणमेघ इन दोनो का पुत्र और केकया पुत्री थी। पपु० २४.२-४

शुभलक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४४

शुभा—(१) रावण की एक रानी। पपु० ७७,१५

(२) विदेह क्षेत्र की एक नगरी। यह रमणीय देश की राजधानी थी। मपु० ६३.२१०, २१५, हपु० ५.२६०

शुभ्रपुर--भरतक्षेत्र का एक नगर। इसे राजा सूर्य ने बसाया था। हपु० १७.३२

शुषिर—वाद्य के तत, अवनद्ध, शुषिर और घन इन चार भेदो में तीसरे प्रकार के वाद्य-बाँसुरी आदि। पपु० २४.२०-२१

शुष्क—माला-निर्माणकी चार कलाओ मे एक कला। इसके द्वारा सूखे पत्र आदि से मालाएँ निर्मित की जाती हैं। पपु० २४.४४-४५

शुष्कनदी--भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश का सेनापति सैनिको के साथ यहाँ आया था। मपु० २९.८४

शूद्र—वृषभदेव ने कर्मभूमि का आरम्भ करते हुए तीन वर्णों की स्थापना की थी-क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इसमें सेवा-शुश्रूषा करनेवालो को शूद्र कहा गया है। इनके दो भेद बताये हैं—कारू और अकारू। मपु० १६ १८३-१८६, २४५, पपु० ३.२५८, ११ २०२, हपु० ९ ३९, पापु० २ १६१-१६२

शूर—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६०

(२) परीषहो, कषायो और काम, मोह आदि के विजेता शूर कहलाते हैं। मपु० ४४ २२८-२२९, वीवच० ८ ५०

(३) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का उत्तरदिशावर्ती एक देश। हपु० ११ ६६-६७

(४) हरिवशी राजा यदु का पौत्र और राजा नरपति का पुत्र। सुवीर इसका छोटा भाई था। इसने मथुरा का राज्य छोटे भाई को देकर कुशद्य देश में शौर्यपुर नगर बसाया था तथा यह वहीं रहने लगा था। अन्धकवृष्णि इसका पुत्र था। अन्त में यह पुत्र को राज्य देकर सुप्रतिष्ठ मुनिराज के पास दीक्षित होकर सिद्ध हुआ। हपु० १८ ६-११

(५) मथुरा नगरी के सेठ भानु का पुत्र। सेठानी यमुना इसकी माता थी। अन्त में यह अपने अन्य भाइयो-सुभानु, भानुकीर्ति, भानुषेण, शूरदेव, शूरदत्त और शूरसेन के साथ वरधर्म मुनि के पास दीक्षित हो गया था तथा घोर तपश्चरण करके यह तथा इसके सभी भाई समाधिमरणपूर्वक सौधर्म स्वर्ग में त्रायस्त्रिंश जाति के उत्तम देव हुए। मपु० ७१ २०२-२०४, हपु० ३३.९७, १२४-१३०

शूरदत्त—मथुरा नगरी के सेठ भानु का छठा पुत्र। मपु० ७१ २०२-२०४, हपु० ३३ ९७ दे० शूर-५

शूरदेव—सेठ भानुदत्त का पाँचवाँ पुत्र। ७१ २०२-२०४ दे० शूर-५

शूरबाहु—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का उन्यासीवाँ पुत्र। पापु० ८ २०२

शूरवीर—(१) शौर्यपुर के राजा सूरसेन का पुत्र। धारिणी इसकी रानी थी। इसके दो पुत्र थे—अन्धकवृष्टि और नरवृष्टि। इसने सुप्रतिष्ठ मुनि से धर्मोपदेश सुनकर अन्धकवृष्टि को राज्य तथा नरवृष्टि को युवराज पद देकर सयम ले लिया था। मपु० १० ९३-९४, ११९-१२२

(२) काक-मास के त्यागी खदिरसार भील का साला। यह सारसौख्य नगर का निवासी था। इसने खदिरसार से व्रत भग कर स्वस्थ होने के लिए काकमास खाने को कहा था किन्तु खदिरसार ने व्रत भग नही किया अपितु पाँचो व्रत धारण कर लिए थे। अपने बहनोई की इस घटना से प्रभावित होकर इसने भी समाधिगुप्त मुनि से श्रावक के व्रत धारण कर लिये थे। मपु० ७४ ४०१-४१५

शूरसेन—(१) मथुरा नगरी का राजा। मपु० ७१ २०१-२०२, हपु० ३३. ९६

(२) मथुरा नगरी के सेठ भानु और उसकी पत्नी यमुना सेठानी का सातवाँ पुत्र। चन्द्रकान्ता इसकी स्त्री थी। इसी नगर की वज्र-मुष्टि की पत्नी मंगी की पति को मारने की चेष्टा देखकर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ और यह सयमी हो गया था। अन्त में यह अन्य भाइयो सहित सन्यासमरण कर प्रथम स्वर्ग में त्रायस्त्रिंश देव हुआ। मपु० ७१ २०४-२२८, २४३, २४८, हपु० ३३ ९७-१३० दे० शूर

(३) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। वृषभदेव के समय मे स्वय इन्द्र ने इमकी रचना की थी। मपु० १६ १५५ पपु० १०१. ८३

शूरसेना—राजा वसुदेव की रानी। हपु० ३१ ७

शूल—एक अमोघ अस्त्र। यह शत्रुओ का सहार करके लौट आता है। असुरेन्द्र ने यह अस्त्र मथुरा के राजा मधु को दिया था। पपु० १२. १२-१३, ८९ ५-६

शेमुषी—एक विद्या। इससे विद्याधर रूप वदलते थे। पपु० १० १७

शेमुषीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७९

शेषवती—एक यादव कन्या। यह भीम पाण्डव की स्त्री थी। हपु० ४७ १८-१९, पापु० १६ ६२

शेषा—पूजन के अन्त में ग्रहण की जानेवाली आशिका। इसे अजली में ग्रहण करके मस्तक पर स्थापित किया जाता है। पापु० ३ २९

शैल—राजा अचल का पाँचवाँ पुत्र। महेन्द्र, मलय, सह्य और गिरि ये चार इसके बड़े भाई तथा नग और अचल छोटे भाई थे। हपु० ४८ ४९

शैलनगर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ छठे नारायण पुण्डरीक ने पूर्वभव में निवास किया था। पपु० २० २०७-२०८

शैलपुर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। तीर्थंकर पुष्पदन्त ने यहाँ पारणा की थी। मपु० ५५ ४८

शैलन्ध्री—पर्वतवासियो का वेष धारण करनेवाली द्रौपदी। इसे कीचक ने प्राप्त करना चाहा था किन्तु इसके कहते ही भीम ने इसके वेश मे कीचक को मुक्को से मारकर गिरा दिया था। हपु० ४६. ३२-३६

शोणनद—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की एक नदी। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ५२

शोभपुर—एक नगर। यहाँ का राजा अमल श्रावक धर्म का पालन करते हुए मरकर स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर राजा श्रीवर्द्धित हुआ। पपु० ८० १९०-१९५ दे० अमल

शोभानगर—एक नगर। यह पुष्कलावती देश में विजयार्ध पर्वत के निकट 'धान्यकमाल' वन में स्थित था। प्रजापाल यहाँ का राजा था। मपु० ४६ ९५ दे० प्रजापाल

शोभापुर—विद्याधरों का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मत्री सहित रावण की सहायतार्थ उसके पास आया था। पपु० ५५.८५

शौच—(१) सातावेदनीय कर्म का एक आस्रव। जीवन, इन्द्रिय, आरोग्य और उपयोग इन चार प्रकार के लोभ के त्याग से उत्पन्न निर्लोभवृत्ति शौच है। हपु० ५८ ९४ पापु० २३ ६७

(२) उत्तम क्षमा आदि दस धर्मों में पाँचवाँ धर्म। इसमें इन्द्रिय विषयो की लोलुपता का त्याग किया जाता है। इन्ही दस धर्मों को धर्म ध्यान की दस भावनाएँ भी कहा है। मपु० ३६ १५७-१५८, वीवच० ६ ९

शौरिपुर—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक नगर। तीर्थंकर नेमिनाथ यही जन्मे थे। इसके अपर नाम सूरिपुरी, शौर्य और शौर्यपुर थे। पपु० २० ५८, पापु० ८ २९

शौर्य—(१) एक देश। शूरसेन यहाँ का नृप था। मपु० ७१ २०१-२०२ दे० शौरिपुर

(२) वीरो का एक गुण। हपु० १९.५९

शौर्यपुर—कुशद्य देश का एक नगर। इसे राजा शूर ने बसाया था। मपु० ७० ९२-९३, हपु० १८.९-१०, १९ ७ दे० शौरिपुर

श्मसाननिलय—विद्याधरो की एक जाति। श्मसान की अस्थियो से निर्मित आभूषणधारी, भस्मधूलि से धूसरित, श्मसानस्तम्भ के आश्रयी विद्याधर श्मसाननिलय कहलाते हैं। हपु० २६ १६

श्यामक—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीपो में चौथा एव उसका आवर्तक समुद्र। हपु० ५ ६२३

श्यामलता—सेठ वैश्रवणदत्त और आम्रमजरी की पुत्री सुरमजरी की दासी। कुमार जीवन्धर के पास परीक्षा के लिए सुरमजरी का चूर्ण यही लेकर गयी थी। मपु० ७५ ३४८-३४९

श्यामला—(१) मगध देश के राजा की पुत्री। इसका विवाह वसुदेव के साथ हुआ था। मपु० ७०.२५०-२५१

(२) विजयार्ध पर्वत के निवासी विद्याधर पवनवेग की स्त्री। यह विद्याधर नमि की जननी थी। मपु० ७१ ३६८-३६९

श्यामा—(१) विजयार्ध पर्वत के कुंजरावर्त नगर के राजा विद्याधर अशनिवेग की पुत्री। यह वसुदेव से विवाही गयी थी। इसकी माँ सुप्रभा थी। अंगारक के द्वारा वसुदेव का हरण किये जाने पर इसने अंगारक से युद्ध किया था। इसमें अंगारक की पराजय हुई। फलस्वरूप अंगारक ने वसुदेव को मुक्त कर दिया था। हपु० १९ ६८, ७५, ८३, १०१-१११

(२) एक लता। यह तपस्या काल में बाहुबली के शरीर से लिपट गयी थी। पपु० ४ ७६

श्यामाक—एक प्रकार का धान्य-समा। यह वृषभदेव के समय मे उत्पन्न होने लगा था। मपु० ३.१८६

श्येनक—अयोध्या नगरी के राजा अनन्तवीर्य का कोतवाल। इसने रुद्रदत्त ब्राह्मण की चोरी करते हुए पकडा था। मपु० ७० १५४

श्रद्धा—आहारदाता के सात गुणो में एक गुण-पात्र के प्रति आदर-भाव। मपु० २० ८२-८३ दे० आहारविधि

श्रद्धावान्—(१) हैमवत क्षेत्र के मध्य में स्थित वर्तुलाकार विजयार्ध पर्वत। यह मूल मे एक हजार योजन, मध्य में सात सौ पचास और मस्तक पर पाँच सौ योजन चौडा है तथा एक हजार योजन ऊँचा है। इसका दूसरा नाम नाभिगिरि है। हपु० ५ १६१-१६२

(२) पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक वक्षारगिरि। मपु० ६३ २०३, हपु० ५ २३०-२३१

श्रमण—निर्ग्रन्थ-मुनि। ये प्राणियो के सतत हितैषी होते हैं। ससार के कारणो की सगति से दूर रहते हैं। ये स्वभाव से समुद्र के समान गम्भीर और निर्दोष-श्रम अथवा समता में प्रवर्त्तमान होते हैं। पपु० ६ २७२-२७४, १०९ ९०

श्रमणधर्म—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पाँच महाव्रतो, ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और व्युत्सर्ग इन पाँच समितियों, तीन गुप्तियो, चित्त और पाँच इन्द्रियो का निरोध, षडावश्यको-समता, वन्दना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग, तथा केशलोच, अस्नान, एकभक्त, स्थिति भुक्ति (खडे होकर आहार करना) अचेलता, भूशयन, दन्तमलमार्जन वर्जन, तप, सयम, चारित्र, परीषहजय, अनुप्रेक्षा, धर्म और पचाचार का पालन करना श्रमणधर्म है। इसका दूसरा नाम मुनि-धर्म या अनगार-धर्म कहा है। पपु० ६ २७२, २९३, हपु० २ ११८-१३१

श्रमणसंघ—मुनि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका इन चार का सघ। मपु० २५ ६

श्रवण—नक्षत्र। तीर्थङ्कर श्रेयासनाथ तथा मुनिसुव्रतनाथ इसी नक्षत्र में जन्मे थे। पपु० २० ४७, ५६

श्रायसोक्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

श्रावक—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत तथा चार शिक्षाव्रतो का धारी गृहस्थ। उत्तम, मध्यम और जघन्य के भेद मे भी श्रावक तीन प्रकार के कहे है। इनमे पहली से छठी प्रतिमा के धारी जघन्य श्रावक, सातवी से नौवी प्रतिमा के धारी मध्यम और दसवी एव ग्यारहवी प्रतिमाधारी उत्तम श्रावक कहे गये हैं। समवसरण मे श्रावको का निश्चित स्थान होता है। श्रावक के व्रतो को मोक्षमहल की दूसरी सीढी कहा है। दान, पूजा, तप और शील श्रावको का बाह्य धर्म है। मपु० ३९ १४३-१५०, ६७ ६९, हपु० ३ ६३, १० ७-८, १२ ७८ वीवच० १७ ८२, १८ ३६-३७, ६०-७०

श्रावकाध्ययनाग—द्वादशाग श्रुत का सातवाँ अग। इसका अपर नाम उपासकाध्ययनाग है। इसमें श्रावक के आचार का वर्णन है। इसकी पद-सख्या ग्यारह लाख सत्तर हजार है। हपु० २ ९३, १० ३७

श्रावस्ती—जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के काशी देश में स्थित नगरी। तीर्थङ्कर सभवनाथ का जन्म इसी नगरी में हुआ था। मपु० ४९ १४, १९-२०, पपु० ६ ३१७, २० ३९, हपु० २८५

श्रीअभिषेक—तीर्थङ्करो के गर्भावतरण के समय तीर्थङ्कर माता के द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नो में चौथा स्वप्न-लक्ष्मी का अभिषेक। पपु० २१ १२-१४

श्री—(१) रुचकगिरि के रुचककूट की रहनेवाली दिक्कुमारी देवी। यह हाथ मे चँमर लेकर जिनमाता की सेवा करती है। मपु० ३. ११२-११३, १२ १६३-१६४, ३८ २२२, हपु० ५ ७१६-७१७, ४४. ११, वीवच० ७.१०५-१०८

(२) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी मे स्थित गुजानगर के राजा सिंहविक्रम की रानी। यह केवली सकलभूषण की जननी थी। पपु० १०४ १०३-११७

(३) पद्मसरोवर के कमल पर बने भवन मे रहनेवाली व्यन्तरेन्द्र की देवी। मपु० ३२ १२१, ६३ २००, हपु० ५ १२८-१३०

(४) छ जिनमातृकाओ में एक मातृका देवी। यह प्रथम कुलाचल पर स्थित पद्म सरोवर के कमल पर रहती है। मपु० ३८ २२६

(५) त्रिश्रृंग नगर के राजा प्रचण्डवाहन और रानी विमलप्रभा की दस पुत्रियो मे चौथी पुत्री। ये सभी बहिनें पहले युधिष्ठिर के लिए प्रदान की गई थी, किन्तु बाद मे युधिष्ठिर के अन्यथा (मरण) समाचार सुनने पर ये अणुव्रत धारिणी श्राविकाएँ बन गयी थी। हपु० ४५ ९५-९९

(६) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। दिग्विजय के समय भरतेश के सेनापति ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। मपु० २९ ९०

श्रीकंठ—(१) विजयार्ध पर्वत को दक्षिणश्रेणी के मेघपुर नगर के वानरवशी राजा विद्याधर अतीन्द्र तथा रानी श्रीमती का पुत्र। इसकी एक छोटी बहिन थी, जिसका नाम देवी था। बहनोई कीर्तिधवल ने इसे रहने के लिए वानरद्वीप दिया था। इसने किष्कु पर्वत पर चौदह योजन लम्बाई-चौडाई का किष्कुपुर नाम का नगर बसाया था। नन्दीश्वर द्वीप को यात्रा के लिए जाते हुए मानुषोत्तर पर्वत पर विमान की गति

अवरुद्ध हो जाने से दुःखी होकर इसने इस पर्वत के आगे जाने का निश्चय किया था। फलस्वरूप यह वज्रकंठ पुत्र को राज्य सौंप करके निर्ग्रन्थ मुनि हो गया था। वानरद्वीप में रहने से इसकी सन्तति वानरवंश के नाम से विख्यात हुई। पपु० ६ ३-१५१, २०६

(२) अनागत प्रथम प्रतिनारायण। हपु० ६० ५६९-५७०

श्रीकान्त—(१) आगामी सातवें चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८३, हपु० ६० ५६४

(२) विदेहक्षेत्र मे सीतोदा नदी के उत्तरी तट पर स्थित सुगन्धि देश के श्रीपुर नगर के राजा श्रीवर्मा का पुत्र। श्रीवर्मा इसे राज्य देकर सयमी हुए। मपु० ५४ ९-१०, २५, ८०

(३) रावण के पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एकक्षेत्र नामक नगर का निवासी वणिक् था। यह इसी नगर के सागरदत्त वणिक् की पुत्री गुणवती पर आसक्त था किन्तु गुणवती के भाई ने गुणवती को इसे न देकर धनदत्त को देने का निश्चय किया था। धनदत्त का छोटा भाई वसुदत्त इसे अपने भाई का विरोधी जानकर मारने को उद्यत हुआ। परिणामस्वरूप इसने वसुदत्त को और वसुदत्त ने इसे मार डाला था। इस प्रकार दोनो मरकर मृग हुए। पपु० १०६ १०-२०

श्रीकान्ता—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी पुष्कलावती देश की वीतशोका नगरी के राजा अशोक और रानी श्रीमती की पुत्री। यह जिनदत्ता आर्यिका के पास दीक्षा लेकर और रत्नावली-तप करते हुए देह त्याग करके माहेन्द्र स्वर्ग के इन्द्र की देवी हुई। मपु० ७१.३९३-३९६, हपु० ६० ६८-७०

(२) मेरु की पश्चिमोत्तर (वायव्य) दिशा की प्रथम वापी। हपु० ५ ३४४

(३) मथुरा नगरी के सेठ भानु की पुत्रवधू और शूर की पत्नी। यह अन्त में दीक्षित हो गयी थी। हपु० ३३ ९६-९९, १२७

(४) अरिष्टपुर नगर के राजा हिरण्यनाभ की रानी। कृष्ण की पटरानी पद्मावती इसी की पुत्री थी। हपु० ४४ ३७-४३

(५) हस्तिनापुर के कौरववशी राजा शूरसेन की रानी। यह तीर्थंकर कुन्थुनाथ की जननी थी। मपु० ६४.१२-१३, २२, पापु० ६ ५-७, २८-३०

(६) विदेहक्षेत्र के गन्धिल देश में स्थित पाटली ग्राम के नागदत्त वैश्य की पुत्री। इसके नन्द, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, वरसेन और जयसेन ये पाँच भाई तथा मदनकान्ता नाम की एक बहिन थी। मपु० ६ १२६-१३०

(७) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन की रानी। वज्रनाभि की यह जननी थी। मपु० ११ ८-९

(८) पूर्व मेरु के पश्चिम विदेहक्षेत्र में सुगन्धि देश के श्रीपुर नगर के राजा श्रीषेण की रानी। श्रीवर्मा की यह जननी थी। मपु० ५४ ९-१०, ३६, ३९, ६७-६८

(९) कौशाम्बी नगरी के राजा महाबल और रानी श्रीमती की पुत्री। इसका विवाह इन्द्रसेन से हुआ था। अनन्तमति इसकी दासी और उपेन्द्रसेन देवर था। मपु० ६२ ३५१ दे० इन्द्रसेन

(१०) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित नन्दपुर नगर के राजा हरिषेण की रानी। हरिवाहन की यह जननी थी। मपु० ७१ २५२-२५४

(११) साकेत नगर के राजा श्रीषेण की रानी। हरिषेणा और श्रीषेणा इसकी पुत्रियाँ थी। मपु० ७२ २५३-२५४

(१२) सुग्रीव की पाँचवी पुत्री। राम के भाई भरत की यह भाभी थी। पपु० ४७ १३८, ८३ ९६

(१३) रावण की रानी। पपु० ७७ १३

श्रीकूट—(१) हिमवत् कुलाचल का छठा कूट। हपु० ५ ५४

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का तैंतीसवाँ नगर। हपु० २२ ९७

श्रीकेशी—लक्ष्मण और उसकी पत्नी रतिमाला का पुत्र। पपु० ९४ ३४ दे० अतिवीर्य

श्रीगर्भ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११८

श्रीकटन—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश के सेनापति ने यहाँ के शासक को पराजित किया था। मपु० २९ ८९

श्रीगुहापुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा अपने मत्री सहित रावण की सहायतार्थ उसके पास आया था। पपु० ५५ ८६

श्रीगृह—(१) एक नगर। लक्ष्मण ने इस नगर के राजा को अपने अधीन किया था। पपु० ९४ ७

(२) अयोध्या नगरी के राजा नाभिराय का एक महल। यहीं वृषभदेव का जन्म हुआ था। भरतेश के मणि, चर्म और काकिणीरत्न इसी महल मे प्रकट हुए थे। मपु० १४ ७२-७४, ३७ ८५

श्रीग्रीव—राक्षसवशी राजा हरिग्रीव का पुत्र। यह सुमुख का पिता था। इसने सुमुख को राज्य सौंपकर मुनिव्रत धारण कर लिया था। पपु० ५ ३९१-३९२

श्रीचन्द्र—आगामी छठा बलभद्र। इन्हें महापुराण में नौवाँ बलभद्र कहा है। मपु० ७६ ४८६, हपु० ६० ५६८

(२) आठवें बलभद्र पद्म के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २३३

(३) कुरुवशी एक राजा। यह मन्दर का पुत्र और सुप्रतिष्ठ राजा का पिता था। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सबधी कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर नगर का राजा था। इसकी रानी श्रीमती था। यह सुप्रतिष्ठ पुत्र को राज्य सौंपकर सुमन्दर यति से दीक्षित हुआ और अन्त मे मुक्त हुआ। मपु० ७० ५१-५३, हपु० ३४ ४३-४४, ४५ ११-१२

(४) किष्किन्ध नगर के राजा सुग्रीव का मत्री। इसने कृत्रिम सुग्रीव के साथ युद्ध करने को तत्पर देखकर सुग्रीव को रोक दिया था। पपु० ४७.५७

(५) मेरु पर्वत की पश्चिम दिशा में स्थित क्षेमपुरी नगरी के राजा विपुलवाहन और रानी पद्मावती का राजपुत्र। इसने समाधिगुप्त मुनिराज से धर्मोपदेश सुनकर धृतिकान्त पुत्र को राज्य सौंपकर मुनि दीक्षा ले ली थी। अन्त में समाधिमरण करके यह ब्रह्म स्वर्ग का इन्द्र हुआ। इस स्वर्ग से चयकर यह दशरथ का पद्म (राम) नामक ज्येष्ठ पुत्र हुआ। पपु० १०६ ७५-७६, १०९-११९, १७२-१७३

श्रीचन्द्रा—(१) मेरु की वायव्य दिशा में विद्यमान दूसरी वापी। हपु० ५ ३४४

(२) वानरवंशी राजा विद्युत्केश की रानी। पपु० ६ २३६-२३८

(३) सुजन देश में नगरशोभनगर के राजा दृढमित्र के भाई सुमित्र और उसकी वसुन्धरा रानी की पुत्री। वनगिरि नगर के राजकुमार वनराज ने इसका अपहरण कराया था। इसके किन्नरमित्र और यक्षमित्र ने वनराज से युद्ध भी किया था किन्तु वे पराजित हो गये थे। अन्त में जीवन्धर ने उसे हराया और इसका विवाह नदाढ्यकुमार के साथ कराया था। मपु० ७५ ४३८-४३९, ५२१

श्रीतिलक—भरतक्षेत्र की काकन्दी नगरी के एक साधु। शामली नगर के वसुदेव और सुदेव ने इन्हे उत्तम भावो से आहार दिया था जिसके फलस्वरूप वे अपनी-अपनी स्त्री सहित भोगभूमि में उत्पन्न हुए थे। पपु० १०८ ३९-४२

श्रीदत्त—(१) भगवान् महावीर की मूल परम्परा में लोहाचार्य के पश्चात् हुए चार आचार्यों में दूसरे आचार्य। विनयदत्त इनके पूर्व तथा शिवदत्त और अर्हद्दत्त बाद में हुए थे। ये चार अंग-पूर्वों के एक देश ज्ञाता थे। वीवच० १ ५०-५२

(२) समन्तभद्र के एक उत्तरवर्ती आचार्य। मपु० १ ४४-४५

(३) मृणालवती नगरी का एक सेठ। इसकी सेठानी विमलश्री और पुत्री रतिवेगा थी। मपु० ४६ १०५, पापु० ३ १८९-१९०

(४) विद्याधर श्रीविजय का पुत्र। श्रीविजय इसे राज्य सौंपकर दीक्षित हो गया था। मपु० ६२ ४०८, पापु० ४.२४३-२४५

(५) भरतक्षेत्र के मलय देश में रत्नपुर नगर के वैश्रवण सेठ का पुत्र। इसकी माँ का नाम गौतमी था। मपु० ६७ ९०-९९

(६) जम्बूद्वीप—भरतक्षेत्र की कौशाम्बी नगरी के राजा सिद्धार्थ का पुत्र। सिद्धार्थ ने इसे राज्य देकर संयम धारण किया था। मपु० ६९ २-४, ११-१४

श्रीदत्ता—(१) भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के पुरोहित सत्यवादी श्रीभूति की पत्नी। श्रीभूति धरोहर के रूप में रखे गये सुमित्रदत्त के रत्नो को नही देना चाहता था। रामदत्ता रानी ने जुए में श्रीभूति की अँगूठी जीत कर अँगूठी इसके पास भेजते हुए सुमित्रदत्त के रत्न इससे मँगवा लिये थे। इससे रानी के द्वारा श्रीभूति को बहुत कष्ट उठाना पड़ा। हपु० २७ २०-४३ दे० रामदत्ता

(२) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र सबधी विजयार्ध के राजा श्रीधर्म की रानी। विभीषण के जीव श्रीराम की यह जननी थी। हपु० २७ ११५-११६

(३) महापुर नगर के राजा छत्रच्छाय की रानी। यह वृषभध्वज की जननी थी। पपु० १०६ ३९,४८ दे० वृषभध्वज

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सबधी शख नगर के निवासी देविल वैश्य और उसकी बन्धुश्री स्त्री की पुत्री। इसने मुनि सर्वयश से अहिंसाव्रत लेते हुए धर्मचक्र-व्रत किया था। आर्यिका सुव्रता के वमन को देखकर घृणा करने के फलस्वरूप कनकश्री की पर्याय में इसका पिता मारा गया और इसका अपहरण हुआ। मपु० ६२ ४९४-४९५

(५) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र सबधी गान्धार देश में विन्ध्यपुर के धनमित्र वणिक् की स्त्री। यह सुदत्त की जननी थी। मपु० ६३ १००-१०१

(६) जम्बूद्वीप मे राजपुर नगर के श्रेष्ठी धनपाल की पत्नी। वरदत्त की यह जननी थी। मपु० ७५ २५६-२५९

श्रीदाम—राजा श्रीधर्म और रानी श्रीदत्ता का पुत्र। हपु० २७ ११६ दे० श्रीदत्ता—२

श्रीदामा—(१) राम की चौथी महादेवी। पपु० ९४ २०-२५

(२) नागनगर के राजा कुलकर की रानी। पपु० ८५.६०-६२ दे० कुलकर

श्रीदेव—एक प्रभावशाली राजा। यह रोहिणी के स्वयवर में आया था। हपु ३१ ३१

श्रीदेवी—(१) अयोध्या के राजा धरणीधर की रानी। यह त्रिदशजय की जननी थी। पपु० ५ ५९-६०

(२) नित्यालोक नगर के राजा नित्यालोक की रानी। रत्नावली की यह जननी और दशग्रीव की सास थी। पपु० ९ १०२-१०३

(३) राजा सूर्य की रानी। तीर्थंकर कुन्थुनाथ की ये जननी थी। पपु० २० ५३

श्रीधर—(१)विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का दसवाँ नगर। मपु० १९ ४०, ५३

(२) भरतक्षेत्र सबधी जयन्त नगर का राजा। श्रीमती इसकी रानी तथा विमलश्री पुत्री थी। मपु० ७१.४५२-४५३, हपु० ६० ११७

(३) एक मुनि। ये मगध देश में राजगृह नगर के राजा विश्वभूति के दीक्षागुरु थे। मपु० ७४.८६, ९१, वीवच० ३ १५-१७

(४) राजा सोमप्रभ के पुत्र जयकुमार का पक्षधर एक राजा। मपु० ४४ १०६-१०७, पापु० ३ ५६, ९४-९५

(५) तीर्थंकर ऋषभदेव के पूर्वभव का जीव-ऐशान स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान का ऋद्धिधारी देव। मपु० ९ १८२, १८५, हपु० ९ ५९, २७ ६८

(६) श्रीधर और धर्म दो चारण मुनियो में प्रथम मुनि। इन्होने गन्धमादन पर्वत पर पर्वतक भील को व्रत धारण कराया था। हपु० ६० १०, १६-१८

(७) कृष्ण की पटरानी सत्यभामा के पूर्वभव के जीव हरिवाहन विद्याधर के पिता, अलका नगरी के राजा महाबल के दीक्षा गुरु एक चारण मुनि। हपु० ६० १७-१९

(८) एक मुनि। गान्धारी नगरी के राजा रुद्रदत्त की रानी विनयश्री इन्हें आहार देकर उत्तर कुरुक्षेत्र में आर्या हुई थी। हपु० ६० ८६-८८

(९) पुष्करद्वीप में मगलावती देश के रत्नसचय नगर का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—मनोहरा और मनोरमा। इन रानियो से क्रमश इसके दो पुत्र हुए थे—बलभद्र श्रीवर्मा और नारायण विभीषण। इन्होने श्रीवर्मा को राज्य देकर सुधर्माचार्य से दीक्षा ले ली थी तथा सिद्ध पद पाया था। मपु० ७ १४-१६

(१०) सुरम्य देश के श्रीपुर नगर का राजा। श्रीमती इसकी रानी और जयवती पुत्री थी। मपु० ४७ १४

(११) प्रथम स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान का देव। यह पुष्करद्वीप के सुगन्धि देश में श्रीपुर नगर के राजा श्रीषेण के पुत्र श्रीवर्मा का जीव था। मपु० ५४ ८-१०, २५, ३६, ६८, ८२

(१२) एक मुनि। इनसे धर्मश्रवण कर पूर्वधातकीखण्ड के मगलावती देश मे रत्नसचय नगर के राजा कनकप्रभ ने सयम धारण किया था। मपु० ५४ १२९-१३०, १४३

(१३) भरतक्षेत्र के भोगवर्धन नगर का राजा। यह तारक का पिता था। मपु० ५८ ९१

(१४) सहस्रार स्वर्ग के रविप्रिय विमान का एक देव। मपु० ५९ २१९

(१५) किन्नरगीत नगर का राजा। विद्या इसकी रानी तथा रति पुत्री थी। पपु० ५ ३६६

(१६) सीता स्वयवर में सम्मिलित एक नृप। पपु० २८ २१५

(१७) लक्ष्मण और उसकी रानी विशल्या का पुत्र। पपु० ९४.२७-२८, ३०

श्रीधरसेन—महावीर-निर्वाण के पश्चात् हुए मुनियो में स्वामी दीपसेन मुनि के बाद हुए एक मुनि। हपु० ६६ २८

श्रीधरा—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में धरणीतिलक नगर के राजा अतिबल और रानी सुलक्षणा की पुत्री। यह अलका नगरी के राजा सुदर्शन के साथ विवाही गयी थी। इसने गुणवती आर्यिका से दीक्षा लेकर तप किया। तपश्चरण अवस्था में पूर्वभव के वैरी सत्यघोष के जीव अजगर ने इसे निगल लिया। अत मरकर यह कापिष्ठ स्वर्ग के रुचक विमान में उत्पन्न हुई। मपु० ५९ २२८-२३८, हपु० २७ ७७-७९

श्रीधर्म—(१) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्धगिरि का एक विद्याधर। इसकी श्रीदत्ता रानी थी। विभीषण नारायण का जीव नरक से निकलकर इसका श्रीदास नाम का पुत्र हुआ था। हपु० २७ ११५-११६

(२) एक चारण मुनि। कृष्ण की पटरानी सत्यभामा के पूर्वभव के जीव हरिवाहन ने इन्ही से दीक्षा ली थी तथा अन्त में सल्लेखना पूर्वक मरकर ऐशान स्वर्ग में उत्पन्न हुआ था। हपु० ६० १०, २०-२१

(३) तीर्थंकर सुव्रत (मुनिसुव्रत) के पूर्वभव का जीव। पपु० २० २२-२४

श्रीधर्मा—(१) उज्जयिनी नगरी का राजा। श्रीमती इसकी रानी थी। बलि, बृहस्पति, नमुचि और प्रह्लाद ये चार इस राजा के मन्त्री थे। इन मन्त्रियो ने श्रुतसागर मुनि से वाद-विवाद मे पराजित होकर उन्हें मारने का उद्यम किया था जिससे कुपित होकर इसने उन्हें देश से निकाल दिया था। हपु० २० ३-११

(२) ऐरावत क्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा श्रीवर्मा और रानी सुसीमा का पुत्र। यह मुनिके पास सयमी हो गया था। अन्त मे सयमपूर्वक मरकर यह ब्रह्मस्वर्ग में देव हुआ। मपु० ५९ २८२-२८४

श्रीध्वज—बलदेव के उन्मुण्ड, निषध आदि अनेक पुत्रो में एक पुत्र। इसने कृष्ण और जरासन्ध के बीच हुए युद्ध में कृष्ण की ओर से युद्ध किया था। हपु० ४८ ६६-६८, ५० १२४

श्रीनन्दन—प्रभापुर नगर का राजा। सप्तर्षि नाम से प्रसिद्ध सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलालस और जयमित्र इसके पुत्र थे। ये सभी धरणी नाम की रानी से उत्पन्न हुए थे। डमरमगल नामक एक मास के पौत्र को राज्य देकर इसने और इसके सभी पुत्रो ने प्रीतिंकर मुनि से दीक्षा ले ली थी। इसके पुत्र मुनि होकर सप्तर्षि हुए तथा इसने केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त किया। पपु० ९२ १-७

श्रीनाग—(१) जम्बूद्वीप के कच्छकावती देश का एक पर्वत। वीतशोक नगर के राजा वैश्रवण ने इसी पर्वत पर श्रीनागपति मुनि से धर्मश्रवण कर तप धारण किया था। मपु० ६६ २, १३-१४

(२) सीमन्त पर्वत पर विराजमान मुनि। ये हरिषेण चक्रवर्ती के दीक्षागुरु थे। मपु० ६७ ६१, ८५-८६

श्रीनागपति—एक मुनि। ये वीतशोक नगर के राजा वैश्रवण के दीक्षागुरु थे। मपु० ६६ २, १३-१४ दे० श्रीनाग

श्रीनिकेत—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का चालीसवाँ नगर। इसका दूसरा नाम श्रीनिकेतन था। मपु० १९ ८४, ८७, हपु० २२ ८९

श्रीनिचय—प्रभापुर नगर के राजा श्रीनन्दन और रानी धरणी का पुत्र। इसके छ भाई और थे। सातो भाई प्रीतिंकर मुनि से दीक्षित होकर सप्तर्षि नाम से विख्यात हुए। इन मुनियो के तप के प्रभाव मे चमरेन्द्र द्वारा मथुरा में फैलाई गई महामारी बीमारी नष्ट हो गयी थी। पपु० ९२ १-९ दे० श्रीनन्दन

श्रीनिलय—सौधर्म स्वर्ग का एक विमान। रानी सिंहनन्दिता का जीव इसी विमान मे विद्युत्प्रभा नाम की देवी हुई थी। मपु० ६२ ३७५

श्रीनिलया—एक वापी। यह मेरु पर्वत की पश्चिमोत्तर (वायव्य) दिशा में विद्यमान चार वापियो में चौथी वापी है। हपु० ५ ३४४

श्रीनिवास—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७४

श्रीपति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११२

श्रीपद्म—(१) एक मुनि। पुष्करद्वीप सम्बन्धी सुगन्धि देश में श्रीपुर

नगर के राजा श्रीषेण ने इनसे धर्मोपदेश सुनकर दीक्षा ली थी। मपु० ५४ ८-१०, ३६, ७३-७६

(२) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के सुप्रकारपुर के राजा शम्बर और रानी श्रीमती का पुत्र। यह कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा का भाई था। ध्रुवसेन इसका छोटा भाई था। मपु० ७१ ४०९-४१४

श्रीपर्वत—भरतक्षेत्र का एक पर्वत। चक्रवर्ती भरतेश ने दिग्विजय के समय इस पर विजय की थी। राम और रावण के बीच हुए युद्ध के समय यहाँ का राजा राम से जा मिला था। लंका को जीतकर अयोध्या में राम ने यहाँ का साम्राज्य हनुमान को दिया था। मपु० २९ ९०, पपु० ५५ २८, ८८ ३९

श्रीपाल—पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा गुणपाल का छोटा पुत्र। वसुपाल का यह छोटा भाई था। राजा ने शिशुकाल में ही वसुपाल को राजा और इसे युवराज बनाकर दीक्षा ले ली थी। अपने पिता गुणपाल के ज्ञान-कल्याणक में जाते समय इसे अशनिवेग विद्याधर ने घोड़े का रूप धारणकर और अपनी पीठ पर बैठाकर रत्नावर्त पर्वत पर छोड़ा था। इसने माता-पिता द्वारा स्वीकृत की गयी कन्या को छोड़कर अन्य कन्या को स्वीकार नहीं करने का व्रत ले रखा था। फलस्वरूप विवाह के प्रसंग आने पर यह सभी के प्रस्ताव अस्वीकार करता रहा। लाल कम्बल ओढ़ कर सोये हुए इसे विद्युद्वेगा के मकान से भेरुण्ड पक्षी मांस का पिण्ड समझकर सिद्धकूट चैत्यालय उठा ले गया था। वहाँ इसे हिलते हुए देखकर पक्षी इसे छोड़कर उड़ गया था। यहाँ से कोई विद्याधर इन्हें शिवकरपुर ले गया था। यहाँ आने से इसे सर्वव्याधिविनाशिनी विद्या प्राप्त हुई थी। इनके दर्शन से शिवकुमार राजकुमार का टेढ़ा मुँह ठीक हो गया था। अग्नि निस्तेज हो गयी थी। इसके यहाँ चक्र, छत्र, दण्ड, चूड़ामणि, चर्म, काकिणी रत्न प्रकट हुए। इसने रत्न पाकर चक्रवर्ती के भोगों को भोगा। नगर में पहुँचते ही इनका जयावती आदि चौरासी कन्याओं से विवाह हुआ था। जयावती रानी से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम गुणपाल था। पुत्र के उत्पन्न होते ही आयुधशाला में चक्ररत्न प्रकट हुआ था। अन्त में इसने रानी सुखावती के पुत्र नरपाल को राज्य देकर जयावती आदि रानियों और वसुपाल आदि राजाओं के साथ दीक्षा ले ली थी और तप कर मोक्ष पाया। मपु० ४६ २६८, २८९, २९८, ४७ ३-१७२, २४४-२४९, हपु० १२ २४

श्रीपुर—(१) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का बारहवाँ नगर। लंका की विजय करने के पश्चात् राम ने विराधित विद्याधर को इस नगर का राजा बनाया था। विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की उशीरवती नगरी के राजा हिरण्यवर्मा ने इसी नगर में श्रीपाल मुनि के पास जैनेश्वरी दीक्षा ली थी। मपु० ४६ १४५-१४६, २१६-२१७, पपु० ८८ ३९, हपु० २२ ९४, पापु० ३ २२६

(२) पुष्कर द्वीप में पूर्व मेरु के सुगन्धि देश का एक नगर। यहाँ के राजा का नाम श्रीषेण था। मपु० ५४ ८-१०, २५, ३६

(३) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा वसुन्धर था। मपु० ६९ ७४

श्रीप्रभ—(१) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का नौवाँ नगर। मपु० १९ ४०, ५३

(२) ऐशान स्वर्ग का एक विमान। वज्रजंघ का जीव इसी विमान में देव हुआ था। मपु० ९ १०९

(३) एक पर्वत। श्रीधर देव ने स्वर्ग से इस पर्वत पर आकर पूर्वभव के गुरु प्रीतिंकर की पूजा की थी। वज्रनाभि ने यहाँ संन्यास धारण किया था। मपु० १० १-३, ११ ९४

(४) एक मुनि। राजा श्रीवर्मा ने इन्हीं से दीक्षा ली थी। मपु० ५४ ८१

(५) सौधर्म स्वर्ग का एक विमान। राजा श्रीवर्मा का जीव इसी विमान में श्रीधर नाम का देव हुआ था। मपु० ५४ ७९-८२

(६) राजा श्रीषेण का जीव-सौधर्म स्वर्ग का एक देव। मपु० ६२.३६५

(७) पुष्करवर समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५ ६४०

(८) सहस्रार स्वर्ग का एक विमान। हपु० २७.६७-६८

श्रीप्रभा—(१) विजयार्ध पर्वत के तडिदंगद विद्याधर की स्त्री। उदित विद्याधर की यह जननी थी। पपु० ५ ३५३

(२) वानरवंशी राजा अमरप्रभ के पुत्र कपिकेतु की रानी। प्रतिबल इसका पुत्र था। पपु० ६ १९८-२००

(३) कालाग्नि विद्याधर की स्त्री। यह यम लोकपाल की जननी थी। पपु० ७.११४

(४) किष्किन्ध नगर के राजा सूर्यरज और रानी इन्दुमालिनी की पुत्री। यह बाली और सुग्रीव की छोटी बहिन तथा रावण की रानी थी। पपु० ९ १, १०-१२, १००

श्रीभूति—(१) आगामी छठा चक्रवर्ती। मपु० ७६ ४८३, हपु० ६० ५६४

(२) भरतक्षेत्र के शकट देश में सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन का पुरोहित। इसका दूसरा नाम सत्यघोष था। पद्मखण्ड नगर का सुमित्रदत्त वणिक् इसके यहाँ पाँच रत्न रखकर प्रवास में चला गया था, लौटकर रत्न माँगने पर इसने रत्न नहीं दिये। सुमित्रदत्त का रुदन सुनकर रामदत्ता ने जुए में इसे पराजित किया तथा बुद्धि कौशलपूर्वक इसके घर से सुमित्रदत्त के रत्न मँगवाकर उसे दिला दिये। राजा ने इसका समस्त धन छीनकर इसे मल्लों के मुक्कों से पिटवाया। अन्त में आर्तध्यान से मरकर यह राजा के भण्डार में अगन्धन नाम का सर्प हुआ। मपु० २७ २०-४२, ५९ १४६-१७७ दे० श्रीदत्ता–१

(३) महोदधि विद्याधर का दूत। महोदधि ने हनुमान के पास इसी से समाचार भिजवाये थे। पपु० ४८ २४९

(४) भरतक्षेत्र के मृणालकुण्ड नगर के राजा शम्भु का पुरोहित। सरस्वती इसकी स्त्री तथा वेदवती पुत्री थी। राजा शम्भु ने वेदवती

को पाने के लिए इसे मार डाला था। धर्म के प्रभाव से यह देव हुआ। पपु० १०६ १३३-१३५, १४१-१४५

श्रीमती—(१) राजा सर्वार्थ की रानी। यह सिद्धार्थ की जननी (भगवान् महावीर की दादी) थी। हपु० २.१३

(२) राजा श्रेयास के पूर्वभव का जीव। पूर्वभव मे यह राजा वज्रजघ की रानी थी। हपु० ९ १८३

(३) भरतक्षेत्र में जयन्तनगर के राजा श्रीधर की रानी। यह विमलश्री की जननी थी। मपु० ७१.४५३, हपु ६०.११७

(४) अरिष्टपुर नगर के राजा स्वर्णनाभ की रानी। कृष्ण की पटरानी पद्मावती की यह जननी थी। मपु० ७१.४५७, हपु० ६० १२१

(५) साकेत नगर के राजा अतिबल की रानी। यह हिरण्यवती की माता थी। हपु० २७ ६३

(६) विदर्भ देश में कुण्डिनपुर के राजा भीष्म की रानी। यह कृष्ण को पटरानी रुक्मिणी की जननी थी। मपु० ७१ ३४१, हपु० ६० ३९

(७) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के पुष्कलावती देश की वीतशोका नगरी के राजा अशोक की रानी। कृष्ण की पटरानी सुसीमा के पूर्वभव का जीव श्रीकान्ता की यह जननी थी। हपु० ६० ५६, ६८-६९

(८) कौशाम्बी नगरी के राजा महाबल की रानी। श्रीकान्ता इसकी पुत्री थी। मपु० ६२ ३५१, पापु० ४ २०७

(९) उज्जयिनी नगरी के राजा श्रीधर्मा की रानी। हपु० २० ३

(१०) गजपुर (हस्तिनापुर) के राजा श्रीचन्द्र की रानी। सुप्रतिष्ठ की यह जननी थी। मपु० ७० ५२, हपु० ३४ ४३

(११) कुरुवशी राजा सूर्य की रानी। तीर्थंकर कुन्थुनाथ की यह जननी थी। हपु० ४५ २०

(१२) एक आर्यिका। बन्धुयशा की पर्याय में कृष्ण की पटरानी जाम्बवती ने इन्ही से प्रोषधव्रत धारण किया था। हपु० ६० ४८-४९

(१३) विदेहक्षेत्र में पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त तथा रानी लक्ष्मीवती की पुत्री। यह बहुत सुन्दर थी। इसका विवाह राजा वज्रदन्त ने अपने भानजे वज्रजघ के साथ किया था। इसके अट्ठानवें पुत्र थे। आयु के अन्त में केश-सस्कार के लिए जलाई गयी धूप के धुएँ से पति के साथ ही इसका भी मरण हुआ। मपु० ६ ५८-६०, ९१, १०५, ७.१९२-१९५, २४९, ८४९, ९ २६-२७, ३३

(१४) सुरम्य देश में श्रीपुर नगर के राजा श्रीधर की रानी। यह जयावती की जननी थी। मपु० ४७ १४

(१५) सुप्रकारपुर के राजा शम्बर की रानी। कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा की यह जननी थी। मपु० ७१.४०९-४१०

(१६) राजा कुणिक की रानी। अन्य कुणिक के पिता श्रेणिक की यह जननी थी। मपु० ७४ ४१८, वीवच० १९ १३५

(१७) राजा सत्यधर के पुरोहित सागर की रानी। यह बुद्धिषेण की जननी थी। मपु० ७५ २५४-२५९

(१८) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा हरिबल की दूसरी रानी। हिरण्यवर्मा की यह जननी थी। मपु० ७६ २६२-२६४

(१९) राजा पारत की बहिन। यह राजा शतबिन्दु की रानी और जमदग्नि की जननी थी। मपु० ६५ ५९-६०

(२०) राजा जयकुमार की रानी। पापु० ३ १४

(२१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे मेघपुर नगर के राजा अतीन्द्र की रानी। श्रीकण्ठ इसका पुत्र तथा महामनोहर देवी पुत्री थी। पपु० ६ २-६

(२२) रावण की रानी। पपु० ७७ १३

(२३) एक आर्यिका। इनसे सत्ताईस हजार स्त्रियो ने आर्यिका दीक्षा ली थी। पपु० ११९ ४२

श्रीमत्कन्या—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२.३९६

श्रीमनोहरपुर—विद्याधरो का नगर। यहाँ का राजा रावण के पास उसकी सहायतार्थ आया था। पपु० ५५ ८६

श्रीमन्तपुर—विद्याधरो का एक नगर। यहाँ का राजा रावण के पास उसकी सहायतार्थ आया था। पपु० ५५ ८६

श्रीमन्यु—सप्तर्षियो मे एक मुनि। पपु० ९२ १-१४, दे० सप्तर्षि

श्रीमहिता—सुमेरु पर्वत की वायव्य दिशा में स्थित वापी। हपु० ५ ३४४

श्रीमान्—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १००

(२) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३३

श्रीमाला—(१) आदित्यपुर के राजा विद्याधर विद्यामन्दर और रानी वेगवती की पुत्री। इसने स्वयवर में किष्कन्धकुमार का वरण किया था। सूर्यरज और यक्षरज इसके दो पुत्र तथा सूर्यकमला पुत्री थी। पपु० ६ ३५७-३५८, ४२६, ५२३-५२४

(२) रावण की रानी। पपु० ७७ १४

श्रीमाली—राक्षसवश में हुए राजा माल्यवान् का पुत्र। इसका इन्द्र के पुत्र जयन्त के साथ युद्ध हुआ था, जिसमें यह मारा गया था। पपु० १२ २१२, २२१, २४०-२४२

श्रीरम्भा—राजा मेरुकान्त की रानी और मन्दरकुजनगर के राजा पुरन्दर की यह जननी थी। पपु० ६ ४०९

श्रीवत्स—पुण्यात्माओ का एक शारीरिक लक्षण। यह वक्ष स्थल पर होता है। मपु० ७३ १७, पपु० ३ १९१ हपु० ९.९

श्रीवर—पुष्करवर समुद्र का दूसरा रक्षक देव। हपु० ५ ६४०

श्रीवर्द्धन—(१) सजयन्त केवली के पूर्वभव का जीव। यह कुमुदावती नगरी का राजा था। वह्निशिख इसका पुरोहित था। पपु० ५ ३७-३९

(२) राजा इलावर्द्धन का पुत्र। यह श्रीवृक्ष का पिता था। पपु० २१.४९

श्रीवर्द्धित—अमोघशर ब्राह्मण और मित्रयशा ब्राह्मणी का पुत्र। व्याघ्रपुर नगर में इसने शिक्षा प्राप्त की थी। इसने राजा सुकान्त की पुत्री शीला का हरण करके शीला के भाई सिंहेन्दु को युद्ध में पराजित किया। राजा करग्रह को हराकर पोदनपुर का राज्य भी इसने प्राप्त कर लिया था। पपु० ८० १६८-१७६

श्रीवर्मा—(१) जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर विदेहक्षेत्र में विद्यमान गन्धिल देश के सिंहपुर नगर के राजा श्रीषेण का छोटा पुत्र। यह जयवर्मा का छोटा भाई था। पिता ने प्रेम वश राज्य इसे ही दिया था। पिता के ऐसा करने से जयवर्मा विरक्त होकर दीक्षित हो गया था। मपु० ५.२०३-२०८

(२) पुष्करद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में मगलावती देश के रत्नसचय-नगर के राजा श्रीधर और रानी मनोहरा का पुत्र। यह बलभद्र और इसका छोटा भाई विभीषण नारायण था। पिता ने राज्य इसे ही दिया था। इसकी माता मरकर ललिताग देव हुई थी। विभीषण के मरने से शोक सतप्त होने पर ललिताग देव ने इसे समझाया था, जिससे इसने युगन्धर मुनि से दीक्षा ले ली थी तथा तप किया था। आयु के अन्त में मरकर यह अच्युत स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७ १३-२४

(३) तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के पाँचवें पूर्वभव का जीव-पुष्करद्वीप के पूर्वमेरु से पश्चिम की ओर विद्यमान विदेहक्षेत्र के सुगन्धि देश में श्रीपुर नगर के राजा श्रीषेण और रानी श्रीकान्ता का पुत्र। यह उल्कापात देखकर भोगो से विरक्त हो गया था तथा इसने श्रीकान्त ज्येष्ठ पुत्र को राज्य देकर श्रीप्रभ मुनि से दीक्षा ले ली थी। अन्त में यह श्रीप्रभ पर्वत पर विधिपूर्वक सन्यासमरण करके प्रथम स्वर्ग के श्रीप्रभ विमान में श्रीधर देव हुआ। मपु० ५४-८-१०, २५, ३६, ३९, ६८, ८०-८२

(४) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र में अयोध्या नगरी का एक राजा। सुसीमा इसकी रानी थी। मपु० ५९.२८२-२८३

(५) अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी का राजा। इसी के बलि, आदि मन्त्रियो ने हस्तिनापुर के राजा पद्म को प्रसन्न कर उनसे छलपूर्वक सात दिन के लिए राज्य लेकर अकपन आचार्य के सघ पर उपसर्ग किये थे। पापु० ७ ३९-५६

श्रीवल्लभ—राजा कृष्णराज का पुत्र। यह शक सम्वत् सात सौ पाँच में राज्य करता था। हपु० ६६ ५२

श्रीवसु—कुरुवशी एक राजा। यह राजा सुवसु का पुत्र तथा वसुन्धर का पिता था। हपु० ४५.२६

श्रीवास—जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का बयालीसवाँ नगर। मपु० १९.८४, ८७

श्रीविजय—तीर्थंकर शान्तिनाथ के प्रथम गणधर चक्रायुध के दसवें पूर्वभव का जीव-प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ और रानी स्वयप्रभा का ज्येष्ठ पुत्र। विजयभद्र इसका भाई और ज्योति. प्रभा बहिन थी। स्वयंवर में इसकी बहिन ज्योतिःप्रभा ने इसके साले अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज को वरा था तथा अमिततेज की बहिन सुतारा ने इसका वरण किया था। अपने ऊपर किसी निमित्तज्ञानी से वज्रपात होने की भविष्यवाणी सुनकर यह सिंहासन पर एक यक्ष की प्रतिमा विराजमान कर जिनचैत्यालय मे शान्तिकर्म करने लगा था। सातवें दिन यक्ष की मूर्ति पर वज्रपात हुआ और इसका सकट टल गया। चमरचचपुर के राजा इन्द्राशनि के पुत्र अशनिघोष विद्याधर ने कृत्रिम हरिण के छल से इसे सुतारा के पास से हटाकर तथा अपना श्रीविजय का रूप बनाकर सुतारा का हरण किया था। अशनिघोष ने वैताली विद्या को सुतारा का रूप धारण कराकर सुतारा के स्थान में बैठा दिया था। कृत्रिम सुतारा से छलपूर्वक सर्प के द्वारा डसे जाने के समाचार ज्ञात कर इसने भी सुतारा के साथ जल जाने का उद्यम किया था, किन्तु विच्छेदिनी विद्या से किसी विद्याधर ने वैताली विद्या को पराजित कर कृत्रिम सुतारा का रहस्य प्रकट कर दिया था। अशनिघोष विद्याधर के इस प्रपच को अमिततेज के आश्रित राजा सम्भिन्न से ज्ञातकर इसने उससे युद्ध किया। अन्त में अशनिघोष युद्ध से भागकर विजय मुनि के समवसरण मे जा छिपा। पीछा करते हुए समवसरण में पहुँचने पर यह भी सभी वैर भूल गया। इसे यहाँ सुतारा मिल गयी थी। इसने नारायण पद पाने का निदान किया था। अन्त में श्रीदत्त पुत्र को राज्य देकर और समाधिमरण पूर्वक देह त्याग कर यह तेरहवें स्वर्ग के स्वस्तिक विमान में मणिचूल देव हुआ। मपु० ६२ १५३-२८५, ४०७, ४११, पापु० ४ ८६-१९१, २४१-२४५

श्रीविजयपुर—एक नगर। इसे लक्ष्मण ने जीता था। पपु० ९४ ८-९

श्रीवृक्ष—(१) तीर्थंकरो के वक्ष स्थल पर रहनेवाला श्रीवत्स-चिह्न। मपु० २३ ५९

(२) राजा श्रीवर्द्धन का पुत्र। यह सजयन्त का पिता था। पपु० २१ ४९-५०

(३) एक विद्याधर राजा। यह राम का भक्त था। पपु० ६१ १३

(४) कुण्डलगिरि के पश्चिम दिशावर्ती मणिकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६९३

(५) कुण्डलगिरि की पश्चिम दिशा का एक कूट। यह एक हजार योजन चौडा और पाँच सौ योजन ऊँचा है। इस कूट पर नीलक देव रहता है। हपु० ५ ७०१-७०२

श्रीवृक्षलक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

श्रीव्रत—कुरुवशी एक राजा। यह वृषध्वज का पुत्र और राजा व्रतधर्मा का पिता था। हपु० ४५ २९

श्रीश—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २११

श्रीशैल—(१) हनुमान का अपर नाम। यह नाम हनुमान के शैल पर्वत में जन्म लेने तथा विमान से गिरकर शिला को खण्ड-खण्ड करने से अजना और अजना के मामा द्वारा रखा गया था। पपु० १७ ४०२-४०३

(२) एक पर्वत। यहाँ श्रीशैल नामधारी हनुमान आकर ठहरे थे।

अतः यह पर्वत तब से इस नाम से विख्यात हुआ। पपु० १९.१०६

श्रीश्रितपादाब्ज—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.२११

श्रीषेण—(१) आगामी पाँचवें चक्रवर्ती। मपु० ७६.४८२, हपु० ६०.५६३

(२) जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र सम्बन्धी गन्धिल देश के सिंहपुर नगर का राजा। इसकी रानी सुन्दरी थी। इन दोनो के जयवर्मा और श्रीवर्मा दो पुत्र थे। इसने अपना राज्य छोटे पुत्र श्रीवर्मा को देकर ज्येष्ठ पुत्र जयवर्मा की उपेक्षा की थी जिससे विरक्त होकर वह दीक्षित हो गया था। मपु० ५.२०३-२०८

(३) पुष्करद्वीप के विदेहक्षेत्र सम्बन्धी सुगन्धि देश मे श्रीपुर नगर का राजा। इसकी रानी श्रीकान्ता थी। इस राजा ने श्रीवर्मा नामक पुत्र को राज्य देकर श्रीपद्म मुनि से दीक्षा ले ली थी। मपु० ५४.८-१०, ३६-३९, ७३-७६ दे० श्रीवर्मा-३

(४) साकेत नगर का राजा। श्रीकान्ता इसकी रानी थी। इन दोनो की दो पुत्रियाँ थी हरिषेण और श्रीषेण। मपु० ७२.२५३-२५४

(५) भरतक्षेत्र के अग देश की राजधानी चम्पा नगरी का राजा। इसकी रानी धनश्री और कनकलता पुत्री थी। मपु० ७५.८१-९३

(६) हरिविक्रम भीलराज के पुत्र वनराज का मित्र। इसने और इसके साथी लोहजघ ने हेमाभनगर की कन्या श्रीचन्द्रा का हरण करके और उसे सुरग से लाकर वनराज को समर्पित की थी। मपु० ७५.४७८-४९३

(७) रत्नपुर नगर का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—सिंहनन्दिता और अनिन्दिता। इन दोनो रानियो के इन्द्रसेन और उपेन्द्रसेन नाम के दो पुत्र थे। यह राजा अपने पुत्रो के बीच उत्पन्न हुए विरोध को शान्त न कर सकने से विष-पुष्प सूँघकर मरा था। इसकी दोनो रानियाँ भी विष-पुष्प सूँघकर निष्प्राण हो गयी थी। मपु० ६२.३४०-३७८, पापु० ४.२०३-२१२

(८) श्रीपुर नगर का राजा। इसने मेघरथ मुनि को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३.३३२-३३५

श्रीषेणा—(१) साकेत नगर के राजा श्रीषेण तथा रानी श्रीकान्ता की पुत्री। हरिषेणा इसकी बडी बहिन थी। पूर्वभव में की हुई प्रतिज्ञा का स्मरण हो जाने से इन दोनो बहिनो ने दीक्षा ले ली थी। मपु० ७२.२५३-२५६, हपु० ६४.१२९-१३१

(२) जम्बूद्वीप सम्बन्धी पूर्वविदेहक्षेत्र में रत्नसचयनगर के राजा सहस्रायुध की रानी। कनकशान्त इसका पुत्र था। मपु० ६३.३७, ४५-४६, पापु० ५.१४-१५

श्रीसजय—एक राजकुमार। यह सीता के स्वयवर में आया था। पपु० २८.२१५

श्रीहर्म्य—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का तेरहवाँ नगर। मपु० १९.७९, ८७

श्रुतकेवली—बारह अग और चौदह पूर्वरूप श्रुत में पारगत मुनि। ये प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनो ज्ञानो के धारी होते हैं। मपु० २.६०-६१

श्रुतज्ञान—अर्हन्त-भाषित अग और पूर्वगत श्रुत का ज्ञान। इससे स्वर्ग और मोक्ष के मूलभूत समीचीन धर्म का लक्षण जाना जाता है। इसके निम्न बीस भेद हैं—

१. पर्याय	२ पर्याय समास
३ अक्षर	४ अक्षर समास
५ पद	६ पद-समास
७ सघात	८ सघात-समास
९ प्रतिपत्ति	१० प्रतिपत्ति-समास
११ अनुयोग	१२ अनुयोग समास
१३ प्राभृत-प्राभृत	१४ प्राभृत-प्राभृत समास
१५ प्राभृत	१६ प्राभृत समास
१७ वास्तु	१८ वास्तु-समास
१९ पूर्व	२० पूर्व-समास

हपु० १०.११-१२

श्रुतज्ञानव्रत—कर्मनाशक एक तप। इसमे एक सौ अट्ठावन उपवास और इतनी ही पारणाएँ की जाती हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण व्रत में तीन सौ सोलह दिन लगते हैं। इसका मुख्यफल केवलज्ञान और गौणफल स्वर्ग आदि की प्राप्ति है। मपु० ६.१४२, १४५-१५०, हपु० ३४.९७

श्रुतज्ञानावरण—ज्ञानावरणकर्म का एक भेद। ज्ञान-मद के कारण जो पुरुष अध्ययन-अध्यापन नही करते हैं, यथार्थता को जानकर भी दूसरो के दुराचारो का उद्भावन करते हैं, हितैषी जिनागम का अध्ययन न कर कुशास्त्र पढते हैं, आगमनिन्दित और परपीडाकारी असत्य बोलते है। वे इस कर्म के उदय से ऐसा करते हैं। जिनागम के पढ़ने-पढाने, व्याख्यान करने, हितमित प्रिय वचन बोलने से इस कर्म का क्षयोपशम होता है। जीव इस कर्म के क्षयोपशम से ही विद्वान् और जगत् पूज्य होते हैं। वीवच० १७.१३३-१३८

श्रुतदेवता—तीनो लोको से वद्य श्रुतदेवी-जिनवाणी। विद्या पढने-पढाने का शुभारम्भ करने के पूर्व इस देवता का स्मरण किया जाता है। मपु० १६.१०३, पपु० ३.९५

श्रुतधर—(१) एक मुनि। इन्होने अपने तीन निर्ग्रन्थ शिष्यो को अष्टाग निमित्तज्ञान का अध्ययन कराया था। इनके इन्ही शिष्यों ने वसु राजा और पर्वत को नरकगामी तथा नारद को स्वर्ग में देव होना बताया था। मपु० ६७.२६२-२७१

(२) एक राजा। इसने भरत के साथ दीक्षा ले ली थी। पपु० ८८.१-२, ५

श्रुतपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। वनवास के समय पाण्डव इस नगर मे आये थे तथा उन्होने जिनमन्दिर में पूजा की थी। पापु० १४.७९

श्रुतवान्—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का उनतालीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९७

श्रुतशोणित—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर। विद्याधर बाण यहाँ रहता था। हपु० ५५ १६

श्रुतबुद्धि—नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का दूत। राजा की दासता स्वीकार करने या अयोध्या छोडकर समुद्र के उस पार चले जाने का सन्देश भरत के पास यही ले गया था। पपु० ३७ ३१-३६

श्रुतसागर—(१) अकम्पनाचार्य के सघस्थ एक मुनि। इन्होने उज्जयिनी नगरी के राजा श्रीधर्मा के बलि, बृहस्पति आदि मन्त्रियो से शास्त्रार्थ कर उन्हे पराजित किया था। मन्त्री बलि रात्रि में इन्हें मारने के लिए उद्यत हुआ था किन्तु किसी देव के द्वारा कील दिये जाने से वह इनका कुछ भी नही बिगाड सका था। हपु० २० ३-११, पापु० ७.३९-४८

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे रथनूपुर-चक्रवाल के राजा ज्वलनजटी विद्याधर का तीसरा मन्त्री। यह राजपुत्री स्वयप्रभा विद्याधर विद्युत्प्रभ को और विद्युत्प्रभ की बहिन ज्योतिर्माला राजकुमार अर्ककीर्ति को देने का प्रस्ताव लेकर राजा ज्वलनजटी के पास गया था। मपु० ६२ २५, ३०, ६९, ८०, पापु० ४ २८

(३) एक मुनि। इन्होंने भरतक्षेत्र में चित्रकारपुर के राजा प्रीतिभद्र के पुत्र प्रीतिंकर तथा मन्त्री के पुत्र विचित्रमति दोनो को मुनि दीक्षा दी थी। हपु० २७.९७-९९

(४) एक मुनि। जम्बूद्वीप के कौशल देश सम्बन्धी साकेत नगर के राजा वज्रसेन के पुत्र हरिषेण ने इन्ही मुनि से दीक्षा ली थी। मपु० ७४ २३१-२३३, वीवच० ५ १३-१४

(५) एक मुनिराज। इन्होंने भगीरथ को उसके बाबा सगर के पुत्रो के एक साथ मरने का कारण बताया था। पपु० ५ २८४-२९३

(६) लका के राजा महारक्ष विद्याधर के प्रमदोद्यान में आये एक मुनि। इन्ही मुनि से धर्मोपदेश एव अपने भवान्तर सुनकर महारक्ष ने तपस्या की थी। पपु० ५ २९६, ३००, ३१५, ३६०-३६५

श्रुतस्कन्ध—जिनभाषित और गणधर द्वारा रचित द्वादशाग श्रुत। यह अनादिनिधन अभ्युदय एव मोक्ष रूप उच्च फल देने वाला है। इसके चार महाधिकार कहे हैं। उनमें प्रथम महाधिकार प्रथमानुयोग में तीर्थंकर आदि सत्पुरुषो के चरित का वर्णन है। दूसरे करणानुयोग में तीनो लोको का वर्णन है। तीसरे चरणानुयोग मे मुनि और श्रावको के चारित्र की शुद्धि का निरूपण है और चौथे महाधिकार द्रव्यानुयोग मे प्रमाण, नय, निक्षेप आदि से द्रव्य का निर्णय बताया गया है। मपु० १ १८, २ ९८-१०१, ३४ १३३, हपु० २ १११

श्रुतात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१६४

श्रुतायुध—राजा धृतराष्ट्र और रानी गाधारी का पैतालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

श्रुतार्थ—भरतक्षेत्र के काशी देश की वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन के चार मन्त्रियो में प्रथम मन्त्री। इसने राजकुमारी सुलोचना का विवाह चक्रवर्ती भरतेश के पुत्र अर्ककीर्ति के साथ कर देने का राजा अकम्पन को परामर्श दिया था। मपु० ४३ १२१-१२७, १८१-१८७

श्रुति—एक वेण स्वर। हपु० १९ १४७

श्रुतिकीर्ति—(१) बुद्धिमान् पुरुष। इसने वृषभदेव से श्रावक के व्रत लिए थे। मपु० २४.१७८

(२) पाँचवें बलभद्र सुदर्शन के गुरु। पपु० २० २४६-२४७

श्रुतिरत—नाग नगर के निवासी विश्वाक ब्राह्मण और अग्निकुण्डा ब्राह्मणी का विद्वान पुत्र। इस नगर के राजा कुलकर ने इसे अपना पुरोहित बनाया था। राजा मुनि पद धारण कर रहा था। उस समय इसने वैदिक धर्म का आचरण करने के लिए प्रेरित किया और राजा ने इसकी प्रार्थना स्वीकार भी कर ली थी। राजा की रानी श्रीदामा ने सशकित होकर राजा सहित इसे मार डाला था। दोनो मरकर खरगोश हुए। पपु० ८५ ४९-६३

श्रेणिक—(१) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र के मगध देश में राजगृहनगर का राजा। इसके पिता का नाम कुणिक तथा माता का नाम श्रीमती था। इसके उत्तराधिकार के विषय से भागीदारो से होनेवाले सकट की आशका से नगर से निष्कासन के बहाने इसे इसके पिता ने कृत्रिम क्रोध प्रकट करके नन्दिग्राम भेज दिया था। इस ग्राम मे इसका एक ब्राह्मण की कन्या से विवाह हुआ था। अभयकुमार इसी ब्राह्मणी का पुत्र था। राजा कुणिक ने कुछ समय के पश्चात् इसे राज्य दे दिया था। राज्य प्राप्ति के पश्चात् इसका राजा चेटक की पुत्री चेलिनी के साथ विवाह हुआ था। इसके पुत्र का नाम भी कुणिक ही था। बहुत आरम्भ और परिग्रह के कारण इसने सातवें नरक की उत्कृष्ट आयु का बन्ध किया था। यह राजगृही के विपुलाचल पर्वत पर आये महावीर के समवसरण मे सपरिवार गया था। वहाँ इसने और इसके अक्रूर, वारिषेण, अभयकुमार आदि पुत्रो तथा उनकी रानियो ने सम्यक्त्व प्राप्त किया। इसके प्रभाव से इसका सातवें नरक का आयुबन्ध प्रथम नरक सबधी चौरासी हजार वर्ष की स्थिति में बदल गया था। इसे तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध भी हुआ था। वीर के समवसरण मे गौतम गणधर से इसे चारो अनुयोगो का ज्ञान हुआ। पहले किये हुए बन्ध के अनुसार यह मरकर प्रथम नरक गया और वहाँ से निकलकर यह उत्सर्पिणी काल मे भरतक्षेत्र का महापद्म नामक प्रथम तीर्थङ्कर होगा। दूसरे पूर्वभव में यह खदिरसार नामक भील था। इस पर्याय से मुक्त होकर यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ था। मपु० ७४ ३८६-४५३, ७५ २०-२५, ३४, ७६.४१, पपु० २.७१, हपु० २ ७१, १३६-१४०, १४८, पापु० १ १०१-१०३, २ ११, ८७, ९६, वीवच० १९ १५४-१५७

(२) अयोध्या नगरी के राजा रत्नवीर्य का सेनापति। अयोध्या का चोर रुद्रदत्त चोरी के अपराध में पकडे जाने पर इसी सेनापति के द्वारा मारा गया था। हपु० १८,९९-१०१

(३) अनागत प्रथम तीर्थङ्कर का जीव। मपु० ७६ ४७१

श्रेणीचारण—एक ऋद्धि। इस ऋद्धि के प्रभाव से विद्याधर आकाश में श्रेणीबद्ध होकर निराबाध गमन किया करते है। मपु० २ ७३

श्रेणीबद्धविमान—अच्युत स्वर्ग के विमान। इनका उपयोग इन्द्र करते है। अच्युत स्वर्ग में ऐसे पैतालीस विमान होते है। मपु० १० १८७

श्रेयस्कर—तीर्थङ्कर श्रेयासनाथ का पुत्र। मपु० ५७ ४६

श्रेयस्पुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। वहाँ का राजा शिवसेन था। मपु० ४७.१४२

श्रेयान्—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०९

(२) पुरुषोत्तम नारायण के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २०. २१६

(३) अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव ग्यारहवें तीर्थङ्कर। इनका अपर नाम श्रेयस् था। पपु० ५ २१४, हपु० १ १३, वीवच० १८ १०१-१०६ दे० श्रेयासनाथ

(४) कुरुजागल देश में हस्तिनापुर नगर के कुरुवशी राजा सोमप्रभ के भाई। वृषभदेव को देखकर इन्हें पूर्वभव में अपने द्वारा दिये गये आहार दान का स्मरण हो आया था। इससे ये विधिपूर्वक वृषभदेव के लिए इक्षु रस का आहार दे सके थे। आहारदान देने की प्रवृत्ति का शुभारम्भ इन्ही ने किया था। अन्त में ये दीक्षा लेकर वृषभदेव के गणधर हुए। दसवें पूर्वभव मे ये धनश्री, नौवें में निर्नामिका, आठवें में स्वयप्रभा देवी, सातवें में श्रीमती, छठे में भोगभूमि की आर्या, पाँचवें मे स्वयप्रभ देव, चौथे में केशव, तीसरे में अच्युत स्वर्ग के इन्द्र, दूसरे में धनदत्त, प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ६ ६०, ८ ३३, १८५-१८८, ९ १८६, १० १७१-१७२, १८६, ११ १४, २० ३०-३१, ७८-८१, ८८, १२८, २४ १७४, ४३.५२, ४७ ३६०-३६२, हपु० ९ १५८, ४५ ६-७

श्रेयांसनाथ—अवसर्पिणी काल के ग्यारहवें तीर्थङ्कर। ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे सिंहपुर नगर के इक्ष्वाकुवशी राजा विष्णु और रानी नन्दा के पुत्र थे। ये ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी श्रवण नक्षत्र में प्रात काल के समय रानी नन्दा के गर्भ में आये तथा फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन विष्णुयोग में इनका जन्म हुआ। जन्म के समय रोगी निरोग हो गये थे। चारो निकाय के देवो ने आकर इनका जन्माभिषेक किया था। सौधर्मेन्द्र ने जन्माभिषेक के पश्चात् आभूषण आदि पहनाकर इनका श्रेयास नाम रखा था। इनका जन्म शीतलनाथ के मोक्ष जाने के बाद सौ सागर, छियासठ लाख और छब्बीस हजार वर्ष कम एक करोड सागर प्रमाण अन्तराल बीत जाने पर हुआ था। इनकी कुल आयु चौरासी लाख वर्ष की थी। शरीर सोने की कान्ति के समान था। ऊँचाई अस्सी धनुष थी। कुमारावस्था के इक्कीस लाख वर्ष बीत जाने पर इन्हें राज्य मिला था। इन्होंने बयालीस वर्ष तक राज्य किया। इसके पश्चात् वसन्त के परिवर्तन को देखकर इन्हें वैराग्य जागा। लौकान्तिक देवो ने आकर इनकी स्तुति की। इन्होने राज्य श्रेयस्कर पुत्र को दिया तथा विमलप्रभा पालकी में बैठकर ये मनोहर नामक वन में गये। वहाँ इन्होने दो दिन के आहार का त्याग करके फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन प्रात वेला और श्रवण नक्षत्र में एक हजार राजाओ के साथ सयम धारण किया। इसी समय इन्हें मन पर्ययज्ञान हुआ। इन्हें सिद्धार्थ नगर में राजा नन्द ने आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। छद्मस्थ अवस्था के दो वर्ष बाद ही मनोहर उद्यान में तुम्बुर वृक्ष के नीचे माघ कृष्ण अमावस्या के दिन श्रवण नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान हुआ। इनके सघ में कुन्थु आदि सतहत्तर गणधर, तेरह सौ पूर्वधारी, अडतालीस हजार दो सौ शिक्षक, छह हजार अवधिज्ञानी, छ हजार पाँच सौ केवलज्ञानी, ग्यारह हजार विक्रियाऋद्धिधारी, छ हजार मन पर्ययज्ञानी और पाँच हजार वादी मुनि तथा एक लाख बीस हजार धारणा आदि आर्यिकाएँ थी। सम्मेदशिखर पर इन्होंने एक हजार मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण किया था। श्रावण शुक्ल पौर्णमासी के दिन सायकाल के समय घनिष्ठा नक्षत्र में शेष कर्मो का क्षय करके ये—"अ इ उ ऋ लृ इन पाँच लघु अक्षरो के उच्चारण में जितना समय लगता है उतने समय मे मुक्त हुए। ये दूसरे पूर्वभव में पुष्करार्ध द्वीप में सुकच्छ देश के क्षेमपुर नामक नगर के नलिनप्रभ नामक राजा थे। इस पर्याय में तीर्थङ्कर-प्रकृति का बन्ध करके आयु के अन्त में समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुए और वहाँ से चयकर इस पर्याय में जन्मे थे। मपु० ५७ २-६२, पपु० २०. ४७-६८ ११४, १२०, हपु० ६० १५६-१९२, ३४१-३४९

श्रेयोनिधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

श्रेष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

श्रेष्ठी—आगामी उत्सर्पिणी काल के सातवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७२

श्रोता—धर्म को सुननेवाले पुरुष। ये चौदह प्रकार के होते हैं। इनके ये भेद जिन पदार्थों के गुण-दोषो से तुलना करके बताये गये हैं उनके नाम हैं-मिट्टी, चलनी, बकरा, बिलाव, तोता, बगुला, पाषाण, सर्प, गाय, हस, भैंसा, फूटा घडा, डाँस और जोक। इनमें जो गाय और हस के समान होते है उन्हें उत्तम श्रोता कहा गया है। मिट्टी और तोते के समानवृत्ति के मध्यम श्रोता और शेष अधम श्रेणी के माने गये हैं। गुण और दोषो के बतलानेवाले श्रोता सत्कथा के परीक्षक होते हैं। शास्त्रश्रवण से सासारिक सुख की कामना नहीं की जाती। श्रोता के आठ गुण होते हैं। वे हैं-शुश्रूषा, श्रवण, ग्रहण, धारण स्मृति, ऊह, अपोह और निर्णीती। शास्त्र सुनने के बदले किसी सासारिक फल की चाह नही करना श्रोता का परम कर्त्तव्य है। मपु० १.३८-१४७

श्लक्ष्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

श्लक्ष्णरोम—सिंहलद्वीप का राजा। इसकी रानी कुरुमती तथा लक्ष्मणा पुत्री थी। हपु० ४४ २०-२४, ६० ८५

श्लेष्मान्तक—एक वन। यहाँ तापस वेष में पाण्डव आये थे। हपु० ४५ ६९

श्वपाकी—मातग जाति के विद्याधरो का एक निकाय। ये विद्याधर पीत केशधारी, तप्तस्वर्णाभूषणो से युक्त होकर श्वपाकी विद्या-स्तम्भो का आश्रय लेकर बैठते हैं। हपु० २६ १९

श्वभ्र-भू—नरक-भूमियाँ। ये सात हैं। मपु० १०.३१-३२ दे० नरक

श्वसना—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश की दिग्विजय के समय उनका सेनापति यहाँ ससैन्य आया था। मपु० २९ ८३

श्वापद—विदेहक्षेत्र की एक अटवी। पुण्डरीक देश के चक्रवर्ती त्रिभुवनानन्द के सामन्त पुनर्वसु के द्वारा अपहृता त्रिभुवनानन्द की पुत्री अनगसरा पर्णलघ्वी विद्या के सहारे इसी अटवी में आयी थी। पपु० ६४ ५०-५५

श्वेतकर्ण—एक जगली हाथी। पूर्वभव के वैरवश यह ताम्रकर्ण हाथी से लडकर मरा और भैंसा हुआ था। मपु० ६३ १५८-१६०

श्वेतकेतु—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सातवाँ नगर। मपु० १९ ३८, ५३

श्वेतकुमार—राजा विराट का पुत्र। युद्ध में यह भीष्म-पितामह द्वारा मारा गया। पापु० १९ १८५-१८६, १९५

श्वेतराम—जमदग्नि और रेणुकी का छोटा पुत्र। यह इन्द्र राम का छोटा भाई था। पिता के मारे जाने पर इन दोनो भाइयो ने कृतवीर से युद्ध करके सहस्रबाहु को मार डाला था। इसने इक्कीस बार क्षत्रियो का वध किया था। मपु० ६५ ९०-९२, १११-११३, १२७

श्वेतवन—तीर्थंकर मल्लिनाथ की दीक्षाभूमि। मपु० ६६ ४७

श्वेतवाहन—(१) भरतक्षेत्र में कुरुजागल देश के हस्तिनापुर का एक सेठ। इसकी पत्नी बन्धुमती और पुत्र शख था। मपु० ७१.२६०-२६१

(२) भरतक्षेत्र के अग देश की चम्पा नगरी का राजा। इसने भगवान् महावीर से धर्म का स्वरूप सुनकर और पुत्र विमलवाहन को राज्य देकर सयम धारण कर लिया था। इसकी दशलक्षण-धर्म में रुचि होने से यह धर्मरुचि नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ७६ ८-२९

श्वेतिका—भरतक्षेत्र की नगरी। यहाँ का राजा वासव था। इसका अपर नाम श्वेताम्बिका था। मपु० ७१ २८३, हपु० ३३ १६१, वीवच० २ ११७-११८

ष

षटकर्म—वृषभदेव द्वारा प्रजा की आजीविका के लिए बताये गये छ कार्य। वे हैं—असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प कर्म। मपु० १६ १७९-१८०, १९१, हपु० ९ ३५, पापु० २ १५४

षटकाय—त्रस तथा पृथिवी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पतिकाय के जीव। मपु० ३४ १९४, पपु० १०५ १४१

षडगबल—छ अगोवाली एक विद्या। ये अग हैं—हस्तिसेना, अश्वसेना, रथसेना, पदातिसेना, देवसेना और विद्याधरसेना। यह बल चक्रवर्ती राजाओ का होता है। मपु० २९ ६

षडगिका—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३८६, ३९६

[illegible]—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य। ये मानव के विकास [illegible]धक होते है। मपु० १० १४१

[illegible] मुनियो के छ आवश्यक कर्त्तव्य। उनके नाम हैं—सामायिक, वन्दना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग। मपु० ६१ ११९, हपु० २ १२८, ३४ १४२-१४६

षड्ज—सगीत के सप्त स्वरो में एक स्वर। पपु० १७ २७७, हपु० १९ १५३ दे० स्वर

षड्जकैकशी—सगीत की आठ जातियो मे सातवी जाति। इसका अपर नाम षड्जकैशिकी है। पपु० २४ १२, हपु० १९ १७४

षड्जमध्यमा—सगीत की षड्जग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली आठ जातियो में आठवी जाति। इसका अपर नाम षड्जमध्या है। पपु० २४ १५, हपु० १९ १७५

षड्जषड्जा—सगीत के स्वर की एक जाति। पपु० २४ १२

षष्ठोपवास—वेलाव्रत। दो दिन का उपवास षष्ठोपवास कहलाता है। मपु० ४८ ३९, पपु० ५ ७०, हपु० २ ५८, १६ ५६

षाड्गुण्य—राजा के छ गुणो का समूह। ये गुण हैं—सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और आश्रय। मपु० २८ २८, ४१ १३८-१३९

षाडव—चौदह मूर्च्छनाओ का एक स्वर। इसकी उत्पत्ति छ स्वरो से होती है। हपु० १९ १६९

षाड्जी—षडजग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली स्वर की आठ जातियो मे प्रथम जाति। हपु० १९ १७४

षाष्ठिक—साठी नाम का अनाज। यह तीर्थंकर वृषभदेव के समय में उत्पन्न होने लगा था। मपु० ३ १८६

षोडशकारण—तीर्थंकर प्रकृति की बन्ध-हेतु सोलह भावनाएँ। मपु ७. ८८, ११ ६८-७८, पपु० २ १९२, हपु० ३९ १ दे० भावना

स

संकट—राम का सहायक वानरवशी एक कुमार। यह विद्या-साधना में रत रावण को कुपित करने लका गया था। पपु० ७० १५, १८

संकट-प्राहर—राम का सामन्त। इसने सिहवाही रथ पर सवार होकर रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ ११

संक्रम—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के चौथे प्राभृत कर्मप्रकृति का बारहवाँ योगद्वार। हपु० १० ७७, ८१-८३, दे० आग्रायणीयपूर्व

संक्रान्तकर्म—पुस्तकर्म के क्षय, उपचय और सक्रम (सक्रान्त) इन तीन भेदो में तीसरा भेद। साँचे आदि की सहायता से खिलौने आदि बनाना सक्रान्तकर्म कहलाता है। पपु० २४ ३८-३९

सक्रोध—राम का पक्षधर एक वानर योद्धा। इसने युद्ध मे राक्षस पक्ष के योद्धा क्षपितारि को मारा था। पपु० ६० १३, १६, १८

संक्षेपजसम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेद। पदार्थों के सक्षिप्त कथन के तत्त्वो में श्रद्धा उत्पन्न हो जाना सक्षेपजसम्यग्दर्शन है। मपु ७४. ४३९-४४०, ४४५, वीवच० १९ १४८

सत्य—एक मुनि। वसुदेव के सुदूर पूर्वभव के जीव शालिग्राम के एक दरिद्र ब्राह्मण ने अपने मामा की पुत्रियो द्वारा घर से निकाल दिये जाने पर इन्ही मुनि से धर्म और अधर्म का फल सुनकर दीक्षा ली थी। मपु० १८ १२७-१३३

श्रेयस्कर—तीर्थङ्कर श्रेयासनाथ का पुत्र। मपु० ५७ ४६

श्रेयस्पुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। वहाँ का राजा शिवसेन था। मपु० ४७.१४२

श्रेयान्—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०९

(२) पुरुषोत्तम नारायण के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २० २१६

(३) अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव ग्यारहवें तीर्थङ्कर। इनका अपर नाम श्रेयस् था। पपु० ५ २१४, हपु० १ १३, वीवच० १८ १०१-१०६ दे० श्रेयासनाथ

(४) कुरुजागल देश में हस्तिनापुर नगर के कुरुवशी राजा सोमप्रभ के भाई। वृषभदेव को देखकर इन्हें पूर्वभव में अपने द्वारा दिये गये आहार दान का स्मरण हो आया था। इससे ये विधिपूर्वक वृषभदेव के लिए इक्षु रस का आहार दे सके थे। आहारदान देने की प्रवृत्ति का शुभारम्भ इन्ही ने किया था। अन्त मे ये दीक्षा लेकर वृषभदेव के गणधर हुए। दसवें पूर्वभव मे ये धनश्री, नौवें में निर्नामिका, आठवें में स्वयप्रभा देवी, सातवें में श्रीमती, छठे में भोगभूमि की आर्या, पाँचवें में स्वयप्रभ देव, चौथे में केशव, तीसरे में अच्युत स्वर्ग के इन्द्र, दूसरे में धनदत्त, प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ६ ६०, ८ ३३, १८५-१८८, ९ १८६, १० १७१-१७२, १८६, ११ १४, २० ३०-३१, ७८-८१, ८८, १२८, २४ १७४, ४३.५२, ४७ ३६०-३६२, हपु० ९ १५८, ४५ ६-७

श्रेयासनाथ—अवसर्पिणी काल के ग्यारहवें तीर्थङ्कर। ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के इक्ष्वाकुवशी राजा विष्णु और रानी नन्दा के पुत्र थे। ये ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी श्रवण नक्षत्र में प्रात काल के समय रानी नन्दा के गर्भ में आये तथा फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन विष्णुयोग में इनका जन्म हुआ। जन्म के समय रोगी निरोग हो गये थे। चारो निकाय के देवो ने आकर इनका जन्माभिषेक किया था। सौधर्मेन्द्र ने जन्माभिषेक के पश्चात् आभूषण आदि पहनाकर इनका श्रेयास नाम रखा था। इनका जन्म शीतलनाथ के मोक्ष जाने के बाद सौ सागर, छियासठ लाख और छब्बीस हजार वर्ष कम एक करोड सागर प्रमाण अन्तराल बीत जाने पर हुआ था। इनकी कुल आयु चौरासी लाख वर्ष की थी। शरीर सोने की कान्ति के समान था। ऊँचाई अस्सी धनुष थी। कुमारावस्था के इक्कीस लाख वर्ष बीत जाने पर इन्हें राज्य मिला था। इन्होने बयालीस वर्ष तक राज्य किया। इसके पश्चात् वसन्त के परिवर्तन को देखकर इन्हें वैराग्य जागा। लौकान्तिक देवो ने आकर इनकी स्तुति की। इन्होने राज्य श्रेयस्कर पुत्र को दिया तथा विमलप्रभा पालकी में बैठकर ये मनोहर नामक वन में गये। वहाँ इन्होने दो दिन के आहार का त्याग करके फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन प्रातःवेला और श्रवण नक्षत्र में एक हजार राजाओ के साथ सयम धारण किया। इसी समय इन्हें मन पर्ययज्ञान हुआ। इन्हें सिद्धार्थ नगर में राजा नन्द ने आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। छद्मस्थ अवस्था के दो वर्ष बाद ही मनोहर उद्यान में तुम्बुर वृक्ष के नीचे माघ कृष्ण अमावस्या के दिन श्रवण नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान हुआ। इनके सघ में कुन्थु आदि सतहत्तर गणधर, तेरह सौ पूर्वधारी, अडतालीस हजार दो सौ शिक्षक, छह हजार अवधिज्ञानी, छ हजार पाँच सौ केवलज्ञानी, ग्यारह हजार विक्रियाऋद्धिधारी, छ हजार मनःपर्ययज्ञानी और पाँच हजार वादी मुनि तथा एक लाख बीस हजार धारणा आदि आर्यिकाएँ थी। सम्मेदशिखर पर इन्होने एक हजार मुनियो के साथ प्रतिमायोग धारण किया था। श्रावण शुक्ल पौर्णमासी के दिन सायकाल के समय धनिष्ठा नक्षत्र में शेष कर्मों का क्षय करके ये—"अ इ उ ऋ लृ इन पाँच लघु अक्षरो के उच्चारण मे जितना समय लगता है उतने समय मे मुक्त हुए। ये दूसरे पूर्वभव में पुष्करार्ध द्वीप में सुकच्छ देश के क्षेमपुर नामक नगर के नलिनप्रभ नामक राजा थे। इस पर्याय में तीर्थङ्कर-प्रकृति का बन्ध करके आयु के अन्त में समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुए और वहाँ से चयकर इस पर्याय में जन्मे थे। मपु० ५७ २-६२, पपु० २०. ४७-६८ ११४, १२०, हपु० ६० १५६-१९२, ३४१-३४९

श्रेयोनिधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

श्रेष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

श्रेष्ठी—आगामी उत्सर्पिणी काल के सातवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७२

श्रोता—धर्म को सुननेवाले पुरुष। ये चौदह प्रकार के होते हैं। इनके ये भेद जिन पदार्थों के गुण-दोषो से तुलना करके बताये गये हैं उनके नाम हैं-मिट्टी, चलनी, बकरा, बिलाव, तोता, बगुला, पाषाण, सर्प, गाय, हस, भैसा, फूटा घडा, डास और जोक। इनमें जो गाय और हस के समान होते हैं उन्हें उत्तम श्रोता कहा गया है। मिट्टी और तोते के समानवृत्ति के मध्यम श्रोता और शेष अधम श्रेणी के माने गये हैं। गुण और दोषो के बतलानेवाले श्रोता सत्कथा के परीक्षक होते हैं। शास्त्रश्रवण से सासारिक सुख की कामना नही की जाती। श्रोता के आठ गुण होते हैं। वे हैं-शुश्रूषा, श्रवण, ग्रहण, धारण स्मृति, ऊह, अपोह और निर्णीती। शास्त्र सुनने के बदले किसी सासारिक फल की चाह नही करना श्रोता का परम कर्तव्य है। मपु० १ ३८-१४७

श्लक्ष्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

श्लक्ष्णरोम—सिंहलद्वीप का राजा। इसकी रानी कुरुमती तथा लक्ष्मणा पुत्री थी। हपु० ४४ २०-२४, ६० ८५

श्लेष्मान्तक—एक वन। यहाँ तापस वेप में पाण्डव आये थे। हपु० ४५ ६९

श्वपाकी—मातग जाति के विद्याधरो का एक निकाय। ये विद्याधर पीत केशधारी, तप्तस्वर्णभूषणो से युक्त होकर श्वपाकी विद्या-स्तम्भों का आश्रय लेकर बैठते हैं। हपु० २६ १९

श्वभ्र-भू—नरक-भूमियाँ। ये सात हैं। मपु० १० ३१-३२ दे० नरक

श्वसना—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश की दिग्विजय के समय उनका सेनापति यहाँ ससैन्य आया था। मपु० २९ ८३

श्वापद—विदेहक्षेत्र की एक अटवी। पुण्डरीक देश के चक्रवर्ती त्रिभुवनानन्द के सामन्त पुनर्वसु के द्वारा अपहृता त्रिभुवनानन्द की पुत्री अनगसरा पर्णलध्वी विद्या के सहारे इसी अटवी मे आयी थी। पपु० ६४ ५०-५५

श्वेतकर्ण—एक जगली हाथी। पूर्वभव के वैरवश यह ताम्रकर्ण हाथी से लडकर मरा और भैंसा हुआ था। मपु० ६३ १५८-१६०

श्वेतकेतु—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सातवाँ नगर। मपु० १९ ३८, ५३

श्वेतकुमार—राजा विराट का पुत्र। युद्ध मे यह भीष्म-पितामह द्वारा मारा गया। पापु० १९ १८५-१८६, १९५

श्वेतराम—जमदग्नि और रेणुकी का छोटा पुत्र। यह इन्द्र राम का छोटा भाई था। पिता के मारे जाने पर इन दोनो भाइयो ने कृतवीर से युद्ध करके सहस्रबाहु को मार डाला था। इसने इक्कीस बार क्षत्रियो का वध किया था। मपु० ६५ ९०-९२, १११-११३, १२७

श्वेतवन—तीर्थंकर मल्लिनाथ की दीक्षाभूमि। मपु० ६६ ४७

श्वेतवाहन—(१) भरतक्षेत्र मे कुरुजागल देश के हस्तिनापुर का एक सेठ। इसकी पत्नी बन्धुमती और पुत्र शख था। मपु० ७१.२६०-२६१

(२) भरतक्षेत्र के अग देश की चम्पा नगरी का राजा। इसने भगवान् महावीर से धर्म का स्वरूप सुनकर और पुत्र विमलवाहन को राज्य देकर सयम धारण कर लिया था। इसकी दशलक्षण-धर्म मे रुचि होने से यह धर्मरुचि नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ७६ ८-१९

श्वेतिका—भरतक्षेत्र की नगरी। यहाँ का राजा वासव था। इसका अपर नाम श्वेताम्बिका था। मपु० ७१ २८३, हपु० ३३ १६१, वीवच० २ ११७-११८

ष

षट्कर्म—वृषभदेव द्वारा प्रजा की आजीविका के लिए बताये गये छ कार्य। वे हैं—असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प कर्म। मपु० १६ १७९-१८०, १९१, हपु० ९ ३५, पापु० २ १५४

षट्काय—त्रस तथा पृथिवी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पतिकाय के जीव। मपु० ३४ १९४, पपु० १०५ १४१

षडगबल—छ अगोवाली एक विद्या। ये अग हैं—हस्तिसेना, अश्वसेना, रथसेना, पदातिसेना, देवसेना और विद्याधरसेना। यह बल चक्रवर्ती राजाओ का होता है। मपु० २९ ६

षडगिका—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३८६, ३९६

षडारि—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य। ये मानव के विकास में बाधक होते हैं। मपु० १० १४१

षडावश्यक—मुनियो के छ आवश्यक कर्त्तव्य। उनके नाम हैं—सामायिक, वन्दना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग। मपु० ६१ ११९, हपु० २.१२८, ३४.१४२-१४६

षड्ज—सगीत के सप्त स्वरो मे एक स्वर। पपु० १७ २७७, हपु० १९ १५३ दे० स्वर

षड्जकैकशी—सगीत की आठ जातियो मे सातवी जाति। इसका अपर नाम षड्जकैशिकी है। पपु० २४ १२, हपु० १९ १७४

षड्जमध्यमा—सगीत की षड्जग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली आठ जातियो में आठवी जाति। इसका अपर नाम षड्जमध्या है। पपु० २४ १५, हपु० १९ १७५

षड्जषड्जा—सगीत के स्वर की एक जाति। पपु० २४ १२

षष्ठोपवास—वेलाव्रत। दो दिन का उपवास षष्ठोपवास कहलाता है। मपु० ४८ ३९, पपु० ५ ७०, हपु० २ ५८, १६ ५६

षाड्गुण्य—राजा के छ गुणो का समूह। ये गुण हैं—सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और आश्रय। मपु० २८ २८, ४१ १३८-१३९

षाडव—चौदह मूर्च्छनाओ का एक स्वर। इसकी उत्पत्ति छ स्वरो से होती है। हपु० १९ १६९

षाड्जी—षड्जग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली स्वर की आठ जातियो मे प्रथम जाति। हपु० १९ १७४

षाष्ठिक—साठी नाम का अनाज। यह तीर्थंकर वृषभदेव के समय में उत्पन्न होने लगा था। मपु० ३ १८६

षोडशकारण—तीर्थंकर प्रकृति की बन्ध-हेतु सोलह भावनाएँ। मपु ७. ८८, ११ ६८-७८, पपु० २.१९२, हपु० ३१ १ दे० भावना

स

संकट—राम का सहायक वानरवशी एक कुमार। यह विद्या-साधना में रत रावण को कुपित करने लका गया था। पपु० ७० १५, १८

संकट-प्राहर—राम का सामन्त। इसने सिहवाही रथ पर सवार होकर रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८ ११

संक्रम—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के चौथे प्राभृत कर्मप्रकृति का बारहवाँ योगद्वार। हपु० १० ७७, ८१-८३, दे० आग्रायणीयपूर्व

संक्रान्तकर्म—पुस्तकर्म के क्षय, उपचय और सक्रम (सक्रान्त) इन तीन भेदो में तीसरा भेद। साँचे आदि की सहायता से खिलौने आदि बनाना सक्रान्तकर्म कहलाता है। पपु० २४ ३८-३९

सक्रोध—राम का पक्षधर एक वानर योद्धा। इसने युद्ध में राक्षस पक्ष के योद्धा क्षपितारि को मारा था। पपु० ६० १३, १६, १८

सक्षेपजसम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेद। पदार्थों के सक्षिप्त कथन के तत्त्वो मे श्रद्धा उत्पन्न हो जाना सक्षेपजसम्यग्दर्शन है। मपु ७४. ४३९-४४०, ४४५, वीवच० १९ १४८

सख्य—एक मुनि। वसुदेव के सुदूर पूर्वभव के जीव शालिग्राम के एक दरिद्र ब्राह्मण ने अपने मामा की पुत्रियो द्वारा घर से निकाल दिये जाने पर इन्ही मुनि से धर्म और अधर्म का फल सुनकर दीक्षा ली थी। मपु० १८ १२७-१३३

श्रेयस्कर—तीर्थङ्कर श्रेयांसनाथ का पुत्र। मपु० ५७ ४६

श्रेयस्पुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा शिवसेन था। मपु० ४७.१४२

श्रेयान्—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

(२) पुरुषोत्तम नारायण के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २०. २१६

(३) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एवं ग्यारहवें तीर्थङ्कर। इनका अपर नाम श्रेयस् था। पपु० ५ २१४, हपु० १ १३, वीवच० १८ १०१-१०६ दे० श्रेयांसनाथ

(४) कुरुजांगल देश में हस्तिनापुर नगर के कुरुवंशी राजा सोमप्रभ के भाई। वृषभदेव को देखकर इन्हें पूर्वभव में अपने द्वारा दिये गये आहार दान का स्मरण हो आया था। इससे ये विधिपूर्वक वृषभदेव के लिए इक्षु रस का आहार दे सके थे। आहारदान देने की प्रवृत्ति का शुभारम्भ इन्होंने किया था। अन्त में ये दीक्षा लेकर वृषभदेव के गणधर हुए। दसवें पूर्वभव में ये धनश्री, नौवें में निर्नामिका, आठवें में स्वयंप्रभा देवी, सातवें में श्रीमती, छठे में भोगभूमि की आर्या, पाँचवें में स्वयंप्रभ देव, चौथे में केशव, तीसरे में अच्युत स्वर्ग के इन्द्र, दूसरे में धनदत्त, प्रथम पूर्वभव में अहमिन्द्र हुए थे। मपु० ६ ६०, ८ ३३, १८५-१८८, ९.१८६, १० १७१-१७२, १८६, ११ १४, २० ३०-३१, ७८-८१, ८८, १२८, २४ १७४, ४३ ५२, ४७ ३६०-३६२, हपु० ९ १५८, ४५ ६-७

श्रेयांसनाथ—अवसर्पिणी काल के ग्यारहवें तीर्थङ्कर। ये जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के इक्ष्वाकुवंशी राजा विष्णु और रानी नन्दा के पुत्र थे। ये ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी श्रवण नक्षत्र में प्रातःकाल के समय रानी नन्दा के गर्भ में आये तथा फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन विष्णुयोग में इनका जन्म हुआ। जन्म के समय रोगी निरोग हो गये थे। चारों निकाय के देवों ने आकर इनका जन्माभिषेक किया था। सौधर्मेन्द्र ने जन्माभिषेक के पश्चात् आभूषण आदि पहनाकर इनका श्रेयांस नाम रखा था। इनका जन्म शीतलनाथ के मोक्ष जाने के बाद सौ सागर, छियासठ लाख और छब्बीस हजार वर्ष कम एक करोड़ सागर प्रमाण अन्तराल बीत जाने पर हुआ था। इनकी कुल आयु चौरासी लाख वर्ष की थी। शरीर सोने की कान्ति के समान था। ऊँचाई अस्सी धनुष थी। कुमारावस्था के इक्कीस लाख वर्ष बीत जाने पर इन्हें राज्य मिला था। इन्होंने बयालीस वर्ष तक राज्य किया। इसके पश्चात् वसन्त के परिवर्तन को देखकर इन्हें वैराग्य जागा। लौकान्तिक देवों ने आकर इनकी स्तुति की। इन्होंने राज्य श्रेयस्कर पुत्र को दिया तथा विमलप्रभा पालकी में बैठकर ये मनोहर नामक वन में गये। वहाँ इन्होंने दो दिन के आहार का त्याग करके फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन प्रातःवेला और श्रवण नक्षत्र में एक हजार राजाओं के साथ संयम धारण किया। इसी समय इन्हें मनःपर्ययज्ञान हुआ। इन्होंने सिद्धार्थ नगर में राजा नन्द से आहार लेकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। छद्मस्थ अवस्था के दो वर्ष बाद ही मनोहर उद्यान में तुम्बुर वृक्ष के नीचे माघ कृष्ण अमावस्या के दिन श्रवण नक्षत्र में इन्हें केवलज्ञान हुआ। इनके संघ में कुन्थु आदि सतहत्तर गणधर, तेरह सौ पूर्वधारी, अड़तालीस हजार दो सौ शिक्षक, छः हजार अवधिज्ञानी, छः हजार पाँच सौ केवलज्ञानी, ग्यारह हजार विक्रियाऋद्धिधारी, छः हजार मनःपर्ययज्ञानी और पाँच हजार वादी मुनि तथा एक लाख बीस हजार धारणा आदि आर्यिकाएँ थी। सम्मेदशिखर पर इन्होंने एक हजार मुनियों के साथ प्रतिमायोग धारण किया था। श्रावण शुक्ल पौर्णमासी के दिन सायंकाल के समय धनिष्ठा नक्षत्र में शेष कर्मों का नाश करके ये—"अ इ उ ऋ लृ इन पाँच लघु अक्षरों के उच्चारण में जितना समय लगता है उतने समय में मुक्त हुए। ये दूसरे पूर्वभव में पुष्करार्ध द्वीप में सुकच्छ देश के क्षेमपुर नामक नगर के नलिनप्रभ नामक राजा थे। इस पर्याय में तीर्थङ्कर-प्रकृति का बंध करके आयु के अन्त में समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुए और वहाँ से च्यवकर इस पर्याय में जन्मे थे। मपु० ५७ २-६२, पपु० २०. ४७-५८ ११४, १२०, हपु० ६० १५६-१९२, ३४१-३४९

श्रेयोनिधि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

श्रेष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

श्रेष्ठी—आगामी उत्सर्पिणी काल के सातवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६.४७२

श्रोता—धर्म को सुननेवाले पुरुष। ये चौदह प्रकार के होते हैं। इनके ये भेद जिन पदार्थों के गुण-दोषों से तुलना करके बताये गये हैं उनके नाम हैं-मिट्टी, चलनी, बकरा, बिलाव, तोता, बगुला, पाषाण, सर्प, गाय, हंस, भैंसा, फूटा घड़ा, डाँस और जोंक। इनमें जो गाय और हंस के समान होते हैं उन्हें उत्तम श्रोता कहा गया है। मिट्टी और तोते के समानवृत्ति के मध्यम श्रोता और शेष अधम श्रेणी के माने गये हैं। गुण और दोषों के बतलानेवाले श्रोता सत्कथा के परीक्षक होते हैं। शास्त्रश्रवण से सांसारिक सुख की कामना नहीं की जाती। श्रोता के आठ गुण होते हैं। वे हैं-शुश्रूषा, श्रवण, ग्रहण, धारण स्मृति, ऊह, अपोह और निर्णीति। शास्त्र सुनने के बदले किसी सांसारिक फल की चाह नहीं करना श्रोता का परम कर्तव्य है। मपु० १ १३८-१४७

श्लक्ष्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४४

श्लक्ष्णरोम—सिंहलद्वीप का राजा। इसकी रानी कुमती तथा लक्ष्मणा पुत्री थी। हपु० ४४ २०-२४, ६० ८५

श्लेष्मान्तक—एक वन। यहाँ तापस वेष में पाण्डव आये थे। हपु० ४५ ६९

श्वपाकी—मातंग जाति के विद्याधरों का एक निकाय। ये विद्याधर पीत केशधारी, तप्तस्वर्णभूषणों से युक्त होकर श्वपाकी विद्या-स्तम्भों का आश्रय लेकर बैठते हैं। हपु० २६ १९

श्वभ्र-भू—नरक-भूमियाँ। ये सात हैं। मपु० १०.३१-३२ दे० नरक

श्वसना—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश की दिग्विजय के समय उनका सेनापति यहाँ ससैन्य आया था। मपु० २९.८३

श्वापद—विदेहक्षेत्र की एक अटवी। पुण्डरीक देश के चक्रवर्ती त्रिभुवनानन्द के सामन्त पुनर्वसु के द्वारा अपहृता त्रिभुवनानन्द की पुत्री अनगसरा पर्णलघ्वी विद्या के सहारे इसी अटवी में आयी थी। पपु० ६४.५०-५५

श्वेतकर्ण—एक जगली हाथी। पूर्वभव के वैरवश यह ताम्रकर्ण हाथी से लड़कर मरा और भैंसा हुआ था। मपु० ६३.१५८-१६०

श्वेतकेतु—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सातवाँ नगर। मपु० १९.३८, ५३

श्वेतकुमार—राजा विराट का पुत्र। युद्ध में यह भीष्म-पितामह द्वारा मारा गया। पापु० १९.१८५-१८६, १९५

श्वेतराम—जमदग्नि और रेणुकी का छोटा पुत्र। यह इन्द्र राम का छोटा भाई था। पिता के मारे जाने पर इन दोनो भाइयो ने कृतवीर से युद्ध करके सहस्रबाहु को मार डाला था। इसने इक्कीस बार क्षत्रियो का वध किया था। मपु० ६५.९०-९२, १११-११३, १२७

श्वेतवन—तीर्थंकर मल्लिनाथ की दीक्षाभूमि। मपु० ६६.४७

श्वेतवाहन—(१) भरतक्षेत्र में कुरुजागल देश के हस्तिनापुर का एक सेठ। इसकी पत्नी बन्धुमती और पुत्र शख था। मपु० ७१.२६०-२६१

(२) भरतक्षेत्र के अग देश की चम्पा नगरी का राजा। इसने भगवान् महावीर से धर्म का स्वरूप सुनकर और पुत्र विमलवाहन को राज्य देकर सयम धारण कर लिया था। इसकी दशलक्षण-धर्म मे रुचि होने से यह धर्मरुचि नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ७६.८-२९

श्वेतिका—भरतक्षेत्र की नगरी। यहाँ का राजा वासव था। इसका अपर नाम श्वेताम्बिका था। मपु० ७१.२८३, हपु० ३३.१६१, वीवच० २.११७-११८

ष

षटकर्म—वृषभदेव द्वारा प्रजा की आजीविका के लिए बताये गये छ कार्य। वे हैं—असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प कर्म। मपु० १६.१७९-१८०, १९१, हपु० ९.३५, पापु० २.१५४

षटकाय—त्रस तथा पृथिवी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पतिकाय के जीव। मपु० ३४.१९४, पपु० १०५.१४१

षडगबल—छ अगोवाली एक विद्या। ये अग हैं—हस्तिसेना, अश्वसेना, रथसेना, पदातिसेना, देवसेना और विद्याधरसेना। यह बल चक्रवर्ती राजाओ का होता है। मपु० २९.६

षडगिका—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२.३८६, ३९६

षडारि—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य। ये मानव के विकास में बाधक होते है। मपु० १०.१४१

षडावश्यक—मुनियो के छ. आवश्यक कर्त्तव्य। उनके नाम हैं—सामायिक, वन्दना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय और कायोत्सर्ग। मपु० ६१.११९, हपु० २.१२८, ३४.१४२-१४६

षड्ज—सगीत के सप्त स्वरो मे एक स्वर। पपु० १७.२७७, हपु० १९.१५३ दे० स्वर

षड्जकैकशी—सगीत की आठ जातियो मे सातवी जाति। इसका अपर नाम षड्जकैशिकी है। पपु० २४.१२, हपु० १९.१७४

षड्जमध्यमा—सगीत की षड्जग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली आठ जातियो में आठवी जाति। इसका अपर नाम षड्जमध्या है। पपु० २४.१५, हपु० १९.१७५

षड्जषड्जा—सगीत के स्वर की एक जाति। पपु० २४.१२

षष्ठोपवास—वेलाव्रत। दो दिन का उपवास षष्ठोपवास कहलाता है। मपु० ४८.३९, पपु० ५.७०, हपु० २.५८, १६.५६

षाड्गुण्य—राजा के छ गुणो का समूह। ये गुण हैं—सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और आश्रय। मपु० २८.२८, ४१.१३८-१३९

षाडव—चौदह मूर्च्छनाओ का एक स्वर। इसकी उत्पत्ति छ स्वरो से होती है। हपु० १९.१६९

षाड्जी—षड्जग्राम से सम्बन्ध रखनेवाली स्वर की आठ जातियो मे प्रथम जाति। हपु० १९.१७४

षाष्ठिक—साठी नाम का अनाज। यह तीर्थंकर वृषभदेव के समय में उत्पन्न होने लगा था। मपु० ३.१८६

षोडशकारण—तीर्थंकर प्रकृति की बन्ध-हेतु सोलह भावनाएँ। मपु ७.८८, ११.६८-७८, पपु० २.१९२, हपु० ३९.१ दे० भावना

स

संकट—राम का सहायक वानरवशी एक कुमार। यह विद्या-साधना में रत रावण को कुपित करने लका गया था। पपु० ७०.१५, १८

संकट-प्रहर—राम का सामन्त। इसने सिंहवाही रथ पर सवार होकर रावण की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५८.११

संक्रम—अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के चौथे प्राभृत कर्मप्रकृति का बारहवाँ योगद्वार। हपु० १०.७७, ८१-८३, दे० आग्रायणीयपूर्व

सक्रान्तकर्म—पुस्तकर्म के क्षय, उपचय और सक्रम (सक्रान्त) इन तीन भेदो में तीसरा भेद। साँचे आदि की सहायता से खिलौने आदि बनाना सक्रान्तकर्म कहलाता है। पपु० २४.३८-३९

संक्रोध—राम का पक्षधर एक वानर योद्धा। इसने युद्ध मे राक्षस पक्ष के योद्धा क्षपितारि को मारा था। पपु० ६०.१३, १६, १८

सक्षेपजसम्यक्त्व—सम्यग्दर्शन के दस भेद। पदार्थों के सक्षिप्त कथन के तत्त्वो में श्रद्धा उत्पन्न हो जाना सक्षेपजसम्यग्दर्शन है। मपु ७४.४३९-४४०, ४४५, वीवच० १९.१४८

सख्य—एक मुनि। वसुदेव के सुदूर पूर्वभव के जीव शालिग्राम के एक दरिद्र ब्राह्मण ने अपने मामा की पुत्रियो द्वारा घर से निकाल दिये जाने पर इन्ही मुनि से धर्म और अधर्म का फल सुनकर दीक्षा ली थी। मपु० १८.१२७-१३३

संख्या—जीवादि पदार्थों के भेदों की गणना। यह आठ अनुयोग द्वारों में दूसरा अनुयोग द्वार है। हपु० २ १०८

संगमक—(१) एक देव। यह वर्द्धमान के पराक्रम की परीक्षा करने के लिए स्वर्ग से उनके पास आया था। वर्द्धमान और उनके साथियों को डराने के लिए यह सर्प का रूप धारण करके वृक्ष के तने से लिपट गया था। वर्द्धमान के साथी डरकर डालियों से कूद कूदकर भाग गये, किन्तु वर्द्धमान ने सर्प पर चढ़कर निर्भयता पूर्वक क्रीड़ा की थी। वर्द्धमान की इस निडरता से प्रसन्न होकर इस देव ने उनको महावीर इस नाम से सम्बोधित करके उनकी स्तुति की। मपु० ७४ २८९-२९५, वीवच० १० २३-३७

(२) पाताललोक का निवासी एक देव। पूर्वधातकीखण्ड के भरतक्षेत्र की अमरकंकापुरी के राजा पद्मनाभ ने द्रौपदी को पाने की इच्छा से इस देव की आराधना की थी। आराधना के फलस्वरूप यह देव द्रौपदी को पद्मनाभ की नगरी में उठा लाया था। हपु० ५४ ८-१३, पापु० २१ ५२-५८

संग्रहग्राम—(१) दस ग्रामों का मध्यवर्ती ग्राम। यहाँ सुरक्षार्थ वस्तुओं का संग्रह किया जाता है। मपु० १६ १७६

(२) एक नय। अनेक भेदों और पर्यायों से युक्त पदार्थ को एकरूपता देकर ग्रहण करना संग्रहनय कहलाता है। हपु० ५८. ४१, ४४

संग्रहणी—एक विद्या। अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज ने यह विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ ३९४, ४००

संग्राम—राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १६

संग्रामचपल—एक विद्याधर राजा। यह राम का सहयोग करने के लिए व्याघ्ररथ में बैठकर रावण की सेना से युद्ध करने निकला था। पपु० ५८ ६

संग्रामणी—एक विद्या। यह अर्ककीर्ति के पुत्र अमिततेज द्वारा सिद्ध की गयी थी। मपु० ६२ ३९३

संघ—रत्नत्रय से युक्त श्रमणों का समुदाय। यह मुनि-आर्यिका, श्रावक-श्राविका के भेद से चार प्रकार का होता है। पपु० ५ २८६, हपु० ६० ३५७

संघाट—वंशा-दूसरी नरकभूमि के छठे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में एक सौ चौबीस और विदिशाओं में एक सौ बीस कुल दो सौ चवालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७८, ११०

संघात—श्रुतज्ञान के बीस भेदों में सातवाँ भेद। एक-एक पद के ऊपर एक-एक अक्षर की वृद्धि के क्रम से संख्यात हजार पदों के बढ़ जाने पर यह संघात श्रुतज्ञान होता है। हपु० १० १२ दे० श्रुतज्ञान

संघात समास—श्रुतज्ञान के बीस भेदों में आठवाँ भेद। हपु० १० १२ दे० श्रुतज्ञान

संचारी—संगीत में प्रयुक्त स्थायी, संचारी आरोही और अवरोही इन चार प्रकार के वर्णों में दूसरे प्रकार के वर्ण। पपु० २४.१०

संजय—(१) विद्याधर विनमि का पुत्र। इसकी दो बहिनें थीं—भद्रा और सुभद्रा। हपु० २२ १०३-१०६

(२) एक चारण मुनि। इनके साथ विहार करनेवाले चारणमुनि का नाम विजय था। इन मुनियों का सन्देह वर्द्धमान के दर्शन मात्र से दूर हो गया था। अतः इस घटना से प्रभावित होकर इन्होंने वर्द्धमान को "सन्मति" नाम से सम्बोधित किया था। मपु० ७४ २८२-२८३

(३) राजा चरम का पुत्र। यह नीति का जानकार था। हपु० १७ २८

(४) एक राजा, जो रोहिणी के स्वयंवर में गया था। हपु० ३१ २९

संजयन्त—(१) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में गन्धमालिनी देश के वीतशोकनगर के राजा वैजयन्त और रानी सर्वश्री का ज्येष्ठ पुत्र। इसके छोटे भाई का नाम जयन्त और पुत्र का नाम वैजयन्त था। ये दोनों भाई स्वयंभू मुनि से अपने पिता के साथ वैजयन्त को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गये थे। विद्याधर विद्युद्दंष्ट्र ने पूर्वभव के वैर के कारण इन्हें भीम वन से उठाकर भरतक्षेत्र के इला पर्वत में पाँच नदियों के संगम पर छोड़ा था और इसी के कहने से विद्याधरों ने इन्हें अनेक कष्ट दिये थे। इन्होंने उपसर्गों को सहन किया और घोर तपस्या करके मुक्ति प्राप्त की। मपु० ५९ १०९-१२६, पपु० ५ १-५२, ५ २५-२९, १४६-२७३, हपु० २७ ५-१६

(२) कौरव पक्ष का एक योद्धा राजा। यह पराजित होकर युद्ध से भाग गया था। पापु० २० १४९

(३) एक मुनि। इनकी प्रतिमा ह्रीमन्त पर्वत पर स्थापित की गयी थी। पोदनपुर के राजा श्रीविजय ने यहीं पर महाज्वाला-विद्या की सिद्धि की थी। कुमार प्रद्युम्न ने भी यही विद्या सिद्ध की थी। मपु० ६२ २७२-२७४, ७२ ८०

(४) हरिवंशी राजा श्रीवृक्ष का पुत्र और कुणिम का पिता। पपु० २१ ४९-५०

(५) चरमशरीरी जयकुमार का छोटा भाई। यह अपने भाई जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७ २८०-२८३

संजयन्ती—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की तीसरी नगरी। मपु० १९ ५०, ५३

संज्वलन—एक कषाय। यह चार प्रकार की होती है—संज्वलन-क्रोध, संज्वलनमान, संज्वलन-माया और संज्वलन-लोभ। अप्रत्याख्यानावरण-क्रोध, मान, माया और लोभ तथा प्रत्याख्यान-क्रोध, मान, माया और लोभ इन आठ कषायों का क्षय होने के पश्चात् इस कषाय का नाश होता है। मपु० २० २४५-२४७

संज्वलित—तीसरी मेघा नाम की नरकभूमि के नौ प्रस्तारों में आठवें प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में बहत्तर और विदिशाओं में अड़सठ कुल एक सौ चालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ८१, १३५

सन्नासंज्ञा—क्षेत्र का एक प्रमाण विशेष। आठ अवसंज्ञाओं की एक संज्ञा-संज्ञा होती है। हपु० ७ ३८

देखकर व्याघ्रो से जुते हुए रथ पर बैठकर ससैन्य युद्ध करने निकला था। पपु० ५८ ३

संयत—(१) एक महामुनि। बाली के पूर्वभव के जीव सुप्रभ ने इन्ही मुनि से सयम लिया था। पपु० १०६ १८५, १९२-१९७

(२) व्रती जीव। ससारी जीव असयत, सयतासयत और सयत तीन प्रकार के होते हैं। इनमे सयत जीव छठे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक नौ गुणस्थानो मे पाये जाते हैं। हपु० ३ ७८

संयतासयत—एक देश व्रतो के धारक जीव। ये कुछ सयत और कुछ असयत परिणामवाले होते हैं। ये जीव पाँचवें गुणस्थान मे होते हैं। ऐसे जीव हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पाँच पापो से यथाशक्ति एक देश विरत होते हैं। महातृष्णा पर ये विजय प्राप्त कर लेते हैं। परिग्रह का परिमाण रखते हैं। ये जीव मरकर सौधर्म स्वर्ग से अच्युत स्वर्ग तक के देव होते हैं। हपु० ३ ७८, ८१, ९०, १४८

संयम—भरतेश द्वारा व्रतियो के लिए बताये गये छ कर्मों में एक कर्म—पाँचों इन्द्रियो और मन का वशीकरण तथा छ काय के जीवो की रक्षा। इसमें पाँच महाव्रतो का धारण, पाँच समितियो का पालन, कषायो का निग्रह और मन-वचन-काय रूप प्रवृत्ति का त्याग किया जाता है। सयमी शरीर को सयम का साधन जानकर उसकी स्थिति के लिए ही आहार करते हैं। वे रसो में आसक्त नही होते। ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इसके रक्षक हैं। मपु० २० ९, १७३, ३८ २४-३४, हपु० २ १२९, ४७ ११, पापु० २२ ७१, २३ ६५, वीवच० ६ १०

संयमश्री—एक आर्यिका। इसने अजना के जीव कनकोदरी को उपदेश देकर सम्यग्दर्शन धारण कराया था। पपु० १७ १६६-१६९, १९१-१९४

संयमासयम—त्रस हिंसा से विरति तथा स्थावर हिंसा से अविरति। मपु० ५९ २१४

संयोगाधिकरण—अजीवाधिकरण आस्रव का एक भेद। यह दो प्रकार का होता है—भक्तपानसयोग और उपकरणसयोग। इनमें भोजन-पान को अन्य भोजन तथा पान में मिलाना भक्तपान-सयोग है और बिना विवेक के उपकरणो का परस्पर मिलाना उपकरण-संयोग है। हपु० ५८ ८४, ८६, ८९

संयोजनासत्य—सत्य वचन के दस भेदो में एक भेद। चेतन और अचेतन द्रव्यो का विभाजन नही करनेवाला वचन सयोजनासत्य है। क्रौंच व्यूह और चक्रव्यूह सैन्यरचना के भेद हैं। सेना चेतन-अचेतन पदार्थों के समूह से बनती है। परन्तु अचेतन पदार्थों की विवक्षा न कर केवल क्रौंचाकार रची हुई सेना को क्रौंचव्यूह और चेतन पदार्थों की विवक्षा न कर केवल चक्र के आकार में रची हुई सेना को चक्रव्यूह कहना सयोजना सत्य है। हपु० १० १०३

संरक्षणानन्द—रौद्रध्यान के चार भेदो में चौथा भेद। वे चार ध्यान है—हिंसानन्द, मृषानन्द, स्तेयानन्द और सरक्षणानन्द। इनमें धन के उपार्जन करने आदि का चिन्तन करना सरक्षणानन्द रौद्रध्यान है। मपु० २१ ४२-४३, ५१

संरम्भ—जीवाधिकरण आस्रव के तीन भेदो में एक भेद। कार्य करने का सकल्प करना सरम्भ कहलाता है। हपु० ५८ ८४-८५

संवर—(१) वृषभदेव के पैंतालीसवें गणधर। हपु० १२ ६३

(२) बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २९-३०

(३) तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के पिता। पपु० २० ४०

(४) आस्रव का निरोध-(कर्मों का आना रोकना) सवर है। यह दश धर्म, तीन गुप्ति, बारह अनुप्रेक्षा, बारह तप, पच समिति तथा धर्म और शुक्लध्यान से होता है। इससे प्राणी ससार-भ्रमण से बच जाता है। कर्मों को रोकने के लिए तेरह प्रकार का चारित्र और परीषहो पर विजय तथा ज्ञानाभ्यास भी आवश्यक है। मपु० २० २०६, पपु० ३२ ९७, पापु० २५ १०२-१०३ वीवच० ११ ७४-७७

संवर्त—राजपुर नगर का एक ब्राह्मण। यह हिंसा को धर्म मानने में प्रवीण था। पपु० ११ १०६-१०७

सवर्तक—एक रौद्र अस्त्र। यह भयकर बाण वर्षा करनेवाला होता था। जरासन्ध ने यह अस्त्र कृष्ण पर छोडा था, जिसे कृष्ण ने महाश्वसन अस्त्र से आँधी चलाकर रोका था। हपु० ५२ ५०

संवर्मित—एक प्रकार की सैन्य-सामग्री-कवच। युद्ध करते समय सैनिक इसे धारण करते थे। मपु० ३६ १३८

सवादी—सगीत स्वरो के प्रयोग करने के चार भेदो में एक भेद। हपु० १९ १५४

संवाह—नगरों का एक प्रकार। जहाँ मस्तक तक ऊँचे-ऊँचे धान्य के ढेर लगे रहते हैं उसे सवाह नगर कहा जाता है। मपु० १६ १७३

सवाहिनी—एक विद्या। दशानन ने यह विद्या सिद्ध की थी। पपु० ७ ३२६-३३२

संवृतिसत्य—सत्य वचन के दस भेदो में एक भेद। समुदाय को एक देश की मुख्यतया से एक रूप कहना। जैसे भेरी, तबला, बाँसुरी आदि अनेक वाद्यो का शब्द जहाँ एक समूह मे हो रहा है वहाँ भेरी आदि की मुख्यतया से भेरी आदि का शब्द कहना सवृतिसत्य है। हपु० १० १०२

संवेग—(१) सोलहकारण भावनाओ में पाँचवी भावना। जन्म, जरा, मरण तथा रोग आदि शारीरिक और मानसिक दु खो के भार से युक्त ससार से नित्य डरते रहना सवेग भावना है। यह भावना विषयो का छेदन करती है। मपु० ६३ ३२३, हपु० ३४ १३६

(२) सम्यग्दर्शन के प्राथमिक प्रशम आदि चार गुणो में एक गुण। धर्म और धार्मिक फलो में परम प्रीति और बाह्य पदार्थो मे उदासीनता होना सवेग—भाव कहलाता है। मपु० ९ १२३, १० १५७

सवेजिनी—आक्षेपिणी आदि चार प्रकार की कथाओ में एक प्रकार की

कथा। संसार से भय उत्पन्न करनेवाली कथा संवेजिनी कथा कहलाती है। पपु० १०६ ९२-९३ दे० सवेदिनी

संवेदिनीकथा—ससार से भय उत्पन्न करनेवाली कथा। यह आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, सवेदनी और निर्वेदिनी इन चार प्रकार की कथाओ में तीसरे प्रकार की कथा है। इसी को सवेजिनी कहते है। मपु० १ १३५-१३६, दे० संवेजिनी।

संशयमिथ्यात्व—अज्ञान-सशय आदि पाँच प्रकार के मिथ्यात्वो में एक मिथ्यात्व। मिथ्यात्व कर्म के उदय से तत्त्वो के स्वरूप में यह है या नही ऐसा सन्देह होना या चित्त का दोलायमान बना रहना सशय-मिथ्यात्व कहलाता है। मपु० ६२ २९७, २९९

सश्रय—सन्धि, विग्रह आदि राजा के छ गुणो में पाँचवाँ गुण। अशरण को शरण देना मश्रय कहलाता है। मपु० ६८ ६६,७१

ससार—जीव का एक पर्याय छोडकर दूसरी नयी पर्याय धारण करना। जीव-चक्र के समान भिन्न-भिन्न योनियो मे भ्रमता है। कर्मों के वश मे होकर अरहट के घटीयन्त्र के समान कभी ऊपर और कभी नीचे जाता रहता है। यह अनादिनिधन है। यह द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और भव के भेद से पच परावर्तन रूप है। नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये चार गतियाँ हैं। इन्ही गतियो में जीव का गमनागमन सस-रण कहलाता है। मपु० ११.२१०, २४ ११५, ६७ ८, पपु० ८ २२०, १०९ ६७-६९, ११४ ३२, वीवच० ६.२१

संसारानुप्रेक्षा—बारह अनुप्रेक्षाओ में एक अनुप्रेक्षा। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव रूप परिवर्तनो के कारण ससार दु ख रूप है ऐसी भावना करना ससारानुप्रेक्षा है। मपु० ११.१०६, पपु० १४ २३८-२३९, पापु० २५.८७-८८, वीवच० ११ २३-२४

संसारी—ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों से बँधा हुआ जीव। यह सुख पाने की इच्छा से इन्द्रियो से उत्पन्न ज्ञान, दर्शन, सुख वीर्य को शरीर में ही निहित मानता है। इसे उन्हें पाने के लिए पर वस्तुओ का आश्रय लेना पडता है। कर्म-बन्धन से बँधे रहने के कारण यह ससार से मुक्त नही हो पाता। ये गुणस्थानो और मार्गणास्थानो में स्थित हैं। नरक, तिर्यंच, देव और मनुष्य इन चार गतियो मे भ्रमते है। पर्यायो की अपेक्षा से अनेक भेद-प्रभेद होते हैं। मपु० २४ ९४, ४२ ५३-५९, ७६, ६७ ५६, पपु० २ १६२-१६८, वीवच० १६ ३६-५२

सस्कार—जीव की वृत्तियाँ। यह शुभ और अशुभ के भेद से दो प्रकार की होती है। इन वृत्तियो का सम्बन्ध जन्म और जन्मान्तरो से होता ह। सासारिकता से मुक्त होने के लिए ही गर्भावतरण से लेकर निर्वाण पर्यन्त श्रावक की त्रेपन क्रियाओ का विधान है। इन क्रियाओ के द्वारा उत्तरोत्तर विशुद्ध होता हुआ जीव अन्त मे निर्वाण प्राप्त कर लेता है। मपु० ९ ९७, ३८ ५०-५३, ३९ १-२०७ दे० गर्भान्वय

संस्थलि—सम्मेदाचल पर्वत के पास विद्यमान एक पर्वत। पपु० ८.४०५

संस्थान—जीवो का गोल, त्रिकोण आदि आकार। जीवो मे पृथिवी-कायिक जीवो का मसूर के समान, जलकायिक जीवो का तृण के अग्रभाग पर रखी बूँद के समान, तैजस-कायिक जीवो का खडी सूई के समान, वायुकायिक जीवो का पताका के समान और वनस्पति-कायिक जीवो का अनेक रूप सस्थान होता है। विकलेन्द्रिय तथा नारकी जीव हुण्डक सस्थान वाले होते है। मनुष्य और तिर्यंचो के (समचतुस्र, न्यग्रोधपरिमण्डल, स्वाति, कुब्ज, वामन और हुण्डक) छहो सस्थान होते है किन्तु देवो के केवल समचतुरस्रसस्थान होता है। हपु० ३ १९७, १८ ७०-७२

संस्थान-विचय—धर्मध्यान के दस भेदो में आठवाँ भेद। आकाश के मध्य में स्थित लोक चारो ओर से तीन वातवलयो से वेष्ठित है। ऐसा लोक के आकार का विचार करना सस्थान-विचय धर्मध्यान कहलाता है। मपु० २१.१४८-१५४, हपु० ५६.४८०

सककापिर—भरतक्षेत्र के दक्षिण आर्यखण्ड का एक देश। चक्रवर्ती भरतेश के छोटे भाई का यहाँ शासन था। उन्होने मोक्ष की अभि-लाषा से इस देश का त्याग कर सयम ग्रहण कर लिया था। हपु० ११ ६९, ७६

सकलदत्ति—दत्ति के चार भेदो में एक भेद। अपने वश की प्रतिष्ठा के लिए पुत्र को कुलपद्धति तथा धन के साथ अपना कुटुम्ब सौपना सकलदत्ति कहलाती है। मपु० ३८ ४०-४१

सकल परमात्मा—घातिया कर्मों से मुक्त परमौदारिक दिव्य देह में स्थित अर्हन्त। ये अनन्तज्ञान आदि नौ केवललब्धियो के धारक होते हैं। धर्मोपदेश से भव्य जीवो का उद्धार करते है और समस्त अति-शयो से युक्त होते हैं। वीवच० १६ ८४-८८

सकलभूतदया—सातावेदनीय कर्म की आस्रवभूत क्रियाओ मे एक क्रिया। समस्त प्राणियो पर दया करना सकलभूतदया कहलाती है। हपु० ५८ ९४-९५

सकलभूषण—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में गुंजा नगर के राजा सिंहविक्रम और रानी श्री का पुत्र। इसकी आठ सौ रानियाँ थी जिनमें किरणमाला प्रधान रानी थी। इसके सोते समय मामा के पुत्र हेमशिख का नाम उच्चारण करने से यह विरक्त हुआ और इसने दीक्षा ले ली। रानी साध्वी हो गयी और मरकर विद्युद्वक्त्रा नाम की राक्षसी हुई। इसने सकलभूषण के मुनि हो जाने पर मुनि अवस्था में अनेक उपसर्ग किये थे। आहार के समय भी उसने अन्तराय किये। एक बार आहार देनेवाली स्त्री का हार उसने इनके गले में डालकर इन्हें चोर घोषित किया। महेन्द्रोदय उद्यान मे प्रतिमायोग में विराजमान देखकर दिव्य स्त्रियो के रूप दिखाकर भी उपसर्ग किये। इनका मन इसके उपसर्गों से विचलित नही हुआ फलस्वरूप इन्हें केवलज्ञान प्रकट हुआ। पपु० १०४ १०३-११७

सखि—नवें बलभद्र बलराम के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २३३

सगर—(१) जरासन्ध राजा के अनेक पुत्रो में एक पुत्र। हपु० ५२ ३६

(२) अवसर्पिणी काल के दु:षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव दूसरे चक्रवर्ती। ये दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ के तीर्थकाल में हुए। इनके पिता कौशल देश की अयोध्या नगरी के राजा समुद्रविजय अपर नाम विजयसागर तथा माता रानी सुबाला

अपरनाम सुमंगला थी। इनकी आयु सत्तर लाख पूर्व और ऊँचाई चार सौ धनुष थी। अठारह लाख पूर्व काल कुमार-अवस्था में व्यतीत होने पर ये महामाण्डलिक हुए। इतना ही समय और बीतने पर इनके यहाँ चक्ररत्न प्रकट हुआ। हरिवंशपुराण के अनुसार इनकी कुल आयु बहत्तर लाख-पूर्व थी, जिसमें पचास हजार लाख-पूर्व का इनका कुमारकाल रहा, पच्चीस हजार वर्ष इनके मण्डलीक अवस्था में बीते, दस हजार वर्ष दिग्विजय में, तीन लाख नब्बे हजार राज्य-कार्य में और पचास हजार वर्ष संयम (मुनि) अवस्था में बीते थे। इनकी छियानवे हजार रानियाँ तथा साठ हजार पुत्र थे। पूर्वभव का मणिकेतु नामक एक देव इनका मित्र था। परस्पर के पूर्व निर्णयानुसार उसने स्वर्ग से आकर इन्हें बहुत समझाया किन्तु इन्हें वैराग्य नहीं जागा। अन्त में मणिकेतु ने इनके पुत्रों के मरण की इन्हें सूचना दी। इस सूचना से इन्हें वैराग्य का उदय हुआ। उन्होंने भगलि देश के राजा सिंहविक्रम की पुत्री विदर्भा के पुत्र भागीरथ को राज्य सौंपकर दृढधर्मा केवली से समीप दीक्षा ली तथा यथाविधि तपश्चरण कर सम्मेद शैल से परम पद प्राप्त किया। मपु० ४८ ५७, ७१-१३७, पपु० ५ ७४-७५, २४७-२८३, हपु० १३ २७-३०, ४९८-५००, वीवच० १८ १०१, १०९-११०

(३) भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी का राजा। प्रथम चक्रवर्ती भरतेश के पश्चात् इक्ष्वाकुवंश में असंख्य राजाओं के बाद दसवें चक्रवर्ती हरिषेण के मरणोपरान्त एक हजार वर्ष का समय व्यतीत हो जाने के बाद यह राजा हुआ था। इसने छलपूर्वक मधुपिंगल के असुर बनने के पश्चात् ब्राह्मण का रूप धारण कर हिंसामय यज्ञ करने का उपदेश दिया। इसे यज्ञ में होमे गये पशु स्वर्ग जाते हुए दिखाये गये थे। इस दृश्य से प्रभावित होकर इसने भी हिंसामय यज्ञ किया था। मधुपिंगल ने स्वर्ग का लोभ देकर इसकी रानी सुलसा को यज्ञ में होम दिया था। हिंसा का तीव्र अनुरागी होकर यह अन्त में वज्रपात से मरा और सातवें नरक में उत्पन्न हुआ। मपु० ६७ १५४-१६३, ३६३, ३७५-३७९

सचित्त—(१) हरा (ताजा अथवा सरस) द्रव्य। मपु० २० १६५

(२) मन युक्त-संज्ञी जीव। पपु० १०५ १४८

सचित्तत्यागप्रतिमा—श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं में पाँचवी प्रतिमा। इस प्रतिमा का धारी जीव-दया के लिए फल, अप्रासुक जल, बीज, पत्र आदि सचित्त वस्तुओं का त्याग कर देता है। वीवच० १८ ६१

सचित्तनिक्षेप—अतिथिसंविभाग व्रत के पाँच अतिचारों में प्रथम अतिचार। हरे पत्तों पर रखकर आहार देना या लेना सचित्त-निक्षेप-अतिचार कहलाता है। हपु० ५८ १८३

सचित्त-सम्मिश्राहार—उपभोगपरिमाणव्रत के पाँच अतिचारों में तीसरा अतिचार। सचित्त से मिश्रित अचित्त वस्तुओं का सेवन करना सचित्तसम्मिश्राहार अतिचार कहलाता है। हपु० ५८ १८२

सचित्त-सम्बन्धाहार—उपभोगपरिमाणव्रत के पाँच अतिचारों में दूसरा अतिचार। सचित्त वस्तुओं से सम्बन्ध रखनेवाले आहारपान का सेवन करना सचित्तसम्बन्धाहार अतिचार कहलाता है। हपु० ५८ १८२

सचित्ताचित्तवस्तुत्याग—परिग्रहत्याग व्रत की पाँच भावनाएँ-पाँचों इन्द्रियों की विषयभूत सचित्त (चेतन) और अचित्त (अचेतन) वस्तुओं में आसक्ति का त्याग करना। मपु० २० १६५

सचित्तावरण—अतिथिसंविभागव्रत के पाँच अतिचारों में दूसरा अतिचार। हरे पत्तों आदि सचित्त वस्तुओं से ढककर आहार देना या लेना सचित्तावरण अतिचार कहलाता है। हपु० ५८.१८३

सचित्ताहार—उपभोगपरिमाणव्रत के पाँच अतिचारों में प्रथम अतिचार—हरी वनस्पति आदि सचित्त वस्तुओं का आहार। हपु० ५८ १८२

सज्जातिक्रिया—परम निर्वाण के सात स्थानों में प्रथम स्थान और भव्य प्राणी के ही होने योग्य गर्भान्वय क्रियाओं में कल्याणकारिणी प्रथम क्रिया सम्कार। पिता के वंश की शुद्धि कुल और माता के वंश की शुद्धि जाति है तथा कुल और जाति दोनों की शुद्धि सज्जाति कहलाती है। यह शुभकृत्य करने से प्राप्त होती है। इष्ट पदार्थों की सिद्धि इसका फल है। मपु० ३८ ६७, ३९ ८१-८६

सत्—(१) सत् आदि आठ अनुयोगद्वारों में प्रथम अनुयोग द्वार। इसके द्वारा जीवादि द्रव्यों का निरूपण किया जाता है। हपु० २ १०८

(२) उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त द्रव्य। हपु० २ १०८

सत्कारपुरस्कारपरीषहजय—एक परीषह। इसमें पूजा, प्रशंसा, आमन्त्रण आदर आदि के न होने पर हृदय में कुविचारों को स्थान नहीं रहता। सत्कार और पुरस्कार के होने अथवा नहीं होने में हर्ष-विषाद नहीं किया जाता है। मपु० ३६.१२६

सत्कीर्ति—दूसरे बलभद्र विजय के गुरु। पपु० २० २४६

सत्पुरुष—किन्नर आदि व्यन्तर देवों के सोलह इन्द्रों में तीसरा इन्द्र। वीवच० १४ ५९

सत्यंधर—हेमांगद देश के राजपुर नगर का राजा। इसकी रानी विजया और मन्त्री काष्ठांगारिक था। इसके पुरोहित ने राजपुत्र को मन्त्री का हन्ता बताया था, जिससे मन्त्री ने कुपित होकर इसे मार डाला था और स्वयं इसके राज्य का स्वामी हो गया था। इसने रानी को गुप्त रूप से यन्त्र में बैठाकर महल से बाहर भेज दिया था। यन्त्र उड़कर नगर के बाहर श्मशान में नीचे उतरा। रानी ने वहाँ एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र का नाम जीवंधर रखा गया था। इस राजा की भामारति और अनंगपताका दो छोटी रानियाँ और थी। इन रानियों से क्रमशः मधुर और बकुल दो पुत्र हुए थे। अन्त में इसके पुत्र जीवन्धर ने मन्त्री काष्ठांगारिक को मारकर अपना राज्य प्राप्त कर लिया था। मपु० ७५ १८८-१९०, २१४-२२९, २४३, २५४-२५५, ६६६-६७१

सत्य—(१) विद्यमान या अविद्यमान वस्तु का निरूपण करनेवाला प्राणि-हितैषी वचन। ये वचन दस प्रकार के होते हैं—१ नाम सत्य २ रूपसत्य ३ स्थापना सत्य ४ प्रतीत्यसत्य ५ संवृतिसत्य ६. संयोजनासत्य ७ जनपदसत्य ८ देशसत्य ९ भावसत्य और १०. समयसत्य। हपु० १० ९८-१०७, १२०

(२) उत्तम क्षमा आदि रूप में कहे गये दस धर्मों में एक धर्म।

सत्यवीर्य—तीसरे तीर्थकर सभवनाथ से धर्म सबधी प्रश्न करनेवालो में श्रेष्ठ श्रावक । मपु० ७६ ५२९

सत्यवेद—तीर्थङ्कर वृषभदेव के चालीसवें गणधर । हपु० १२ ६२

सत्यशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७५

सत्यश्री—वेलन्धर नगर के राजा विद्याधर समुद्र की पुत्री । इसे लक्ष्मण ने विवाहा था। पपु० ५४ ६५, ६८-६९

सत्यसंध—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पचपनवाँ पुत्र । पापु० ८ १९९

सत्यसंधान—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७५

सत्यसत्त्व—जरासन्ध के अनेक पुत्रो में इस नाम एक पुत्र । हपु० ५२ ३२

सत्याणुव्रत—अहिंसा आदि पाँच अणुव्रतो में दूसरा अणुव्रत, राग, द्वेष और मोह (अज्ञान) से प्रेरित होकर परपीडाकारी असत्य वचन का त्याग करके हितकारी सारभूत सत्य वचन बोलना सत्याणुव्रत है । हपु० ५८ १३९, वीवच० १८ ४०

सत्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७५

सत्याशी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७५

सत्त्ववान्—एक राजा । इसने भरत के साथ दीक्षा ले ली थी । पपु० ८८ १-२, ५

सत्त्वहित—एक मुनि । इन्होने विद्याधर चन्द्रप्रतिम को विशल्या का चरित्र सुनाया था । पपु० ६४ २४, ४८-४९

सवनपद्मा—राक्षस वश के राजा राक्षस की पुत्र-वधू । यह आदित्यगति की पत्नी थी । पपु० ५ ३७८-३८१,दे० आदित्यगति

सदागति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदातृप्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदाभावी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८८

सदाभोग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५.१७७

सदायोग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदार्चनपूजा—नित्यमहपूजा । घर से प्रतिदिन गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि द्रव्य ले जाकर जिनालय में जिनेन्द्र की पूजा करना तथा मन्दिर आदि का भक्तिपूर्वक निर्माण कराकर वहाँ अर्हन्त-प्रतिमा की स्थापना कराना और पूजा आदि की व्यवस्था के लिए दान-पत्र लिखकर ग्राम, क्षेत्र आदि देना । मपु० ३८.२६-२८ ।

सदाविद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदाशिव—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदाश्रय—एक राजा । इसने भरत के साथ दीक्षा ली थी । पपु० ८८ १-२, ४

सदासौख्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सदोदय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १७७

सद्वृत्त—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर । यहाँ चार करोड द्रव्य का स्वामी भावन वणिक् रहता था । पपु० ५ ९६

सद्गृहमेधि-धर्म—गृहस्थ-धर्म । दान, पूजा, शील और प्रोषध—ये चार कार्य करना सद्गृहस्थ का धर्म है । चक्रवर्ती भरतेश ने इनके छ धर्म बताये है । वे हैं—इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, सयम और तप । मपु० ८ १७३, ३८.२४, ४१.१०४, दे० गृहस्थधर्म

सद्गृहित्व—सात परमस्थानो में दूसरा परमस्थान । सज्जाति परमस्थान को प्राप्त करने के पश्चात् गृहस्थ का देव पूजा आदि छ कर्मों का करना, सत्य, शौच, शान्ति, दम आदि गुणो से युक्त होना तथा न्यायमार्ग से अपने आत्मा के गुणो का उत्कर्ष प्रकट करना सद्गृहित्व परमस्थान कहलाता है । मपु० ३८ ६७-६८, ३९ ९९-१०७, १२५, १५४

सद्भद्रिलपुर—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर । यहाँ का राजा मेघरथ था । हपु० १८ ११२

सद्योजात—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ ७८, १९६

सद्वेद्यास्रव—सातावेदनीय कर्म के आस्रव । यह समस्त प्राणियो पर दया करना, व्रती जनो पर अनुराग रखना, सरागसयम का पालन करना, दान, क्षमा, शौच, अर्हन्त की पूजा और बाल तथा वृद्ध तपस्वियो की वैयावृत्ति आदि से होता है । हपु० ५८ ९५

सधनंजय—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का पैंतालीसवाँ नगर । मपु० १९ ८४, ८७

सनत्कुमार—(१) सोलह स्वर्गों में तीसरा स्वर्ग । मपु० ६७ १४६, ७४ ७५, हपु० ६ ३६

(२) अकृत्रिम चैत्यालयो की प्रतिमाओ के समीप स्थित यक्ष । हपु० ५ ३६३

(३) अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न बारह चक्रवर्तियो में चौथा चक्रवर्ती । यह अयोध्या नगरी के राजा अनन्तवीर्य और रानी सहदेवी का पुत्र था । इसकी आयु तीन लाख वर्ष की थी । इसने कुमारकाल में पचास हजार वर्ष, मण्डलीक अवस्था में पचास हजार वर्ष, दिग्विजय में दस हजार वर्ष, चक्रवर्ती अवस्था में नब्बे हजार वर्ष और एक लाख वर्ष सयम अवस्था में विताये थे । इसने देवकुमार नामक पुत्र को राज्य देकर शिवगुप्त मुनि से दीक्षा ली थी तथा कर्म नाश कर मोक्ष प्राप्त किया था । पद्मपुराण में इसकी इस प्रकार कथा दी गई है । सौधर्मेन्द्र ने अपनी सभा में इसके रूप की प्रशसा की थी, जिसे सुनकर दो देव इसके रूप को देखने आये थे । उन्होने इसे धूल-धूसरित अवस्था में स्नान के लिए तैयार कलशो के बीच बैठा देखा । दोनो देव मुग्ध हुए । जब इसे ज्ञात हुआ कि देव उसका रूप देखने आये हैं, इसने वस्त्राभूषणो से सुसज्जित होने के पश्चात् सिंहासन पर देखने के लिए देवो से आग्रह किया । देवो ने इसे सिंहासन पर बैठा देखा । उन्हें प्रथम दर्शन में जो शोभा दिखाई दी थी वह इस दर्शन में दिखाई नही दी । इन देवो से लक्ष्मी एव भोगोपभोगों की क्षणभगुरता जानकर इसका

राग छूट गया और इसने मुनिदीक्षा लेकर तप किया। इसे अनेक रोग भी हुए, किन्तु यह रोग जनित वेदना शान्ति से सहता रहा। अन्त में आत्मध्यान के प्रभाव से सनत्कुमार स्वर्ग में देव हुआ। पूर्वभवों में यह गोवर्द्धन ग्राम का निवासी हेमबाहु था। महापूजा की अनुमोदना से यक्ष हुआ। सम्यग्दर्शन से सम्पन्न होने तथा जिन वन्दना करने से तीन बार मनुष्य हुआ, देव हुआ और इसके पश्चात् महापुरी नगरी का धर्मरुचि नाम का राजा हुआ। मुनि होकर मरने से माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर चक्रवर्ती सनत्कुमार हुआ। मपु० ६१ १०४-१०६, ११८, १२७-१२९, पपु० २० १३७-१६३, हपु० ४५ १६, ६० २८६, ५०३-५०४, वीवच० १८ १०१, १०९

(४) सनत्कुमार स्वर्ग का इन्द्र। मपु० १३ ६२

सनर्त—एक देश। लवणांकुश और मदनांकुश ने इस पर विजय की थी। पपु० १०१ ८३

सनातन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०५

सनातनधर्म—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और निष्परिग्रहता ये पाँच व्रत। मपु० ५ २३

सनिकाचित—अग्रायणीयपूर्व संबंधी चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारों में इक्कीसवाँ योगद्वार। हपु० १० ८५ दे० अग्रायणीयपूर्व

सन्ताप—वानरवंश का एक प्रधान राजा। इसने राक्षस वंश के राजा मारीच के साथ युद्ध किया था, जिसमें इसे पराजित होना पड़ा था। पपु० ६० ६, ८, १०

सन्तोष-भक्तपान—अचौर्यव्रत की पाँच भावनाओं में पाँचवीं भावना प्राप्त हुई भोजन-पान सामग्री में संतोष धारण करना। मपु० २० १६३ दे० अचौर्य

सन्देहपारग—महेन्द्र नगर के राजा महेन्द्र का मंत्री। इसने राजा की पुत्री अंजना के लिए विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित आदित्यपुर नगर के राजा महेन्द्र के पुत्र पवनंजय का नाम विवाह हेतु प्रस्तावित किया था। पपु० १५ ६-७, १४-१६, ४२-५२

सन्ध्याक्ष—रावण का एक सामन्त। यह सिंहवाही रथ पर बैठकर राम की सेना से युद्ध करने लंका से बाहर निकला था। पपु० ५७ ४७

सन्ध्यावली—रावण की रानी। पपु० ७७ १५

सन्ध्याभ्रबभ्रु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१९८

सन्ध्यावर्त—लंका का एक पर्वत। राजा मय की सेना ने इस पर्वत के समीप एक महल के पास आकाश से उतरकर विश्राम किया था। पपु० ८ २४-२८

सन्नीरा—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश ने ससैन्य यहाँ पड़ाव डाला था। मपु० २९ ८६

सन्मति—(१) प्रतिश्रुति कुलकर का पुत्र दूसरा कुलकर। इनकी आयु अमम-काल के बराबर संख्यात वर्षों की थी। शरीर एक हजार तीन सौ धनुष ऊँचा था। इनके समय में ज्योतिरंग कल्पवृक्षों की प्रभा मन्द पड़ गई थी। आकाश में सूर्य चन्द्र तारे और नक्षत्र दिखाई देने लगे थे। इन्होंने प्रजा को सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, ग्रहों का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना, दिन और अयन आदि का संक्रमण बतलाते हुए ज्योतिष विद्या की मूल बातें बताई थीं। ये तीसरे मनु क्षेमंकर को राज्य देकर स्वर्ग गये। मपु० ३ ७७-८९, पपु० ३ ७७, हपु० ७ १४८-१५०, पापु० २ १०५

(२) तीर्थंकर वर्द्धमान का अपर नाम। संजय और विजय नामक चारणऋद्धिधारियों ने अपना उत्पन्न सन्देह वर्द्धमान को देखते ही दूर हो जाने से प्रसन्न होकर वर्द्धमान का यह नाम रखा था। मपु० ७४ २८२-२८३, पापु १ ११६ दे० महावीर

सन्मार्ग—संसार से पार करनेवाला सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप मोक्षमार्ग। मपु० ६२ ३२०

सपाणि—तालगत गान्धर्व का एक भेद। हपु० १९ १५१

सप्तगोदावर—भरतक्षेत्र का एक तीर्थ। यहाँ गोदावरी नदी सात धाराओं में विभाजित है। चक्रवर्ती भरतेश का सेनापति यहाँ से मानस सरोवर गया था। मपु० २९ ८५

सप्तच्छद—सात पत्रों के स्तवकों से युक्त—एक वृक्ष। तीर्थंकर धर्मनाथ को इसी वृक्ष के नीचे केवलज्ञान हुआ था। अपर नाम सप्तपर्ण। मपु० ६१ ४२

सप्तपरमस्थान—तीनों लोकों में मान्य सात उत्कृष्ट स्थान। वे हैं—सज्जाति, सद्गृहित्व, पारिव्राज्य, सुरेन्द्रता, साम्राज्य, परमार्हन्त्य और परमनिर्वाण। मपु० ३८ ६७-६८

सप्तपर्ण—(१) प्रत्येक गाँठ पर सात-सात पत्तों को धारण करनेवाले वृक्षों का समवसरण में एक उद्यान। मपु० २२ १९९-२०४

(२) समवसरण में सप्तपर्ण वन के मध्य रहनेवाला एक चैत्यवृक्ष। इसके मूलभाग में जिन प्रतिमाएँ विराजमान होती हैं। तीर्थंकर अजितनाथ ने इसी वृक्ष के नीचे मुनि दीक्षा ली थी। मपु० २२. २००-२०४, पपु० २०.३८

(३) सप्तपर्णपुर का निवासी एक देव। हपु० ५ ४२७

(४) संख्यात द्वीपों के पश्चात् जम्बूद्वीप के समान दूसरे जम्बूद्वीप का एक वन। हपु० ५ ३९७-४२२

सप्तपर्णपुर—सप्तपर्ण वन की पूर्व-दक्षिण दिशा में स्थित एक नगर। यहाँ सप्तपर्ण नामक देव रहता है। हपु० ५ ४२७

सप्तपारा—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६५

सप्तप्रकृति—(१) राजा की सात प्रकृतियाँ। वे हैं—स्वामी, मन्त्री, देश, कोष, दण्ड, गढ़ और मित्र। मपु० ६८ ७२

(२) सात प्रकृतियाँ-अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ तथा मिथ्यात्व, सम्यक्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व प्रकृति। इनके क्षय से क्षायिक और उपशम से औपशमिक सम्यग्दर्शन होता है। मपु० ६२ ३१७

सप्तभंगी—सात भंगों का समूह। वे सात भंग इस प्रकार हैं—स्यादस्ति, स्यान्नास्ति, स्यादस्तिनास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यादस्तिअवक्तव्य, स्या-

न्नास्ति अवक्तव्य और स्यादस्ति-नास्ति अवक्तव्य। इन भंगो के द्वारा पदार्थोंके अनेकान्तिक स्वरूप का समग्रदृष्टि से विवेचन होता है। मपु० ३३ १३५-१३६

सप्तभूमि—अधोलोक में स्थित सात नरकभूमियाँ। वे हैं—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तम प्रभा और महातम प्रभा। पपु० १०५ ११०-११२

सप्तरत्न—नारायण को प्राप्त होनेवाले सात रत्न। वे हैं—धनुष, शख, चक्र, दण्ड, असि, शक्ति और गदा। पद्मपुराण में इनके निम्न नाम दिए हैं—चक्र, छत्र, धनुष, शक्ति, गदा, मणि और खड्ग। मपु० ५७ ९२, ६२ १४८, ७१ १२४, पपु० ९४ १०-११

सप्तर्षि—प्रभासपुर नगर के राजा श्रीनन्दन और रानी धरणी के इस नाम से विख्यात सात पुत्र। वे हैं—सुरमन्यु, श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्व-सुन्दर, जयवान्, विनयलालस और ज्यमित्र। प्रीतिंकर महाराजा को केवलज्ञान होने पर देवो के आगमन से ये सातो भाई प्रतिबुद्ध हुए थे तथा पिता सहित सातो भाईयो ने दीक्षा ले ली थी। उत्तम तप के कारण ये ही सातो भाई 'सप्तर्षि' नाम से प्रसिद्ध हुए। मथुरा में चमरेन्द्र द्वारा फैलाई गई महामारी इन्ही के प्रभाव से शान्त हुई थी। पपु० ९२ १-१४

सप्तसप्तमतप—एक प्रकार का तप। इसमें पहले दिन उपवास और इसके बाद एक-एक ग्रास बढाते हुए आठवें दिन सात ग्रास आहार लेने के पश्चात् इसके विपरीत एक-एक ग्रास घटाते हुए अन्तिम सोलहवें दिन उपवास किया जाता है। यह क्रिया इस तप में सात बार की जाती है। हपु० ३४ ९१

सबल—दुर्योधन की सेना का एक योद्धा। यह चित्राग द्वारा युद्ध में मारा गया था। पापु० १७.९०-९१

सभा—सत्ताईस सूत्रपदो मे इक्कीसवाँ सूत्रपद। जो मुनि अपने इष्ट सेवक तथा भाई की सभा का परित्याग करता है वह अर्हन्त पद की प्राप्ति होने पर तीन लोक की सभा-समवसरण भूमि में विराजमान होता है। मपु० ३९ १६५, १९०

समजस—राजा का एक भेद। मध्यस्थ रहकर निष्पक्ष भाव से मित्र और शत्रु सभी को निरपराधी बनाने की इच्छा से सब पर समान दृष्टि रखनेवाला राजा। मपु० ४२ २००-२०१

समजसत्व—राजा का एक गुण। यह गुण जिस राजा में होता है वह दुष्ट पुरुषो का निग्रह और शिष्ट पुरुषों का अनुग्रह करता है। पक्षपात रहित होकर सबको समान मानता है। निग्रह करने योग्य शत्रु और मित्र दोनो का समान रूप से निग्रह करता है और इस प्रकार इष्ट और दुष्ट दोनो को निरपराधी बनाने की इच्छा करता है। मध्यस्थ रहना उसे इष्ट लगता है। मपु० ३८ २८१, ४२ १९८-२०१

समगिरि—राजा वसु के पूर्ववर्ती हरिवशी चार राजाओ में एक राजा। मपु० ६७ ४२०

समग्रधी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १५०

समचतुरस्रसंस्थान—नाम कर्म का एक भेद। इसी से सुन्दर शरीर-रचना होती है। इससे शरीर की लम्बाई-चौडाई और ऊँचाई हीनाधिक नही होती, समविभक्त होती है। चारो ओर से मनोहर, अगोपागों का समान विभाजन इसी से होता है। मपु० १५ ३३, ३७ २८, हपु० ८ १७५

समतोया—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६२

समन्तभद्र—(१) आचार्य सिद्धसेन का उत्तरवर्ती एक आचार्य। ये जीव-सिद्धि और युक्त्यनुशासन ग्रन्थों के रचयिता थे। देवागम स्तोत्र भी इन्ही ने बनाया था। ये महान् कवि भी थे। मपु० १ ४३-४४, हपु० १ २९, पापु० १ १५

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१६

समन्तानुपातिनी—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में चौदहवी दुष्क्रिया-स्त्री-पुरुषो और पशुओ के मिलने जुलने आदि के योग्य स्थान पर मल-मूत्रादि का छोडना। हपु० ५८ ७१

समभिरूढनय—एक व्यक्ति अथवा वस्तु के लिए प्रयुक्त पर्यायवाची शब्दो के अर्थ भेद को स्वीकार करना। हपु० ५८ ४८

समभूर्द्धाग्निनाद—सातवें नारायण दत्त के पिता। पपु० २० २२४

समय—(१) यह कारणभूत कालाणुओ से उत्पन्न होता है। सर्व जघन्य गति से गमन करता हुआ परमाणु जितने समय में अपने पूर्व प्रदेश से उत्तरवर्ती प्रदेश पर पहुँचता है उतने काल को समय कहा है। यह अविभाज्य होता है। मपु० ३ १२, हपु० ७ ११, १७-१८

(२) श्रावक की दीक्षा। यह शास्त्र के अनुसार गोत्र, जाति आदि के दूसरे नाम धारण करने के लिए दी जाती है। मपु० ३९ ५६

समयज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८४

समयसत्य—सत्य वचन के दस भेदो में एक भेद-द्रव्य तथा पर्याय के भेदो को यथार्थता को प्रकट करनेवाला तथा आगम के अर्थ का पोषण करनेवाला वचन। हपु० १० १०७

समरथ—समान शक्ति के धारक राजाओ की एक सज्ञा। हपु० ५० ८२

समवसरण—तीर्थंकरो की सभाभूमि। यहाँ सुर और असुर आदि आकर तीर्थंकरो की दिव्यध्वनि का श्रवण करते हैं। यहाँ अन्य केवली आदि के उपदेश देने का स्थान भी होता है। महोदयमण्डप में श्रुतकेवली श्रुत का व्याख्यान करते है। इस मण्डप के आधे विस्तारवाले चार परिवार मण्डप यहाँ और होते हैं जिनमें कथा कहनेवाले आक्षेपिणी आदि कथाएँ कहते है। इन मण्डपों के समीप में अन्य ऐसे स्थान यहाँ बने होते है जहाँ केवलज्ञान आदि महाऋद्धियो के धारक ऋषि इच्छुक जनो के लिए उनकी इष्ट वस्तुओ का निरूपण करते हैं। यहाँ भव्यकूट नाम के ऐसे स्तूप भी होते है जिन्हें अभव्य नही देख पाते। मपु० ३३ ७३, हपु० ७ १-१६१, ५७ ८६-८९, १०४, पापु० २२ ६०-६६, दे० आस्थानमण्डल

समवायांग—द्वादशांग-श्रुत का चौथा अग। इसमें एक लाख चौंसठ हजार पद हैं। मपु० ३४.१३८, हपु० २.९२, १० ३०

समाकृष्टि—रावण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३२८

समाध—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का छठा पुत्र । पापु० ८.१९३

समादानक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में चौथी क्रिया-संयमी पुरुष का असंयम की ओर सम्मुख होना । यह प्रमा-वर्धक होती है । हपु० ५८ ६४

समाद्र—एक देश । पपु० २४ २६

समाद्रा—समाद्र देश की लिपि । कैकया को इस लिपि का ज्ञान था । पपु० २४ २६

समाधि—(१) उत्तम परिणामों में चित्त स्थिर रखना अथवा पंच पर-मेष्ठी का स्मरण करना । मपु० २१ २२६

(२) समाधिमरण । इसमें शरीर की ममता छोड़कर देह का विसर्जन किया जाता है । ऐसा मरण करनेवाला जीव उत्तम गति पाता है । पपु० २ १८९, १४ २०३-२०४, ८९ ११२-११५, हपु० ४९ ३०

समाधिगुप्त—(१) आगामी अठारहवें तीर्थंकर । मपु० ७६ ४८०, हपु० ६०.५६१

(२) एक मुनि । लक्ष्मीमती इन्हीं मुनि की निन्दा के फलस्वरूप मरकर रासभी हुई थी । हपु० ६०.२६-३१

(३) एक मुनि । क्षेमपुरी नगरी के राजपुत्र श्रीचन्द्र ने इन्हीं से मुनिदीक्षा ली थी । पपु० १०६.७५, ८१,११०

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काशी देश की वाराणसी नगरी के पद्मनाथ के पुत्र पद्म के दीक्षागुरु । खदिरसार भील ने कौए के मास-त्याग का नियम इन्हीं से लिया था । मपु० ६६ ७६-७७, ९३-९५, ७४ ३८९-४१८, वीवच० १९ ९६-१०८

(५) विदेहक्षेत्र के एक मुनि । रश्मिवेग ने इन्हीं मुनिराज के पास दीक्षा धारण की थी । मपु० ७३.२५-२८

समाधिबहुल—राम का एक सामन्त । यह सिंहवाहीरथ पर बैठकर ससैन्य बाहर निकला था । पपु० ५८ १०

समानदत्ति—चतुर्विधदत्ति का एक भेद । क्रिया, मंत्र और व्रत आदि से जो अपने समान हैं तथा जो संसार से उद्धार करनेवाले हैं उन्हें पृथिवी, स्वर्ण आदि समान बुद्धि से श्रद्धा के साथ दान देना समान-दत्ति है । मपु० ३८.३८-३९ दे० दत्ति

समारम्भ—कार्य के लिए साधन जुटाना । हपु० ५८ ८५

समावृष्टि—वर्षा का एक भेद । बीच-बीच में धूप प्रकट करते हुए मेघों का साठ दिन तक बरसना । मपु० ५८ २७

समासवर्ष—तेरह वर्ष का समय । हपु० १६ ६४

समाहित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८४

समिति—मुनि चर्या । यह पाँच प्रकार की होती है–ईर्या, भाषा, एषणा, आदान-निक्षेपण और प्रतिष्ठापना । हपु० २ १२२-१२६

समिधा—राजगृह नगर के श्रावक विनोद की पत्नी । इसके दुराचरणी होने से इसके साथ सद्भावपूर्ण वार्तालाप करने पर भी इसका देवर रमण भ्रान्तिजन्य क्रोध से अपने भाई विनोद के द्वारा मारा गया था । पपु० ८५ ७४-७६

समीरणगति—वानरवंशी एक राजा । यह मन्दर का पुत्र और रविप्रभ का पिता था । पपु० ६ १६१

समीरप्रभ—हनुमान । रावण ने चन्द्रनखा की पुत्री अनंगपुष्पा इसे समर्पित की थी । पपु० १९.१०१

समुच्चय—लंका में प्रमद पर्वत के चारों ओर स्थित एक उद्यान । यह विलासियों की क्रीडाभूमि थी । पपु० ४६ १४१, १४५,१४९

समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति—चौथा शुक्लध्यान । इसमें आत्म-प्रदेशों के परिस्पन्दन रूप योगों का तथा काय बल आदि प्राणों का समुच्छिन्न हो जाता है । इस ध्यान में किसी भी प्रकार का आस्रव नहीं होता । यह अन्तर्मुहूर्त समय के लिए होता है परन्तु इतने ही समय में इससे ध्यानी को निर्वाण प्राप्त हो जाता है । मपु० २१ १९६-१९७, ५२ ६७-६८, हपु० ५६ ७७-७८

समुद्घात—मूल शरीर को नहीं छोड़ते हुए आत्म प्रदेशों का बाहर निकलना । यह सात प्रकार का होता है–१ वेदना २ कषाय ३ वैक्रियिक ४ मारणान्तिक ५ तैजस ६. आहारक और ७ केवलि । इन सातों में आदि के चार सभी आत्माओं के तथा अन्त के तीन योगियों के होते हैं । यह तीनों योगों का निरोध करने के लिए किया जाता है । इसमें आत्मा के प्रदेश पहले समय में चौदह राजू ऊँचे दण्डाकार होते हैं । दूसरे समय में कपाट के आकार, तीसरे समय में प्रतररूप और चौथे समय में समस्त लोकाकाश में भर जाते हैं । मपु० २१ १८९-१९०, वीवच० १६.१०९-११०

समुद्र—(१) विद्याधर अमररक्ष के पुत्रों के द्वारा बसाये गये दस नगरों में एक नगर । पपु० ५ ३७१

(२) वेलन्धर नगर का स्वामी एक विद्याधर । राजा नल ने इसे युद्ध में बाँध लिया था । अन्त में राम का आज्ञाकारी होने पर इसे ससम्मान उसी नगर का राजा बनाया गया था । इसकी सत्यश्री, कमला, गुणमाला और रत्नचूला नाम की चार कन्याएँ थीं, जिन्हें इसने लक्ष्मण को दी थीं । पपु० ५४ ६५-६९

(३) अयोध्या एक सेठ । इसकी स्त्री का नाम धारिणी था । पूर्णभद्र और कांचनभद्र इसके दो पुत्र थे । पपु० १०९ १२९-१३० दे० समुद्रदत्त

समुद्रक—भरतक्षेत्र का एक देश । इसका निर्माण वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा किया गया था । मपु० १६ १५२

समुद्रगुप्त—एक मुनि । अयोध्या नगर के राजपुत्र आनन्द ने इन्हीं से मुनिदीक्षा ली थी । मपु० ७३ ४१-४३, ६२-६३

समुद्रघोष—एक धनुष । यह लक्ष्मण के पास था । पपु० ४२ ८३

समुद्रदत्त—(१) अयोध्या का एक सेठ । यह पूर्णभद्र और मणिभद्र का पिता था । हपु० ४३ १४८-१४९ दे० समुद्र-३

(२) एक मुनि । ये आराधनाओं की आराधना कर छठे ग्रैवेयक के सुविशाल नामक विमान में अहमिन्द्र हुए थे । हपु० १८ १०५, १०८

(३) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का एक सेठ । यह इस नगर के राज सेठ कुबेरमित्र की स्त्री

धनश्री का भाई था। कुबेरमित्र से अपनी बहिन कुबेरमित्रा इसे विवाही थी। इसके प्रियदत्ता आदि बत्तीस कन्याएँ थी। मपु० ४६.१९-२०, ४१-४२

(४) पुण्डरीकिणी नगरी के सेठ सागरसेन का दूसरा पुत्र। यह सागरदत्त का छोटा भाई था। इसकी बहिन सागरदत्ता थी जो सेठ वैश्रवणदत्त को विवाही गयी थी और इसका विवाह सर्वदयिता के साथ हुआ था। मपु० ४७.१९५-१९८

समुद्रविजय—(१) बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के पिता। ये शौर्यपुर के राजा अन्धकवृष्णि और सुभद्रा के दस पुत्रों में प्रथम पुत्र थे। शिवदेवी इनकी रानी थी। इनके नौ छोटे भाई थे, जिनमें वसुदेव सबसे छोटे थे। भाइयों के नाम थे—स्तिमितसागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, पूरितार्थीच्छ, अभिनन्दन और वसुदेव। इनके अनेक पुत्र थे जिनमें कुछ मुख्य पुत्रों के नाम निम्न प्रकार हैं—महानेमि, सत्यनेमि, दृढ़नेमि, अरिष्टनेमि, सुनेमि, जयसेन, महीजय, सुफल्गु, तेजसेन, मय, मेघ, शिवनन्द, चित्रक और गौतम आदि। ये अन्त में गजकुमार मुनि का मरण जानकर दीक्षित हो गये थे। विहार करते हुए ये गिरिनार आये और वसुदेव को छोड़ शेष सभी भाइयों सहित इन्होंने मोक्ष प्राप्त किया। मपु० ७० ९५-९८, ७१ ३८, ४५, पपु० २० ५८, हपु० १ ७९, १८ १३, ३१ ३५, ६१ १, ६५ १६

(२) अयोध्या का इक्ष्वाकुवंशी राजा। इसकी रानी सुबाला थी। चक्रवर्ती सगर के ये पिता थे। मपु० ४८ ७१-७२

समुद्रसंगम—कुन्दनगर का निवासी एक वैश्य। इसकी स्त्री यमुना और विद्युदंग पुत्र था। पपु० ३३ १४३-१४४

समुद्रसेन—(१) वस्वौकसार नगर का एक विद्याधर राजा, जिसकी रानी जयसेना और पुत्री वसुन्धरा थी। मपु० ६२ ११८-११९

(२) एक मुनि। गौतम ब्राह्मण आहार के लिए जाते हुए इन्हीं मुनि के पीछे लग गया था। सेठ वैश्रवण के यहाँ दोनों के आहार हुए। गौतम ने आहार करने के पश्चात् इन मुनि से दीक्षा देने की प्रार्थना की थी। फलस्वरूप इन्हीं मुनिराज ने उसे संयम ग्रहण करा दिया था। आयु के अन्त में ये मुनि मध्यम ग्रैवेयक के सुविशाल नाम के उपरितन विमान में अहमिन्द्र हुए और यह गौतम भी इसी विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ७० १६०-१७९ दे० गौतम-२

समुद्रहृदय—राजा दशरथ की मृत्यु का कारण जाननेवाला एक मंत्री। राजा दशरथ इसे ही देश, खजाना, नगर और प्रजा को सौंपकर नगर से निकले थे तथा इसने राजा का पुतला बनाकर सिंहासन पर विराजमान करके राजा को मरण से बचाया था। पपु० २३ २४-२७, ३६-४४ दे० दशरथ

समुन्नतबल—राम का एक योद्धा विद्याधर-कुमार। यह बहुरूपिणी विद्या के साधक रावण को कुपित करने के लिए लंका गया था। पपु० ७० १७

समुन्मूलितकर्मारि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१४

सम्मद—ब्राह्मण [illegible] का [illegible]। हपु० ६० [illegible]

सम्मूर्च्छन—जीवों के जन्म का एक प्रकार। गर्भ और उपपाद जन्मवाले जीवों को छोड़कर शेष जीवों का सम्मूर्च्छन जन्म होता है। पपु० १०५ १५०-१५२

सम्मेद—वृषभ, वासुपूज्य, नेमि और महावीर को छोड़कर शेष बीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि। मपु० ४८ ५२-५३, ४९ ५५-५६, ५०. ६५, ५१ ८८, ५२ ६६, ५३ ५२, ५४ २६९-२७०, ५५ ५८ ५६ ५३-५८, ५७ ६०-६२, ५९ [illegible], ६० [illegible], ६१ ५१-५२, ६३ [illegible], ६४ ५१-५२, ६५ ४५-४६ ६६ ६२-६३, ६७. [illegible] ६९ ६७-६९ ७२ [illegible], हपु० ६० [illegible]

सम्यक्चारित्र—सम्यग्ज्ञान सहित शुभ क्रियाओं में प्रवृत्ति। इससे समताभाव प्रकट होता है। इसमें पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्तियों का पालन होने से यह तेरह प्रकार का होता है। ऐसा चारित्र समस्त कर्मों का काटनेवाला होता है। इसमें मुनियों के लिए तपस्वियों से सहित तथा श्रद्धा आदि गुणों से सहित दान दिया जाता है तथा विनय, नियम, शील, ज्ञान, दया, दम और मोक्ष के लिए ध्यान किया जाता है। यह सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान के अभाव में कार्यकारी नहीं होता। सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान इसके बिना भी हो जाते हैं किन्तु इसके लिए उन दोनों की आवश्यकता होती है। ऐसा चारित्र निर्ग्रन्थ साधुओं मुनि धारण करते हैं। मपु० २४ ११९-१२२, ७४ ५४२, पपु० १०५ २११-२२२, हपु० १० १५७, पापु० २३ ६२

सम्यक्त्व—प्रमाण के द्वारा जाने हुए पदार्थों का श्रद्धान। इसी से मिथ्यात्व का नाश होता है। यह औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक के भेद से तीन प्रकार का होता है। रुचि के भेद से इसके दस भेद भी होते हैं—आज्ञा, मार्ग, उपदेशोत्थ, सूत्रसमुद्भव, बीजसमुद्भव, सक्षेपज, विस्तारज, अर्थज, अवगाढ़ और परमावगाढ़। यह निसर्गज और अधिगमज इन दो प्रकारों का भी होता है। यह दर्शनमोह के क्षय, उपशम तथा क्षयोपशम से होता है। इसकी प्राप्ति के लिए देवमूढ़ता, लोकमूढ़ता और पाखण्डिमूढ़ता का त्याग कर निःशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढ़दृष्टि, उपगूहन, वात्सल्य, स्थितिकरण और प्रभावना ये आठ अंग धारण किये जाते हैं। प्रशम, संवेग, आस्तिक्य और अनुकम्पा ये चार इसके गुण तथा श्रद्धा रुचि, स्पर्श और प्रत्यय इसके पर्याय (अपरनाम) हैं। तीन मूढ़ता, आठ मद, छः अनायतन और शंकादि आठ दोषों सहित इसमें पच्चीस दोषों का त्याग किया जाता है। प्रशम, संवेग, स्थिरता, अमूढ़ता, गर्व न करना, आस्तिक्य और अनुकम्पा ये सात इसकी भावनाएँ हैं। इन भावनाओं से इसे शुद्ध रखा जाता है। शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, अन्य दृष्टि-प्रशंसा और दोषारोपण करना ये पाँच इसके अतिचार हैं। यह देशना, काललब्धि आदि बहिरंग कारण तथा करणलब्धि रूप अन्तरंग कारणों के होने पर ही भव्य प्राणियों को प्राप्त होता है। ज्ञान और चारित्र का यह बीज है। इसी से ज्ञान

और चारित्र सम्यक् होते हैं। यह मोक्ष का प्रथम सोपान है। जो पाँचों अतिचारों से दूर हैं वे गृहस्थों में प्रधान पद पाते हैं। वे उत्कृष्टतः सात-आठ भवों में और जघन्य रूप से दो-तीन भवों में मुक्त हो जाते हैं। इस प्रकार सच्चे देव, शास्त्र और समीचीन पदार्थों का प्रसन्नतापूर्वक श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन कहलाता है। मपु० ९ ११६, १२२-१२४, १३१, २१.९७, २४ ११७, ४७ ३०४-३०५, ७४ ३३९-३४०, पपु० १४.२१७-२१८, १८ ४९-५०, ४७ १०, ५८ २०, पापु० २३ ६१, वीवच० १८ ११-१२, १९, १४१-१४२

सम्यक्त्वक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओं में प्रथम क्रिया। शास्त्र, अर्हन्तदेव-प्रतिमा तथा सच्चे गुरु की पूजा-भक्ति आदि करना सम्यक्त्वक्रिया है। इससे सम्यक्त्व की उपलब्धि और पुण्यबन्ध होता है। हपु० ५८ ६१

सम्यक्त्वभावना—सवेग, प्रशम, स्थैर्य, असमूढ़ता, अस्मय, आस्तिक्य और अनुकम्पा ये सात सम्यक्त्व की भावनाएँ हैं। मपु० २१ ९७ दे० सम्यक्त्व

सम्यग्ज्ञान—सम्यग्दर्शन से अज्ञान अन्धकार के नष्ट हो जाने पर उत्पन्न संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय से रहित जीव आदि पदार्थों का विवेचनात्मक ज्ञान। मपु० २४ ११८-१२०, ४७ ३०५-३०७, ७४ ५४१, वीवच० १८.१४-१५

सम्यग्दर्शनभाषा—सत्यप्रवादपूर्व की बारह भाषाओं में ग्यारहवीं भाषा। इससे समीचीन मार्ग का ज्ञान होता है। हपु० १०.९६

सम्यग्दृष्टि—स्वतः अथवा परोपदेश के द्वारा भक्तिपूर्वक तत्त्वार्थ में श्रद्धा रखनेवाला जीव। सम्यग्दृष्टि ही कर्मों की निर्जरा करके संसार से मुक्त होता है। पपु० २६ १०३, १०५ २१२, २४४

सयोगकेवली—चौदह गुणस्थानों में तेरहवाँ गुणस्थान। इस गुणस्थान को प्राप्त जीव सशरीर परमात्मा होता है। हपु० ३ ८३

सयोगी—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८

सर—(१) लंका-द्वीप का एक सुन्दर नगर। श्रीकण्ठ को रहने के लिए बताये गये निरुपद्रव नगरों में यह एक नगर था। पपु० ६ ६७

(२) तीर्थंकरों के गर्भ में आने पर उनकी माता द्वारा रात्रि के अन्तिम पहर में देखे गये सोलह स्वप्नों में दसवाँ स्वप्न-कमल युक्त सरोवर। पपु० २११ २-१४

सरभ—राम का एक योद्धा। रावण की सेना आती हुई देखकर यह व्याघ्ररथ पर आसीन होकर ससैन्य बाहर निकला था। पपु० ५८ ५

सरयू—भरतक्षेत्र की एक नदी। अयोध्या इसी नदी के तट पर स्थित है। नगरवासियों ने राज्याभिषेक के समय तीर्थंकर वृषभदेव के चरणों का इस नदी के जल से अभिषेक किया था। जयकुमार के हाथी को कालीदेवी ने इसी नदी में पकड़ा था। मपु० १४ ६९, १६. २२५, पापु० ३ १६३-१६४

सरल—तीर्थंकर अभिनन्दननाथ का चैत्यवृक्ष। पपु० २० ४७

सरवर—एक आचार्य। ये भार्गवाचार्य की वंश परम्परा में हुए आचार्य जगत्स्थामा के पुत्र और आचार्य शरासन के पिता थे। हपु० ४५ ४६

सरस—मेघ। ये अवसर्पिणी काल के अन्तिम उनचास दिनों में आरम्भ के सात दिन अनवरत बरसते हैं। मपु० ७६ ४५२-४५३

सरसा—दारुग्राम के विमुचि ब्राह्मण की पुत्रवधु। यह अतिभूति की स्त्री थी। पपु० ३० ११६

सरस्वती—(१) जयन्तगिरि के राजा वायु विद्याधर की रानी। रति इसकी पुत्री थी जो प्रद्युम्न को दी गयी थी। हपु० ४७ ४३

(२) एक देवी। यह तीर्थंकर नेमिनाथ के विहार के समय पद्मा देवी के साथ आगे-आगे चलती थी। हपु० ५९ २७

(३) तीर्थंकरों की दिव्यध्वनि। हपु० ५८ ९

(४) मृणालकुण्डलनगर के राजा शम्भु के पुरोहित श्रीभूति की स्त्री। वेदवती की यह जननी थी। पपु० १०६ १३३-१३५, १४१

सरागसंयम—सातावेदनीयकर्म का एक आस्रव। पपु० १४ ४७, हपु० ५८ ९४-९५

सरिता—पूर्वविदेहक्षेत्र के बत्तीस देशों में चौबीसवाँ प्रदेश। वीतशोका नगरी इस देश की राजधानी थी। यह प्रदेश पूर्वविदेह क्षेत्र में सीतोदा नदी और निषध पर्वत के मध्य में स्थित है तथा दक्षिणोत्तर लम्बा है। मपु० ६३ २११, २१६ हपु० ५ २४९-२५०, २६२

सरित्—तीसरे पुष्करवर द्वीप में पश्चिम मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर वर्तमान एक देश। विदेहक्षेत्र के सरिता देश के समान इस देश का मुख्य नगर वीतशोक था। चक्रध्वज यहाँ के राजा थे। मपु० ६२ ३६४-३६५

सर्पबाहु—रावण का एक योद्धा। यह राम रावण युद्ध में अश्ववाही-रथ पर बैठकर बाहर निकला था। पपु० ४७ ५३

सर्पसरोवर—धान्यकमाल नामक वन का एक सरोवर। राजा प्रजापाल का सेनापति शक्तिषेण अपनी पत्नी सहित यहाँ ठहरा था तथा मुनि को आहार देकर उसने पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ४६ १०२, ११३-११४, १३५-१३६

सर्पावर्त—रत्नप्रभा पृथिवी का एक बिल। मपु० ७२ ३१

सर्पिरास्रविणी—एक रस-ऋद्धि। इसके प्रभाव से भोजनालय में घी की न्यूनता नहीं होती। मपु० २ ७२

सर्वजय—विद्याधर विनमि का पुत्र। हपु० २२ १०५

सर्वकल्याणमाला—कूबर नगर के राजा वालिखिल्य की पुत्री। पपु० ८० ११०, दे० कल्याणमाला

सर्वकल्याणी—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित ज्योति-प्रभ नगर के राजा संभिन्न की रानी। दीपशिख इसका पुत्र था। मपु० ६२ २४१-२४२, पापु० ४ १५२-१५३

सर्वकामान्नदा—आठ अक्षरोंवाली एक विद्या। रावण आदि तीनों भाईयों ने एक लाख जप कर इसे आधे ही दिनों में सिद्ध कर लिया था। इससे उन्हें जहाँ-तहाँ मनचाहा अन्न प्राप्त हो जाता था। पपु० ७ २६४-२६५

सर्वकामिक—विजयार्ध पर्वत के कुंजरावर्त नगर का एक उद्यान। वसुदेव को विद्याधरो ने हरकर यही छोड़ा था। हपु० १९ ६७-६८

सर्वक्लेशापह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

सर्वग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९५

सर्वगत—परमर्षियो द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २८,७१

सर्वगन्ध—अरुण समुद्र का रक्षक देव। हपु० ५.६४६

सर्वगुप्त—(१) वृषभदेव के सत्ताईसवें और इकहत्तरवें गणधर। हपु० १२ ५९, ६२

(२) एक मुनि। धान्यपुर नगर के राजा राजगुप्त और रानी शंखिका दोनों ने इनसे जिनगुणख्याति नामक व्रत ग्रहण किया था। मपु० ६३ २४६-२४७

(३) एक केवली मुनि। इनसे प्रीतिंकर ने धर्मोपदेश सुना था। मपु० ५९ ७

(४) काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्धन का मंत्री। इसकी स्त्री विजयावली थी। इसने रात्रि के समय राजमहल में आग लगवा दी थी। राजा सावधान रहता था, अत आग लगते ही स्त्री और पुत्रो को लेकर महल से बाहर निकल गया था। राजा के न रहने पर यही राजा बना था। अन्त में यह काशी के राजा कशिपु द्वारा पकड़ा गया तथा नगर के बाहर बसाया गया। पपु० १०८ ७-३३

सर्वगुप्ति—चौदहवें तीर्थंकर अनन्तनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २८

सर्वजनानन्द—तीर्थंकर शीतलनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २७

सर्वज्ञ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११९

सर्वतोभद्र—(१) नाभिराय का एक भवन। इसमें स्वर्णमय और दीवालें मणियो से निर्मित थी। यह इक्यासी खण्ड का था। कोट, वापिका और उद्यानो से अलकृत था। हपु० ८ ३-४

(२) कृष्ण का महल। इसके अठारह खण्ड थे। हपु० ४१ २७

(३) द्रौपदी की शय्या। हपु० ५४ १५

(४) सुलोचना के स्वयवर हेतु विचित्रागद देव द्वारा बनाया गया प्रासाद। पापु० ३ ४४

(५) एक तप। इसमे पचहत्तर उपवास तथा पच्चीस पारणाएँ की जाती है। उपवास और पारणाएँ निम्न प्रस्तार क्रम से होती हैं—

	१	२	३	४	५	१५
	४	५	१	२	३	१५
	२	३	४	५	१	१५
	५	१	२	३	४	१५
	३	४	५	१	२	१५
कुल	१५	१५	१५	१५	१५	७५

इस प्रस्तार में १ से ५ तक के अंक पक्तियो में इस विधि में अकित हैं कि उनका हर प्रकार से योग १५ ही आता है। पक्तियो में अंकित अंक उपवासो के सूचक और स्थान पारणा के प्रतीक है। मपु० ७ २३, हपु० ३४ ५२-५८

(६) चक्रवर्ती भरतेश के शिविरागार कोट का एक गोपुर। मपु० ३७ १४६

(७) पूजा का एक भेद। मपु० ७३,५८

सर्वत्रग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८८

सर्वद—राम का पक्षधर एक विद्याधर राजा। रावण की सेना आती हुई देखकर यह व्याघ्रवाही रथ पर बैठकर युद्ध करने निकला था। पपु० ५८ ५

सर्वदर्शन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११९

सर्वदयित—विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के सेठ सागरसमुद्र का पुत्र। इसकी बहिन सर्वदयिता थी। इसकी दो स्त्रियाँ थी—सागरसेन की पुत्री जयसेना और धनञ्जय सेठ की पुत्री जयदत्ता। मपु० ४७ १९१-१९४

सर्वदयिता—सेठ समुद्रदत्त की पत्नी। मपु० ४७ १९८ दे० सर्वदयित

सर्ववित्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११९

सर्वदेव—वृषभदेव के उन्नीसवें गणधर। हपु० १२ ६०

सर्वदोषहर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

सर्वप्रिय—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के अट्ठाईसवें गणधर। हपु० १२.६०

(२) राम का पक्षधर एक योद्धा। यह विद्याधरो का स्वामी था। रावण की सेना को देखकर यह व्याघ्रवाही रथ पर बैठकर ससैन्य घर से निकला था। पपु० ५८ ४

सर्वभद्र—इस नाम का एक उपवास। जिनमती इस उपवास के फलस्वरूप सौधर्मेन्द्र की देवी हुई थी। हपु० ६० ९२ दे० सर्वतोभद्र

सर्वभूतशरण्य—एक मुनि। ये दशरथ के दीक्षागुरु थे। पपु० १ ८०

सर्वभूतहित—सब प्राणियो का हित करनेवाले मन पर्ययज्ञानी एक मुनि। राजा दशरथ बहुत्तर राजाओ के साथ इन्ही के पास दीक्षित हुए थे। इनका अपर नाम सर्वभूतशरण्य था। पपु० २९ ८५, ३२ ७८-८१ दे० सर्वभूतशरण्य

सर्वभूषण—एक केवली जिन। ये विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में गुंजा नगर के राजा सिंहविक्रम और रानी श्री के पुत्र थे। इनकी आठ सौ स्त्रियाँ थी, जिनमें किरणमण्डला के सोते समय बार-बार हेमरथ का नामोच्चारण करने से इन्होने वैराग्य धारण कर लिया था और किरणमण्डला भी साध्वी हो गयी थी। किरणमण्डला मरकर विद्युद्वक्त्रा राक्षसी हुई। इस राक्षसी ने इन पर पूर्व वैर के कारण अनेक उपसर्ग किये किन्तु उपसर्गों को जीतकर ये केवलज्ञानी हो गये। इनके केवलज्ञान की पूजा के लिए मेघकेतु देव आया जिसने सीता की अग्नि परीक्षा में सहायता की थी। पपु० १९७, १०४, १०३-११७, १२७-१२८

सर्वमित्र—धातकीखण्ड द्वीप के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा चक्रवर्ती प्रियमित्र का पुत्र। प्रियमित्र इसे ही राज्य सौंपकर दीक्षित हो गये थे। मपु० ७४ २३५-२४०, वीवच० ५ १०५

सर्वार्थसिद्धा—एक विद्या। परमकल्याणरूप, मन्त्रों से परिष्कृत, विद्याबल से युक्त और सभी का हित करनेवाली यह विद्या धरणेन्द्र ने नमि और विनमि विद्याधर को दी थी। हपु० २२ ७०-७३

सर्वार्थसिद्धि—(१) पाँच अनुत्तर विमानो में विद्यमान एक इन्द्रक विमान। यह अनुत्तर विमानो के बीच में होता है। इसकी पूर्व आदि चार दिशाओ में विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित ये चार विमान स्थित हैं। यह नौ ग्रैवेयक विमानो के ऊपर रहता है। यहाँ देवो की ऊँचाई एक हाथ की होती है। वे प्रवीचार रहित होते हैं। यह विमान लोक के अन्त भाग से बारह योजन नीचा है। इसकी लम्बाई, चौडाई और गोलाई जम्बूद्वीप के बराबर है। यह स्वर्ग के त्रेसठ पटलो के अन्त में स्थित है। इस विमान में उत्पन्न होनेवाले जीवो के सब मनोरथ अनायास ही सिद्ध हो जाते हैं। मपु० ११.११२-११४, ६१.१२, पपु० १०५ १७०-१७१, हपु० ४ ६९, ६ ५४, ६५

(२) एक पालकी। तीर्थंकर शान्तिनाथ इसी में बैठकर सयम धारने करने सहस्राम्र वन गये थे। मपु० ६३ ४७०

सर्वार्थसिद्धिस्तूप—समवसरण का एक स्तूप। इसकी चारो दिशाओ में विजय आदि विमानो की रचना होती है। हपु० ५७ १०२

सर्वावधिज्ञान—अवधिज्ञान के तीन भेदो में दूसरा भेद। यह परमावधिज्ञान होने के पूर्व होता है। ये ज्ञान देश प्रत्यक्ष होते हैं तथा पुद्गल द्रव्य को विषय करते हैं। मपु० ३६ १४७, हपु० १० १५२

सर्वास्त्रच्छादन—एक विद्यास्त्र। विद्याधर चण्डवेग ने यह वसुदेव को दिया था। हपु० २५ ४६-४९

सर्वाहा—भानुकर्ण को प्राप्त विद्याओ मे एक विद्या। पपु० ७.३३३

सर्वौषधिऋद्धि—एक ऋद्धि। इस ऋद्धि के धारी मुनि के शरीर का स्पर्श कर बहती हुई वायु सब रोगो को हरनेवाली होती है। मपु० २ ७१

सलिलात्मक—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२६

सल्लकी—भरतक्षेत्र का एक वन। मृदुमति मुनि मरकर माया कषाय के कारण इसी वन मे त्रिलोककंटक हाथी हुआ था। मपु० ५९ १९७ दे० त्रिलोककण्टक

सल्लेखना—(१) मृत्यु के कारण (रोगादि) उपस्थित होने पर बहिरग मे शरीर को और अन्तरग में कषायो को कृश करना। गृहस्थधर्म का पालन करते हुए जो ऐसा मरण करता है वह देव होता है तथा स्वर्ग से च्युत होकर मनुष्य पर्याय पाता है। ऐसा जीव अधिक से अधिक आठ भवो में निर्ग्रन्थ होकर सिद्ध पद को प्राप्त कर लेता है। इसके तीन भेद हैं—भक्तप्रत्याख्यान (भोजन-पान को घटाना), इगिनीमरण (अपने शरीर की स्वय सेवा करना) और प्रायोपगमन-स्वकृत और परकृत दोनो प्रकार के उपचारो की इच्छा नही करना। मपु० ५.२३३-२३४. पपु० १४ २०३-२०४, हपु० ५८ १६०

(२) चार शिक्षाव्रतो में चौथा शिक्षाव्रत-आयु का क्षय उपस्थित होने पर सल्लेखना धारण करना। पपु० १४.१९९

सवर्णकारिणी—मन्त्रो से परिष्कृत, परमकल्याणरूप एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि को दी थी। हपु० २२ ७१-७२

सवस्तुक—तालगत गान्धर्व का एक प्रकार। हपु० १९ १५०

सवितर्क-ध्यान—(१) पृथक्त्ववितर्कवीचार प्रथम शुक्लध्यान। श्रुत-शास्त्र को वितर्क कहते हैं और अर्थ, व्यजन तथा योगो का सक्रमण वीचार कहलाता है। जिस ध्यान में वितर्क अर्थात् शास्त्र के पदो का पृथक्-पृथक् रूप से वीचार होता रहे अर्थात् अर्थ, व्यजन और योगो का पृथक्-पृथक् सक्रमण होता रहे-अर्थ को छोडकर व्यजन का और व्यजन को छोडकर अर्थ का तथा इसी प्रकार मन, वचन और काय तीनो योगों का परिवर्तन होता रहे, उस ध्यान को पृथक्त्ववितर्क-वीचार प्रथम शुक्लध्यान कहते हैं। इस ध्यान में पृथक्त्व का अर्थ है—अनेक रूपता। इन्द्रियजयी मुनि एक अर्थ से दूसरे अर्थ को, एक शब्द से दूसरे शब्द को और एक योग से दूसरे योग को प्राप्त होते हुए पृथक्त्ववितर्कवीचार नामक प्रथम शुक्लध्यान करता है। चूँकि तीनो योगो को धारण करनेवाले और चौदह पूर्वों के जाननेवाले मुनिराज ही इस ध्यान का चिन्तन करते हैं इसलिए ही पहला शुक्लध्यान सवितर्क और सवीचार कहा गया है। श्रुतस्कन्ध के शब्द और अर्थों का सम्पूर्ण विस्तार इसका ध्येय होता है। मोहनीय कर्म का क्षय अथवा उपशम इसके फल हैं। इसमें ध्याता के ग्रहण किये हुए पदार्थ को छोडकर दूसरे पदार्थ का ध्यान करने लगने, एक शब्द से दूसरे शब्द को, एक योग से दूसरे योग को प्राप्त हो जाने से प्रथम शुक्लध्यान को सवितर्क और सवीचार भी कहा है। मपु० २१ १७०-१७६

सविपाकनिर्जरा—निर्जरा का पहला भेद। ससारी-प्राणियो की स्वभावत होनेवाली कर्मनिर्जरा सविपाक निर्जरा कहलाती है। इस निर्जरा काल में नवीन बन्ध भी होता रहता है। वीवच० ११ ८२

सहकारीकारण—कार्य में सहयोगी कारण। हपु० ७ १४ दे० कारण

सहदेव—(१) जरासन्ध के कालयवन आदि अनेक पुत्रो मे एक पुत्र। यह जरासन्ध का दूसरा पुत्र था। कृष्ण ने इसे मगध का राजा बनाया था। इसकी राजधानी राजगृह थी। हपु० ५२ ३०, ५३ ४४, पापु० २० ३५१-३५२

(२) पाँचवाँ पाण्डव। यह पाण्डु और उनकी दूसरी रानी माद्री का कनिष्ठ पुत्र था। नकुल इसका बडा भाई था। यह महारथी था। इसने धनुर्विद्या सीखी थी। महाभारत युद्ध की समाप्ति के पश्चात् इसने अपने दूसरे भाइयों के साथ मुनि दीक्षा ली थी। दुर्योधन के भानजे कुर्यधर ने आतापन योग में स्थित इस पर भी उपसर्ग किया था। उसने अग्नि में तपाकर लोहे के आभूषण पहनाये थे। इसने कुर्यधर के उपसर्ग को बारह भावनाओं का चिन्तन करते हुए शान्तिपूर्वक सहन किया था। अन्त में समतापूर्वक देह त्याग कर यह सर्वार्थसिद्धि के अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुआ। दूसरे पूर्वभव में यह मित्रश्री ब्राह्मणी तथा प्रथम पूर्वभव मे अच्युत स्वर्ग में देव था। मपु० ७० ११४-११६, २[illegible]-२७१, हपु० ४५ २, ३८,५० ७९-८०, पापु० ८ १७४-१७५, २[illegible]-२१२, २३ ८२, ११४, २४ ७७, २५ १४, २०, ५६-१२३, [illegible]८-१४०

(३) अवन्ति देश की उज्जयिनी नगरी के धनदेव सेठ का पुत्र। नागदत्त का भागीदार। इसका नकुल नामक एक भाई था। ये दोनो भाई नागदत्त के साथ पलाशनगर गये थे। नागदत्त ने पलाशनगर में प्राप्त कन्या पद्मलता तथा सम्पत्ति जहाज पर पहुँचाकर जैसे ही इन दोनो भाइयो को भी जहाज पर चढाया कि इन दोनो ने जहाज पर चढने की रस्सी नागदत्त को नही दी और जहाज लेकर अपने नगर आ गये थे। नागदत्त के न आने पर उसकी माता दुखी हुई। नागदत्त को एक विद्याधर ने दया करके उसे मनोहर वन में उतार दिया। यहाँ से वह बहिन के यहाँ गया। वहाँ पद्मलता के नकुल के साथ विवाहे जाने का सन्देश पाकर घर आया और उसने राजा से सम्पूर्ण वृत्त कहा। फलस्वरूप नकुल पद्मलता को न विवाह सका। यह ससार में चिरकाल तक भ्रमण कर कौशम्बी नगरी में मित्रवीर नाम का वैश्य पुत्र हुआ। इसी ने चन्दना वृषभसेन सेठ को दी थी। मपु० ७५ ९५-९८, १०९-१५५, १७२-१७४

सहदेवी—(१) अयोध्या के राजा अनन्तवीर्य की रानी और सनत्कुमार चक्रवर्ती की जननी। मपु० ६१ १०५, पपु० २० १५३

(२) अयोध्या के राजा कीर्तिधर की रानी। ये कौशल देश के राजा की पुत्री और सुकौशल की जननी थी। इसके पति ने मुनिदीक्षा ले ली थी। पुत्र सुकौशल के अपने पिता से दीक्षा धारण कर लेने पर यह आर्तध्यान से मरकर तिर्यंच योनि मे व्याघ्री हुई। इसने इस पर्याय मे पूर्व पर्याय के अपने ही पुत्र सुकौशल के पूर्व वैरवश पैर खा लिये थे। अन्य अग भी विदार्ण कर दिये थे। अन्त मे सुकौशल के पिता कीर्तिधर के उपदेश से इसने सन्यास ग्रहण किया तथा देह त्याग करके यह स्वर्ग गयी। पपु० २१ ७३-७७, १४०-१४२, १५९, १६४-१६५, २२ ४४-४९, ८५, ९०-९२, ९७

सहस्र—मुनिवेलाव्रतधारी एक पुरुष। इसने मुनि को आहार दिया था, जिसके प्रभाव से इसके घर रत्नवृष्टि हुई थी। अन्त में मरकर यह कुबेरकान्त सेठ हुआ। पपु० १४.३२८

सहस्रकिरण—एक अस्त्र। इससे तामस अस्त्र नष्ट किया जाता था। पपु० ७४ १०८

सहस्रग्रीव—(१) बलि के वश में हुआ एक विद्याधर राजा। हपु० २५ ३६

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित विजयार्घ पर्वत की दक्षिण-श्रेणी के मेघकूट नगर के राजा विनमि विद्याधर के वश मे हुआ रावण का पूर्वज एक विद्याधर राजा। यह यहाँ से निकाले जाने पर लका गया था। मातग्रीव इसका पुत्र था। रावण इसी की वश परम्परा में हुआ मपु० ६८ ७-१२

सहस्रघोष—विद्याधर अशनिघोष का पुत्र। यह पोदनपुर के राजा श्रीविजय से युद्ध मे पराजित हुआ था। मपु० ६२ २७५-२७६

सहस्रदिक—राजा जरासन्ध के अनेक पुत्रो मे एक पुत्र। हपु० ५२ ३९

सहस्रनयन—विहायस्तिलक नगर के राजा सुलोचन का पुत्र। यह चक्रवर्ती सगर का साला था। इसने सगर से विद्याधरो का आधिपत्य पाकर अपने पिता सुलोचन को मारनेवाले विद्याधर पूर्णघन के नगर को घेरकर युद्ध में पूर्णघन को मार डाला था। यह पूर्णघन के पुत्र मेघवाहन को भी मारना चाहता था किन्तु तीर्थंकर अजितनाथ के समवसरण में चले जाने से यह उस पकडने स्वय समवसरण में पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही इसके परिणाम निर्मल हुए और इसने अपना वैर छोड दिया। पपु० ५.७८-९५

सहस्रपर्वा—पर्वतवासिनी औषधिज्ञात्री एक विद्या। धरणेन्द्र ने यह विद्या नमि और विनमि विद्याधरो को दी थी। हपु० २२ ६७-६९, ७३

सहस्रपात्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२१

सहस्रबल—राजा शतबल का पिता। इसने पुत्र को राज्य देकर जिनदीक्षा ले ली और कर्मनाश कर मुक्त हुआ। मपु० ५ १४६-१४९

सहस्रबाहु—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे कोशल देश के साकेतनगर का राजा। कान्यकुब्ज देश के राजा पारत की पुत्री चित्रमती इसकी रानी और कृतवीर पुत्र था। इसके चाचा शतबिन्दु थे तथा जमदग्नि चचेरे भाई। जमदग्नि के इन्द्र और श्वेतराम दो पुत्र थे। एक दिन यह अपने पुत्र कृतवीर के साथ जमदग्नि के तपोवन पहुँचा। वहाँ कृतवीर ने मौसी रेणुकी से कामधेनु की याचना की और रेणुकी के स्वीकृति न देने पर जमदग्नि को मारकर यह नगर की ओर चला गया था। जमदग्नि का मरण सुनकर जमदग्नि के दोनो पुत्र अयोध्या की ओर गये तथा वहाँ सग्राम कर उन्होने उसे मार दिया था। मपु० ६५ ५६-६०, ९२, ९९-११२

सहस्रभाग—रत्नपुर नगर के श्रेष्ठी गोमुख और उसकी पत्नी धरणी का पुत्र। इसने सम्यग्दर्शन प्राप्तकर अणुव्रत धारण किये थे। अन्त में यह मरकर शुक्र स्वर्ग में देव हुआ। पपु० १३ ६०-६१

सहस्रमति—रावण का मत्री। इसने रावण के बचाव सम्बन्धी अनेक उपाय उसे सुझाये थे। पपु० ४६ २१०-२२९

सहस्ररश्मि—(१) रथनूपुर के राजा विद्याधर अमिततेज के पाँच सौ पुत्रो में ज्येष्ठ पुत्र। अमिततेज इसे साथ लेकर महाज्वाला विद्या सिद्ध करने के लिए ह्रीमन्त पर्वत पर श्रीसजयन्त मुनि की प्रतिमा के पास गया था। मपु० ६२ २७३-२७४

(२) माहिष्मती नगरी का राजा। इसने नर्मदा के किनारे रावण की पूजा में विघ्न किया। इस विघ्न के फलस्वरूप रावण और इसका युद्ध हुआ, जिसमे यह जीवित पकडा गया था। इसके पिता शतबाहु मुनि के कहने से रावण ने इसे छोड दिया था और इसे अपना चौथा भाई मान लिया था। रावण ने मन्दोदरी की छोटी बहिन स्वयप्रभा भी देने का प्रस्ताव रखा था किन्तु उसे अस्वीकृत कर इसने पुत्र को राज्य सौंपकर दशानन से क्षमा याचना करते हुए पिता शतबाहु के पास दीक्षा ले ली थी। पूर्व निश्चयानुसार जैसे ही अनरण्य के पास इसकी दीक्षा का समाचार गया कि अनरण्य भी पुत्र को राज्य देकर मुनि हो गया था। पपु० १०.६५, ८६-९२, १३०-१३१, १४७, १६०-१७६

(३) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ४०

सहस्रवक्त्र—एक नागकुमार। इसने प्रद्युम्नकुमार को मकरचिह्न से चिह्नित ध्वजा, चित्रवर्ण धनुष, नन्दक खड्ग और कामरूपिणी अगूठी दी थी। मपु० ७२ ११५-११७

सहस्रशीर्ष—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५,१२१

(२) धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में हुआ एक राजा। इसने वन में किसी केवली से अपने दोनो सेवको के साथ दीक्षा ले ली थी। दोनो सेवक तप कर स्वर्ग गये और इसने मोक्ष प्राप्त किया। पपु० ५ १२८-१३२

सहस्राक्ष—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२१

सहस्रानीक—विनमि विद्याधर के अनेक पुत्रो में एक पुत्र। हपु० २२ १०५

सहस्रान्तक—एक शूलरत्न। चमरेन्द्र ने यह शूलरत्न राजा मधु को भेंट में दिया था। पपु० १२ ६७

सहस्रायुध—जम्बूद्वीप मे पूर्वविदेहक्षेत्र के रत्नमचय नगर के राजा क्षमकर का पौत्र तथा चक्रवर्ती वज्रायुध का पुत्र। लक्ष्मीमती इसकी माता, श्रीषेणा रानी और कनकशान्त पुत्र तथा कनकमाला पुत्रवधू थी। इसका यह पुत्र दीक्षित हो गया था। पिता के दीक्षित होने के पश्चात् यह भी शतबली को राज्य सौंपकर पिहितास्रव मुनि के पास दीक्षित हुआ और वैभार पर्वत पर सन्यासमरण कर ऊर्ध्वग्रैवेयक के सौमनस विमान में ऋद्धिधारी देव हुआ। मपु० ६३ ३७-३९, ४५-४६, ११६-११७, १२३, १३८-१४१, पापु० ५ ५०-५२

सहस्रार—(१) बारहवाँ स्वर्ग। पपु० १०५ १६६-१६९, हपु० ४ १५, ६, ३८, वीवच० ५ ११७

(२) एक विमान। सहस्रार इन्द्र इसी विमान मे रहता है। मपु० ५९ १०

(३) अलकारपुर के राजा अशनिवेग का पुत्र। अशनिवेग इसे राज्य देकर निर्ग्रन्थ हो गया था। पपु० ६ ५०२-५०४

(४) रथनूपुर का एक विद्याधर राजा। इसकी रानी मानससुन्दरी थी। गर्भावस्था में पत्नी को स्वर्गीय सुख भोगने का दोहद होने के कारण इसने अपने इस पुत्र का नाम इन्द्र रखा था। इस पुत्र ने लंका के राजा रावण के दादा माली को युद्ध में मार डाला था। इस प्रकार पुत्र का रावण से विरोध होने पर इसने पुत्र को रावण से सन्धि करने के लिए कहा था। सन्धि न करने के कारण रावण ने इसे बाँध लिया था जिसे इसके निवेदन करने पर ही रावण ने मुक्त किया था। पपु० ७ १-२, १८, ८८, १२ १६८, ३४६-३४७, १३ ३२

सहस्राम्र—(१) मलय देश के भद्रिलपुर नगर का एक वन। तीर्थंकर नेमिनाथ ने इसी वन में दीक्षा ली थी। हपु० ५९ ११२, पापु० २२.४५

(२) अयोध्या नगरी का एक वन। यहाँ मुनिराज विमलवाहन का एक हजार मुनियो के साथ आगमन हुआ था। राजा मधु और उसके भाई कैटभ ने इन्ही से दीक्षा ली थी। हपु० ४३ २००-२०२

(३) अरिष्टपुर नगर का वन। रानी सुमित्रा के पति राजा वासव मुनि सागरसेन से यहाँ दीक्षित हुए थे। हपु० ६० ७६-८५

(४) पुष्करार्ध द्वीप में सुकच्छ देश के क्षेमपुर नगर का वन। क्षेमपुर के राजा नलिनप्रभ ने अनन्त मुनि से धर्मोपदेश सुनकर इसी वन में दीक्षा ली थी। मपु० ५७ २, ८

(५) भरतक्षेत्र में कुरुजागल देश का वन। यहाँ तीर्थंकर शान्तिनाथ ने दीक्षा ली थी। मपु० ६३.३४२, ४७०, ४७६

सहायवन—भरतक्षेत्र का एक वन। यहाँ वनवास के समय पाण्डव आये थे। दुर्योधन ने यहाँ उन्हें मारने का प्रयत्न किया किन्तु वह उसमें सफल नहीं हो सका। पापु० १७ ७३-७४

सहिष्णु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०९

सहेतुक—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित साकेत नगर का समीपवर्ती वन। तीर्थंकर अजितनाथ ने यही दीक्षा ली थी। मपु० ४८ ३८-३९

सह्य—(१) भरतक्षेत्र मे मलयगिरि के समीप स्थित पर्वत। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश यहाँ आये थे। मपु० ३० २७, ६५

(२) राजा अचल का पुत्र। हपु० ४८ ४९

सांकाश्यपुर—एक नगर। यहाँ का राजा सीता के स्वयवर में आया था। पपु० २८ २१९

साकारमन्त्रभेद—सत्याणुव्रत के पाँच अतिचारो में एक अतिचार-संकेतों से दूसरे के रहस्य को प्रकट कर देना। हपु० ५८ १६९

साकेत—अयोध्या का अपर नाम। तीर्थंकरो के जन्मोत्सव के समय सुर-असुर आदि तीनों जगत के जीव यहाँ एकत्रित हुए थे इसीलिए यह साकेत इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। तीर्थंकर आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ इन पाँच तीर्थंकरो ने इसी नगर में जन्म लिया था। मपु० १२ ८२, ४८ १९, २७, ५०. १६-१९, ५१ १९-२४, ६० १६-२२, पपु० २० ३७, ३८, ४०, ४१, ५० हपु० ८ १५०, ९ ४२, १८ ९७ वीवच० २ १०७

साक्षी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४१

सागर—(१) सूर्यवंश में हुआ एक राजा। यह सुभद्र का पुत्र और भद्र का पिता था। पपु० ५ ६, हपु० १३ ९

(२) राजा उग्रसेन के छ पुत्रो में पाँचवाँ पुत्र। वसुदेव ने कृष्ण जरासन्ध युद्ध में इसे राजा भोज का रक्षक नियुक्त किया था। हपु० ४८ ३९, ५० ११८

(३) तीर्थंकरो की गर्भावस्था में उनकी माता द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नो मे एक स्वप्न-समुद्र। पपु० २१ १२-१५

(४) राम का एक योद्धा। पपु० ५८ २२

(५) दस कोडाकोडी पल्य प्रमाण काल। पपु० २० ७७

(६) एक मुनि। राजा हेमाभ की रानी यशस्वती ने इनसे सिद्धार्थ वन मे व्रत लिये थे। मपु० ७१.४३५-४३६

(७) राजगृह नगर का एक श्रावक। यह राजा सत्यधर का पुरोहित था। श्रीमती इसकी स्त्री और बुद्धिषेण पुत्र था। मपु० ७५ २५७-२५९

(८) तीर्थंकर अजितनाथ का मुख्य प्रश्नकर्ता। मपु० ७६.५२९

सागरकूट—माल्यवान् पर्वत का एक कूट। हपु० ५.२१९

सागरचन्द्र—मेघकूट नगरी के जिनालय मे समागत एक मुनि। प्रद्युम्न ने इनसे अपने पूर्वभव पूछे थे। हपु० ४७.६० ६१

सागरचित्रक—नन्दनवन का एक कूट। हपु० ५.३२९

सागरदत्त—(१) चौथे नारायण के पूर्वभव का नाम। पपु० २० २१०

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित एकक्षेत्र नगर का एक वैश्य। इसकी स्त्री रत्नप्रभा थी। इन दोनो की गुणवती नाम की पुत्री थी, जो सीता का जीव थी। पपु० १०६ १२

(३) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के निवासी सेठ सागरसेन का बडा पुत्र। यह समुद्रदत्त का बडा भाई था। इसकी बहिन सागरदत्ता थी। इसे सागरसेन की भानजी वैश्रवणदत्ता विवाही गयी थी। मपु० ४७ १९१-१९९

(४) राजपुर नगर का एक वैश्य। इसने निमित्तज्ञानी के कहे अनुसार अपनी पुत्री विमला का विवाह जीवन्धर से किया था। मपु० ७५ ५८४-५८७

(५) हस्तिनापुर का निवासी एक वैश्य। इसकी स्त्री धनवती और उग्रसेन पुत्र था। मपु० ८ २२३

(६) एक शिविका। तीर्थंकर अनन्तनाथ इसी में बैठकर दीक्षा-भूमि-सहेतुक वन गये थे। मपु० ६०.३०-३२

(७) भरतक्षेत्र के अग देश की चम्पा नगरी का एक वैश्य। इसकी स्त्री पद्मावती तथा पद्मश्री पुत्री थी। मपु० ७६ ८, ४६,५०

(८) एक मुनि। ये वज्रदन्त चक्रवर्ती के पुत्र थे। इनका जन्म समुद्र में होने से यह नाम रखा गया था। इन्होने बादलो को विलीन होता हुआ देखकर सब कुछ क्षणभगुर जाना। इस बोध से इन्हें वैराग्य जागा। फलस्वरूप ये अमृतसागर मुनि के पास सयमी हो गये थे। मपु० ७६ १३४, १३९-१४९

(९) मगध देश के सुप्रतिष्ठ नगर का सेठ। इसकी स्त्री प्रभाकरी थी। इस स्त्री से इसके दो पुत्र हुए—नागदत्त और कुबेरदत्त। इसने सागरसेन मुनि से अपनी तीन दिन की आयु शेष जानकर बाईस दिन का सन्यास धारण करके देह त्याग की थी तथा देव पद पाया था। मपु० ७६ २२७-२३०

सागरदत्ता—सेठ सागरसेन की पुत्री। इसका विवाह सेठ वैश्रवणदत्त के साथ हुआ था। मपु० ४७ १९८-१९९ दे० सागरदत्त-३

सागरनिस्वान—एक वानरकुमार। यह बहुरूपिणी विद्या सिद्धि के समय रावण को कुपित करने लका गया था। पपु० ७० १५, १८

सागरबुद्धि—एक निमित्तज्ञानी। इन्ही ने रावण को उसकी मृत्यु का कारण दशरथ का पुत्र बताया था। पपु० २३.२५

सागरबुद्धि—बाली का मन्त्री। इसने दशानन के आक्रमण करने पर आक्रमण का प्रतिशोध करने के लिए उद्यत बाली से क्षमा धारण करने का निवेदन किया था। युद्ध का फल क्षय बताकर इसने अकारण युद्ध न करने का उसे परामर्श दिया था। पपु० ९ ७०-७५

सागरसेन—(१) सहस्राम्र वन मे आये एक मुनिराज। अरिष्टपुर नगर का राजा वासव इन्ही से दीक्षित हुआ था। मपु० ७१ ४००-४०२, हपु० ६० ७६

(२) राजा वसु की वश परम्परा मे हुए राजाओ मे राजा दीपन का पुत्र और राजा सुमित्र का पिता। हपु० १८ १९

(३) एक मुनि। पुरुरवा भील इन्हे मृग समझकर मारना चाहता था किन्तु उसकी स्त्री ने ऐसा नही होने दिया था। पुरुरवा ने इनसे क्षमा माँगकर धर्मोपदेश सुना और मद्य-मासादि का भक्षण तथा जीवघात त्यागकर समाधिपूर्वक देह त्याग की और सौधर्म स्वर्ग मे देव हुआ। मपु० ६२ ८६-८८, ७४ १४-२२, वीवच० २ १८-३८

(४) एक विद्वान्। सिद्धार्थ नगर के राजा क्षेमकर के देशभूषण और कुलभूषण दोनो पुत्रो ने इसी विद्वान् के पास अनेक कलाएँ सीखी थी। पपु० ३९ १५८-१६१

(५) एक चारण ऋद्धिधारी मुनि। ये दमधर मुनि के साथ मनोहर वन में तपस्या कर रहे थे। इन्होंने इसी वन में ही आहार लेने की प्रतिज्ञा की थी। विजय यात्रा के प्रसग से वज्रजघ वहाँ आया और उसने वन में ही आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये। मपु० ८ १६७-१७३

(६) विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी का एक वैश्य। सेठ सर्वदयित के पिता की छोटी बहिन देवश्री इसकी पत्नी थी। इससे इसके दो पुत्र थे—सागरदत्त और समुद्रदत्त। एक पुत्री भी थी जिसका नाम समुद्रदत्ता था। मपु० ४७ १९१, १९५-१९६

(७) धरणिभूषण पर्वत के प्रियकर उद्यान में आये एक मुनिराज। आयु के अन्त मे सन्यासपूर्वक देह त्यागकर ये स्वर्ग गये। मपु० ७६ २२०-२२१, ३५०

सागरसेना—विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के सेठ सागरसेन की छोटी बहिन। इसकी दो सन्ताने थी—एक पुत्र और एक पुत्री। पुत्र वैश्रवदत्त और पुत्री वैश्रवदत्ता थी। मपु० ४७.१९१, १९६-१९७

सागरावर्त—देवो से रक्षित एक धनुष। चन्द्रगति विद्याधर ने लक्ष्मण को यह धनुष चढाकर अपनी शक्ति बताने के लिए कहा था। लक्ष्मण ने भी इस धनुष को चढाकर उसका मानभग किया था। देवो ने पुष्पवृष्टि की थी। इसी शक्ति को देखकर चन्द्रवर्द्धन विद्याधर ने लक्ष्मण को अपनी अठारह पुत्रियाँ दी थी। अन्त मे यह धनुष लक्ष्मण ने अपने भाई शत्रुघ्न को दे दिया था। पपु० २८ १६९-१७०, २४७-२५०, ८९ ३५

सागरोपम—(१) राम का एक योद्धा। पपु० ५८ २२

(२) काल का एक प्रमाण। ढाई उद्धार सागर प्रमाण काल का एक सागरोपम काल होता है। एक उद्धार सागर दश कोडाकोडी उद्धार पल्यो का कहा गया है। हपु० ७ ५१ दे० उद्धारपल्य

सागार—गृहस्थ। चक्रवर्ती भरतेश ने परीक्षा करके इनके दो भेद किये थे—व्रती और अव्रती। इनमे उन्होने व्रती गृहस्थो को सम्मानित किया था तथा इन्हें इज्या, वार्ता, दत्ति, स्वाध्याय, सयम और तप ये छः कर्म करने का उपदेश भी दिया था। मपु० ३८.७-२४

सागारधर्म—गृहस्थ धर्म-पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। इन बारह व्रतो का धारण करना तथा धन-सम्पदा में सन्तोष रखना, इन्द्रिय विषयो में अनासक्त रहना, कषायो को कृश करना और ज्ञानियो की विनय करना सागार-धर्म है। पपु० ४.४६, ६ २८८-२८९

साटोप—(१) रावण के विरोधी यम लोकपाल का एक योद्धा। यह रावण की सेना के साथ युद्ध करने के लिए अपनी सेना सहित युद्ध-क्षेत्र में आया था। विभीषण ने इसे हँसते-हँसते ही मार गिराया था। पपु० ८ ४६६, ४६९

(२) एक विद्याधर कुमार। यह विद्या की साधना करनेवाले रावण को कुपित करने लका गया था। पपु० ७० १६, २३

सातकर—सोलहवें स्वर्ग का एक विमान। राजा अपराजित इसी विमान मे अच्युतेन्द्र हुए थे। मपु० ७० ४९-५०

सातासात—अग्रायणीयपूर्व सम्बन्धी कर्मप्रकृति चौथे प्राभृत के चौबीस योगद्वारो में सोलहवाँ योगद्वार। हपु० १० ८१, ८४, दे० अग्रायणीयपूर्व

सात्यकि—आचार्य नदिवर्धन के सघ के एक अवधिज्ञानी साधु। शालिग्राम के अग्निभूति और वायुभूति ब्राह्मण भाईयो को इन्होने पूर्व जन्म में वे दोनो शृगाल थे—ऐसा कहा था। इनके ऐसा कहने से अग्निभूति और वायुभूति ने इन्हें तलवार से मारने का उद्यम किया था किन्तु किसी यक्ष के द्वारा कील दिये जाने से वे इन्हें नही मार सके थे। अन्त मे दोनो जैसे ही अकोलित हुए कि इनसे उन्होने श्रावक धम श्रवण किया और दोनो श्रावक हो गये। पपु० १०९ ४१-४८, हपु० ४३ ९९-१००, ११०-११५, १३६-१४५

सात्यकिपुत्र—(१) ग्यारहवाँ रुद्र। हपु० ६० ५३४-५३६ दे० रुद्र

(२) आगामी चौबीसवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६ ४७४

साधन—हिंसा आदि दोषो की शुद्धि के श्रावकाचार के तीन अगो में तीसरा अग-आयु के अन्त में शरीर, आहार और अन्य व्यापारो का परित्याग कर ध्यानशुद्धि से आत्मशोधन करना। मपु० ३९ १४३-१४५, १४९

साधारण—वर्ण स्वर का एक भेद। हपु० १९ १४७

साधु—(१) अर्हन्त, सिद्ध, सूरि (आचार्य), उपाध्याय और साधु इन पाँच परमेष्ठियो में पाँचवें परमेष्ठी। ये मोक्षमार्ग (रत्नत्रय) को सिद्ध करने में सदा दत्तचित्त रहते है। इन्हें लोक को प्रसन्न करने का प्रयोजन नही रहता। इनका समागम पापहारी होता है। ये परोपकारी और दयालु होते है। ये बारह प्रकार के तपो द्वारा निर्वाण की साधना करते हैं। निर्वाण की साधना करने से ही इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ है। ये मन, वचन और काय से (१–५) पाँच महव्रतो को धारण करते, (६–१०) पाँच समितियो को पालते, (११–१५) पाँचो इन्द्रियो का निरोध करते और (१६) समता (१७) वन्दना, (१८) स्तुति, (१९) प्रतिक्रमण (२०) स्वाध्याय (२१) कायोत्सर्ग तथा छ आवश्यक क्रियाएँ और (२२) केशलोच करते हैं (२३) स्नान नही करते, (२४) वस्त्र धारण नही करते, (२५) दाँतो का मैल नही छुटाते, (२६) सदैव पृथिवी पर ही शयन करते, (२७) आहार दिन में एक ही बार, (२८) खडे-खडे लेते हैं। इनके ये अट्ठाईस मूलगुण हैं जिन्हें ये सतत पालते हैं। मपु० ९ १६२-१६५, ११ ६३-७५, पपु० ८९ ३०, १०९ ८९, हपु० १ २८, २ ११७-१२९

(२) गुण और दोषो में गुणो को ग्रहण करनेवाले सत्पुरुष। पपु० १ ३५

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १६३

साधुदत्त—एक मुनि। कौमुदी नगरी के राजा सुमुख की पुत्री मदना ने इन्ही से सम्यग्दर्शन (तत्त्वार्थ श्रद्धान) प्राप्त किया था। पपु० ३९ १८०-१८३

साधुदान—व्रती, निर्ग्रन्थ साधुओ को दिया गया दान। ऐसा दान देनेवाले भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। पपु० ३ ६५-६९

साधुभद्र—यवनो का एक राजा। यह नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का पक्षधर योद्धा था। पपु० ३७ ८, २०

साधुवत्सल—राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८.२१

साधुसमाधि—सोलहकारण भावनाओ में एक भावना-बाह्य और आभ्यन्तर कारणों से मुनिसघ के तपश्चरण में विघ्न आने पर मुनिसघ की रक्षा करना। मपु० ६३ ३२५, हपु० ३४ १३९

साधुसेन—तीर्थङ्कर वृषभदेव के अड़तीसवें गणधर। हपु० १२.६१

सानत्कुमार—ऊर्ध्वलोक में स्थित सोलह स्वर्गों में तीसरा स्वर्ग। इसमें और माहेन्द्र स्वर्ग में निम्न सात इन्द्रक विमान हैं—१ अजन २ वनमाल ३ नाग ४ गरुड ५ लागल ६ बलभद्र और ७ चक्र। पपु० १०५ १६७, हपु० ६ ४८

सानु—राम का सामन्त। यह रथ पर बैठकर ससैन्य युद्ध करने निकला था। पपु० ५८ १८

सानुकम्प—यक्ष का छोटा भाई यक्षिल। निर्दय होने से यक्ष-निरनुकम्प के नाम से और दयावान् होने से यक्षिल सानुकम्प के नाम से विख्यात हुआ। निरनुकम्प ने एक अन्धे सर्प पर इसके रोकने पर भी बैलगाडी चला दी थी। इसने निरनुकम्प को बहुत समझाया था। मपु० ७१ २७८-२८० दे० यक्षिल

सानुकार—अच्युत स्वर्ग के तीन इन्द्रक विमानो में प्रथम इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५१

सान्तानिकी—कल्पवृक्ष के फूलों से निर्मित माला। चक्रवर्ती भरतेश को यह प्रभास-व्यन्तरदेव से भेंट मे प्राप्त हुई थी। मपु० ३० १२४

साम—राजाओ की प्रयोजन सिद्धि के चार कारणो-साम, दान, दण्ड और भेद, मे प्रथम कारण-प्रिय तथा हितकारी वचनो द्वारा विरोधी को अपना बनाना। मपु० ६८ ६२-६३, हपु० ५० १८

सामन्तवर्द्धन—विदेहक्षेत्र में रत्नसचयनगर के मणि मन्त्री का पुत्र। इसने राजा के साथ महाव्रत धारण कर लिए थे। अन्त में मरकर यह ग्रैवेयक विमान में अहमिन्द्र हुआ और वहाँ से च्युत होकर रथनूपुर नगर में सहस्रार विद्याधर का इन्द्र नामक पुत्र हुआ। पपु० १३ ६२-६६

सावित्री—कुशध्वज ब्राह्मण की स्त्री। यह प्रभासकुन्द की जननी थी। पपु० १०६ १५८-१५९ दे० कुशध्वज

सासादन—दूसरा गुणस्थान-सम्यक्त्व-मिथ्यात्व की ओर अभिमुख होने की जीव की प्रवृत्ति। हपु० ३ ६०

साहसगति—राजा चक्रांक और रानी अनुमति का पुत्र। यह ज्योतिपुर नगर के राजा अग्निशिख की पुत्री सुतारा पर आसक्त था। सुतारा का सुग्रीव से विवाह हो जाने पर भी इसकी आसक्ति कम नहीं हुई थी। इसने सुतारा को पाने के लिए रूप बदलने वाली सेमुखी विद्या सिद्ध की थी। उससे इसने अपना सुग्रीव का रूप बनाकर सच्चे सुग्रीव के साथ युद्ध किया तथा गदा से उसे आहत किया था। अन्त में राम ने इसे युद्ध करने के लिए ललकारा। राम को आया देख वैताली विद्या इसके शरीर से निकल गई। यह स्वाभाविक रूप में प्रकट हुआ और राम के द्वारा मारा गया था। पपु० १० २-१८, ४७. १०७, ११६-११९, १२६

सिंह—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में विद्यमान उन्नीसवाँ नगर। हपु० २२ ८७

(२) एक वानर कुमार। यह विद्यासाधना में रत रावण को कुपित करने की भावना से लंका गया था। पपु० ७० १५, १७

(३) तीर्थङ्कर के गर्भ में आने के समय उनकी माता के द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नों मे तीसरा स्वप्न। पपु० २१ १२-१४

(४) रावण का पक्षधर एक योद्धा। इसने गजरथ पर बैठकर राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ५७ ५७

(५) मेघदल नगर का राजा। इसकी रानी कनकमेखला और पुत्री कनकावती थी। पाण्डव भीम ने इसकी पुत्री को विवाहा था। हपु० ४६ १४-१६

(६) राजा वसुदेव तथा रानी नीलयशा का ज्येष्ठ पुत्र। मतंगज इसका छोटा भाई था। हपु० ४८ ५७

(७) भीमकूट पर्वत के पास रहनेवाले भीलों का राजा। यह भयंकर पल्ली (भीलों का निवास स्थान) का स्वामी था। कालक-भील ने चन्दना इसे ही सौंपी थी। यह प्रथम तो चन्दना को देखकर उस पर मोहित हुआ, किन्तु माता के कुपित होने पर इसने चन्दना अपने मित्र मित्रवीर को दी और वह उसे सेठ वृषभदत्त के पास ले गया। मपु० ७५ ४५-५०

सिंहकटि—(१) जरासन्ध के अनेक पुत्रों मे एक पुत्र। हपु० ५२ ३३

(२) राम का सिंहरथवाही सामन्त। इसने रावण के प्रथित नाम के योद्धा को मार गिराया था। पपु० ५८ १०-११, ६० ११, ७०.१९

सिंहकेतु—(१) विद्याधर-वंश का नृप। यह राजा सिंहप्रभु का पुत्र तथा राजा शशांकमुख का पिता था। पपु० ५ ५०

(२) भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश में भोगपुर नगर के राजा प्रभंजन और रानी मृकण्डू का पुत्र। इसका विवाह इसी देश में वस्वालय नगर के राजा वज्रचाप की पुत्री विद्युन्माला के साथ हुआ था। चम्पापुर के राजा चन्द्रकीर्ति के बिना पुत्र के मरने पर मंत्रियों ने इसे अपना राजा बनाया था। मृकण्डू का पुत्र होने से चम्पापुर की प्रजा इसे "मार्कण्डेय" कहती थी। शौर्यपुर नगर के राजा शूरसेन इसी के वंश में हुआ था। मपु० ७० ७५-९३, पापु० ७ ११८-१३१

(३) तीर्थङ्कर महावीर के पूर्वभव का जीव। यह सिंह पर्याय में अजितंजय मुनि से उपदेश सुनकर तथा श्रावक के व्रतों को पालते हुए देह त्यागकर सौधर्म स्वर्ग मे इस नाम का देव हुआ था। मपु० ७४ १७३-२१९, ७६ ५४०, वीवच० ४ २-५९

सिंहगिरि—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे गंगा नदी के पास विद्यमान एक वन। त्रिपृष्ठ का जीव नरक से निकलकर इस वन में सिंह हुआ था। मपु० ७४ १६९

सिंहघोष—हिडम्ब वंश में उत्पन्न, सन्ध्याकार नगर का राजा। इसकी रानी सुदर्शना और पुत्री हृदयसुन्दरी थी। पाण्डव भीम ने इसकी इस पुत्री से विवाह किया था। हपु० ४५ ११४-११८, पापु० १४ २६-६३

सिंहचन्द्र—(१) भरतक्षेत्र में सिंहपुर नगर के राजा सिंहसेन और रानी रामदत्ता का पुत्र। यह पूर्वभव मे प्राप्त रामदत्ता के स्नेहवश निदान के कारण इन्द्रत्व की उपेक्षा कर रामदत्ता का पुत्र हुआ था। इसका छोटा भाई पूर्णचन्द्र था। राहुभद्र गुरु के समीप इसके दीक्षित हो जाने पर पूर्णचन्द्र राज्यसिंहासन पर बैठा था। मपु० ५९ १४६, १९२, २०२-२०३, हपु० २७ २०-२४, ४५-४७, ५८-५९

(२) आगामी पाँचवाँ बलभद्र। मपु० ७६.४८६, हपु० ६० ५६८

(३) जम्बूद्वीप में मृगांकनगर के राजा हरिचन्द्र का पुत्र। यह मरकर आहारदान के प्रभाव से देव हुआ था। पपु० १७ १५०-१५२

सिंहजघन—रावण का पक्षधर राक्षसवंशी एक योद्धा राजा। इसने राम की सेना से युद्ध किया था। पपु० ६० २

सिंहजवन—रावण का सिंहरथारूढ एक सामन्त। पपु० ५७ ४५

सिंहदंष्ट्र—इक्कीसवें तीर्थङ्कर नमिनाथ के तीर्थ में हुए असितपर्वत नगर के मातंग वंशी राजा विद्याधर प्रहसित और उनकी रानी हिरण्यवती का पुत्र। इसकी स्त्री नीलांजना और नीलयशा थी। यह वसुदेव का श्वसुर और उनका हितैषी था। हपु० २२ १११-११३, २३ १०, ५१ १-२

सिंहध्वज—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का छठा नगर। यहाँ महलों के अग्रभाग पर सिंह के चिह्न से चिह्नित ध्वजाएँ फहराती थीं। मपु० १९ ३७, ५३

सिंहनन्दिता—रत्नपुर नगर के राजा श्रीषेण की बड़ी रानी। इसके पुत्र का नाम इन्द्रसेन था। इसने आहारदान की अनुमोदना करके उत्तर-कुरु क्षेत्र में उत्तम भोगभूमि की आयु का बन्ध किया था। मपु० ६२ ३४०-३४१, ३५०

सिंहनाद—(१) राजा जरासन्ध के अनेक पुत्रों में एक पुत्र। हपु० ५२ ३४

को अपने नगर का राजा बना लिया। राजा हो जाने पर सौदास ने युद्ध में अपने पुत्र पर विजय की। इसके पश्चात् वह उसे ही राज्य देकर तपोवन चला गया था। इसका अपर नाम सिंहसौदास था। पपु० २२ १४४-१५२

(९) वग देश का राजा। यह नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का मामा था। पपु० ३७.६-८, २१

सिंहलद्वीप—(१) पश्चिम समुद्र का तटवर्ती देश। इस देश के राजा को लवणाकुश ने पराजित किया था। कृष्ण ने इसी नगर की राजपुत्री लक्ष्मणा को हरकर उसके साथ विवाह किया था। महासेन इस नगर का राजकुमार था। यहाँ का राजा अर्ध अक्षौहिणी सेना का स्वामी था। मपु० ३० २५, पपु० १०१ ७७-७८, हपु० ४४ २०-२५, ५० ७१

(२) राजा सोम का पुत्र। यह यादवो का पक्षधर था। इसके रथ मे काम्बोज के घोडे जोते गये थे। रथ सफेद था। हपु० ५२ १७

सिंहवर—राम का पक्षधर एक नृप। पपु० ५४ ५८

सिंहवाह—कस की नागशय्या। कृष्ण ने इस शय्या पर चढकर अजितजय नामक धनुष चढाया था तथा पाँचजन्य शख फूका था। हपु० ३५.७२-७७

सिंहवाहन—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर अरुण नगर के राजा सुकण्ठ और रानी कनकोदरी का पुत्र। इसने तीर्थंकर विमलनाथके तीर्थ में सद्बोध प्राप्त कर तथा राज्य अपने पुत्र मेघवाहन को देकर लक्ष्मीतिलक मुनि से दीक्षा ले ली थी। पश्चात् कठिन तपश्चरण किया और समाधिमरण पूर्वक देह त्यागकर यह लान्तव स्वर्ग में उत्कृष्ट देव हुआ। पपु० १७ १५४-१६२

सिंहवाहिनी—(१) गिरिनार पर्वत पर रहनेवाली अम्बिका देवी। हपु० ६६.४४

(२) चक्रवर्ती भरतेश की शय्या। मपु० ३७.१५४

(३) एक विद्या। रथनूपुर के राजा ज्वलनजटी विद्याधर ने प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ को यह विद्या दी थी। चित्तवेग देव ने यही विद्या राम को दी थी। मपु० ६२ २५-३०, ९०, १११-११२, पपु० ६०. १३१-१३५, पापु० ४ ५३-५४, वीवच० ३ ९४-९६

सिंहविक्रम—(१) भगलि देश का राजा। इसने अपनी पुत्री विदर्भा चक्रवर्ती सगर को दी थी। मपु० ४८ १२७

(२) राक्षसवशी एक विद्याधर राजा। पपु० ५ ३९५

(३) राम-लक्ष्मण का पक्षधर एक सामन्त। इसने लवणाकुश और मदनाकुश से युद्ध किया था। मपु० १०२.१४५

(४) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गुजा नगर का राजा। यह केवली सकलभूषण का पिता था। पपु० १०४ १०३-११७

सिंहवीर्य—(१) राजा सगर के समकालीन एक मुनि। पपु० ५ १४८

(२) एक राजा। यह नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का मामा था। पपु० ३७ ६-८, २१

सिंहवृत्ति—मुनि चर्या-सिंह के समान निर्भयता पूर्वक एकाकी अदीनता विहार पूर्वक करना। महावीर ने इसी वृत्ति से विहार किया था। मपु० ७४ ३१५-३१६

सिंहसप्रभु—विद्याधर वश मे हुए अनेक राजाओ में एक राजा। यह विद्याधर मृगोद्धर्मा का पुत्र तथा सिंहकेतु का पिता था। पपु० ५ ४९-५०

सिंहसेन—(१) भरतक्षेत्र में शकटदेश के सिंहपुर नगर का राजा। इसकी रानी रामदत्ता थी। इसने अपराधी अपने श्रीभूति पुरोहित को मल्लों के मुक्को से पिटवाया था। पुरोहित मरकर इसी के भण्डार में अगन्धन सामक सर्प हुआ। अन्त मे इस सर्प के काटने से यह मरकर हाथी हुआ। मपु० ५९ १४६-१४७, १९३, १९७, हपु० २७ २०-४८, ५३

(२) तीर्थंकर अनन्तनाथ का पिता। यह अयोध्या नगरी का इक्ष्वाकुवशी काश्यपगोत्री राजा था। इसकी रानी जयश्यामा थी। मपु० ६०.१६-२२, पपु० २० ५०

(३) तीर्थंकर अजितनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ४८ ४३ हपु० ६० ३४६

(४) जम्बूद्वीप में खगपुर नगर का एक इक्ष्वाकुवशी राजा। इसकी रानी विजया थी। बलभद्र सुदर्शन इसका पुत्र था। मपु० ६१ ७०

(५) पुण्डरीकिणी नगरी का राजा। इसने मेघरथ मुनिराज को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ६३ ३३४-३३५

(६) राजा वसुदेव और रानी बन्धुमती का कनिष्ठ पुत्र। यह बन्धुषेण का छोटा भाई था। हपु० ४८ ६२

(७) लोहाचार्य के पश्चात् हुए आचार्य। हपु० ६६ २८

सिंहाक—जरासन्ध के अनेक पुत्रों में एक पुत्र। हपु० ५२ ३१

सिंहाकितध्वजा—समवसरण की दस प्रकार की ध्वजाओ में सिंहाकृति से चिह्नित ध्वजाएँ। ये प्रत्येक दिशा मे एक सौ आठ होती हैं। मपु० २२ २१९-२२०

सिंहाटक—एक भाला। यह चक्रवर्ती भरतेश और चक्रवर्ती एवं तीर्थंकर अरहनाथ के पास था। मपु० ३७.१६४, पापु० ७ २१

सिंहासन—(१) सिंहवाही पीठासन। गर्भावस्था में तीर्थंकर की माता के द्वारा रात्रि के अन्तिम प्रहर में देखे गये सोलह स्वप्नों में बारहवा स्वप्न। पपु० २१ १२-१५

(२) अष्टप्रातिहार्यों में एक प्रातिहार्य। मपु० २४ ४६, ५१

सिंहिका—अयोध्या के राजा नघुष की रानी। राजा नघुष जिस समय इसे नगर मे अकेला छोडकर प्रतिकूल शत्रुओ को वश में करने के लिए उत्तरदिशा की ओर गया। उस समय नघुष को अनुपस्थित जानकर विरोधी राजाओ ने अयाध्या पर ससैन्य आक्रमण किया, किन्तु इसने उन्हें युद्ध में पराजित किया। यह शस्त्र और शास्त्र दोनो में निपुण थी। इसके पराक्रम से कुपित होकर राजा नघुष ने इसे महादेवी के पद से च्युत कर दिया था। किसी समय राजा को दाहज्वर हुआ। इसने करपुट मे जल लेकर और राजा के शरीर पर उसे छिडककर जसे ही राजा को वेदना शान्त की और अपने शील का परिचय दिया कि राजा ने प्रसन्न होकर इसे महादेवी के पद पर

पुन: अधिष्ठित कर दिया था। इसके पुत्र का नाम सौदास था। पपु० २२ ११४-१३१

सिंहेन्दु—व्याघ्रपुर नगर के राजा सुकान्त का पुत्र, शीला का भाई। पिता के मरने पर द्युति शत्रु ने इस पर आक्रमण किया था, जिससे भयभीत होकर यह पत्नी सहित सुरग से निकल भागा था। वन मे सर्प के द्वारा डस लिए जाने पर इसकी स्त्री इसे महावृद्धि के धारक मय नामक मुनि के पास ले गई तथा उसने मुनि के चरणो का स्पर्श कर जैसे ही इसके शरीर का स्पर्श किया कि उसका विष दूर हो गया। पूर्वभव में यह पोदनपुर में गोवाणिज गृहस्थ था। इसकी भुजपत्रा स्त्री थी। इन दोनो ने पूर्वभव में पशुओ पर अधिक भार लादकर पीडा पहुँचाई थी इसीलिए इन्हें वन मे तबोलियो का भार उठाना पडा था। पपु० ८० १७३-१८२, २००-२०१

सिंहोदर—उज्जयिनी का राजा। दशागपुर का राजा वज्रकर्ण जिनेन्द्र और निर्ग्रन्थ मुनि को ही नमस्कार करने की प्रतिज्ञा लेने के कारण इसे नमन नही करना चाहता था। अत· उसने तीर्थंकर मुनिसुव्रत की चित्र जडित अगूठी अपने अगूठे में पहिन रखी थी। इसे नमस्कार करते समय वह अगूठी सामने रखता और तीर्थंकर मुनिसुव्रत को नमन करके अपने नियम की रक्षा कर लेता था। किसी वैरी ने इसका यह रहस्य इसे बता दिया। इससे यह वज्रकर्ण से कुपित हो गया। इसने वज्रकर्ण पर आक्रमण किया। वज्रकर्ण ने अपनी प्रतिज्ञा के निर्वाह हेतु इसे सब कुछ देने के लिए कहा किन्तु इसने क्रोधान्ध होकर नगर मे आग लगा दी। अन्त में यह युद्ध में लक्ष्मण द्वारा बाध लिया गया था। लक्ष्मण ने इसकी और वज्रकर्ण की अन्त में मित्रता करा दी थी तथा वज्रकर्ण के कहने पर इसे मुक्त भी कर दिया था। इसने भी उज्जयिनी का आधा भाग तथा ऊजड किया गया वह देश वज्रकर्ण को दे दिया था। राम ने इसे अपना सामन्त बनाया था। पपु० ३३ ७४-७५, ११७-११८, १३१-१३४, १७४-१७७, २६२-२६३, ३०३-३०८, १२०.१४६-१४७

सिकतिनी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। चक्रवर्ती भरतेश का सेनापति ससैन्य यहाँ आया था। मपु० २९ ६१

सित—(१) भार्गवाचार्य की वश परम्परा में हुए आचार्य अमरावर्त का शिष्य और वामदेव का गुरु। हपु० ४५ ४५-४६

(२) एक तापस। इसकी मृगश्रृंगिणी स्त्री तथा मधु पुत्र था। हपु० ४६ ५४

सितगिरि—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक पर्वत। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना पुष्पगिरि को लाघकर इस पवत पर आयी थी। मपु० २९ ६८

सितध्यान—ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय इन चार घाति कर्मो का क्षय कर केवलज्ञान उत्पन्न करनेवाला शुक्लध्यान। पपु० ४ २२

सितयश—सूर्यवशी राजा अककीर्ति का पुत्र। यह राजा बलाक का पिता था। पपु० ५ ४

सिता—राजा समुद्रविजय के छोटे भाई विजय की महादेवी। हपु० १९.४

सिद्ध—(१) शुद्ध चेतना रूप लक्षण से युक्त, ससार से मुक्त, अष्टकर्मों से रहित, अनन्त सम्यक्त्व, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अत्यन्तसूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अव्याबाधत्व और अगुरुलघुत्व इन आठ गुणो से सहित, असख्यात प्रदेशी, अमूर्तिक, अन्तिम शरीर से किंचित् न्यून आकार के धारक, जन्म-जरा-मरण और अनिष्ट सयोग तथा इष्टवियोग, क्षुधा, तृषा, बीमारी आदि से उत्पन्न दु खो से रहित, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव के भेद से पच परावर्तनो मे रहित, लोक के अग्रभाग में स्थित मुक्त जीव। ये पच परमेष्ठियो में दूसरे परमेष्ठी होते है। मपु० २० २२२-२२५, २१ ११२-११९, पपु० १४ ९८-९९, ४८.२००-२०९, ८९ २७, १०५, १७३-१७४, १८१, १९१, हपु० १ २८, ३ ६६-६७, पापु० १ १, वीवच० १ ३८-३९, ११ १०९-११०, १३ १०६-१०८, १६ १७७-१७८

(२) मानुषोत्तर पर्वत की पश्चिम दिशा मे विद्यमान अजनमूलकूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०४

(३) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५.१०८

सिद्धकूट—(१) माल्यवान् पर्वत के नौ कूटो में प्रथम कूट। हपु० ५. २१९

(२) सौमनस्य पर्वत के सात कूटो में प्रथम कूट। हपु० ५ २२१

(३) विद्युत्प्रभ पर्वत के नौ कूटो मे प्रथम कूट। हपु० ५ २२२

(४) महाबल के समय का एक पर्वत-शिखरस्थ जिनचैत्यालय। यहाँ तीर्थंङ्कर आदिनाथ के पूर्वभव के जीव महाबल ने सन्यास धारण किया था। मपु० ५ २२९, हपु० ६० ८३

सिद्धत्व—अष्ट कर्मों से रहित और सम्यक्त्व आदि अष्ट गुणो से सहित आत्मा का शुद्ध स्वरूप। वीवच० १९.२३४

सिद्धविद्या—एक स्वयवर का नाम। विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के चन्द्रपुर नगर के राजा महेन्द्र की पुत्री कनकमाला ने इसी स्वयवर मे माला पहनाकर हरिवाहन का वरण किया था। मपु० ७१ ४०५-४०६

सिद्धशासन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १०८

सिद्धशिला—नेमिनाथ के समय मे राजगृहनगर की इस नाम की एक शिला। तीर्थंङ्कर गिरिनार पर्वत पर भी इन्द्र द्वारा वज्र से उकेरकर ऐसी शिला निर्मित की गयी थी। ऐसी ही एक सम्मेदशिखर पर भी थी जिस पर तपस्या करके बीस तीर्थंकर मोक्ष गये। मपु० ५८ २६९-२७३, हपु० ६० ३६-३७, ६५ १४

सिद्धसंकल्प—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

सिद्धसाधन—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १४५

सिद्धसाध्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०८

सिद्धसेन—सूक्तियों के रचयिता एक आचार्य। हरिवंशपुराण में इनका नामोल्लेख स्वामी समन्तभद्र के पश्चात् हुआ है और महापुराण में पहले। इन्होंने वादियों को पराजित किया था। मपु० १ ३९-४३, हपु० १ २८-२९

सिद्धस्तूप—समवसरण के स्तूप। ये स्फटिक के समान निर्मल प्रकाशमान होते हैं। हपु० ५७ १०३

सिद्धात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १४५

सिद्धान्तविद्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०८

सिद्धायतन—(१) जम्बूद्वीप में स्थित अनादिनिधन जम्बूवृक्ष की उत्तर-दिशावर्ती शाखा पर स्थित अकृत्रिम जिनमन्दिर। हपु० ५ १८१

(२) जम्बूद्वीप के अनादिनिधन शाल्मली वृक्ष की दक्षिण शाखा पर स्थित अविनाशी जिनमन्दिर। हपु० ५ १८९

सिद्धायतनकूट—(१) विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में प्रथम कूट। इस पर पूर्व दिशा की ओर "सिद्धकूट" नाम से प्रसिद्ध एक अकृत्रिम जिन-मन्दिर है। हपु० ५ २६, ३०

(२) हिमवत् कुलाचल के ग्यारह कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ ५३

(३) महाहिमवत् कुलाचल के आठ कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ ७१

(४) निषध पर्वत के नौ कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ ८८

(५) नीलकुलाचल के नौ कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ ९९

(६) रुक्मी पर्वत के आठ कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ १०२

(७) शिखरी पर्वत के ग्यारह कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५.१०५

(८) ऐरावतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत के नौ कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ ११०

(९) गन्धमादन पर्वत के सात कूटों में प्रथम कूट। हपु० ५ २१७

सिद्धार्थ—(१) भद्रबाहु श्रुतकेवली के पश्चात् हुए ग्यारह अंगों में दस पूर्वों के धारी ग्यारह मुनियों में छठे मुनि। मपु० २ १४१-१४५, ७६ ५२२, हपु० १ ६२-६३, वीवच० १ ४५-४७

(२) एक देव। इसमे प्रतिबोधित होकर बलदेव ने दीक्षा ली थी। हपु० १ १२१, पापु० २२ ८८, ९८-९९

(३) बलदेव का भाई और कृष्ण का सारथी। देव होने पर इसने प्रतिज्ञानुसार स्वर्ग से आकर कृष्ण की मृत्यु के समय बलदेव को सम्बोधा था। हपु० ६१ ४१, ६३ ६१-७१

(४) एक वन। इसमें अशोक, चम्पा, सप्तपर्ण, आम और वटवृक्ष थे। तीर्थङ्कर वृषभदेव ने यहीं दीक्षा ली थी। मपु० ७१ ४१७, हपु० ९ ९२-९३

(५) हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस का द्वारपाल। मपु० २०.६९, हपु० ९ १६८

(६) भगवान् महावीर का पिता। यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विदेह देश के कुण्डपुर नगर के नाथवंशी राजा सर्वार्थ और रानी श्रीमती का पुत्र था। इसकी पत्नी राजा चेटक की पुत्री प्रियकारिणी थी, जिसका अपर नाम त्रिशला था। यह तीन ज्ञान का धारी था। मपु० ७५ ३-८, हपु० २ १, ५, १३-१८, वीवच० ७ २५-२८

(७) तीर्थङ्कर शम्भवनाथ द्वारा व्यवहृत शिविका पालकी। मपु० ४९ १९, ३७

(८) कौशाम्बी नगरी के राजा पार्थिव तथा रानी सुन्दरी का पुत्र। इसने दीक्षा लेकर तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया था तथा आयु के अन्त में समाधिपूर्वक देह त्याग कर यह अपराजित विमान में अहमिन्द्र हुआ। मपु० ६९ २-४, १२-१६

(९) भरतक्षेत्र के काशी देश की वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन का मन्त्री। मपु० ४३.१२१-१२७, १८१-१८८

(१०) द्रौपदी को उसके स्वयंवर में आये राजकुमारों का परिचय करानेवाला पुरोहित। मपु० ७२ २१०

(११) एक नगर। यहाँ का राजा नन्द था। तीर्थङ्कर श्रेयांसनाथ ने इसके यहाँ आहार लिये थे। देशभूषण और कुलभूषण का जन्म इसी नगर में हुआ था। मपु० ५७ ४९-५०, पपु० ३९ १५८-१५९

(१२) तीर्थंकर नेमिनाथ के पूर्वभव का जीव। पपु० २०. २३-२४

(१३) एक महास्त्र। लक्ष्मण ने इसी अस्त्र से रावण के "विघ्न-विनायक" अस्त्र को नष्ट किया था। पपु० ७५ १८-१९

(१४) भरत के साथ दीक्षित अनेक राजाओं में एक राजा। पपु० ८८ ३

(१५) एक क्षुल्लक। यह महाविद्याओं में इतना अधिक निपुण था कि दिन में तीन बार मेरु पर्वत पर जिन प्रतिमाओं की वन्दना कर लौट आता था। यह अणुव्रती था। अष्टांग महानिमित्तज्ञ था। इसने अल्प समय में ही सीता के दोनों पुत्रों को शस्त्र और शास्त्रविद्या ग्रहण करा दी थी। लवणांकुश को बलभद्र और नारायण होने का लक्ष्मण के उत्पन्न भ्रम को इसी ने दूर किया था। सीता की अग्नि परीक्षा के समय भुजा ऊपर उठाकर इसने कहा था कि "हे राम! मेरु पाताल में प्रवेश कर सकता है, किन्तु सीता के शील में कोई लांछन नहीं लगा सकता। इसने अग्नि-परीक्षा को रोकने के लिए जिन-वन्दना और तप की भी शपथ था। पपु० १०० ३२-३५, ८८-८९, १०३ ३९-४१, १०४ ८१-८६

(१६) समवसरण में कल्पवृक्षों के मध्य में रहनेवाले इस नाम के दिव्य-वृक्ष। ये कल्पवृक्षों के समान होते हैं। मपु० २२ २५१-२५२, वीवच० १४ १३३-१३४

(१७) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०८

सिद्धार्थक—(१) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अठारहवाँ नगर। मपु० १९ ८०

(२) अयोध्या का एक समीपवर्ती वन। तीर्थंकर वृषभदेव ने इसी वन में दीक्षा धारण की थी। मपु० १७.१८१, १९४-१९६, हपु० ६० ८६-८७

सिद्धार्था—(१) विभीषण को प्राप्त एक विद्या। पपु० ७ ३३४

(२) साकेत नगर के राजा स्वयंवर की पटरानी। यह तीर्थंकर अभिनन्दननाथ की जननी थी। मपु० ५० १६-१७, २१-२२, पपु० २० ४०

सिद्धि—(१) समस्त कर्मों के नष्ट हो जाने पर प्राप्त शिव-सुख। मपु० ३९ २०६

(२) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक वन। यहाँ चतुर्मुख मुनि को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। मपु० ४८ ७९

(३) अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुओं में तेरहवीं वस्तु। हपु० १० ८०, दे० अग्रायणीयपूर्व

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४५

सिद्धिगिरि—एक पर्वत। पूर्वविदेहक्षेत्र में रत्नसंचयनगर के राजा वज्रायुध ने इसी पर्वत पर प्रतिमायोग धारण किया था। मपु० ६३ ३७-३९, १३२

सिद्धिक्षेत्र—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप उपाय से प्राप्य एक मुक्त जीवों का स्थान। हपु० ३ ६६-६७

सिद्धि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४५

सिद्धेतर—मुक्त हुए जीवों से भिन्न संसारी जीव। हपु० ३ ६६

सिन्दूर—अन्तिम सोलह द्वीपों में तीसरा द्वीप एवं इस द्वीप को घेरे हुए एक सागर। हपु० ५ ६२३

सिन्धु—(१) भरतक्षेत्र में उत्तरदिशा की ओर स्थित एक देश। भरतेश के भाई ने इस देश का राज्य त्याग कर वृषभदेव के समीप दीक्षा धारण कर ली थी। भरतेश को यहाँ के घोड़े भेंट में प्राप्त हुए थे। मपु० १६ १५५, ३० १०७, ७५ ३, हपु० ३.५, ११ ६२, ६७, ४४ ३३

(२) जम्बूद्वीप की प्रसिद्ध चौदह महानदियों में दूसरी नदी। यह पद्म सरोवर के पश्चिम द्वार से निकली है तथा पश्चिम समुद्र में प्रवेश करती है। दिग्विजय के समय भरतेश का सेनापति यहाँ ससैन्य आया था। वृषभदेव के राज्याभिषेक के लिए यहाँ का जल लाया गया था। मपु० १६.२०९, १९ १०५, २८ ६१, २९ ६१, ३२ १२२, ६३ १९५, हपु० ५ १२२-१२३, १३२, ११ ३९

(३) सिन्धुकूट की एक देवी। इसने चक्रवर्ती भरतेश को वस्त्र, आभूषण तथा दिव्य आसन भेंट में दिये थे। मपु० ३२.७९-८३, हपु० ११ ४०

सिन्धुकक्ष—विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का उन्तीसवाँ नगर। हपु० २२ ९७

सिन्धुकुण्ड—सिन्धु नदी का कुण्ड। इसका जल वृषभदेव के राज्याभिषेक में व्यवहृत हुआ था। मपु० १६ २२०

सिन्धुकूट—(१) सिन्धुदेवी की निवासभूमि। हपु० ११ ४०, दे० सिन्धु

(२) हिमवत् कुलाचल का आठवाँ कूट। हपु० ५ ५४

सिन्धुतटवन—सिन्धु नदी का तटवर्ती एक मनोहर वन। इस वन में वृक्ष-समूह के अतिरिक्त लता निकुंज भी थे। दिग्विज के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० ३० ११९

सिन्धुद्वार—सिन्धु नदी का द्वार। चक्रवर्ती भरतेश पश्चिम दिशा के समस्त राजाओं को वश में करते हुए वेदिका के किनारे-किनारे चलकर यहाँ आये थे। उन्होंने यहाँ के स्वामी प्रभास देव को अपने अधीन किया था। मपु० ६८ ६५३, हपु० ११ १५-१६

सिन्धुनद—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का एक नगर। चक्रवर्ती हरिषेण अनेक देशों में भ्रमण करते हुए यहाँ आये थे। इसी नगर में हाथी उन्मत्त हुआ था जिसे हरिषेण ने वश में करके नागरिकों की रक्षा की थी। पपु० ८ ३१९-३४०

सिन्धुप्रपात—सिन्धु नदी का एक प्रपात। चक्रवर्ती भरतेश अपनी सेना के साथ सिन्धु नदी के किनारे-किनारे चलते हुए यहाँ आये थे। सिन्धु देवी ने यहाँ उनका अभिषेक किया था। मपु० ३२ ७९

सीता—(१) विदेहक्षेत्र की चौदह महानदियों में सातवीं नदी। यह केसरी सरोवर से निकली है। यह सात हजार चार सौ इकतीस योजन एक कला प्रमाण नील पर्वत पर बहकर सौ योजन दूर चार सौ योजन की ऊँचाई से नीचे गिरी है। यह पूर्व समुद्र की ओर बहती है। नील पर्वत की दक्षिण दिशा में इस नदी के पूर्व तट पर चित्र और विचित्र दो कूट हैं, मेरु पर्वत से पूर्व की ओर सीता नदी के उत्तर तट पर पद्मोत्तर और दक्षिण तट पर नीलवान् कूट है। पश्चिम तट पर वतसकूट और पूर्व तट पर रोचनकूट है। इसमें पाँच लाख बत्तीस हजार नदियाँ मिली हैं। मपु० ६३ १९५, हपु० ५ १२३, १३४, १५६-१५८, १६०, १९१, २०५, २०८, २७३

(२) नील कुलाचल का चौथा कूट। हपु० ५ १००

(३) माल्यवान् पर्वत का आठवाँ कूट। हपु० ५ २२०

(४) अरिष्टपुर नगर के राजा हिरण्यनाभ के भाई रैवत की तीसरी पुत्री। यह कृष्ण के भाई बलदेव के साथ विवाही गयी थी। हपु० ४४ ३७, ४०-४१

(५) जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र की द्वारवती नगरी के राजा सोमप्रभ की दूसरी रानी। पुरुषोत्तम नारायण की यह जननी थी। मपु० ६० ६३, ६६, ६७ १४२-१४३

(६) रुचक पर्वत के यश कूट की दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७१४

(७) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की मिथिला नगरी के राजा जनक की पुत्री। पद्मपुराण के अनुसार इसकी माता विदेहा थी। यह और इसका भाई भामण्डल दोनों युगलरूप में उत्पन्न हुए थे। इसका दूसरा नाम जानकी था। महापुराण के अनुसार यह लंका के राजा रावण और उसकी रानी मन्दोदरी की पुत्री थी। इसने पूर्व भव में मणिमती की पर्याय में विद्या-सिद्धि के समय रावण द्वारा किये गए विघ्न से कुपित होकर उसकी पुत्री होने तथा उसके वध का कारण बनने का निदान किया था, जिसके फलस्वरूप यह मन्दोदरी की

पुत्री हुई। रावण ने निमित्तज्ञानियो से इसे अपने वध का कारण जानकर मारीच को इसे बाहर छोड आने के लिए आज्ञा दी थी। मारीच भी मन्दोदरी द्वारा सन्दूक में बन्द की गयी इसे ले जाकर मिथिला नगरी के समीप एक उद्यान के किसी ईषत् प्रकट स्थान में छोड आया था। सन्दूकची भूमि जोतते हुए किसी कृषक के हल से टकरायी। कृषक ने ले जाकर सन्दूकची राजा जनक को दी। जनक ने सन्दूकची में रखे पत्र से पूर्वापर सम्बन्ध ज्ञात कर इसे अपनी रानी वसुधा को सौंप दी। वसुधा ने भी इसका पुत्रीवत पालन किया। इसका यह रहस्य रावण को विदित नही हो सका था। स्वयवर में राम ने इसका वरण किया था। राम के वन जाने पर इसने राम का अनुगमन किया था। वन मे इसने सुगुप्ति और गुप्ति नामक युगल मुनियो को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। राम के विरोध में युद्ध के लिए रावण को नारद द्वारा उत्तेजित किये जाने पर रावण ने सीता को हर कर ले जाने का निश्चय किया। लक्ष्मण ने वन मे सूर्यहास खड्ग प्राप्त की तथा उसकी परीक्षा के लिए उसने उसे बाँसो पर चलाया, जिससे बाँसो के बीच इसी खड्ग की साधना में रत शम्बूक मारा गया था। शम्बूक के मरने से उसका पिता खरदूषण लक्ष्मण से युद्ध करने आया। लक्ष्मण उससे युद्ध करने गया। इधर रावण ने सिंहनाद कर बारम्बार राम ! राम ! उच्चारण किया। राम ने समझा सिंहनाद लक्ष्मण ने किया है और वे मालाओ से इसे ढँककर लक्ष्मण की ओर चले गये। इसे अकेला देखकर रावण पुष्पक विमान में बलात् बैठाकर हर ले गया। महापुराण के अनुसार इसे हरकर ले जाने के लिए रावण की आज्ञा से मारीच एक सुन्दर हरिण-शिशु का रूप धारण कर सीता के समक्ष आया था। राम इसके कहने से हरिण को पकडने के लिए हरिण के पीछे-पीछे गये, इधर रावण बहुरूपिणी विद्या से राम का रूप बनाकर इसके पास आया और पुष्पक विमान पर बैठाकर हर ले गया। रावण ने इसके शीलवती होने के कारण अपनी आकाशगामिनी विद्या के नष्ट हो जाने के भय से इसका स्पर्श भी नही किया था। रावण द्वारा हरकर अपने को लका लाया जानकर इसने राम के समाचार न मिलने तक के लिए आहार न लेने की प्रतिज्ञा की थी। रावण को स्वीकार करने के लिए कहे जाने पर इसने अपने छेदे-भेदे जाने पर भी पर-पुरुष से विरक्त रहने का निश्चय किया था। राम के इसके वियोग में बहुत दु खी हुए। राजा दशरथ ने स्वप्न में रावण को इसे हरकर ले जाते हुए देखा था। अपने स्वप्न का सन्देश उन्होंने राम के पास भेजा। इसे खोजने के लिए राम ने पहिचान स्वरूप अपनी अगूठी देकर हनुमान् को लका भेजा था। लका में हनुमान् ने अगूठी जैसे ही इसकी गोद में डाली कि यह अगूठी देख हर्षित हुई। अगूठी देख प्रतीति उत्पन्न करने के पश्चात् हनुमान ने इसे साहस बधाया और लौटकर राम को समाचार दिये। सीता की प्राप्ति के शान्तिपूर्ण उपाय निष्फल होने पर राम-लक्ष्मण ने रावण से युद्ध किया तथा युद्ध में लक्ष्मण ने रावण को मार डाला। रावण पर राम की विजय होने के पश्चात् इसका राम से मिलन हुआ। वेदवती की पर्याय में मुनि सुदर्शन और आर्यिका सुदर्शना का अपवाद करने से इसका लका से अयोध्या आने पर लका में रहने से इसके सतीत्व के भग होने का अपवाद फैला था। राम ने इस लोकापवाद को दूर करने लिए गर्भवती होते हुए भी अपने सेनापति कृतान्तवक्त्र को इसे सिंहनाद अटवी में छोड आने के लिए आज्ञा दी थी। निर्जन वन में छोड जाने पर इसने राम को दोष नही दिया था, अपितु इसने इसे अपना पूर्ववत् कर्म-फल माना था। इसने सेनापति के द्वारा राम को सन्देश भेजा था कि वे प्रजा का न्यायपूर्वक पालन करें और सम्यग्दर्शन को किसी भी तरह न छोड़ें। वन में हाथी पकडने के लिए आये पुण्डरीकपुर के राजा वज्रजघ ने इसे दु खी देखा तथा इसका समस्त वृतान्त ज्ञातकर इसे अपनी बडी बहिन माना और इसे अपने घर ले गया। इसके दोनो पुत्रो अनगलवण और मदनाकुश का जन्म इसी वज्रजघ के घर हुआ था। नारद से इन बालको ने राम-लक्ष्मण का वृतान्त सुना। राम के द्वारा सीता के परित्याग की बात सुनकर दोनो ने अपनी माता से पूछा। पूछने पर इसने भी नारद के अनुसार ही अपना जीवन-वृत्त पुत्रो को सुना दिया। यह सुनकर माता के अपमान का परिशोध करने के लिए वे दोनो ससैन्य अयोध्या गये और उन्होंने अयोध्या घेर ली। राम और लक्ष्मण के साथ उनका घोर युद्ध हुआ। राम और लक्ष्मण उन्हें जीत नही पाये। तब सिद्धार्थ नामक क्षुल्लक ने राम को बताया कि वे दोनों बालक सीता से उत्पन्न आपके ही ये पुत्र है। यह जानकर राम और लक्ष्मण ने शस्त्र त्याग दिये और पिता पुत्रो का प्रेमपूर्वक मिलन हो गया। हनुमान सुग्रीव और विभीषण आदि के निवेदन पर सीता अयोध्या लायी गयी। जनपवाद दूर करने के लिए राम ने सीता से अग्नि परीक्षा देने के लिए कहा जिसे इसने सहर्ष स्वीकार किया और पच परमेष्ठी का स्मरण कर अग्नि में प्रवेश किया। अग्नि शीतल जल में परिवर्तित हो गयी थी। इसके पश्चात् राम ने इसे महारानी के रूप में राजप्रासाद मे प्रवेश करने की प्रार्थना की किन्तु इसने समस्त घटना चक्र से विरक्त होकर पृथ्वीमती आर्या के पास दीक्षा ले ली थी। बासठ वर्ष तक घोर तप करने के पश्चात् तैंतीस दिन की सल्लेखनापूर्वक देह त्याग कर यह अच्युत स्वर्ग में देवेन्द्र हुई। इसने स्वर्ग से नरक जाकर लक्ष्मण और रावण के जीवो को सम्यक्त्व का महत्त्व बताया था, जिसे सुनकर वे दोनो सम्यग्दृष्टि हो गये थे। मपु० ६७ १६६-१६७, ६८ १८-३४, १०६-११४, १९७-२९३, ३७६-३८२, ४१०-४१८, ६२७-६२९, पपु० २६ १२१, १६४-१६६, २८ २४५, ३१ १९१, ४१ २१-३१, ४३ ४१-६१, ७३, ४४ ७८-९०, ४६ २५-२६, ७०-८५, ५३ २६, १७०, २६२, ५४ ८-२५, ६६ ३३-४५, ७६ २८-३५, ७९ ४५-४८, ८३ ३६-३८, ९५ १-८, ९७ ५८-६३, ११३-१५६, ९८ १-९७, १००.१७-२१, १०२ २-८०, १२९-१३५, १०३ १६-१८, २९-४७, १०४ १९-२०, ३३, ३९-४०, ७७, १०५ २१-२९, ७८, १०६ २२५-२३१, १०९ ७-१८, १२३.४६-४७, ५३

सीतोवा—(१) चौदह महानदियो में आठवी नदी। यह जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत से पश्चिम की ओर विदेहक्षेत्र में गधिल देश की दक्षिण

दिशा की ओर बहती है। क्षीरोदा और स्रोतोन्तर्वाहिनी तथा उत्तर-विदेहक्षेत्र की गन्धमादिनी फेनमालिनी और ऊर्मिमालिनी ये नदियाँ इसी नदी में मिली हैं। मेरु दिशा में निषधाचल के पास इस नदी के दूसरे तट पर शाल्मलिवृक्ष है। मपु० ४५१-५२, ६३ १९५, हपु० ५ १२३, २४१-२४२

(२) निषधाचल का सातवाँ कूट। हपु० ५ ८९

(३) नील पर्वत का चौथा कूट। हपु० ५ १००

(४) विद्युत्प्रभ पर्वत का आठवाँ कूट। हपु० ५ २२३

सीधु—मद्यांग जाति के कल्प वृक्षों का रस। यह सुगन्धित और मिष्ठ होता है। इससे मदिरा बनाई जाती है। कामोद्दीपन की समानता होने से इसे उपचार से मद्य कहा जाता है। इसका सेवन भोगभूमि में उत्पन्न आर्य पुरुष करते हैं। मपु० ९ ३७-३८

सीमंकर—(१) पाँचवें कुलकर। ये चौथे क्षेमधर कुलकर के पुत्र थे। इनके समय में कल्पवृक्षों की संख्या कम हो गयी थी। इसलिए इन्होंने प्रजा के लिए कल्पवृक्षों की सीमा निर्धारित की थी जिससे ये इस नाम से प्रसिद्ध हुए। इनकी आयु पल्य का लाखवाँ भाग थी। इनके पुत्र सीमंधर थे। मपु० ६ १०७-१११, पपु० ३ ७८, हपु० ७ १५३-१५५, पापु० २ १०५

(२) एक मुनि। ये जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र में स्थित विन्ध्यपुर नगर के राजा विन्ध्यसेन के पुत्र नलिनकेतु के दीक्षागुरु थे। मपु० ६३ ९९-१००, १०७-१०८

सीमन्त—एक पर्वत। हरिषेण चक्रवर्ती ने इसी पर्वत पर श्रीनाग मुनि के पास संयम धारण किया था। मपु० ६७ ६१, ८४-८५

सीमन्तक—धर्मा पृथिवी का प्रथम इन्द्रक बिल। इसकी चारों दिशाओं में उनचास-उनचास और प्रत्येक विदिशा में अड़तालीस-अड़तालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७६, ८७, ८९

सीमन्धर—(१) छठे कुलकर। ये पाँचवें सीमंकर कुलकर के पुत्र थे। इनकी नलिन प्रमाण काल की आयु थी। शरीर सात सौ पच्चीस धनुष ऊँचा था। इनके काल में कल्पवृक्ष बहुत कम रह गये थे। मपु० ३ ११२-११५, पपु० ३ ७८, हपु० ७ १५५, पापु० २ १०५

(२) तीर्थंकर शीतलनाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६ ५३०

(३) तीर्थंकर पद्मप्रभ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २६

(४) पूर्व विदेहक्षेत्र के एक मुनि। पपु० २३ ८, हपु० ४३ ७९

सुकक्ष—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का इकतीसवाँ नगर। हपु० २२ ९७

सुकच्छ—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र का एक देश। यह सीता नदी के उत्तर-तट पर स्थित है। हपु० ५३ २

(२) तीर्थङ्कर वृषभदेव के चौहत्तरवें गणधर। हपु० १२ ६८

सुकच्छा—पश्चिम विदेहक्षेत्र का एक देश। यह सीता नदी और नील कुलाचल के मध्य प्रदक्षिणा रूप से स्थित है। इसके छः खण्ड हैं। हपु० ५.२४५-२४६

सुकण्ठ—(१) भविष्यत् काल में होनेवाले पाँचवें प्रतिनारायण। हपु० ६०.५७०

(२) अश्वग्रीव प्रतिनारायण के छोटे भाई। ये मरकर असुर हुए। मपु० ६३ ३३-३५, पापु० ५ ८-९

(३) विजयार्ध पर्वत के अरुण नगर का राजा। इसकी रानी कनकोदरी और पुत्र सिंहवाहन था। पपु० १७ १५४-१५५

सुकान्त—(१) वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन और रानी सुप्रभादेवी का पुत्र। यह सुलोचना और लक्ष्मीमती का भाई था। मपु० ४३ १२४-१३५

(२) मृणालवती नगरी के सेठ अशोकदेव और जिनदत्ता का पुत्र। इसका विवाह इसी नगरी में श्रीदत्त सेठ की पुत्री रतिवेगा से हुआ था। मपु० ४६ १०५, १०८, ४७ १०३,१०६

(३) चक्रवर्ती भरतेश का पुत्र। इसने जयकुमार के साथ दीक्षा ले ली थी। मपु० ४७ २८१-२८३

(४) व्याघ्रपुर नगर का राजा। इसकी पुत्री शीला और पुत्र सिंहेन्दु था। पपु० ८० १७३-१७४

सुकान्ता—विजयार्ध पर्वत पर स्थित किन्नरगीत नगर के राजा चित्रचूल की पुत्री। इसका विवाह शुक्रप्रभ नगर के राजा इन्द्रदत्त के पुत्र वायुवेग से हुआ था। मपु० ६३ ९१-९३

सुकीर्ति—कुरुवंशी एक राजा। इसके पिता और पुत्र दोनों का नाम कीर्ति था। हपु० ४५ २५

सुकुण्डली—धातकीखण्ड द्वीप के विजयार्ध पर्वत पर स्थित आदित्याभ नगर का राजा एक विद्याधर। इसकी स्त्री मित्रसेना और पुत्र मणिकुण्डल था। मपु० ६२ ३६१-३६२

सुकुमार—कुरुवंशी चक्रवर्ती सनत्कुमार का पुत्र। पिता के दीक्षा लेने के पश्चात् राज्य इसे ही प्राप्त हुआ था। वरकुमार का यह पिता था। हपु० ४५ १६-१७

सुकुमारिका—(१) ह्रीमन्त पर्वत के हिरण्यरोम तापस की पुत्री। इसका विवाह विजयार्ध पर्वत पर स्थित शिवमन्दिर नगर के राजा महेन्द्रविक्रम के पुत्र अमितगति के साथ हुआ था। हपु० २१ २२-२९

(२) धनदेव की स्त्री। कुमारदेव इसका पुत्र था। इसने सुव्रत मुनि को विष-मिश्रित आहार देकर मार डाला था, जिसके फलस्वरूप यह मरकर नरक गयी। हपु० ४६.५०-५२

सुकुमारी—चम्पापुर नगर के सुबन्धु सेठ और उसकी स्त्री धनदेवी की पुत्री। इसके शरीर से दुर्गन्ध आती थी। इसी नगर का धनदत्त सेठ अपने ज्येष्ठ पुत्र जिनदेव का इससे विवाह करना चाहता था। जिनदेव इसकी दुर्गन्ध से अप्रसन्न होकर सुव्रत मुनि के पास दीक्षित हो गया था। इससे इसका विवाह जिनदेव के छोटे भाई जिनदत्त से हुआ। जिनदत्त ने भी इसे स्नेह नहीं दिया। अन्त में इसने आत्म निन्दा करते हुए शान्ति आर्यिका से दीक्षा ले ली और समाधिमरण करके अच्युत स्वर्ग में देवांगना हुई। स्वर्ग से चयकर यहाँ राजा द्रुपद की पुत्री द्रौपदी हुई। मपु० ७२ २४१-२४८, २५६-२५९, २६३

सुकुम्भोज—वैशाली नगरी के राजा चेटक और रानी सुभद्रा का छठा पुत्र। इसके धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, सुदत्त और सिंहभद्र ये ॥ न 13

भाई तथा अकम्पन, पतगक, प्रभजन और प्रभाम चार छोटे भाई थे। इसकी प्रियकारिणी आदि सात बहिनें थी। मपु० ७५ ३-७

सुकृती—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७४

सुकेतु—(१) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश की मृणालवती नगरी का राजा। इसने अर्ककीर्ति और जयकुमार के बीच हुए युद्ध में जयकुमार का पक्ष लिया था। यह मुकुटबद्ध राजा था। मपु० ४४ १०६-१०७, पापु० ३ ९४-९५, १८७-१८८

(२) मृणालवती नगरी का एक सेठ। यह रतिवर्मा का पुत्र था। इसकी स्त्री कनकश्री और पुत्र भवदेव था। मपु० ४६ १०३-१०४

(३) विजयार्ध पर्वत पर स्थित रथनूपुर नगर का राजा। कृष्ण की पटरानी सत्यभामा इसकी पुत्री थी। मपु० ७१ ३०१, ३१३, हपु० ३६ ५६, ६१

(४) धर्म नारायण के दूसरे पूर्वभव का जीव। यह श्रावस्ती नगरी का राजा था। जुए में अपना सब कुछ हार जाने से शोक से व्याकुलित होकर इसने दीक्षा ले ली थी तथा कठिन तपश्चरण करने से कला, गुण, चतुरता और बल प्रकट होने का निदान करके यह सन्यास-मरण करके लान्तव स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ५९.७२, ८१-८५, दे० धर्म-२

(५) एक विद्याधर। पद्म चक्रवर्ती ने अपनी आठो पुत्रियो का विवाह इसी के पुत्रो के साथ किया था। मपु० ६६.७६-८०

(६) गन्धवती नगरी के सोम पुरोहित का ज्येष्ठ पुत्र। यह प्रेमवश अपने भाई अग्निकेतु के साथ ही शयन किया करता था। विवाहित होने पर पृथक्-पृथक् शय्या किये जाने पर प्रतिबोध को प्राप्त होकर इसने अनन्तवीर्य मुनि से दीक्षा ले ली। इसका भाई प्रथम तो तापस हो गया था, किन्तु बाद मे इसके द्वारा समझाये जाने पर उसने भी दिगम्बरी दीक्षा ले ली थी। पपु० ४१ ११५-१३६

सुकेतुश्री—वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन और रानी सुप्रभा देवी का पुत्र। हेमागद और सुकान्त आदि इसके भाई थे। मपु० ४३ १२४, १२७, १३१-१३४

सुकेश—लका के राजा विद्युत्केश का पुत्र। इसकी रानी का नाम इन्द्राणी था। इस रानी से इसके क्रमश तीन पुत्र हुए—माली, सुमाली और माल्यवान्। यह अन्त में अपने तीनो पुत्रो को उनकी अपनी-अपनी सम्पदा (भाग) सौंपकर निर्ग्रन्थ साधु हो गया। पपु० ६ २२३, ३३३, ५३०-५३१, ५७०

सुकोशल—(१) भरतक्षेत्र का एक देश। इसका निर्माण वृषभदेव के समय में स्वय इन्द्र ने किया था। मपु० १६ १५३

(२) कोशल नगरी के राजा कीर्तिधर और रानी सहदेवी का पुत्र। इनके पिता ने इनके जन्मते ही दीक्षा ले लेने का निश्चय किया था। फलस्वरूप इन्हे एक पक्ष की उम्र मे ही राज्य प्राप्त हो गया था। इन्हें वैराग्य न हो सके एतदर्थ इनकी माता ने मुनि अवस्था में आहार के लिए आये राजा कीर्तिधर को भी नगर से निकलवा दिया था। पिता का यह अपमान और माँ की कूटनीति को वसन्तलता धाय से ज्ञातकर इन्होने चुपचाप राजमहल को छोड़ा और ये वन मे मुनि कीर्तिधर के निकट गये। कुटुम्बियो और सामतो के द्वारा सयम धारण करने के लिए मना किए जाने पर भी इन्होने "पत्नी विचित्रमाला के गर्भ में यदि पुत्र है तो उसको मैंने राज्य दिया" यह कहकर पिता से महाव्रत धारण कर लिया। इनकी माता सहदेवी जो मरकर व्याघ्री हुई, इन्हें देखते ही कुपित होकर उसने इनके शरीर को विदीर्ण कर दिया और चरणो का मांस भी खा लिया। यह सब होने पर भी ये अचल रहे। परिणामस्वरूप इन्हें केवलज्ञान हुआ और ये मुक्त हुए। इनकी पत्नी विचित्रमाला के पुत्र हिरण्यगर्भ को राज्य मिला। पपु० २१.१५७-१६४, २२ १-२३, ३१-३३, ४१-४७, ८४-१०२

सुकोशला—अयोध्या नगरी। सुन्दर कौशल देश में होने से यह नगरी सुकोशला नाम से प्रसिद्ध हुई। मपु० १२ ७८

सुख—(१) मन की निराकुल वृत्ति। यह कर्मो के क्षय अथवा उपशम से उत्पन्न होती है। मपु० ११ १६४, १८६, ४२.११९

(२) परमेष्ठियों का एक गुण। पारिव्राज्य क्रिया सम्बन्धी सत्ताईस सूत्रपदो में सत्ताईसवाँ सूत्रपद। इसके अनुसार मुनि तपस्या द्वारा परमानन्द रूप सुख पाता है। मपु० ३९ १६३-१६६, १९६

(३) राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८ १४

सुखद—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

सुखरथ—राजा जरासन्ध का पूर्वज। यह दृढरथ का पुत्र और दीपन का पिता था। हपु० १८ १८-१९, २२

सुखसाद्भूत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१७

सुखसेव्य—लंका में स्थित प्रमदवन के आवर्तक सात उद्यानो में तीसरा मनोहर उद्यान। पपु० ४६.१४१, १४५-१४८

सुखा—रावण की एक रानी। पपु० ७७ १४

सुखानुबन्ध—सल्लेखना व्रत के पाँच अतिचारो मे एक अतिचार—पहले भोगे हुए सुखो का स्मरण करना। हपु० ५८ १८४

सुखावती—जम्बूद्वीप के वत्सकावती देश में विजयार्ध पर्वत पर स्थित राजपुर नगर के राजा धरणिकम्प और रानी सुप्रभा की पुत्री। यह जाति, कुल और सिद्ध की हुई तीनो विद्याओ की पारगामिनी थी। इसने समय-समय पर श्रीपाल की सहायता की थी। इसके पुत्र का नाम यशपाल था। मपु० ४७ ७२-७४, ९०-९४, १२५-१२८, १४८-१५२, १८८

सुखावह—पश्चिम विदेहक्षेत्र का चौथा वक्षार पर्वत। यह सीतोदा नदी तथा निषध पर्वत का स्पर्श करता है। हपु० ५ २३०-२३१

सुखासन—निराकुलतापूर्वक ध्यान करने के लिए व्यवहृत आसन। ऐसे दो आसन होते हैं—कायोत्सर्ग और पर्यंकासन। मपु० २१ ७०-७१

सुखोदयक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओ मे इन्द्र-पद की प्राप्ति करानेवाली छत्तीसवी क्रिया। इस क्रिया से पुण्यात्मा श्रावक इन्द्र के

योग्य सुख भोगते हुए देवलोक में रहता है। मपु० ३८ ६०, २००-२०१

सुगत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

सुगति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

सुगन्ध—अरुण समुद्र का रक्षक एक देव। हपु० ५.६४६

सुगन्धा—पश्चिम विदेहक्षेत्र मे नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य में स्थित एक देश। खड्गपुरी इस देश की राजधानी थी। इसका अपर नाम सुगन्धि एव सुगन्धिल था। मपु० ५४ ९-१०, ६३.२१२-२१७, ७० ४, हपु० ५.२५१

सुगन्धि—पश्चिम विदेहक्षेत्र में सीतोदा नदी के उत्तर तट पर स्थित एक देश। इसका अपर नाम सुगन्धा था। मपु० ५४ ९-१० दे० सुगन्धा

सुगन्धिनी—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी की सत्तावनवी नगरी। मपु० १९ ८६-८७

सुगन्धिल—जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में सीतोदा नदी के उत्तर तट पर स्थित एक देश। मपु० ७० ४ दे० सुगन्धा

सुगर्भ—राजा वसुदेव और रानी रत्नवती का कनिष्ठ पुत्र। यह रत्नगर्भ का छोटा भाई था। हपु० ४८ ५९

सुगात्र—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का चौदहवाँ पुत्र। हपु० ८ १९४, पापु० ८ १९४

सुग्रीव—(१) विजयखेट नगर का एक क्षत्रिय गन्धर्वाचार्य। इसकी सोमा और विजयसेना दो पुत्रियाँ थी। इसने अपनी इन पुत्रियो का विवाह वसुदेव से किया था। हपु० १९ ५३-५५, ५८

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की काकन्दीपुरी के राजा एव तीर्थंकर पुष्पदन्त के पिता। मपु० ५५ २३-२४, २७-२८, पपु० २० ४५

(३) किष्किन्ध नगर के राजा वानरवशी सूर्यरज और रानी इन्दुमालिनी का कनिष्ठ पुत्र और बाली का भाई। श्रीप्रभा इसकी बहिन थी। महापुराण के अनुसार यह विजयार्ध पर्वत के किलकिल नगर के राजा विद्याधर बलीन्द्र और रानी प्रियगुसुन्दरी का पुत्र था। इसका विवाह ज्योतिपुर के राजा अग्निशिख और रानी ह्री देवी की पुत्री सुतारा से हुआ था। इसके अग और अगद दो पुत्र और तेरह पुत्रियाँ थी। साहसगति नामक एक दुष्ट विद्याधर इसका रूप धारण कर इसकी पत्नी सुतारा के पास आने-जाने लगा था। इसके इस सकट को राम ने दूर किया। उन्होने उससे युद्ध किया और उसे मार डाला था। लका मे इन्द्रजित ने इसके साथ मायामय युद्ध किया था। जिसमें नागपाश से यह बाँध लिया गया था। अन्त में यह राम के द्वारा मुक्त हुआ। इसके पश्चात् इसने निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली थी। मपु० ६८.२७१-२७३, पपु० ८ ४८७, ९१, १०-१२, १० २-१२, ४७ ५३, १२४-१२६, १३७-१४२, ६० १०८, ६१ १०, ११९ ३९

(४) राक्षसवश के राजा सपरिकीर्ति का पुत्र और हरिग्रीव का पिता। यह पुत्र को राज्य सौंपकर उग्र तपश्चरण करते हुए देव हुआ था। पपु० ५.३८७-३९०

सुगुप्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

सुगुप्तात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४०

सुगुप्ति—वाराणसी नगरी के राजा अचल और रानी गिरि देवी का ज्येष्ठ पुत्र। यह गुप्त का बडा भाई था। मुनि अवस्था मे इन दोनो भाईयो को राम और सीता ने वन में आहार कराया था। एक कुरूप गीध इन मुनियो के दर्शन करके सुरूप हो गया था। पपु० ४१ १३-१६, २७, ५३-५४, १०७, ११३

सुघोष—(१) बलदेव का शख। हपु० ४२ ७९

(२) चमरचच नगर के राजा अशनिघोष विद्याधर का पुत्र। मपु० ६२ २४५-२४६, २७५-२७६

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७८

सुघोषा—गन्धर्वसेना का सत्रह तारोवाली एक वीणा। किन्नर-देवो ने यह वीणा दक्षिणतटवासी विद्याधरो को दी थी। मपु० ७० २९६, ७५ ३२७, हपु० १९ १३७, २० ६१

सुचक्षु—मानुषोत्तर पर्वत का रक्षक व्यन्तरदेव। हपु० ५ ६३९

सुचन्द्र—(१) राम के भाई भरत के साथ दीक्षित एक नृप। पपु० ८८ ५

(२) आगामी आठवाँ बलभद्र। मपु० ७६ ४८६, हपु० ६० ५६९

सुचारु—(१) कृष्ण का एक पुत्र। हपु० ४८ ७१

(२) कुरुवशी एक राजा। यह तीर्थंकर अरनाथ के बाद हुआ था। हपु० ४५ २२-२३

सुजट—रावण का पक्षधर एक राजा। रथनूपुर के इन्द्र विद्याधर को जीतने रावण के साथ यह भी गया था। पपु० १० ३६

सुजन—भरतक्षेत्र का एक राष्ट्र। कुमार नदाढ्य की रानी श्रीचन्द्रा इसी देश के नगरशोभ नगर के राजा के भाई सुमित्र की कन्या थी। मपु० ७५ ४३८-४३९, ५२०-५२१

सुजय—चक्रवर्ती भरतेश का एक पुत्र। यह चरमशरीरी जयकुमार के साथ दीक्षित हो गया था। मपु० ४७ २८२-२८३

सुज्येष्ठा—(१) राजा सुराष्ट्रवर्धन की रानी। कृष्ण की पटरानी सुसीमा की यह जननी थी। मपु० ७१ ३८४, ३९६-३९७

(२) सद्भद्रिलपुर नगर के धनदत्त सेठ की छोटी पुत्री। सुदर्शना इसकी बडी बहिन थी। हपु० १८ ११२-११५

सुतनु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

सुतार—प्रकीर्णकासुरी विद्याधर का पुत्र। इसने किरात के वेष मे धनुर्धारी अर्जुन से युद्ध किया था तथा युद्ध में पराजित होकर इसे घर लौट जाना पडा था। हपु० ४६ ८-१३

सुतारा—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे स्थित रथनूपुर-चक्रवाल नगरी के राजा विद्याधर ज्वलनजटी के पुत्र अर्ककीर्ति और उसकी पत्नी ज्योतिमाला की पुत्री और अमिततेज की बहिन। इसने पोदनपुर के राजा त्रिपृष्ठ नारायण के पुत्र श्रीविजय का स्वयवर विधि से वरण किया था। चमरचचपुर के राजा इन्द्राशनि के पुत्र अशनिघोष

विद्याधर ने मुग्ध होकर माया से इसके पति का रूप धारण कर इसका हरण किया था। इसके पति श्रीविजय ने अशनिघोष से युद्ध किया। युद्ध से विरत होकर अशनिघोष ने विजय तीर्थङ्कर के समवसरण में जाकर अपने प्राण बचाये। यहाँ दोनो का वैर शान्त हो गया था। मपु० ६२ २५, ३०, १५१-१६३, २२७-२३३, २७८-२८३, पापु० ४ ८५-९१, १८४-१९१

(२) ज्योतिपुर नगर के राजा हुताशनशिख और ह्री रानी की पुत्री। साहसगति विद्याधर इस पर मुग्ध था, किन्तु इसे अल्पायु बताये जाने से इसका विवाह साहसगति से न किया जाकर सुग्रीव से किया गया था। पपु० १० २-१० दे० सुग्रीव–३

सुतेजस्—कुरुवंशी एक राजा। यह राजा सूर्यघोष के पश्चात् हुआ था। हपु० ४५ १४

सुत्वा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

सुत्रामपूजित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२७

सुदत्त—(१) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र में स्थित गान्धार देश के विन्ध्यपुर नगर के सेठ धनमित्र और उसकी पत्नी श्रीदत्ता का पुत्र। इसकी स्त्री प्रीतिकरा थी। नलिनकेतु द्वारा प्रीतिकरा का अपहरण किये जाने से विरक्त होकर इसने सुव्रत मुनि से दीक्षा ले ली थी। अन्त में सन्यासमरण करके यह ऐशान स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६३ ९९-१०४

(२) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित कलिंग देश के कांचीपुर नगर का एक वैश्य था। इसने सूरदत्तवैश्य के साथ युद्ध किया था। इस युद्ध में दोनो एक दूसरे के द्वारा मारे गये थे। मपु० ७० १२७-१३२

(३) भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी के चक्रवर्ती पुष्पदन्त और रानी प्रीतिंकारी का पुत्र। इसने विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में नन्दपुर के राजा हरिषेण के पुत्र हरिवाहन को मारकर दक्षिणश्रेणी में ही मेघपुर नगर के राजा धनंजय की पुत्री धनश्री के साथ पाणिग्रहण किया था। मपु० ७१ २५२-२५७

(४) सिन्धु देश की वैशाली नगरी के राजा चेटक और रानी सुभद्रा का चौथा पुत्र। धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र इसके बड़े भाई तथा सिंहभद्र, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास छोटे भाई थे। प्रियकारिणी आदि इसकी सात बहिनें थी। मपु० ७५ ३-७

(५) पद्मखेटपुर का एक सेठ। इसी के पुत्र भद्रमित्र को सिंहपुर के राजा ने सत्यघोष नाम दिया था। मपु० ५९ १४८-१७३

सुदर्शन—(१) जरासन्ध का एक पुत्र। हपु० ५२ ३२

(२) धृतराष्ट्र तथा गान्धारी का सत्तावनवाँ पुत्र। पापु० ८ २००

(३) अलका नगरी का राजा। विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के धरणीतिलक नगर के राजा अतिबल की पुत्री श्रीधरा का इसके साथ विवाह हुआ था। यशोधरा इसकी पुत्री थी। पत्नी और पुत्री दोनों आर्यिकाएँ हो गयी थी। हपु० २७ ७७-८२

(४) एक यक्ष। इसने शौर्यपुर के गन्धमादन पर्वत पर प्रतिमा योग में लीन सुप्रतिष्ठ मुनि पर अनेक उपसर्ग किये थे। मपु० ७० ११९-१२४, हपु० १८ २९-३१

(५) अवसर्पिणी काल के दुःषमा-सुषमा चौथे काल में उत्पन्न पाँचवाँ बलभद्र। ये तीर्थंकर धर्मनाथ के तीर्थ में हुए थे। जम्बूद्वीप मे खगपुर नगर के इक्ष्वाकुवंशी राजा सिंहसेन इनके पिता और रानी विजया माता थी। पुरुषसिंह नारायण इनका छोटा भाई था। इनके इस छोटे भाई द्वारा चलाये गये चक्ररत्न से मधुक्रीड प्रतिनारायण मारा गया था। आयु के अन्त में अपने भाई के मरने से शोक संतप्त होकर इन्होंने धर्मनाथ की शरण में जाकर दीक्षा ले ली थी तथा परम पद पाया था। मपु० ६१ ५६, ७०-८३, २०.२३२-२४०, २४८, वीवच० १० १ १११

(६) एक कुरुवंशी राजा। ये अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ के पिता थे। मपु० ६५ १४-१५, १९-२१, पपु० २० ५४, हपु० ४५ २१-२२

(७) रुचकगिरि का उत्तरदिशा में विद्यमान आठ कूटों में आठवाँ कूट। इस कूट पर धृति देवी का निवास है। हपु० ५ ७१६-७१७

(८) अधोग्रैवेयक का एक विमान। मपु० ४९ ९, हपु० ६ ५२

(९) मानुषोत्तर पर्वत की उत्तरदिशा में स्थित स्फटिक कूट पर रहनेवाला देव। हपु० ५ ६०५

(१०) एक व्रत। विदेहक्षेत्र के प्रहसित और विकसित विद्वानों ने यह व्रत किया था। मपु० ७ ६२-६३, ७७

(११) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का चौवनवाँ नगर। मपु० १९ ८५-८७

(१२) एक चक्ररत्न। मपु० ३७ १६९, ६८ ६७५-६७७, पपु० ७५ ५०-६०, हपु० ५३ ४९-५०, ११,५७

(१३) एक उद्यान। यहाँ मन्दिरस्थविर मुनि आये थे। मपु० ७० १८७, हपु० ५२ ८९

(१४) उज्जयिनी नगरी के बाहर स्थित एक सरोवर। हपु० ३३ १०१, ११४

(१५) चन्द्रोदय पर्वत का निवासी एक यक्ष। जीवन्धर ने पूर्वभव में इसे जब यह कुत्ते की पर्याय में था, पंच नमस्कार मन्त्र दिया था। मपु० ७५ ३६१-३६२

(१६) छठे बलभद्र नन्दिमित्र के पूर्वजन्म का नाम। पपु० २० २३२

(१७) एक मुनि। वेदवती की पर्याय में सीता के जीव ने इन्हें अपनी बहिन आर्यिका सुदर्शना से बातचीत करते हुए देखकर अपवाद किया था। इसी अपवाद के फलस्वरूप सीता का भी अयोध्या में मिथ्या अपवाद हुआ। पपु० १०७ २२५-२३१

(१८) जम्बूद्वीप के मध्य में स्थित मेरु पर्वत। वीवच० २ २-३

(१९) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८१

सुदर्शना—(१) तीर्थंकर वृषभदेव की पालकी । मपु० १६ ९३-९४, ९८-१००, हपु० ९ ७७

(२) सद्भद्रिलपुर नगर के धनदत्त सेठ की ज्येष्ठ पुत्री । सुज्येष्ठा की यह बड़ी बहिन थी । इन दोनों बहिनों ने दीक्षा ले ली थी तथा तीव्र तपश्चरण करके दोनों अच्युत स्वर्ग में देव हुई । मपु० ७० १८२-१९६, हपु० १८ ११२-११३, ११७, १२२-१२३

(३) विराटनगर के राजा विराट की रानी । यह कीचक की बहिन थी । हपु० ४६ २३, २६-२८

(४) सन्ध्याकार नगर के राजा सिंहघोष की रानी । यह हृदय-सुन्दरी की जननी थी । हपु० ४५ ११४-११५

(५) नन्दीश्वर द्वीप की उत्तरदिशा सबंधी अंजनगिरी की उत्तर दिशा में स्थित वापी । हपु० ५.६६४

(६) एक गणिनी । विदेहक्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा जयवर्मा की रानी सुप्रभा ने इनके पास रत्नावली व्रत के उपवास किये थे । मपु० ७ ३८-४४

(७) खड्गपुर नगर के राजा सोमप्रभ की रानी । पुरुषोत्तम नारायण के भाई सुप्रभ की यह जननी थी । मपु० ६७ १४१-१४३, पपु० २० २३८-२३९

(८) ब्रह्म स्वर्ग के विद्युन्माली इन्द्र की चार प्रमुख देवियों में एक देवी । मपु० ७६ ३२-३३

(९) एक आर्यिका । पपु० १०६ २२५-२३३ दे० सुदर्शन-२०

(१०) काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्धन की रानी । इसके प्रियंकर और हितकर दो पुत्र थे । यह पति और पुत्रों के दीक्षित हो जाने पर उनके वियोग मे दुखी होकर निदानवश अनेक योनियों में भ्रमण करने के पश्चात् मनुष्यगति में पुरुष होकर पुण्यवशात् सिद्धार्थ क्षुल्लक हुई । पपु० १०८ ७, ४७-४९

सुदु सह—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का बारहवाँ पुत्र । पापु० ८.१९९

सुदेव—शामली नगर के दामदेव ब्राह्मण का कनिष्ठ पुत्र । वसुदेव का यह छोटा भाई था । इसकी स्त्री प्रियगु थी । पपु० १०८.३९-४१

सुदेवी—वरुण लोकपाल की रानी । इसकी पुत्री सत्यवती का विवाह रावण के साथ हुआ था । पपु० १९ ९८

सुदृष्टि—(१) भद्रिल नगर का एक श्रेष्ठी । इसकी स्त्री का नाम अलका था । सुनैगम देव के द्वारा देवकी के युगल पुत्र इसकी पत्नी के पास तथा इसके मृत पुत्र देवकी के पास स्थानान्तरित किये गये थे । देवकी के पुत्रों के बड़े होने पर इसे अपूर्व वैभव प्राप्त हुआ । मपु० ७१ २९३-२९६, हपु० ३५ ४-५, ९

(२) गजपुर नगर के राजा सुप्रतिष्ठ और रानी सुनन्दा का पुत्र । इसका पिता इसे राज्य-लक्ष्मी देकर दीक्षित हो गया था । मपु० ७० ५१-५७, हपु० ३४ ४३, ४६-४७

(३) कृष्ण का पक्षधर एक राजा । यह युद्ध करने कुरुक्षेत्र पहुँचा था । मपु० ७१ ७४

सुधर्म—(१) तीर्थंकर महावीर के ग्यारह गणधरों में गौतम इन्द्रभूति गणधर से प्राप्त श्रुत के धारक दूसरे गणधर । इनसे जम्बूस्वामी अन्तिम केवली ने श्रुत धारण किया था । मपु० १ १९९, ७४ ३४, हपु० १.६०, ३ ४२, वीवच० १ ४१-४२, १९ २०६

(२) एक मुनिराज । गिरिनगर के राजा चित्ररथ ने इनके उपदेश से प्रभावित होकर दीक्षा ले ली थी । चित्ररथ के रसोइए ने इन्हें कड़वी तुम्बी-आहार में दी थी जिससे इनके शरीर मे विष फैल गया था । अपना मरण निश्चित जानकर इन्होंने ऊर्जयन्तगिरि पर समाधि-मरण किया और ये अहमिन्द्र हुए । मपु० ७१-२७१-२७५, हपु० ३३ १५०-१५५

(३) महावीर के निर्वाण के पश्चात् हुए दस पूर्व और ग्यारह अंगधारी ग्यारह मुनियों में अन्तिम मुनि । वीवच० १,४६

(४) सातवें बलभद्र नन्दिषेण के पूर्वजन्म के दीक्षागुरु । पपु० २० २३५

(५) तीसरे बलभद्र के दीक्षागुरु । पपु० २० २४६-२४७

(६) तीर्थंकर धर्मनाथ का पुत्र । मपु० ६१ ३७

(७) एक मुनि । इनसे रत्नपुर नगर के राजा मणिकुण्डली के दोनों पुत्र दीक्षित हुए थे । मपु० ६२ ३६९-३७३

(८) पूर्वविदेहक्षेत्र में मंगलावती देश के रत्नसंचयनगर के राजा श्रीधर के दीक्षागुरु । मपु० ७ १४, १६

(९) तीसरे बलभद्र । इनका अपर नाम धर्म था । मपु० ५९ ६३, ७१, हपु० ६० २९०

सुधर्मक—बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य के एक गणधर । हपु० ६० ३४७

सुधर्ममित्र—एक मुनि । ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन के पूर्वभव के ये दीक्षागुरु थे । पपु० २० १८८-१८९

सुधर्मसेन—लोहाचार्य के पश्चात् हुए अनेक आचार्यों में एक आचार्य इनके पूर्व श्रीधरसेन तथा बाद में सिंहसेन आचार्य हुए । हपु० ६६ २८

सुधर्मा—(१) समवसरण की एक सभा । यह विजयदेव के भवन से उत्तरदिशा में स्थित है । यह छः कोश लम्बी, तीन कोश चौड़ी, नौ कोश ऊँची और एक कोश गहरी है । इसके उत्तर में एक जिनालय है । हपु० ५ ४१७

(२) रथनूपुर नगर के राजा सहस्रार के पुत्र इन्द्र की एक सभा । पपु० ७ १-२, १८, २८

सुधाम—समवसरण में सभागृहों के आगे स्थित स्फटिक द्वार के आठ नामों में तीसरा नाम । हपु० ५७.५९

सुधी—(१) एक नृप । यह राम के भाई भरत के साथ दीक्षित हो गया था । पपु० ८८ ४

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५. १२५, १७१

सुधौतकलधौतश्री—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ २००

सुध्वज—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का अट्ठानवेवाँ पुत्र। पापु० ८.२०५

सुनन्द—(१) भरतक्षेत्र में हस्तिनापुर नगर के राजा गंगदेव और रानी नन्दयशा का पाँचवाँ पुत्र। यह नन्दिषेण के भाई के साथ युगल रूप में उत्पन्न हुआ था। इसके गंग, गंगदत्त, गंगरक्षित और नन्द बड़े भाई तथा नन्दिषेण और निर्नामक छोटे भाई थे। मपु० ७१.२६३, हपु० ३३.१४१-१४५

(२) वृन्दावन का रहनेवाला एक गोप। इसकी स्त्री यशोदा थी। बलदेव और वसुदेव ने पालन-पोषण करने के लिए कृष्ण को इसे ही सौंपा था। हपु० ३५.२८-२९

(३) अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ का एक असिरत्न। पापु० ७.२१

(४) एक यक्ष। इसने लक्ष्मण को सम्मान सौनन्दक तलवार दी थी। मपु० ६८.६४६

(५) आगामी दसवें तीर्थङ्कर का जीव। मपु० ७६.४७२

(६) तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव का जीव। पपु० २०.२३-२४

(७) बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के पूर्वभव के पिता। पपु० २० २९-३०

(८) रावण का एक धनुर्धारी योद्धा। यह राम-रावण युद्ध में युद्ध करने गया था। पपु० ७३.१७१

(९) विजयावती नगरी का एक गृहस्थ। इसकी पत्नी रोहिणी तथा अर्हद्दास और ऋषिदास पुत्र थे। पपु० १२३.११२-११५

सुनन्दा—(१) गजपुर के राजा सुप्रतिष्ठ की रानी। सुदृष्टि इसका पुत्र था। मपु० ७०.५२, हपु० ३४.४३, ४६

(२) तीर्थङ्कर वृषभदेव की दूसरी रानी। बाहुबली इसका पुत्र और सुन्दरी पुत्री थी। राजा कच्छ और महाकच्छ की यह बहिन थी। मपु० १५.७०, १६.८, पपु० ३.२६०, हपु० ९.१८,२२, पापु० २.१३३

(३) भरतक्षेत्र के मलय देश में भद्रपुर नगर के राजा दृढ़रथ की रानी। तीर्थङ्कर शीतलनाथ की ये जननी थी। मपु० ५६.२४, २८-२९, पपु० २०.४६

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एकक्षेत्र नगर के एक वणिक् की स्त्री। धनदत्त इसका पुत्र था। पपु० १०६.१०-११

[illegible]—(१) एक आचार्य। ये गौतमाचार्य के पश्चात् हुए अनेक आचार्यों में आचार्य शिवसेन के शिष्य और ईश्वरसेन के गुरु थे। हपु० ६६.२८

(२) एक आचार्य। ये आचार्य ईश्वरसेन के शिष्य और आचार्य अभयसेन के गुरु थे। हपु० ६६.२८

[illegible]—एक [illegible]। [illegible] अर्जुन यहीं रहने लगे थे। [illegible] गोविन्द ने इसे [illegible] किया [illegible]। पापु० १६.६

[illegible]—[illegible] के स्वामी [illegible] पुत्र। [illegible]। पपु० ८३.३०२ पापु० ३.५२

सुनय—(१) दशानन का पक्षधर एक विद्याधर राजा। यह मय विद्याधर का मंत्री था। पपु० ८.२६९-२७०

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७४

सुनयतत्त्वविद्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१४०

सुनयना—तीर्थंकर अजितनाथ की रानी। पपु० ५.६५ दे० . जितनाथ

सुनाभ—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का तीसवाँ पुत्र। पापु० ८.१९६

सुनीता—अन्धकवृष्टि और सुभद्रा रानी के चतुर्थ पुत्र हिमवान् की रानी। मपु० ७०.९५-९६, ९८-९९, हपु० १९.३

सुनेत्रा—पाँचवें नारायण पुरुषसिंह की पटरानी। पपु० २०.२२७ दे० पुरुषसिंह

सुनेमि—राजा समुद्रविजय के अनेक पुत्रों में एक पुत्र। हपु० ४८.४३

सुनैगम—एक देव। इन्द्र की आज्ञा से इसने देवकी के युगलपुत्रों को सुभद्रिलनगर के सेठ सुदृष्टि की स्त्री अलका के पास और उसी समय अलका के उत्पन्न हुए मृत युगलपुत्रों को देवकी के पास प्रसूतिगृह में पहुँचाये थे। हपु० ३५.४-५

सुन्द—अलकारपुर के निवासी खरदूषण तथा रावण की बहिन चन्द्रनखा का कनिष्ठ पुत्र। शम्बूक का यह अनुज था। चारुरत्न इसका पुत्र था। पपु० ४३.४०-४८, ११८.२३

सुन्दन—एक राजा। इसने राम के भाई भरत के पास दीक्षा ली थी तथा परमात्म पद प्राप्त किया था। पपु० ८८.१.२, ६

सुन्दर—(१) एक राजा। इसने तीर्थंकर वासुपूज्य को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५८.४०-४१

(२) कुण्डलगिरि के उत्तरदिशा सम्बन्धी स्फटिककूट का निवासी एक देव। हपु० ५.६९४

(३) भरतक्षेत्र का एक मिथ्यादृष्टि ब्राह्मण। अर्हद्दास के सदुपदेश से यह सम्यक्त्वी हो गया था। अन्त में समाधिपूर्वक मरण करके व्रताचरण से उत्पन्न पुण्य के प्रभाव से यह सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ और स्वर्ग से च्यवकर राजा श्रेणिक का अभयकुमार नामक पुत्र हुआ। वीवच० १९.१७०-२०३

सुन्दरनन्दा—जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में महाराष्ट्र देश की सुसीमा नगरी के राजा सुदृष्टि की रानी। ये तीर्थंकर सुविधि की जननी थी। पपु० १०.१२१-१२२

सुन्दरमालिनी—[illegible] द्वीप के [illegible] की रानी। [illegible] प्रतिसूर्य की ये माता थी। पपु० १७.३४८-३४९

सुन्दरी—(१) तीर्थंकर वृषभदेव और उनकी दूसरी रानी सुनन्दा की पुत्री। ये बाहुबली की बहिन थी। वृषभदेव ने [illegible] बहिनों के साथ लिपि, अंक, संगीत, गणित आदि कलाओं का ज्ञान दिया था। इसने अपने पिता तीर्थंकर वृषभदेव से दीक्षा ले ली थी। [illegible] आर्यिकाओं में प्रधान रही। मपु० १६.७-८, २४.१७७, हपु० ९.१८, २२-२४, १२.४२, पापु० २.१५५

(२) [illegible] नगर के राजा [illegible] की रानी, [illegible] जननी। मपु० ५९.२३९, हपु० २२.८९-९०

(३) भरतक्षेत्र के चित्रकारपुरनगर के राजा प्रीतिभद्र की रानी। प्रीतिंकर की ये जननी थी। मपु० ५९ २५४-२५५, हपु० २७ ९७

(४) मथुरा के राजा शूरसेन के सूरदेव पुत्र की स्त्री। यह विरक्त होकर दीक्षित हो गयी थी। हपु० ३३ ९६-९९, १२७, ६० ५१

(५) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा महासेन की रानी। इसके उग्रसेन और वरसेन दो पुत्र तथा वसुन्धरा पुत्री। मपु० ७६.-२६२-२६३, २६५

(६) भीलों के राजा हरिविक्रम की स्त्री। इसका वनराज पुत्र था। मपु० ७५ ४७९-४८०

(७) जम्बूद्वीप सबधी भरतक्षेत्र मे वत्स देश की कौशाम्बी नगरी के राजा पार्थिव की रानी और सिद्धार्थ की जननी। मपु० ६९ २-४

(८) गन्धर्वपुर के राजा विद्याधर मन्दरमाली की रानी। चिन्तागति और मनोगति इसके दो पुत्र थे। मपु० ८ ९२-९३

(९) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र मे पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा प्रियसेन की रानी। इसके दो पुत्र थे—प्रीतिंकर और प्रीतिदेव। मपु० ९ १०८-१०९

(१०) पुष्करद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र मे मगलावती देश के रत्नसचय नगर के राजा महीधर की रानी। जयसेन इसका पुत्र था। मपु० १० ११४-११६

(११) रावण की एक रानी। मपु० ७७ १२

(१२) भरत की भाभी। पपु० ८३.९३

सुपद्म—कुरुवशी एक राजा। ये राजा पद्म के पुत्र तथा पद्मदेव के पिता थे। हपु० ४५ २५

सुपद्मा—एक देश। यह जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र मे सीतोदा नदी के दक्षिण तट पर स्थित है। मपु० ६३.२१०, हपु० ३४ ३, ५, २४९

सुपर्णकुमार—(१) हिमवान् पर्वत के हिमवत् कूट का निवासी एक देव। हपु० ११ ४३-४४

(२) पाताल लोक का निवासी एक भवनवासी देव। हपु० ४ ६३

सुपार्श्व—(१) सातवे तीर्थङ्कर। ये अवसर्पिणी काल के दु षमा-सुषमा चौथे काल मे उत्पन्न हुए थे। जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काशी देश की वाराणसी नगरी के राजा सुप्रतिष्ठ की रानी पृथिवीषेणा के गर्भ में ये भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन विशाखा नक्षत्र में स्वर्ग से अवतरित हुए थे। इनका जन्म ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी के दिन अग्निमित्र नामक शुभ योग में हुआ था। इनका यह नाम जन्माभिषेक करने के पश्चात् इन्द्र ने रखा था। इनके चरणो में स्वस्तिक चिह्न था। इनकी आयु बीस लाख पूर्व वर्ष की थी। शरीर दो सौ धनुष ऊँचा था। इन्होने कुमारकाल के पाँच लाख वर्ष बीत जाने पर धन का त्याग (दान) करने के लिए साम्राज्य स्वीकार किया था। इनके नि स्वेदत्व आदि आठ अतिशय तथा पपु० और हपु० के अनुसार दश अतिशय प्रकट हुए थे। इनकी आयु अनपवर्त्य थी। वर्ण प्रियगु पुष्प के समान था। बीस पूर्वांग कम एक लाख पूर्व की आयु शेष रहने पर इन्हें वैराग्य हुआ। ये मनोगति नामक शिविका पर आरूढ होकर सहेतुक वन गये तथा वहाँ इन्होने ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी के दिन साय वेला मे एक हजार राजाओ के साथ सयम धारण किया। सयमी होते ही इन्हें मन पर्ययज्ञान हुआ। सोमखेट नगर के राजा महेन्द्रदत्त ने इन्हें आहार दिया था। ये छद्मस्थ अवस्था मे नौ वर्ष तक मौन रहे। सहेतुक वन में शिरीष वृक्ष के नीचे फाल्गुन कृष्ण षष्ठी के दिन सायकाल के समय इन्हें केवलज्ञान हुआ था। इनके चतुर्विध सघ में पचानवे गणधर, दो हजार तीस पूर्वधारी, दो लाख चवालीस हजार नौ सौ बीस शिक्षक, नौ हजार हजार अवधिज्ञानी, ग्यारह हजार केवलज्ञानी, पन्द्रह हजार तीन सौ विक्रिया ऋद्धिधारी, नौ हजार एक सौ पचास मन पर्ययज्ञानी, आठ हजार छ सौ वादी, इस प्रकार कुल तीन लाख मुनि, तीन लाख तीस हजार आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक, पाँच लाख श्राविकाएँ, असख्य त देव-देवियाँ और सख्यात तिर्यंच थे। विहार करते हुए आयु का एक मास शेष रहने पर ये सम्मेदशिखर आये। यहाँ एक हजार मुनियो के साथ इन्होने प्रतिमायोग धारण कर फाल्गुन कृष्ण सप्तमी के दिन विशाखा नक्षत्र में सूर्योदय के समय मोक्ष प्राप्त किया था। दूसरे पूर्वभव मे ये धातकीखण्ड के पूर्व विदेहक्षेत्र में सुकच्छ देश के क्षेमपुर नगर के नन्दिषेण नामक नृप थे। प्रथम पूर्वभव मे मध्यम ग्रैवेयक के सुभद्र नामक मध्यम विमान मे अहमिन्द्र रहे। मपु० ५३ २-५३, पपु० २ ८९-९०, हपु० १ ९, ३.१०-११, १३ ३२, पापु० १२ १, वीवच० १८ २७, १०१-१०५

(२) आगामी दूसरे तीर्थंकर सुरदेव के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६ ४७१, ४७७

(३) आगामी तीसरे तीर्थंकर। मपु० ७६.४७७, हपु० ६० ५५८

सुपार्श्वकीर्ति—लक्ष्मण और उनकी मनोरमा महादेवी का पुत्र। पपु० ९४ ३५

सुपुत्र—पुष्करार्ध द्वीप सम्बन्धी पूर्व विदेहक्षेत्र के सुकच्छ देश में क्षेमपुर नगर के राजा नलिनप्रभ का पुत्र। नलिनप्रभ ने इसे राज्य देकर सयम ले लिया था। मपु० ५७ २-३, १२

सुप्रकारपुर—एक नगर। कृष्ण को पटरानी लक्ष्मणा इसी नगर के राजा शम्बर की पुत्री थी। मपु० ७१ ४०९-४१४

सुप्रजा—राजा दशरथ की रानी और शत्रुघ्न की जननी। यह मरकर आनत स्वर्ग मे देव हुई थी। पपु० ८९ १० १३, १२३ ८०

सुप्रणिधि—रुचकगिरि के सुप्रबुद्ध कूट की निवासिनी एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०८

सुप्रतिष्ठ—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे स्थित पोदनपुर नगर के राजा सुस्थित और रानी सुलक्षणा का पुत्र। इसने अपने पूर्वजन्म की प्रवृत्तियो का स्मरण करके सुधर्माचार्य के पास दीक्षा ले ली थी। सुदत्त इसका छोटा भाई था जो मरकर सुदर्शन यक्ष हुआ था। इस यक्ष ने इनके ऊपर अनेक उपसर्ग किये थे जिन्हें सहकर ये केवली हुए। पश्चात् उस यक्ष ने भी इनसे धर्मोपदेश सुनकर समीचीन धर्म धारण कर लिया था। शौर्यपुर के राजा शूर और मथुरा के राजा

सुवीर के ये दीक्षागुरु थे । मपु० ७० १२२-१२४, १३८-१४४, हपु० १८.९-११, ३०,

(२) रुचकवर पर्वत की दक्षिण दिशा में स्थित आठ कूटों में आठवाँ कूट । चित्रा देवी की यह निवासभूमि है । हपु० ५ ७१०

(३) वाराणसी नगरी का राजा । यह तीर्थंकर सुपार्श्व का पिता था । मपु० ५३.१८-१९, २३, पपु० २० ४३

(४) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी कुरुजागल देश के हस्तिनापुर के राजा श्रीचन्द्र और रानी श्रीमती का पुत्र । सुनन्दा इसकी रानी थी । इसका पिता इसे राज्य देकर दीक्षित हो गया था । इसने भी संसार को नश्वर समझकर सुदृष्टि पुत्र को राज्य सौंपकर सुमन्दर मुनि से दीक्षा ले ली थी । आयु के अन्त में इसने एक मास का संन्यास धारण कर लिया था । इस प्रकार समाधिपूर्वक मरण करके यह जयन्त नामक अनुत्तर विमान में अहमिन्द्र हुआ था । मपु० ७० ५१-५९, हपु० ३४ ४३-५०

(५) कुरुवंशी एक राजा । यह श्रीचन्द्र का पुत्र था । हपु० ४५ १२

(६) मगधदेश का एक नगर । मपु० ७६ २१६

सुप्रतिष्ठक—पाँचवाँ रुद्र । हपु० ६० ५३४-५३६ दे० रुद्र-३

सुप्रतिष्ठित—एक नगर । लोलुप हलवाई इसी नगरी में रहता था । मपु० ८ २३४ दे० लोलुप

सुप्रबुद्ध—(१) अधोग्रैवेयक का तीसरा इन्द्रक विमान । हपु० ६ ५२

(२) रुचकगिरि का दक्षिण दिशा सम्बन्धी कूट । सुप्रणिधि दिक्कुमारी देवी की यह निवासभूमि है । हपु० ५ ७०८

सुप्रबुद्धा—(१) रुचकगिरि के शिखर मन्दरकूट पर रहनेवाली एक दिक्कुमारी देवी । हपु० ५.७०८

(२) नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशा सम्बन्धी अंजनगिरि की दक्षिण दिशा में स्थित एक वापी । हपु० ५ ६६२

(३) साकेत नगर के राजा अरिंजय के पुत्र अरिंदम और उसकी श्रीमती रानी की पुत्री । इसने प्रियदर्शना आर्यिका से दीक्षा ले ली थी । आयु के अन्त में सौधर्म इन्द्र की यह मणिचूला नाम की देवी हुई । मपु० ७२ २५, ३४-३६

सुप्रभंकरा—नन्दीश्वर द्वीप के उत्तरदिशा सम्बन्धी अंजनगिरि की पूर्व दिशा में स्थित एक वापी । हपु० ५ ६६४

सुप्रभ—(१) पुष्कर द्वीप का एक रक्षक देव । हपु० ५ ६४२

(२) कुण्डलवर द्वीप के मध्य में स्थित कुण्डलगिरि का दक्षिण दिशा सम्बन्धी इस नाम का एक कूट । [illegible] देव की यह निवासभूमि है । हपु० ५ ६९२

(३) [illegible] हपु० ५७ ५९

(४) [illegible]

सुप्रभा—था । इन दोनों का शरीर पचास धनुष ऊँचा था और आयु तीस लाख वर्ष की थी । इन्होंने अन्त में भाई के मरण-वियोग से मुक्त होकर सोमप्रभ मुनि से दीक्षा ले ली थी तथा तप द्वारा कर्मों की निर्जरा करके मोक्ष प्राप्त किया था । मपु० ६० ६३-६९, ८०-८१, पपु० २० २४८, हपु० ६० २९०, वीवच० १८ १०१, १११

(५) तीर्थंकर नमिनाथ का पुत्र । मपु० ६९ ५२

(६) सनत्कुमार चक्रवर्ती के पूर्वभव के जीव धर्मरुचि राजा का पिता । तिलकसुन्दरी उसकी रानी थी । पपु० २० १४७-१४८

(७) महापुरी नगरी के राजा धर्मरुचि के दीक्षागुरु । पपु० २० १४९

(८) महापद्म चक्रवर्ती के पूर्वभव का जीव तथा वीतशोका नगरी के चिन्त नामक राजा के दीक्षागुरु । पपु० २० १७८

(९) सीता के स्वयंवर में सम्मिलित हुआ एक राजकुमार । पपु० २८ २१५

(१०) विनीता नगरी का राजा । इसकी रानी प्रह्लादना तथा सूर्योदय और चन्द्रोदय पुत्र थे । पपु० ८५ ४५

(११) जम्बूद्वीप के पूर्वविदेहक्षेत्र में मत्तकोकिल ग्राम के राजा कान्तशोक का पुत्र । इसने संयत मुनि के पास जिनदीक्षा ले ली थी । कषायों की उपशम अवस्था में मरकर यह सर्वार्थसिद्धि में उत्पन्न हुआ । यह स्वर्ग से चयकर विद्याधरों का राजा बाली हुआ । पपु० १०६ १९०-१९७

(१२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १९७

सुप्रभा—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के किन्नरोद्गीत नगर के युवराज अशनिवेग की स्त्री । इसकी पुत्री श्यामा सो जो वसुदेव को विवाही गयी थी । हपु० १९ ८०-८३, ९५

(२) समवसरण के आम्रवन की एक वापी । हपु० ५७ ३५

(३) राजा समुद्रविजय के छोटे भाई अभिनन्दन की रानी । मपु० ७० ९९, हपु० १९.५

(४) त्रिपुरपुर नगर के राजा प्रभंजनवाहन और रानी [illegible] की दूसरी पुत्री । हपु० ४५ ९५-९८

(५) धातकीखण्ड द्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र में स्थित गंधिल देश की अयोध्या नगरी के राजा जयवर्मा की रानी और अजितंजय की जननी । राजा जयवर्मा के दीक्षित होकर मोक्ष जाने के पश्चात् यह सुदर्शना गणिनी के पास रत्नावली तप करके अच्युत स्वर्ग के [illegible] विमान में देव हुई । मपु० ७ ४८-४४

(६) वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन की रानी । इसके हेमांगद आदि सौ पुत्र तथा सुलोचना और लक्ष्मीमती ये दो पुत्रियाँ थीं । मपु० ४३ १२८, १३०-१३५

(७) [illegible] मपु० ६२ ३६१-३६३

(८) एक शिविका। तीर्थङ्कर अजितनाथ ने दीक्षा वन जाते समय इसका व्यवहार किया था। मपु० ४८ ३७

(९) विजयार्ध पर्वत पर स्थित वस्त्वालय नगर के राजा सेन्द्रकेतु की रानी। यह मदनवेगा की जननी थी। मपु० ६३ २५०-२५१

(१०) सौधर्मेन्द्र की देवी। इसने मनुष्य पर्याय पाकर तप करने का विचार किया था। फलस्वरूप वहाँ से चयकर इसने श्रीषेण राजा की पुत्री होकर दीक्षा धारण की थी। मपु० ७२.२५१-२५६

(११) वैशाली के राजा चेटक और रानी सुभद्रा की तीसरी पुत्री। हेमकच्छ नगर के राजा दशरथ की यह रानी थी। मपु० ७५.३-६, १०-११

(१२) एक गणिनी। राजा दमितारि की पुत्री कनकश्री ने इन्ही से दीक्षा ली थी। मपु० ६२ ५००-५०८

(१३) पुण्डरीकिणी नगरी के वज्र वैश्य की स्त्री। मपु० ७१. ३६६

(१४) प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ की पटरानी। पपु० २० २२७-२२८

(१५) किन्नरगीत नगर के राजा रतिमयूख और अनुमति रानी की पुत्री। पपु० ५ १७९

(१६) राजा रक्षस की रानी। आदित्यगति और बृहत्कीर्ति इसके पुत्र थे। पपु० ५ ३७८-३७९

(१७) पाँचवें बलभद्र सुदर्शन की जननी। पपु० २० २३८-२३९

(१८) राजा दशरथ की रानी। शत्रुघ्न इसके पुत्र थे। पपु० २२ १७६, २५ ३९, ३७ ५०

(१९) जनक के छोटे भाई कनक की रानी। लोकसुन्दरी इसकी कन्या थी। पपु० २८ २५८

(२०) देवगीतपुर नगर के चन्द्रमण्डल की पत्नी। चन्द्रप्रतिम इसका पुत्र था। पपु० ६४.२४-३१

सुप्रभार्य—तीर्थङ्कर नमिनाथ के प्रमुख गणधर। मपु० ६९ ६०

सुप्रयोगा—भरतक्षेत्र की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना ने इस नदी को पार करके कृष्णवर्णा नदी की ओर प्रस्थान किया था। मपु० २९.८६

सुप्रवृद्ध—मानुषोत्तर पर्वत के प्रवालकूट का स्वामी देव। हपु० ५ ६०६

सुप्रसन्न—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३२

सुप्रीतिक्रिया—गर्भान्वय की त्रेपन क्रियाओं में तीसरी क्रिया। यह क्रिया गर्भाधान के पश्चात् पाँचवें माह में की जाती है। इसमें मन्त्र और क्रियाओं को जाननेवाले श्रावकों को अग्नि देवता की साक्षी में अर्हन्त की प्रतिमा के समीप उनकी पूजा करके आहुतियाँ देना पड़ती हैं। आहुतियाँ देते समय निम्न मन्त्र बोले जाते है—

अवतारकल्याणभागीभव, मन्दरेन्द्राभिषेककल्याणभागीभव, निष्क्रान्तिकल्याणभागीभव, आर्हन्त्यकल्याणभागीभव, परमनिर्वाणकल्याणभागीभव। मपु० ३८ ५१-५५, ८०-८१, ४० ९७-१००

सुफल्गु—राजा समुद्रविजय का पुत्र। हपु० ४८.४४

सुबन्धु—(१) चम्पा नगरी का एक वैभव सम्पन्न वैश्य। इसकी पत्नी धनदेवी थी। इसकी एक पुत्री थी, जो शरीर से दुर्गन्ध निकलने के कारण दुर्गन्धा नाम से प्रसिद्ध थी। मपु० ७२ २४१-२४३, पापु० २४ २४-२५

(२) एक निर्ग्रन्थ मुनि। शाण्डिल्या अपनी बहिन चित्रमति को गर्भावस्था मे इनके पास छोड गयी थी। चित्रमति के पुत्र होने पर इन्होंने उसके पुत्र को चक्रवर्ती होने की भविष्यवाणी की थी। मपु० ६५ ११६-१२३

सुबन्धुतिलक—कमलसकुल नगर का राजा। इसकी रानी मित्रा और पुत्री कैकयी थी। पपु० २२ १७३-१७४

सुबल—(१) सूर्यवंशी राजा बलाक का पुत्र। यह राजा महाबल का पिता था। पपु० ५ ५, हपु० १३ ८

(२) सोमवंशी राजा महाबल का पुत्र। यह भुजबली का पिता था। पपु० ५ १०, १२, हपु० १३ १७

सुबाला—(१) कौशल देश मे साकेत नगर के राजा समुद्रविजय की रानी। यह राजा सगर की जननी थी। मपु० ४८ ७१-७२

(२) वाराणसी नगरी के राजा दशरथ की रानी। राम की यह जननी थी। मपु० ६७ १४८-१५०

सुबाहु—(१) वृषभदेव के ग्यारहवें गणधर। हपु० १२ ५८

(२) मथुरा के निवासी बृहद्ध्वज का पुत्र। हपु० १८ १

(३) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का ग्यारहवाँ पुत्र। पापु० ८ १९४

(४) पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन का पुत्र। यह पूर्वभव में अधोग्रैवेयक में अहमिन्द्र था। मपु० ११ ९, ११-१२

सुबुद्धि—पोदनपुर के राजा श्रीविजय का एक मन्त्री। पोदनपुर नरेश के मस्तक पर वज्र गिरने की हुई भविष्यवाणी के अनुसार राजा की सुरक्षा के लिए इस मन्त्री ने राजा को विजयार्ध पर्वत की गुफा में रहने की सलाह दी थी। मपु० ६२ १७२-१७३, २००, पापु० ४ ९६-९८, ११५

सुभग—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८४

सुभद्र—(१) तीर्थङ्कर महावीर का निर्वाण होने के पश्चात् हुए आचाराग के ज्ञाता चार मुनियो में प्रथम मुनि। मपु० २ १४९-१५०, ७६ ५२५, हपु० १ ६५, ६६ २४, वीवच० १ ५०

(२) मध्यम ग्रैवेयक का एक इन्द्रक विमान। मपु० ५३.१५, ७३, ४०, हपु० ६ ५२

(३) क्षेम नगर का एक श्रेष्ठी। इसकी पुत्री क्षेमसुन्दरी जीवन्धरकुमार को विवाही गयी थी। मपु० ७५ ४०३, ४१०-४११, ४१५

(४) एक मुनि। कृष्ण की पटरानी गौरी ने चौथे पूर्वभव में यशस्विनी की पर्याय में इन्ही से प्रोषधव्रत लिया था। हपु० ६०. ८९-१००

(५) कौशाम्बी नगरी का एक सेठ। सुमित्रा इसकी स्त्री थी। हपु० ६० १०१

(६) सूर्यवंशी राजा अमृत का पुत्र। राजा सागर इसका पुत्र था। पपु० ५.६

(७) दूसरे नारायण द्विपृष्ठ के पूर्वभव के दीक्षागुरु। पपु० २०. २१६

(८) नन्दीश्वरवर समुद्र का एक रक्षक देव। हपु० ५ ६४५

सुभद्रा—(१) राजा अन्धकवृष्णि की रानी। इसके समुद्रविजय आदि पुत्र तथा कुन्ती और मद्री पुत्रियाँ थीं। मपु० ७० ९३-९७, हपु० १८.१२-१५

(२) भद्दभद्रिलपुर के राजा मेघरथ की रानी और दृढरथ की जननी। राजा मेघरथ के दीक्षा धारण कर लेने पर सुदर्शना आर्यिका के पास इसने भी दीक्षा ले ली थी। मपु० ७० १८३, हपु० १८ ११२, ११६-११७

(३) भरतेश चक्रवर्ती की रानी और नमि-विनमि विद्याधर की बहिन। यह केवल एक कवल प्रमाण आहार लेती थी। मपु० ३२ १८३, पपु० ४ ८३, हपु० ११ ५०, १२५, १२ ४३, २२ १०६

(४) दूसरे बलभद्र विजय की जननी। पपु० २० २३८-२३९

(५) चम्पापुरी के वैश्य भानुदत्त की स्त्री। चारुदत्त की यह जननी थी। हपु० २१ ६, ११

(६) जम्बूद्वीप की पुण्डरीकिणी नगरी के निवासी वज्रमुष्टि की स्त्री। हपु० ६० ५१ दे० वज्रमुष्टि

(७) अर्जुन की स्त्री। यह कृष्ण की बहिन तथा अभिमन्यु की जननी थी। इसने राजीमती गणिनी से दीक्षा लेकर तपश्चरण किया था। आयु के अन्त मे मरकर सोलहवें स्वर्ग में देव हुई। मपु० ७२ २१४, २६४-२६६, हपु० ४७ १८, पापु० १६ ३६-३९, ५९, १०१, २५ १५, १४१

(८) विजयार्ध पर्वत पर स्थित द्युतिलक नगर के राजा चन्द्राभ की रानी। यह वायुवेगा की जननी थी। मपु० ६२.३६-३७, ७४ १३४ वीवच० ३ ७३-७४

(९) बुद्धिमान् व्यास की स्त्री। इसके धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर ये तीन पुत्र थे। मपु० ७० १०३, पापु० ७ ११६-११७

(१०) एक आर्यिका। नित्यालोकपुर के राजा महेन्द्रविक्रम की रानी सुरूपा इन्ही से दीक्षित हुई थी। मपु० ७१ ४२०, ४२३

(११) जम्बूद्वीप की कौशाम्बी नगरी के सुमति सेठ की स्त्री। कृष्ण की पटरानी गौरी की उसके पूर्वभव में यह माता थी। मपु० ७१ ४३७-४४१

(१२) सेठ वृषभदत्त की स्त्री। यह चन्दना का सेठ के साथ सम्पर्क न हो जाये इस शंका से चन्दना को रानी से गिरा हुआ भात सकोरे में रखकर खाने के लिए देती तथा उसे साँकल से बाँधकर रखती थी। मपु० ७५ ३४०-३४२, वीवच० १३ ८८-९०

(१३) वैशाली नगर के राजा चेटक की रानी। धनदत्त आदि दस पुत्र तथा प्रियकारिणी आदि सात पुत्रियों की यह जननी थी। मपु० ७५ ३-७

(१४) भरतक्षेत्र की द्वारावती नगरी के राजा ब्रह्म की रानी। बलभद्र अचलस्तोक इसका पुत्र था। पपु० ५८ ८३, ८६ दे० अचलस्तोक

(१५) द्वारावती नगरी के राजा भद्र की रानी। यह धर्म बलभद्र की जननी थी। मपु० ५९ ७१, ८७, दे० धर्म-३

सुभद्रिलपुर—एक नगर। यहाँ देवकी के पुत्रों का पालन हुआ था। हपु० ३५ ४

सुभा—हरिवर्ष देश में वस्त्वालय नगर के राजा वज्रचाप की रानी। विद्युन्माला इसी की पुत्री थी। मपु० ७० ७५-७७

सुभानु—(१) कृष्ण और उनकी सत्यभामा रानी का पुत्र। यह भानु का अनुज था। मपु० ७२ १७५-१७५, हपु० ४८ ७,६९

(२) हरिवंशी राजा। यह यवु का पुत्र और भीम का जनक था। हपु० १८ ३

(३) मथुरा के करोड़पति सेठ भानु और उनकी स्त्री यमुना का ज्येष्ठ पुत्र। इसके भानुकीर्ति, भानुषेण, शूर, शूरदेव, शूरदत्त और शूरसेन ये छ छोटे भाई थे। इसने इन सभी भाइयों के साथ वरधर्म मुनि के पास दीक्षा ले ली थी। तप करते हुए यह समाधिमरण करके प्रथम स्वर्ग में त्रायस्त्रिश देव हुआ। मपु० ७१ २०१-२०३, २३४-२४३, २४८, हपु० ३३ ९६-९९, १२६-१२७

(४) एक मुनिराज। राजा रतिवर्धन के दीक्षागुरु थे। पपु० १०८ ३५

सुभानुक—कृष्ण का एक पुत्र। हपु० ४८ ६९

सुभाषित—काव्य को हित-मित-प्रिय उक्ति। मपु० २ ८७,११६, १२२, १० ८०, ८८

सुभीम—(१) राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का दसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९४

(२) राक्षसो का इन्द्र। इसने सगर चक्रवर्ती के प्रतिद्वन्दी मेघवाहन को तीर्थंकर अजितनाथ के समवसरण में अभयदान देकर लंका का राज्य दिया था। पापु० ५ १४९, १५८-१६०

सुभीषण—रावण का सामन्त। यह व्याघ्र रथ पर बैठकर युद्ध करने निकला था। पपु० ५७ ४९

सुभुज—राजा धृतराष्ट्र और गान्धारी का निन्यानवेवाँ पुत्र। पापु० ८ २०५

सुभूत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८०

सुभूति—नारायण पुरुषसिंह के पूर्वभव के दीक्षागुरु एक मुनि। पपु० २०.२१६

सुभूम—(१) अवसर्पिणी के दुःषमा सुषमा चौथे काल में उत्पन्न एक आठवें चक्रवर्ती। ये तीर्थंकर अरनाथ और मल्लिनाथ के अन्तराल में हुए थे। ये हस्तिनापुर के राजा कार्त्तवीर्य और उनकी रानी तारा के पुत्र थे। इनके पिता ने कामधेनु गाय पाने के लिए जमदग्नि

तपस्वी को मार डाला था। इसके फलस्वरूप जमदग्नि के पुत्र परशुराम द्वारा इनके पिता भी मार डाले गये थे। तारा भयभीत होकर गुप्त रूप से कौशिक ऋषि के आश्रम मे चली गयी थी। इनका जन्म आश्रम के एक तलघर मे हुआ था। इससे ये "सुभौम" नाम से प्रसिद्ध हुए। ये अपनी माँ से पिता के मरण का रहस्य ज्ञात करके परशुराम की दानशाला में गये थे। वहाँ इन्होने भोजन किया था। परशुराम ने इनकी थाली में दाँत परोसे थे। वे दाँत खीर में बदल गये थे। इस घटना से निमित्तज्ञानी के कथनानुसार परशुराम ने इन्हें अपना मारनेवाला जानकर फरसा से मारना चाहा था किन्तु उसी समय इनकी भोजन की थाली चक्र मे बदल गई और इसी से इन्होने परशुराम को ही मार डाला था। इसने चक्ररत्न से इक्कीस बार पृथिवी को ब्राह्मण रहित किया था। साठ हजार वर्ष इनकी आयु थी। शरीर अट्ठाईस धनुष ऊँचा था। चौदह रत्न, नौ निधियाँ और मुकुटबद्ध बत्तीस हजार राजा इसकी सेवा करते थे। इसने मेघनाद को विद्याधरो का राजा बनाया था। आयु के अन्त तक भी इन्हें तृप्ति नही हो पाई थी अतएव मरकर ये सातवें नरक गये। प्रथम पूर्वभव में ये महाशुक्र स्वर्ग मे देव और दूसरे पूर्वभव में भरतक्षेत्र में भूपाल नामक राजा थे। इनका अपर नाम सुभौम था। मपु० ६५ ५१-५५, १३१-१५०, १६६-१६९, पपु० ५.२२३, २० १७१-१७७, हपु० २५ ८-३३, ६० २८७, २९५, वीवच० १८ १०१, ११०

(२) तीर्थङ्कर अरनाथ का मुख्य प्रश्नकर्त्ता। मपु० ७६ ५३२-५३३

सुभूषण—रावण के भाई विभीषण का पुत्र। पपु० ७० २९

सुभोगा—एक दिक्कुमारी देवी। यह मेरू पर्वत पर क्रीडा करती है। हपु० ५ २२७

सुभोटक—भरतक्षेत्र का एक देश। तीर्थङ्कर महावीर यहाँ विहार करते हुए आये थे। पापु० १ १३३-१३४

सुभौम—(१) आठवें चक्रवर्ती। मपु० ६५ ५१, दे० सुभूम।

(२) कुरुवंशी एक राजा। यह राजा पद्ममाल का पुत्र तथा पद्मरथ का पिता था। हपु० ४५ २४

सुभौमकुमार—पार्श्वनाथ का दूसरा नाम। राजा महीपाल इनके नाना थे। इन्होने राजा महीपाल को तापस अवस्था मे नमस्कार नही किया था जिससे महीपाल कुपित हो गया था। इन्होने उसके तप को अज्ञान तप कहकर उसे पापास्रव का कारण बताया था। इससे वह और अधिक कुपित हो गया था। वह मरकर शम्बर ज्योतिषी देव हुआ। मपु० ७३ ९४-११७ दे० पार्श्वनाथ

सुमगला—(१) साकेत नगर के राजा मेघप्रभ की रानी और तीर्थङ्कर सुमतिनाथ की जननी। पपु० २० ४१

(२) आदित्यपुर के राजा विद्यामन्दर विद्याधर की पुत्री श्रीमाला की धाय। स्वयवर में आये राजकुमारो का परिचय श्रीमाला को इसी ने कराया था। पपु० ६ ३५७-३५८, ३६३, ३८१-३८४

(३) साकेत नगर के राजा विजयसागर की रानी और दूसरे चक्रवर्ती सगर की जननी। पपु० ५ ७४, २० १२८-१२९

(४) इक्ष्वाकुवंशी राजा अनरण्य की रानी और राजा दशरथ की जननी। पपु० २८ १५८

सुमति—(१) अवसर्पिणी काल के सुषमा-दुषमा चौथे काल में उत्पन्न पाँचवें तीर्थंकर। ये जम्बूद्वीप सबधी भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी के क्षत्रिय राजा मेघरथ और रानी मगला के पुत्र थे। ये श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि और मघा नक्षत्र में सोलह स्वप्न-पूर्वक रानी मगला के गर्भ में आये थे तथा चैत्र मास के शुक्लपक्ष की एकादशी के दिन इनका जन्म हुआ था। इन्द्र ने जन्मोत्सव मनाकर इनका नाम "सुमति" रखा था। इनकी आयु चालीस लाख पूर्व की थी। शरीर तीन सौ धनुष ऊँचा था तथा कान्ति स्वर्ण के समान थी। कुमारकाल के दस लाख पूर्व वर्ष बाद इन्हें राज्य प्राप्त हुआ था। राज्य करते हुए उनतीस लाख पूर्व और बारह पूर्वाङ्ग वर्ष बीत जाने पर इन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ। सारस्वत देव की स्तुति करने के पश्चात् ये अभय नामक शिविका मे सहेतुक वन ले जाये गये थे। वहाँ इन्होने वैशाख सुदी नवमी के दिन मघा नक्षत्र मे एक हजार राजाओ के साथ बेला का नियम लेकर दीक्षा ली थी। सौमनस नगर के राजा पद्मराज ने इनकी पारणा कराई थी। छद्मस्थ अवस्था मे बीस वर्ष बीतने पर सहेतुक वन मे प्रियगुवृक्ष के नीचे इन्होने दो दिन का उपवास धारण करके योग धारण किया था। चैत्र शुक्ल एकादशी के दिन सूर्यास्त के समय इन्हें केवलज्ञान हुआ। केवली होने पर इनके सघ में अमर आदि एक सौ सोलह गणधर थे। मुनियो मे दो हजार चार सौ पूर्वधारी दो लाख चौवन हजार तीन सौ पचास शिक्षक, ग्यारह हजार अवधिज्ञानी, तेरह हजार केवलज्ञानी, आठ हजार चार सौ विक्रियाऋद्धिधारी, दस हजार चार सौ पचास वादी कुल तीन लाख बीस हजार मुनि, अनन्तमती आदि तीन लाख तीस हजार आर्यिकाएँ, तीन लाख श्रावक, पाँच लाख श्राविकाएँ, असख्यात देव-देवियाँ और सख्यात तिर्यंच थे। अन्त मे एक मास की आयु शेष रहने पर ये सम्मेदगिरि पर एक हजार मुनियो के साथ प्रतिमायोग में स्थिर हुए तथा चैत्र शुक्ल एकादशी के दिन मघा नक्षत्र मे इन्होने मोक्ष प्राप्त किया। मपु० ५१ १९-२६, ५५, ६८-८५, हपु० १ ७, १३, ३१, ६० १५६-१८६, ३४१-३४९, वीवच० १८ ८७, १०१-१०५

(२) जम्बूद्वीप की पुण्डरीकिणी नगरी के वज्रमुष्टि और उसकी स्त्री सुभद्रा की पुत्री। इसने सुन्दरी आर्यिका से प्रेरित होकर रत्नावली तप किया था जिसके प्रभाव से आयु के अन्त मे यह ब्रह्मेन्द्र की इन्द्राणी तथा स्वर्ग से चयकर जाम्बवती हुई। मपु० ७१ ३६६-३६९, हपु० ६० ५०-५३

(३) धातकीखण्डद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र मे रत्नसचय नगर के राजा विश्वसेन का मन्त्री। युद्ध में राजा के मरने पर इसने रानी को धर्म का उपदेश दिया था। हपु० ६० ५७-६०

(४) जम्बूद्वीप के वत्सदेश की कौशाम्बी नगरी के राजा सुमुख का मन्त्री। इसने राजा का वनमाला से मिलन कराया था। हपु० १४ १-२, ६, ५३-९५

(५) एक मुनि। इन्होंने वसिष्ठ मुनि को अपने पास छः मास रखकर मुनि-चर्या सिखाई थी। हपु० २३ ७३

(६) राजा अकम्पन की पुत्री सुलोचना की धाय। यह सुलोचना का लालन-पालन करती थी। मपु० ४३ १२४-१२७, १३६-१३७, पापु० ३ २६

(७) राजा अकपन का एक मंत्री। इसने सुलोचना का परिचय स्वयंवरविधि से करने का राजा से आग्रह किया था। मपु० ४३. १२७, १८२, १९४-१९७, पपु० ३ ३२, पापु० ३ ३९-४०

(८) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित रथनूपुर नगर के राजा ज्वलनजटी का मन्त्री। इसने राजा की पुत्री स्वयंप्रभा का विवाह करने के लिए राजा से स्वयंवर विधि का प्रस्ताव रखा था जिसे राजा ने सहर्ष स्वीकार किया था। मपु० ६२ २५-३०, ८१-८२, पापु० ४ ११-१३, ३७-३९

(९) पोदनपुर के राजा श्रीविजय का मन्त्री। इसने राजा को मरने से बचाने के लिए पानी के भीतर पेटी में बन्द रखने का उपाय बताया था। पापु० ४ ९६-९७, ११४

(१०) जम्बूद्वीप में पूर्व विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा दृढ़रथ की रानी। वरसेन इसका पुत्र था। मपु० ६३ १४२-१४८, पापु० ५ ५३-५७

(११) विदेहक्षेत्र में गन्धिल देश के पाटलीग्राम के वणिक् नागदत्ता की स्त्री। इसके नन्द, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, वरसेन और और जयसेन ये पाँच पुत्र और मदनकान्ता तथा श्रीकान्ता ये दो पुत्रियाँ थी। मपु० ६ १२६-१३०

(१२) विदेहक्षेत्र में गन्धिल देश के पलाल पर्वत ग्राम के देवलिग्राम पटेल की स्त्री। धनश्री इसकी पुत्री थी। मपु० ६ १३४-१३५

(१३) तीर्थङ्कर पुष्पदन्त का पुत्र। पुष्पदन्त ने इसे ही राज्य भार सौंपकर दीक्षा ली थी। मपु० ५५ ४५

(१४) अपराजित बलभद्र और रानी विजया की पुत्री। इसने एक देवी से अपने पूर्वभव सुनकर सुव्रता आर्यिका के पास सात सौ कन्याओं के साथ दीक्षा ले ली थी। आयु के अन्त में यह आनत स्वर्ग के अनुदिश विमान में देव हुई। मपु० ६३ २-४, १२-२४

(१५) कौशाम्बी नगरी का एक सेठ। इसकी स्त्री सुभद्रा थी। मपु० ७१ ४३७

(१६) साकेत नगर के राजा दिव्यबल की रानी। हिरण्यवती इसकी पुत्री थी। मपु० ५९.२०८-२०९

(१७) एक गणनी। धातकीखण्डद्वीप के तिलकनगर की रानी सुवर्णतिलका ने इन्ही से दीक्षा ली थी। मपु० ६३ १७५

(१८) रावण का सारथी। रावण ने अपना रथ इससे इन्द्र के समक्ष ले जाने को कहा था। पपु० १२.३०५-३०६

(१९) महेन्द्र विद्याधर का मन्त्री। इसने रावण को अजना का पति होने योग्य नहीं बताया था। पपु० १५ २५, ३१

(२०) एक राजा। यह भरत के साथ दीक्षित हो गया था। पपु० ८८ १-२, ४

सुमनस्—(१) नन्दीश्वर द्वीप के उत्तरदिशा सबधी अजनगिरि की दक्षिणदिशा में स्थित वापी। हपु० ५ ६६४

(२) ऊर्ध्व ग्रैवेयक का प्रथम इन्द्रक विमान। हपु० ५ ५३

सुमन्त्र—एक मुनि। सद्भद्रिलपुर नगर के राजा मेघरथ के ये दीक्षागुरु थे। ये पाँच वर्ष तक विहार करते रहे और अन्त में राजगृह नगर से मोक्ष गये। हपु० १८ ११२-११६, ११९

सुमना—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में कनकपुर नगर के राजा हिरण्याभ की रानी। इसके पुत्र का नाम विद्युत्प्रभ था। पपु० १५ ३७-३८

सुमहानगर—तीर्थङ्कर विमलनाथ के पूर्वभव की राजधानी। पपु० २० १४, १७

सुमागधी—भरतक्षेत्र के पूर्वी मध्य आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ४९

सुमात्रिका—एक नगर। यह तीर्थङ्कर धर्मनाथ के पूर्वभव की राजधानी थी। पपु० २० १४, १७

सुमाया—एक यक्षिणी। ब्राह्मण कपिल को इसने धन प्राप्ति का उपाय बताया था। पपु० ३५.७२-८१ दे० कपिल—८

सुमाली—अलकारपुर के राजा सुकेश और रानी इन्द्राणी का दूसरा पुत्र। माली का यह छोटा भाई तथा माल्यवान् का अग्रज था। इसका विवाह प्रीतिकूटपुर के राजा प्रीतिकान्त की पुत्री प्रीति से हुआ था। यह इन्द्र विद्याधर से हारकर अलकारपुर नगर (पाताल लका) में रहने लगा था। प्रीतिमति रानी से इसका रत्नश्रवा नाम का पुत्र यहीं हुआ था। पपु० ६ ५३०-५३१, ५६६, ७ १३३

सुमित्र—(१) कुरुवशी राजा सागरसेन का पुत्र और राजा वप्रभु का पिता। हपु० १८ १९

(२) सौर्यपुर नगर के एक आश्रम का तापस। सोमयशा इसकी पत्नी थी। यह उञ्छवृत्ति से जीविका चलाता था। उञ्छवृत्ति के लिए पुत्र को अकेला छोड़ जाने से इसके पुत्र को जृम्भक देव उठा ले गया था। जो नारद नाम से विख्यात हुआ। हपु० ४२ १४-२७, दे० जृम्भक

(३) हरिवंश में हुआ कुशाग्रपुर नगर का राजा। इसकी रानी पद्मावती थी। ये दोनों तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत नाथ के माता पिता थे। मपु० ६७ २०-२१, २६-२८, पपु० २० ५६, २१ १०-२४, हपु० १५ ९१-९२, १६ १७

(४) वसुदेव और उनकी रानी मित्रश्री का पुत्र। हपु० ४८ ५८

(५) कृष्ण की पटरानी जाम्बवती के पूर्वभव का पति। हपु० ६० ४३-४४

(६) विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी का

राजा। यह प्रियमित्र का पिता था। मपु० ७४ २३५-२३७, वीवच० ५ ३५-३७

(७) ऐरावतक्षेत्र मे शतद्वारपुर के निवासी प्रभव का मित्र। इसका विवाह म्लेच्छ राजा द्विरद्दंष्ट्र की पुत्री वनमाला से हुआ था। इसने अन्त में मुनि दीक्षा ले ली थी तथा आयु के अन्त मे मरकर ऐशान स्वर्ग में देव हुआ। वहाँ से चयकर यह मथुरा नगरी का राजा मधु हुआ। पपु० १२ २२-२३, २६-२७, ५२-५४

(८) कौशल देश की साकेतपुरी, पद्मपुराण के अनुसार श्रावस्ती का राजा और चक्रवर्ती मघवा का पिता। मपु० ६१ ९१-९३ पपु० २० १३१-१३२

(९) छठे बलभद्र नन्दिमित्र के गुरु। पपु० २०.२४६-२४७

(१०) भरत के साथ दीक्षित एक नृप। पपु० ८८ १-६

(११) मन्दिरपुर नगर का नृप। इसने तीर्थंकर शान्तिनाथ को आहार दिया था। मपु० ६३ ४७८-४७९

(१२) सुसीमा नगरी के राजा अपराजित का पुत्र। मपु० ५२ ३, १२

(१३) राजगृह नगर का राजा। राजसिंह से हारने के पश्चात् यह पुत्र को राज्य देकर दीक्षित हो गया था। निदानपूर्वक मरकर यह माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ६१ ५७-६५

(१४) सुजन देश सबधी हेमाभनगर के राजा दृढमित्र का तीसरा पुत्र। यह गुणमित्र और बहुमित्र का अनुज तथा धनमित्र का अग्रज था। इसकी हेमाभा बहिन थी, जो जीवन्धर के साथ विवाही गयी थी। मपु० ७५ ४२०-४३०

सुमित्रदत्त—पद्मखण्डनगर का एक वणिक्। लौटने पर श्रीभूति ने इसे ठगना चाहा किन्तु प्रार्थना करने पर रानी रामदत्ता ने युक्तिपूर्वक इसके रत्न इसे दिलवा दिये थे। यह रानी का पुत्र होने का निदान बाँधकर मरा था जिसके यह रानी रामदत्ता का सिंहचन्द्र नाम का पुत्र हुआ। हपु० २७ २०-४६, ६४ दे० श्रीभूति

सुमित्रदत्तिका—इसका अपर नाम सुमित्रा था। यह पद्मखण्डपुर नगर सेठ सुदत्त अपर नाम सुमित्रदत्त की स्त्री थी। भद्रमित्र इसका पुत्र था। यह मरकर व्याघ्री हुई थी। पूर्व पर्याय के वैरवश इस पर्याय मे इसने पुत्र को तथा हरिवंशपुराण के अनुसार पति को खा लिया था। मपु० ५९.१४८, १८८-१९२, हपु० २७ २४, ४५ दे० भद्रमित्र

सुमित्रा—(१) चारुदत्त के मामा सर्वार्थ की स्त्री। मित्रवती इसकी पुत्री थी। हपु० २१ ३८

(२) एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ २२७

(३) जम्बूद्वीप सबधी अरिष्टपुर नगर के राजा वासव की रानी। वसुसेन इसका पुत्र था। यह पुत्र के मोह से पति के दीक्षित हो जाने पर भी दीक्षा नही ले सकी थी। अन्त में यह मरकर भीलिनी हुई। यह कृष्ण की पटरानी लक्ष्मणा के पूर्वभव का जीव है। हपु० ६० ७४-७८

(४) कौशाम्बी नगरी के सुभद्र सेठी की स्त्री। कृष्ण की पटरानी गौरी के पूर्वभव के जीव धर्ममति के कन्या की यह माता थी। हपु० ६०.९४, १०१

(५) कमलसकुल नगर के राजा सुबन्धुतिलक और रानी मित्रा की पुत्री। यह राजा दशरथ की रानी और लक्ष्मण की जननी थी। पपु० २२ १७३-१७५, २५ २३, २६

(६) सेठ सुदत्त की स्त्री। मपु० ५९ १४८, १८८-१९२ दे० सुमित्रदत्तिका

सुमुख—(१) वसुदेव और उसकी रानी अवन्ती का ज्येष्ठ पुत्र। दुर्मुख और महारथ इसके छोटे भाई थे। हपु० ४८ ६४

(२) हयपुरी का राजा। गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी के राजा इन्द्रगिरि का पुत्र हिमगिरि अपनी बहिन गान्धारी इसे ही देना चाहता था किन्तु कृष्ण ने ऐसा नही होने दिया था। वे गान्धारी को हरकर ले आये थे तथा उसे इन्होंने विवाह लिया था। हपु० ४४ ४५-४८

(३) कौशाम्बी नगरी का राजा। यह अपने यहाँ आये कलिंग देश के वीरदत्त वणिक् की पत्नी वनमाला पर मुग्ध हो गया था। इसने वीरदत्त को बाहर भेजकर वनमाला को अपनी पत्नी बनाया था। वीरदत्त ने वनमाला के इस कृत्य से दुखी होकर जिनदीक्षा धारण कर ली तथा मरकर सौधर्म स्वर्ग मे चित्रागद देव हुआ। इसने और वनमाला दोनो ने धर्मसिंह मुनि को आहार दिया था। अन्त में मरकर यह भोगपुर नगर मे विद्याधर राजा प्रभजन का सिंहकेतु नाम का पुत्र हुआ। मपु० ७०.६४-७५, पपु० २१.२-३, हपु० १४ ६, १०१-१०२, पापु० ७ १२१-१२२

(४) राजा अकम्पन का एक दूत। चक्रवर्ती भरतेश के पास अकम्पन ने इसी दूत के द्वारा समाचार भिजवाये थे। मपु० ४५ ३५, ६७, पापु० ३ १३९-१४०

(५) कृष्णका पक्षधर एक राजा। यह कृष्ण के साथ कुरुक्षेत्र में गया था। मपु० ७१ ७४

(६) राक्षसवशी राजा श्रीग्रीव का पुत्र। इसने सुव्यक्त राजा को राज्य देकर दीक्षा ले ली थी। पपु० ५ ३९२

(७) कौमुदी नगरी का राजा। इसकी रतवती रानी थी। पपु० ३९ १८०-१८१

(८) एक बलवान् पुरुष। परस्त्री की इच्छा मात्र करने से इसकी मृत्यु हो गयी थी। पपु० ७३ ६३

(९) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७८

सुमुखा—विजयार्ध पवत की दक्षिणश्रेणी की उन्चासवी नगरी। मपु० १९ ५२-५३

सुमेधा—(१) सुमेरु पर्वत के नन्दन वन मे स्थित निषधकूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ३३३

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७२

सुमेरु—(१) राम-लक्ष्मण का एक सामन्त । पपु० १०२ १४६

(२) मध्यलोक का सुप्रसिद्ध पर्वत । यह स्वर्णवर्ण का और कूटाकार है । ऐसे पाँच पर्वत हैं—जम्बूद्वीप में एक, धातकीखण्डद्वीप में दो और पुष्करार्द्धद्वीप मे दो । सूर्य और चन्द्र दोनो इसकी परिक्रमा करते हैं । इसके अनेक नाम हैं—वज्रमूल, सवैडूय, चूलिक, मणिचित्त, विचित्राश्चर्यकीर्ण, स्वर्णमध्य, सुरालय, मेरु, सुमेरु, महामेरु, सुदर्शन, मन्दर, शैलराज, वसन्त, प्रियदर्शन, रत्नोच्चय, दिशामादि, लोकनाभि, मनोरम, लोकमध्य, दिशामन्त्य, दिगामुत्तर, सर्याचरण, सूर्यावर्त, स्वयप्रभ और सुरगिरि । मपु० ३ १५८, हपु० ५ ३७३-३७६, ५३६-५३७, ५७६

सुयज्वा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १२७

सुयशोदत्त—काशी देश की श्रावस्ती नगरी का मन्त्री । इसने कारण पाकर जिनदीक्षा धारण कर ली थी । किसी व्याध ने इसे पूजा के लिए आयी स्त्रियों से घिरा हुआ देखकर कर्कश वचन कहे थे । उन वचनों को सुनकर इसके मन में क्रोध उत्पन्न हो गया था । इसी क्रोध कषाय के कारण यह कापिष्ठ स्वर्ग का देव न होकर ज्योतिष्क देव हुआ । पपु० ६ ३१७-३२५

सुयोधन—(१) रावण का आधीन एक राजा । पपु० १०.२४-२५

(२) भरतक्षेत्र के चारणयुगल नगर का राजा । इसकी रानी अतिथि थी । सुलसा इन्ही दोनों की पुत्री थी, जिसने स्वयवर में सगर का वरण किया था । मपु० ६७ २१३-२१४, २४१-२४२

सुरकान्ता—अयोध्या नगरी के इक्ष्वाकुवशी राजा ययाति की रानी । राजा वसु की यह जननी थी । पपु० ११ १३-१४

सुरकान्तार—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर । यहाँ का राजा विद्याधर केसरिविक्रम था । मपु० ६६ ११४

सुरकीर्ति—तीर्थंकर शान्तिनाथ के सघ का प्रमुख श्रावक । मपु० ६३ ४९४

सुरगिरि—सुमेरु पर्वत का अपर नाम । पूर्व विदेहक्षेत्र की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा गुणपाल को मुनि अवस्था में इसी पर्वत पर केवलज्ञान हुआ था । मपु० ४७ ३-६ दे० सुमेरु

सुरगुरु—(१) कुण्डलपुर नगर के राजा सिंहरथ का पुरोहित । मपु० ६२ १७८, पापु० ४ १०३-१०४

(२) एक चारणऋद्धिधारी मुनि । इन्होने एक मरते हुए बन्दर को पंचनमस्कार मन्त्र सुनाया था जिसके प्रभाव से वह मरकर सौधर्म स्वर्ग में चित्रागद नामक देव हुआ । मपु० ७० १३५-१३८

सुरदत्त—तीर्थङ्कर वृषभदेव के नौवें गणधर । हपु० १२ ५६

सुरदेव—आगामी दूसरे तीर्थङ्कर । मपु० ७६ ४७७, हपु० ६० ५५८

सुरदेवीकूट—शिखरित् कुलाचल का चौथा कूट । हपु० ५ १०६

सुरध्वसी—एक विद्या । यह रावण को प्राप्त थी । पपु० ७ ३२६, ३३२

सुरनिपात—एक वन । यहाँ प्रतिमायोग में विराजमान कनकशान्ति मुनिराज के ऊपर चित्रचूल विद्याधर ने उपसर्ग किये थे । मपु० ६३ १२७-१२९

सुरप—एक जीव-दयालु पुरुष । यह यक्षस्थान नामक नगर का निवासी था । इसक कर्षक नामका एक छोटा भाई भी था । इन दोनों भाइयों ने किसी शिकारी द्वारा पकड़े गये पक्षी को मूल्य देकर मुक्त करा दिया था । पक्षी मरकर म्लेच्छ राजा हुआ और ये दोनों उदित और मुदित नामक दो भाई हुए । मपु० ३९ १३७-१३९

सुरनूपुर—विद्याधरों का एक नगर । यहाँ का राजा रावण का पक्षधर था । पपु० ५५ ८६-८८

सुरपर्वत—सुमेरु पवत का अपर नाम । श्रीकण्ठ यहाँ वन्दना करने आया था । पपु० ६ १३ दे० सुमेरु

सुरप्रभ—वशस्थलपुर नगर का राजा । यह राम-लक्ष्मण और सीता का भक्त था । पपु० ४ २, ४३

सुरमंजरी—राजपुर नगर के सेठ वैश्रवण और उसकी स्त्री आम्रमंजरी की पुत्री । इसके पास चन्द्रोदय नाम का तथा इसी नगर के कुमारदत्त सेठ की पुत्री गुणमाला के पास सूर्योदय नाम का चूर्ण था । जीवन्धरकुमार ने दोनो चूर्णों में इसका चूर्ण श्रेष्ठ बताया था । यह जीवन्धरकुमार पर मुग्ध हो गयी थी । माता-पिता ने इसके मनोगत भाव जानकर इसे जीवन्धर के साथ विवाह दिया था । मपु० ७५ ३११, ३४८-३५७, ३७०-३७२

सुरमन्यु—सप्तर्षियो में प्रथम ऋषि । ये प्रभापुर नगर के राजा श्रीनन्दन तथा रानी धरणी के पुत्र थे । ये सात भाई थे । उनमें ये सबसे बड़े थे । इनके जो छोटे भाई थे उनके नाम हैं—श्रीमन्यु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान्, विनयलालस और जयमित्र । पिता सहित ये सातों भाई प्रीतिंकर मुनिराज के केवलज्ञान के समय देवो का आगमन देखकर प्रतिबोध को प्राप्त हुए थे । राजा श्रीनन्दन ने एक माह के बालक डमरमगल को राज्य देकर इन सातो पुत्रो के साथ प्रीतिंकर मुनि के समीप दीक्षा धारण कर ली थी । राजा श्रीनन्दन के मोक्ष जाने पर ये सातो भाई सप्तर्षि नाम से विख्यात हुए । इनके प्रभाव से चमरेन्द्र यक्ष द्वारा मथुरा नगरी में फैलाया गया महामारी रोग शान्त हो गया था । ये आकाशगामी थे । सीता ने विधिपूर्वक सहर्ष इनकी पारणा कराई थी । पपु० ९२ १-१३, ७८-७९

सुरमलय—एक उद्यान । जीवन्धरकुमार ने इसी उद्यान में वरधर्म यति से तत्त्व का स्वरूप जाना था तथा वीर जिनेश से सयम लिया था । मपु० ७५ ३४६, ६७४, ६७९-६८२

सुरम्य—जम्बूद्वीप के दक्षिण भरतक्षेत्र का एक देश । पोदनपुर इसी देश का एक नगर था । मपु० ६२ ८९, ७४ ११९-१२०, पापु० ११.४३

सुरवती—सुग्रीव की सातवी पुत्री । यह राम के गुण सुनकर स्वयवरण की इच्छा से राम के निकट गयी थी । पपु० ४७ १३६-१४४

सुरश्रेष्ठ—इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ के पूर्वभव का नाम । पपु० २० २३-२४

सुरसन्निभ—गन्धर्वगीत नगर का राजा । इसकी रानी गान्धारी तथा पुत्री का नाम गन्धर्वा था । राजा भानुरक्ष इसका जामाता था । पपु० ५ ३६७

सुरसुन्दर—एक राजा। इसकी रानी सर्वश्री तथा पुत्री पद्मावती थी। दशानन ने पद्मावती को गन्धर्व विधि से विवाह लिया था। पपु० ८.१०३, १०८

सुरसुन्दरी—राजा सूर की रानी। यह अन्धकवृष्टि की जननी थी। इसका अपर नाम धारिणी था। पापु० ७.१३०-१३१ दे० धारिणी-८

सुरसेन—अयोध्या का सूर्यवंशी राजा। यह द्रौपदी के स्वयंवर में गया था। पापु० १५.८२

सुरा—रुचकगिरि की पश्चिम दिशा में जगत्कुसुमकूट पर रहनेवाली दिक्कुमारी देवी। हपु० ५.७१२

सुरादेवीकूट—हिमवत् कुलाचल का नौवा कूट। हपु० ५.५४

सुरामरगुरु—एक मुनि। ये जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गगनवल्लभ नगर के राजा मेघनाद के दीक्षागुरु थे। मपु० ६३.२९-३२

सुरारि—भानुप्रभ राजा के पश्चात् हुआ लंका का एक राजा। पपु० ५.३९५

सुरालय—सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

सुराष्ट्र—भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का तीर्थंकर वृषभदेव के समय में इन्द्र द्वारा निर्मित एक देश। राष्ट्रवर्धन इसी देश का एक प्रमुख नगर था। मपु० १६.१५४, हपु० ११.७२, ४४.२६, ५९.११०

सुराष्ट्रवर्धन—एक राजा। इसकी रानी सुज्येष्ठा थी। इसकी पुत्री सुसीमा कृष्ण के साथ विवाही गयी थी। मपु० ७१.३९६-३९७

सुरूप—(१) व्यन्तर देवो का तेरहवाँ इन्द्र। वीवच० १४.६१

(२) एक व्यन्तर देव। यह इस योनि से निकलकर पुष्पभूति हुआ था। मपु० ६३.२७८-२७९, पपु० ५.१२३-१२४

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१८४

सुरूपा—(१) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के गगनवल्लभ नगर के राजा विद्युद्वेग विद्याधर की पुत्री। यह नित्यालोकपुर के राजा महेन्द्रविक्रम को विवाही गयी थी। ये दोनो पति-पत्नी जिनेन्द्र की पूजा करने सुमेरु पर गये थे। वहाँ चारणऋद्धिधारी मुनि से धर्मोपदेश सुनकर इसका पति दीक्षित हो गया था। इसने भी सुभद्रा आर्यिका से सयम धारण किया। मरकर यह सौधर्म स्वर्ग में देवी हुई। मपु० ७१.४१९-४२४

(२) एक देवी। इसने राजा मेघरथ के सम्यक्त्व की परीक्षा ली थी। मपु० ६३.२८१-२८७

सुरूपाक्षी—कुम्भपुर नगर के राजा महोदर की रानी। इसकी पुत्री तडिन्माला भानुकर्ण से विवाही गयी थी। पपु० ८.१४२

सुरेन्द्रकान्त—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का इक्कीसवाँ नगर। इसका अपर नाम सुरेन्द्रकान्तार था। मपु० १९.८१, ८७, ६२.७१

सुरेन्द्रजाल—एक विद्या। प्रद्युम्न को यह विद्या उपकार करने के फलस्वरूप एक विद्याधर से प्राप्त हुई थी। मपु० ७२.११२-११५

सुरेन्द्रता—लोक में उत्कृष्ट माने गये सप्त परमस्थानो मे चतुर्थ स्थान। पारिव्राज्य के फलस्वरूप सुरेन्द्र पद का मिलना सुरेन्द्रता है। मपु० ३८.६७, ३९.२०१

सुरेन्द्रदत्त—(१) श्रावस्ती नगरी का राजा। इसने तीर्थंकर सम्भवनाथ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ४९.३८-३९

(२) जम्बूद्वीप की विनीता नगरी का निवासी एक सेठ। यह अर्हत् पूजा की सामग्री के लिए प्रतिदिन दस, अष्टमी को सोलह, अमावस को चालीस और चतुर्दशी को अस्सी दीनारो का व्यय करता था। इसने पूजा करके 'धर्मशील' नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की थी। यह बत्तीस करोड दीनारो का धनी था। जैनधर्म पर इसकी अपूर्व भक्ति थी। मपु० ७०.१४७-१५०, हपु० १८.९७-९८

(३) प्रियगुनगर का सेठ। यह चारुदत्त के पिता का मित्र था। चारुदत्त को इसने अपने यहाँ बहुत दिनो तक सुखपूर्वक रखा था। हपु० २१.७८

सुरेन्द्रमंत्र—सुरेन्द्रपद की प्राप्ति के लिए बोले जाने वाले मन्त्र। वे है—सत्यजाताय स्वाहा, अर्हज्जाताय स्वाहा, दिव्यजाताय स्वाहा, दिव्यार्च्यजाताय स्वाहा, नेमिनाथाय स्वाहा, सौधर्माय स्वाहा, कल्पाधिपतये स्वाहा, अनुचराय स्वाहा, परम्परेन्द्राय स्वाहा, अहमिन्द्राय स्वाहा, परमार्हताय स्वाहा, अनुपमाय स्वाहा, सम्यग्दृष्टे-सम्यग्दृष्टे, कल्पपते कल्पपते, दिव्यमूर्ते-दिव्यमूर्ते, वज्रनामन्-वज्रनामन् स्वाहा, सेवाफल षटपरमस्थान भवतु, अपमृत्यु-विनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु। मपु० ४०.४७-५६

सुरेन्द्रमन्यु—विनीता नगरी के राजा विजय का पुत्र। इसके दो पुत्र थे। इनमें वज्रबाहु बडा और पुरन्दर छोटा था। वज्रबाहु के दीक्षित हो जाने पर इसके पिता और इसने भी निर्वाणघोष मुनि के पास दीक्षा ले ली थी। पपु० २१.७३-७७, १२१-१२३, १३८-१३९

सुरेन्द्ररमण—धातकीखण्ड द्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र का एक नगर। नारद यहाँ आया था और यहाँ से लौटकर सीधा वह कौशल्या के पास गया था। पपु० ८१.२१-२७

सुरेन्द्रवर्धन—विजयार्ध पर्वत पर रहनेवाला विद्याधर। किसी निमित्तज्ञानी ने इसकी पुत्री का और द्रौपदी का पति गाण्डीव-धनुष चढानेवाला बताया था। निमित्तज्ञानी के कथनानुसार इसने और राजा द्रुपद ने गाण्डीव-धनुष के द्वारा राधा की नाक में पहनाये गये मोती को भेदनेवाले वीर पुरुष के लिए अपनी-अपनी कन्या देने की घोषणा की थी। अन्त में अर्जुन ने बाण चढ़ाकर घूमती हुई राधा की नाक का मोती भेदकर शुभ लग्न मे इस विद्याधर की कन्या और द्रौपदी दोनो का पाणिग्रहण किया था। हपु० ४५.१२६-१२७, पापु० १५.५४-५६, ६५-६७, १०९-११०, २१९

सुलक्षण—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का पचानवेवा पुत्र। पापु० ८.२०४

सुलक्षणा—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के धरणतिलक नगर के राजा अतिबल की रानी। इसकी पुत्री श्रीधरा अलका नगरी के राजा सुदर्शन को दी गयी थी। मपु० ५९.२२८-२२९, हपु० २७.७७-७९

(२) जम्बूद्वीप के ऐरावतक्षेत्र में विन्ध्यपुर नगर के राजा विन्ध्य-

सेन की रानी। नलिनकेतु इसका पुत्र था। मपु० ६३.९९-१००

(३) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित पोदनपुर नगर के राजा सुस्थित की रानी। सुप्रतिष्ठ इसका पुत्र था। मपु० ७० १३८-१३९

सुलस—निषध पर्वत से उत्तर की ओर विद्यमान पाँच महाह्रदो में एक महाह्रद। इसमें इसी नाम का एक नागकुमार देव रहता है। मपु० ६३ १९८-२०१, हपु० ५ १९६-१९७

सुलसा—भरतक्षेत्र मे चारणयुगल नगर के राजा सुयोधन और रानी अतिथि की पुत्री। राजा सगर ने षड्यंत्र रचकर इसे विवाह लिया था। मधुपिंगल का इसके साथ विवाह न हो सके इसके लिए सगर ने षड्यंत्र रचा। मधुपिंगल निदानपूर्वक मरकर महाकाल नामक असुर हुआ। इस असुर ने विभगावधिज्ञान से अपने पूर्वभव की घटनाएँ स्मरण कर वैरवश सगर के वंश को निर्मूल करना चाहा था। इस असुर ने सगर के नगर में तीव्र ज्वर उत्पन्न किया था तथा यज्ञ से उसे शान्त करने की घोषणा की थी। क्षीरकदम्बक के पुत्र पर्वत को इस असुर ने अपना हितैषी बना लिया था। यज्ञ में जिन पशुओ को पर्वत होमता था उन पशुओ को विमान से इस असुर ने आकाश में जाते हुए दिखाकर "वे पशु स्वर्ग गये हैं" ऐसा विश्वास उत्पन्न करा दिया था और राजा सगर की आज्ञा से इसे भी यज्ञ में होम दिया था। मपु० ६७ २१३-२५४, ३४४-३४९, ३५४-३६३, हपु० २३ ४६-१४६

सुलोचन—(१) विहायस्तिलक नगर का राजा। इसका सहस्रनयन पुत्र तथा उत्पलमती पुत्री थी। भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के चक्रवालनगर का राजा पूर्णघन इसकी पुत्री को चाहता था किन्तु निमित्तज्ञानी के अनुसार इसने अपनी पुत्री पूर्णघन को न देकर सगर चक्रवर्ती को दी थी। इसके लिए इसे पूर्णघन के साथ युद्ध भी करना पड़ा था तथा यह युद्ध में पूर्णघन के द्वारा मारा गया था। पपु० ५ ७६-८०

(२) राजा धृतराष्ट्र और रानी गाधारी का बीसवा पुत्र। पापु० ८ १९५

सुलोचना—(१) तीर्थंकर पार्श्वनाथ के संघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ७३ १५३

(२) द्रौपदी की धाय। इसने द्रौपदी को उसके स्वयवर में आये राजकुमारो का परिचय कराया था। पपु० १५ ८१-८४

(३) भरतक्षेत्र के काशी देश की वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन और रानी सुप्रभा देवी की पुत्री। इसके हेमागद आदि एक हजार भाई तथा लक्ष्मीमती एक बहिन थी। रभा और तिलोत्तमा इसके अपरनाम थे। इसने अपने स्वयवर में आये राजकुमारो में जयकुमार का वरण किया था। भरतेश चक्रवर्ती के पुत्र अर्ककीर्ति ने इनके लिए जयकुमार से युद्ध किया परन्तु इसके उपवास के प्रभाव से युद्ध समाप्त हो गया था। इसने जयकुमार पर गगा नदी में काली देवी के द्वारा मगर के रूप में किये गये उपसर्ग के समय पच नमस्कार मंत्र का ध्यान कर उपसर्ग समाप्ति तक आहार-जल का त्याग कर दिया था। इस त्याग के फलस्वरूप गगादेवी ने आकर उपसर्ग का निवारण किया। जयकुमार ने इसे पट्टबन्ध बाँधकर अपनी पटरानी बनाया था। इसके पति के शील की काचना देवी ने परीक्षा ली थी। वह जयकुमार को उठाकर ले जाना भी चाहती किन्तु इसके शील के प्रभाव से भयभीत होकर अदृश्य हो गयी थी। जयकुमार के दीक्षित हो जाने पर इसने भी ब्राह्मी आर्यिका से दीक्षा ले ली थी तथा तप करके यह अच्युत स्वर्ग मे देव हुई थी। यह चौथे पूर्वभव में मृणाल्वती नगरी के एक सेठ की रतिवेगा नाम की सती पुत्री थी। तीसरे पूर्वभव में रतिषेण नाम की कबूतरी हुई। दूसरे भव में वायुरथ विद्याधर की प्रभावती नाम की पुत्री तथा पहले पूर्वभव में यह स्वर्ग में देव थी। मपु० ४३ १२४-१३६, ३२९, ४४ ३२७-३४०, ४५ २-७, १४२-१४९, १७९-१८१, ४६ ८७, १०३-१०५, १४७-१४८, २५०-२५१, ४७ २५९-२६९, २७९-२८९, हपु० १२ ८-९, ५१, पापु० ३ १९-२८, ६१, २७७-२७८

सुवक्त्र—विद्याधर। यह नमि का वंशज था। विद्युन्मुख इनके पिता और विद्युद्दष्ट्र पुत्र था। पपु० ५ १६-२१, हपु० १३.२४

सुवज्र—विद्याधर। यह नमि के वंशज राजा वज्र का पुत्र और वज्रभृत का पिता था। पपु० ५ १६-२१, हपु० १३ २२

सुवत्सा—पूर्वविदेहक्षेत्र का एक देश। यह सीता नदी और निषध पर्वत के मध्य स्थित है। कुण्डला नगरी यहाँ की राजधानी थी। मपु० ६३ २०८-२१४, हपु० ५ २४७, २५९

सुवप्रा—पश्चिम विदेहक्षेत्र मे नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित इस नाम का देश। वैजयन्ती इस देश की राजधानी थी। मपु० ६३ २०८-२१६, हपु० ५ २५१, २६३

सुवर्चस्—राजा धृतराष्ट्र और रानी गाधारी का अड़सठवा पुत्र। पापु० ८ २०१

सुवर्णकुम्भ—प्रथम बलभद्र विजय के दीक्षागुरु। मपु० ५७ ९६, ६२. १६५-१६७

सुवर्णकूट—शिखरिन् कुलाचल का सातवा कूट। हपु० ५ १०५-१०६

सुवर्णकूला—चौदह महानदियो में ग्यारहवी नदी। यह पुण्डरीक सरोवर से निकली है। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १२३-१२४, १३५

सुवर्णतिलक—विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा विद्युद्दष्ट्र विद्याधर का पौत्र और सिंहरथ का पुत्र। सिंहरथ ने इसे ही राज्य देकर मुनि घनरथ से दीक्षा ली थी। मपु० ६३ २४१, २५२-२५४

सुवर्णतिलका—धातकीखण्ड द्वीप के ऐरावत क्षेत्र में स्थित तिलकनगर के राजा अभयघोष की रानी। इसके विजय और जयन्त दो पुत्र थे। पृथिवीतिलका इसकी सौत थी। राजा के उसमें आसक्त हो जाने से विरक्त होकर इसने सुमति गणिनी से आर्यिका-दीक्षा ले ली थी। मपु० ६३ १६८-१७५

सुवर्णतेज—हेमागद देश मे स्थित राजपुर नगर के कनकतेज वैश्य और उसकी स्त्री चन्द्रमाला का पुत्र। इसी नगर का सेठ रत्नतेज अपनी पुत्री अनुपमा इसे विवाहना चाहता था किन्तु इसकी दरिद्रता और मूर्खता के कारण उसने अपनी पुत्री का विवाह इसके साथ नहीं

किया था। मपु० ७५ ४५०-४५४

सुवर्णद्वीप—एक द्वीप। चारुदत्त धन कमाने इसी द्वीप गया था। हपु० २१ १०१

सुवर्णनाभ—धातकीखण्ड द्वीप के मगलावती देश में स्थित रत्नसचयनगर के राजा पद्मनाभ का पुत्र। राजा इसे राज्य देकर दीक्षित हो गया था। मपु० ५४ १३०-१३१, १५८-१५९

सुवर्णपर्वत—अनन्तवल मुनिराज की तपोभूमि। रावण ने इन्ही मुनि से इसी पर्वत पर यह व्रत लिया था कि जो स्त्री इसे नही चाहेगी उसे यह स्वीकार नही करेगा। पपु० १४ १०, ३७०-३७१

सुवर्णप्रभ—सौमनस वन का उत्तरदिशावर्ती भवन। यहाँ कुबेर सपरिवार क्रीडा करता है। यह पन्द्रह योजन चौडा, पच्चीस योजन ऊँचा तथा पैंतालीस योजन की परिधिवाला है। चारो दिशाओ के भवन इसी प्रकार है। हपु० ५ ३१५-३२१

सुवर्णभवन—सौमनस वन की चारो दिशाओ में विद्यमान चार भवनो में पश्चिम दिशा का भवन। यह वरुण लोकपाल की क्रीडाभूमि है। हपु० ५ ३१९ दे० सुवर्णप्रभ

सुवर्णयक्ष—एक यक्ष। इसने सत्यक मुनि को शस्त्र से मारने के लिए उद्यत देखकर अग्निभूमि और वायुभूति दोनो ब्राह्मणो को कील दिया था। माता-पिता के निवेदन पर और जैनधर्म स्वीकार कर लेने पर इसने उन्हें मुक्त कर दिया था। मपु० ७२ ३-४, १५-२२

सुवर्णवती—भरतक्षेत्र की एक नदी। यह भरतक्षेत्र के इला पर्वत की दक्षिण दिशा में कुसुवती, हरवती, गजवती और चण्डवेगा नदियो के सगम में मिलती है। मपु० ५९ ११८-११९, हपु० २७ १४

सुवर्णवर—अन्तिम सोलह द्वीपो मे आठवाँ द्वीप एव समुद्र। हपु० ५.६२४

सुवर्णवर्ण—(१) वीरपुर नगर का राजा। इसने तीर्थंकर नमिनाथ को आहार देकर पचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५९ ५६

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५,१९७

सुवर्णवर्मा—(१) गाधार देश की उशीरवती नगरी के राजा आदित्यगति का पौत्र तथा हिरण्यवर्मा का पुत्र। हिरण्यवर्मा ने अभिषेकपूर्वक इसे राज्य देकर श्रीपुर नगर मे श्रीपाल मुनि के पास जैनेश्वरी दीक्षा ले ली थी। मपु० ४६ १४५-१४६, २१६-२१७

(२) वग देश के कान्तपुर नगर का राजा। इसकी रानी विद्युल्लेखा और पुत्र महाबल था। चम्पा नगरी के राजा श्रीषेण की रानी धनश्री इसकी वहिन थी। मपु० ७५ ८१-८२

सुवर्णाभपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। यहाँ का राजा विद्याधर मनोवेग चन्दना को हरकर ले गया था किन्तु अपनी पत्नी मनोवेगा द्वारा डाटे जाने पर पर्णलघ्वी विद्या से उसे चन्दना को भूतरमण अटवी मे छोड देना पडा था। मपु० ७५ ३६-४४ दे० चन्दना

सुवर्मा—राजा धृतराष्ट्र और रानी गाधारी का पैंतीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९७

सुवसु—(१) कुरुवशी एक राजा। यह राजा वसु का नौवाँ पुत्र था। हपु० १७ ५९, ४५ २६

(२) जरत्कुमार का पौत्र। यह वसुध्वज का पुत्र तथा भीमवर्मा का पिता था। हपु० ६६ २-४

सुवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

सुविधाना—एक विद्या। यह रावण को प्राप्त थी। पपु० ७ ३२७, ३३२

सुविधि—(१) तीर्थंकर वृषभदेव के चौथे पूर्वभव का जीव। यह जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में महावत्स देश की सुसीमा नगरी के राजा सुदृष्टि और रानी सुन्दरनन्दा का पुत्र था। इसने बाल्यावस्था में ही धर्म का स्वरूप समझ लिया था। इसका विवाह अभयघोष चक्रवर्ती की पुत्री मनोरमा से हुआ था। केशव इसका पुत्र था। पुत्र के स्नेहवश यह गृह जीवन मे ही रहा किन्तु श्रावक के उत्कृष्ट पद में स्थित रहकर कठिन तप करने लगा था। जीवन के अन्त मे इसने दिगम्बर दीक्षा ले ली थी तथा समाधिमरणपूर्वक देह त्याग कर यह अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुआ। मपु० १० १२१-१२४, १४३-१४५, १५८, १६९-१७०, हपु० ९ ५९

(२) नौवें तीर्थंकर पुष्पदन्त का अपर नाम। मपु० ५५.१, वीवच० १८ १०१-१०६ दे० पुष्पदन्त

(३) चक्रवर्ती भरतेश की यष्टि। मपु० ३७.१४८

(४) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२५

सुविनमि—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के स्वामी विनमि विद्याधर का पुत्र। मपु० ४३ ३०२, पापु० ३ ५३

सुविशाल—(१) वृषभदेव के सडसठवें गणधर। हपु० १२ ६७

(२) मध्यम ग्रैवेयक का तीसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६.५२

(३) सौधर्म स्वर्ग का एक विमान। मपु० ३६.१०५

सुवीथी—राम की चन्द्रकान्त मणियो से निर्मित शाला। पपु० ८३ ६

सुवीर—(१) जरासन्ध के अनेक पुत्रो में एक पुत्र। हपु० ५२ ३२

(२) मथुरा के राजा नरपति का दूसरा पुत्र। शौर्यपुर नगर के राजा शूर का यह छोटा भाई था। हपु० १८ ७-९

(३) एक देश। यहाँ का राजा नन्द्यावर्तपुर के राजा अतिवीर्य का मित्र था। पपु० ३७ ८, २३-२५

सुवीर्य—(१) राजा धृतराष्ट्र तथा रानी गाधारी का छियालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

(२) आदित्यवशी राजा अतिवीर्य का पुत्र। राजा उदित पराक्रम का यह पिता था। इसने निर्ग्रन्थ दीक्षा ले ली थी। पपु० ५ ७,९-१० हपु० १३ १०

सुवेग—रथनूपुर के राजा अमिततेज विद्याधर के पाँच सौ पुत्रों मे एक पुत्र। मपु० ६२ २६९-२७० दे० अमिततेज

सुवेगा—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित द्युतिकरनगर के राजा पवनवेग विद्याधर की रानी। दूसरे जन्म के स्नेहवश चन्दना का हरण करनेवाले मनोवेग की यह माता थी। मपु० ७५ १६३-१६५

सुवेल—(१) विद्याधर अमररक्ष के पुत्रो के द्वारा बसाये गये दस नगरों

मे दूसरा नगर। पपु० ५ ३७१-३७२

(२) एक राजा। इसने नमस्कार करते हुए रावण की अधीनता स्वीकार की थी। पपु० १० २४-२५

(३) लंका का एक द्वीप। यह बहुत समृद्ध था। पपु० ४८ ११५ ११६

(४) सुवेलगिरि का एक नगर। वनवास के समय राम यहाँ आये थे। पपु० ५४ ७०

सुवेलगिरि—एक पर्वत। लंका जाते समय राम वेलन्धर पर्वत से चलकर इस पर्वत पर आये थे। यहाँ के सुवेल नगर का राजा सुवेल विद्याधर था जिसे राम ने सरलता से ही जीत लिया था। पपु० ५४ ६०-७१

सुवेषा—तीसरे बलभद्र भद्र की माता। पपु० २० २३८-२३९

सुव्रत—(१) कुरुवंशी एक राजा। यह धृतिक्षेम का पुत्र और व्रात का पिता था। हपु० ४५ ११

(२) एक मुनि। कौशिक के जीव कुमारदेव की माता सुकुमारिका ने विष मिला आहार देकर इन्हें मार डाला था। हपु० ४६ ४८-५१.

(३) एक मुनि। इनसे राजा सुषेण ने जिन दीक्षा धारण की थी। महापुर के राजा वायुरथ ने इनसे धर्मोपदेश सुना था, तथा राजा मित्रनन्दि और सुदत्त सेठ ने दीक्षा ली थी। मपु० ५८ ७०-८१, ५९ ६४-७०, ६३ १००-१०६

(४) तीर्थङ्कर मुनिसुव्रतनाथ का पुत्र। यह दक्ष का पिता था। इसकी माता प्रभावती थी। इसने अपने पुत्र दक्ष को राज्य देकर अपने पिता तीर्थङ्कर मुनिसुव्रत से दीक्षा लेकर मुक्ति प्राप्त की थी। राम के ये दीक्षा गुरु थे। पपु० २०.२४६-२४७, २१ ४८, ११९ १४-२७, हपु० १६ ५५, १७ १-२

(५) तीसरे बलभद्र भद्र के पूर्वजन्म के दीक्षागुरु। पपु० २० २३८

(६) तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का अपर नाम। पपु० १ १४, ५ २१५ दे० मुनिसुव्रत

(७) आगामी ग्यारहवें तीर्थंकर। हपु० ६० ५५९

(८) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७१

सुव्रता—(१) धातकीखण्ड द्वीप के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र की रानी। प्रियमित्र इसका पुत्र था। मपु० ७४-२३६-२३७, वीवच० ५ ३६-३८

(२) तीर्थंकर धर्मनाथ की जननी। पपु० २० ५१

(३) धातकीखण्ड द्वीप के गन्धिला देश की अयोध्या नगरी के राजा अर्हद्दास की पटरानी। यह वीतभय बलभद्र की माता थी। हपु० २७ १११-११२

(४) एक आर्यिका। भरतक्षेत्र में हस्तिनापुर नगर के राजा गंगदेव की रानी नन्दयशा ने इन्हीं से दीक्षा ली थी। मपु० ७१ २८७-२८८, हपु० ३३ १४१-१४३, १६५

(५) एक आर्यिका। यशोदा की पुत्री ने व्रतधर मुनि से अपना पूर्वभव सुनकर इन्हीं आर्यिका से दीक्षा ली थी। मपु० ७० ४०५-४०८, हपु० ४९ १, १३-२१

(६) एक आर्यिका। जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में [illegible] नगर के वैश्य [illegible] की पुत्री ने इन्हें आहार दिया था। मपु० ६२ ४९४-४९८

सुव्यक्त—रघुवंशी राजा। यह सुमुख का पुत्र और अमृतसेन का पिता था। पपु० ५ १९२-१९३

सुशर्मा—भरतक्षेत्र में अरुण ग्राम के कपिल ब्राह्मण की स्त्री। राम, लक्ष्मण और सीता इसके घर आये थे। पपु० ३५ ७९

सुशान्ति—कुरुवंशी एक राजा। यह ईशावन का पुत्र और शान्तिभद्र का पिता था। हपु० ४५ ३०

सुश्रुत—(१) विजयार्ध पर्वत में रथनूपुरचक्रवाल नगर के राजा ज्वलनजटी विद्याधर का मंत्री। इसने राजपुत्री स्वयंप्रभा को विवाहने के लिए विद्याधर अश्वग्रीव का नाम प्रस्तावित किया था। मपु० ६२ २५, ३०, ५७-६२, पापु० ४ १८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

सुषड्जा—षड्जग्राम की पाँचवीं जाति। हपु० १९ १७४

सुषमा—अवसर्पिणी का दूसरा काल। इसका समय तीन कोड़ाकोड़ी सागर है। इस काल में मनुष्य चार हजार धनुष ऊँचे होते हैं। स्त्री पुरुष दोनों साथ-साथ युगल रूप में जन्मते हैं। इनकी आयु दो पल्य की होती है। इस काल में मनुष्य दो दिन के अन्तर से कल्पवृक्ष से प्राप्त बहेड़े के बराबर आहार करते हैं। मपु० ३ ४५-५०, पपु० ३ ४९-६३, हपु० ७ ५८-६९, वीवच० १८ ८७, ९५-९७

सुषमा दुषमा—अवसर्पिणी का तीसरा काल। इसकी स्थिति दो कोड़ाकोड़ी सागर होती है। इस समय मनुष्यों की आयु एक पल्य, शरीर की ऊँचाई एक कोश और वर्ण श्याम होता है। वे एक दिन के अन्तर से आँवले के बराबर भोजन करते हैं। ज्योतिरंग जाति के कल्पवृक्षों का प्रकाश इस समय मन्द हो जाता है। मपु० ३ ५१-५७, पपु० २० ८१, वीवच० १८ ८७, ९८-१००

सुषमा-सुषमा—अवसर्पिणी का प्रथम काल। इसका समय चार कोड़ाकोड़ी सागर है। इस समय मनुष्यों की आयु तीन पल्य और शरीर की ऊँचाई छः हजार धनुष की होती है। मनुष्यों के शरीर वज्र के समान सुदृढ़ एवं अस्थि बन्धनों से युक्त होते हैं। उनके शरीर का वर्ण तपाये हुए सोने के समान होता है। वे मुकुट, कुण्डल, हार, करधनी, कड़ा, बाजूबन्द और यज्ञोपवीत सदा धारण किये रहते हैं। ये तीन दिन बाद कल्पवृक्षों से प्राप्त बदरीफल के बराबर आहार लेते हैं। इन्हें रोग, मल-मूत्र आदि की बाधा एवं मानसिक पीड़ा नहीं होती। इन्हें पसीना नहीं आता। इनकी अकालमृत्यु नहीं होती। इच्छा करते ही इन्हें समस्त भोगोपभोग की सामग्री कल्पवृक्षों से प्राप्त हो जाती है। इस काल में मद्यांग, तूर्याङ्ग, विभूषांग, स्रगांग, ज्योतिरंग, दीपांग, गृहांग, भोजनांग, पात्रांग और वस्त्रांग ये दस प्रकार के कल्पवृक्ष रहते हैं। पुरुषों का मरण जिम्हाई पूर्वक और

स्त्रियों का मरण छींक लेकर होता है। पति-पत्नी दोनों एक साथ उत्पन्न होते और एक साथ ही मरकर स्वर्ग जाते है। मपु० ३ २२-४३, पपु० २० ८०, वीवच० १८.८५-९३

सुषिर—तत, अवनद्ध घन और सुषिर इन चार प्रकार के वाद्यों में बाँस से निर्मित वीणा आदि वाद्य। पपु० १७ २७४, हपु० १९. १४२-१४३

सुषेण—(१) राजा शान्तन का पौत्र और महासेन का पुत्र। हपु० ४८.४०-४१

(२) राम का पक्षधर एक योद्धा। यह महासैनिकों के मध्य रथ पर सवार होकर रणागण मे पहुँचा था। पपु० ५८ १३, १७

(३) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के कनकपुर नगर का राजा। इसकी एक गुणमंजरी नाम की नृत्यकारिणी थी। भरतक्षेत्र के विन्ध्यशक्ति ने इससे युद्ध किया और युद्ध में इसे पराजित कर बलपूर्वक इससे इसकी नृत्यकारिणी को छीन लिया था। इस घटना से दुखी होकर इसने सुव्रत जिनेन्द्र से दीक्षा ले ली थी तथा वैरपूर्वक मरकर यह प्राणत स्वर्ग में देव हुआ था। स्वर्ग से चयकर द्वारावती नगरी के राजा ब्रह्म की दूसरी रानी उषा का द्विपृष्ठ नाम का नारायण पुत्र हुआ। मपु० ५८ ६१-८४

(४) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में पुष्कलावती देश के अरिष्टपुर नगर के राजा वासव और रानी वसुमती का पुत्र। इसकी माता इसके मोह में पड़कर दीक्षा न ले सकी थी। मपु० ७१ ४००-४०१

सुषेणा—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की श्रावस्ती नगरी के राजा दृढराज की रानी। तीर्थंकर शम्भवनाथ इनके पुत्र थे। मपु० ४९ १४-१५, १९

सुसंवृत—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ १४०

सुसिद्धार्थ—नौवें बलभद्र बलराम के गुरु। पपु० २० २४७

सुस्थित—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में स्थित पोदनपुर नगर का राजा। इसकी रानी सुलक्षणा और पुत्र सुप्रतिष्ठ था। मपु० ७० १३८-१३९

(२) लवण-समुद्र का स्वामी एक व्यन्तर देव। हपु० ६३७, ५४ ३९

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

सुस्थिर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

सुसोमा—(१) सुराष्ट्र देश की अजापुरी नगरी के राजा राष्ट्रवर्धन और विनया रानी की पुत्री। यह नमुचि की बहिन थी। कृष्ण ने नमुचि को मार कर इसे अपनी पटरानी बना लिया था। मपु० ७१ ३८६-३९७, हपु० ४४ २६-३१ दे० नमुचि

(२) एक नगरी। यह धातकीखण्ड द्वीप मे पूर्वविदेह क्षेत्र के वत्स देश की राजधानी थी। मपु० ५२ २-३ ५६ २, ६३ २०९, हपु० ५ २४७, २६९

(३) जम्बूद्वीप की कौशाम्बी नगरी के राजा धरण की रानी। यह तीर्थंकर पद्मप्रभ की जननी थी। मपु० ५२ १८-१९, २१, २६, पपु० २० ४२

(४) जम्बूद्वीप के विजयार्ध पर्वत की पूर्व दिशा की ओर नीलगिरि की पश्चिम दिशा में विद्यमान एक देश। श्रीपाल ने यहाँ अपने चक्रवर्ती होने का प्रमाण दिया था। मपु० ४७.६५-६७

(५) जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा श्रीवर्मा की रानी। श्रीधर्मा इसका पुत्र था। मपु० ५९ २८२-२८३

(६) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र मे महावत्स देश की मुख्य नगरी। मपु० १० १२१-१२२

सुसेन—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का तैंतालीसवाँ पुत्र। पापु० ८ १९८

सुसौम्यात्मा—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १२८

सुहस्त—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का छियासठवां पुत्र। पापु० ८ २०१

सुहित—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

सुह्य—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। इसका निर्माण तीर्थंकर वृषभदेव के समय मे हुआ था। मपु० १६ १५२

सुह्य—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का देश। इसका निर्माण वृषभदेव के समय में हुआ था। पपु० १०१.४३

सुहृत्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१७८

सूकरिका—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ८७

सूक्ष्म—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३८, २५ १०५

(२) पुद्गल द्रव्य के छ भेदो में दूसरा भेद। अनन्त प्रदेशों के समुदाय रूप होने से कर्मों के इन्द्रिय अगोचर स्कन्ध सूक्ष्म होते हैं। मपु० २४.१४९-१५०, वीवच० १६.१२०

(३) एकेन्द्रिय जीवों के सूक्ष्म और बादर इन दो भेदों मे प्रथम भेद। मपु० १७.२४, पपु० १०५ १४५

सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति—शुक्लध्यान के चार भेदों में इस नाम का तीसरा भेद। सब प्रकार के वचनयोग, मनोयोग और बादर काययोग को त्यागकर सूक्ष्मकाय योग का आलम्बन लेकर केवली इस ध्यान को स्वीकार करते हैं, परन्तु जब उनकी आयु एक अन्तर्मुहूर्त मात्र शेष रहती है तब समुद्घात के द्वारा अघातिया कर्मों की स्थिति को समान करके अपने पूर्व शरीर प्रमाण होकर सूक्ष्म काययोग से यह ध्यान करते हैं। मपु० २१.१८८-१९५, हपु० ५६ ७१-७५

सूक्ष्मदर्शी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५, २१६

सूक्ष्मनिगोदियालब्ध्यपर्याप्तक—एकेन्द्रिय जीवों का एक भेद। इनका शरीर अंगुल के असंख्यातवें भाग बराबर होता है और उत्पन्न होने के तीसरे समय में यह जघन्य अवगाहना रूप होता है। उत्कृष्ट अवगाहना एक योजन और एक कोश की होती है। हपु० ५८ ७२-७५

सूक्ष्मत्व—सिद्ध जीवों के आठ गुणों मे पाँचवाँ गुण। मपु० २०.२२२-२२३

सूक्ष्मसाम्पराय—(१) दसवाँ गुणस्थान। इसमे बादर लोभ कषाय भी नही होता। राग अतिसूक्ष्म रह जाता है। मपु० ११ ९०, २० २५९-२६०, हपु० ३ ८२, वीवच० १३ १२१-१२२

(२) चारित्र का एक भेद। इसमें कषाय अत्यन्त सूक्ष्म होता है। हपु० ६४ १८

सूक्ष्मसूक्ष्म—पुद्गल द्रव्य के छ भेदो में प्रथम भेद। स्कन्ध से पृथक् रहनेवाला परमाणु जो इन्द्रियग्राह्य नही होता, सूक्ष्मसूक्ष्म कहलाता है। मपु० २४ १४९-१५०, वीवच० १६ १२०

सूक्ष्मस्थूल—पुद्गल द्रव्य के छ भेदो मे तीसरा भेद। ऐसे पुद्गल द्रव्य चक्षु इन्द्रिय के द्वारा ज्ञात नही होने से सूक्ष्म और कर्ण इन्द्रिय के द्वारा ग्रहण किये जा सकने से स्थूल भी होते हैं। जैसे शब्द, स्पर्श, रस और गन्ध आदि। मपु० २४ १४९, १५१, वीवच० १६.१२१

सूचिनाटक—सूची नृत्य। यह सुइयो के अग्रभाग पर किया जाता है। मपु० १४ १४२, हपु० २१ ४४

सूतक-पातक—जन्म-मरण के समय की अशुद्धि। रजस्वला स्त्री चौथे दिन स्नान करने के पश्चात् शुद्ध मानी गयी है। इसी प्रकार प्रसूति मे बालक को बाहर निकालने के लिए दूसरा, तीसरा और चौथा मास शुद्धकाल बताया गया है। मपु० ३८ ७०, ९०-९१

सूतिका—भरतक्षेत्र की एक नगरी। अग्निसह ब्राह्मण यही रहता था। मपु० ७४ ७४

सूत्र—(१) दृष्टिवाद अग के पाँच भेदो में दूसरा भेद। इसमें अठासी लाख पद है। इन पदो में श्रुति, स्मृति और पुराण के अर्थ का निरूपण किया गया है। मपु० ६ १४८, हपु० २ ९६, १०.६१, ६९-७०

(२) मणिमध्यमा हार का अपर नाम। इसका एक नाम एकावली भी है। मपु १६ ५०

सूत्रकृतांग—द्वादशाग श्रुत का दूसरा भेद। इसमें छत्तीस हजार पद हैं, जिनमें स्वसमय और पर समय का वर्णन किया गया है। मपु० ३४. १३६, हपु० २ ९२, १० २८

सूत्रपद—पारिव्राज्य। (दीक्षाग्रहण) क्रिया में जिन पर विचार किया जाता है ऐसे सत्ताईस सूत्रपद। वे निम्न प्रकार हैं—जाति, मूर्ति, उसमें रहनेवाले लक्षण, शारीरिक सौन्दर्य, प्रभा, मण्डल, चक्र, अभिषेक, नाथता, सिंहासन, उपाधान, छत्र, चमर, घोषणा, अशोकवृक्ष, निधि, गृहशोभा, अवगाहन, क्षेत्रज्ञ, आज्ञा, सभा, कीर्ति, वन्दनीयता, वाहन, भाषा, आहार और सुख। ये परमेष्ठी के गुण होते हैं। मपु० ३९ १६२-१६६

सूत्रजसम्यक्त्व—सम्यक्त्व के दस भेदो में चौथा भेद। आचाराग आदि अगो के सुनने से उनमे शीघ्र उत्पन्न श्रद्धा सूत्रज-सम्यक्त्व है। मपु० ७४ ४३९-४४०, ४४३-४४४, वीवच० १९ १४१, १४६

सूत्रानुगा—सत्यव्रत की पाँच भावनाओ में पाँचवी भावना। शास्त्र के अनुसार वचन कहना सत्यव्रत की सूत्रानुगाभावना है। मपु० २० १६२

सूत्रामणि—रूचकगिरि की उत्तरदिशा में विद्यमान नित्योद्योत कूट की रहनेवाली विद्युत्कुमारी देवी। हपु० ५ ७२०

सूनृतपूतवाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१२

सूप—दाल। इससे भोजन मे रुचि बढती है। वृषभदेव के समय में अरहर, मूँग, उडद, मटर, मोंठ, चना, मसूर और तेवरा प्रभृति दाल बनाई जानेवाले अनाज उत्पन्न होने लगे थे। मपु० ३ १८६-१८८, १२ २४३

सूर—(१) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक देश। महावीर यहाँ विहार करते हुए आये थे। उन्होने यहाँ धर्मोपदेश दिया था। हपु० ३.५

(२) हरिवंशी एक राजा। इसकी रानी सुरसुन्दरी थी। ये दोनों राजा अन्धकवृष्टि के माता-पिता थे। पापु० ७.१३०-१३१

सूरदत्त—जम्बूद्वीप मे भरतक्षेत्र सबधी कलिंग देश के काचीपुर नगर का एक वैश्य। इसने और इसके साथी सुदत्त ने धन के लिए परस्पर मे लडकर एक दूसरे को मार डाला था। मपु० ७० १२५-१३२

सूरदेव—मथुरा के सेठ भानु और उसकी स्त्री यमुना के सात पुत्रो में पाँचवाँ पुत्र। इसकी स्त्री का नाम सुन्दरी था। इसने अपने भाइयों के साथ वरधर्म मुनि से दीक्षा ले ली थी तथा इसकी पत्नी आर्यिका हो गयी थी। हपु० ३३ ९६-९९, १२६-१२७

सूरवीर—काक-मास के त्यागी खदिरसार भील का साला। खदिरसार के बीमार होने पर इसने उसे काक-मास खाने के लिए बाध्य किया था किन्तु खदिरसार अपने नियम पर दृढ रहा जिसके फल से वह मरकर, सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ। खदिरसार के व्रत का यह फल जानकर इसने भी समाधिगुप्त योगी से गृहस्थ के व्रत ग्रहण कर लिए थे। इसका अपर नाम शूरवीर था। मपु० ७० ४००-४१५, वीवच० १९ ११३-१३३ दे० शूरवीर—२

सूरसेन—(१) भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ३ ४, ११ ६४, ५९ ११०

(२) तीर्थंकर कुन्थुनाथ के पिता और हस्तिनापुर नगर के राजा। इसकी रानी श्रीकान्ता थी। मपु० ६४.१२-१३, २२ दे० सूर्य

(३) भरतक्षेत्र में कुशार्थ देश के शौर्यपुर नगर का हरिवंशी एक राजा। यह राजा शूरवीर का पिता था। मपु० ७० ९२-९४ दे० शूरवीर

सूरि—(१) पाँच परमेष्ठियो में आचार्य परमेष्ठी। हपु० १ २८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२०

सूरिगिरि—सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

सूपर्क—वसुदेव का वैरी। यह वसुदेव को हरकर आकाश में ले गया था। वसुदेव ने इसे मुक्को से इतना अधिक पीटा था कि मार से दुखी होकर इसे वसुदेव को आकाश मे ही छोड देना पड़ा था। वसुदेव आकाश से गोदावरी के कुण्ड में गिरा था। इसके पूर्व भी अश्व का रूप धारण करके यह वसुदेव को हर ले गया था तथा उसे इसने आकाश से नीचे गिराया था। हपु० ३० ४२,३१ १-२

सूर्पणखा—रावण की बहिन। रावण ने सीता को अपने में अनुरक्त करने के ध्येय से इसे सीता के पास भेजा था। इसने भी वहाँ जाकर जैसे ही राम को देखा कि उन पर वह मुग्ध हो गयी थी। असफल होने पर अपना वृद्धा का रूप बनाकर इसने सीता को सतीत्व से विचलित करना चाहा किन्तु असमर्थ रही। इसका अपर नाम चन्द्र-नखा था। मपु० ६८ १२४-१२५, १४९, १५२, १७८-१७९ दे० चन्द्रनखा

सूर्पणखा—नभस्तिलक नगर के राजा त्रिशिखर विद्याधर की रानी। इसने विधवा होने पर मदनवेगा का रूप धारण करके छल से वसुदेव का हरण किया था। हपु० २५ ४१, २६-२८

सूर्पार—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशो में भरतक्षेत्र के पश्चिम आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ७१, ७६

सूर्यंजय—दशरथ के पूर्वभव का जीव। यह विदेहक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत पर स्थित शशिपुर के राजा रत्नमाली और रानी विद्युल्लता का पुत्र था। अपने पिता को देव द्वारा कहे वचन सुनकर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ। इसने अपने पुत्र कुलन्द को राज्य देकर पिता के साथ तिलक-सुन्दर आचार्य से दीक्षा ले ली थी तथा तप करके यह महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर दशरथ हुआ। पपु० ३१ ३४ ३५, ५०-५४

सूर्य—(१) हरिवंशी राजा शाल का पुत्र। इसने शुभ्रपुर नाम का नगर बसाया था। इसके पुत्र का नाम अमर था। हपु० २७ ३२-३३

(२) जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का सोलहवाँ नगर। हपु० २२ ९५

(३) राजा वसु का आठवाँ पुत्र। हपु० १७ ५९

(४) हस्तिनापुर का कुरुवंशी एक राजा। इसकी रानी श्रीमती थी। तीर्थंकर कुन्थुनाथ के ये दोनो माता-पिता थे। महापुराण में तीर्थंकर कुन्थुनाथ के पिता और माता का नाम सूरसेन एवं श्रीकान्ता दिया है। मपु० ६४ १२-१३, २२, पपु० २० ५३, हपु० ४५ ६, २०

(५) निषध पर्वत से उत्तर की ओर नदी के बीच विद्यमान पाँच ह्रदों में एक ह्रद। मपु० ६३ १९७-१९८, हपु० ५ १९६

(६) कृष्ण का पुत्र। हपु० ४८ ७१

(७) सूर्यवंशी राजा महेन्द्रविक्रम का पुत्र और इन्द्रद्युम्न का पिता। पपु० ५ ७, हपु० १३ १०

(८) महाकान्तिमान्, आकाश में नित्यगतिशील एक ग्रह। मपु० ३ ७०-७१, पपु० ३ ८१-८३

सूर्यक—नभस्तिलक नगर के राजा त्रिशिखर का पुत्र। इसके लिए राजा त्रिशिखर ने विद्युद्वेग विद्याधर से उसकी पुत्री मदनवेगा की याचना की थी किन्तु उसकी याचना पूर्ण नहीं हुई थी। वसुदेव ने विद्युद्वेग की ओर से इसके साथ युद्ध किया था तथा इसे मार डाला था। हपु० २५ ३८-४२, ६९

सूर्यकमला—किष्किन्धपुर के राजा किष्किन्ध और रानी श्रीमाली की पुत्री। इसके दो भाई थे—सूर्यरज और यक्षरज। इसका विवाह मेघपुर नगर के राजा मेरु विद्याधर के पुत्र मृगारिदमन से हुआ था। पपु० ६ ५२२-५२८

सूर्यकोटिसमप्रभ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९७

सूर्यघोष—कुरुवंशी एक राजा। इसे राज्य राजा हरिध्वज से प्राप्त हुआ था। सुतेजस् इसका उत्तराधिकारी हुआ। हपु० ४५ १४

सूर्यज्योति—राम का पक्षधर एक विद्याधर योद्धा। पपु० ५८ ४

सूर्यदेव—नैषिकग्राम का एक राजा। इसकी रानी मतिप्रिया ने इसी ग्राम के गिरि और गोभूति ब्राह्मणो को भात से ढककर स्वर्ण दान में दिया था। पपु० ५५ ५७-५९

सूर्यपत्तन—राजा सूर की नगरी-शौरीपुर। राजा पाण्डु अँगूठी धारण कर अदृश्य रूप से यहाँ कुन्ती से मिले थे। पापु० ७ १६७-१६८

सूर्यपुर—(१) विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी का चवालीसवाँ नगर। मपु० १९ ५२-५३, हपु० २२ ९५

(२) वसुदेव की निवासभूमि। छठा प्रतिनारायण बलि भी इसी नगर का निवासी था। पपु० २० २४२-२४४, हपु० ३३ १

सूर्यप्रज्ञप्ति—अंगश्रुत का एक भेद। दृष्टिवाद अंग के प्रथम भेद परिकर्म में पाँच प्रज्ञप्तियों का वर्णन है जिनमें यह दूसरी प्रज्ञप्ति है। इसमें पाँच लाख तीन हजार पदों के द्वारा सूर्य के वैभव का वर्णन किया गया है। हपु० १० ६२, ६४

सूर्यप्रभ—(१) रानी रामदत्ता का जीव, सहस्रार स्वर्ग का एक देव। हपु० २७ ७५

(२) तीर्थंकर महावीर का जीव, सहस्रार स्वर्ग का एक देव। मपु० ७४ २४१, २५१-२५२, ७६ ५४२

(३) चक्रवर्ती भरतेश का रत्न-निर्मित एक छत्र। मपु० ३७ १५६

(४) पुष्करार्ध द्वीप के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर एवं राजा। धारिणी इसकी रानी और चिन्तागति, मनोगति तथा चपलगति ये तीन पुत्र थे। मपु० ७० २६-२९

(५) सौधर्म स्वर्ग का देव। यह भरतक्षेत्र के हरिवर्ष देश में भोग-पुर नगर के राजा सिंहकेतु और उसकी रानी विद्युन्माला को मारने का विचार करनेवाले चित्रांगद देव का मित्र था। इसने चित्रांगद को समझा-बुझाकर इसे और इसकी रानी दोनो को बचाया था। मपु० ७० ७४-८३, पापु० ७.१२१-१२६

सूर्यप्रभा—तीर्थंकर पुष्पदन्त की दीक्षा-शिविका। वे इसी में बैठकर दीक्षाग्रहण के लिए पुष्पक वन गये थे। मपु० ५५.४६

सूर्यबाण—एक विद्यामय बाण। इससे तमोबाण का नाश किया जाता है। मेघप्रभ ने सुनमि के द्वारा चलाये गये तमोबाण का इसी बाण से नाश किया था। मपु० ४४ २४२

सूर्यमाल—सोलह वक्षार-पर्वतों में चौदहवाँ वक्षार-पर्वत। यह पश्चिम विदेहक्षेत्र में नील पर्वत और सीतोदा नदी के मध्य स्थित है। मपु० ६३.२०१, २०४, हपु० ५ २३२

सूर्यमित्र—एक मुकुटबद्ध राजा। अर्ककीर्ति और जयकुमार के बीच हुए

युद्ध में इसने जयकुमार का पक्ष लिया था। मपु० ४४ १०६-१०७, पापु० ३ ९४-९५

सूर्यमूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२८

सूर्यरज—किष्किन्ध नगर के राजा किष्किन्ध तथा रानी श्रीमाला का ज्येष्ठ पुत्र। यक्षरज इसका छोटा भाई तथा सूर्यकमला बहिन थी। इसकी रानी इन्दुमालिनी थी जिससे इसके बाली और सुग्रीव नाम के दो पुत्र तथा श्रीप्रभा पुत्री हुई थी। यह बाली को राज्य देकर तथा सुग्रीव को युवराज बनाकर पिहितमोह मुनि से दीक्षित हो गया था। पपु० ६ ५२०-५२४, ९ १, १०-१२, १५-१९

सूर्यहास—एक खड्गरत्न। इसकी एक हजार देव पूजा करते थे। स्वाभाविक उत्तम गन्ध भी इसमें थी। यह दिव्य मालाओं से अलंकृत था। इसकी सुगन्ध से आकृष्ट होकर लक्ष्मण इसके निकट गया था। इसे उसने निःशंक होकर ले लिया था। इसकी तीक्ष्णता की परीक्षा के लिए उसने बाँसों के झुरमुट को काट डाला था। शम्बूक इसको पाने के लिए इसी झुरमुट के बीच साधना-रत था। अत भ्रान्तिवश इस रत्न को पाने के यत्न में ही वह लक्ष्मण द्वारा मारा गया था। पपु० ४३ ५३-६२, ७२-७५

सूर्याचरण—सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

सूर्याभ—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का छत्तीसवाँ नगर। यहाँ का राजा राम-रावण युद्ध में रावण की सहायतार्थ उसके पास आया था। मपु० १९ ५०, ५३, पपु० ५५ ८४

(२) पुष्कराध के विदेहक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के गण्यपुर अपर नाम सूर्यप्रभ नगर का राजा। इसकी रानी धारिणी थी। इसके तीन पुत्र थे—चिन्तागति, मनोगति और चपलगति। मपु० ७० २६-२९, हपु० ३४ १५-१७ दे० सूर्यप्रभ-४

सूर्यारि—भरत के साथ दीक्षित एक नृप। इसने निर्वाण पद प्राप्त किया था। पपु० ८८ १-२, ४

सूर्यारक—एक देश। राम के पुत्रों ने यहाँ से राजा को युद्ध में जीता था। पपु० १०१ ८३

सूर्यावर्त—(१) राम का एक धनुष। पपु० १०३ ११-१२ दे० राम

(२) पुष्करपुर नगर का राजा। इसकी रानी यशोधरा और पुत्र रश्मिवेग था। इन्होंने मुनिचन्द्र नामक मुनि से धर्मोपदेश सुनकर तपस्या की थी। इसकी रानी यशोधरा ने भी गुणवती आर्यिका से दीक्षा ले ली थी। मपु० ५९ २२८-२३२, हपु० २७ ८०-८२

(३) सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

सूर्योदय—(१) एक सुगन्धित चूर्ण। जीवन्धरकुमार ने सुगन्धि में इसकी अपेक्षा चन्द्रोदय चूर्ण को परीक्षा करके अधिक श्रेष्ठ बताया था। मपु० ७५ ३४८-३५७

(२) विद्याधरों का नगर। यहाँ का राजा सेना सहित रावण के पास आया था। पपु० ८ ३६२, ५५ ८५, ८८

(३) विनीता नगरी के राजा सुप्रभ और रानी प्रह्लादना का पुत्र। चन्द्रोदय का यह बड़ा भाई था। ये दोनों भाई तीर्थंकर वृषभदेव के साथ दीक्षित हो गये थे किन्तु मुनि पद पर स्थिर न रह सके। अन्त में भ्रष्ट होकर वे मरीचि के शिष्य हो गये थे। यह मरकर राजा हरपति का कुलकर नाम का पुत्र हुआ। पपु० ८५ ४५-५०

सृष्ट्यधिकारिता—द्विज के दस अधिकारों में पाँचवाँ अधिकार। मिथ्यादृष्टियों के दूषित सृष्टिवाद से अपनी, प्रजा की और राजा की रक्षा करने तथा धर्मसृष्टि की भावना करने के अधिकार का नाम सृष्ट्यधिकारिता है। मपु० ४० १७५, १८७-१९१

सेना—(१) तीर्थंकर सम्भवनाथ की जननी। पपु० २० ३९

(२) हाथी, घोड़ा, रथ और पयादे ये सेना के चार अंग होते हैं। इनकी गणना करने के आठ भेद हैं—पत्ति, सेना, सेनामुख, गुल्म, वाहिनी, पृतना, चमू और अनीकिनी। इनमें एक रथ, एक हाथी, तीन घोड़ों और पाँच पयादों के समूह को पत्ति कहते हैं। सेना तीन पत्ति की होती है। तीन सेनाओं का दल सेनामुख, तीन सेनामुखों का दल गुल्म, तीन गुल्मों के दल को एक वाहिनी, तीन वाहिनियों की एक पृतना, तीन पृतनाओं की एक चमू और तीन चमू की एक अनीकिनी होती है। इन्द्र की सेना की सात कक्षाएँ होती हैं। उनके नाम इस प्रकार बताये गये हैं—हाथी, घोड़े, रथ, पयादे, बैल, गन्धर्व और नृत्यकारिणी। इनमें प्रथम गज-सेना में बीस हज़ार हाथी होते हैं। आगे की कक्षाओं में यह संख्या दूनी-दूनी होती जाती है। मपु० १० १९८-१९९, पपु० ५६ ३-८

सेनानी—राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी का उनसठवाँ पुत्र। पपु० ८ २००

सेनापति—चक्रवर्ती भरतेश के चौदह रत्नों में एक सजीव रत्न। मपु० ३७ ८३-८४, ८६

सेनामुख—सेना की गणना के आठ भेदों में तीसरा भेद। इसमें ९ रथ, ९ हाथी, २७ घोड़े और ४५ पदाति सैनिक होते हैं। पपु० ५६ ३-७ दे० सेना-२

सेनारम्य—एक सरोवर। जीवन्धरकुमार ने यहाँ वनराज को पकड़कर ससैन्य विश्राम किया था। मपु० ७५ ५१०

सेन्द्रकेतु—धातकीखण्ड में ऐरावतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत पर स्थित वात्सल्य नगर का राजा। इसकी रानी सुप्रभा और पुत्री मदनवेगा थी। मपु० ६३ २५०-२५१

सेवक—आगामी बारहवें तीर्थंकर का जीव। मपु० ७६.४७३

सैतव—भरतेश के छोटे भाइयों द्वारा त्यक्त देशों में भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। यहाँ भरतेश का शासन हो गया था। हपु० ११ ७५

सैन्धव—सिन्धु देश में उत्पन्न अश्व। चक्रवर्ती भरतेश को ये भेंटस्वरूप प्राप्त हुए थे। मपु० ३० १०७

सैन्य-पताका—सैन्य-ध्वज। युद्ध में काम आनेवाले साग्रामिक रथ ध्वजाओं से युक्त होते थे। सबसे पहले पैदल, उनके पीछे घोड़ों का समूह उसके पश्चात् रथों का समूह और उनके पश्चात् हाथियों का समूह होता था। ये सभी अपना-अपना ध्वज लेकर चलते थे। मपु० २६ ७७-७८

सैन्यशिविर—सेना का विश्रामस्थल। यह पूर्वनियोजित होता था। इसकी

सम्पूर्ण जानकारी सेनापति को ही होती थी। यहाँ सेना के ठहरने की व्यवस्था रहती थी। रावटी, तम्बू आदि लगाये जाते थे। तम्बुओं पर पताकाएँ फहराती थीं। मपु० ३७ १२१, १२९, ३२.६५

सोपान—एक हार। इसमें सोने के तीन फलक लगे होते हैं। मपु० १६. ६५-६६

सोपारक—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक नगर। यह राजगृह के पास था। पूतगन्धिका ने यहाँ आर्यिकाओं की उपासना की थी। हपु० ६० ३६

सोम—(१) नन्दनवन की पूर्व दिशा में विद्यमान पण्य भवन का निवासी एक देव। हपु० ५.३१५-३१७

(२) वसुदेव के भाई राजा अभिचन्द्र का पुत्र। हपु० ४८ ५२

(३) भरतक्षेत्र के सिंहपुर नगर का अभिमानी परिव्राजक। यह मरकर इसी नगर में भैंसा हुआ था। मपु० ६२ २०२-२०३, पापु० ४ ११७-११८

(४) कैलास पर्वत के पास पर्णकान्ता नदी के तट पर रहनेवाला एक तापस। इसकी स्त्री श्रीदत्ता तथा पुत्र चन्द्र था। मपु० ६३ २६६-२६७

(५) भरतक्षेत्र में मगध देश के लक्ष्मीग्राम का निवासी एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी को मुनि की निन्दा करने से उदुम्बर रोग हो गया था। मपु० ७१ ३१७-३२०

(६) हस्तिनापुर का राजा। तीर्थङ्कर वृषभदेव ने इसे और राजा श्रेयांस को कुरुजांगल देश का स्वामी बनाया था। इसकी लक्ष्मीमती स्त्री थी। जयकुमार इसी के पुत्र थे। इसके विजय आदि चौदह अन्य पुत्र भी थे। पापु० २ १६५, २०७-२०८, २१४, ३.२-३ दे० सोमप्रभ

(७) एक राजा। इसका पुत्र सिंहल कृष्ण का पक्षधर था। हपु० ५२.१७

(८) विद्याधरों के चक्रवर्ती इन्द्र का भक्त। माल्यवान् ने इसे भिण्डिमाल शस्त्र से मूर्च्छित कर दिया था। पपु० ७ ९१, ९५-९६

(९) मकरध्वज विद्याधर और उसकी स्त्री अदिति का पुत्र। इन्द्र ने इसे ज्योतिसंग नगर की पूर्व दिशा में लोकपाल के पद पर नियुक्त किया था। पपु० ७ १०८-१०९

(१०) हस्तिनापुर का राजा। चौथे नारायण पुरुषोत्तम का यह पिता था। इसकी रानी सीता थी। पपु० २०.२२१-२२६

(११) गन्धवती नगरी का पुरोहित। इसके सुकेतु और अग्निकेतु नाम के दो पुत्र थे। पपु० ४१ ११५-११६

(१२) नमि विद्याधर का एक पुत्र। हपु० २२ १०७

(१३) सौधर्मेन्द्र का लोकपाल एक देव। नन्दीश्वर द्वीप के दक्षिण में विद्यमान अंजनगिरि की चारों दिशाओं में निर्मित वापियों में जयन्ती वापी इसकी क्रीडा स्थली है। हपु० ५.६६०-६६१

(१४) ऐशानेन्द्र का लोकपाल एक देव। नन्दीश्वर द्वीप की उत्तरदिशावर्ती आनन्दा वापी इसकी क्रीडा स्थली है। हपु० ५ ६६४-६६५

सोमक—(१) तीर्थङ्कर नमिनाथ के प्रथम गणधर। हपु० ६० ३४८

(२) एक राजा। यह रोहिणी के स्वयंवर में आया था। हपु० ३१.३०

(३) राजा जरासन्ध का दूत। इसने जरासन्ध को युद्ध में आये समस्त राजाओं का परिचय दिया था। पापु० २०.३१९

सोमखेट—एक नगर। यहाँ के राजा महेन्द्रदत्त थे। इन्होंने तीर्थङ्कर सुपार्श्वनाथ को यहाँ आहार कराया था। मपु० ५३ ४३

सोमदत्त—(१) महापुर नगर का राजा। यह रोहिणी के स्वयंवर में आया था। इसकी रानी पूर्णचन्द्रा, भूरिश्रवा पुत्र और सोमश्री पुत्री थी जिसका विवाह वसुदेव से हुआ था। हपु० २४ ३७-३९, ५०-५२, ५९, ३१ २९

(२) यादवों का पक्षधर एक अर्धरथ राजा। हपु० ५० ८४-८५

(३) तीर्थङ्कर वृषभदेव के आठवें गणधर। हपु० १२ ५६

(४) भरतक्षेत्र की चम्पा नगरी के ब्राह्मण सोमदेव और उसकी स्त्री सोमिला का ज्येष्ठ पुत्र। सोमिल और सोमभूति इसके छोटे भाई थे। इसने अपने मामा की पुत्री धनश्री को तथा सोमिल ने मित्रश्री को विवाहा था। अन्त में यह और इसके दोनों भाई वरुण मुनि से दीक्षित हो गये थे। इसकी और इसके भाई सोमिल की पत्नी आर्यिकाएँ हो गयी थीं। आयु के अन्त में मरकर ये पाँचों स्वर्ग में सामानिक देव हुए। स्वर्ग से चयकर यह युधिष्ठिर और इसके छोटे दोनों भाई भीम और अर्जुन हुए और दोनों पत्नियों के जीव नकुल एवं सहदेव हुए। मपु० ७२ २२८-२३७, २६१, २६२, हपु० ६४ ४-६, ९-१३, १३६-१३७, पापु० २४ ७५

(५) वर्धमान नगर का राजा। इसने तीर्थङ्कर पद्मप्रभ को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५२ ५३-५४

(६) भरतक्षेत्र के नलिन नगर का राजा। इसने तीर्थंकर चन्द्रप्रभ को नवधा भक्ति से आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये थे। मपु० ५४ २१७-२१८

सोमदेव—(१) चम्पा नगरी का एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी सोमिला थी। सोमदत्त, सोमिल और सोमभूति ये इसके तीन पुत्र थे। मपु० ७२ २२८-२२९ दे० सोमदत्त-४

(२) जम्बूद्वीप के मगध देश में स्थित शालिग्राम का रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री अग्निला थी। इन दोनों के दो पुत्र थे—अग्निभूति और वायुभूति। इसने और इसकी पत्नी दोनों ने सत्यक मुनि पर उपसर्ग करने की चेष्टा की। वहीं पर स्थित एक यक्ष द्वारा दोनों कील दिये गये। अपने दोनों पुत्रों को जैनधर्म स्वीकार कर लेने का वचन देकर इसने मुक्त कराया था। बाद में यह और इसकी पत्नी दोनों सन्मार्ग से विचलित हो गये और इस पाप के कारण दोनों दीर्घकाल तक अनेक कुगतियों में भटकते रहे। मपु० ७२ ३-४, १५-२३, पपु० १०९ ३५-३८, ९८-१२६, हपु० ४३.९९-१००, १४१-१४४, १४७

(३) भरतक्षेत्र में मगधदेश के लक्ष्मीग्राम का ब्राह्मण। यह रुक्मिणी का पूर्वभव का पति था। हपु० ६०.२६-२७, ३९

सोमप्रभ—(१) भरतक्षेत्र मे कुरुजागल देश के हस्तिनापुर नगर का राजा। कुरुवश का तिलक राजा श्रेयास इसका छोटा भाई था। इसने ससार के यथार्थ स्वरूप को जानकर जयकुमार को राज्य दे दिया था तथा स्वय अपने छोटे भाई श्रेयास के साथ वृषभदेव से दीक्षित होकर यह उनका गणधर हुआ। मपु० २० ३०-३१, २४ १७४, ४३ ७८-८६ हपु० ४५ ६-७ दे० सोम

(२) भरतक्षेत्र की द्वारवती नगरी का राजा। सुप्रभ बलभद्र के ये पिता थे। मपु० ६० ४९,६३

सोमप्रभा—पूर्वधातकीखण्ड द्वीप के मगलावती देश में स्थित रत्नसचय-नगर के राजा पद्मनाभ की रानी। स्वर्णनाभ की यह जननी थी। मपु० ५४ १३०-१३१, १४१

सोममूर्ति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.१२८

सोमयश—वृषभदेव का पौत्र और बाहुबलि का पुत्र। चन्द्रवश की स्थापना इसी के नाम पर हुई थी। महाबल इसका पुत्र था। पपु० ५ १०-१२, हपु० १३ १६-१७

सोमयशा—शौर्यपुर के सुमित्र तापस की स्त्री। इन दोनो के पुत्र को पूर्वभव के स्नेहवश जृम्भक देव उठा ले गया था तथा उसने मणि-काचन गुहा में उसका पालन किया था। इनका यही पुत्र नारद नाम से विख्यात हुआ। हपु० ४२.१४-२० दे० नारद

सोमला—मगध देश के राजा की पुत्री। पिता ने विजयपुर नगर में वसुदेव के साथ इसे विवाह दिया था। पापु० ११ १७-१८

सोमवंश—वृषभदेव का पौत्र और बाहुबलि का पुत्र सोमयश इस वश का सस्थापक था। इस वश का अपर नाम चन्द्रवश भी है। दान की प्रवृत्ति इसी वश से आरम्भ हुई थी। यह इक्ष्वाकुवश से उत्पन्न हुआ था। मपु० ४४ ४०, हपु० १३ १६,३३

सोमशर्मा—(१) पुराणो के अर्थ, वेद तथा व्याकरण के रहस्य को जाननेवाला बनारस का एक ब्राह्मण। सोमिला इसकी पत्नी थी। इन दोनो की दो पुत्रियाँ थी—भद्रा और सुलषा। हपु० २१ १३१-१३२

(२) एक ब्राह्मण। इसने अपनी कन्या सोमश्री का विवाह कृष्ण के भाई गजकुमार से करने का निश्चय किया ही था कि गजकुमार विरक्त होकर दीक्षित हो गया। गजकुमार के ऐसा करने से क्रोध मे आकर इसने उनके सिर पर अग्नि जलाई थी। इस उपसर्ग को जीतकर गजकुमार मोक्ष गया। हपु० ६०.१२६, ६१ २-७

(३) पद्मिनीखेट नगर का एक ब्राह्मण। हिरण्यलोमा इसकी पत्नी तथा चन्द्रानना पुत्री थी। पापु० ४ १०७-१०८

(४) कुरुदेश के पलाशकूट का निवासी एक दरिद्र ब्राह्मण। इसका पुत्र नन्दि था। मपु० ७० २००-२०१

(५) मगधदेश की वत्सा नगरी के निवासी शिवभूति ब्राह्मण का ससुर। इसकी पुत्री सोमिला थी। मपु० ७५ ७०-७३

सोमश्री—(१) चम्पा नगरी के अग्निभूति ब्राह्मण तथा उसकी स्त्री अग्निला की तीन पुत्रियों में दूसरो पुत्री। इनका विवाह इसके फुफेरे भाई सोमिल से हुआ था। अपनी बहिन नागश्री द्वारा विष मिश्रित आहार देकर मुनि को मार डालने की घटना से दुखी होकर पति पत्नी (सोमिल और सोमश्री) दोनो दीक्षित हो गये थे। आयु के अन्त में मरकर दोनो देव हुए तथा स्वर्ग से चयकर यह सहदेव हुई थी। हपु० ६४ ४-१३, १३७-१३८

(२) गिरितट नगर के निवासी वसुदेव ब्राह्मण की पुत्री। कुमार वसुदेव ने वेदो का अध्ययन करने के पश्चात् विधिपूर्वक इसके साथ विवाह किया था। हपु० २३ २६-२९, १५१

(३) महापुर नगर के राजा सोमदत्त की पुत्री। यह भूरिश्रवा की बहिन थी। वसुदेव ने इसे अपने पूर्वभव की स्त्री जानकर इससे विवाह किया था। हपु० २४.३७, ५०-५२, ५९, ६१-७६

(४) विदेहक्षेत्र के पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा अशोक की रानी। कृष्ण को पटरानी सुलक्षणा के पूर्वभव का जीव इसकी श्रीकान्ता नाम की पुत्री थी। मपु० ७१ ३९४-३९६

(५) कुम्भकारकट नगर के निवासी चण्डकौशिक ब्राह्मण की पत्नी। इसने भूतो की आराधना से हुए अपने पुत्र का नाम मौण्ड्य-कौशिक रखा था। पापु० ४ १२६

सोमा—(१) भरतक्षेत्र में मगधदेश के राजगृह नगर के राजा सुमित्र की रानी। तीर्थंकर मुनिसुव्रत की ये जननी थी। मपु० ६७ २०-२१, २७ २८

(२) विजयखेट नगर के निवासी सुग्रीव गन्धर्वाचार्य की पुत्री। इसकी एक छोटी बहिन थी जिसका नाम विजयसेना था। वसुदेव ने गन्धर्व-विद्या में दोनो को पराजित करके उनके साथ विवाह किया था। हपु० १९ ५३-५८

(३) सोमशर्मा ब्राह्मण की कन्या जिसे कृष्ण के भाई गजकुमार के लिए देने का निश्चय किया गया था। हपु० ६० १२७-१२८ दे० सोमशर्मा—२

सोमिनी—त्रिश्रृगपुर के प्रियमित्र सेठ की पत्नी। इन दोनो को एक नयनसुन्दरी नाम की कन्या थी जो युधिष्ठिर को दी गयी थी। हपु० ४५ ९५, १००-१०२

सोमिल—चम्पापुर नगर के सोमदेव ब्राह्मण का पुत्र। यह भीम पाण्डव का जीव था। मपु० ७२ २२८-२३१, २३७, २६१, दे० सोमदत्त-४ और सोमश्री—१

सोमिला—(१) सोमशर्मा की पत्नी। दे० सोमशर्मा-१

(२) वत्सा नगरी के शिवभूति ब्राह्मण की पत्नी। दे० सोमशर्मा-५

सोल्व—भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखण्ड का एक देश। हपु० ११ ६५ दे० साल्व

सौकर—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का बीसवाँ नगर। हपु० २२ ८७

सौगन्धिक—मानुषोत्तरपर्वत की पूर्व दिशा में विद्यमान एक कूट। यह सुपर्णकुमारो के स्वामी यशोधर देव की निवासभूमि है। हपु० ५ ६०२-६०३

सौत्रामणि—एक वैदिक यज्ञ। इन्द्र इस यज्ञ का देव है। पपु० ११ ८५

सौदामिनीप्रभ—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के कनकपुर नगर के राजा हिरण्याभ और रानी सुमना का पुत्र। पपु० १५ ३७-३८

सौदास—(१) अयोध्या के राजा नघुष तथा सिंहिका रानी का पुत्र। राजा समस्त शत्रुओ को वश में कर लेने के कारण सुदास कहलाता था तथा राजा का पुत्र होने के कारण यह इस नाम से प्रसिद्ध हुआ था। नरमासभक्षी हो जाने के कारण इसे राज्य से निकालकर इसकी रानी कनकाभा से उत्पन्न पुत्र सिंहरथ को राजा बनाया गया था। राज्य से निकाले जाने के कारण यह दक्षिण की ओर गया। वहाँ दिगम्बर मुनि से धर्म श्रवण करके इसने अणुव्रत धारण किये। सौभाग्य से इसे महापुर का राज्य प्राप्त हो गया था। इसने अन्त मे पुत्र से युद्ध किया तथा उसे पराजित करके पुन राजा बनाकर यह तपोवन चला गया था। हरिवशपुराण के अनुसार यह कलिंग देश के काचनपुर नगर के राजा जितशत्रु का पुत्र था। मनुष्यो के बच्चो को भी खाने लगने से यह वसुदेव द्वारा मारा गया था। पपु० २२ ११४ ११५, १३१, १४४-१५२, हपु० २४ ११-२३

सौधर्म—सोलह कल्पो (स्वर्गों) मे प्रथम कल्प। सौधर्म और ऐशान कल्पो मे इकतीस पटल है। उनके नाम हैं—१ ऋतु २ विमल ३ चन्द्र ४ वल्गु ५ वीर ६ अरुण ७ नन्दन ८ नलिन ९ काचन १० रोहित ११ चंचत् १२ मारुत १३ ऋद्धोश १४ वैडूर्य १५ रुचक १६ रुचिर १७ अर्क १८ स्फटिक १९ तपनीयक २० मेघ २१ भद्र २२ हारिद्र २३ पद्म २४ लोहिताक्ष २५ वज्र २६ नन्द्यावर्त २७ प्रभकर २८ प्रष्टक २९. जगत् ३० मित्र और ३१ प्रभा। इस स्वर्ग में बत्तीस लाख विमान हैं। विमानो में ६४०००० विमान सख्यात योजन विस्तार वाले हैं। यहाँ के भवनो के मूल शिलापीठ की मोटाई ११२१ योजन और चौर चौडाई १२० योजन है। यहाँ के भवन काले, नीले, लाल, पीले और सफेद रग के होते हैं। ये घनोदधि का आधार लिये रहते हैं। यहाँ देवो के मध्यमपीत लेश्या होती है। देवो का अवधिज्ञान का विषय धर्मा पृथिवी तक है। यहाँ देवियो के उत्पत्ति-स्थान छ. लाख हैं। यहाँ के प्रथम ऋतु विमान और मेरु की चूलिका में बाल मात्र का अन्तर है। ऋतु विमान ४५ लाख योजन विस्तृत है। इस कल्प में सख्यात योजन विस्तारवाले विमानो से चौगुने असख्यात योजन विस्तारवाले विमान है। हपु० ३ ३६, ६ ४४-४७, ५५, ७८-१२१ दे० कल्प

सौधर्मेन्द्र—सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र। यह जिन शिशु को अपनी अक में बैठाकर सुमेरु पर्वत पर ले जाता है तथा वहाँ एक हजार कलशो से उनका अभिषेक करता है। मपु० १३ ४७, वीवच० ८ १०३, ९ २-१८

सौनन्दक—चक्रवर्ती भरतेश का एक असि रत्न। इस नाम की एक तलवार सुनन्द यक्ष ने लक्ष्मण को दी थी। मपु० ३७ १६७, ३८. ६४६, हपु० ५३ ४९

सौमनस—(१) रुचकगिरि को पश्चिम दिशा का छठा कूट। यहाँ दिक्कुमारी नवमिका देवी रहती है। हपु० ५.७१३

(२) सौमनस्य पर्वत का दूसरा कूट। हपु० ५ २१२, २२१

(३) सुमेरु पर्वत का तीसरा वन। यह नन्दनवन के समान है तथा नन्दनवन से साढे बासठ हजार योजन ऊपर स्थित है। मपु० ५ १८३, पपु० ६ १३५, हपु० ५ २९५, ३०८, वीवच० ८ ११३-११४

(४) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी का साठवाँ नगर। हपु० २२ ९२

(५) भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड का एक नगर। यहाँ तीर्थंकर सुमतिनाथ की प्रथम पारणा हुई थी। मपु० ५१ ७२

(६) विदेहक्षेत्र में विद्यमान एक गजदन्त पर्वत। मपु० ६३ २०५

सौमनस्य—(१) सुमेरु पर्वत की पूर्व-दक्षिण दिशा मे स्थित एक रजतमय पर्वत। इसके सात कूट हैं—सिद्धकूट, सौमनसकूट, देवकुरुकूट, मगलकूट, विमलकूट, काचनकूट और विशिष्टक कूट। मपु० ६३. १४१, हपु० ५ २१२, २२१

(२) ऊर्ध्वग्रैवेयक का दूसरा इन्द्रक विमान। हपु० ६ ५३

सौमिनी—त्रिश्रृगनगर के सेठ प्रियमित्र की स्त्री। नयनसुन्दरी इन दोनो की एक कन्या थी, जो युधिष्ठिर को दी गयी थी। पापु० १३ १०१, ११०-११२

सौम्य—(१) पाँचवाँ अनुदिश विमान। हपु० ६ ६३

(२) हस्तिनापुर का एक पर्वत। यहाँ अकम्पनाचार्य आदि मुनियो ने आतापनयोग धारण किया था। हपु० ७० २७९

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७८

सौम्यरूपक—छठा अनुदिश विमान। हपु० ६ ६३

सौम्यवक्त्र—रावण का पक्षधर एक योद्धा। यह राम-रावण युद्ध में रावण की ओर से युद्ध करने अश्ववाही रथ पर बैठकर सेना सहित रणागण में पहुँचा था। पपु० ५७.५५

सौराष्ट्र—भरतक्षेत्र का एक देश। अनेक वनाधिपो ने इस देश में उत्पन्न हुए हाथी चक्रवर्ती भरतेश को भेंट में दिये थे। तीर्थंकर महावीर ने यहाँ विहार किया था। मपु० ३० ९८, पापु० १ १३३ दे० सुराष्ट्र

सौरीपुर—भरतक्षेत्र का एक प्राचीन नगर। यहाँ यादवो ने वसुदेव के साथ कुछ दिन निवास किया था। पापु० ११ ४१

सौर्यपुर—समुद्रविजय आदि यादव राजाओ का नगर। हपु० ३१.२५, ३७ १, दे० सौरीपुर

सौर्पक—वसुदेव का पक्षधर एक विद्याधर। यह युद्ध में राजा चण्डवेग से पराजित हो गया था। हपु० २५.६३

सौवीर—भरतेश के छोटे भाइयो द्वारा त्यक्त देशो में भरतक्षेत्र के उत्तर आर्यखण्ड का एक देश। इसका निर्माण वृषभदेव के समय मे हुआ था। भरतेश का यहाँ शासन था। मपु० १६ १५५, हपु० ११ ६७

सौवीरी—सगीत के मध्यमग्राम की प्रथम मूर्च्छना। हपु० १९ १६३

सौल्त—एक योद्धा। राम-लक्ष्मण और वज्रजघ के बीच हुए युद्ध में इसने वज्रजघ की ओर से युद्ध किया था। पपु० १०२ १५६

स्कन्द—राम का एक सामन्त। इसने रावण के भिन्नाजन योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ५८ ९, ६२.३६

स्कन्ध—(१) अग्रायणीयपूर्व के चौथे प्राभृत का चौबीसवाँ योगद्वार। हपु० १० ८६ दे० अग्रायणीयपूर्व

(२) परमाणुओ के सघात से उत्पन्न पुद्‌गल का भेद। यह स्निग्ध और रूक्ष परमाणुओ का समुदाय है। इसके छ भेद हैं—सूक्ष्म-सूक्ष्म, सूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, स्थूलसूक्ष्म, स्थूल और स्थूल-स्थूल। मपु० २४ १९६, २४९, हपु० ५८ ५५, वीवच० १६ ११७ दे० पुद्‌गल

स्तनक—दूसरे नरक के दूसरे प्रस्तार का इन्द्रक बिल। इस बिल की चारो दिशाओ में एक सौ चालीस और विदिशाओ में एक सौ छत्तीस श्रेणीबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७८, १०६

स्तनलोलुप—दूसरे नरक का ग्यारहवाँ इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में एक सौ चार और विदिशाओ में सौ श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७९, ११५-११६

स्तनांशुक—नारियो की वेशभूषा का एक वस्त्र। यह स्तनभाग को ढकने के काम आता था। मपु० ६ ७२

स्तनित—भवनवासी देवो का एक भेद। ये तीर्थङ्कर की समवसरण भूमि के चारो और विद्युन्माला आदि से युक्त होकर गन्धोदकमय वर्षा करते हैं। इनका मूल आवास पाताललोक है। हपु० ३ २३, ४ ६३, ६५, वीवच० १९ ७०

स्तनोपान्त-हार—नारियो का आभूषण-माला। यह स्त्रियो के स्तनभाग तक लटकती थी। ये मालाएँ विविध वर्ण की होती थी। ऐसे हार राजाओ की रानियाँ धारण करती थी। मपु० ६ ७३

स्तम्बेरम—काला हाथी। यह झाडियो में रहता है। प्रशिक्षित होने के पश्चात् वाहन के रूप में इनका व्यवहार होता है। यह जल या जलीय वस्तुओ को अधिक पसन्द करता है। कमलनाल के साथ क्रीडा करने में इसे यद्यपि आनन्द आता है पर गहरे जल से यह डरता है। चक्रवर्ती भरतेश की सेना में ऐसे अनेक हाथी थे। मपु २९ १३८

स्तम्भिनी—एक विद्या। इससे आकाश में गमन कर रहे विद्याधरो को रोका जाता था। पपु० ५२ ६९-७०

स्तरक—दूसरे नरक का प्रथम इन्द्रक बिल। इसकी चारो दिशाओ में एक सौ चवालीस और विदिशाओ में एक सौ चालीस श्रेणिबद्ध बिल हैं। हपु० ४ ७८, १०५ दे० शर्कराप्रभा

स्तवक—भक्ति का एक भेद—चौबीस तीर्थङ्करो के गुणो का का कथन करना। हपु० ३४ १४३

स्तवनार्ह—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३४

स्तिमितसागर—(१) राजा अन्धकवृष्णि और रानी सुभद्रा का तीसरा पुत्र। समुद्रविजय और अक्षोभ्य इसके बडे भाई तथा हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, अभिचन्द्र और वसुदेव छोटे भाई थे। ऊर्मिमान, वसुमान, वीर और पातालस्थिर ये इसके चार पुत्र थे। मपु० ७० ९५, हपु० १८ १२-१४, ४८ ४६

(२) जम्बूद्वीप के पूर्व विदेहक्षेत्र में वत्सकावती देश की प्रभाकरी नगरी का राजा। इसकी दो रानियाँ थी—वसुन्धरा और अनुमति। इनमें अपराजित बलभद्र वसुन्धरा के पुत्र थे और अनन्तवीर्य नारायण अनुमति रानी के पुत्र थे। इसने बलभद्र को राज्य देकर तथा नारायण को युवराज बनाकर स्वयप्रभ जिनेन्द्र से सयम धारण कर लिया था। धरणेन्द्र की ऋद्धि देखकर इसने वह वैभव पाने का निदान किया और मरकर धरणेन्द्र हुआ। मपु० ६२ ४१२-४१४, ४२३-४२५, पापु० ४ २४६-२५१

स्तुतीश्वर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १३४

स्तुत्य—(१) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। हपु० २५ १३४

(२) स्तुति के विषय-अर्हन्त, सिद्ध आदि। मपु० २५ ११

स्तूप—समवसरण-रचना का एक अग। ये समवसरण की वीथियों के मध्यभाग मे बनाये जाते हैं। अर्हन्त और सिद्ध परमेष्ठियो की प्रतिमाएँ इनके चारो ओर स्थापित की जाती हैं। मपु० २२ २६३-२६९

स्तेनप्रयोग—अचौर्य-अणुव्रत के पाँच अतिचारो में प्रथम अतिचार। कृत, कारित और अनुमोदना से चोर को चोरी के लिए प्रेरित करना स्तेनप्रयोग है। हपु० ५८ १७१

स्तेनाहृतादान—अचौर्य अणुव्रत के पाँच अतिचारो में दूसरा अतिचार। चोरो के द्वारा चुराकर लाई हुई वस्तु को खरीदना, खरिदवाना तथा खरीदनेवालो को अनुमोदना करना स्तेनाहृतादान है। हपु० ५८ १७१

स्तेय—पाँच पापो मे तीसरा पाप-चोरी। बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण करना स्तेय (चोरी) है। यह प्रवृत्ति सक्लिष्ट परिणामो से होती है। पपु० ५ ३४२, हपु० ५८ १३१

स्तेयानन्द—रौद्रध्यान के चार भेदो में एक भेद। प्रमादपूर्वक दूसरे के धन को बलात् हरने का अभिप्राय रखना या उसमें हर्षित होना स्तेयानन्द है। मपु० २१ ४२-४३, ५१, हपु० ५६ १९,२४

स्तोक—काल का प्रमाण। चौदह उच्छ्वास-निश्वासो में लगनेवाला समय स्तोक कहा है। हपु० ७ २०, दे० काल—१०

स्त्यानगृद्धि—दर्शनावरण कर्म की उत्तर प्रकृतियो में एक प्रकृति। इसके उदय से जीव जागकर और असाधारण कार्य करके पुन सो जाता है। वृषभदेव ने इसका नाश किया था। मपु० २५७ दे० दर्शनावरण

स्त्री-आलोक-वर्जन—ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाओ में एक भावना। इसमें स्त्रियो के मनोहर अगोपाग देखने का त्याग होता है। मपु० २० १६४

स्त्रीकथा-वर्जन—ब्रह्मचर्यव्रत की एक भावना-स्त्रियो की रागोत्पादक कथाओ के सुनने का त्याग। मपु० २० १६४

स्त्री-परीषह-जय—बाईस परीषहों में एक परीषह-स्त्रियों द्वारा की जाने-वाली बाधाओं एवं उनकी कामजन्य चेष्टाओं को विफल करना। मपु० ३६ ११८

स्त्रीप्राक्स्मृतिवर्जन—ब्रह्मचर्यव्रत की चौथी भावना-पूर्व में भोगे गये स्त्री सम्बन्धी भोगों के स्मरण का त्याग। मपु० २० १५९, १६४

स्त्रीरत्न—सर्वांग सुन्दर श्रेष्ठ स्त्री। मपु० ७ २५८ दे० रत्न-१

स्त्रीसंसर्गवर्जन—ब्रह्मचर्यव्रत की तीसरी भावना-स्त्रियों के संसर्ग का त्याग। मपु० २०.१५९, १६४

स्थपति—चक्रवर्ती भरतेश के चौदह रत्नों में एक रत्न। यह वास्तुविद्या का पारगामी था। इसने दिव्य शक्ति से नदियों में उस पार जाने के लिए सेतु का निर्माण किया था। यह आकाशगामी रथ बनाने में भी दक्ष था। मपु० ३२.२४-३०, ६५, ३७ १७७

स्थलगता—दृष्टिवाद अंग के अन्तर्गत चूलिका के पाँच भेदों में एक भेद। इसमें दो करोड नौ लाख नवासी हजार दो सौ पाँच पद हैं। हपु० १० १२३-१२४

स्थलज—जीवों का एक भेद-स्थल पर चलनेवाले थलचर जीव। पपु० १४.२६, ९८ ८१

स्थविर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

स्थविरकल्प—मुनियों का एक भेद-निःशल्य होकर मूल भावनाओं और उत्तर भावनाओं सहित पाँचों महाव्रतों, पाँच समितियों और तीन गुप्तियों को धारण करनेवाला मुनि। मपु० २० १६१-१७०

स्थविष्ठ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२२

स्थवीयस्—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४३

स्थवीयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७६

स्थाणु—(१) उज्जयिनी के अतिमुक्तक श्मसान का निवासी एक रुद्र। इसने प्रतिमायोग में स्थित महावीर पर अनेक उपसर्ग कर उनके धैर्य की परीक्षा ली थी। परीक्षा में सफल होने पर इसने उन्हें "महतिमहावीर" नाम दिया था। मपु० ७४ ३३१-३३७, वीवच० १३.५९-८२

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११४

स्थान—संगीत के शारीर स्वर का एक भेद। हपु० १९ १४८

स्थानलाभक्रिया—दीक्षान्वय क्रियाओं में एक क्रिया। इसमें किसी पवित्र स्थान में अष्टदल कमल अथवा समवसरण की रचना करके उपवासी को प्रतिमा के सम्मुख बैठाकर आचार्य उसके मस्तक का स्पर्श करता है और "पंच नमस्कार मन्त्र के उच्चारण के साथ उसे श्रावक की दीक्षा देता है। मपु० ३९.३७-४४

स्थानाध्ययनांग—द्वादशांग श्रुतस्कन्ध का तीसरा अंग। इसमें बयालीस हजार पदों में जीव के दस स्थानों का वर्णन है। मपु० ३४ १३३, १३७, हपु० १० २९

स्थापना-निक्षेप—दूसरा निक्षेप। किसी अन्य वस्तु में बनायी गयी आकृति या मूर्ति में किसी वस्तु का उपचार या ज्ञान करना। जैसे घोड़े जैसी आटे की आकृति को घोड़ा समझना। हपु० १७.१३५

स्थापनासत्य—सत्य के दस भेदों में एक भेद। वास्तविकता न होने पर भी आकार की समानता अथवा व्यवहार के लिए की गयी स्थापना से वस्तु को उस रूप मानना/कहना स्थापना सत्य है। जैसे सतरंज की गोटों में आकार न होने पर भी उन्हें बादशाह वजीर आदि मानना, तथा खिलौनों में आकार की समानता देखकर उन्हें हाथी आदि कहना स्थापना सत्य है। हपु० १०.१००

स्थालक—विजयार्ध पर्वत का एक नगर। इस नगर के राजा अमितवेग की पुत्री मणिमती को विद्या की सिद्धि में मग्न देखकर रावण उस पर मोहित हो गया था। उसने मणिमती की विद्या हर ली थी। उसकी विद्या-सिद्धि में विघ्न डाला था अतः मणिमती ने आगामी भव में रावण की पुत्री होकर उसके वध का निदान किया था। मपु० ६८ १२-१९

स्थावर—(१) भगवान महावीर के अठारहवें पूर्वभव का जीव। यह मगध देश के राजगृह नगर में शाण्डिल्य ब्राह्मण और उसकी स्त्री पारशरी का पुत्र था। इसने परिव्राजक होकर तप किया था। अन्त में मरकर यह माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७४ ८४-८७, ७६. ५३८, वीवच० ३ १-५

(२) एक योनि तथा उसमें उत्पन्न जीव। ये पाँच प्रकार के होते हैं—पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक। मपु० ७४ ८१, पपु० १०५.१४१, १४९

(३) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०३

स्थास्नु—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४४, २५ २०३

स्थितिकरण—सम्यग्दर्शन के आठ अंगों में छठा अंग-सम्यग्दर्शन, तप, चारित्र आदि को अंगीकार करके उनसे विचलित (अस्थिर) हुए जीवों को उपदेश आदि के द्वारा उन्हीं गुणों में पुनः स्थापित कर देना, कषायों के होने पर उनसे अपना या दूसरे का बचाव करना, दोनों को धर्म से च्युत नहीं होने देना। मपु० ६३ ३१९, वीवच० ६ ६८

स्थितिबन्ध—कर्मबन्ध का एक भेद। ऐसा बन्ध होने पर कर्म अपने काल की मर्यादा तक रहते हैं। यह बन्ध कषाय के निमित्त से होता है। मपु० २० २५४, हपु० ३९ २, ५८ २०३, २१०, २१४

स्थितिभोजन—मुनि के अट्ठाईस मूलगुणों में एक गुण—खड़े होकर आहार ग्रहण करना। इसका अपर नाम स्थितिभुक्ति है। मपु० २०.९०, हपु० २ १२८

स्थिरहृदय—कुण्डलगिरि के पश्चिम दिशा में स्थित अंककूट का निवासी एक देव। हपु० ५.६९३

स्मितयश—सूर्यवंशी राजा अर्ककीर्ति का पुत्र। यह राजा बल का पिता था। इसका अपर नाम सितयश था। पपु० ५.४, हपु० १३ ७

स्थूणगन्ध—पोदनपुर के राजा चन्द्रदत्त के पुत्र इन्द्रवर्मा का विरोधी

एक राजा। पाण्डवों ने इसे मारकर इन्द्रवर्मा को राज्य प्राप्त कराया था। मपु० ७२ २०४-२०५

स्थूणागार—भरतक्षेत्र का एक श्रेष्ठ नगर—महावीर के सातवें पूर्वभव के जीव पुष्यमित्र ब्राह्मण की जन्मभूमि। मपु० ७४ ७०-७१, ७६ ५३५

स्थूलपुद्गल—पुद्गल का पाँचवा भेद। वे पुद्गल जो पृथक्-पृथक् किये जाने पर भी जल के समान परस्पर में मिल जाते हैं। मपु० २४ १५३, वीवच० १६ १२२ दे० पुद्गल

स्थूल-स्थूल-पुद्गल—पुद्गल का छठा भेद-पृथिवी आदि ऐसे स्कन्ध जो विभाजित किये जाने पर पुन: नहीं मिलते। मपु० २४ १५३, वीवच० १६ १२२, दे० पुद्गल

स्थूलसूक्ष्म-पुद्गल—पुद्गल के भेदो में चौथा भेद। ऐसे पुद्गल छाया, चाँदनी, आतप आदि के समान होते हैं। ये इन्द्रिय से देखे जा सकने के कारण स्थूल हैं किन्तु अविघाती होने से सूक्ष्म भी हैं अत: वे स्थूल सूक्ष्म पुद्गल कहलाते हैं। मपु० २४ १४९, १५२, वीवच० १६ १२१ दे० पुद्गल

स्थेयान्—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १७६

स्थेष्ठ—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ४३, २५ १२२

स्नातक—(१) साधु का एक भेद-घातिया कर्मों को नाश कर केवलज्ञान प्रकट करनेवाले साधु। ये चार प्रकार के शुक्लध्यानो में उत्तरवर्ती दो परम शुक्लध्यानो के स्वामी होते हैं। मपु० २१ १२०-१८८

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५.११२

स्पर्श—(१) अग्रायणीयपूर्व की पचम वस्तु के कर्मप्रकृति चौथे प्राभृत का तीसरा योगद्वार। हपु० १० ८२, दे० अग्रायणीयपूर्व

(२) सम्यग्दर्शन से सम्बद्ध आस्तिक्य गुण की पर्याय। मपु० ९. १२३

(३) स्पर्शन इन्द्रिय का विषय। यह आठ प्रकार का होता है—कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, स्निग्ध, रूक्ष, शीत और उष्ण। मपु० ७५. ६२१

स्पर्शन—पाँच इन्द्रियो में प्रथम इन्द्रिय। शीत, उष्ण, गुरु, लघु आदि का ज्ञान इसी से होता है। पपु० १४ ११३, दे० स्पर्श

स्पर्शनक्रिया—साम्परायिक आस्रव की पच्चीस क्रियाओ में कर्मबन्ध की कारणभूत एक क्रिया-अत्यधिक प्रमादी होकर स्पर्श योग्य पदार्थ का बार-बार चिन्तन करना। हपु० ५८ ७०

स्पष्ट—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

स्पष्टाक्षर—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

स्फटिक—(१) सौधर्म युगल का अठारहवाँ पटल एव इन्द्रक विमान। हपु० ६ ४६ दे० सौधर्म

(२) प्रथम नरक के खरभाग का तेरहवा पटल। हपु० ४ ५४

(३) रुचकगिरि की उत्तरदिशा का प्रथम कूट। हपु० ५ ७१५

(४) मानुषोत्तर पर्वत की उत्तरदिशा का कूट-सुदर्शन देव की निवासभूमि। हपु० ५ ६०५

(५) गन्धमादन पर्वत का छठा कूट। हपु० ५.२१

(६) कुण्डलगिरि की उत्तरदिशा का कूट-सुन्दर देव का आवास। हपु० ५ ६९४

स्फटिकप्रभ—कुण्डलगिरि की उत्तरदिशा का कूट-विशालाक्ष देव का आवास। हपु० ५ ६९४

स्फटिक साल—स्फटिक मणि से निर्मित समवसरण का तीसरा कोट। हपु० ५७ ५६ दे० आस्थानमण्डल

स्फुट—(१) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२.३३

(२) एक नगर। इसे भानुरक्ष के पुत्रों ने बसाया था। हपु० ५ ३७३

स्फुटिक—अनुदिश विमानो में आठवाँ विमान। हपु० ६ ६४

स्फुरत्पीठ—एक पर्वत। इसका दूसरा नाम सुन्दरपीठ है। देव और विद्याधर राजाओ ने यहाँ एक हजार आठ कलशो से राम-लक्ष्मण का अभिषेक किया था। लक्ष्मण ने कोटिशिला यही उठाई थी। यहाँ के निवासी सुनन्द यक्ष ने लक्ष्मण को सौनन्दक खड्ग भी यही दिया था। मपु० ६८ ६४३-६४६

स्मतरंगिणी—देवता से अधिष्ठित एक शय्या। गन्धर्वदत्ता जीवन्धरकुमार के पास इसी शय्या पर बैठकर आती-जाती थी। नदाढ्य का जीवन्धरकुमार से मिलाप भी गन्धर्वदत्ता ने इसी शय्या के द्वारा कराया था। मपु० ७५ ४३१-४३६

स्मरायण—रावण का एक सामन्त। पपु० ५७ ५४

स्मृति—जीव आदि तत्त्वो के यथार्थ स्वरूप का स्मरण। मपु० २१ २२९

स्मृत्यनुपस्थान—सामायिक शिक्षाव्रत का पाँचवाँ अतिचार-चित्त की एकाग्रता न होने से सामायिकविधि या पाठ का भूल जाना अथवा सामायिक के लिए नियत समय का स्मरण नहीं रखना। हपु० ५८ १८०

स्मृत्यन्तराधान—दिग्व्रत का चौथा अतिचार-निश्चित की हुई मर्यादा का स्मरण न रखना अथवा उसका विस्मरण हो जाने पर किसी अन्य मर्यादा का स्मरण रखना। हपु० ५८ १७७

स्यन्दन—(१) रावण का हितैषी एक योद्धा। पपु० ५५ ५

(२) राम का सामन्त। राम की सेना में ऐसे पाँच हजार सामन्त थे। पपु० १०२ १४६

स्याद्वाद—वाक्यो की सप्तभग पद्धति से वस्तु-तत्त्व के यथार्थरूप का निरूपण। मपु० ७२ १२-१३, दे० सप्तभग

स्रगांग—भोगभूमि के समय के कल्पवृक्ष। ये सब ऋतुओं के फूलो से युक्त अनेक प्रकार की मालाएँ और कान के आभूषण धारण करते हैं। इनको ही माल्यांग कहते हैं। मपु० ९.३४-३६, ४२, ७८०, ८८, वीवच० १८ ९१-९२, दे० माल्यांग

स्रष्टा—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३१, २५ १३३

स्रोतोऽन्तर्वाहिनी—विदेहक्षेत्र की विभगा नदी। यह निषध पर्वत से निकलकर सीतोदा महानदी मे प्रवेश करती है। मपु० ६३ २०७, हपु० ५ २४१

स्वगुरुस्थानसंक्रान्ति—गर्भान्वयी त्रेपन क्रियाओ मे उन्नीसवीं क्रिया। इसमे आचार्य के द्वारा अपने किसी सुयोग्य शिष्य को अपना पद सौंपे जाने पर गुरु की अनुमति से उनके स्थान पर अधिष्ठित होकर वह उनके समस्त आचरणो का स्वय वाहन करते हुए सघ का सचालन करता है। मपु० ३८ ५९, १७२-१७४

स्वतत्त्व—जीव के निज भाव-औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक और पारिणामिक भाव। मपु० २४ ९९-१००

स्वतन्त्र—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

स्वतन्त्रलिंग—एक मुनि। ये काशी नगरी के राजा सभूत के दीक्षागुरु थे। पपु० २० १९१

स्वदान—पात्रो को धन देना। मपु० ५६ ८९-९०

स्वदारसन्तोषव्रत—ब्रह्मचर्य का अपर नाम। हपु० ५८ १७५ दे० ब्रह्मचर्य

स्वन्त—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १२९

स्वपक्षरचन—राम का पक्षधर एक योद्धा। पपु० ५८.१२, १७

स्वपाक—धरणेन्द्र की दिति देवी के द्वारा नमि और विनमि विद्याधरो को दिया गया एक विद्या-निकाय। हपु० २२ ५९

स्वप्न—कल्याणवाद पूर्व में वर्णित निमित्तज्ञान के आठ अगो में प्रथम अग। स्वप्न दो प्रकार के माने गये हैं—स्वस्थ स्वप्न और अस्वस्थ स्वप्न। उत्पत्ति के भेद से भी स्वप्न दो प्रकार के होते है—१ दोपो के प्रकोप से उत्पन्न स्वप्न २ दैव से उत्पन्न स्वप्न। सोते समय रात्रि के पिछले पहर में तीर्थङ्करो के गर्भ में आते पर उनकी माताएँ सोलह स्वप्न देखती हैं। वे स्वप्न और उनके फल निम्न प्रकार बताये गये हैं—

क्र० स्वप्न नाम	स्वप्न फल
१. ऐरावत हाथी	उत्तम पुत्र की उत्पत्ति।
२. दुन्दुभि के समान शब्द करता बैल।	पुत्र का लोक मे ज्येष्ठ होना।
३ सिंह	पुत्र का अनन्तबल से युक्त होना।
४ युगल माला	पुत्र का समीचीन धर्म का प्रवर्तक होना।
५ गजाभिषिक्त लक्ष्मी	पुत्र का सुमेरु पर्वत पर देवो द्वारा अभिषेक किया जाना।
६ पूर्णचन्द्र	पुत्र का जन-जन को आनन्द देनेवाला होना।
७ सूर्य	पुत्र का देदीप्यमान प्रभा का धारक होना।
८ युगल कलश	पुत्र को निधियो की प्राप्ति का होना।
९ युगल मीन	पुत्र का सुखी होना।
१० सरोवर	पुत्र का शुभ लक्षणो से युक्त होना।
११ समुद्र	पुत्र का केवली होना।
१२. सिंहासन	जगद्गुरु होकर पुत्र का साम्राज्य प्राप्त करना।
१३ देव-विमान	पुत्र का अवतरण स्वर्ग से होना।
१४ नागेन्द्र-भवन	पुत्र का अवधिज्ञानी होना।
१५ रत्नराशि	पुत्र का गुणागार होना।
१६ निर्धूम अग्नि	पुत्र का कर्मनाशक होना।

चक्रवर्ती की माता छ स्वप्न देखती है। वे स्वप्न और उनके फल निम्न प्रकार हैं—

क्र० स्वप्न नाम	स्वप्न फल
१. सुमेरु पर्वत	चक्रवर्ती पुत्र होना।
२ सूर्य	पुत्र का प्रतापवान होना।
३. चन्द्र	पुत्र का कान्तिमान होना।
४ सरोवर	पुत्र का शरीर शुभ लक्षणो से युक्त होना।
५ पृथिवी का ग्रसा जाना	पुत्र का पृथिवी-शासक होना।
६ समुद्र	पुत्र का चरमशरीरी होना।

नारायण की माता सात स्वप्न देखती है। स्वप्नो के नाम एव फल इस प्रकार हैं—

क्र० स्वप्न नाम	स्वप्न फल
१ उदीयमान सूर्य	निज प्रताप से शत्रु-नाशक पुत्र का जन्म लेना।
२ चन्द्र	पुत्र का सर्वप्रिय होना।
३ गजाभिषिक्तलक्ष्मी	पुत्र का राज्याभिषेक से सहित होना।
४ नीचे उतरता देव-विमान	पुत्र का स्वर्ग से अवतरण होना।
५ अग्नि	पुत्र का कान्तिमान होना।
६ रत्न-किरणयुक्त देव-ध्वजा	पुत्र का स्थिर-स्वभावी होना।
७ मुख में प्रवेश करता सिंह	पुत्र का निर्भय होना।

मपु० १२ १५५-१६१, १५ १२३-१२६, २० ३३-३७, ४१ ५९-७९, हपु० १०.११५-११७, ३५ १३-१५

स्वभू—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २०१

स्वयंज्योति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १०६

स्वयंप्रभ—(१) रुचकगिरि की पश्चिम दिशा का एक कूट-त्रिशिरस् देवी की निवासभूमि। हपु० ५ ७२०

(२) आगामी चौथे तीर्थंकर। मपु० ७६ ४७३ हपु० ६० ५५८

(३) पूर्वदिशा के स्वामी सोम लोकपाल का विमान। हपु० ५ ३२३

(४) स्वयभूरमण द्वीप के मध्य मे स्थित वलयाकार एक पर्वत और वहाँ का निवासी एक व्यन्तर देव। हपु० ५ ७३०, ६० ११६

(५) पुण्डरीकिणी नगरी के एक मुनि। इन्होने पुष्करार्ध के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में स्थित गगनपुर नगर के मनोगति और चपलगति विद्याधरो को उनके बडे भाई चिन्तागति का माहेन्द्र स्वर्ग से च्युत होकर सिंहपुर नगर का अपराजित नामक राजा होना बताया था। मपु० ७० २६-४३, हपु० ३४ १५-१७, ३४-३७

(६) सौधर्म स्वर्ग का एक विमान। मपु० ९ १०६-१०७

(७) ऐशान स्वर्ग का एक विमान और उसका निवासी एक देव। मपु० ९.१८६

(८) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५, २५ १००, ११८

(९) एक मुनि। ये जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में स्थित गन्धिला देश मे सिंहपुर नगर के राजकुमार जयवर्मा के दीक्षागुरु थे। मपु० ५ २०३-२०५, २०८

(१०) एक मुनि। ये जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र मे कच्छ देश के क्षेमपुर नगर के राजा विमलवाहन के दीक्षागुरु थे। मपु० ४८ २, ७

(११) एक मुनि। ये धातकीखण्ड द्वीप के भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी के राजा अजितजय के दीक्षागुरु थे। मपु० ५४ ८६-८७, ९४-९५

(१२) एक द्वीप तथा वहाँ का निवासी एक देव। इस देव को देवी का नाम स्वयप्रभा था। मपु० ७१ ४५१-४५२

(१३) रावण द्वारा बसाया गया एक नगर। पपु० ७.३३७

(१४) चौथे तीर्थंकर अभिनन्दननाथ के पूर्वभव के पिता। मपु० २०.२५

(१५) एक हार। रामपुरी के निर्माता यक्ष ने यह हार राम को दिया था। पपु० ३६ ६

(१६) सीता का जीव-अच्युत कल्प का देव। इसने राम मोक्ष न जाकर स्वर्ग में ही उत्पन्न हो, इस ध्येय से जानकी का वेष धारण करके राम की साधना में अनेक विघ्न उपस्थित किये थे पर राम स्थिर रहे और केवली हुए। इसने उनके केवलज्ञान की पूजा करके उनसे अपने दोषो की क्षमा याचना की थी। पपु० १२२ १३-७३

(१७) सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

स्वयप्रभा—(१) स्वयभरमण द्वीप के स्वयप्रभ व्यन्तर देव की देवी। यह कृष्ण की पटरानी पद्मावती के तीसरे पूर्वभव का जीव थी। मपु० ७१.४५१-४५२, हपु० ६०.११६

(२) मन्दोदरी की छोटी बहिन। रावण ने इसे सहस्ररश्मि को देना चाहा था किन्तु उसने इसे स्वीकार न करके दीक्षा ले ली थी। पपु० १० १६१

(३) कृष्ण की रानी जाम्बवती के पूर्व का जीव। यह कुबेर की स्त्री थी। हपु० ६० ५०

(४) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के रथनूपुरचक्रवालनगर के राजा सुकेतु की रानी। इसकी पुत्री सत्यभामा का विवाह कृष्ण से हुआ था। मपु० ७१ ३१३, हपु० ३६ ५६, ६१, ६० २२, पापु० ११.६०

(५) समवसरण के आम्रवन की एक वापी। हपु० ५७.३५

(६) समुद्रविजय के छोटे भाई स्तिमितसागर को रानी। हपु० १९ ३

(७) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के राजा विद्याधर ज्वलनजटी और रानी वायुवेगा की पुत्री। यह अर्ककीर्ति की बहिन थी। पिता ने इसका विवाह पोदनपुर के राजकुमार प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ से किया था। मपु० ६२ ४४, ७४ १३१-१५५, पापु० ४.११-१३, ५३-५४ वीवच० ३ ७१-७५, ९४-९५

(८) विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी में भोगपुर नगर के राजा वायुरथ विद्याधर की रानी। प्रभावती की यह जननी थी। मपु० ४६ १४७-१४८

(९) वृषभदेव के नौवें पूर्वभव का जीव-ऐशान स्वर्ग के ललिताग देव की महादेवी। यह पति की पृथक्त्व पल्य के बराबर आयु शेष रह जाने पर उत्पन्न हुई थी। पति का वियोग होने पर इसे दु खी देखकर अन्त परिषद् के सदस्य दृढधर्म देव ने इसका शोक दूर कर इसे सन्मार्ग पर लगाया था। यह छ माह तक जिनपूजा में उद्यत रही। पश्चात् सौमनस वन के पूर्वदिशा के जिन मन्दिर मे चैत्यवृक्ष के नीचे समाधिमरणपूर्वक देह त्याग कर पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रदन्त की श्रीमती नाम की पुत्री हुई। मपु० ५ २५३-२५४, २८३-२८६, ६ ५०-६० दे० श्रीमती—१३

स्वयंबुद्ध—(१) विजयार्ध पर्वत पर स्थित अलकापुरी के राजा महाबल का चौथा मन्त्री। इसने भूतवाद, विज्ञानवाद और शून्यवाद मिथ्यावादो का खण्डन कर आस्तिक्यवाद का समर्थन किया था। सुमेरु की वन्दना करते समय किसी मुनि से राजा महाबल की दसवें भव में मुक्ति जानकर यह हर्षित हुआ तथा इसने राजा का समाधिपूर्वक मरण कराया था। अन्त में राजा के वियोग से इसने भी दीक्षा ले ली तथा यह समाधिमरणपूर्वक देह त्याग कर सौधर्म स्वर्ग के स्वयप्रभ विमान में मणिचूल नामक देव हुआ। मपु० ४.१९०-१९१, ५ ५०-८६, १६१, २००-२०१, २२३-२३४, २४८-२५०, ९ १०६-१०७

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११३

स्वयंभू—(१) तीर्थंकर कुन्थुनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ६४ ४४, हपु० ६० ३४८

(२) तीर्थंकर पार्श्वनाथ के प्रथम गणधर। मपु० ७३ १४९, हपु० ६० ३४९

(३) आगामी उन्नीसवें तीर्थंकर। मपु० ७६ ४८०, हपु० ६० ५६१

(४) तीसरे वासुदेव (नारायण)। ये अवसर्पिणी काल के दु षमासुषमा चौथे काल में उत्पन्न हुए थे। विमलनाथ तीर्थंकर के समय में भरतक्षेत्र की द्वारावती नगरी के राजा भद्र इनके पिता और पृथिवी रानी इनकी माता थी। इनका धर्म नाम का भाई बलभद्र था। रत्नपुर नगर का राजा मधु प्रतिनारायण इनका वैरी था। मधु

ने इन्हें मारने के लिए चक्र चलाया था किन्तु चक्र प्रदक्षिणा देकर इनकी दाहिनी भुजा पर आकर ठहर गया था। इन्होंने इसी चक्र से मधु को मारकर उसका राज्य प्राप्त किया था। जीवन के अन्त में मधु और यह दोनों मरकर सातवें नरक गये। इन्होंने कण्ठ तक कोटिशिला उठाई थी। इनकी कुल आयु साठ लाख वर्ष की थी। इसमें इन्होंने बारह हजार पाँच सौ वर्ष कुमार अवस्था में, इतने ही मण्डलीक अवस्था में, नब्बे वर्ष दिग्विजय में और उनसठ लाख चौहत्तर हजार नौ सौ दस वर्ष राज्य अवस्था में बिताये थे। ये दूसरे पूर्वभव में भारतवर्ष के कुणाल देश की श्रावस्ती नगरी के सुकेतु नामक राजा थे। जुआ में सब कुछ हार जाने से इस पर्याय में इन्होंने जिनदीक्षा ले ली थी और कठिन तपश्चरण किया था। अन्त में समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके प्रथम पूर्वभव में ये लान्तव स्वर्ग में देव हुए। मपु० ५९ ६३-१००, हपु० ५३.३६, ६०.२८८, ५२१-५२२, वीवच० १८ १०१, ११२

(५) तीर्थङ्कर वासुपूज्य का मुख्यकर्त्ता। मपु० ७६ ५३०

(६) रावण का एक सामन्त। इसने राम के पक्षधर दुर्गति नामक योद्धा के साथ युद्ध किया था। पपु० ५७ ४५, ६२ ३५

(७) जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेहक्षेत्र के एक तीर्थङ्कर मुनि। वीतशोका नगरी के राजा वैजयन्त और उनके दोनों पुत्र सजयन्त और जयन्त के ये दीक्षागुरु थे। हपु० २७ ५-७

(८) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३५, २५ ६६, १००

स्वयंभूरमण—(१) मध्यलोक का अन्तिम सागर। इसमें जलचर जीव होते हैं। इसका जल सामान्य जल जैसा होता है। मेरु पर्वत की अर्ध चौडाई से इस सागर के अन्त तक अर्ध राजू की दूरी है। इस अर्ध राजू के अर्ध भाग में आधा जम्बूद्वीप और सागर तथा इस समुद्र के पचहत्तर हजार योजन अवशिष्ट भाग है। मपु० ७ ९७, १६ २१५, हपु० ५ ६२६, ६२९, ६३२, ६३५-६३६

(२) मध्यलोक का अन्तिम द्वीप। मपु० ७ ९७, १६ २१५, हपु० ५ ६२६, ६३३, ६० ११६

स्वयम्भूष्णु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. ११०

स्वयवर—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की अयोध्या नगरी का राजा। इसकी रानी सिद्धार्था थी। ये तीर्थङ्कर अभिनन्दननाथ के पिता थे। मपु० ५० १६-२२

(२) विवाह की एक विधि। इसमें कन्या अपने पति का स्वय वरण करती है। इसका शुभारम्भ वाराणसी के राजा अकम्पन ने किया था। मपु० ४३ १९६-१९८, २०२-२०३, ३२५-३२९, ३३४

स्वयवरविधान—वर के अच्छे और बुरे लक्षण बतानेवाला एक ग्रन्थ। इसे राजा सगर ने अपने मन्त्री से तैयार कराया था। इसका उद्देश्य सुलसा का मधुपिंगल से स्नेह हटाकर राजा सगर में उत्पन्न करना था। मपु० ६७ २२८-२३७, २४१-२४२

स्वयसवेद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४६

स्वर—(१) सगीत कला से सम्बन्धित सात स्वर—(१) मध्यम (२) ऋषभ (३) गान्धार (४) षड्ज (५) पचम (६) धैवत और (७) निषाद। ये आरोही और अवरोही दोनो होते हैं। मपु० ७५ ६२३, पपु० १७ २७७, २४८

(२) अष्टाग निमित्तज्ञान का एक भेद। यह दो प्रकार का होता है—दु.स्वर और सुस्वर। इनमें मृदग आदि अचेतन और हाथी आदि चेतन पदार्थों के सुस्वर से इष्ट और दुस्वर से अनिष्ट पदार्थ के प्राप्त होने का सकेत प्राप्त होता है। मपु० ६२ १८१, १८६, हपु० १० ११७

स्वराज्यप्राप्तक्रिया—गृहस्थ की तिरेपन क्रियाओं में तेतालीसवी क्रिया। इसमें जिसको यह क्रिया होती है उसे राजाओं के द्वारा राजाधिराज के पद पर अभिषिक्त किया जाता है। वह भी दूसरे के शासन से रहित समुद्र पर्यन्त इस पृथिवी का शासन करता है। इस प्रकार सम्राट पद पर अभिषिक्त होना स्वराज्यप्राप्तिक्रिया कहलाती है। मपु० ३८ ६१, २३२

स्वर्ग—इसका अपर नाम कल्प है। ये ऊर्ध्वलोक में स्थित है और सोलह हैं। उनके नाम है—(१) सौधर्म (२) ऐशान (३) सनत्कुमार (४) माहेन्द्र (५) ब्रह्म (६) ब्रह्मोत्तर (७) लान्तव (८) कापिष्ठ (९) शुक्र (१०) महाशुक्र (११) शतार (१२) सहस्रार (१३) आनत (१४) प्राणत (१५) आरण और (१६) अच्युत। इनके ऊपर अधोग्रैवेयक, मध्यग्रैवेयक और उपरिम ग्रैवेयक ये तीन प्रकार के ग्रैवेयक हैं। इनके आगे नौ अनुदिश और इनके भी आगे पाँच अनुत्तर विमान है। स्वर्गों के कुल चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस विमान हैं। इनमें त्रेसठ पटल और त्रेसठ ही इन्द्रक विमान हैं। सौधर्म सनत्कुमार, ब्रह्म, शुक्र, आनत और आरण कल्पो में रहनेवाले इन्द्र दक्षिणदिशा में और ऐशान, माहेन्द्र, लान्तव, शतार, प्राणत और अच्युत इन छ कल्पो के इन्द्र उत्तर दिशा में रहते हैं। आरण स्वर्ग पर्यन्त दक्षिण दिशा के देवो की देवियाँ सौधर्म स्वर्ग में ही अपने-अपने उपपाद स्थानो में उत्पन्न होती हैं और नियोगी देवो के द्वारा यथास्थान ले जायी जाती है। अच्युत स्वर्ग पर्यन्त उत्तरदिशा के देवो की देवियाँ ऐशान स्वर्ग मे उत्पन्न होती हैं और अपने-अपने देवो के स्थान पर ले जायी जाती हैं। सौधर्म और ऐशान स्वर्गों मे केवल देवियो के उत्पत्ति स्थान छ लाख और चार लाख है। समस्त श्रेणाबद्ध विमानो का आधा भाग स्वयभूरमण समुद्र के ऊपर और आधा अन्य समस्त द्वीप-समुद्रो के ऊपर फैला है। हपु० ६ ३५-४३, ९१, १०१-१०२, ११९-१२१ विशेष जानकारी हेतु देखें प्रत्येक स्वर्ग का नाम।

स्वर्णकूला—हैरण्यवत् क्षेत्र की एक नदी। यह चौदह महानदियों में ग्यारहवी महानदी है। यह पुण्डरीक सरोवर से निकली है। मपु० ६३ १९६, हपु० ५ १३५

स्वर्णचूल—राम के पूर्वभव का जीव। यह सनत्कुमार स्वर्ग के कनकप्रभ विमान में देव था। मपु० ६७ १४६-१५०

स्वर्णनाभ—(१) जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिण-श्रेणी का सत्रहवाँ नगर। हपु० २२ ९५

(२) अरिष्टपुर नगर के राजा रुधिर का पुत्र और रोहिणी का भाई। वसुदेव इसका बहनोई था। इसने पौण्ड्र देश के राजा से युद्ध किया था। हपु० ३१ ८-११, ४४, ६२, ८३-८९

(३) अरिष्टपुर नगर का राजा। कृष्ण की रानी पद्मावती का यह पिता था। हपु० ६० १२१

स्वर्णबाहु—जरासन्ध के अनेक पुत्रों में इस नाम का एक पुत्र। हपु० ५२ ३६

स्वर्णमध्य—सुमेरु पर्वत का अपर नाम। दे० सुमेरु

स्वर्णवर्मा—पुष्कलावती देश की क्षीरवती नगरी के राजा आदित्यगति विद्याधर का पौत्र और हिरण्यवर्मा का पुत्र। इसके माता-पिता दोनों दीक्षित हो गये थे। पापु० ३ २१०-२११, २२५-२२७

स्वर्णाभि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९९

स्वर्णाभपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का एक नगर। विद्याधर मनोवेग यहाँ का राजा था। इसका अपर नाम स्वर्णनाभपुर था। हपु० २४ ६९, दे० स्वर्णनाभ

स्वर्भानु—राजा कंस का साला। यह राजगृह नगर में रहता था। भानु इसका पुत्र था। नागशय्या पर चढ़कर एक हाथ से शंख बजाने तथा दूसरे हाथ से धनुष चढ़ाने वाले को कंस अपनी पुत्री देगा-ऐसी कंस के द्वारा कराई गयी घोषणा सुनकर यह अपने पुत्र के साथ मथुरा आ रहा था। रास्ते में कृष्ण से भेंट होने पर यह कृष्ण को भी अपने साथ ले आया था। कृष्ण ने इसके पुत्र भानु को समीप में खड़ा करके उक्त तीनों कार्य कर दिखाये थे तथा वे इसका संकेत पाकर व्रज चले गये थे। कृष्ण ने ये कार्य इसके द्वारा किये जाने की घोषणा की थी। मपु० ७० ४४७-४५६

स्वसंवेद्य—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १४६

स्वस्तिक—(१) तेरहवें स्वर्ग का विमान। मपु० ६२ ४११

(२) लवणसमुद्र का स्वामी एक देव। कृष्ण ने तीन उपवास कर उसे अनुकूल किया था। पापु० २१ १२०-१२१

(३) रुचकगिरि की दक्षिणदिशा का एक कूट-स्वहस्ती देव की आवासभूमि। हपु० ५ ७०२

(४) मेरु से दक्षिण की ओर सीतोदा नदी के पूर्व तट पर स्थित एक कूट। हपु० ५ २०६

(५) विद्युत्प्रभ गजदन्त पर्वत का छठा कूट। हपु० ५ २२२

(६) कुण्डलगिरि के मणिप्रभकूट का निवासी देव। हपु० ५ ६९३

स्वस्तिकनन्दन—रुचकगिरि की पूर्वदिशा का कूट-नन्दोत्तरा दिक्कुमारी देवी की आवासभूमि। हपु० ५ ७०६

स्वस्तिकावती—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में धवल देश की एक नगरी। यहाँ का राजा वसु था। मपु० ६७ २५६-२५७

स्वस्तिमती—शक्तिमती नगरी के निवासी क्षीरकदम्ब ब्राह्मण की स्त्री। इसके पुत्र का नाम पर्वत था। यह नारद और राजा वसु की गुरुमाता थी। "अजैर्यष्टव्यम" के अर्थ को लेकर नारद और पर्वत के बीच हुए विवाद में इसने पर्वत की विजय कराने के लिए राजा वसु से पर्वत का समर्थन कराया था। पपु० ११ १३-१४, १९, ४६-६३, हपु० १७ ३८-३९, ६४-६५, ६९, १५० दे० पर्वत

स्वस्य—(१) राजा शान्तन का पुत्र। महासेन और शिवि इसके बड़े भाई तथा विषद और अनन्तमित्र छोटे भाई थे। यह उग्रसेन का चाचा था। हपु० ४८ ४०-४१

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

स्वस्थिता—रुचकवर पर्वत के दक्षिण दिशावर्ती अमोघ कूट की एक दिक्कुमारी देवी। हपु० ५ ७०८

स्वहस्तक्रिया—आस्रवकारिणी पच्चीस क्रियाओं में एक क्रिया—दूसरे के द्वारा करने योग्य कार्य को स्वयं सम्पादित करना। हपु० ५८ ७४

स्वहस्ती—रुचक पर्वत के स्वस्तिक कूट का रक्षक देव। हपु० ५ ७०२

स्वा—उत्कृष्टता सूचक दिव्या, विजयाश्रिता, परमा और स्वा इन चार जातियों में चौथी जाति। यह मुक्त जीवों के होती है। मपु० ३९ १६८

स्वाति—(१) मानुषोत्तर पर्वत की आग्नेय दिशा के तपनीयककूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०६

(२) हैमवत् क्षेत्र के श्रद्धावान् पर्वत (नाभिगिरि) का निवासी एक व्यन्तर देव। हपु० ५ १६१, १६३-१६४

स्वाध्याय—भरतेश द्वारा निर्दिष्ट व्रतियों के षट्कर्मों में एक कर्म और छठा आभ्यन्तर तप। ज्ञान की भावना और बुद्धि की निर्मलता के लिए आलस्य का त्याग करके शास्त्राभ्यास करना स्वाध्याय है। इससे मन के संकल्प-विकल्प दूर होकर मन का निरोध हो जाता है और मन के निरोध से इन्द्रियों का निग्रह हो जाता है तथा चित्त-वृत्ति स्थिर होती है। इसके पाँच भेद हैं—१ वाचना २ पृच्छना ३ अनुप्रेक्षा ४ आम्नाय और ५ उपदेश। इनमें ग्रंथ का अर्थ समझना, समझाना वाचना और अनिश्चित तत्त्व का निश्चय करने के लिए दूसरे से पूछना पृच्छना है। ज्ञान का मन से अभ्यास-चिन्तन अनुप्रेक्षा, पाठ को बार-बार पढ़ना (अवधारण करना) आम्नाय और दूसरों को धर्म का उपदेश देना उपदेश नाम का स्वाध्याय है। यह पाँचों प्रकार का स्वाध्याय-प्रशस्त अध्यवसाय, भेद विज्ञान, संवेग और तप की वृद्धि के लिए किया जाता है। मपु० २० १८९, १९७-१९९, २१ ९६, ३४.१३४, ३८ २४-३४, पपु० १४ ११६-११७, हपु० ६४. ३०, वीवच० ६ ४१-४५

स्वामिहित—जम्बूद्वीप के कौशल देश की अयोध्या नगरी के राजा आनन्द का महामन्त्री। राजा ने इसके कहने से वसन्त ऋतु की अष्टाह्निका में पूजा करायी थी तथा इसी समय विपुलमति मुनि से पूजा से पुण्य-फल कैसे प्राप्त होता है ? इस प्रश्न का समाधान प्राप्त किया था। मपु० ७३ ४१-५३

स्वामी—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १७२

स्वायम्भुव—(१) वृषभदेव द्वारा बनाया गया एक अनुपलब्ध व्याकरण शास्त्र। इसमें सौ से भी अधिक अध्याय थे। मपु० १६ ११२

(२) वृषभदेव के बावनवें गणधर। हपु० १२ ६४

स्वास्थ्यभाक्—सौधर्मेन्द्र द्वारा वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १८५

स्वाहा—चक्रपुर नगर के राजा चक्रध्वज के पुरोहित धूमकेश की स्त्री। इसके पुत्र का नाम पिंगल था। पपु० २६ ४, ६, दे० पिंगल

ह

हंस—एक द्वीप। यह लका द्वीप के समीप था। यहाँ समस्त ऋद्धियाँ और भोग उपलब्ध थे। वन-उपवन से यह विभूषित था। राम ने लका मे प्रवेश करने के पूर्व यहाँ ससैन्य विश्राम किया था। पपु० ४८ ११५, ५४ ७६

हसगर्भ—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का दसवाँ नगर। मपु० १९. ७९, ८७, हपु० २२ ९१

हंसद्वीप—(१) अमररक्ष विद्याधर के पुत्रो के द्वारा बसाये गये दस नगरो में पाँचवाँ नगर। पपु० ५ ३७१-३७२

(२) रावण का आधीनस्थ एक राजा। पपु० १० २४

(३) एक द्वीप। यह लका के पास था। हसपुर इस द्वीप की राजधानी था। पपु० ५४ ७६-७७ दे० हस

हसध्वज—वस्त्र ग्रसते हुए हसो से चित्रित समवसरण की ध्वजायें। मपु० २२ २२८

हसपुर—हसद्वीप का एक नगर। यहाँ का राजा हसरथ था। पपु० ५४ ७६-७७ दे० हस

हसरथ—लका के पास स्थित हसद्वीप के हसपुर नगर का राजा। इसे राम के सहायक विद्याधरो ने पराजित किया था। पपु० ५४ ७६-७७

हंसावली—विदेहक्षेत्र की एक नदी। रक्षावर्त पर्वत इसी नदी के किनारे है। पपु० १३ ८२

हक्का—राम के समय का एक वाद्य। यह सैन्य-प्रस्थान के समय बजाया जाता था। पपु० ५८ २७

हतदुर्नय—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१०

हनुमान्—(१) मानुषोत्तर पर्वत की ऐशान दिशा में स्थित वज्रक कूट का निवासी एक देव। हपु० ५ ६०६

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में स्थित आदित्यपुर नगर के राजा प्रह्लाद और रानी केतुमती का पौत्र तथा वायुगति अपर नाम पवनजय तथा महेन्द्र नगर के राजा महेन्द्र की पुत्री अजना का पुत्र। इसका जन्म चैत मास के कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन रात्रि के अन्तिम प्रहर में पर्यक गुहा में हुआ था। हनुरुहद्वीप का निवासी प्रतिसूर्य विद्याधर इसका नाना था। अपने नाना के घर जाते हुए यह विमान से नीचे गिर गया था। इसके गिरने से शिला चूर-चूर हो गयी थी किन्तु इसे चोट नही आई थी। यह शिला पर हाथ-पैर हिलाते हुए मुँह मे अँगूठा देकर खेलता रहा। श्रीशैल पर्वत पर जन्म होने तथा शिला के चूर-चूर हो जाने से माता ने इसे श्रीशैल तथा हनुरुह नगर में जन्म सस्कार होने से हनुमान् कहा था। यह रावण की सहायता के लिए लका गया था, वहाँ इसने वरुण राजा के सौ पुत्रो को बाँध लिया था। चन्द्रनखा की पुत्री अनगपुष्पा, किष्कुपुर नगर के राजा नल की पुत्री हरिमालिनी और किन्नर जाति के विद्याधरो की अनेक कन्याओ को इसने विवाहा था। इसकी एक हजार से भी अधिक स्त्रियाँ थी। सीता के पास राम का सन्देश यह ही लका ले गया था। राम की ओर से इसने युद्ध कर माली को मारा था। कुम्भकर्ण द्वारा बाँध लिए जाने पर अवसर पाकर यह बन्धनो से मुक्त हो गया था। रावण की विजय के पश्चात् अयोध्या आने पर राम ने इसे श्री पर्वत का राज्य दिया था। अन्त मे मेरु वन्दना को जाते समय उल्कापात देखकर यह विरक्त हो गया था और चारण ऋद्धिधारी धर्मरत्न मुनि मे इसने दीक्षा ले ली थी। पश्चात् यह मुक्त हुआ। छठे पूर्वभव मे यह दमयन्त राजपुत्र तथा पाँचवें पूर्वभव मे देव हुआ था। चौथे में सिंहचन्द्र और तीसरे मे पुन देव हुआ। दूसरे पूर्वभव मे सिंहवाहन राजपुत्र तथा प्रथम पूर्वभव मे लान्तव स्वर्ग में देव था। इसका अपर नाम अणुमान् था। पपु० १५ ६-८, १३-१६, २२०, १६ २१९, १७ १४१-१६२, २१३, ३०७, ३४५-३४६, ३६१-३६४, ३८२-३९३, ४०२-४०३, १९. ८३-१५, ५९, १०१-१०८, ५३ २६, ५०-५५, ६० २८, ११६-११८, ८८ ३९, ११२ २४, ७५-७८, ११३ २४-२९, ४४-४५ दे० अणुमान्

हनूरुहद्वीप—एक द्वीप। यहाँ हनुमान की माता अजना के मामा प्रतिसूर्य का राज्य था। हनुमान् का यहाँ जन्म सस्कार हुआ था। इसीलिए इस द्वीप के नाम पर अणुमान् का 'हनुमान' नामकरण हुआ था। पपु० १७.३४४-३४६, ४०३

हय—दशानन का पक्षधर एक राजा। इसने इन्द्र विद्याधर को पराजित करने में रावण का साथ दिया था। मपु० १० ३६-३७

हयग्रीव—(१) अश्वग्रीव विद्याधर का अपर नाम। मपु० ५७ ८७-९० दे० अश्वग्रीव

(२) अनागत आठवाँ प्रतिनारायण। हपु० ६० ५६९-५७०

हयपुर—विजयार्ध का एक नगर। श्रीपाल यहाँ से ही सुसीम पर्वत गये थे। मपु० ४७ १३२-१३४

हयपुरी—राजा सुमुख की राजधानी। गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी का राजकुमार हिमगिरि अपनी बहिन गान्धारी को इसी नगरी के राजा से विवाहना चाहता था किन्तु कृष्ण हिमगिरि को मारकर गान्धारी को हर लाये थे और उन्होने उसे विवाह लिया था। हपु० ४४ ४५-४८

हर—(१) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४ ३६, २५ १६३

(२) अनागत सातवाँ रुद्र । हपु० ६० ५७१-५७२

हरवती—भरतक्षेत्र सम्बन्धी विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के वरुण या इला पर्वत की एक नदी । इसका अपर नाम हरिद्वती था । कुसुमवती, सुवर्णवती, गजवती और चण्डवेगा नदियों में इसका सगम हुआ है । मपु० ५९ ११८-११९, हपु० २७ १२-१३

हरि—(१) चम्पापुर के राजा आर्य और रानी मनोरमा का पुत्र । जगत में इसी राजा के नाम पर हरिवंश की प्रसिद्धि हुई । इसके पुत्र का नाम महागिरि था । वृषभदेव ने इसे आदर सत्कार पूर्वक महामाण्डलिक राजा बनाया था । मपु० १६ २५६-२५९, पपु० २१ ६-८, हपु० १५ ५३-५९

(२) भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २४ ३६

(३) राजा अमररक्ष के पुत्रों द्वारा बसाये गये दस नगरों में एक नगर । पपु० ६ ६६-६८

(४) बन्दर, सिंह, विष्णु तथा इन्द्र का पर्यायवाची नाम । हपु० ५५ ११७

(५) चन्द्रपुर नगर का राजा । इसकी रानी धरा और पुत्र व्रतकीर्तन था । पपु० ५ १३५-१३६

(६) भरत के साथ दीक्षित एक नृप । पपु० ८८ १-५

हरिकटि—राम का पक्षधर एक योद्धा । पपु० ६० ५२-५३

हरिकण्ठ—(१) अलका नगरी के राजा अश्वग्रीव विद्याधर का दूसरा नाम । हपु० २८ ४३ दे० अश्वग्रीव

(२) आगामी दूसरा प्रतिनारायण । हपु० ६० ५६९

हरिकांत—(१) भवनवासी देवों का बारहवाँ इन्द्र । वीवच० १४ ५५

(२) महाहिमवान् पर्वत का छठा कूट । हपु० ५ ७२

हरिकान्ता—(१) महापद्म ह्रद से निकली हरिक्षेत्र की एक प्रसिद्ध नदी । यह चौदह महानदियों में छठी नदी है । मपु० ६३ १९५, हपु० ५ १२३, १३३

(२) किष्कप्रमाद नगरी के राजा ऋक्षरज की रानी । यह नल और नील की जननी थी । पपु० ९ १३

(३) इस नाम की एक आर्यिका । वेदवती ने इन्हीं से दीक्षा ली थी । पपु० १०६ १४६, १५२

हरिकेतु—(१) भरतक्षेत्र के काम्पिल्य नगर का राजा । यह दसवें चक्रवर्ती हरिषेण का पिता था । इसकी रानी वप्रा थी । पपु० २० १८५-१८६

(२) शिवकरपुर नगर के राजा अनिलवेग और रानी कान्तवती का पुत्र । भोगवती का यह भाई था । इसके प्रयत्न से श्रीपाल को सर्वव्याधिविनाशिनी विद्या प्राप्त हुई थी । मपु० ४७ ४९-५०, ६०-६२

हरिक्षेत्र—जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रों में तीसरा क्षेत्र । इसका विस्तार ८४२१$\frac{1}{19}$ योजन है । हपु० ५ १३-१४, पपु० १०५ १५९-१६०

हरिगिरि—भरतक्षेत्र में भोगपुर नगर के हरिवंशी राजा । प्रभंजन और रानी मृकण्डू के पुत्र सिंहकेतु की वंश परम्परा में हुआ एक राजा । मपु० ७० ७४-७७, ८७-९१

हरिग्रीव—राक्षसवंशी एक यशस्वी राजा । इसे सुग्रीव से राज्य प्राप्त हुआ था । इसने श्रीग्रीव को राज्य देकर मुनिव्रत धारण कर लिया था । पपु० ५ ३९०-३९१

हरिघोष—एक कुरुवंशी राजा । हपु० ४५ १४

हरिचन्द्र—(१) अलका नगरी के राजा अरविन्द विद्याधर का ज्येष्ठ पुत्र और कुरुविन्द का भाई । पिता ने अपना दाहज्वर मिटाने के लिए इससे उत्तरकुरु के वन में जाने की इच्छा प्रकट की थी । इसने भी आकाशगामिनी विद्या को उन्हें उत्तरकुरु ले जाने के लिए कहा था किन्तु विद्या उन्हें वहाँ नहीं ले जा सकी थी । इससे पिता की असाध्य बीमारी जानकर यह उदास हो गया था । मपु० ५ ८९-१०१

(२) सिद्धकूट के एक चारणऋद्धिधारी मुनि । प्रभाकरपुर के राजा सूर्यावर्त का पुत्र रश्मिवेग इन्हीं से दीक्षा लेकर मुनि हुआ था । मपु० ५९ २३३, हपु० २७ ८०-८३

(३) आगामी चौथे बलभद्र । मपु० ७६ ४८६

(४) एक विद्याधर । यह विद्याधर रक्तोष्ठ का पुत्र और पूर्णचन्द्र का पिता था । पपु० ५ ५२

(५) जम्बूद्वीप के मृगांकनगर का राजा । इसकी रानी प्रियंगुलक्ष्मी और पुत्र सिंहचन्द्र था । पपु० १७ १५०-१५१

हरिणाश्वा—मध्यमग्राम की दूसरी मूर्च्छना । यह गांधार स्वर में होती है । हपु० १९ १६३, १६५

हरित—जम्बूद्वीप के हरितक्षेत्र की प्रसिद्ध नदी । चौदह महानदियों में यह पाँचवीं नदी है । यह तिगिंछ सरोवर से निकलती है । मपु० ६३ १९५, हपु० ५ १२३, १३३

हरिताल—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीप और सागरों में दूसरा द्वीप एवं सागर । हपु० ५ ६२२

हरिदास—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सद्रतुनगर के भावन वणिक् का पुत्र । इसने व्यसनों में पड़कर पिता का धन नष्ट कर दिया था और भ्रान्ति में पड़कर अपने पिता को भी मार डाला था । अन्त में यह भी दुःखपूर्वक मरा । इस प्रकार सक्लेश पूर्वक मरकर पिता और पुत्र दोनों कुत्ते हुए । पपु० ५ ९६-१०८

हरिद्वती—भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत के दक्षिणभाग के समीप प्रवाहित पर्वत की पाँच नदियों में प्रथम नदी । हपु० २७ १२-१३ दे० हरवती

हरिध्वज—(१) अक्षपुर नगर का राजा । इसकी रानी लक्ष्मी और पुत्र अरिंदम था । पपु० ७७ ५७

(२) कुरुवंशी एक राजा । हपु० ४५ १४

हरिनाग—लक्ष्मण के अढ़ाई सौ पुत्रों में एक पुत्र । पपु० ९४ २७-२८

हरिपति—नागनगर का राजा । इसकी रानी मनोलूता और पुत्र कुलकर था । पपु० ८५ ४९-५०

हरिपुर—(१) भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का नगर । दक्षिणश्रेणी में भी इस इस नाम का एक नगर कहा है । पपु० २१ ३-४, हपु० १९.२२

(२) एक नगर-पाँचवें प्रतिनारायण निशुम्भ की निवास-भूमि। पपु० २० २४२-२४४

हरिबल—(१) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा पुरबल और रानी ज्योतिमाला का पुत्र। इसने अनन्तवीर्य मुनिराज के पास द्रव्य-संयम धारण कर लिया था। इस संयम के प्रभाव से यह मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ और वहाँ से चयकर रथनूपुर नगर के राजा सुकेतु की सत्यभामा पुत्री हुआ। मपु० ७१ ३११-३१३

(२) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी का इस नाम का एक राजा। इसके क्रमशः दो छोटे भाई थे—महासेन और भूतिलक। इसकी दो रानियाँ थी—धारिणी और श्रीमती। इनमें धारिणी का पुत्र भीमक तथा श्रीमती रानी का पुत्र हिरण्यवर्मा था। वैराग्य उत्पन्न होने पर इसने भीमक को राज्य और हिरण्यवर्मा को विद्या देकर विपुलमति चारणऋद्धिधारी मुनि के पास दीक्षा ले ली थी तथा कर्म नाश कर मुक्त हुआ था। मपु० ७६ २६२-२७१

हरिमालिनी—किष्कुपुर के राजा नल की पुत्री। इसका विवाह हनुमान के साथ हुआ था। पपु० १९ १०४ दे० हनुमान

हरिवंश—ऋषभदेव द्वारा संस्थापित प्रसिद्ध चार क्षत्रियवंशों में इस नाम का एक महावंश। ऋषभदेव ने हरि नाम के राजा को बुलाकर उसे महामाण्डलिक राजा बनाया था। इसका अपर नाम हरिकान्त था। यह इन्द्र अथवा सिंह के समान पराक्रमी था। चम्पापुर के राजा आर्य और रानी मनोरमा के पुत्र हरि के नाम पर इस महावंश की संस्थापना की गयी थी। इसकी वंश परम्परा में क्रमशः निम्न राजा हुए-महागिरि, हिमगिरि, वसुगिरि, गिरि, इसके पश्चात् अनेक राजा हुए। उनके बाद कुशाग्रपुर का राजा सुमित्र, मुनिसुव्रत, सुव्रत, दक्ष, ऐलेय, कुणिम, पुलौम, पौलोम और चरम राजा हुए पौलोम के महीदत्त और चरम के संजय तथा महीदत्त के अरिष्टनेमि और मत्स्य पुत्र हुए। इनमें मत्स्य के अयोधन आदि सौ पुत्र हुए। अयोधन के पश्चात् क्रमशः- मूल, शाल, सूर्य, अमर, देवदत्त, हरिषेण, नभसेन, शंख, भद्र, अभिचन्द्र, वसु, बृहध्वज, सुबाहु, दीर्घबाहु, वज्रबाहु, लब्धाभिमान भानु, यवु, सुभानु, भीम आदि अनेक राजाओं के पश्चात् नमिनाथ के तीर्थ में यदु नाम का एक राजा हुआ, जिसके नाम पर यदुवंश की स्थापना हुई थी। राजा सुवसु का एक पुत्र बृहद्रथ था। इसके बाद निम्नलिखित राजा हुए-दृढरथ, नरवर, दृढरथ, सुखरथ, दीपन, सागरसेन, सुमित्र, वप्रथु, बिन्दुसार, देवगर्भ, शतधनु इसके पश्चात् अनेक राजा हुए तत्पश्चात् निहतशत्रु, शतपति, बृहद्रथ, जरासन्ध का भाई अपराजित और कालयवन आदि सौ पुत्र हुए। पद्मपुराण के अनुसार इस वंश का संस्थापक राजा सुमुख का जीव था। वह मरकर आहारदान के प्रभाव से हरिक्षेत्र में उत्पन्न हुआ था। इसके पूर्वभव के वैरी वीरक का जीव एक देव इस हरिक्षेत्र से सपत्नीक उठाकर भरतक्षेत्र में रख गया था। हरिक्षेत्र से लाये जाने के कारण इसे हरि और इसके वंश को हरिवंश कहा गया। मिथिला के राजा वासवकेतु और उनके पुत्र जनक इसी वंश के राजा थे। मपु० १६ २५६-२५९, पपु० ५ १-३, २१ २-५५, हपु० १५ ५६-६२, १६ १७, ५५, १७ १-३, २२-३७, १८ १-६, १७-२५, पापु० २ १६३-१६४

हरिवंशपुराण—पुन्नाटसंघ के आचार्य जिनसेनसूरि द्वारा ईसवी ७८३ में संस्कृत भाषा में रचा गया पुराण। इसकी रचना के समय उत्तर में इन्द्रायुध, दक्षिण में कृष्ण राजा के पुत्र श्रीवल्लभ, पूर्व में अवन्तिराज और पश्चिम में वीर जयवराह का शासन था। ग्रन्थ का शुभारम्भ वर्धमानपुर के नन्न राजा द्वारा निर्मापित श्रीपार्श्वनाथ-मन्दिर में तथा समाप्ति "दोस्तटिका" नगरी के शान्तिनाथ मन्दिर में हुई थी। इस पुराण में आठ अधिकार है। इनमें क्रमशः लोक के आकार का, राजवंशों की उत्पत्ति का, हरिवंश का, वसुदेव की चेष्टाओं का, कृष्ण और नेमिनाथ का तथा तत्कालीन अन्य राज्यवंशों का कथन किया गया है। आठ अधिकारों में कुल छियासठ सर्ग हैं तथा सर्गों में आठ हजार नौ सौ चालीस श्लोक है। हपु० १ ७१-७३, ६६ ३७, ५२-५४

हरिवर—एक विद्याधर। यह राजा अकम्पन की पुत्री पिप्पला की सखी मदनवती का प्रेमी था। इसने वैरवश श्रीपाल को महाकाल नामक गुफा में गिराया था। मपु० ४७ ७५-७८, १०३

हरिवर्मा—तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के तीसरे पूर्वभव का जीव-भरतक्षेत्र के अंग देशस्थ चम्पापुर नगर का राजा। यह अनन्तवीर्य नामक मुनि से धर्म का स्वरूप समझकर संसार से विरक्त हो गया था। इसने अपने बड़े पुत्र को राज्य देकर संयम ले लिया तथा सोलहकारण भावनाओं को भाते हुए तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया। बहुत समय तक तप करने के पश्चात् यह आयु के अन्त में समाधिमरणपूर्वक देह त्याग करके प्राणत स्वर्ग का इन्द्र हुआ। मपु० ६७ १-१५

हरिवर्ष—(१) महाहिमवान् कुलाचल का सातवाँ कूट। हपु० ५ ७२

(२) मध्यम भोगभूमि। मपु० ७१ ३९२-३९३

(३) भरतक्षेत्र का एक देश। सुमुख का जीव इसी देश के भोगपुर नगर में राजपुत्र सिंहकेतु हुआ था। मपु० ७०.७४-७५

(४) निषध-पर्वत के नौ कूटों में तीसरा कूट। हपु० ५.८८

हरिवाहन—(१) विजयनगर के राजा महानन्द और रानी वसन्तसेना का पुत्र। यह अप्रत्याख्यानावरणमान कषाय के उदय में माता-पिता का भी आदर नहीं करता था। यह आयु के अन्त में पत्थर के खम्भे से टकरा कर आर्तध्यान में मरा और सूकर हुआ। मपु० ८ २२७-२२९

(२) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी में नन्दपुर नगर के राजा हरिषेण और रानी श्रीकान्ता का पुत्र। धातकीखण्ड द्वीप के भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के मघपुर नगर के राजा धनंजय की पुत्री धनश्री ने भरतक्षेत्र के अयोध्यानगर में आयोजित अपने स्वयंवर में आये इसी राजकुमार के गले में वरमाला डाली थी। अयोध्या के राजकुमार सुदत्त ने इसे मार डाला था और इसकी पत्नी धनश्री को अपनी पत्नी बना ली थी। मपु० ७१ २५२-२५७, हपु० ३३ १३५-१३६

(३) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के निवासी महाबल विद्याधर तथा ज्योतिर्माला का पुत्र। यह शतबली का भाई था। दोनो भाइयो में विरोध हो जाने से शतबली ने इसे नगर से निकाल दिया था। इसने मगली देश में श्रीधर्म और अनन्तवीर्य चारण ऋद्धिधारी मुनियो के दर्शन करके उनसे दीक्षा ले ली थी। अन्त में यह सल्लेखनापूर्वक मरकर ऐशान स्वर्ग में देव हुआ। हपु० ६० १७-२१

(४) महेन्द्र नगर का एक विद्याधर राजकुमार। भरतक्षेत्र के चन्दनपुर नगर के राजा महेन्द्र की पुत्री कनकमाला ने अपने स्वयवर में आये इसी राजकुमार का वरण किया था। मपु० ७१ ४०५-४०६, हपु० ६० ७८-८२

(५) मथुरा नगरी का राजा। इसकी रानी माधवी और पुत्र मधु था। यह केकया के स्वयवर में सम्मिलित हुआ था। पपु० १२ ६-७, ५४, २४ ८७

हरिविक्रम—भीलो का एक राजा। इसकी स्त्री का नाम सुन्दरी तथा पुत्र का नाम वनराज था। इसने कपित्थ-वन में दिशागिरि पर्वत पर वनगिरि नगर बसाया था। मपु० ७५ ४७८-४८०

हरिवेग—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे रत्नपुर नगर के राजा रत्नरथ विद्याधर और रानी चन्द्रानना का पुत्र। इसके मनोवेग और वायुवेग दो भाई तथा मनोरमा एक बहिन थी। मपु० ९३ १-५७

हरिशर्मा—राजा दृढग्राही का मित्र। राजा ने जिनदीक्षा ली और यह तापस हो गया था। आयु के अन्त में मरकर यह ज्योतिष्क देव हुआ और दृढ़ग्राही सौधर्म स्वर्ग में देव। मपु० ६५ ६१-६५

हरिश्चन्द्र—(१) आगामी नौ बलभद्रो मे पाँचवें बलभद्र। हपु० ६० ५६८

(२) एक मुनि। विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के प्रभाकरपुर नगर के राजा सूर्यावर्त के पुत्र रश्मिवेग ने सिद्धकूट पर इन्ही से मुनि-दीक्षा ली थी। हपु० २७ ८०-८३

हरिश्मश्रु—(१) अलका नगरी के राजा विद्याधर अश्वग्रीव प्रतिनारायण का मन्त्री। यह प्रत्यक्ष को प्रमाण माननेवाला, एकान्तवादी और नास्तिक था। यह पृथिव्यादि भूतचतुष्टय के सयोग से चैतन्य की उत्पत्ति मानता था। अदृश्य होने से वह आत्मा को पाप-पुण्य का कर्त्ता, सुख-दुख का भोक्ता और मुक्त होनेवाला नही मानता था। स्वय नास्तिक होने से इसने राजा अश्वग्रीव को भी नास्तिक बना दिया तथा मरकर सातवें नरक मे उत्पन्न हुआ। मपु० ६२ ६०-६१, हपु० २८ ३१-४४

(२) राजा विनमि विद्याधर का पुत्र। हपु० २२ १०४

हरिषेण—(१) असुरकुमार आदि भवनवासी देवो का ग्यारवाँ इन्द्र। वीवच० १४ ५५

(२) मिथिला नगरी के राजा देवदत्त का पुत्र। नभसेन का यह पिता था। हपु० १७ ३४

(३) हस्तशीर्षपुर नगर का राजा। इसने भरतक्षेत्र में उज्जयिनी नगरी के राजा विजय की पुत्री विनयश्री को विवाहा था। मपु० ७१ ४४२-४४४, हपु० ६० १०५-१०६

(४) धातकीखण्ड द्वीप के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के नन्दपुर नगर का राजा। इसकी रानी श्रीकान्ता तथा पुत्र हरिवाहन था। मपु० ७१ २५२, २५४

(५) तीर्थंकर महावीर के पूर्वभव का जीव। मपु० ७६ ५४१, दे० महावीर

(६) जम्बूद्वीप में कोशल देश के साकेत नगर के राजा वज्रसेन और रानी शीलवती का पुत्र। इसने श्रुतसागर मुनि से दीक्षा ले ली थी। आयु के अन्त में मर कर यह महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ। मपु० ७४ २३०-२३४, वीवच० ४ १२१-१४०, ५ २-२४

(७) अवसर्पिणी काल के दुषमा-सुषमा नामक चौथे काल में उत्पन्न शलाकापुरुष एव दसवाँ चक्रवर्ती। यह तीर्थंकर मुनिसुव्रत-नाथ के तीर्थ में हुआ था। भोगपुर नगर का राजा पद्मनाभ और रानी ऐरा इसके माता-पिता थे। इसकी आयु दस हजार वर्ष तथा शरीर चौबीस धनुष ऊँचा था। इसके पिता को केवलज्ञान और आयुधशाला में चक्र, छत्र, खड्ग एव दण्ड ये चार रत्न तथा श्रीगृह में काकिणी, चर्म और मणि ये तीन रत्न एक साथ प्रकट हुए थे। चक्ररत्न को पूजा करके यह दिग्विजय के लिए उद्यत हुआ ही था कि उसी समय नगर में पुरोहित, गृहपति, स्थपति और सेनापति ये चार रत्न प्रकट हुए तथा विद्याधर इसे विजयार्ध से हाथी, घोडा और कन्या-रत्न ले आये थे। इसने सिन्धुनद नगर में हाथी को वश में करके स्त्रियो को भयमुक्त किया था। इस उपलक्ष्य में राजा ने इसे अपनी सौ कन्याएं दी थी। सूर्योदयपुर के राजा शक्रधनु की कन्या जयचन्द्रा को इसने विवाहा था। शतमन्यु के आश्रम में पहुँचकर इसने नागमती की पुत्री को विवाहा था। विजय के पश्चात् अपने गृह नगर लौटकर इसने चिरकाल तक राज्य किया। पश्चात् चन्द्र द्वारा ग्रसित राहु को देखकर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ और यह पुत्र महासेन को राज्य देकर सयमी हो गया। आयु के अन्त में देह त्याग कर यह सर्वार्थसिद्धि में देव हुआ। मपु० ६७ ६१-८७, पपु० ८ ३४३-३४७, ३७०-३७१, ३९२-४००, हपु० ६० ५१२, वीवच० १८ १०१-१०२, ११०

हरिषेणा—(१) साकेत नगर के राजा श्रीषेण और रानी श्रीकान्ता की बडी पुत्री और श्रीषेणा की बडी बहिन। ये दोनो बहिनें स्वयवर में अपने-अपने पूर्वजन्म की प्रतिज्ञा का स्मरण करके बन्धुजनो को छोडकर तप करने लगी थी। मपु० ७२ २५३-२५४, हपु० ६४ १२९-१३१

(२) तीर्थंकर शान्तिनाथ के सघ की प्रमुख आर्यिका। मपु० ६३ ४९३

हरिसह—(१) माल्यवान पर्वत का नौवाँ कूट। हपु० ५ २२०

(२) विद्युत्प्रभ पर्वत के नौ कूटो मे नौवाँ कूट। हपु० ५ २२३

हरिसागर—लका के पास स्थित वन और उपवनो से विभूषित एक द्वीप। पपु० ४८ ११५-११६

हर्म्य—राजमहल। ये ऊँचे होते थे। इनके अग्रभाग दूर तक प्रकाश पहुँचाने के लिए अतिशय चमकीले मणियो को ऊँचे भाग पर रखने के उपयोग में आते थे। मपु० १२.१८४

हर्ष—अनागत तीसरा रुद्र। हपु० ६० ५७१-५७२

हल—(१) राम का सामन्त। पपु० ५८ १०-११

(२) देवोपुनीत अस्त्र। महालोचन देव ने यह अस्त्र राम को दिया था। पपु० ६० १४०

हलधर—(१) तीर्थङ्कर वृषभदेव के सत्रहवें गणधर। हपु० १२.५८

(२) बलभद्र-बलराम। हपु० २५ ३५

हवि—भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४४१, २५ १२७

हविर्भुक—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४४१

हव्य—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४४१

हस्त—(१) क्षेत्र का प्रमाण-एक हाथ। यह दो बीता-वितस्तियो के बराबर लम्बा होता है। हपु० ७ ४५

(२) रावण का एक योद्धा। इसे नल ने युद्ध में रथ रहित करके विह्वल कर दिया था। पपु० ५५ ४-५, ५८ ४५

हस्तचित्रा—तीर्थङ्कर अभिनन्दननाथ की शिविका। मपु० ५० ५१-५२

हस्तप्रहेलिका—चौरासी लाख शिर प्रकम्पित प्रमित काल। मपु० ३ २२६, हपु० ७.३०

हस्तवप्र—भरतक्षेत्र के दक्षिण-मथुरा का एक नगर। कृष्ण और बलदेव यहाँ आये थे। यहाँ का राजा अच्छन्त था। हपु० ६२ ३-१२

हस्तशीर्षपुर—भरतक्षेत्र का एक नगर। यहाँ का राजा हरिषेण था। मपु० ७१ ४४४, दे० हरिषेण-३

हस्तिन—भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का अठारहवाँ नगर। हपु० २२ ८७

हस्तिनापुर—एक नगर। यह भरतक्षेत्र के कुरुजागल देश की राजधानी था। श्रेयास इसी नगरी के राजा थे। आदि तीर्थंकर वृषभदेव एक वर्ष निराहार रहने के पश्चात् अपनी प्रथम चर्या के लिए इसी नगर में आये और श्रेयासकुमार ने इसी नगर में उन्हें विधिपूर्वक आहार दिया था। मुनि विष्णुकुमार ने बलि द्वारा किये गये उपसर्ग से अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनियो की यहाँ रक्षा की थी। राजा पद्मरथ और मुनि विष्णुकुमार इसी नगर के राजकुमार थे। चक्रवर्ती एव तीर्थंङ्कर शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरनाथ, चक्रवर्ती सुभौम और सनत्कुमार तथा परशुराम इसी नगर में जन्मे थे। शख इस नगर का धनिक श्रेष्ठी था। कौरवो की यह नगर राजधानी थी। युद्ध जो महाभारत नाम से प्रसिद्ध है, इसी नगर के विभाजन के लिए हुआ था। नागपुर, हस्तिनागपुर और गजपुर इसके अपर नाम थे। मपु० २०.२९-३१, ४३, ८१, ४३ ७४-७७, ६३ ३४२, ३६२, ४०६, ४५५-४५७, ६४.१२-१३, २४, २८, ६५ १४-१५, २५, ३०, ५१, ७१ २६०-२६१, पपु० २० ५२-५४, हपु० ३३ २४१, ४५ ३९-४१, पापु० २ १८३-१८५, ७.६८, १० १७

हस्तिनायक—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का इक्कीसवाँ नगर। हपु० २२.८७

हस्तिपानी—भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड की एक नदी। दिग्विजय के समय चक्रवर्ती भरतेश की सेना यहाँ आयी थी। मपु० २९ ६४-६६

हस्तिविजय—विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी का एक नगर हपु० २२ ८९

हस्तिसेना—इन्द्र की सेना के सात कक्षो मे प्रथम कक्ष। इसमे बीस हजार हाथी होते थे। आगे के कक्षो में इनकी सख्या दूनी-दूनी होती है। मपु० १० १९८-१९९ दे० सेना

हा—प्रथम पाँच कुलकरो के समय की एक दण्ड व्यवस्था। इसमें अपराधियों को "खेद है कि तुमने ऐसा अपराध किया" दण्ड स्वरूप ऐसा कहा जाता था। मपु० ३.२१४

हाटकद्युति—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. २००

हाथ—क्षेत्र का प्रमाण। मपु० ५ २७८ दे० हस्त-१

हार—एक सौ आठ मुक्ता लड़ियो से निर्मित कण्ठ का आभूषण। मपु० ३.१५६, ६ ३५, ११ ४४, १६ ५८, हपु० ७.८९

हारयष्टि—वक्षस्थल पर धारण किया जानेवाला मौक्तिक-हार। लड़ियो की सख्या के अनुसार इसके ग्यारह भेद होते हैं। वे हैं—इन्द्रच्छन्द, विजयच्छन्द, हार, देवच्छन्द, अर्धहार, रश्मिकलाप, गुच्छ, नक्षत्रमाला, अर्धगुच्छ, माणव और अर्धमाणव। मपु० ७.२३१, १४ २१३, १५ १५, १६ ५२-६१

हारिद्र—सौधर्म और ऐशान स्वर्गों के इकतीस पटलो मे बाईसवाँ पटल। हपु० ६ ४६ दे० सौधर्म

हारो—(१) रावण को प्राप्त विद्याओ मे एक विद्या। हपु० २२ ६३

(२) इन्द्र का आज्ञाकारी एक देव। देवकी के युगल रूप में उत्पन्न हुए पुत्रो को सुदृष्टि सेठ की पत्नी अलका के पास यही ले गया था। हपु० ३३ १६७-१६९

हालाहल—रावण का एक व्याघ्रवाही सामन्त। पपु० ५७.५१-५२

हास्यत्याग—सत्यव्रत की पाँच भावनाओ मे एक भावना-हास्य का परित्याग करना। मपु० १०.१६२

हास्तिविजय—विजयार्ध की उत्तरश्रेणी का चौंतीसवाँ नगर। हपु० २२ ८९

हाहाग—काल का एक प्रमाण। यह अमित काल में चौरासी से गुणित होने पर प्राप्त सख्या के बराबर समय का होता है। मपु० ३ २२५

हाहा—(१) काल का प्रमाण। यह हाहाग प्रमित काल में चौरासी लाख से गुणित होने पर प्राप्त सख्या के बराबर समय का होता है। मपु० ३ २२५

(२) व्यन्तर देवो की एक जाति। पपु० १७ २९७, २१ २७ हपु० १९ १४०

हिंगुलक—मध्यलोक के अन्तिम सोलह द्वीप और सागरो मे छठा द्वीप एव छठा सागर। हपु० ५ ६२३

हिंसा—पाँच पापो में प्रथम पाप-प्राणियो के प्राणो का प्रमादी होकर

व्यवरोपण करना, कराना या करते हुए की अनुमोदना करना। मपु० २ २३, पपु० ५ ३४१, हपु० ५८ १२७-१२९

हिंसानंद—रौद्रध्यान के चार भेदो में प्रथम भेद-हिंसा मे आनन्द मनाना जीवो को मारने और बाँधने आदि की इच्छा रखना, उनके अंग-उपागो को छेदना, सन्ताप देना, कठोरदण्ड देना आदि। ऐसे कार्यों को करनेवाला पुरुष अपने आपका घात पहले करता है पीछे अन्य जीवो का घात करे या न करे। क्रूरता, शस्त्रधारण, हिंसाकथाभिरति ये रौद्रध्यान के चिह्न हैं। मपु० २१ ४५-४९, हपु० ५६ १९, २२

हिडम्ब—रावण का पक्षधर एक राजा। पपु० १० ३६

हिडिम्बा—हिडिम्ब वश के राजा सिंहघोष और उसकी रानी लक्ष्मणा की पुत्री। इसे पाण्डव भीम ने विवाहा था। घुटुक इसका पुत्र था। हपु० ४५ ११४-११८ पापु० १४ २७-२९, ६३-६६, २० २१८-२१९

हिण्डिव—एक देश। लवणाकुश ने यहाँ के राजा को पराजित किया था। पपु० १०१ ८२

हितंकर—काकन्दी नगरी के राजा रतिवर्धन और रानी सुदर्शना का कनिष्ठ पुत्र और प्रियंकर का छोटा भाई। ये दोनो भाई मुनि दीक्षा लेकर ग्रैवेयक मे उत्पन्न हुए तथा वहाँ से च्युत होकर लवण और अकुश हुए। पपु० १०८ ७, ३९, ४६

हित—महारक्ष विद्याधर के पूर्वभव का जीव-पोदनपुर नगर का एक सामान्य नागरिक। इसकी स्त्री माधवी और पुत्र प्रीति था। यह मरकर यक्ष हुआ। पपु० ५ ३४५, ३५०

हितकर—सजयन्त मुनिराज के पूर्वभव का जीव-शकट ग्राम का एक भक्त। पपु० ५.३५-३६

हिम—छठी पृथिवी के तीन इन्द्रक बिलो में प्रथम इन्द्रक बिल। हपु० ४ ८४

हिमगिरि—(१) हरिवंशी एक राजा। यह हरि का पौत्र, महागिरि का पुत्र और वसुगिरि का पिता था। मपु० ६७ ४२०, पपु० २१.७-८, हपु० १५ ५८-५९

(२) विजयार्ध पर्वत की गुहा। रश्मिवेग मुनि को अजगर ने इसी गुहा में निगला था। मपु० ७३ २६-३०

(३) गान्धार देश की पुष्कलावती नगरी के राजा इन्द्रगिरि और रानी मेरुमती का पुत्र। गाधारी इसकी बहिन थी। कृष्ण इसे मारकर गान्धारी को हर लाये थे तथा उन्होने उसे विवाह लिया था। हपु० ४४ ४५-४८

हिमपुर—विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी का सन्तालीसवाँ नगर। हपु० २२ ९८

हिममुष्टि—वसुदेव तथा रानी मदनवेगा के पुत्रो में तीसरा सबसे छोटा पुत्र। दृढ़मुष्टि और अनावृष्टि का यह छोटा भाई था। हपु० ४८ ६१

हिमवत्—(१) भरतक्षेत्र का प्रथम कुलाचल। इसकी ऊँचाई सौ योजन, गहराई पच्चीस योजन, और चौडाई एक हज़ार बावन योजन तथा बारह कला प्रमाण है। इसकी प्रत्यचा चौबीस हज़ार नौ सौ बत्तीस योजन तथा कुछ कम एक कला प्रमाण, बाण एक हज़ार पाँच सौ अठहत्तर योजन अठारह कला प्रमाण, चूलिका पाँच हज़ार दो सौ तीस योजन कुछ अधिक सात कला प्रमाण तथा पूर्व पश्चिम दोनों भुजाओं का विस्तार पाँच हज़ार तीन सौ पचास योजन साढे पन्द्रह भाग है। यह स्वर्णमय है। इसके ग्यारह कूट है—१. सिद्धायतनकूट २ हिमवत्कूट ३ भरतकूट ४ इलाकूट ५ गगाकूट ६ श्रीकूट ७ रोहितकूट ८ सिन्धुकूट ९ सुरादेवीकूट १० हैमवतकूट ११ वैश्रवण-कूट। ये कूट मूल में पच्चीस योजन, मध्य में पौने उन्नीस योजन और साढे बारह योजन विस्तृत है। हपु० ५ ४५-५६

(२) इसी कुलाचल का दूसरा कूट। हपु० ५ ५३

(३) समुद्रविजय का भाई। इसके विद्युत्प्रभ, माल्यवान् और गन्धमादन ये तीन पुत्र थे। हपु० ४८.४७

हिमवान—(१) शौर्यपुर के राजा अन्धकवृष्णि और रानी सुभद्रा के दस पुत्रो में दूसरा (हरिवशपुराण के अनुसार चौथा) पुत्र। इसकी रानी धृतीश्वरा और विद्युत्प्रभ, माल्यवान तथा गन्धमादन ये तीन पुत्र थे। मपु० ७० ९६, ९८, हपु० १८ ९-१०, १२-१३, ४८ ४७ दे० हिमवत्-३

(२) भरतक्षेत्र के हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, महामेरु, नील, रुक्मी और शिखरी इन सात कुलाचलो में प्रथम कुलाचल। मपु० ६३ १९२-१९३, पपु० १०५ १५७-१५८, दे० हिमवत्-१

(३) राम का पक्षधर एक गजवाही योद्धा राजा। पपु० ५८ ८

(४) इस नाम के पर्वत का इसी नाम का एक देव। चक्रवर्ती भरतेश ने दिग्विजय के समय इसे पराजित किया था। मपु० ३२.१९८

(५) जरासन्ध का पुत्र। हपु० ५२ ३५

हिरण्यकशिपु—इक्ष्वाकुवश का एक राजा। यह राजा सिंहदमन का पुत्र तथा पुजस्थल राजा का पिता था। पपु० २२ १५८-१५९

हिरण्यकुम्भ—एक मुनि। विद्याधर अमितगति के पिता ने उसे राज्य देकर इन्ही से दीक्षा ली थी। हपु० २१ ११८-११९

हिरण्यगर्भ—(१) अयोध्या के राजा सुकोशल और रानी विचित्रमाला का पुत्र। इसके गर्भ में आने पर इसकी माता ने स्वर्ण के समान सुन्दर हो जाने से इसका यह नाम रखा गया था। राजा हरि की पुत्री अमृतवती इसकी रानी थी। यह विद्वान् सुन्दर और धनी था। बालों में एक सफेद बाल देखकर उत्पन्न हुए वैराग्य से इसने नघुष नामक पुत्र को राज्य देकर विमल मुनि से दीक्षा धारण कर ली थी। पपु० २२ १०३-११२

(२) भरतेश और सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.३३, २५. ११८, पपु० ३ १५६, हपु० ८ २०६

हिरण्यनाभ—अरिष्टपुर के राजा रुधिर और रानी मिश्रा का ज्येष्ठ पुत्र। यह नीतिज्ञ, रण-निपुण और कलाओ का पारगामी था। रोहिणी इसकी बहिन और श्रीकान्ता रानी थी। इसकी पुत्री पद्मावती के

स्वयवर में इसके भानेज बलदेव और कृष्ण दोनो आये थे। इसने अपने बड़े भाई रेवत की रेवती, बन्धुमती, सीता और राजीवनेत्रा चारो पुत्रियाँ पहले ही बलदेव को दे दी थी। यह महारथी राजा था। जरासन्ध ने इसे सेनापति बना लिया था। इसने कृष्ण के सेनापति अनावृष्टि का सामना किया था। उसे सात सौ नब्बे बाणो के द्वारा सत्ताईस बार घायल किया था। अन्त में अनावृष्टि ने इसकी भुजाओ पर तलवार के घातक प्रहार कर इसकी दोनो भुजाएँ काट डाली थी तथा यह छाती फट जाने से प्राण रहित होकर पृथिवी पर गिर गया था। पाण्डवपुराण के अनुसार यह युधिष्ठिर द्वारा मारा गया था। हपु० ३१ ८-११, ४४ ३७-४३, ५० ७९, ५१ १३, २३, ३५-४१, पापु० १९ १६२-१६३

हिरण्यनाभि—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ ११७

हिरण्यमती—एक आर्यिका। दान्तमती आर्यिका ने इन्ही के साथ विहार किया था। रानी रामदत्ता की यह दीक्षा गुरु थी। मपु० ५९ १९९-२०० दे० रामदत्ता

हिरण्यरोम—ह्रीमन्त पर्वत का एक तापस। सुकुमारिका इसकी पुत्री थी। हपु० २१ २४-२५

हिरण्यलोमा—पद्मिनीखेट नगर के सोमशर्मा ब्राह्मण की पुत्री। इसकी चन्द्रानना पुत्री थी। मपु० ६२ १९२, पापु० ४ १०७-१०८

हिरण्यवती—(१) राजा अतिबल और रानी श्रीमती की पुत्री तथा असितपर्वतनगर के मातगवशी राजा प्रहसित की रानी। सिंहदष्ट्र इसका पुत्र था। इसमें रूप बदलकर अपनी नातिन नीलयशा को वसुदेव से मिलाया था। हपु० २२ ११२-१३३ दे० अतिबल

(२) पोदनपुर के राजा पूर्णचन्द्र की रानी। यह साकेत नगर के राजा दिव्यबल और रानी सुमती की पुत्री थी। इसने दत्तवती आर्यिका से आर्यिका-दीक्षा ली थी। मपु० ५९ २०८-२०९, हपु० २७ ५६

हिरण्यवर्ण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ १९९

हिरण्यवर्मा—रतिवर कबूतर का जीव—एक विद्याधर। यह विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी की उशीरवती नगरी के राजा आदित्यगति और उसकी रानी शशिप्रभा का पुत्र था। विजयार्ध पर्वत की उत्तर-श्रेणी के भोगपुर नगर के राजा वायुरथ की पुत्री-रतिवेगा कबूतरी का जीव प्रभावती इसकी रानी थी। गति युद्ध में प्रभावती ने इसका वरण किया था। धान्यकमाल वन में पहुँचने पर वहाँ सर्प सरोवर देखकर इसे पूर्वभव के सब सम्बन्ध प्रत्यक्ष दिखाई दिये थे। इसे इससे वैराग्य जागा। सासारिक भोग क्षण-भगुर प्रतीत हुए। फलस्वरूप इसने पुत्र सुवर्णवर्मा को राज्य देकर श्रीपुर नगर में श्रीपाल गुरु से जैनेश्वरी दीक्षा ले ली थी। इसको रानी ने भी गुणवती आर्यिका के पास तप धारण कर लिया था। यह विहार करते हुए पुण्डरीकिणी नगरी आया था। इसने घोर तप किया। एक समय जब यह सात दिन का नियम लेकर श्मशान में प्रतिमायोग से विराजमान था तब विद्युच्चोर ने इसे और इसकी पत्नी आर्यिका प्रभावती को एक ही चिता पर रखकर जला दिया था। इस उपसर्ग को विशुद्ध परिणामो से सहकर यह और आर्यिका प्रभावती दोनो स्वर्ग मे देव और देवी हुए। इसके पुत्र सुवर्णवर्मा ने इस घटना से दुखी विद्युच्चोर के निग्रह का निश्चय किया किन्तु अवधिज्ञान से सुवर्ण-वर्मा के इस निश्चय को जानकर यह और प्रभावती का जीव वह देवी दोनो सयमी का रूप बनाकर पुत्र सुवर्णवर्मा के पास आये थे। दोनो ने धर्मकथाओ के द्वारा तत्त्वश्रद्धान कराकर उसका क्रोध दूर किया था। पश्चात् दोनो ने अपना दिव्य रूप प्रकट करके उसे अपना सम्पूर्ण वृत्त कहा था और बहुमूल्य आभूषण भेंट में दिये थे। मपु० ४६ १४५-१८९, २२१, २४७-२५५, हपु० १२ १८-२१, पापु० ३ २०१-२३६

(२) भरतक्षेत्र के अरिष्टपुर नगर का राजा। पद्मावती इसकी रानी और रोहिणी पुत्री तथा वसुदेव इसका जामाता था। मपु० ७० ३०७-३०९, पापु० ११ ३१

(३) विजयार्ध पर्वत की अलका नगरी के राजा हरिबल और उसकी दूसरी रानी श्रीमती का पुत्र। पहली रानी से उत्पन्न भीमक इसका भाई था। इसके पिता इसे विद्या और इसके भाई भीमक को राज्य देकर ससार से विरक्त हो गये थे। भीमक ने इसकी विद्याएँ हर ली थी और मारने को उद्यत हुआ था। परिणामस्वरूप इसने अपने चाचा महासेन की शरण ली थी। भीमक ने महासेन से युद्ध किया जिसमें यह पकडा गया था। इस समय भीमक ने इससे सन्धि करके उसे राज्य दे दिया था किन्तु अवसर पाकर उसने राक्षसी विद्या सिद्ध की तथा विद्या की सहायता से उसने इसे और महासेन को मार डाला था। मपु० ७६.२६२-२८०

हिरण्य-स्वर्णप्रमाणातिक्रम्—परिग्रह परिमाणव्रत का प्रथम अतीचार-चाँदी, सोने की निर्धारित सीमा का अतिक्रमण करना। हपु० ५८ १७६

हिरण्याभ—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के कनकपुर नगर का राजा। सुमना इसकी रानी तथा विद्युत्प्रभ पुत्र था। पपु० १५.३७-३८

हिरण्योत्कृष्टजन्मताक्रिया—गर्भान्वयी त्रेपन क्रियाओ में उन्तालीसवी क्रिया-तीर्थंकरो के जन्म सबधी उत्कृष्टता की सूचक अन्य बातो के साथ-साथ स्वर्ण की वर्षा होना। यह क्रिया तीर्थंकरो के होती है। इसमें तीर्थंकरो के गर्भ मे आने के छ मास पूर्व से कुबेर रत्नो की वर्षा करता है। मन्द-मन्द हवा बहती है, दुन्दुभियो की ध्वनियाँ होती हैं, पुष्पवृष्टि होती है और देवियाँ आकर जिन-माता की सेवा करती हैं। मपु० ३८ ६०, २१७-२२४

हीनाधिकमानोन्मान—अचौर्यव्रत के पाँच अतिचारो में चौथा अतिचार-माप तौल से कम वस्तु देना और अधिक लेना। हपु० ५८.१७२

हुँकार—राम के समय का एक माँगलिक वाद्य। यह सेना के प्रस्थान काल में बजाया जाता था। पपु० ५८.२७

हुण्डसस्थान—नामकर्म के छ सस्थानो में एक सस्थान-अगो और उपागो

की वेतरतीव-असमान रचना । नारकियो के शरीर की रचना ऐसी ही होती है । मपु० १०.९५, हपु० ४.३६८

हुताशनशिख—ज्योति पुर नगर का राजा । ह्री इसकी रानी और सुतारा पुत्री थी । पपु० १० २-३

हूहू—(१) काल का एक प्रमाण—हूहूग प्रमित काल के चौरासी लाख से गुणित होने पर प्राप्त सख्यात्मक काल । मपु० ३ २२५

(२) गन्धर्व व्यन्तर देवो की एक जाति विशेष के देव । पपु० १७ २७९, २१.२७

हूहूंग—काल का एक प्रमाण-हाहा प्रमित काल के चौरासी से गुणित करने पर प्राप्त सख्यात्मक काल । मपु० ३ २२५

हृदयधर्मा—सुग्रीव की तीसरी पुत्री । यह और इसकी बडी बहिन हृदयावली दोनो राम के गुणो को सुनकर स्वय वरण की इच्छा से उनके पास आयी थी । पपु० ४७ १३६-१३७

हृदयवेगा—महेन्द्रनगर के राजा महेन्द्र की रानी । इसके अरिंदम आदि सौ पुत्र तथा अजनासुन्दरी नाम की एक पुत्री थी । मपु० १५ १४-१६

हृदयसुन्दरी—(१) हिडिम्ब वश के राजा सिंहघोष और रानी सुदर्शना की पुत्री । त्रिकूटाचल का राजा मेघवेग इसे चाहता था किन्तु वह इसे प्राप्त नही कर सका था । निमित्तज्ञानियो ने विन्ध्याचल पर गदा-विद्या की सिद्धि करनेवाले के मारनेवाले को इसका पति बताया था। अन्त मे भीम पाण्डव के साथ इसका विवाह हुआ । हपु० ४५.११४-११८

(२) रथनूपुर नगर के सहस्रार विद्याधर की रानी । विद्याधरो के राजा इन्द्र की यह माता थी । पपु० १३ ६५-६६

हृदयावली—सुग्रीव की दूसरी पुत्री । पापु० ४७ १३७ दे० हृदयधर्मा

हृदिक—राजा शान्तन का पौत्र और राजा विषद्मित्र का पुत्र । इसके दो पुत्र थे—कृतिधर्मा और दृढ़धर्म । हपु० ४८ ४०-४२

हृषीकेश—(१) राजा जरासन्ध का पुत्र । हपु० ५२.३६

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १३४

हृष्यका—सगीत के मध्यम ग्राम की एक मूर्च्छना । हपु० १९ १६४

हृष्यकान्ता—सगीत की एक मूर्च्छना । हपु० १९ १६८

हेड—राम का पक्षधर योद्धा । पपु० ५८ २१

हेतु—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १४३

हेतुगुंजा—राम के समय का एक हस्त वाद्य । यह मागलिक अवसरो पर बजाया जाता था । पपु० ५८.२८

हेतुविचय—धर्मध्यान के दस भेदो में दसवाँ भेद-तर्क का अनुसरण और स्याद्वाद आश्रय लेकर समीचीन मार्ग का ग्रहण करना अथवा उसका चिन्तन करना । हपु० ५६ ५०

हेम—हेमपुर नगर का एक विद्याधर राजा । भोगवती इसकी रानी और चन्द्रवती पुत्री थी । विद्याधर माली इसका जामाता था । पपु० ६ ५६४-५६५

हेमकच्छ—दशार्ण देश का एक नगर । राजा चेटक की तीसरी पुत्री सुप्रभा इसी नगर के राजा दशरथ से विवाही गयी थी । मपु० ७५, १०-११

हेमकूट—विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी का चालीसवाँ नगर । मपु० १९ ५१-५३

हेमगर्भ—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम । मपु० २५ १८१

हेमगौर—रावण का अश्वरथी एक सामन्त । पपु० ५७ ५५

हेमचूला—अयोध्या के राजा विजय की रानी । सुरेन्द्र-मन्यु इसका पुत्र था । पपु० २१ ७३-७५

हेमजाल—चक्रवर्ती भरतेश का स्वर्ण तारो से निर्मित एक आभूषण-जाल। मपु० ३० १२७

हेमनाभ—अयोध्या नगरी का राजा । इसकी रानी का नाम धरावती था । मधु और कैटभ दोनो इसके पुत्र थे । इसने मधु को राज्य देकर तथा कैटभ को युवराज बनाकर जिनदीक्षा धारण कर ली थी । हपु० ४३ १५९-१६०

हेमपाल—रावण का पक्षधर एक राजा । यह रावण के साथ राजा इन्द्र को जीतने के लिए गया था । पपु० १० ३७

हेमपुर—विदेहक्षेत्र का एक नगर । पपु० ६ ५६४ दे० हेम

हेमपूर्ण—एक राजा । इसने रावण को भेंट देकर सतुष्ट किया था । पपु० १० २४

हेमप्रभ—जरासन्ध का पक्षधर एक राजा । मपु० ७१.७९

हेमबाहु—चक्रवर्ती सनत्कुमार का जीव-गोवर्धन ग्राम का एक गृहस्थ । यह आस्तिक और परम उत्साही जिनेन्द्र-भक्त था । मरकर यह यक्ष हुआ । पपु० २० १३७-१४६, १५३

हेममाला—स्वर्ण निर्मित माला । इसे पुरुष पहिनते थे । चक्रवर्ती भरतेश को यह माला प्रभासदेव ने भेंट में दी थी । इसे वर्तमान की स्वर्ण-जजीर से समीकृत किया जा सकता है । मपु० ३० १२४

हेमरथ—(१) अश्वपुर नगर का राजा । यह दृढरथ द्वारा मारा गया था । मरकर यह कैलास पर्वत की पर्णकान्ता नदी के किनारे सोम नामक तापस हुआ था । मपु० ६३ २६५-२६७, पापु० ४ २७

(२) पोदनपुर नगर के राजा उदयाचल और रानी अर्हच्छ्री का पुत्र । इसकी जिनपूजा में विभोर होकर महारक्ष नृत्य करके अपने पुण्यबन्ध के फलस्वरूप मरकर यक्ष हुआ । पपु० ५ ३४६-३५० दे० महारक्ष

(३) इक्ष्वाकुवशी राजा चतुर्मुख का पुत्र और शतरथ का पिता । पपु० २० १५३

हेमवती—(१) विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी के असुरसंगीत नगर के राजा दैत्य नाम से प्रसिद्ध विद्याधर मय की स्त्री । रावण की रानी मन्दोदरी इसी की पुत्री थी । पपु० ८ १-३, ७८

(२) मृणालकुण्ड नगर के राजा वज्रकम्बु की रानी । शम्भु इसका पुत्र था । पपु० १०६ १३३-१३४

हेमांगद—(१) वाराणसी नगरी के राजा अकम्पन का पुत्र । सुकेतुश्री

और सुकान्त इसके भाई थे। मपु० ४३.१२१, १२४, १२७, १३४, पापु० ३.४०-४१ दे० अकम्पन

(२) जम्बूद्वीप का एक देश। राजा सत्यन्धर का राजपुर नगर इसी देश में था। मपु० ७५.१८८, पापु० ३ ११४

हेमापूर्ण—रावण का अधीनस्थ एक राजा। पपु० १०.२४-२५

हेमाभ—(१) जम्बूद्वीप के पुन्नागपुर नगर का राजा। इसकी रानी यशस्वती आगामी भव मे कृष्ण की रानी गौरी हुई थी। मपु० ७१. ४२९-४३०

(२) सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५. १९८

हेमाभनगर—सुजन देश का एक नगर। जीवन्धरकुमार ने यहाँ के राजा दृढमित्र की पुत्री हेमाभा को विवाहा था। मपु० ७५ ४२०-४२८

हेमाभा—हेमाभनगर के राजा दृढमित्र और रानी नलिना की पुत्री। मपु० ७५ ४२०-४२१ दे० हेमाभनगर

हेयादेयविचक्षण—सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २५ २१४

हैमवत—छ कुलाचलो से विभाजित सात क्षेत्रो में दूसरा क्षेत्र। इसका विस्तार २१०५५/१९ योजन है। मपु० ६३ १९१, पपु० १०५ १५९-१६०, हपु० ५ १३-१४ दे० क्षेत्र

हैमवतकूट—(१) हिमवत् कुलाचल के ग्यारह कूटो में दसवाँ कूट। हपु० ५.५४ दे० हिमवत्

(२) महाहिमवान् कुलाचल के आठ कूटो में तीसरा कूट। हपु० ५.७१ दे० महाहिमवान्

हैरण्यवत—(१) जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रो मे छठा क्षेत्र। इसका विस्तार २१०५५/१९ योजन है। मपु० ६३.१९२, पपु० १०५.१५९-१६०, हपु० ५ १३-१४, दे० क्षेत्र

(२) रुक्मी पर्वत के आठ कूटो में सातवाँ कूट। हपु० ५.१०३

(३) शिखरी पर्वत के ग्यारह कूटो में तीसरा कूट। हपु० ५. १०६

हैहय—विद्याधरो की आवासभूमि। यहाँ का राजा राम का पक्षधर था। पपु० ५५ २९

हैहिक—रावण का पक्षधर एक राजा। रथनूपुर के राजा इन्द्र को जीतने के लिए यह रावण के साथ गया था। पपु० १० ३६-३७

होता—भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव का एक नाम। मपु० २४.४१

ह्रद—वर्षधर पर्वतो के कमलो से विभूषित सरोवर। विदेह में ये सोलह हैं। उनके क्रमश नाम हैं—पद्म, महापद्म, तिगछ, केसरी, महापुण्डरीक, पुण्डरीक, निषध, देवकुरु, सूर्य, सुलस, विद्युत्प्रभ, नीलवान, उत्तरकुरु, चन्द्र, ऐरावत और माल्यवान्। इनके आदि के छः सरवरो में श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी देवियाँ तथा शेष में नागकुमार देव रहते हैं। आदि के छ सरोवर छ. महाकुलाचलो के मध्यभाग में पूर्व से पश्चिम लम्बे हैं। इनसे गगा-सिन्धु आदि महानदियाँ निकली हैं। पद्म सरोवर से गगा, सिन्धु से रोहितास्या, महापद्म सरोवर से रोह्या और हरिकान्ता, तिगछ से हरित् और सीतोदा, केशरी सरोवर से सीता और नरकान्ता, महापुण्डरीक से नारी और रूप्यकूला तथा पुण्डरीक ह्रद से सुवर्णकला, रक्ता और रक्तोदा महानदियाँ निकली हैं। मपु० ६३.१९७-२०१, हपु० ५ १२०-१२२, १३१-१३५

ह्रदवती—विदेहक्षेत्र की बारह विभगा नदियो में दूसरी नदी। यह नील पर्वत से निकली है। मपु० ६३.२०५-२०६, हपु० ५.२३९

ह्रदा—बारह विभगा नदियो में प्रथम नदी। मपु० ६३ २०५-२०६

ह्री—(१) छ जिनमातृक दिक्कुमारी देवियो में एक देवी। यह तीर्थंकरों की गर्भावस्था में गर्भ का सशोधन करके लज्जा नामक अपने गुण का जिन माता में सचार करती हुई उनकी सेवा करती है और पद्म सरोवर में स्थित मुख्य कमल में रहती है। इसकी आयु एक पल्य की होती है। मपु० १२ १६३-१६४, ३८ २२२, २२६, ६३ २००, हपु० ५ १३०-१३१, वीवच० ७.१०५-१०८

(२) रुचकवर गिरि की उत्तरदिशा के आठ कूटो में छठे कुण्डलकूट की देवी। यह चमर लेकर जिनमाता की सेवा करती है। हपु० ५ ७१६

(३) ज्योतिपुर नगर के राजा हुताशनशिख की रानी। इसकी पुत्री सुतारा सुग्रीव की रानी थी। पपु० १० २-३, १०

(४) महाहिमवान् पर्वत के आठ कूटो में पाँचवाँ कूट। हपु० ५.८९

(५) निषधाचल के नौ कूटो में पाँचवाँ कूट। हपु० ५ ८९

ह्रीमन्त—(१) विद्याओ की साधना के लिए प्रसिद्ध तथा सजयन्त मुनि की प्रतिमा से युक्त एक पर्वत। हिरण्यरोम तापस यही का निवासी था। यहाँ पाँच नदियो का सगम है। वसुदेव ने यहाँ बालचन्द्रा नामक कन्या को नागपाश से छुड़ाया था। धरणेन्द्र के संकेतानुसार विद्याधरो ने सजयन्त मुनि की पाँच सौ धनुष ऊँची प्रतिमा स्थापित करके यही अपनी गयी हुई विद्याएँ पुन. प्राप्त की थी। विद्याओ के हरे जाने से इस पर्वत पर लज्जित होकर नीचा मस्तक किए हुए विद्याधरो के बैठने से यह पर्वत इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। मपु० ६२.२७४, हपु० २१.२४-२५, २६, ४५-४८, २७ १२८-१३४

ह्लावन—(१) लंका का एक द्वीप। पपु० ४८ ११५

(२) रावण का पक्षधर एक गजरथी राजा। पपु० ५७.५८

परिशिष्ट

अनागत पुण्य पुरुष

अनागत कुलकर

महापुराण के अनुसार			हरिवंशपुराण के अनुसार		
१.	कनक	मपु० ७६.४६३	१	कनक	हपु० ६० ५५५
२	कनकप्रभ	,,	२.	कनकप्रभ	,,
३.	कनकराज	मपु० ७६ ४६४	३.	कनकराज	,,
४	कनकध्वज	,,	४.	कनकध्वज	,,
५.	कनकपुंगव	,,	५.	कनकपुंगव	,,
६	नलिन	,,	६	नलिन	हपु० ६०.५५६
७	नलिनप्रभ	,,	७	नलिनप्रभ	,,
८.	नलिनराज	मपु० ७६.४६५	८	नलिनराज	,,
९.	नलिनध्वज	,,	९	नलिनध्वज	,,
१०.	नलिनपुंगव	,,	१०	नलिनपुंगव	,,
११	पद्म	,,	११	पद्मप्रभ	हपु० ६० ५५७
१२	पद्मप्रभ	,,	१२	पद्मराज	,,
१३	पद्मराज	मपु० ७६.४६६	१३	पद्मध्वज	,,
१४.	पद्मध्वज	,,	१४	पद्मपुंगव	,,
१५	पद्मपुंगव	,,			
१६	महापद्म	,,			

अनागत तीर्थंकर

महापुराण के अनुसार			हरिवंशपुराण के अनुसार		
	नाम तीर्थंकर	सन्दर्भ		नाम तीर्थंकर	सन्दर्भ
१.	महापद्म	मपु० ७६ ४७७	१	महापद्म	हपु० ६० ५५८
२	सुरदेव	,,	२	सुरदेव	,,
३	सुपार्श्व	,,	३	सुपार्श्व	,,
४	स्वयप्रभ	मपु० ७६ ४७८	४	स्वयंप्रभ	,,
५	सर्वात्मभूत	,,	५	सर्वात्मभूत	हपु० ६० ५५९
६	देवपुत्र	,,	६	देवदेव	,,
७	कुलपुत्र	,,	७	प्रभोदय	,,
८	उदक	,,	८	उदक	,,
९	प्रोष्ठिल	,,	९	प्रश्नकीर्ति	,,
१०	जयकीर्त्ति	,,	१०	जयकीर्त्ति	,,
११	मुनिसुव्रत	मपु० ७६ ४७९	११.	सुव्रत	,,
१२	अरनाथ	,,	१२	अर	हपु० ६० ५६०
१३	अपाप	,,	१३	पुण्यमूर्ति	,,
१४	निष्कषाय	,,	१४	निष्कषाय	,,
१५	विपुल	,,	१५.	विपुल	,,

१६	निर्मल	"	१६.	निर्मल	"
१७	चित्रगुप्त	"	१७	चित्रगुप्त	"
१८	समाधिगुप्त	मपु० ७६ ४८०	१८	समाधिगुप्त	हपु० ६० ५६१
१९	स्वयभू	"	१९.	स्वयभू	"
२०	अनिवर्ती	"	२०.	अनिवर्तक	"
२१	विजय	"	२१	जय	"
२२	विमल	"	२२	विमल	"
२३	देवपाल	"	२३.	दिव्यपाद	"
२४	अनन्तवीर्य	मपु० ७६ ४८१	२४.	अनन्तवीर्य	हपु० ६०.५६२

अनागत-तीर्थंकर-होनेवाले जीव

१ श्रेणिक	मपु० ७६.४७१	१३ प्रेमक	मपु० ७६ ४७३
२. सुपार्श्व	"	१४. अतोरण	"
३ उदक	"	१५ रैवत	"
४. प्रोष्ठिल	मपु० ७६ ४७२	१६ वासुदेव	"
५ कटप्रू	"	१७ बलदेव	"
६. क्षत्रिय	"	१८ भगलि	मपु० ७६.४७४
७ श्रेष्ठी	"	१९. वागलि	"
८ शख	"	२० द्वैपायन	"
९ नन्दन	"	२१. कनकपाद	"
१० सुनन्द	"	२२ नारद	"
११ शशाक	मपु० ७६ ४७३	२३ चारुपाद	"
१२ सेवक	"	२४. सात्यकिपुत्र	"

अनागत चक्रवर्ती

महापुराण के अनुसार		हरिवंशपुराण के अनुसार	
१ भरत	मपु० ७६ ४८२	१ भरत	हपु० ६० ५६३
२ दीर्घदन्त	"	२ दीघदन्त	"
३ मुक्तदन्त	"	३ जन्मदत्त	"
४ गूढ़दन्त	"	४ गूढदन्त	"
५ श्रोषेण	"	५ श्रीषेण	"
६ श्रीभूति	मपु० ७६ ४८३	६ श्रीभूति	हपु० ६० ५६४
७ श्रीकान्त	"	७ श्रीकान्त	"
८ पद्म	"	८ पद्म	"
९ महापद्म	"	९ महापद्म	"
१० विचित्रवाहन	"	१० चित्रवाहन	"
११ विमलवाहन	मपु० ७६ ४८४	११ विमलवाहन	हपु० ६० ५६५
१२ अरिष्टसेन	"	१२ अरिष्टसेन	"

अनागत बलभद्र

महापुराण के अनुसार	हरिवंशपुराण के अनुसार
१ चन्द्र	१ चन्द्र
२ महाचन्द्र	२ महाचन्द्र
३ चक्रधर	३. चन्द्रधर
४ हरिचन्द	४. सिंहचन्द्र
५ सिंहचन्द्र	५ हरिचन्द्र
६ वरचन्द्र	६ श्रीचन्द्र
७ पूर्णचन्द्र	७ पूर्णचन्द्र
८ सुचन्द्र	८ सुचन्द्र
९ श्रीचन्द्र	९ बालचन्द्र
मपु० ७६.४८५-४८६	हपु० ६० ५६८-५६९

अनागत नारायण

महापुराण के अनुसार		हरिवंशपुराण के अनुसार	
१. नन्दि	मपु० ७६.४८७	१ नन्दी	हपु० ६० ५६६
२ नन्दिमित्र	,,	२. नन्दिमित्र	,,
३ नन्दिषेण	,,	३ नन्दिन	,,
४ नन्दिभूति	मपु० ७६ ४८८	४ नन्दिभूतिक	,,
५ बल	,,	५ महाबल	,,
६ महाबल	,,	६. अतिबल	,,
७ अतिबल	,,	७. बलभद्र	,,
८ त्रिपृष्ठ	मपु० ७६ ४८९	८. द्विपृष्ठ	हपु० ६० ५६७
९. द्विपृष्ठ	,,	९ त्रिपृष्ठ	,,

अनागत प्रतिनारायण

१ श्रीकण्ठ	४ अश्वकण्ठ	७ अश्वग्रीव
२ हरिकण्ठ	५ सुकण्ठ	८ हयग्रीव
३ नीलकण्ठ	६ शिखिकण्ठ	९ मयूरग्रीव

हपु ६०.५६९-५७०

अनागत रुद्र

१. प्रमद	४ प्रकाम	७ हर	१० काम
२. सम्मद	५. कामद	८ मनोभव	११ अगज
३ हर्ष	६. भव	९ मार	

हपु० ६० ५७१-५७२

अर्हन्त-गुण

अनन्त चतुष्टय—	४
प्रातिहार्य—	८
अतिशय—	३४
योग =	४६

मपु० ८२ ४४-४६

अनन्त-चतुष्टय

१. अनन्त दर्शन २. अनन्त ज्ञान ३ अनन्त सुख ४ अनन्त वीर्य

मपु० ४२.४४

अष्ट प्रातिहार्य

१ अशोक वृक्ष का होना।	२ देवकृत पुष्प-वृष्टि।
३ देवों द्वारा चौंसठ चमर ढुराया जाना।	४. प्रभामण्डल का होना।
५ दुन्दुभि ध्वनि का होना।	६ सिर पर त्रिछत्र होना।
७ सिंहासन का रहना।	८ दिव्यध्वनि का होना।

हपु० ३ ३१-३८

अतिशय

जन्मकालीन १० अतिशय

१ मल-मूत्र रहित शरीर का होना।
२ स्वेद रहित शरीर का होना।
३ श्वेत रुधिर का होना।
४ वज्रवृषभनाराचसंहनन का होना।
५ समचतुरस्रसंस्थान का होना।
६ अत्यन्त सुन्दर रूप।
७ शरीर का सुगन्धित होना।
८ शरीर का १००८ लक्षणों से युक्त होना।
९ अनन्तवीर्य का होना।
१० हितमितप्रिय वचन बोलना।

हपु० ३.१०-११

केवलज्ञानकालीन १० अतिशय

१ नेत्रों की पलकें नहीं झपकना।
२ नख और केशों का नहीं बढ़ना।
३ कवलाहार का अभाव होना।
४ वृद्धावस्था का अभाव।
५ शरीर की छाया का अभाव।
६ चतुर्मुख दिखाई देना।
७ दो सौ योजन तक सुभिक्ष रहना।
८ उपसर्ग का अभाव।
९. प्राणि-पीड़ा का अभाव।
१० आकाशगमन।
११ सब विद्याओं का स्वामीपना।

नोट—हरिवंशपुराणकार ने केवलज्ञान के समय प्रकट होनेवाले इन अतिशयों के स्थान में ग्यारह अतिशय बताये हैं। उन्होंने वृद्धावस्था का अभाव नामक अतिशय अधिक बताया है। इसी प्रकार सुभिक्षता के सौ योजन के स्थान में दो सौ योजन का उल्लेख किया है।

हपु० ३ [illegible]

देवकृत चौदह अतिशय

१ अर्द्धमागधी भाषा का होना।
२ समस्त जीवो में पारस्परिक मित्रता का होना।
३. सभी ऋतुओ के फल-फूलो का एक साथ फलना-फूलना।
४ पृथिवी का दर्पण के समान निर्मल होना।
५ मन्द-सुगन्धित वायु का बहना।
६ सभी जीवो का आनन्दित होना।
७ पवनकुमार देवो द्वारा एक योजन भूमि का कीट रहित एव निष्कटक किया जाना।
८ स्तनितकुमार देवो का सुगन्धित जलवृष्टि-करना।
९ चलते समय चरणतले कमल का होना।
१० आकाश का निर्मल होना।
११ दिशाओ का निर्मल होना।
१२ आकाश में जय-जय ध्वनि होना।
१३ धर्मचक्र का आगे रहना।
१४ पृथ्वी का धन-धान्यादि से सुशोभित होना।

हरिवशपुराणकार ने अर्हन्त को ध्वजादि अष्ट मगल द्रव्यो से युक्त तो बताया है किन्तु देवकृत चौदह अतिशियो में इसे सम्मिलित नही किया है।

हपु० ३ १६-३०

आस्रवकारी क्रियाएँ

साम्परायिक आस्रवकारी २५ क्रियाएँ

१ सम्यक्त्व क्रिया	२ मिथ्यात्व क्रिया	३ प्रयोग क्रिया
४ समादान क्रिया	५. ईर्यापथ क्रिया	६ प्रादोषिकी क्रिया
७ कायिकी क्रिया	८ क्रियाधिकरणी क्रिया	९ पारितापिकी क्रिया
१० प्राणातिपातिकीक्रिया	११ दर्शन क्रिया	१२. स्पर्शन क्रिया
१३ प्रत्यायिकी क्रिया	१४ समन्तानुपातिनी क्रिया	१५ अनाभोग क्रिया
१६ स्वहस्त क्रिया	१७ निसर्ग क्रिया	१८ विदारण क्रिया
१९ आज्ञाव्यापादिकी क्रिया	२० अनाकाछा क्रिया	२१ प्रारम्भ क्रिया
२२ पारिग्रहिकी क्रिया	२३ माया क्रिया	२४ मिथ्यादर्शन क्रिया
२५ अप्रत्यख्यान क्रिया		हपु० ५८ ५८-८२

पापास्रावकारी १०८ क्रियाएँ

समरम्भ, समारम्भ और आरम्भ ये तीनो कृत, कारित और अनुमोदना पूर्वक होने से प्रत्येक के ३-३ भेद होते हैं। इस प्रकार तीनो के कुल ९ भेद हो जाते हैं। ये भेद क्रोध, मान, माया और लोभ इन चारो कषायो के योग से उत्पन्न होने के कारण प्रत्येक के चार-चार भेद हो जाते हैं। इस प्रकार समरम्भ, समारम्भ और आरम्भ तीनो के पृथक्-पृथक् बारह-बारह भेद करने के पश्चात् चूंकि ये क्रियाएँ मन, वचन और काय से सम्पन्न होती है। अत प्रत्येक के बारह भेदो को इन तीन से गुणित करने पर प्रत्येक के छत्तीस भेद और तीनो के कुल एक सौ आठ भेद होते हैं।

जीव प्रतिदिन ऐसे एक सौ आठ प्रकार से आस्रव करता है।

हपु० ५८ ८५

इन्द्र

भवनवासी देवो के इन्द्र

१ चमर	२. वैरोचन	३ भूतेश	४ धरणानन्द
५ वेणुदेव	६ वेणुधारी	७ पूर्ण	८ अवशिष्ट
९ जलप्रभ	१० जलकान्ति	११ हरिषेण	१२ हरिकान्त
१३ अग्निशिखि	१४. अग्निवाहन	१५ अमितगति	१६ अमितवाहन
१७ घोष	१८. महाघोष	१९ वेलाजन	२० प्रभजन

प्रतीन्द्र

भवनवासी देवो के इन्ही नामो के बीस प्रतीन्द्र होते है।

वीवच० १४ ५४-५८

व्यन्तर देवो के इन्द्र

१. किन्नर	२ किम्पुरुष	३ सत्पुरुष	४ महापुरुष
५ अतिकाय	६ महाकाय	७ गीतरति	८ रतिकीर्ति
९ मणिभद्र	१०. पूर्णभद्र	११ भीम	१२ महाभीम
१३. सुरूप	१४. प्रतिरूप	१५ काल	१६ महाकाल

प्रतीन्द्र

व्यन्तर देवो के सोलह इन्ही नामो के प्रतीन्द्र होते हैं।

वीवच० १४ ५९-६३

कल्पवासी देवो के इन्द्र

१ सौधर्मेन्द्र	२ ऐशानेन्द्र	३ सनत्कुमारेन्द्र	४ माहेन्द्र
५ ब्रह्ममेन्द्र	६ लान्तवेन्द्र	७ शुक्रेन्द्र	८ शतारेन्द्र
९ आनतेन्द्र	१०. प्राणतेन्द्र	११ आरणेन्द्र	१२ अच्युतेन्द्र

प्रतीन्द्र

कल्पवासी देवो के इन्ही नामो के बारह प्रतीन्द्र भी होते हैं।

वीवच० १४ २५, ४०-४८

ज्योतिष देवो के इन्द्र

१. सूर्य २ चन्द्र

वीवच० १४ ५२-५३

इतर दो इन्द्र

१. राजा २ सिंह

कुल इन्द्र १०० होते हैं।

ऋद्धियाँ

क्र० सं०	नाम ऋद्धि	सन्दर्भ
१	अक्षीणर्द्धि	मपु० ११ ८८
२	अक्षीण-पुर्ष्द्धि	मपु० ६ १४९
३	अक्षीण-महाशन	मपु० ३६ १५५
४	अक्षीण सवास	मपु० ३६ १५५
५	अमृतस्राविणी	मपु० २ ७२
६	अम्बरचारण	मपु० २ ७३
७	आमर्ष	मपु० २ ७१
८	उग्र	मपु० ११ ८२
९	औषध-ऋद्धि	मपु० ३६ १५३

तीर्थंकर—१, —/९३/— हपु० ५८ २४३-१७८

७. गोत्र—
२—उच्च और नीच। हपु० ५८ २७९

८ अन्तराय—
५—दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय। हपु० ५८ २८०-२८२

वृषभदेव के क्रमानुसार चौरासी गणधर

महापुराण के अनुसार			हरिवंशपुराण के अनुसार		
क्र०	नाम गणधर	सन्दर्भ	क्र०	नाम गणधर	सन्दर्भ
१.	वृषभसेन	मपु० ४३ ५४	१	वृषभसेन	हपु० १२ ५५
२	कुम्भसेन	,,	२	कुम्भ	,,
३.	दृढरथ	,,	३	दृढरथ	,,
४.	शतधनु	,,	४	शत्रुदमन	,,
५	देवशर्मा	,,	५	देवशर्मा	,,
६	देवभाक्	,,	६	धनदेव	हपु० १२ ५६
७	नन्दन	मपु० ४३ ५५	७	नन्दन	,,
८	सोमदत्त	,,	८	सोमदत्त	,,
९	सूरदत्त	,,	९.	सुरदत्त	,,
१०.	वायुशर्मा	,,	१०	वायुशर्मा	हपु० १२ ५७
११	यशोबाहु	,,	११	सुबाहु	,,
१२	देवाग्नि	,,	१२.	देवाग्नि	,,
१३	अग्निदेव	,,	१३	अग्निदेव	,,
१४	अग्निगुप्त	मपु० ४३ ५६	१४	अग्निभूति	,,
१५	मित्राग्नि	,,	१५	तेजस्वी	हपु० १२ ५८
१६.	हलभृत्	,,	१६	अग्निमित्र	,,
१७	महीधर	,,	१७	हलधर	,,
१८	महेन्द्र	,,	१८.	महीधर	,,
१९	वसुदेव	,,	१९.	माहेन्द्र	,,
२०	वसुन्धर	,,	२०.	वसुदेव	,,
२१	अचल	मपु० ४३ ५७	२१	वसुन्धर	,,
२२	मेरु	,,	२२	अचल	हपु० १२ ५९
२३	मेरुधन	,,	२३.	मेरु	,,
२४	मेरुभूति	,,	२४.	भूति	,,
२५	सर्वयश	,,	२५	सर्वसह	,,
२६	सर्वयज्ञ	,,	२६.	यज्ञ	,,
२७	सर्वगुप्त	मपु० ४३.५८	२७	सर्वगुप्त	,,
२८.	सर्वप्रिय	,,	२८	सर्वप्रिय	हपु० १२ ६०
२९	सर्वदेव	,,	२९	सर्वदेव	,,
३०	सर्वविजय	,,	३०.	विजय	,,
३१.	विजयगुप्त	,,	३१.	विजयगुप्त	,,
३२.	विजयमित्र	मपु० ४३ ५९	३२	विजयमित्र	,,
३३	विजयिल	,,	३३	विजयश्री	हपु० १२.६१
३४	अपराजित	,,	३४	पराख्य	,,

३५.	वसुमित्र	"
३६.	विश्वसेन	"
३७	साधुसेन	"
३८	सत्यदेव	मपु० ४३ ६०
३९.	देवसत्य	"
४०	सत्यगुप्त	"
४१	सत्यमित्र	"
४२.	निर्मल	"
४३.	विनीत	मपु० ४३ ६१
४४	सम्बर	"
४५	मुनिगुप्त	"
४६	मुनिदत्त	"
४७.	मुनियज्ञ	"
४८	मुनिदेव	"
४९.	गुप्तयज्ञ	"
५०	मित्रयज्ञ	मपु० ४३.६२
५१.	स्वयम्भू	"
५२	भगदेव	"
५३	भगदत्त	"
५४.	भगफल्गु	"
५५.	गुप्तफल्गु	"
५६	मित्रफल्गु	"
५७.	प्रजापति	मपु० ४३ ६३
५८.	सर्वसन्ध	"
५९.	वरुण	"
६०	धनपालक	"
६१.	मघवान्	"
६२	तेजोराशि	"
६३	महावीर	"
६४	महारथ	"
६५	विशालाक्ष	मपु० ४३.६४
६६	महाबाल	"
६७	शुचिशाल	"
६८	वज्र	"
६९.	वज्रसार	"
७०	चन्द्रचूल	"
७१	जय	मपु० ४३ ६५
७२	महारस	"
७३.	कच्छ	"
७४	महाकच्छ	"
७५	नमि	"
७६	विनमि	"
७७	बल	"

३५.	अपराजित	"
३६	वसुमित्र	"
३७.	वसुसेन	"
३८	साधुसेन	"
३९.	सत्यदेव	हपु० १२ ६२
४०	सत्यवेद	"
४१.	सर्वगुप्त	"
४२	मित्र	"
४३	सत्यवान्	"
४४	विनीत	हपु० १२ ६३
४५	संवर	"
४६.	ऋषिगुप्त	"
४७	ऋषिदत्त	"
४८	यज्ञदेव	"
४९	यज्ञगुप्त	"
५०.	यज्ञमित्र	हपु० १२.६४
५१	यज्ञदत्त	"
५२.	स्वायंभुव	"
५३	भागदत्त	"
५४	भागफल्गु	"
५५	गुप्त	"
५६	गुप्तफल्गु	"
५७	मित्रफल्गु	हपु० १२ ६५
५८	प्रजापति	"
५९.	सत्ययश	"
६०.	वरुण	"
६१	धनवाहिक	"
६२.	महेन्द्रदत्त	हपु० १२ ६६
६३	तेजोराशि	"
६४	महारथ	"
६५.	विजयश्रुति	"
६६.	महाबल	"
६७.	सुविशाल	हपु० १२.६७
६८	वज्र	"
६९	वैर	"
७०	चन्द्रचूड	"
७१.	मेघेश्वर	"
७२.	कच्छ	हपु० १२ ६८
७३	महाकच्छ	"
७४	सुकच्छ	"
७५	अतिबल	"
७६	भद्रावलि	"
७७.	नमि	"

क्र०	नाम गणधर	सन्दर्भ	क्र०	नाम गणधर	सन्दर्भ
७८	अतिबल	"	७८.	विनमि	"
७९.	भद्रबल	मपु० ४३.६६	७९	भद्रबल	हपु० १२ ६९
८०	नन्दी	"	८०.	नन्दी	"
८१	महाभागी	"	८१	महानुभाव	"
८२.	नन्दिमित्र	"	८२	नन्दिमित्र	"
८३	कामदेव	"	८३	कामदेव	हपु० १२ ७०
८४	अनुपम	"	८४	अनुपम	"

शेष तीर्थंकरों के प्रमुख गणधर

		महापुराण के अनुसार		हरिवंशपुराण के अनुसार	
क्र०	नाम तीर्थङ्कर	गणधर नाम व संख्या	सन्दर्भ	गणधर नाम एवं संख्या	सन्दर्भ
१	अजितनाथ	सिंहसेन आदि नब्बे गणधर,	मपु० ४८ ४३	सिंहसेन आदि नब्बे गणधर,	हपु० ६० ३४६
२	सभवनाथ	चारुषेण आदि १०५ गणधर	मपु० ४९ ४३	चारुदत्त आदि १०५ गणधर	हपु० ६० ३४६
३.	अभिनन्दननाथ	वज्रनाभि आदि १०३	मपु० ५० ५७	वज्र आदि १०३	मपु० ६० ३४७
४	सुमतिनाथ	चामर आदि ११६	मपु० ५१.७६	चमर आदि ११६	हपु० ६० ३४७
५	पद्मप्रभ	वज्रचामर आदि ११०	मपु० ५२ ५८	वज्रचमर आदि १११	हपु० ६० ३४७
६	सुपार्श्वनाथ	बल आदि ९५	मपु० ५३ ४६	बलि आदि ९५	हपु० ६० ३४७
७	चन्द्रप्रभ	दत्त आदि ९३	मपु० ५४ २४४	दत्तक आदि ९३	हपु० ६०,३४७
८	पुष्पदन्त	विदर्भ आदि ८८	मपु० ५५ ५२	वैदर्भ आदि ८८	हपु० ६० ३४७
९	शीतलनाथ	अनगार आदि ८१	मपु० ५६.५६	अनगार आदि ८१	हपु० ६०.३४७
१०	श्रेयासनाथ	कुन्थु आदि ७७	मपु० ५७.५४	कुन्थु आदि ७७	हपु० ६०.३४७
११	वासुपूज्य	धर्म आदि ६६	मपु० ५८ ४४	सुधर्मादि ६६	हपु० ६० ३४७
१२	विमलनाथ	मन्दर आदि ५५	मपु० ५९ ४८	मन्दरार्य आदि ५५	हपु० ६० ३४८
१३	अनन्तनाथ	जय आदि ५०	मपु० ६० ३७	जय आदि ५०	हपु० ६० ३४८
१४	धर्मनाथ	अरिष्टसेन आदि ४३	मपु० ६१.४४	अरिष्टसेन आदि ४३	हपु० ६० ३४८
१५	शान्तिनाथ	चक्रायुध आदि ३६	मपु० ६३.४८९	चक्रायुध आदि ३६	हपु० ६० ३४८
१६.	कुन्थुनाथ	स्वयभू आदि ३५	मपु० ६४ ४४	स्वयभू आदि ३५	हपु० ६० ३४८
१७.	अरनाथ	कुम्भार्य आदि ३०	मपु० ६५ ३९	कुन्थु आदि ३०	हपु० ६० ३४८
१८.	मल्लिनाथ	विशाख आदि २८	मपु० ६६ ५४	विशाख आदि २८	हपु० ६० ३४८
१९	मुनिसुव्रत	मल्लि आदि १८	मपु० ६७ ४९	मल्लि आदि १८	हपु० ६० ३४८
२०.	नमिनाथ	सुप्रभार्यादि १७	मपु० ६९ ६०	सोमक आदि १७	हपु० ६० ३४८
२१.	नेमिनाथ	वरदत्तादि ११	मपु० ७१ १८२	वरदत्तादि ११	हपु० ६० ३४९
२२	पार्श्वनाथ	स्वयभू आदि १०	मपु० ७३ १४९	स्वयभू आदि १०	हपु० ६०,३४९

महावीर के गणधर

महापुराण के अनुसार

१. इन्द्रभूति २ वायुभूति ३. अग्निभूति ४ सुधर्म
५ मौर्य ६ मौन्द्रय ७ पुत्र ८ मैत्रेय
९ अकम्पन १०. अन्धवेल ११ प्रभास

मपु० ७४ ३५६,३७४

हरिवंशपुराण के अनुसार

१. इन्द्रभूति २ अग्निभूति ३ वायुभूति ४ शुचिदत्त
५. सुधर्म ६ माण्डव्य ७. मौर्यपुत्र ८ अकम्पन
९ अचल १० मेदार्य ११ प्रभास

हपु० ३ ४१-४४

गर्भान्वय क्रियाएँ

१ आधान २ प्रीति ३ सुप्रीति ४. धृति
५ मोद ६. प्रियोद्भव ७. नामकर्म ८ बहिर्यान
९ निषद्या १० प्राशन ११ केशवाप १२ लिपि
१३ सख्यानसग्रह १४ उपनीति १५. व्रतचर्या १६. व्रतावतरण
१७ विवाह १८ वर्णलाभ १९ कुलचर्या २० गृहीशिता
२१ प्रशान्ति २२ गृहत्याग २३. दीक्षाद्य २४ जिनरूपता
२५. मौनाध्ययनवृत्तत्व २६. तीर्थकृत्भावना २७ गुरुस्थानाभ्युपगम
२८ गणोपग्रह २९ स्वगुरुस्थानसक्रान्ति ३० नि:सगत्वात्मभावना
३१ योगनिर्वाण सप्राप्ति ३२. योगनिर्वाणसाधन ३३ इन्द्रोपपाद
३४. इन्द्राभिषेक ३५. विधिदान ३६. सुखोदय
३७ इन्द्रत्याग ३८ इन्द्रावतार ३९ हिरण्योत्कृष्टजन्मता
४० मन्दरेन्द्राभिषेक ४१. गुरुपूजोपलम्भन ४२ यौवराज्य
४३ स्वराज्यप्राप्ति ४४ चक्रलाभ ४५ दिग्विजय
४६ चक्राभिषेक ४७. साम्राज्य ४८. निष्क्रान्ति
४९ योगसन्मह ५०. आर्हन्त्य ५१ तद्विहार
५२. योगत्याग ५३ अग्रनिर्वृत्ति

मपु० ३८ ५५-६३

गुणस्थान, मार्गणा, प्रमाद, भाषा और सत्य भेद

गुणस्थान-सूची

१ मिथ्यादृष्टि २ सासादन ३ सम्यग्मिथ्यात्व ४ असयत सम्यग्दृष्टि
५ सयतासयत ६. प्रमत्तसयत ७ अप्रमत्तसयत ८ अपूर्वकरण
९ अनिवृत्तिकरण १० सूक्ष्मसाम्पराय ११ उपशान्तकषाय
१२ क्षीणमोह १३ सयोगकेवली १४ अयोगकेवली

हपु०, ३ ८०-८३

मार्गणा-सूची

१ गति २ इन्द्रिय ३ काय ४ योग ५ वेद
६ कषाय ७ ज्ञान ८. सयम ९ सम्यक्त्व १० लेश्या
११ दर्शन १२ सज्ञित्व १३ भव्यत्व १४ आहार

हपु० ५८.३६-३७

प्रमाद-भेद

निद्रा	१
इंद्रिय	५
कषाय	४
विकथा	४
प्रणय (स्नेह)	१
	१५

हपु० ३ ८८

भाषा-भेद

१ अभ्याख्यान भाषा २ कलह भाषा ३ पैशुन्य भाषा
४ बद्धप्रलाप भाषा ५ रति भाषा ६. अरति भाषा
७. उपाधिवाक् भाषा ८ निकृति भाषा ९ अप्रणति भाषा
१० मोघ (मोष) भाषा ११ सम्यग्दर्शन भाषा १२. मिथ्यादर्शन-भाषा

हपु० १० ९१-९७

सत्य-भेद

१. नाम सत्य २. रूप सत्य ३ स्थापना सत्य
४. प्रतीत्यसत्य ५ सवृत्तिसत्य ६ सयोजना सत्य
७ जनपद सत्य ८ देश सत्य ९. भाव सत्य
१० समय सत्य

हपु० १० ९८-१०७

छप्पन-दिक्कुमारी-देवियाँ

मेरु पर्वत के चारो पर्वतो के मध्य विद्यमान आठकूटो मे क्रीडा करने वाली देवियाँ

१ भोगकरा २ भोगवती ३. सुभोगा ४. भोगमालिनी
५ वत्समित्रा ६. सुमित्रा ७ वारिषेणा ८ अचलावती

हपु० ५ २२६-२२७

मेरु की पूर्वोत्तर दिशा में विद्यमान कूटो की देवियाँ

१ मेघकरा २ मेघवती ३ सुमेघा ४ मेघमालिनी
५ तोयधारा ६. विचित्रा ७ पुष्पमाला ८ अनिन्दिता

हपु० ५ ३३२-३३३

रूचकवर पर्वत के पूर्व मे विद्यमान कूटो की देवियाँ

१. विजया २ वैजयन्ती ३ जयन्ती ४ अपराजिता
५ नन्दा ६. नन्दोत्तमा ७ आनन्दा ८ नान्दीवर्धना

हपु० ५.७०५-७०६

रूचकवर पर्वत के दक्षिण दिशावर्ती कूटो की वासिनी देवियाँ

१ स्वस्थिता २ सुप्रणिधि ३ सुप्रबुद्धा ४ यशोधरा
५ लक्ष्मीमती ६. कीर्तिमती ७ वसुन्धरा ८ चित्रादेवी

हपु० ५ ७०८-७१०

रूचकवर पर्वत के पश्चिम मे विद्यमान कूटो की देवियाँ

१ इलादेवी २. सुरादेवी ३. पृथिवीदेवी
४ पद्मावती देवी ५. काचनादेवी ६ नवमिका देवी
७ सीता देवी ८. भद्रिका देवी

हपु० ५ ७१२-७१४

रूचकवर पर्वत के उत्तर में विद्यमान कूटो की वासिनी देवियाँ

१ लम्बुसा २ मिश्रकेशी ३ पुण्डरीकिणी ४. वारुणी
५ आशा ६ ह्री ७. श्री ८ धृति

हपु० ५.७१५-७१७

रुचकवर पर्वत की विद्युत्कुमारी देवियाँ

१ पूर्व में	चित्रादेवी
२ दक्षिण में	कनकचित्रा
३ पश्चिम में	त्रिशिरस् देवी
४ उत्तर में	सूत्रामणि देवी

हपु० ५ ७१८-७२१

रुचकवर पर्वत वासिनी दिक्कुमारी देवियों की प्रधान देवियाँ

१. ऐशान	रुचका देवी
२ आग्नेय	रुचकोज्ज्वला देवी
३. नैऋत्य	रुचकाभा
४ वायव्य	रुचकप्रभा

हपु० ५ ७२२-७२४

तप-भेद

बाह्यतप

१. अनशन	२ अवमौदर्य	३ वृत्तिपरिसंख्यान
४ रसपरित्याग	५ तन-सन्ताप	६ विविक्तशयनासन

मपु० १८ ६७-६८

आभ्यन्तर तप

१ प्रायश्चित्त	२ विनय	३ वैयावृत्य	४ स्वाध्याय
५ व्युत्सर्ग	६ ध्यान		

मपु० १८ ६९, २० १९०-२०४

प्रायश्चित्त के भेद

१ आलोचना	२. प्रतिक्रमण	३ तदुभय	४ विवेक
५ व्युत्सर्ग	६ तप	७ छेद	८. परिहार
९ उपस्थान			

हपु० ६४ ३२-३७

विनय तप के भेद

१ ज्ञानविनय	२ दर्शनविनय	३. चारित्रविनय	४ उपचारविनय

हपु० ६४ ३८-४१

स्वाध्याय तप के भेद

१ वाचना	२. पृच्छना	३ अनुप्रेक्षा
४ आम्नाय	५ उपदेश	

हपु० ६० ४६-४८

व्युत्सर्ग तप के भेद

१. आभ्यान्तरोपाधि त्याग	२ बाह्योपाधि त्याग

हपु० ६० ४९-५०

वैयावृत्य तप के भेद

१ आचार्य	६ गण
२ उपाध्याय	७ कुल
३ तपस्वी	८ संघ
४ शैक्ष्य	९ साधु
५ ग्लान	१० मनोज्ञ

इन दस प्रकार के मुनियों की सेवा।

हपु ६० ४२-४५

देव-भेद

१ भवनवासी देव २ व्यन्तर देव ३ ज्योतिष्क देव ४ वैमानिक देव

वीवच १४ ६४

भवनवासी देव-भेद

१ असुरकुमार	२ नागकुमार	३ सुपर्णकुमार
४ द्वीपकुमार	५ उदधिकुमार	६ स्तनितकुमार
७ विद्युत्कुमार	८ दिक्कुमार	९ अग्निकुमार
१०. वायुकुमार		

हपु० ४ ६३-६५

ज्योतिष्क देव-भेद

१. चन्द्र	२. सूर्य	३ ग्रह	४ नक्षत्र	५ तारागण

हपु० ६ ७, वीवच० १४ ५२

व्यन्तर देव-भेद

१ किन्नर	२ किंपुरुष	३ महोरग	४. गन्धर्व
५ यक्ष	६ राक्षस	७. भूत	८ पिशाच

मपु०, ६३ १८५-१८६

(इनका एक साथ पुराणों में नामोल्लेख नहीं है)

वैमानिक कल्पोपपन्न देव-भेद

१ सौधर्म	२ ईशान	३. सनत्कुमार	४ माहेन्द्र
५. ब्रह्म	६. ब्रह्मोत्तर	७ लान्तव	८ कापिष्ठ
९ शुक्र	१०. महाशुक्र	११ सतार	१२ सहस्रार
१३ आनत	१४ प्राणत	१५ आरण	१६ अच्युत

हपु० ६ ३६-३८

वैमानिक कल्पातीत देव-भेद

१ नौ ग्रैवेयक— अधोग्रैवेयक— सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध
मध्य ग्रैवेयक— यशोधर, सुभद्र, सुविशाल
ऊर्ध्व ग्रैवेयक सुमन, सौमनस्य, प्रीतिंकर

२ नौ अनुदिश— आदित्य, अर्चि, अर्चिमालिनी, वज्र, वैरोचन, सौम्य, सौम्यरूपक, अंक, स्फुटिक।

३ पाँच अनुत्तर— विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित, सर्वार्थसिद्धि।

हपु० ६ ३९-४०, ५२-५३, ६३-६५

प्रत्येक निकाय में होनेवाले विशिष्ट देव-भेद

१ इन्द्र २ सामानिक ३ त्रायस्त्रिंश ४. पारिषद्
५. आत्मरक्ष ६ लोकपाल ७ अनीक ८ प्रकीर्णक
९. आभियोग्य १० किल्विषिक

मपु० २२ १४-२९, वीवच० १४ २५-४१

ध्यान-भेद

आर्तध्यान के भेद

१ इष्ट वियोगज २ अनिष्ट संयोगज ३ निदानप्रत्यय
४ वेदनोद्गमोद्भव मपु० २१ ३४-३५

रौद्रध्यान के भेद

१ हिंसानन्द २ मृषानन्द ३ स्तेयानन्द ४ सरक्षणानन्द

मपु० २१ ४३

धर्मध्यान के भेद

१ अपायविचय २ उपायविचय ३ जीवविचय
४ अजीवविचय ५ विपाकविचय ६. विरागविचय
७ भवविचय ८ संस्थानविचय ९. आज्ञाविचय
१० हेतुविचय मपु० २१ १४०-१६०, हपु० ५६ ४०-५०

शुक्लध्यान

१ पृथकत्ववितर्कवीचार २. एकत्ववितर्कवीचार

मपु० २१ १६८

परमशुक्लध्यान

१ सूक्ष्मक्रियापाति २ समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति

मपु० २१.१९५-१९६

परीषह तथा धर्म-भेद

परीषह

१ क्षुधा २ तृषा ३ शीत ४ उष्ण
५ दश मशक ६ नाग्न्य ७ अरति-रति ८ स्त्री
९. चर्या १० भू-शय्या ११. निषद्या १२ आक्रोश
१३. वध १४ याचना १५ अलाभ १६ अदर्शन
१७ रोग १८ तृणस्पर्श १९ प्रज्ञा २० अज्ञान
२१. मल २२ सत्कार-पुरस्कार

मपु० ११.१००-१०२

धर्म

१ उत्तम क्षमा २. उत्तम मार्दव ३. उत्तम आर्जव
४. उत्तम शौच ५ उत्तम सत्य ६. उत्तम संयम
७. उत्तम तप ८. उत्तम त्याग ९ उत्तम आकिंचन्य
१० उत्तम ब्रह्मचर्य

मपु० ११ १०३-१०४

शौच धर्म को पाँचवाँ धर्म भी कहा है—

मपु० ३६ १५७-१५८

पुद्गल, मंगल द्रव्य, नय और नरक भूमियाँ

पुद्गल के छ भेद

१ सूक्ष्मसूक्ष्म २. सूक्ष्म ३. सूक्ष्मस्थूल
४. स्थूल-सूक्ष्म ५ स्थूल ६. स्थूल-स्थूल

मपु० २४.१४९

अष्ट मंगल-द्रव्य

१ छत्र २ ध्वजा ३. कलश ४. चमर
५ सुप्रतिष्ठक/ठोना । ६. झारी ७. दर्पण ८. ताड-पखा

मपु० १३.३७,९१

नय

१. नैगम २ संग्रह ३ व्यवहार ४. ऋजुसूत्र
५ शब्द ६. समभिरूढ ७. एवभूत

हपु० ५८.४१

नरक-भूमियाँ	नरक-भूमियों के रूढ़नाम
१ रत्नप्रभा	धर्मा
२ शर्कराप्रभा	वशी
३ बालुकाप्रभा	शिला (मेघा)
४ पंकप्रभा	अंजना
५. धूमप्रभा	अरिष्टा
६ तम प्रभा	माघवी
७ महातम प्रभा	माधवी

मपु० १० ३१-३२

भरतेश द्वारा स्तुत वृषभदेव के १०८ नाम

(महापुराण पर्व २४.३०-४५)

क्रमांक नाम	श्लोक	क्रमांक नाम	श्लोक
१ अक्षय्य	३५	१५ अनश्वर	४४
२ अक्षर	३५	१६. अनादि	३४
३ अग्रय	३७	१७ अनित्वर	४४
४. अच्युत	३४	१८ अपार	४२
५. अज	३०	१९ अपारि	४२
६. अजर	३४	२० अनन्योपिमध्यम	४२
७ अणीयान्	४३	२१ अयोनिज	३४
८ अर्धमारि	३९	२२ अरज	३०
९. अधिज्योति	३४	२३. अरहा	४०
१० अधिदेव	३०	२४ अरिहा	४०
११ अध्वर	४१	२५ अर्हत्	४०
१२ अनक्ष	३५	२६ आज्य	४२
१३ अनक्षर	३५	२७ आत्मभू	३३
१४ अनन्त	३४	२८ आदिदेव	३०

क्रमांक नाम	श्लोक	क्रमांक नाम	श्लोक	क्रमांक नाम	श्लोक	क्रमांक नाम	श्लोक
२९ आदिपुरुष	३१	७० बुद्ध	३८	१११ शम्भव	३६	१२३ स्थेष्ठ	४३
३० आद्यकवि	३७	७१ ब्रह्मपदेश्वर	४५	११२. शम्भु	३६	१२४ स्रष्टा	३१
३१ इज्य	४२	७२ ब्रह्मविद्ध्येय	४५	११३. शंयु	३६	१२५ स्वयप्रभ	३५
३२ इन	३४	७३ ब्रह्मा	३०	११४. शवद	३६	१२६ स्वयभू	३५
३३ ईश	३४	७४. भगवान्	३३	११५ शरण्य	३७	१२७. हर	३६
३४ ईशान	३१	७५ भवान्तक	४४	११६ शान्त	४४	१२८. हरि	३६
३५ उत्तमोऽनुत्तर	४३	७६ भव्यभास्कर	३६	११७ शिव	४४	१२९. हवि	४१
३६ कञ्जसजात	३८	७७ भव्याब्जिनीबन्धु	४१	११८. सयोगी	३८	१३०. हविर्भुक्	४१
३७ कर्मारातिनिशुम्भन	४०	७८ भूष्णु	४४	११९ सिद्ध	३८	१३१ हव्य	४१
३८ कामजिज्जेता	४०	७९ मखज्येष्ठ	४१	१२०. सूक्ष्म	३८	१३२. हिरण्यगर्भ	३३
३९ गरिमास्पद	४३	८० मखाग	४१	१२१ स्थवीयान्	४३	१३३ होता	४१
४० गरिष्ठ	४३	८१ महान्	४४	१२२. स्थास्नु	४४		
४१ गुणाकर	४२	८२ महीयान्	४३				
४२ छन्दोविद्	३९	८३ महीयित	४४				
४३ छन्दकर्त्ता	३९	८४. महेश्वर	३०				
४४ जगद्भर्ता	३२	८५ मह्य	४४				
४५ जित्वर	४४	८६ मोहसुरारि	३६				
४६ जिन	४०	८७ यज्वा	४२				
४७ जिनकुञ्जर	३८	८८ योगविदावर	३७				
४८ जिष्णु	३५	८९ योगात्मा	३८				
४९ ज्येष्ठ	४३	९० योगी	३७				
५० तमोरि	३६	९१ वदतावर	३९				
५१ धर्मध्वज	४०	९२ वरेण्य	३७				
५२. धर्मनायक	३९	९३ वाचस्पति	३९				
५३ धर्मपति	४०	९४ विजिष्णु	३५				
५४ धर्मीद	३९	९५ विधाता	३१				
५५ ध्येय	४५	९६ विभु	३२				
५६. नित्य	४४	९७ वियोनिक	३३				
५७ निरजन	३८	९८. विश्वतोमुख	३१				
५८ निरुद्ध	३८	९९ विश्वतोऽक्षिमयज्योति	३२				
५९ परज्योति	३०	१०० विश्वदृक्	३२				
६० परमतत्त्व	३३	१०१ विश्वभुक्	३२				
६१ परमात्मा	३३	१०२. विश्वयोनि	३२				
६२ परमेष्ठी	३३	१०३ विश्वराट्	३१				
६३ पुण्यनायक	३७	१०४ विश्वव्यापी	३२				
६४ पुण्यगण्य	४२	१०५ विश्ववेट्	३१				
६५ पुमान	३१	१०६ विष्णु	३५				
६६ पुराण	३७	१०७ वृषभ	३३				
६७. पुरु	३१	१०८ वृषभध्वज	३३				
६८ पूत	३७	१०९ वेदविद्	३९				
६९ प्रभूष्णु	३०	११० शंकर	३६				

महापुराण के पर्व २४ श्लोक ३० से ४५ का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि चक्रवर्ती भरतेश ने १३३ नामों से वृषभदेव की स्तुति की है जबकि श्लोक ४६ में उनके द्वारा वृषभदेव के १०८ नामों का हृदय से स्मरण कर स्तुति किया जाना बताया गया है।

नामों का अर्थ-साम्य की दृष्टि से अध्ययन किए जाने पर ऐसा प्रतीत होता है कि १०८ नामों से अधिक आये २५ नामों की पुनरावृत्ति हुई है।

भिन्न-भिन्न नाम होते हुए भी जो नाम समान अर्थ में आये हैं, वे निम्न प्रकार हैं—

क्रमांक	सामान्य नाम	श्लोक	समान अर्थ में व्यवहृत नाम	श्लोक
१.	अक्षय्य	३५	नित्य	४४
२.	अक्षर	३५	अनश्वर	४४
३	अच्युत	३४	स्थेष्ठ	४३
४	अनित्वर	४४	स्थवीयान्	४३
५	अपारि	४२	अरिहा	४०
६	अयोनिज	३४	वियोनिक	३३
७	अरिहा	४०	मोहसुरारि	३६
८	आज्य	४२	हव्य	४१
९	इज्य	४२	मह्य	४४
१०	इन	३४	विभु	३२
११	ईश	३४	ईशान	३१
१२	परमज्योति	३०	अधिज्योति	३४
१३	परमात्मा	३३	भगवान्	३३
१४	पुण्यनायक	३७	पुण्यगण्य	४२
१५.	प्रभूष्णु	३०	भूष्णु	४४
१६	ब्रह्मा	३०	ब्रह्मपदेश्वर	४५
१७	ब्रह्मा	३०	हिरण्यगर्भ	३३
१८.	महान्	४४	महीयान्	४३
१९,	यज्वा	४२	होता	३१

२०	विधाता	३१	स्रष्टा	३१
२१	विश्वतोमुख	३१	विश्वदृक्	३२
२२	विष्णु	३५	हरि	३६
२३	वृषभ	३०	ज्येष्ठ	४३
२४.	शिव	४४	हर	३६
२५.	सूक्ष्म	३८	अणीयान्	४३

इस प्रकार दाईं ओर दर्शाए गये नाम उनके सामने दर्शाए गये नामो के समानार्थी हैं। ये नाम २५ हैं। ऊपर दर्शाए १३३ नामो में से २५ नाम कम कर देने से शेष १०८ वे नाम ज्ञात होते हैं जिनके द्वारा चक्री भरतेश ने वृषभदेव की स्तुति की थी।

भावनाएँ

महाव्रत-भावनाएँ

महापुराण के अनुसार अहिंसाव्रत-भावनाएँ	हरिवंशपुराण के अनुसार अहिंसाव्रत-भावनाएँ
१ मनोगुप्ति	१ सुवाग्गुप्ति
२ वचनगुप्ति	२ सुमनोगुप्ति
३ ईर्यासमिति	३ स्वकालेवीक्ष्य भोजन
४. कायनियन्त्रण	४ ईर्यासमिति
५ विष्वाणसमिति	५ आदाननिक्षेपणसमिति
मपु० २० १६१	हपु० ५८ ११८

सत्यव्रत-भावनाएँ

१. क्रोध त्याग	१ स्वक्रोध त्याग
२. लोभ त्याग	२ स्व लोभ त्याग
३ भय त्याग	३ स्व भीरुत्व त्याग
४ हास्य त्याग	४ स्व हास्य त्याग
५ सूत्रानुग वाणी बोलना	५. उद्भाषण (प्रशस्त वचन बोलना)
मपु० २० १६२	हपु० ५८ ११९

अचौर्यव्रत-भावनाएँ

१ मिताहार	१. शून्यागारवास
२ उचिताहार	२ विमोचितागारवास
३. अभ्यनुज्ञातग्रहण	३ अन्यानुपरोधित (परोपरोधाकरण)
४. अग्रहोऽन्यथा	४ भैक्ष्यशुद्धि
५ सतोषभक्तपान	५ (सधर्मा) विसवाद
मपु० २०.१६३	हपु० ५८.१२०

ब्रह्मचर्यव्रत-भावनाएँ

१ स्त्रीकथा त्याग	१ स्त्रीराग कथा श्रवण त्याग
२ स्त्री आलोकन त्याग	२. स्त्री-रम्याग-निरीक्षण त्याग
३ स्त्री ससर्ग त्याग	३ अग सस्कार का त्याग
४ प्राग्रतस्मृतयोजनवर्जन	४ वृष्य रस त्याग
५. वृष्यरस वर्जन	५. पूर्वरतस्मृति त्याग
मपु० २०.१६४	हपु० ५८.१२१

परिग्रहपरिमाणव्रत

इन्द्रिय-विषयभूत, सचित्त, अचित्त, पदार्थों में आसक्ति का त्याग।	इन्द्रियो के इष्ट-अनिष्ट विषयो में राग-द्वेष का त्याग करना।
मपु० २० १६५	हपु० ५८ १२२

सोलह कारण-भावनाएँ

१ दर्शनविशुद्धि	९ वैयावृत्य
२ विनयसम्पन्नता	१०. अर्हद् भक्ति
३ शीलव्रतेष्वनतीचार	११ आचार्य भक्ति
४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग	१२ बहुश्रुतभक्ति
५ सवेग	१३. प्रवचनभक्ति
६ शक्तितस् त्याग	१४ आवश्यकापरिहाणि
७ शक्तिस् तप	१५ मार्ग प्रभावना
८ साधु-समाधि	१६ प्रवचनवात्सल्य

मपु० ७ ८८,११ ६८-७८, पपु० २ १९२, हपु० ३४ १३१-१४९

धर्मध्यान की दस भावनाएँ

१ उत्तम क्षमा	६ उत्तम सयम
२ उत्तम मार्दव	७ उत्तम तप
३ उत्तम आर्जव	८ उत्तम त्याग
४ उत्तम सत्य	९ उत्तम आकिंचन्य
५ उत्तम शौच	१० उत्तम ब्रह्मचर्य

मपु० ३८ १५७-१५८

सम्यक्त्व भावनाएँ

१ सवेग	५. अस्मय
२ प्रशम	६. आस्तिक्य
३. स्थैर्य	७ अनुकम्पा
४. असमूढता	

मपु० २१ ९७

सामान्य चार भावनाएँ

१ मैत्री	३ कारुण्य
२ प्रमोद	४ माध्यस्थ

हपु० ५८.१२५

मिथ्या-दृष्टियाँ

मूलत दृष्टियाँ चार प्रकार की होती हैं। वे हैं—क्रियादृष्टि, अक्रिया-दृष्टि, अज्ञानदृष्टि और विनयदृष्टि। इनमें क्रियादृष्टि के एक सौ अस्सी, अक्रियादृष्टि के चौरासी, अज्ञानदृष्टि के सडसठ और विनयदृष्टि के बत्तीस भेद होते हैं। चारो की कुल दृष्टियाँ तीन सौ तिरेसठ होती हैं। इन दृष्टियो का विवरण निम्न प्रकार है—

क्रियावादी

नियति, स्वभाव, काल, देव और पौरुष इन पांच को स्वत, परत, नित्य और अनित्य इन चार से गुणित करने पर बीस भेद होते हैं तथा इन बीस भेदो को जीवादि नौ पदार्थों से गुणित करने पर इसके एक सौ अस्सी भेद होते हैं।

हपु० १० ४९-५१

अक्रियावादी

जीवादि सात तत्त्व-नियति, स्वभाव, काल, देव और पौरुष की अपेक्षा न स्वत हैं और न परत। अत सात तत्त्वो में नियति आदि पाँच का गुणा करने पर पैंतीस और पैंतीस में स्वत परत इन दो का गुणा करने पर सत्तर भेद हुए। जीवादि सात तत्त्व नियति और काल की अपेक्षा नही है अत सात में दो का गुणा करने पर चौदह भेद हुए। इन चौदह भेदो को पूर्वोक्त सत्तर भेदो में मिला दिये जाने पर अक्रियावादियो के चौरासी भेद होते हैं। हपु० १० ५२-५३

अज्ञानवादी

जीवादि नौ पदार्थों को सत्, असत्, उभय, अवक्तव्य, सद् अवक्तव्य, असद् अवक्तव्य और उभय अवक्तव्य इन सात भगो से कौन जानता है इस अज्ञानता के कारण नौ पदार्थों में सात भगो का गुणा करने से त्रेसठ भेद होते हैं। इनमें जीव की सत् उत्पत्ति को जाननेवाला कौन है? जीव असत् उत्पत्ति को जाननेवाला कौन है? जीव की सत्-असत् उत्पत्ति को जाननेवाला कौन है? और जीव की अवक्तव्य उत्पत्ति को जाननेवाला कौन है? भाव की अपेक्षा स्वीकृत इन चार भेदों के अज्ञानवादियो के कुल सडसठ भेद होते हैं। हपु० १० ५४-५८

विनयवादी

माता, पिता, देव, राजा, ज्ञानी, बालक, वृद्ध और तपस्वी इन आठो में प्रत्येक की मन, वचन, काय और दान से विनय किये जाने से इसके बत्तीस भेद होते हैं। हपु० १० ५९-६०

मुक्त जीव की विशेषताएँ

क्र०	नाम		
१	अनश्वरता	६ अनन्तदर्शनपना	११ अच्छेद्यपना
२	अचलता	७ अनन्तवीर्यपना	१२ अभेद्यपना
३	अक्षयपना	८ अनन्तसुखपना	१३ अक्षरपना
४	अव्याबाधपना	९ नीरजसपना	१४. अप्रमेयपना
५	अनन्तज्ञानीपना	१० निर्मलपना	मपु० ४२ ९५-१०३

योग और प्रतिमाएँ

प्रतिमाएँ

१ दर्शन-प्रतिमा	७ ब्रह्मचर्य-प्रतिमा
२. व्रत-प्रतिमा	८ आरम्भत्याग-प्रतिमा
३ सामायिक-प्रतिमा	९ परिग्रहत्याग-प्रतिमा
४ प्रोषधोपवास-प्रतिमा	१० अनुमतित्याग-प्रतिमा
५ सचित्तत्याग-प्रतिमा	११. उद्दिष्टत्याग-प्रतिमा
६ रात्रिभुक्तित्याग-प्रतिमा	

वीवच० १८ ३६-३७, ६०-७०

योग-भेद

हरिवशपुराणकार ने चार मनोयोग, चार वचनयोग और पाँच काययोग मिलकर तेरह प्रकार का बताया है। टीकाकार ने इनके निम्न नामो का उल्लेख किया है—

१ सत्यमनोयोग	८ अनुभयवचनयोग
२. असत्यमनोयोग	९ औदारिक काययोग
३. उभयमनोयोग	१० औदारिकमिश्रकाययोग
४ अनुभयमनोयोग	११ वैक्रियक काययोग
५ सत्यवचनयोग	१२ वैक्रियकमिश्रकाययोग
६ असत्यवचनयोग	१३ कार्मणकाययोग
७ उभयवचनयोग	

प्रमत्तसयतगुणस्थान में आहारक काययोग और आहारकमिश्र काययोग की सभावना रहने से योग के पन्द्रह भेद भी माने गये हैं।

हपु० ५८ १९७

व्रत और उनके अतिचार

व्रत

पंचाणुव्रत

१ अहिंसाणुव्रत	२ सत्याणुव्रत	३ अचौर्याणुव्रत
४ स्वदारसतोषव्रत	५ इच्छापरिमाणव्रत	

हपु० ५८ १३८-१४२

गुणव्रत

१ दिग्व्रत २. देशव्रत

३. अनर्थदण्डव्रत-पापोपदेश, अपध्यान, प्रमादाचरित, हिंसादान और दु श्रुति।

हपु० ५८.१४४-१४७

शिक्षाव्रत

१ सामायिक	३. उपभोग-परिभोगपरिमाण
२ प्रोषधोपवास	४ अतिथिसविभाग

हपु० ५८ १५३-१५८

अतिचार

अहिंसाणुव्रत के अतिचार

१ बन्ध-गतिरोध करना।

२ वध-दण्ड आदि से पीटना।

३ छेदन-कर्ण आदि अगो का छेदना।

४ अतिभारारोपण-अधिक भार लादना।

५ अन्नपान निरोध-समय पर भोजन-पानी नही देना।

हपु० ५८ १६४-१६५

सत्याणुव्रत के अतिचार

१ मिथ्योपदेश   २ रहोभ्याख्यान   ३ कूटलेखक्रिया
४ न्यासापहार   ५ साकारमन्त्रभेद

हपु० ५८ १६६-१७०

अचौर्याणुव्रत के अतिचार

१ स्तेनप्रयोग   २. तदाहृतादान   ३ विरुद्धराज्यातिक्रम
४ हीनाधिकमानोन्मान   ५ प्रतिरूपक व्यवहार

हपु० ५८ १७१-१७३

ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार

१. परविवाहकरण   २. अनंगक्रीडा   ३ गृहीतेत्वरिकागमन
४ अगृहीतेत्वरिकागमन   ५ कामतीव्राभिनिवेश

हपु० ५८ १७४-१७५

परिग्रहपरिमाणव्रत के अतिचार

१ हिरण्य-सवर्ण-प्रामाणातिक्रम
२ वास्तु क्षेत्र प्रामाणातिक्रम
३ धन-धान्य-प्रामाणातिक्रम
४ दासी-दास-प्रामाणातिक्रम
५ कुप्य-प्रामाणातिक्रम

मपु० २० १६५, हपु० ५८ १७६

दिग्व्रत के अतिचार

१ अधोव्यतिक्रम   २ तिर्यग्व्यतिक्रम   ३. ऊर्ध्वव्यतिक्रम
४ स्मृत्यन्तराधान   ५ क्षेत्रवृद्धि

हपु० ५८ १७७

देशव्रत के अतिचार

१ प्रेष्य-प्रयोग   २ आनयन   ३ पुद्गल क्षेप
४ शब्दानुपात   ५ रूपानुपात

हपु० ५८ १७८

अनर्थदण्डव्रत के अतिचार

१. कन्दर्प
२ कौत्कुच्य
३ मौखर्य
४ असमीक्ष्याधिकरण
५. उपभोगापरिभोगानर्थक्य

हपु० ५८ १७९

अनर्थदण्डव्रत के भेद

१ पापोपदेश
२ अपध्यान
३. प्रमादाचरित
४ हिंसादान
५. दुःश्रुति

हपु० ५८ १४६

सामायिक शिक्षाव्रत के अतिचार

१, मनोयोग दुष्प्रणिधान
२ वचनयोग दुष्प्रणिधान
३ काययोग दुष्प्रणिधान
४ अनादार
५ स्मृत्यनुपस्थान

हपु० ५८.१८०

अतिथिसंविभागव्रत के अतिचार

१ सचित्त-निक्षेप
२ सचित्तावरण
३ पर-व्यपदेश
४ मात्सर्य
५ कालातिक्रम

हपु० ५८.१८३

प्रोषधोपवास व्रत के अतिचार

१. अनवेक्ष्य मलोत्सर्ग
२. अनवेक्ष्यादान
३ अनवेक्ष्यसस्तरसक्रम
४ अनैकाग्रता
५ अनादर

हपु० ५८ १८१

सल्लेखना के अतिचार

१ जीविताशसा
२ मरणाशसा
३ निदान
४ सुखानुबन्ध
५ मित्रानुराग

हपु० ५८ १८४

उपभोगपरिभोग परिमाणव्रत के अतिचार

१ सचित्ताहार
२ सचित्त सबधाहार
३ सचित्त सन्मिश्राहार
४ अभिषवाहार
५ दुष्पक्वाहार

हपु० ५८ १८२

शलाका-पुरुष

वर्तमान चौबीस तीर्थङ्कर

१	ऋषभदेव	१३	विमलनाथ
२	अजितनाथ	१४	अनन्तनाथ
३	सम्भवनाथ	१५	धर्मनाथ
४	अभिनन्दननाथ	१६	शान्तिनाथ
५	सुमतिनाथ	१७	कुन्थुनाथ
६	पद्मप्रभ	१८	अरनाथ
७	सुपार्श्वनाथ	१९	मल्लिनाथ
८	चन्द्रप्रभ	२०	मुनिसुव्रतनाथ
९	पुष्पदन्त	२१.	नमिनाथ
१०	शीतलनाथ	२२.	नेमिनाथ
११	श्रेयासनाथ	२३	पार्श्वनाथ
१२	वासुपूज्य	२४.	महावीर

पपु० ५ २१२-२१६, हपु० ६० १३८-१४१

वर्तमान बारह चक्रवर्ती

१ भरत   २ सगर   ३ मघवा
४ सनत्कुमार   ५ शान्तिनाथ   ६ कुन्थुनाथ
७ अरनाथ   ८ सुभूम   ९ महापद्म
१० हरिषेण   ११ जयसेन   १२ ब्रह्मदत्त

हपु० ६० २८६-२८७, वीवच० १८ १०९-११०

वर्तमान ९ नारायण

१ त्रिपृष्ठ   २ द्विपृष्ठ   ३ स्वयम्भू
४ पुरुषोत्तम   ५ पुरुषसिंह   ६ पुण्डरीक
७ दत्त   ८ लक्ष्मण   ९ कृष्ण

हपु० ६०.२८८-२८९

वर्तमान ९ प्रतिनारायण

१ अश्वग्रीव	२. तारक	३ मेरुक
४. निशुम्भ	५ मधुकैटभ	६ बलि
७. प्रहरण	८ रावण	९ जरासन्ध

हपु० ६० २९१-२९२

वर्तमान ९ बलभद्र

१ विजय	२. अचल	३ सुधर्म
४ सुप्रभ	५ सुदर्शन	६ नान्दी
७ नन्दिमित्र	८ राम	९ पद्म

हपु० ६० २९०

वर्तमान तीर्थङ्कर—सामान्य परिचय

क्र० नाम तीर्थङ्कर	जन्म नगरी	माता	पिता	चैत्यवृक्ष	निर्वाण भूमि	जन्मतिथि
१ वृषभनाथ	अयोध्या	मरुदेवी	नाभिराय	वट	कैलास	चैत कृ० नवमी
२ अजितनाथ	,,	विजया	जितशत्रु	सप्तपर्ण	सम्मेदगिरि	माघ शु० नवमी
३ सम्भवनाथ	श्रावस्ती	सेना	जितारि	शाल	,,	मार्ग, शु० पूर्णिमा
४ अभिनन्दननाथ	अयोध्या	सिद्धार्था	सवर	सरल	,,	माघ, शु० द्वादशी
५. सुमतिनाथ	अयोध्या	सुमंगला	मेघप्रभ	प्रियंगु	,,	श्रावण, शु० एकादशी
६ पद्मप्रभ	कौशाम्बी	सुसीमा	धरण	,,	,,	कार्तिक कृ० त्रयोदशी
७ सुपार्श्वनाथ	काशी	पृथिवी	सुप्रतिष्ठ	शिरीष	,,	ज्येष्ठ, शु० द्वादशी
८ चन्द्रप्रभ	चन्द्रपुरी	लक्ष्मणा	महासेन	नागवृक्ष	,,	पौष, कृष्ण एकादशी
९ सुविधिनाथ	काकन्दी	रामा	सुग्रीव	शालि	,,	मार्ग शु० प्रतिपदा
१० शीतलनाथ	भद्रिलपुरी	सुनन्दा	दृढ़रथ	प्लक्ष	,,	मार्ग कृ० द्वादशी
११ श्रेयासनाथ	सिंहनादपुर	विष्णुश्री	विष्णुराज	तेंदू	,,	फाल्गुन, कृ० एकादशी
१२ वासुपूज्य	चम्पापुरी	जया	वसुपूज्य	पाटला	चम्पापुरी,	फाल्गुन कृ० चतु०
१३ विमलनाथ	काम्पिल्य	शर्मा	कृतवर्मा	जामुन	सम्मेदगिरि,	माघ, शु० चतुर्दशी
१४ अनन्तजित्	अयोध्या	सर्वयशा	सिंहसेन	पीपल	,,	ज्येष्ठ कृ० द्वादशी
१५ धर्मनाथ	रत्नपुर	सुव्रता	भानुराज	दधिपर्ण	,,	माघ शु० त्रयोदशी
१६ शान्तिनाथ	हस्तिनापुर	ऐरा	विश्वसेन	नन्दी	,,	ज्येष्ठ कृ० चतुर्दशी
१७ कुन्थुनाथ	,,	श्रीमती	सूर्य	तिलक	,,	वैशाख, शु० प्रतिपदा
१८ अरनाथ	,,	मित्रा	सुदर्शन	आम्र	,,	मार्ग शु० चतुर्दशी
१९ मल्लिनाथ	मिथिला	रक्षिता	कुम्भ	अशोक	,,	मार्ग० शु० एकादशी
२० मुनिसुव्रत	कुशाग्रनगर	पद्मावती	सुमित्र	चम्पक	,,	आसौज, शु० द्वादशी
२१ नमिनाथ	मिथिला	वप्रा	विजय	वकुल	,,	आषाढ कृ० दशमी
२२ नेमिनाथ	सूर्यपुर	शिवा	समुद्रविजय,	मेषशृंग	ऊर्जयन्त	वैशाख, शु० त्रयोदशी
२३ पार्श्वनाथ	वाराणसी	वर्मा	अश्वसेन	धव	सम्मेदगिरि,	पौष, कृ० एकादशी
२४ महावीर	कुण्डपुर	प्रियकारिणी	सिद्धार्थ,	शाल	पावापुरी,	चैत्र शु० त्रयोदशी

हपु० ६० १६९-२०५

शलाकेतर-पुण्य-पुरुष

वर्तमान कुलकर

१ प्रतिश्रुति	मपु० ३.६३	हपु० ७ १२५	८. चक्षुष्मान्	मपु० ३ १२०	हपु० ७ १५७
२ सन्मति	मपु० ३ ७७	हपु० ७ १४९	९ यशस्वान्	मपु० ३ १२५	हपु० ७ १६०
३ क्षेमकर	मपु० ३ ९०	हपु० ७ १५०	१० अभिचन्द्र	मपु० ३.१२९	हपु० ७ १६१
४ क्षेमधर	मपु० ३ १०३	हपु० ७ १५२	११ चन्द्राभ	मपु० ३ १३४	हपु० ७ १६३
५ सीमकर	मपु० ३ १०७	हपु० ७ १५४	१२ मरुदेव	मपु० ३ १३९	हपु० ७ १६८
६ सीमधर	मपु० ३ ११२	हपु० ७ १५५	१३ प्रसेनजित्	मपु० ३.१४६	हपु० ७ १६६
७ विमलवाहन	मपु० ३ ११७	हपु० ७ १५६	१४. नाभिराय	मपु० ३ १५२	हपु० ७ १६९

वर्तमान रुद्र

१ भीमावलि   २ जितशत्रु   ३ रुद्र   ४. विश्वानल
५ सुप्रतिष्ठक   ६. अचल   ७ पुण्डरीक   ८ अजितन्धर
९ अजितनाभि   १०. पीठ   ११ सात्यकिपुत्र

हपु० ६० ५३४-५३६

वर्तमान नारद

१ भीम   २ महाभीम   ३ रुद्र   ४ महारुद्र
५ काल   ६ महाकाल   ७ चतुर्मुख   ८ नरवक्त्र
९ उन्मुख

हपु० ६० ५४८-५४९

श्रुत-भेद

अंग-प्रविष्ट

अंग

१ आचारांग   २ सूत्रकृतांग   ३ स्थानांग
४ समवायांग   ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग   ६ ज्ञातृधर्मकथांग
७ श्रावकाध्ययनांग   ८ अन्तकृद्दशांग   ९. अनुत्तरोपपादिकदशांग
१० प्रश्नव्याकरणांग   ११ विपाकसूत्रांग   १२. दृष्टिवादांग

हपु० २ ९२-९५

पूर्व

१ उत्पादपूर्व   २. अग्रायणीयपूर्व   ३ वीर्यप्रवादपूर्व
४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व   ५ ज्ञानप्रवादपूर्व   ६ सत्यप्रवादपूर्व
७ आत्मप्रवादपूर्व   ८. कर्मप्रवादपूर्व   ९ प्रत्याख्यानपूर्व
१० विद्यानुवादपूर्व   ११ कल्याणपूर्व   १२ प्राणावायपूर्व
१३ क्रियाविशालपूर्व   १४ लोकबिन्दुपूर्व   हपु० २ ९७-१००

अंग बाह्यश्रुत

१ सामायिक   २ स्तवन   ३. वन्दना   ४ प्रतिक्रमण
५. वैनयिक   ६. कृतिकर्म   ७ दशवैकालिक   ८ उत्तराध्ययन
९ कल्पव्यवहार   १० कल्पाकल्प   ११ महाकल्प   १२ पुण्डरीक
१३ महापुण्डरीक   १४. निषद्यका

हपु० २.१०२-१०५, १० १२५-१२६

दृष्टिवादांग के भेद

१. परिकर्म   २ सूत्र   ३. अनुयोग   ४. पूर्वगत
५. चूलिका

हपु० १०.६१

परिकर्म के भेद

१ चन्द्रप्रज्ञप्ति   २ सूर्यप्रज्ञप्ति   ३ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति
४ द्वीपसमुद्रप्रज्ञप्ति   ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति   हपु० १०.६२

अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुएँ

१. पूर्वान्त   २. अपरान्त   ३. ध्रुव
४ अध्रुव   ५ अच्यवनलब्धि   ६ अध्रुव सम्प्रणधि
७. कल्प/महाकल्प   ८. अर्थ   ९ भौमावय
१० सर्वार्थकल्पक   ११. निर्वाण   १२ अतीतानागत
१३. सिद्धि   १४. उपाध्याय   हपु० १० ७७-८०

अग्रायणीयपूर्व के कर्मप्रकृति प्राभृत के योगद्वार

१ कृति   २ वेदना   ३. स्पर्श   ४ कर्म
५ प्रकृति   ६ बन्धन   ७ निबन्धन   ८ प्रक्रम
९ उपक्रम   १०. उदय   ११ मोक्ष   १२ संक्रम
१३ लेश्या   १४ लेश्याकर्म   १५. लेश्यापरिणाम   १६ सातासात
१७ दीर्घह्रस्व   १८ भवधारणा   १९. पुद्गलात्मा   २०. निधत्ता-निधत्तक
२१. सनिकाचित   २२. अनिकाचित   २३ कर्मस्थिति   २४. स्कन्ध

हपु० १० ८२-८६

श्रुतज्ञान के भेद

१ पर्याय   २ पर्याय-समास   ३. अक्षर
४ अक्षर-समास   ५ पद   ६. पद-समास
७. संघात   ८ संघात-समास   ९. प्रतिपत्ति
१०. प्रतिपत्ति-समास   ११ अनुयोग   १२ अनुयोग-समास
१३ प्राभृत-प्राभृत   १४ प्राभृत-प्राभृत-समास   १५. प्राभृत
१६ प्राभृत समास   १७ वस्तु   १८ वस्तु समास
१९. पूर्व   २० पूर्व समास   हपु० १० १२-१३

चूलिका के भेद

१ आकाशगता हपु० १० १२३-१२४   २. जलगता हपु० ६१.१२३
३ मायागता हपु० १० १२३   ४. रूपगता हपु० १०.६१,१२३
५, स्थलगता हपु० १० १२३-१२४

श्रोता—भेद एवं गुण

श्रोताओं की विविधता

उपमानो का नाम निर्देश करके उनके समान स्वभाव-भेद दर्शाकर श्रोता के चौदह भेद बताये गये हैं। उपमानो के नाम निम्न प्रकार हैं—

१ **मिट्टी**—शास्त्र श्रवण काल में कोमल परिणामी पश्चात् कठोर परिणामी।

२ **चलनी**—सारतत्त्व के परित्यागी, निःसार ग्राही।

३. **बकरा**—श्रृंगार का वर्णन सुनकर श्रृणानरूप परिणामी।

४ **बिलाव**—धर्मोपदेश सुनकर भी क्रूर-प्रवृत्ति-धारी।

५ **तोता**—धर्मोपदेश के शब्द-मात्र ग्राही।

६. **बगुला**—बाह्य से भद्र परिणामी अन्तरंग से कुटिल परिणामी।

७. **पाषाण**—उपदेश से अप्रभावित श्रोता।

८ **सर्प**—सदुपदेश का भी जिन पर कुप्रभाव पड़ता है।

९ **गाय**—कम सुनकर अधिक लाभ लेनेवाली।

१० **हंस**—सारग्राही।

११. **भैंसा**—उपदेश ग्राह्यता कम, कुतर्कों से सभा क्षोभित करने वाला।

१२. **फूटा घड़ा**—जिसके हृदय में उपदेश न ठहरे।

१३. **डांस**—उपदेश ग्रहण न करके सभी को व्याकुलित करनेवाला।

१४. **जोंक**—केवल अवगुण ग्राही।   मपु० १ १३८-१३९

श्रोता के आठ गुण

१ शुश्रूषा २ श्रवण ३ ग्रहण ४. धारण
५ स्मृति ६ ऊह ७ अपोह ८. निर्णीति

मपु० १ १४६

संसारी जीव की विशेषतायें

१ **परतन्त्रता**—कर्मबन्धन युक्त होना। मपु० ४२ ८३।

२ **चंचलता**—सुख दु ख जनित वेदना से उत्पन्न व्याकुलता। मपु० ४२ ८३-८४

३ **क्षयपना**—देव आदि पर्यायो में प्राप्त ऋद्धियो का क्षय होना। मपु० ४२.८४

४ **बाध्यता**—ताडना एव अनिष्ट वचनो की प्राप्ति। मपु० ४२ ८५

५ **परिक्षयत्व**—इन्द्रियो से उत्पन्न ज्ञान, दर्शन, वीर्य सुख का क्षय होना। मपु० ४२ ८५-८७

६ **रजस्वलत्व**—कर्म-कलकित होना। मपु० ४२ ८७

७ **छेद्यत्व**—शरीर के खण्ड-खण्ड हो सकना। मपु० ४२ ८८

८ **भेद्यत्व**—प्रहार आदि से शरीर का भेदा जा सकना। मपु० ४२ ८९

९ **मृत्यु**—प्राणी का परित्याग। मपु० ४२ ८९

१० **प्रमेयत्व**—चेतन का परिमित शरीर में रहना। मपु० ४२ ९०

११ **गर्भवास**—माता के गर्भ मे रहना। मपु० ४२ ९०

१२ **विलीनता**—एक शरीर से दूसरे शरीर में सक्रमण करना। मपु० ४२ ९१

१३ **क्षुभितत्व**—क्रोध आदि से आक्रान्त चित्त में क्षोभ उत्पन्न होना। मपु० ४२ ९२

१४ **विविधयोग**—नाना योनियो में भ्रमना। मपु० ४२ ९२

१५ **संसारावास**—चारो गतियो में परिवर्तन करते रहना। मपु० ४२ ९३

१६ **असिद्धता**—प्रत्येक जन्म में ज्ञानादि गुणो का अन्य-अन्य रूप होते रहना। मपु० ४२ ९३

सम्यक्त्व के भेद और अंग

सम्यक्त्व के भेद

१ आज्ञा-सम्यक्त्व २ मार्ग-सम्यक्त्व ३ उपदेश-सम्यक्त्व
४. सूत्र-सम्यक्त्व ५. बीज-सम्यक्त्व ६ सक्षेप-सम्यक्त्व
७ विस्तार-सम्यक्त्व ८ अर्थोत्पन्न-सम्यक्त्व ९ अवगाढ-सम्यक्त्व
१०. परमावगाढ-सम्यक्त्व

वीवच० १९.१४१-१४२

सम्यक्त्व के आठ अंग

१, नि.शकित २. नि काक्षित ३ निर्विचिकित्सा
४. अमूढत्व ५. उपगूहन ६ स्थितिकरण
७. धर्म-वात्सल्य ८ प्रभावना

वीवच० ६ ६३-७०

सौधर्मेन्द्र द्वारा स्तुत वृषभदेव के १००८ नामों की सूची

(महापुराण पर्व २५ श्लोक १०० से २१७ के अन्तर्गत)

क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक स०
१ अक्षय	११४	३९ अधिगुरु	१७१
२ अक्षय्य	१७३	४० अधिदेवता	१९२
३. अक्षर	१०१	४१ अधिप	१५७, १८९
४ अक्षोभ्य	११४	४२. अधिष्ठान	२०३
५. अखिलज्योति	२०९	४३ अध्यात्मगम्य	१८८
६ अगण्य	१३७	४४ अध्वर	१६६
७ अगति	१४२	४५ अध्वर्यु	१६६
८ अगम्यात्मा	१८८	४६ अनर्घ	१७२, १८६
९ अगाह्य	१४९	४७. अनणु	१७६
१० अगोचर	१८७	४८ अनत्यय	१७१
११ अग्रज	१५०	४९ अनन्त	१०९, १६०
१२ अग्रणी	११५	५० अनन्तग	१२९
१३ अग्रय्	१५०	५१ अनन्तजित्	१०४
१४ अग्राह्य	१७३	५२. अनन्तदीप्ति	११३
१५ अग्रिम	१५०	५३ अनन्तधामर्षि	१८६
१६ अचल	१२८	५४ अनन्तर्द्धि	१५०
१७ अचलस्थिति	११४	५५ अनन्तशक्ति	२१५
१८ अचिन्त्य	१६४	५६ अनन्तात्मा	१०७
१९ अचिन्त्यर्द्धि	१५०	५७ अनन्तौज	२०५
२० अचिन्त्यवैभव	१४०	५८ अनलप्रभ	१९८
२१. अचिन्त्यात्मा	१०४	५९ अनश्वर	१०१
२२ अच्छेद्य	२१५	६० अनादिनिधन	१४७
२३ अच्युत	१०९	६१ अनामय	११४, २१७
२४. अज	१०६	६२ अनाश्वान्	१७१
२५ अजन्मा	१०६	६३ अनिद्रालु	२०७
२६ अजर	१०९	६४ अनिन्द्रिय	१४८
२७ अजर्य	१०९	६५ अनिन्द्य	१६७
२८ अजात	१७१	६६ अनीदृक्	१८७
२९ अजित	१६९	६७ अनीश्वर	१०३
३० अणिष्ठ	१२२	६८ अनुत्तर	१३३
३१ अणोरणीयान्	१७६	६९. अन्तकृत्	१६८
३२ अतन्द्रालु	२०७	७० अपारधी	२१२
३३ अतीन्द्र	१४८	७१ अपुनर्भव	१००
३४ अतीन्द्रिय	१४८	७२ अप्रतर्क्यात्मा	१८०
३५ अतीन्द्रियार्थदृक	१४८	७३ अप्रतिघं	२०१
३६ अतुल	१४०	७४ अप्रतिष्ठ	२०३
३७ अघमंघक्	१२६	७५ अप्रमेयात्मा	१६३
३८. अधिक	१७१	७६ अबन्धन	१०४

क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० स० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०
७७ अभयकर	२११	११८ आत्मा	१६५	१५९ कान्तिमान्	२०२	२०० गम्यात्मा	१८८
७८ अभव	११८	११९. आदित्यवर्ण	१९७	१६० कामद्	१६७	२०१. गरिष्ठ	१२२
७९ अभिनन्दन	१६७	१२० आदिदेव	१९२	१६१ कामधेनु	१६७	२०२. गरिष्ठगी	१२२
८० अभीष्टद्	१६८	१२१ आनन्द	१६७	१६२ कामन	१७२	२०३ गरीयसामाद्यगुरु	१७६
८१. अमेद्य	१७१	१२२ आप्त	२०९	१६३. कामहा	१६७	२०४ गहन	१४९
८२ अभ्यग्र	१५०	१२३ इज्याहं	१७४	१६४ कामारि	१६५	२०५. गिरापति	१७९
८३ अभ्यर्च्य	१९०	१२४ इत्य	१३४	१६५ कामितप्रद	२०२	२०६ गुण	१३६
८४ अमल	११२	१२५ इन	१८२	१६६ काम्य	१६७	२०७ गुणग्राम	१३७
८५ अमित	१६९	१२६ ईशान	११२	१६७ कारण	१४९	२०८ गुणज्ञ	१३५
८६ अमितज्योति	२०५	१२७ ईशिता	१८२	१६८ कूटस्थ	११४	२०९. गुणनायक	१३५
८७ अमितशासन	१६९	१२८. उत्तम	१७१	१६९ कृत्कृत्य	१३०	२१० गुणाकर	१३५
८८. अमूर्त	१८७	१२९ उत्सन्नदोष	२११	१७० कृतक्रतु	१३०	२११ गुणादरी	१३६
८९ अमूर्तात्मा	१२८	१३० उदारधी	१७९	१७१ कृतक्रिय	१३४	२१२. गुणाम्भोधि	१३५
९०. अमृत	१२७	१३१ उद्भव	१४९	१७२ कृतज्ञ	१८०	२१३ गुणोच्छेदी	१३६
९१. अमृतात्मा	१३०	१३२ उपमाभूत	१८७	१७३ कृतपूर्वांगविस्तर	१९२	२१४ गुण्य	१३७
९२ अमृतोद्भव	१३०	१३३ ऋत्विक्	१२७	१७४ कृतलक्षण	१८०	२१५ गुप्तिभृत्	१७८
९३ अमृत्यु	१३०	१३४. ऋषभ	१४३	१७५ कृतान्तकृत्	१२९	२१६ गुरु	१६०
९४ अमेय	१५७	१३५ एक	१८७	१७६ कृतान्तान्त	१२९	२१७ गुह्य	१४९
९५ अमेयर्द्धि	१५०	१३६ एकविद्य	१४१	१७७ कृतार्थ	१३०	२१८ गूढगोचर	१९६
९६. अमेयात्मा	१०४	१३७. क	१३३	१७८ कृती	१३०	२१९ गूढात्मा	१९६
९७ अमोघ	२०१	१३८. कनकप्रभ	१९७	१७९ कृपालु	२१६	२२० गोप्ता	१७८
९८ अमोघवाक्	१८४	१३९ कनत्काचनसन्निभ	१९९	१८० केवलज्ञानवीक्षण	२१५	२२१ गोप्य	१९६
९९ अमोघशासन	१८४	१४० कर्त्ता	१४९	१८१ केवली	११२	२२२ ग्रामणी	११५
१००. अमोघाज्ञ	१८४	१४१ कर्मकाष्ठाशुशुक्षाण	२१४	१८२ क्षम	२०१	२२३. चतुरानन	१७४
१०१ अमोमुह्	२०४	१४२ कर्मठ	२१४	१८३. क्षमी	१७३	२२४ चतुरास्य	१७४
१०२. अयोनिज	१०६	१४३ कर्मण्य	२१४	१८४ क्षान्त	१६१	२२५ चतुर्मुख	१७४
१०३. अरजा	११२	१४४. कर्मशत्रुघ्न	२०६	१८५ क्षान्तिपरायण	१८९	२२६ चतुर्वक्त्र	१७४
१०४ अरिंजय	१६७	१४५. कर्महा	१८३	१८६ क्षान्तिभाक्	१२६	२२७ चराचरगुरु	१९६
१०५ अर्हत्	११२	१४६ कलातीत	१९४	१८७. क्षेत्रज्ञ	१२१	२२८. चिन्तामणि	१९८
१०६ अलेप	१८५	१४७ कलाधर	१९४	१८८ क्षेमकर	१७३	२२९ जगच्चूडामणि	२०६
१०७ अविज्ञेय	१८०	१४८ कलिघ्न	२०६	१८९. क्षेमकृत्	१६५	२३० जगज्ज्येष्ठ	१०३
१०८ अव्यय	१०९	१४९ कलिलघ्न	१९४	१९० क्षेमधर्मपति	१७३	२३१ जगज्ज्योति	११४, २०७
१०९ अशोक	१३३	१५० कल्पवृक्ष	२१३	१९१ क्षेमशासन	१६५	२३२ जगत्पति	१०४, ११८
११० असख्येय	१६३	१५१. कल्य	१९३	१९२ क्षेमी	१७३	२३३ जगत्पाल	२१७
१११ असग	१२४	१५२ कल्याण	१९३	१९३ गणज्येष्ठ	१३५	२३४ जगदग्रज	१९५
११२ असगात्मा	१२६	१५३ कल्याणप्रकृति	१९४	१९४ गणाग्रणी	१३५	२३५ जगदादिज	१४७
११३ असभूष्णु	११०	१५४ कल्याणलक्षण	१९३	१९५ गणाधिप	१३५	२३६ जगद्गर्भ	१८१
११४. असस्कृत-सुसस्कार	१६८	१५५. कल्याणवर्ण	१९३	१९६ गण्य	१३५	२३७ जगद्धित	१०८
११५ अहमिन्द्रार्च्य	१४८	१५६ कवि	१४३	१९७ गतस्पृह	१८५	२३८ जगद्धितैषी	१९५
११६ आत्मज्ञ	१६२	१५७. कान्त	१६८	१९८ गति	१४२	२३९ जगद्योनि	१३४
११७ आत्मभू	१००	१५८ कान्तगु	१६८	१९९. गम्भीरशासन	१८२	२४०. जगद्बन्धु	१९५

क्र० सं० नाम	श्लोक संख्या	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०
२४१ जगद्विभु	१९५	२८२ त्यागी	१८४	३२३ द्रढीयान्	१८२	३६४ निरम्बर	२०४
२४२ जगन्नाथ	१९५	२८३ त्राता	१४२	३२४ धर्मघोषण	१८३	३६५ निरस्तैना	१३९
२४३ जरन	१२४	२८४. त्रिकालदर्शी	१९१	३२५ धर्मचक्रायुध	१८३	३६६ निराबाध	११३
२४४ जागरूक	२०७	२८५ त्रिकालविषयार्थदृक्	१८८	३२६ धर्मचक्री	१०६	३६७ निराशस	२०४
२४५ जातरूप	१४६	२८६ त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रि	१९०	३२७ धर्मतीर्थकृत्	११५	३६८ निरास्रव	१३९
२४६ जातरूपाभ	२००	क्र८७ त्रिजगत्परमेश्वर	११०	३२८ धर्मदेशक	२१६	३६९ निराहार	१३९
२४७ जितकामारि	१६९	२८८ त्रिजगद्वल्लभ	१९०	३२९ धर्मनेमि	१८३	३७० निरुक्तवाक्	२०९
२४८ जितक्रोध	१६९	२८९ त्रिजगन्मगलोदय	१९०	३३०. धर्मपति	११५	३७१ निरुक्तोक्ति	११[illegible]
२४९ जितक्लेश	१६९	२९० त्रिदशाध्यक्ष	१८२	३३१ धर्मपाल	२१७	३७२ निरुत्तर	१७
२५० जितजेय	१३४	२९१ त्रिनेत्र	२१५	३३२ धर्मयूप	१८३	३७३ निरुत्सुक	१७२
२५१ जितमन्मथ	२०८	२९२ त्रिपुरारि	२१५	३३३ धर्मराज	२०७	३७४ निरुद्धव	१८५
२५२ जिताक्ष	२०८	२९३ त्रिलोकाग्रशिखामणि	१९०	३३४. धर्मसाम्राज्यनायक	२१७	३७५ निरुपद्रव	१३८
२५३ जितानग	२१६	२९४ त्रिलोचन	२१५	३३५ धर्माचार्य	२१६	३७६ निरुपप्लव	१३९
२५४ जितान्तक	१६९	२९५ त्र्यक्ष	२१५	३३६ धर्मात्मा	११५	३७७ निर्गुण	१३६
२५५ जितामित्र	१६९	२९६ त्र्यम्बक	२१५	३३७. धर्माध्यक्ष	१११	३७८ निर्ग्रन्थेश	२०४
२५६ जितेन्द्रिय	१८६	२९७ दक्ष	१६६	३३८ धर्माराम	१३७	३७९ निर्द्वन्द्व	१३८
२५७ जिन	१०४	२९८ दक्षिण	१६६	३३९ धर्म्य	११५	३८०. निर्धूतागस्	१३९
२५८ जिनेन्द्र	१७०	२९९ दमतीर्थेश	१६४	३४० धाता	१०२	३८१ निर्निमेष	१३९
२५९ जिनेश्वर	१०३	३०० दमी	१८९	३४१ धातु	१७४	३८२ निर्मद	१३८
२६० जिष्णु	१०४	३०१. दमीश्वर	१११, १७८	३४२ धिषण	१७९	३८३ निर्मल	१२८, १८४
२६१ जेता	१०६	३०२ दयागर्भ	१८१	३४३ धीन्द्र	१४८	३८४ निर्मोह	१३८
२६२ ज्ञानगर्भ	१८१	३०३ दयाध्वज	१०६	३४४ धीमान्	१७९	३८५. निर्लेप	१२८
२६३ ज्ञानचक्षु	२०४	३०४. दयानिधि	२१६	३४५ धीर	१८२	३८६. निर्विघ्न	२११
२६४ ज्ञानधर्मदमप्रभु	१३२	३०५ दयायाग	१८३	३४६ धीरधी	२१२	३८७ निश्चल	२११
२६५ ज्ञाननिग्राह्य	१७३	३०६ दवीयान	१७६	३४७ धीश	१४१	३८८ निष्कलक	१३९
२६६ ज्ञानसर्वग	१६४	३०७ दान्त	१८९	३४८. धीश्वर	१०९	३८९ निष्कलकात्मा	१८५
२६७ ज्ञानात्मा	११३	३०८ दान्तात्मा	१६४	३४९ धुर्य	१५९	३९० निष्कल	११३
२६८ ज्ञानाब्धि	२०५	३०९ दिग्वासा	२०४	३५० ध्यानमहाधर्म	१६२	३९१ निष्किंचन	२०४
२६९ ज्येष्ठ	१२२	३१० दिव्य	१११	३५१ ध्यानगम्य	१७३	३९२ निष्क्रिय	१३९
२७० ज्योतिर्मूर्ति	२०५	३११. दिव्यभाषापति	१११	३५२ ध्येय	१०८	३९३ निष्टप्तकनकच्छाय	१९९
२७१ ज्वलज्ज्वलनसप्रभ	१९६	३१२ दिष्टि	१८७	३५३ नन्द	१६७	३९४ निःसपत्न	१८६
२७२ तनुनिर्मुक्त	२१०	३१३ दीप्त	२ ६	३५४ नन्दन	१६७	३९५ नीरजस्क	१८५
२७३ तन्त्रकृत्	१२९	३१४ दीप्तकल्याणात्मा	१९४	३५५ नयोत्तुग	१८०	३९६ नेता	११५
२७४ तपनीयनिभ	१९८	३१५ दुन्दुभिस्वन	१७०	३५६ नानैकतत्त्वदृक्	१८७	३९७ नेदीयान्	१७६
२७५ तप्तचामीकरच्छवि	१९८	३१६ दुराधर्ष	१७२	३५७ नाभिज	१७१	३९८ नैक	१८७
२७६ तप्तजाम्बूनदद्युति	२००	३१७ दूरदर्शन	१७६	३५८ नाभिनन्दन	१७०	३९९ नैकधर्मकृत्	१८०
२७७ तमोपह	२०५	३१८ दृढव्रत	१९१	३५९ नाभेय	१७१	४०० नैकरूप	१८०
२७८ तीर्थकृत्	११२	३१९ देव	१८३	३६० नित्य	१३०	४०१ नैकात्मा	१८०
२७९ तुग	१९८	३२० देवदेव	१९५	३६१ नियमितेन्द्रिय	२१३	४०२ न्यायशास्त्रकृत्	११५
२८० तेजोमय	२०५	३२१ दैव	१८७	३६२ निरजन	११४	४०३. पचब्रह्ममय	१०५
२८१ तेजोराशि	२०५	३२२ द्युम्नाभ	२००	३६३ निरक्ष	१४४	४०४ पति	१४१

क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक स०	क्र० सं० नाम	श्लोक स०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०
४०५ पद्मगर्भ	१८१	४४६ पुराणाद्य	१९२	४८७ प्रभूतविभव	११८	५२८ ब्रह्मोद्यावित	१०७
४०६. पद्मनाभि	१३३	४४७. पुरातन	११०	४८८. प्रभूतात्मा	११८	५२९ भगवान्	११२
४०७ पद्मयोनि	१३४	४४८ पुरु	१४३	४८९ प्रभुष्णु	१०९	५३० भदन्त	२१३
४०८ पद्मविष्ठर	१३३	४४९. पुरुदेव	१९२	४९० प्रमाण	१६६	५३१. भद्र	२१३
४०९ पद्मसम्भूति	१३३	४५० पुरुप	१९२	४९१ प्रमामय	२०७	५३२ भद्रकृत्	२१३
४१० पद्मेश	१३३	४५१ पुष्करेक्षण	१४४	४९२ प्रवक्ता	२१०	५३३ भर्ता	११६
४११. परज्योति	११०, १११	४५२ पुष्कल	१४४	४९३ प्रशमाकर	१६३	५३४. भर्माभ	११७
४१२ परब्रह्म	१३१	४५३. पुष्ट	२०१	४९४. प्रशमात्मा	१३२	५३५ भव	११७
४१३ पर	१०५	४५४ पुष्टिट्	२०१	४९५ प्रशान्त	१८६	५३६ भवतारक	१४९
४१४ परतर	१०५	४५५ पूजार्ह	११२	४९६ प्रशान्तरसशैलूष	२०८	५३७ भवान्तक	११७
४१५ परम	१४२, १६५	४५६ पूज्य	१९१	४९७ प्र ान्तात्मा	१३२	५३८ भवोद्भव	१०९
४१६ परमात्मा	११०	४५७ पूत	१३६	४९८ प्रशान्तारि	१०७	५३९ भव्यपेटकनायक	२०८
४१७ परमानन्द	१७०, १८९	४५८ पूतवाक्	१११	४९९ प्रशास्ता	२०१	५४०. भव्यबन्धु	१०४
४१८ परमेश्वर	१४९	४५९ पूतशासन	१११	५०० प्रष्ठ	१२२	५४१ भाव	११७
४१९. परमेष्ठी	१०५	४६०. पूतात्मा	१११	५०१ प्रसन्नात्मा	१३२	५४२ भास्वान्	११७
४२० परमोदय	१६५	४६१ पूर्व	१९२	५०२ प्राशु	२१४	५४३. भिषग्वर	१४२
४२१ परात्मज्ञ	१८९	४६२ पृथिवीमूर्ति	१२६	५०३ प्राकृत	१६८	५४४ भुवनेश्वर	११३
४२२. परापर	१८९	४६३. पृथु	२०३	५०४ प्राग्रहर	१५०	५४५ भुवनैकपितामह	१४३
४२३ परार्ध्य	१४९	४६४ प्रकाशात्मा	१९६	५०५ प्राग्र्य	१५०	५४६ भूतनाथ	११८
४२४ परिवृढ	१४१	४६५ प्रकृति	१६५	५०६ प्राज्ञ	२१३	५४७ भूतभव्यभवद्भर्ता	१२१
४२५ पवित्र	१४२	४६६ प्रक्षीणबन्ध	१६५	५०७ प्राण	१६६	५४८ भूतभावन	११७
४२६ पाता	१४२	४६७ प्रजापति	११३	५०८ प्राणतेश्वर	१६६	५४९. भूतभृत्	११७
४२७ पापापेत	१३८	४६८ प्रजाहित	२०१	५०९ प्राणद	१६६	५५० भूतात्मा	११७
४२८ पारग	१४९	४६९ प्रज्ञापारमित	२१३	५१० प्राप्तमहाकल्याणपचक	१५५	५५१ भोक्ता	१००
४२९ पावन	१४२	४७०. प्रणत	१६६	५११ प्रेष्ठ	१२२	५५२ भ्राजिष्णु	१०९
४३० पिता	१४२	४७१ प्रणव	१६६	५१२ बहिष्ठ	१२२	५५३. मगल	१८६
४३१ पितामह	१४२	४७२ प्रणिधि	१६६	५१३ बन्धमोक्षज्ञ	२०८	५५४ मनीषी	१७९
४३२ पुण्य	१३५	४७३ प्रणेता	११५	५१४ बहुश्रुत	१२०	५५५ मनु	१७१
४३३ पुण्यकृत्	१३७	४७४ प्रतिष्ठाप्रसव	१४३	५१५ बालाकाम	१९८	५५६, मनोज्ञाग	१८२
४३४ पुण्यगी	१३६	४७५ प्रतिष्ठित	२०३	५१६ बुद्ध	१०८	५५७. मनोहर	१८२
४३५ पुण्यधी	१३७	४७६ प्रत्यग्र	१५०	५१७. बुद्धबोध्य	१४५	५५८ मन्ता	१५८
४३६ पुण्यनायक	१३६	४७७ प्रत्यय	१७२	५१८ बुद्धसन्मार्ग	२१२	५५९ मन्त्रकृत्	१२९
४३७ पुण्यराशि	२१७	४७८ प्रथित	२०३	५१९ बृहद्बृहस्पति	१७९	५६० मन्त्रमूर्ति	१२९
४३८ पुण्डरीकाक्ष	१४४	४७९ प्रयोयान्	२०३	५२० ब्रह्मतत्त्वज्ञ	१०७	५६१ मन्त्रवित्	१२९
४३९ पुण्यवाक्पूत	१३६	४८० प्रदीप्त	२००	५२१ ब्रह्मनिष्ठ	१३१	५६२ मन्त्री	१२९
४४० पुण्यशासन	१३७	४८१ प्रधान	१६५	५२२ ब्रह्मयोनि	१०६	५६३ मलघ्न	२०९
४४१ पुण्यापुण्यनिरोधक	१३७	४८२ प्रबुद्धात्मा	१०८	५२३ ब्रह्मविद्	१०७	५६४ मन्हा	१८६
४४२. पुमान्	१४२	४८३ प्रभव	११७	५२४. ब्रह्मसम्भव	१३१	५६५ महर्धिक	१८५
४४३ पुराण	१९२	४८४. प्रभविष्णु	१०९	५२५ ब्रह्मा	१०५	५६६ महर्धि	१५९
४४४ पुराणपुरुष	१४३	४८५. प्रभास्वर	१८१	५२६ ब्रह्मात्मा	१३१	५६७ महनाधाम	१५९
४४५ पुराणपुरुषोत्तम	१३२	४८६ प्रभु	१००	५२७ ब्रह्मोट	१३१	५६८ महापति	१५८

क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०
५६९ महाकर्मारिहा	१६२	६१०. महाभवाब्धिसन्तारी	१६१	६५१. मान्य	१५७	६९२ लोकधाता	१९१
५७० महाकवि	१५३	६११. महाभाग	१५३	६५२ मारजित	२१०	६९३. लोकपति	२१२
५७१ महाकान्ति	१५४	६१२ महाभूतपति	१६०	६५३ मुक्त	११३	६९४ लोकवत्सल	२११
५७२ महाकान्तिधर	१५७	६१३. महाभूति	१५२	६५४. मुनि	१४१	६९५ लोकाध्यक्ष	१७८
५७३ महाकारुणिक	१५८	६१४ महामूर्त	१५६	६५५ मुनिज्येष्ठ	२०२	६९६. लोकालोकप्रकाशक	२०६
५७४ महाकीर्ति	१५४	६१५ महामति	१५३	६५६ मुनीन्द्र	१७०	६९७ लोकेश	१९१
५७५ महाक्रोधरिपु	१६०	६१६, महामन्त्र	१५८	६५७ मुनीश्वर	१८३	६९८ लोकोत्तर	२१२
५७६ महाक्लेशांकुश	१६०	६१७ महामहपति	१५५	६५८ मुमुक्षु	२०८	६९९ वचसामीश	२१०
५७७ महाक्षम	१५६	६१८ महामहा	१५४	६५९ मूर्तिमान्	१८७	७०० वदतांवर	१४६
५७८ महाशान्ति	१५३	६१९. महामुनि	१५६	६६० मूलकर्ता	२०९	७०१ वन्द्य	१६७
५७९. महागुण	१५४	६२० महामैत्री	१५७	६६१ मूलकारण	२०१	७०२ वरद	१४२
५८० महागुणाकर	१६१	६२१. महामोहाद्रिसूदन	१६१	६६२ मृत्युञ्जय	१३०	७०३ वरप्रद	२१३
५८१ महाघोष	१५८	६२२ महामौनी	१५६	६६३. मोक्षज्ञ	२०८	७०४ वरिष्ठधी	१२२
५८२ महाज्योति	१५२	६२३. महायज्ञ	१५६	६६४ मोहारिविजयी	१०६	७०५ वरेण्य	१३६
५८३ महाज्ञान	१५४	६२४ महायति	१५८	६६५ यजमानात्म	१०७	७०६ वर्धमान	१४५
५८४ महातपा	१५१	६२५ महायशा	१५१	६६६ यज्ञ	१०७	७०७. वर्य	१४२
५८५ महातेजा	१५१	६२६. महायोग	१५४	६६७ यज्ञपति	१०७	७०८ वर्षीयान	१४३
५८६. महात्मा	१५९	६२७ महायोगीश्वर	१६१	६६८ यज्ञांग	१०७	७०९ वशी	१६०
५८७ महादम	१५६	६२८ महावपु	१५४	६६९ यति	२१३	७१० वश्येन्द्रिय	१८६
५८८ महादान	१५४	६२९. महावित्	१४१	६७० यतीन्द्र	१७०	७११ वह्निमूर्ति	१२६
५८९ महादेव	१६२	६३० महावीर्य	१५२	६७१ यतीश्वर	१०७	७१२. वागीश्वर	२०९
५९० महाद्युति	१५२	६३१ महाव्रत	१६२	६७२ युगज्येष्ठ	१९३	७१३ वाग्मी	१७९
५९१ महाधामा	१५२	६३२. महाव्रतपति	१५७	६७३ युगमुख्य	१९३	७१४ वाचस्पति	१७९
५९२ महाधृति	१५१	६३३ महाशक्ति	१५२	६७४ युगादि	१४७	७१५ वातरशन	२०४
५९३. महाध्यानपति	१६२	६३४ महाशील	१५६	६७५ युगादिकृत्	१४७	७१६ वायुमूर्ति	१२६
५९४ महाध्यानी	१५६	६३५ महाशोकध्वज	१३३	६७६ युगादिपुरुष	१०५	७१७. विकलंक	१९४
५९५ महाध्वरधर	१५९	६३६ महासत्त्व	१५१	६७७ युगादिस्थितिदेशक	१९३	७१८ विकल्मष	१९४
५९६ महाधैर्य	१५२	६३७ महासम्पत्	१५२	६७८. युगाधार	१४७	७१९ विक्रमी	१७२
५९७ महान्	१४८	६३८ महितोदय	१५९	६७९ योगिवन्दित	१८८	७२० विघ्नविनाशक	२०६
५९८. महानन्द	१५३	६३९ महिष्ठवाक्	१५९	६८० योगविद्	१२५, १८८	७२१ विजर	१२४
५९९ महानाद	१५८	६४० महेज्य	१५८	६८१ योगात्मा	१६४	७२२ विजितान्तक	१२३
६०० महानीति	१५३	६४१ महेन्द्र	१४८	६८२ योगी	१०७	७२३ विदांवर	१४६
६०१ महापराक्रम	१६०	६४२ महेन्द्रमहित	१४८	६८३. योगीन्द्र	१७०	७२४ विद्यानिधि	१४१
६०२ महाप्रभ	१२८	६४३ महेन्द्रवन्द्य	१७०	६८४ योगीश्वरार्चित	१०७	७२५ विद्वान्	१२५
६०३ महाप्रभु	१५५	६४४. महेशिता	१६२	६८५ रत्नगर्भ	१८१	७२६ विधाता	१२५
६०४ महाप्राज्ञ	१५३	६४५ महेश्वर	१५५	६८६ रुक्माभ	१९७	७२७ विधि	१०२
६०५ महाप्रातिहार्याधीश	१५५	६४६ महोदय	१५१, १५३	६८७ लक्षण्य	१४४	७२८ विनेता	१४१
६०६ महाबल	१५२	६४७ महोदर्क	१५१	६८८ लक्ष्मीपति	२०७	७२९ विनेयजनताबन्धु	१२५
६०७ महाबोधि	१४५	६४८ महोपाय	१५७	६८९ लक्ष्मीवान्	१८२	७३० विपापात्मा	१३८
६०८ महाब्रह्मपति	१३१	६४९. महोमय	१५७	६९० लोकचक्षु	२१२	७३१ विपाप्मा	१३८
६०९ महाब्रह्मपदेश्वर	१[illegible]१	६५० महौदार्य	१५९	६९१ लोकज्ञ	१९५	७३२. विपुलज्योति	१४०

क्र० सं०	नाम	श्लोक सं०	क्र० सं०	नाम	श्लोक सं०	क्र० सं०	नाम	श्लोक सं०	क्र० सं०	नाम	श्लोक सं०
७३३	विभय	१२४	७७४	विश्वसृट्	१२३	८१५	शीतकुम्भनिभप्रभ	१९९	८५६	सत्यवाक्	१७५
७३४	विभव	११७, १२४	७७५	विश्वात्मा	१०१	८१६	शान्त	१३८	८५७	सत्यविज्ञान	१७५
७३५	विभावसु	११०	७७६	विश्वासी	१२३	८१७	शान्तारि	२१६	८५८	सत्यशासन	१७५
७३६	विभु	१०२	७७७	विश्वेट	१२३	८१८	शान्ति	२०२	८५९.	सत्यसन्धान	१७५
७३७	विमुक्तात्मा	१८६	७७८	विश्वेश	१०२	८१९	शान्तिकृत्	२०२	८६०.	सत्यात्मा	१७५
७३८	वियोग	१२५	७७९	विष्टरश्रवा	१६४	८२०.	शान्तिद्	२०२	८६१	सत्याशी	१७५
७३९	विरजा	११२	७८०	विहितान्तक	१४१	८२१	शान्तिनिष्ठ	२०२	८६२	सदागति	१७७
७४०	विरत	१२४	७८१	वीतकल्मष	१३८	८२२	शान्तिभाक्	१२६	८६३	सदातृप्त	१७७
७४१	विराग	१२४	७८२.	वीतभी	२११	८२३	शाश्वत्	१०२	८६४	सदाभावी	१८८
७४२.	विलीनाशेषकल्मष	१२५	७८३	वीतमत्सर	१२४	८२४	शासिता	२०१	८६५	सदाभोग	१७७
७४३	विविक्त	१२४	७८४	वीतराग	१८५	८२५	शास्ता	११५	८६६.	सदायोग	१७७
७४४	विवेद	१४६	७८५.	वीर	१२४	८२६	शिव	१०५	८६७.	सदाविद्य	१७७
७४५	विशाल	१४०	७८६	वृष	११६	८२७	शिवताति	२०२	८६८	सदाशिव	१७७
७४६	विशिष्ट	१७२	७८७	वृषकेतु	११६	८२८	शिवप्रद	२०२	८६९	सदासौख्य	१७७
७४७	विशोक	१२४	७८८	वृषपति	११६	८२९	शिष्ट	१७२	८७०	सदोदय	१७७
७४८	विश्रुत	१२०	७८९	वृषभ	१००, १४३	८३०	शिष्टभुक्	१७२	८७१	सद्योजात	१९६
७४९	विश्वकर्मा	१०३	७९०	वृषभध्वज	११६	८३१	शिष्टेष्ट	२०१	८७२	सनातन	१०५
७५०	विश्वजित्	१२३	७९१.	वृषभाक	११६	८३२	शीलसागर	२०५	८७३	सन्ध्याभ्रबभ्रु	१९८
७५१	विश्वज्योति	१०३	७९२	वृषाधीश	११६	८३३	शुचि	११२	८७४	समग्रधी	१५०
७५२	विश्वतश्चक्षु	१०१	७९३.	वृषायुध	११६	८३४	शुचिश्रवा	१२०	८७५	समन्तभद्र	२१६
७५३	विश्वत'पाद	१२०	७९४	वृषोद्भव	११६	८३५	शुद्ध	१०८, २१२	८७६.	समयज्ञ	१८४
७५४	विश्वतोमुख	१०२	७९५	वेदवित्	१४६	८३६	शुभंयु	२१७	८७७	समाहित	१८४
७५५	विश्वदृक्	१०३	७९६	वेदवेद्य	१४६	८३७	शुभलक्षण	१४४	८७८	समुन्मीलितकर्मारि	२१४
७५६	विश्वदृश्वा	१०२	७९७	वेदाग	१४६	८३८	शूर	१६०	८७९	सर्वक्लेशापह	१६३
७५७	विश्वनायक	१२३	७९८.	वेद्य	१४६	८३९	शेमुषोश	१७९	८८०	सर्वग	११५
७५८	विश्वभाववित्	२१०	७९९	वेधा	१०२	८४०	श्रायसोक्ति	२०९	८८१	सर्वज्ञ	११९
७५९	विश्वभुक्	१२३	८००.	वैकृतान्तकृत्	१६८	८४१	श्रीगर्भ	११८	८८१	सर्वत्रग	१८८
७६०	विश्वभू	१००	८०१	व्यक्त	१४७	८४२	श्रीनिवास	१७४	८८३	सर्वदर्शन	११९
७६१	विश्वभूतेश	१०३	८०२	व्यक्तवाक्	१४७	८४३	श्रीपति	११२	८८४	सर्वदिक्	११९
७६२	विश्वसृट	१२३	८०३	व्यक्तशासन	१४७	८४४	श्रीमान्	१००	८८५	सर्वदोषहर	१६३
७६३	विश्वमूर्ति	१०३	८०४	व्योममूर्ति	१२८	८४५	श्रीवृक्षलक्षण	१४४	८८६	मर्वयोगीश्वर	१६४
७६४	विश्वयोनि	१०१	८०५	शंकर	१८९	८४६	श्रीश	२११	८८७.	सर्वलोकजित	११९
७६५	विश्वरीश	१०४	८०६	शंवद्	१८९	८४७	श्राश्रितपादाब्ज	२११	८८८	मर्वलोकातिग	१९१
७६६	विश्वरूपात्मा	१२३	८०७	शंवान्	२०६	८४८	श्रुतात्मा	१६४	८८९	मर्वलोकेश	११९
७६७	विश्वलोकेश	१०१	८०८	शश्वत	११३	८४९	श्रेयान्	२०९	८९०	मर्वलोकैकसारथि	१९१
७६८	विश्वलोचन	१०२	८०९	शत्रुघ्न	२०१	८५०	श्रेयोनिधि	२०३	८९१	मर्ववित्	११९
७६९	विश्वविद्	१०१	८१०	शमात्मा	१६३	८५१.	श्रेष्ठ	१२२	८९२.	सर्वात्मा	११९
७७०	विश्वविद्यामहेश्वर	१२१	८११	शमी	१६१	८५२	श्लक्ष्ण	१४४	८९३	मर्वादि	११९
७७१.	विश्वविद्येश	१०१	८१२	शम्भव	१००	८५३	सत्य	१७५	८९४	सलिलात्मक	१२६
७७२	विश्वव्यापी	१०२	८१३	शम्भु	१००	८५४	सत्यकृत्य	१३०	८९५	सहस्रपात	१२१
७७३	विश्वशीर्ष	१२०	८१४	शरण्य	१३६	८५५	सत्यपरायण	१७५	८९६.	सहस्रशीर्ष	१२१

क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०	क्र० सं० नाम	श्लोक सं०
८९७ सहस्राक्ष	१२१	९२२ सुदर्शन	१८१	९४७. सूक्ष्म	१०५	९७२ स्वभू	२०१
८९८ सहिष्णु	१०९	९२३ सुधी	१२५, १७१	९४८, सूक्ष्मदर्शी	२१६	९७३ स्वयंज्योति	१०६
८९९ साक्षी	१४१	९२४ सुधौतकलधौतश्री	२००	९४९ सूनृतपूतवाक्	२१२	९७४ स्वयंप्रभ	१००, ११८
९००. साधु	१६३	९२५, सुनय	१७४	९५० सूरि	१२०	९७५ स्वयंबुद्ध	११३
९०१ सार्व	११९	९२६, सुनयतत्त्वविद्	१४०	९५१. सूर्यकोटिसमप्रभ	१९०	९७६ स्वयंभू	१००
९०२ सिद्ध	१०८	९२७. सुप्रभ	१९७	९५२ सूर्यमूर्ति	१२८	९७७ स्वयंभूष्णु	११०
९०३ सिद्धशासन	१०८	९२८, सुप्रसन्न	१३२	९५३ सोममूर्ति	१२८	९७८ स्वर्णाभ	१११
९०४ सिद्धसंकल्प	१४५	९२९ सुभग	१८४	९५४ सौम्य	१७८	९७९ स्वसंवेद्य	१४६
९०५ सिद्धसाधन	१४५	९३० सुभुत	१४०	९५५ स्तवनार्ह	१३४	९८० स्वस्थ	१८५
९०६ सिद्धसाध्य	१०८	९३१. सुमुख	१७८	९५६ स्तुतीश्वर	१३४	९८१ स्वामी	१७२
९०७ सिद्धात्मा	१४५	९३२ सुमेधा	१७२	९५७ स्तुत्य	१३४	९८२ स्वास्थ्यभाक्	१८५
९०८ सिद्धान्तविद्	१०८	९३३. सुयज्वा	१२७	९५८ स्थविर	१२२	९८३ हतदुर्नय	२१०
९०९ सिद्धार्थ	१०८	९३४ सुरूप	१८४	९५९ स्थविष्ठ	१२२	९८४ हर	१६३
९१० सिद्धि	१४५	९३५ सुवर्णवर्ण	१९७	९६० स्थवीयान्	१७६	९८५ हवि	१२७
९११. सुकृती	१७४	९३६ सुवाक्	१२०	९६१ स्थाणु	११८	९८६ हाटकद्युति	२००
९१२ सुखद्	१७८	९३७ सुविधि	१२५	९६२ स्थावर	२०३	९८७ हिरण्यगर्भ	११८
९१३ सुखसादभूत	२१७	९३८, सुव्रत	१७१	९६३ स्थास्नु	२०३	९८८ हिरण्यनाभि	११७
९१४ सुगत	२१०	९३९ सुश्रुत	१२०	९६४ स्थेयान्	१७६	९८९ हिरण्यवर्ण	१९९
९१५ सुगति	१२०	९४० सुश्रुत्	१२०	९६५ स्थेष्ठ	१२२	९९० हृषीकेश	१३४
९१६. सुगुप्त	१७८	९४१ सुसंवृत	१४०	९६६ स्नातक	११२	९९१ हेतु	१४३
९१७ सुगुप्तात्मा	१४०	९४२ सुस्थित	१८५	९६७ स्पष्ट	२०१	९९२ हेमगर्भ	१८१
९१८ सुघोष	१७८	९४३ सुस्थिर	२०३	९६८ स्पष्टाक्षर	२०१	९९३ हेमाभ	१९८
९१९ सुतनु	२१०	९४४ सुसौम्यात्मा	१२८	९६९ स्रष्टा	१३३	९९४ हेयादेयविचक्षण	२१४
९२० सुत्वा	१२७	९४५. सुहित	१७८	९७० स्वतन्त्र	१२९		
९२१ सुत्रामपूजित	१२७	९४६ सुहृत	१७८	९७१ स्वन्त	१२९		

वे नाम जिनकी पुनरावृत्ति हुई है

क्रमांक	नाम	श्लोक सं
१	अधिप	१५७, १८९
२	अनर्घ	१७२, १८६
३	अनन्त	१०९, १६०
४	अनामय	११४, २१७
५	जगज्ज्योति	११४, २०७
६	जगत्पति	१०४, ११८
७	दमीश्वर	१११, १७८
८	निर्मल	१२८, १८४
९	परज्योति	११०, १११
१०	परम	१४२, १६५
११	परमानन्द	१७०, १८९
१२	महोदय	१५१, १५३
१३	योगविद्	१२५, १८८
१४	विभव	११७, ४२४
१५	वृषभ	१००, १४३
१६	शुद्ध	१०८, २१२
१७	सुधी	१२५, १७१
१८	स्वयंप्रभ	१००, ११८

महापुराण पर्व २५ (श्लोक ६६ से ९७ तक) में भी आचार्य जिनसेन ने तीर्थंकर वृषभदेव के अनेक नामो का उल्लेख किया है। इनमें कुछ नाम अर्हन्तो के गुणो पर आधारित है और कुछ नाम ऐसे हैं जिनका "सहस्रनाम" में भी उल्लेख हो चुका है। कुछ नाम दार्शनिक तत्त्वों पर आधारित हैं। इस अंश का गहराई से अध्ययन करने पर ऐसे भी नाम प्राप्त होते हैं जिनका सहस्रनाम-स्तोत्र में नामोल्लेख नही किया गया है तथा अर्हन्त-गुणो पर भी आधारित नही हैं। ऐसे नाम है—

क्रमांक	नाम	पर्व एवं श्लोक संख्या
१	अकाय	२५ ९१
२	अन्धकान्तक	२५ ७३

३.	अर्धनारीश्वर	२५ ७३
४	इक्ष्वाकुकुलनन्दन	२५ ७५
५	चतुरस्रध	२५.७७
६.	त्रिज्ञ	२५ ७७
७.	त्रिधोत्थित	२५ ७२
८	परमतच्छिद	२५ ८६
९.	परमतत्त्व	२५ ८६
१०.	परमतेजस	२५ ८७
११	परमप्रशममीयुष	२५ ७९
१२	परमरूप	२५ ८७
१३.	परमर्षि	२५ ८१
१४.	पुरुषस्कन्ध	२५ ७६

साधु मूलगुण

निर्ग्रन्थ साधु के २८ मूलगुण बताये गये है। वे हैं—

महाव्रत	५
समिति	५
इन्द्रिय	५
निरोध	५
आवश्यक	६
केशलोच	१
भू-शयन	१
अदन्त-धावन	१
अचेलता	१
अस्नान	१
स्थित भोजन	१
एकभुक्त	१
	२८

मपु० १८,७०-७२, ६१.११९-१२०

पंच महाव्रत

१. अहिंसा	२ सत्य	३. अचौर्य
४. ब्रह्मचर्य	५. अपरिग्रह	

हपु० २.११६-१२१, ५८.११६

पंच-समिति

१. ईर्या	२. भाषा	३. एषणा
४ आदाननिक्षेपण	५ प्रतिष्ठापना	

हपु० २ १२२-१२६

पचेन्द्रिय-निरोध

१. स्पर्शन	२ रसना	३ घ्राण
४ चक्षु	५ श्रोत	

इन पाँच इन्द्रियो का निरोध। मपु० १८ ७०-७२

षडावश्यक

१ सामायिक	२ स्तुति	३ वन्दना
४ प्रतिक्रमण	५ प्रत्याख्यान	६ कायोत्सर्ग

हपु० ३४ १४२-१४६

सिद्ध परमेष्ठी के आठ गुण

१ अनन्त सम्यक्त्व	२ अनन्त दर्शन	३ अनन्त ज्ञान
४. अनन्त और अद्भुत वीर्य	५ सूक्ष्मत्व	६ अवगाहनत्व
७ अव्याबाधत्व	८. अगुरुलघुत्व	

मपु० २० २२३-२२४

हरिवशपुराण मे अव्याबाध गुण को अव्याबाध अनन्तसुख कहा गया है। हपु ३ ७२-७४

पारिव्राज्यक्रिया के सूत्रपद

१ जाति	२ मूर्ति	३ उसमें रहनेवाले लक्षण	४ अंगसौन्दर्य
५. प्रभा	६ मण्डल	७ चक्र	८. अभिषेक
९ नाथता	१० सिंहासन	११ उपधान	१२. छत्र
१३. चामर	१४. घोषणा	१५ अशोकवृक्ष	१६. निधि
१७. गृहशोभा	१८. अवगाहन	१९. क्षेत्रज्ञ	२० आज्ञा
२१. सभा	२२ कीर्ति	२३ वन्दनीयता	२४ वाहन
२५. भाषा	२६ आहार	२७ सुख	

मपु० ३९ १६२-१६५

कुलाचल

१ हिमवान्	२. महाहिमवान्
३. निषध	४ नील
५. रुक्मी	६. शिखरी

महापुराण में 'महामेरु' को सातवाँ कुलाचल कहा है।

मपु० ६३ १९३, हपु० ५ १५

क्षेत्र

१ भरत	२. हैमवत	३ हरिवर्ष	४ विदेह
५. रम्यक	६ हैरण्यवत्	७. ऐरावत्	

मपु० ६३.१९१-१९२, हपु० ५ १३-१४

गजदन्त पर्वत

१. गन्धमादन	२ माल्यवान्
३ विद्युत्प्रभ	४. सौमनस्य

मपु० ६३.२०४-२०५, हपु० ५.२१०-२१२

ग्राम

अचल	मपु० ६२.३३५
अन्तिक	पपु० ५ २८७-२८८
अरुण	मपु० ३५ ५-७
पलाल पर्वत	मपु० ६ १२६-१२७

पलाशकूट	मपु० ७० २००
पाटलिग्राम	मपु० ६ १२७-१२८
मण्डूक	हपु० ६० ३३
मत्तकोकिल	पपु० १०६ १९०-१९७
मन्दिर	मपु० ७१.३२६
लक्ष्मीग्राम	मपु० ७१.३१७-३४१
वर्धकि	हपु० २७.६१-६४
वृत्ति	मपु० ७६ १५२
शकट	पपु० ५ ३५-३६
शालिग्राम	मपु० ७१ ४१६

देश

क्र० सं०	नाम देश	सन्दर्भ
१	अंग	मपु० १६ १५२
२.	अंगारक	हपु० ११ ६८
३	अगर्त	हपु० ११ ७१-७३
४	अन्तरपाण्ड्य	मपु० २९ ८०
५	अन्ध्र	पपु० १०१.८४-८६
६	अपरान्तक	मपु० १६ १४१-१४८
७	अभिसार	मपु० १६ १५२-१५५
८	अमल	पपु० ६ ६६-६८
९	अमृतवती	मपु० ७२ ५४
१०	अर्धवर्वर	पपु० २७ ५-६
११.	अलघन	पपु० ६ ६८
१२	अलका	मपु० ५४ ८६
१३	अवन्ति	मपु० १६ १५२
१४	अवष्ट	पपु० १०१ ८२-८६
१५	अश्मक	मपु० १६ १४३-१५२
१६	अस्वष्ट	हपु० ३ ३
१७	आत्रेय	हपु० ११ ६६-६७
१८	आनर्त	मपु० १६.१५३
१९	आन्ध्र	मपु० १६ १५४
२०	आभार	मपु० १६ १४१-१४८
२१	आरट्ट	मपु० १६ १४१-१४८
२२	आरुल	पपु० १०१ ७९-८६
२३.	आवर्त	हपु० ११ ७३-७४
२४	आवृष्ट	हपु० ११ ६४-६५
२५	आसिक	हपु० ११ ७०
२६	उग्र	मपु० १६ १५२
२७	उत्तमवर्ण	हपु० ११ ७४
२८	उलूक	पपु० १०१ ८३-८६
२९	उशीनर	मपु० १६ १४१-१५३
३०	उशीरवर्त	हपु० ११.७५
३१.	औलिक	मपु० २० ८०
३२.	औण्ड्र	मपु० ३० ४१, ९३
३३.	कक्कुश	मपु० २९ ६७
३४.	कर्कोटक	हपु० २१ १२३
३५.	कक्ष	पपु० १०१ ७९-८८
३६.	कच्छ	मपु० १६ १४२-१४३
३७	कच्छकावती	मपु० ६३ २०४-२१३
३८	कच्छा	हपु० ५ २४५-२४६
३९.	कनीयस	हपु० ३ ४
४०	कर्मेकुर	मपु० ३० ८०
४१.	करहाट	मपु० १६ १४१-१४८
४२.	कणकोशल	पापु० १ १३३
४३	कर्णाट	मपु० १६ १४१-१४८
४४	कर्वुग	हपु० ११ ७१
४५	कममुर	मपु० ३० ८०
४६	कलिंग	मपु० १६ १४१-१५६
४७	कल्लीवनोपान्त	हपु० ११.७१
४८	काक्षि	हपु० ११ ७२-७३
४९	कामरूप	मपु० २९ ४२
५०.	काण	हपु० ३.६-७
५१	काल	पपु० १०१ ८४-८६
५२	कालकूट	मपु० २९ ४८
५३	कालाम्बु	पपु० १०१ ७७ ७८
५४.	कालिन्द	मपु० २९ ४८
५५	काशी	मपु० १६.१५१-१५२
५६	काश्मीर	मपु० १६ १५३
५७	किरात	मपु० २९ ४८
५८	कुडुम्ब	मपु० २९ ८०
५९.	कुणाल	मपु० २९ ७२
६०.	कुणीयान्	हपु० ११.६५
६१	कुन्तल	हपु० ११ ७०-७१
६२	कुमुदा	मपु० ६३ २०८-२१६
६३.	कुरु	मपु० १६ १५२
६४	कुरुजांगल	मपु० १६ १५३
६५.	कुश	हपु० ११ ७५
६६	कुशद्य	हपु० १८ ९
६७	कुशाग्र	हपु० ११ ६५
६८	कुशार्थ	मपु० ७०.९२-९३
६९	कुसन्ध्य	हपु० ३.३
७०	कूट	मपु० २९ ८०
७१	केकय	मपु० १६ १५६
७२.	केरल	मपु० १६ १५४

क्र० सं०	नाम देश	सन्दर्भ
७३.	कैकय	हपु ११ ६६
७४	कोंकण	मपु० १६ १४१-१४८
७५	कोसल	मपु० १६ १४१-१४८
७६	कोहर	पपु० १०१.८४-८६
७७.	कोबेर	पपु० १०१ ८४-८६
७८.	क्वाथतोय	हपु० ११ ६६
७९	क्षेम	मपु० ७५ ४०२
८०.	खड्ग	मपु० ६३ २१३
८१	खतिलक	पपु० ५५ २९
८२	गन्धमालिनी	मपु० ५९ १०९
८३	गन्धा	मपु० ६३ २०८-२१७
८४	गन्धावत्सुगन्धा	मपु० ६३ २१२
८५.	गन्धिल	मपु० ५ २३०
८६	गवोधुमत्	पपु० २८ २१९
८७.	गान्धार	पपु० ९४ ७
८८	गौड	मपु० २९ ४१
८९.	गौरी	मपु० ४६ १४५
९०	गौशोल	पपु० १०१ ८२-८६
९१	चारु	पपु० १०१ ८१
९२	चिलात	मपु० ३२ ४६-४७
९३	चेदि	मपु० १६ १४१-१४८
९४	चोल	मपु० १६ १५४
९५	जालन्धर	पपु० १५ ६३
९६	टकर्ण	हपु० २१ १०३
९७.	तापस	हपु० ११ ७१-७३
९८	तार्न	हपु० ३ ६
९९	तीर्णकर्ण	हपु० ११ ६७
१००	तुरुष्क	मपु० १६ १५६
१०१	तुलिंग	हपु० ११ ६४
१०२	तैतिल	मपु० ३० १०७
१०३	तोयावली	पपु० ६ ६६-६८
१०४.	त्रिकलिंग	मपु० २९ ७९
१०५.	त्रिगर्त	हपु० ३ ३
१०६	त्रिजट	पपु० १०१ ८१
१०७	त्रिपुर	हपु० ११ ७३
१०८	त्रिशिरिस्	पपु० १०१ ८२
१०९	दशार्ण	मपु० १६ १५३
११०	दशारुक	हपु० ११ ६७
१११	दार्ण्डीक	हपु० ११ ७०
११२	दारु	मपु० १६ १५५
११३.	दुर्ग	हपु० ११ ७१
११४	धवल	मपु० ६७ १५६-२५७
११५.	नन्दन	पपु० १०१ ७७
११६	नन्दि	पपु० १०१ ७७
११७.	नर्मद	हपु० ११ ७२
११८	नवराष्ट्र	हपु० ११ ७०
११९	नासारिक	हपु० ११ ७२
१२०	नेपाल	पपु० १०१ ८१
१२१	नैषध	हपु० ११ ७३
१२२	पचाल	मपु० १६ १४८
१२३	पल्लव	मपु० १६ १४१-१४८
१२४	पाण्ड्य	मपु० २९ ८०
१२५	पारशैल	पपु० १०१ ८२-८६
१२६	पुण्डरीक	पपु० ६४ ५०
१२७	पुण्ड्र	मपु० १६ १४३-१५२
१२८	पुरुष	हपु० ११ ६९-७१
१२९	प्रच्छाल	हपु० ३ ६
१३०	प्रातर	मपु० २९.७९
१३१	प्रास्थाल	हपु० ११ ६७
१३२	बाणमुक्त	हपु० ११ ६९
१३३	बाल्हीक	मपु० १६ १४८-१५६
१३४	बृषाण	पपु० १०१.७९-८६
१३५	भग	हपु० ११ ७५
१३६	भगलि	मपु० ४८ १२७
१३७	भद्र	हपु० ११ ७५
१३८	भद्रकार	हपु० ३ ३
१३९	भरक्षम	पपु० ६ ६६
१४०	भरद्वाज	हपु० ३ ६
१४१.	भरुकच्छ	हपु० ११ ७२
१४२	भारद्वाज	हपु० ११ ६७
१४२	भावकुन्तुले	पपु० १०१ ७७-७८
१४३	भीम	पपु० १०१ ७७
१४४	भीरू	पपु० १०१ ८१
१४५	भूतरव	पपु० १०१ ७७
१४६.	मगल	मपु० ७१ २७८
१४७.	मगध	मपु० ५७ ७०
१४८	मत्स्य	हपु० ३ ४
१४९	मद	मपु० २५ २८७
१५०.	मद्रक	हपु० ११ ६६-७७
१५१.	मद्रकार	हपु० ११ ६४-६५
१५२.	मलय	पपु० ५५ २८
१५३.	महाराष्ट्र	मपु० १६.१५४
१५४.	महिम	हपु० ११.७२

क्र० स०	नाम देश	सन्दर्भ	क्रमांक	नाम देश	सन्दर्भ
१५५	महिष	मपु० २९ ८०	१९१	वैदर्भ	हपु० ११ ६९
१५६	मागध	मपु० २९.३९	१९२.	वैदिश (विदिशा)	हपु० ११ ७४
१५७	माणव	मपु० ११ ६९	१९३	वैद्य	पपु० १०१ ८२
१५८	मानवार्तिक	हपु० ११ ६८	१९४.	शक	मपु० १६ १५६
१५९	मालव	मपु० १६.१५३	१९५.	शकट	हपु० २७ २०
१६०	माल्य	हपु० ११ ७१	१९६	शर्वर	पपु० १०१ ८१
१६१.	माहिषक	हपु० ११ ७०	१९७	शलभ	पपु० १०१-७७
१६२	माहेम	हपु० ११ ७२	१९८	शिखापद	पपु० १०१-८३
१६३	मूलक	हपु० ११ ७०-७१	१९९	शूर	हपु० ११ ६६-६७
१६४	मृगावती	मपु० ७१ २९१	२००	शूरसेन	मपु० १६ १५५
१६५	मेखला	पपु० १०१ ८३	२०१	शौर्य	मपु० ७१ २०१-२०२
१६६.	मेघपाद	पापु० १ १३३	२०२	सक्कापिर	हपु० ११.६९-७६
१६७	मोक	हपु० ११ ६५	२०३.	समर्त	पपु० १०१ ८३
१६८.	यमन	हपु० ५० ७३	२०४	समुद्रक	मपु० १६ १५२
१६९	यवन	मपु० १६ १५५	२०५	सारसमुच्चय	मपु० ६८ ३-४
१७०	रम्यक	मपु० १६ १५२	२०६	सारस्वत	हपु० ११.७२
१७१	राष्ट्रवर्धन	हपु० ५० ७०	२०७	साल्व	हपु० ११.६५
१७२	रोधन	पपु० ६ ६७-६८	२०८	सिन्धु	मपु० १६ १५५
१७२	लम्पाक	पपु० १०१.७०-७५	२०९	सुकोशल	मपु० १६ १५३
१७४	लाट	मपु० ३०.९७	२१०.	सुभोटक	पापु० १ १३३-१३४
१७५	वग	मपु० १६ १६२	२११.	सुरम्य	मपु० ६२ ८९
१७६	वज्रखण्डिक	हपु० ११.७५	२१२	सुराष्ट्र	मपु० १६.१५४
१७७	वत्स	मपु० १६ १५३	२१३	सुवीर	पपु० ३७ ८, २३-२५
१७८.	वनवास	मपु० १६ १५४	२१४.	सुसीमा	मपु० ४७ ६५-६७
१७९	ववर	पपु० १०१ ८२-८६	२१५.	सुह्म	मपु० १६ १५२
१८०	वाटवान्	हपु० ३ ६	२१६.	सुह्य	पपु० १०१.४३
१८१	वाण	मपु० ७० १०७	२१७	सूर	हपु० ३.५
१८२	वानायुज	मपु० ३०.१०७	२१८	सूरसेन	हपु० ३.४
१८३.	वापि	मपु० ३० १०७	२१९	सूर्पार	हपु० ११.७१, ७६
१८४.	वाल्हीक	मपु० १६ १५६	२२०	सूर्यारक	पपु० १०१.८३
१८५	विदर्भ	मपु० १६.१५३	२२१	सैतव	हपु० ११.७५
१८६	विदेह	मपु० १६ १५५	२२२	सौराष्ट्र	मपु० ३० ९८
१८७	विनिहात्र	हपु० ११ ७४-७६	२२३	सौवीर	मपु० १६ १५५
१८८	विन्ध्य	पपु० १०१ ८३-८६	२२४	हरिवर्ष	मपु० ७० ७४-७५
१८९	विराट	पपु० १ १३४	२२५	हिण्डिव	पपु० १०१ ८२
१९०	वृकार्यक	हपु० ३.४	२२६	हेमागद	मपु० ७५ १८८

द्वीप और सागर

द्वीप	सन्दर्भ	सागर	सन्दर्भ
१ जम्बूद्वीप	हपु० ५ २-११	१ लवणसमुद्र	हपु०५ ४३०-४८८
२. धातकीखण्ड	हपु० ५ ४८९-५६१	२ कालोदधिसागर	हपु० ५ ५६२-५७५
३ पुष्करवर	हपु० ५ ५७६-५८९	३ पुष्करवर	हपु० ५ ६१३

द्वीप	सन्दर्भ	सागर	सन्दर्भ
४ वारुणीवर	हपु० ५ ६१४	४. वारुणीवर	हपु० ५ ६१४
५ क्षीरवर	हपु० ५.६१४	५. क्षीरोदसागर	हपु० ५ ६१४
६ घृतवर	हपु० ५.६१५	६. घृतवर	हपु० ५.६१५
७ इक्षुवर	हपु० ५ ६१५	७. इक्षुवर	हपु० ५.६१५
८ नन्दीश्वर	हपु० ५ ६१६	८ नन्दीश्वर	हपु० ५.६१६
९ अरुणद्वीप	हपु० ५.६१७	९. अरुणसागर	हपु० ५.६१७
१० अरुणोद्भास	हपु० ५.६१७	१० अरुणोद्भास	हपु० ५ ६१७
११ कुण्डलवर	हपु० ५ ६१८	११ कुण्डलवर	हपु० ५.६१८
१२ शखवर	हपु० ५ ६१८	१२ शखवर	हपु० ५.६१८
१३ रुचकवर	हपु० ५ ६१९	१३. रुचकवर	हपु० ५.६१९
१४ भुजगवर	हपु० ५ ६१९	१४. भुजगवर	हपु० ५ ६१९
१५. कुशवर	हपु० ५.६२०	१५. कुशवर	हपु० ५ ६२०
१६. क्रौंचवर	हपु० ५ ६२०	१६. क्रौंचवर	हपु० ५ ६२०

आरम्भिक इन सोलह द्वीप-सागरो के आगे असंख्यात द्वीप-सागरो के पश्चात् विद्यमान [अन्तिम] सोलह द्वीप-सागर

क्र०सं० द्वीप	सन्दर्भ	क्र०सं० सागर	सन्दर्भ
१ मन शिल	हपु० ५ ६२२	१. मन:शिल	हपु० ५ ६२२
२. हरिताल	हपु० ५ ६२२	२ हरिताल	हपु० ५.६२२
३ सिन्दूर	हपु० ५ ६२३	३ सिन्दूर	हपु० ५ ६२३
४ श्यामक	हपु० ५.६२३	४ श्यामक	हपु० ५.६२३
५. अजन	हपु० ५ ६२३	५ अजन	हपु० ५.६२३
६ हिंगुल्क	हपु० ५ ६२३	६. हिंगुल्क	हपु० ५ ६२३
७ रूपवर	हपु० ५.६२३	७. रूपवर	हपु० ५.६२३
८. सुवर्णवर	हपु० ५ ६२४	८ सुवर्णवर	हपु० ५.६२४
९ वज्रवर	हपु० ५.६२४	९. वज्रवर	हपु० ५.६२४
१० वैडूर्यवर	हपु० ५.६२४	१० वैडूर्यवर	हपु० ५ ६२४
११. नागवर	हपु० ५ ६२४	११ नागवर	हपु० ५ ६२४
१२ भूतवर	हपु० ५ ६२५	१२. भूतवर	हपु० ५ ६२५
१३. यक्षवर	हपु० ५.६२५	१३ यक्षवर	हपु० ५.६२५
१४ देववर	हपु० ५.६२५	१४ देववर	हपु० ५ ६२५
१५ इन्दुवर	हपु० ५ ६२५	१५ इन्दुवर	हपु० ५.६२५
१६ स्वयभूरमण	हपु० ५.६२६	१६ स्वयभूरमण	हपु० ५ ६२६

काचन	पपु० ४८ ११५-११६	पुष्कर	पपु० ८५ ९६
किन्नर	पपु० ३ ४४	योधन	पपु० ४८ ११५-११६
कुम्भकण्टक	हपु० २१ १२३	रक्षद्वीप	पपु० १.५४
गन्धर्व	पपु० ५ ४५	लका	मपु० ६८ २५६-२५७
गौतम	हपु० ५ ४६९-४७०	वानर	पपु० ६ ८५
दधिमुख	पपु० ५१ १	शाखामृग	पपु० ६ ७०-७१
धरण	पपु० ३ ४६	संध्याकार	पपु० ४८ ११५-११६
पलाश	मपु० ७५ ९७	सुवर्णद्वीप	हपु० २१ १०१

सुवेल	पपु० ४८.११५-११६
स्वयप्रभ	मपु० ७१ ४५१-४५२
हस	पपु० ४८ ११५
हनुरुह	पपु० १७ ३४४-३४६
हरिसागर	पपु० ४८ ११५
ह्लादन	पपु० ४८ ११५
अर्धस्वर्गोदय	पपु० ४८ ११५-११६
रत्नद्वीप	मपु० ३ १५९
राक्षसद्वीप	पपु० ५ १५२-१५८
क्षीरसागर	हपु० २.४२, ५४
गगासागर	हपु० ११ ३
लौहित्यसागर	मपु० २९.५१

नगर

क्र० सं०	नाम	नगर सन्दर्भ
१	अकवती	हपु० ५ २५९
२.	अगावर्त	मपु० १९ ४५
३	अक्षपुर	पपु० ७७ ५७
४	अक्षोभ्य	मपु० १९ ८५-८७
५.	अग्नि ज्वाल	हपु० २२ ९०
६	अन्द्रकपुर	पपु० ३१ २६-२७
७	अमरकका	हपु० ५४ ८
८	अमलकण्ठ	मपु० ७२ ४०-४१
९	अमृतध्वर	हपु० २२ १००
१०	अमृतपुर	पपु० ५५ ८४-८८
११	अम्बरतिलक	मपु० १९ ८२, ८७
१२	अम्भोद	पपु० ५ ३७३-५७४
१३	अयोध्या	मपु० ७ ४०-४१
१४	अरजस्का	मपु० १९ ४५, ५३
१५	अरजा	मपु० ६३ २०८-२१६
१६	अरिंजय	हपु० २२ ८६, ९३
१७	अरिष्टनगर	मपु० ७१ ४००, ५६ ४६
१८	अरुण	पपु० १७ १५४
१९	अरुणोद्भास	हपु० ५ ६१७
२०.	अर्कमूल	हपु० २२ ९९
२१	अर्जुनी	मपु० ७८ ८७
२२	अर्धस्वर्गोत्कृष्ट	पपु० ५ ३७१-३७२
२३	अलंकारोदय	पपु० ५ १६३-१६६
२४	अलकपुर	पपु० २० २४२-२४४
२५.	अलका	मपु० १९ ८२,८७
२६	अवध्या	मपु० ६३ २०८-२१७
२७	अशोक	हपु० २२ ८९
२८	अशोकपुर	मपु० ७१.४३२
२९	अशोका	मपु० १९ ८१, ८७
३०.	अश्वपुर	हपु० ५, २६१
३१.	असितपर्वत	हपु० २२ ९६
३२	असुर	पपु० ७ ११७
३३	असुरसंगीत	पपु० ८ १
३४.	असुरोद्गीत	मपु० ३ ८-९
३५	आकाशवल्लभ	पपु० ३ ३१४
३६	आदित्यनगर	हपु० २२ ८५
३७	आदित्याभ	मपु० ६२.३६१
३८	आनन्द	हपु० २२ ८९ ९३
३९	आनन्दपुर	हपु० ५३ ३०
४०	आलोकनगर	पपु० ८५ १४१-१४३
४१	आवर्त	पपु० ५ ३७३-३७४
४२	आवली	पपु० ५ ३७३-३७४
४३.	आषाढ	हपु० २२ ९५
४४.	इन्द्रनगर	मपु० ३६ १५-१७
४५	इन्द्रपथ	पापु० १६ २-४
४६	इभ्यपुर	हपु० ६० ९५
४७.	इलावर्द्धन	हपु० १७ १-४
४८.	ईहापुर	हपु० ४५.९३-९४
४९.	उज्जयिनी	हपु० २० ३-११
५०	उत्कट	पपु० ५ ३७३-३७४
५१	उदयपर्वत	हपु० २२ ९३-१०१
५२,	ऐशान	हपु० २२.८८
५३.	कंचनपुर	पपु० ५५ ८४-८८
५४	कनकपुर	मपु० ६३ १६४-१६५
५५	कनकप्रभ	मपु० ७४ २२०-२२१
५६.	कनकाभ	पपु० ६ ५६७
५७	कमलसकुल	पपु० २२ १७३
५८.	कम्बर	पपु० ४१ १२८
५९	कर्णकुण्डल	पपु० १९ १०१-१०३
६०	कल्पपुर	हपु० १७ २८-२९
६१,	कांचन	पपु० ५ ३७१-३७२
६२	कांचनतिलक	मपु० ६३ १०५
६३.	कांचनपुर	हपु० २४ ११
६४.	कांचीपुर	मपु० ७० १२७
६५	काकन्दी	मपु० ५५ २३-२८
६६	कान्तपुर	मपु० ४७ १८०
६७	कामपुष्प	मपु० १९ ४८
६८	काम्पिल्या	मपु० ७२ १९८
६९	कारकट	मपु० ६२ २०२-२१२

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
७०.	कालकेशपुर	हपु० २२ ९८
७१	किन्नर	मपु० ७१ ३७२
७२	किन्नरोद्गीत	हपु० २२ ९८
७३	किन्नामित	मपु० १९ ३१-३३
७४	किलकिल	मपु० १९ ७८
७५	किष्किन्ध	मपु० ६८ ४६६-४६७
७६	किष्कुपुर	पपु० ६ १-५
७७	कुंजरावर्त	मपु० १९ ६८
७८	कुण्ड	मपु० ७५ ७
७९	कुण्डलपुर	मपु० ६२ १७८
८०	कुन्द	मपु० १९ ८२, ८७
८१	कुन्दनगर	पपु० ३३ १४३
८२	कुमुद	मपु० १९ ८२
८३	कुम्भकारकट	मपु० ६२ २०७-२१२
८४	कुम्भपुर	पपु० ८ १४२-१४५
८५	कुशस्थलक	पपु० ५९.६
८६.	कुशाग्रनगर	पपु० २.२२४
८७	कुसुमपुर	पपु० ४८ १५८
८८	कूलग्राम	मपु० ७२ ३१८-३२२
८९	कूवर	पपु० ३३ १-५७
९०	केतुमाल	मपु० १९ ८०
९१	कैलासवारुणी	मपु० १९ ७८
९२	कौतुममंगल	पपु० ७ १२६-१२७
९३.	कौमुदी	पपु० ३९.१८०
९४	कौशाम्बी	पपु० ४ २०७-२०८
९५	कौशिक	हपु० २२ ८८
९६	क्रौंचपुर	पपु० ४८.३६
९७	क्षेमकर	मपु० १९ ५०
९८	क्षेम	मपु० ७५ ४०३
९९	क्षेमपुर	मपु० ४९ २
१००	क्षेमपुरी	मपु० १९ ४८
१०१	क्षेमाजलि	पपु० ३८ ५६-५९
१०२	खगपुर	मपु० ६७ १४१-१४२
१०३	खण्डिका	हपु० २२ ८९
१०४	गगनचरी	मपु० १९ ४९
१०५	गगननन्दन	मपु० ७१ २४९-२५२
१०६	गगनमण्डल	हपु० २२ ८५
१०७.	गजपुर	मपु० ४७ १२८
१०८	गण्यपुर	हपु० ३४ १५
१०९	गन्धमादन	हपु० २२ ९०
११०	गन्धमालिनी	हपु० २७ ११५
१११	गन्धर्वगीत	पपु० ५ ३६७
११२.	गन्धवपुर	मपु० ७ २८-२९
११३	गन्धसमृद्ध	हपु० २२ ९४
११४.	गरुडध्वज	मपु० १९ ३९
११५	गान्धार	मपु० ६३ ३८४
११६	गिरितट	हपु० २३ २६-४५
११७	गिरिनगर	मपु० ७१ २७०
११८	गिरिशिखर	मपु० १९ ८५
११९.	गुञ्जा	पपु० १०४ १०३
१२०	गुल्मखेट	मपु० ७३ १३२-१३३
१२१.	गोक्षीर	मपु० १९ ८५
१२२.	गोवर्द्धन	पपु० २०.१३७
१२३	गौरिक	हपु० २२ ८८
१२४.	गौरीकूट	हपु० २२ ८७
१२५	चक्रधर	पपु० ६४.५०
१२६.	चक्रपुर	हपु० २७ ८९
१२७	चक्रवाल	हपु० २२ ९३
१२८	चतुर्मुखी	मपु० १९ ४४
१२९	चन्दनपुर	हपु० ६०.८१
१३०.	चन्दनवन	हपु० २९ २४
१३१	चन्द्रपर्वत	हपु० २२ ९७
१३२	चन्द्रपुर	मपु० १९ ५२-५३
१३३.	चन्द्रादित्य	पपु० ८५ ९६
१३४.	चन्द्राभ	मपु० १९ ५०
१३५	चन्द्रावर्तपुर	पपु० १३.७५-७८
१३६.	चमरचम्पा	मपु० १९.७९
१३७.	चम्पकपुर	हपु० ५ ४२८
१३८	चम्पा	हपु० १ ८१
१३९	चारणयुगल	मपु० ६७ २१३
१४०.	चित्रकारपुर	हपु० २७.९७
१४१	चित्रकूट	मपु० १९ ५१
१४२	चित्रपुर	मपु० ६२ ६६
१४३	चूलिका	हपु० ४६ २६-२७
१४४.	छत्रपुर	मपु० ५९.२६४
१४५	छत्रकारपुर	मपु० ७४ २४२
१४६	जयन्तपुर	मपु० ७१ ४५२
१४७	जयन्ती	हपु० १७.२७
१४८	जयपुर	पपु० १२३ ११२
१४९.	जलधिध्यान	पपु० ६ ६६
१५०	जनपथ	पापु० १६ ७
१५१.	जलावर्त	हपु० २२ ५५

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
१५२	जीमूतशिखर	पपु० ९४ १-५
१५३.	ज्योतिप्रभ	मपु० ७२.२४१
१५४	ज्योतिर्दण्डपुर	पपु० ५५ ८७-८८
१५५	तट	पपु० ५ ३६७
१५६	ताम्रलिप्त	हपु० २१ ७६
१५७	तिलक	मपु० ६३ १६८
१५८.	तिलपथ	पापु० १६ ५
१५९.	तिल्वस्तुक	हपु० २४ २
१६०	तोयावली	पपु० ५ ३७३-३७४
१६१	त्रिपुर	मपु० ६२ ६७
१६२	त्रिलोकोत्तम	मपु० ७३ २५-२६
१६३	त्रिशृंग	हपु० ४५ ९५
१६४	दधिमुख	पपु० ५१ २
१६५	दन्तपुर	मपु० ७०.६५
१६६	दशागभोगनगर	पपु० ८० १०९
१६७	दशार्ण	मपु० ७१.२९१
१६८	दिति	पपु० १०६ १८७
१६९	दिवितिलक	मपु० ६२ ३६
१७०	दुन्दुभि	पपु० १९ २
१७१.	दुर्ग्रह	पपु० ५ ३७३-३७४
१७२	दोस्तटिका	हपु० ६६.५३
१७३	द्वारवती	मपु० ७१ २४-२७
१७४	धारणयुग्म	हपु० २३.४६-४९
१७५.	धान्यपुर	मपु० ८ ३३०
१७६	नन्दनपुर	मपु० ५९ ४२-४३
१७७	नन्दस्थली	पपु० १२० २
१७८	नन्दिवर्धन	मपु० ७२ ३-१४
१७९.	नन्द्यावर्त	पपु० ३७.६
१८०	नलिन	मपु० ५४ २१७-२१८
१८१	नाग	पपु० ८५ ४९-५१
१८२	नागपुर	हपु० १७.१६२
१८३	पद्ममक	पपु० ५ ११४
१८४	पद्मखण्डपुर	मपु० ५९ १४६-१४८
१८५	पद्मिनीखेट	मपु० ६२ १९१
१८६	पराजयपुर	पपु० ५५ ८७-८८
१८७	परिक्षोदपुर	पपु० ५५ ८७ ८८
१८८	पाटलिपुत्र	मपु० ६१ ४०
१८९	पुन्नागपुर	मपु० २९ ७९
१९०.	पुरातनमन्दिर	वीवच० २ १२५-१२६
१९१.	पुरिमताल	मपु० २० २१८
१९२	पुलोमपुर	हपु० १७ २४-२५
१९३.	पुष्पान्तक	पपु० १ ६१
१९४	पूर्वतालपुर	हपु० ९ २०५-२१०
१९५	पृथिवी	मपु० ४८ ५८-५९
१९६.	पोदनपुर	मपु० ५४.६८
१९७	प्रतिष्ठनगर	पपु० १०६ २०५
१९८.	प्रभाकरपुरी	मपु० ७ ३४
१९९	प्रभापुर	पपु० ९२.१-७
२००.	भद्रपुर	मपु० ५६.२३-२४
२०१.	भद्रिलपुर	मपु० ५६ २४
२०२	भद्रिलसा	हपु० ३३ १६७
२०३	भुजगशैल	मपु० ७२ २१५
२०४	भूतिलक	मपु० ७६ २५२
२०५	भोगपुर	मपु० ६७ ६३
२०६.	भोगवर्द्धन	मपु० ५८ ९०-९१
२०७.	मनोहर	पपु० ५ ३७१
२०८.	मनोह्लाद	पपु० ५.३७१-३७२
२०९	मन्दर	पपु० १७.१४१
२१०.	मन्दरकुज	पपु० ६ ३५७-३६३
२११.	मन्दरपुर	मपु० ६३.४७८-४७९
२१२	मयूरमाल	पपु० २७ ६७
२१३.	मत्यानुगीत	पपु० ९४ ६
२१४.	मलयानन्द	पपु० ५५.८६
२१५	महाकूट	मपु० १९ ५१
२१६	महानगर	मपु० ५८ ४०-४१
२१७.	महारत्नपुर	मपु० ६२ ६८
२१८	महाशैलपुर	पपु० ५५ ८६
२१९	महीपालपुर	मपु० ७३ ९६
२२०.	महीपुर	मपु० ७५.१३
२२१.	महेन्द्रनगर	पपु० १५ १३-१६
२२२	माकन्दी	हपु० ४५ ११९-१२१
२२३.	मागधेशपुर	हपु० १८ १७
२२४	मार्तण्डाभपुर	पपु० ५५.८७-८८
२२५	माहिष्मती	पपु० १०.६५
२२६.	मिथिला	मपु० ६६ २०-२१
२२७.	मृगाक	पपु० १७ १५०
२२८	मृणालकुण्ड	पपु० १०६ १३३-१३४
२२९	मृणालवती	मपु० ४६ १०३
२३०	मृत्तिकावती	पपु० ४८.४३-५०
२३१	मेघदल	हपु० ४६.१५-१६
२३२	मेघपुर	मपु० ६२ २५-३०
२३३.	यक्षगीत	पपु० ७ ११८
२३४	यक्षपुर	पपु० ७ १२६-१२७

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
२३५,	यक्षस्थान	पपु० ३९.१३७-१२९
२३६	योध	पपु० ५ ३७१-३७२
२३७	रजोवली	पपु० ५ १२४
२३८	रत्नद्वीप	पपु० ५ ३७३
२३९	रत्ननगर	पपु० १३ ६०
२४०	रत्नपुर	मपु० ५९ ८८
२४१	रत्नस्थलपुर	पपु० १२३ १२१-१२२
२४२.	रन्ध्रपुर	पपु० २८ २१९
२४३	रमणीकमन्दिर	वीवच० २ १२१-१२२
२४४,	रमर्ण य	यपु० ७५ ३०१-३०३
२४५	रविप्रभ	पपु० ९४ ४-९
२४६.	रसातलपुर	पपु० ११ ९
२४७	राजगृह	मपु० ५७.७०-७२
२४८	राजपुर	मपु० ७५ १८८-१८९
२४९	रामपुरी	पपु० ३५ ४३-४५
२५०	रिपुजयपुर	पपु० ५५ ८७-८९
२५१	रोरुका	मपु० ७५ ११-१२
२५२	लका	मपु० ६८ २९५-२९८
२५३.	लक्ष्मीवर	पपु० ९४ ५
२५४	लोकाक्षनगर	पपु० १०१ ७०-७३
२५५	वकापुर	हपु० प्रशस्ति ३२-३५
२५६	वग्स्थलद्युति	पपु० ३९ ९-११
२५७.	वज्र	हपु० १७ ३३
२५८	वज्रपजर	पपु० ५ ३५७-३५९
२५९.	वज्रपुर	हपु० १७ ३३
२६०.	वटपुर	हपु० ४३ १६३
२६१	वणिकपथपुर	पापु० १६ ७
२६२	वनत्रास्य	हपु० १७.२७
२६३.	वर्द्धमानपुर	मपु० ५२ ५३-५४
२६४	वसुन्धरपुर	हपु० ४५ ७०
२६५	वस्वालय	मपु० ७० ७४-७६
२६६	वह्निप्रभ	पपु० ९४ ४
२६७	वह्नरव	पपु० ९४ ४
२६८	वाराणसी	मपु० ४३ १२१-१२४
२६९	विघट	पपु० ५ ३७३-३७४
२७०.	विजय	मपु० ८ २२७
२७१	विजयखेट	मपु० १९ ५३-५८
२७२	विजयनगर	पपु० ३७ ९
२७३	विजयपुर	हपु० ५ ३९७-३९८
२७४	विजयनगर	पपु० २६ १३-१५
२७५	विदेह	मपु० ७५.६४३
२७६	विन्ध्यपुर	मपु० ६३.९९
२७७.	विमलपुर	मपु० ४७ ११८-११९
२७८	विराट	मपु० ७२ २१६
२७९.	विशालपुर	मपु० ५५ ८७-८८
२८०.	विहायस्तिलक	पपु० ५.७६-८३
२८१	वीतभय	हपु० ४४ ३३-३६
२८२.	वीतशोक	मपु० ६२ ३६४-३६५
२८३.	वीतशोकपुर	मपु० ५९ १०९-११०
२८४.	वीरपुर	मपु० ६९.३०-३१
२८५.	वृन्दावन	हपु० ३५ २७-२९
२८६.	वेदसामपुर	हपु० २४ २५-२६
२८७	वेलन्धर	पपु० ५४ ६५
२८८.	वैजयन्त	पपु० ३६ ९-११
२८९	वैदिशपुर	हपु० ४५ १०७
२९०	वैशाली	मपु० ७५ ३
२९१	व्याघ्रपुर	पपु० ८० १७३
२९२	व्रज	मपु० ७० ४५५
२९३	शख	मपु० ६२.४९४
२९४.	शकटामुख	हपु० २२ १४३
२९५.	शतद्वार	पपु० १२ २२-२३
२९६.	शशाक	पपु० ८५ १३३
२९७	शशिच्छाय	पपु० ९४ ७
२९८	शशिपुर	पपु० ३१ ३४-३५
२९९.	शशिस्थानपुर	पपु० ९५ ८७-८८
३००.	शामली	पपु० १०८ ३९-४०
३०१	शालगुहा	हपु० २४ २९-३०
३०२	शिखापद	पपु० १३ ५५
३०३	शिल्पुपुर	पपु० ४७ १४४-१४५
३०४.	शीरवती	पापु० ३ २१०-२११
३०५	शीलनगर	पापु० ७ ११८
३०६.	शुक्तिमती	हपु० १७ ३६
३०७	शुक्रप्रभ	मपु० ६३ ९१
३०८.	शुभ्रपुर	हपु० १७ ३२
३०९	शैलनगर	पपु० २०-२०७-२०८
३१०	शैलपुर	मपु० ५५-४८
३११	शोभपुर	पपु० ८० १९०-१९५
३१२.	शोभनगर	मपु० ४६.९५
३१३.	शोभापुर	पपु० ५५ ८५
३१४	शौरीपुर	पपु० २० ५८
३१५.	श्रावस्ती	मपु० ४९.१४
३१६.	श्रीगुहापुर	पपु० ५५ ८८

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
३१७.	श्रीगृह	पपु० ९४ ७
३१८.	श्रीपुर	मपु० ६९ ७४
३१९	श्रीमनोहरपुर	पपु० ५५ ८६
३२०.	श्रीत्रिजयपुर	पपु० ९४ ८-९
३२१	श्रुतपुर	पापु० १४ ७९
३२२.	श्रुतशोणित	हपु० ५५ १६
३२३	श्रेयस्पुर	मपु० ४७ १४२
३२४.	श्वेतिका	मपु० ७१ २८३
३२५.	सन्ध्याकार	पपु० ६ ६५-६६
३२६	संध्याभ्र	पपु० ३ ३१३
३२७	सुदृतु	पपु० ५ ९६
३२८	सद्भद्रिलपुर	हपु० १८ ११२
३२९	सप्तपर्णपुर	हपु० ५ ४२७
३३०	समुद्र	पपु० ५ ३७१
३३१.	सर	पपु० ५.६७
३३२.	सर्वरमणीय	मपु० ७६ १८४
३३३	साकाश्पुर	पपु० २८ २१९
३३४.	साकेत	मपु० १२ ८२
३३५	सारसौख्य	मपु० ७४ ३८९-४०१
३३६	सिंहपुर	मपु० ५ २०३
३३७	सिद्धार्थ	मपु० ५७ ४९-५०
३३८.	सिन्धुनद	पपु० ८ ३१९-३४०
३३९.	सुनपथ	पापु० १६ ६
३४०	सुप्रकारपुर	मपु० ७१ ४०९-४१४
३४१.	सुप्रतिष्ठ	मपु० ७६.२१६
३४२.	सुभद्रिलपुर	हपु० ३५.४
३४३.	सुमाद्रिका	पपु० २० १४
३४४	सुरकान्तर	मपु० ६६ ११४
३४५	सुरनूपुर	पपु० ५५ ८६-८७
३४६.	सुरेन्द्ररमण	पपु० ८१ २१-२७
३४७	सुवेल	पपु० ५ ३७१-३७२
३४८	सूतिका	मपु० ७४ ७४
३४९	सूर्यप्रभ	मपु० ७० २६-२९
३५०	सूर्योदय	पपु० ८ ३६२
३५१	सोपारक	हपु० ६० ३६
३५२	सोमखेट	मपु० ५३ ४३
३५३	सौमनस	मपु० ५१ ७२
३५४.	स्थालक	मपु० ६८ १२-१९
३५५	स्थूणागार	मपु० ७४ ७०-७१
३५६	स्फुट	हपु० ५ ३७३
३५७	स्वयप्रभ	पपु० ७ ३३७
३५८.	स्वर्णाभपुर	हपु० २४ ६९
३५९	स्वस्तिकावती	मपु० ६७ २५६-२५७
३५०	हसद्वीप	पपु० ५ ३७१-३७२
३६१.	हसपुर	पपु० ५४ ७६-७७
३६२.	हयपुरी	हपु० ४४.४५-४८
३६३	हरि	पपु० ६ ६६-६८
३६४	हरिपुर	पपु० २१.३-४
३६५	हस्तवप्र	पपु० ६२.३-१२
३६६	हस्तशीर्षपुर	मपु० ४१ ४४४
३६७	हस्तिनागपुर	पपु० २० ५२-५४
३६८.	हेमकच्छ	पपु० ७५ १०-११
३६९	हेमपुर	पपु० ६ ५६४
३६०.	हेमाभनगर	मपु० ७५ ४२०-४२८
३७१	हैहय	पपु० ५५ २९

विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के नगर

(महापुराण के अनुसार)

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
१	अक्षोभ्य	मपु० १९ ८५
२	अग्निज्वाल	मपु० १९ ८३
३	अम्बरतिलक	मपु० १९ ८२
४	अर्जुनी	मपु० १९ ७८
५	अलका	मपु० १९ ८२
६	अशोका	मपु० १९.८१
७	किलकिल	मपु० १९ ७८
८.	कुन्द	मपु० १९ ८२

विजयार्द्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के नगर

(हरिवंशपुराण के अनुसार)

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
१	अग्निज्वाल	हपु० २२ ९०
२	अपराजित	हपु० २२ ८७
३.	अरिंजय	हपु० २२ ८६
४	अशोक	हपु० २२ ८९
५	आदित्यनगर	हपु० २२ ८५
६	आनन्द	हपु० २२.८९
७	ऐशान	हपु० २२ ८८
८.	कांचन	हपु० २२ ८८

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
९.	कुमुद	मपु० १९ ८२
१०	केतुमाल	मपु० १९ ८०
११	कैलाशवारुणी	मपु० १९ ७८
१२	गगननन्दन	मपु० १९ ८१
१३	गगनवल्लभ	मपु० १९ ८२
१४	गन्धर्वपुर	मपु० १९ ८३
१५	गिरिशिखर	मपु० १९ ८५
१६	गोक्षीर	मपु० १९ ८५
१७.	चमर	मपु० १९.७९
१८.	चारुणी	मपु० १९ ७८
१९	चूडामणि	मपु० १९ ७८
२०	जय	मपु० १९ ८४
२१.	तिलका	मपु० १९ ८२
२२	दुर्ग	मपु० १९ ८५
२३	दुर्धर	मपु० १९ ८५
२४.	द्युतिलक	मपु० १९ ८३
२५.	धरणी	मपु० १९ ८५
२६.	धारणी	मपु० १९ ८५
२७.	निमिष	मपु० १९ ८३
२८	पुष्पचूल	मपु० १९ ७९
२९.	फेन	मपु० १९ ८५
३०.	बलाहक	मपु० १९.७९
३१	भद्राश्व	मपु० १९ ८४
३२.	भूमितिलक	मपु० १९ ८३
३३	मणिवज्र	मपु० १९ ८४
३४.	मन्दिर	मपु० १९ ८२
३५	महाज्वाल	मपु० १९ ८४
३६	महेन्द्रपुर	मपु० १९ ८६-८७
३७	मुक्ताहार	मपु० १९ ८३
३८	रत्नपुर	मपु० १९ ८७
३९	रत्नाकर	मपु० १९.८६-८७
४०	वशाल	मपु० १९.७९
४१	वज्रपुर	मपु० १९.८६-८७
४२	वसुमती	मपु० १९ ८०
४३	वसुमत्क	मपु० १९ ८०
४४.	विजयपुर	मपु० १९ ८६-८७
४५	विद्युत्प्रभ	मपु० १९.७८
४६	विशोका	मपु० १९ ८१
४७.	वीतशोका	मपु० १९ ८१
४८	शत्रुंजय	मपु० १९ ८०
४९.	शशिप्रभा	मपु० १९ ७८
५०	शिवकर	मपु० १९ ७९

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
९.	केतुमाल	हपु० २२ ८६
१०	कौशिक	हपु० २२ ८८
११.	खण्डिका	हपु० २२ ८९
१२	गगनमण्डल	हपु० २२ ८५
१३.	गगनवल्लभ	हपु० २२ ८५
१४	गन्धमादन	हपु० २२ ९०
१५.	गौरिक	हपु० २२ ८८
१६.	चमरचम्पा	हपु० २२ ८५
१७.	चम्पा	हपु० २२ ८८
१८	चूडामणि	हपु० २२ ९१
१९	जयन्त	हपु० २२ ८७
२०.	जयावह	हपु० २२ ८८
२१.	धनंजय	हपु० २२.८६
२२	नन्दन	हपु० २२ ८९
२३	नन्दिनी	हपु० २२ ९०
२४.	नैमिष	हपु० २२.८९
२५	पद्माल	हपु० २२.८६
२६.	पाण्डुक	हपु० २२ ८८
२७.	पुरु	हपु० २२ ९०
२८.	पुष्पचूड	हपु० २२ ९१
२९	पुष्पमाल	हपु० २२ ९१
३०.	बलाहक	हपु० २२ ९१
३१	मणिकांचन	हपु० २२ ८९
३२.	मणिवज्र	हपु० २२ ८८
३३.	मनु	हपु० २२ ८८
३४.	महाज्वाल	हपु० २२.९०
३५	महापुर	हपु० २२ ९१
३६.	महेन्द्र	हपु० २२ ९०
३७.	मानव	हपु० २२ ८८
३८	माल्य	हपु० २२.९०
३९	माल	हपु० २२ ९१
४०.	रुद्राश्व	हपु० २२.८६
४१	वशालय	हपु० २२ ९२
४२	वराह	हपु० २२.८७
४३	वस्वौक	हपु० २२ ८७
४४	विजय	हपु० २२ ८६
४५	विद्युत्प्रभ	हपु० २२.९०
४६.	विमल	हपु० २२ ९०
४७.	वीर	हपु० २२ ८८
४८	वेणु	हपु० २२.८९
४९	वैजयन्त	हपु० २२.८६
५०	शत्रुंजय	हपु० २२.८६

क्र० स०	नाम ननर	सन्दर्भ
५१	शिवमन्दिर	मपु० १९ ७९
५२.	श्रीनिकेत	मपु० १९ ८४
५३	श्रीवास	मपु० १९ ८४
५४	श्रीहर्म्य	मपु० १९ ७९
५५	सघनजय	मपु० १९ ८४
५६	मिद्धार्थक	मपु० १९ ८०
५७	सुगन्धिनी	मपु० १९ ८६-८७
५८.	सुदर्शन	मपु० १९ ८५-८७
५९	सुरेन्द्रकान्त	मपु० १९ ८१
६०.	हसगर्भ	मपु० १९ ७९

विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के नगर

(महापुराण के अनुसार)

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दभ
१	क्षपराजित	मपु० १९ ४८
२	अरजस्का	मपु० १९.४५
३	अरिंजय	मपु० १९ ४१
४	कामपुष्पनगर	मपु० १९ ४८
५	किंनामित	मपु० १९ ३२
६.	किन्नरगीत	मपु० १९ ३३
७.	क्षेमकर	मपु० १९ ५०
८.	क्षेमपुरी	मपु० १९ ४८
९.	गगनचरी	मपु० १९ ४८-४९
१०	गरुडध्वज	मपु० १९ ३९
११	चतुर्मुखी	मपु० १९ ४४
१२	चन्द्रपुर	मपु० १९ ५२
१३	चन्द्राभ	मपु० १९ ५०
१४	चित्रकूट	मपु० १९ ५१
१५	जयन्ती	मपु० १९ ५०
१६	नरगीत	मपु० १९ ३४
१७	नित्यवाहिनी	मपु० १९ ५२
१८	नित्योद्योतिनी	मपु० १९ ५२
१९	पश्चिमा	मपु० १९ ५२
२०.	पुण्डरीक	मपु० १९ ३६
२१	पुरजय	मपु० १९ ४३
२२	वहुकेतुक	मपु० १९ ३५
२३	बहुमुखी	मपु० १९.४५
२४	महाकूट	मपु० १९ ५१
२५	मेखलाग्रनगर	मपु० १९ ४८
२६	मेघकूट	मपु० १९ ५१

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
५१.	शशिप्रभ	हपु० २२ ९१
५२	श्रीनिकेतन	हपु० २२ ८९
५३	सारनिवह	हपु० २२ ८७
५४	सिंह	हपु० २२ ८७
५५	सोकर	हपु० २२ ८७
५६.	सौमनस	हपु० २२ ९२
५७.	हसगभ	हपु० २२ ९१
५८	हस्तिन	हपु० २२ ८७
५९	हस्तिनायक	हपु० २२ ८७
६०	हास्तिविजय	हपु० २२ ८९

विजयार्ध पर्वत के दक्षिण श्रेणी के नगर

(हरिवंशपुराण के अनुसार)

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
१.	अगावर्त	हपु० २२ ९५
२	अमृतधार	हपु० २२ १००
३.	अरिंजय	हपु० २२ ९३
४	अर्कमूल	हपु० २२ ९९
५	असितपर्वत	हपु० २२ ९६
६	आनन्द	हपु० २२ ९३
७	आवर्त्तपुर	हपु० २२ ९६
८.	आषाढ	हपु० २२ ९५
९	उदयपर्वत	हपु० २२ ९३
१०	कालकेशपुर	हपु० २२ ९८
११	किन्नरोद्गीतनगर	हपु० २२ ९८
१२	कुञ्जरावर्त	हपु० २२ ९६
१३.	गन्धसमृद्ध	हपु० २२ ९४
१४	गौरिकूट	हपु० २२ ९७
१५	चक्रवाल	हपु० २२ ९३
१६	चन्द्रपर्वत	हपु० २२ ९७
१७	जम्बुशकुपुर	हपु० २२ १००
१८	जलावर्त	हपु० २२ ९५
१९	दिव्यौषध	हपु० २२ ९९
२०	धराधर	हपु० २२ ९७
२१	नभस्तिलक	हपु० २२ ९८
२२	नाभान्त	हपु० २२ ९६
२३	पाशुमूल	हपु० २२ ९९
२४	बहुकेतु	हपु० २२ ९३
२५	भूमिकुण्डल	हपु० २२.१००
२६	मगधसारनलक	हपु० २२ ९९

क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ	क्र० सं०	नाम नगर	सन्दर्भ
२७.	रतिकूट	मपु० १९ ५१	२७.	मण्डित	हपु० २२ ९३
२८	रथनूपुरचक्रवाल	मपु० १९ ४६-४७	२८.	मणिप्रभ	हपु० २२ ९६
२९	लोहार्गल	मपु० १९ ४१	२९	महाकक्ष	हपु० २२ ९७
३०.	वज्राढ्य	मपु० १९ ४२	३०.	मातगपुर	हपु० २२ १००
३१.	वज्रार्गल	मपु० १९ ४२	३१.	मानव	हपु० २२.९५
३२.	विचित्रकूट	मपु० १९.५१	३२.	मेघकूट	हपु० २२ ९६
३३	विजया	मपु० १९.५०	३३	रत्नसंचय	हपु० २२ ९४
३४.	विनयचरी	मपु० १९.४९	३४	रथनूपुर	हपु० २२ ९३
३५.	विमुखी	मपु० १९ ५२-५३	३५	रथपुर	हपु० २२ ९४
३६	विमोच	मपु० १९ ४३	३६.	रम्यपुर	हपु० २२ ९८
३७	विरजस्का	मपु० १९ ४५	३७	लक्ष्मीकूट	हपु० २२ ९७
३८.	वैजयन्ती	मपु० १९ ५०	३८.	बृहद्गृह	हपु० २२ ९५
३९	वैश्रवणकूट	मपु० १९ ५१	३९.	वैजयन्त	हपु० २२ ९४
४०	शकटमुखी	मपु० १९ ४४	४०.	शखवज्र	हपु० २२ ९६
४१.	शुक्रपुर	मपु० १९ ४९	४१	शकटामुख	हपु० २२.९३
४२	श्रीधर	मपु० १९ ४०	४२.	शतह्रद	हपु० २२ ९५
४३	श्रीप्रभ	मपु० १९ ४०	४३.	शिवमन्दिर	हपु० २२.९४
४४	श्वेतकेतु	मपु० १९ ३८	४४	श्रीकूट	हपु० २२ ९७
४५	सजयन्ती	मपु० १९ ५०	४५.	श्रीपुर	हपु० २२ ९४
४६.	सिंहध्वज	मपु० १९ ३७	४६	सिन्धुवृक्ष	हपु० २२ ९७
४७	सुमुखी	मपु० १९ ५२-५३	४७	सुकक्ष	हपु० २२.९७
४८.	सूर्यपुर	मपु० १९ ५२-५३	४८	सूर्यपुर	हपु० २२ ९५
४९	सूर्याभ	मपु० १९ ५०	४९	स्वर्णनाभ	हपु० २२ ९५
५०	हेमकूट	मपु० १९ ५१-५३	५०	हिमपुर	हपु० २२ ९८

नदियाँ

क्र० सं०	नाम नदी	सन्दर्भ	क्र० सं०	नाम देश	सन्दर्भ
१	अम्बर्णा	मपु० २९ ८७	१५	करभवेगिनी	मपु० २९ ६५
२	अरुणा	मपु० २९ ५०	१६	करीरी	मपु० ३० ३७
३	अवन्तिकामा	मपु० २९ ६४	१७	कर्णकुण्डला	पपु० ५३ १६१-१६३
४	इक्षुमती	मपु० २९ ८३	१८	कर्णरवा	पपु० ४०.४०
५	उदुम्बरी	मपु० २९ ५४	१९	कलिंदकन्या	मपु० ७०.३४६
६	उन्मग्नजला	मपु० ३२ २१	२०	काचना	मपु० ६३ १५८
७	उशीरवती	मपु० ४६ १४५-१४६	२१.	कागन्धु	मपु० २९ ६४
८	ऊर्मिमालिनी	हपु० ५ २४१-२४२	२२	कालतोया	मपु० २९ ५०
९	ऊहा	मपु० २९ ६२	२३.	कालमही	मपु० २९ ५०
१०	ऋजुकूला	मपु० २४ ३४८-३५४	२४	कुब्जा	मपु० २८ ८७
११	ऐरावती	मपु० ६२ ३७९-३८०	२५	कुसुमवती	मपु० ५९ ११७-११९
१२	औदुम्बरी	मपु० २९ ५४	२६	कुहा	मपु० २९ ६२
१३	कजा	मपु० २९ ६२	२७.	कृतमाला	मपु० २९ ६३
१४.	कपीवती	मपु० २९ ४९, ६२	२८.	कृष्णवेणा	मपु० २९ ८६

क्र० सं०	नाम नदी	संदर्भ	क्र० सं०	नाम नदी	सन्दर्भ
२९	केतम्बा	मपु० ३० ६७	७०	बाणा	मपु० ३० ५४
३०	कौशिकी	मपु० २९ ५०	७१.	बीजा	मपु० २९ ५२
३१	क्रौंचरवा	पपु० ४२ ६१	७२.	भीमरथी	मपु० ३०-३५
३२.	क्षीरोदा	मपु० ६३ २०७	७३	मदना	मपु० ३० ५९
३३	गजवती	हपु० २७ १२-१४	७४	महागन्धवती	मपु० ७१ ३०९
३४	गन्धमादिनी	हपु० ५ २४२-२४३	७५.	महेन्द्रका	मपु० २९ ८४
३५.	गन्धावती	मपु० ७० ३२२	७६	माल्यवती	मपु० २९ ५९
३६.	गम्भीरा	मपु० २९ ५०	७७	माषवती	मपु० २९ ८४
३७	गोदावरी	मपु० २९.६०	७८	मुररा	मपु० ३० ५८
३८	गोमती	मपु० २९ ४९	७९	मूला	मपु० ३० ५६
३९.	चण्डवेगा	मपु० ५९ ११८-११९	८०	मेखला	मपु० २९ ५२
४०.	चर्मण्वती	मपु० २९ ६४	८१.	यमुना	मपु० ७०.३४६-३४७
४१	चित्रवती	मपु० २९ ५८	८२	यूपकेसरिणी	मपु० ५९ ११२-११८
४२	चुल्लितापी	मपु० २९ ६५	८३	रजतमालिका	मपु० ५८ ५०-५३
४३	चूर्णी	मपु० २९ ८७	८४	रत्नमालिनी	मपु० २१ ६-१४
४४.	जम्बूमती	मपु० २९ ६२	८५.	रथास्फा	मपु० २९ ४९
४५	तमसा	मपु० २९ ५४	८६	रम्या	मपु० २९ ६१
४६,	तरंगिणी	हपु० ४६ ४९	८७	रेवा	मपु० २९ ६५
४७	तापी	मपु० ३० ६१	८८	लांगलखातिका	मपु० ३० ६२
४८	ताम्रा	मपु० २९ ५०	८९	वंगा	मपु० २९ ८३
४९	तैला	मपु० २९ ८३	९०	वरदा	मपु० १७ २३
५०	दमना	मपु० ३० ५९	९१	वसुमती	मपु० २९ ६३
५१.	दशार्णी	मपु० २९ ६०	९२	वितता	हपु० ११ ७९
५२.	दारुवेणा	मपु० ३० ५५	९३	विशाला	मपु० २९ ६१
५३	वैर्या	मपु० २९ ८७	९४	वृत्रवती	मपु० २९ ५८
५४	नक्ररवा	मपु० २९ ८३	९५	वेगवती	मपु० ७३ २२-२४
५५	नन्दा	मपु० २९ ६५	९६	वेणा	मपु० २९ ८७
५६.	नालिका	मपु० २९ ६१	९७	वेणुमती	मपु० २९ ६०
५७	नि कुन्दरी	मपु० २९.६१	९८	वैतरणी	मपु० २९ ८४
५८.	निचुरा	मपु० २९ ५०	९९	व्याघ्री	मपु० २९ ६४
५९	निमग्नजला	मपु० ३२ २१	१००	शतभोगा	मपु० २९ ६५
६०	निर्विन्ध्या	मपु० २९ ६२	१०१	शर्करावती	मपु० २९ ६३
६१	निष्कुन्दरी	मपु० २९ ६१	१०२.	शर्वरी	मपु० ३२ २८-२९
६२	नीरा	मपु० ३० ५६	१०३.	शुक्तिमती	मपु० २९ ५४
६३	पनसा	मपु० २९ ५४	१०४.	शुष्कनदी	मपु० २९ ८४
६४	पारा	मपु० २९ ६१	१०५	शोणनद	मपु० २९ ५२
६५	परिजा	मपु० २९ ६९	१०६	श्वसना	मपु० २९ ८३
६६	प्रमृशा	मपु० २९ ५४	१०७	सन्नीरा	मपु० २९ ८६
६७	प्रवेणी	मपु० २९ ८६	१०८.	सप्तपारा	मपु० २९ ६५
६८	प्रहरा	मपु० ३० ५४	१०९	समतोया	मपु० २९ ६२
६९	बहुवज्रा	मपु० २९ ६१	११०	सरयू	मपु० १४ ६९, १६ २२५

क्र० सं०	नाम नदियाँ	संदर्भ	क्र० सं०	नाम नदियाँ	संदर्भ
१११	सिकतिनी	मपु० २९ ६१	११६.	सूकरिका	मपु० २९ ८७
११२	सिन्धु	मपु० १६ २०९	११७.	हसावली	पपु० १३.८२
११३.	सुप्रयोगा	मपु० २९ ८६	११८.	हरवती	मपु० ५९ ११८-११९
११४	सुमागधी	मपु० २९.४९	११९.	हरिद्वती	हपु० २७ १२-१३
११५.	सुवर्णवती	मपु० ५९ ११८-११९	१२०.	हस्तिपानी	मपु० २९ ६४-६६

पर्वत

क्र० सं०	नाम पर्वत	सन्दर्भ	क्र० सं०	नाम पर्वत	सन्दर्भ
१.	अगिरेयिक	मपु० २९ ७०	३३.	गोरथ	मपु० २९ ४६
२	अजनगिरि	पपु० ८ ३२४	३४	गोवर्द्धन	मपु० ७० ४३८
३	अम्बरतिलक	मपु० ६ १३१	३५	गोशीर्ष	मपु० २९ ८९
४.	अम्बुदावर्त	हपु० ६० १९-२१	३६	चन्द्रोदय	मपु० ७५ ३५९-३६५
५	अष्टापद	पपु० १५.७६	३७	चित्रकूट	मपु० ६८ १२६
६.	असुरधूपन	मपु० २९ ७०	३८.	चेदि	मपु० २९ ५५
७.	आनग	मपु० २९ ७०	३९.	जगत्पादगिरि	मपु० ६८ ४६८
८.	आपाण्डर	मपु० २९ ४६	४०.	जाम्बव	हपु० ४४.७
९.	इक्ष्वाकार	मपु० ५४.८६	४१.	तुगवरक	मपु० ३० ४९
१०.	उदक	हपु० ५ ४६१	४२.	तुगीगिरि	हपु० ६३.७२-७४
११	उपवास	हपु० ५ ४६१	४३.	तैराश्चिक	मपु० २९.६७
१२.	ऊर्जयन्त	पपु० २० ३६,५८	४४.	दण्डक	पपु० ४२ ८७-८८
१३	ऋक्षवत	मपु० २९ ६९	४५.	दर्दुराद्रि	मपु० २९ ६९
१४	ऋषिगिरि	हपु० ३.५१-५३	४६	दिशागिरि	मपु० ७५ ४७९
१५.	ऋष्यमूक	मपु० २९ ५६	४७.	दुर्गगिरि	पपु० ८५.१३९
१६.	कम्बल	मपु० २९.६९	४८	दुर्दर	मपु० २९ ८८-८९
१७	कर्कोटक	हपु० २१ १२३	४९.	धरणीमौलि	पपु० ६ ५१०-५११
१८	कर्ण	पपु० ६.५२९	५०	नन्दन	मपु० ६३.३३
१९	कवाटक	मपु० २९ ८९	५१.	नभस्तिलक	मपु० ५४ १२५-१२६
२०	काचनकूट	हपु० ५ २००-२०१	५२	नाग	मपु० २९ ८८
२१.	किष्किन्ध	मपु० २९ ९०	५३	नागप्रिय	मपु० २९ ५७-५८
२२.	किञ्कु	पपु० ६.८२	५४	नाभि	मपु० ४५ ५८
२३	कुण्डलगिरि	मपु० ५.२९१	५५	निकुज	पपु० ८५.६३
२४.	कुल्जक	मपु० ७३ १२	५६	पचगिरि	पपु० ५ २५ २९
२५	कूटाद्रि	मपु० २९ ६७	५७	पाण्ड्य	मपु० २९.८९
२६.	कृष्णगिरि	मपु० ३० ५०	५८.	वारियात्र	मपु० २९ ६७
२७	कोलाहल	मपु० २९ ५६	५९	पुष्पगिरि	मपु० २९.६८
२८	कौस्तुभ	हपु० ५ ४६०	६०	पुष्पप्रकीर्णक	पपु० ७९ २७-२८
२९	गदागिरि	मपु० २९.६८	६१	भीमकूट	मपु० ७५.४५-४८
३०	गन्धमादन	मपु० ७१ ३०९	६२.	मणिकान्त	पपु० ९ ४०-४२
३१.	गिरिकूट	हपु० २१ १०२	६३.	मदेभ	मपु० २९ ७०
३२.	गुज	पपु० ८ २०१	६४	मधु	मपु० १ ५८

क्र० सं०	नाम पर्वत	सम्बर्भ
६५	मनुजोदय	मपु० ७५ ३०१-३०३
६६.	मलय	मपु० २९ ८८
६७	मलयगिरि	मपु० ३०.२६-२७
६८	महेन्द्र	मपु० २९ ८८
६९.	मानुषोत्तर	मपु० ५ २९१
७०	माल्यगिरि	मपु० ३० २६-२७
७१	मुकुन्द	मपु० ३० ५०
७२	मुनिसागर	मपु० ६३ ९१-९५
७३	मेघरव	पपु० ८ ९०-९५
७४	मेरु	मपु० ४ ४७-४८
७५	रतिकर	हपु० ५ ६७३-६७६
७६.	रतिशैल	पपु० ५३ १५८-१६०
७७	रत्नावर्त	मपु० ४७.२१-२२
७८	रथावर्त	मपु० ६२ १२६
७९	रामगिरि	हपु० ४६ १७-२३
८०	रुचकवर	हपु० ५ ६९९-७२८
८१.	रैवतक	मपु० ७१ १७९-१८१
८२	वंशधर	पपु० १ ८४
८३	वनगिरि	मपु० ६७ ९०-१२१
८४	वर्निसिंह	वीवच० ४ २
८५	वराह	मपु० ७२ १०८-११०
८६	वरुण	हपु० २७ ११-१४
८७	वलाहक	पपु० ८ २४
८८	वसन्त	पपु० २१-२३-१२७
८९	वासवन्त	मपु० २९ ७०
९०	विजयार्ध	मपु० १८ १७०-१७६
९१	विद्युत्प्रभ	हपु० ५ २१२
९२.	विपुलाचल	मपु० १ १९६
९३	विमलकान्तार	मपु० ५९ १८८
९४	वेलन्धर	पपु० ५४ ६४
९५	वैडूर्य	मपु० २९ ६७
९६	वैताढ्य	हपु० ४२ १४-१९
९७	वैभार	मपु० २९ ४६
९८	शङ्खशैल	मपु० ६३ २४६-२४८
९९	शत्रुंजय	मपु० ७२ २६७-२७०
१००	शिखिभूधर	मपु० ७६ ३२३-३२४
१०१.	शीतगुह	मपु० २९ ८९
१०२	श्री	मपु० २९ ९०
१०३	श्रीकटन	मपु० २९ ८९
१०४	श्रीनाग	मपु० ६६.२, १३-१४
१०५	श्रीप्रभ	मपु० १० १-३

क्र० सं०	नाम पर्वत	संदर्भ
१०६	श्रीशैल	पपु० १९ १०६
१०७.	सन्ध्यावर्त	पपु० ८ २४-२८
१०८	सर्वशैल	मपु० ६२ ४९६
१०९.	सितगिरि	मपु० २९ ६८
११०.	सिद्धिगिरि	मपु० ६३ ३७-३९
१११	सीमन्त	मपु० ६७ ६१
११२	सुमन्दर	मपु० ३० ५०
११३	सुवेलगिरि	पपु० ५४.६२-७१
११४	सौम्य	हपु० ७० २७९
११५	स्फुरत्पीठ	मपु० ६८ ६४३-६४६
११६.	ह्रीमन्त	मपु० ६२ २७४

महानदियाँ

१ गंगा	२ सिन्धु	३ रोह्या/रोहित
४ रोहितास्या	५ हरित्	६ हरिकान्ता
७ सीता	८. सीतोदा	९ नारी
१० नरकान्ता	११. सुवर्णकूला	१२ रूप्यकूला
१३ रक्ता	१४ रक्तोदा	

मपु० ६३.१९५-१९६, हपु० ५ १२३-१२४

जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में स्थित सोलह वक्षारगिरि

१ चित्रकूट	२ पद्मकूट	३ नलिनकूट	४ एकशैल
५ त्रिकूट	६ वैश्रवणकूट	७ अजनात्म	८ आत्मांजन/अंजन
९ श्रद्धावान्	१० विजयवान्/विजयावती	११ आशीविष	१२ सुखावह
१३ चन्द्रमाल	१४ सूर्यमाल	१५ नागमाल	१६ मेघमाल/देवमाल

मपु० ६३.२०२-२०४, हपु० ५ २२८-२३५

बत्तीस विदेह (देश) एवं उनकी राजधानियाँ

देश का नाम	राजधानी
१ कच्छा	क्षेमा
२ सुकच्छा	क्षेमपुरी
३ महाकच्छा	अरिष्टा/रिष्टा
४ कच्छकावती	अरिष्टपुरी/रिष्टपुरी
५ आवर्ता	खड्गा/खगा
६ लांगला	मंजूषा
७ पुष्कला	औषधी
८ पुष्कलावती	पुण्डरीकिणी
९ वत्सा	सुसीमा
१० सुवत्सा	कुण्डला
११ महावत्सा	अपराजिता

देश का नाम	राजधानी
१२ वत्सकावती	प्रभकरा
१३ रम्या	अकावती
१४ रम्यका	पद्मावती
१५ रमणीया	शुभा
१६ मंगलावती	रत्नसंचया
१७ पद्मा	अश्वपुरी
१८ सुपद्मा	सिंहपुरी
१९ महापद्मा	महापुरी
२० पद्मावती/पद्मकावती	विजयापुरी
२१ शंखा	अरजा
२२ नलिना/नलिनी	विरजा
२३ कुमुदा	अशोका
२४ सरिता	वीतशोका
२५ वप्रा	विजया
२६ सुवप्रा	वैजयन्ती
२७ महावप्रा	जयन्ती
२८ वप्रकावती	अपराजिता
२९ गन्धा	चक्रा
३० सुगन्धा	खड्गा/खगा
३१ गन्धावत्सुगन्धा/गन्धिका	अयोध्या
३२ गन्धमालिनी	अवध्या

मपु० ६३ २०८-२१८, हपु० ५ २४४-२५२, २५७-२६६

वन

क्र० सं०	नाम वन	सन्दर्भ
१.	अक्षयवन	पपु० ५४ ७२
२	अशोक	मपु० ७५.६७६-६७७, २२.१८०
३.	आम्र	मपु० २२ १६३, १८३
४.	उपपाण्डुक	हपु० ५ ३०९
५.	उपसौमनस	हपु० ५ ३०८
६.	उल्कामुख	मपु० ७० १५६
७.	कपित्थ	मपु० ७५ ४७९
८	कालजर	पपु० ५९ १२
९.	कालक	मपु० ५९ ११६
१०.	कालिंगक	मपु० २९ ८२
११.	कुटज	मपु० ७४.३८९-३९०
१२	कौशाम्ब	हपु० ६२ १५-६१
१३	क्षीरवन	मपु० ७२.१२०
१४	खण्डवन	मपु० ७४ ३०२-३०४
१५	खदिर	मपु० १२ ५१-५३
१६	गोषा	मपु० ७० ४३१
१७	चन्दन	मपु० ६२ ४०९
१८	चम्पक	मपु० २२ १६३
१९.	चारणचरित	पपु० ६ १२६-१३१
२०.	चारणप्रिय	पपु० ४६ १४१-१४३
२१.	चैत्रवन	मपु० ६९ ५४
२२.	ज्योतिर्वन	मपु० ६२ २२८
२३.	दण्डकारण्य	मपु० ७५ ५५४
२४.	दशार्णक	मपु० २९.४४
२५.	दुर्जय	हपु० ४७ ४३
२६	देवरमण	हपु० ५ ३६०
२७.	धान्यकमाल	मपु० ४६ ९४
२८	नन्दन	मपु० ५ १४४
२९.	नन्दिघोष	मपु० ७२ ३-१४
३०.	नागरमण	हपु० ५ ३०७
३१.	नारिकेलवन	मपु० ३०.१३-१४
३२	निकुंज	पपु० ८५ ६३
३३	नील	मपु० ६७ ४१
३४.	पाण्डुक	हपु० ५ ३०८-३०९
३५.	पुष्पवन	पपु० ७ १४६
३६	प्रकीर्णक	पपु० ४६ १४३-१४६
३७	प्रियखुखण्ड	मपु० ५९ २७४
३८.	प्रीतिंकर	मपु० ५९ २-७
३९	भद्रशाल	मपु० ५ १८२
४०.	भीमवन	मपु० ५९ ११६
४१	भूतरमण	हपु० ८५.३०७
४२.	भूतवन	मपु० ४७ ६५-६७
४३	मधुक	मपु० ६२ ८६-८७
४४	मनोहर	मपु० ५२ ५१
४५.	मन्दारुणारण्य	पपु० ८ २४
४६.	महाकाल	हपु० ३३ १०२
४७.	मेखला	पपु० ८ ४५२-४५३
४८	विजय	हपु० ६२ १३-१५
४९.	वैश्रवन	हपु० २१ १०२-१०३
५०	शल्लकी	पपु० ८५ १४७-१६३
५१	शिवंकर	मपु० ४६ १९-२०
५२	श्लेषमान्तक	हपु० ४५ ६९
५३.	श्वेतवन	मपु० ६६ ४७
५४.	सभूतरमण	मपु० ६२ ३७९-३८०
५५	सप्तपर्ण	हपु० ५ ३९७-४२२
५६	समुच्चय	पपु० ४६ १४१
५७	सर्वर्तुक	मपु० ५४ २१६-२१७

आभूषण

क्र० सं०	नाम आभूषण	संदर्भ
१	अंगद	मपु० ३.२७, ७ २३५
२.	अपवर्तिका	मपु० १६.४९-५१
३	अवतंश	हपु० ४३.२४
४	अवतंशिका	मपु० ३७.१५३
५	कटक	मपु० ३ २७, पपु० ३.१९३
६.	कटिसूत्र	पपु० ३ १९४
७	कण्ठक	हपु० ६२ ८
८	कण्ठमालिका	मपु० ६ ८
९	कण्ठाभरण	मपु १५ १९३
१०	किरीट	मपु० ११.१३३
११.	कुण्डल	मपु० ३ २७
१२.	कुण्डली	मपु० ३ ७८
१३	केयूर	मपु० ३ २७
१४	ग्रैवेयक	मपु० २९ १६७
१५,	चूडामणि	मपु० ४ ९४
१६	नूपुर	मपु० ६ ६३
१७.	पट्टबन्ध	मपु० १६ २३३
१८	मणिकुण्डल	मपु० ९.१९०
१९	मणिमाध्यमा	मपु० १६.५०
२०	मणितोपान	मपु० १६ ६५-६६
२१.	मुकुट	मपु० ३ ९१
२२	मुक्ताहार	मपु० १५ ८१
२३.	मुद्रिका	मपु० ७.२३५
२४.	मेखला	मपु० ३ २७
२५	यष्टि	मपु० १६ ४६-४७
२६	रत्नावली	मपु० १६ ४६
२७	रश्मिकलाप	मपु० १६ ५९
२८.	विजयच्छन्द	मपु० १६.५७
२९.	शीर्षकयष्टि	मपु० १६.५२
३०.	हारयष्टि	मपु० ७.२३१
३१.	हारलता	मपु० १५ १९३-१९४
३२.	हारवल्लरी	मपु० १५ १९४
३३.	हेमजाल	मपु० ३० १२७

इक्ष्वाकुवंश

अकारादि क्रम में इस वंश के निम्न नृप हुए हैं—

क्र० सं०	नाम नृप	सन्दर्भ
१	अनन्तरथ	पपु० २२ १६२
२.	अनरण्य	पपु० २२ १६०
३	अर्ककीर्ति	पपु० २१.५६
४	इन्द्ररथ	पपु० २२ १५४-१५९
५.	ऋषभदेव	पपु० २१ ५६
६.	ककुत्थ	पपु० २२ १५८
७	कमलबन्धु	पपु० २२ १५५-१५९
८	कीर्तिधर	पपु० २१ १४०
९	कुन्थुभक्ति	पपु० २२.१५७
१०	कुबेरदत्त	पपु० २२ १५६-१५९
११	कृतवीर	मपु० ६५ ५६-५८
१२	चतुर्वक्त्र	पपु० २२ १५३, १५९
१३	जितशत्रु	हपु० २८ १४-२७
१४.	दशरथ	पपु० २२ १६२
१५	दिननाथरथ	पपु० २२ १५४-१५९
१६.	द्विरदरथ	पपु० २२ १५७
१७.	धरणीधर	पपु० ५ ५९-६०
१८.	नघुष	पपु० २२ ११३
१९	पद्मनाभ	मपु० ५४ १३०-१७३
२०	पुजस्थल	पपु० २२ १५८
२१.	पुरन्दर	पपु० २१ ७७
२२	पृथु	पपु० २२ १५४-१५९
२३.	प्रतिमन्यु	पपु० २२ १५५
२४.	प्रियमित्र	मपु० ६१ ८८
२५.	ब्रह्मरथ	पपु० २२ १५४
२६	भरत	पपु० २१ ५६
२७	मान्धाता	पपु० २२ १५४-१५५
२८	मृगेशदमन	पपु० २२.१५७-१५८
२९	मेरु	हपु० ५० ७०
३०	रघु	पपु० २२.१५८
३१	रविमन्यु	पपु० २२ १५५-१५९
३२.	वज्रबाहु	पपु० २१ ७७
३३	वसन्ततिलक	पपु० २२ १५६-१५९
३४	विजय	पपु० २१.७४
३५	वीरसेन	पपु० २२ १५५
३६.	शतरथ	पपु० २२.१५३-१५४
३७.	शरभरथ	पपु० २२.१५७
३८	समुद्रविजय	मपु० ४८ ७१-७२
३९	सिंहरथ	पपु० २२ १४५
४०.	सिंहसेन	मपु० ६० १६-२२
४१.	सुकोशल	पपु० २१ १६४
४२.	सुरेन्द्रमन्यु	पपु० २१ ७५
४३.	सोमदेव	पपु० २१ ५६

क्र० सं०	नाम नृप	सन्दर्भ
४४	मोदास	पपु० २२.१३१
४५.	हिरण्यकशिपु	पपु० २२.१५८-१५९
४६	हिरण्याभ	पपु० २२.१०२
४७	हेमरथ	पपु० २०.१५३

नोट —सूर्यवंश और चन्द्रवंश इसी वंश की दो शाखाएँ हैं।

कौरव वंश

अकारादि क्रम से इस वंश में निम्न राजा हुए हैं—

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
१	अनन्तनाग	हपु० ४५.२१
२	अर्जुन	हपु० ४५.३७
३	इन्द्रवीर्य	हपु० ४५.२७
४	इभवाहन	हपु० ४५.१८
५	कर्ण	हपु० ४५.३७
६	कीर्ति	हपु० ४५.२५
७	कुन्थुनाथ	हपु० ४५.२०
८	कुरु	हपु० ४५.९
९	कुरु	हपु० ४५.१९
१०.	कुरुचन्द्र	हपु० ४५.९
११.	कुलकीर्ति	हपु० ४५.२५
१२	गंगदेव	हपु० ४५.११
१३	चन्द्रचिह्न	पापु० ६.३
१४	चारु	हपु० ४५.२३
१५	चारुपद्म	हपु० ४५.२३
१६	चारुरूप	हपु० ४५.२३
१७	चित्र	हपु० ४५.२७
१८	चित्ररथ	हपु० ४५.२८
१९.	जयकुमार	हपु० ४५.८
२०	जयराज	हपु० ४५.१५
२१	द्रोण	हपु० ४५.३०
२२.	द्वैपायन	हपु० ४५.३०
२३	दुर्योधन	हपु० ४५.३६
२४	धाराग	हपु० ४५.२९
२५	धृत	हपु० ४५.२९
२६	धृत	हपु० ४५.३२
२७	धृततेज	हपु० ४५.३२
२८	धृतधर्मा	हपु० ४५.३२
२९	धृतपद्म	हपु० ४५.१२
३०	धृतमान	हपु० ४५.३२
३१	धृतयश	हपु० ४५.३२
३२.	धृतराज	हपु० ४५.३३
३३	धृतराष्ट्र	हपु० ४५.३४
३४.	धृतवीर्य	हपु० ४५.१२
३५	धृतव्यास	हपु० ४५.३३
३६.	धृतिकर	हपु० ४५.९
३७.	धृतिकर	हपु० ४५.११
३८	धृतिंकर	हपु० ४५.१३
३९.	धृतिषेण	हपु० ४५.११
४०	धृतिदेव	हपु० ४५.११
४१.	धृतिदृष्टि	हपु० ४५.१३
४२	धृतिद्युति	हपु० ४५.१३
४३.	धृतिमित्र	हपु० ४५.११
४४	धृतेन्द्र	हपु० ४५.१२
४५.	धृतास्य	हपु० ४५.३२
४६.	नकुल	हपु० ४५.३८
४७	नरहरि	हपु० ४५.१९
४८.	नारायण	हपु० ४५.१९
४९.	पद्म	हपु० ४५.२८
५०	पद्मदेव	हपु० ४५.२५
५१.	पद्ममाल	हपु० ४५.२८
५२.	पद्मरथ	हपु० ४५.२४
५३.	पाण्डु	हपु० ४५.३४
५४	पद्मसार	हपु० ४५.२९
५५.	पृथु	हपु० ४५.१४
५६	प्रतिष्ठित	हपु० ४५.१२
५७	प्रतिमर	हपु० ४५.२१
५८	प्रशान्ति	हपु० ४५.१९
५९	प्रीतिकर	हपु० ४५.१३
६०	बलि	हपु० ४८.४८
६१	बृहद्ध्वज	हपु० ४५.१७
६२	भीम	हपु० ४५.३७
६३	भीष्म	हपु० ४५.३५
६४	भ्रमरघोष	हपु० ४५.१४
६५	मन्दर	हपु० ४५.११
६६	महापद्म	हपु० ४५.२४
६७	महारथ	हपु० ४५.२८
६८	महाराज	हपु० ४५.१५
६९	महासर	हपु० ४५.२९
७०	युधिष्ठिर	हपु० ४५.३७
७१	वरकुमार	हपु० ४५.१७
७२	वसु	हपु० ४५.२६
७३	वसुकीर्ति	हपु० ४५.२५

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
७४	वसुन्धर	हपु० ४५.२६
७५	वसुरथ	हपु० ४५.२७
७६	वासव	हपु० ४५ २६
७७.	वासुकि	हपु० ४५.२६
७८	विचित्र	हपु० ४५.२७
७९.	विचित्र	हपु० ४५ २७
८०.	विचित्रवीर्य	हपु० ४५.२७
८१	विजय	हपु० ४५.१५
८२	विदुर	हपु० ४५.३४
८३	विश्व	हपु० ४५ १७
८४	विश्वकेतु	हपु० ४५.१७
८५	विश्वसेन	हपु० ४५ १८
८६.	विष्णु	हपु० ४५ २४
८७	वीर्य	हपु० ४५.२७
८८	वृतरथ	हपु० ४५ २८
८९	वृषध्वज	हपु० ४५ २८
९०	वृषानन्त	हपु० ४५ २८
९१.	वैश्वानर	हपु० ४५.१७
९२	व्रतधर्मा	हपु० ४५ २९
९३.	व्रात	हपु० ४५ ११
९४	शन्तनु	हपु० ४५ ३१
९५.	शर	हपु० ४५.२९
९६	शरद्वीप	हपु० ४५ ३०
९७	शशांकाक	हपु० ४५ १९
९८	शान्तिचन्द्र	हपु० ४५.१९
९९.	शान्तिनाथ	हपु० ४५.१८
१००	शान्तिभद्र	हपु० ४५ ३०
१०१	शान्तिवर्धन	हपु० ४५ १९
१०२	शान्तिषेण	हपु० ४५.३०
१०३.	शुभंकर	हपु० ४५ ९
१०४	श्रीचन्द्र	हपु० ४५ १२
१०५	श्रीवसु	हपु० ४५ २६
१०६	श्रीव्रत	हपु० ४५ २९
१०७	श्रेयान्	हपु० ४५ ९
१०८	सनत्कुमार	हपु० ४५.१६
१०९	सहदेव	हपु० ४५ ३८
११०	सुकुमार	हपु० ४५ १७
१११	सुकीर्ति	हपु० ४५ २५
११२	सुचारु	हपु० ४५ २३
११३	सुतेजस	हपु० ४५ १४
११४	सुदर्शन	हपु० ४५ २१
११५	सुपद्म	हपु० ४५ २५
११६.	सुप्रतिष्ठ	हपु० ४५ १२
११७	सुभौम	हपु० ४५ २४
११८.	सुमित्र	हपु० १८ १९
११९	सुवसु	हपु० ४५ २६
१२०	सुव्रत	हपु० ४५.११
१२१.	सुशान्ति	हपु० ४५ ३०
१२२	सूर्य	हपु० ४५ २०
१२३	सूर्यघोष	हपु० ४५ १४
१२४	सोमप्रभ	हपु० ४५ ७
१२५.	हरिघोष	हपु० ४५ १४
१२६	हरिध्वज	हपु० ४५ १४

गान्धर्व-भेद-प्रभेद

१ स्वरगत-गान्धर्व-भेद

वैणस्वर भेद

१. श्रुति	२ वृत्ति	३. स्वर
४. ग्राम	५. वर्ण	६ अलंकार
७ मूर्च्छना	८ धातु	९ साधारण

हपु० १९.१४७

शरीर स्वर-भेद

१ जाति	२ वर्ण	३. स्वर	४ ग्राम
५ स्थान	६. साधारणक्रिया	७ अलंकारविधि	

हपु० १९ १४८

२ पदगत-गान्धर्व-भेद

१. जाति	२ तद्धित	३ छन्द	४ सन्धि
५ स्वर	६ विभक्ति	७ सुबन्त	८ तिङन्त
९ उपसर्ग	१० वर्ण		

हपु० १९.१४९

३ तालगत-गान्धर्व-भेद

१ आवाप	२ निष्काम	३ विक्षेप	४ प्रवेशन
५ शम्याताल	६ परावर्त	७. सन्निपात	८ सवस्तुक
९ मात्रा	१० अविदार्य	११ अंग	१२ लय
१३ गति	१४ प्रकरण	१५ यति	
१६ गीति (दो प्रकार की)		१७ मार्ग	१८ अवयव
१९ पादभाग		२०. नपाणि	

हपु० १९ १५०-१५२

स्वर भेद

१ षड्ज २. ऋषभ ३ गान्धार ४ मध्यम
५ पचम ६ धैवत ७ निषाद

पपु० १७ २७७ हपु० १९ १५३

षड्जग्राम की जातियाँ

१ षाड्जी २ आर्षभी ३. धैवती ४ निषादजा
५ सुषड्जा ६ उदोच्यवा ७ षड्जकैशिकी ८ षड्जमध्या

हपु० १९ १७४-१७५

षड्जग्राम की मूर्च्छनाएँ

१. उत्तरमन्द्रा २ रजनी ३ उत्तरायता
४ शुद्धिषड्जा ५ मत्सरीकृता ६ अश्वक्रान्ता
७ आभिरुद्गता

हपु १९ १६१-१६२

मध्यमाश्रित जातियाँ

१ गान्धारी २. मध्यमा ३ गान्धारोदीच्यवा
४ पचमी ५ रक्तगान्धारी ६ रक्तपचमी
७. मध्यमोदीच्यमा ८ नन्दयन्ती ९ कर्मारवी
१० आन्ध्री ११ कैशिकी

हपु० १९.१७५-१७७

मध्यम ग्राम की मूर्च्छनाएं

१ सौवीरी २ हरिणाश्वा ३ कलोपनता ४. शुद्धमध्यमा
५ मार्गवी ६ पौरवी ७ हृष्यका

हपु० १९ १६३-१६४

राजा धृतराष्ट्र और रानी गान्धारी के सौ पुत्र

क्रमांक	नाम	नाम पुराण	सन्दर्भ पर्व	श्लोक
१	दुर्योधन	पाण्डव पु०	८	१८७-१९१
२	दु शासन	,,	,,	१९२
४	दुर्धर्षण	,,	,,	१९३
५	रणश्रान्त	,,	,,	,,
६	ममाघ	,,	,,	,,
७	विद	,,	,,	,,
८	मर्वसह	,,	,,	,,
९	अनुविन्द	,,	,,	१९४
१०	सुभीम	,,	,,	,,
११	सुबाहु	,,	,,	,,
१२	दु'सह	,,	,,	,,
१३	दु शल	,,	,,	,,
१४	सुगात्र	,,	,,	,,
१५	दु कर्ण	पाण्डव पु०	८	१९४
१६	दु श्रव	,,	,,	,,
१७	वरवश	,,	,,	१९५
१८	अवकीर्ण	,,	,,	,
१९	दीर्घदर्शी	,,	,,	,
२०.	सुलोचन	,,	,,	,,
२१.	उपचित्र	,,	,,	,,
२२	विचित्र	,,	,,	,,
२३	चारुचित्र	,,	,,	,,
२४	शरासन	,,	,,	,,
२५	दुर्मद	,,	,,	१९६
२६.	दु प्रगाह	,,	,,	,,
२७	युयुत्सु	,,	,,	,,
२८	विकट	,,	,,	,,
२९	ऊर्णनाभ	,,	,,	,,
३०	सुनाभ	,,	,,	,,
३१	नन्द	,,	,,	,,
३२	उपनन्दक	पाण्डव पु०	८	१९६
३३	चित्रवाणि	,,	,,	१९७
३४	चित्रवर्मा	,,	,,	,,
३५	सुवर्मा	,,	,,	,,
३६	दुर्विमोचन	,,	,,	,,
३७	अयोबाहु	,,	,,	,,
३८	महाबाहु	,,	,,	,,
३९	श्रुतवान्	,,	,,	,,
४०	पद्मलोचन	,,	,,	,,
४१	भीमबाहु	,,	,,	१९८
४२	भीमबल	,,	,,	,,
४३	सुसेन	,,	,,	,,
४४	पण्डित	,,	,,	,,
४५	श्रुतायुध	,,	,,	,,
४६	सुवीर्य	,,	,,	,,
४७	दण्डधार	,,	,,	,,
४८	महोदर	,,	,,	,,
४९	चित्रायुध	,,	,,	१९९
५०.	निषगी	,,	,,	,,
५१	पाश	,,	,,	,,
५२	वृन्दारक	,,	,,	,,
५३.	शत्रुजय	,,	,,	,,
५४	शत्रुसह	,,	,,	,,
५५	सत्यसन्ध	,,	,,	,,

क्रमांक	नाम	नाम पुराण	सन्दर्भ पर्व	श्लोक सख्या
५६	सुदु सह	पाण्डव पु०	८	१९९
५७	सुदर्शन	,,	,,	२००
५८	चित्रसेन	,,	,,	,,
५९	सेनानी	,,	,,	,,
६०	दु पराजय	,,	,,	,,
६१	पराजित	,,	,,	,,
६२	कुण्डशायी	,,	,,	,,
६३	विशालाक्ष	,,	,,	,,
६४	जय	,,	,,	,,
६५	दृढहस्त	,,	,,	२०१
६६	सुहस्त	,,	,,	,,
६७	वातवेग	,,	,,	,,
६८.	सुवर्चस्	,,	,,	,,
६९	आदित्यकेतु	,,	,,	,,
७०	बह्वाशी	,,	,,	,,
७१.	निबन्ध	,,	,,	,,
७२.	विप्रियोदि	,,	,,	,,
७३.	कवची	,,	,,	२०२
७४	रणशौण्ड	,,	,,	,,
७५	कुण्डधार	,,	,,	,,
७६	धनुर्धर	,,	,,	,,
७७	उग्ररथ	,,	,,	,,
७८	भीमरथ	,,	,,	,,
७९	शूरबाहु	,,	,,	,,
८०	अलोलुप	,,	,,	,,
८१	अभय	,,	,,	२०३
८२	रौद्रकर्मा	,,	,,	,,
८३.	दृढरथ	,,	,,	,,
८४	अनादृष्ट	,,	,,	,,
८५	कुण्डभेदी	,,	,,	,,
८६	विराजी	,,	,,	,,
८७	दीर्घलोचन	,,	,,	,,
८८	प्रथम	,,	,,	२०४
८९	प्रमाथी	,,	,,	,,
९०	दीर्घालाप	,,	,,	,,
९१.	वीर्यवान्	,,	,,	,,
९२	दीर्घबाहु	,,	,,	,,
९३	महावक्ष	,,	,,	,,
९४.	दृढवक्ष	,,	,,	,,
९५	सुलक्षण	,,	,,	,,
९६.	कनक	,,	,,	२०५
९७	काचन	पाण्डव पु०	८	२०५
९८	सुध्वज	,,	,,	,,
९९.	सुभुज	,,	,,	,,
१००	अरज	,,	,,	,,

राक्षस वंश

इस वंश में अकारादि क्रम में निम्न राजा हुए है—

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
१.	अनिल	पपु० ५ ३९७
२	अनुत्तर	पपु० ५.३९६
३	अमृतवेग	पपु० ५ ३९३
४	अरिमर्दन	पपु० ५ ३९६
५	अरिसन्त्रास	पपु० ५.३९८
६.	अर्हद्भक्ति	पपु० ५ ३९६
७	आदित्यगति	पपु० ५.३८
८	इन्द्र	पपु० ५.३९४
९	इन्द्रजित्	पपु० ५ ३९४
१०	इन्द्रप्रभ	पपु० ५.३९४
११	उग्रश्री	पपु० ५ ३९६
१२.	उद्धारक	पपु० ५ ३९५
१३.	कीर्तिधवल	पपु० ५.४०३
१४.	गतप्रभ	पपु० ५ ३९७
१५	गुहक्षोभ	पपु० ५ ३९८
१६	घनप्रभ	पपु० ५ ४०३
१७	चकार	पपु० ५.३९५
१८	चण्ड	पपु० ५ ३९७
१९.	चन्द्रावर्त	पपु० ५.३९८
२०	चामुण्ड	पपु० ५ ३९६
२१.	चिन्तागति	पपु० ५ ३९३
२२.	जितभास्कर	पपु० ५ ३९८
२३.	त्रिजट	पपु० ५ ३९५
२४	द्विपवाह	पपु० ५ ३९६
२५	नक्षत्रदमन	पपु० ५ ३९८
२६	निर्वाणभक्ति	पपु० ५ ३९६
२७.	पवि	पपु० ५ ३९४
२८	पूजार्ह	पपु० ५ ३८८
२९	प्रमोद	पपु० ५.३९५
३०	बृहत्कात	पपु० ५.३९८
३१.	बृहद्गति	पपु० ५ ३९७
३२	भानु	पपु० ५.३९४

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
३३.	भानुगति	पपु० ५.३९३
३४.	भानुप्रभ	पपु० ५ ३९४
३५	भानुवर्मा	पपु० ५.३९४
३६	भास्कराभ	पपु० ५ ३९७
३७	भीम	पपु० ५ ३९५
३८	भीमप्रभ	पपु० ५ ३८२
३९	भीष्म	पपु० ५ ३९६
४०.	मनोरम्य	पपु० ५ ३९७
४१	मनोवेग	पपु० ५ ३७८
४२	मयूरवान्	पपु० ५ ३९७
४३	मरीच	पपु० १२.१९६
४४	महाबाहु	पपु० ५ ३९७
४५	महारथ	पपु० ५.३९८
४६	मारण	पपु० ५ ३९६
४७.	माली	प्रपु० ६.५३०-५६५
४८	मृगारिदमन	पपु० ५.३९४
४९.	मेघ	पपु० ५ ३९४
५०.	मेघध्वन	पपु० ५ ३९८
५१.	मोहन	पपु० ५ ३९५
५२	रवि	पपु० ५ ३९५
५३	राक्षस	पपु० ५.३७८
५४.	लकाशोक	पपु० ५ ३९७
५५.	वज्रमध्य	पपु० ५.३९५
५६.	श्रीग्रीव	पपु० ५१ ३९१
५७	श्रीमाली	पपु० १२ ३१२
५८.	सध्याभ्र	पपु० १२ १९७
५९	सपरिकीर्ति	पपु० ५ ३८९
६०.	सिंहजघान	पपु० ६० २
६१.	सिंहविक्रम	पपु० ५ ३९५
६२	सुग्रीव	पपु० ५.३८९
६३	सुभौम	पपु० ५ १४९
६४	सुमुख	पपु० ५ ३९२
६५	सुरारि	पपु० ५ ३९५
६६	सुव्यक्त	पपु० ५ ३९२
६७	हरिग्रीव	पपु० ५ ३९०

वाद्य

क्रमांक	नाम वाद्य	सन्दर्भ
१	अम्लातक	पपु० ५८ २७-२८
२	अलाबु	मपु० १२ २०३
३	अवनद्ध	पपु० २४ २०-२१
४	आनक	मपु० ७.२४२
५.	आनन्द भेरी	मपु० १६ १९७
६	आनन्दपहट	मपु० २४ १२
७	कम्ला	पपु० ८४ १२
८	काहल	मपु० १७ ११३
९	घण्टा	मपु० १३ १३
१०	तूर्य	मपु० १२ २०९
११	दुन्दुभि	मपु० १३ १७७
१२.	पटह	मपु० २३ ६३
१३	पणव	मपु० २३ ६२
१४	भम्भा	पपु० ५८ २७
१५	भेरी	मपु० १३ १३
१६	मड्डुक	पपु० ५८ २७
१७	मर्दक	पपु० ६ ३७९
१८.	मुरज	मपु० १२ २०७
१९	मृदंग	मपु० ३ १७४
२०	मेघघोषा	मपु० ४४ ९३
२१.	लम्पाक	पपु० ५८ २७
२२	वीणा	मपु० १२ १९९-२००
२३.	शख	मपु० १३ १३
२४	हुक्का	पपु० ५८ २७
२५	हुंकार	पपु० ५८ २७
२६.	हेतुगु जा	पपु० ५८.२८

वानर वंश

अकारादि क्रम मे इस वश मे निम्न राजा हुए हैं—

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
१	अकुर	पपु० ६० ५-६
२	अग	पपु० १० १२
३.	अगद	पपु० १० १२
४.	अतीन्द्र	पपु० ६ २-५
५.	अनघ	पपु० ६० ५-६
६	अन्ध्रकरूढि	पपु० ६ ३५२
७.	अमरप्रभ	पपु० ६ १६०-२००
८	इन्द्रमत	पपु० ६ १६१
९	ऋक्षरज	पपु० ७ ७७
१०	कपिकेतु	पपु० ६ १९८-२००
११	किष्किन्ध	पपु० ६ ३५२-३५८
१२	खेचरानन्द	पपु० ६.२०५-२०६
१३	गगनानन्द	पपु० ६ २०५
१४	गिरिनन्दन	पपु० ६ २०५-२०६

क्र० सं०	नाम राजा	संदर्भ
१५.	जाम्बव	पपु० ५४.५८
१६	नन्दन	पपु० ६०.५-६
१७	नल	पपु० ९.१३
१८	नील	पपु० ९.१३
१९.	प्रतिचन्द्र	पपु० ६.३४९
२०.	प्रतिबल	पपु० ६.१९८-२००
२१.	प्रसन्नकीर्ति	पपु० १२ २०५-२१०
२२	प्रीतिंकर	पपु० ६० ५-६
२३	बाली	पपु० ९ १-२०
२४	भूतस्वन	पपु० ७४ ६१-६२
२५	मन्दर	पपु० ६ १६१
२६.	महेन्द्रसेन	पपु० १२.२०५-२०६
२७.	महोदधि	पपु० ६.२१८-२२५
२८.	मेरु	पपु० ६.१६१
२९.	रविप्रभ	पपु० ६ १६१-१६२
३०,	वज्रकंठ	पपु० ६ १५०-१६०
३१	वज्रप्रभ	पपु० ६.१६०-१६१
३२.	विशालद्युति	पपु० ६०.१४
३३	श्रीकंठ	पपु० ६ ३-१५१
३४.	सन्ताप	पपु० ६० ६-८
३५.	समीरणगति	पपु० ६ १६१
३६.	सुग्रीव	पपु० ८ ४८७
३७.	सूर्यरज	पपु० ६ ५२०-५२४

विद्या

अगारिणी	हपु० २२.६१-६२
अग्निगति	हपु० २२ ६८
अग्निस्तम्भिनी	मपु० ६२.३९१
अच्युता	हपु० २२.६१-६५
अजरा	पपु० ७.३२८-३३२
अणिमा	मपु० ५.२७९
अदर्शनी	पपु० ७.३२८-३३२
अनलस्तम्भिनी	पपु० ७ ३२८-३३२
अन्तर्विचारिणी	हपु० २२ ६७-६९
अप्रतिघातकामिनी	मपु० ६२.३९१-४००
अभोगिनी	मपु० ६२ ४००
अमरा	पपु० ७ ३२८-३३२
अमोघविजया	पपु० ९ २०९-२१४
अरिध्वसी	पपु० ७ ३२९-३३२
अवध्या	पपु० ७ ३२९-३३२
अवलोकिनी	पपु० ७ ३२९-३३२
अशय्याराधिनी	हपु० २२ ७०-७२
आकाशगामिनी	मपु० ६२ ३९२, ४००
आर्यकूष्माण्डदेवी	हपु० २२ ६४
आलोकिनी	मपु० ७५ ४२-४३
आवर्तनी	मपु० ६२.३९४
आवेशिनी	मपु० ६२ ३९३
आशालिका	पपु० १२ १३७-१४५
इतिसवृद्धि	पपु० ७ ३३३
उत्पातिनी	हपु० २२ ६९
उदकस्तम्भिनी	मपु० ६२ ३९१-४००
उष्णदा	मपु० ६२ ३९८
ऐशानी	पपु० ७ ३३०-३३२
कामगामिनी	पपु० ७ ३२५, ३३२
कामदायिनी	पपु० ७ ३२५
कामधेनु	मपु० ६५ ९८
कामरूपिणी	मपु० ६२ ३९१
कालमुखी	हपु० २२ ६६
काली	हपु० २२.६६
कुटिलावृत्ति	पपु० ७ ३३०-३३२
कुभाण्डी	मपु० ६२ ३९६
कूष्माण्डगणमाता	हपु० २२ ६४
कौमारी	पपु० ७ ३२६
कौबेरी	पपु० ७ ३३१-३३२
क्षोभ्या	पपु० ७ ३२६
खगामिनी	पपु० ७ ३३४
गदाविद्या	पापु० १५ १०
गरुडवाहिनी	मपु० ६२ १११-११२
गान्धारी	हपु० २२ ६५
गान्धारपदा	मपु० १९ १८५
गिरिदारिणी	पपु० ७.३२८
गौरी	मपु० ६२.३९६
घोरा	पपु० ७ ३२९
चपलवेगा	मपु० ६२ ३९७
चाण्डाली	मपु० ६२ ३९५
चित्तोद्भवकरी	पपु० ७.३३१-३३२
जयन्ती	हपु० २२.७०-७३
जया	पपु० ७० ३३०-३३२
जलगति	हपु० २२.६८
जृम्भिणी	पपु० ७.३३३
तपोरूपा	पपु० ७ ३२७
तिरस्कारिणी	हपु० २२ ६३
तयोस्तम्भिनी	पपु० ७ ३२८
त्रिपर्वा	हपु० २२ ६७

त्रिपातिनी	हपु० २२ ६८
दण्डभूतसहस्रक	हपु० २२.६५
दण्डाध्यक्षगण	हपु० २२ ६५
दशपर्विका	हपु० २२ ६७
द्विपर्वा	हपु० २२ ६७
धारिणी	हपु० २२ ६८-७३
नागवाहिनी	पापु० ४ ५४
निर्वंशशाड्वला	हपु० २२ ६३
निर्वृत्ति	हपु० २२ ६५
पटविद्या	मपु० २४ १
पर्णलघ्वी	मपु० ४७ २१-२२
पाण्डुकी	हपु० २२ ८०
प्रज्ञप्ति	मपु० ६२ ३९१
प्रतिबोधिनी	पपु० ६० ६०-६२
प्रभावती	मपु० ६२.३९५
प्रस्तर	मपु० ७२ ११४-११५
प्रहारसंक्रामिणी	हपु० २२ ७०
प्लवग	मपु० ६८ ३६३-३६४
बहुरूपिणी	मपु० १४ १४१
भगवती	पपु० ७५ २२-२५
भद्रकाली	हपु० २२.६६
भयसमूति	पपु० ७ ३३०
भानुमालिनी	पपु० ७ ३२५
भास्करी	पपु० ७.३३०
भीति	पपु० ७ ३३१
भुजगिनी	पपु० ७ ३२९
भुवना	पपु० ७ ३२४
भोगिनी	मपु० ७५ ४३२-४३६
भ्रामरी	मपु० ६२ २३०
मगला	हपु० २२ ७०
मदनाशिनी	पपु० ७ ३२९
मनस्तम्भनकारिणी	पपु० ७ ३२६
मनोनुगामिनी	पपु० ५१ २५-४०
मनोवेगा	मपु० ६२ ३९७
महाकाली	हपु० २२.६६
महागौरी	हपु० २२ ६२
महाज्वाला	मपु० ६२ २७३
महाप्रज्ञप्ति	मपु० १९ १२
महावेगा	मपु० ६२ ३९७
महाश्वेता	हपु० २२ ६३
माक्षिकलक्षिता	मपु० ७१ ३६६-३७२
मातगी	मपु० ६२ ३९५
मानस्तम्भिनी	पपु० ७ १६३
मान्याप्रस्थापिनी	मपु० ६२ ३९३
मायूरी	हपु० २२ ६३
माहेश्वरी	पापु० २० ३०८
मृतसजीवनी	हपु० २२ ७१
मोचिनी	पपु० ७ ३३०
युद्धवीर्य	मपु० ६७ २७१
योगेश्वरी	पपु० ७ ३३१-३३२
योधिनी	पपु० १९ ६१
रजोध्या	पपु० ७ ३२७
राक्षस	मपु० ७५ ११६
राजविद्या	मपु० ४ १३६
रूपरावर्तन	मपु० ६८ १५२
रोहिणी	मपु० ६२ ३९७
लक्षपर्वा	हपु० २२ ६७
लघिमा	पपु० ७ ३२६
लघुकरी	मपु० ६२ ३९७
वज्रोदरी	पपु० ७ ३२८
वधकारिणी	पपु० ७ ३२६
वधमोचन	मपु० ६२ २४२-२४६
वशकारिणी	पपु० ७.३३१
वानर	मपु० ६८ ५०८-५०९
वाराही	पपु० ७ ३३०-३३२
वारुणी	पपु० ७ ३२९-३३२
वास्तुविद्या	मपु० १६ १२२
विच्छेदिनी	पापु० ४ १४९-१५०
विजया	पपु० ७ ३३०-३३२
विद्याविच्छेदिनी	मपु० ६२ २३४-२३९
विपलोदरी	पपु० ७ ३२७
विपाटिनी	मपु० ६२.३९४
विरलवेगिका	मपु० ६२ ३९६
विशल्यकारिणी	हपु० २२.७१
विश्वप्रवेशिनी	मपु० ६२ ३८७-३९१
वेगावती	मपु० ६२ ३९८
वैताली	मपु० ६२ ३९८
व्योमगामिनी	मपु० ५ १००
व्रणसरोहिणी	हपु० २२ ७१
शतपर्वा	हपु० २२ ६७
शतसकुला	मपु० ६२ ३९६
शत्रुदमनी	पपु० ७ ३३४
शर्वरी	मपु० ६२ ३९५
शान्ति	पपु० ७ ३३१-३३२

शावर	हपु० ४६ ९
शीतदा	मपु० ६२.३९८
शीतवेताली	मपु० ४७ ५२-५४
शुभप्रदा	मपु० ७ ३२७
शेमुषी	पपु १० १७
श्रीमत्कन्या	मपु० ६२ ३९६
षडगिका	मपु० ६२ ३८६
सग्रहणी	मपु० ६२ ३९४
सग्रामणी	मपु० ६२.३९३
सवाहिनी	पपु० ७.३२६-३३२
समाकृष्टि	पपु० ७ ३२८
सर्वकामानन्दा	पपु० ७ २६४-२६५
सर्वविद्याप्रकर्षिणी	हपु० २२.६२
सर्वविद्याविराजिता	हपु० २२ ६४
सर्वार्थसिद्धा	हपु० २२ ७०-७३
सर्वाह्ना	पपु० ७ ३३३
सवर्णकारिणी	हपु० २२ ७१-७२
सहस्रपर्वा	हपु० २२ ६७-६९
सिहवाहिनी	मपु० ६२ २५-३०
सिद्धार्था	पपु० ७ ३३४
सुरध्वसी	पपु० ७ ३२६
सुरेन्द्रजाल	मपु० ७२ ११२-११५
सुविधाता	पपु० ७ ३२७
स्तम्भिनी	पपु० ५२ ६९-७०
हारी	हपु० २२ ६३

विद्याधर-जाति-भेद

विद्याधर जातियाँ	सन्दर्भ
गौरिक	हपु० २२ ७७
मनु	,, ,,
गान्धार	,, ,,
मानव	,, ,,
कौशिक	हपु० २२ ७८
भूमितुण्ड	,, ,,
मूलवीर्यक	हपु० २२ ७९
शकुल	,, ,,
पाण्डुकेय	हपु० २२ ८०
काल	,, ,,
श्वपाकज	,, ,,
मातग	हपु० २२ ८१
पावतेय	,, ,,
वशलालय गण	हपु० २२ ८२
पाशुमूलिक	हपु० २२ ८२
वार्क्षमूल	हपु० २२ ८३

आर्य विद्याधर जातियाँ—

गौरिक	हपु २६ ६
गान्धार	हपु० २६ ७
मानवपुत्रक	हपु० २६ ८
मनुपुत्रक	हपु० २६ ९
मूलवीर्य	हपु० २६ १०
अन्तर्भूमिचर	हपु० २६ ११
शकुक	हपु० २६ १२
कौशिक	हपु० २६ १३

मातग विद्याधर जातियाँ—

मातग	हपु० २६ १५
श्मशाननिलय	हपु० २६ १६
पाण्डुक	हपु० २६.१७
कालश्वपाकी	हपु० २६ १८
श्वपाकी	हपु० २६ १९
पार्वतेय	हपु० २६ २०
वशालय	हपु० २६.२१
वार्क्षमूलिक	हपु० २६ २२

विद्याध : वंश

अकारादि क्रम मे इस वंश के निम्न राजाओ के नामोल्लेख मिलते हैं—

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
१.	अशुमान्	हपु० २२ १०७-१०८
२.	अशुमाल	मपु० ५९.२८८-२९१
३.	अर्कचूड	पपु० ५ ५३
४	अर्कतेज	मपु० ६२.४०८
५.	अश्वधर्मा	पपु० ५ ४८
६.	अश्वायु	पपु० ५.४८
७.	अश्वध्वज	पपु० ५ ४८
८	आदित्यगति	मपु० ४६.१४५-१४६
९	इन्दुगति	पपु० २६ १३०, १४९
१०.	इन्द्र	पपु० ५ ५०
११	उडुपालन	पपु० ५ ५२
१२.	एकचूड	पपु० ५ ५३
१३	कनकपुख	मपु० ७४ २२२
१४.	कनकोज्ज्वल	मपु० ७४.२२१-२३२
१५.	कालसवर	मपु० ७२.४८-६०
१६.	कुरुविन्द	मपु० ५.८९-९५
१७.	चन्द्र	पपु० ५.५०

क्रमांक	नाम राजा	सन्दर्भ	क्रमांक	नाम राजा	संदर्भ
१८	चन्द्रमति	पपु० २६ १३०-१४९	५९	मृगोद्धर्मा	पपु० ५.४९
१९	चन्द्रचूड	पपु० ५ ३२	६०.	मेघवाहन	मपु० ६३ २९-३०
२०	चन्द्र ज्योति	पपु० ५४ ३४-३५	६१	मेरु	पपु० ६ १६१
२१	चन्द्ररथ	पपु० ५ १७	६२	रक्तोष्ठ	पपु० ५.५२
२२.	चन्द्ररथे	पपु० ५ ५०	६३	रत्नचित्र	पपु० ५ १७
२३	चन्द्रवर्धन	पपु० २८ २४७-२५०	६४	रत्नमाली	पपु० ५ १६
२४	चन्द्रशेखर	पपु० ५ ५०	६५.	रत्नरथ	पपु० ५ १६
२५.	चन्द्राभ	मपु० ६२ ३६-३७	६६	रत्नवज्र	पपु० ५.१६
२६	चन्द्रोदर	पपु० १ ६७	६७	लम्बिताम्बर	पपु० ५ ५१
२७	चित्तवेग	हपु० २४ ६९-७१	६८	वज्र	पपु० ५ १८
२८	चित्रचूल	हपु० ३३ १३१-१३३	६९	वज्रचूड	पपु० ५ ५३
२९	जाम्बव	हपु० ४४ ४-१७	७०.	वज्रजंघ	पपु० ५ १७
३०.	त्रिचूड	पपु० ५ ५३	७१.	वज्रजातु	पपु० ५ १९
३१.	त्रिशिखर	हपु० २५ ४१	७२.	वज्रदंष्ट्र	पपु० ५.१८
३२	दृढरथ	पपु० ५ ४७	७३	वज्रध्वज	पपु० ५ १८
३३.	द्विचूड	पपु० ५ ५३	७४	वज्रपाणि	पपु० ५ १९
३४.	नमि	पपु० ५ १६	७५.	वज्रबाहु	पपु० ५ १९
३५	नील	मपु० ६८ ६२१-६२२	७६.	वज्रभृत्	पपु० ५.१८
३६	नीलकण्ठ	हपु० २३ ७	७७	वज्रवान्	पपु० ५ १९
३७	नीलवान्	हपु० २३ ३-४	७८.	वज्रसंज्ञ	पपु० ५ १९
३८	पचशतग्रीव	हपु० २५.२६	७९.	वज्रसेन	पपु० ५ १७
३९	पद्मनिभ	पपु० ५ ४८	८०	वज्राक	पपु० ५ १९
४०	पद्ममाली	पपु० ५ ४९	८१	वज्रांगद	मपु० ६३ १४-१५
४१	पद्मरथ	पपु० ५ ४९	८२	वज्राभ	पपु० ५ १९
४२.	पुष्पोत्तर	पपु० ६ ७-५२	८३	वज्रायुध	पपु० ५ १८
४३	पूर्णचन्द्र	पपु० ५ ५२	८४	वज्रास्य	पपु० ५ १९
४४	पूश्चन्द्र	पपु० ५ ५२	८५	वह्निजटी	पपु० ५ ५४
४५	प्रभंजन	मपु० ६८ २७५-२७६	८६	वह्नितेज	पपु० ५ ५४
४६.	प्रहसित	हपु० २२ १११-११२	८७	वायुरथ	मपु० ४६ १४७-१४८
४७	बलीन्द्र	मपु० ६६ १०९-१२५	८८	वासव	मपु० ७ २८-३१
४८	बालेन्दु	पपु० ५ ५२	८९	विद्यामन्दिर	पपु० ६.३५७-३५८
४९	बिम्बोष्ठ	पपु० ५ ५१	९०	विद्युत्प्रभ	पापु० १७ ४३-४५
५०	भूरिचूड	पपु० ५ ५३	९१.	विद्युत्वान्	पपु० ५ २०
५१	मणिग्रीव	पपु० ५ ५१	९२	विद्युद्दंष्ट्र	पपु० ५.२०
५२	मणिभासुर	पपु० ५ ५१	९३	विद्युद्दृढ	पपु० ५ २५
५३	मणिस्यन्दन	पपु० ५ ५१	९४	विद्युद्दाम	पपु० ५ २०
५४	मण्यक	पपु० ५ ५१	९५.	विद्युद्वेग	पपु० ५ २०
५५	मण्यास्य	पपु० ५ ५१	९६	विद्युन्मुख	पपु० ५ २०
५६.	मन्दरमाली	मपु० ८ ९२-९३	९७	विराधित	पपु० ९ ३७-४४
५७	मयूरग्रीव	मपु० ५७ ८७-८८	९८	वैद्युत	पपु० ५.२०
५८	महेन्द्रविक्रम	मपु० ७१ ४१९-४२३	९९.	व्योमेन्दु	पपु० ५ ५२

क्रमांक	नाम राजा	सन्दर्भ
१००	वायाकास्य	पपु० ५.५०
१०१.	समिन्न	मपु० ६२.२४१-२६४
१०२.	सहस्रग्रीव	मपु० ६८ ७-१२
१०३.	सहस्रार	पपु० ७ १-२
१०४.	सिंहकेतु	पपु० ५.५०
१०५	सिंहयान	पपु० ५.४९
१०६.	सिंहप्रभु	पपु० ५.४९
१०७	सुकुण्डली	मपु० ६२.३६१-३६२
१०८	सुवक्त्र	पपु० ५.२०
१०९	सुव्रज	पपु० ५.१८
११०	हरिचंद्र	पपु० ५ ५२
१११.	हरिवाहन	मपु० ७१.२५२-२५७
११२.	हरिवेग	पपु० ९३.१-५७
११३	हिरण्याभ	पपु० १५.३७-३८
११४.	हेम	पपु० ६ ५६४-५६५

समवसरण-तृतीय कोट-द्वार-नाम

पूर्वी द्वार के आठ नाम

१. विजय २ विश्रुत ३ कीर्ति ४. विमल

५ उदय ६. विश्वधुक ७ वासवीर्य ८ वर

हपु० ५७.५७

दक्षिण द्वार के आठ नाम

१. वैजयन्त २ शिव ३. ज्येष्ठ ४. वरिष्ठ

५. अनघ ६. धारण ७ याम्य ८ अप्रतिघ

हपु० ५७ ५८

उत्तरी द्वार के आठ नाम

१. अपराजित २. अर्थाख्य ३. अतुलार्थ ४ अमोघक

५ उदार ६ अक्षय ७ उदक ८ पूर्णकामक

हपु० ५७.६०

पश्चिम द्वार के आठ नाम

१ जयन्त २. अमितसागर ३. सार ४. सुधाम

५. धर्मोद्य ६ सुप्रभ ७ वरुण ८. वरद

हपु० ५७.५९

सूर्यवंश / आदित्यवंश

अकारादि क्रम से इस वंश में निम्न राजा हुए हैं—

क्र० सं०	नाम नृप	सन्दर्भ
१	[illegible]	पपु० ५ ५, हपु० १३.८
२	[illegible]	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०
३	[illegible]	पपु० ५ ९, हपु० १३ ८
४	[illegible]	पपु० ५.४, हपु० १३ ९
५.	[illegible]	पपु० ५ ८, हपु० १३ ११
६	इन्द्रद्युम्न	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०
७	उदितपराक्रम	पपु० ५ ७, हपु० १३.१०
८	गरुडाङ्क	पपु० ५ ८, हपु० १३ ११
९.	तपन	पपु० ५ ६ हपु० १३.९
१०.	तेजस्वी	पपु० ५ ६, हपु० १३ ९
११	प्रभु	पपु० ५ ८, हपु० १३.११
१२	प्रतापतेज	पपु० ५ ६ हपु० १३ ९
१३.	बल	पपु० ५.४, हपु० १३ ८
१४	भद्र	पपु० ५ ६, हपु० १३.९
१५	महाबल	पपु० ५ ५, हपु० १३.८
१६	मृगांक	पपु० ५ ८, हपु० १३.११
१७.	महेन्द्रजित्	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०
१८.	महेन्द्रविक्रम	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०
१९	रवितेज	पपु० ५ ६, हपु० १३.९
२०.	विभु	पपु० ५.८, हपु० १३ ११
२१	वीतभी	पपु० ५ ८, हपु० १३ ११
२२	वृषभध्वज	पपु० ५ ८, हपु० १३ ११
२३	शशी	पपु० ५.६, हपु० १३.९
२४.	सागर	पपु० ५.६, हपु० १३ ९
२५	सितयश	पपु० ५.४, हपु० १३.७
२६.	सुबल	पपु० ५ ५, हपु० १३ ८
२७	सुभद्र	पपु० ५.६, हपु० १३.९
२८.	सुवीर्य	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०
२९	सूर्य	पपु० ५ ७, हपु० १३ १०

इन राजाओं के नाम पद्मपुराण और हरिवंशपुराण [illegible] आये हैं। हरिवंशपुराण में [illegible] को [illegible] और उदितपराक्रम को उदितपराक्रम कहा गया है।

सोमवंश

इसे चन्द्रवंश और ऋषिवंश भी कहा गया है—

इस वंश [illegible] और [illegible] दर्शाया है। [illegible] हैं—

क्रमांक	नाम राजा	सन्दर्भ
१	[illegible]	[illegible]
२	[illegible]	[illegible]
३	[illegible]	[illegible]
४	[illegible]	[illegible]

हरिवंश

इस वंश मे अकारादि क्रम मे निम्न राजा हुए हैं—

क्र० सं०	नाम राजा	सन्दर्भ
१	अन्धकवृष्णि	हपु० १८ १०
२.	अपराजित	हपु० १८ २५
३	अमर	हपु० १७ ३३
४.	अभिचन्द्र	हपु० १७.३५
५	अयोधन	हपु० १७ ३१
६.	अरिष्टनेमि	हपु० १७ २९-३१
७	इन्द्रगिरि	पपु० २१.८
८.	इलावर्धन	पपु० २१.४९
९	उग्रसेन	हपु० १८ १६
१०.	ऐलेय	हपु० १७.२
११.	कालयवन	हपु० १८ २४
१२.	कुणिम	हपु० १७.२२
१३	गिरि	हपु० १५ ५९
१४	चरम	हपु० १७ २५-२६
१५	जनक	पपु० २१.५४
१६	जरासन्ध	हपु० १८ २२
१७	दक्ष	पपु० २१.४८, हपु० १७.२
१८.	दीपन	हपु० १८ १९
१९.	दीर्घबाहु	हपु० १८ २
२०.	दृढ़रथ	हपु० १८.१८
२१.	देवगर्भ	हपु० १८ २०
२२.	देवदत्त	हपु० १७ ३५
२३.	देवसेन	हपु० १८ १६
२४	नभसेन	हपु० १७.३४
२५.	नरपति	हपु० १८ ७
२६	नरवर	हपु० १८.१८
२७	निहतशत्रु	हपु० १८ २१
२८	पुलोम	पपु० २१ ५०, हपु० १७ २४-२५
२९.	बिन्दुसार	हपु० १८ २०
३०.	बृहद्ध्वज	हपु० १७ ५९
३१	बृहद्रथ	हपु० १८ १७
३२.	भद्र	हपु० १७ ३५
३३	भानु	हपु० १८ ३
३४	भीम	हपु० १८ ३
३५	भूतदेव	पपु० २१ ९, हपु० १५ ५९
३६.	भोजकवृष्णि	हपु० १८.१०
३७	मत्स्य	हपु० १७ २९
३८	महागिरि	मपु० ६७.४२०, पपु० २१ ८
३९	महारथ	पपु० २१.५०
४०.	महासेन	हपु० १८.१६
४१.	महीदत्त	हपु० १७.२८
४२.	मुनिसुव्रत	पपु० २१ २४, हपु० १६.१७
४३	मूल	हपु० १७ ३२
४४	यदु	हपु० १८ ६
४५	यवु	हपु० १८.३
४६	रत्नमाल	पपु० २१ ९
४७	लब्धाभिमान	हपु० १८ ३
४८	वज्रबाहु	हपु० १८.२
४९.	वप्रभु	हपु० १८ १९
५०	वसु	हपु० १७.३७
५१.	वसुगिरि	पपु० २१.८, हपु० १५ ५९
५२.	वसुदेव	हपु० १८.१४
५३	वासवकेतु	पपु० २१.५२
५४.	विन्दुसार	हपु० १८ १९-२०
५५.	वीर	हपु० १८ ८
५६.	शख	हपु० १७.३५
५७	शतधनु	हपु० १८ २०
५८	शतपति	हपु० १८ २१
५९	शाल	हपु० १७ ३२
६०.	शूर	हपु० १८ ८
६१.	श्रीवर्धन	पपु० २१ ४९
६२	श्रीवृक्ष	पपु० २१ ४९
६३	सजय	हपु० १७ २८
६४	सजयन्त	पपु० २१.५०
६५	संभूत	पपु० २१ ९
६६.	सागरसेन	हपु० १८.१९
६७	सुखरथ	हपु० १८ १९
६८.	सुबाहु	हपु० १८ २
६९.	सुभानु	हपु० १८ ३
७०.	सुमित्र	मपु० ६७ २०-२१, पपु० २१ १०, हपु० १५ ६१-६२, १८.१९
७१.	सुवसु	हपु० १८ १७
७२	सुव्रत	पपु० २१.३, हपु० १६-५५
७३.	सुवीर	हपु० १८ ९
७४	सूर	पापु० ७ १३०-१३१
७५.	सूरसेन	मपु० ७०.९३-९४
७६	सूर्य	हपु० १७.३२-३३
७७	हरि	पपु० २१.२-७, हपु० १५ ५७-५८
७८	हरिगिरि	मपु० ७० ७४-७७, पपु० १५ ५९
७९.	हरिषेण	हपु० १७.३४
८०.	हिमगिरि	मपु० ६७ ४२०, पपु० २१ ८

शुद्धि-पत्र

नोट—जितना अंश शुद्ध है उसे यहाँ नहीं दिया है।

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
१	अग	१	६	मपु० ५१, १३	मपु० ५१.१३
	अगद	२	२	हपु० ७१.	मपु० ७१.
२	अगावर्त		२	हपु० २२.९५, १०१	हपु० २२.९३-१०१
	अगिशिरा			अगिशिरा	अगशिर
	अजन	३	२	हपु० ५ ७०३	हपु० ५.७०३
	अजनगिरि	२	३	मपु० ८. ३२४	पपु० ८ ३२४
	अजनमूलक	१	२	हपु० ५६९९	हपु० ५ ६९९
	अजना	३	३	मपु० १५ १३-१६	पपु० १५ १३-१६
६	अग्निगति			अग्निमति	अग्निगतिदक्षिणा
	अग्निभूति	७	३	मपु० ७२ २२८-२८०	मपु० ७२ २२८-२३०
	अग्निला	२	३	पपु० ४ १९४	पापु० ४ १९४
९	अजितजय	५	४	मपु० ७.४१-५२	मपु० ७.५१-५२
१०	अजीव		६	वीवच० ६ ११५	वीवच० १६ ११५
११	अतिकन्यार्क		१	मपु० ६८ ४३	मपु० ६८.४३१
	अतिनिरुद्ध		३	हपु० ४.१५५	हपु० ४.१५६
१४	अधिदेव		१	मपु० २५.११२	मपु० २४.३०
१५	अनगारधर्म			पपु० ६ २९३	पपु० ६.२९२-२९३
१६	अनन्तमती	३	२	मपु० ६२.३५१-३५४	मपु० ६२.३४०-३५४.
१७	अनन्तवीर्य	३	१०	मपु० ६२.४१२-४१४	मपु० ६२ ४१२-४१४
				४३०, ३१.४४३	४३०-४३१, ४४३
१८	अनरण्य		६	२८,१५८	२८.१५८
	अनर्थदण्डव्रत			पापु० १४ १९८	पपु० १४.१९८
१९	अनिवृत्ति			हपु० २७ ११-११४	हपु० २७.१११-११४
	अनीक			मपु० २२.१९-२०	मपु० २२ १९, २८
२०	अनीकदत्त		४	हपु० १३०, १३३	हपु० १३०-१३३
२३	अन्धकवृष्टि		१७	हपु० १८.१७६,१७८	हपु० १८.१७६-१७८
			२३	हपु० १८ ७८-१०९	हपु० १८ ९७-१०९
२४	अपराजित	१	३	मपु० २.१३०-१४२	मपु० २.१३९-१४२
	अपराजित	१२	१८	पापु० ४ २४८, २८०	पापु० ४. २४८-२८०
२५	अपराजित	१७	२	हपु० ५७ ३, ५६ १६	हपु० ५७.३, ५६, ६०
२६	अप्रमेयत्व		२	मपु० ४० १६, ४२-१०३	मपु० ४०.१६, ४२-१०३
२७	अभिनन्दन		३५	हपु० ३० १५१-१८५	हपु० ६०.१५१-१८५
	अभिनन्दित			अभनिन्दित	अभिनन्दित
	अभिमन्यु		५	पापु० १६. १०१, १७९-१८०	पापु० १६.१०१, १९ १७९-१८०
२८	अभिषेक		६	पपु० ३२.१६५-१६८	पपु० ३ १७६-१८४
					३२.१६५-१६८
	अर्भेद्य			अर्भेद्य	अभेद्य

शुद्धि-पत्र

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
	अमभ्योऽपिमध्यम			अमभ्योऽपिमध्यम	अमध्योऽपिमध्यम
				मपु० २४.५२	मपु० २४ ४२
	अमरप्रभ		९	पपु० २ १६०-२००	पपु० ६ १६०-२००
२९	अमिततेज	१	१९	मपु० ६२ १५१, ४११	मपु० ६२ १५१-४११
	अमिततेज	३	४	७९, ८५	७९-८५
३२	अयुत			हपु० २४.८१	हपु० ४२ ८१
३३	अरिंजय	१४		मपु० ६२ ३४८	मपु० ६२ ३४८, पापु० ४ २०५-२०६
३५	अर्कप्रभ	२		मपु० ५७ २३७-२३८	मपु० ५९ २३७-२३८
३६	अर्जुन		२६	मपु० १०.१९९-२६९	पपु० १० १९९-२६९
३६	अर्थजसम्यक्त्व		४	वीवच० १९ १५८	वीवच० १९.१५०
३७	अर्हत्	२	१८	मपु० ४० ११, १९.	मपु० ४० ११, १९,
	अर्हद्दास	३	६	मपु० ७०.४, १५	मपु० ७० ४-१५
	अर्हद्दास	८	३	मपु० १९.१७०-१९६	वीवच० १९ १७०-१९६
३९	अवनद्ध		२	१९ १४२-१४३	हपु० १९ १४२-१४३
४०	अव्याबाधत्व		३	मपु० २ २२२-२२३, ४० १४, ४३.९८	मपु० २० २२२-२२३, ४० १४, ४२ ९८
	अशनिघोष	३	५	पापु० ४ १३, ८-१५०	पापु० ४.१३८-१५०
	अशुच्यनुप्रेक्षा		६	पापु० २४,९६-९८	पापु० २५ ९६-९८
४३	असि		३	मपु० ३८.८३-८५	मपु० ३७ ८३-८५
	अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व			हपु० २.२८	हपु० २ ९८
४५	आत्मद्यात			आत्मद्यात	आत्मघात
४९	आभार			आभार	आभीर
५०	आर्षभी			हपु० ११ १७४	हपु० १९ १७४
५३	इक्ष्वाकु			हपु० २.४, १३, ३३	हपु० २ ४, १३ १९, ३३
	इज्या			मपु० ३८ २६	मपु० ३८ २४-३४, ६७ १९३
	इन्दुगति			पपु० २६.१३०, १४९	पपु० २६ १३०-१४९
५४	इन्द्रकेतु			मपु०६८ ६२० ६२१	मपु० ६८ ६२०-६२१
	इन्द्रजित्			पपु० ६० १०९	पपु० ६० १०४
५६	इन्द्राणी			पपु० ३४ ११-१५	पपु० ३६ ११-१५
	इन्द्राभिषेक			मपु० ३८.१९५-१९८	मपु० ३८ ५५-६३, १९५-१९८
५७	इलावर्द्धन			हपु० ११ १८-१९	हपु० १७.१-४, १८-१९
	इष्टवियोगज		३	पपु० २१.३१-३६	मपु० २१ ३१-३६
	इष्वाकार			मपु० ५४, ८६	मपु० ५४.८६
५८	उग्रसेन	४	११	हपु० ५० ६७	हपु० ५० ६९,
	उज्जयिनी			हपु० ६० १०५	हपु० २० ३-११, ६० १०५
५९	उत्तराफाल्गुनी			पपु० २० ३६-६०	पपु० २० ३६,६०
६१	उद्धव			मपु० ७१ ७७,	मपु० ७१ ७३-७७
	उपवित्र			उपमित्र	उपचित्र
६३	उपसर्ग			हपु० १.२३, २० २७	हपु० १.१२३,२० २६
६३	उपेन्द्रसेन			मपु० ७५.१७९	मपु० ६५ १७९

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
६४	ऋक्षरज			पपु० १८.४४०-४५१	पपु० ८.४४०-४५१,
	ऋजुकूला			हपु० २.५७, १३.१००-१०१ ६०.२५५	हपु० २.५७, ६० २५५, वीवच० १३.१००-१०१
६५	ऋषभ	१	१६	मपु० १५, २-३, ३०, ३३	मपु० १५ २-३, ३०-३३
६७	एकन्तमिथ्यात्व			एकन्तमिथ्यात्व	एकान्तमिथ्यात्व
६८	ऐकलेय			ऐकलेय	ऐलेय
६९	औद्र			मपु० २८.७९	मपु० २९.७९
७०	मदलीघात			मदलीघात	कदलीघात
७६	कर्मारवी			पपु० २४.१४-२५	पपु० २४ १४-१५
७९	काडकप्रपात			मपु० ६२.१८८	मपु० ३२.१८८
८०	काकिणी			मपु० ३७ ८५-८५	मपु० ३७.८३-८५
८४	काललब्धि			मपु० ६३.३१४-३१५	मपु० ६२ ३१४-३१५
८५	किन्नरगीत			मपु० १९ ३३, ५३, पपु० ५.१७९, पापु० ११ २१, ६३.९३, हपु० २२.९८	मपु० १९ ३३, ५३, ६३.९३ पपु० ५.१७९, हपु० २२ ९८ पापु० ११ २१
८६	किष्कुपुर			पपु० ६.१-५ ८५, १२०-१२३	पपु० ६ १-५, ८५, १२०-१२३
	कीचक			हपु० ४६ २३-२५	हपु० ४६ २३-५५
८८	कुण्डलमण्डित			पपु० २६ १३-१५, ४६-११२, १४८	पपु० २६ ४-११२, १४८ १०६ १८१-१८२
	कुतप			कुतप	कुतुप
९०	कुबेरमित्र			मपु० ४६-५२-७२	मपु० ४६ १९-७२
	कुब्जा			मपु० २९ ६०	मपु० २९.८७
९२	कुरुवंश			हपु० ४५ १-७, ३२-४०, पापु० ४.२-१०	मपु० १६.२४६-२५८, हपु० ४५.१-७, ३२-४० पापु० ४.२-१०
९५	कृष्ण			मपु० ७२ १-२६८	मपु० ७२.१-२८२, हपु० ६०.५३२-५३३, ६२ १८-६३,
९७	केयूर			मपु० ३ २७, १५४	मपु० ३.२७, १५७
	केवलज्ञान			केवलज्ञान	केवलज्ञान
९८	केशव	३	३	हपु० ६६.२८८-२८९	हपु० ६०.२८८-२८९
९९	कोशल		७	हपु० ३ ३, ११-६५	हपु० ३ ३, ११.६५
१००	कौरव		२५	पपु० ६ २०८-२१२, ८ १७८-२०५, १२ १४४, १६७-१६९, १६ २, १७ २०९-२१९, १८ १५३-१५५, २०.२६६, २९४-२९६, ३४८	पापु० ८.१७८-२१२, १०.१७, ३४-६६, १२.२६-३०, ५२, १०२-१६९, १६ २, १०२-१२५, १७ १०४-२१९, १८.१५३-१५५, २०.२६६-२६९, ३४८,
	कौशल्य			हपु० ११ ८४	हपु० ११ ६४
१०२	क्षामता			क्षाम्ता, हपु० ४.१२२	क्षान्ता, हपु० ६४.१२२
१०३	क्षायिकचारित्र			मपु० २४.५६,६२, ३१७	मपु० २४ ५६, ६२.३१७
	क्षुल्लक			दसवीं	ग्यारहवीं
१०४	खगखग			खगखग	खगनग
१०६	गंगरक्षित			हपु० ३३.१४५-१४३	हपु० ३३ १४२-१४३

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
१०९	गन्धार			हपु० ३.६-७,	हपु० ३० ६-७
११२	गुणमजरी			मपु० ५८ ६१ ६२	मपु० ५८ ६१-६२
११३	गुप्त	१		(१)	(३)
११६	गौतम–६			मपु० १२ २, ४३-४८	मपु० १२ २,४३,४८
	गौरमुण्ड	१		विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी मे स्थित एक नगर। हपु० २२ ८८	विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के शिवमन्दिर नगर का एक विद्याधर। हपु० २१.२२-२३
	गौरमुण्ड	२		विद्या निकाय	इस निकाय का नाम गौरिक है गौरमुण्ड नही। विजयार्ध पर्वत की उत्तरश्रेणी के पच्चीसवें नगर का नाम भी गौरिक है। हपु० २२ ५७
११९	चक्षु श्रवा			मपु० २६ १७६	मपु० ३६ १७६
	चक्षुष्मान्			पपु० २ ७९-८५	पपु० ३ ७९-८५
१२०	चण्डशासन			मपु० ७० ७१	मपु० ७०-७१
१२५	चम्पक			मपु० २० ५६,६७.४६-४७	मपु० ६७ ४६-४७, पपु० २० ५६
१२७	चारुमित्र			चारुमित्र	चारुमित्र
१३३	चगत्पति			चगत्पति	जगत्पति
	चगद्धितेषिन्			चगद्धितेषिन्	जगद्धितेषिन्
१३४	जटायु			मपु० ४१ १३२-१६६	पपु० ४१ ३२-१०१,१३२-१६६,
	जटिल			मपु० ७६ ५-३४	मपु० ७६ ५३४
१३५	जम्बू	१	२	ममु०	मपु०
१३६	जय	५		मपु०	पापु०
१३७	जयकुमार		२०	मपु० ४३ ८७, ११८	मपु० ४३ ८७-११८
			५९	पापु० ३ १७७-२७८	पापु० ३.२७७-२७८
१३८	जयप्रभ			पपु० १२३ ११२, ११९	पपु० १२३ ११२-११९
१३९	जयसेन	८		मपु० ७ ४८-८९	मपु० ७ ८४-८९
१४०	जयाजिर			हपु० ५० ७५-७९	हपु० ५७ ७५-७९,
१४१	जरा			हपु० ४८,६३	हपु० ४८ ६३
	जरासन्ध			१४,३४ हपु० ३१ १८, २१-२३, ५०.४५-५१, ९१-१२८, ९, ७१-६५	हपु० १८ २१-२३, ३० ४५-५१, ३१ १२-२३, ९१-१२८, ५० ९, ६१-६५
१४३	जितमन्मथ			मपु० २० २०८	मपु० २५ २०८
१४४	जितारि	२		पपु० २० २९	पपु० २० ३९
१४९	ज्ञानावरणकर्म			हपु० १६ १५६-१६०	वीवच० १६ १५६-१६०
	ज्योतिर्मूर्ति			ज्योतिर्मूर्ति	ज्योतिर्मूर्ति
१५८	दण्डक			पपु० ४१ ५८	पपु० ४१ ५८-९८
१६३	दिक्कुमार			दिक्कुमार	दिक्कुमारी
१६४			१	यशाधरा	यशोधरा
	दिक्पाल			मपु० ३३ ९६	मपु० १३.९६
१६५	दीक्षान्वयक्रिया			मपु० २९ ५	मपु० ३९.५
१६६	दु:षमा		१६	माश	मास

शुद्धि-पत्र

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
१६७	दुषमा-दुषमा		१३	नाग	नाम
१६८	दुर्धर	४		दुदर्श	दुर्दर्श
	दुर्नखा		१२	पपु० ४५.२६-२८, ६१, ८८-१११	पपु० ६१, ८८-१११, ४५ २६-२८
१६९	दूरदर्शन			स्तुय	स्तुत
१७२	देवारण्य		१	नट	तट
	देहमान		५	अवनाहना	अवगाहना
१७९	धनवती	३	२	का	की
	धनश्री	२	३	सामदेव	सोमदेव
१८१	धर्म	६	६	थ।	थे।
	धर्म	११	१५	मपु० १०.१५, ४३,६७	मपु० १० १५, ७६ ३५२-३५३ ४३ ६७
१८८	नन्दक	२	४	—	नन्द्यावर्त
१९२	नन्द्यावत		२२	पतालोस	पैंतालीस
१९३	नमिनाथ		१	नन्द्यावत	नन्द्यावर्त
	नयनानन्द		१०	भाग्य	भोग्य
१९८	नाभि		२	आर	और
२००	निकोत		२	बडो	बेडी
	निगलनिदर्शन			नस्सर्प्य,	नैस्सर्प्य
	निधि	२	२	आहारह	आहारक
२०६	नोकर्म		२	हपु० ३७ १-५५, १००-१२९	हपु० ३७ १-४७, ५५ १००-१२९
२०८	पञ्चकल्याणक		४	हपु० ५.१२१, १२६.१३२	हपु० ५.१२१, १२६, १३२
२१०	पद्म	१५		पद्मकावता	पद्मकावती
२११	पद्मकावता		२	चन्दध्वज	चक्रध्वज
२१३	पद्मलता			मपु० २५.११०	मपु० २५.१११
२१५	परमज्योति			मपु० ९.१९६	मपु० ९.१४६
	परमस्थान			२५-१७०, १८९	मपु० २५.१७०, १८९
	परमानन्द			हपु० ५४.	हपु० ५८.
	परविवाहकरण				परापर
२१६	परात्पर			परादर्त्त	परावर्त्त
	परादत्त			भरतेष	भरतेश
	परिजा		२	अ	और
	परिग्रहत्यागप्रतिमा			मपु० १५ ३०, २५.६२-६४	मपु० १५.५०, ६२-६४,
	परिणय		२	ठोक-ठीक	ठोक-ठोक
२१८	पल्य			हपु० ८ ३८, ४४, १९०	हपु० ८ १९०, ३८.४४
२२०	पाण्डुक	१		वीवच० १३.२-३०	वीवच० १३ २९-३०
२२१	पात्रदत्ति				पापपेत
	पापपित		१	अपर नाथ	अपर नाम
२२२	पावा			६३.१६९	६३ १३९
२२३	पिहितास्रव	४	२	दस	दस
	पुण्डरीक	८	७	मपु० ६.२६, ४६, १९, ५८, ८५-८६	मपु० ६.२६, ५८, ८५-८६, ४६ १९
२२४	पुण्डरीकिणी				

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
२२४	पुण्यशासन			मपु० २५ ३७	मपु० २५ १३७
२२५	पुत्र		२	मपु० २ ४६	मपु० २४ ६
२२६	पुरुषसिंह		१४	मपु० ७४ ४२	मपु० ७४ ८२
२२७	पुष्करवर			मपु०	हपु०
	पुष्कलावती			मपु० २०९-२१३	मपु० ६३ २०९-२१३
	पुष्टि				पुष्टिद्
२२९	पुष्यमित्र		४	चौबीसर्यां	चौबीसवाँ
२३४	प्रतिनारायण	१	७	६८ ६२५-६६०	६८.६२५-६३०
२३५	प्रत्यग			प्रत्यग, मपु० २५ १४०	प्रत्यग्र, मपु० २५ १५०
२३६	प्रबुद्धात्मा			मपु० २५.१०	मपु० २५ १०८
	प्रभंकरी		२	मपु० ४६ ४२-४३	मपु० ७३ ४२-४३
२३७	प्रभजन	४	३	पापु० ६ ११८-१२०	पापु० ७ ११८-१२२
	प्रभावती	६		पपु० ८८ ९-१५	पपु० ७७ १५
२३८	प्रभावगा			प्रभावगा	प्रभावेगा
२३९	प्रवर	१	२	पपु० ९ २८	पपु० ९ २४
	प्रष्ठक			हपु० ६ ४०	हपु० ६.४७
२४४	प्रीति	१	२	रत्नश्रया	रत्नश्रवा
	प्रेक्षाशाला		३	हपु० ५७ २७-९३	हपु० ५७ २७,९३
२४५	प्रोषधोपवास		*	मपु० २० २८-२९, ३६, १८५, हपु० ३४.१२५, ५८.१८१	हपु० ३४ १२५, ५८.१८१
२४५	प्रोष्ठिल	२		वीवच० ६.२.३०	वीवच० ६ २-३०
२४६	बलदेव	३	१९	पपु०	मपु०
२४९	वाली		१५	पपु० ९ १-२०	पपु० ९ १-२०
२४९	वालुकाद्रभा				वालुकाप्रभा
२५१	ब्रह्मतत्त्वज्ञ			मपु० २५ १०	मपु० २५ १०७
२५२	ब्राह्मी	१	९	मपु० ४७ २६८	मपु० ४७ २८८
२५७	भव्यमार्गणा			वीवच० १६ ५३.५५	वीवच० १६ ५३, ५५
२५९	भारत			हपु० ११ १ ६४-६५.	हपु० ११ १, ६४-७५
२६०	भावना	२	१	नामकर्म	प्रकृति
२६३	भूतनार्थ			भूतनार्थ	भूतनाथ
२६६	भ्रम		८	प्रमाग	प्रमाण
२६७	मगध			मपु० २ ४-७, १६ १५३, पपु० १०९ ३५-३६	मपु० १६ १५३, पपु० २ ४-७, १०९.३५-३६
२६८	मणिभद्र	५	४	हपु०	पपु०
२६९	मतिवर्धन			पपु० ३९ ९५-१२७,	पपु० ३९ ८४-१२७
२७५	मनोदया			पपु० २१ १२६-१२७	पपु० २१.७८-७९, १२६-१३७, १३९
२७९	मन्दोदरी	२		मपु० ८ १७-२७, ६८ ३५६	मपु० ६८ १७-२७, ३५६
२८१	मलय	१		हपु० ५८ ११२	हपु० ५९ ११२
२८२	महाकाल	२		हपु० ३३ १०९-११	हपु० ३३ १०९-१११
२८७	महागुस				महागुप्त
२८८	महाराष्ट्र				महारुत

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
२९१	महीधर	३	१	मंगलावर्ती	मगलावती
२९२	महेन्द्रजित्			नपु०	हपु०
२९३	मागध	१		मपु० २७ ११९-१२२	मपु० २८ ११९-१२२
२९६	मान्या			मपु० ६२-३९३	मान्याप्रस्थापनी मपु० ६२.३९३
२९७	मार्गप्रभावना				मार्गप्रभावना
२९९	मिथिला		३	नेमिनाथ	नमिनाथ मपु० ६६ २०-
				मपु० ६६.२०-२१, ३४.५०	२१, ३४, ५०, ६९ ७१
३१३	यशस्वती	३	१	चक्रायुद्ध	चक्रायुध
३१४	यशोवती	१		पपु० १ २४	पपु० २० १२४, मपु० १५, ७०,
३१५	युधिष्ठिर		७	बन्धुवर्ग में	बन्धु वर्ग युद्ध में
	योग		१०	पपु०	पापु०
३२१	रत्नरथ	२	१	निम	नमि
	रत्नश्रवा		२	अपने वश परम्परा	अपनी वंश परम्परा
३२६	राजा		१२	मपु० ४ ७०, १९५	मपु० ४ ७०, १३६-१९५
३३१	रूपवती	२		पपु० ९५.२०, ३१	पपु० ९४.२०, ३१
३३४	लक्ष्मणा		९	इम	इस
३३६	लताग		१	काल	काल में
३३७	लिपिज्ञान		६	समान	समाद्र
३३८	लोकपाल	३	२	पद्मोत्तम	पद्मोत्तमा
३३९	लोलप			लोलप	लोलक
	लोहवासिनी			लोहवासिनी	लौहवाहिनी
३४०	लोहताख्य				लोहिताख्य
	लोहिकान्तिक				लौकान्तिक
	लौहित्यसमुद्र				लौहित्यसमुद्र
३४१	वज्रक्षण्ठ				वज्रकण्ठ
३४५	वज्रसुन्दर			हपु० १२.२३	हपु० १३.२३
३४८	वनस्पतिकायिक			हपु० ३ २२१	हपु० ३ १२१
३५०	वरुण	१०		पापु० १९.६१, ९८	पपु० १९ ६१, ९८,
३५१	वर्णलाभक्रिया	२		मपु० ३० ६१-७१	मपु० ३९.६१-७१
३५३	वसुदेव	२		हपु० १९.३४-३५	हपु० १९.३४-७५
३६०	विकसित			मपु० ७.७०-८२	मपु० ७ ६०-८२
३६६	विदेह		२	गजयन्त	गजदन्त
३६७	विद्या	२	७	षडमिका	षडगिका
३६८	विद्यामन्दिर				विद्यामन्दर
३६९	विद्युत्प्रभा	५		पपु० ५१ २५-२६, २८	पपु० ५१ २५-२६, ४८
	विद्युद्दंष्ट्र	१		मपु० ५९ १९०-१९१	५९.२९०-२९१
३७०	विद्युद्वेगा	३		मपु० ७५.३२-३३	मपु० ७६ ३२-३३
३७१	विद्युल्लता	१		मपु० ७५.३३८-३५५	मपु० ७५ ३४८-३५५
३७२	विनयन्धर	३		७५, ४१२	मपु० ७५.४१२
३७५	विमल	३		हपु० २२-९०	हपु० २२ ९०
३७६	विमलपुर			मपु० ४७ १०८-११०	मपु० ४७ ११८-११९
३७८	विराधित		६	विराथित	विराधित

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
३८५	वृषभसेन		४	भागभूमि	भोगभूमि
३८६	वेत्रवन			टकण	टंकण
३८७	वैजयन्त	७	२	भॅट	भेंट
		११	२	श्राकान्ता	श्रीकान्ता
३९०	व्यवहारपल्योपगम		१	भॅद	भेद
	व्यायामिक			तंसरा	तीसरा
३९२	शंखपुर		२	नप	नृप
३९४	शकटामुख	२	२	२३,३	२३ ३
	शक्राशनि		१	याद्धा	योद्धा
३९५	शतबाहु		३	था	थी
४००	शान्तिनाथ		३९	आय	आर्य
			४४	पापु० ५ १०२-१०५, ११६-१२९	पापु० ५ १०२-१०५ ११६-१२९
४०१	शारग		३	मपु० ८ ६७५-६७७	मपु० ६८ ६७५-६७७
४०६	शूरदेव		१	७१.२०२-२०४	मपु० ७१ २०२-२०४
४०९	श्रीदत्ता	५	२	यी	थी
४१९	सधि		२	सघि	सधि
४२३	सत्यभामा	१	४	हपु० ३६ ५७, ६१.४०	हपु० ३६ ५७, ६१, ६१ ४०
४२५	सप्तवर्ण	१	२	मपु० २२ १९९-२०४	सप्तपर्ण, मपु० २२.१६३, १९९-२०४
४२६	समय	२	१	मपु० ३९ ५६	मपु० ३९ ५६
४२६	समाकृष्टि		१	का	को
४२९	सर	२	३	पपु० २११, २-१४	पपु० २१, १२-१४
४३१	सर्वसार		३	पपृ	पपु०
	सर्वार्थ	३	४	मपु० १९२-९१३	मपु० १९२-१९३
४३४	सहस्रायुध		२	क्षमकर	क्षेमकर
	सहस्रार	१	२	हपु० ६, ३८	हपु० ६ ३८
४३८	सासादन		२	हपु० ३.६०	हपु० ३ ८०
	साहसगति		५	उर्वसे	उससे
	सिंह	६	१	वसुदेय	वसुदेव
४४०	सिंहवाहन		५	लान्तप	लान्तव
४४२	सिद्धार्थ	१५	१०	शपथ थी	शपथ ली थी।
४४८	सुदर्शन	१२	२	हपु० ११, ५७	हपु० ११ ५७
४५३	सुबाहु	१		हपु० १२ ५८	हपु० १२.५७
४५४	सुभानु	१	२	मपु० १७५-१७५	हपु० १७४-१७५
				हपु० ५८.७, ६९	हपु० ४८ ७, ६९
४५५	सुभोमकुमार		२	महीपाल का	महीपाल को
	सुमति	१	३	श्रावस	श्रावण
		२	४	जाम्बवता	जाम्बवती
४५६	सुमित्र	३	१	इसका रानी	इसकी रानी
४५९	सुरेन्द्रजाल		१	निद्या	विद्या
	सुरेन्द्रमन्त्र		४	अहमिन्द्राय	अहमिन्द्राय

शुद्धि-पत्र

पृ० सं०	नाम	शब्द भेद	पंक्ति	अशुद्ध अंश	शुद्ध अंश
४६१	सुवीय			सुवीय	सुवीर्य
	सुवेग			सुबेग	सुवेग
				मपु० ६२.२६६-२७	मपु० ६२.२६६-२७२
४६३	सुस्थित	२	१	हपु० ६३७	हपु० ५.६३७
४६४	सूत्रपद		४	त्रिधि	निधि
४६९	सौनन्दक		२	३८ ६४६	६८ ६४६
४७१	स्थपित			स्थपित	स्थपति
४८०	हरिषेण	७	३	भीमपुर	भोगपुर
४८१	हतिनायक			हतिनायक	हस्तिनायक
४८२	हिरण्यगर्भ	१	२	माता ने स्वर्ण	माता के स्वर्ण
४८४	हेतु			मपु० २५ १४३	मपु० २५.१४३

●

सम्पादकों का परिचय

प्रो० प्रवीणचन्द्र जैन

नाम –प्रो० प्रवीणचन्द्र जैन

जन्म तिथि –१६ अप्रैल १९०९ (चैत्र कृष्णा तेरस, सम्वत् १९६६)

जन्म स्थान –जयपुर

शिक्षा –प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा के साथ उर्दू-फारसी का अध्ययन।

–सस्कृत में विशेष रुचि के कारण प्रवेशिका, उपाध्याय, शास्त्री एव जैनधर्म विशारद परीक्षाओ मे उत्तीर्ण।

–आगरा विश्वविद्यालय से एम० ए० सस्कृत की परीक्षा में प्रथम श्रेणी व प्रथम स्थान।

–आगरा विश्वविद्यालय से ही एम० ए० हिन्दी-प्रथम श्रेणी, पंचम स्थान

–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की साहित्यरत्न परीक्षा भाषा विज्ञान मे सर्वोच्चता के साथ उत्तीर्ण।

सेवाएं –प्रधान हिन्दी अध्यापक, दरबार हाई स्कूल, जयपुर।

–प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, पोद्दार कालेज, नवलगढ।

–अध्यक्ष, स्नातकोत्तर सस्कृत विभाग, महाराजा कालेज, जयपुर।

–उप प्राचार्य, राजकीय महाविद्यालय, कोटा।

–प्राचार्य, महाराजा कालेज, जयपुर,
महारानी श्री जया कालेज, भरतपुर;
डूगर कालेज बीकानेर;
ज्ञान-विज्ञान महाविद्यालय, वनस्थली विद्यापीठ।

–विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विशिष्ट शिक्षक सेवा योजना के तहत सस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर मे ५ वर्ष तक अध्यापन।

–जैनविद्या सस्थान श्रीमहावीरजी के मानद निदेशक।

–२० से अधिक शोध-छात्रो को पीएच० डी० उपाधि हेतु निर्देशन, जिसमें १७ शोध छात्रो ने उपाधि प्राप्त की।

अन्य अध्ययन अनुसंधान की निरन्तरता हेतु १९७० में उच्च स्तरीय अध्ययन अनुसंधान सस्थान जयपुर की स्थापना एवं उसका सचालन।

–बाल मन्दिर, बाल शिक्षा मन्दिर, श्री महावीर दिगम्बर जैन शिक्षा परिषद, श्री महावीर दिगम्बर जैन माध्यमिक विद्यालय, राजस्थान शिक्षक सघ तथा जैनविद्या संस्थान श्रीमहावीरजी की स्थापना और संचालन में सहयोग।

–राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, दिल्ली, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर मे सीनेट, ऐकेडमिक कौन्सिल, रिसर्च बोर्ड, पाठ्यक्रम समिति, शिक्षक चयन समिति आदि में सदस्य।

आजीवन सदस्यता–भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

सदस्यता –जयपुर राज्य सस्कृत शिक्षा मण्डल, जयपुर,

–राजस्थान राज्य सस्कृत शिक्षा मण्डल, जयपुर,

–राजस्थान शिक्षा सलाहकार समिति,

–राजस्थान सस्कृत अकादमी, जयपुर।

रचनाएं –महाराजा मानसिंह

–हिन्दी व्याकरण तत्त्व

–अलकारो का उद्भव और विकास

–भारतीय सस्कृति

–वेदोत्तर देव शास्त्र

सम्पादन –लोकजीवन

–राजस्थान युनीवर्सिटी स्टडीज इन सस्कृत

–अध्ययन अनुसधान (शोध पत्रिका)

–जैनविद्या (शोध पत्रिका) एव

–अनेक शोध लेख।

डॉ० दरबारीलाल कोठिया

नाम — डॉ० दरबारीलाल कोठिया।

जन्मतिथि — आषाढ कृष्णा द्वितीया, वि० स० १९६८।

जन्मस्थान — सिद्धक्षेत्र नैनागिरि (म० प्र०)

शिक्षा — सिद्धान्तशास्त्री, प्राचीन न्यायशास्त्री, न्यायतीर्थ, न्यायाचार्य, शास्त्राचार्य, एम० ए०, पीएच० डी०

सेवाएं — प्रधानाचार्य, ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, मथुरा।
— प्राचार्य समन्तभद्र संस्कृत विद्यालय, दिल्ली।
— प्राध्यापक, दिगम्बर जैन कालेज, बडौत।
— रीडर, जैनदर्शन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

अन्य — वर्णी जैन ग्रन्थमाला,
— दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद्,
— स्याद्वाद महाविद्यालय, वाराणसी,
— प्राकृत जैन शोध संस्थान, वैशाली,
— वीर सेवा मन्दिर (सरसावा) दिल्ली
आदि के संचालन में प्रमुख योगदान।

रचनाएं — जैन तर्कशास्त्र में अनुमान-विचार, जैनदर्शन और प्रमाण-शास्त्र परिशीलन एवं २०० से अधिक शोध-लेख।

ग्रन्थ सम्पादन एवं अनुवाद

१ अध्यात्मकमलमार्तण्ड,
२. न्यायदीपिका,
३ आप्तपरीक्षा,
४ श्रीपुर पार्श्वनाथ स्तोत्र,
५ शासन चतुस्त्रिंशिका,
६ स्याद्वादसिद्धि,
७ प्राकृत पदमानुक्रम,
८ प्रमाण प्रमेयकलिका,
९. समाधिमरणोत्साह दीपक,
१० द्रव्य संग्रह,
११ प्रमाणपरीक्षा आदि।

पत्र-पत्रिका सम्पादन — अनेकान्त, दिल्ली,
— जैन प्रचारक, दिल्ली,
— जैन सन्देश, मथुरा।

इस प्रकार आप ४० से भी अधिक वर्षों से न केवल दार्शनिक व साहित्य जगत में ही सक्रिय हैं अपितु सामाजिक सेवाओं में भी संलग्न हैं। साहित्य व समाज सेवा के लिए समय-समय पर आपको न्यायालंकार, न्यायरत्नाकर, न्यायवाचस्पति आदि मानद उपाधियो द्वारा अलंकृत किया गया है, अनेक बार पुरस्कृत व सम्मानित भी किया गया है जिसमें उत्तर प्रदेश शासन द्वारा 'प्रमाणपरीक्षा' पुस्तक के लिए प्रदत्त पुरस्कार प्रमुख है। आपकी उदार एवं दानशील प्रवृत्ति से अनेक जरूरतमन्द व्यक्ति, विद्यार्थी एवं संस्थाएँ उपकृत हैं। डॉ० कोठिया का जीवन दर्शन, साहित्य व समाज के लिए समर्पित है।

डॉ० कस्तूरचन्द 'सुमन'

नाम — डॉ० कस्तूरचन्द 'सुमन'

जन्मतिथि — १२ अप्रैल, १९३६

शिक्षा — एम० ए० (संस्कृत, प्राचीन इतिहास एवं स्थापत्य, पालि-प्राकृत), शास्त्री, काव्यतीर्थ, साहित्यरत्न, बी० ए०, पीएच० डी०।

सम्पादन एवं अनुवाद — अमरसेणचरिउ (अपभ्रंश)
— इन्द्रनन्दी-नीतिसार (संस्कृत)

सेवाएं — जैनविद्या संस्थान श्रीमहावीरजी में शोधाधिकारी एवं प्रभारी सितम्बर १९८३ से।